

پیچھے چالیس سالوں سے اردو ٲاٲا میں لاکھوں
کی تاداد میں ٲرکاشیت ٲوکر کُراٲانی اُلُوم کو
بشمار اُٲراَد تک ٲهُٲانے والی بنجیر تٲسیر

مآارِٲل کُراٲان

4

علماء دیوبند کے علوم کا �اسبان
دینی و علمی کتابوں کا عظیم مرکز ٹیلیگرام چینل
حقی کتب خانہ محمد معاذ خان
درس نظامی کیلئے ایک مفید ترین
ٹیلیگرام چینل ہے

تٲسیر

ٲزرت مائلانا مٲٲی مٲممد شٲی دےبندی رٲ

(مٲٲی-آ-آزم ٲاکستان و دارال-اُلُوم دےبند)



पिछले चालीस सालों से उर्दू भाषा में लाखों की तादाद में
प्रकाशित होकर कुरआनी उलूम को बेशुमार अफ़राद तक
पहुँचाने वाली बेनज़ीर तफ़सीर

मआरिफ़ुल-कुरआन

जिल्द (4)

उर्दू तफ़सीर

हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफी देवबन्दी रह.

(मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान व दारुल-उलूम देवबन्द)

हिन्दी अनुवादक

मौलाना मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी (एम. ए. अलीग.)

रीडर अल्लामा इक़बाल यूनानी मैडिकल कॉलेज मुज़फ़्फ़र नगर (उ.प्र.)

फ़रीद बुक डिपो (प्रा.) लि.

2158, एम. पी. स्ट्रीट, पटौदी हाऊस, दरिया गंज

नई दिल्ली-110002

सर्वाधिकार प्रकाशक के लिए सुरक्षित हैं

तफ़सीर मअारिफ़ुल-कुरआन

हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफी साहिब रह.

(मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान)

हिन्दी अनुवाद

मौलाना मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी एम. ए. (अलीग.)

मौहल्ला महमूद नगर, मुज़फ़्फ़र नगर (उ. प्र.) 09456095608

जिल्द (4) सूर: आराफ़ ——— सूर: हूद

(पारा 9, रुकूअ 2 से पारा 12 रुकूअ 10 तक)

मार्च 2013

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा.) लि.

2158, एम. पी. स्ट्रीट, पटौदी हाऊस, दरिया गंज, नई दिल्ली-110002

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ

وَأَتَّخِذُوا لِلَّهِ جَمْعًا
وَأَتَّخِذُوا لِلَّهِ جَمْعًا

WA'A TASIMOO BIHAB LILLAH JAMEE'AN WA LA' TAFARRAQOO

समर्पित

○ अल्लाह सुब्हानहू व तआला के कलाम कुरआन मजीद के प्रथम व्याख्यापक, हादी-ए-आलम, आखिरी पैग़म्बर, तमाम नबियों में अफ़ज़ल हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के नाम, जिनका एक-एक कौल व अमल कलामें रब्बानी और मन्शा-ए-इलाही की अमली तफ़सीर था।

○ दारुल-उलूम देवबन्द के नाम, जो कुरआन मजीद और उसकी तफ़सीर (हदीसे पाक) की अज़ीमुश्शान ख़िदमत और दीनी रहनुमाई के सबब पूरी इस्लामी दुनिया में एक मिसाली संस्था है। जिसके इल्मी फैज़ से मुस्तफ़ीद (लाभान्वित) होने के सबब इस नाचीज़ को इल्मी समझ और कुरआन मजीद की इस ख़िदमत की तौफ़ीक़ नसीब हुई।

○ उन तमाम नेक रूहों और हक़ के तलाश करने वालों के नाम, जो हर तरह के पक्षपात से दूर रहकर और हर प्रकार की कठिनाईयों का सामना करके अपने असल मालिक व ख़ालिक के पैग़ाम को कुबूल करने वाले और दूसरों को कामयाबी व निजात के रास्ते पर लाने के लिये प्रयासरत हैं

मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी



दिल की गहराईयों से शुक्रिया

❁ मोहतरम जनाब अल-हाज मुहम्मद नासिर खाँ साहिब (मालिक फरीद बुक डिपो नई दिल्ली) का, जिनकी मुहब्बतों, इनायतों, कद्रदानियों और मुझे अपने इदारे से जोड़े रखने के सबब कुरआन मजीद की यह अहम खिदमत अन्जाम पा सकी।

❁ मेरे उन बच्चों का जिन्होंने इस तफ़सीर की तैयारी में मेरा भरपूर साथ दिया, तथा मेरे सहयोगियों, सलाहकारों, शुभ-चिन्तकों और हौसला बढ़ाने वाले हज़रात का, अल्लाह तआला इन सब हज़रात को अपनी तरफ़ से खास जज़ा और बदला इनायत फ़रमाये। आमीन या रब्बल्-अलमीन।

मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी



प्रकाशक के कलम से

अल्लाह तआला का लाख-लाख शुक्र व एहसान है कि उसने मुझे और मेरे इदारे (फरीद बुक डिपो नई दिल्ली) को इस्लामी, दीनी और तारीखी किताबों के प्रकाशन के जरिये दीनी व दुनियावी उलूम की खिदमत की तौफीक अता फरमाई।

अल्हम्दु लिल्लाह हमारे इदारे से कुरआन पाक, हदीस मुबारक और दीनी विषयों पर बेशुमार किताबें शायी हो चुकी हैं। बल्कि अगर यह कहा जाये कि आज़ाद हिन्दुस्तान में हर इल्म व फ़न के अन्दर जिस कद्र किताबें फरीद बुक डिपो देहली को प्रकाशित करने का सौभाग्य नसीब हुआ है उतना किसी और इदारे के हिस्से में नहीं आया तो यह बेजा न होगा। कोई इदारा फरीद बुक डिपो के मुक़ाबले में पेश नहीं किया जा सकता। यह सब कुछ अल्लाह के फज़ल व करम और उसकी इनायतों का फल है।

फरीद बुक डिपो देहली ने उर्दू, अरबी, फ़ारसी, गुजराती, हिन्दी और बंगाली अनेक भाषाओं में किताबें पेश करके एक नया रिकॉर्ड बनाया है। हिन्दी ज़बान में अनेक किताबें इदारे से शायी हो चुकी हैं। हिन्दी भाषा हमारी मुल्की ज़बान है। पढ़ने वालों की माँग और तलब देखते हुए तफ़सीरे कुरआन के उस अहम ज़ख़ीरे को हिन्दी ज़बान में लाने का फैसला किया गया जो पिछले कई दशकों से इल्मी जगत में धूम मचाये हुए है। मेरी मुराद तफ़सीर मज़ारिफ़ुल-कुरआन से है। इस तफ़सीर के परिचय की आवश्यकता नहीं, दुनिया भर में यह एक मोतबर और विश्वसनीय तफ़सीर मानी जाती है।

मौलाना मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी ने फरीद बुक डिपो के लिये बहुत सी मुफ़ीद और कारामद किताबों का हिन्दी में तर्जुमा किया है। हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तकी उस्मानी के इस्लाही ख़ुतबात की 15 जिल्दें और तफ़सीर तौज़ीहुल-कुरआन उन्होंने हिन्दी में मुन्तक़िल की हैं जो इदारे से छपकर मक़बूल हो चुकी हैं। उन्हीं से यह काम करने का आग्रह किया गया जिसे उन्होंने कुबूल कर लिया और अब अल्हम्दु लिल्लाह यह शानदार तफ़सीर आपके हाथों में पहुँच रही है। हिन्दी भाषा में कुरआनी खिदमत की यह अहम कड़ी आपके सामने है। उम्मीद है कि आपको पसन्द आयेगी और कुरआन पाक के पैग़ाम को समझने और उसको आम करने में एक अहम रोल अदा करेगी।

मैं अल्लाह करीम की बारगाह में दुआ करता हूँ कि वह इस खिदमत को कुबूल फ़रमाये और हमारे लिये इसे ज़ख़ीरा-ए-आख़िरत और रहमत व बरकत का सबब बनाये आमीन।

खादिम-ए-कुरआन

मुहम्मद नासिर ख़ान

मैनेजिंग डायरेक्टर, फरीद बुक डिपो, देहली

अनुवादक की ओर से

الحمد لله رب العالمين. والصلوة والسلام على رسوله الكريم. وعلى آله وصحبه اجمعين.

برحمتك يا ارحم الراحمين.

तमाम तारीफों की असल हकदार अल्लाह तआला की पाक जात है जो तमाम जहानों की पालनहार है। वह बेहद मेहरबान और बहुत ही ज्यादा रहम करने वाला है। और बेशुमार दुरूद व सलाम हों उस जाते पाक पर जो अल्लाह तआला की तमाम मख्लूक में सब से बेहतर है, यानी हमारे आका व सरदार हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम। और आपकी आल पर और आपके सहाबा किराम पर और आपके तमाम पैरोकारों पर।

अल्लाह करीम का बेहद फज़ल व करम है कि उसने मुझ नाचीज़ को अपने पाक कलाम की एक और ख़िदमत की तौफ़ीक़ बख़्शी। उसकी जात तमाम खूबियों, कमालात, तारीफ़ों और बन्दगी की हक़दार है।

इससे पहले सन् 2003 ईसवी में नाचीज़ ने हकीमुल-उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी रह. का तर्जुमा हिन्दी भाषा में पेश किया जिसको काफ़ी मक़बूलियत मिली, यह तर्जुमा इस्लामिक बुक सर्विस देहली ने प्रकाशित किया। उसके बाद तफ़सीर इब्ने कसीर मुकम्मल हिन्दी भाषा में पेश करने की सआदत नसीब हुई, जो रमज़ान (अगस्त 2011) में प्रकाशित होकर मन्ज़रे आम पर आ चुकी है। इसके अलावा फरीद बुक डिपो ही से मौजूदा ज़माने के मशहूर आलिम शैख़ुल-इस्लाम हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तकी उस्मानी दामत बरकातुहुम की मुख़्तसर तफ़सीर तौज़ीहुल-कुरआन शाय़ा होकर पाठकों तक पहुँच रही है।

उर्दू भाषा में जो मक़बूलियत कुरआनी तफ़सीरों में तफ़सीर मआरिफ़ुल-कुरआन के हिस्से में आयी शायद ही कोई तफ़सीर उस मक़ाम तक पहुँची हो। यह तफ़सीर हज़ारों की संख्या में हर साल छपती और पढ़ने वालों तक पहुँचती है, और यह सिलसिला तक़रीबन चालीस सालों से चल रहा है मगर आज तक कोई तफ़सीर इतनी मक़बूलियत हासिल नहीं कर सकी।

हिन्द महाद्वीप की जानी-मानी इल्मी शख़्सियत हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब देवबन्दी (मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान) की यह तफ़सीर कुरआनी तफ़सीरों में एक बड़ा कीमती सरमाया है। दिल चाहता था कि हिन्दी जानने वाले हज़रात तक भी यह उलूम और कुरआनी मतालिब पहुँचें मगर काम इतना बड़ा और अहम था कि शुरू करने की हिम्मत न होती थी।

जो हज़रात इल्मी काम करते हैं उनको मालूम है कि एक ज़बान से दूसरी ज़बान में तर्जुमा करना कितना मुश्किल काम है, और सही बात तो यह है कि इस काम का पूरा हक़ अदा होना बहुत ही मुश्किल है। फिर भी मैंने कोशिश की है कि इबारात का मफ़हूम व मतलब तर्जुमे में उतर आये। कहीं-कहीं ब्रेकिट बढ़ाकर भी इबारात को आसान बनाने की कोशिश की है। तर्जुमे में जहाँ तक संभव हुआ कोई छेड़छाड़ नहीं की गयी क्योंकि उलेमा-ए-मुहक्किकीन ने इस तर्जुमे को इल्हामी तर्जुमा करार

दिया है। जहाँ बहुत ही ज़रूरी महसूस हुआ वहाँ आसानी के लिये कोई लफ्ज़ बदला गया या ब्रकिट के अन्दर मायनों को लिख दिया गया।

अरबी और फ़ारसी के शेरों का मफ़हूम अगर मुसन्निफ़ की इबारत में आ गया है और हिन्दी पाठकों के लिये ज़रूरी न समझा तो कुछ अश्रार को निकाल दिया गया है, और जहाँ ज़रूरत समझी वहाँ अरबी, फ़ारसी शेरों का तर्जुमा लिख दिया है। ऐसे मौकों पर अहक़र ने उस तर्जुमे के अपनी तरफ़ से होने की वज़ाहत कर दी है ताकि अगर तर्जुमा करने में ग़लती हुई हो तो उसकी निस्वत साहिबे तफ़सीर की तरफ़ न हो बल्कि उसे मुझ नाचीज़ की इल्मी कोताही गरदाना जाये।

हल्ले लुगात और किराअतों का इस्तिलाफ़ चूँकि इल्मे तफ़सीर पर निगाह न रखने वाले, किराअतों के फन से ना-आशना और अरबी ग्रामर से नावाकिफ़ शाख़्स एक हिन्दी जानने वाले के लिये कोई फ़ायदे की चीज़ नहीं, बल्कि बहुत सी बार कम-इल्मी के सबब इससे उलझन पैदा हो जाती है लिहाज़ा तफ़सीर के इस हिस्से को हिन्दी अनुवाद में शामिल नहीं किया गया।

हिन्दी जानने वाले हज़रात के लिये यह हिन्दी तफ़सीर एक नायाब तोहफ़ा है। अगर खुद अपने मुताले से वह इसे पूरी तरह न समझ सकें तब भी कम से कम इतना मौका तो है कि किसी आलिम से सबकन् सबकन् इस तफ़सीर को पढ़कर लाभान्वित हो सकते हैं। जिस तरह उर्दू तफ़सीरें भी सिर्फ़ उर्दू पढ़ लेने से पूरी तरह समझ में नहीं आती बल्कि बहुत सी जगह किसी आलिम से रुजू करके पेश आने वाली मुश्किल को हल किया जाता है, इसी तरह अगर हिन्दी जानने वाले हज़रात पूरी तरह इस तफ़सीर से फ़ायदा न उठा पायें तो हिम्मत न हारें, हिन्दी की इस तफ़सीर के ज़रिये उन्हें कुरआन पाक के तालिब-इल्म बनने का मौका तो हाथ आ ही जायेगा। जो बात समझ में न आये वह किसी मोतबर आलिम से मालूम कर लें और इस तफ़सीरी तोहफ़े से अपनी इल्मी प्यास बुझायें। अल्लाह का शुक्र भेजिये कि आप तफ़सीर के तालिब-इल्म बनने के अहल हो गये वरना उर्दू न जानने की हालत में तो आप इस मौके से भी मेहरूम थे।

फ़रीद बुक डिपो से मेरी वाबस्तगी पच्चीस सालों से है। इस दौरान बहुत सी किताबें लिखने, प्रूफ़ रीडिंग करने और हिन्दी में तर्जुमा करने का मुझ नाचीज़ को मौका मिला है। इदारे के संस्थापक जनाब मुहम्मद फ़रीद ख़ाँ मरहूम से लेकर मौजूदा मालिक और मैनेजिंग डायरेक्टर जनाब अल-हाज मुहम्मद नासिर ख़ाँ तक सब ही की ख़ास इनायतें मुझ नाचीज़ पर रही हैं। मैंने इस इदारे के लिये बहुत सी किताबों का हिन्दी तर्जुमा किया है, हज़रत मौलाना क़ारी मुहम्मद तैयब साहिब मोहतमिम दारुल-उलूम देवबन्द की किताबों और मज़ामीन पर किया हुआ मेरा काम सात जिल्दों में इसी इदारे से प्रकाशित हुआ है, इसके अलावा “मालूमात का समन्दर” और “तज़क़िरा अल्लामा मुहम्मद इब्राहीम बलियावी” वग़ैरह किताबें भी यहीं से शाय्या हुई हैं। जो किताबें मैंने उर्दू से हिन्दी में इस इदारे के लिये की हैं उनकी तायदाद भी पचास से अधिक है, इसी सिलसिले में एक और कड़ी यह जुड़ने जा रही है।

इस तफ़सीर को उर्दू से मिलती-जुलती हिन्दी भाषा (यानी हिन्दुस्तानी ज़बान) में पेश करने की कोशिश की गयी, हिन्दी के संस्कृत युक्त अलफ़ाज़ से परहेज़ किया गया है। कोशिश यह की है कि मजमूई तौर पर मजमून का मफ़हूम व मतलब समझ में आ जाये। फिर भी अगर कोई लफ्ज़ या

किसी जगह का कोई मजमून समझ में न आये तो उसको नोट करके किसी आलिम से मालूम कर लेना चाहिये।

तफसीर की यह चौथी जिल्द आपके हाथों में है इन्शा-अल्लाह तआला बाकी की जिल्दें भी बहुत जल्द आपकी खिदमत में पेश की जायेंगी। इस तफसीर की तैयारी में कितनी मेहनत से काम लिया गया है इसका कुछ अन्दाज़ा उसी वक़्त हो सकता है जबकि उर्दू तफसीर को सामने रखकर मुकाबला किया जाये। तब मालूम होगा कि पढ़ने वालों के लिये इसे कितना आसान करने की कोशिश की गयी है। अल्लाह तआला हमारी इस मेहनत को कुबूल फ़रमाये और अपने बन्दों को इससे ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा उठाने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये आमीन।

इस तफसीर से फ़ायदा उठाने वालों से आजिज़ी और विनम्रता के साथ दरखास्त है कि वे मुझ नाचीज़ के ईमान पर ख़ात्मे और दुनिया व आख़िरत में कामयाबी के लिये दुआ फ़रमायें। अल्लाह करीम इस खिदमत को मेरे माँ-बाप और उस्ताज़ों के लिये भी मग़फ़िरत का ज़रिया बनाये, आमीन।

आख़िर में बहुत ही आजिज़ी के साथ अपनी कम-इल्मी और सलाहियत के अभाव का एतिराफ़ करते हुए यह अर्ज़ है कि बेऐब अल्लाह तआला की ज़ात है। कोई भी इनसानी कोशिश ऐसी नहीं जिसके बारे में सौ फीसद यकीन के साथ कहा जा सके कि उसके अन्दर कोई ख़ामी और कमी नहीं रह गयी है। मैंने भी यह एक मामूली कोशिश की है, अगर मुझे इसमें कोई कामयाबी मिली है तो यह महज़ अल्लाह तआला का फ़ज़ल व करम, उसके पाक नबी हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़रिये लाये हुए पैग़ाम (कुरआन व हदीस) की रोशनी का फ़ैज़, अपनी मादरे इल्मी दारुल-उलूम देवबन्द की निस्वत और मेरे असातिज़ा हज़रात की मेहनत का फल है, मुझ नाचीज़ का इसमें कोई क़माल नहीं। हाँ इन इल्मी जवाहर-पारों को समेटने, तरतीब देने और पेश करने में जो ग़लती, ख़ामी और कोताही हुई हो वह यकीनन मेरी कम-इल्मी और नाक़िस सलाहियत के सबब है। अहले नज़र हज़रात से गुज़ारिश है कि अपनी राय, मशिवरों और नज़र में आने वाली ग़लतियों व कोताहियों से मुत्तला फ़रमायें ताकि आईन्दा किये जाने वाले इल्मी कामों में उनसे लाभ उठाया जा सके। वस्सलाम

तालिबे दुआ

मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

79, महमूद नगर, गली नम्बर 6, मुज़फ़्फ़र नगर (उ. प्र.) 251001

10 मार्च 2013

फ़ोन:- 0131-2442408, 09456095608, 09012122788

E-mail: imranqasmialig@yahoo.com

एक अहम बात

कुरआन मजीद के मतन को अरबी के अलावा हिन्दी या किसी दूसरी भाषा के रस्मुलखत (लिपि) में बदलने पर अक्सर उलेमा की राय इसके विरोध में है। कुछ उलेमा का ख्याल है कि इस तरह करने से कुरआन मजीद के हफ़ों की अदायगी में तहरीफ़ (कमी-बेशी और रद्दोबदल) हो जाती है और उनको भय (डर) है कि जिस तरह इन्जील और तौरात तहरीफ़ का शिकार हो गईं वैसे ही खुदा न करे इसका भी वही हाल हो। यह तो ख़ैर नामुम्किन है, इसकी हिफ़ाज़त का वायदा अल्लाह तआला ने खुद किया है और करोड़ों हाफ़िज़ों को कुरआन मजीद मुँह-ज़बानी याद है।

इस सिलसिले में नाचीज़ मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी (इस तफ्सीर का हिन्दी अनुवादक) अर्ज करता है कि हकीकत यह है कि अरबी रस्मुलखत के अलावा दूसरी किसी भी भाषा में कुरआन मजीद को कतई तौर पर सौ फीसद सही नहीं पढ़ा जा सकता। इसलिए कि हफ़ों की बनावट के एतिबार से भी किसी दूसरी भाषा में यह गुंजाईश नहीं कि वह अरबी ज़बान के तमाम हुरूफ़ का मुतबादिल (विकल्प) पेश कर सके। फिर अगर किसी तरह कोई निशानी मुक़रर करके इस कमी को पूरा करने की कोशिश भी की जाए तो 'मख़ारिजे हुरूफ़' यानी हुरूफ़ के निकालने का जो तरीका, मक़ाम और इल्म है वह उस वैकल्पिक तरीके से हासिल नहीं किया जा सकता। जबकि यह सब को मालूम है कि सिर्फ़ अलफ़ाज़ के निकालने में फ़र्क़ होने से अरबी ज़बान में मायने बदल जाते हैं। इसलिये अरबी मतन की जो हिन्दी दी गयी है उसको सिर्फ़ यह समझें कि वह आपके अन्दर अरबी कुरआन पढ़ने का शौक़ पैदा करने के लिये है। तिलावत के लिये अरबी ही पढ़िये और उसी को सीखिये। वरना हो सकता है कि किसी जगह ग़लत उच्चारण के सबब पढ़ने में सवाब के बजाय अज़ाब के हक़दार न बन जायें।

मैंने अपनी पूरी कोशिश की है कि जितना मुझसे हो सके इस तफ्सीर को आसान बनाऊँ मगर फिर भी बहुत से मक़ामात पर ऐसे इल्मी मज़ामीन आये हैं कि उनको पूरी तरह आसान नहीं किया जा सका, मगर ऐसी जगहें बहुत कम हैं, उनके सबब इस अहम और कीमती सरमाये से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता। अगर कोई मक़ाम समझ में न आये तो उस पर निशान लगाकर बाद में किसी आलिम से मालूम कर लें। तफ्सीर पढ़ने के लिये यक्सूई और इल्मीनान का एक वक़्त मुक़रर करना चाहिये, चाहे वह थोड़ा सा ही हो। अगर इस लगन के साथ इसका मुताला जारी रखा जायेगा तो उम्मीद है कि आप इस कीमती

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

पेश-लफ्ज

वालिद माजिद हजरत मौलाना मुफ्ती मुहम्मद शफी साहिब मह जिल्लुहुम की तफसीर 'मजारिफुल-कुरआन' को अल्लाह तआला ने अवाम व ख्वास में असाधारण मकबूलियत अता फरमाई, और जिल्दे अब्बल का पहला संस्करण हाथों हाथ खत्म हो गया। दूसरे संस्करण की छपाई के वक़्त हजरत मुसन्निफ मह जिल्लुहुम ने पहली जिल्द पर मुकम्मल तौर से दोबारा नज़र डाली और उसमें काफी तर्मीम व इज़ाफ़ा अमल में आया। इसी के साथ हजरते वाला की इच्छा थी कि दूसरी बार छपने के वक़्त पहली जिल्द के शुरू में कुरआनी उलूम और उसूले तफसीर से मुताल्लिक एक मुक़द्दिमा भी तहरीर फरमायें, ताकि तफसीर के मुताले (अध्ययन) से पहले पढ़ने वाले हज़रात उन ज़रूरी मालूमात से लाभान्वित हो सकें, लेकिन लगातार बीमारी और कमजोरी की बिना पर हजरत के लिये बजाते खुद मुक़द्दिमे का लिखना और तैयार करना मुश्किल था, चुनाँचे हजरते वाला ने यह जिम्मेदारी अहकर के सुपर्द फरमाई।

अहकर ने हुक्म के पालन में और इस सौभाग्य को प्राप्त करने के लिये यह काम शुरू किया तो यह मुक़द्दिमा बहुत लम्बा हो गया, और कुरआनी उलूम के विषय पर खास मुफ़स्सल किताब की सूरत बन गई। इस पूरी किताब को 'मजारिफुल-कुरआन' के शुरू में बतौर मुक़द्दिमा शामिल करना मुश्किल था, इसलिये हजरत वालिद साहिब के इशारे और राय से अहकर ने इस मुफ़स्सल किताब का खुलासा तैयार किया और सिर्फ़ वे चीज़ें बाकी रखीं जिनका मुताला तफसीर मजारिफुल-कुरआन के मुताला करने वाले के लिये ज़रूरी था, और जो एक आम पाठक के लिये दिलचस्पी का सबब हो सकती थी। उस बड़े मज़मून का यह खुलासा 'मजारिफुल-कुरआन' पहली जिल्द के इस संस्करण में मुक़द्दिमे के तौर पर शामिल किया जा रहा है, अल्लाह तआला इसे मुसलमानों के लिये नाफ़े और मुफीद (लाभदायक) बनाये और इस नाचीज़ के लिये आखिरत का ज़ख़ीरा साबित हो।

इन विषयों पर तफसीली इल्मी मबाहिस (बहसों) अहकर की उस विस्तृत और तफसीली किताब में मिल सकेंगे जो इन्शा-अल्लाह तआला जल्द ही एक मुस्तफ़िल किताब की सूरत में प्रकाशित होगी (अब यह किताब 'उलूमुल-कुरआन' के नाम से प्रकाशित हो चुकी है)। लिहाज़ा जो हज़रात तहकीक और तफसील के तालिब हों वे उस किताब की तरफ़ रुजू फरमायें। व मा तौफीकी इल्ला बिल्लाह, अलैहि तयक्कलतु व इलैहि उनीब।

अहकर

मुहम्मद तकी उस्मानी

दारुल-उलूम कोरंगी, कराची- 14

23 रबीउल-अव्वल 1394 हिजरी

खुलासा-ए-तफ़सीर के बारे में एक ज़रूरी तंबीह

“मअरिफ़ुल-कुरआन” में खुलासा-ए-तफ़सीर सय्यिदी हकीमुल-उम्मत हज़रत थानवी क़ुद्दिस सिरूहू की तफ़सीर “बयानुल-कुरआन” से जूँ-का-तूँ लिया गया है। लेकिन उसके कुछ मौकों में ख़ालिस इल्मी इस्तिलाहात आई हैं जिनका समझना अ़वाम के लिये मुश्किल है, नाचीज़ ने अ़वाम की रियायत करते हुए ऐसे अलफ़ाज़ को आसान करके लिख दिया है, और जो मज़मून ख़ालिस इल्मी था उसको “मअरिफ़ व मसाईल” के उनवान में लेकर आसान अन्दाज़ में लिख दिया है। वल्लाहुल्-मुस्तज़ान।

बन्दा मुहम्मद शफी

मुख्तसर विषय-सूची

मअरिफुल-कुरआन जिल्द नम्बर (4)

उनवान	पेज
★ समर्पित	5
★ दिल की गहराईयों से शुक्रिया	6
★ प्रकाशक के कलम से	7
★ अनुवादक की ओर से	8
★ एक अहम बात	11
★ पेश-लफ्ज	13
★ खुलासा-ए-तफसीर के बारे में एक ज़रूरी तंबीह	14
सूर: आराफ़ का बाकी हिस्सा	29
★ आयत नम्बर 94-99 मय खुलासा-ए-तफसीर	30
★ मअरिफ व मसाईल	31
★ आयत नम्बर 100-102 मय खुलासा-ए-तफसीर	36
★ मअरिफ व मसाईल	37
★ आयत नम्बर 103-110 मय खुलासा-ए-तफसीर	41
★ मअरिफ व मसाईल	42
★ मोजिजे और जादू में फ़र्क	45
★ आयत नम्बर 111-122 मय खुलासा-ए-तफसीर	47
★ मअरिफ व मसाईल	48
★ आयत नम्बर 123-127 मय खुलासा-ए-तफसीर	53
★ मअरिफ व मसाईल	54
★ जादूगरों में ईमानी इन्क़िलाब मूसा अलैहिस्सलाम के लाठी वाले और चमकते हाथ के मोजिजे से भी बड़ा मोजिजा था	57
★ फिरऔन पर हज़रत मूसा व हारून अलैहिमस्सलाम की दहशत का असर	58
★ आयत नम्बर 128-132 मय खुलासा-ए-तफसीर	60
★ मअरिफ व मसाईल	61
★ मुश्किलों व मुसीबतों से छुटकारे का नुस्खा-ए-अक्सीर	62

उनवान	पेज
☆ हुक्ूमत व सल्तनत हुक्मरॉ तब्के का इम्तिहान है	63
☆ आयत नम्बर 133-136 मय खुलासा-ए-तफसीर	66
☆ मज़ारिफ़ व मसाईल	67
☆ आयत नम्बर 137-141 मय खुलासा-ए-तफसीर	72
☆ मज़ारिफ़ व मसाईल	73
☆ आयत नम्बर 142 मय खुलासा-ए-तफसीर	77
☆ मज़ारिफ़ व मसाईल	77
☆ इबादतों में चाँद का हिसाब मोतबर है, दुनियावी मामलों में सूरज के हिसाब की गुंजाईश है	79
☆ नफ़्स की इस्लाह में चालीस दिन-रात को खास दख़ल है	80
☆ इनसान को अपने सब कामों में तदरीज और आहिस्तेगी की तालीम	80
☆ प्रबंधक और जिम्मेदार को ज़रूरत के वक़्त अपना उत्तराधिकारी तजवीज़ करना	81
☆ आयत नम्बर 143-145 मय खुलासा-ए-तफसीर	83
☆ मज़ारिफ़ व मसाईल	84
☆ मूसा अलैहिस्सलाम से अल्लाह तआला का कलाम	85
☆ आयत नम्बर 146-151 मय खुलासा-ए-तफसीर	88
☆ मज़ारिफ़ व मसाईल	89
☆ तकब्बुर इनसान को सही समझ और दीनी उलूम से मेहरूम कर देता है	90
☆ आयत नम्बर 152-156 मय खुलासा-ए-तफसीर	94
☆ मज़ारिफ़ व मसाईल	96
☆ बाज़े गुनाहों की कुछ सज़ा दुनिया में भी मिलती है	97
☆ सत्तर बनी इस्राईल के चयन और उनके हलाक होने का वाकिआ	98
☆ आयत नम्बर 157 मय खुलासा-ए-तफसीर	102
☆ मज़ारिफ़ व मसाईल	103
☆ खातमुन्नबिय्यीन मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और उनकी उम्मत की मख़्सूस सिफ़ात व फ़ज़ाईल	103
☆ तौरात व इंजील में रसूलुल्लाह सल्ल. की सिफ़ात और निशानियाँ	104
☆ कुरआन के साथ सुन्नत की पैरवी भी फ़र्ज़ है	111
☆ रसूल की सिर्फ़ पैरवी भी काफी नहीं, अदब व एहतियाम और मुहब्बत भी फ़र्ज़ है	111
☆ आयत नम्बर 158-159 मय खुलासा-ए-तफसीर	114
☆ मज़ारिफ़ व मसाईल	115

उनवान	पेज
☆ हुजूरे पाक की नुबुव्वत तमाम आलम के लिये और ता कियामत है, इसी लिये आप पर नुबुव्वत खत्म है	115
☆ हुजूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की चन्द अहम विशेषताएँ	116
☆ हजरत मूसा अलैहिस्सलाम की कौम में एक हक परस्त जमाअत	118
☆ आयत नम्बर 160-162 मय खुलासा-ए-तफसीर	121
☆ आयत नम्बर 163-166 मय खुलासा-ए-तफसीर	123
☆ आयत नम्बर 167-169 मय खुलासा-ए-तफसीर	125
☆ मअरिफ व मसाईल	126
☆ आयत नम्बर 170-171 मय खुलासा-ए-तफसीर	132
☆ मअरिफ व मसाईल	132
☆ 'दीन में जोर-जबरदस्ती नहीं' इसका सही मतलब और शुद्धे का जवाब	134
☆ आयत नम्बर 172-174 मय खुलासा-ए-तफसीर	135
☆ मअरिफ व मसाईल	136
☆ अहद-ए-अलस्त की तहकीक	136
☆ बैअत लेने की हकीकत	139
☆ अज़ल के अहद के बारे में चन्द सवाल व जवाब	142
☆ आयत नम्बर 175-177 मय खुलासा-ए-तफसीर	146
☆ मअरिफ व मसाईल	146
☆ बनी इस्राईल के एक पेशवा आलिम की गुमराही का सबक लेने वाला वाकिआ	147
☆ आयत नम्बर 178-179 मय खुलासा-ए-तफसीर	152
☆ मअरिफ व मसाईल	152
☆ आयत में काफिरों के न समझने, न देखने और न सुनने का मतलब	154
☆ आयत नम्बर 180 मय खुलासा-ए-तफसीर	157
☆ मअरिफ व मसाईल	157
☆ अस्मा-ए-हुस्ना की वज़ाहत	157
☆ दुआ के कुछ आदाब	158
☆ अल्लाह के नामों में टेढ़ी चाल चलने की मनाही और उसकी मुख्तलिफ सूरतें	160
☆ किसी शख्स को अल्लाह तआला के मख्सूस नाम से नामित या मुख़ातब करना जायज़ नहीं	161
☆ आयत नम्बर 181-185 मय खुलासा-ए-तफसीर	163
☆ मअरिफ व मसाईल	163

उनवान	पेज
★ आयत नम्बर 186-187 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	168
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	169
★ आयत नम्बर 188-193 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	174
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	176
★ आयत नम्बर 194-198 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	181
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	182
★ आयत नम्बर 199-202 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	184
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	184
★ कुरआनी अख़्लाक़ का एक मुकम्मल हिदायत-नामा	184
★ एक अजीब फायदा	187
★ आयत नम्बर 203-204 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	189
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	189
★ कुरआन पढ़े जाने के वक़्त ख़ामोश रहकर सुनने के मुताल्लिक़ चन्द ज़रूरी मसाईल	192
★ आयत नम्बर 205-206 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	194
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	194
★ आहिस्ता और आवाज़ से ज़िक्र करने के अहक़ाम	195
★ सज़्दे के कुछ फ़ज़ाईल और अहक़ाम	198
सूर: अनफ़ाल	200
★ आयत नम्बर 1	201
★ सूरत के मज़ामीन	201
★ खुलासा-ए-तफ़्सीर	202
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	202
★ आयत की पूरी तफ़्सीर	204
★ लोगों के आपसी इत्तिफ़ाक़ व एकजुटता की बुनियाद तक्वा और ख़ौफ़-ए-ख़ुदा है	206
★ आयत नम्बर 2-4 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	208
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	208
★ मोमिन की ख़ास सिफ़ात	208
★ पहली सिफ़त ख़ौफ़-ए-ख़ुदा	208
★ दूसरी सिफ़त ईमान में तरक्की	209

उनवान	पेज
★ तीसरी सिफ़त अल्लाह पर भरोसा	210
★ चौथी सिफ़त नमाज़ का कायम करना	210
★ पाँचवीं सिफ़त अल्लाह की राह में खर्च करना	211
★ आयत नम्बर 5-6 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	212
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	212
★ आयत नम्बर 7-10 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	220
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	220
★ आयत नम्बर 11-14 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	225
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	226
★ आयत नम्बर 15-19 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	230
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	232
★ आयत नम्बर 20-24 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	237
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	239
★ आयत नम्बर 25-28 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	245
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	246
★ आयत नम्बर 29-33 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	251
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	253
★ आयत नम्बर 34-38 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	262
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	264
★ आयत नम्बर 39-40 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	268
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	268
पारा नम्बर 10 (वज़ूलमू)	272
★ आयत नम्बर 41 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	273
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	273
★ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात	
के बाद ग़नीमत के पाँचवे हिस्से की तकसीम	278
★ खुम्स में करीबी रिश्तेदारों का हिस्सा	279
★ बदर की लड़ाई के दिन को यौमुल-फ़ुरक़ान फ़रमाया गया	280
★ आयत नम्बर 42-44 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	281
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	283

उनवान	पेज
★ आयत नम्बर 45-47 मय खुलासा-ए-तफसीर	288
★ मआरिफ व मसाईल	289
★ जंग व जिहाद में कामयाबी के लिये कुरआनी हिदायतें	289
★ आयत नम्बर 48-49 मय खुलासा-ए-तफसीर	294
★ मआरिफ व मसाईल	295
★ शैतानी धोखा व फरेब और उससे बचने का तरीका	297
★ कामयाबी के लिये सिर्फ नीयत ही का सही होना काफी नहीं, उससे पहले रास्ता सीधा होना जरूरी है	297
★ आयत नम्बर 50-53 मय खुलासा-ए-तफसीर	299
★ मआरिफ व मसाईल	300
★ आयत नम्बर 54-58 मय खुलासा-ए-तफसीर	305
★ मआरिफ व मसाईल	306
★ इस्लामी सियासत का पहला कदम इस्लामी कौमियत	308
★ दूसरा कदम यहूदियों के साथ समझौता	308
★ सुलह के समझौते को खत्म करने की सूरत	309
★ अहद पूरा करने का एक अजीब वाकिआ	310
★ आयत नम्बर 59-62 मय खुलासा-ए-तफसीर	312
★ मआरिफ व मसाईल	313
★ जिहाद के लिये हथियार और जंग के सामान की तैयारी फर्ज है	313
★ आयत नम्बर 63-66 मय खुलासा-ए-तफसीर	318
★ मआरिफ व मसाईल	319
★ मुसलमानों का आपस में वास्तयिक और पायदार इत्तिफाक अल्लाह तआला की इताअत-गुजारी पर मौकूफ है	319
★ आयत नम्बर 67-69 मय खुलासा-ए-तफसीर	323
★ मआरिफ व मसाईल	324
★ आयत नम्बर 70-71 मय खुलासा-ए-तफसीर	331
★ मआरिफ व मसाईल	331
★ आयत नम्बर 72-75 मय खुलासा-ए-तफसीर	335
★ मआरिफ व मसाईल	336

उनवान	पेज
सूर: तौबा	345
आयत नम्बर 1-5 मय खुलासा-ए-तफसीर	347
मज़ारिफ़ व मसाईल	348
मक्का फ़तह होने के वक़्त मग़लूब दुश्मनों के साथ बेमिसाल करीमाना सुलूक	352
फ़तह-ए-मक्का के वक़्त मुशिरकों की चार किस्में और उनके अहकाम	353
काफ़िरों से समझौते ख़त्म हो जाने पर भी उनको मोहलत देने का करीमाना सुलूक	355
समझौता ख़त्म करने के लिये एक अहम हिदायत	355
ज़िक्र हुई पाँच आयतों से संबन्धित चन्द मसाईल और फ़ायदे	356
काफ़िरों से माफी व दरगुज़र के यह मायने नहीं कि उनके नुक़सान से बचने का एहतिमाम भी न किया जाये	357
आयत नम्बर 6-11 मय खुलासा-ए-तफसीर	360
मज़ारिफ़ व मसाईल	362
इस्लाम के हक़ और सच्चा होने को दलीलों के साथ समझाना उलेमा-ए-दीन का फ़र्ज है	363
बाहरी ग़ैर-मुस्लिमों को ज़रूरत से ज़्यादा ठहरने की इजाज़त न दी जाये	363
काफ़िरों के मुकाबले में भी सच्चाई पर कायम रहें	364
इस्लामी बिरादरी में दाख़िल होने की तीन शर्तें	365
आयत नम्बर 12-16 मय खुलासा-ए-तफसीर	367
मज़ारिफ़ व मसाईल	368
इस्लामी हुक्मत में ग़ैर-मुस्लिमों को इस्लाम को बुरा-भला कहने की इजाज़त नहीं	369
आयत नम्बर 17-18 मय खुलासा-ए-तफसीर	372
मज़ारिफ़ व मसाईल	373
सच्चे मुसलमान की दो निशानियाँ	373
किसी ग़ैर-मुस्लिम को हमराज़ दोस्त बनाना दुरुस्त नहीं	373
इस आयत से संबन्धित कुछ और मसाईल	377
आयत नम्बर 19-23 मय खुलासा-ए-तफसीर	379
मज़ारिफ़ व मसाईल	380
अल्लाह का ज़िक्र जिहाद से अफ़ज़ल है	382
उक्त आयतों से संबन्धित चन्द फ़ायदे और मसाईल	384
असल रिश्ता इस्लाम व ईमान का रिश्ता है नसबी व वतनी ताल्लुकात सब इस पर क़ुरबान करने हैं	385

उनवान	पेज
★ आयत नम्बर 24 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	386
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	386
★ हिजरत से संबन्धित मसाईल	387
★ सच्चे ईमान की निशानी	388
★ आयत नम्बर 25-27 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	391
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	391
★ हुनैन की फ़तह, हवाज़िन व सकीफ़ के सरदारों का मुसलमान होकर हाज़िर होना और कैदियों की वापसी	397
★ हुक्क के मामले में राय कैसे ली जाये, इसकी तालीम	398
★ अहकाम व मसाईल	399
★ पराजित व मग़लूब काफ़िरों के मालों में अदल व इन्साफ़ और एहतियात	399
★ आयत नम्बर 28 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	401
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	401
★ मुशिरकों के मस्जिदे हराम में दाख़िले की मनाही का मतलब	402
★ आयत नम्बर 29-30 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	407
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	407
★ आयत नम्बर 31-35 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	413
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	414
★ आयत नम्बर 36-37 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	418
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	419
★ अहकाम व मसाईल	423
★ आयत नम्बर 38-42 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	425
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	426
★ दुनिया की मुहब्बत और आख़िरत से ग़फ़लत तमाम जुर्मों की बुनियाद है	429
★ आयत नम्बर 43-52 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	433
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	435
★ माकूल और नामाकूल उज़्र में फ़र्क	436
★ तकदीर पर यकीन के साथ तदबीर का इस्तेमाल होना चाहिये, बेतदबीरी का नाम तवक्कुल रखना ग़लत है	439
★ आयत नम्बर 53-59 मय खुलासा-ए-तफ़्सीर	441
★ मज़ारिफ़ व मसाईल	442

★ क्या सदकों का माल काफ़िर को दिया जा सकता है?	443
★ आयत नम्बर 60 मय खुलासा-ए-तफसीर	444
★ मआरिफ़ व मसाईल	444
★ सदाकत के खर्च करने की जगहें	444
★ तीसरा मसफ़ 'सदके के आमिलीन'	448
★ एक और सवाल- इबादत पर उजरत	451
★ एक बड़ा फायदा	454
★ मसला-ए-तमलीक	460
★ ज़कात अदा करने के मुताल्लिक कुछ अहम मसाईल	463
★ आयत नम्बर 61-66 मय खुलासा-ए-तफसीर	466
★ मआरिफ़ व मसाईल	468
★ आयत नम्बर 67-70 मय खुलासा-ए-तफसीर	470
★ मआरिफ़ व मसाईल	471
★ आयत नम्बर 71-73 मय खुलासा-ए-तफसीर	473
★ मआरिफ़ व मसाईल	474
★ आयत नम्बर 74-78 मय खुलासा-ए-तफसीर	477
★ मआरिफ़ व मसाईल	478
★ मसला	482
★ आयत नम्बर 79-80 मय खुलासा-ए-तफसीर	483
★ मआरिफ़ व मसाईल	483
★ आयत नम्बर 81-83 मय खुलासा-ए-तफसीर	485
★ मआरिफ़ व मसाईल	485
★ आयत नम्बर 84 मय खुलासा-ए-तफसीर	487
★ मआरिफ़ व मसाईल	487
★ ज़िक्र हुए वाकिए पर चन्द शुब्हात और उनके जवाब	488
★ आयत नम्बर 85-89 मय खुलासा-ए-तफसीर	492
★ मआरिफ़ व मसाईल	493
★ आयत नम्बर 90 मय खुलासा-ए-तफसीर	493
★ मआरिफ़ व मसाईल	494
★ आयत नम्बर 91-93 मय खुलासा-ए-तफसीर	495
★ मआरिफ़ व मसाईल	496

पारा (11) यअ्तज़िरु-न

497

★ आयत नम्बर 94-96 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	498
★ मअरिफ़ व मसाईल	498
★ आयत नम्बर 97-99 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	500
★ मअरिफ़ व मसाईल	501
★ आयत नम्बर 100 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	503
★ मअरिफ़ व मसाईल	503
★ सहाबा-ए-किराम सब के सब बिना किसी को अलग किये जन्नती और अल्लाह की रज़ा से सम्मानित हैं	504
★ आयत नम्बर 101 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	505
★ मअरिफ़ व मसाईल	506
★ आयत नम्बर 102-107 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	507
★ मअरिफ़ व मसाईल	508
★ अच्छे और बुरे मिले-जुले अमल क्या थे?	509
★ जिन मुसलमानों के आमाल अच्छे-बुरे मिले-जुले हों क़ियामत तक वे भी इस हुक्म में दाख़िल हैं	510
★ इस्लामी हुक्मत की एक ज़िम्मेदारी	511
★ ज़कात हुक्मत का टैक्स नहीं बल्कि इबादत है	512
★ एक सवाल और उसका जवाब	513
★ आयत नम्बर 107-110 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	515
★ मअरिफ़ व मसाईल	516
★ आयत नम्बर 111-112 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	522
★ मअरिफ़ व मसाईल	523
★ इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक	523
★ शान-ए-नुज़ूल	523
★ जिहाद की सबसे पहली यही आयत है	524
★ आयत नम्बर 113-114 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	527
★ मअरिफ़ व मसाईल	527
★ आयत नम्बर 115-116 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	530
★ आयत नम्बर 117-119 मय खुलासा-ए-तफ़सीर	531

उनवान

पेज

★ मआरिफ व मसाईल	532
★ इन तीनों अन्तारी बुजुर्गों के चाकिए की तफसील सही हदीसों की रोशनी में	534
★ हजरत कअब बिन मालिक की हदीस से संबन्धित फायदे	541
★ आयत नम्बर 120-121 मय खुलासा-ए-तफसीर	544
★ मआरिफ व मसाईल	545
★ आयत नम्बर 122 मय खुलासा-ए-तफसीर	546
★ मआरिफ व मसाईल	546
★ दीनी इल्म को हासिल करने का फर्ज होना और उसके आदाब व फराईज	547
★ इल्मे दीन के फजाईल	547
★ इल्मे दीन के फर्जे-ऐन और फर्जे-किफाया की तफसील	548
★ फर्ज-ए-ऐन	549
★ तसव्वुफ का इल्म भी फर्जे-ऐन में दाखिल है	549
★ फर्जे-ए-किफाया	550
★ दीनी इल्म का कोर्स	550
★ दीनी इल्म हासिल करने के बाद आलिम के फराईज	551
★ आयत नम्बर 123-127 मय खुलासा-ए-तफसीर	554
★ मआरिफ व मसाईल	555
★ आयत नम्बर 128-129 मय खुलासा-ए-तफसीर	556
★ मआरिफ व मसाईल	557

सूर: यूनस

559

★ आयत नम्बर 1-4 मय खुलासा-ए-तफसीर	561
★ मआरिफ व मसाईल	562
★ आयत नम्बर 5-6 मय खुलासा-ए-तफसीर	567
★ मआरिफ व मसाईल	567
★ आयत नम्बर 7-10 मय खुलासा-ए-तफसीर	572
★ मआरिफ व मसाईल	573
★ अहकाम व मसाईल	577
★ आयत नम्बर 11-17 मय खुलासा-ए-तफसीर	579
★ मआरिफ व मसाईल	581
★ एक अहम फायदा	584

उन्वान	पेज
★ आयत नम्बर 18-20 मय खुलासा-ए-तफसीर	585
★ मआरिफ व मसाईल	586
★ काफिर व मुस्लिम दो अलग-अलग कौमें हैं, नस्ली और वतनी कौमियत बेकार है	586
★ आयत नम्बर 21-24 मय खुलासा-ए-तफसीर	589
★ मआरिफ व मसाईल	590
★ आयत नम्बर 25-32 मय खुलासा-ए-तफसीर	593
★ मआरिफ व मसाईल	594
★ आयत नम्बर 33-36 मय खुलासा-ए-तफसीर	598
★ आयत नम्बर 37-40 मय खुलासा-ए-तफसीर	600
★ मआरिफ व मसाईल	601
★ आयत नम्बर 41-44 मय खुलासा-ए-तफसीर	602
★ आयत नम्बर 45-56 मय खुलासा-ए-तफसीर	605
★ मआरिफ व मसाईल	607
★ आयत नम्बर 57-61 मय खुलासा-ए-तफसीर	609
★ मआरिफ व मसाईल	610
★ फायदा	613
★ आयत नम्बर 62-64 मय खुलासा-ए-तफसीर	614
★ मआरिफ व मसाईल	615
★ आयत नम्बर 65-66 मय खुलासा-ए-तफसीर	620
★ आयत नम्बर 67-70 मय खुलासा-ए-तफसीर	622
★ आयत नम्बर 71-73 मय खुलासा-ए-तफसीर	623
★ आयत नम्बर 74 मय खुलासा-ए-तफसीर	624
★ आयत नम्बर 75-82 मय खुलासा-ए-तफसीर	626
★ आयत नम्बर 83-86 मय खुलासा-ए-तफसीर	627
★ आयत नम्बर 87-91 मय खुलासा-ए-तफसीर	629
★ मआरिफ व मसाईल	630
★ आयत नम्बर 92-98 मय खुलासा-ए-तफसीर	636
★ मआरिफ व मसाईल	638
★ हजरत यूनुस अलैहिस्सलाम का तफसीली बाकिआ	646
★ आयत नम्बर 99-100 मय खुलासा-ए-तफसीर	649
★ आयत नम्बर 101-103 मय खुलासा-ए-तफसीर	649

उनवान	पेज
★ आयत नम्बर 104-107 मय खुलासा-ए-तफसीर	651
★ आयत नम्बर 108-109 मय खुलासा-ए-तफसीर	652
सूर: हूद	653
★ आयत नम्बर 1-5 मय खुलासा-ए-तफसीर	655
★ मआरिफ़ व मसाईल	656
पारा (12) व मा मिन् दाब्बतिन्	660
★ आयत नम्बर 6-8 मय खुलासा-ए-तफसीर	661
★ मआरिफ़ व मसाईल	662
★ रिज़्क की खुदाई जिम्मेदारी पर एक सवाल और जवाब	663
★ सारी मख़्लूक को रिज़्क पहुँचाने का अजीब व ग़रीब कुदरती निज़ाम	665
★ आयत नम्बर 9-14 मय खुलासा-ए-तफसीर	668
★ मआरिफ़ व मसाईल	670
★ आयत नम्बर 15-17 मय खुलासा-ए-तफसीर	675
★ मआरिफ़ व मसाईल	676
★ आयत नम्बर 18-24 मय खुलासा-ए-तफसीर	681
★ आयत नम्बर 25-35 मय खुलासा-ए-तफसीर	685
★ मआरिफ़ व मसाईल	687
★ आयत नम्बर 36-40 मय खुलासा-ए-तफसीर	693
★ मआरिफ़ व मसाईल	694
★ नूह अलैहिस्सलाम को कश्ती बनाने का प्रशिक्षण	695
★ तमाम ज़रूरी उद्योगों की शुरूआत वही के ज़रिये हुई	696
★ आयत नम्बर 41-44 मय खुलासा-ए-तफसीर	699
★ मआरिफ़ व मसाईल	700
★ कश्तियों और दूसरी सवारियों पर सवार होने के आदाब	700
★ हर सवारी का चलना और ठहरना सिर्फ़ अल्लाह तआला की कुदरत से है	701
★ आयत नम्बर 45-49 मय खुलासा-ए-तफसीर	705
★ मआरिफ़ व मसाईल	706
★ काफ़िर और ज़ालिम के लिये दुआ जायज़ नहीं	707
★ मोमिन व काफ़िर में बिरादराना रिश्ता नहीं हो सकता	708

उन्वान	पेज
★ आयत नम्बर 50-68 मय खुलासा-ए-तफसीर	715
★ मआरिफ व मसाईल	718
★ वअज व नसीहत और दीन की दावत पर उजरत	719
★ आयत नम्बर 69-73 मय खुलासा-ए-तफसीर	723
★ मआरिफ व मसाईल	724
★ अहकाम व मसाईल	726
★ 'सलाम' की सुन्नत	726
★ मेहमानी और मेहमानदारी के चन्द उसूल	727
★ आयत नम्बर 74-83 मय खुलासा-ए-तफसीर	730
★ मआरिफ व मसाईल	732
★ आयत नम्बर 84-95 मय खुलासा-ए-तफसीर	739
★ मआरिफ व मसाईल	742
★ अहकाम व मसाईल	745
★ नाप-तौल की कमी का मसला	745
★ आयत नम्बर 96-101 मय खुलासा-ए-तफसीर	747
★ आयत नम्बर 102-111 मय खुलासा-ए-तफसीर	750
★ आयत नम्बर 112-113 मय खुलासा-ए-तफसीर	751
★ मआरिफ व मसाईल	752
★ 'इस्तिकामत' का मतलब और अहम फायदे व मसाईल	753
★ आयत नम्बर 114-123 मय खुलासा-ए-तफसीर	758
★ मआरिफ व मसाईल	760
★ कुरआनी अन्दाज में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बड़ाई वाली शान की तरफ इशारा	760
★ अच्छा और बुरा इख़िलाफ़ (मतभेद)	766
★ ★	

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

(सूर: आराफ़ का बाकी हिस्सा)

وَمَا أَرْسَلْنَا فِي قَرْيَةٍ مِّن نَّبِيٍّ إِلَّا أَخَذْنَا أَهْلَهَا بِالْبَأْسَاءِ وَالضَّرَاءِ لَعَلَّهُمْ
يَضُرَّعُونَ ۝ ثُمَّ بَدَّلْنَا مَكَانَ السَّيِّئَةِ الْحَسَنَةَ حَتَّىٰ عَفَوْا وَقَالُوا قَدْ مَسَّ آبَاءَنَا الضَّرَاءُ وَالسَّرَاءُ
فَأَخَذْنَاهُمْ بَغْتَةً وَهُمْ لَا يَشْعُرُونَ ۝ وَلَوْ أَن أَهْلُ الْقُرَىٰ آمَنُوا وَاتَّقَوْا لَفَتَحْنَا عَلَيْهِم بَرَكَاتٍ
مِّنَ السَّمَاءِ وَالْأَرْضِ وَلَكِن كَذَّبُوا فَأَخَذْنَاهُم بِمَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ۝ أَفَأَمِنَ أَهْلُ الْقُرَىٰ أَن يَأْتِيَهُمْ
بَأْسُنَا بَيَاتًا وَهُمْ نَائِمُونَ ۝ أَوْ آمِنَ أَهْلُ الْقُرَىٰ أَن يَأْتِيَهُمْ بَأْسُنَا ضُحًى وَهُمْ يُلْعَبُونَ ۝ أَفَأَمِنُوا
مَكْرَ اللَّهِ ۚ فَلَا يَأْمَنُ مَكْرَ اللَّهِ إِلَّا الْقَوْمُ الْخَاسِرُونَ ۝

व मा अरसल्ला फी करयतिम् मिन्
नबियिन् इल्ला अख़ज़्ना अहलहा
बिल्बअसा-इ वज़्ज़रा-इ लअल्लहुम्
यज़्ज़रअून (94) सुम्-म बददल्ला
मकानस्सय्यि-अतिल् ह-स-न-त हत्ता
अफ़व्-व कालू कद् मस्-स
आबा-अनज़्ज़रा-उ वस्सर्रा-उ
फ-अख़ज़्नाहुम् बग़त-तव्-व हुम् ला
यशअुरून (95) व लौ अन्-न
अहलल्कुरा आमनू वत्तकौ ल-फ़तह्ना
अलैहिम् ब-रकातिम् मिनस्समा-इ
वल्अर्जि व लाकिन् कज़्जबू
फ-अख़ज़्नाहुम् बिमा कानू यक्सिबून
(96) अ-फ़अमि-न अहलल्कुरा

और नहीं भेजा हमने किसी बस्ती में कोई
नबी कि न पकड़ा हो हमने वहाँ के लोगों
को सख़्ती और तकलीफ़ में ताकि वे
गिड़गिड़ायें (94) फिर बदल दी हमने
बुराई की जगह भलाई यहाँ तक कि वे
बढ़ गये और कहने लगे कि पहुँचती रही
है हमारे बाप दादाओं को भी तकलीफ़
और ख़ुशी फिर पकड़ा हमने उनको
अचानक और उनको ख़बर न थी (95)
और अगर बस्तियों वाले ईमान लाते और
परहेज़गारी करते तो हम खोल देते उन
पर नेमतें आसमान और ज़मीन से लेकिन
झुठलाया उन्होंने पस पकड़ा हमने उनको
उनके आमाल के बदले (96) अब क्या
बेडर हैं बस्तियों वाले इससे कि आ पहुँचे

अय्यति-यहुम् बअसुना बयातव-व
हुम् ना-इमून (97) अ-व अमि-न
अह्लुल्कुरा अय्यति-यहुम् बअसुना
जुहंवहुम् यलअबून (98) अ-फअमिनु
मकरल्लाहि फला यअमनु मकरल्लाहि
इल्लल् कौमुल्-ख्रासिरून (99) ❀

उन पर आफत हमारी रातों रात जब
सोते हों (97) या बेडर हैं बस्तियों वाले
इस बात से कि आ पहुँचे उन पर हमारा
अज़ाब दिन चढ़े जब खेलते हों (98)
क्या बेडर हो गये अल्लाह के दाव से, सो
बेडर नहीं होते अल्लाह के दाव से मगर
खराबी में पड़ने वाले। (99) ❀

खुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने (इन जिक्र हुई और इनके अलावा और भी दूसरी बस्तियों में से) किसी बस्ती में कोई नबी नहीं भेजा मगर यह कि वहाँ के रहने वालों को (उस नबी के न मानने पर पहले शुरू में तंबीह न की हो, और चेतावनी की गर्ज से उनको) हमने मोहताजी और बीमारी में पकड़ा ताकि वे ढीले पड़ जाएँ (और अपने कुफ़्र व झुठलाने से तौबा करें)। फिर (जब उससे न चेते तो ढील देने या इस गर्ज से कि मुसीबत के बाद जो नेमत होती है उसकी ज्यादा कद्र होती है और तबई तौर पर आदमी नेमत देने वाले की इताअत करने लगता है) हमने उस बदहाली की जगह खुशहाली बदल दी, यहाँ तक कि उनको (खुशहाली और सेहत के साथ माल व औलाद में) खूब तरक्की हुई और (उस वक़्त अपनी उल्टी समझ की वजह से) कहने लगे कि (वह पहली मुसीबत हम पर कुफ़्र व झुठलाने के सबब न थी वरना फिर खुशहाली क्यों होती, बल्कि यह इत्तिफ़ाकी तौर पर ज़माने के हालात से है, चुनाँचे) हमारे बाप-दादा को भी (ये दो हालतें कभी) तंगी और (कभी) राहत पेश आई थी (इसी तरह हम पर ये हालतें गुज़र गयीं। जब वे इस भूल में पड़ गये) तो (उस वक़्त) हमने उनको अचानक (घातक अज़ाब में) पकड़ लिया और उनको (उस अज़ाब के आने की) ख़बर भी न थी (यानी अगरचे उनको अम्बिया ने ख़बर दी थी मगर चूँकि वे उस ख़बर को ग़लत समझते थे और ऐश व आराम में भूले हुए थे इसलिये उनको गुमान न था)। और (हमने जो उनको हलाक करने वाले अज़ाब में पकड़ा तो इसका सबब सिर्फ़ उनका कुफ़्र और मुख़ालफ़त थी, वरना) अगर उन बस्तियों के रहने वाले (लोग, पैग़म्बरों पर) ईमान ले आते और (उनकी मुख़ालफ़त से) परहेज़ करते तो हम (बजाय ज़मीनी व आसमानी आफ़तों के) उन पर आसमान और ज़मीन की बरकतें खोल देते (यानी आसमान से बारिश और ज़मीन से पैदावार को बरकत के साथ अता फ़रमाते, और अगरचे इस हलाकत से पहले उनको खुशहाली एक हिक्मत के लिये दी गयी लेकिन इस खुशहाली में इसलिये बरकत न थी कि आख़िर वह जान की मुसीबत हो गयी, बख़िलाफ़ उन नेमतों के जो ईमान व इताअत के साथ मिलती हैं कि उनमें यह ख़ैर व बरकत होती है कि वो बवाल कभी नहीं होतीं, न दुनिया में न आख़िरत में। हासिल यह कि अगर वे ईमान व परहेज़गारी इख़्तियार करते तो उनको भी ये बरकतें देते)

लेकिन उन्होंने तो (पैग़म्बरों को) झुठलाया तो हमने (भी) उनके (बुरे) आमाल की वजह से उनको पकड़ लिया। (जिसको ऊपर "अख़ज़ाहुम बग़्ततन्" से ताबीर फ़रमाया है। आगे मौजूदा काफ़िरों को इब्त दिलाते हैं) क्या (इन किस्सों को सुनकर) फिर भी इन (मौजूदा) बस्तियों के रहने वाले (जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के नुबुव्वत के दौर में मौजूद हैं) इस बात से बेफ़िक़्र हो गये हैं कि उन पर (भी) हमारा अज़ाब रात के वक़्त आ पड़े, जिस वक़्त वे (पड़े) सोते हों। और क्या इन (मौजूदा) बस्तियों के रहने वाले (अपने कुफ़्र व झुठलाने के बावजूद जो कि पहले काफ़िरों के हलाक व तबाह होने का सबब था) इस बात से बेफ़िक़्र हो गये हैं कि (उन्हीं पहले गुज़रे काफ़िरों की तरह) उन पर हमारा अज़ाब दिन-दोपहर आ पड़े, जिस वक़्त कि वे अपने बेकार के किस्सों में मशगूल हों (इससे दुनियावी कारोंबार मुराद हैं)। हाँ तो क्या अल्लाह की इस (अचानक) पकड़ से (जिसका ऊपर बयान हुआ है) बेफ़िक़्र हो गये, सो (समझ लो कि) खुदा तआला की पकड़ से सिवाय उनके जिनकी शामत ही आ गई हो और कोई बेफ़िक़्र नहीं होता।

मज़ारिफ़ व मसाईल

पिछले अम्बिया अलैहिमुस्सलाम और उनकी कौमों के इतिहास और उनके इब्तनाक हालात व वाकिआत में से जिनका सिलसिला कई रकूअ पहले से चल रहा है, यहाँ तक पाँच हज़राते अम्बिया के वाकिआत का बयान हुआ है। छठा किस्सा हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम और उनकी कौम बनी इस्राईल का है जो तफ़्सील के साथ नौ आयतों के बाद आने वाला है।

यह बात पहले बयान हो चुकी है कि क़ुरआने करीम विश्व-इतिहास और दुनिया की कौमों के हालात बयान करता है मगर बयान का अन्दाज़ यह रहता है कि आम ऐतिहासिक किताबों और किस्से-कहानियों की किताबों की तरह किसी किस्से को तरतीब और तफ़्सील के साथ लाने के बजाय हर जगह के मुनासिब किसी किस्से का एक हिस्सा बयान किया जाता है, उसके साथ उससे हासिल होने वाले नसीहत भरे परिणाम ज़िक्र किये जाते हैं। इसी अन्दाज़ पर यहाँ उन पाँच किस्सों के बयान के बाद इन आयतों में जो ऊपर लिखी गयी हैं कुछ तंबीहात मज़कूर हैं।

पहली आयत में इरशाद फ़रमाया कि कौमे नूह और आद व समूद कौमों के साथ जो वाकिआत पेश आये वो कुछ उन्हीं के साथ मख़सूस नहीं बल्कि अल्लाह तआला शानुहू की आम आदत यही है कि कौमों की हिदायत और उनकी बेहतरी व कामयाबी के लिये हज़राते अम्बिया अलैहिमुस्सलाम को भेजते हैं, जो लोग उनकी नसीहत पर कान नहीं धरते तो पहले उनको दुनिया की मुसीबतों व तकलीफ़ों में मुब्तला कर दिया जाता है ताकि तकलीफ़ व मुसीबत उनका रुख़ अल्लाह तआला की तरफ़ फेर दें, क्योंकि इनसान को फ़ितरी तौर पर मुसीबत के वक़्त खुदा ही याद आता है। और यह ज़ाहिरी तकलीफ़ व मुसीबत हकीक़त में रहमान व रहीम की रहमत व इनायत होती है जैसा कि मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया है:

ख़ल्क़ रा बा तू चुनीं बदख़ू कुनन्द

ता तुरा नाचार रु आँ सू कुनन्द

यानी सख्तूक से जो तुझे परेशानी व तकलीफ पहुँचती है यह भी दर असल इसकी एक तद्बीर है कि इनसान अपने पैदा करने वाले की तरफ़ मुतवज्जह हो और गैरुल्लाह से अपनी उम्मीदें तोड़ ले। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

उक्त आयत में:

اِخْذْنَا اَهْلَهَا بِالْبَاسَاءِ وَالضَّرَآءِ لَعَلَّهُمْ يَضُرُّوْنَ

का यही मतलब है। 'बुअ्स' और 'बअ्सा' के मायने फ़क़ व फ़ाक़े और 'ज़र' व 'ज़र्रा-अ' के मायने बीमारी व रोग के आते हैं। क़ुरआन मजीद में यह लफ़्ज़ जगह-जगह इसी मायने में आया है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु ने इसके यही मायने बयान फ़रमाये हैं। लुग़त के कुछ आलिमों ने कहा कि 'बुअ्स' और 'बअ्सा' माली नुक़सान के लिये बोला जाता है और 'ज़र' व 'ज़र्रा-अ' जानी नुक़सान के लिये। इसका हासिल भी यही है।

आयत का मतलब यह है कि जब कभी हम किसी क़ौम की तरफ़ अपने रसूल भेजते हैं और वे उनकी बात नहीं मानते तो हमारी आदत यह है कि पहले उनको दुनिया ही में माली और जानी तंगी व बीमारी वगैरह में मुब्तला कर देते हैं ताकि वे कुछ ढीले हो जायें और अन्जाम पर नज़र करके अल्लाह की तरफ़ रुजू हों। उसके बाद दूसरी आयत में फ़रमाया:

ثُمَّ بَدَّلْنَا مَكَانَ السَّيِّئَةِ الْحَسَنَةَ حَتَّىٰ عَفَوْا

इसमें "सय्यिआ" से मुराद वह फ़क़ व फ़ाका या बीमारी की बुरी हालत है जिसका ज़िक्र ऊपर आया, और "ह-सना" से मुराद उसके मुक़ाबले में माल में वुस्अत व फ़राखी और बदन में सेहत व सलामती है। और लफ़्ज़ "अफ़व्" 'अफ़य' से बना है जिसके एक मायने बढ़ने और तरक्की करने के भी हैं। कहा जाता है "अफ़न्नबाति" घास या दरख़्त बढ़ गये। 'अफ़श्शम्मु वल्वबुरु' जानवर की चर्बी और बाल बढ़ गये। इसी मायने से इस जगह "अफ़व्" के मायने हैं "बढ़ गये और तरक्की कर गये"।

मतलब यह है कि पहला इम्तिहान उन लोगों को फ़क़ व फ़ाक़े और बीमारी वगैरह में मुब्तला करके लिया गया था, जब उसमें नाकामयाब हुए यानी अल्लाह तआला की तरफ़ रुजू न हुए तो दूसरा इम्तिहान इस तरह लिया गया कि उनके फ़क़ व फ़ाक़े (तंगी और बदहाली) के बजाय माल व दौलत की वुस्अत, और बीमारी के बजाय सेहत व सलामती उनको अता कर दी गयी, यहाँ तक कि वे ख़ूब बढ़ गये और हर चीज़ में तरक्की कर गये। इस इम्तिहान का हासिल यह था कि मुसीबत के बाद राहत और दौलत मिलने पर वे शुक्रगुज़ार हों और इस तरह वे अल्लाह तआला की तरफ़ रुजू करें, लेकिन यह गुफ़लत के आदी माद्दी राहतों और लज़्ज़तों में डूबे हुए इससे भी होशियार (सचेत) न हुए बल्कि यह कहने लगे:

وَقَالُوا قَدْ مَسَّ آبَاءَنَا الضَّرَآءُ وَالسَّرَآءُ

यानी यह कोई नई बात नहीं और न यह किसी अच्छे या बुरे अमल का नतीजा है, बल्कि ज़माने का मिज़ाज और चलन ही यही है कि कभी राहत कभी रंज, कभी बीमारी कभी सेहत,

कभी तंगी कभी फ़राखी हुआ ही करती है। हमारे बाप-दादों को भी ऐसे ही हालात पेश आये हैं।
ख़ुलासा यह कि पहला इम्तिहान तकलीफ़ व मुसीबत के ज़रिये किया गया, उसमें नाकाम
हुए। दूसरा इम्तिहान राहत व दौलत से किया गया उसमें नाकाम रहे, और किसी तरह अपनी
गुमराही से बाज़ न आये, तब अचानक अज़ाब में पकड़े गये:

فَاَخَذْنَهُمْ بَغْتَةً وَهُمْ لَا يَشْعُرُونَ.

“बग़ततन्” के मायने हैं अचानक। मतलब यह है कि जब ये लोग दोनों किस्म की
आज़माईशों में नाकाम रहे और होश में न आये तो फिर हमने उनको अचानक इस तरह अज़ाब
में पकड़ लिया कि उनको उसकी ख़बर भी न थी।

तीसरी आयत में इरशाद फ़रमाया:

وَلَوْ أَنَّ أَهْلَ الْقُرَىٰ آمَنُوا وَاتَّقَوْا لَفَتَحْنَا عَلَيْهِم بَرَكَاتٍ مِّنَ السَّمَاءِ وَالْأَرْضِ وَلَٰكِن كَذَّبُوا فَأَخَذْنَاهُم بِمَا
كَانُوا يَكْسِبُونَ.

यानी अगर उन बस्तियों के रहने वाले ईमान ले आते और नाफ़रमानी से परहेज़ करते तो
हम उन पर आसमान और ज़मीन की बरकतें खोल देते, लेकिन उन्होंने झुठलाया तो हमने उनको
उनके आमाल की वजह से पकड़ लिया।

बरकत के लफ़्ज़ी मायने ज़्यादती और बढ़ोतरी के हैं। आसमान और ज़मीन की बरकतों से
मुराद यह है कि हर तरह की भलाई हर तरफ़ से उनके लिये खोल देते। आसमान से पानी
ज़रूरत के मुताबिक़ वक़्त पर बरसता, ज़मीन से हर चीज़ इच्छा के मुताबिक़ पैदा होती। फिर
उन चीज़ों से नफ़ा उठाने और राहत हासिल करने के सामान जमा कर दिये जाते कि कोई
परेशानी और फ़िक्र लाहिक़ न होती, जिसकी वजह से बड़ी से बड़ी नेमत बेमज़ा हो जाती है। हर
चीज़ में बरकत यानी ज़्यादती होती।

फिर बरकत का ज़हूर दुनिया में दो तरह से होता है- कभी तो असल चीज़ वास्तव में बढ़
जाती है जैसे रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मोजिज़ों में एक मामूली बरतन के
पानी से पूरे काफ़िले का सैराब होना, या थोड़े से खाने से एक मजमे का पेट भर जाना सही
रिवायतों में बयान हुआ है। और कभी ऐसा भी होता है कि अगरचे ज़ाहिरी तौर पर उस चीज़ में
कोई बढ़ोतरी नहीं हुई, मात्रा उतनी ही रही जितनी थी, लेकिन उससे काम इतने निकले जितने
उससे दोगुनी चौगुनी चीज़ से निकलते। और यह आम तौर से देखा जाता है कि कोई बरतन
कपड़ा घर या घर का सामान ऐसा मुबारक होता है कि उससे उम्र भर आदमी राहत उठाता है
और वह फिर भी कायम रहता है। और कुछ चीज़ें ऐसी होती हैं कि बनाते ही टूट गयीं, या
सालिम भी रहीं मगर उनसे नफ़ा उठाने का मौका हाथ न आया, या नफ़ा भी उठाया लेकिन पूरा
नफ़ा न उठा सके।

और यह बरकत इन्सान के माल में भी होती है जान में भी, काम में भी और वक़्त में भी।
बाज़ मर्तबा एक लुक्मा ऐसा होता है कि इन्सानों की कुव्वत व सेहत का सबब बन जाता है

और कई बार बड़ी से बड़ी ताकतवर गिज़ा और दवा काम नहीं देती। इसी तरह बाज़ वक़्त में बरकत होती है तो एक घण्टे में इतना काम हो जाता है कि दूसरे वक़्तों में चार घण्टों में भी नहीं होता। इन सब सूरतों में अगरचे मात्रा के एतिबार से न माल बढ़ा है न वक़्त मगर बरकत का ज़हूर इस तरह हुआ कि उससे काम बहुत निकले।

इस आयत ने यह बात वाज़ेह कर दी कि आसमान और ज़मीन की तमाम मख़्लूक़ात व मौजूदात की बरकतें ईमान और तक्वे (नेकी व परहेज़गारी) पर मौकूफ़ हैं, इनको इख़्तियार किया जाये तो आख़िरत की फ़लाह (कामयाबी) के साथ दुनिया की फ़लाह व बरकतें भी हासिल होती हैं, और ईमान व तक्वे को छोड़ने के बाद उनकी बरकतों से मेहरूमी हो जाती है। आज की दुनिया के हालात पर गौर किया जाये तो यह बात एक ज़िन्दा हकीक़त बनकर सामने आ जाती है कि आजकल ज़ाहिरी तौर पर ज़मीन की पैदावार पहले की तुलना में बहुत ज़्यादा है और प्रयोग होने वाली चीज़ों की बोहतात और नई-नई ईजादें तो इस क़दर हैं कि पिछली नस्लों को इनका तसव्वुर (कल्पना व ख़्याल) भी न हो सकता था, मगर इस तमाम साज़ व सामान की बोहतात और फ़रावानी (अधिकता) के बावजूद आज का इनसान सख़्त परेशान, बीमार, तंगदस्त नज़र आता है, आराम व राहत और अमन व इल्मीनान का कहीं वजूद नहीं। इसका सबब इसके सिवा क्या कहा जा सकता है कि सामान सारे मौजूद और अधिकता के साथ मौजूद हैं मगर उनकी बरकत मिट गयी है।

यहाँ एक यह बात भी काबिले गौर है कि सूर: अन्जाम की एक आयत के अन्दर काफ़िरों व गुनाहगारों के बारे में आया है:

فَلَمَّا نَسُوا مَا ذُكِّرُوا بِهِ فَتَحْنَا عَلَيْهِمُ أَبْوَابَ كُلِّ شَيْءٍ

यानी जब उन लोगों ने अल्लाह के अहक़ाम को भुला दिया तो हमने उन पर हर चीज़ के दरवाज़े खोल दिये, और फिर अचानक उनको अज़ाब में पकड़ लिया। इससे मालूम होता है कि दुनिया में हर चीज़ के दरवाज़े किसी पर खुल जाना कोई असली इनाम नहीं बल्कि वह एक तरह का अल्लाह का क़हर भी हो सकता है। और यहाँ यह बतलाया गया है कि अगर ईमान व तक्वा इख़्तियार करते तो हम उन पर आसमान व ज़मीन की बरकतें खोल देते। जिससे मालूम होता है कि आसमान व ज़मीन की बरकतें अल्लाह तआला के इनामात और उसकी रज़ा की अलामात (निशानियाँ) हैं।

बात यह है कि दुनिया की नेमतें और बरकतें कभी गुनाहों और नाफ़रमानी में हद से गुज़र जाने पर उनके जुर्म को और ज़्यादा स्पष्ट करने के लिये महज़ अस्थायी चन्द दिन की होती हैं, वो क़हर व ग़ज़ब की निशानी होती हैं, और कभी रहमत व इनायत से हमेशा की बेहतरी व कामयाबी के लिये होती हैं, वह ईमान व नेकी का नतीजा होती हैं। सूरत (ज़ाहिर में देखने) के एतिबार से उनमें फ़र्क़ करना मुश्किल होता है, क्योंकि अन्जाम और परिणाम का हाल किसी को मालूम नहीं, मगर अल्लाह के नेक बन्दों ने निशानियों के ज़रिये यह पहचान बतलाई है कि जब माल व दौलत और ऐश व आराम के साथ अल्लाह तआला के शुक्र व इबादत की और ज़्यादा

तौफीक हो तो यह समझा जायेगा कि यह रहमत है, और अगर माल व दौलत और इज्जत व राहत के साथ अल्लाह तआला से विमुख होना, बेतवज्जोही और गुनाहों की अधिकता बढ़े तो यह अलामत (पहचान) इसकी है कि यह अल्लाह के कहर की एक सूरत है। अल्लाह तआला इससे हमें अपनी पनाह में रखे।

चौथी आयत में फिर दुनिया की सब कौमों को तंबीह करने के लिये इरशाद फरमाया कि उन बस्तियों के बसने वाले इस बात से बेफिक्र हो बैठे कि हमारा अज़ाब उनको उस हालत में आ पकड़े जबकि वे रात को सो रहे हों। और क्या ये बस्ती वाले इससे बेखौफ हो गये कि हमारा अज़ाब उनको उस हालत में आ पकड़े जबकि वे दिन चढ़े अपने खेल-तमाशों में मशगूल हों। क्या ये लोग अल्लाह तआला की खुफिया तदबीर व तकदीर से मुल्मईन हो बैठे? सो खूब समझ लो कि अल्लाह तआला की खुफिया तदबीर व तकदीर से बेफिक्र वही कौम हो सकती है जो खसारे (नुकसान और घाटे) में पड़ी हुई हो।

खुलासा यह है कि ये लोग जो दुनिया की ऐश व राहत में मस्त होकर खुदा तआला को भुला बैठते हैं इनको इस बात से बेफिक्र न होना चाहिये कि अल्लाह तआला का अज़ाब उन पर रात के वक़्त या दिन के वक़्त किसी भी हालत में आ सकता है, जैसा कि पिछली कौमों के अज़ाब के वाकिआत का ज़िक्र ऊपर आ चुका है। अक्लमन्द का काम यह है कि दूसरों के हालात से इब्रत (सबक) हासिल करे और जो काम दूसरों के लिये हलाकत व बरबादी का सबब बन चुके हैं उनके पास जाने से बचे।

أَوَلَمْ يَهْدِ لِلَّذِينَ يَرِثُونَ الْأَرْضَ مِنْ بَعْدِ أَهْلِهَا أَنْ لَوْ شَاءُ أَصْبَنَهُم بِذُنُوبِهِمْ وَلَطَبَ
عَلَى قُلُوبِهِمْ فَهُمْ لَا يَسْمَعُونَ ۝ تِلْكَ الْقُرَى نَقُصُّ عَلَيْكَ مِنْ أَنْبَاءِهَا ۖ وَلَقَدْ جَاءَتْهُمْ
رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ ۖ فَمَا كَانُوا لِيُؤْمِنُوا بِهَا كَذَّبُوا مِنْ قَبْلُ ۚ كَذَلِكَ يَطْبَعُ اللَّهُ عَلَى قُلُوبِ الْكَافِرِينَ ۝ وَمَا
وَجَدْنَا لِأَكْثَرِهِمْ مِنْ عَهْدٍ ۚ وَإِنْ وَجَدْنَا أَكْثَرَهُمْ لَفَاسِقِينَ ۝

अ-व लम् यहिद लिल्लज़ी-न
यरिसूनल्-अर्-ज मिम्-बअदि
अस्लिहा अल्लौ नशा-उ असब्नाहुम्
बिज़्नुबिहिम् व नत्वज़ु अला
कुलूबिहिम् फहुम् ला यस्मअून
(100) तिल्कल्कुरा नकुस्सु अलै-क
मिन् अम्बा-इहा व ल-कद् जाअत्हुम्

क्या नहीं ज़ाहिर हुआ उन लोगों पर जो
वारिस हुए ज़मीन के वहाँ के लोगों के
हलाक होने के बाद कि अगर हम चाहें
तो उनको पकड़ लें उनके गुनाहों पर,
और हमने मुहर कर दी है उनके दिलों पर
सो वे नहीं सुनते। (100) ये बस्तियाँ हैं
कि सुनाते हैं हम तुझको इनके कुछ

रसूलुहुम् बिल्बय्थिनाति फ़मा क़ानू
 लियुअमिन् बिमा कज़्ज़बू मिन्
 क़ब्लु, कज़्ज़ालि-क यत्बअुल्लाहु अ़ला
 कुलूबिल्-काफ़िरीन (101) व मा
 वजदना लिअक्सरिहिम् मिन् अहदिन्
 व इव-वजदना अक्स-रहुम्
 लफ़ासिकीन (102)

हालात, और बेशक उनके पास पहुँच चुके
 उनके रसूल निशानियाँ लेकर, फिर
 हरगिज़ न हुआ कि ईमान लायें उस बात
 पर जिसको पहले झूठला चुके थे। यूँ
 मुहर कर देता है अल्लाह काफ़िरो के दिल
 पर। (101) और न पाया उनके अक्सर
 लोगों में हमने अहद का निबाह, और
 अक्सर उनमें पाये नाफ़रमान। (102)

खुलासा-ए-तफ़सीर

(आगे इसका सबब और वजह बतलाते हैं कि उनको अज़ाब से क्यों डरना चाहिये, और वह वजह उनका पहली उम्मतों के साथ कुफ़्र के जुर्म में शरीक होना है। यानी) और उन (गुज़रे हुए) ज़मीन पर रहने वालों के बाद जो लोग (अब) ज़मीन पर उनकी जगह रहते हैं, क्या (इन ज़िक्र हुए वाकिआत ने) उनको यह बात (अभी) नहीं बतलाई कि अगर हम चाहते तो उनको (भी पहली उम्मतों की तरह) उनके जुर्मों (कुफ़्र व झूठलाने) के सबब हलाक कर डालते, (क्योंकि पहली उम्मतें इन ही ज़राईम के सबब हलाक की गयीं) और (वाकई ये वाकिआत तो ऐसे ही हैं कि इनसे सबक लेना चाहिये था, लेकिन असल यह है कि) हम उनके दिलों पर बन्द लगाये हुए हैं, इससे वे (हक़ बात को दिल से) सुनते (भी) नहीं (और मानना तो दरकिनार रहा, पस इस बन्द लगाने से उनकी दिल की सख़्ती बढ़ गयी कि ऐसे सबक लेने वाले वाकिआत से भी सीख नहीं लेते, और इस बन्द लगाने का सबब उन्हीं का शुरू में कुफ़्र करना है, जैसा कि अल्लाह तआला का इरशाद है:

طَعَّ اللَّهُ عَلَيْهَا بِكُفْرِهِمْ

आगे शायद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तसल्ली के लिये ज़िक्र हुए सारे मज़मून का खुलासा है कि) उन (ज़िक्र हुई) बस्तियों के कुछ-कुछ किस्से हम आप से बयान कर रहे हैं, और उन सब (बस्तियों में रहने वालों) के पास उनके पैग़म्बर मोज़िज़े लेकर आये थे (मगर) फिर (भी उनकी ज़िद और हठधर्मी की यह हालत थी कि) जिस चीज़ को उन्होंने अव्वल (ही मर्तबा में एक बार) झूठा कह दिया, यह बात न हुई कि फिर उसको मान लेते। (और जैसे ये दिल के सख़्त थे) अल्लाह तआला इसी तरह काफ़िरो के दिलों पर बन्द लगा देते हैं। और (उनमें से बाज़े लोग मुसीबतों में ईमान लाने का अहद भी कर लेते थे लेकिन) ज्यादातर लोगों में हमने अहद को पूरा करना न देखा (यानी मुसीबत दूर हो जाने के बाद फिर वैसे के वैसे ही हो जाते थे), और हमने अक्सर लोगों को (रसूलों के भेजने, मोज़िज़ों के ज़ाहिर करने, निशानियों के

नाज़िल होने और मजबूत अहद करने के बावजूद) नाफ़रमान ही पाया (पस काफ़िर हमेशा से ऐसे ही होते रहे हैं, आप भी ग़म न कीजिए)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में भी पिछली कौमों के वाकिआत व हालात सुनाकर अरब व अजम (अरब से बाहर की) मौजूदा कौमों को यह बतलाना मकसूद है कि इन वाकिआत में तुम्हारे लिये सीख लेने का बड़ा सामान है कि जिन कामों की वजह से पिछले लोगों पर अल्लाह का गुज़ब और अज़ाब नाज़िल हुआ उनके पास न जायें, और जिन कामों की वजह से अम्बिया अलैहिमुस्सलाम और उनके पैरोकारों को कामयाबी हासिल हुई उनको इख़्तियार करे। चुनाँचे पहली आयत में इरशाद है:

وَلَمْ يَهْدِ لِلَّذِينَ يَرِثُونَ الْأَرْضَ مِنْكُمْ بَعْدَ أَهْلِهَا أَنْ لَوْ نَشَاءُ أَصْنَعُهُمْ بِذُنُوبِهِمْ.

“हदा, यहदी” के मायने निशानदेही करने और बतलाने के आते हैं। इस जगह इसका फ़ाज़िल (काम करने वाला) वो वाकिआत हैं जिनका ऊपर ज़िक्र किया गया है। मायने ये हैं कि मौजूदा ज़माने के लोग जो पिछली कौमों के हलाक होने के बाद उनकी ज़मीनों मकानों के वारिस बने या आगे बनेंगे, क्या उनको पिछले सबक लेने वाले वाकिआत ने यह नहीं बतलाया कि कुफ़्र व इनकार और अल्लाह के अहक़ाम की ख़िलाफ़वर्जी के नतीज़े में जिस तरह उनके पूर्वज (यानी पिछली कौमों) हलाक व बरबाद हो चुके हैं इसी तरह अगर ये भी उन्हीं ज़राईम (बुराईयों और अपराधों) के करने वाले रहे तो इन पर भी अल्लाह तआला का क़हर व अज़ाब आ सकता है।

इसके बाद फ़रमाया:

وَنَطَعُ عَلَى قُلُوبِهِمْ فَهُمْ لَا يَسْمَعُونَ.

“त-ब-अ” के मायने छापने और मुहर लगाने के हैं। और मायने ये हैं कि ये लोग पहले गुज़रे वाकिआत से भी कोई सबक और हिदायत हासिल नहीं करते। जिसका नतीजा यह होता है कि अल्लाह के गुज़ब से इनके दिलों पर मुहर लग जाती है, फिर वे कुछ नहीं सुनते। हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि जब कोई इनसान पहले पहल गुनाह करता है तो उसके दिल पर एक नुक्ता (धब्बा) सियाही का लग जाता है, दूसरा गुनाह करता है तो दूसरा और तीसरा गुनाह करता है तो तीसरा नुक्ता लग जाता है, यहाँ तक कि अगर वह बराबर गुनाहों में बढ़ता गया, तौबा न की तो ये सियाही के नुक्ते (धब्बे और बिन्दू) उसके सारे दिल को घेर लेते हैं और इनसान के दिल में अल्लाह तआला ने जो फ़ितरी मादा भले-बुरे की पहचान और बुराई से बचने का रखा है वह फ़ना या मग़लूब हो जाता है, और उसका यह नतीजा होता है कि वह अच्छी चीज़ को बुरा और बुरी को अच्छा, मुफ़ीद को नुक़सानदेह और नुक़सानदेह को मुफ़ीद ख़्याल करने लगता है। इसी हालत को कुरआन में “रा-न” यानी दिल के जंग (मैल) से ताबीर फ़रमाया है, और इसी हालत का आखिरी नतीजा वह है जिसको त-ब-अ यानी मुहर लगाने से इस आयत में और बहुत सी दूसरी आयतों में ताबीर किया गया है।

यही यह बात ध्यान देने के काबिल है कि दिल पर मुहर लग जाने का नतीजा तो अक्ल व समझ का खत्म हो जाना है, कानों की सुनने की सलाहियत पर तो उसका कोई असर आदतन नहीं हुआ करता, तो इस आयत में मौका इसका था कि इस जगह “फ़हुम ला यफ़्फ़हून” फ़रमाया जाता, यानी वे समझते नहीं। मगर कुरआने करीम में यहाँ “फ़हुम ला यस्मऊन” आया है, यानी वे सुनते नहीं। सबब यह है कि सुनने से मुराद इस जगह मानना और इताअत करना है जो नतीजा होता है समझने का। मतलब यह है कि दिलों पर मुहर लग जाने के सबब वे किसी हक़ बात को मानने पर तैयार नहीं होते। और यह भी कहा जा सकता है कि इनसान का दिल उसके तमाम बदन की अंगों और हिस्सों का मर्कज़ (केन्द्र) है, जब दिल के कामों में खलल आता है तो सारे अंगों के कामों में खलल आ जाता है। जब दिल में किसी चीज़ की भलाई या बुराई समा जाती है तो फिर हर चीज़ में उसको आँखों से भी वही नज़र आता है और कानों से भी वही सुनाई देता है। बुरा चाहने वाले की निगाह अपने मुख़ालिफ़ के हुनर और कमाल को भी ऐब ही की शक़ल में देखती है।

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमाया:

تِلْكَ الْقُرَى نَقُصُّ عَلَيْكَ مِنْ أَنْبَاءِهَا.

“अम्बा” “न-बउन्” की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने हैं कोई अज़ीमुश्शान ख़बर। मायने ये हैं कि हलाक व बरबाद होने वाली बस्तियों के कुछ वाकिआत हम आप से बयान करते हैं। इसमें हर्फ़ “मिन” से इशारा कर दिया गया कि पिछली कौमों के हालात व वाकिआत जो ज़िक्र किये गये हैं उन सारे वाकिआत को बयान नहीं किया बल्कि हजारों वाकिआत में से चन्द अहम वाकिआत का बयान है।

उसके बाद फ़रमाया:

وَلَقَدْ جَاءَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ فَمَا كَانُوا الْيَوْمِنَا إِلَّا مَكْذِبِينَ.

यानी उन सब लोगों के अम्बिया व रसूल उनके पास मोजिज़े लेकर पहुँचे जिनके ज़रिये हक़ व बातिल का फैसला हो जाता है, मगर उनकी ज़िद और हठधर्मी का यह आलम था कि जिस चीज़ के बारे में एक मर्तबा उनकी ज़बान से यह निकल गया था कि यह ग़लत और झूठ है, फिर उसके हक़ व सच्चा होने पर कितने ही मोजिज़े, दलीलें और हुज्जतें सामने आ गयीं मगर वे उसकी तस्दीक़ व इकरार के लिये तैयार न हुए।

इस आयत से एक तो यह बात मालूम हुई कि मोजिज़े तमाम अम्बिया व रसूलों को अता फ़रमाये गये हैं, जिनमें से कुछ अम्बिया के मोजिज़ों का कुरआन में ज़िक्र आया है, बहुत सों का नहीं आया। इससे यह समझना सही नहीं हो सकता कि जिनके मोजिज़ों का ज़िक्र कुरआन में नहीं आया उनसे कोई मोजिज़ा साबित ही नहीं। और सूर: हूद में जो हज़रत हूद अलैहिस्सलाम की कौम का यह कौल ज़िक्र हुआ है कि “मा जिअ-तना बिबय्थि-नतिन्” यानी आप कोई मोजिज़ा नहीं लाये, इस आयत से मालूम हुआ कि उनका यह कहना पूरी तरह दुश्मनी और हठधर्मी की बिना पर था, या यह कि उनके मोजिज़ों को मामूली समझकर ऐसा कहा।

दूसरी बात यह काबिले तवज्जोह है कि इस आयत में उन लोगों का जो हाल बतलाया गया है कि ग़लत बात ज़बान से निकल गयी तो उसी पर अड़े रहे और अपनी उसी बात को पानी देते रहे, उसके खिलाफ़ कितनी ही स्पष्ट दलीलें आ जायें, अपनी बात की पच करते रहे, यह खुदा की इनकारी और काफ़िर कौमों का हाल है जिसमें बहुत से मुसलमान बल्कि कुछ उलेमा व ख़्वास भी मुब्तला पाये जाते हैं, कि किसी चीज़ को पहली बार में ग़लत या झूठ कह दिया तो अब उसकी सच्चाई की हज़ारों दलीलें भी सामने आ जायें तो अपनी ग़लत बात की पैरवी करते रहें। यह हालत अल्लाह के क़हर और ग़ज़ब का सबब और उसको लाने वाली है।

(मसाईलुस्सुलूक)

इसके बाद फ़रमाया:

كَذَلِكَ يَطْبَعُ اللَّهُ عَلَى قُلُوبِ الْكَافِرِينَ.

यानी जिस तरह उन लोगों के दिलों पर मुहर लगा दी गयी, इसी तरह आम काफ़िर व मुन्किर लोगों के दिलों पर अल्लाह तआला मुहर लगा देते हैं कि फिर नेकी क़बूल करने की सलाहियत बाक़ी नहीं रहती।

तीसरी आयत में इरशाद फ़रमाया:

وَمَا وَجَدْنَا لِأَكْثَرِهِمْ مِنْ عَهْدٍ.

यानी उनमें से अक्सर लोगों को हमने अहद पूरा करने वाला न पाया।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि अहद से मुराद 'अहद-ए-अलस्त' (यानी रूहों के आलम में किया गया वह इक़रार व अहद) है जो अज़ल में तमाम मख़्लूक़ात के पैदा करने से पहले उन सब की रूहों को पैदा फ़रमाकर लिया गया था, जिसमें हक़ तआला ने फ़रमाया 'अलस्तु बिरब्बिकुम' यानी क्या मैं तुम्हारा परवर्दिगार नहीं? उस वक़्त तमाम इन्साऩी रूहों ने इक़रार और अहद के तौर पर जवाब दिया 'बला' यानी ज़रूर आप हमारे रब हैं। दुनिया में आकर अक्सर लोग पहले दिन के इस अहद को भूल गये, खुदा तआला को छोड़कर मख़्लूक़ परस्ती की लानत में गिरफ़्तार हो गये। इसलिये इस आयत में फ़रमाया कि हमने उनमें से अक्सर लोगों में अहद न पाया, यानी अहद की पाबन्दी और उसका पूरा करना न पाया। (तफ़सीरे कबीर)

और हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि अहद से मुराद 'ईमान का अहद' है जैसा कि क़ुरआने करीम में फ़रमाया:

إِلَّا مَنْ اتَّخَذَ عِنْدَ الرَّحْمَنِ عَهْدًا.

इसमें अहद से ईमान व फ़रमाँबरदारी का अहद मुराद है। तो आयत के मतलब का हासिल यह है कि उन लोगों में से अक्सर ने ईमान व नेकी का अहद हमसे बाँधा था फिर उसकी खिलाफ़वर्जी (उल्लंघन) की। अहद बाँधने से मुराद यह है कि उमूमन इन्सान जब किसी मुसीबत में मुब्तला होता है तो उस वक़्त कितना ही फ़ासिक़ फ़ाजिर (गुनाहगार व बद-आमाल) हो,

उसको भी खुदा ही याद आता है, और अक्सर दिल या ज़बान से अहद करता है कि इस मुसीबत से निजात मिल गयी तो अल्लाह तआला की फरमाँबरदारी व इबादत में लग जाऊँगा, नाफरमानी से बचूँगा, जैसा कि कुरआने करीम में बहुत से लोगों का यह हाल जिक्र किया गया है। लेकिन जब उनको निजात हो जाती है और आराम व राहत मिलती है तो फिर नाफरमानी और अपनी इच्छाओं पर चलने में मुब्तला हो जाते हैं, और उस अहद को भूल जाते हैं।

उक्त आयत में लफ्ज़ "अक्सर" से इसकी तरफ इशारा भी पाया जाता है, क्योंकि बहुत से लोग तो ऐसे बदबख्त होते हैं कि मुसीबत के वक़्त भी उन्हें खुदा याद नहीं आता और उस वक़्त भी वे ईमान व नेक आमाल का अहद नहीं करते, तो उनसे अहद के तोड़ने की शिकायत के कोई मायने नहीं, और बहुत से लोग वे भी हैं जो अहद को पूरा करते हैं, ईमान व नेकी के हुक्क अदा करते हैं, इसलिये फरमाया:

وَمَا وَجَدْنَا لِأَكْثَرِهِمْ مِنْ عَهْدٍ.

यानी हमने उनमें से अक्सर लोगों में अहद व इकरार का पूरा करना न पाया।

इसके बाद फरमाया:

وَإِنْ وَجَدْنَا أَكْثَرَهُمْ لَفَاسِقِينَ.

यानी हमने उनमें से अक्सर लोगों को इत्ताअत व फरमाँबरदारी से खारिज पाया।

यहाँ तक पिछले अम्बिया अलैहिमुस्सलाम और उनकी कौमों के पाँच वाकिआत का बयान करके मौजूदा लोगों को उनसे सबक व नसीहत हासिल करने के लिये तंबीहात फरमाई गयी हैं।

इसके बाद छठा किस्सा हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम का तफ़सील के साथ बयान होगा, जिसमें वाकिआत के तहत में सैकड़ों अहकाम व मसाल और सीख व नसीहत के बेशुमार मौके हैं, और इसी लिये कुरआने करीम में इस वाकिए के हिस्से व अंश बार-बार दोहराये गये हैं।

ثُمَّ بَعَثْنَا مِنْ بَعْدِهِم مُّوسَىٰ بِآيَاتِنَا إِلَىٰ فِرْعَوْنَ وَمَلَئِهِ فَظَلَمُوا بِهَا ۚ فَانظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُفْسِدِينَ ۝ وَقَالَ مُوسَىٰ يُفْرِعُونَ إِيَّايَ رَسُولٌ مِّن رَّبِّ الْعَالَمِينَ ۝ حَقِيقٌ عَلَىٰ أَن لَّا أَقُولَ عَلَى اللَّهِ إِلَّا الْحَقَّ ۚ قَدْ جِئْتُكُمْ بِبَيِّنَةٍ مِّن رَّبِّكُمْ فَأَرْسِلْ مَعِيَ بَنِي إِسْرَءِيلَ ۝ قَالَ إِن كُنتَ جِئْتَ بِآيَةٍ فَاتِ بِهَا إِن كُنتَ مِنَ الصّٰدِقِيْنَ ۝ قَالَ لَقَدْ عَلِمْتَهُ فَاذْهَبْ أَنتَ وَبَنِيكِ أَفْنَآءَ ۚ فَآذَا هِيَ بِيضَآءٌ لِلنّٰظِرِيْنَ ۝ قَالَ الْكَلْبُ مِّن قَوْمِ فِرْعَوْنَ إِنَّ هَٰذَا لَسِحْرٌ عَلِيمٌ ۝ يُرِيدُ أَن يُخْرِجَكُم مِّنْ أَرْضِكُمْ ۚ فَمَاذَا تَأْمُرُونَ ۝

सुम्-म बअस्ना मिम्-बअदिहिम् मूसा

बिआयातिना इला फिरऔ-न व

फिर भेजा हमने उनके पीछे मूसा को

अपनी निशानियाँ देकर फिरऔन और

म-लइही फ-ज-तमू बिहा फन्जुर
 कै-फ का-न आकि-बतुल् मुप्सिदीन
 (103) व का-ल मूसा या फिरऔनु
 इन्नी रसूलुम् मिर्बिबिल्-आलमीन
 (104) हकीकुन् अला अल्ला अकू-ल
 अलल्लाहि इल्लल्हक्-क, कद्
 जिअतुकुम् बिबय्ति-नतिम् मिर्बिकुम्
 फ-अरसिल् मअि-य बनी इस्राईल
 (105) का-ल इन् कुन्-त जिअ-त
 बिआयतिन् फअति बिहा इन् कुन्-त
 मिनस्सादिकीन (106) फअल्का
 असाहु फ-इजा हि-य सुअबानुम्
 मुबीन (107) व न-ज-अ य-दहू
 फ-इजा हि-य बैजा-उ
 लिन्नाजिरीन (108) ❀
 कालल्म-लउ मिन् कौमि फिरऔ-न
 इन्-न हाजा लसाहिरुन् अलीम
 (109) युरीदु अय्युख्रि-जकुम् मिन्
 अर्जिकुम् फ-माजा तअमूरुन (110)

उसके सरदारों के पास, पस कुफ़ किया
 उन्होंने उनके मुकाबले में, सो देख क्या
 अन्जाम हुआ फ़साद फैलाने वालों का।
 (103) और कहा मूसा ने ऐ फिरऔन! मैं
 रसूल हूँ परवर्दिगारे आलम का। (104)
 कायम हूँ इस बात पर कि न कहूँ अल्लाह
 की तरफ़ से मगर जो सच है, लाया हूँ
 तुम्हारे पास निशानी तुम्हारे रब की, सो
 भेज दे मेरे साथ बनी इस्राईल को। (105)
 बोला अगर तू आया है कोई निशानी
 लेकर तो ला उसको अगर तू सच्चा है।
 (106) तब डाल दिया उसने अपना असा
 (लाठी) तो उसी वक़्त हो गया खुला
 अज्दहा (बहुत बड़ा ज़बरदस्त साँप) (107)
 और निकाला अपना हाथ तो उसी वक़्त
 वह सफ़ेद नज़र आने लगा देखने वालों
 को। (108) ❀
 बोले सरदार फिरऔन की कौम के- यह
 तो कोई बड़ा वाकिफ़ जादूगार है। (109)
 निकालना चाहता है तुमको तुम्हारे मुल्क
 से, अब तुम्हारी क्या सलाह है? (110)

खुलासा-ए-तफसीर

फिर उन (ज़िफ़्र हुए पैग़म्बरों) के बाद हमने (हज़रत) मूसा (अलैहिस्सलाम) को अपनी
 दलीलें (यानी मोज़िज़े) देकर फिरऔन और उसके सरदारों के पास (उनकी हिदायत व तब्लीग़ के
 लिये) भेजा, सो (जब मूसा अलैहिस्सलाम ने वो मोज़िज़े और निशानियाँ जाहिर कीं तो) उन लोगों
 ने उन (मोज़िज़ों) का हक़ बिल्कुल अदा न किया (क्योंकि उनका हक़ और तकाज़ा यह था कि
 ईमान ले आते), सो देखिए उन फ़सादियों और बिगाड़ करने वालों का क्या (बुरा) अन्जाम हुआ?
 (जैसा कि दूसरी जगह पर उनका डूबना और हलाक होना बयान हुआ है। यह तो सारे किस्से

का मुखसूर बयान था और तफसील है, यानी और मूसा (अलैहिस्सलाम) ने (अल्लाह के हुक्म से फिरऔन के पास जाकर) फरमाया कि ऐ फिरऔन! मैं रब्बुल-आलमीन की तरफ से (तुम लोगों की हिदायत के वास्ते) पैगम्बर (मुकरर हुआ) हूँ। (जो मुझको झूठा बतलाये उसकी गलती है, क्योंकि) मेरे लिए (यही) मुनासिब है कि सिवाय सच के खुदा की तरफ कोई बात मन्सूब न करूँ, (और मैं रिसालत का खाली दावा ही नहीं करता बल्कि) मैं तुम्हारे पास तुम्हारे रब की तरफ से एक बड़ी दलील (यानी मोजिजा) भी लेकर आया हूँ (जो तलब के वक़्त दिखला सकता हूँ), सो (जब मैं दलील व निशानी के साथ रसूल हूँ तो मैं जो कहूँ उसका पालन करो। चुनाँचे उन सब बातों में से एक यह कहता हूँ कि) तू बनी इस्राईल को (अपनी बेगार से छुटकारा देकर) मेरे साथ (मुल्के शाम को जो उनका असली वतन है) भेज दे। (फिरऔन ने कहा) अगर आप (अल्लाह की तरफ से) कोई मोजिजा लेकर आये हैं तो उसको पेश कीजिये, अगर आप (इस दावे में) सच्चे हैं? पस आपने (फौरन) अपना असा “यानी लाठी” (जमीन पर) डाल दिया, सो वह देखते ही देखते साफ़ एक अज़्दहा बन गया। (जिसके अज़्दहा होने में कोई शक व शुब्हा नहीं हो सकता था)। और (दूसरा मोजिजा यह जाहिर किया कि) अपना हाथ (गिरेबान के अन्दर बग़ल में दबाकर) बाहर निकाल लिया, सो वह एकदम सब देखने वालों के सामने बहुत ही चमकता हुआ हो गया (कि उसको भी सबने देखा)।

(हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के जो ये बड़े मोजिजे जाहिर हुए तो फिरऔन ने दरबार वालों से कहा कि यह शख्स बड़ा जादूगर है, इसका असल मक़सद यह है कि अपने जादू से तुम लोगों पर ग़ालिब आकर यहाँ का सरदार हो जाये और तुमको यहाँ आबाद न रहने दे। सो इस बारे में तुम्हारा क्या मश्विरा है? चुनाँचे सूर: शु-अरा में फिरऔन का यह कौल मन्कूल है। इसको सुनकर जैसा कि बादशाहों के साथ रहने वालों की आदत उनकी हाँ में हाँ हिलाने की होती है, फिरऔन के कौल की तस्दीक व मुवाफ़क़त के लिये) फिरऔन की कौम में जो सरदार “यानी बड़े” (और दरबारी) लोग थे, उन्होंने (एक दूसरे से) कहा कि वाकई (जैसा हमारे बादशाह कहते हैं कि) यह शख्स बड़ा माहिर जादूगर है (ज़रूर) यह (यही) चाहता है कि (अपने जादू के जोर से खुद मय बनी इस्राईल के सरदार हो जाये और) तुमको (इस वजह से कि तुम बनी इस्राईल की नज़र में काँटा हो) तुम्हारे (इस) मुल्क से बाहर कर दे। सो तुम लोग (जैसा कि बादशाह मालूम कर रहे हैं) क्या मश्विरा देते हो?

मआरिफ़ व मसाईल

इस सूरत में जितने किस्से और वाकिआत अम्बिया अलैहिमुस्सलाम और उनकी उम्मतों के ज़िक्र किये गये हैं यह उनमें से छठा किस्सा है। इसको ज्यादा विस्तार व तफ़सील के साथ बयान करने का सबब यह भी है कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के मोजिजे दूसरे पहले गुज़रे नबियों की तुलना में तायदाद में भी ज्यादा हैं और ताक़त के जाहिर होने में भी। इसी तरह इसके साथ-साथ उनकी कौम बनी इस्राईल की जहालत और हठधर्मी भी पिछली उम्मतों के मुकाबले में ज्यादा

सख्त है, और यह भी है कि इस किस्से के अन्तर्गत बहुत से मआरिफ व मसाईल और अहकाम भी आये हैं।

पहली आयत में इरशाद फरमाया कि उनके बाद यानी नूह और हूद और सालेह और लूत और शूऐब अलैहिमुस्सलाम के या उनकी कौमों के बाद हमने मूसा अलैहिस्सलाम को अपनी आयतें (निशानियाँ) देकर फिरऔन और उसकी कौम की तरफ भेजा। आयतों से मुराद तौरात की आयतें भी हो सकती हैं और मूसा अलैहिस्सलाम के मोजिजे भी। और फिरऔन उस ज़माने में मिस्र के हर बादशाह का लक़ब (उपाधि और उपनाम) होता था। मूसा अलैहिस्सलाम के ज़माने के फिरऔन का नाम काबूस बयान किया जाता है। (तफसीरे कुर्तुबी)

“फ-ज़-लमू बिहा” में जिस पर जुल्म करने का इशारा है वो आयतें हैं। मायने यह हैं कि उन लोगों ने हमारी आयतों पर जुल्म किया, और अल्लाह की आयतों पर जुल्म करने से मुराद यह है कि उन लोगों ने अल्लाह की आयतों की क़द्र न पहचानी, उन पर शुक्र के बजाय नाशुक्री, इक़रार के बजाय इनकार, ईमान के बजाय कुफ़्र इख़्तियार किया। क्योंकि जुल्म के असली मायने ही यह हैं कि किसी चीज़ को उसके मक़ाम और मौक़े के खिलाफ़ इस्तेमाल करना।

फिर फरमाया:

فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُفْسِدِينَ

यानी देखो तो सही कि फिर उन फ़साद करने वालों का क्या अन्जाम हुआ। मुराद यह है कि उनके हालात और बुरे अन्जाम पर गौर करो और सबक़ हासिल करो।

दूसरी आयत में फरमाया कि मूसा अलैहिस्सलाम ने फिरऔन से कहा कि मैं रब्बुल-आलमीन का रसूल (भेजा हुआ और पैग़म्बर) हूँ, मेरे हाल और नुबुव्वत के पद का तकाज़ा यही है कि मैं अल्लाह तआला की तरफ़ कोई बात सिवाय सच के मन्सूब न करूँ, क्योंकि अम्बिया अलैहिमुस्सलाम को जो पैग़ाम हक़ तआला की तरफ़ से दिये जाते हैं वो उनके पास खुदाई अमानत होते हैं, उसमें अपनी तरफ़ से कमी-बेशी करना ख़ियानत (बददियानती) है, और तमाम अम्बिया अलैहिमुस्सलाम ख़ियानत और हर गुनाह से पाक और सुरक्षित हैं। इसका हासिल यह है कि तुम लोगों को मेरी बात पर इसलिये यकीन करना चाहिये कि मेरी सच्चाई तुम सब के सामने है, मैंने कभी न झूठ बोला है और न बोल सकता हूँ। इसके अलावा:

قَدْ جِئْتُكُمْ بَيِّنَةً مِنْ رَبِّكُمْ فَأَرْسِلْ مَعِيَ بَنِي إِسْرَائِيلَ

यानी सिर्फ़ यही बात नहीं कि मैंने कभी झूठ नहीं बोला बल्कि मेरे दावे पर मेरे मोजिजे भी हैं। इसलिये इन सब चीज़ों का तकाज़ा यह है कि आप मेरी बात सुनें और मानें। बनी इस्राईल को ज़बरदस्ती की गुलामी से निजात देकर मेरे साथ कर दें। फिरऔन ने और किसी बात पर तो कान न धरा, मोजिज़ा देखने का मुतालबा करने लगा और कहा:

إِنْ كُنْتُ جِئْتُ بِآيَةٍ فَآتِ بِهَا إِنْ كُنْتُ مِنَ الصّٰدِقِیْنَ

यानी अगर तुम वाकई कोई मोजिज़ा लाये हो तो पेश करो अगर तुम सच बोलने वालों में

से हो।

हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने उसके मुतालबे को मानते हुए अपनी लाठी ज़मीन पर डाल दी वह अज़्दहा (बहुत बड़ा खतरनाक साँप) बन गयी, जैसा कि कुरआन में फरमाया:

فَإِذَا هِيَ تُعْبَأُ مُبِينٌ.

सुअबान बड़े अज़्दहे को कहा जाता है और उसकी सिफ़त (विशेषता) “मुबीन” ज़िक्र करके बतला दिया कि उस लाठी का साँप बन जाना कोई ऐसा वाकिआ न था कि किसी अंधेरे या पर्दे के कोने में जाहिर हुआ हो, जिसको कोई देखे कोई न देखे, जैसे उमूमन करतब दिखाने वालों या जादूगरों का तरीका होता है, बल्कि यह वाकिआ भरे दरबार में सब के सामने पेश आया।

कुछ तारीख़ी रिवायतों में हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से मन्कूल है कि उस अज़्दहे ने फिरऔन की तरफ़ मुँह फैलाया तो उसने घबराकर शाही तख़्त से कूदकर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की पनाह ली और दरबार के हज़ारों आदमी उसकी दहशत से मर गये। (कबीर)

लाठी का सचमुच साँप बन जाना कोई नामुम्किन या मुहाल चीज़ नहीं, हाँ आम आदत के खिलाफ़ होने की वजह से हैरत-अंगेज़ और काबिले ताज्जुब ज़रूर है। और मोजिज़े व करामत का मन्शा ही यह होता है कि जो काम आम आदमी न कर सकें वह अम्बिया अलैहिमुस्सलाम के हाथों पर अल्लाह तआला की तरफ़ से जारी कर दिया जाता है ताकि अ़वाम समझ लें कि इनके साथ कोई खुदाई ताक़त काम कर रही है, इसलिये हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की लाठी का साँप बन जाना कोई इनकार करने वाली और काबिले ताज्जुब बात नहीं हो सकती।

इसके बाद फरमाया:

وَنَزَعَ يَدَهُ فَإِذَا هِيَ بِيْضَاءُ لِلنُّظُرِ.

“न-ज़-अ” के मायने एक चीज़ को दूसरी चीज़ में से किसी क़द्र सख़्ती के साथ निकालने के हैं। मुराद यह है कि अपने हाथ को खींचकर निकाला। यहाँ यह ज़िक्र नहीं कि किस चीज़ में से निकाला। दूसरी आयतों में दो चीज़ें मंज़ूर हैं, एक जगह:

أَدْخَلَ يَدَكَ فِي جَيْبِكَ.

आया है, जिसके मायने यह हैं कि अपना हाथ अपने गिरेबान में डालो। दूसरी जगह:

وَاضْمُمْ يَدَكَ إِلَى جَنَاحِكَ.

बयान हुआ है, जिसके मायने यह हैं कि अपना हाथ अपने बाज़ू के नीचे दबा लो। इन दोनों आयतों से मालूम हुआ कि हाथ का निकालना गिरेबान के अन्दर से या बाज़ू के नीचे से होता था। यानी कभी गिरेबान में हाथ डालकर निकालने से और कभी बाज़ू के नीचे दबाकर निकालने से यह मोजिज़ा जाहिर होता था कि:

فَإِذَا هِيَ بِيْضَاءُ لِلنُّظُرِ.

यानी वह हाथ चमकने वाला हो जाता है देखने वालों के लिये।

“बैजा-उ” के लफ्ज़ी मायने सफ़ेद के हैं और हाथ का सफ़ेद हो जाना कभी बरस (बदन के सफ़ेद होने) की बीमारी के सबब भी हुआ करता है, इसलिये एक दूसरी आयत में इस जगह “मिन गैर सूइन्” का लफ्ज़ भी आया है, जिसके मायने यह हैं कि यह हाथ की सफ़ेदी किसी बीमारी के सबब न थी। और हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मालूम होता है कि यह सफ़ेदी भी मामूली सफ़ेदी न थी बल्कि इसके साथ रोशनी होती थी जिससे सारी फ़िज़ा रोशन हो जाती थी। (तफ़सीरे कुर्तुबी)

इस जगह लफ्ज़ “लिन्नाज़िरीन” बढ़ाकर उस रोशनी के अजीब व ग़रीब होने की तरफ़ इशारा फ़रमा दिया गया है, कि यह ऐसी अजीब रोशनी थी कि उसके देखने के लिये नाज़िरीन (दिखने वाले) जमा हो जाते थे।

उस वक़्त फिरऔन के मुतालबे पर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने दो मोज़िजे दिखलाये- एक लाठी का अज़्दहा बन जाना, दूसरे हाथ को गिरेबान या बग़ल में डालकर निकालने से उसमें रोशनी पैदा हो जाना। पहला मोज़िजा मुख़ालिफ़ों में दहशत पैदा करने और डराने के लिये, और दूसरा मोज़िजा उनकी दिलचस्पी और करीब करने के लिये है। जिसमें इशारा था कि मूसा अलैहिस्सलाम की तालीम हिदायत का एक नूर रखती है इसका मानना और पैरवी करना कामयाबी का ज़रिया है।

قَالَ الْمَلَأَمِنْ قَوْمِ فِرْعَوْنَ إِنَّ هَذَا لَسِحْرٌ عَلِيمٌ

लफ्ज़ “म-लउ” किसी कौम के रसूखदार सरदारों के लिये बोला जाता है। मायने यह हैं कि कौमे फिरऔन के सरदार ये मोज़िजे देखकर अपनी कौम को ख़िताब करके कहने लगे कि यह तो बड़ा माहिर जादूगर है। वजह यह थी कि हर आदमी की सोच की परवाज़ उसकी हिम्मत के मुताबिक़ होती है। उन बेचारों को खुदा तआला और उसकी कामिल कुदरत की क्या ख़बर थी जिन्होंने सारी उम्र फिरऔन को अपना खुदा-और जादूगरों को अपना रहबर समझा और जादूगरों के करतबों ही को देखा था। वे इस हैरत-अंगेज़ वाक़िए को देखकर इसके सिवा कह ही क्या सकते थे कि यह भी कोई बड़ा जादू है। लेकिन उन लोगों ने भी यहाँ “साहिर” के साथ ‘अलीम’ का लफ्ज़ बढ़ाकर यह ज़ाहिर कर दिया कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के मोज़िजे के मुताल्लिक़ यह एहसास उनको भी हो गया था कि यह काम आम जादूगरों के काम से अलग, विशेष और भिन्न है, इसी लिये इतना इक़रार किया कि यह बड़े माहिर जादूगर हैं।

मोज़िजे और जादू में फ़र्क़

अल्लाह तआला हमेशा अम्बिया अलैहिमुस्सलाम के मोज़िजों को इसी अन्दाज़ से ज़ाहिर फ़रमाते हैं कि अगर देखने वाले ज़रा भी ग़ौर करें और हठधर्मी इख़्तियार न करें तो मोज़िजे और जादू का फ़र्क़ खुद-ब-खुद समझ लें। जादू करने वाले उमूमन नापाकी और गन्दगी में रहते हैं और जितनी ज़्यादा गन्दगी और नापाकी में हों उतना ही उनका जादू ज़्यादा कामयाब होता है,

बखिलाफ़ अम्बिया अलैहिस्सलाम के कि तहारत व पाकीजगी उनकी तबीयत का लाजिमी हिस्सा होती है, और यह भी अल्लाह की ज़ातब से खुला हुआ फ़र्क है कि नुबुव्वत का दावा करने के साथ किसी का जादू चलता भी नहीं।

और अक़ल व समझ रखने वाले तो असल हकीकत को जानते हैं कि जादू से जो चीज़ें ज़ाहिर की जाती हैं वो सब तबई असबाब के दायरे के अन्दर होती हैं, फ़र्क सिर्फ़ इतना होता है कि वो असबाब आम लोगों पर ज़ाहिर नहीं होते, बल्कि छुपे असबाब होते हैं, इसलिये वे यह समझते रहते हैं कि यह काम बग़ैर किसी ज़ाहिरी सबब के हो गया, बखिलाफ़ मोजिजे के कि उसमें तबई असबाब का बिल्कुल भी कोई दखल नहीं होता, वह डायरेक्ट अल्लाह तआला की कुदरत का फ़ैल होता है, इसी लिये कुरआने करीम में उसको हक़ तआला की तरफ़ मन्सूब किया गया है। एक जगह फ़रमाया:

وَلَكِنَّ اللَّهَ رَمَىٰ

(लेकिन अल्लाह ने फेंका) इससे मालूम हुआ कि मोजिजे और जादू की हकीकतें बिल्कुल अलग-अलग और एक दूसरे के विपरीत हैं। वास्तविकता से आगाह के लिये तो कोई शक व शुक्के और धोखा खाने की वजह ही नहीं, अयाम को धोखा हो सकता था, मगर अल्लाह तआला ने इस धोखे व शक को दूर करने के लिये भी ऐसे फ़र्क व निशानात रख दिये हैं कि जिसकी वजह से लोग धोखे से बच जायें।

खुल्लासा यह है कि फिरऔन की कौम ने भी मूसा अलैहिस्सलाम के मोजिजों को अपने जादूगरों के करतबों और कमाल से कुछ अलग और विशेष पाया, इसलिये इस पर मजबूर हुए कि यह कहें कि यह बड़ा माहिर जादूगर है कि आम जादूगर इस जैसे कामों का प्रदर्शन नहीं कर सकते।

يُرِيدُ أَنْ يُخْرِجَكُمْ مِنْ أَرْضِكُمْ فَمَاذَا تَأْمُرُونَ

यानी यह माहिर जादूगर यह चाहता है कि तुमको तुम्हारे मुल्क से निकाल दे, तो अब बतला दो कि तुम्हारी क्या राय है? क्या मशिवरा देते हो?

قَالُوا أَرْجَاهُ وَأَخَاهُ وَأَرْسِلْ فِي الْمَدَائِنِ حَاشِرِينَ ۝ يَأْتُوكَ بِكُلِّ سِحْرِ

عَلِيمٍ ۝ وَجَاءَ السَّحَرَةُ فِرْعَوْنَ قَالُوا إِنَّ لَنَا لَأَجْرًا إِن كُنَّا نَحْنُ الْغَالِبِينَ ۝ قَالَ نَعَمْ وَإِنَّكُمْ لَمِنَ الْمُقَرَّبِينَ ۝ قَالُوا يَمُوسَىٰ إِمَّا أَنْ تُلْقَىٰ وَإِمَّا أَنْ نَكُونَ نَحْنُ الْمُلْقِينَ ۝ قَالَ الْقَوَاءُ فَلَنَّا الْقَوَاءُ سَحَرُوا أَعْيُنَ النَّاسِ وَاسْتَرْهَبُوهُمْ وَجَاءُوا بِسِحْرٍ عَظِيمٍ ۝ وَأَوْحَيْنَا إِلَىٰ مُوسَىٰ أَنْ ألقِ عَصَاكَ فَإِذَا هِيَ تَلْقَفُ مَا يَأْفِكُونَ ۝ فَوَقَعَ الْحَقُّ وَبَطَلَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ۝ فَعَلَبُوا هَذَاكَ وَانْقَلَبُوا صَغِيرِينَ ۝ وَأَلْقَى السَّحَرَةُ سَجْدِينَ ۝ قَالُوا آمَنَّا بِرَبِّ الْعَالَمِينَ ۝ رَبِّ مُوسَىٰ وَهَارُونَ ۝

कालू अरजिह व अख्राहु व अरसिल
 फिल्मदाइनि हाशिरीन (111)
 यअतू-क बिकुल्लि साहिरिन् अलीम
 (112) व जाअस्स-ह-रतु फिरऔ-न
 कालू इन्-न लना लअजरन् इन् कुन्ना
 नस्तुल्-गालिबीन (113) का-ल नअम्
 व इन्नकुम् लमिन्ल्-मुकरबीन (114)
 कालू या मूसा इम्मा अन् तुल्कि-य
 व इम्मा अन्नकू-न नस्तुल्-मुल्कीन
 (115) का-ल अल्कू फ-लम्मा अल्कौ
 स-हरु अअयुनन्नासि वस्तरहबूहुम् व
 जाऊ बिसिस्तिन् अजीम (116) व
 औहैना इला मूसा अन् अल्कि
 असा-क फ-इजा हि-य तल्कफु मा
 यअफिकून (117) फ-व-कअल्-
 हक्कु व ब-त-ल मा कानू यअमलून
 (118) फगुलिबू हुनालि-क वन्क-लबू
 सागिरीन (119) व उल्कियस्स-ह-रतु
 साजिदीन (120) कालू आमन्ना
 बिरब्बिल्-आलमीन (121) रब्बि
 मूसा व हारून (122)

बोले ढील दे इसको और इसके भाई को
 और भेज परगनों में जमा करने वालों
 को। (111) कि जमा कर लायें तेरे पास
 जो हो कामिल जादूगर। (112) और
 आये जादूगर फिरऔन के पास, बोले
 हमारे लिये कुछ मजदूरी है अगर हम
 गालिब हुए? (113) बोला हाँ और बेशक
 तुम मुकरब हो जाओगे। (114) बोले ऐ
 मूसा! या तो तू डाल और या हम डालते
 हैं। (115) कहा डालो, फिर जब उन्होंने
 डाला, बाँध दिया लोगों की आँखों को
 और उनको डरा दिया और लाये बड़ा
 जादू। (116) और हमने हुक्म भेजा मूसा
 को कि डाल दे अपना असा सो वह जभी
 लगा निगलने जो साँग उन्होंने बनाया
 था। (117) पस जाहिर हो गया हक् और
 गलत हो गया जो कुछ उन्होंने किया था।
 (118) पस हार गये उस जगह और लौट
 गये जलील होकर। (119) और गिर पड़े
 जादूगर सज्दे में। (120) बोले हम ईमान
 लाये परवर्दिगारे आलम पर। (121) जो
 रब है मूसा और हारून का। (122)

खुलासा-ए-तफसीर

(गर्ज कि मश्वरा तय कर-कराकर) उन्होंने (फिरऔन से) कहा कि आप इन (मूसा
 अलैहिस्सलाम) को और इनके भाई को थोड़ी मौहलत दीजिये और (अपनी हुक्मत के) शहरों में
 (अहलकारों यानी) चपरासियों को (हुक्म नामे देकर) भेज दीजिए कि वे (सब शहरों से) सब

माहिर जादूगरों को (जमा करके) आपके पास लाकर हाजिर कर दें। (चुनांचे ऐसा ही इन्तिजाम किया गया) और वे जादूगर फिरऔन के पास हाजिर हुए (और) कहने लगे कि अगर हम (मूसा अलैहिस्सलाम पर) ग़ालिब आये तो (क्या) हमको कोई (बड़ा) सिल्ला (और इनाम) मिलेगा? (फिरऔन ने) कहा कि हाँ! (बड़ा इनाम मिलेगा) और (उसके अलावा यह कि) तुम (हमारे) करीबी और खास लोगों में दाखिल हो जाओगे। (ग़र्ज कि मूसा अलैहिस्सलाम को फिरऔन की तरफ से इसकी इत्तिला दी गयी और मुकाबले के लिये तारीख तय हुई और तारीख पर सब एक मैदान में जमा हुए। उस वक़्त) उन जादूगरों ने (मूसा अलैहिस्सलाम से) अर्ज किया- ऐ मूसा! (हम आपको इख्तियार देते हैं) चाहे आप (पहले अपनी लाठी मैदान में) डालिए (जिसको आप अपना मोजिज़ा बतलाते हैं) और या (आप कहें तो) हम ही (अपनी रस्सियाँ और लाठियाँ मैदान में) डालें। (मूसा अलैहिस्सलाम ने) फ़रमाया कि (पहले) तुम ही डालो। जब उन्होंने (अपनी रस्सियों और लाठियों को) डाला तो (जादू से देखने वाले) लोगों की नज़र-बन्दी कर दी (जिससे वो लाठियाँ और रस्सियाँ साँप की शक्ल में लहराती नज़र आने लगीं) और उन पर दहशत ग़ालिब कर दी और एक (तरह का) बड़ा जादू दिखलाया। और (उस वक़्त) हमने मूसा (अलैहिस्सलाम) को (वही के ज़रिये) हुक्म दिया कि आप अपनी लाठी डाल दीजिए (जैसे डाला करते हैं) सो लाठी का डालना था कि) उसने अचानक (अज़्दहा बनकर) उनके सारे बने-बनाए खेल को निगलना शुरू किया। पस (उस वक़्त) हक़ (का हक़ होना) ज़ाहिर हो गया, और उन्होंने (यानी जादूगरों ने) जो कुछ बनाया था सब (आता-) जाता रहा। पस वे लोग (यानी फिरऔन और उसकी कौम) उस मौक़े पर हार गये और ख़ूब ज़लील हुए (और अपना-सा मुँह लेकर रह गये) और वे जो जादूगर थे सज़्दे में गिर गये (और पुकार-पुकारकर) कहने लगे कि हम ईमान लाये रब्बुल-आलमीन पर। जो मूसा और हारून (अलैहिमस्सलाम) का भी रब है।

मअरिफ़ व मसाईल

इन आयतों में हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम का बक़ीया किस्सा ज़िक्र हुआ है कि जब फिरऔन ने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम का खुला मोजिज़ा देखा कि लाठी का साँप बन गया और फिर जब उसको हाथ में पकड़ा तो फिर लाठी बन गयी, और हाथ को गिरेबान में डालकर निकाला तो चमकने लगा। कुदरत की इस खुली निशानी का अक्ली तकाज़ा यह था कि मूसा अलैहिस्सलाम पर ईमान ले आता, मगर जैसा कि बातिल वालों का आम तरीक़ा है कि हक़ पर पर्दा डालने और मुकरने के लिये सही चीज़ को ग़लत उनवान दिया करते हैं। फिरऔन और उसकी कौम के सरदारों ने भी लोगों से यही कहा कि यह बड़े माहिर जादूगर हैं और इनका मक़सद यह है कि तुम्हारे मुल्क पर कब्ज़ा करके तुम्हें निकाल दें, तो अब तुम बतलाओ क्या करना चाहिये?

फिरऔन की कौम ने यह सुनकर जवाब दिया:

أَرْجِهْ وَأَخَاهُ وَأَرْسِلْ فِي الْمَدَائِنِ حَاشِرِينَ يَأْتُونَكُم بِكُلِّ سِحْرِ عَلِيمٍ

इसमें तफ़्ज़ 'अरजिह' 'इरजाउन' से निकला है जिसके मायने ढील देने और उम्मीद दिलाने के आते हैं, और 'मदाईन' 'मदीनतुन' की जमा (बहुवचन) है जो हर बड़े शहर के लिये बोला जाता है, 'हाशिरीन' 'हाशिरुन' की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने हैं उठाने और जमा करने वाला, मुराद इससे सिपाही हैं जो मुल्क के हर कोने से जादूगरों को जमा करके लायें।

आयत का मतलब यह है कि कौम के लोगों ने यह मश्विरा दिया कि अगर यह जादूगर है और जादू के ज़रिये हमारा मुल्क फतह करना चाहता है तो इसका मुकाबला हमारे लिये कुछ मुश्किल नहीं, हमारे मुल्क में बड़े-बड़े माहिर जादूगर हैं, इसको अपने जादू से शिकस्त दे देंगे। कुछ सिपाही मुल्क के हर इलाके में भेज दीजिये जो हर शहर के जादूगरों को बुला लायें।

वजह यह थी कि उस ज़माने में जादू, सेहर का रिवाज आम था और आम लोगों पर जादूगरों का कब्ज़ा था, और शायद हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम को असा (लाठी) और यदे-बैज़ा (चमकते हाथ) का मोजिज़ा इसी लिये अता फरमाया कि जादूगरों से मुकाबला हो और मोजिज़े के मुकाबले में जादू की रुस्वाई सब लोग आँखों से देख लें जैसा कि अल्लाह तआला की पुरानी आदत भी यही है कि हर ज़माने के पैग़म्बर को उस ज़माने के मुनासिब मोजिज़े अता फरमाते हैं। हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के ज़माने में यूनानी हिक्मत और यूनानी पद्धति शिखर पर थी तो उनको मोजिज़ा यह दिया गया कि माँ के पेट से पैदा हुए अन्धों को बीना बना दें और जुज़ामी कोढ़ियों को तन्दुरुस्त कर दें। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के दौर में अरब का सबसे बड़ा कमाल फसाहत व बलाग़त (कलाम व बयान में महारत और भाषा व साहित्य में कामिल दक्षता) था तो हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का सबसे बड़ा मोजिज़ा कुरआन बनाया गया, जिसके मुकाबले से सारा अरब व अजम अजिज़ हो गया।

وَجَاءَ السَّحَرَةُ فِرْعَوْنَ قَالُوا إِنَّ لَنَا لَأَجْرًا إِن كُنَّا نَحْنُ الْغَالِبِينَ، قَالَ نَعَمْ وَإِنَّمِ لِمَنِ الْمُقْرَبِينَ

यानी लोगों के मश्विरे के मुताबिक़ मुल्क भर से जादूगरों के जमा करने का इन्तिज़ाम किया गया, और ये जादूगर फिरऔन के पास पहुँच गये तो इन्होंने फिरऔन से पूछा कि अगर हम मूसा पर ग़ालिब आ गये तो हमें इसकी कुछ उजरत और इनाम भी मिलेगा? फिरऔन ने कहा कि हाँ उजरत भी मिलेगी और इस पर मज़ीद यह इनाम होगा कि तुम सब हमारे मुक़रबीन (खास लोगों) में दाख़िल हो जाओगे।

ये जादूगर जो हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के मुकाबले के लिये मुल्क भर से जमा किये गये थे, इनकी तायदाद में तारीख़ी रिवायतें विभिन्न हैं। नौ सौ से लेकर तीन लाख तक की रिवायतें हैं। इनके साथ लाठियों और रस्सियों का एक अंबार था जो तीन सौ ऊँटों पर लादकर लाया गया था। (तफ़सीरे कुर्तुबी)

फिरऔनी जादूगरों ने आते ही पहली बात सौदेबाज़ी की शुरू की कि हमें मुकाबला करें और ग़ालिब आ जायें तो हमें क्या मिलेगा? वजह यह थी कि अहले बातिल (ग़ैर-हक़ वालों) के

सामने सिर्फ दुनिया के फायदे होते हैं इसलिये कोई भी काम करने से पहले मुआवजे और उजरत का सवाल सामने आता है, बखिलाफ अम्बिया अलैहिस्सलाम और उनके नामों के, कि वे हर कदम पर यह ऐलान करते हैं:

وَمَا أَسْأَلُكُمْ عَلَيْهِ مِنْ أَجْرٍ إِنْ أَجَرْتُ إِلَّا عَلَى رَبِّ الْعَالَمِينَ

यानी हम जो पैगामे हक तुम्हारे फायदे के लिये तुम्हें पहुँचाते हैं इस पर तुमसे किसी मुआवजे के तालिब नहीं, बल्कि हमारा मुआवजा सिर्फ रबुल-आलमीन ने अपने जिम्मे लिया है। फिरऔन ने उनको बतलाया कि तुम लोग उजरत चाहते हो, हम उजरत भी देंगे और इससे बढ़कर यह भी कि तुम्हें शाही दरबार का मुकर्रब (खास) बना लेंगे।

फिरऔन से यह गुप्तगू करने के बाद जादूगरों ने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से मुकाबले की जगह और वक़्त का निर्धारण कराया। चुनाँचे एक खुला मैदान और ईद के दिन सूरज बुलन्द होने के बाद का वक़्त इस काम के लिये तय हुआ, जैसा कि कुरआन की दूसरी आयतों में है:

قَالَ مَوْعِدُكُمْ يَوْمَ الزَّيْنَةِ وَأَنْ يُخَشِّرَ النَّاسُ ضَحَىٰ

कुछ रिवायतों में है कि इस मौके पर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने जादूगरों के सरदार से गुप्तगू फरमाई कि अगर मैं तुम पर ग़ालिब आ गया तो क्या तुम मुझ पर ईमान ले आओगे? उन्होंने कहा कि हमारे पास ऐसे जादू हैं कि उन पर कोई ग़ालिब आ ही नहीं सकता, इसलिये हमारे मग़लूब होने (हारने) का कोई सवाल ही नहीं हो सकता। और अगर मान लो तुम ग़ालिब आ गये तो हम खुलेआम फिरऔन की नज़रों के सामने तुम पर ईमान ले आयेंगे।

(तफ़सीरे मज़हरी व तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

قَالُوا يَمْوَسَىٰ إِمَّا أَنْ تُلْقَىٰ وَإِمَّا أَنْ نَكُونَ نَحْنُ الْمُلْقِينَ

“इलकाउन्” के मायने डालने के हैं। मुराद यह है कि जब मुकाबले के मैदान में पहुँचे तो जादूगरों ने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से कहा कि या तो आप पहले डालें या हम पहले डालने वालों में से हो जायें। जादूगरों का यह कहना अपनी बेफ़िक्री और बड़ाई जताने के लिये था कि हमें इसकी परवाह नहीं कि शुरुआत हमारी तरफ़ से हो, क्योंकि हम हर हालत में अपने फन पर इत्मीनान रखते हैं। उनके अन्दाज़े बयान से महसूस होता है कि चाहते तो यही थे कि पहला वार उनका हो मगर कुव्वत के प्रदर्शन के लिये हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से मालूम किया कि पहल आप करना चाहते हो या हम करें?

हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने उनकी मन्शा को महसूस करके अपने मोजिज़े पर मुकम्मल इत्मीनान होने के सबब पहला मौका उनको दे दिया और फरमाया “अल्कू” यानी तुम ही पहले डालो।

और अल्लामा इब्ने कसीर ने फरमाया कि जादूगरों ने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के साथ अदब व एहतिराम का मामला किया कि पहला मौका उनको देने की पेशकश की, इसी का यह असर था कि उनको ईमान की तौफ़ीक़ हो गयी।

यहाँ एक सवाल यह पैदा होता है कि अब्बल तो जादू खुद ही एक हाराम फील है, फिर जब कि वह किसी पैगम्बर को शिकस्त देने के लिये इस्तेमाल किया जाये तो बिल्हा शुब्हा कुफ्र है, फिर मूसा अलैहिस्सलाम ने कैसे उन लोगों को इसकी इजाजत देने के लिये फरमाया "अल्फू" यानी तुम डालो। लेकिन हकीकतें हाल पर गौर करने से यह सवाल खत्म हो जाता है, क्योंकि यहाँ तो यकीनी था कि ये लोग अपना जादू मुकाबले पर जरूर पेश करेंगे, गुप्तगू सिर्फ पहले और पिछले की थी, इसमें हजरत मूसा अलैहिस्सलाम ने अपनी बहादुरी और हिम्मत का सबूत देने के लिये उनको ही मौका अता फरमाया। इसके अलावा इसमें एक फायदा यह भी था कि पहले जादूगर अपनी लाठियों और रस्सियों के साँप बना लें तो फिर मूसा अलैहिस्सलाम की लाठी का मोजिजा, सिर्फ यही नहीं कि वह भी साँप बन जाये बल्कि इस तरह ज़ाहिर हो कि वह जादू के सारे साँपों को निगल भी जाये, ताकि जादूगरी की खुली शिकस्त पहले ही क़दम पर सामने आ जाये। (तफसीर बयानुल-कुरआन)

और यह भी कहा जा सकता है कि मूसा अलैहिस्सलाम का यह इरशाद उनको जादूगरी करने की इजाजत के लिये नहीं बल्कि उनकी रुस्वाई को वाज़ेह करने के लिये था कि अच्छा तुम डालकर देखो कि तुम्हारे जादू का क्या अन्जाम होता है।

فَلَمَّا أَلْقَوْا سَحَرُوا أَعْيُنَ النَّاسِ وَاسْتَرْهَبُوهُمْ وَجَاءُوا بِسِحْرٍ عَظِيمٍ

यानी जब जादूगरों ने अपनी लाठियाँ और रस्सियाँ डालीं तो लोगों की नज़र-बन्दी कर दी और उन पर हैबत (घबराहट) ग़ालिब कर दी और बड़ा जादू दिखलाया।

इस आयत से मालूम हुआ कि उन लोगों का जादू एक किस्म की नज़र-बन्दी और ख़्याली असर था जिससे देखने वालों को यह महसूस होने लगा कि ये लाठियाँ और रस्सियाँ साँप बनकर दौड़ रहे हैं, हालाँकि वे वास्तव में उसी तरह लाठियाँ और रस्सियाँ ही थीं, साँप नहीं बने थे। यह एक किस्म का मिस्मरेज़म (जेहन्नम व ख़्याल पर असर डालना) था जिसका असर-इनसानी ख़्याल और नज़र को मग़लूब कर देता है। लेकिन इससे यह लाज़िम नहीं आता कि जादू सिर्फ इसी किस्म में सीमित है, जादू के द्वारा किसी चीज़ की शक़ल व हकीकत को नहीं बदला जा सकता। क्योंकि कोई शरई या अक्ली दलील इसकी नफ़ी पर कायम नहीं है, बल्कि जादू की विभिन्न किस्में वाकिआत से साबित हैं। कहीं तो सिर्फ हाथ की चालाकी होती है जिसके ज़रिये देखने वालों को धोखा लग जाता है, कहीं सिर्फ ख़्याल पर असर और नज़र-बन्दी होती है जैसे मिस्मरेज़म से। और अगर कहीं किसी चीज़ की हकीकत व सूरत भी बदल जाती हो कि इनसान का पत्थर बन जाये तो यह भी किसी शरई या अक्ली दलील के खिलाफ़ नहीं।

وَأَوْحَيْنَا إِلَىٰ مُوسَىٰ أَنْ أَلْقِ عَصَاكَ فَإِذَا هِيَ تَلْقَفُ مَا يَأْفِكُونَ

यानी हमने मूसा को हुक्म दिया कि अपना असा (लाठी) डाल दो। वह ज़मीन पर गिरते ही सबसे बड़ा साँप बनकर उन तमाम साँपों को निगलने लगा जो जादूगरों ने जादू से बनाये और) ज़ाहिर किये थे।

सारीकी रीवायतों में है कि हजारों जादूगरों की हजारों लाठियाँ और रस्सियाँ जब साँप बनकर दौड़ने लगीं तो सारा मैदान साँपों से भर गया और एक अजीब दहशत सारे मजमे पर छा गयी थी, लेकिन जब हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की लाठी एक बड़े अज़्दहे की सूरत में सामने आई तो उन सब साँपों को निगल कर ख़त्म कर दिया।

فَوَقَعَ الْحَقُّ وَبَطَلَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ.

यानी हक़ ज़ाहिर हो गया और जो कुछ जादूगरों ने बनाया था वह सब बातिल और हथ्वा हो गया।

فَغُلِبُوا مُنَالِكَ وَانْقَلَبُوا صَغِيرِينَ.

यानी इस मौके पर वे सब हार गये और ख़ूब रुस्वा (ज़लील) हुए।

وَأَلْقَى السَّحَرَةُ سَجْدِينَ، قَالُوا آمَنَّا بِرَبِّ الْعَالَمِينَ، رَبِّ مُوسَى وَهَارُونَ.

यानी जादूगर सज्दे में डाल दिये गये और कहने लगे कि हम रब्बुल-आलमीन यानी मूसा व हारून के रब पर ईमान ले आये।

“सज्दे में डाल दिये गये” फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि मूसा अलैहिस्सलाम का मोजिज़ा देखकर ये लोग कुछ ऐसे भौंचक्के और मजबूर हो गये कि बेइख्तियार सज्दे में गिर गये, और इसकी तरफ़ भी इशारा हो सकता है कि अल्लाह तआला ने तौफ़ीक़ अता फ़रमाकर उनको सज्दे में डाल दिया। और ‘रब्बुल-आलमीन’ के साथ ‘रब्बि मूसा व हारून’ बढ़ाकर अपनी बात को फिरऔन के मुकाबले में वाज़ेह कर दिया, क्योंकि वह बेवकूफ़ तो अपने आप ही को रब्बुल-आलमीन कहता था, इसलिये ‘रब्बि मूसा व हारून’ कहकर उसको बतला दिया कि हम तेरी खुदाई के कायल नहीं रहे।

قَالَ فِرْعَوْنُ اٰمَنْتُمْ بِهِ قَبْلَ اَنْ اٰذَنَ لَكُمْ ؕ اِنَّ هٰذَا لَكُرْمُ مَكْرَتٍ مَّوَدَّةٍ فِى الْمَدِيْنَةِ لِتُخْرِجُوْا مِنْهَا اَهْلَهَا ۚ فَسَوْفَ تَعْلَمُوْنَ ۝ لَا قُطْعَنَ اَيْدِيَكُمْ وَاَرْجُلُكُمْ مِّنْ خِلَافٍ ثُمَّ لَأُصَلِّبَنَّكُمْ اَجْمَعِيْنَ ۝ قَالُوْا اِنَّا اِلٰى رَبِّنَا مُنْقَلِبُوْنَ ۝ وَمَا تَنْقِمُ مِنَّا اِلَّا اَنْ اٰمَنَّا بِرَبِّنَا لَمَّا جَاءَنَا ۚ رَبَّنَا اَفْرِغْ عَلَيْنَا صَبْرًا وَتَوَقَّنَا مُسْلِمِيْنَ ۝ وَقَالَ الْمَلَاۗءُ مِنْ قَوْمِ فِرْعَوْنَ اَتَذَرُ مُوسٰى وَقَوْمَهُ لِيُفْسِدُوْا فِى الْاَرْضِ وَيَذَرَكَ وَالْهٰتِكَ ۚ قَالَ سَنَقْتُلُ اِبْنَاءَهُمْ وَنَسْتَحْيِ نِسَاءَهُمْ ۚ وَاِنَّا فَوْقَهُمْ قَاهِرُوْنَ ۝

का-ल फिरऔनु आमन्तुम् बिही
कब्-ल अन् आज-न लकुम् इन्-न
हाज़ा लमकरुम्-मकरतुमूहु फिल्-

बोला फिरऔन- क्या तुम ईमान ले आये
इस पर मेरी इजाज़त से पहले, यह तो
मक्र है जो बनाया तुम सब ने इस शहर
में ताकि निकाल दो इस शहर से इसके

मदीनति लितुख्रिजू मिन्हा अह्लहा
फ सौ-फ तअल्मून (123)
ल-उक़त्तिअन्-न ऐदियकुम् व
अरज़ु-लकुम् मिन् ख़िलाफिन् सुम्-म
ल-उसल्लिबन्नकुम् अज्मअीन (124)
कालू इन्ना इला रब्बिना मुन्क़लिबून
(125) व मा तन्किमु मिन्ना
इल्ला अन् आमन्ना बिआयाति
रब्बिना लम्मा जाअत्ना, रब्बना
अफ़िरग़ अलैना सबरं-व तवफ़फ़ना
मुस्लिमीन (126) ❀

व कालल्म-लउ मिन् कौमि
फिरऔ-न अ-त-ज़रु मूसा व कौमहू
लियुफ़िसदू फ़िल्अर्जि व य-ज़-र-क
व आलि-ह-त-क, का-ल सनुक़त्तिलु
अब्ना-अहुम् व नस्तह्यी निसा-अहुम्
व इन्ना फ़ौक़हुम् काहिरून (127)

रहने वालों को, सो अब तुमको मालूम हो
जायेगा। (123) मैं ज़रूर काटूँगा तुम्हारे
हाथ और दूसरी तरफ़ के पाँव, फिर सूली
पर चढ़ाऊँगा तुम सब को। (124) वे
बोले हमको तो अपने रब की तरफ़ लौट
कर जाना ही है। (125) और तुझको
हमसे यही दुश्मनी है कि मान लिया हमने
अपने रब की निशानियों को जब वे हम
तक पहुँचीं। ऐ हमारे रब! दहाने खोल दे
हम पर सब के और हम को मार
मुसलमान (यानी हमारा ईमान पर खात्मा
फरमा)। (126) ❀

और बोले सरदार कौमे फिरऔन के, क्यों
छोड़ता है तू मूसा और उसकी कौम को
कि घूम मचायें मुल्क में, और मौकूफ़ कर
दे तुझको और तेरे बुतों को। बोला अब
हम मार डालेंगे उनके बेटों को और
ज़िन्दा रखेंगे उनकी औरतों को, और हम
उन पर ज़ोरावर हैं। (127)

खुलासा-ए-तफसीर

फिरऔन (बड़ा घबराया कि कहीं ऐसा न हो कि सारी पब्लिक ही मुसलमान हो जाये तो
एक मजमून गढ़कर जादूगरों से) कहने लगा कि हाँ तुम इस पर (यानी मूसा अलैहिस्सलाम पर)
ईमान लाये हो इसके बग़ैर ही कि मैं तुमको इजाज़त दूँ? बेशक (मालूम होता है कि) यह (जो
कुछ मुकाबले के तौर पर हुआ है) एक कार्रवाई थी जिस पर इस शहर में तुम्हारा अमल दरामद
हुआ है (खुफ़िया साज़िश हो गयी है कि तुम यूँ करना हम यूँ करेंगे, फिर इस तरह हार-जीत
ज़ाहिर करेंगे और यह कार्रवाई मिली-भगत इसलिये की है) ताकि तुम सब (मिलकर) इस (शहर)
के रहने वालों को इससे बाहर निकाल दो (फिर दिली सुकून के साथ सब मिलकर यहाँ हुक्मूत
करो) सो (बेहतर है) अब तुमको हकीकत मालूम हुई जाती है (और वह यह है कि) मैं तुम्हारे

एक तरफ के हाथ और दूसरी तरफ के पांव काटूंगा, फिर तुम सब को सूली पर टांग दूंगा (ताकि औरों को सबक मिले)। उन्होंने जवाब दिया कि (कुछ परवाह नहीं) हम मरकर (किसी बुरे ठिकाने तो न जायेंगे बल्कि) अपने मालिक ही के पास जाएंगे (जहाँ हर तरह अमन व राहत है, सो हमारा नुकसान ही क्या है) और तूने हममें कौन-सा ऐब देखा (जिस पर इस कद्र शोर व हंगामा है) सिवाय इसके कि हम अपने रब के अहकाम पर ईमान ले आये (सो यह कोई ऐब की बात नहीं) फिर उससे रुख फेरकर हक तअाला से दुआ की कि ऐ हमारे रब! हमको सब अता फरमा (कि अगर यह सख्ती करे तो हम अपनी हालत पर जमे रहें) और हमारी जान इस्लाम की हालत पर निकालिये (कि इसकी सख्ती से परेशान होकर कोई बात ईमान के खिलाफ न हो जाये)।

और (जब मूसा अलैहिस्सलाम का यह जबरदस्त मौजिजा सार्वजनिक तौर पर जाहिर हुआ और जादूगर ईमान ले आये और कुछ और लोग भी आपके ताबे हो गये, उस वक्त) फिरऔन की कौम के सरदारों ने (जो कि हुकूमत के जिम्मेदार और पदाधिकारी थे, यह देखकर कि कुछ आदमी मुसलमान हो चुके फिरऔन से) कहा कि क्या आप मूसा (अलैहिस्सलाम) और उनकी कौम (यानी उनके पैरोकारों) को यूँ ही (अपनी मर्जी के मालिक बनाकर बेलगाम और आजाद) रहने देंगे कि वे मुल्क में फसाद करते फिरें (फसाद यह कि अपनी तायदाद बढ़ायें जिसका परिणाम यह है कि इससे बगावत का अन्देशा है) और वे (यानी मूसा अलैहिस्सलाम) आपको और आपके (तजवीज किये हुए) माबूदों को छोड़े रहें (यानी उनके माबूद होने के मुन्किर रहें और मूसा अलैहिस्सलाम के साथ उनकी कौम भी ऐसा ही करे। यानी आप इसका इन्तिजाम कीजिये) फिरऔन ने कहा कि (फिलहाल यह इन्तिजाम मुनासिब मालूम होता है कि) हम अभी इन लोगों के बेटों को कत्ल करना शुरू कर दें (ताकि इनका जोर न बढ़ने पाये) और (चूँकि औरतों के बढ़ने से कोई अन्देशा नहीं तथा हमको अपने कामों और खिदमत के लिये भी जरूरत है इसलिये) उनकी औरतों को जिन्दा रहने दें, और हमको उन पर हर तरह का जोर (और ताकत हासिल) है (इस इन्तिजाम में कोई दुश्वारी न होगी)।

मआरिफ व मसाईल

इनसे पहली आयतों में बयान हुआ था कि फिरऔन ने अपनी कौम के सरदारों के मशिवरे से मूसा अलैहिस्सलाम के मुकाबले के लिये जिन जादूगरों को पूरे मुल्क से जमा किया था वे मुकाबले के मैदान में हार गये, और सिर्फ यही नहीं कि अपनी हार मान ली बल्कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम पर ईमान ले आये।

तारीखी रिवायतों में है कि जादूगरों के सरदार मुसलमान हो गये तो उनको देखकर कौमे फिरऔन के छह लाख आदमी हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम पर ईमान ले आये और ऐलान कर दिया।

इस मुकाबले और मुनाज़रे से पहले तो सिर्फ दो हज़रत मूसा और हारून अलैहिमस्सलाम

फिरऔन के मुखालिफ़ थे, इस वक़्त सबसे बड़े जादूगर जो कौम में ताक़त व अहम मक़ाम के मालिक थे और उनके साथ छह लाख अ़वाम मुसलमान होकर एक बहुत बड़ी ताक़त मुक़ाबले पर आ गयी।

उस वक़्त फिरऔन की परेशानी और चिंता बेजा न थी, मगर उसने उसको छुपाकर एक चालाक होशियार राजनेता के अन्दाज़ में पहले तो जादूगरों पर यह बाग़ियाना इल्ज़ाम लगाया कि तुमने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के साथ खुफ़िया साज़िश करके यह काम अपने मुल्क व मिल्त को नुक़सान पहुँचाने के लिये किया है:

إِنَّ هَذَا لَمَكْرٌ مَّكْرٌ تُؤْمَرُ فِيهِ الْمَدِينَةُ.

यानी यह एक साज़िश है जो तुमने मुक़ाबले के मैदान में आने से पहले शहर के अन्दर आपस में कर रखी थी। और फिर जादूगरों को ख़िताब करके कहा:

اٰمَنْتُمْ بِهِ قَبْلَ اَنْ اٰذَنَ لَكُمْ.

यानी क्या तुमने मेरी इजाज़त से पहले से ही ईमान कुबूल कर लिया? यह सवाली अन्दाज़ में इनकार तंबीह व डाँट के तौर पर था। और अपनी इजाज़त से पहले ईमान लाने का ज़िक्र करके लोगों को यह यकीन दिलाने की कोशिश की है कि हम खुद भी यही चाहते थे कि अगर मूसा अ़लैहिस्सलाम का हक़ पर होना वाज़ेह हो जाये तो हम भी उनको मानें और लोगों को भी इजाज़त दें कि वे मुसलमान हो जायें, लेकिन तुम लोगों ने जल्दबाज़ी की और हकीक़त को सोचे समझे बग़ैर एक साज़िश का शिकार हो गये।

इस चालाकी से एक तरफ़ तो लोगों के सामने मूसा अ़लैहिस्सलाम के मोज़िज़े और जादूगरों के इस्लाम लाने को एक साज़िश करार देकर उनको पुरानी गुमराही में मुब्तला रखने का इन्तिज़ाम किया और दूसरी तरफ़ सियासी चालाकी यह की कि मूसा अ़लैहिस्सलाम का अमल और जादूगरों का इस्लाम जो ख़ालिस फिरऔन की गुमराही को खोलने के लिये था, कौम और अ़वाम से उसका कोई ताल्लुक न था, उसको एक मुल्की और सियासी मसला बनाने के लिये कहा:

لَتُخْرِجُوا مِنْهَا اَهْلَهَا.

यानी तुम लोगों ने यह साज़िश इसलिये की है कि तुम चाहते हो कि मिस्र देश पर तुम ग़ालिब आ जाओ और इसके रहने वालों को यहाँ से निकाल दो। इन चालाकियों के बाद उन सब पर अपनी हैबत और हुकूमत का रौब व ख़ौफ़ जमाने के लिये जादूगरों को धमकियाँ देनी शुरू कीं। पहले तो अस्पष्ट अन्दाज़ में कहा:

فَسَوْفَ تَعْلَمُونَ.

यानी तुम अभी देख लो कि तुम्हारी इस साज़िश का क्या अन्जाम होता है। उसके बाद इसको वाज़ेह करके बतलाया:

لَا قُطْعَنَ اَيْدِيكُمْ وَاَرْجُلُكُمْ مِنْ خِلَافٍ ثُمَّ لَا صَلَیْكُمْ اَجْمَعِينَ.

यानी मैं तुम सबके हाथ पैर विपरीत दिशाओं के काटकर तुम सबको सूली पर चढ़ा दूंगा। विपरीत दिशाओं से काटने का मतलब यह है कि दायें हाथ और बायें पैर जिससे दोनों दिशाएँ ज़ख्मी, बद-शक्ल और बेकार हो जायें।

फिरऔन ने इस बदहाली पर काबू पाने और अपने दरबारियों और अ़वाम को काबू में रखने की काफी तदबीर कर ली थी और उसकी ज़ालिमाना सज़ायें पहले से मशहूर और लोगों को दहशत में लाने के लिये काफी थीं, लेकिन इस्लाम व ईमान एक ऐसी ज़बरदस्त कुव्वत है कि जब वह किसी दिल में उतर जाती है तो फिर इनसान सारी दुनिया और उसके संसाधनों का मुकाबला करने के लिये तैयार हो जाता है।

ये जादूगर जो अब से चन्द घण्टे पहले फिरऔन को अपना खुदा मानते और इसी गुमराही की लोगों को तालीम व हिदायत करते थे, चन्द मिनट में कलिमा-ए-इस्लाम पढ़ते ही उनमें क्या चीज़ पैदा हो गयी थी कि वे फिरऔन की सारी धमकियों के जवाब में कहते हैं:

إِنَّا إِلَىٰ رَبِّنَا مُقْلِبُونَ.

यानी अगर तू हमें क़त्ल कर देगा तो कोई हर्ज नहीं, हम अपने रब के पास चले जायेंगे, जहाँ हमको हर तरह की राहत मिलेगी। जादूगर चूँकि फिरऔन की ताक़त व जोर से नावाकिफ़ न थे इसलिये यह नहीं कहा कि हम तेरे काबू में नहीं आयेंगे, या हम मुकाबला करेंगे, बल्कि उसकी धमकी को सही मानकर यह जवाब दिया कि माना कि तू हमें हर किस्म की सज़ा देने पर दुनिया में कादिर है मगर हम दुनिया की ज़िन्दगी ही को ईमान लाने के बाद कोई चीज़ नहीं समझते। दुनिया से गुज़र जायेंगे तो इस ज़िन्दगी से बेहतर ज़िन्दगी मिलेगी और अपने रब की मुलाकात नसीब होगी। और यह मायने भी हो सकते हैं कि इस ज़िन्दगी में जो तेरा दिल चाहे कर ले, आखिरकार हम और तुम सब रब्बुल-आलमीन के सामने पेश होंगे और वह ज़ालिम से मज़लूम का बदला लेंगे, उस वक़्त अपने इस अ़मल का नतीजा तेरे सामने आ जायेगा। चुनाँचे एक दूसरी आयत में इस मौक़े पर उन जादूगरों के ये अलफ़ाज़ मन्कूल हैं:

فَاقْضِ مَا أَنْتَ قَاضٍ. إِنَّمَا تَقْضِي هَذِهِ الْحَيَاةَ الدُّنْيَا.

यानी जो तेरा जी चाहे हमारे बारे में हुक्म दे दे। बस इतना ही तो है कि तेरा हुक्म हमारी इस दुनियावी ज़िन्दगी पर चल सकता है और तेरे गुस्से के नतीजे में यह ज़िन्दगी ख़त्म हो सकती है, मगर ईमान लाने के बाद हमारी नज़र में इस दुनियावी ज़िन्दगी की वह अहमियत ही बाकी नहीं रही जो ईमान लाने से पहले थी, क्योंकि हमें मालूम हो गया कि यह ज़िन्दगी राहत या मुसीबत के साथ गुज़र ही जायेगी, फ़िक्र उस ज़िन्दगी की करनी चाहिये जिसके बाद मौत नहीं और जिसकी राहत भी हमेशा की है और मुसीबत भी।

गौर करने का मक़ाम है कि वे लोग जो कल तक बदतरीन कुफ़्र में मुब्तला थे कि फिरऔन जैसे बेहूदा इनसान को खुदा मानते थे, खुदा तआला की शान व अज़मत से बिल्कुल ना-आशना थे, उनमें एक दम से ऐसी तब्दीली कैसे आ गयी कि अब पिछले सब अ़कीदों व आमाँल से पूरी

तरह तौबा करके देने हक पर इतने पुख्ता हो गये कि उसके लिये जान तक देने को तैयार नजर आते हैं, और दुनिया से रुखसत होने को इसलिये पसन्द करते हैं कि अपने रब के पास चले जायें। और सिर्फ यही नहीं कि ईमान की कुव्वत और अल्लाह के रास्ते में जिहाद की हिम्मत उनमें पैदा हो गयी बल्कि मालूम होता है कि हकीकी (वास्तविक) इल्म व मारिफत (अल्लाह की पहचान) के दरवाजे उन पर खुल गये थे। यही वजह है कि फिरऔन के मुकाबले में इस जुरत भरी बयान के साथ यह दुआ भी करने लगे:

رَبَّنَا أَفْرِغْ عَلَيْنَا صَبْرًا وَتَوَقُّنَا مُسْلِمِينَ

यानी ऐ हमारे परवर्दिगार! हमें कामिल सब्र अता फरमा और मुसलमान होने की हालत में हमें वफात दे।

इसमें इशारा इस मारिफत की तरफ है कि अगर अल्लाह तआला न चाहे तो इनसान का इरादा व हिम्मत कुछ काम नहीं आता, इसलिये उसी से साबित-कदमी (जमाव और पुख्तगी) की दुआ की गयी। और यह दुआ जैसे मारिफते हक का फल और नतीजा है इसी तरह उस मुश्किल के हल का बेहतरीन जरिया भी है जिसमें ये लोग उस वक़्त मुब्तला थे, क्योंकि सब्र और साबित-कदमी ही वह चीज़ है जो इनसान को अपने दुश्मन व प्रतिद्वंदी के मुकाबले में कामयाब करने का सबसे बड़ा जरिया है।

यूरोप के पिछले विश्व युद्ध के कारणों और परिणामों पर गौर करने वाले आयोग ने अपनी रिपोर्ट में लिखा था कि मुसलमान जो अल्लाह और आखिरत पर ईमान रखने वाले हैं, यही वह कौम है जो मैदाने जंग में सबसे ज्यादा बहादुर और मुसीबत व मशक्कत पर सब्र करने में सबसे आगे है।

यही वजह है कि उस वक़्त जर्मनी कौमों में लड़ाई के फ़न के माहिरीन इसकी ताकीद करते थे कि फौज में दीनदारी और खौफ़े आखिरत पैदा करने की कोशिश की जाये, क्योंकि इससे जो कुव्वत हासिल होती है वह किसी दूसरी चीज़ से हासिल नहीं हो सकती। (तफसीरुल-मनार)

जादूगरों में ईमानी इन्क़िलाब मूसा अलैहिस्सलाम के लाठी वाले

और चमकते हाथ के मोजिजे से भी बड़ा मोजिजा था

अफ़सोस है कि आज मुसलमान और मुस्लिम हुकूमतें अपने आपको मज़बूत बनाने के लिये सारी ही तदबीरें इस्तिहार कर रहे हैं मगर उस गुर को भूल बैठे हैं जो ताक़त व एकता की रूह है। फिरऔनी जादूगरों ने भी पहले मर्हले में इसको समझ लिया था, और उम्र भर के खुदा को न पहचानने वाले इनकारी काफ़िरों को दम भर में न सिर्फ़ मुसलमान बल्कि एक अरिफ़े कामिल (पूरा अल्लाह वाला) और मुजाहिद व गाज़ी बना देने का यह मोजिजा हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के लाठी वाले और चमकते हाथ के मोजिजे से कुछ कम न था।

फिरऔन पर हज़रत मूसा व हारून अलैहिस्सलाम की दहशत का असर

फिरऔन की चालाकी और सियासी झूठ ने उसकी जाहिल कौम को उसके साथ पुरानी गुमराही में मुब्तला रहने का कुछ सामान तो कर दिया मगर यह अजूबा उनके लिये भी नाकाबिले समझ था कि फिरऔन के गुस्से का सारा जोर जादूगरों पर खत्म हो गया, मूसा अलैहिस्सलाम जो असल मुखालिफ़ थे उनके बारे में फिरऔन की ज़बान से कुछ न निकला। इस पर उनको कहना पड़ा।

أَنذَرُ مُوسَى وَقَوْمَهُ لِيُفْسِدُوا فِي الْأَرْضِ وَيَذَرَكَ وَآلِهَتَكَ.

यानी क्या आप मूसा (अलैहिस्सलाम) और उनकी कौम को यूँ ही छोड़ देंगे कि वे आपको और आपके माबूदों को छोड़कर हमारे मुल्क में फ़साद करते फिरें।

इस पर मजबूर होकर फिरऔन ने कहा:

سَقَتِلْ أَبْنَاءُ هُمُ وَنَسْتَحْيِ بَنَاءَ هُمْ وَإِنَّا فَوْقَهُمْ قَاهِرُونَ.

यानी उनका मामला हमारे लिये कुछ चिंता का विषय नहीं, हम उनके लिये यह काम करेंगे कि उनमें जो लड़का पैदा होगा उसको क़त्ल कर देंगे सिर्फ़ लड़कियों को रहने देंगे, जिसका नतीजा कुछ समय में यह हो जायेगा कि उनकी कौम मर्दों से खाली होकर सिर्फ़ औरतें रह जायेंगी जो हमारी खिदमतगार बाँदियाँ बनेंगी, और हम तो उन सब पर पूरा जोर व ताक़त रखते हैं, जो चाहें करें ये हमारा कुछ नहीं कर सकते।

उलेमा-ए-मुफ़्तिरीन ने फ़रमाया कि कौम के इस तरह झिंझोड़ने पर भी फिरऔन ने यह तो कहा कि हम बनी इस्राईल के लड़कों को क़त्ल कर देंगे, लेकिन हज़रत मूसा व हारून अलैहिस्सलाम के बारे में उस वक़्त भी उसकी ज़बान पर कोई बात न आई। वजह यह है कि इस मोजिज़े और वाकिए ने फिरऔन के दिल व दिमाग़ पर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम का सख़्त डर और दहशत बिठला दी थी।

हज़रत सईद बिन जुबैर रह. फ़रमाते हैं कि फिरऔन का यह हाल हो गया था कि जब मूसा अलैहिस्सलाम को देखता तो पेशाब निकल जाता था, और यह बिल्कुल सही है खुदाई हैबत का यही हाल होता है:

हैबत-ए-हक़ अस्त ई अज़ ख़ल्क़ नेस्त

यह रौब व दहशत अल्लाह की तरफ़ से है किसी मख़्लूक की ओर से नहीं। (हिन्दी अनुवादक)

और मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया:

हर कि तरसद् अज़ हक़ व तक्वा गज़ीद

तरसद् अज़ वे जिन्न व इन्स व हर कि दीद

यानी जो अल्लाह से डरता है सारी मख़्लूक उससे डरने लगती है।

इस जगह फिराऊन की कौम ने जो यह कहा कि मूसा (अलैहिस्सलाम) आपको और आपके माबूदों को छोड़कर फसाद करते फिरे। इससे मालूम हुआ कि फिराऊन अगरचे अपनी कौम के सामने खुद खुदाई का दावेदार था और 'अ-न रब्बुकुमुल-अज़ला' कहता था, लेकिन वह खुद बुतों की पूजा-पाठ भी किया करता था।

और बनी इस्राईल को कमजोर करने के लिये यह ज़ालिमाना क़ानून कि जो लड़का पैदा हो उसे क़त्ल कर दिया जाये, यह सब दूसरी मर्तबा नाफ़िज़ किया गया। इसका पहला नम्बर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की पैदाईश से पहले हो चुका था, जिसके नाकाम होने को यह इस वक़्त तक देख रहा था, मगर जब अल्लाह तआला किसी कौम को ज़लील करना चाहते हैं तो उसकी तदबीरें ऐसी ही हो जाया करती हैं जो आखिरकार उनके लिये तबाही का सामान कर देती हैं। चुनाँचे आगे मालूम होगा कि फिराऊन का यह जुल्म व ज़्यादती आखिरकार उसको और उसकी कौम को ले डूबा।

قَالَ مُوسَىٰ لِقَوْمِهِ اسْتَعِينُوا بِاللّٰهِ وَاصْبِرُوا ۚ إِنَّ الْأَرْضَ لِلّٰهِ يُورِثُهَا مَنْ يَّشَاءُ مِنْ عِبَادِهِ ۚ وَالْعَاقِبَةُ لِلْمُتَّقِينَ ۝ قَالُوا أَوْزَيْنَا مِنْ قَبْلُ أَنْ تَأْتِيَنَا وَمِنْ بَعْدِ مَا جِئْتَنَا قَالَ عَسَىٰ رَبُّكُمْ أَنْ يُهْلِكَ عَدُوَّكُمْ وَيَسْتَخْلِفَكُمْ فِي الْأَرْضِ فَيَنْظُرَ كَيْفَ تَعْمَلُونَ ۝ وَلَقَدْ أَخَذْنَا آلَ فِرْعَوْنَ بِالسِّنِينَ وَنَقْصٍ مِنَ الثَّمَرَاتِ لَعَلَّهُمْ يَذْكُرُونَ ۝ فَإِذَا جَاءَتْهُمْ الْحَسَنَةُ قَالُوا إِنَّا هٰذِهِ ۚ وَإِنْ تُصِبَّهُمْ سَيِّئَةٌ يَّطْفِرُوا بِمُوسَىٰ وَمَنْ مَّعَهُ ۚ أَلَا إِنَّمَا طَلَرَهُمْ عِنْدَ اللّٰهِ وَلَكِنْ أَكْثَرُهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ۝ وَقَالُوا مَهْمَا تَأْتِنَا بِهِ مِنْ آيَةٍ لِّتُحَرِّثَنَا بِهَا ۚ فَمَا نَحْنُ لَكَ بِمُؤْمِنِينَ ۝

का-ल मूसा लिकौमिहिस्तज़ीनू
बिल्लाहि वस्बिरू इन्नल्-अर्-ज़
लिल्लाहि यूरिसुहा मय्यशा-उ मिन्
ज़ि बादिही, वल्ज़ाकि-बतु
लिमुत्तकीन (128) कालू ऊज़ीना
मिन् कब्लि अन् तअत्ति-यना व
मिम्-बज़्दि मा जिअतना, का-ल
असा रब्बुकुम् अय्युहिल-क
अदुव्वकुम् व यस्तख़िल-फकुम्

मूसा ने कहा अपनी कौम से- मदद माँगो
अल्लाह से और सब्र करो, बेशक ज़मीन
है अल्लाह की, इसका वारिस कर दे
जिसको वह चाहे अपने बन्दों में, और
आखिर में भलाई है डरने वालों के लिये।
(128) वे बोले हम पर तकलीफें रहीं तेरे
आने से पहले और तेरे आने के बाद,
कहा नज़दीक है कि तुम्हारा रब हलाक
कर दे तुम्हारे दुश्मन को और ख़लीफ़ा
(जानशीन) कर दे तुमको मुल्क में, फिर

फ़िल्अर्जि फ़-यन्ज़ु-र कै-फ़

तअमलून (129) ❀

व ल-कद् अख़ज़्ना आ-ल फिरज़ौ-न

बिस्सिनी-न व नक्सिम्-मिनस्स-मराति

लअल्लहुम् यज़्ज़क्कुरून (130)

फ़-इज़ा जाअत्हुमुल् ह-स-नतु कालू

लना हाजिही व इन् तुसिब्हुम्

सय्यि-अतुं द्यत्तय्यरू बिमूसा व

मम्-म-अहू, अला इन्नमा ताइरुहुम्

अिन्दल्लाहि व लाकिन्-न अक्स-रहुम्

ला यअलमून (131) व कालू मस्मा

तअतिना बिही मिन् आयतिल्-

लितस्ह-रना बिहा फ़मा नह्नु ल-क

बिमुअमिनीन (132)

देखे तुम कैसे काम करते हो। (129) ❀

और हमने पकड़ लिया फिरज़ौन वालों

को कहतों (काल और सूखे) में और मेवों

के नुक़सान में ताकि वे नसीहत मानें।

(130) फिर जब पहुँची उनको भलाई

कहने लगे यह है हमारे लायक, और

अगर पहुँची बुराई तो नहूसत बतलाते

मूसा की और उसके साथ वालों की, सुन

लो कि उनकी नहूसत तो अल्लाह के पास

है पर अक्सर लोग नहीं जानते। (131)

और कहने लगे जो कुछ तू लाएगा हमारे

पास निशानी कि हम पर उसकी वजह से

जादू करे, सो हम हरगिज़ तुझ पर ईमान

न लायेंगे। (132)

खुलासा-ए-तफ़सीर

(इस मजलिस की गुफ़्तयू की ख़बर जो बनी इस्राईल को पहुँची तो बड़े घबराये और हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से फ़रियाद की तो) मूसा (अलैहिस्सलाम) ने अपनी क़ौम से फ़रमाया कि खुदा तआला का सहारा रखो और मुस्तक़िल “यानी ज़मे” रहो (घबराओ मत)। यह ज़मीन अल्लाह तआला की है, अपने बन्दों में से जिसको चाहें इसका मालिक (व हाकिम) बना दें, (सो चन्द दिन के लिये फिरज़ौन को दे दी है) और अख़ीर कामयाबी उन्हीं (लोगों) की होती है जो खुदा तआला से डरते हैं (सो तुम ईमान व तक्वे पर कायम रहो, इन्शा-अल्लाह तआला यह सल्तनत तुम ही को मिल जायेगी, थोड़े दिनों इन्तिज़ार की ज़रूरत है)। क़ौम के लोग (हद से ज्यादा हसरत व ग़म से जिसका तबई तकाज़ा अपने शिकवे को दोहराना है) कहने लगे कि (हज़रत) हम तो (हमेशा) मुसीबत ही में रहे, आपके तशरीफ़ लाने से पहले भी (कि फिरज़ौन बेग़ार लेता था और मुद्दतों हमारे लड़कों को क़त्ल करता रहा) और आपके तशरीफ़ लाने के बाद भी (कि तरह-तरह की तकलीफ़ें पहुँचाई जा रही हैं, यहाँ तक कि अब भी औलाद को क़त्ल करने की तजवीज़ तय हो गयी है)। मूसा (अलैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि (घबराओ मत) बहुत

जल्द अल्लाह तआला तुम्हारे दुश्मन को हलाक कर देंगे, और उनकी जगह तुमको इस जमीन का मालिक बना देंगे, फिर तुम्हारे अमल का तरीका देखेंगे (कि शुक्र व कद्र और नेकी व फरमाँबरदारी का मामला करते हो या बेकद्री और गुफ़लत व नाफ़रमानी करते हो। इसमें नेकी इस्तिथार करने की तरफ़ शौक़ व तवज्जोह दिलाना और गुनाह व नाफ़रमानी से डराना व सचेत करना है)।

और (जब फिरऔन और उसके पैरोकारों ने इनकार व मुख़ालफ़त पर कमर बाँधी तो) हमने फिरऔन वालों को (मय फिरऔन के अल्लाह के कानून के अनुसार इन मुसीबतों और बलाओं में) मुब्तला किया- कहत-साली (सूखा पड़ने) में और फलों की कम पैदावारी में ताकि वे (हक़ बात को) समझ जाएँ (और समझकर कुबूल कर लें), सो (वे फिर भी न समझे बल्कि यह कैफ़ियत थी कि) जब उन पर खुशहाली (यानी चीज़ों का सस्ता होना और ज़्यादा पैदावारी) आ जाती तो कहते कि यह तो हमारे लिये होना ही चाहिए (यानी हम अच्छी किस्मत वाले हैं, यह हमारी नेकबख़्ती का असर है, यह न था कि उसको खुदा की नेमत समझकर शुक्र अदा करते और इताअत इस्तिथार करते) और अगर उनको कोई बदहाली (जैसे सूखा और पैदावार की कमी) पेश आती तो मूसा (अलैहिस्सलाम) और उनके साथियों की नहूसत बतलाते (कि यह इनकी नहूसत से हुआ, यह न हुआ कि उसको अपने बुरे आमाल और कुफ़्र व झुठलाने की नहूसत और सज़ा समझकर तौबा करते, हालाँकि यह सब उनके बुरे आमाल की नहूसत थी, जैसा कि फ़रमाते हैं कि) याद रखो कि उनकी (इस) नहूसत (का सबब) अल्लाह तआला के इल्म में है (यानी उनके कुफ़्रिया आमाल तो अल्लाह को मालूम हैं, यह नहूसत उन्हीं आमाल की सज़ा है) लेकिन (अपनी बेतमीज़ी से) उनमें अक्सर लोग (इसको) नहीं जानते थे। और (बल्कि ऊपर से) (यूँ) कहते थे (चाहे) कैसी ही अजीब बात हमारे सामने लाओ, कि उसके ज़रिये से हम पर जादू चलाओ (तब भी) हम तुम्हारी बात हरगिज़ न मानेंगे।

मअरिफ़ व मसाईल

फिरऔन ने मूसा अलैहिस्सलाम के मुकाबले में शिकस्त खाने के बाद बनी इस्राईल पर इस तरह गुस्सा उत्तारा कि उनके लड़कों को क़त्ल करके सिर्फ़ औरतों को बाकी रखने का कानून बना दिया तो बनी इस्राईल घबराये कि मूसा अलैहिस्सलाम की पैदाईश से पहले जो अज़ाब फिरऔन ने उन पर डाला था वह फिर आ गया, और हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने भी इसको महसूस फ़रमाया तो पैग़म्बराना शफ़क़त और हिक्मत के मुताबिक़ इस बला से निजात हासिल करने के लिये उनको दो चीज़ों की तालीम व हिदायत फ़रमाई- एक दुश्मन के मुकाबले में अल्लाह तआला से मदद तलब करना, दूसरे अपनी हिम्मत के मुताबिक़ सब्र व बरदाश्त से काम लेना। और यह भी बतला दिया कि इस नुस्खे का इस्तेमाल करोगे तो यह मुल्क तुम्हारा है, तुम्हीं ग़ालिब आओगे। यही मज़मून है पहली आयत का जिसमें फ़रमाया है:

اسْتَعِينُوا بِاللّٰهِ وَاصْبِرُوا

यानी अल्लाह से मदद तलब करो और सब्र करो। और फिर फरमाया:

إِنَّ الْأَرْضَ لِلَّهِ يُورِثُهَا مَنْ يَشَاءُ مِنْ عِبَادِهِ وَالْعَاقِبَةُ لِلْمُتَّقِينَ

यानी सारी ज़मीन अल्लाह की है वह जिसको चाहे उसको इस ज़मीन का वारिस व मालिक बनायेगा। और यह बात तय है कि परिणाम के तौर पर कामयाबी मुत्तकी परहेज़गारों ही को हासिल होती है। इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि अगर तुमने तक़्वा इख़्तियार किया जिसका तरीक़ा ऊपर बयान हुआ है कि अल्लाह से मदद तलब की और सब्र को अपनाया तो अन्जामकार तुम ही मिस्र देश के मालिक व काबिज़ होगे।

मुश्किलों व मुसीबतों से छुटकारे का नुस्खा-ए-अक्सीर

हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने बनी इस्राईल को दुश्मन पर ग़ालिब आने के लिये हर हकीमाना नुस्खा तालीम फ़रमाया था। ग़ौर किया जाये तो यही वह अक्सीर नुस्खा है जो कभी ख़ता नहीं होता। जिसके बाद कामयाबी यकीनी होती है। इस नुस्खे का पहला भाग अल्लाह से मदद तलब करना है, जो असल रूह है इस नुस्खे की। वजह यह है कि ख़ालिके कायनात जिसकी मदद पर हो तो सारी कायनात का रुख़ उसकी मदद की तरफ़ फिर जाता है, क्योंकि सारी कायनात उसके फ़रमान के ताबे है:

खाक व बाद व आब व आतिश बन्दा अन्द

बा-मन व तू मुर्दा बा-हक़ जिन्दा अन्द

“कि मिट्टी, हवा, पानी और आग़ फ़रमाँबरदार हैं। अगरचे हमें तुम्हें ये बेजान और मुर्दा मालूम होते हैं मगर अल्लाह तआला के साथ इनका जो मामला है वह जिन्दों की तरह है, कि जिन्दों की तरह उसके हुक्म की तामील करते हैं।” मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

हदीस में है कि जब अल्लाह तआला किसी काम का इरादा करते हैं तो उसके असबाब खुद बख़ुद मुहैया होते चले जाते हैं। इसलिये दुश्मन के मुक़ाबले में कोई बड़ी से बड़ी ताक़त इनसान के लिये इतनी कारामद नहीं हो सकती जितनी अल्लाह तआला से इमदाद की तलब, बशर्ते कि तलब सच्ची हो, सिर्फ़ ज़बान से कुछ कलिमात बोलना न हो।

दूसरा भाग इस नुस्खे का सब्र है। सब्र के मायने असल लुग़त के एतिबार से ख़िलाफ़े तबीयत चीज़ों पर जमे रहने और नफ़्स को काबू में रखने के हैं। किसी मुसीबत पर सब्र करने को भी इसी लिये सब्र कहा जाता है कि उसमें रोने पीटने और शोर व हंगामा करने के तबई ज़ब्बे को दबाया जाता है।

हर तजुर्बेकार अक्लमन्द जानता है कि दुनिया में हर बड़े मक़सद के लिये बहुत सी ख़िलाफ़े तबीयत मेहनत व मशक्क़त बरदाश्त करनी लाज़िमी है, जिस शख़्स को मेहनत व मशक्क़त की आदत और ख़िलाफ़े तबीयत चीज़ों की बरदाश्त हासिल हो जाये वह अक्सर मक़सिद में कामयाब होता है। हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि सब्र

किसी नेमत है कि इससे ज्यादा बड़ी और विस्तृत नेमत किसी को नहीं मिली। (अबू दाऊद)

हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की इस हकीमाना नसीहत और इस पर मुस्तब होने वाली फ़वह व नुसरत का संक्षिप्त वायदा टेढ़ी चाल चलने की आदी बनी इस्राईल की समझ में क्या आता, यह सब कुछ सुनकर बोल उठे:

أَوْذَيْنَا مِنْ قَبْلُ أَنْ نَأْتِيَنَا وَمِنْ بَعْدِ مَا جِئْنَا.

यानी आपके आने से पहले भी हमें तकलीफें दी गयीं और आपके आने के बाद भी।

मतलब यह था कि आपके आने से पहले तो इस उम्मीद पर वक्त गुज़ारा जा सकता था कि कोई पैग़म्बर हमें छुटकारा दिलाने के लिये आयेगा, अब आपके आने के बाद भी यही तकलीफों और मुसीबतों का सिलसिला रहा तो हम क्या करेंगे।

इसलिये फिर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने असल हकीकत को स्पष्ट करने के लिये फरमाया:

عَسَى رَبُّكُمْ أَنْ يُهْلِكَ عَذُوْكُمْ وَيَسْتَخْلِفَكُمْ فِي الْأَرْضِ.

यानी यह बात दूर नहीं कि अगर तुमने हमारी नसीहत को माना तो बहुत जल्द तुम्हारा दुश्मन हलाक व बरबाद होगा और मुल्क पर तुमको कब्ज़ा व इख्तियार मिलेगा। मगर साथ ही यह भी फरमा दिया:

فَيَنْظُرْ كَيْفَ تَعْمَلُونَ.

जिसमें बतला दिया कि इस दुनिया में किसी ज़मीन की हुकूमत व सल्तनत खुद कोई मक़सद नहीं बल्कि ज़मीन में अदल व इन्साफ़ कायम करने और अल्लाह की बतलाई हुई नेकी को फैलाने और बदी को रोकने के लिये किसी इन्सान को किसी मुल्क की हुकूमत दी जाती है, इसलिये जब तुमको मुल्क मिस्र पर कब्ज़ा व इख्तियार हासिल हो तो होशियार रहो, ऐसा न हो कि तुम भी हुकूमत व ताक़त के नशे में अपने से पहले लोगों के अन्जाम को भुला बैठो।

हुकूमत व सल्तनत हुक्मराँ तब्के का इम्तिहान है

इस आयत में ख़िताब अगरचे ख़ास बनी इस्राईल को है लेकिन अल्लाह जल्ल शानुहू ने हुक्मराँ तब्के को इसमें यह तंबीह फ़रमा दी है कि दर हकीकत हुकूमत व सल्तनत अल्लाह तआला का हक़ है, इन्सान को ख़लीफ़ा होने की हैसियत से वही हुकूमत देता है और जब चाहता है छीन लेता है:

تُؤْتِي الْمُلْكَ مَنْ تَشَاءُ وَتَنْزِعُ الْمُلْكَ مِمَّنْ تَشَاءُ.

का यही मतलब है। और यह कि जिसको किसी ज़मीन पर हुकूमत अता की जाती है वह दर हकीकत हुक्मराँ (हुकूमत करने वाले) व्यक्ति या हुक्मराँ जमाअत का इम्तिहान होता है कि वह हुकूमत के मक़सद यानी अदल व इन्साफ़ के कायम करने, नेक कामों के हुक्म करने और बुराईयों से रोकने के अमल को जारी करने की ज़िम्मेदारी को किस हद तक पूरा करता है।

तफसीर बहरे मुहीत में इस जगह नकल किया है कि बन्ू अब्बास के दूसरे खलीफा मन्सूर के पास खिलाफत मिलने से पहले एक दिन अमर बिन अबीद आ पहुँचे तो यह आयत पढ़ी:

عَسَىٰ رَبُّكُمْ أَن يُهْلِكَ عَدُوَّكُمْ وَيَسْتَخْلِفَكُمْ فِي الْأَرْضِ

जिसमें उनके लिये खिलाफत मिलने की खुशखबरी थी। इत्तिफाकन इसके बाद मन्सूर खलीफा बन गये और फिर अमर बिन अबीद उनके यहाँ पहुँचे तो मन्सूर ने उनकी भविष्यवाणी जो उक्त आयत के तहत इससे पहले फरमाई थी याद दिलाई, तो अमर बिन अबीद ने खूब जवाब दिया कि हाँ खलीफा होने की भविष्यवाणी तो पूरी हो गयी मगर एक चीज़ बाकी है:

فَيَنْظُرُ كَيْفَ تَعْمَلُونَ

मतलब यह था कि मुल्क का खलीफा व अमीर बन जाना कोई फख्र व खुशी की चीज़ नहीं क्योंकि उसके बाद अल्लाह तआला यह भी देखते हैं कि खिलाफत व हुकूमत में उसका रवैया क्या और कैसा रहा। अब उसके देखने का वक़्त है।

इसके बाद ज़िक्र हुई आयत में किये गये वायदे का पूरा होना और कौमे फिरऔन का तरह तरह के अज़ाबों में गिरफ़्तार होना और आखिरकार दरिया में डूबकर ख़त्म हो जाना किसी क़द्र तफ़सील के साथ बयान फरमाया है, जिसमें सबसे पहले सूखे और अकाल और आवश्यक चीज़ों के अभाव और महंगाई का अज़ाब था, जो कौमे फिरऔन पर मुसल्लत हुआ।

तफ़सीरी रिवायतों में है कि यह क़हत (अकाल और सूखा) उन पर लगातार सात साल रहा, और आयत में जो इस क़हत के बयान में दो लफ़्ज़ आये हैं- एक सिनीन, दूसरे नक्से-समरात, हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास और क़तादा रज़ियल्लाहु अन्हुमा वग़ैरह ने फरमाया कि क़हत और खुश्क साली (बारिश न होने और सूखा पड़ने) का अज़ाब तो गाँव वालों के लिये था और फलों की कमी शहर वालों के लिये। क्योंकि उमूमन देहात में ग़ल्ले की पैदावार ज़्यादा होती है और शहरों में फलों के बाग़ होते हैं। तो इशारा इस तरफ़ हुआ कि न ग़ल्ले के खेत बाकी रहे न फलों के बाग़ात।

लेकिन जब किसी कौम पर अल्लाह तआला का क़हर नाज़िल होता है तो सही बात उसकी समझ में नहीं आती, कौमे फिरऔन भी इसी क़हर में मुब्तला थी, अज़ाब के इस शुरूआती झटके से भी उनको कोई तंबीह न हुई बल्कि उसको और बाद में आने वाली हर मुसीबतों को यह कहने लगे कि यह नहूसत हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम और उनके साथियों की है:

فَإِذَا جَاءَ تَهُمُ الْحَسَنَةُ قَالُوا لَنَا هَذِهِ وَإِنْ تُصِيبُهُمْ سَيِّئَةٌ يَطَّيَّرُوا بِمُوسَىٰ وَمَنْ مَعَهُ

यानी जब उन लोगों को कोई भलाई और राहत व आराम मिलता तो यह कहते थे कि यह हमारा हक़ है, हमें मिलना ही चाहिये। और जब कोई मुसीबत और बुराई पेश आती तो कहते कि यह मूसा अलैहिस्सलाम और उनके साथियों की नहूसत के असर से है, हक़ तआला ने उनके जवाब में इरशाद फरमाया:

إِنَّمَا طَّيَّرَهُمْ عِنْدَ اللَّهِ وَلَكِنَّ أَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ

तफ़्सीर ताइर के लुगवी मायने परिन्दे जानवर के हैं। अरब परिन्दे जानवरों के दाईं बायीं तरफ़ उतरने से अच्छी बुरी फ़ालें (शगुन) लिया करते थे। इसलिये मुतलक फ़ाल को भी "ताइर" कहने लगे। इस आयत में ताइर के यही मायने हैं। और आयत का मतलब यह है कि उनकी फ़ाल (शगुन लेना) अच्छी या बुरी जो कुछ भी हो वह सब अल्लाह तआला के पास से है, जो कुछ इस जहान में ज़ाहिर होता है सब अल्लाह तआला की क़ुदरत व मर्जी से अमल में आता है, न उसमें किसी की नहूसत का दखल है न बरकत का। यह सब उनकी अक़ीदे की ग़लती, ग़लत सोच और जहालत है जो परिन्दों के दाहिने या बायें उड़ जाने से अच्छी बुरी फ़ालें लेकर अपने कामों और अमल की बुनियाद उस पर रखते हैं।

और आख़िरकार कौमे फिरऔन ने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के तमाम मोज़िज़ों को जादू कहकर नज़र-अन्दाज़ करते हुए यह ऐलान कर दिया कि:

مَهْمَا تَأْتِنَا بِهِ مِنْ آيَةٍ لِّتَسْحَرَنَا بِهَا فَمَا نَحْنُ لَكَ بِمُؤْمِنِينَ.

यानी आप अपनी नुबुव्वत की कितनी ही अलामतें (निशानियाँ) पेश करके हम पर अपना जादू चलाना चाहें तो सुन लीजिये हम कभी आप पर ईमान लाने वाले नहीं।

فَأَرْسَلْنَا عَلَيْهِمُ الطُّوفَانَ وَالْجَرَادَ وَالْقُمَّلَ وَالضَّفَادِعَ وَ
الدَّمَاءَ مُمْضِلَةً فَاسْتَكْبَرُوا وَكَانُوا قَوْمًا مُّجْرِمِينَ ۝ وَلَمَّا وَقَعَ عَلَيْهِمُ الرِّجْزُ قَالُوا يَمْوَسَ
أَدْمُ لَنَا رَبِّكَ إِنَّا وَجَدْنَاهُ غَدًّا ۖ لَّيْنٌ كَشَفْتَنَا عَنْهُ وَعِنْدَكَ ۖ لَئِنْ كَشَفْتَ عَنَّا الرِّجْزَ لَنُؤْمِنَنَّ لَكَ وَلَنُرْسِلَنَّ مَعَكَ بَنِي
إِسْرَءِيلَ ۖ فَلَمَّا كَشَفْنَا عَنْهُمْ الرِّجْزَ إِلَىٰ أَجَلٍ هُمْ بِلُغْوِهِ إِذَا هُمْ يَنْكُثُونَ ۝ فَانْقَبْنَا مِنْهُمْ فَأَغْرَقْنَاهُمْ
فِي الْيَمِّ بِأَنَّهُمْ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا وَكَانُوا عَنْهَا غَافِلِينَ ۝

फ़-अरसलना अलैहिमुत्तूफ़ा-न
वलजरा-द वल्कुम्म-ल वज्जफ़ादि-अ
वद-म आयातिम् मुफ़स्सलातिन्,
फस्तक्बरू व कानू कौमम् मुजिमीन
(133) व लम्मा व-क-अ
अलैहिमुरिज्जु कालू या मूसदु
लना रब्ब-क बिमा अहि-द अिन्द-क
ल-इन् कशफू-त अन्नरिज्ज-ज
लनुअमिनन्-न ल-क व लनुसिलन्-न

फिर हमने भेजा उन पर तूफ़ान और टिड्डी
और चिचड़ी और मेंढक और खून बहुत
सी निशानियाँ अलग-अलग, फिर भी
तकब्बुर करते रहे और थे वे लोग
गुनाहगार। (133) और जब पड़ता उनपर
कोई अज़ाब तो कहते ऐ मूसा! दुआ कर
हमारे वास्ते अपने रब से जैसा कि उसने
बतला रखा है तुझको, अगर तूने दूर कर
दिया हम से ये अज़ाब तो बेशक हम
ईमान ले आयेंगे तुझ पर और जाने देंगे

म-अ-क बनी इस्राईल (134)

फ-लम्मा कशप्पना अन्हुमुरिज्-ज

इला अ-जलिन् हुम् बालिगूहु इजा

हुम् यन्कुसून (135) फन्तकम्ना

मिन्हुम् फ-अगरकनाहुम् फिल्यम्मि

बिअन्नहुम् कज्जबू बिआयातिना व

कानू अन्हा गाफिलीन (136)

तेरे साथ बनी इस्राईल को। (134) फिर

जब हमने उठा लिया उनसे अज़ाब एक मुद्दत तक कि उनको उस मुद्दत तक पहुँचना था उसी वक्त अहद तोड़ डालते।

(135) फिर हमने बदला लिया उनसे सो डुबो दिया हमने उनको दरिया में इस वजह से कि उन्होंने झुठलाया हमारी आयतों को और उनसे लापरवाही करते थे। (136)

खुलासा-ए-तफ़सीर

(जब ऐसी सरकशी इस्त्रियार की तो) फिर हमने (इन दो बलाओं के अलावा ये बलायें मुसल्लत कीं कि) उन पर (बारिश की अधिकता का) तूफ़ान भेजा (जिससे माल व जान बरबाद होने का अन्देशा हो गया) और (उससे घबराये तो मूसा अलैहिस्सलाम से अहद व पैमान किया कि हमसे यह बला दूर कराईये तो हम ईमान लायें और जो आप कहें उस पर अमल करें। फिर जब वह बला दूर हुई और दिल-चाहा गुल्ला वगैरह निकला फिर बेफ़िक्र हो गये कि अब तो जान भी बच गयी माल भी ख़ूब होगा, और बदस्तूर अपने कुफ़्र व नाफ़रमानी पर अड़े रहे तो हमने उनके खेतों पर) टिड्डियाँ (मुसल्लत कीं) और (जब फिर खेतों को तबाह होते देखा तो घबराकर फिर वैसे ही अहद व पैमान किये और फिर जब आपकी दुआ से वह बला दूर हुई और गुल्ला वगैरह तैयार करके अपने घर ले आये फिर बेफ़िक्र हो गये कि अब तो गुल्ला कब्जे में आ गया और बदस्तूर अपने कुफ़्र व मुख़ालफ़त पर जमे रहे तो हमने उस गुल्ले में) धुन का कीड़ा (पैदा कर दिया) और (जब घबराकर फिर उसी तरह अहद व पैमान करके दुआ कराई और वह बला भी दूर हुई और उससे मुत्मईन हो गये कि अब पीस-कूटकर खायें पियेंगे, फिर वही कुफ़्र और वही मुख़ालफ़त, तो उस वक्त हमने उनके खाने को यूँ बेलुत्फ़ कर दिया कि उन पर) मेंढक (हुजूम करके उनके खाने के बरतनों में हण्डियों में गिरना शुरू हुए जिससे सब खाना बरबाद हुआ और वैसे भी घर में बैठना मुश्किल कर दिया) और (पीना यूँ बेलुत्फ़ कर दिया कि उनका पानी) खून, (हो जाता, उह में लिया और खून बना। गर्ज कि उन पर ये बलायें मुसल्लत हुई) कि ये सब (मूसा अलैहिस्सलाम के) खुले-खुले मोजिज़े थे (कि उनकी झुठलाने व मुख़ालफ़त पर इनका ज़हूर हुआ और ये सातों तथा लाठी और चमकता हाथ मिलाकर “आयाते तिस्रआ” कहलाते हैं) सो (चाहिये था कि इन मोजिज़ों और क़हर की निशानियों को देखकर ढीले पड़ जाते मगर) वे (फिर भी) तकबुर (ही) करते रहे, और वे लोग कुछ थे ही अपराधी किस्म के (कि इतनी सख़्ती पर भी बाज़ न आते थे)।

और जब उन पर (ज़िक्र की गयी बलाओं में से) कोई अज़ाब आता तो (यूँ) कहते कि ऐ मूसा! हमारे लिए अपने रब से दुआ कर दीजिये, जिसका उसने आप से अहद कर रखा है (वह बात कहर का दूर कर देना है हमारे बाज़ आ जाने पर, सो हम अब वायदा करते हैं कि) अगर आप इस अज़ाब को हमसे हटा दें (यानी दुआ करके हटवा दें) तो हम ज़रूर आपके कहने से ईमान ले आएँगे और हम बनी इस्राईल को भी (रिहा करके) आपके साथ कर देंगे। फिर जब (हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की दुआ की बरकत से) उनसे उस अज़ाब को एक खास वक़्त तक कि उनको पहुँचना था हम हटा देते तो वे फ़ौरन ही अहद तोड़ने लगते (जैसा कि ऊपर बयान हुआ)। फिर (जब हर-हर तरह देख लिया कि वे अपनी शरारत से बाज़ ही नहीं आते तब उस वक़्त) हमने उनसे (पूरा) बदला लिया, यानी उनको दरिया में डुबो दिया (जैसा कि दूसरी जगह है) इस सबब से कि वे हमारी आयतों को झुठलाते थे, और उनसे बिल्कुल ही लापरवाही बरतते थे (और झुठलाना व लापरवाही बरतना भी ऐसा-वैसा नहीं बल्कि हठधर्मी व दुश्मनी के साथ, कि फ़र्माँबरदारी व बात मानने का वायदा कर लें और तोड़ दें)।

मआरिफ़ व मसाईल

उपर्युक्त आयतों में कौमे फिरऔन और हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम का बाक़ी किस्सा बयान हुआ है कि फिरऔन के जादूगर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के मुक़ाबले में हार गये और ईमान लाये, मगर कौमे फिरऔन उसी तरह अपनी सरकशी और कुफ़्र पर जमी रही।

इस वाक़िए के बाद तारीख़ी रिवायतों के मुताबिक़ हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम बीस साल मिस्र में मुक़ीम रहकर उन लोगों को अल्लाह का पैग़ाम सुनाते और हक़ की तरफ़ दावत देते रहे, और इस मुद्दत में अल्लाह तआला ने मूसा अलैहिस्सलाम को नौ मोज़िज़े अता फ़रमाये, जिनके ज़रिये कौमे फिरऔन को सचेत करके रास्ते पर लाना मक़सूद था, कुरआने करीम की आयत:

وَلَقَدْ آتَيْنَا مُوسَى تِسْعَ آيَاتٍ

में उन्हीं नौ मोज़िज़ों का बयान है।

इन नौ मोज़िज़ों में से सबसे पहले दो मोज़िज़े- असा (लाठी) और यदे-बैज़ा (चमकते हुए हाथ) का ज़हूर फिरऔन के दरबार में हुआ और इन्हीं दो मोज़िज़ों के ज़रिये जादूगरों के मुक़ाबले में मूसा अलैहिस्सलाम ने फ़तह हासिल की। उसके बाद एक मोज़िज़ा वह था जिसका ज़िक्र इससे पहली आयतों में आ चुका है कि कौमे फिरऔन पर उनकी ज़िद और ग़लत चलन के सबब कहत (सूखा पड़ने को) मुसल्लत कर दिया गया। उनकी ज़मीनों और बाग़ों में पैदावार बहुत घट गयी जिससे वे सख़्त परेशान हुए और आख़िरकार हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से कहत (सूखा) दूर होने के लिये दुआ कराई, मगर जब कहत दूर हो गया तो फिर अपनी सरकशी में मुब्तला हो गये और लगे यह कहने कि यह कहत तो मूसा अलैहिस्सलाम और उनके साथियों की नहसत के सबब हुआ था। अब जो कहत (बारिश न होना) दूर हुआ तो यह हमारे हाल का तकाज़ा है।

बाकी छह निशानियों और मोजियों का बयान मजकूर आयतों में है:

فَارْسَلْنَا عَلَيْهِمُ الطُّوفَانَ وَالْجَرَادَ وَالْقُمَّلَ وَالضَّفَادِعَ وَالْذَّمَائِبَ مُفْصَّلًا

यानी फिर हमने उनपर तूफान भेजा और टिड्डियाँ और घुन का कीड़ा और मेंढक और खून। इसमें कौमे फिरऔन पर मुसल्लत होने वाले पाँच किस्म के अज़ाबों का जिक्र है और उनके इस आयत में "आयातिम् मुफ़स्सलातिन्" फ़रमाया है, जिसके मायने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की तफ़सीर के मुताबिक़ यह हैं कि इनमें से हर अज़ाब एक निश्चित वक़्त तक रहा फिर बन्द हो गया, और कुछ मोहलत दी गयी। उसके बाद दूसरा और तीसरा अज़ाब, इसी तरह अलग-अलग होकर उन पर आया। इसी को तर्जुमा शैखुल-हिन्द में इस्त्रिया किया गया है।

इब्ने मुन्ज़िर ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायतों से नक़ल किया है कि इनमें से हर अज़ाब कौमे फिरऔन पर सात दिन तक मुसल्लत रहता था, हफ़्ते (शनिवार) के दिन शुरू होकर दूसरे हफ़्ते के दिन दूर हो जाता और फिर तीन हफ़्ते की मोहलत उनको दी जाती थी।

इमाम बग़वी ने हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि जब पहली मर्तबा कौमे फिरऔन पर क़हत (सूखे) का अज़ाब मुसल्लत हुआ, और मूसा अलैहिस्सलाम की दुआ से दूर हो गया मगर ये लोग अपनी सरकशी से बाज़ न आये तो हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने दुआ की कि ऐ मेरे परवर्दिगार! ये ऐसे सरकश लोग हैं कि सूखे और अकाल के अज़ाब से भी मुतास्सिर न हुए और अहद व पैमान करके फिर गये, अब इन पर कोई ऐसा अज़ाब मुसल्लत फ़रमा दीजिए जो इनके लिये दर्दनाक हो, और हमारी कौम के लिये एक नसीहत व सीख का काम दे, और बाद में आने वालों के लिये सबक़ लेने का ज़रिया बने, तो अल्लाह तआला ने पहले उन पर तूफ़ान का अज़ाब भेज दिया। मशहूर मुफ़स्सरीन के नज़्दीक तूफ़ान से मुराद पानी का तूफ़ान है, कौमे फिरऔन के सब घरों और ज़मीनों को पानी के तूफ़ान ने घेर लिया, न कहीं बैठने लेटने की जगह रही न ज़मीन में कुछ खेती वगैरह करने की। अजीब बात यह थी कि कौमे फिरऔन के मकानों और ज़मीनों के साथ ही कौमे बनी इस्राईल के मकानात और ज़मीनें थीं, बनी इस्राईल के मकानात और ज़मीनें सब बदस्तूर खुशक थीं कि तूफ़ान का पानी न था और कौमे फिरऔन के सारे घर और ज़मीन उस तूफ़ान से लबरेज़ थे।

इस तूफ़ान से घबराकर कौमे फिरऔन ने मूसा अलैहिस्सलाम से इत्तिजा की कि अपने परवर्दिगार से दुआ कीजिए कि यह अज़ाब हमसे दूर फ़रमा दें तो हम ईमान ले आयेँगे और बनी इस्राईल को आज़ाद कर देंगे। हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की दुआ से यह तूफ़ान दूर हुआ और उसके बाद उनकी खेतियाँ पहले से ज़्यादा हरी-भरी हो गयीं, तो अब यह कहने लगे कि वक़ीक़त यह तूफ़ान कोई अज़ाब नहीं था बल्कि हमारे फ़ायदे के लिये आया था, जिसका नतीजा यह निकला कि हमारी ज़मीनों की पैदावार बढ़ गयी, इसलिये मूसा अलैहिस्सलाम का इसमें कुछ

दखल नहीं, और यह कहकर सब अहद व पैमान नज़र-अन्दाज़ कर दिये।

इस तरह ये लोग एक महीने अमन व आफ़ियत से रहते रहे, अल्लाह ने इनको ग़ौर व फ़िक्र की मोहलत दी, मगर ये होश में न आये तो अब दूसरा अज़ाब टिड्डियों का उन पर मुसल्लत कर दिया गया। टिड्डी-दल ने उनकी सारी खेतियों और बाग़ों को खा लिया। कुछ रिवायतों में है कि लकड़ी के दरवाज़ों और छतों को और सारे घरेलू सामान को टिड्डियाँ खा गयीं, और उस अज़ाब के वक़्त भी मूसा अलैहिस्सलाम का यह मोजिज़ा सामने था कि यह सारा टिड्डी-दल सिर्फ़ किबती यानी कौमे फिरऔन के बाग़ों, खेतियों, घरों पर छाया हुआ था, पास मिले हुए इस्राईलियों के मकानात, ज़मीनें, बाग़ सब इससे महफूज़ थे।

उस वक़्त फिर कौमे फिरऔन चिल्ला उठी और हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से दरख्वास्त की कि इस मर्तबा आप अल्लाह तआला से दुआ कर दें, यह अज़ाब हट जाये तो हम पुख्ता वायदा करते हैं कि ईमान ले आयेंगे और बनी इस्राईल को आज़ाद कर देंगे। मूसा अलैहिस्सलाम ने फिर दुआ की और यह अज़ाब हट गया, मगर अज़ाब के हटने के बाद उन्होंने देखा कि हमारे पास अब भी इतना ज़ख़ीरा ग़ल्ले का मौजूद है कि हम साल भर खा सकते हैं तो फिर सरकशी और अहद तोड़ने पर आमादा हो गये, न ईमान लाये न बनी इस्राईल को आज़ाद किया।

एक महीना फिर अल्लाह तआला ने मोहलत दी। उस मोहलत के बाद तीसरा अज़ाब "कुम्पल" का मुसल्लत हुआ। लफ़्ज़े कुम्पल उस जूँ के लिये भी बोला जाता है जो इन्सान के बालों और कपड़ों में पैदा हो जाती है, और उस कीड़े को भी कहते हैं जो ग़ल्ले में लग जाता है जिसको घुन भी कहा जाता है। कुम्पल का यह अज़ाब मुम्किन है कि दोनों किस्म के कीड़ों पर मुश्तमिल हो कि ग़ल्लों में घुन लग गया और इन्सानों के बदन और कपड़ों में जुओं का तूफ़ान उमड़ आया।

ग़ल्लों का हाल उस घुन ने ऐसा कर दिया कि दस सैर गेहूँ पीसने के लिये निकालें तो उसमें तीन सैर आटा भी न निकले, और जुओं ने उनके बाल और पलकें और भौहें तक खा लीं।

आखिर फिर कौमे फिरऔन बिलबिला उठी और मूसा अलैहिस्सलाम से फ़रियाद की कि अब की मर्तबा हम हरगिज़ वायदे से न फिरेंगे, आप दुआ कर दें। हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की दुआ से यह अज़ाब भी टल गया, मगर जिन बदनसीबों को हलाक ही होना था वे कहाँ अहद को पूरा करते। फिर सुकून मिलते ही सब कुछ भूल गये और इनकारी हो गये।

फिर एक माह की मोहलत इसी आराम व राहत के साथ उनको दी गयी मगर उस मोहलत से भी कोई फ़ायदा न उठाया तो चौथा अज़ाब मेंढकों का उन पर मुसल्लत कर दिया गया, और इस अधिकता से मेंढक उनके घरों में पैदा हो गये कि जहाँ बैठते तो उनके गले तक मेंढकों का ढेर लग जाता, सोने के लिये लेटते तो सारा बदन उनसे दब जाता, करवट लेना नामुम्किन हो जाता, पकती हुई हण्डिया में, रखे हुए खाने में, आटे में और हर चीज़ में मेंढक भर जाते। इस अज़ाब से आजिज़ आकर सब रोने लगे और पहले से पुख्ता वायदों के साथ अहद व इक़्रार किया तो फिर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की दुआ से यह अज़ाब भी दूर हो गया।

मगर जिस कौम पर अल्लाह का कहर मुसल्लत हो उसकी अकल और होश व हवास काम नहीं देते। इस वाकिए के बाद भी अज़ाब से निजात पाकर ये फिर अपनी हठधर्मी पर जम गये और कहने लगे कि अब तो हमें और भी यकीन हो गया कि मूसा अलैहिस्सलाम बड़े जादूगर है, यह सब इनके जादू के करिश्मे हैं, रसूल नबी कुछ नहीं।

फिर एक महीने की मोहलत अल्लाह तआला ने अता फरमाई मगर उस मोहलत से भी कोई काम न लिया तो पाँचवाँ अज़ाब खून का मुसल्लत कर दिया गया कि उनके हर खाने और पीने की चीज़ खून बन गयी। कुएँ से, हौज़ से, जहाँ कहीं से पानी निकालें खून बन जाये, खाना पकाने के लिये रखें खून बन जाये और इन सब अज़ाबों में हज़रत मूसा का यह मोजिज़ा मुसलसल था कि हर अज़ाब से इस्त्राईली हज़रात बिल्कुल मामून व महफूज़ थे। खून के अज़ाब के वक़्त कौमे फिरऔन के लोगों ने बनी इस्त्राईल के घरों से पानी माँगा, जब वह उनके हाथ में गया तो खून हो गया। एक ही दस्तरख़्यान पर बैठकर किस्ती और इस्त्राईली खाना खाते तो जो लुक्मा इस्त्राईली उठाता वह अपनी हालत पर खाना होता और जो लुक्मा या पानी का घूँट किस्ती के मुँह में जाता खून बन जाता। यह अज़ाब भी पहले की तरह सात दिन रहा आखिरकार फिर यह बदकार बद-अहद कौम चिल्ला उठी और हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से फरियाद की और पहले से ज़्यादा पक्के वायदे किये। दुआ की गयी, अज़ाब हट गया मगर ये लोग अपनी उसी हठधर्मी पर जमे रहे। इस तरह ये पाँच लगातार अज़ाब उन पर आते रहे मगर ये लोग अपनी गुमराही पर कायम रहे, इसी को कुरआने करीम ने फरमाया:

فَاَسْتَكْبَرُوا وَكَانُوا قَوْمًا مُّجْرِمِينَ.

यानी इन लोगों ने तकबुर से काम लिया और ये लोग बड़े आदी मुजरिम थे।

इसके बाद एक छठे अज़ाब का जिक्र बाद की आयत में 'रिज्ज़' के नाम से आया है। यह लफ्ज़ अक्सर ताऊन के लिये बोला जाता है। चेचक वगैरह महामारी बीमारियों के लिये भी इस्तेमाल होता है। तफ़सीरी रिवायतों में है कि उन लोगों पर ताऊन की बरसा मुसल्लत कर दी गयी, जिसमें उनके सत्तर हज़ार आदमी हलाक हो गये। उस वक़्त फिर उन लोगों ने फरियाद की और फिर दुआ करने पर यह अज़ाब हटा और फिर बदस्तूर उन लोगों ने अहद तोड़ा। इतनी निरंतर आजमाईशों और मोहलतों के बाद जब उनमें कोई एहसास पैदा ही न हुआ तो अब आखिरी अज़ाब आ गया कि सब के सब अपने मकानों, ज़मीनों और सामान को छोड़कर मूसा अलैहिस्सलाम का पीछा करने में निकले और आखिरकार दरिया-ए-कुल्जुम का लुक्मा बन गये। इसी को ऊपर दर्ज हुई आखिरी आयत में फरमाया है:

فَاَغْرَقْنَاهُمْ فِي الْيَمِّ بِأَنَّهُمْ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا وَكَانُوا عَنْهَا غَافِلِينَ.

सो डुबो दिया हमने-उनको दरिया में इस वजह से कि उन्होंने झुठलाया हमारी आयतों को और उनसे लापरवाही करते थे।

وَأَوْثَرْنَا الْقَوْمَ الَّذِينَ كَانُوا يُسْتَضَعُونَ مَشَارِقَ الْأَرْضِ وَمَغَارِبَهَا الَّتِي بَرَكْنَا فِيهَا
وَتَمَّتْ كَلِمَتُ رَبِّكَ الْحُسْنَىٰ عَلَىٰ بَنِي إِسْرَءِيلَ ۖ بِمَا صَبَرُوا ۖ وَدَمَرْنَا مَا كَانَ يَصْنَعُ فِرْعَوْنُ
وَقَوْمُهُ وَمَا كَانُوا يَعْرِشُونَ ۝ وَجُوزْنَا بِبَنِي إِسْرَءِيلَ الْبَحْرَ فَأَتَوْا عَلَىٰ قَوْمٍ يَعْكُفُونَ عَلَىٰ
أَصْنَامِهِمْ ۖ قَالُوا أَيُتُوبَةُ اجْعَلْ لَنَا إِلَهًا كَمَا لَهُمْ آلِهَةٌ ۚ قَالَ إِنَّكُمْ قَوْمٌ تَبْهَلُونَ ۝ إِنَّ هَؤُلَاءِ
مُتَّبِعُونَ مَا هُمْ فِيهِ وَبِطُلَّ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ۝ قَالَ أَغَيْرَ اللَّهِ أَبْغِيكُمْ إِلَهًا وَهُوَ فَضَّلَكُمْ
عَلَى الْعَالَمِينَ ۝ وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَكُمْ ۖ فَرَعَوْنَ يَسُومُونَكُم سُوءَ الْعَذَابِ ۖ يَقْتُلُونَ أَبْنَاءَكُمْ
وَيَسْتَحْيُونَ نِسَاءَكُمْ ۖ وَفِي ذَٰلِكُمْ بَلَاءٌ مِّن رَّبِّكُمْ عَظِيمٌ ۝

لربع

١٢
٤٢
٦

व औरस्नल् कौमल्लजी-न कानू
युस्तज़अफू-न मशारिकल्-अज़ि व
मगारि-बहल्लती बारक्ना फीहा, व
तम्मत् कलि-मतु रब्बिकल्-हुस्ना
अला बनी इस्राई-ल बिमा स-बरू, व
दम्परना मा का-न यस्नअु फिरऔनु
व कौमुहू व मा कानू यअरिशून
(137) ❖ व जावज़ना बि-बनी
इस्राईलल्-बह-र फ-अतौ अला
कौमिय्यअकुफू-न अला अस्नामिल्-
लहुम् कालू या मूसज्अल्-लना
इलाहन् कमा लहुम् आलि-हतुन्,
का-ल इन्नकुम् कौमुन् तज्हलून
(138) इन्-न हाउला-इ मुतब्बरुम्
मा हुम् फीहि व बातिलुम् मा कानू
यअमलून (139) का-ल अगैरल्लाहि
अब्जीकुम् इलाहव्-व हु-व

और वारिस कर दिया हमने उन लोगों को
जो कमजोर समझे जाते थे, उस ज़मीन
के पूरब और पश्चिम का कि जिसमें
बरकत रखी है हमने, और पूरा हो गया
नेकी का वायदा तेरे रब का बनी इस्राईल
पर, उनके सब करने की वजह से, और
खराब कर दिया हमने जो कुछ बनाया था
फिरऔन और उसकी कौम ने, और जो
ऊँचा करके छाया था। (137) ❖ और
पार उतार दिया हमने बनी इस्राईल को
दरिया से, तो पहुँचे एक कौम पर जो
पूजने में लग रहे थे अपने बुतों के। कहने
लगे- ऐ मूसा! बना दे हमारी इबादत के
लिये भी एक बुत जैसे इनके बुत हैं। कहा
तुम लोग तो जहालत दिखाते हो। (138)
ये लोग, तबाह होने वाली है वह चीज़
जिसमें वे लगे हुए हैं, और ग़लत है जो
वे कर रहे हैं। (139) कहा- क्या अल्लाह
के सिवा दूँदूँ तुम्हारे वास्ते कोई और

फज़्ज़-लकुम् अलल्-आलमीन (140)
 व इज़् अन्जैनाकुम् मिन् आलि
 फिरऔ-न यसूमूनकुम् सूअल्-
 अज़ाबि युक्त्तिलू-न अब्ना-अकुम् व
 यस्तह्यू-न निसा-अकुम्, व फी
 ज़ालिकुम् बलाउम् मिरब्बिकुम्
 अज़ीम (141) ❀

माबूद? हालाँकि उसने तुमको बड़ाई दी
 तमाम जहान पर। (140) और वह वक्त
 याद करो जब निजात दी हमने तुमको
 फिरऔन वालों से कि देते थे तुमको बुरा
 अज़ाब, कि पार डालते थे तुम्हारे बेटों
 को और जिन्दा रखते थे तुम्हारी औरतों
 को, और इसमें एहसान है तुम्हारे रब का
 बड़ा। (141) ❀

खुलासा-ए-तफ़्सीर

और (फिरऔन और फिरऔन वालों को गर्क करके) हमने उन लोगों को जो कि बिल्कुल कमज़ोर ही गिने जाते थे (यानी बनी इस्राईल) उस सरज़मीन “यानी मुल्क” के पूरब-पश्चिम (यानी तमाम इलाकों) का मालिक बना दिया, जिसमें हमने बरकत रखी है (ज़ाहिरी बरकत तो यह कि वहाँ पैदावार की कसरत है, और बातिनी व रूहानी बरकत यह कि वह ज़मीन बड़े फज़ाईल वाली है, बहुत से नबी वहाँ रहे और कितने ही नबियों की वहाँ क़ब्रें हैं)। और आपके रब का अच्छा वायदा बनी इस्राईल के हक़ में उनके सब्र की वजह से पूरा हो गया (जिसका हुक्म उन्हें दिया गया था ‘कि सब्र करो’) और हमने फिरऔन को और उसकी कौम के तैयार किये और सजाये हुए कारख़ानों को और जो कुछ वे ऊँची-ऊँची इमारतें बनवाते थे, सब को उलट-पुलट कर दिया। और (जिस दरिया में फिरऔन को गर्क किया गया) हमने बनी इस्राईल को (उस) दरिया से पार उतार दिया (जिसका किस्सा सूर: शुअरा में है)। पस (पार होने के बाद) उन लोगों का एक कौम पर गुज़र हुआ जो अपने चन्द बुतों को लगे बैठे थे (यानी उनकी पूजा-पाठ कर रहे थे) कहने लगे कि ऐ मूसा! हमारे लिए भी एक (जिस्म वाला) माबूद ऐसा ही मुक़र्रर कर दीजिए जैसे इनके ये माबूद हैं। आपने फ़रमाया कि वाकई तुम लोगों में बड़ी जहालत है। ये लोग जिस काम में लगे हैं यह (अल्लाह की तरफ़ से भी) तबाह किया जाएगा (जैसा कि अल्लाह की आदत व दस्तूर हमेशा से जारी है कि हक़ को बातिल पर ग़ालिब करके उसको तबाह व बरबाद कर देते हैं) और (अपने आप में भी) इनका यह काम बिल्कुल बेबुनियाद है (क्योंकि शिर्क का ग़ैर-हक़ और बातिल होना यकीनी और आसानी से समझ में आने वाली चीज़ है। और) फ़रमाया- क्या अल्लाह तआला के सिवा और किसी को तुम्हारा माबूद बना दूँ? हालाँकि उसने तुमको (कुछ नेमतों में) तमाम दुनिया-जहान वालों पर बरतरी दी है। और (अल्लाह तआला ने मूसा अलैहिस्सलाम के कौल की ताईद के लिये इरशाद फ़रमाया कि) वह वक्त याद करो जब हमने तुमको फिरऔन वालों (के जुल्म व तकलीफ़ पहुँचाने) से बचा लिया,

जो तुमको बड़ी सख्त तकलीफें पहुँचाते थे। तुम्हारे बेटों को (कसरत से) कत्ल कर डालते थे और तुम्हारी औरतों को (अपनी बेगार और खिदमत के लिये) जिन्दा छोड़-देते थे। और इस (वाकिए) में तुम्हारे परवर्दिगार की तरफ से बड़ी भारी आजमाईश थी।

मअरिफ व मसाईल

पिछली आयतों में कौमे फिरऔन की निरन्तर सरकशी और अल्लाह तआला की तरफ से विभिन्न अज़ाबों के जरिये उनकी तंबीहात का बयान था। इन आयतों में उनके बुरे अन्जाम और बनी इस्राईल की फ़तह व कामयाबी का जिक्र है।

पहली आयत में इरशाद है:

وَأَوْرَثْنَا الْقَوْمَ الَّذِينَ كَانُوا يُسْتَضْعَفُونَ مَشَارِقَ الْأَرْضِ وَمَغَارِبَهَا الَّتِي بَرَكْنَا فِيهَا.

यानी जिस कौम को कमज़ोर ज़ईफ़ समझा जाता था उनको हमने उस ज़मीन के पूरब व पश्चिम का मालिक बना दिया जिसमें हमने बरकतें रखी हैं।

कुरआनी अलफ़ाज़ में ग़ौर कीजिये। यह नहीं फ़रमाया कि जो कौम ज़ईफ़ व कमज़ोर थी बल्कि यह फ़रमाया कि जिसको कौमे फिरऔन ने ज़ईफ़ व कमज़ोर समझा था, इशारा इसकी तरफ़ है कि अल्लाह तआला जिस कौम की मदद पर हों वह हकीकत में कभी कमज़ोर व ज़लील नहीं होती चाहे किसी वक़्त उसके ज़ाहिरी हाल से दूसरे लोग धोखा खायें और उनको कमज़ोर समझें मगर अंततः सब को मालूम हो जाता है कि वे कमज़ोर व ज़लील न थे, क्योंकि दर हकीकत कुव्वत व इज़्ज़त हक़ तआला शानुहू के कब्ज़े में है, वह जिसको चाहता है इज़्ज़त देता है और जिसको चाहता है ज़िल्लत देता है।

और ज़मीन का मालिक बना देने के लिये लफ़ज़ “औरसना” इरशाद फ़रमाया कि हमने उनको वारिस बना दिया। इसमें इशारा इसकी तरफ़ है कि जिस तरह वारिस ही अपने मूरिस के माल का मुस्तहिक़ होता है इसी तरह अल्लाह के इल्म में बनी इस्राईल पहले ही से कौमे फिरऔन के मुल्क व माल के मुस्तहिक़ (पात्र) थे।

“मशरिक” मशरिक की जमा (बहुवचन) है और “मग़रिब” मग़रिब की। सर्दी गर्मी के विभिन्न मौसमों में मग़रिब व मशरिक (पूरब व पश्चिम) के बदलने की वजह से जमा का लफ़ज़ लाया गया, और ज़मीन से मुराद इस जगह मुफ़स्सरीन की अक्सरियत के कौल के मुताबिक़ मुल्के शाम और मिस्र की सरज़मीन है जिस पर अल्लाह तआला ने बनी इस्राईल को कौमे फिरऔन और कौमे अमालिका के हलाक होने के बाद कब्ज़ा और हुकूमत अता फ़रमाई। और ‘अल्लती बारक्ना फ़ीहा’ से यह बतला दिया कि इन ज़मीनों में अल्लाह तआला ने विशेष तौर पर अपनी बरकतें नाज़िल फ़रमाई हैं। मुल्के शाम के बारे में तो कुरआने करीम की अनेक आयतों में बरकतों का स्थान होने का जिक्र है “अल्लती बारक्ना फ़ीहा” में इसी का बयान है। इसी तरह मिस्र की ज़मीन के बारे में भी बरकतों व फलों वाली होना अनेक रिवायतों से तथा अनुभव व मुशाहदों से साबित है। हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि

मिस्र का दरिया-ए-नील "सय्यिदुल-अन्हार" यानी दरियाओं का सरदार है, और हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि बरकतों के दस हिस्सों में से नौ मिस्र में हैं और बाकी एक पूरी ज़मीन में। (बहरे मुहीत)

खुलासा यह है कि जिस कौम को गुरुर व तकब्बुर के नशे में मस्त लोगों ने अपनी कोताह नज़री से ज़लील व कमज़ोर समझ रखा था, हमने उसी को उन धमण्डियों की दौलत व सल्तनत और मुल्क व माल का मालिक बनाकर दिखला दिया कि अल्लाह तआला और उसके रसूलों का वायदा सच्चा होता है। इरशाद फ़रमाया:

وَنَمَتْ كَلِمَتُ رَبِّكَ الْحُسْنَىٰ عَلَىٰ بَنِي إِسْرَٰئِيلَ

यानी आपके रब का अच्छा वायदा बनी इस्राईल के हक़ में पूरा हो गया।

इस अच्छे वायदे से मुराद या तो वह वायदा है जो मूसा अलैहिस्सलाम ने अपनी कौम से किया था कि:

عَسَىٰ رَبُّكُمْ أَن يُهْلِكَ عَدُوَّكُمْ وَيَسْتَخْلِفَكُمْ فِي الْأَرْضِ

यानी करीब है कि तुम्हारा रब तुम्हारे दुश्मन को हलाक कर दे और उनकी ज़मीन का तुम्हें मालिक बना दे। और या वह वायदा है जो क़ुरआने करीम में दूसरी जगह खुद हक़ तआला ने बनी इस्राईल के बारे में फ़रमाया:

وَنُرِيدُ أَنْ نَمُنَّ عَلَى الَّذِينَ اسْتُضِعُوا فِي الْأَرْضِ وَنَجْعَلَهُمْ أَئِمَّةً وَنَجْعَلَهُمُ الْوَارِثِينَ وَنُكِّنَ لَهُمْ فِي الْأَرْضِ

وَنُرِيَ فِرْعَوْنَ وَهَامَانَ وَجُنُودَهُمَا مِنْهُمْ مَا كَانُوا يَحْذَرُونَ

यानी हम यह चाहते हैं कि उस कौम पर एहसान करें जिनको इस मुल्क में कमज़ोर व ज़लील समझा गया है, और उनको ही सरदार और हाकिम बना दें और उनको ही इस ज़मीन का वारिस करार दें और इस ज़मीन पर कब्ज़े और इख्तियार चलाने का हक़ दें और फिरऔन व हामान और उनके लश्करीयों को वह चीज़ ज़ाहिर करके दिखला दें जिसके डर से वे मूसा अलैहिस्सलाम के खिलाफ़ तरह-तरह की तदबीरें कर रहे हैं।

और हकीकत यह है कि ये दोनों वायदे एक ही हैं, अल्लाह तआला के वायदे ही की बिना पर मूसा अलैहिस्सलाम ने अपनी कौम से वायदा किया था। इस आयत में उस वायदे का पूरा होना लफ़्ज़ "तम्मत" से बयान किया गया, क्योंकि वायदे का पूरा करना और तकमील उसी वक़्त होती है जब वह पूरा हो जाये।

इसके साथ ही बनी इस्राईल पर इस इनाम व एहसान की वजह भी बयान फ़रमा दी "बिमा स-बरू" यानी इस वजह से कि उन लोगों ने अल्लाह के रास्ते में तकलीफ़ें बरदाश्त कीं और उन पर साबित-कदम (जमे) रहे।

इसमें इशारा कर दिया कि हमारा यह एहसान व इनाम सिर्फ़ बनी इस्राईल ही के साथ मख़सूस न था बल्कि उनके सब्र व साबित-कदमी वाले अमल का नतीजा था, जो शख्स या जो

कौम इस अमल को इस्तिआर करे हमारा इनाम हर जगह हर वक्त उसके लिये मौजूद है:

फिज़ा-ए-बदर पैदा कर फरिश्ते तेरी नुसरत को
उतर सकते हैं गरदूँ से क़तार अन्दर क़तार अब भी

हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने जब अल्लाह की मदद का वायदा अपनी कौम से किया था उस वक्त भी उन्होंने कौम को यही बतलाया था कि अल्लाह तआला से मदद माँगना और मुसीबतों व आफ़तों का जमाव व सब्र के साथ मुकाबला करना ही कामयाबी की कुन्जी है।

हज़रत हसन बसरी रह. ने फ़रमाया कि इस आयत में इशारा पाया जाता है कि जब इनसान का मुकाबला किसी ऐसे शख्स या जमाअत से हो जिससे अपनी रक्षा और बचाव करना उसकी कुदरत में न हो तो ऐसे वक्त कामयाबी और फ़लाह का सही तरीका यही है कि मुकाबला न करे बल्कि सब्र करे। उन्होंने फ़रमाया कि जब कोई आदमी किसी के तकलीफ़ देने का मुकाबला उसको तकलीफ़ पहुँचाने से करता है यानी अपना बदला खुद लेने की फ़िक्र करता है तो अल्लाह तआला उसको उसी के हवाले कर देते हैं, कामयाब हो या नाकाम। और जब कोई शख्स लोगों के सताने और तकलीफ़ देने का मुकाबला सब्र और अल्लाह की मदद के इन्तिज़ार से करता है तो अल्लाह तआला खुद उसके लिये रास्ते खोल देते हैं।

और जिस तरह अल्लाह तआला ने बनी इस्राईल से सब्र व साबित-क़दमी पर यह वायदा फ़रमाया था कि उनको दुश्मन पर फ़तह और ज़मीन पर हुकूमत अता करेंगे इसी तरह उम्मत मुहम्मदिया से भी वायदा फ़रमाया है जो सूर: नूर में बयान किया गया है:

وَعَدَ اللَّهُ الَّذِينَ آمَنُوا مِنْكُمْ وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَيَسْتَخْلِفَنَّهُمْ فِي الْأَرْضِ.

और जिस तरह बनी इस्राईल ने अल्लाह के वायदे को देख लिया था, उम्मत मुहम्मदिया ने उनसे ज़्यादा वाज़ेह तौर पर अल्लाह तआला की मदद को देखा, पूरी ज़मीन पर उनकी हुकूमत व सल्तनत आम हो गयी। (तफ़्सीर रूहुल-बयान)

यहाँ यह शुब्हा न किया जाये कि बनी इस्राईल ने तो सब्र से काम नहीं लिया, बल्कि जब मूसा अलैहिस्सलाम ने सब्र की हिदायत फ़रमाई तो ख़फ़ा होकर कहने लगे “ऊज़ीना” (हमको सताया गया....) वजह यह है कि अव्वल तो उनका सब्र फिरऔनी तकलीफ़ों के मुकाबले में और ईमान पर साबित-क़दम रहना मुसलसल साबित है, अगर एक दफ़ा शिकायत का लफ़ज़ निकल भी गया तो उस पर नज़र नहीं की गयी। दूसरे यह भी मुम्किन है कि बनी इस्राईल का यह कौल शिकायत के तौर पर न हो बल्कि रंज व ग़म के ज़ाहिर करने के तौर पर हो।

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में इसके बाद फ़रमाया:

وَدَمَّرْنَا مَا كَانَ يَصْنَعُ فِرْعَوْنُ وَقَوْمُهُ وَمَا كَانُوا يَعْرِشُونَ.

यानी हमने तबाह व बरबाद कर दिया उन सब चीज़ों को जो फिरऔन और उसकी कौम बनाया करती थी, और उन इमारतों या दरख़्तों को जिनको वह ऊँचा किया करती थी। फिरऔन और कौमे फिरऔन की बनाई हुई चीज़ों में उनके मकानात, इमारतें और घरेलू ज़रूरत के

सामान, तथा वो मुख्तलिफ़ किस्म की तदबीरें जो वे मूसा अलैहिस्सलाम के मुकाबले के लिये करते थे, सब दाखिल हैं। और "व मा कानू यज़ूरिशून" यानी जिसको वे बुलन्द करते थे, इसमें ऊँचे महल और मकानात भी दाखिल हैं और बुलन्द दरख्त और वो अंगूर की बेलें भी जिनको छतों पर चढ़ाया जाता है।

यहाँ तक कौमे फिरऔन की तबाही का जिक्र था, आगे बनी इस्राईल की फ़तह व कामयाबी के बाद उनकी नाफ़रमानी, जहालत और ग़लत चलन का बयान शुरू होता है जो अल्लाह तआला की बेशुमार नेमतों के देखने और बरतने के बावजूद उन लोगों से सर्जद हुई, जिसका मक़सद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को तसल्ली देना है कि पिछले नबियों ने अपनी उम्मत के हाथों कैसी-कैसी तकलीफ़ें उठाई हैं, उनको सामने रखने से मौजूदा सरकशों की ईज़ा (सताना) हल्की हो जायेगी।

وَجَاوَزْنَا بِبَنِي إِسْرَآءِیْلَ الْبَحْرَ

यानी हमने बनी इस्राईल को दरिया से पार उतार दिया, बनी इस्राईल को कौमे फिरऔन के मुकाबले में चमत्कारिक कामयाबी हासिल हुई और इत्मीनान मिला तो उसका वही असर हुआ जो आम कौमों पर ऐश व आराम और इज्ज़त व दौलत का हुआ करता है, कि उनमें जाहिलाना चीज़ें पैदा होना शुरू हुईं।

वाकिआ यह पेश आया कि यह कौम अभी-अभी मूसा अलैहिस्सलाम के मोजिज़े के साथ दरिया से पार हुई और पूरी कौमे फिरऔन के दरिया में डूबने का तमाशा अपनी आँखों से देखकर ज़रा आगे बढ़ी तो एक कबीले पर गुज़र हुआ जो मुख्तलिफ़ बुतों की पूजा में मुब्तला था। बनी इस्राईल को कुछ उनका ही तरीका पसन्द आने लगा और मूसा अलैहिस्सलाम से दरख्वास्त की कि जैसे इन लोगों के बहुत से माबूद हैं आप हमारे लिये भी कोई ऐसा ही माबूद बना दीजिए कि हम भी एक महसूस चीज़ को सामने रखकर इबादत किया करें, अल्लाह तआला की ज़ात तो सामने नहीं। मूसा अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया:

اِنَّكُمْ قَوْمٌ تَجْهَلُوْنَ

यानी तुम लोगों में बड़ी जहालत है। ये लोग जिनके तरीके को तुमने पसन्द किया इनके आमाल सब ज़ाया व बरबाद हैं, यह बातिल की पैरवी करने वाले हैं, तुम्हें इनकी हिर्स न करनी चाहिये। क्या मैं तुम्हारे लिये अल्लाह के सिवा किसी को माबूद बना दूँ? हालाँकि अल्लाह तआला ने ही तुमको तमाम जहान वालों पर फ़ज़ीलत (रुतबा व इज्ज़त) बख़्शी है। मुराद उस वक़्त के दुनिया वाले हैं, कि उस वक़्त मूसा अलैहिस्सलाम पर ईमान लाने वाले ही दूसरे सब लोगों से अफ़ज़ल व आला थे।

उसके बाद बनी इस्राईल को उनकी पिछली हालत याद दिलाई गयी कि वे फिरऔन के हाथों में ऐसे मजबूर व ज़लील थे कि उनके लड़कों को क़त्ल किया जाता था सिर्फ़ लड़कियाँ अपनी ख़िदमत के लिये रखी जाती थीं। अल्लाह तआला ने मूसा अलैहिस्सलाम की बरकत व

दुआ से इस अज़ाब से निजात दी, क्या इस एहसान का असर यह होना चाहिये कि तुम उसी रब्बुल-आलमीन के साथ दुनिया के ज़लील-तरीन (घटिया) पत्थरों को शरीक ठहराओ? यह कैसा भारी जुल्म है, इससे तौबा करो।

وَوَعَدْنَا مُوسَى ثَلَاثِينَ لَيْلَةً وَأَتَيْنَاهَا بِعَشْرِ فِتْنٍ مُبَيِّنَاتٍ رَبِّهِ أَرْبَعِينَ لَيْلَةً، وَقَالَ مُوسَى لِأَخِيهِ هَارُونَ اخْلُفْنِي فِي قَوْمِي وَأَصْلِحْ وَلَا تَتَّبِعْ سَبِيلَ الْمُفْسِدِينَ ۝

व वाअदना मूसा सलासी-न लै-लतंव
-व अत्मनाहा बिअशिरन् फ-तम्-म
मीकातु रब्बिही अरबअ-न लै-लतन् व
का-ल मूसा लिअखीहि हारूनख़ुफ़नी
फी कौमी व अस्लिह व ला तत्तबिअ
सबीलल्-मुफ़्सीदीन (142)

और वादा किया हमने मूसा से तीस रात
का और पूरा किया उनको और दस से
पस पूरी हो गई मुदत तेरे रब की चालीस
रातें, और कहा मूसा ने अपने भाई हारून
से कि मेरा खलीफ़ा रह मेरी कौम में
और इस्लाह करते रहना और मत चलना
फ़साद मचाने वालों की राह। (142)

खुलासा-ए-तफ़्सीर

और (जब बनी इस्राईल सब परेशानियों से मुल्मईन हो गये तो मूसा अलैहिस्सलाम से दरख्वास्त की कि अब हमको कोई शरीअत मिले तो उस पर इत्मीनान के साथ अमल करें। मूसा अलैहिस्सलाम ने हक़ तआला से दरख्वास्त की, हक़ तआला उसका किस्सा इस तरह बयान फ़रमाते हैं कि) हमने मूसा (अलैहिस्सलाम) से तीस रात का वायदा किया (कि तूर पहाड़ पर आकर एतिकाफ़ करें तो आपको शरीअत और किताब यानी तौरात दी जायेगी) और दस रात को उन (तीस रात) का पूरा करने वाला बनाया (यानी तौरात देकर उनमें दस रातें इबादत के लिये और बढ़ा दीं जिसकी वजह सूरः ब-क़रह में बयान हो चुकी है)। सो उनके परवर्दिगार का (मुकरर किया हुआ) वक़्त (सब मिलकर) पूरी चालीस रातें हो गया। और मूसा (अलैहिस्सलाम) तूर पहाड़ पर आने लगे तो चलते वक़्त उन्होंने अपने भाई हारून (अलैहिस्सलाम) से कह दिया था कि मेरे बाद मेरी कौम का इन्तिज़ाम रखना और इस्लाह करते रहना और बद-नज़्म “यानी बिगाड़ व ख़राबी पैदा करने वाले” लोगों की राय पर अमल मत करना।

मज़ारिफ़ व मसाईल

इस आयत में मूसा अलैहिस्सलाम और बनी इस्राईल का वह वाकिआ बयान हुआ है जो फिरऔन के दरिया में डूबने और बनी इस्राईल के मुल्मईन होने के बाद पेश आया कि बनी इस्राईल ने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से दरख्वास्त की कि अब हम मुल्मईन हैं, अब हमें कोई

किताब और शरीअत मिले तो हम बेफिक्री के साथ उस पर अमल करें। हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने हक़ तआला से दुआ की।

इसमें लफ़्ज़ “वाअदना” वायदे से निकला है, और वायदे की हकीकत यह है कि किसी को नफ़ा पहुँचाने से पहले उसका इज़हार कर देना कि हम तुम्हारे लिये फुलों काम करेंगे।

इस मौक़े पर अल्लाह तआला ने मूसा अलैहिस्सलाम पर अपना कलाम नाज़िल करने का वायदा फ़रमाया और उसके लिये यह शर्त लगाई कि तीस रातें तूर पहाड़ पर एतिकाफ़ और ज़िक्रुल्लाह में गुज़ार दें और फिर उन तीस पर और दस रातों का इज़ाफ़ा करके चालीस कर दिया।

लफ़्ज़ “वाअदना” के असली मायने दो तरफ़ से वायदे और मुआहदे के आते हैं। यहाँ भी अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ से तौरात के अता होने का वायदा था और मूसा अलैहिस्सलाम की तरफ़ से तीस चालीस रातों के एतिकाफ़ का, इसलिये बजाय “वअदना” के “वाअदना” फ़रमाया।

इस आयत में चन्द मसाल और अहक़ाम ध्यान देने के काबिल हैं। अव्वल यह कि जब अल्लाह तआला को मन्ज़ूर ही यह था कि एतिकाफ़ चालीस रातों का कराया जाये तो पहले तीस और बाद में दस का इज़ाफ़ा करके चालीस करने में क्या हिक्मत थी? पहले ही चालीस रातों के एतिकाफ़ का हुक्म दे दिया जाता तो क्या हर्ज था। सो अल्लाह तआला की हिक्मतों का इहता तो कौन कर सकता है, कुछ हिक्मतें उलेमा ने बयान की हैं।

तफ़सीर रूहुल-बयान में है कि इसमें एक हिक्मत तदरीज और आहिस्तगी की है कि कोई काम किसी के ज़िम्मे लगाया जाये तो शुरू ही में काम की ज़्यादा मिक्दार (बोझ और मात्रा) उस पर न डाली जाये ताकि वह आसानी से बरदाश्त करे, फिर मज़ीद काम दिया जाये।

और तफ़सीरे कुर्तुबी में है कि यह अन्दाज़ इस्त्रियार करने में हाकिमों और इस्त्रियार वालों को इसकी तालीम देना है कि अगर किसी को कोई काम एक निर्धारित वक़्त में पूरा करने का हुक्म दिया जाये और उस निर्धारित मियाद में वह पूरा न कर सके तो उसको कुछ और मोहलत दी जाये, जैसा कि मूसा अलैहिस्सलाम के वाक़िए में पेश आया कि तीस रातें पूरी करने के बाद जिस कैफ़ियत का हासिल होना मतलूब था वह पूरी न हुई इसलिये मज़ीद दस रातों का इज़ाफ़ा किया गया, क्योंकि उन दस रातों के इज़ाफ़े का जो वाक़िआ मुफ़स्सरीन ने ज़िक्र किया है वह यह है कि तीस रातों के एतिकाफ़ में मूसा अलैहिस्सलाम ने कायदे के मुताबिक़ लगातार तीस रोज़े भी रखे, बीच में इफ़्तार नहीं किया। तीसवाँ रोज़ा पूरा करने के बाद इफ़्तार करके मुकर्ररा मक़ाम तूर पर हाज़िर हुए तो हक़ तआला की तरफ़ से इरशाद हुआ कि रोज़ेदार के मुँह से जो एक खास किस्म की पेट के ख़ाली रहने और उससे भाप उठने की गंध पैदा हो जाती है वह अल्लाह तआला को पसन्द है। आपने इफ़्तार के बाद मित्वाक़ करके उस गंध (बू) को दूर कर दिया, इसलिये दस रोज़े और रखिये ताकि वह बू फिर पैदा हो जाये।

और तफ़सीर की कुछ रिवायतों में जो इस जगह यह नक़ल किया गया है कि तीसवें रोज़े के

बाद मूसा अलैहिस्सलाम ने मिस्वाक कर ली थी जिसके जरिये रोजे की वह गंध (बू) दूर हो गयी थी, इससे इस बात पर तर्क नहीं लिया जा सकता कि रोजेदार के लिये मिस्वाक करना मक्ruh या वर्जित है, क्योंकि अव्वल तो इस रिवायत की कोई सनद जिक्र नहीं की गयी, दूसरे यह भी हो सकता है कि यह हुक्म हजरत मूसा अलैहिस्सलाम की जात से मुताल्लिक हो, आम लोगों के लिये न हो, या मूसा अलैहिस्सलाम की शरीअत में ऐसा ही हुक्म सब के लिये हो कि रोजे की हालत में मिस्वाक न की जाये, लेकिन शरीअते मुहम्मदिया में तो रोजे की हालत में मिस्वाक करने का मामूल हदीस से साबित है जिसको इमाम बैहकी ने हजरत आयशा रजियल्लाहु अन्हा की रिवायत से नकल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया:

غَيْرُ خَصَائِلِ الصَّائِمِ السَّوَاكُ.

यानी रोजेदार का बेहतरीन अमल मिस्वाक है। इस रिवायत को जामे सगीर में नकल करके हसन फरमाया है।

फायदा: इस रिवायत पर एक सवाल यह होता है कि हजरत मूसा अलैहिस्सलाम जब खजिर अलैहिस्सलाम की तलाश में सफर कर रहे थे तो आधे दिन भूख पर सब्र न हो सका और अपने साथी से फरमाने लगे:

إِنَّا غَدَاةٌ نَا لَقَدْ لَقِينَا مِنْ سَفَرِنَا هَذَا نَصَبًا.

यानी हमारा नाश्ता लाओ क्योंकि इस सफर ने हमको थकान में डाल दिया। और तूर पहाड़ पर लगातार तीस रोजे इस तरह रखे कि रात को भी इफ्तार नहीं, यह अजीब बात है?

तफ्सीर रहूल-बयान में है कि यह फर्क इन दोनों सफरों के अन्दाज के सबब से था, पहला सफर मख्लूक के साथ मख्लूक की तलाश में था, और तूर पहाड़ का सफर मख्लूक से अलग होकर एक पाक जात यानी अल्लाह तआला की जुस्तजू में, इसका यही असर होना था कि इनसानी तकाजे बहुत ही कमजोर व बेजान हो गये, खाने पीने की हाजत इतनी घट गयी कि तीस रोज तक कोई तकलीफ महसूस नहीं फरमाई।

इबादतों में चाँद का हिसाब मोतबर है, दुनियावी

मामलों में सूरज के हिसाब की गुंजाईश है

एक और मसला इस आयत से यह साबित हुआ कि अम्बिया अलैहिमुस्सलाम की शरीअतों में तारीख का हिसाब रात से होता है, क्योंकि इस आयत में भी तीस दिन के बजाय तीस रातों का जिक्र फरमाया है। वजह यह है कि नबियों की शरीअतों में महीने कमरी (चाँद के) मोतबर हैं और कमरी महीने की शुरुआत चाँद देखने से होती है, वह रात ही में हो सकता है, इसलिये महीना रात से शुरू होता है। फिर उसकी हर तारीख सूरज गुरुब होने से शुमार होती है। जितने आसमानी मजहब हैं उन सब का हिसाब इसी तरह कमरी (चाँद के) महीनों से और शुरू तारीख

सूरज छुपने से शुमार की जाती है।

इमाम कुर्तुबी ने इब्ने अरबी के हवाले से नकल किया है कि:

حَسَابُ الشَّمْسِ لِلْمَنَافِعِ وَحَسَابُ الْقَمَرِ لِلْمَنَاسِكِ

यानी शम्सी (सूरज का) हिसाब दुनियावी फायदों के लिये और कमरी (चाँद का) हिसाब इबादतों के अदा करने के लिये।

और ये तीस रातें हजरत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की तफसीर के मुताबिक जीकादा (इस्लामी साल के ग्यारहवें महीने) की रातें थीं और फिर उन पर दस रातें ज़िलहिज्जा की बढ़ाई गयीं। इससे मालूम हुआ कि तौरात का अतीया हजरत मूसा अलैहिस्सलाम को कुरबानी (यानी बकर-ईद) के दिन मिला। (तफसीर-ए-कुर्तुबी)

नफ्स की इस्लाह में चालीस दिन-रात को खास दखल है

इस आयत के इशारे से यह भी मालूम हुआ कि चालीस रातों को बातिनी हालात की इस्लाह (सुधार) में कोई खास दखल है, जैसा कि एक हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि जो शख्स चालीस दिन इस्लाम के साथ अल्लाह तआला की इबादत करे तो अल्लाह तआला उसके दिल से हिक्मत के चश्मे जारी फरमा देते हैं। (रुहुल-बयान)

इनसान को अपने सब कामों में तदरीज और

आहिस्तगी की तालीम

इस आयत से साबित हुआ कि अहम कामों के लिये एक खास मियाद मुक़र्रर करना, और आसानी व तदरीज से अन्जाम देना अल्लाह की सुन्नत है। तेज़ी और जल्दबाज़ी अल्लाह तआला को पसन्द नहीं।

सबसे पहले खुद हक़ तआला ने अपने काम यानी दुनिया की पैदाईश के लिये एक मियाद छह दिन की मुतैयन फरमाकर यह उसूल बतला दिया है, हालाँकि हक़ तआला को आसमान ज़मीन और सारे आलम को पैदा करने के लिये एक मिनट की भी ज़रूरत नहीं, जब वह किसी चीज़ को पैदा करने के लिये फरमा दें कि हो जा वह फौरन हो जाती है, मगर इस खास तरीका-ए-अमल में मख़्लूक को यह हिदायत देनी थी कि अपने कामों को ग़ौर व फ़िक्क और तदरीज के साथ (थोड़ा-थोड़ा करके) अन्जाम दिया करें। इसी तरह हजरत मूसा अलैहिस्सलाम को तौरात अता फरमाई तो उसके लिये भी एक मियाद मुक़र्रर फरमाई, इसमें इसी उसूल की तालीम है। (तफसीर-ए-कुर्तुबी)

और यही वह उसूल था जिसको नज़र-अन्दाज़ कर देना बनी इस्राईल की गुमराही का सबब बना, क्योंकि हजरत मूसा अलैहिस्सलाम अल्लाह के पहले हुक्म के मुताबिक अपनी क़ौम से यह

कहकर गये थे कि तीस दिन के लिये जा रहा हूँ, यहाँ जब दस दिन की मुद्दत बढ़ गयी तो वे लोग अपनी जल्दबाजी के सबब यह कहने लगे कि मूसा अलैहिस्सलाम तो कहीं गुम हो गये, अब हमें कोई दूसरा पेशवा बना लेना चाहिये। इसका यह नतीजा हुआ कि सामरी के जाल में फँसकर “गौसाला परस्ती” (गाय के बछड़े को पूजना) शुरू कर दी, अगर अपने कामों में आहिस्तागी, दर्जा-ब-दर्जा करने और सोच-विचार के आदी होते तो यह नौबत न आती। (कुर्तुबी) आयत के दूसरे जुमले में इरशाद है:

وَقَالَ مُوسَى لِأَخِيهِ هَارُونَ اخْلُفْنِي فِي قَوْمِي وَأَصْلِحْ وَلَا تَتَّبِعْ سَبِيلَ الْمُفْسِدِينَ.

इस जुमले से भी चन्द मसाल और अहकाम निकलते हैं।

प्रबंधक और जिम्मेदार को ज़रूरत के वक़्त अपना उत्तराधिकारी तजवीज़ करना

अब्वल यह कि जब हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने अल्लाह तआला के वायदे के मुताबिक़ तूर पहाड़ पर जाकर एतिकाफ़ करने का इरादा किया तो अपने साथी हज़रत हारून अलैहिस्सलाम से फ़रमाया:

اُخْلُفْنِي فِي قَوْمِي.

यानी मेरे पीछे (बाद में) आप मेरी कौम में मेरी कायम-मक़ामी के फ़राईज़ अन्जाम दें।

इससे साबित हुआ कि जो शख्स किसी काम का जिम्मेदार हो वह अगर किसी ज़रूरत से कहीं जाये तो उस पर लाज़िम है कि उस काम का इन्तिज़ाम करके जाये।

साथ ही यह साबित हुआ कि हुक्मत के जिम्मेदार हज़रात जब कहीं सफ़र करें तो अपना कायम-मक़ाम और ख़लीफ़ा (नायब और उत्तराधिकारी) मुफ़रर करके जायें।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की आम आदत यही थी कि जब कभी मदीना से बाहर जाना हुआ तो किसी शख्स को ख़लीफ़ा बनाकर जाते थे। एक मर्तबा हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु को ख़लीफ़ा बनाया, एक मर्तबा अब्दुल्लाह बिन उम्मे मक्तूम को, इसी तरह विभिन्न वक़्तों में विभिन्न और अनेक सहाबा को मदीना में ख़लीफ़ा बनाकर बाहर तशरीफ़ ले गये। (तफ़सीरे कुर्तुबी)

हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने हारून अलैहिस्सलाम को ख़लीफ़ा बनाने के वक़्त उनको चन्द हिदायत दीं। इससे मालूम हुआ कि जिसको कायम-मक़ाम (जानशीन) बनाया जाये उसकी सहूलत के लिये ज़रूरी हिदायतें देकर जाये। उन हिदायतों में से पहली हिदायत यह है कि “अस्लिह” (इस्लाह और सुधार करो) इसमें “अस्लिह” का मफ़ऊल ज़िक्र नहीं फ़रमाया कि किसकी इस्लाह करो। इससे इशारा इस उमूम की तरफ़ है कि अपनी भी इस्लाह करो और अपनी कौम की भी। यानी जब उनमें कोई बात फ़साद (ख़राबी और बिगाड़) की महसूस करो

तो उनको सही रास्ते पर लाने की कोशिश करो। दूसरी हिदायत यह दी कि:

لَا تَتَّبِعْ سَبِيلَ الْمُفْسِدِينَ

यानी फ़साद करने वालों के रास्ते की पैरवी न करो।

जाहिर है कि हज़रत हारून अलैहिस्सलाम अल्लाह के नबी हैं, उनसे फ़साद (ख़राबी और बिगाड़) में मुब्तला होने का तो ख़तरा न था, इसलिये इस हिदायत का मतलब यह था कि फ़साद फैलाने और ग़लत राह पर चलने वालों की मदद या हिम्मत बढ़ाने का कोई काम न करो।

चुनाँचे हज़रत हारून अलैहिस्सलाम ने जब कौम को देखा कि “सामरी” के पीछे चलने लगे यहाँ तक कि उसके कहने से गौसाला (गाय के बछड़े) की पूजा शुरू कर दी तो कौम को इस बेहूदगी से रोका और सामरी को डाँटा। फिर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने वापसी के बाद जब यह ख़्याल किया कि हारून अलैहिस्सलाम ने मेरे पीछे अपने फ़र्ज अदा करने में कोताही की तो उनसे पूछताछ और पकड़ फ़रमायी।

हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के इस वाकिए से उन लोगों को सबक लेना चाहिये जो अव्यवस्था और बेफ़िक़्री ही को सबसे बड़ी बुजुर्गी समझते हैं।

وَلَمَّا جَاءَ مُوسَىٰ لِمِيقَاتِنَا وَكَلَّمَهُ رَبُّهُ ۖ قَالَ

رَبِّ ارْنِي أَنْظُرَ إِلَيْكَ ۚ قَالَ لَنْ تَرَانِي وَلَكِنْ انْظُرَ إِلَى الْجَبَلِ فَإِنِ اسْتَقَرَّ مَكَانَهُ فَسَوْفَ تَرَانِي ۚ فَلَمَّا تَجَلَّىٰ رَبُّهُ لِلْجَبَلِ جَعَلَهُ دَكًّا وَخَرَّ مُوسَىٰ صَعِقًا ۚ فَلَمَّا أَفَاقَ قَالَ سُبْحَنَكَ تُبْتُ إِلَيْكَ وَأَنَا أَوَّلُ الْمُؤْمِنِينَ ۝ قَالَ يُوسَىٰ إِنَّكَ اصْطَفَيْتُكَ عَلَى النَّاسِ بِرِسَالَتِي ۖ وَبِكَلَامِي ۖ فَخُذْ مَا آتَيْتُكَ وَكُن مِّنَ الشَّاكِرِينَ ۝ وَكَتَبْنَا لَهُ فِي الْأَلْوَامِ مِنْ كُلِّ شَيْءٍ مَّوْعِظَةً وَتَفْصِيلًا لِّكُلِّ شَيْءٍ فَخُذْهَا بِقُوَّةٍ وَأْمُرْ قَوْمَكَ يَأْخُذُوا بِأَحْسَنِهَآ سَآوِرِيكُمْ دَارَ الْفَاسِقِينَ ۝

व लम्मा जा-अं मूसा लिमीकातिना
व कल्ल-महू रब्बुहू का-ल रब्बि
अरिनी अन्जुर इलै-क, का-ल लन्
तरानी व लाकिनिन्जुर इलल्-ज-बलि
फ़-इनिस्त-क़-र मकानहू फ़सौ-फ़
तरानी फ़-लम्मा तजल्ला रब्बुहू
लिल्ज-बलि ज-अ-लहू दक्कं-व-व
ख़र-र मूसा सज़िकन् फ़-लम्मा

और जब पहुँचा मूसा हमारे वायदे पर
और कलाम किया उससे उसके रब ने,
बोला ऐ मेरे रब! तू मुझको दिखा कि मैं
तुझको देखूँ। फ़रमाया तू मुझको हरगिज़
न देखेगा लेकिन तू देखता रह पहाड़ की
तरफ़, अगर वह अपनी जगह ठहरा रहा
तो तू मुझको देख लेगा फिर जब तजल्ली
की उसके रब ने पहाड़ की तरफ़, कर
दिया उसको ढाकर बराबर और गिर पड़ा

अफा-क का-ल सुब्हान-क तुब्तु
इलै-क व अ-न अव्वलुल्-मुअ्मिनीन
(143) का-ल या मूसा इन्निस्तफैतु-क
अलन्नासि बिरिसालाती व
बि-कलामी फखुज् मा आतैतु-क व
कुम् भिनश्शाकिरीन (144) व कतब्ना
लहू फिल्-अल्वाहि मिन्. कुल्लि
शैइम् मौअि-ज़तंव-व तफसीलल्-
लिकुल्लि शैइन् फखुज्हा बिकुव्वतिंव
वअ्मुर् कौम-क यअ्खुज्
बिअह्सनिहा, स-उरीकुम् दारल्-
फासिकीन (145)

मूसा बेहोश होकर, फिर जब होश में
आया बोला- तेरी जात पाक है, मैंने
तौबा की तेरी तरफ और मैं सबसे पहले
यकीन लाया। (143) फरमाया ऐ मूसा
मैंने तुझको विशेषता दी लोगों से अपने
पैग़ाम भेजने की और अपने कलाम करने
की, सो ले जो मैंने तुझको दिया और
शुक्र करने वाला रह। (144) और लिख
दी हमने उसको तख्तियों पर हर किस्म
की नसीहत और तफसील हर चीज़ की,
सो पकड़ ले उनको ताक़त से और हुक्म
कर अपनी कौम को कि पकड़े रहें उसकी
बेहतर बातें, बहुत जल्द मैं तुमको
दिखलाऊँगा घर नाफरमानों का। (145)

खुलासा-ए-तफसीर

और जब मूसा (अलैहिस्सलाम इस वाकिए में) हमारे (मुकर्ररा) वक़्त पर आये (थे जिसका
किस्सा बयान हो रहा है) और उनके रब ने उनसे (बहुत ही लुफ़ और इनायत की) बातें कीं, तो
(हृद से ज़्यादा खुशी के सबब दीदार का शौक पैदा हुआ) अर्ज किया कि ऐ मेरे परवर्दिगार!
मुझको अपना दीदार दिखला दीजिये कि मैं आपको एक नज़र देख लूँ। इरशाद हुआ कि तुम
मुझको (दुनिया में) हरगिज़ नहीं देख सकते (क्योंकि ये आँखें हमारे ज़मात की ताब नहीं ला
सकतीं, जैसा कि हदीस की किताब मिश्कात शरीफ़ में मुस्लिम शरीफ़ के हवाले से नक़ल है:

لا حرفة سبحات وجهه)

लेकिन (तुम्हारी तजल्ली के लिये यह तजवीज़ करते हैं कि) तुम इस पहाड़ की तरफ़ देखते
रहो (हम इस पर एक झलक डालते हैं) सो अगर यह अपनी जगह बरकरार रहा तो (खैर) तुम
भी देख सकोगे। (गर्ज कि मूसा अलैहिस्सलाम उसकी तरफ़ देखने लगे) पस उनके रब ने जब
पहाड़ पर तजल्ली फरमाई तो (तजल्ली ने) उस (पहाड़) के परखचे “यानी धज्जियाँ” उड़ा दिये
और मूसा (अलैहिस्सलाम) बेहोश होकर गिर पड़े। फिर जब होश में आये तो अर्ज किया कि
बेशक आपकी जात (इन आँखों की बरदाश्त से) पाकीज़ा (और बुलन्द) है, मैं आपकी बारगाह
में (इस शौक भरी दरख्वास्त से) माज़िरत करता हूँ और (जो कुछ आपका इरशाद है कि ‘लन्
तरानी’ “तुम मुझे हरगिज़ नहीं देख सकते” सबसे पहले मैं इस पर यकीन करता हूँ। इरशाद

हुआ कि ऐ मूसा! (यही बहुत है कि) मैंने (तुम्हें) अपनी (तस्फ़ से) पैगम्बरी (का ओहदा देकर) और अपने (साथ) गुफ्तगू (का सम्मान बख़्श कर इस) से और लोगों पर तुमको खुसूसी दर्जा दिया है, तो (अब) जो कुछ मैंने तुमको अता किया है (नुबव्वत, अपने साथ गुफ्तगू का सम्मान और तौरात) उसको लो और शुक्र करो। और हमने चन्द तख़्तियों पर हर किस्म की (ज़रूरी) नसीहत और (ज़रूरी अहकाम के मुताल्लिक) हर चीज़ की तफ़सील उनको लिखकर दी, (यही तख़्तियाँ तौरात हैं। फिर हुक्म हुआ कि जब ये तख़्तियाँ हमने दी हैं) तो इनको कोशिश के साथ (खुद भी) अमल में लाओ और अपनी क़ौम को (भी) हुक्म करो कि इनके अच्छे-अच्छे अहकाम पर (यानी सब पर कि सब ही अच्छे हैं) अमल करें, मैं अब बहुत जल्द तुम लोगों को (यानी बनी इस्राईल को) उन नाफ़रमानों का (यानी फिरऔनियों का या अमालिका का) मक़ाम दिखलाता हूँ (इसमें खुशख़बरी और वायदा है कि मिस्र या शाम पर बहुत जल्द कब्ज़ा होने वाला है। इससे मक़सद शौक दिलाना है इताअत का, कि ये अल्लाह के अहकाम पर अमल करने की बरकतें हैं)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

“लन तरानी” (यानी आप मुझे नहीं देख सकते) इसमें इशारा है कि अल्लाह का दीदार नामुम्किन नहीं मगर मुखातब मौजूदा हालत में इसको बरदाश्त नहीं कर सकता, वरना अगर दीदार और देखना मुम्किन ही न होता तो ‘लन तरानी’ के बजाय ‘लन उरा’ कहा जाता कि मेरा दीदार नहीं हो सकता। (तफ़सीर मज़हरी)

इससे साबित हुआ कि अल्लाह तआला का दीदार दुनिया में भी अक्लन मुम्किन तो है मगर इस आयत से उसके पाये जाने और ज़ाहिर होने की असंभावना भी साबित हो गयी और यही मज़हब है अहले सुन्नत की अक्सरियत का, कि दुनिया में अल्लाह तआला का दीदार अक्लन मुम्किन है, मगर शरअन नामुम्किन, जैसा कि सही मुस्लिम की हदीस में है:

لَنْ يَرَىٰ أَحَدٌ مِنْكُمْ رَبَّهُ حَتَّى يَمُوتَ.

यानी तुममें से कोई शख्स मरने से पहले अपने रब को नहीं देख सकता।

وَلَكِنْ انْظُرْ إِلَى الْجَبَلِ.

इसमें इस बात की गवाही है कि मौजूदा हालत में मुखातब अल्लाह के देखने और दीदार को बरदाश्त नहीं कर सकता, इसलिये पहाड़ पर मामूली सी झलक डालकर बतला दिया गया कि वह भी बरदाश्त नहीं कर सकता, इन्सान तो पैदाईशी तौर पर बड़ा कमज़ोर है वह कैसे बरदाश्त करे।

لَمَّا تَجَلَّى رَبُّهُ لِلْجَبَلِ.

“तजल्ली” के मायने अरबी लुग़त में ज़ाहिर और खुलने के हैं। और सूफ़िया-ए-किराम के नज़दीक तजल्ली के मायने किसी चीज़ को बिना वास्ते के देखने के हैं, जैसे कोई चीज़ आइने के

वास्ते से देखी जाये, इसी लिये तजल्ली को दीदार नहीं कह सकते। खुद इस आयत में इसकी शहादत (सुबूत) मौजूद है कि अल्लाह तआला ने देखने और अपने दीदार की तो नफी फरमाई और तजल्ली को साबित फरमाया।

इमाम अहमद, इमाम तिर्मिजी और इमाम हाकिम ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नकल किया है और इसकी सनद को तिर्मिजी व हाकिम ने सही करार दिया है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम ने इस आयत की तिलावत फरमाकर हाथ की छोटी उंगली (खिन्सर) के सिरे पर अंगूठा रखकर इशारा फरमाया कि अल्लाह जल्ल शानुहू के नूर का सिर्फ़ इतना सा हिस्सा ज़ाहिर किया गया था जिससे पहाड़ के टुकड़े उड़ गये। यह ज़रूरी नहीं कि सारे पहाड़ के टुकड़े हो गये हों, बल्कि जिस हिस्से पर हक़ तआला ने यह तजल्ली फरमाई वह हिस्सा ही उससे प्रभावित हुआ हो।

मूसा अलैहिस्सलाम से अल्लाह तआला का कलाम

इतनी बात तो कुरआन के स्पष्ट अलफ़ाज़ से साबित है कि अल्लाह तआला ने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से बिना किसी माध्यम के कलाम फरमाया। फिर इस कलाम में भी एक तो वह है जो शुरू में नुबुव्वत दिये जाने के वक़्त हुआ था, दूसरा कलाम यह है जो तौरात दिये जाने के वक़्त हुआ और जिसका ज़िक्र इस आयत में है। आयत के अलफ़ाज़ से यह भी साबित होता है कि इस दूसरे कलाम को पहले के मुक़ाबले में कुछ अधिक खुसूसियत हासिल थी, लेकिन हर्क़ात इस कलाम की क्या और किस तरह थी इसका इल्म अल्लाह तआला के सिवा किसी को नहीं हो सकता। इसमें जितनी अक्ली संभावनायें और सूरतें ऐसी हों जो शरीअत के किसी हुक्म के खिलाफ़ न हों सब की गुंजाईश ज़रूर है, मगर उन संभावनाओं और गुमानों में से किसी एक को निर्धारित करना बिना दलील दुरुस्त नहीं, और पहले बुजुर्गों, सहाबा व ताबिईन ही का मसलक इस मामले में ज़्यादा सुरक्षित है कि इस मामले को खुदा तआला के हवाले किया जाये, ख्यालात व गुमानों और अटकलें लगाने की फ़िक्र में न पड़ें। (बयानुल-कुरआन)

سَاورِيْكُمْ دَارَ الْفَيْفِيْنَ

इस जगह दारुल-फ़ासिकीन से क्या मुराद है, इसमें दो कौल हैं- एक मिस्र देश, दूसरा मुल्क शाम। क्योंकि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के फ़तह करने से पहले मिस्र पर फ़िरऔन और उसकी कौम शासक और ग़ालिब थी इसकी वजह से मिस्र को दारुल-फ़ासिकीन और मुल्क शाम पर अमालिका कौम का कब्ज़ा था, वे काफ़िर व बदकार थे इसलिये उस वक़्त शाम भी दारुल-फ़ासिकीन (नाफ़रमानों और बदकारों का घर) था। इन दोनों में से इस जगह कौनसा मुल्क मुराद है इसमें मतभेद इस बुनियाद पर है कि फ़िरऔन के गर्क होने के बाद बनी इस्राईल मिस्र में वापस चले गये थे या नहीं? अगर उस वक़्त मिस्र में वापस गये और मिस्र की हुकूमत पर क़ाबिज़ हुए जैसा कि आयत "व औरस्नल् कौमल्लज़ी-न" से इसकी ताईद हुई तो मिस्र पर कब्ज़ा और ग़लबा इस तूर की तजल्ली के बाक़िए से पहले हो चुका है, इसमें "स-उरीकुम

दारल-फासिकीन" का मफहम मुल्के शाम मुतैयन हो जाता है। और अगर उस वक्त वापस नहीं गये तो दोनों मुल्क मुराद हो सकते हैं।

وَكُتِبَ لَهُ فِي الْأَوَاحِ

इससे मालूम होता है कि तौरात की तख्तियाँ लिखी लिखाई हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के सुपुर्द की गयी थीं, उन्हीं तख्तियों के मजमूए का नाम तौरात है।

سَاصْرِفْ عَنْ آيَتِي الَّذِينَ يَتَكَبَّرُونَ فِي الْأَرْضِ بِغَيْرِ الْحَقِّ

وَأَنْ يَرَوْا كُلَّ آيَةٍ لَا يُؤْمِنُوا بِهَا، وَأَنْ يَرَوْا سَبِيلَ الرُّشْدِ لَا يَتَّخِذُوهُ سَبِيلًا، وَأَنْ يَرَوْا سَبِيلَ الْغَىِّ يَتَّخِذُوهُ سَبِيلًا، ذَلِكَ بِأَنَّهُمْ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا وَكَانُوا عَنْهَا غَافِلِينَ ۝ وَالَّذِينَ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا وَلِقَاءِ الْآخِرَةِ حَبِطَتْ أَعْمَالُهُمْ هَلْ يُجْزَوْنَ إِلَّا مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ۝ وَاتَّخَذَ قَوْمُ مُوسَىٰ مِنْ بَعْدِهِ مِنْ حُلِيِّهِمْ عِجَلًا جَسَدًا آلَهُ خَوَارٌ أَلَمْ يَرَوْا أَنَّهُ لَا يَكْلُهُمْ وَلَا يَهْدِيهِمْ سَبِيلًا مَاتَّخِذُوهُ وَكَانُوا ظَالِمِينَ ۝ وَلَمَّا سَقَطَ فِي أَيْدِيهِمْ وَرَأَوْا أَنَّهُمْ قَدْ ضَلُّوا، قَالُوا لَئِنْ لَمْ يَرْحَمْنَا رَبُّنَا وَيَغْفِرْ لَنَا لَنَكُونَنَّ مِنَ الْخَاسِرِينَ ۝ وَلَمَّا رَجَعَ مُوسَىٰ إِلَىٰ قَوْمِهِ غَضْبَانَ أَسِفًا، قَالَ بِئْسَمَا خَلَفْتُمُونِي مِنْ بَعْدِي، أَعْجَلْتُمْ أَمْرَ رَبِّكُمْ، وَالْقُلُوبُ الْآلُوحَ وَأَخَذَ بِرَأْسِ أَخِيهِ يَجُرُّهُ إِلَيْهِ، قَالَ ابْنَ أُمِّرَانَ الْقَوْمُ اسْتَضَعِفُونِي وَكَادُوا يَقْتُلُونَنِي ۖ فَلَا تُشِيتْ لِي الْأَعْدَاءَ وَلَا تَجْعَلْنِي مَعَ الْقَوْمِ الظَّالِمِينَ ۝ قَالَ رَبِّ اغْفِرْ لِي وَلِإِخِي وَأَدْخِلْنَا فِي رَحْمَتِكَ ۖ وَأَنْتَ أَرْحَمُ الرَّحِيمِينَ ۝

सअस्त्रिफु अन् आयातियल्लजी-न
य-तकब्बरु-न फिल्अर्जि बिगैरिल्-
हक्कि, व इय्यरौ कुल्-ल आयतिल्
ला युअ्मिनु बिहा व इय्यरौ
सबीलरुशदि ला यत्तखिज्जूहु सबीलन्
व इय्यरौ सबीलल्-गय्यि यत्तखिज्जूहु
सबीलन्, जालि-क बिअन्नहुम्
कज्जबू बिआयातिना व कानू अन्हा
गाफिलीन (146) वल्लजी-न कज्जबू

में फेर दूँगा अपनी आयतों से उनको जो
तकब्बुर करते हैं ज़मीन में नाहक, और
अगर देख लें सारी निशानियाँ ईमान लायें
उन पर, और अगर देखें रास्ता हिदायत
का तो न ठहरायें उसको राह, और अगर
देखें रास्ता गुमराही का तो उसको ठहरा
लें राह, यह इसलिये कि उन्होंने झूठ
जाना हमारी आयतों को और रहे उनसे
बेखबर। (146) और जिन्होंने झूठ जाना
हमारी आयतों को और आखिरत की
मुलाकात को, बरबाद हुई उनकी मेहनतें,

बिआयातिना व लिकाइलु आखि-रति
 हबितत् अज़्मालुहुम्, हल युज्जौ-न
 इल्ला मा कानू यअमलून (147) ●
 वत-ख-ज़ कौमु मूसा मिम्-बअदिही
 मिन् हुलियिहिम् अिज्जन् ज-सदल्लहू
 ख़ुवारुन्, अलम् यरौ अन्नहू ला
 युकल्लिमुहुम् व ला यहदीहिम्
 सबीला। इत्त-खाज़ूहु व कानू
 ज़ालिमीन (148) व लम्मा सुकि-त
 फी ऐदीहिम् व रऔ अन्नहुम् कद्
 ज़ल्लू कालू ल-इल्लम् यरहम्ना रब्बुना
 व यग़िफ़् लना ल-नकूनन्-न मिनल्-
 ख़ासिरीन (149) व लम्मा र-ज-अ
 मूसा इला कौमिही ग़ज़्बा-न असिफ़न्
 का-ल बिअ-समा ख़लफ़्तुमूनी मिम्-
 बअदी अ-अजिल्लुम् अम्-र रब्बिकुम्
 व अल्कल्-अल्वा-ह व अ-खा-ज़
 बिरअसि अख़ीहि यज़ुरुहू इलैहि,
 का-लब्-न उम्-म इन्नल्
 कौमस्तज़अफ़ूनी व कादू यक्तुलू-नी
 फ़ला तुश्मत् बियल्-अअ़दा-अ व
 ला तज़अल्ली मअल्-कौमिज़-
 ज़ालिमीन (150) का-ल रब्बिग़िफ़्

वही बदला पायेंगे जो कुछ अमल करते
 थे। (147) ●

और बना लिया मूसा की कौम ने उसके
 पीछे अपने ज़ेवर से बछड़ा, एक बदन कि
 उसमें गाय की आवाज़ थी, क्या उन्होंने
 यह न देखा कि वह उनसे बात भी नहीं
 करता और नहीं बतलाता रास्ता, माबूद
 बना लिया उसको और वे थे ज़ालिम।

(148) और जब पछताये और समझे कि
 हम बेशक गुमराह हो गये तो कहने लगे
 अगर न रहम करे हम पर हमारा रब और
 न बख़्शे हमको तो बेशक हम तबाह होंगे।

(149) और जब लौट आया मूसा अपनी
 कौम में गुस्से में भरा हुआ अफ़सोस
 करता हुआ, बोला क्या बुरी नयाबत की
 तुमने मेरी मेरे बाद, क्यों जल्दी की-तुमने
 अपने रब के हुक्म से? और डाल दीं वो
 तख़्तियाँ और पकड़ा सर अपने भाई का,
 लगा खींचने उसको अपनी तरफ़। वह
 बोला ऐ मेरी माँ के जने! लोगों ने
 मुझको कमज़ोर समझा और करीब थे कि
 मुझको मार डालें, सो मत हंसा मुझ पर
 दुश्मनों को, और न मिला मुझको
 गुनाहगार लोगों में। (150) बोला ऐ मेरे-

ली व लि-अखी व अदखिल्ला फी
रह्मति-क व अन्-त अर्हमुर-
राहिमीन (151) ❀

रब! माफ़ कर मुझको और मेरे भाई को
और दाखिल कर हमको अपनी रहमत
में और तू सबसे ज्यादा रहम करने वाला
है। (151) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

(अब इताअत व फरमाँबरदारी की तरफ़ तवज्जोह और रुचि दिलाने के बाद मुखालफ़त से डराने के लिये इरशाद है कि) मैं ऐसे लोगों को अपने अहक़ाम से बरग़श्ता “यानी विमुख” ही रखूँगा जो दुनिया में (अहक़ाम मानने से) तकब्बुर करते हैं जिसका उनको कोई हक़ हासिल नहीं (क्योंकि अपने को बड़ा समझना हक़ उसका है जो वास्तव में बड़ा हो, और वह एक खुदा की ज़ात है) और (विमुख होने का उन पर यह असर होगा कि) अगर तमाम (दुनिया भर की) निशानियाँ (भी) देख लें तब भी (दिल की सख़्ती की वजह से) उन पर ईमान न लाएँ। और अगर हिदायत का रास्ता देख लें तो उसको अपना तरीक़ा न बनाएँ, और अगर गुमराही का रास्ता देख लें तो उसको अपना तरीक़ा बना लें (यानी हक़ के कुबूल न करने से फिर दिल सख़्त हो जाता है और बरग़श्तगी इस हद तक पहुँच जाती है)। यह (इस दर्जे की बरग़श्तगी) इस सबब से है कि उन्होंने हमारी आयतों को (तकब्बुर की वजह से) झूठा बतलाया और उन (की हकीक़त में ग़ौर करने) से गाफ़िल रहे। (यह सज़ा तो दुनिया में हुई कि हिदायत से मेहरूम रहे) और (आख़िरत में यह सज़ा होगी कि) ये लोग जिन्होंने हमारी आयतों को और क़ियामत के पेश आने को झुठलाया, उनके सब काम (जिनसे उनको फ़ायदे की अपेक्षा थी) वरबाद गये (और आमाँल की इस बरबादी का अन्ज़ाम जहन्नम है) इनको वही सज़ा दी जाएगी जो कुछ ये करते थे।

और (जब मूसा अलैहिस्सलाम तूर पर तौरात लाने तशरीफ़ ले गये थे) मूसा (अलैहिस्सलाम) की कौम (यानी बनी इस्राईल) ने उनके (जाने के) बाद अपने (कब्जे में मौजूद) ज़ेवरों का (जो कि क़िस्तियों से मिस्र से निकलते वक़्त शायी में पहनने के बहाने से माँग लिया था) एक बछड़ा (बनाकर जिसका क़िस्सा सूर: तौहा में है, उसको माबूद) ठहरा लिया जो कि (सिर्फ़ इतनी हकीक़त रखता था कि) एक क़ालिब “यानी ढाँचा और खोल” था जिसमें एक आवाज़ थी। (और उसमें कोई कमाल न था, जिससे किसी बुद्धिमान को उसके माबूद होने का शुब्हा हो सके) क्या उन्होंने यह न देखा कि (दुनिया या दीन की) वह उनसे बात तक नहीं करता था, और न उनको कोई राह बतलाता था (और दूसरी खुदा जैसी सिफ़ात तो उसमें क्या होतीं। गर्ज़ यह कि) उस (बछड़े) को उन्होंने (माबूद) क़रार दिया और (चूँकि उसमें शुब्हे की बिल्कुल भी कोई वजह न थी इसलिये उन्होंने) बड़ा बेढंगा काम किया। और (मूसा अलैहिस्सलाम के वापस आने के बाद जिसका क़िस्सा आगे आता है उनके तंबीह फ़रमाने से) जब (सचेत हुए और अपनी इस हरकत पर) शर्मिन्दा हुए और मालूम हुआ कि वाकई वे लोग गुमराही में पड़ गये तो (शर्मिन्दगी

से माजिरत के तौर पर) कहने लगे कि अगर हमारा रब हम पर रहम न करे और हमारा (यह) गुनाह माफ़ न करे तो हम बिल्कुल गये गुज़रे। (चुनाँचे एक खास तरीके से उनको तौबा के पूरा करने का हुक्म हुआ जिसका किस्सा सूर: ब-क़रह की आयत 54 में गुज़रा है)।

और (हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के तंबीह फ़रमाने का किस्सा यह हुआ कि) जब मूसा (अलैहिस्सलाम) अपनी कौम की तरफ़ (तूर पहाड़ से) वापस आये गुस्से और रंज में भरे हुए (क्योंकि उनको वही से यह मालूम हो गया था, जैसा कि सूर: "तौहा" की आयत नम्बर 85 में है) तो (पहले कौम की तरफ़ मुतवज्जह हुए) फ़रमाया तुमने मेरे बाद यह बड़ी नामाकूल हरकत की। क्या अपने रब का हुक्म (आने) से पहले ही तुमने (ऐसी) जल्दबाज़ी कर ली? (मैं तो अहकाम ही लेने गया था, उसका इन्तिज़ार तो किया होता) और (फिर हज़रत हारून अलैहिस्सलाम की तरफ़ मुतवज्जह हुए और दीनी गैरत के जोश में) जल्दी से (तौरात की) तख़्त्रियाँ (तो) एक तरफ़ रखीं (और जल्दी में ऐसे जोर से रखी गयीं कि देखने वाले को अगर गौर न करे तो शुब्हा हो कि जैसे किसी ने पटख दी हों) और (हाथ खाली करके) अपने भाई (हारून अलैहिस्सलाम) का सर (यानी बाल) पकड़कर उनको अपनी तरफ़ घसीटने लगे (कि तुमने क्यों पूरा इन्तिज़ाम न किया, और चूँकि गुस्से की अधिकता में एक तरह से बेकाबू हो गये थे और गुज़ब व गुस्सा भी दीन के लिये था इसलिये इस बेइख़्तियारी को मोतबर करार दिया जायेगा और इस इज्तिहादी चूक पर एतिराज़ न किया जायेगा) हारून (अलैहिस्सलाम) ने कहा कि ऐ मेरे माँ-जाये (भाई! मैंने अपनी कोशिश भर बहुत रोका लेकिन) इन लोगों ने मुझको बेहकीकत समझा और (बल्कि नसीहत करने पर) क़रीब था कि मुझको क़त्ल कर डालें, तो तुम मुझ पर (सख्ती करके) दुश्मनों को मत हंसाओ, और मुझको (बर्ताव से) इन ज़ालिमों के साथ मत शुमार करो (कि इनके जैसी नाराज़गी मुझसे भी बरतने लगे)। मूसा (अलैहिस्सलाम) ने (अल्लाह तआला से दुआ की और) कहा कि ऐ मेरे रब! मेरी ख़ता (अगरचे वह मेरी सोच व समझ की हो) माफ़ फ़रमा दे और मेरे भाई की भी (कोताही जो इन मुशिरकों के साथ मामला ख़त्म करने और बेताल्लुक होने में शायद हो गयी हो जैसा कि उस कौल से जो सूर: तौहा की आयत 92, 93 में नक़ल किया गया है, मालूम होता है) और हम दोनों को अपनी (खास) रहमत में दाख़िल फ़रमाईये, और आप सब रहम करने वालों से ज़्यादा रहम करने वाले हैं (इसलिये हमको दुआ के क़बूल होने की उम्मीद है)।

मआरिफ़ व मसाईल

पहली आयत में जो इरशाद फ़रमाया कि "मैं फेर दूँगा अपनी आयतों से उन लोगों को जो बड़े बनते हैं ज़मीन में बग़ैर हक़ के।"

इसमें "बग़ैर हक़" से इशारा इस बात की तरफ़ है कि तकब्बुर करने वालों के मुक़ाबिले में तकब्बुर करना हक़ है, वह बुरा और गुनाह नहीं। क्योंकि वह सिर्फ़ सूरत के एतिबार से तकब्बुर

होता है हकीकत के एतिबार से नहीं होता, जैसा कि मशहूर है:

التَّكْبُرُ مَعَ الْمُتَكَبِّرِينَ تَوَاضَعُ

कि तकबुर करने वालों के साथ तकबुर करना एक तरह की विनम्रता है। (मसाईलुसुलूक)

तकबुर इनसान को सही समझ और दीनी उलूम से मेहरूम कर देता है

तकबुर करने वालों यानी बड़े बनने वालों को अपनी आयतों से फेर देने का मतलब यह है कि उनसे अल्लाह की आयतों के समझने और उनसे फायदा उठाने की तौफीक छीन ली जाती है, और अल्लाह की आयतें भी इस जगह आम मुराद हो सकती हैं, जिनमें तौरात व इन्जील की अल्लाह की तरफ से नाज़िल हुई आयतें या कुरआने करीम की आयतें भी दाखिल हैं और कुदरत की निशानियाँ जो तमाम ज़मीन व आसमान और उनकी मख़्लूक़ात में फैली हुई हैं वो भी हो सकती हैं। इसलिये आयतों के मज़मून का खुलासा यह हुआ कि तकबुर यानी अपने आपको दूसरों से बड़ा और अफ़ज़ल समझना ऐसी बुरी और मन्हूस ख़स्लत है कि जो शख्स इसमें मुब्तला होता है उसकी अक़ल व समझ सही नहीं, इसी लिये वह अल्लाह तआला की आयतों के समझने से मेहरूम हो जाता है, न उसको कुरआनी आयतें सही समझने की तौफीक बाकी रहती है और न कुदरत की आयतों (निशानियों) में गौर व फ़िक्र करके अल्लाह तआला की मारिफ़त और पहचान हासिल करने में उसका ज़ेहन चलता है।

तफ़सीर रुहुल-बयान में है कि इससे मालूम हुआ कि तकबुर और घमण्ड एक ऐसी बुरी ख़स्लत है जो रब्बानी उलूम के लिये हिजाब और आड़ बन जाती है, क्योंकि रब्बानी उलूम सिर्फ़ उसकी रहमत से हासिल होते हैं और अल्लाह की रहमत तवाज़ो (अज़िज़ी व विनम्रता) से मुतवज्जह होती है। मौलाना रूमी रह. ने ख़ूब फ़रमाया है:

हर कुजा पस्तीस्त आब आँ जा रवदू

हर कुजा मुश्किल जवाब आँ जा रवदू

यानी पानी उस तरफ़ जाता है जिस तरफ़ पस्ती (नीचा हिस्सा) हो। जैसा कि हल तब निकलता है जब कहीं कोई मुश्किल पेश आये। मतलब यह कि पस्ती और तवाज़ो इख़्तियार करो तो तुम नवाज़े जाओगे। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

इसी तरह पहली दो आयतों में यह मज़मून इरशाद फ़रमाने के बाद फिर मूसा अलैहिस्सलाम और बनी इस्राईल का बाकी किस्सा इस तरह ज़िक्र फ़रमाया है कि:

जब मूसा अलैहिस्सलाम तौरात हासिल करने के लिये तूर पहाड़ पर एतिकाफ़ में बैठ गये और शुरू में तीस दिन रात के एतिकाफ़ का हुक्म था और उसके मुताबिक़ अपनी कौम से कह गये थे कि तीस दिन बाद लौटेंगे, वहाँ हक़ तआला ने उस पर दस दिन की मियाद और बढ़ा दी तो इस्राईली कौम जिसकी जल्दबाज़ी और टेढ़ी चाल पहले से परिचित थी, उस वक़्त भी तरह

तरह की बातें करने लगे। उनकी कौम में एक शख्स सामरी नाम का था, जो अपनी कौम में बड़ा और चौधरी माना जाता था, मगर कच्चे अक्कीदे का आदमी था। उसने मौका पाकर यह हरकत की कि बनी इस्राईल के पास कुछ ज़ेवरात कौमे फिरऔन के लोगों के रह गये थे उनसे कहा कि ये ज़ेवरात तुमने क़िस्ती लोगों से माँगे के तौर पर लिये थे, अब वे सब ग़र्क हो गये और ज़ेवरात तुम्हारे पास रह गये, ये तुम्हारे लिये हलाल नहीं, क्योंकि काफ़िरों से जंग के वक़्त हासिल होने वाला माले ग़नीमत भी उस ज़माने में मुसलमानों के लिये हलाल नहीं था। बनी इस्राईल ने उसके कहने के मुताबिक़ सब ज़ेवरात लाकर उसके पास जमा कर दिये, उसने उस सोने-चाँदी से एक बछड़े या गाय का मुजस्समा (प्रतिमा) बनाया, और जिब्रीले अमीन के घोड़े के सुम के नीचे की मिट्टी जो उसने कहीं पहले से संभाल कर रखी थी उस मिट्टी में अल्लाह तआला ने ज़िन्दगी का खास्सा (विशेषता) रखा था, उसने सोना-चाँदी आग पर पिघलाने के वक़्त यह मिट्टी उसमें शामिल कर दी। इसका यह असर हुआ कि उस गाय के मुजस्समे (प्रतिमा) में ज़िन्दगी के आसार पैदा हो गये और उसके अन्दर से गाय जैसी आवाज़ निकलने लगी। इस जगह आयत में “अज़्लन” की तफ़सीर “ज-सदल् लहू खुवारुन्” फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया है।

सामरी की यह आश्चर्यजनक शैतानी ईजाद सामने आई तो उसने बनी इस्राईल को इस कुफ़्र की दावत देनी शुरू कर दी कि यही खुदा है, मूसा अलैहिस्सलाम तो अल्लाह तआला से बातें करने के लिये तूर पहाड़ पर गये हैं और अल्लाह मियाँ (अल्लाह की पनाह) खुद यहाँ आ गये, मूसा अलैहिस्सलाम से भूल हो गयी। बनी इस्राईल में उसकी बात पहले से मानी जाती थी और उस वक़्त तो यह करतब भी उसने दिखला दिया तो और भी मोतकिद हो गये और उसी गाय को खुदा समझकर उसकी इबादत में लग गये।

मज़कूरा तीसरी आयत में इस मज़मून का बयान संक्षिप्त रूप से आया है, और कुरआने करीम में दूसरी जगह इससे ज़्यादा विस्तार के साथ मज़कूर है।

चौथी आयत में हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की तंबीह के बाद बनी इस्राईल के शर्मिन्दा होकर तौबा करने का ज़िक्र है। उसमें “सुकि-त फी ऐदीहिम” के मायने अरबी मुहावरे के मुवाफ़िक़ नादिम व शर्मिन्दा होने के हैं।

पाँचवीं आयत में इस वाक़िए की तफ़सील है कि जब हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम तूर पहाड़ से तौरात लेकर वापस आये और कौम को गौसाला परस्ती (बछड़े की पूजा) में मुब्तला देखा तो अगरचे कौम की इस गुमराही की ख़बर हक़ तआला ने मूसा अलैहिस्सलाम को तूर पहाड़ ही पर कर दी थी, लेकिन सुनने और देखने में फ़र्क़ होता है, जब उन लोगों को देखा कि गाय की पूजा-पाठ कर रहे हैं तो गुस्से की इन्तिहा न रही। पहले अपनी कौम की तरफ़ मुतबज्जह हुए और फ़रमाया:

بِسْمَا خَلَقْتَنِي مِنْ بَعْدِي.

यानी तुमने मेरे बाद यह बड़ी नामाकूल हरकत की है:

أَعَجَلْتُمْ أَمْرَ رَبِّكُمْ

क्या तुमने अपने रब का हुक्म आने से जल्दबाजी की?

यानी अल्लाह की किताब तौरात के आने का इन्तिज़ार तो कर लेते, तुमने उससे जल्दबाजी करके यह गुमराही इस्त्रियार कर ली। और कुछ मुफ़्तिरीन ने इस जुमले का यह मतलब करार दिया है कि क्या तुमने जल्दबाजी करके यह तय कर लिया था कि मेरी मौत आ गयी।

उसके बाद हज़रत हारून अलैहिस्सलाम की तरफ़ मुतवज्जह हुए क्योंकि उनको अपना खलीफ़ा (उत्तराधिकारी) बनाकर गये थे, उन्होंने इस गुमराही से उन लोगों को क्यों न रोका। उनकी तरफ़ हाथ बढ़ाने के लिये हाथ को खाली करने की फ़िक्र हुई तो तौरात की तख़्तियाँ जो हाथ में लिये हुए थे जल्दी से रख दीं, इसी को क़ुरआने करीम ने इन अलफ़ाज़ में बयान फ़रमाया है:

وَأَلْقَى الْأَوَاحِ

“इल्का” के लुगवी मायने डाल देने के हैं, और ‘अल्वाह’ ‘लौह’ की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने हैं तख़्ती। यहाँ लफ़्ज़ “इल्का” से यह शुब्हा होता है कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने गुस्से की हालत में तौरात की तख़्तियों की बेअदबी की, कि उनको डाल दिया।

लेकिन यह ज़ाहिर है कि तौरात की तख़्तियों को बेअदबी के साथ डाल देना बहुत ज़बरदस्त गुनाह है और अम्बिया अलैहिमुस्सलाम सब गुनाहों से मासूम (सुरक्षित) हैं, इसलिये आयत की मुराद यही है कि असल मक़सूद हज़रत हारून अलैहिस्सलाम को पकड़ने के लिये अपना हाथ खाली करना था और गुस्से की हालत में जल्दी से उनको रखा, जिससे देखने वाला यह समझे कि डाल दिया। इसको क़ुरआने करीम ने बतौर तंबीह के डालने के लफ़्ज़ से ताबीर फ़रमाया है।

(तफ़्सीर बयानुल-क़ुरआन)

इसके बाद इस ख़्याल पर कि हज़रत हारून अलैहिस्सलाम ने अपने उत्तराधिकारी होने की ज़िम्मेदारियों और फ़राईज़ में कोताही की है उनके सर के बाल पकड़कर खींचने लगे तो हज़रत हारून अलैहिस्सलाम ने अर्ज किया कि मेरा कोई क़सूर नहीं, कौम ने मेरा कोई असर न लिया और मेरी बात न सुनी, बल्कि क़रीब था कि वे मुझे क़त्ल कर डालते, इसलिये आप मेरे साथ ऐसा बर्ताव न करें जिससे मेरे दुश्मन खुश हों और आप मुझे इन गुमराहों के साथ न समझें। तब हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम का गुस्सा दूर हुआ और अल्लाह से दुआ की:

رَبِّ اغْفِرْ لِي وَلِإِخْوِي وَأَدْخِلْنَا فِي رَحْمَتِكَ وَأَنْتَ أَرْحَمُ الرَّاحِمِينَ

यानी ऐ मेरे परवर्दिगार! मुझे भी माफ़ फ़रमा दीजिए और मेरे भाई को भी, और हमको अपनी रहमत में दाख़िल फ़रमा दीजिये, और आप तो सब रहमत करने वालों से ज़्यादा रहम करने वाले हैं।

इसमें अपने भाई हारून के लिये तो इस बिना पर दुआ-ए-मग़फ़िरत की कि शायद उनसे

कोई कोताही कौम को गुमराही से रोकने में हुई हो, और अपने लिये दुआ-ए-मगफिरत या तो इस बिना पर की कि जल्दी के साथ तौरात की तख्तियों को रख देना जिसको कुरआने करीम ने डाल देने से ताबीर करके एक गलती पर चेताया है, उससे मगफिरत तलब करना मकसूद था, और या यह कि दुआ का अदब ही यह है कि दूसरे के लिये दुआ करे तो अपने आपको भी उसमें शामिल करे ताकि इसका बेपरवाह होना महसूस न हो, यानी यह कि यह अपने आपको दुआ का मोहताज नहीं समझता।

إِنَّ الَّذِينَ اتَّخَذُوا الْعِجْلَ سَيَنَالُهُمْ غَضَبٌ مِّنْ رَبِّهِمْ وَذِلَّةٌ

فِي الْحَيَاةِ الدُّنْيَا، وَكَذَلِكَ نَجْزِي الْمُفْتَرِينَ ۝ وَالَّذِينَ عَمِلُوا السَّيِّئَاتِ ثُمَّ تَابُوا مِنْ بَعْدِهَا وَآمَنُوا
إِنَّ رَبَّكَ مِنْ بَعْدِهَا لَغَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝ وَلَمَّا سَكَتَ عَنْ مُوسَى الْغَضَبَ أَخَذَ الْأَلْوَاحَ ۖ وَفِي نُسخِهَا
هُدًى وَرَحْمَةٌ لِّلَّذِينَ هُمْ لِرَبِّهِمْ يَرْهَبُونَ ۝ وَاخْتَارَ مُوسَى قَوْمَهُ سَبْعِينَ رَجُلًا لِّحِقَابِنَا،
فَلَمَّا أَخَذَتْهُمُ الرَّجْفَةُ قَالَ رَبِّ لَوْ شِئْتَ أَهْلَكْتَهُم مِّن قَبْلُ وَإِيَّايَ أَتُهْلِكُنَا بِمَا فَعَلَ
السُّفَهَاءُ مِنَّا إِن هِيَ إِلَّا فِتْنَتُكَ تُضِلُّ بِهَا مَن تَشَاءُ وَتَهْدِي مَن تَشَاءُ ۖ إِنَّكَ عَلِيمٌ عَزِيزٌ ۝
لَنَا وَارْحَمْنَا وَأَنْتَ خَيْرُ الْغَافِرِينَ ۝ وَكُتِبَ لَنَا فِي هَذِهِ الدُّنْيَا حَسَنَةٌ وَفِي الْآخِرَةِ إِنَّا هُنَا
إِلَيْكَ ۖ قَالَ عَذَابِي أُصِيبُ بِهِ مَن أَشَاءُ ۖ وَرَحْمَتِي وَسِعَتْ كُلَّ شَيْءٍ ۖ فَسَأَكْتُبُهَا لِّلَّذِينَ
يَتَّقُونَ وَيُؤْتُونَ الزَّكَاةَ وَالَّذِينَ هُمْ بِآيَاتِنَا يُؤْمِنُونَ ۝

इन्नल्लजीनत्त-खाज़ुल्-अिज्-ल
स-यनालुहुम् ग-ज़बुम् मिर्रिब्बिहिम् व
ज़िल्लतुन् फिल्-हयातिदुन्या, व
कज़ालि-क नज़ज़िल्-मुफ़्तरीन (152)
वल्लज़ी-न अमिलुस्सय्यिआति सुम्-म
ताबू मिम्-बअ़्दिहा व आमनू इन्-न
रब्ब-क मिम्-बअ़्दिहा ल-गफ़ूररहीम
(153) व लम्मा स-क-त अम्-मूसल्-
ग-ज़बु अ-खाज़ल्-अल्वा-ह व फी
नुस्ख़तिहा हुदव्-व रहमतुल्-लिल्लज़ी-न

अलबल्ला जिन्होंने बछड़े को माबूद बना
लिया उनको पहुँचेगा गुज़ब उनके रब का
और ज़िल्लत दुनिया की ज़िन्दगी में, और
यही सज़ा देते हैं हम बोहतान बाँधने
वालों को। (152) और जिन्होंने किये बुरे
काम फिर तौबा की उसके बाद और
ईमान लाये तो बेशक तेरा रब तौबा के
पीछे यकीनन बख़्शने वाला मेहरबान है।
(153) और जब थम गया मूसा का गुस्सा
तो उसने उठा लिया तख्तियों को और
जो उनमें लिखा हुआ था उसमें हिदायत
और रहमत थी उनके वास्ते जो अपने रब

हुम् लिरब्बिहिम् यरहबून (154)
 वख़्ता-र मूसा कौमहू सब्ज़ी-न
 रजुलल् लिमीकातिना फ़-लम्मा
 अ-ख़ज़ल्मुर्ज़-फ़तु का-ल रब्बि लौ
 शिअ-त अह्लक्त्तहुम् मिन् कब्लु व
 इय्या-य, अतुह्लिकुना बिमा
 फ़-अलस्सु-फ़हा-उ मिन्ना इन् हि-य
 इल्ला फ़िल्नतु-क, तुज़िल्लु बिहा मन्
 तशा-उ व तह्दी मन् तशा-उ, अन्-त
 वलिय्युना फ़र्ग़फ़िर् लना वरहम्ना व
 अन्-त ख़ैरुल्-गाफ़िरीन (155)
 वक्तुब् लना फ़ी हाज़िहिद्दुन्या
 ह-स-नतं-व-व फ़िल्आख़ि-रति इन्ना
 हुद्ना इलै-क, का-ल अज़ाबी उसीबु
 बिही मन् अशा-उ व रह्मती वसिअत्
 कुल्-ल शैइन्, फ़-सअक्तुबुहा
 लिल्लजी-न यत्तकू-न व
 युअ्तूनज़्ज़का-त वल्लजी-न हुम्
 बिआयातिना युअ्मिनून (156)

से डरते हैं। (154) और चुन लिये मूसा ने अपनी कौम में से सत्तर मर्द हमारे वायदे के वक्त पर लाने को, फिर जब उनको ज़लज़ले ने पकड़ा तो बोला ऐ मेरे रब! अगर तू चाहता तो पहले ही हलाक कर देता इनको और मुझको, क्या हमको हलाक करता है उस काम पर जो किया हमारी कौम के अहमकों ने? यह सब तेरी आजमाईश है बिचलाये इसमें जिसको तू चाहे और सीधा रखे जिसको चाहे, तू ही है हमारा धामने वाला, सो बख़्श दे हमको और रहमत कर हम पर और तू सबसे बेहतर बख़्शने वाला है। (155) और लिख दे हमारे लिये इस दुनिया में भलाई और आख़िरत में, हमने रुजू किया तेरी तरफ़। फ़रमाया मेरा अज़ाब डालता हूँ मैं उसको जिस पर चाहूँ और मेरी रहमत शामिल है हर चीज़ को, सो उसको लिख दूँगा उनके लिये जो डर रखते हैं और देते हैं ज़कात और जो हमारी बातों पर यकीन रखते हैं। (156)

खुलासा-ए-तफ़सीर

(फिर हक़ तआला ने उन बछड़े के पुजारियों के बारे में मूसा अलैहिस्सलाम से फ़रमाया कि) बेशक जिन लोगों ने बछड़े को पूजा है (अगर अब भी तौबा न करेंगे तो) उन पर बहुत जल्द उनके रब की तरफ़ से ग़ज़ब और ज़िल्लत इस दुनियावी ज़िन्दगी में ही पड़ेगी, और (कुछ उन ही की विशेषता नहीं) हम (तो) बोहतान बाँधने वालों को ऐसी ही सज़ा दिया करते हैं (कि दुनिया ही में अल्लाह के ग़ज़ब का शिकार और ज़लील हो जाते हैं चाहे किसी सबब से उस ज़िल्लत का

कभी ज़हर न हो, या देर में हो। चुनाँचे सामरी ने जो तौबा न की उस पर ग़ज़ब और ज़िल्लत का नुज़ूल हुआ जिसका किस्सा सूरः तौहा की आयत 97 में है) और जिन लोगों ने गुनाह के काम किये (जैसे बछड़े को पूजने का जुर्म उनसे हो गया मगर) फिर वे उन (गुनाहों) के (करने के) बाद तौबा कर लें और (उस कुफ़्र को छोड़कर) ईमान ले आयें तो तुम्हारा रब उस (तौबा) के बाद (उनके) गुनाह का माफ़ कर देने वाला (और उनके हाल पर) रहमत करने वाला है (अगरचे तौबा के पूरा करने के लिये “उक़तुलू अन्फु-सकुम” का भी हुक्म हुआ हो, क्योंकि असल रहमत आख़िरत की है, चुनाँचे तौबा करने वालों की ख़ता इसी तरह माफ़ हुई)।

और जब (हारून अलैहिस्सलाम की यह माज़िरत सुनकर) मूसा (अलैहिस्सलाम) का गुस्सा ख़त्म हुआ तो (उन) तख़्तियों को उठा लिया और उन (तख़्तियों) के मज़ामीन में उन लोगों के लिए जो अपने रब से डरते थे हिदायत और रहमत थी (मुराद अहक़ाम हैं कि उन पर अमल करने से हिदायत पाने वाला और रहमत का हक़दार होता है) और (जब बछड़े का किस्सा ख़त्म हुआ तो मूसा अलैहिस्सलाम ने इत्मीनान से तौरात के अहक़ाम सुनाये। उन लोगों की आदत थी ही शुब्हे निकालने की, चुनाँचे उसमें भी शुब्हा निकाला कि हमको कैसे मालूम हो कि ये अल्लाह तआला के अहक़ाम हैं, हमसे अल्लाह तआला खुद कह दें तो यकीन किया जाये। आपने हक़ तआला से अर्ज़ किया, वहाँ से हुक्म हुआ कि इनमें के कुछ आदमी जिनको ये लोग मोतबर समझते हों चुनकर उनको तूर पहाड़ पर ले आओ, हम खुद उनसे कह देंगे कि ये हमारे अहक़ाम हैं और इस लाने के लिये एक वक़्त निर्धारित किया गया, चुनाँचे) मूसा (अलैहिस्सलाम) ने सत्तर आदमी अपनी कौम में से हमारे मुकर्ररा वक़्त (पर लाने) के लिये चुने, (चुनाँचे वहाँ पहुँचकर उन्होंने अल्लाह तआला का कलाम सुना तो उसमें एक शोशा छोड़ा और कहने लगे कि खुदा जाने कौन बोल रहा होगा, हम तो जब यकीन लायें कि खुदा तआला को खुल्लम-खुल्ला अपनी आँख से देख लें, जैसा कि अल्लाह तआला ने उनकी यह बात सूरः ब-क़रह की आयत में इस तरह बयान की है:

لَنْ تُؤْمِنَ لَكَ حَتَّى نَرَى اللَّهَ جَهْرَةً

खुदा तआला ने इस गुस्ताख़ी की सज़ा दी, नीचे से सख़्त ज़लज़ला शुरू हुआ ऊपर से ऐसी बिजली कड़की कि सब वहीं रह गये) सो जब उनको ज़लज़ले (वग़ैरह) ने आ पकड़ा तो मूसा (अलैहिस्सलाम) डरे कि बनी इस्राईल जाहिल और बदगुमान तो हैं ही, यूँ समझेंगे कि कहीं ले जाकर किसी तरीक़े से उन सब का काम तमाम कर दिया है। धबराकर) अर्ज़ करने लगे कि ऐ मेरे परवर्दिगार! (यह तो मुझको यकीन है कि इन लोगों को महज़ सज़ा देना मन्ज़ूर है, ख़ास हलाक करना मक़सूद नहीं, क्योंकि) अगर आपको यह मन्ज़ूर होता तो आप इससे पहले ही इनको और मुझको हलाक कर देते (क्योंकि इनका इस वक़्त हलाक होना बनी इस्राईल के हाथों मेरा हलाक होना है, सो अगर आपको यह मन्ज़ूर होता तो आप पहले भी ऐसा कर सकते थे मगर जब ऐसा नहीं किया तो मालूम हो गया कि इनको भी हलाक करना मक़सूद नहीं क्योंकि इससे मेरी हलाकत भी है और बदनामी के साथ, आप से उम्मीद है कि मुझको बदनाम न करेंगे

और भला) कहीं आप हममें के चन्द बेवकूफों की हरकत पर सब को हलाक कर देंगे? (कि बेवकूफी तो करें ये लोग कि ऐसी गुस्ताखी करें और साथ में बनी इस्राईल के हाथ से हलाक हूँ मैं भी। आप से उम्मीद है कि आप ऐसा न करेंगे, पस साबित हुआ कि जलजले और बिजली की कड़क का) यह वाकिआ सिर्फ आपकी तरफ से एक इम्तिहान है, और इन (इम्तिहानों) से जिसको आप चाहें गुमराही में डाल दें (कि हक तआला की शिकायत और नाशुकी करने लगे) और जिसको आप चाहें हिदायत पर कायम रखें (कि उसकी हिक्मतों और मस्तेहतों को समझता है, सो मैं आपके फज़ल व करम से आपके हकीम होने का इत्म रखता हूँ लिहाज़ा इस इम्तिहान में मुत्मईन हूँ और) आप ही तो हमारे खबरगीरी करने वाले हैं। हम पर मग़फ़िरत और रहमत फ़रमाईए, और आप सब माफ़ी देने वालों से ज़्यादा हैं (सो इनकी गुस्ताखी भी माफ़ कर दीजिए। चुनाँचे वे लोग सही सालिम उठ खड़े हुए। सूर: ब-क़रह में इसकी तफ़सील बयान हो चुकी है)।

और (इस दुआ के साथ आपने रहमत की तफ़सील के लिये यह भी दुआ की कि) हम लोगों के नाम दुनिया में भी नेक हालत पर रहना लिख दीजिए और (इसी तरह) आख़िरत में भी (क्योंकि) हम आपकी तरफ़ (खुलूस व फ़रमाँबरदारी के साथ) रुजू करते हैं। (अल्लाह तआला ने मूसा अलैहिस्सलाम की दुआ कुबूल की और) फ़रमाया कि (ऐ मूसा अब्बल तो उमूमी तौर पर मेरी रहमत मेरे ग़ज़ब पर छाई हुई है, चुनाँचे) मैं अपना अज़ाब (और ग़ज़ब) तो उसी पर करता हूँ जिस पर चाहता हूँ (अगरचे अज़ाब का हक़दार तो हर नाफ़रमान होता है लेकिन फिर भी सब पर अज़ाब नहीं करता बल्कि उनमें से खास-खास लोगों पर उसको डालता हूँ जो हद से ज़्यादा सरकश और नाफ़रमान होते हैं) और मेरी रहमत (ऐसी आम है कि) तमाम चीज़ों को घेरे हुए है (इसके बावजूद कि उनमें बहुत सी मख़्लूक मसलन मुख़ालिफ़ व नाफ़रमान लोग उसके मुस्तहिक़ नहीं मगर उन पर भी एक तरह की रहमत है चाहे दुनिया ही में सही, पस जब मेरी रहमत ग़ैर-मुस्तहिक़ लोगों के लिये भी आम है) तो वह रहमत उन लोगों के नाम तो (कामिल तौर पर) ज़रूर ही लिखूँगा जो कि (वायदे के अनुसार उसके मुस्तहिक़ भी हैं, इस वजह से कि वे इताअत करते हैं। चुनाँचे) अल्लाह तआला से डरते हैं (जो कि दिल के आमाल में से है) और ज़कात देते हैं (जो कि हाथ-पाँव के आमाल में से है) और जो कि हमारी आयतों पर ईमान लाते हैं (जो कि अक़ीदों में से है, तो ऐसे लोग तो पहले से रहमत के हक़दार हैं, चाहे आप दरख़्वास्त भी न करते, और अब तो आप दरख़्वास्त भी कर रहे हैं, पस हम आपकी दरख़्वास्त कुबूल करने की खुशख़बरी देते हैं, क्योंकि आप तो ऐसे हैं ही और आपकी क़ौम में भी जो रहमत को अपने ऊपर नाज़िल करना चाहे वह ऐसे ही गुण और सिफ़ात इख़्तियार करे ताकि पात्र हो जाये)।

मआरिफ़ व मसाईल

यह सूर: आराफ़ का उन्नीसवाँ रुकूअ है। इसकी पहली आयत में ग़ौसाला परस्ती (बछड़े की पूजा) करने वाले और उस पर कायम रहने वाले बनी इस्राईल के बुरे अन्जाम का ज़िक्र है कि

आखिरत में उनको रब्बुल-आलमीन के गुज़ब से साबका पड़ेगा जिसके बाद कहीं पनाह की जगह नहीं, और दुनिया में उनको ज़िल्लत व रुस्वाई नसीब होगी।

बाजे गुनाहों की कुछ सज़ा दुनिया में भी मिलती है

जैसे सामरी और उसके साथियों का हाल है कि उन्होंने गौसाला-परस्ती से सही तौबा न की तो अल्लाह तआला ने उसको दुनिया में ही ज़लील व रुस्वा कर दिया कि उसको मूसा अलैहिस्सलाम ने यह हुक्म दे दिया कि वह सब लोगों से अलग रहे, न वह किसी को हाथ लगाये न कोई उसको हाथ लगाये। चुनाँचे वह उम्रभर इसी तरह जानवरों के साथ फिरता रहा, कोई इन्सान उसके पास न आता था।

तफ़सीर-ए-कुर्तुबी में हज़रत क़तादा रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मज़कूर है कि अल्लाह तआला ने उस पर यह अज़ाब मुसल्लत कर दिया था कि जब कोई उसको हाथ लगाये या वह किसी को हाथ लगाये तो फौरन दोनों को बुझार चढ़ जाता था। (कुर्तुबी)

और तफ़सीर रूहुल-बयान में है कि यह ख़ासियत उसकी नस्ल में भी आज तक बाकी है। और आयत के आखिर में इरशाद फ़रमाया:

وَكُلِّكَ نَجْزَى الْمُفْتَرِينَ

यानी जो लोग अल्लाह पर झूठ बोलते हैं उनको ऐसी ही सज़ा दी जाती है। सुफ़ियान बिन उयैना रहमतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि जो लोग दीन में बिदअत इस्त्रियार करते हैं वे भी अल्लाह पर इस झूठ बाँधने के मुजरिम होकर इस सज़ा के मुस्तहक़ होते हैं। (मज़हरी)

इमाम मालिक रह. ने इसी आयत से दलील लेकर फ़रमाया कि दीन में अपनी तरफ़ से बिदअतें (नई बातें) ईजाद करने वालों की यही सज़ा है कि आखिरत में अल्लाह के गुज़ब के मुस्तहक़ होंगे और दुनिया में ज़िल्लत के। (तफ़सीर कुर्तुबी)

दूसरी आयत में उन लोगों का हाल बयान हुआ है जिन्होंने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की तबीह के बाद अपने इस जुर्म से तौबा कर ली और तौबा के लिये जो कड़ी शर्त अल्लाह तआला की तरफ़ से लगाई गयी थी कि ये सब लोग आपस में एक दूसरे को क़त्ल करें तब इनकी तौबा कुबूल होगी, उन लोगों ने हुक्म पर अमल किया तो मूसा अलैहिस्सलाम ने अल्लाह के हुक्म से उनको बुलाया कि तुम सब की तौबा कुबूल हो गयी, इस क़त्ले आम में जो लोग मारे गये वे शहीद हुए जो बाकी रहे उनकी मग़फ़िरत हो गयी। इस आयत में इरशाद फ़रमाया कि जो लोग बुरे आमाल के करने वाले हों, चाहे कैसे ही बड़े गुनाह कुफ़्र व नाफ़रमानी के हों अगर वे उसके बाद तौबा कर लें और ईमान को दुरुस्त कर लें यानी ईमान के तकाज़े के मुताबिक़ अपने आमाल को सही कर लें तो अल्लाह तआला उन सब को अपनी रहमत से माफ़ फ़रमा देगे। इसलिये इन्सान को चाहिये कि जब कोई गुनाह सर्जद हो जाये तो फौरन तौबा की तरफ़ रुजू करे।

तीसरी आयत में इसका बयान है कि जब हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम का गुस्सा दूर हुआ तो तौरात की तख्तिरियाँ जो जल्दी से रख दी थीं फिर उठा लीं, और उसके नुस्खे (प्रति) में अल्लाह तआला से डरने वालों के लिये हिदायत और रहमत थी।

लफ्ज़ “नुस्खा” उस तहरीर के लिये बोला जाता है जो किसी किताब वगैरह से नक़ल की जाये। कुछ रिवायतों में है कि जब हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने तौरात की तख्तिरियाँ जल्दी से रखीं तो वो टूट गयी थीं, फिर अल्लाह तआला ने उनको किसी दूसरी चीज़ में लिखा हुआ अता फरमाया, उसको नुस्खा कहा गया है।

सत्तर बनी इस्राईल के चयन और उनके हलाक होने का वाकिआ

चौथी आयत में एक खास वाकिए का जिक्र है कि मूसा अलैहिस्सलाम ने जब अल्लाह तआला की किताब तौरात लाकर बनी इस्राईल को दी तो अपनी नाफरमानी और बहाने बाज़ी की वजह से कहने लगे कि हमें यह कैसे यकीन आये कि यह अल्लाह तआला ही का कलाम है, मुम्किन है आप अपनी तरफ़ से लिख लाये हों। उनको इत्मीनान दिलाने के लिये हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने दुआ की तो हक़ तआला की तरफ़ से यह इरशाद हुआ कि इस कौम के चुनिन्दा आदमियों को आप तूर पहाड़ पर ले आये तो हम उनको भी खुद अपना कलाम सुना देंगे जिससे उनको यकीन आ जाये। मूसा अलैहिस्सलाम ने उनमें से सत्तर आदमियों को चुना और तूर पहाड़ पर ले गये। वायदे के मुताबिक़ उन्होंने अपने कानों से अल्लाह तआला का कलाम सुन लिया, मगर जब यह हुज्जत भी पूरी हो गयी तो कहने लगे हमें क्या मालूम यह आवाज़ अल्लाह तआला ही की है या किसी और की, हम तो तब यकीन करें जब खुल्लम-खुल्ला अल्लाह तआला को देख लें। उनका यह सवाल चूँकि हठधर्मी और जहालत पर आधारित था, इस पर अल्लाह का ग़ज़ब मुतवज्जह हुआ, उनके नीचे से ज़लज़ला आया और ऊपर से बिजली की कड़क आई जिससे ये बेहोश होकर गिर गये और बज़ाहिर मुर्दा हो गये। सूर: ब-क़रह में इस जगह “साज़िका” का लफ्ज़ आया है और यहाँ ‘रजफ़ा’ का। ‘साज़िका’ के मायने बिजली की कड़क और ‘रजफ़ा’ के मायने ज़लज़ले के हैं। इसमें कोई दूर की बात नहीं कि दोनों चीज़ें जमा हो गयी हों।

बहरहाल ये लोग ऐसे होकर गिर गये जैसे मुर्दे होते हैं, चाहे वास्तव में मर ही गये हों या ज़ाहिर में मुर्दा नज़र आते हों। हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम को इस वाकिए से सख्त सदमा पहुँचा, अव्वल तो इसलिये कि ये लोग अपनी कौम के चुनिन्दा लोग थे, दूसरे इसलिये कि अब अपनी कौम में जाकर क्या जवाब देंगे, वे यह तोहमत लगायेंगे कि मूसा अलैहिस्सलाम ने इन सब को कहीं लेजाकर क़त्ल करा दिया है, और इस तोहमत के बाद यह भी ज़ाहिर है कि ये लोग मुझे क़त्ल कर डालेंगे। इसलिये अल्लाह जल्ल शानुहू से अर्ज़ किया कि ऐ मेरे परवर्दिगार! मैं जानता

कि इस वाकिए से आपका मकसद इनको हलाक करना नहीं, क्योंकि अगर यह मकसद होता तो अब से पहले बहुत से वाकिआत थे जिनमें ये हलाक किये जा सकते थे। फिरऔन के साथ मार्क कर दिये जाते, या गौसाला परस्ती के वक्त सब के सामने हलाक कर दिये जाते और आप चाहते तो मुझे भी इनके साथ हलाक कर देते, मगर आपने यह नहीं चाहा तो मालूम हुआ कि इस वक्त भी इनका हलाक करना मकसूद नहीं बल्कि सजा देना और तंबीह करना मकसूद है, और यह कैसे हो सकता है कि आप हम सब को चन्द बेवकूफों के अमल की वजह से हलाक कर दें। इस जगह अपने आपको हलाक करना इसलिये जिक्र किया कि उन सत्तर आदमियों की इस तरह गायबाना हलाकत का नतीजा यही था कि मूसा अलैहिस्सलाम अपनी कौम के हाथों हलाक किये (मार दिये) जायें।

फिर अर्ज किया कि मैं जानता हूँ कि यह केवल आपका इम्तिहान है जिसके जरिये आप कुछ लोगों को गुमराह कर देते हैं कि अल्लाह तआला की शिकायत व नाशुक्री करने लगें, और कुछ को हिदायत पर कायम रखते हैं कि वे अल्लाह तआला की हिक्मतों और मस्तेहतों को समझकर मुत्मईन हो जाते हैं। मैं भी आपके फज़ल से आपके हकीम होने का इल्म रखता हूँ लिहाज़ा इस इम्तिहान में मुत्मईन हूँ और आप ही तो हमारी खबरगीरी करने वाले हैं, हम पर मग़फ़िरत और रहमत फ़रमाइये और आप सब माफ़ी देने वालों से ज़्यादा माफ़ी देने वाले हैं, इसलिये इनकी इस गुस्ताखी को भी माफ़ कर दीजिए। चुनाँचे वे सब लोग सही सालिम उठ खड़े हुए।

और कुछ मुफ़सिरीन ने फ़रमाया कि ये सत्तर आदमी जिनका जिक्र इस आयत में है वे नहीं जिन्होंने अल्लाह तआला को सामने देखने की दरख्वास्त की थी और उस पर बिजली की कड़क के जरिये हलाक किये गये थे, बल्कि ये वे लोग थे जो खुद तो बछड़े की पूजा में शरीक न थे मगर कौम को इस हरकत से रोकने की कोई कोशिश भी न की थी, उसकी सज़ा में उन पर ज़लज़ला आया और बेहोश हो गये। वल्लाहु आलम। बहरहाल ये लोग हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की दुआ से ज़िन्दा होकर खड़े हो गये।

पाँचवीं आयत में हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की इस दुआ का आखिरी हिस्सा यह भी बयान हुआ है:

وَكَتَبْنَا فِي هَذِهِ الدُّنْيَا حَسَنَةً وَفِي الْآخِرَةِ إِنَّا هُنَا إِلَيْكَ.

यानी ऐ हमारे परवर्दिगार! आप हमारे लिये इस दुनिया में भी अच्छे और नेक हाल में रहना लिख दीजिए और आखिरत में भी, क्योंकि हम आपकी तरफ़ दिल से और फ़रमाँबरदारी के साथ रुजू करते हैं।

इसके जवाब में हक़ तआला ने इरशाद फ़रमाया:

عَذَابِيْ أَصِيبُ بِهِ مَنْ أَشَاءُ وَرَحْمَتِيْ وَسِعَتْ كُلَّ شَيْءٍ فَسَاكُنْهَا لِلَّذِينَ يَتَّقُونَ وَيُؤْتُونَ الزَّكَاةَ وَالَّذِينَ هُمْ

بِآيَاتِيْ يُؤْمِنُونَ.

यानी ऐ मूसा! अब्बल तो मेरी रहमत उमूमा तार पर मर गुज़ब पर गा़ा़ा़ा़ २, पुगाप १ अपना अज़ाब और गुज़ब तो सिर्फ़ उसी पर डालता हूँ जिस पर चाहता हूँ अगरचे अज़ाब का हक़दार हर नाफ़रमान होता है लेकिन फिर भी सब पर अज़ाब नहीं करता, बल्कि उनमें से खास खास लोगों पर अज़ाब डालता हूँ जो हद से ज़्यादा नाफ़रमान व सरकश होते हैं, और मेरी रहमत ऐसी आम है कि सब चीज़ों को शामिल हो रही है इसके बावजूद कि उनमें से बहुत से लोग मसलन सरकश और नाफ़रमान उसके मुस्तहिक़ नहीं मगर उन पर भी एक तरह की रहमत है चाहे दुनिया ही में सही। पस जब मेरी रहमत सब ग़ैर-मुस्तहिक़ लोगों के लिये भी आम है तो वह रहमत उन लोगों के लिये तो कामिल तौर पर ज़रूर ही लिख दूँगा जो वायदे के मुताबिक़ उसके मुस्तहिक़ भी हैं, इस वजह से कि वे फ़रमाँबरदार हैं। चुनाँचे खुदा तआला से डरते हैं और ज़कात देते हैं और जो कि हमारी आयतों पर ईमान लाते हैं, तो ये लोग पहले ही से रहमत के हक़दार हैं इसलिये आपको दुआ के कुबूल होने की खुशख़बरी देते हैं।

इस जवाब की तक़रीर में हज़राते मुफ़स्सिरीन के विभिन्न अक़वाल हैं, क्योंकि यहाँ साफ़ लफ़्ज़ों में दुआ का कुबूल होना मज़कूर नहीं, जैसे दूसरे मक़ामात में साफ़ फ़रमा दिया गया:

لَقَدْ أُوتِيتَ سُؤْلَكَ يَمُوسَىٰ.

यानी ऐ मूसा! आपका सवाल पूरा कर दिया गया। और एक दूसरी जगह इरशाद है:

أَجِيتَ دَعْوَتَنَا.

यानी ऐ मूसा व हारून! आप दोनों की दुआ कुबूल कर ली गयी। यहाँ इस तरह की कोई स्पष्टता नहीं, इसलिये कुछ हज़रात ने इन आयतों का मफ़हूम यह करार दिया कि मूसा अलैहिस्सलाम की यह दरख़्वास्त अपनी उम्मत के बारे में तो कुबूल न हुई अलबत्ता उम्मते मुहम्मदिया के हक़ में कुबूल कर ली गयी, जिनका ज़िक्र बाद की आयतों में वज़ाहत के साथ आ रहा है। मगर तफ़्सीर रुहुल-मअानी में इस राय व ख़्याल को दूर की बात करार दिया है, इसलिये जवाब की सही तक़रीर यह है कि हज़रात मूसा अलैहिस्सलाम की दुआ के दो हिस्से थे- एक यह कि जिन लोगों पर नाराज़गी व अज़ाब हुआ है उनको माफी दी जाये और उन पर रहमत की जाये, दूसरा यह कि मेरे लिये और मेरी पूरी कौम के लिये दुनिया व आख़िरत की भलाई मुकम्मल लिख दी जाये। पहली दुआ का जवाब इस आयत में ज़िक्र हुआ है और दूसरी दुआ का जवाब दूसरी आयत में मज़कूर है। पहली आयत का हासिल यह है कि मेरी आदत ही यह है कि मैं हर गुनाहगार पर अज़ाब नहीं करता बल्कि सिर्फ़ उन पर जिनको मैं (हद से ज़्यादा सरकशी व नाफ़रमानी की वजह से) अज़ाब ही देना चाहता हूँ। इसलिये इन लोगों को भी अज़ाब न दिया जायेगा आप बेफ़िक्र रहें। रही रहमत की दरख़्वास्त तो मेरी रहमत तो हर चीज़ पर हावी और उसको घेरे हुए है इनसान हो या ग़ैर-इनसान, मोमिन हो या काफ़िर, फ़रमाँबरदार हो या नाफ़रमान, बल्कि जिनको दुनिया में कोई अज़ाब व तकलीफ़ दी जाती है वह भी रहमत से ख़ाली नहीं होती, कम से कम यह कि जिस मुसीबत में मुब्तला हैं उससे बड़ी मुसीबत उन पर नहीं डाली गयी हालाँकि अल्लाह तआला को इस पर भी क़ुदरत थी।

उस्ताद-ए-मोहतरम हज़रत मौलाना अनवर शाह साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि ने फरमाया कि रहमत के वसीअ होने के यह मायने हैं कि रहमत का दायरा किसी से तंग नहीं। इसके यह मायने नहीं कि हर चीज़ मरहूम (रहमत के अन्दर) है जैसा कि इब्नीस मलऊन ने कहा कि मैं भी एक चीज़ हूँ और हर चीज़ मरहूम (रहमत के अन्दर) है लिहाज़ा मैं भी मरहूम हूँ। कुरआने करीम के अलफ़ाज़ में इस तरफ़ इशारा मौजूद है कि यूँ नहीं फरमाया कि हर चीज़ पर रहमत की जायेगी, बल्कि यह फरमाया कि रहमत की सिफ़त तंग नहीं, वसीअ (विस्तृत और फैली हुई) है जिस पर अल्लाह तआला रहमत फरमाना चाहें फरमा सकते हैं। कुरआने करीम में इसकी शहदत दूसरी जगह इस तरह आई है:

فَإِنْ كَذَّبُوكَ فَقُلْ رَّبُّكُمْ ذُو رَحْمَةٍ وَاسِعَةٍ وَلَا يُرَدُّ بَأْسُهُ عَنِ الْقَوْمِ الْمُجْرِمِينَ

यानी अगर ये लोग आपको झुठलायें तो इनसे फरमा दीजिए कि तुम्हारा परवर्दिगार बड़ी और विस्तृत रहमत वाला है, मगर मुजरिमों से उनके अज़ाब को कोई नहीं टाल सकता। इसमें बतला दिया कि रहमत की वुस्तअत मुजरिमों पर अज़ाब के विरुद्ध नहीं।

खुलासा यह कि मूसा अलैहिस्सलाम की यह दुआ उन लोगों के हक़ में बिना किसी शर्त के कुबूल कर ली गयी, यानी मग़फ़िरत व माफी की भी और रहमत की भी।

और दूसरी दुआ जिसमें दुनिया व आख़िरत की मुकम्मल भलाई उनके लिये लिख देने की दरख़ास्त थी उसके बारे में चन्द शर्तें लगाई गयीं। मतलब यह है कि दुनिया में तो हर मोमिन व काफ़िर पर रहमत आम हो सकती है मगर आलमे आख़िरत अच्छे बुरे के फ़र्क़ का मक़ाम है, यहाँ रहमत के मुस्तहिक़ सिर्फ़ वे लोग होंगे जो चन्द शराईत को पूरा करें। अब्बल यह कि वे तक़वा और परहेज़गारी इख़्तियार करें, यानी शरीअत के तमाम वाजिबात को अदा करें और नाजायज़ कामों से दूर रहें। दूसरे यह कि वे अपने मालों में से अल्लाह तआला के लिये ज़कात निकालें। तीसरे यह कि हमारी सब आयतों पर बिना किसी को अलग रखे और चूँ-चरा किये ईमान लायें। ये मौजूदा लोग भी अगर ये सिफ़तें पूरी अपने अन्दर पैदा कर लें तो इनके लिये भी दुनिया व आख़िरत की मुकम्मल भलाई लिख दी जायेगी।

लेकिन इसके बाद की आयत में इस तरफ़ इशारा कर दिया कि इन सिफ़ात को पूरे तौर पर हासिल करने वाले वे लोग होंगे जो इनके बाद आख़िरी ज़माने में आयेंगे और नबी-ए-उम्मी का इत्तिबा (पैरवी) करेंगे, और इसके नतीजे में वे मुकम्मल फ़लाह (कामयाबी) के मुस्तहिक़ होंगे।

हज़रत क़तादा रज़ियल्लाहु अन्हु ने फरमाया कि जब आयत:

وَرَحْمَتِي وَسِعَتْ كُلَّ شَيْءٍ

नाज़िल हुई तो इब्नीस ने कहा कि मैं इस रहमत में दाख़िल हूँ, लेकिन बाद के जुमलों में बतला दिया कि आख़िरत की रहमत ईमान वगैरह की शर्तों के साथ मशरूत है, इसको सुनकर इब्नीस (शैतान) मायूस हो गया, मगर यहूदियों व ईसाईयों ने दावा किया कि हम में तो ये सिफ़तें भी मौजूद हैं यानी तक़वा और ज़कात का अदा करना और ईमान, मगर इसके बाद जो

शर्त नबी-ए-उम्मी पर ईमान लाने की बयान हुई तो इससे वे यहूदी व ईसाई निकल गये जो हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर ईमान नहीं लाये।

गर्ज कि इस अनोखे और उम्दा अन्दाज में हजरत मूसा अलैहिस्सलाम की दुआ की कुबूलियत का बयान भी हो गया और उम्मत मुहम्मदिया की खास विशेषताओं का जिक्र भी।

الَّذِينَ يَتَّبِعُونَ الرَّسُولَ النَّبِيَّ الْأُمِّيَّ الَّذِي يَجِدُونَهُ مَكْتُوبًا عِنْدَهُمْ فِي
التَّوْرَةِ وَالْإِنْجِيلِ يَأْمُرُهُمْ بِالْمَعْرُوفِ وَيَنْهَاهُمْ عَنِ الْمُنْكَرِ وَيُحِلُّ لَهُمُ الطَّيِّبَاتِ وَيُحَرِّمُ عَلَيْهِمُ
الْخَبَائِثَ وَيَضَعُ عَنْهُمْ إِصْرَهُمْ وَالْأَغْلَالَ الَّتِي كَانَتْ عَلَيْهِمْ ۚ وَالَّذِينَ آمَنُوا بِهِ وَعَزَّرُوهُ وَنَصَرُوهُ
وَاتَّبَعُوا النُّورَ الَّذِي أُنْزِلَ مَعَهُ ۚ أُولَٰئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ۝

अल्लज़ी-न यत्तबिअूनरसूलन्नबिय्यल्
उम्मिय्यल्लज़ी यजिदूनहू मक्तूबन्
अिन्दहुम् फित्तौराति वल्-इन्जीलि
यज्जुमुहुम् बिल्-मअरूफि व यन्हाहुम्
अ निल्-मुन्करि व युहिल्लु
लहुमुत्तय्यिबाति व युहरिमु अलैहिमुल्
ख्बाइ-स व य-जअु अन्हुम् इस्सहुम्
वल्अल्लल्लती कानत् अलैहिम्,
फल्लज़ी-न आमनू बिही व अज्जुहु
व न-सरूहु वत्त-बअुन्नूरल्लज़ी
उन्जि-ल म-अहू उलाइ-क हुमुल्-
मुफ्लिहून (157) ❀

वे लोग जो पैरवी करते हैं इस रसूल की
जो नबी-ए-उम्मी है कि जिसको पाते हैं
लिखा हुआ अपने पास तौरात और इन्जील
में, वह हुक्म करता उनको नेक काम का,
मना करता है बुरे काम से, और हलाल
करता है उनके लिये सब पाक चीजें और
हराम करता है उन पर हराम चीजें, और
उतारता है उन पर से उनके बोझ और वे
कैदें जो उन पर थीं, सो जो लोग उस पर
ईमान लाये और उसका साथ दिया और
उसकी मदद की और ताबे हुए उस नूर
के जो उसके साथ उतरा है वही लोग
पहुँचे अपनी मुराद को। (157) ❀

खुलासा-ए-तफ़सीर

जो लोग ऐसे रसूल नबी-ए-उम्मी की पैरवी करते हैं जिनको वे लोग अपने पास तौरात व इन्जील में लिखा हुआ पाते हैं (जिनकी सिफ़त यह भी है) कि वह उनको नेक बातों का हुक्म फरमाते हैं और बुरी बातों से रोकते हैं, और पाकीज़ा चीज़ों को उनके लिये हलाल बतलाते हैं (चाहे वो पहली शरीअतों में हराम थीं) और गन्दी चीज़ों को (बदस्तूर) उन पर हराम फरमाते हैं,

और उन लोगों पर जो (पहली शरीअतों में) बोझ और तौक (लदे हुए) थे (यानी सख्त और शदीद अहकाम जिनका उनको पाबन्द किया हुआ था) उनको दूर करते हैं (यानी ऐसे सख्त अहकाम इनकी शरीअत में निरस्त और खत्म हो जाते हैं) सो जो लोग इस नबी पर ईमान लाते हैं और इनकी हिमायत करते हैं और इनकी मदद करते हैं, और उस नूर की पैरवी करते हैं जो इनके साथ भेजा गया है (यानी कुरआन), ऐसे लोग पूरी फलाह पाने वाले हैं (कि हमेशा के अज़ाब से निजात पायेंगे)।

मआरिफ़ व मसाईल

खातमुन्नबियीन मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और उनकी उम्मत की मख़सूस सिफ़ात व फ़ज़ाईल

पिछली आयत में हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की दुआ के जवाब में इरशाद हुआ था कि मैं तो अल्लाह की रहमत हर चीज़ और हर शख्स के लिये वसीअ है, आपकी मौजूदा उम्मत भी उससे मेहरुम नहीं, लेकिन मुकम्मल नेमत व रहमत के मुस्तहक़ वे लोग होंगे जो ईमान व तक्वा और ज़कात वगैरह की मख़सूस शर्तों को पूरा करें।

इस आयत में उन लोगों का पता दिया गया है कि इन शर्तों पर पूरे उतरने वाले कौन लोग होंगे और बतलाया कि ये वे लोग होंगे जो रसूले उम्मी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पैरवी करें। इसके तहत हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चन्द खुसूसी फ़ज़ाईल व कमालात और निशानियों का भी ज़िक्र फ़रमाकर आप पर सिर्फ़ ईमान लाने का नहीं बल्कि आपकी पैरवी और आपके हुक्मों पर अमल करने का हुक्म दिया गया है, जिससे मालूम हुआ कि आखिरत की कामयाबी के लिये ईमान के साथ शरीअत व सुन्नत की पैरवी ज़रूरी है।

الرَّسُولُ النَّبِيُّ الْأُمِّيُّ

इस जगह रसूल और नबी के दो लक़बों (उपाधियों) के साथ आपकी एक तीसरी सिफ़त उम्मी भी बयान की गयी है। उम्मी के लफ़्ज़ी मायने अनपढ़ के हैं, जो लिखना पढ़ना न जानता हो। अरब की आम क़ौम को कुरआन में उम्मियीन इसी लिये कहा गया है कि उनमें लिखने पढ़ने का रिवाज बहुत कम था और उम्मी होना किसी इन्सान के लिये कोई तारीफ़ की सिफ़त नहीं बल्कि एक ऐब समझा जाता है, मगर रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के उलूम व मआरिफ़, खुसूसियात और हालात व कमालात के साथ उम्मी होना आपके लिये कमाल की एक बड़ी सिफ़त बन गयी है। क्योंकि अगर इल्मी, अमली और अख़्लाकी कमालात किसी लिखे पढ़े आदमी से ज़ाहिर हों तो वो उसकी तालीम का नतीजा होते हैं, लेकिन एक बिल्कुल उम्मी से ऐसे कीमती और बेनज़ीर उलूम व हक़ाईक़ और मआरिफ़ का ज़ाहिर होना उसका एक ऐसा खुला हुआ मोज़िज़ा (चमत्कार) है जिससे कोई परले दर्जे का विरोधी और मुखालिफ़ भी इनकार नहीं

कर सकता, खुसूसन जबकि आपकी उम्र शरीफ के चालीस साल मक्का मुकर्रमा में सब के सामने इस तरह गुजरे कि किसी से न एक हर्फ पढ़ा न सीखा, ठीक चालीस साल की उम्र होने पर अचानक एक दम से आपकी जुबाने मुबारक पर वह कलाम जारी हुआ जिसके एक छोटे से टुकड़े की मिसाल लाने से सारी दुनिया अजिज हो गयी। तो इन हालात में आपका उम्मी होना आपके अल्लाह की तरफ से रसूल होने और कुरआन के अल्लाह का कलाम होने पर एक बहुत बड़ी शहादत है। इसलिये उम्मी होना अगरचे दूसरों के लिये कोई तारीफ की सिफत नहीं मगर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिये तारीफ व कमाल की बहुत बड़ी सिफत है। जैसे मुतकब्बिर (तकब्बुर करने और अपनी बड़ाई जतलाने वाले) का लफ्ज़ आम इनसानों के लिये तारीफ की सिफत नहीं बल्कि ऐब है, मगर हक़ तआला शानुहू के लिये खुसूसियत से तारीफ की सिफत है।

आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की चौथी सिफत यह बयान फरमाई कि वे लोग आपको तौरात व इंजील में लिखा हुआ पायेंगे। यहाँ यह बात काबिले गौर है कि कुरआने करीम ने यह नहीं फरमाया कि आपकी सिफात व हालात को लिखा हुआ पायेंगे, बल्कि “यजिदू-नहू” का लफ्ज़ इख्तियार किया गया, जिसके मायने यह हैं कि आपको लिखा हुआ पायेंगे। इसमें इशारा इस बात की तरफ है कि तौरात व इंजील में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सिफात ऐसी तफसील व वज़ाहत के साथ होंगी कि उनको देखना ऐसा होगा जैसे खुद हुजुरे पाक को देख लिया, और तौरात व इंजील को विशेष तौर पर यहाँ इसलिये बयान किया गया कि बनी इस्राईल इन्हीं दो किताबों के कायल हैं, वरना हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हालात व सिफात का जिक्र ज़बूर में भी मौजूद है।

उक्त आयत के असल मुखातब मूसा अलैहिस्सलाम हैं जिसमें उनको बतलाया गया है कि दुनिया व आखिरत की मुकम्मल फ़लाह (कामयाबी व बेहतरी) आपकी उम्मत के उन लोगों का हिस्सा है जो नबी-ए-उम्मी ख़ातमुल-अम्बिया अलैहिस्सलाम वस्सलाम का इत्तिबा करें, जिनका जिक्र वे तौरात व इंजील में लिख हुआ पायेंगे।

तौरात व इंजील में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सिफात और निशानियाँ

मौजूदा तौरात व इंजील बेशुमार बदलाव और कमी-बेशी हो जाने के सबब भरोसे के काबिल नहीं रहीं, इसके बावजूद अब भी उनमें ऐसे कलिमात मौजूद हैं जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का पता देते हैं। और इतनी बात बिल्कुल वाज़ेह है कि जब कुरआने करीम ने यह ऐलान किया कि ख़ातमुल-अम्बिया की सिफात व निशानियाँ तौरात व इंजील में लिखी हुई हैं, अगर यह बात हकीकत के खिलाफ़ होती तो उस ज़माने के यहूदियों व ईसाईयों के लिये तो इस्लाम के खिलाफ़ एक बहुत बड़ा हथियार हाथ आ जाता, उसके ज़रिये कुरआन को

झुठला सकते थे कि तौरात व इंजील में कहीं नबी-ए-उम्मी के हालात का जिक्र नहीं, लेकिन उस वक्त के यहूदियों व ईसाईयों ने इसके खिलाफ कोई ऐलान नहीं किया। यह खुद इस पर शाहिद (सुबूत) है कि उस वक्त तौरात व इंजील में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सिफात व निशानियाँ स्पष्ट तौर पर मौजूद थीं, जिसने उन लोगों की ज़बानों पर मुहर लगा दी।

खातमुल-आम्बया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की जो सिफात तौरात व इंजील में लिखी थीं उनका कुछ बयान तो क़ुरआने करीम में तौरात व इंजील के हवाले से आया है और कुछ हदीस की रिवायतों में उन हज़रात से मन्कूल है जिन्होंने असली तौरात व इंजील को देखा और उनमें हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का जिक्र मुबारक पढ़कर ही वे मुसलमान हुए।

इमाम बैहकी ने दलाईलुनुबुव्वत में नक़ल किया है कि हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि एक यहूदी लड़का नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत किया करता था, वह इत्तिफ़ाक़न बीमार हो गया तो आप उसकी बीमारी का हाल पूछने के लिये तशरीफ़ ले गये, तो देखा कि उसका बाप उसके सिरहाने खड़ा हुआ तौरात पढ़ रहा है। हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उससे कहा कि ऐ यहूदी! मैं तुझे खुदा की क़सम देता हूँ जिसने मूसा अलैहिस्सलाम पर तौरात नाज़िल फ़रमाई है, क्या तू तौरात में मेरे हालात और सिफ़ात और मेरे ज़ाहिर होने का बयान पाता है? उसने इनकार किया तो बेटा बोला या रसूलल्लाह! यह ग़लत कहता है, तौरात में हम आपका जिक्र और आपकी सिफ़ात पाते हैं और मैं शहादत (गवाही) देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और आप अल्लाह के रसूल हैं। हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम को हुक्म दिया कि अब यह मुसलमान है, इन्तिक़ाल के बाद इसका कफ़नाना दफ़नाना मुसलमान करें, बाप के हवाले न करें। (तफ्सीरे मज़हरी)

और हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़िम्मे एक यहूदी का कर्ज़ था, उसने आकर अपना कर्ज़ माँगा, आपने फ़रमाया कि इस वक्त मेरे पास कुछ नहीं, कुछ मोहलत दो। यहूदी ने सख़्ती के साथ मुतालबा किया और कहा कि मैं आपको उस वक्त तक न छोड़ूँगा जब तक मेरा कर्ज़ अदा न कर दो। हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया यह तुम्हें इख़्तियार है, मैं तुम्हारे पास बैठ जाऊँगा, चुनाँचे रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उसी जगह बैठ गये और जोहर, असर, मगरिब, इशा की और फिर अगले दिन सुबह की नमाज़ यहीं अदा फ़रमाई। सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम यह माजरा देखकर ग़मगीन और आक्रोशित हो रहे थे और आहिस्ता-आहिस्ता यहूदी को डरा-धमकाकर यह चाहते थे कि वह रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को छोड़ दे। रसूले पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसको ताड़ लिया और सहाबा किराम से पूछा यह क्या करते हो? तब उन्होंने अर्ज़ किया- या रसूलल्लाह! हम इसको कैसे बरदाश्त करें कि एक यहूदी आपको कैद करे? आपने फ़रमाया कि “मुझे मेरे रब ने मना फ़रमाया है कि किसी मुआहदा (समझौता) बग़ैरह करने वाले पर जुल्म क़र्रै।” यहूदी यह सब माजरा देख और सुन रहा था।

सुबह होते ही यहूदी ने कहा:

أَشْهَدُ أَنْ لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ وَأَشْهَدُ أَنَّكَ رَسُولُ اللَّهِ

(अशहदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु व अशहदु अन्न-क रसूलुल्लाहि)

इस तरह इस्लाम से सम्मानित होकर उसने कहा कि या रसूलुल्लाह! मैंने अपना आधा माल अल्लाह के रास्ते में दे दिया, और कसम है खुदा तआला की कि मैंने इस वक्त जो कुछ किया उसका मकसद सिर्फ यह इम्तिहान करना था कि तौरात में जो आपकी सिफात बतलाई गयी हैं वो आप में सही तौर पर मौजूद हैं या नहीं। मैंने तौरात में आपके बारे में ये अलफाज पढ़े हैं:

“मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह, उनकी पैदाईश मक्का में होगी और हिजरत तैबा की तरफ और मुल्क उनका शाम होगा, न वह सख्त मिजाज वाले होंगे न सख्त बात करने वाले, न बाजारों में शोर करने वाले, बुराई और बेहयाई से दूर होंगे।”

अब मैंने इन तमाम सिफात का इम्तिहान करके आप में सही पाया, इसलिये गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और आप अल्लाह के रसूल हैं। और यह मेरा आधा माल है, आपको इख्तियार है जिस तरह चाहें खर्च फरमायें। और यह यहूदी बहुत मालदार था, आधा माल भी एक बड़ी दौलत थी। इस रिवायत को तफसीरे मजहरी में दलाईलुन्नुबुव्वत (बैहकी) के हवाले से नकल फरमाया है।

और इमाम बग़वी ने अपनी सनद के साथ हज़रत कअ़बे अहबार रह. से नकल किया कि उन्होंने फरमाया- तौरात में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुताल्लिक यह लिखा हुआ है कि:

“मुहम्मद अल्लाह के रसूल और चुनिन्दा बन्दे हैं। न सख्त मिजाज वाले हैं न बेहूदा कहने वाले, न बाजारों में शोर करने वाले, बदी का बदला बदी से नहीं देते बल्कि माफ़ फरमा देते और दरगुज़र करते हैं। आपकी पैदाईश मक्का में और हिजरत तैबा में होगी। मुल्क आपका शाम होगा और उम्मत आपकी हम्मादीन होगी, यानी राहत व मुसीबत दोनों हालतों में अल्लाह तआला की तारीफ़ व शुक्र अदा करेगी। हर बुलन्दी पर चढ़ने के वक्त वह तकबीर कहा करेगी। वह सूरज के सायों पर नज़र रखेगी ताकि उसके ज़रिये वक्तों का पता लगाकर नमाज़ें अपने अपने वक्त पर पढ़ा करे। वे अपने निचले बदन पर तहबन्द इस्तेमाल करेंगे और अपने हाथों पाँव को कुजू के ज़रिये पाक साफ़ रखेंगे। उनका अज़ान देने वाला फ़िज़ा में आवाज़ बुलन्द करेगा, जिहाद में उनकी सफ़ें ऐसी होंगी जैसे जमाअत की नमाज़ में। रात को उनकी तिलावत और ज़िक्र की आवाज़ें इस तरह गूँजेंगी जैसे शहद की मक्खियों का शोर होता है।” (तफसीर-ए-मजहरी)

इब्ने सअ़द और इब्ने असाकिर ने हज़रत सहल मौला ख़ेसमा से सनद के साथ नकल किया है कि हज़रत सहल ने फरमाया- मैंने खुद इंजील में मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ये सिफात पढ़ी हैं कि:

“वह न पस्त-क़द (छोटे क़द के) होंगे न बहुत लम्बे क़द वाले। सफ़ेद रंग की दो

जुल्फों वाले होंगे। उनके दोनों कन्धों के बीच एक मुहर नुबुव्वत की होगी। सद्का कुबूल न करेंगे। गधे और ऊँट पर सवार होंगे, बकरियों का दूध खुद दूह लिया करेंगे। पेवन्द का कुर्ता इस्तेमाल फरमायेंगे और जो ऐसा करता है वह तकबुर से बरी होता है। वह इस्माईल अलैहिस्सलाम की नस्ल में होंगे, उनका नाम अहमद होगा।”

और इब्ने सअद ने तबकात में, दारमी ने अपने मुस्नद में, बैहकी ने दलाईले नुबुव्वत में हज़रत अब्दुल्लाह बिन सलाम रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत नक़ल की है, जो यहूदियों के सबसे बड़े आलिम और तौरात के माहिर मशहूर थे, उन्होंने फरमाया कि तौरात में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुताल्लिक़ ये अलफ़ाज़ मज़कूर हैं:

“ऐ नबी! हमने आपको भेजा है सब उम्मतों पर गवाह बनाकर और नेक अमल करने वालों को खुशख़बरी देने वाला, बुरे आमाल वालों को डराने वाला बनाकर, और उम्मियों यानी अरब वालों की हिफ़ाज़त करने वाला बनाकर। आप मेरे बन्दे और रसूल हैं, मैंने आपका नाम मुतवक्किल रखा है। न आप सख़्त-मिज़ाज हैं न झगड़ालू और न बाज़ारों में शोर करने वाले। बुराई का बदला बुराई से नहीं देते बल्कि माफ़ कर देते हैं और दरगुज़र करते हैं। अल्लाह तआला उनको उस वक़्त तक वफ़ात न देंगे जब तक उनके ज़रिये टेढ़ी कौम को सीधा न कर दें, यहाँ तक कि वे ला इला-ह इल्लल्लाहु के कायल (मानने वाले) हो जायें और अंधी आँखों को खोल दें, और बहरे कानों को सुनने के काबिल बना दें और बंधे हुए दिलों को खोल दें।”

इस जैसी एक हदीस बुख़ारी शरीफ़ में हज़रत अब्दुल्लाह बिन अमर बिन आस रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से भी मज़कूर है। और पहली किताबों के बड़े माहिर आलिम हज़रत वहब बिन मुनब्बेह से इमाम बैहकी ने दलाईलुनुबुव्वत में नक़ल किया है कि:

“अल्लाह तआला ने ज़बूर में हज़रत दाऊद अलैहिस्सलाम की तरफ़ यह वही फ़रमाई कि ऐ दाऊद! आपके बाद एक नबी आयेंगे जिनका नाम अहमद होगा। मैं उन पर कभी नाराज़ न हूँगा और वह कभी मेरी नाफ़रमानी न करेंगे, और मैंने उनके लिये सब अगली पिछली ख़तायें माफ़ कर दी हैं। उनकी उम्मत उम्मते मरहूमा है, मैंने उनको वो नवाफ़िल दिये हैं जो अम्बिया को अज़ा की थीं और उन पर वो पुराईज़ आयद किये हैं जो पिछले अम्बिया पर लाज़िम किये गये थे, यहाँ तक कि वे मेहशर में मेरे सामने इस हालत में आयेंगे कि उनका नूर नबियों के नूर की मानिन्द होगा। ऐ दाऊद! मैंने मुहम्मद और उनकी उम्मत को तमाम उम्मतों पर फ़ज़ीलत दी है, मैंने उनको छह चीज़ें खुसूसी तौर पर अज़ा की हैं जो दूसरी उम्मतों को नहीं दी गयीं- अव्वल यह कि ख़ता व भूल पर उनको अज़ाब न होगा, जो गुनाह उनसे बग़ैर इरादे के सादिर हो जाये अगर वे उसकी मग़फ़िरत मुझसे तलब करें तो मैं माफ़ कर दूँगा, और जो माल वे अल्लाह की राह में दिल की खुशी से खर्च करेंगे तो मैं दुनिया ही में उनको उससे बहुत ज़्यादा दे दूँगा, और जब उन पर कोई मुसीबत पड़े और वे “इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन” कहें तो मैं उन पर उस मुसीबत को सलात व रहमत और जन्नत की तरफ़ हिदायत बना दूँगा, वे जो दुआ करेंगे मैं कुबूल

करूंगा। कभी इस तरह कि जो माँगा है वही दे दूँ और कभी इस तरह कि उस दुआ को उनकी आखिरत का सामान बना दूँ। (तफसीर रूहुल-मअानी)

सैंकड़ों में से ये चन्द रिवायतें तौरात, इंजील, ज़बूर के हवाले से नक़ल की गयी हैं, पूरी रिवायतों को मुहद्दीसीन ने मुस्तक़िल किताबों में जमा किया है।

तौरात व इंजील में ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आपकी उम्मत मरहूमा के ख़ास फ़ज़ाईल व सिफ़ात और निशानियों की तफ़सील पर उलेमा ने मुस्तक़िल किताबें लिखी हैं। इस आखिरी दौर में हज़रत मौलाना रहमतुल्लाह कैरानवी मुहाजिरे मक्की रह. ने अपनी किताब इज़हारुल-हक़ में इसको अच्छी तरह खोलकर और तफ़सील व तहकीक़ के साथ लिखा है। उसमें मौजूदा ज़माने की तौरात व इंजील जिसमें बेइन्तिहा रद्दोबदल हो चुकी हैं उनमें भी बहुत सी सिफ़ात व फ़ज़ाईल का ज़िक्र मौजूद होना साबित किया है। उसका अरबी से उर्दू में तर्जुमा हाल में प्रकाशित हो चुका है, जो देखने और पढ़ने के काबिल है।

पहले दर्ज हुई आयतों में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की उन सिफ़ात व निशानियों का तफ़सीली बयान था जो तौरात व इंजील और ज़बूर में लिखी हुई थीं। इसमें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की कुछ मज़ीद सिफ़ात भी मज़कूर हैं।

जिनमें पहली सिफ़त "अमर बिल्मरूफ़ और नही अनिल-मुन्कर" है। "मरूफ़" के लफ़्ज़ी मायने जाना पहचाना हुआ, और मुन्कर के लुग़वी मायने ओपरा, अजनबी जो पहचाना न जाये। इस जगह मरूफ़ से वो नेक काम मुराद हैं जो इस्लामी शरीअत में जाने पहचाने हुए हैं और मुन्कर से वो बुरे काम जो दीन व शरीअत से अजनबी हैं।

इस जगह अच्छे कामों को मरूफ़ के लफ़्ज़ से और बुरे कामों को मुन्कर के लफ़्ज़ से ताबीर करने में इस तरफ़ इशारा पाया जाता है कि दीन में नेक काम सिर्फ़ उसको समझा जायेगा जो पहली सदी के मुसलमानों में राईज हुआ और जाना पहचाना गया, और जो ऐसा न हो वह मुन्कर कहलायेगा। इससे मालूम हुआ कि सहाबा व ताबिईन ने जिस काम को नेक नहीं समझा वह चाहे कितना ही भला मालूम हो शरीअत के एतिबार से वह भला नहीं। सही हदीसों में इसी लिये उन कामों को जिनकी तालीम हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम व ताबिईन की तरफ़ से नहीं पाई जाती उनको मुद्दसातुल-उमूर और बिद्अत फ़रमाकर गुमराही करार दिया है। आयत के इस जुमले के मायने ये हैं कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम लोगों को नेक कामों का हुक्म करेंगे और बुरे कामों से मना फ़रमायेंगे।

यह सिफ़त अगरचे तमाम अम्बिया अलैहिमुस्सलाम में आम है और होनी ही चाहिये क्योंकि हर नबी और रसूल इसी काम के लिये भेजे जाते हैं कि लोगों को नेक कामों की तरफ़ हिदायत करें और बुरे कामों से मना करें, लेकिन इस जगह रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खुसूसियात के मौके पर इसका बयान करना इसकी ख़बर देता है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इस सिफ़त में दूसरे नबियों से कोई ख़ास विशेषता और खुसूसियत हासिल है, और वह विशेषता कई वजह से है- अव्वल इस काम का ख़ास सलीका, कि हर तब्क़े के

लोगों को उनके हाल के मुनासिब रास्ते से समझाना और तंबीह करना जिससे बात उनके दिल में उतर जाये और भारी न मालूम हो। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तालीमात में गौर किया जाये तो यह साफ नज़र आयेगा कि आपको हक तआला ने इसमें खुसूसी और सबसे अलग सलीका अता फरमाया था, अरब के देहाती जो ऊँट और बकरी चराने के सिवा कुछ नहीं जानते थे उनसे उनकी समझ के हिसाब से गुफ्तगू फरमाते और बारीक व गहरे इल्मी मज़ामीन को ऐसे सादे अलफ़ाज़ में समझा देते थे कि अनपढ़ लोगों की भी समझ में आ जाये, और कैसर व किसरा और दूसरे बड़े बादशाहों और उनके भेजे हुए ज्ञानी व बुद्धिमान दूतों से उनके अन्दाज़ के मुताबिक़ गुफ्तगू होती थी और सब ही उस गुफ्तगू से मुतास्सिर होते थे। दूसरे आपकी और आपके कलाम की खुदादाद मक़बूलियत और दिलों में तासीर भी एक मोजिज़ाना (चमत्कारी) अन्दाज़ रखती है, बड़े से बड़ा दुश्मन भी जब आपका कलाम सुनता तो असर लिये बग़ैर न रहता था।

ऊपर तौरात के हवाल से जो सिफ़ात रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बयान की गयी थीं उनमें यह भी था कि आपके ज़रिये अल्लाह तआला अंधी आँखों को बीना (देखने वाली) और बंधे कानों को सुनने वाला बना देगा, और बन्द दिलों को खोल देगा। ये सिफ़ात शायद इसी खुसूसियत का नतीजा हों कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हक़ तआला ने अम्र बिल्-मारूफ़ और नही अनिल्-मुन्किर (यानी अच्छे कामों का हुक्म करने और बुरे कामों से रोकने) का विशेष सलीका अता फरमाया था।

दूसरी सिफ़त यह बयान की गयी है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम लोगों के लिये पाकीज़ा और पसन्दीदा चीज़ों को हलाल फरमायेंगे और गन्दी चीज़ों को हराम। मुराद यह है कि बहुत सी पाकीज़ा और पसन्दीदा चीज़ें जो बनी इस्राईल पर बतौर सज़ा के हराम कर दी गयी थीं, रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उनकी हुर्मत (हराम होने) को ख़त्म कर देंगे, मसलन हलाल जानवरों की चर्बी वग़ैरह जो बनी इस्राईल की बदकारियों की सज़ा में उन पर हराम कर दी गयी थी, हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसको हलाल करार दिया, और गन्दी चीज़ों में खून और मुर्दार जानवर, शराब और तमाम हराम जानवर दाख़िल हैं और आमदनी के तमाम हराम माध्यम और ज़रिये भी, मसलन सूद, रिश्वत, जुआ वग़ैरह। (अस्सिराजुल-मुनीर) और कुछ हज़रात ने बुरे अख़लाक और बुरी आदतों को भी गन्दी चीज़ों में शुमार फरमाया है।

तीसरी सिफ़त यह बयान फरमाई गयी:

وَيَضَعُ عَنْهُمْ إِصْرَهُمْ وَالْأَغْلَالَ الَّتِي كَانَتْ عَلَيْهِمْ

यानी हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हटा देंगे लोगों से उस बोझ और बन्द को जो उन पर मुसल्लत थी।

लफ़ज़ "इस्" के मायने भारी बोझ के हैं, जो आदमी को हरकत करने से रोक दे, और "अग़लाल" "गुल्लुन" की जमा (बहुवचन) है, उस हथकड़ी को गुल्ल कहते हैं जिसके ज़रिये मुजरिम के हाथों को उसकी गर्दन के साथ बाँध दिया जाता है, और वह बिल्कुल बेइख़्तियार हो

जाता है।

“इस्” और अग़लाल यानी भारी बोझ और कैद से मुराद इस आयत में वो भारी और मशक्कत वाले अहकाम और दुश्वार वाजिबात हैं जो असल दीन में मकसूद न थे बल्कि बनी इस्राईल पर बतौर सज़ा के लाज़िम कर दिये गये थे। मसलन कपड़ा नापाक हो जाये तो पानी से धो देना बनी इस्राईल के लिये काफी न था, बल्कि यह वाजिब था कि जिस जगह नापाकी लगी है उसको काट दिया जाये, और काफ़िरों से जिहाद करके जो माले ग़नीमत उनको हाथ आये वह उनके लिये हराम था। जिन बदनी अंगों से कोई गुनाह सादिर हो उन हिस्सों को काट देना वाजिब था, किसी का क़त्ल चाहे जान-बूझकर हो या ग़लती से दोनों सूरतों में कि़सास यानी कातिल का क़त्ल करना वाजिब था, खून का माली बदला देने का क़ानून न था।

इन मशक्कत वाले और भारी अहकाम को जो बनी इस्राईल पर नाफ़िज़ थे, क़ुरआन में इस् और अग़लाल फ़रमाया, और यह ख़बर दी कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इन सख़्त अहकाम को मन्सूख़ (रद्द और ख़त्म) करके आसान अहकाम जारी फ़रमायेंगे।

इसी को हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक हदीस में फ़रमाया कि मैंने तुमको एक सहल और आसान शरीअत पर छोड़ा है, जिसमें न कोई मशक्कत है न गुमराही का अन्देश।

एक हदीस में इरशाद है:

الدِّينُ يُسْرٌ

यानी दीन आसान है। क़ुरआने करीम ने फ़रमाया:

وَمَا جَعَلَ عَلَيْكُمْ فِي الدِّينِ مِنْ حَرَجٍ

यानी अल्लाह तआला ने तुम पर दीन के मामले में कोई तंगी नहीं डाली।

नबी-ए-उम्मी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मख़सूस सिफ़ाते कमाल बयान फ़रमाने के बाद इरशाद फ़रमाया:

فَالَّذِينَ آمَنُوا بِهِ وَعَزَّرُوهُ وَنَصَرُوهُ وَاتَّبَعُوا النُّورَ الَّذِي أُنْزِلَ مَعَهُ، أُولَٰئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ

यानी तौरात व इंजील में नबी-ए-आख़िरुज़्ज़माँ की स्पष्ट सिफ़ात व निशानियाँ बतला देने का नतीजा यह है कि जो लोग आप पर ईमान लायें और आपकी ताज़ीम करें और मदद करें और उस नूर की पैरवी करें जो आपके साथ भेजा गया है यानी क़ुरआने पाक तो यही लोग हैं फ़लाह (कामयाबी) पाने वाले।

यहाँ फ़लाह पाने के लिये चार शर्तें ज़िक्र की गयी हैं- अब्बल हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर ईमान, दूसरे आपका अदब व सम्मान, तीसरे आपकी इमदाद, चौथे क़ुरआने करीम के हुक्मों का पालन।

अदब व सम्मान के लिये इस जगह लफ़्ज़ “अज़्ज़रुहु” लाया गया है जो ताज़ीर से निकला है, ताज़ीर के असली मायने शफ़क़त के साथ मना करने, हिफ़ाज़त करने के हैं। हज़रत

अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने "अज़्ज़रूहु" के मायने अदब व ताज़ीम करने के बतलाये हैं और मुबररद ने कहा कि आला दर्जे की ताज़ीम (सम्मान व अदब) को ताज़ीर से ताबीर किया जाता है।

मुराद यह है कि वे लोग जो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की अज़मत व मुहब्बत के साथ आपकी ताईद व हिमायत और मुखालिफ़ों के मुकाबले में आपकी मदद करें वे मुकम्मल फ़लाह पाने वाले हैं। ज़माना-ए-नुबुव्वत में तो यह ताईद व नुसरत आपकी ज़ात के साथ जुड़ी हुई थी और आपकी वफ़ात के बाद आपकी शरीअत और आपके दीन की ताईद व मदद ही हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ताईद व मदद का मिस्दाक़ है।

क़ुरआने करीम को इस आयत में नूर से ताबीर किया गया है। वजह यह है कि जिस तरह नूर के नूर होने पर किसी दलील की ज़रूरत नहीं, नूर खुद अपने वजूद की दलील होता है, इसी तरह क़ुरआने करीम खुद अपने कलामे रब्बानी और कलामे हक़ होने की दलील है, कि एक उम्मी-ए-महज़ (पूरी तरह बिना पढ़े-लिखे शख्स) की ज़बान से ऐसा आला व उम्दा और दिल में उतर जाने वाला स्पष्ट कलाम आया जिसकी मिसाल लाने से सारी दुनिया अज़िज़ हो गयी। यह खुद क़ुरआने करीम के कलामुल्लाह होने की दलील है।

और यह कि जिस तरह नूर खुद भी रोशन होता है और दूसरी अंधेरियों में भी उजाला कर देता है इसी तरह क़ुरआने करीम ने अंधेरियों में फंसी हुई दुनिया को अंधेरियों से निकाला।

क़ुरआन के साथ सुन्नत की पैरवी भी फ़र्ज़ है

इस आयत के शुरू में:

يَتَّبِعُونَ الرَّسُولَ النَّبِيَّ الْأُمِّيَّ

फ़रमाया था और आखिर में:

وَاتَّبِعُوا النُّورَ الَّذِي أُنْزِلَ مَعَهُ

फ़रमाया।

इनमें से पहले जुमले में नबी-ए-उम्मी की पैरवी का हुक्म है और आखिरी जुमले में क़ुरआन की पैरवी का।

इससे साबित हुआ कि आखिरत की निजात किताब और सुन्नत दोनों के इत्तिबा (पैरवी) पर मौक़ूफ़ (निर्भर) है, क्योंकि नबी-ए-उम्मी का इत्तिबा उनकी सुन्नत ही के इत्तिबा के ज़रिये हो सकता है।

रसूल की सिर्फ़ पैरवी भी काफी नहीं, अदब व एहतियाम और मुहब्बत भी फ़र्ज़ है

और इन दोनों जुमलों के बीच:

عَزَّوَاهُ وَنَصْرُوهُ.

फरमाकर इस तरफ इशारा कर दिया कि हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अहकाम का ऐसा इत्तिबा मकसूद नहीं जैसे आम दुनिया के हाकिमों का इत्तिबा (पैरवी) जोर-जबरदस्ती से करना पड़ता है, बल्कि वह इत्तिबा मकसूद है जो बड़ाई व मुहब्बत का नतीजा हो, यानी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बड़ाई व मुहब्बत दिल में इतनी हो कि उसकी वजह से आपके अहकाम के इत्तिबा पर मजबूर हो। क्योंकि उम्मत को अपने रसूल से मुख़ालिफ़ किस्म के ताल्लुकात होते हैं, एक यह कि वह अमीर व हाकिम है और उम्मत महकूम व रइय्यत, दूसरे यह कि रसूल महबूब है और पूरी उम्मत उनकी मुहिब (चाहने वाली)। एक यह कि रसूल अपने इल्मी, अमली और अख़लाकी कमालात की बिना पर बड़ाई वाला है, और सारी उम्मत उनके मुकाबले में पस्त और आजिज़।

हमारे रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम में सब शानें दर्जा-ए-कमाल में पाई जाती हैं, इसलिये उम्मत पर लाज़िम है कि हर शान का हक़ अदा करें। रसूल होने की हैसियत से उन पर ईमान लायें, अमीर व हाकिम होने की हैसियत से उनके अहकाम की पैरवी करें, महबूब होने की हैसियत से उनके साथ गहरी मुहब्बत रखें और नुबुव्वत के कमालात की वजह से उनकी ताज़ीम व तकरीम (अदब व सम्मान) बजा लायें।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इताअत और इत्तिबा तो उम्मत पर फर्ज़ होनी ही चाहिये थी, क्योंकि अम्बिया के भेजने का मकसद ही इसके बग़ैर पूरा नहीं होता। लेकिन हक़ तआला ने हमारे रसूले मकबूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बारे में सिर्फ़ इसी पर बस नहीं फरमाया बल्कि उम्मत पर आपकी ताज़ीम व सम्मान, और एहतिराम व अदब को भी लाज़िम करार दिया है और कुरआने करीम में जगह-जगह इसके आदाब सिखाये गये हैं।

इस आयत में तो:

عَزَّوَاهُ وَنَصْرُوهُ.

के अलफाज़ से इसकी तरफ़ हिदायत की गयी है और एक दूसरी आयत में भी:

وَتَعَزَّوَاهُ وَتُوقِّرُوهُ.

आया है, और कई आयतों में इसकी हिदायत की गयी है कि हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने ऐसी ऊँची आवाज़ से बात न करें कि आपकी आवाज़ से बढ़ जाये:

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَرْفَعُوا أَصْوَاتَكُمْ فَوْقَ صَوْتِ النَّبِيِّ.

और एक जगह इरशाद है:

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَقْدُمُوا بَيْنَ اللَّهِ وَرَسُولِهِ.

यानी ऐ मुसलमानो! अल्लाह और उसके रसूल से आगे न बढ़ो, यानी जिस मजलिस में हुजूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ रखते हों और कोई मामला पेश आये तो आप से पहले कोई न बोले।

हज़रत सहल बिन अब्दुल्लाह ने इस आयत के मायने यह बतलाये हैं कि आप से पहले न बोलें और जब आप कलाम करें तो सब खामोश होकर सुनें।

क़ुरआन की एक आयत में इसकी हिदायत फ़रमाई गयी है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को पुकारने के वक़्त अदब का लिहाज़ रखें, इस तरह न पुकारें जिस तरह आपस में एक दूसरे को पुकारा करते हैं:

لَا تَجْعَلُوا دُعَاءَ الرَّسُولِ بَيْنَكُمْ كَدُعَاءِ بَعْضِكُمْ بَعْضًا

आयत के आख़िर में इस पर सचेत किया गया है कि इसके ख़िलाफ़ कोई काम बेअदबी का किया गया तो सारे आमाल जाया और बरबाद हो जायेंगे।

यही वजह है कि सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम इसके बावजूद कि हर वक़्त, हर हाल में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ कामों में शरीक रहते थे और ऐसी हालत में एहतियाम व ताज़ीम के आदाब को ध्यान में रखना बहुत मुश्किल होता है, लेकिन उनका यह हाल था कि इस आयत के नाज़िल होने के बाद हज़रत सिद्दीक़े अक़बर रज़ियल्लाहु अन्हु जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में कुछ अर्ज़ करते तो इस तरह बोलते थे जैसे कोई छुपी बात को आहिस्ता कहा करता है। यही हाल हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु का था। (शिफ़ा)

हज़रत अमर बिन आस रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से ज़्यादा कोई मुझे दुनिया में महबूब न था, और मेरा यह हाल था कि मैं आपकी तरफ़ नज़र भरकर देख भी न सकता था, और अगर कोई मुझसे आपका हुलिया मुबारक दरियाफ़्त करे तो मैं बयान करने पर इसलिये कादिर नहीं कि मैंने कभी आपको नज़र भरकर देखा ही नहीं।

इमाम तिमिज़ी ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से नक़ल किया है कि सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम की मज्लिस में जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लाते थे तो सब नीची नज़रें करके बैठते थे, सिर्फ़ सिद्दीक़े अक़बर रज़ियल्लाहु अन्हु और फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु आपकी तरफ़ नज़र करते और आप उनकी तरफ़ नज़र फ़रमाकर मुस्कुराते थे।

उरवा बिन मसऊद को मक्का वालों ने जासूस बनाकर मुसलमानों का हाल मालूम करने के लिये मदीना भेजा, उसने सहाबा-ए-किराम को परवानों की तरह हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर गिरते और फ़िदा होते हुए देखकर वापसी में यह रिपोर्ट दी कि मैंने किसरा व कैसर (यानी ईरान व रोम के बादशाहों) के दरबार भी देखे हैं और नजाशी बादशाह से भी मिला हूँ मगर जो हाल मैंने मुहम्मद के साथियों को देखा वह कहीं नहीं देखा। मेरा ख़्याल यह है कि तुम लोग उनके मुकाबले में हरगिज़ कामयाब न होगे।

हज़रत मुगीरा बिन शोबा रज़ियल्लाहु अन्हु की हदीस में है कि जब आप घर में तशरीफ़ फ़रमा होते थे तो सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम बाहर से आवाज़ देकर हुज़ूरे पाक को बुलाना बेअदबी समझते थे, दरवाज़े पर दस्तक भी सिर्फ़ नाखून से देते थे ताकि ज़्यादा खड़का और शोर न हो।

हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद भी सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम व ताबिईन का मामूल यह था कि मस्जिदे नबवी में कभी बुलन्द आवाज़ से बात करना तो दरकिनार कोई वअज़ व तक़रीर भी ज़्यादा बुलन्द आवाज़ से पसन्द न करते थे। अक्सर हज़रात का आलम यह था कि जब किसी ने हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का नाम मुबारक लिया तो रोने लगे और सम्मान व अदब की तस्वीर बन गये।

इसी अदब व सम्मान की बरकत थी कि उन हज़रात को नुबुव्वत के कमालात में से ख़ास हिस्सा मिला और अल्लाह तआला ने उनको अम्बिया के बाद सबसे ऊँचा मक़ाम अता फ़रमाया।

قُلْ يَٰأَيُّهَا النَّاسُ إِنِّي رَسُولُ اللَّهِ إِلَيْكُمْ جَمِيعًا الَّذِي لَهُ مُلْكُ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ
لَا إِلَهَ إِلَّا هُوَ يُحْيِي وَيُمِيتُ سَأْمِنُوا بِاللَّهِ وَرَسُولِهِ النَّبِيُّ الَّذِي يَأْتِي الْيُومِينَ بِاللَّهِ وَكَلامِهِ
وَآتِيعُوهَ لَعَلَّكُمْ تُهْتَدُونَ ۝ وَمِنْ قَوْمِ مُوسَىٰ أُمَّةٌ يَهْتَدُونَ بِالْحَقِّ وَيَبْهِنُونَ ۝

कुल् या अय्युहन्नासु इन्नी रसूलुल्लाहि
इलैकुम् जमी-अनिल्लजी लहू
मुल्कुस्समावाति वल्अर्ज़ि ला इला-ह
इल्ला हु-व युहयी व युमीतु
फ़आमिनु बिल्लाहि व रसूलिहिन्-
नबियिल् उम्मियिल्लजी युअ्मिनु
बिल्लाहि व कलिमातिही वत्तबिअहू
लअल्लकुम् तह्तदून (158) व मिन्
कौमि मूसा उम्मतुंयह्दू-न बिल्हक्कि
व बिही यअ्दिलून (159)

तू कह- ऐ लोगो! मैं रसूल हूँ अल्लाह का
तुम सब की तरफ़, जिसकी हुक्मत है
आसमानों और ज़मीन में, किसी की
बन्दगी नहीं उसके सिवा, वही जिलाता है
और मारता है, सो ईमान लाओ अल्लाह
पर और उसके भेजे हुए नबी-ए-उम्मी पर
जो कि यक़ीन रखता है अल्लाह पर और
उसके सब कलामों पर, और उसकी पैरवी
करो ताकि तुम राह पाओ। (158) और
मूसा की कौम में एक ग़िरोह है जो राह
बतलाते हैं हक़ की और उसी के
मुवाफ़िक् इन्साफ़ करते हैं। (159)

खुलासा-ए-तफ़सीर

आप कह दीजिये कि ऐ (दुनिया-जहान के) लोगो! मैं तुम सब की तरफ़ उस अल्लाह का भेजा हुआ (पैग़म्बर) हूँ जिसकी बादशाही है तमाम आसमानों और ज़मीन में, उसके सिवा कोई इबादत के लायक नहीं, वही ज़िन्दगी देता है और वही मौत देता है। सो (ऐसे) अल्लाह पर ईमान लाओ और उसके (ऐसे) नबी-ए-उम्मी पर (भी ईमान लाओ) जो कि (खुद भी) अल्लाह पर और उसके अहक़ाम पर ईमान रखते हैं (यानी जब इस बड़े रुतबे के बावजूद उनको अल्लाह

और सब रसूलों और किताबों पर ईमान लाने से आर नहीं तो तुमको अल्लाह व रसूल पर ईमान लाने से क्यों इनकार है) और उन (नबी) की पैरवी करो ताकि तुम सही रास्ते पर आ जाओ। और (अगरचे कुछ लोगों ने आपकी मुखाफ़त की लेकिन) मूसा की कौम में एक जमाअत ऐसी भी है जो (दीने) हक़ (यानी इस्लाम) के मुवाफ़िक़ (लोगों को) हिदायत करते हैं और उसी के मुवाफ़िक़ (अपने और ग़ैरों के मामलात में) इन्साफ़ भी करते हैं (इससे मुराद अब्दुल्लाह बिन सलाम दग़ैरह हज़रात हैं)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

इस आयत में इस्लाम के उसूली और बुनियादी मसाईल में से रिसालत के मसले के एक अहम पहलू का बयान है कि हमारे रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की रिसालत दुनिया के तमाम इनसानों और जिन्नात के लिये और उनमें भी क़ियामत तक आने वाली नस्लों के लिये आम है।

इस आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह सार्वजनिक ऐलान कर देने का हुक्म है कि आप लोगों को बतला दें कि मैं तुम सब की तरफ़ रसूल बनाकर भेजा गया हूँ। मेरी नुबुव्वत व रिसालत पिछले नबियों की तरह किसी मख़सूस कौम या मख़सूस इलाक़े या खास वक़्त के लिये नहीं, बल्कि पूरी दुनिया के इनसानों के लिये दुनिया के हर ख़ित्ते हर मुल्क हर आबादी के लिये और मौजूदा और आने वाली नस्लों के लिये क़ियामत तक के वास्ते आम है, और इनसानों के अलावा जिन्नात भी इसमें शरीक हैं।

हुज़ूरे पाक की नुबुव्वत तमाम आलम के लिये और ता

क़ियामत है, इसी लिये आप पर नुबुव्वत ख़त्म है

यही असली राज़ है ख़त्म-ए-नुबुव्वत के मसले का, क्योंकि जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की नुबुव्वत क़ियामत तक आने वाली सब नस्लों के लिये आम है तो फिर किसी दूसरे रसूल और नबी के भेजे जाने की न ज़रूरत है न गुंजाईश। और यही राज़ है उम्मत मुहम्मदिया की इस खुसूसियत का कि इसमें इरशादे नबवी के मुताबिक़ हमेशा एक ऐसी जमाअत कायम रहेगी जो दीन में पैदा होने वाले सारे फ़ितनों का मुक़ाबला और दीनी मामलात में पैदा होने वाले सारे ख़ललों और नुक्सों को दूर करती रहेगी। किताब व सुन्नत की ताबीर व तफ़सीर में जो ग़लतियाँ राईज होंगी तो यह जमाअत उनको भी दूर करेगी और हक़ तआला की खास नुसरत व मदद इस जमाअत को हासिल होगी जिसके सबब यह सब पर ग़ालिब आकर रहेगी, क्योंकि दर हकीक़त यह जमाअत ही हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के फ़राईजे रिसालत अदा करने में आपकी कायम-मक़ाम (नायब) होगी।

इमाम राजी रहमतुल्लाहि अलैहि ने आयत:

كُونُوا مَعَ الصَّالِحِينَ

(रहो सच्चों के साथ) के तहत में बतलाया है कि इस आयत में यह इशारा मौजूद है कि इस उम्मत में सादिकीन की एक जमाअत जरूर बाकी रहेगी वरना दुनिया को सादिकीन के साथ और सोहबत का हुक्म ही न होता। और इसी से इमाम राजी रह. ने हर दौर में इजमा-ए-उम्मत का शरई हुज्जत होना साबित किया है। क्योंकि सादिकीन की जमाअत के मौजूद होते हुए किसी ग़लत बात या गुमराही पर सब का इजमा व इत्तिफ़ाक़ (एकमत होना) नहीं हो सकता।

इमाम इब्ने कसीर रह. ने फ़रमाया कि इस आयत में हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ख़ातमुन्नबिय्यीन और आख़िरी पैग़म्बर होने की तरफ़ इशारा है, क्योंकि जब आपका नबी व रसूल बनकर तशरीफ़ लाना क़ियामत तक आने वाली नस्लों के लिये और पूरे आलम के लिये आग़म हुआ तो अब किसी दूसरे नये नबी व रसूल की ज़रूरत बाकी नहीं रहती, इसी लिये आख़िरी ज़माने में हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम तशरीफ़ लायेंगे तो वह भी अपनी जगह अपनी नुबुव्वत पर बरकरार होने के बावजूद शरीअते मुहम्मदी पर अमल करेंगे, जैसा कि हदीस की सही रिवायतों से साबित है।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के नबी व रसूल बनाकर भेजा जाना सारी दुनिया और क़ियामत तक के लिये आग़म होने पर यह आयत भी बहुत वाज़ेह सुबूत है। इसके अलावा क़ुरआने करीम की अनेक आयतें इस पर शाहिद हैं। मसलन इरशाद है:

وَأَوْحَىٰ إِلَيْنَا هَٰذَا الْقُرْآنَ لِأُنْذِرْكُمْ بِهِ وَمَنْ بَلَغَ

यानी यह क़ुरआन मुझ पर वही के ज़रिये भेजा गया है ताकि मैं तुमको अल्लाह के अज़ाब से डराऊँ और उन लोगों को भी जिनको मेरे बाद यह क़ुरआन पहुँचे।

हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की चन्द

अहम विशेषताएँ

और इमाम इब्ने कसीर ने मुस्नद अहमद के हवाले से मज़बूत सनद के साथ रिवायत किया है कि ग़ज़वा-ए-तबूक के मौक़े पर रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम नमाज़े तहज्जुद में मशगूल थे, सहाबा-ए-क़िराम रज़ियल्लाहु अन्हुम को डर हुआ कि कोई दुश्मन हमला न कर दे इसलिये आपके चारों तरफ़ जमा हो गये। जब आप नमाज़ से फ़ारिग़ हुए तो फ़रमाया कि आज की रात मुझे पाँच चीज़ें ऐसी अता की गयी हैं जो मुझसे पहले किसी रसूल व नबी को नहीं मिलीं। अब्बल यह कि मेरी रिसालत व नुबुव्वत को सारी दुनिया की तमाम कौमों के लिये आग़म किया गया है और मुझसे पहले जितने अम्बिया आये उनकी दावत व नुबुव्वत सिर्फ़ अपनी अपनी कौम के साथ मरकूस होती थी। दूसरी बात यह है कि मुझे मेरे दुश्मन के मुक़ाबले में ऐसा रौब

अता किया गया है कि वह मुझसे एक महीने के सफर की दूरी पर हो तो मेरा रौब उस पर छा जाता है। तीसरे यह कि मेरे लिये काफ़िरों से हासिल होने वाला माले ग़नीमत हलाल कर दिया गया हालाँकि पिछली उम्मतों के लिये वह हलाल न था बल्कि उसका इस्तेमाल करना बड़ा गुनाह समझा जाता था, उनके माले ग़नीमत का सिर्फ़ यह मस्रफ़ (खर्च का मक़ाम) था कि आसमान से एक बिजली आये और उसको जलाकर खाक कर दे। चौथे यह कि मेरे लिये तमाम ज़मीन को मस्जिद (नमाज़ पढ़ने की जगह) और पाक करने (यानी तयम्मूम कर लेने) का ज़रिया बना दिया कि हमारी नमाज़ ज़मीन पर हर जगह हो जाती है, मस्जिद के साथ मख़सूस नहीं, बख़िलाफ़ पहली उम्मतों के कि उनकी इबादत सिर्फ़ उनके इबादत ख़ानों के साथ मख़सूस थी, अपने घरों में या जंगल वगैरह में उनकी नमाज़ व इबादत न होती थी, तथा यह कि जब पानी के इस्तेमाल पर ताक़त न हो, चाहे पानी न मिलने की वजह से या किसी बीमारी के सबब तो वुजू के बजाय मिट्टी से तयम्मूम करना इस उम्मत के लिये तहारत व वुजू के कायम-मक़ाम हो जाता है, पिछली उम्मतों के लिये यह आसानी न थी। फिर फ़रमाया- और पाँचवीं चीज़ का तो कुछ पूछना ही नहीं, वह खुद ही अपनी नज़ीर (यानी बेजोड़) है। वह यह है कि अल्लाह तआला ने अपने हर रसूल को एक दुआ की कुबूलियत ऐसी अता फ़रमाई है कि उसके ख़िलाफ़ नहीं हो सकता और हर रसूल व नबी ने अपनी-अपनी दुआ का अपने ख़ास-ख़ास मक़सदों के लिये इस्तेमाल कर लिया, वे मक़सद हासिल हो गये, मुझसे यही कहा गया कि आप कोई दुआ करें, मैंने अपनी दुआ को आख़िरत के लिये सुरक्षित करा दिया। वह दुआ तुम्हारे और क़ियामत तक जो शख्स "ला इला-ह इल्लल्लाहु" की गवाही देने वाला होगा उसके काम आयेगी।

और इमाम अहमद की एक रिवायत हज़रत अबू मूसा अश्शरी रज़ियल्लाहु अन्हु से मन्कूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख्स मेरा मबऊस होना सुने (यानी मेरे नबी बनकर आने की ख़बर उसको मिले) चाहे वह मेरी उम्मत में हो या यहूदी व ईसाई हो, अगर वह मुझ पर ईमान नहीं लायेगा तो जहन्नम में जायेगा।

और सही बुख़ारी में इसी आयत के तहत में हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि अबू बक्र व उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के दरमियान किसी बात में मतभेद हुआ, हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु नाराज़ होकर चले गये, यह देखकर हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अन्हु भी उनको मनाने के लिये चले मगर हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने न माना, यहाँ तक कि अपने घर में पहुँचकर दरवाज़ा बन्द कर लिया, मजबूरन सिद्दीक़े अक़बर रज़ियल्लाहु अन्हु वापस हुए और हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हो गये। उधर कुछ देर के बाद हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु को अपने इस फ़ेल पर शर्मिन्दगी हुई और वह भी घर से निकल कर हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में पहुँच गये और अपना वाकिआ अर्ज़ किया। हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि इस पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम नाराज़ हो गये। जब सिद्दीक़े अक़बर रज़ियल्लाहु अन्हु ने देखा कि हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु पर नाराज़ी का इज़हार होने लगा तो अर्ज़ किया या

रसूलुल्लाह! ज्यादा कसूर मेरा ही था। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि क्या तुमसे इतना भी नहीं होता कि मेरे एक साथी को तकलीफें न पहुँचाओ? क्या तुम नहीं जानते कि जब मैंने अल्लाह के हुक्म से यह कहा कि:

يَا أَيُّهَا النَّاسُ إِنِّي رَسُولُ اللَّهِ إِلَيْكُمْ جَمِيعًا.

(ऐ लोगो! मैं रसूल हूँ अल्लाह का तुम सब की तरफ) तो तुम सब ने मुझे झुठलाया सिर्फ अबू बक्र सिद्दीक ही थे जिन्होंने पहली बार में मेरी तस्दीक की।

खुलासा यह है कि इस आयत से हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का तमाम मौजूदा और आईन्दा आने वाली नस्लों के लिये और हर मुल्क हर खित्ते के रहने वालों के लिये और हर कौम व बिरादरी के लिये आम रसूल होना साबित हुआ, और यह कि आपके नबी बनकर तशरीफ लाने के बाद जो शख्स आप पर ईमान नहीं लाया वह अगरचे किसी पहली शरीअत व किताब का या किसी और मज़हब व मिल्लत का पूरा-पूरा इत्तिबा (पैरवी) तक़वे व एहतियात के साथ भी कर रहा हो तो भी वह हरगिज़ निजात नहीं पायेगा।

आयत के आखिर में बतलाया कि मैं उस पाक ज़ात की तरफ से रसूल हूँ जिसकी मिल्क में हैं तमाम आसमान और ज़मीन, वही ज़िन्दा करता है वही मारता है।

उसके बाद इरशाद फरमाया:

فَآمِنُوا بِاللَّهِ وَرَسُولِهِ النَّبِيِّ الْأُمِّيِّ الَّذِي يُؤْمِنُ بِاللَّهِ وَكَلِمَتِهِ وَاتَّبِعُوهُ لَعَلَّكُمْ تَهْتَكُونَ ۝

यानी जब यह बात मालूम हो गयी कि हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दुनिया की तमाम कौमों के लिये रसूल व नबी हैं, उनकी इत्तिबा के बग़ैर कोई चारा नहीं, तो ज़रूरी है कि ईमान लाओ अल्लाह पर और उसके रसूल नबी-ए-उम्मी पर, जो खुद भी अल्लाह पर और उसके कलिमात पर ईमान लाते हैं, और उनकी पैरवी करो ताकि तुम सही रास्ते पर कायम रहो।

अल्लाह के कलिमात से मुराद अल्लाह तआला की किताबें तौरात, इंजील और कुरआन वगैरह हैं। ईमान के हुक्म के बाद फिर पैरवी का मज़ीद हुक्म देकर इसकी तरफ इशारा कर दिया है कि सिर्फ ईमान लाना या ज़बानी तस्दीक करना आपकी शरीअत की पैरवी करने के बग़ैर हिदायत के लिये काफी नहीं।

हज़रत जुनैद बग़दादी रहमतुल्लाहि अलैहि ने फरमाया कि मख़्लूक पर अल्लाह तआला की तरफ पहुँचने के तमाम रास्ते बन्द हैं सिवाय उस रास्ते के जो नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बतलाया है।

हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की कौम में एक हक़

परस्त जमाअत

दूसरी आयत में इरशाद फरमाया:

وَمِنْ قَوْمِ مُوسَى أُمَّةٌ يَهْتَدُونَ بِالْحَقِّ وَبِهِ يَعْدِلُونَ

यानी मूसा अलैहिस्सलाम की कौम में एक जमाअत ऐसी भी है जो खुद भी हक की पैरवी करती है और अपने विवादित मामलों के फैसलों में हक के मुवाफिक फैसले करती है।

पहली आयतों में हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की कौम की उल्टी चाल, बेकार की हुज्जत और गुमराही का बयान हुआ था, इस आयत में बतलाया गया कि पूरी कौमे बनी इस्राईल ऐसी नहीं बल्कि उनमें कुछ लोग अच्छे भी हैं जो हक की पैरवी करते हैं, और हक फैसले करते हैं, ये वही लोग हैं जिन्होंने तौरात व इंजील के ज़माने में उनकी हिदायत के मुवाफिक पूरा अमल किया, और जब ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लाये तो तौरात व इंजील की खुशख़बरी के मुवाफिक आप पर ईमान लाये और आपकी पैरवी की। बनी इस्राईल की इस हक-परस्त (सही राह पर चलने वाली) जमाअत का जिक्र भी कुरआन में बार-बार आया है। एक जगह इरशाद है:

مِنْ أَهْلِ الْكِتَابِ أُمَّةٌ قَائِمَةٌ يَتْلُونَ آيَاتِ اللَّهِ آنَاءَ اللَّيْلِ وَهُمْ يَسْجُدُونَ

यानी अहले किताब में एक ऐसी जमाअत भी है जो हक पर कायम है, अल्लाह की आयतों को रात भर तिलावत करते हैं और सज्दे करते हैं। एक जगह इरशाद है:

الَّذِينَ آتَيْنَاهُمُ الْكِتَابَ مِنْ قَبْلِهِ هُمْ بِهِ يُؤْمِنُونَ

यानी वे लोग जिनको हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से पहले किताब (तौरात व इंजील) दी गयी थी वे हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर ईमान लाते हैं।

और इमाम इब्ने जरीर, इमाम इब्ने कसीर वगैरह ने इस जगह एक अजीब हिकायत नक़ल की है कि इस जमाअत से वह जमाअत मुराद है जो बनी इस्राईल की गुमराही, बुरे आमाल और नबियों को क़त्ल करने वगैरह से तंग आकर उनसे अलग हो गयी थी। बनी इस्राईल के बारह कबीलों में से एक कबीला था जिन्होंने अपनी कौम से तंग आकर यह दुआ की कि या अल्लाह! हमें इन लोगों से दूर कहीं और बसा दीजिए ताकि हम अपने दीन पर मज़बूती से अमल करते रहें। अल्लाह तआला ने अपनी कामिल कुदरत से उनको डेढ़ साल की दूरी पर दूर पूरब की किसी ज़मीन में पहुँचा दिया, जहाँ वे ख़ालिस इबादत में मशगूल रहे और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के नबी बनकर ज़ाहिर होने के बाद भी कुदरत के करिश्मे से उनके मुसलमान होने का यह सामान हुआ कि मेराज की रात में जिब्रीले अमीन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को उस तरफ़ ले गये, वे लोग आप पर ईमान लाये, आपने उनको कुरआन की कुछ सूरतें पढ़ायीं और उनसे मालूम किया कि क्या तुम्हारे पास नाप-तौल का कुछ इन्तिज़ाम है और तुम लोगों के गुज़ारे (रोज़ी कमाने) का क्या सामान है? जवाब दिया कि हम ज़मीन में ग़ल्ला बोते हैं जब तैयार हो जाता है तो काटकर वहीं ढेर लगा देते हैं, हर शख्स को जितनी ज़रूरत होती है वहाँ से ले आता है, नापने तौलने की ज़रूरत ही नहीं होती। आपने मालूम किया कि क्या तुममें कोई शख्स झूठ भी बोलता है? अर्ज किया कि नहीं, क्योंकि अगर कोई ऐसा करे तो फौरन एक

आग आकर उसे जला देती है। आपने मालूम किया कि तुम सब के मकानात बिल्कुल एक तरह के क्यों हैं? अर्ज किया इसलिये कि किसी को किसी पर बड़ाई जतलाने का मौका न मिले। फिर मालूम किया कि तुमने अपने मकानात के सामने अपनी कब्रें क्यों बना रखी हैं? अर्ज किया ताकि हमें मौत हर वक्त ध्यान में रहे। फिर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब मेराज से वापस मक्का में तशरीफ लाये तो यह आयत नाज़िल हुई:

وَمِنْ قَوْمِ مُوسَى أُمَّةٌ يَهْدُونَ بِالْحَقِّ وَبِهِ يَعْدِلُونَ.

तफसीर-ए-कुर्तुबी ने इसी रिवायत को असल करार दिया है और दूसरी संभावनायें भी लिखी हैं। इमाम इब्ने कसीर ने इसको अजीब हिकायत तो फरमाया मगर रद्द नहीं किया, अलबत्ता तफसीरे कुर्तुबी में इसको नकल करके कहा है कि ग़ालिबन यह रिवायत सही नहीं।

बहरहाल इस आयत से यह समझ में आया कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की कौम में एक जमाअत ऐसी है जो हमेशा हक पर कायम रही, चाहे ये वे लोग हों जो हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की नुबुव्वत की खबर पाकर इस्लाम ले आये हों या वह बनी इस्राईल का बारहवाँ कबीला हो जिसको अल्लाह तआला ने ज़मीन के किसी खास हिस्से में रखा हुआ है, जहाँ दूसरों की रसाई (पहुँच) नहीं। वल्लाहु आलम

وَقَطَعْنَاهُمْ اثْنَتَيْ عَشْرَةَ أَسْبَاطًا أُمَمًا وَأَوْحَيْنَا إِلَىٰ مُوسَىٰ

إِذَا اسْتَسْقَمَ قَوْمُهُ أَنْ أَضْرِبَ بِعَصَاكَ الْحَجَرَ، فَانْجَبَتْ مِنْهُ اثْنَتَا عَشْرَةَ عَيْنًا، قَدْ عَلِمَ كُلُّ أُنَاسٍ مَّشْرِبَهُمْ، وَظَلَّلْنَا عَلَيْهِمُ الْغَمَامَ وَأَنْزَلْنَا عَلَيْهِمُ الْمَنِّ وَالسَّلْوَى، كَلَّوْا مِنْ طَيِّبَاتِ مَا رَزَقْنَكُمْ، وَمَا ظَلَمُونَا وَلَكِنْ كَانُوا أَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ۝ وَإِذْ قِيلَ لَهُمْ اسْكُنُوا هَذِهِ الْقَرْيَةَ وَكُلُوا مِنْهَا حَيْثُ شِئْتُمْ وَقُولُوا حِطَّةٌ وَادْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا نَغْفِرْ لَكُمْ خَطِيئَتَكُمْ، سَنَزِيدُ الْمُحْسِنِينَ ۝ فَبَدَّلَ الَّذِينَ ظَلَمُوا مِنْهُمْ قَوْلًا غَيْرَ الَّذِي قِيلَ لَهُمْ فَأَرْسَلْنَا عَلَيْهِمْ رِجْزًا مِنَ السَّمَاءِ، وَمَا كَانُوا يَنْظُرُونَ ۝

व कत्तअनाहुमुस्ततै अशर-त अस्बातन्
उ-ममन्, व औहैना इला मूसा
इज़िस्तस्काहु कौमुहू अनिज़िरब्
बिअसाकल् ह-ज-र फ़म्ब-जसत्
मिन्हुस्तता अशर-त औनन्, कद्

और अलग-अलग कर दिये हमने उनको
बारह दादाओं की औलाद बड़ी-बड़ी
जमाअतें, और हुक्म भेजा हमने मूसा को
जब पानी माँगा उससे उसकी कौम ने कि
मार अपनी लाठी उस पत्थर पर तो फूट
निकले उससे बारा चश्मे, पहचान लिया

अलि-म कुल्लु उनासिम् मशर-बहुम्,
 व जल्लल्ला अलैहिमुल् गुमा-म व
 अन्जल्ला अलैहिमुल् मन्-न वस्सल्ला,
 कुलू मिन् तय्यिबाति मा रज़क्रनाकुम्,
 व मा ज-लमूना व लाकिन् कानू
 अन्फु-सहुम् यज़िलमून (160) व इज़्
 की-ल लहुमुस्कुनू हाज़िहिल्कुर्य-त व
 कुलू मिन्हा हैसु शिअतुम् व कूलू
 हित्ततुं-वदख़ुलुल्-बा-ब सुज्जदन्-
 नरफिर् लकुम् छातीआतिकुम्,
 स-नज़ीदुल्-मुहिसनीन (161)
 फ-बदलल्लज़ी-नज़-लमू मिन्हुम् कौलन्
 गैरल्लज़ी की-ल लहुम् फ-अरसल्ला
 अलैहिम् रिज़्जम्-मिनस्-समा-इ
 बिमा कानू यज़िलमून (162) ❀

हर कबीले ने अपना घाट, और साया
 किया हमने उन पर बादल का और उतारा
 हमने उन पर मन्न और सलवा, खाओ
 सुथरी चीज़ें जो हमने रोज़ी दी तुमको,
 और उन्होंने हमारा कुछ न बिगाड़ा
 लेकिन अपना ही नुक़सान करते रहे।
 (160) और जब हुक्म हुआ उनको कि
 बसो इस शहर में और खाओ उसमें जहाँ
 से चाहो और कहो- हमको बख़्श दे, और
 दाख़िल होओ दरवाज़े में सज्दा करते हुए
 तो बख़्श देंगे हम तुम्हारी ख़तायें यकीनन
 ज़्यादा देंगे हम नेकी करने वालों को।
 (161) सो बदल डाला ज़ालिमों ने उनमें
 से दूसरा लफ़्ज़ उसके सिवा जो उनसे कह
 दिया गया था, फिर भेजा हमने उन पर
 अज़ाब आसमान से उनकी शरारत की
 वजह से। (162) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

और हमने (एक इनाम बनी इस्राईल पर यह किया कि उनके सुधार व इन्तिज़ाम के लिये)
 उनको बारह ख़ानदानों में बाँट करके सब की अलग-अलग जमाअत मुक़र्रर कर दी (और हर
 एक पर एक सरदार निगरानी के लिये मुक़र्रर कर दिया, जिनका ज़िक्र सूरः मायदा के तीसरे
 रुकूअ में है “व बअस्ना मिन्हुमुसै अ-श-र नकीबन्”) और (एक इनाम यह किया कि) हमने
 मूसा (अलैहिस्सलाम) को हुक्म दिया जबकि उनकी कौम ने पानी माँगा (और उन्होंने हक़
 तअ़ाला से दुआ की, उस वक़्त यह हुक्म हुआ) कि अपनी लाठी को (फुलों) पत्थर पर मारो,
 (उससे पानी निकल आयेगा) बस (मारने की देर थी) फौरन उससे बारह चश्मे (उनके बारह
 ख़ानदानों की संख्या के मुताबिक) फूट निकले, (चुनाँचे) हर-हर शख़्स ने अपने पानी पीने का
 मौका “यानी जगह” मालूम कर लिया। और (एक इनाम यह किया कि) हमने उन पर बादल से
 साया किया, और (एक इनाम यह किया कि) उनको (ग़ैब के ख़ज़ाने से) तुरन्जबीन “यानी एक

किस्म की कुदरती शकर या तरी" और बटेरें पहुँचाई (और इजाजत दी कि) खाओ पाक चीजों से जो कि हमने तुमको दी हैं, (लेकिन वे लोग उसमें भी एक बात खिलाफे हुक्म कर बैठे) और (इससे) उन्होंने हमारा कोई नुकसान नहीं किया लेकिन अपना ही नुकसान करते थे (यह वाकिआत वादी-ए-तीह के हैं जिनकी तफसील सूर: ब-क़रह में गुज़र चुकी)।

और (वह ज़माना याद करो) जब उनको हुक्म दिया गया कि तुम लोग उस आबादी में जाकर रहो, और खाओ उस (की चीजों में) से जिस जगह से तुम्हारा दिल चाहे, और (यह भी हुक्म दिया गया कि जब अन्दर जाने लगे तो) ज़बान से यह कहते जाना कि तौबा है (तौबा है) और (अजिज़ी से) झुके-झुके दरवाज़े में दाखिल होना, हम तुम्हारी (पिछली) ख़ताएँ माफ़ कर देंगे (यह तो सब के लिये होगा और) जो नेक काम करेंगे उनको और भी ज़्यादा देंगे। सो बदल डाला उन ज़ालिमों ने एक और कलिमा जो खिलाफ़ था उस (कलिमे) के जिस (के कहने) की उनसे फ़रमाईश की गई थी, (इस पर) हमने उन पर एक आसमानी आफ़त भेजी, इस वजह से कि वे हुक्म को ज़ाया करते थे।

وَسَلَّهْمُ عَنِ الْقَرْيَةِ الَّتِي كَانَتْ حَاضِرَةَ الْبَحْرِ مَرَادُ يَعْدُونَ فِي السَّبْتِ إِذْ تَأْتِيهِمْ حِيتَانُهُمْ يَوْمَ سَبْتِهِمْ شُرَّعًا وَيَوْمَ لَا يَسْبِتُونَ لَا تَأْتِيهِمْ ۚ كَذَلِكَ ۚ نَبْلُوهُمْ بِمَا كَانُوا يَفْسُقُونَ ۝ وَإِذْ قَالَتْ أُمَّةٌ مِّنْهُمْ لِمَ تَعِظُونَ قَوْمًا ۚ اللَّهُ مُهْلِكُهُمْ أَوْ مُعَذِّبُهُمْ عَذَابًا شَدِيدًا ۖ قَالُوا مَعَذَرَةٌ إِلَىٰ رَبِّكُمْ ۖ وَلَعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ ۝ فَلَمَّا لَسُوا مَا ذُكِّرُوا بِهِ ۖ أَنجَيْنَا الَّذِينَ يَنْهَوْنَ عَنِ السُّوءِ وَأَخَذْنَا الَّذِينَ ظَلَمُوا بِعَذَابٍ بَیِّنٍ ۖ بِمَا كَانُوا يَفْسُقُونَ ۝ فَلَمَّا عَثَا عَنْ مَّا نُهُوا عَنْهُ قُلْنَا لَهُمْ كُونُوا قِرَدَةً خَاسِئِينَ ۝

वस्अल्हुम् अनिल्क़र्यतिल्लती कानत् हाजि-रतल्-बस्तिर। इज़् यज़्दू-न फिस्सब्ति इज़् तअत्तीहिम् हीतानुहुम् यौ-म सब्तिहिम् शुरअव्-व यौ-म ला यस्बितू-न ला तअत्तीहिम् कज़ालि-क नब्लूहुम् बिमा कानू यफ्सुकून।
(163) ● व इज़् कालत् उम्मतुम्-मिन्हुम् लि-म तअिज़ू-न

और पूछ उनसे हाल उस बस्ती का जो थी दरिया के किनारे। जब हद से बढ़ने लगे हफ़्ते के हुक्म में, जब आने लगीं उनके पास मछलियाँ हफ़्ते के दिन पानी के ऊपर और जिस दिन हफ़्ता न हो तो न आती थीं, इस तरह हमने उनको आजमाया इसलिये कि वे नाफ़रमान थे।
(163) ● और जब बोला उनमें से एक फ़िर्का- क्यों नसीहत करते हो उन लोगों

कौ-मनिल्लाहु मुस्लिक्हुम् औ
 मुअज़िबुहुम् अज़ाबन् शदीदन्,
 कालू मअज़ि-रतन् इला रब्बिक्हुम्
 व लअल्लहुम् यत्तकून (164)
 फ-लम्मा नसू मा जुक्किरु बिही
 अन्जैनल्लजी-न यन्हौ-न अनिस्सू-इ
 व अह्दाज़नल्लजी-न ज-लम्
 बि-अज़ाबिम् बईसिम्-बिमा कानू
 यप्सुकून (165) फ-लम्मा अतौ
 अम्मा नुहू अन्हु कुल्ना लहुम् कूनू
 कि-र-दतन् ख़ासिईन (166)

को जिनको अल्लाह चाहता है कि हलाक
 करे या उनको अज़ाब दे सख़्त, वे बोले
 इल्ज़ाम उतारने की गुर्ज़ से तुम्हारे रब के
 आगे, और इसलिये कि शायद वे डरें।
 (164) फिर जब वे भूल गये उसको जो
 उनको समझाया था तो निजात दी हमने
 उनको जो मना करते थे बुरे काम से,
 और पकड़ा गुनाहगारों को बुरे अज़ाब में
 उनकी नाफरमानी के कारण से। (165)
 फिर जब बढ़ने लगे उस काम में जिससे
 वे रोके गये थे तो हमने हुक्म किया कि
 हो जाओ ज़लील बन्दर। (166)

खुलासा-ए-तफसीर

और आप इन (अपने ज़माने के यहूदी) लोगों से (चेतावनी के तौर पर) उस बस्ती (वालों)
 का जो कि दरिया-ए-शोर के करीब आबाद थे, (और उसमें यहूदी रहते थे जिनको शनिवार के
 दिन शिकार करना मना था) उस वक़्त का हाल पूछिये जबकि वे (वहाँ के बसने वाले) हफ़्ते
 "शनिवार" (के मुताल्लिक़ जो हुक्म था उस) के बारे में (शरई) हद से निकल रहे थे, जबकि
 उनके हफ़्ते "शनिवार" के दिन उन (के दरिया) की मछलियाँ (पानी से सर निकाल-निकाल)
 जाहिर हो-होकर (दरिया के ऊपरी हिस्से पर) उनके सामने आती थीं, और जब हफ़्ते "शनिवार"
 का दिन न होता तो उनके सामने न आती थीं (बल्कि वहाँ से दूर कहीं चली जाती थीं और
 वजह इसकी यह थी कि) हम उनकी इस तरह पर (सख़्त) आजमाईश करते थे (कि कौन हुक्म
 पर जमा रहता है कौन नहीं रहता, और यह आजमाईश) इस सबब से (थी) कि वे (पहले से)
 नाफरमानी किया करते थे (इसी लिये ऐसे सख़्त हुक्म से उनकी आजमाईश की और नेकी करने
 वालों की आजमाईश लुफ़, तौफीक़ और ताईद से मिश्रित हुआ करती है)।

और (उस वक़्त का हाल पूछिये) जबकि उनमें से एक जमाअत ने (जो कि उनको नसीहत
 करते करते असर व फ़ायदा होने से मायूस हो गये थे ऐसे लोगों से जो अब भी नसीहत किये
 चले जा रहे थे और इस क़द्र मायूस भी न हुए थे जैसा कि "लअल्लहुम् यत्तकून" से मालूम
 होता है) यूँ कहा कि तुम ऐसे लोगों को क्यों नसीहत किये जाते हो जिन (से कुबूल करने की
 कुछ उम्मीद नहीं, और इससे मालूम होता है कि उन) को अल्लाह तआला (बिल्कुल) हलाक करने

वाले हैं या (हलाक न हुए तो) उनको (किसी और अन्दाज़ की) सज़ा सज़ा देने वाले हैं (यानी ऐसों के साथ क्यों दिमाग़ खाली करते हो)? उन्होंने जवाब दिया कि तुम्हारे (और अपने) रब के सामने उज़्र करने के लिये (उनको नसीहत करते हैं कि अल्लाह के रू-ब-रू कह सकें कि ऐ अल्लाह हमने तो कहा था मगर इन्होंने न सुना, हम माज़ूर हैं) और (साथ ही) इसलिये कि शायद ये डर जाएँ (और अमल करने लगें। मगर वे कब अमल करते थे) सो (आखिर) जब वे उस अम्र “यानी बात और हुक्म” को छोड़े ही रहे जो उनको समझाया जाता था, (यानी न माना) तो हमने उन लोगों को तो (अज़ाब से) बचा लिया जो उस बुरी बात से मना किया करते थे (चाहे बराबर मना करते रहे और चाहे मायूस हो जाने की वजह से बैठ रहे) और उन लोगों को जो (उक्त हुक्म में) ज़्यादती करते थे उनकी (इस हुक्म के खिलाफ़ करने की वजह से) एक सज़ा अज़ाब में पकड़ लिया, इस वजह से कि वे नाफ़रमानी किया करते थे। (यानी) जिस काम से उनको मना किया गया था जब वे उसमें हद से निकल गये (यह तो तफ़सीर हुई उस चीज़ को भूल जाने की जो उनको समझायी जाती थी) तो हमने उनको (ग़ज़ब और गुस्से से) कह दिया कि तुम ज़लील बन्दर बन जाओ (यह तफ़सीर हुई बुरे अज़ाब की)।

ऊपर दर्ज हुई इन आयतों के वाकिआत भी मआरिफ़ुल-कुरआन की पहली जिल्द सूरः ब-क़रह में तफ़सील व वज़ाहत के साथ आ चुके हैं, इसके मुताल्लिक ज़रूरी बातें वहाँ देखी जा सकती हैं।

وَإِذْ تَأَذَّنَ رَبُّكَ لِيُبْعَثَنَّ عَلَيْهِمْ إِلَى يَوْمِ الْقِيَامَةِ مَنْ يَسُومُهُمْ سُوءَ الْعَذَابِ ۚ
 إِنَّ رَبَّكَ لَسَرِيعُ الْعِقَابِ ۖ وَإِنَّهُ لَغَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝ وَقَطَّعْنَاهُمْ فِي الْأَرْضِ أُمَمًا ۖ مِنْهُمْ الضَّالُّونَ وَ
 مِنْهُمْ دُونَ ذَلِكَ ۖ وَبَلَّوْنَهُمْ بِالْحَسَنَاتِ وَالسَّيِّئَاتِ لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُونَ ۝ فَخَلَفَ مِنْ بَعْدِهِمْ خَلْفٌ
 وَرِثُوا الْكِتَابَ يَأْخُذُونَ عَرَضَ هَذَا الْأَدْنَىٰ ۖ وَيَقُولُونَ سَيُغْفَرُ لَنَا ۖ وَإِنْ يَأْتِهِمْ عَرَضٌ مِثْلُ
 يَأْخُذُوهُ ۖ أَلَمْ يُؤْخَذْ عَلَيْهِمْ مِيثَاقُ الْكِتَابِ أَنْ لَا يَقُولُوا عَلَى اللَّهِ إِلَّا الْحَقَّ وَدَرَسُوا مَا فِيهِ
 وَالْآخِرَةُ خَيْرٌ لِلَّذِينَ يَتَّقُونَ ۖ أَفَلَا تَعْقِلُونَ ۝

व इज़् त-अज़्ज-न रब्बु-क
 लयब्अ सन्-न अलैहिम् इला
 यौमिल्-कियामति मंय्यसूमुहुम्
 सूअल्-अज़ाबि, इन्-न रब्ब-क
 ल-सरीअुल्-अिकाबि व इन्नहू

और उस वक़्त को याद करो जब ख़बर
 कर दी थी तेरे रब ने कि ज़रूर भेजता
 रहेगा यहूद पर कियामत के दिन तक ऐसे
 शख्स को कि दिया करे उनको बुरा
 अज़ाब, बेशक तेरा रब जल्द अज़ाब करने
 वाला है, और वह बख़्शने वाला मेहरबान

ल-गफ़ूरहीम (167) व कत्तअनाहुम्
 फिल्अर्जि उ-ममन् मिन्हुमुस्सालिहून
 व मिन्हुम् दून ज़ालि-क व बलौनाहुम्
 बिल्ह-सनाति वस्सय्यिआति लअल्लहुम्
 यर्जिअून (168) फ-ख-ल-फ मिम्-
 बअदिहिम् खल्फुंवरिसुल्-किता-ब
 यअखुजू-न अ-र-ज़ हाज़ल्-अदना व
 यकूलू-न सयुग़फ़रु लना व
 इय्यअत्तिहिम् अ-रज़ुम् मिस्लुहू
 यअखुजूहु, अलम् युअख़ज़् ज़लैहिम्
 मीसाकुल्-किताबि अल्ला यकूलू
 अलल्लाहि इल्लल्हक्-क व द-रसू मा
 फ़ीहि, वदारुल्-आख़िरतु ख़ैरुल्-
 लिल्लज़ी-न यत्तकू-न, अ-फ़ला
 तअकिलून (169)

है। (167) और जुदा-जुदा कर दिया हमने
 उनको मुल्क में फ़िर्क-फ़िर्क, बाज़े उनमें
 नेक और बाज़े और तरह के, और हमने
 उनकी आजमाईश की खूबियों में और
 बुराईयों में ताकि वे फिर आयें। (168)
 फिर उनके पीछे आये नालायक जो वारिस
 बने किताब के, ले लेते हैं असबाब इस
 अदना जिन्दगानी का और कहते हैं कि
 हमको माफ़ हो जायेगा, और अगर ऐसा
 ही असबाब उनके सामने फिर आये तो
 उसको ले लें, क्या उनसे किताब में अहद
 नहीं लिया गया कि न बोलें अल्लाह पर
 सिवाय सच के, और उन्होंने पढ़ा है जो
 कुछ उसमें लिखा है, और आख़िरत का
 घर बेहतर है डरने वालों के लिये, क्या
 तुम नहीं समझते। (169)

खुलासा-ए-तफ़्सीर

और (वह वक्त याद करना चाहिए) जब आपके रब ने (बनी इस्राईल के नबियों के द्वारा) यह बात बतला दी कि वह इन (यहूद) पर (इनकी गुस्ताखियों और नाफरमानियों की सज़ा में) कियामत (के करीब) तक ऐसे (किसी-न-किसी) शख्स को ज़रूर मुसल्लत करता रहेगा जो इनको सख्त सज़ाओं (ज़िल्लत व रुस्वाई और ताबेदारी व अधीनता) की तकलीफ़ पहुँचाता रहेगा (चुनाँचे मुद्दत से यहूदी किसी न किसी हुक्मत के महकूम व दबाव के नीचे ही चले आते हैं) बेशक आपका रब वाकई (जब चाहे) जल्द ही सज़ा दे देता है, और बेशक वह (अगर कोई बाज़ आ जाये तो) बड़ी ही मग़फ़िरत (और) बड़ी ही रहमत वाला (भी) है।

और हमने दुनिया में उनकी अलग-अलग जमाअतें कर दीं, (चुनाँचे) बाज़े उनमें नेक (भी) थे और बाज़े उनमें और तरह के थे (यानी बुरे), और हम (ने उन बुरों को भी अपनी इनायत और तरबियत व इस्लाह के सामान जमा करने से कभी बेकार नहीं छोड़ा बल्कि हमेशा) उनको खुशहालियों (सेहत और मालदारी) और बदहालियों (बीमारी और तंगदस्ती) से आजमाते रहे कि

शायद (इसी से) बाज़ आ जाएँ (क्योंकि कभी नेकियों और अच्छाईयों से तवज्जोह व रुचि पैदा हो जाती है और कभी बुराईयों से डरा दिया जाता है। यह हाल तो उनके पूर्वजों का हुआ) फिर उन (पहलों) के बाद ऐसे लोग उनके जानशीन हुए कि किताब (यानी तौरात) को (तो) उनसे हासिल किया (लेकिन उसके साथ ही हरामखोर ऐसे हैं कि किताब के अहकाम के बदले में) इस ज़लील दुनिया का माल व सामान (अगर मिले तो बेतकल्लुफ़ उसको) ले लेते हैं, और (इस गुनाह को मामूली समझकर) कहते हैं कि हमारी ज़रूर मग़फ़िरत हो जायेगी (क्योंकि हम अल्लाह के प्यारे हैं, ऐसे गुनाह हमारी मक़बूलियत के सामने क्या चीज़ हैं) हालाँकि (अपनी बेबाकी और गुनाह व नाफ़रमानी को हल्का समझने पर अड़े हुए हैं यहाँ तक कि) अगर उनके पास (फिर) वैसा ही (दीन बेचने के बदले में) माल व सामान आने लगे तो (इसी तरह बेधड़क तौर पर फिर) उसको ले लेते हैं (और गुनाह व नाफ़रमानी को हल्का समझना खुद कुफ़्र है, जिस पर मग़फ़िरत की संभावना व गुमान भी नहीं, कहाँ यह कि मग़फ़िरत का यकीन ज़ाहिर किया जाये। चुनाँचे आगे यही इरशाद है कि) क्या उनसे (इस) किताब (के इस मज़मून) का अहद नहीं लिया गया कि खुदा की तरफ़ सिवाय हक़ (और वास्तविक) बात के और किसी बात की निस्बत न करें? (मतलब यह है कि जब किसी आसमानी किताब को माना जाता है तो उसके मायने यह होते हैं कि हम उसके सब मज़ामीन मानेंगे) और (अहद भी कोई संक्षिप्त अहद नहीं लिया गया जिसमें शुब्हा व गुमान हो कि शायद इस खास मज़मून का उस किताब में होना उनको मालूम न होगा बल्कि तफ़सीली अहद लिया गया, चुनाँचे) उन्होंने उस (किताब) में जो कुछ (लिखा) था उसको पढ़ (भी) लिया, (जिससे वह शुब्हा व गुमान भी जाता रहा, फिर भी ये ऐसी बड़ी बात का दावा करते हैं कि बावजूद गुनाह व नाफ़रमानी को हल्का और बेअसर समझने के मग़फ़िरत का एतिकाद किये हुए हैं जो कि अल्लाह तआला पर पूरी तरह तोहमत है) और (उन्होंने यह सब किस्सा दुनिया के लिये किया, बाकी) आखिरत वाला घर उन लोगों के लिये (इस दुनिया से) बेहतर है जो (इन बुरे अक़ीदों और आमाल से) परहेज़ रखते हैं। क्या फिर (ऐ यहूदियो!) तुम (इस बात को) नहीं समझते?

मअरिफ़ व मसाईल

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों से पहली आयतों में हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम का बक़ीया किस्सा ज़िक्र करने के बाद उनकी उम्मत (यहूद) के ग़लत काम करने वाले लोगों की निंदा और उनके बुरे अन्जाम का बयान आया है, इन आयतों में भी उनकी सज़ा और बुरे अन्जाम का ज़िक्र है।

पहली आयत में उनकी दो सज़ाओं का बयान है जो दुनिया ही में उन पर मुसल्लत कर दी गयी हैं- अब्बल यह कि कियामत तक अल्लाह तआला उन पर किसी ऐसे शख्स को ज़रूर मुसल्लत करता रहेगा जो उनको सख़्त सज़ा देता रहे, और ज़िल्लत व रुस्वाई में मुब्तला रखे। चुनाँचे उस वक़्त से आज तक हमेशा यहूदी हर जगह मग़लूब, दूसरों के क़हर का शिकार और दूसरों के महकूम (ताबे) रहे! आजकल की इस्राईली हुकूमत से इस पर शुब्हा इसलिये नहीं हो

सकता कि जानने वाले जानते हैं कि दर हकीकत आज भी इस्त्राईल की न अपनी कोई ताकत है न हुक्मत, वे रूस और अमेरिका की इस्लाम-दुश्मन साजिश के नतीजे में उन्हीं की एक छावनी से ज्यादा कोई हैसियत नहीं रखते, और आज भी वे बदस्तूर उन्हीं के हुक्म के ताबे और ताकत के अधीन हैं, जिस दिन और जिस वक़्त ये दोनों उसकी इमदाद से अपना हाथ खींच लें उसी दिन इस्त्राईल का वजूद दुनिया से ख़त्म हो सकता है।

दूसरी आंख में यहूदियों पर एक और सज़ा का जिक्र है, जो इसी दुनिया में उनको दी गयी, वह यह कि उनकी आबादी दुनिया के विभिन्न हिस्सों में बिखरी हुई और जुदा-जुदा हो गयी, किसी जगह एक मुल्क में उनका इज्तिमा न रहा "व क़त्ल अज़्नाहुम् फ़िल्अरज़ि उ-ममा" का यही मतलब है। 'क़त्ल अज़्ना' मस्दर 'तक्तीउन्' से निकला है, जिसके मायने हैं 'टुकड़े-टुकड़े कर देना' और "उमम" 'उम्मत' की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने हैं 'एक जमाअत' या 'एक फ़िर्का'। मतलब यह है कि हमने यहूद की क़ौम के टुकड़े-टुकड़े ज़मीन के विभिन्न हिस्सों में बिखेर दिये।

इससे मालूम हुआ कि किसी क़ौम का एक जगह इकट्ठा और अक्सरियत में होना खुदा तआला का इनाम व एहसान है, और उसका विभिन्न और अनेक जगहों में बिखर जाना एक तरह का अज़ाबे इलाही। मुसलमानों पर हक़ तआला का यह इनाम हमेशा रहा है और इन्शा-अल्लाह क़ियामत तक रहेगा कि वे जिस जगह रहे उनकी एक ज़बरदस्त सामूहिक कुव्वत वहाँ पैदा हो गयी। मदीना तय्यिबा से यह सिलसिला शुरू हुआ और पूरब व पश्चिम में इसी कैफ़ियत के साथ हैरत-अंगेज़ तरीक़े पर फैला। दूर पूरब में पाकिस्तान, इण्डोनेशिया वगैरह मुस्तक़िल इस्लामी हुक्मते इसी के नतीजे में बनीं। इसके मुक़ाबले में यहूदियों का हाल हमेशा यह रहा कि मुख़्तलिफ़ मुल्कों में बिखरे हुए रहे। मालदार कितने भी हों मगर ताक़त व इज़्तिয়ার उनके हाथ में न आया।

चन्द साल से फ़िलिस्तीन के एक हिस्से में उनके जमा होने और दिखावे की सत्ता व ताक़त से धोखा न खाया जाये, एकत्र होना तो उनका इस जगह में आख़िरी ज़माने में होना ही चाहिये था क्योंकि अल्लाह के सच्चे रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सही हदीसों में क़ियामत के नज़दीक होने के लिये यह ख़बर दी गयी है कि आख़िर ज़माने में हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम नाज़िल होंगे, ईसाई सब मुसलमान हो जायेंगे और यहूदियों से जिहाद करके उनको क़त्ल करेंगे। खुदा का मुजरिम वारंट और पुलिस के ज़रिये पकड़कर नहीं बुलाया जाता बल्कि कुदरती असबाब ऐसे जमा कर देते हैं कि मुजरिम अपने पाँव चलकर हज़ारों कोशिशें करके अपने क़त्ल के स्थान पर पहुँचता है। हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम का उतरना मुल्के शाम के दमिश्क में होने वाला है, यहूदियों के साथ लड़ाई और मुक़ाबला भी यहीं होना है, ताकि ईसा अलैहिस्सलाम के लिये उनका ख़ात्मा कर देना आसान हो। कुदरत ने दुनिया की पूरी उम्र में तो यहूदियों को मुख़्तलिफ़ मुल्कों में बिखरे रखकर महकूमियत और बेक़द्री का अज़ाब चखाया और आख़िर ज़माने में हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की आसानी के लिये उनको उनके क़त्ल होने के स्थान में जमा फ़रमा दिया, इसलिये यह एकत्र होना इस अज़ाब के विरुद्ध नहीं।

रहा उनकी मौजूदा हुकूमत और दिखावे के झूठे इकितदार (सत्ता व ताकत) का मामला सो यह एक ऐसा धोखा है जिस पर आज की सभ्य दुनिया ने अगरचे बहुत खूबसूरत मुलम्मे का पर्दा चढ़ाया हुआ है लेकिन दुनिया की राजनीति से बाखबर कोई इनसान एक मिनट के लिये भी इससे धोखा नहीं खा सकता, क्योंकि आज जिस खिल्ले को इस्राईली हुकूमत का नाम दिया जाता है वह दर हकीकत रूस, अमेरिका और इंग्लैण्ड की एक संयुक्त छावनी से ज्यादा कोई हैसियत नहीं रखती, वह सिर्फ इन हुकूमतों की इमदाद से ज़िन्दा है, और इनके फरमान के ताबे रहने ही में उसके वजूद का राज़ छुपा है। ज़ाहिर है कि इस असली गुलामी को दिखावे की हुकूमत का नाम दे देने से उस कौम को कोई इकितदार हासिल नहीं हो जाता। कुरआने करीम ने उनके बारे में कियामत तक के लिये रुस्वाई और ज़िल्लत के जिस अज़ाब का जिक्र किया है वह आज भी बदस्तूर मौजूद है जिसका जिक्र इससे पहली आयत में इन अलफ़ाज़ के साथ आया है:

وَإِذْ قَادُونَ رَبُّكَ لِيُعَذِّبَهُمْ إِلَى يَوْمِ الْقِيَمَةِ مِنْ يَسُوءُهُمْ سُوءَ الْعَذَابِ.

यानी जबकि आपके रब ने पुख्ता इरादा कर लिया कि उन लोगों पर किसी ऐसी ताकत को कियामत तक मुसल्लत कर देगा जो उनको बुरा अज़ाब चखाये।

जैसा कि शुरू में सुलैमान अलैहिस्सलाम के हाथ से, फिर बुख्ते नस्सर के ज़रिये और आखिर में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हाथ से और शेष हज़रत फारूक़े आजम रज़ियल्लाहु अन्हु के ज़रिये हर जगह से ज़िल्लत व रुस्वाई के साथ उनका निकला जाना मशहूर व मारुफ़ और इतिहास की मान्यता प्राप्त वास्तविकताओं में से है।

इस आयत का दूसरा जुमला यह है:

مِنْهُمْ الصَّالِحُونَ وَمِنْهُمْ دُونَ ذَلِكَ.

यानी उन लोगों में कुछ लोग नेक हैं और कुछ दूसरी तरह के। दूसरी तरह से मुराद काफ़िर, बुरे आमाल वाले और बदकार लोग हैं। मतलब यह है कि यहूदियों में सब एक ही तरह के लोग नहीं, कुछ नेक भी हैं। इससे मुराद वे लोग हैं जो तौरात के ज़माने में तौरात के हुक्मों के पूरे पाबन्द रहे, न उनकी नाफ़रमानी में मुब्तला हुए न किसी ग़लत मायने बयान करने और अहकाम में रद्दोबदल करने के पीछे लगे।

और यह भी हो सकता है कि इससे मुराद वे हज़रात हों जो कुरआन नाज़िल होने के बाद कुरआन के ताबे हो गये, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर ईमान ले आये। इसके विपरीत वे लोग हैं जिन्होंने तौरात को आसमानी किताब मानने के बावजूद उसके खिलाफ़ अमल किया या उसके अहकाम में रद्दोबदल करके अपनी आखिरत को दुनिया की गन्दी चीज़ों के बदले में बेच डाला।

आयत के आखिर में इरशाद है:

وَيَلْوَنُهُمْ بِالْحَسَنَاتِ وَالسَّيِّئَاتِ لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُونَ.

यानी हमने अच्छी बुरी हालतों से उनका इम्तिहान लिया ताकि वे अपनी हरकतों से बाज़ आ

जायें। अच्छी हालतों से मुराद उनको माल व दौलत के जखीरे और ऐश व आराम के सामान देना है, और बुरी हालतों से मुराद या तो जिल्लत व रुस्वाई के वो वाकिआत हैं जो हर जमाने में मुख्तलिफ़ सूरतों से पेश आते रहे और या किसी वक़्त का अकाल और ग़रीबी व तंगदस्ती जो उन पर डाली गयी वह मुराद है। बहरहाल मतलब यह है कि इनसान की फ़रमाँबरदारी या नाफ़रमानी का इम्तिहान लेने के दो ही तरीके हैं, दोनों इस्तेमाल कर लिये गये। एक यह कि एहसानात व इनामात करके उसकी आजमाईश की जाये कि वे एहसान करने वाले और इनाम देने वाले के शुक्रगुज़ार व फ़रमाँबरदार होते हैं या नहीं, दूसरे यह कि उनको मुख्तलिफ़ तकलीफ़ों और परेशानियों में मुब्तला करके इसकी आजमाईश की जाये कि वे अपने रब की तरफ़ रुजू होते और अपने बुरे आमाल से तौबा करते हैं या नहीं। लेकिन यहूदी कौम इन दोनों इम्तिहानों में फेल हो गयी।

जब अल्लाह तआला ने उन पर नेमत के दरवाज़े खोले, माल व दौलत की फ़रावानी अता फ़रमाई तो कहने लगे:

إِنَّ اللَّهَ فَقِيرٌ وَنَحْنُ أَغْنَاءُ.

यानी (अल्लाह की पनाह) अल्लाह तआला फ़कीर हैं और हम ग़नी। और जब उनको गुर्बत व तंगदस्ती से आजमाया गया तो कहने लगे:

بِذِّ اللَّهِ مَغْلُولَةٌ.

यानी अल्लाह का हाथ तंग हो गया।

फायदे

इस आयत से एक फायदा तो यह हासिल हुआ कि किसी कौम का एक जगह इकट्ठा व एकत्र होना अल्लाह तआला की नेमत है, और उसका बिखर जाना अज़ाब। दूसरा फायदा यह हासिल हुआ कि इस दुनिया की राहत व मुसीबत और खुशी व ग़म दर हकीकत खुदावन्दी इम्तिहान के विभिन्न पर्चे हैं जिनके ज़रिये उसके ईमान और खुदा-परस्ती की आजमाईश की जाती है। न यहाँ की तकलीफ़ कुछ ज़्यादा रोने धोने की चीज़ है न कोई राहत खुशी में मस्त हो जाने और इतराने का सामान। अन्जाम पर नज़र रखने वाले अक्लमन्द के लिये ये दोनों चीज़ें काबिले तवज्जोह नहीं। खुलासा यह है कि:

न शादी दाद सामाने न ग़म आवुर्द नुक़साने

ब-पेशे हिम्मत मा हर चे आमद बूद मेहमाने

यानी न कोई फायदा हमें खुशी में मस्त कर सकता है और न कोई नुक़सान रंज व ग़म का कारण बन सकता है। हम अपनी हिम्मत व ज़ुरत से हर पेश आने वाली हालत का ज़िन्दा दिली से सामना करते हैं। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

तीसरी आयत में इरशाद है:

فَخَلَفَ مِنْ بَعْدِهِمْ خَلْفٌ وَرِثُوا الْكِتَابَ يَأْخُذُونَ عَرَضَ هَذَا الْأَدْنَى وَيَقُولُونَ سَيُفَرِّقُنَا وَإِنْ بَاتَتْهُمْ عَرَضُ

مَثَلَهُ بِأَخْلَوْهُ.

इसमें पहला लफ्ज़ 'ख-ल-फ़' खिलाफ़त मस्तर से निकला हुआ माज़ी का सीगा है, जिसके मायने हैं कायम-मक़ाम और ख़लीफ़ा हो गये। और दूसरा लफ्ज़ 'खल्फ़ुन' मस्तर है जो कायम-मक़ाम और ख़लीफ़ा के मायने में इस्तेमाल होता है। अकेले और बहुत सारे अफ़राद दोनों के लिये बराबर तौर पर बोला जाता है। लेकिन 'खल्फ़ुन' अक्सर बुरे-ख़लीफ़ा (बुरे जानशीन) के लिये इस्तेमाल होता है, जो अपने बड़ों के तरीक़े के खिलाफ़ बुराईयों में मुब्तला हो, और 'ख-ल-फ़' इसके विपरीत नेक और काबिल ख़लीफ़ा को कहा जाता है, जो अपने बड़ों के नक़्शे क़दम पर चले और उनके मक़सद और उद्देश्य को पूरा करे। इस लफ्ज़ का अधिकतर इस्तेमाल इसी तरह है, कहीं कहीं इसके खिलाफ़ भी इस्तेमाल हुआ है।

وَرِثُوا الْكِتَابَ.

'वरिसू' विरासत से निकला है। वह चीज़ जो मरने वालों के बाद ज़िन्दा रहने वालों को मिलती है उसको मीरास या विरासत कहा जाता है। मायने यह हैं कि किताब तौरात इन लोगों को अपने बड़ों से विरासत में मिल गयी, यानी उनके मरने के बाद इन लोगों के हाथ आई।

लफ्ज़ "अ-र-ज़" सामान के मायने में बोला जाता है जो नक़्द के बदले में ख़रीदा जाता है और कभी माल के आम मायने में भी इस्तेमाल होता है चाहे नक़्द हो या सामान। तफ़्सीरी मज़हरी में है कि इस जगह यही आम मायने मुराद हैं, और इस जगह "माल" को लफ्ज़ "अ-र-ज़" से ताबीर करने में इसकी तरफ़ इशारा है कि दुनिया का माल कितना ही हो, नापायेदार और आरज़ी (अस्थायी) है, क्योंकि 'अरज़' का लफ्ज़ असल में 'जौहर' के मुक़ाबले में नापायेदार चीज़ के लिये प्रयोग होता है जिसका अपना कोई मुस्तक़िल वजूद न हो बल्कि वह अपने वजूद में दूसरी किसी चीज़ के ताबे हो। इसी लिये 'आरिज़' का लफ्ज़ बादल के मायने में आता है, क्योंकि उसका वजूद कायम रहने वाला नहीं, जल्द ख़त्म हो जाता है। कुरआने करीम में "हाज़ा आरिज़ुम् मुम्तिरुना" इसी मायने के लिये आया है।

هَذَا الْأَدْنَى.

इसमें लफ्ज़ 'अदना' 'दुनुवन' निकटता के मायने में भी कहा जा सकता है। इस सूरात में 'अदना' के मायने बहुत करीब के हो जायेंगे, इसी का स्त्री लिंग 'दुन्या' है, जिसके मायने करीब के हैं। आख़िरत के मुक़ाबले में यह ज़हान इन्सान से ज़्यादा करीब है इसलिये इसको अदना और दुनिया कहा जाता है। और दूसरा शुब्हा व संभावना यह भी है कि यह लफ्ज़ 'दनाअत' से निकला हो जिसके मायने ज़िल्लत के हैं, तो इसके मायने ज़लील व हकीर के हो जायेंगे। दुनिया और इसके सब सामान आख़िरत के मुक़ाबले में हकीर व ज़लील हैं इसलिये इसको 'अदना' और 'दुनिया' कहा गया।

आयत के मायने यह हैं कि पहले दौर के यहूदियों में तो दो किस्म के लोग थे, कुछ नेक सालेह, तौरात की शरीअत के पाबन्द और कुछ नाफरमान गुनाहगार, मगर उनके बाद जो लोग उनकी नस्ल में उनके जानशीन, कायम-मकाम और तौरात के वारिस बने, उन्होंने यह हरकत इस्त्रियार की कि अल्लाह की किताब को तिजारत का माल बना लिया कि गर्ज वालों से रिश्वत लेकर अल्लाह के कलाम में रद्दोबदल करके उसको उनके मतलब के मुवाफिक बनाने लगे।

وَيَقُولُونَ سَيَغْفِرُ لَنَا.

इस पर और ज्यादा जुरत यह कि यह कहते हैं कि अगरचे यह हमने गुनाह किया है मगर यह गुनाह हमारा बख्श दिया जायेगा। हक तआला ने उनकी ग़लती पर अगले जुमले में इस तरह तंबीह फरमाई:

وَإِنْ يَأْتِيهِمْ عَرَضٌ مِثْلُهُ يَأْخُذُوهُ.

यानी उनका हाल यह है कि अगर इस वक़्त भी उनको अल्लाह के कलाम में रद्दोबदल और कमी-बेशी करने के बदले में कोई माल मिलने लगे तो ये अब भी माल लेकर रद्दोबदल करने से बाज़ न आयें। मतलब यह है कि अल्लाह तआला की मग़फ़िरत और बख्शिश सही और हक़ है मगर उन्हीं लोगों के लिये जो अपने किये पर शर्मिन्दा हों और आगे के लिये उसके छोड़ने का पुख़्ता इरादा कर लें, जिसका पारिभाषिक नाम तौबा है।

ये लोग अपने जुर्म पर अड़े और जमे रहने के बावजूद मग़फ़िरत के उम्मीदवार हैं हालाँकि इस वक़्त इनको पैसा मिले तो रद्दोबदल करने में कोताही न करें। गुनाह पर हठधर्मी करते हुए मग़फ़िरत की उम्मीद रखना खुद को धोखा देने से ज्यादा कोई हकीकत नहीं रखता।

क्या उन लोगों से तौरात में यह अहद नहीं लिया गया था कि वे अल्लाह तआला की तरफ़ मन्सूब करके हक़ के सिवा कोई बात न कहेंगे और उन लोगों ने इस मुआहदे को तौरात में पढ़ा पढ़ाया भी है। यह सब उनकी अन्जाम से लापरवाही और उसके बारे में न सोचना है। बात यह है कि आखिरत का घर ही परहेज़गारों के लिये बेहतरीन और हमेशा रहने वाली दौलत है, क्या वे इतनी बात को नहीं समझते?

وَالَّذِينَ يَمَسُكُونَ بِالْكِتَابِ وَأَقَامُوا الصَّلَاةَ إِنَّا لَا نَضِيعُ أَجْرَ الْمُصْلِحِينَ ۝ وَرَأَوْا تَنَقَّ الْجَبَلَ فَوْقَهُمْ كَأَنَّهُ ظُلَّةٌ وَظَنُّوا أَنَّهُ وَاقِعٌ بِهِمْ ۚ خُذُوا مَا آتَيْنَاكُمْ بِقُوَّةٍ وَادْكُرُوا مَا فِيهِ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ۝

वल्लज़ी-न युमस्सिकू-न बिल्किताबि
व अकामुस्सला-त, इन्ना ला नुज़ीअु
अज़ल्-मुस्लिहीन (170) व इज़्

और जो लोग ख़ूब पकड़ रहे हैं किताब
को और कायम रखते हैं नमाज़ को,
बेशक हम जाया न करेंगे सवाब नेकी

न-तक् नल्-ज-ब-ल फौ क हुम्
क-अन्नहू जुल्लतुं-व जन्नू अन्नहू
वाकि अुम् बिहिम्, खुज् मा
आतैनाकुम् बिकुव्वतिं वज्कुरु मा
फीहि लअल्लकुम् तत्तकून (171) ❀

वालों का। (170) और जिस वक्त उठाया हमने पहाड़ उनके ऊपर छज्जे की तरह और डरे कि वह उन पर गिरेगा, हमने कहा पकड़ो जो हमने तुमको दिया है जोर से, और याद रखो जो उसमें है ताकि तुम बचते रहो। (171) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

और (उनमें से) जो लोग किताब (यानी तौरात) के पाबन्द हैं (जिसमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर ईमान लाने का भी हुक्म है, पर पाबन्दी यही है कि मुसलमान हो गये) और (अकीदों के साथ नेक आमाल के भी पाबन्द हैं, चुनाँचे) नमाज़ की पाबन्दी करते हैं, हम ऐसे लोगों का जो अपना (इस तरह) सुधार और दुरुस्ती करें सवाब ज़ाया न करेंगे। और (वह वक्त भी ज़िक्र के काबिल है) जब हमने पहाड़ को उठाकर छत की तरह उन (बनी इस्राईल) के ऊपर (सीध में लटका हुआ) कर दिया और उनको यकीन हुआ कि अब उन पर गिरा (और उस वक्त) कहा कि (जल्दी) कुबूल करो जो किताब हमने तुमको दी है (यानी तौरात, और) मज़बूती के साथ (कुबूल करो) और याद रखो जो अहकाम उस (किताब) में हैं, जिससे उम्मीद है कि तुम परहेज़गार बन जाओ।

मअरिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में एक अहद व इकरार का ज़िक्र था जो खुसूसी तौर पर बनी इस्राईल के उलेमा से तौरात के बारे में लिया गया था कि उसमें कोई उलट-फेर और तब्दीली न करेंगे और अल्लाह तआला की तरफ़ सिवाय हक़ और सही बात के कोई चीज़ मन्सूब न करेंगे। और यह बात पहले बयान हो चुकी थी कि बनी इस्राईल के इन उलेमा ने अहद व इकरार तोड़ा और गर्ज वालों से रिश्तों लेकर तौरात के अहकाम बदले और उनकी गर्ज के मुताबिक़ करके बतलाये। अब यह आयत भी इसी मज़मून की पूरक है कि बनी इस्राईल के उलेमा सब के सब ऐसे नहीं, उनमें से कुछ वे भी हैं जिन्होंने तौरात के अहकाम को मज़बूती से थामा और ईमान के साथ अमल के भी पाबन्द हुए, और नमाज़ को पूरे आदाब के साथ कायम किया, ऐसे लोगों के बारे में फ़रमाया कि अपना सुधार करने वालों का अल्लाह तआला अज़्र ज़ाया नहीं किया करते, तो जिन लोगों ने ईमान व अमल के दोनों फ़राईज़ अदा करके अपनी इस्लाह (सुधार) कर ली उनका अज़्र ज़ाया नहीं हो सकता।

इस आयत में चन्द फ़ायदे काबिले गौर हैं- अव्वल यह कि किताब से मुराद इसमें वही किताब है जिसका ज़िक्र पहले आ चुका है यानी तौरात, और यह भी मुम्किन है कि हर

आसमानी किताब तौरात, इंजील, कुरआन सब मुराद हों।

दूसरे यह कि इस आयत से मालूम हुआ कि अल्लाह की किताब को सिर्फ अपने पास एहतियात और सम्मान के साथ रख लेने से कोई मकसद हासिल नहीं होता बल्कि उसके अहकाम की पाबन्दी मतलूब है, शायद इसी की तरफ इशारा करने के लिये इस आयत में किताब के लेने या पढ़ने का जिक्र नहीं, वरना 'यअखुजून' या 'यकरऊन' का लफ्ज़ होता, इसकी जगह 'युमस्सिकून' का लफ्ज़ इस्तिथार किया गया जिसके मायने हैं मजबूती के साथ पूरी तरह धामना, यानी उसके अहकाम पर अमल करना।

तीसरी बात ध्यान के काबिल यह है कि यहाँ तौरात के अहकाम पर अमल करने और पाबन्दी का जिक्र था और तौरात के अहकाम सैंकड़ों हैं, उनमें से इस जगह सिर्फ नमाज़ के कायम करने के जिक्र पर बस किया गया। इसमें इशारा इस बात की तरफ है कि किताबुल्लाह के अहकाम में सबसे ज्यादा अहम और अफ़ज़ल व आला नमाज़ है, और यह कि नमाज़ की पाबन्दी अल्लाह के हुक्मों की पाबन्दी की खास निशानी और पहचान भी है, कि इसके जरिये फरमाँबरदार और नाफ़रमान की पहचान होती है और इसकी पाबन्दी में यह खासियत भी है कि जो नमाज़ का पाबन्द हो गया उसके लिये अल्लाह के दूसरे अहकाम की पाबन्दी भी आसान हो जाती है और जिसने नमाज़ की पाबन्दी न की उससे दूसरे अहकाम की पाबन्दी भी न हो सकेगी, जैसा कि सही हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि नमाज़ दीन का सुतून है जिस पर इसकी इमारत खड़ी हुई है, जिसने इस सुतून को कायम कर लिया उसने दीन को कायम कर लिया और जिसने इसको गिरा दिया उसने पूरे दीन की इमारत गिरा दी।

इसी लिये इस आयत में "वल्लज़ी-न युमस्सिकू-न बिल्किताबि" के बाद "व अकामुस्सलान-त" फरमाकर यह बतला दिया कि किताब को मजबूती के साथ धामने वाला और इसकी पाबन्दी करने वाला सिर्फ उसी को समझा जायेगा जो नमाज़ को उसके आदाब व शराईत के साथ पाबन्दी से अदा करे, और जो नमाज़ में कोताही करे वह कितने ही वज़ीफ़े पढ़े या तपस्याएँ करे वह अल्लाह तआला के नज़दीक कुछ नहीं, अगरचे उससे कश्फ़ व करामत (चमत्कारों और अजीब-अजीब बातें और वाकिआत) का सदूर भी होता हो।

यहाँ तक बनी इस्राईल को उनके अहद तोड़ने और तौरात के अहकाम में तब्दीली करने पर तंबीह का बयान था, इसके बाद दूसरी आयत में बनी इस्राईल ही के एक खास अहद का जिक्र है जो उनसे तौरात के अहकाम की पाबन्दी के लिये डरा-धमकाकर गोया ज़बरदस्ती लिया गया था, जिसका जिक्र सूर: ब-क़रह में भी आ चुका है।

इस आयत में लफ्ज़ "नतक्ना" "नत्क्" से बना है जिसके मायने खींचने और उठाने के हैं। सूर: ब-क़रह में इसी वाकिए का जिक्र लफ्ज़ "रफ़अना" से किया गया है, इसलिये यहाँ भी हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने "नतक्ना" की तफ़सीर 'रफ़अना' से फरमाई है।

और लफ्ज़ "जुल्लत" 'ज़िल्ल' से निकला है जिसके मायने साये के हैं, यहाँ इसके मायने सायबान के किये गये हैं, मगर लफ्ज़ सायबान आम बोलचाल में ऐसी चीज़ के लिये बोला जाता

है जिसका साया सर पर पड़ता हो, मगर वह किसी सतून पर कायम हो, और इस वाकिए में पहाड़ उनके सर पर लटका दिया गया था, सायबान की सूरत में न था, इसी लिये इसको मिसाल देने के हर्फ के साथ जिक्र किया गया।

आयत के मायने यह हैं कि वह वक़्त भी याद करने के काबिल है जबकि हमने बनी इस्राईल के सरो पर पहाड़ को उठाकर लटका दिया जिससे वे समझने लगे कि अब हम पर पहाड़ गिरने ही वाला है। इस हालत में उनसे कहा गया:

خُذُوا مَا آتَيْنَاكُمْ بِقُوَّةٍ

यानी मजबूत पकड़ो उन अहकाम को जो हमने तुम्हें दिये हैं और याद रखो तौरात की हिदायतों को, ताकि तुम बुरे आमाल व अज़्लाक से बाज़ आ जाओ।

इसका किस्सा यह है कि जब बनी इस्राईल की इच्छा और फरमाईश के मुताबिक हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने अल्लाह तआला से किताब व शरीअत माँगी और हुक्म के अनुसार इस सिलसिले में चालीस रातों का एतिकाफ़ तूर पहाड़ पर करने के बाद अल्लाह तआला की यह किताब मिली और बनी इस्राईल को सुनाई तो उसमें बहुत से अहकाम ऐसे पाये जो उनकी तबीयत और सहूलत के खिलाफ़ थे, उनको सुनकर वे इनकार करने लगे कि हमसे तो इन अहकाम पर अमल नहीं हो सकता। उस वक़्त हक़ तआला ने जिब्रीले अमीन को हुक्म दिया, उन्होंने तूर पहाड़ को उस बस्ती के ऊपर लटका दिया जिसमें बनी इस्राईल आबाद थे। उसका रक्बा तारीख़ी रिवायतों में तीन मुरब्बा (चौकोर) मील बयान किया गया है, इस तरह उन लोगों ने मौत को अपने सामने खड़ा देखा तो सब सज्दे में गिर गये और तौरात के हुक्मों की पाबन्दी का अहद कर लिया, लेकिन इसके बावजूद फिर बार-बार खिलाफ़वर्ज़ी (नाफ़रमानी) ही करते रहे।

‘दीन में ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं’

इसका सही मतलब और शुब्हे का जवाब

यहाँ यह बात काबिले गौर है कि कुरआने करीम का आम ऐलान है:

لَا إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ

यानी दीन में ज़बरदस्ती और मजबूर करना नहीं, कि किसी को ज़बरदस्ती दीने हक़ के कुबूल करने पर मजबूर किया जाये, और इस वाकिए से ज़ाहिर होता है कि बनी इस्राईल को दीन के कुबूल करने पर मजबूर किया गया।

लेकिन ज़रा गौर किया जाये तो फर्क खुला हुआ है कि किसी गैर-मुस्लिम को इस्लाम के कुबूल करने पर कभी कहीं मजबूर नहीं किया गया, लेकिन जो शख्स मुसलमान होकर इस्लामी अहद व इक़रार का पाबन्द हो गया उसके बाद वह अगर इस्लामी अहकाम की खिलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करने लगे तो उस पर ज़रूर जबर किया जायेगा और खिलाफ़वर्ज़ी की सूरत में सज़ा

दी जायेगी। इस्लामी सज़ाओं में बहुत सी सज़ायें ऐसे लोगों के लिये मुकर्रर हैं। इससे मालूम हुआ कि “ला इकरा-ह फिद्दीनि” (दीन में ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं) का ताल्लुक ग़ैर-मुस्लिमों से है कि उनको ज़बरदस्ती मुसलमान नहीं बनाया जायेगा, और बनी इस्राईल के इस वाकिए में किसी को इस्लाम क़ुबूल करने के लिये मजबूर नहीं किया गया बल्कि उन लोगों ने मुसलमान होने के बावजूद तौरात के अहकाम की पाबन्दी से इनकार कर दिया, इसलिये उन पर ज़ोर-ज़बरदस्ती करके पाबन्दी कराना “ला इकरा-ह फिद्दीनि” (दीन में ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं) के खिलाफ़ नहीं।

وَإِذْ أَخَذَ رَبُّكَ مِنْ بَنِي آدَمَ مِنْ ظُهُورِهِمْ ذُرِّيَّتَهُمْ وَأَشْهَدَهُمْ عَلَى
أَنْفُسِهِمْ، أَلَسْتُ بِرَبِّكُمْ، قَالُوا بَلَىٰ، شَهِدْنَا، أَنْ تَقُولُوا يَوْمَ الْقِيَمَةِ إِنَّا كُنَّا عَنْ هَذَا غَافِلِينَ ۖ
أَوْ تَقُولُوا إِنَّمَا أَشْرَكَ آبَاؤُنَا مِنْ قَبْلُ وَكُنَّا ذُرِّيَّةً مِنْ بَعْدِهِمْ، أَفَتُهْلِكُنَا بِمَا فَعَلَ
الْمُبْطِلُونَ ۚ وَكَذَلِكَ نَقُصُّ عَلَيْكَ الْآيَاتِ وَلَعَلَّهُمْ يَرْجِعُونَ ۝

व इज़् अ-ख़-ज़ रब्बु-क मिम्-बनी
आद-म मिन् जुहूरिहिम् जुरिय्य-तहुम्
व अशह-दहुम् अला अन्फुसिहिम्
अलस्तु बिरब्बिकुम् कालू बला,
शहिद्ना अन् तकूलू यौमल्-कियामति
इन्ना कुन्ना अन् हाज़ा गाफिलीन
(172) औ तकूलू इन्नमा अशर-क
आबाउना मिन् कब्लु व कुन्ना
ज़ुरिय्यतम् मिम्-बअदिहिम्
अ-फतुहलिकुना बिमा फ-अलल्-
मुब्तिलून (173)

और जब निकाला तेरे रब ने बनी आदम की पीठों से उनकी औलाद को और इकरार कराया उनसे उनकी जानों पर-
क्या मैं नहीं हूँ तुम्हारा रब? बोले हाँ है, हम इकरार करते हैं। कभी कहने लगे कियामत के दिन कि हमको तो इसकी ख़बर न थी। (172) या कहने लगे कि शिर्क तो निकाला था हमारे बाप-दादाओं ने हमसे पहले और हम हुए उनकी औलाद उनके बाद, तो क्या तू हमको हलाक करता है उस काम पर जो किया गुमराहों ने। (173) और यूँ हम खोलकर बयान करते हैं बातें ताकि वे फिर आयें। (174)

खुलासा-ए-तफ़्सीर

और (उनसे उस वक़्त का वाक़िआ ज़िक्र कीजिए) जबकि आपके रब ने (स्वर्गों के आलम में आदम अलैहिस्सलाम की पुश्त से तो खुद उनकी औलाद को और) आदम की औलाद की पुश्त से उनकी औलाद को निकाला, और (उनको समझ अता करके) उनसे उन्हीं के बारे में इकरार

लिया कि क्या मैं तुम्हारा रब नहीं हूँ? (खुदा की दी हुई उस अक्ल से मामले की हकीकत को समझकर) सब ने जवाब दिया कि क्यों नहीं! (वाकई आप हमारे रब हैं। हक तआला ने वहाँ जितने फरिश्ते और मख्लूक़ात हाज़िर थे सब को गवाह करके सब की तरफ़ से फ़रमाया) हम सब (इस हकीकत के) गवाह बनते हैं (और यह इकरार और गवाही सब इसलिये हुआ) ताकि तुम लोग (यानी जो तुम में तौहीद को छोड़ने और शिर्क को अपनाने पर सज़ा पायें) क़ियामत के दिन यूँ न कहने लगे कि हम तो इस (तौहीद) से (बिल्कुल) बेख़बर थे। या यूँ कहने लगे कि (असल) शिर्क तो हमारे बड़ों ने किया था और हम उनके बाद उनकी नस्ल में हुए (और आदतन नस्ल अक़ीदों और ख़्यालात में अपनी असल के ताबे होती है, इसलिये हम बेख़ता हैं। पस हमारे फ़ेल पर तो हमको सज़ा हो नहीं सकती, अगर होगी तो लाज़िम आता है कि इन बड़ों की ख़ता में हम पकड़े गये हों) सो क्या इन ग़लत राह (निकालने) वालों के फ़ेल पर आप हमको तबाही में डाले देते हैं? (सो अब इस इकरार व गवाही देने के बाद तुम यह उज़्र नहीं पेश कर सकते, फिर उसके बाद उन सबसे वायदा किया गया कि यह अहद तुमको दुनिया में पैग़म्बरों के ज़रिये से याद दिलाया जायेगा, चुनाँचे ऐसा ही हुआ जैसा कि यहाँ भी शुरू में “इज़ अ-ख़-ज़” के तर्जुमे से मालूम हुआ कि आपको इस वाक़िए के ज़िक्र का हुक्म हुआ) और (आख़िर में भी इस याददेहानी को जतलाते हैं कि) हम इसी तरह (अपनी) आयतों को साफ़-साफ़ बयान किया करते हैं (ताकि उनको इस अहद का होना मालूम हो जाये) और ताकि (मालूम होने के बाद शिर्क वग़ैरह से) वे बाज़ आ जायें।

मअरिफ़ व मसाईल

अहद-ए-अलस्त की तहकीक

इन आयतों में उस अज़ीमुश्शान आलमगीर अहद व पैमान का ज़िक्र है जो ख़ालिक व मख्लूक़ और बन्दा व माबूद के दरमियान उस वक़्त हुआ जबकि मख्लूक़ इस मौजूदा जहान में आई भी न थी, जिसको पहले दिन का अहद या अहद-ए-अलस्त कहा जाता है।

अल्लाह जल्ल शानुहू सारे आलमों (जहानों) का ख़ालिक व मालिक है। ज़मीन व आसमान और इनके बीच और इनके अलावा जो कुछ है वह उसकी मख्लूक़ और मिल्क है, न उस पर कोई क़ानून किसी का चल सकता है, न उसके किसी फ़ेल पर किसी को कोई सवाल करने का हक़ है।

लेकिन उसने महज़ अपने फ़ज़ल व करम से आलम का निज़ाम ऐसा बनाया है कि हर चीज़ का एक नियम और क़ानून है। क़ानून के मुवाफ़िक़ चलने वालों के लिये हर तरह की हमेशा वाली राहत और ख़िलाफ़वर्ज़ी (बेअमली) करने वालों के लिये हर तरह का अज़ाब मुक़रर है।

फिर ख़िलाफ़वर्ज़ी (अहक़ाम का उल्लंघन) करने वाले मुजरिम को सज़ा देने के लिये उसका ज़ाती इल्म जो हर चीज़ को घेरे हुए है काफ़ी था, जो आलम के ज़र्रे-ज़र्रे पर हावी है और उसके लिये खुले और छुपे हुए तमाम आमाल व अफ़आल बल्कि दिलों में छुपे इरादे तक बिल्कुल जाहिर हैं, इसलिये कोई ज़रूरत न थी कि निगराँ मुक़रर किये जायें, आमाल नामे लिखे जायें,

आमाल तौले जायें और गवाह खड़े किये जायें।

लेकिन उसी ने ख़ालिस अपने फज़ल व करम से यह भी चाहा कि किसी को उस वक़्त तक सज़ा न दे जब तक दस्तावेज़ी सुबूत और नाक़ाबिले इनकार शहादतों (गवाहियों) से उसका जुर्म उसके सामने इस तरह खुलकर न आ जाये कि वह खुद भी अपने मुजरिम होने को स्वीकार कर ले और अपने आपको सज़ा का हक़दार समझ ले।

इसके लिये हर इनसान के साथ उसके हर अमल और क़ौल को लिखने वाले फ़रिश्ते मुक़र्रर फ़रमा दिये, जैसा कि क़ुरआन पाक में इरशाद है:

مَا يَلْفُظُ مِنْ قَوْلٍ إِلَّا لَدَيْهِ رَقِيبٌ عَتِيدٌ

यानी कोई कलिमा इनसान की ज़बान से नहीं निकलता जिस पर अल्लाह तआला की तरफ़ से निगरानी करने वाला फ़रिश्ता मुक़र्रर न हो। और एक जगह फ़रमाया:

كُلٌّ صَغِيرٌ وَكَبِيرٌ مُسْتَظَرٌّ

यानी इनसान का हर छोटा-बड़ा काम लिखा हुआ है।

फिर मेहशर में अदल व इन्साफ़ की तराजू कायम फ़रमाकर इनसान के अच्छे-बुरे आमाल को तौला जायेगा, अगर नेकियों का पल्ला भारी हो गया तो निजात पायेगा और गुनाहों और जराईम का पल्ला भारी हो गया तो अज़ाब में गिरफ़्तार होगा।

इसके अलावा जब अहक़मुल-हाकिमीन का आम दरबार मेहशर में कायम होगा तो हर एक के अमल पर शहादतें (सुबूत और गवाहियाँ) भी ली जायेंगी, कुछ मुजरिम गवाहों को झुठलायेंगे तो उनके हाथ-पाँव, बदन के हिस्सों और उस ज़मीन व मकान से जिसमें ये काम किये गये गवाही ली जायेगी, वे सब अल्लाह के हुक्म से बोलेंगे और सही-सही वाकिआत बतला देंगे, यहाँ तक कि मुजरिमों को इनकार व झुठलाने का कोई मौका बाकी न रहेगा, वे इक़्रार करेंगे, जैसा कि क़ुरआन पाक में इसकी वज़ाहत है:

فَاعْتَرَفُوا بِذَنبِهِمْ فَسُحْقًا لِأَصْحَابِ السَّعِيرِ

फिर मेहरबान व करीम मालिक ने अदल व इन्साफ़ के इस सिस्टम के कायम करने ही पर बस नहीं फ़रमाया, और दुनिया की हुक्मतों की तरह कोरा एक ज़ाब्ता और क़ानून उनको नहीं दे दिया, बल्कि क़ानून के साथ तरबियत का एक निज़ाम कायम किया, जैसे कि कोई शफ़ीक़ बाप अपने घरेलू मामलात को ठीक-ठाक रखने और घर वालों व बाल-बच्चों को तहज़ीब व अदब सिखाने के लिये कोई घरेलू क़ानून और ज़ाब्ता बनाता है, कि जो शख्स उसके खिलाफ़ करेगा उसको सज़ा मिलेगी, मगर उसकी शफ़क़त व इनायत उसको इस पर भी आमादा करती है कि ऐसा इन्तिज़ाम करे जिसके सबब उनमें से कोई सज़ा का पात्र न हो, बल्कि सब के सब उस ज़ाब्ते के मुताबिक़ चलें। बच्चे के लिये अगर सुबह को स्कूल जाने की हिदायत और उसके खिलाफ़ करने पर सज़ा मुक़र्रर कर दी है तो बाप सवेरे इसकी भी फ़िक्र करता है कि बच्चा इस काम के लिये वक़्त से पहले तैयार हो जाये।

रब्बुल-आलमीन की रहमत अपनी मख्लूक पर माँ और बाप की शफकत व रहमत से कहीं ज्यादा है, इसलिये उसने अपनी किताब को महज़ क़ानून और सज़ाओं के लिये नहीं बनाया बल्कि एक हिदायत नामा बनाया है, और हर क़ानून के साथ ऐसे तरीक़े भी सिखाये हैं जिनके ज़रिये क़ानून पर अमल करना आसान हो जाये।

रब होने के इसी निज़ाम के तकाज़े से अपने अम्बिया भेजे, उनके साथ आसमानी हिदायत नामे (यानी किताबें) भेजे, फ़रिश्तों की बहुत बड़ी तायदाद नेकियों की तरफ़ हिदायत करने और मदद करने के लिये मुक़र्रर फ़रमा दी।

रब होने के इसी निज़ाम का एक तकाज़ा यह भी था कि हर क़ौम और हर फ़र्द को ग़फ़लत से बेदार करने और अपने रब्बे करीम को याद करने के लिये मुख़्तलिफ़ किस्म के सामान पैदा किये, ज़मीन व आसमान की तमाम मख़्लूक़ात और दिन-रात के अदलने-बदलने और खुद इन्सान के अपने वजूद की कायनात में अपनी याद दिलाने वाली ऐसी निशानियाँ रख दीं कि अगर ज़रा भी होश से काम ले तो किसी वक़्त अपने मालिक को न भूले:

وَلِی الْأَرْضِ اِثْنُ لِّمُؤَفِّیْنَ، وَفِیْ اَنْفُسِکُمْ اَفَلَا تَبْصُرُوْنَ.

यानी ज़मीन में समझदारों के लिये हमारी निशानियाँ हैं, और खुद तुम्हारे वजूद में भी, क्या फिर भी तुम नहीं देखते।

इसी तरह ग़ाफ़िल इन्सान को बेदार करने और नेक अमल पर लगाने के लिये एक इन्तिज़ाम रब्बुल-आलमीन ने यह भी फ़रमाया है कि अफ़राद, जमाअतों और क़ौमों से मुख़्तलिफ़ वक़्तों और हालात में अपने नबियों के ज़रिये अहद व पैमान लेकर उनको क़ानून की पाबन्दी के लिये तैयार किया गया।

क़ुरआन मजीद की अनेक आयतों में बहुत से मुआहदों व इकरार नामों का ज़िक्र किया गया है जो मुख़्तलिफ़ जमाअतों से मुख़्तलिफ़ वक़्तों और हालात में लिये गये। अम्बिया अलैहिमुस्सलाम से अहद लिया गया कि जो कुछ उनको हक़ तआला की तरफ़ से रिसालत का पैग़ाम मिले वे अपनी-अपनी उम्मतों को ज़रूर पहुँचा देंगे। इसमें उनके लिये किसी का ख़ौफ़ और लोगों की मलामत व अपमान करने का अन्देशा रोक न होगा, अल्लाह तआला की इस पवित्र जमाअत ने अपने इस मुआहदे का पूरा हक़ अदा कर दिया, नुबुव्वत व रिसालत के पैग़ाम को पहुँचाने में अपना सब कुछ क़ुरबान कर दिया।

इसी तरह हर रसूल व नबी की उम्मत से इसका इकरार व अहद लिया गया कि वे अपने-अपने नबियों की पैरवी करेंगे, फिर ख़ास-ख़ास अहम मामलों में खुसूसियत के साथ उसके पूरा करने में अपनी पूरी ताक़त ख़र्च करने का अहद लिया गया, जिसको किसी ने पूरा किया, किसी ने नहीं किया।

उन्हीं मुआहदों व इकरारों में से एक अहम मुआहदा व इकरार वह है जो तमाम अम्बिया अलैहिमुस्सलाम से हमारे रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बारे में लिया गया कि सब

अम्बिया नबियों के खातिम आखिरी नबी की पैरवी करेंगे, और जब मौका पायेंगे उनकी मदद करेंगे, जिसका जिक्र इस आयत में है:

وَإِذَا أَخَذَ اللَّهُ مِيثَاقَ النَّبِيِّنَ لَمَا آتَيْتُكُمْ مِنْ كِتَابٍ وَحِكْمَةٍ

ये तमाम अहद व इकरार और वायदे हक़ तआला की कामिल रहमत के निशानात हैं और मकसद इनका यह है कि इनसान जो बहुत ज़्यादा भूलने वाली मख़्लूक है, अक्सर अपने फ़राईज़ को भूल जाता है, उसको बार-बार इन मुआहदों और इकरारों के ज़रिये होशियार किया गया ताकि वह इनकी ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करके तबाही में न पड़ जाये।

बैअत लेने की हकीकत

अम्बिया अलैहिमुस्सलाम और उनके नायब उलेमा व बुजुर्गों में भी जो बैअत लेने का दस्तूर रहा है वह भी इसी अल्लाह की सुन्नत की पैरवी है। खुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बहुत से मामलों में सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम से बैअत ली, जिनमें से बैअत-ए-रिज़वान का तज़क़िरा क़ुरआने करीम में इन अलफ़ाज़ के साथ मौजूद है:

لَقَدْ رَضِيَ اللَّهُ عَنِ الْمُؤْمِنِينَ إِذْ يَبَايَعُونَكَ تَحْتَ الشَّجَرَةِ

यानी अल्लाह राज़ी हो गया उन लोगों से जिन्होंने एक ख़ास पेड़ के नीचे आपके हाथ पर बैअत की।

हिजरत से पहले मदीना के अन्सार सहाबा की बैअत-ए-अक्बा भी इसी किस्म के मुआहदों में से है।

बहुत से सहाबा-ए-किराम से ईमान और नेक अमल की पाबन्दी पर बैअत ली। सूफ़िया-ए-किराम में जो बैअत का सिलसिला प्रचलित है वह भी ईमान और नेक अमल की पाबन्दी और गुनाहों से बचने के एहतिमाम का अहद है, और अल्लाह की इसी सुन्नत और नबियों के इसी तरीक़े की पैरवी है। इसी वजह से इसमें ख़ास बरकतें हैं कि इनसान को गुनाहों से बचने और शरई अहक़ाम पर अमल करने की हिम्मत और तौफ़ीक़ बढ़ जाती है। बैअत की हकीकत मालूम होने से यह भी वाज़ेह हो गया कि जिस तरह बैअत आम तौर पर नावाफ़िक़ जाहिलों में रिवाज पा गयी है कि किसी बुजुर्ग के हाथ पर हाथ रख देने ही को निजात के लिये काफ़ी समझ बैठते हैं, यह सरासर जहालत है। बैअत एक मुआहदे और इकरार का नाम है, उसका फ़ायदा तभी है जब इस मुआहदे को अमली तौर पर पूरा किया जाये, वरना बबाल का ख़तरा है।

सूरः आराफ़ की गुज़िश्ता आयतों में उन मुआहदों का ज़िक्र था जो बनी इस्राईल से तौरात के अहक़ाम की पाबन्दी के सिलसिले में लिये गये थे। उपरोक्त आयतों में आलमगीर (वैश्विक) मुआहदे का बयान है जो आदम की तमाम औलाद (यानी तमाम इनसानों) से इस दुनिया में आने से भी पहले अज़ल में लिया गया, जो आम ज़बानों पर अहद-ए-अलस्त के नाम से मशहूर व परिचित है।

وَإِذْ أَخَذَ رَبُّكَ مِنْ بَنِي آدَمَ مِنْ ظُهُورِهِمْ ذُرِّيَّتَهُمْ وَأَشْهَدَهُمْ عَلَى أَنْفُسِهِمْ.....الخ

इन आयतों में आदम की औलाद (यानी तमाम इंसानों) के लिये जुरियत का लफ्ज़ इस्तेमाल फरमाया है। इमाम राग़िब अस्फ़हानी ने फरमाया कि यह लफ्ज़ दर अस्त लफ्ज़ 'ज-र-अ' से निकला है जिसके मायने हैं पैदा करने के। कुरआने करीम में कई जगह यह लफ्ज़ इस मायने के लिये इस्तेमाल हुआ है। जैसे एक जगह है:

وَلَقَدْ ذَرَأْنَا لِجَهَنَّمَ كَثِيرًا

इसलिये जुरियत का लफ्ज़ी तर्जुमा मख़्लूक का हुआ। इस लफ्ज़ से इशारा कर दिया गया कि यह अहद उन तमाम लोगों के लिये आम और सब को शामिल था जो आदम अलैहिस्सलाम के वास्ते से इस दुनिया में पैदा किये जायेंगे।

हदीस की रिवायतों में अज़ल (पहले दिन) के इस अहद की कुछ अधिक तफ़सीलात आई हैं। इमाम मालिक, इमाम अबू दाऊद, इमाम तिर्मिज़ी और इमाम अहमद रह. ने मुस्लिम बिन यसार रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि कुछ लोगों ने हज़रत फारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु से इस आयत का मतलब पूछा तो आपने फरमाया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से इस आयत का मतलब पूछा गया था, आप से जो जवाब मैंने सुना है वह यह है कि:

“अल्लाह तआला ने पहले आदम अलैहिस्सलाम को पैदा फरमाया, फिर अपनी क़ुदरत का हाथ उनकी पुश्त पर फेरा तो उनकी पुश्त से जो नेक इंसान पैदा होने वाले थे वे निकल आये तो फरमाया कि इनको मैंने जन्नत के लिये पैदा किया है और ये जन्नत ही के काम करेंगे। फिर दूसरी मर्तबा उनकी पुश्त पर क़ुदरत का हाथ फेरा तो जितने गुनाहगार बुरे किरदार वाले इंसान उनकी नस्ल से पैदा होने वाले थे उनको निकाल खड़ा किया और फरमाया कि इनको मैंने दोज़ख़ के लिये पैदा किया है और ये दोज़ख़ में जाने ही के काम करेंगे।

सहाबा में से एक शख्स ने अर्ज़ किया या रसूलुल्लाह! जब पहले ही जन्नती और दोज़खी मुतैयन कर दिये गये तो फिर अमल किस मक़सद के लिये कराया जाता है? आपने फरमाया कि जब अल्लाह तआला किसी को जन्नत के लिये पैदा फरमाते हैं तो वह जन्नत वालों ही के काम करने लगता है, यहाँ तक कि उसका ख़ात्मा किसी ऐसे ही काम पर होता है जो जन्नत वालों का काम है। और जब अल्लाह तआला किसी को दोज़ख़ के लिये बनाते हैं तो वह दोज़ख़ ही के काम में लग जाता है, यहाँ तक कि उसका ख़ात्मा भी किसी ऐसे ही काम पर होता है जो जहन्नम वालों का काम है।”

मतलब यह है कि जब इंसान को मालूम नहीं कि वह किस तब्क़े (वर्ग) में दाख़िल है तो उसको अपनी ऊर्जा व ताक़त और इख़्तियार ऐसे कामों में खर्च करना चाहिये जो जन्नत वालों के काम हैं, और यही उम्मीद रखनी चाहिये कि वह उन्हीं में से होगा।

और इमाम अहमद रह. की रिवायत में यही मजमून हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है। उसमें इतना और ज़्यादा है कि पहली मर्तबा जो लोग आदम अलैहिस्सलाम की पुश्त से निकले वे सफ़ेद रंग के थे जिनको जन्नत वाले फ़रमाया, और दूसरी मर्तबा काले रंग के थे जिनको जहन्नम वाले करार दिया।

और तिर्मिज़ी में यही मजमून हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है, उसमें यह भी है कि इस तरह क़ियामत तक पैदा होने वाली आदम की औलाद जो ज़हूर में आई उनमें से हर एक की पेशानी पर एक ख़ास किस्म की चमक थी।

अब ग़ौर-तलब (विचारणीय) यह है कि इन हदीसों में तो ज़ुरियत को आदम अलैहिस्सलाम की पुश्त से लेने और निकालने का ज़िक्र है और क़ुरआने करीम के अलफ़ाज़ में बनी आदम यानी आदम अलैहिस्सलाम की औलाद की पुश्त से निकालना ज़िक्र हुआ है। मुवाफ़क़त और जोड़ इसका यह है कि आदम अलैहिस्सलाम की पुश्त से उन लोगों को निकाला गया जो डायरेक्ट आदम अलैहिस्सलाम से पैदा होने वाले थे, फिर उनकी नस्ल की पुश्त से दूसरों को और इसी तरह जिस तरतीब से इस दुनिया में आदम की औलाद पैदा होने वाली थी उसी तरतीब से उनकी पुश्तों से निकाला गया।

हदीस में सब को हज़रत आदम अलैहिस्सलाम की पुश्त से निकालने का मतलब भी यही है कि आदम अलैहिस्सलाम से उनकी औलाद को, फिर उस औलाद से उनकी औलाद को क्रमवार पैदा किया गया।

क़ुरआन मजीद में आदम अलैहिस्सलाम की इस सब ज़ुरियत से अपने रब होने का इकरार लेने में इसकी तरफ़ भी इशारा पाया जाता है कि आदम की यह ज़ुरियत (नस्ल) जो उस वक़्त पुश्तों से निकाली गयी थी सिर्फ़ रूहें नहीं थीं बल्कि रूह और जिस्म का ऐसा मुरक्कब (मिश्रण) था जो जिस्म के बहुत ज़्यादा बारीक ज़रों से बनाया गया था। क्योंकि रब होने और तरबियत की ज़रूरत ज़्यादातर वहीं होती है जहाँ जिस्म व रूह का मुरक्कब (मजमूआ) हो, और जिसको एक हाल से दूसरे हाल की तरफ़ तरक्की करना हो। रूहों की यह शान नहीं, वे तो अब्बल से आख़िर तक एक ही हाल पर होती हैं। इसके अलावा उक्त हदीसों में जो उनके रंग सफ़ेद व काले ज़िक्र हुए हैं या उनकी पेशानी की चमक बयान हुई है इससे भी यही मालूम होता है कि बिना जिस्म के सिर्फ़ रूह नहीं थी वरना रूह का तो कोई रंग नहीं होता, जिस्म ही के साथ यह गुण संबन्धित होते हैं।

और इस पर कोई ताज्जुब न किया जाये कि क़ियामत तक पैदा होने वाले सारे इन्सान एक जगह में किस तरह समा गये। क्योंकि हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु की उक्त हदीस में इसकी भी वज़ाहत है कि उस वक़्त जो ज़ुरियत आदम अलैहिस्सलाम की पीठ से निकाली गयी थी वह अपने उस डीलडोल के साथ नहीं थी जिसमें वे दुनिया में आयेंगे, बल्कि छोटी चींटी की शक्ल व जिस्म में थी, और विज्ञान की तरक्की के इस ज़माने में तो किसी समझदार इन्सान को कोई शुब्हा व संदेह इसमें होना ही नहीं चाहिये कि इतने बड़े डीलडोल का इन्सान एक चींटी के

बराबर जिस्म में कैसे जाहिर हुआ। आज तो एटम के अन्दर सूरज के पूरे सिस्टम के मौजूद होने का तजुर्बा किया जा रहा है, फिल्म के जरिये बड़ी से बड़ी चीज़ को एक बिन्दू की मात्रा में दिखलाया जा सकता है। इसलिये यह क्या मुश्किल है कि हक़ तआला ने इस अहद व इकरार के वक़्त तमाम इनसानों को बहुत छोटे जिस्म में वजूद अता फ़रमाया हो।

अज़ल के अहद के बारे में चन्द सवाल व जवाब

अज़ल के इस अहद के बारे में चन्द चीज़ें और ध्यान देने के काबिल हैं:

अव्वल यह कि अहद व इकरार किस जगह और किस वक़्त लिया गया?

दूसरे यह कि जब इकरार इस हाल में लिया गया कि आदम अलैहिस्सलाम के सिवा कोई दूसरा इनसान पैदा भी न हुआ था तो उनको यह अक्ल व इल्म कैसे हासिल हुआ कि वे अल्लाह तआला को पहचानें और उसके रब होने का इकरार करें। क्योंकि रब होने का इकरार वह कर सकता है जिसने तरबियत की शान को देखा और अनुभव किया हो, और यह देखना और अनुभव इस दुनिया में पैदा होने के बाद ही हो सकता है।

पहला सवाल कि अहद व इकरार किस जगह और किसी वक़्त लिया गया, इसके मुताल्लिक मुफ़्सीरे कुरआन हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से जो रिवायत मज़बूत सनद के साथ इमाम अहमद, इमाम नसाई और इमाम हाकिम ने नक़ल की है वह यह है कि यह अहद व इकरार उस वक़्त लिया गया जब आदम अलैहिस्सलाम को जन्नत से ज़मीन पर उतारा गया, और मक़ाम इस इकरार का वादी-ए-नौमान है जो मैदान-ए-अरफ़ात के नाम से मारुफ़ व मशहूर है। (तफ़्सीरे मज़हरी)

रहा दूसरा सवाल कि यह नई मख़्लूक जिसको अभी जिस्मानी वजूद भी पूरी तरह अता नहीं हुआ वे क्या समझ सकते हैं कि हमारा कोई पैदा करने वाला और परवर्दिगार है, ऐसी हालत में उनसे सवाल करना भी एक किस्म की नाकाबिले बरदाश्त तकलीफ़ है, और वे जवाब भी क्या दे सकते हैं। इसका जवाब यह है कि ख़ालिके कायनात जिसकी कामिल कुदरत ने तमाम इनसानों को एक ज़र्रे की सूरत में पैदा फ़रमाया उसके लिये यह क्या मुश्किल है कि उसने उनको अक्ल व समझ और शऊर व एहसास भी उस वक़्त ज़रूरत के मुताबिक़ दे दिया हो, और यही हकीक़त है कि अल्लाह जल्ल शानुहू ने इस मुख़्तसर वजूद में इनसान की तमाम कुव्वतों को जमा फ़रमा दिया था जिनमें सबसे बड़ी कुव्वत अक्ल व शऊर की है।

इनसान के अपने वजूद में अल्लाह तआला शानुहू की बड़ाई व कुदरत की वो बेशुमार निशानियाँ हैं जिन पर ज़रा भी गौर करने वाला अल्लाह तआला की मारिफ़त से गाफ़िल नहीं रह सकता। कुरआने करीम का इरशाद है:

وَفِي الْأَرْضِ آيَاتٌ لِّلْمُؤْمِنِينَ، وَفِي أَنْفُسِكُمْ أَفَلَا تُبْصِرُونَ.

यानी ज़मीन में अल्लाह तआला की निशानियाँ हैं जानने वालों के लिये, और खुद तुम्हारे वजूद में भी, क्या फिर भी तुम नहीं देखते?

यहाँ एक तीसरा सवाल यह भी हो सकता है कि यह अज़ली अहद व पैमान कितना ही यकीनी और सही क्यों न हो मगर कम से कम यह तो सब को मालूम है कि इस दुनिया में आने के बाद यह अहद किसी को याद नहीं रहा तो फिर अहद का फायदा क्या हुआ?

इसका जवाब यह है कि अव्वल तो इसी इंसानी नस्ल में बहुत से ऐसे अफ़राद भी हैं जिन्होंने यह इक़रार किया है कि हमें यह अहद पूरी तरह याद है। हज़रत जुन्नून मिस्री ने फ़रमाया कि यह अहद व इक़रार मुझे ऐसा याद है गोया इस वक़्त सुन रहा हूँ। और कुछ ने तो यहाँ तक कहा है कि मुझे यह भी याद है कि जिस वक़्त यह इक़रार लिया गया उस वक़्त मेरे आस-पास में कौन-कौन लोग मौजूद थे। हाँ यह ज़ाहिर है कि ऐसे अफ़राद न होने के बराबर और बहुत कम दर्जे में हैं, इसलिये आम लोगों के समझने की बात यह है कि बहुत से काम ऐसे होते हैं जो अपनी ख़ासियत व मिज़ाज के एतिबार से असर रखते हैं, चाहे वह काम किसी को याद रहे या न रहे, बल्कि उसकी ख़बर भी न हो मगर वो अपना असर छोड़ जाते हैं। यह अहद व इक़रार भी ऐसी ही हैसियत रखता है कि दर असल इस इक़रार ने हर इंसान के दिल में हक़ की पहचान का एक बीज डाल दिया जो परवान चढ़ रहा है, चाहे उसको ख़बर हो या न हो, और इसी बीज के फल-फूल हैं कि हर इंसान की फ़ितरत में हक़ तआला की मुहब्बत व अज़मत पाई जाती है, चाहे उसका ज़हूर बुत-परस्ती और मख़्लूक-परस्ती के किसी ग़लत अन्दाज़ में हो। वे चन्द बदनसीब लोग जिनकी फ़ितरत ही बिगड़कर उनका अक्ली ज़ायका ख़राब हो गया और मीठे कड़वे की पहचान जाती रही, उनके अलावा बाकी सारी दुनिया के अरबों इंसान अल्लाह तआला की धुन, ख़्याल और अज़मत से ख़ाली नहीं। फिर चाहे मादी इच्छाओं में मुब्तला होकर या किसी गुमराह सोसाईटी में पड़कर वे उसको भुला दें। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है:

كُلُّ مَوْلُودٍ يُؤَلَّدُ عَلَى الْفِطْرَةِ وَفِي بَعْضِ الرِّوَايَاتِ عَلَى هَذِهِ الْمِلَّةِ. (اخرجه البخارى ومسلم)

यानी हर पैदा होने वाला दीने फ़ितरत यानी इस्लाम पर पैदा होता है, फिर उसके माँ-बाप उसको दूसरे ख़्यालात में मुब्तला कर देते हैं। और सही मुस्लिम की एक हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया- हक़ तआला फ़रमाते हैं कि मैंने अपने बन्दों को हनीफ़ यानी एक खुदा का मानने वाला पैदा किया है, फिर शैतान उनके पीछे लग गये और उनको इस सही रास्ते से दूर ले गये।

इसी तरह ख़ासियत और मिज़ाज के एतिबार से असर रखने वाले बहुत से आमाल व अक़वाल हैं जो इस दुनिया में भी अम्बिया अलैहिमुस्सलाम की तालीम से जारी हैं, जिनका असर यह है कि उनको कोई समझे या न समझे और याद रखे या न रखे वो बहरहाल अपना काम करते और अपना असर दिखलाते हैं।

मसलन बच्चा पैदा होने के साथ ही उसके दाहिने कान में अज़ान और बायें कान में तकबीर कहने की जो सुन्नत हर मुसलमान जानता है और अल्लाह का शुक्र है कि पूरी इस्लामी दुनिया

में जारी है, अगरचे बच्चा न कलिमात के मायने समझता है न उसको बड़ा होने के बाद याद रहता है कि मेरे कान में क्या अलफाज़ कहे गये थे, इसकी हिक्मत यही तो है कि इसके ज़रिये उस पहले दिन के इक़रार को मज़बूती पहुँचाकर कानों की राह से दिल में ईमान का बीज बोया जाता है, और इसी का यह असर देखा जाता है कि बड़ा होने के बाद अगरचे यह इस्लाम और इस्लामियात से कितना ही दूर हो जाये मगर अपने आपको मुसलमान कहता है और मुसलमानों की फ़ेहरिस्त से अलग होने को इन्तिहाई बुरा समझता है। इसी तरह जो लोग कुरआन की भाषा नहीं जानते उनको भी कुरआन की तिलावत का हुक्म शायद इसी हिक्मत पर आधारित है कि इससे भी कम से कम यह छुपा फायदा ज़रूर पहुँच जाता है कि इनसान के दिल में ईमान का नूर ताज़ा हो जाता है।

इसी लिये आयत के आखिर में इरशाद फरमाया:

أَنْ تَقُولُوا يَوْمَ الْقِيَمَةِ إِنَّا كُنَّا عَنْ هَذَا غَافِلِينَ.

यानी यह इक़रार हमने इसलिये लिया है कि तुम कियामत के दिन यूँ न कहने लगो कि हम तो इससे ग़ाफ़िल थे। इशारा इस बात की तरफ़ है कि इस अज़ली सवाल व जवाब से तुम्हारे दिलों में ईमान की बुनियाद ऐसी कायम हो गयी कि ज़रा से भी सोचने-समझने से काम लो तो अल्लाह जल्ल शानुहू के रब होने के इक़रार के सिवा कोई चारा न रहेगा।

इसके बाद दूसरी आयत में इरशाद फरमाया:

أَوْ تَقُولُوا إِنَّمَا أَشْرَكَ آبَاؤُنَا مِنْ قَبْلُ وَكُنَّا ذُرِّيَّةً مِنْ بَيْنِهِمْ أَفَتُهْلِكُنَا بِمَا فَعَلَ الْمُبْطِلُونَ.

यानी यह इक़रार हमने इसलिये भी लिया है कि कहीं तुम कियामत के दिन यह उज़्र न करने लगो कि शिर्क व बुत-परस्ती तो दर असल हमारे बड़ों ने इख़्तियार कर ली थी और हम तो उनके बाद उनकी औलाद थे, खरे-खोटे और सही-ग़लत को नहीं पहचानते थे, इसलिये बड़ों ने जो कुछ किया हमने भी उसी को इख़्तियार कर लिया, तो बड़ों के जुर्म की सज़ा हमें क्यों दी जाये? हक़ तआला ने बतला दिया कि दूसरों के फ़ेल की सज़ा तुमको नहीं दी गयी बल्कि खुद तुम्हारी ग़फलत (लापरवाही) की सज़ा है, क्योंकि पहले दिन के इस इक़रार ने इनसान में एक ऐसी अक्ल व समझ का बीज डाल दिया था कि ज़रा भी ग़ौर व फ़िक्र से काम लेता तो इतनी बात समझ लेना कुछ मुश्किल नहीं था कि ये पत्थर के बुत जिनको हमने अपने हाथों तराशा (बनाया और गढ़ा) है, या आग और पानी, और दरख़्त या कोई इनसान, इनमें से कोई चीज़ भी ऐसी नहीं जिसको कोई इनसान अपना पैदा करने वाला और परवर्दिगार या ज़रूरत पूरी करने वाला और मुश्किलों को हल करने वाला यकीन कर सके।

तीसरी आयत में इसी मज़मून का बयान इस तरह आया है:

وَكَذَلِكَ نَقُصُّلِ الْآيَاتِ وَلَعَلَّهُمْ يَرْجِعُونَ.

यानी हम इसी तरह अपनी निशानियों को खोल-खोलकर बयान किया करते हैं ताकि लोग ग़फलत और ग़लत चलन से बाज़ आ जायें। मुराद यह है कि अल्लाह की आयतों और

निशानियों में ज़रा भी ग़ौर करें तो वे उस अहद व इकरार की तरफ़ लौट आयें जो अज़ल (इनसानी कायनात के पहले दिन) में किया गया था, यानी अल्लाह जल्ल शानुहू के रब होने का इतिराफ़ करने लगे और इसके नतीजे में उसकी फरमाँबरदारी को लाज़िम समझें।

وَإِنَّمَا عَلَيْهِمْ نَبَأُ الذِّكْرِ إِتَيْنَاهُ آيَاتِنَا فَاتَّبَعَهُ الشَّيْطَانُ فَكَانَ
مِنَ الْغَوِينَ ۝ وَلَوْ شِئْنَا لَرَفَعْنَاهُ بِهَا وَلَكِنَّهُ أَخْلَدَ إِلَى الْأَرْضِ وَاتَّبَعَ هَوَاهُ ۚ فَمَثَلُهُ كَمَثَلِ
الْكَلْبِ ۖ إِن تَحِمِلْ عَلَيْهِ يَلْهَثْ أَوْ تَتْرُكْهُ يَلْهَثْ ۚ ذَٰلِكَ مَثَلُ الْقَوْمِ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا ۚ
فَاقْصُصِ الْقَصَصَ لَعَلَّهُمْ يَتَفَكَّرُونَ ۝ سَاءَ مَثَلًا الْقَوْمُ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا ۚ وَأَنفُسُهُمْ
كَانُوا يَظْلِمُونَ ۝

वल्लु अलैहिम् न-बअल्लज़ी आतैनाहु
आयातिना फन्स-ल-छा मिन्हा
फ-अत्व-अहुशैतानु फका-न मिनल्-
गावीन (175) व लौ शिअना
ल-रफ़अनाहु बिहा व लाकिन्नहू
अख़्ल-द इलल्-अर्ज़ि वत्त-ब-अ हवाहु
फ-म-सलुहू क-म-सलिल्-कल्बि इन्
तस्मिल् अलैहि यल्हस् औ तत्रक्हु
यल्हस्, ज़ालि-क म-सलुल्-
कौमिल्लज़ी-न कज़ज़बू बिआयातिना
फवसुसिल्-क-स-स लअल्लहुम्
य-तफक्करुन (176) सा-अ म-स-ल
-निल्कौ मुल्लज़ी-न कज़ज़बू
बिआयातिना व अन्फु-सहुम् कानू
यज़्लिमून् (177)

और सुना दे उनको हाल उस शख्स का
जिसको हमने दी थी अपनी आयतें फिर
वह उनको छोड़ निकला, फिर उसके पीछे
लगा शैतान तो वह हो गया गुमराहों में।
(175) और हम चाहते तो बुलन्द करते
उसका रुतबा इन आयतों की बदौलत,
लेकिन वह तो हो रहा ज़मीन का और
पीछे हो लिया अपनी इच्छा के, तो उसका
हाल ऐसा है जैसे कुत्ता, उस पर तू बोझ
लादे तो हाँपे और छोड़ दे तो हाँपे, यह
मिसाल है उन लोगों की जिन्होंने
झुठलाया हमारी आयतों को, सो बयान
कर यह अहवाल ताकि वे ध्यान करें।
(176) बुरी मिसाल है उन लोगों की कि
झुठलाया उन्होंने हमारी आयतों को और
वे अपना ही नुक़सान करते रहे। (177)

खुलासा-ए-तफसीर

और उन लोगों को (सीख लेने के वास्ते) उस शख्स का हाल पढ़कर सुनाईये कि उसको हमने अपनी आयतों दीं (यानी अहकाम का इल्म दिया) फिर वह उन (आयतों) से बिल्कुल ही निकल गया, फिर शैतान उसके पीछे लग लिया, सो वह गुमराह लोगों में (दाखिल) हो गया। और अगर हम चाहते तो उसको उन (आयतों के तकाजे पर अमल करने) की बदौलत बुलन्द (रुतबे वाला) कर देते। (यानी अगर वह उन आयतों पर अमल करता जिसका तक्दीर से जुड़ा हुआ होना एक मालूम बात है तो उसकी मकबूलियत का रुतबा बढ़ता) लेकिन वह तो दुनिया की तरफ माईल हो गया और (इस मैलान व रुझान के सबब) अपनी नफ्सानी इच्छा की पैरवी करने लगा (और आयतों व अहकाम पर अमल छोड़ दिया), सो (आयतों को छोड़कर जो परेशानी और हमेशा की रुस्वाई उसको नसीब हुई उसके एतिबार से) उसकी हालत कुत्ते के जैसी हो गई कि अगर तू उस पर हमला करे (और मारकर निकाल दे) तब भी हॉपे या उसको (उसकी हालत पर) छोड़ दे तब भी हॉपे (किसी हालत में उसको राहत नहीं। इसी तरह यह शख्स जिल्लत में तो कुत्ते के जैसा हो गया और परेशानी में कुत्ते की इस सिफत में शरीक हुआ। पस जैसी इस शख्स की हालत हुई) यही हालत (आम तौर पर) उन लोगों की है जिन्होंने हमारी आयतों को (जो कि तौहीद व रिसालत पर दलालत करती हैं) झुठलाया (कि हक स्पष्ट हो जाने के बाद सिर्फ अपनी इच्छा परस्ती के सबब हक को छोड़ देते हैं), सो आप इस हाल को बयान कर दीजिए शायद वे लोग (इसको सुनकर) कुछ सोचें। (हकीकत में) उन लोगों की (हालत भी) बुरी हालत है जो (तौहीद व रिसालत को स्पष्ट करने वाली) हमारी आयतों को झुठलाते हैं, और (इस झुठलाने से) वे अपना (ही) नुकसान करते हैं।

मआरिफ व मसाईल

उपरोक्त आयतों में बनी इस्राईल का एक इब्तनाक किस्सा मज़कूर है जिसमें बनी इस्राईल के एक बड़े आलिम और मशहूर मुक्त्तदा (धर्मगुरु) का इल्म व मारिफत के आला मेयार पर होने के बाद अचानक गुमराह व मरदूद हो जाने का वाकिआ मय उसके कारणों के बयान किया गया है, और इसमें बहुत सी इब्तें (सीख लेने की बातें) हैं।

और ताल्लुक इस वाकिए का पिछली आयतों से यह है कि उनमें अहद व इकरार का जिक्र था जो अज़ल (शुरू कायनात) में हक तआला ने तमाम इनसानों से और फिर खास-खास हालात में खास-खास कौमों यहूदियों व ईसाईयों वगैरह से लिये थे, और मज़कूर आयतों में इसका भी जिक्र आया था कि अहद करने वालों में बहुत से लोग इस अहद पर कायम नहीं रहे, जैसे यहूदी लोग कि हज़रत खातमुन्नबिय्यीन सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इस दुनिया में तशरीफ लाने से पहले आपके आने का इन्तिज़ार करते और आपकी सिफात व खूबियाँ लोगों से बयान किया करते और उनकी तस्दीक किया करते थे, मगर जब हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम

तशरीफ़ लाये तो दुनिया के घटिया स्वार्थों की खातिर आप पर ईमान लाने और आपकी पैरवी करने से दूर रहे।

बनी इस्राईल के एक पेशवा आलिम की गुमराही का सबक लेने वाला वाकिआ

इन आयतों में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हुक्म होता है कि आप अपनी कौम के सामने यह वाकिआ पढ़कर सुनाईये जिसमें बनी इस्राईल के एक बड़े आलिम व बुजुर्ग और मशहूर पेशवा का ऐसा ही हाल बुलन्दी के बाद गिरावट और हिदायत के बाद गुमराही का बयान हुआ है, कि बहुत ज्यादा इल्म और अल्लाह की पूरी पहचान हासिल होने के बावजूद, जब नफ़्सानी इच्छायें उस पर ग़ालिब आयीं तो यह सब इल्म व मारिफ़त और मक़बूलियत ख़त्म होकर गुमराह और ज़लील व रुस्वा हो गया।

क़ुरआने करीम में उस शख्स का नाम और कोई पहचान बयान नहीं हुई, तफ़्सीर के इमामों, सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम और ताबिईन से इसके बारे में मुख़्तलिफ़ रिवायतें मज़कूर हैं, जिनमें ज्यादा मशहूर और उक्सर हज़रात के नज़दीक काबिले भरोसा रिवायत वह है जो इब्ने मर्दूया ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से नक़ल की है कि इस शख्स का नाम बल्अम बिन बाऊरा है। यह मुल्के शाम में बैतुल-मुक़दस के करीब किन्आन का रहने वाला था, और एक रिवायत में है कि बनी इस्राईल में से था। अल्लाह तआला की कुछ किताबों का इल्म इसको हासिल था, क़ुरआने करीम में जो इसकी सिफ़त में "अल्लज़ी आतैनाहु आयातिना" फ़रमाया है इससे उसी इल्म की तरफ़ इशारा है।

जब फिरऔन के दरिया में डूबने और मिस्र के फ़तह होने के बाद हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम और बनी इस्राईल को जब्बारीन कौम से जिहाद करने का हुक्म मिला और जब्बारीन ने देखा कि मूसा अलैहिस्सलाम तमाम बनी इस्राईल का लश्कर लेकर पहुँच गये और उनके मुक़ाबिले में कौमे फिरऔन का गर्क व ग़ारत होना उनको पहले से मालूम हो चुका था, तो उनको फ़िक्र हुई और जमा होकर बल्अम बिन बाऊरा के पास आये और कहा कि मूसा अलैहिस्सलाम सख़्त आदमी हैं और उनके साथ बहुत से लश्कर हैं और वे इसलिये आये हैं कि हमको हमारे मुल्क से निकाल दें। आप अल्लाह तआला से यह दुआ करें कि उनको हमारे मुक़ाबले से वापस कर दे। वजह यह थी कि बल्अम बिन बाऊरा को इस्म-ए-आज़म मालूम था वह उसके ज़रिये जो दुआ करता था क़बूल होती थी।

बल्अम ने कहा अफ़सोस है तुम कैसी बात कहते हो, वह अल्लाह के नबी हैं उनके साथ अल्लाह के फ़रिश्ते हैं, मैं उनके खिलाफ़ बददुआ कैसे कर सकता हूँ हालाँकि उनका मक़ाम जो अल्लाह के नज़दीक है वह भी मैं जानता हूँ। अगर मैं ऐसा करूँगा तो मेरा दीन दुनिया दोनों तबाह हो जायेंगे।

उन लोगों ने बेहद जोर डाला तो उस पर बलअम ने कहा कि अच्छा मैं अपने रब से इस मामले में मालूम कर लूँ कि ऐसी दुआ करने की इजाजत है या नहीं। उसने अपने मामूल के मुताबिक मालूम करने के लिये इस्तिखारा या कोई अमल किया, ख़्वाब में उसको बतलाया गया कि हरगिज़ ऐसा न करे। उसने कौम को बतला दिया कि मुझे बददुआ करने से मना कर दिया गया है। उस वक़्त कौमे ज़ब्बारीन ने बलअम को कोई बड़ा हदिया पेश किया जो दर हकीकत रिश्वत थी। उसने हदिया कुबूल कर लिया तो फिर उस कौम के लोग उसके पीछे पड़ गये कि आप ज़रूर यह काम कर दो और इत्तिजा व जिद की हद न रही। कुछ रिवायतों में है कि उसकी बीवी ने मश्विरा दिया कि यह रिश्वत कुबूल कर लें और इनका काम कर दें। उस वक़्त बीवी की रज़ा हासिल करने और माल की मुहब्बत ने उसको अन्धा कर दिया था, उसने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम और बनी इस्राईल के खिलाफ़ बददुआ करनी शुरू की।

उस वक़्त अल्लाह की क़ुदरत का अजीब करिश्मा यह ज़ाहिर हुआ कि वह जो कलिमात बददुआ के हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम और उनकी कौम के लिये कहना चाहता था उसकी ज़बान से वो बददुआ के अलफ़ाज़ खुद अपनी कौम ज़ब्बारीन के लिये निकले। वे चिल्ला उठे कि तुम तो हमारे लिये बददुआ कर रहे हो। बलअम ने जवाब दिया कि यह मेरे इस्त्रियार से बाहर है मेरी ज़बान इसके खिलाफ़ पर क़ादिर नहीं।

नतीजा यह हुआ कि उस कौम पर भी तबाही नाज़िल हुई और बलअम को यह सज़ा मिली कि उसकी ज़बान उसके सीने पर लटक गयी, और अब उसने अपनी कौम से कहा कि मेरी तो दुनिया व आख़िरत तबाह हो गयी, अब दुआ तो मेरी चलती नहीं, लेकिन मैं तुम्हें एक चाल बताता हूँ जिसके ज़रिये तुम मूसा अलैहिस्सलाम की कौम पर ग़ालिब आ सकते हो।

वह यह है कि तुम अपनी हसीन लड़कियों को बना-संवार करके बनी इस्राईल के लश्कर में भेज दो और उनको यह ताकीद कर दो कि बनी इस्राईल के लोग उनके साथ जो कुछ करें करने दें, रुकावट न बनें। ये लोग मुसाफ़िर हैं, अपने घरों से मुदत के निकले हुए हैं, इस तदबीर से मुम्किन है कि ये लोग हरामकारी में मुब्तला हो जायें और अल्लाह तआला के नज़दीक हरामकारी इन्तिहाई नापसन्दीदा चीज़ है, जिस कौम में यह हो उस पर ज़रूर क़हर व अज़ाब नाज़िल होता है, वह विजयी व कामयाब नहीं हो सकती।

बलअम की यह शैतानी चाल उनकी समझ में आ गयी, इस पर अमल किया गया, बनी इस्राईल का एक बड़ा आदमी इस चाल का शिकार हो गया। हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने उसको इस वबाल से रोका मगर वह बाज़ न आया, और शैतानी जाल में मुब्तला हो गया।

जिसका नतीजा यह हुआ कि बनी इस्राईल में सख़्त किस्म का ताऊन फैला जिससे एक रोज़ में सत्तर हज़ार इस्राईली मर गये, यहाँ तक कि जिस शख्स ने बुरा काम किया था उस जोड़े को बनी इस्राईल ने क़त्ल करके मन्ज़रे आम पर टाँग दिया कि सब लोगों को इब्रत (सीख) हासिल हो, और तौबा की, उस वक़्त यह ताऊन दूर हुआ।

क़ुरआन मजीद की उपरोक्त आयतों में इसके मुताल्लिक़ फ़रमाया:

فَانْسَلَخْ مِنْهَا.

यानी हमने अपनी आयतों और उनका इल्म व मारिफ़त उस शख्स को अता किया था लेकिन वह उससे निकल गया। इन्सिलाख़ का लफ़्ज़ असल में जानवर के खाल के अन्दर से या साँप के केंचली के अन्दर से निकल जाने के लिये बोला जाता है। इस जगह आयतों के इल्म को एक लिबास या खाल के साथ मिसाल देकर यह बतलाया गया कि यह शख्स इल्म व मारिफ़त (बुजुर्गी) से बिल्कुल अलग हो गया:

فَاتَّبَعَهُ الشَّيْطَانُ.

यानी पीछे लग गया उसके शैतान। मतलब यह है कि जब तक आयतों का इल्म और अल्लाह का ज़िक्र उसके साथ था, शैतान का काबू उस पर न चल सकता था, जब वह जाता रहा तो शैतान उस पर काबू पाने वाला हो गया।

فَكَانَ مِنَ الْغَوِينَ.

यानी फिर हो गया वह गुमराहों में से। मतलब यह है कि शैतान के काबू में आने का नतीजा यह हुआ कि वह गुमराहों में शामिल हो गया।

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमाया:

وَلَوْ شِئْنَا لَرَفَعْنَاهُ بِهَا وَلَكِنَّهُ أَخْلَدَ إِلَى الْأَرْضِ وَاتَّبَعَ هَوَاهُ.

यानी अगर हम चाहते तो उन्हीं आयतों के ज़रिये उसको बुलन्द रुतबे वाला कर देते, लेकिन वह तो दुनिया की तरफ़ माईल हो गया और नफ़्सानी इच्छाओं की पैरवी करने लगा।

लफ़्ज़ "अख़्लद" 'इख़्लाद' से निकला है, जिसके मायने हैं किसी चीज़ की तरफ़ मैलान के या किसी जगह को लाज़िम पकड़ने के। और 'अर्ज़' के असली मायने ज़मीन के हैं, दुनिया की जितनी चीज़ें हैं वो सब या तो खुद ज़मीन हैं या ज़मीन से मुताल्लिक़ घर, जायदाद, खेती, बाग़ वगैरह हैं, या ज़मीन से ही पैदा होने वाली करोड़ों चीज़ें हैं जो इनसान की ज़िन्दगी और ऐश का मदार हैं। इसलिये लफ़्ज़ 'अर्ज़' बोलकर इस जगह पूरी दुनिया मुराद ली गयी है। इस आयत में इस तरफ़ इशारा कर दिया गया कि अल्लाह की आयतों और उनका इल्म ही असल में इज्ज़त और तरक्की का सबब हैं, लेकिन जो शख्स इन आयतों का अदब व सम्मान न करे और दुनिया की ज़लील इच्छाओं को अल्लाह की आयतों से आगे रखे उसके लिये यही इल्म एक वबाल बन जाता है।

इसी वबाल का ज़िक्र आयत में इस तरह किया गया है:

فَمَثَلُهُ كَمَثَلِ الْكَلْبِ إِنْ تَحْمِلْ عَلَيْهِ يَلْهَثْ أَوْ تَرَكَهْ يَلْهَثْ.

लफ़्ज़ 'लहस' के असल मायने यह हैं कि ज़बान निकालकर सख्ती के साथ साँस लिया जाये।

हर जानदार अपनी जिन्दगी में इसका मोहताज है कि अन्दर की गर्म और जहरीली हवा को बाहर फेंके और बाहर से ताज़ा हवा हलक और नाक के रास्ते से अन्दर ले जाये। इसी पर जानदार की जिन्दगी का मदार है, और अल्लाह तआला ने हर जानदार के लिये इस अहम काम को ऐसा आसान कर दिया कि बिना इरादे और बिना मेहनत के उसकी नाक के नथुनों से अन्दर की हवा बाहर और बाहर की ताज़ा हवा अन्दर जाती है, इसमें न उसको कोई जोर लगाना पड़ता है न किसी इच्छियारी अमल की ज़रूरत पड़ती है, कुदरती और फ़ितरी तौर पर यह काम लगातार खुद-ब-खुद होता रहता है।

जानदारों में सिर्फ़ कुत्ता ऐसा जानवर है जिसको अपने साँस के आने-जाने में ज़बान निकाल कर जोर लगाना और मेहनत करनी पड़ती है, और दूसरे जानवरों की यह कैफ़ियत सिर्फ़ उस वक़्त होती है जबकि उन पर कोई हमला करे या वे थक जायें, या कोई इत्तिफ़ाकी मेहनत उन पर पड़ जाये।

क़ुरआने करीम ने उस शख्स की कुत्ते के साथ मिसाल दी, वजह यह है कि अल्लाह के हुक्म की खिलाफ़वर्जी (उल्लंघन) करने की उसको यह सज़ा मिली थी कि ज़बान मुँह से निकल कर सीने पर लटक गयी थी और वह बराबर कुत्ते की तरह हॉपता था, चाहे कोई उस पर हमला करे या न करे, वह हर हाल में हॉपता रहता है।

उसके बाद फ़रमाया:

ذَلِكَ مَثَلُ الْقَوْمِ الَّذِينَ كَذَبُوا بآيَاتِنَا.

यानी यही मिसाल है उन लोगों की जिन्होंने हमारी आयतों को झुठलाया। हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि इससे मक्का वाले मुराद हैं जो हमेशा से यह तमन्ना किया करते थे कि उनके पास कोई हादी और रहबर आये जो उनको अल्लाह तआला की फ़रमाँबरदारी और नेकी की तरफ़ बुलाये और नेकी के सही तरीके सिखाये। फिर जब वह रहबर आ गये और ऐसी खुली निशानियों के साथ आये कि उनके सच्चे और हक़ होने में ज़रा भी शक़ व शुब्हे की गुंजाईश न रही तो उनको झुठलाने और अल्लाह की आयतों से मुँह फेरने लगे।

और कुछ मुफ़स्सिरिन हज़रात ने फ़रमाया कि इससे मुराद बनी इस्राईल हैं, जो हुज़ूरे पाक के तशरीफ़ लाने से पहले आपकी निशानियाँ और खुसूसियतें तौरात में पढ़कर लोगों को बतलाया करते और आपके तशरीफ़ लाने का इन्तिज़ार किया करते थे, मगर जब आप तशरीफ़ लाये तो सबसे ज़्यादा दुश्मनी और मुख़ालफ़त उन्हीं लोगों ने की और तौरात के अहक़ाम से ऐसे साफ़ निकल गये जैसे बल्अम बिन बाऊरा निकल गया था।

आयत के आख़िर में फ़रमाया:

فَأَقْصَصَ الْقَصَصَ لَعَلَّهُمْ يَتَفَكَّرُونَ.

यानी आप उस शख्स का वाकिआ इन लोगों को सुना दीजिये, शायद ये कुछ सोचें और उसके वाकिए से इब्त (सीख) हासिल करें।

तीसरी आयत में फरमाया कि अल्लाह की आयतों को झुठलाने वालों का बुरा हाल है और ये लोग अपनी ही जानों पर जुल्म कर रहे हैं और किसी का कुछ नहीं बिगाड़ते।

उपरोक्त आयतें और इनमें बयान किये हुए वाकिए में समझ रखने वालों के लिये बहुत से फायदे, इब्रतें और नसीहतें हैं:

अव्वल यह कि किसी शख्स को अपने इल्म व फज़ल और इबादत व नेकी पर नाज़ नहीं करना चाहिये, हालात बदलते और बिगड़ते देर नहीं लगती, जैसे बल्अम बिन बाऊरा का हश्र हुआ। नेकी व इबादत के साथ उस पर अल्लाह तआला का शुक्र और जमाव की दुआ और अल्लाह तआला ही पर भरोसा करना चाहिये।

दूसरे यह कि ऐसे मौकों (जगहों और हालात) और उनकी तरफ़ ले जाने वाली चीज़ों से भी आदमी को परहेज़ करना चाहिये जहाँ उसको अपने दीन की खराबी का अन्देशा हो, खुसूसन माल और बाल-बच्चों की मुहब्बत में इस बुरे अन्जाम को हमेशा सामने रखना चाहिये।

तीसरे यह कि फसादी (बुरे और बिगाड़ में मुब्तला) और गुमराह लोगों के साथ ताल्लुक और उनका हदिया या दावत वगैरह कुबूल करने से भी परहेज़ करना चाहिये, बल्अम इस बला में उनका हदिया कुबूल करने के सबब मुब्तला हुआ।

चौथे यह कि बेहयाई और हरामकारी पूरी कौम के लिये तबाही और बरबादी का सामान होती है, जो कौम अपने आपको बलाओं और आफ़तों से महफूज़ रखना चाहे उस पर लाज़िम है कि अपनी कौम को बेहयाई के कामों से पूरे एहतियाम के साथ रोके वरना खुदा तआला के अज़ाब को दावत देना होगा।

पाँचवें यह कि अल्लाह की आयतों की खिलाफ़वर्ज़ी (नाफ़रमानी) खुद भी एक अज़ाब है और उसकी वजह से शैतान उस पर ग़ालिब आकर हज़ारों ख़राबियों में भी मुब्तला कर देता है, इसलिये जिस शख्स को अल्लाह तआला ने दीन का इल्म अता किया हो उसको चाहिये कि उसकी कद्र करे और अमल के सुधार की फ़िक्र से किसी वक़्त लापरवाह न हो।

مَنْ يَهْدِ اللَّهُ فَهُوَ الْمُهْتَدِى ، وَمَنْ يُضِلْ فَأُولَئِكَ هُمُ الْخٰسِرُونَ ۝ وَلَقَدْ
 ذَرَأْنَا لِجَهَنَّمَ كَثِيرًا مِّنَ الْجِنِّ وَالْإِنسِ ۖ لَهُمْ قُلُوبٌ لَا يَفْقَهُونَ بِهَا ، وَلَهُمْ أَعْيُنٌ
 لَا يُبْصِرُونَ بِهَا ، وَلَهُمْ آذَانٌ لَا يَسْمَعُونَ بِهَا ۚ أُولَئِكَ كَالْأَنْعَامِ بَلْ هُمْ أَضَلُّ أُولَئِكَ هُمُ
 الْغٰفِلُونَ ۝

मंय्यहिदल्लाहु फ़हुवल्-मुह्तदी व
 मंय्युजिलल् फ-उलाइ-क हुमुल्-
 ख़ासिरून (178) व ल-क़द् ज़रअना

जिसको अल्लाह रस्ता दे वही रस्ता पाये
 और जिसको वह बिचला दे सो वही है
 घाटे में। (178) और हमने पैदा किये

लि-जहन्न-म कसीरम् मिनल्-जिन्नि
वल्इन्सि लहुम् कुलूबुल्-ला यफ्कहू-न
बिहा व लहुम् अज्-युनुल्-ला
युब्सिरू-न बिहा व लहुम् आजानुल्-
ला यस्मज्-न बिहा, उलाइ-क
कल्अन्जामि बल् हुम् अजल्लु,
उलाइ-क हुमुल्-ग़ाफ़िलून (179)

दोज़ख़ के वास्ते बहुत से जिन्न और
आदमी, उनके दिल हैं कि उनसे समझते
नहीं, और आँखें हैं कि उनसे देखते नहीं,
और कान हैं कि उनसे सुनते नहीं, वे
ऐसे हैं जैसे चौपाये (पशु) बल्कि उनसे
भी ज्यादा बेराह (रास्ते से भटके हुए),
वही लोग हैं ग़ाफ़िल। (179)

खुलासा-ए-तफ़सीर

जिसको अल्लाह तआला हिदायत करता है सो हिदायत पाने वाला वही होता है, और जिसको वह गुमराह कर दे सो ऐसे ही लोग (हमेशा के) धाटे में पड़ जाते हैं (फिर उनसे हिदायत की उम्मीद करना और हिदायत न होने से गुमगीन होना बेकार है)। और (जब वे लोग अपनी एहसास की कुव्वतों से काम ही नहीं लेते तो हिदायत कहाँ से हो, सो उनके नसीब में तो दोज़ख़ ही है, चुनाँचे) हमने ऐसे बहुत-से जिन्न और इनसान दोज़ख़ (ही में रहने) के लिए पैदा किए हैं, जिनके (नाम को तो) दिल (हैं मगर) ऐसे हैं जिनसे (हक़ बात को) नहीं समझते, (चूँकि उसका इरादा ही नहीं करते) और जिनकी (नाम को तो) आँखें (हैं मगर) ऐसी हैं जिनसे (दलील लेने की नज़र के तौर पर किसी चीज़ को) नहीं देखते, और जिनके (नाम को तो) कान (हैं मगर) ऐसे हैं जिनसे (मुतवज्जह होकर हक़ बात को) नहीं सुनते, (ग़र्ज़ कि) ये लोग (आख़िरत की तरफ़ से बेतवज्जोह होने में) जानवरों की तरह हैं, बल्कि (इस हैसियत से कि चौपायों को आख़िरत की तरफ़ मुतवज्जह होने का पाबन्द तो नहीं बनाया गया सो उनका मुतबज्जह न होना बुरा नहीं और इनको तो इसका हुक्म है फिर भी बेतवज्जोही करते हैं सो इस एतिबार से) ये लोग (उन जानवरों से भी) ज्यादा बेराह हैं (क्योंकि) ये लोग (बावजूद तवज्जोह दिलाने के आख़िरत से) ग़ाफ़िल हैं (बख़िलाफ़ जानवरों के, जैसा कि ऊपर बयान हुआ)।

मआरिफ़ व मसाईल

पहली आयत का मज़मून यह है कि जिसको अल्लाह तआला ने सही रास्ते की हिदायत कर दी वही हिदायत पाने वाला है, और जिनको गुमराह कर दिया तो वही ख़सारे और नुक़सान में पड़ने वाले हैं।

यह मज़मून क़ुरआन मजीद की बहुत सी आयतों में बार-बार आया है, जिसमें बतलाया गया है कि हिदायत और गुमराही और हर ख़ैर व शर, अच्छे बुरे का ख़ालिक सिर्फ़ अल्लाह ज़ल्ल

शानुहू है। इनसान के सामने अच्छे बुरे, सही ग़लत दोनों रास्ते कर दिये गये हैं और इसको एक खास किस्म का इख़्तियार दिया गया है, वह अपने इस इख़्तियार को अगर अच्छे और सही रास्ते में खर्च करता है तो सवाब और जन्नत का मुस्तहक़ होता है, बुरे और ग़लत रास्ते में लगाता है तो अज़ाब और जहन्नम में ठिकाना होता है।

यहाँ यह बात भी काबिले ग़ौर है कि हिदायत पाने वाले को एक-वचन के लफ़्ज़ के साथ ज़िक्र किया गया और गुमराही इख़्तियार करने वालों को बहुवचन के साथ। इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि हिदायत का रास्ता सिर्फ़ एक ही दीने हक़ है जो आदम अलैहिस्सलाम से शुरू होकर ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तक सब नबियों का तरीका रहा है, उसूल सब के साझा और एक हैं, इसलिये हक़ की पैरवी करने वाले चाहे किसी ज़माने में और किसी नबी की उम्मत में और किसी दीन व मज़हब से जुड़े हुए हों वे सब एक हैं।

और गुमराही के हज़ारों रास्ते अलग-अलग हैं इसलिये गुमराहों को बहुवचन के कलिमे के साथ “फ-उलाइ-क हुमुल-खासिरून” फ़रमाया गया। साथ ही इस आयत में यह बात भी काबिले लिहाज़ है कि गुमराही इख़्तियार करने वालों की तो सज़ा और बुरे अन्जाम का ज़िक्र किया गया कि वे लोग ख़सारे में पड़ने वाले हैं, इसके मुक़ाबले में हिदायत पाने वाले हज़रात की किसी खास जज़ा और बदले का ज़िक्र नहीं किया गया, बल्कि सिर्फ़ इतना कहने पर बस किया गया कि वे हिदायत पाने वाले हैं। इसमें इशारा है इस बात की तरफ़ कि हिदायत ऐसी अज़ीमुश्शान नेमत है जो दीन व दुनिया की सारी नेमतों और रहमतों पर हावी है, दुनिया में पाकीज़ा ज़िन्दगी और आख़िरत में जन्नत की कभी न फना होने वाली नेमतें सब हिदायत ही के साथ वाबस्ता हैं। इस लिहाज़ से हिदायत खुद एक भारी नेमत और बहुत बड़ा इनाम है जिसके बाद उन नेमतों के शुमार करने की ज़रूरत नहीं रहती जो हिदायत के सिले (बदले और इनाम) में मिलने वाली हैं।

इसकी मिसाल ऐसी है जैसे कोई बड़ी हुकूमत व सल्तनत का मालिक किसी शख्स को यह कह दे कि तुम हमारे मुक़रब (खास और क़रीबी) हो, हम तुम्हारी बात सुनें और मानेंगे, तो हर जानने वाला जानता है कि इससे बड़ा कोई ओहदा व पद या कोई दौलत उसके लिये नहीं हो सकती।

इसी तरह जब अल्लाह तआला ने किसी शख्स को हिदायत-याफ़ता होने का ख़िताब दे दिया तो उसको दीन व दुनिया की सारी नेमतें हासिल हो गयीं। इसी लिये पहले के बुजुर्गों ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला का ज़िक्र व इबादत खुद ही अपनी जज़ा और अल्लाह तआला की अज़ीमुश्शान अता है, जो शख्स ज़िक्रुल्लाह में मशगूल है वह उसी वक़्त अल्लाह तआला का इनाम नक़द पा रहा है, आख़िरत व जन्नत का इनाम दूसरी नेमत है। इसी से क़ुरआने करीम की उस आयत का मतलब भी समझ में आ जाता है जिसमें फ़रमाया:

حَزَاءٌ مِّن رَّبِّكَ عَطَاءٌ

कि एक ही चीज़ को जज़ा भी फ़रमाया गया और अता भी, हालाँकि दोनों चीज़ें अलग अलग हैं। जज़ा किसी अमल का मुआवज़ा होता है और अता बिला-मुआवज़ा।

इसमें जज़ा व अज़ा की हकीकत बतला दी कि जिस चीज़ को तुम जज़ा और अज़ल का बदला समझते हो वह भी दर हकीकत हमारी अज़ा व इनाम ही है, क्योंकि जिस अज़ल का यह बदला मिला है वह अज़ल खुद हमारा इनाम था।

दूसरी आयत में भी इसी मज़मून की अधिक वज़ाहत है कि हिदायत और गुमराही दोनों अल्लाह तआला के कब्ज़ा-ए-कुदरत में हैं, जिसको हिदायत मिल गयी उससे सारे काम हिदायत ही के मुनासिब होते हैं। और जो गुमराही में पड़ गया उसके सारे काम उसी अन्दाज़ के होते हैं।

इसलिये फरमाया:

وَلَقَدْ ذَرَأْنَا لِجَهَنَّمَ كَثِيرًا مِّنَ الْجِنِّ وَالْإِنسِ، لَهُمْ قُلُوبٌ لَا يَفْقَهُونَ بِهَا وَلَهُمْ أَعْيُنٌ لَا يُبْصِرُونَ بِهَا، وَلَهُمْ أُذُنٌ

لَا يَسْمَعُونَ بِهَا.

यानी हमने जहन्नम के लिये पैदा किया है बहुत से जिन्नात और इनसानों को जिनकी पहचानें ये हैं कि उनके पास समझने के लिये दिल और देखने के लिये आँखें और सुनने के लिये कान सब कुछ मौजूद हैं, जिनको वे सही इस्तेमाल करें तो सीधे रास्ते को पा लें और नफे नुकसान को समझ लें, लेकिन उनका यह हाल है कि न वे दिलों से बात समझते हैं, न आँखों से देखने की चीज़ों को देखते हैं, और न कानों से सुनने की चीज़ों को सुनते हैं।

इसमें यह बतला दिया कि अगरचे अल्लाह की तक्दीर एक छुपा राज़ है जिसका किसी को इस दुनिया में इल्म नहीं होता, लेकिन उसकी निशानियों से कुछ अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। जहन्नम वालों की निशानी यह है कि वे खुदा तआला की दी हुई कुव्वतों को उनके सही कामों में न लगायें, सही इल्म व मारिफ़त के लिये जो अल्लाह जल्ल शानुहू ने अक्ल और आँख कान अज़ा फ़रमाये हैं उनको वे ग़लत जगह और ग़लत चीज़ों में लगाते हैं और असल मक़सद जिसके ज़रिये हमेशा की और न ख़त्म होने वाली राहत व दौलत मिल सकती थी उसकी तरफ़ ध्यान नहीं देते।

आयत में काफ़िरों के न समझने, न देखने और न सुनने का मतलब

इस आयत में उन लोगों की समझ-बूझ और देखना व सुनना सब चीज़ों की बिल्कुल नफ़ी की गयी है, कि ये न कुछ समझते हैं, न कोई चीज़ देखते हैं, न कोई कलाम सुनते हैं, हालाँकि वास्तविकता और अनुभव यह है कि ये लोग न पागल व दीवाने होते हैं जो कुछ न समझें और न नाबीना होते हैं कि कुछ न देखें और न बहरे होते हैं कि कुछ न सुनें, बल्कि देखा यह जाता है कि दुनिया के कामों में ये अक्सर लोगों से ज़्यादा चालाक और होशियार नज़र आते हैं।

मगर बात यह है कि अल्लाह तआला ने अपनी मख़्लूक़ात में से हर मख़्लूक़ के अन्दर उसकी ज़रूरत के मुताबिक़ और उसकी ज़िन्दगी के मक़सद के मुनासिब अक्ल व शऊर रखा है।

जिन चीज़ों को हम बेअक्ल और बेहिस व बेशऊर कहते और समझते हैं दर हकीकत वो भी एहसास व समझ और अक्ल व शऊर से ख़ाली नहीं, अलबत्ता ये चीज़ें उनमें उसी मात्रा में हैं जो मात्रा उनके वजूद के मक़सद को पूरा करने के लिये काफी हो। सब से कम अक्ल व शऊर और हिस जमादात यानी मिट्टी और पत्थर वगैरह में है, जिनको न कुछ बढ़ना है न अपनी जगह से निकलना और चलना फिरना, वो इतनी कम है कि उनमें ज़िन्दगी के आसार का पहचानना भी बहुत दुश्वार है। इससे कुछ अधिक नबातात (पेड़-पौधों) में है, जिनके वजूद के मक़सद में बढ़ना, फलना फूलना दाख़िल है। उसी के मुनासिब अक्ल व समझ उनको दे दिया गया। उसके बाद हैवानात का नम्बर है, जिनके वजूद के मक़सद में बढ़ना भी दाख़िल है, चलना फिरना भी और चल-फिरकर अपनी ग़िज़ा हासिल करना भी, और नुक़सानदेह व घातक चीज़ों से बचना भागना भी, और नस्ल पैदा करना भी। इसलिये उनको जो अक्ल व शऊर मिला वह औरों से ज़्यादा मिला, मगर उतना ही जिससे वे अपने खाने पीने, पेट भरने, सोने जागने वगैरह का इन्तिज़ाम कर लें और दुश्मन से अपनी जान बचा लें। सब के बाद इनसान का नम्बर है जिसके वजूद का मक़सद सब चीज़ों से आगे यह है कि अपने पैदा करने वाले और पालने वाले को पहचाने, उसकी मर्जी के मुताबिक़ चले, उसकी नापसन्द चीज़ों से परहेज़ करे, सारी मख़्लूक़ात की हकीक़तों और असलियत पर नज़र डाले और उनसे काम ले, और हर चीज़ के नतीजों व अन्जाम को समझे, खरे-खोटे अच्छे-बुरे को परखे, बुराईयों से बचे, अच्छाईयों को इस्ति़यार करे। इसी इनसानी जाति की यह ख़ुसूसियत है कि इसको तरक्की करने का बड़ा मैदान मिला है, जो दूसरी जातियों को हासिल नहीं। यह जब तरक्की करता है तो फ़रिश्तों की सफ़ से आगे मक़ाम पाता है, इसी की यह ख़ुसूसियत है कि इसके आमाल व अफ़आल पर जज़ा व सज़ा है। इसी लिये इसको तमाम किस्म की मख़्लूक़ात से ज़्यादा अक्ल व शऊर मिला है ताकि वह आम हैवानों के स्तर से बुलन्द होकर अपने वजूद के मक़सद के मुनासिब कामों में लगे। अल्लाह तआला की दी हुई मख़सूस अक्ल व शऊर और उसकी बख़्शी हुई देखने और सुनने की ताक़त व सलाहियत को उसी काम में ख़र्च करे।

जब यह हकीक़त सामने आ गयी तो एक इनसान का समझना, देखना, सुनना दूसरे जानवरों के समझने, देखने, सुनने से अलग होना चाहिये। अगर उसने भी सिर्फ़ उन्हीं चीज़ों में अपनी अक्ल और देखने व सुनने की ताक़तों को लगा दिया जिनमें दूसरे जानवर लगाते हैं और जो काम इनसान के लिये मख़सूस था कि हर चीज़ के परिणामों और अन्जाम पर नज़र रखे और बुराईयों से बचे, भलाईयों को इस्ति़यार करे, उन पर ध्यान न दिया, तो उसको बावजूद अक्ल रखने के बेअक्ल, बावजूद देखने वाला होने के अंधा, बावजूद सुनने वाला होने के बहरा ही कहा जायेगा। इसी लिये क़ुरआने करीम ने एक दूसरी जगह ऐसे लोगों को “सुम्मुम् बुक्मुन् उम्युन्” यानी बहरे, गूंगे, अन्धे फ़रमाया है।

इसमें इसका बयान नहीं कि वे अपने खाने-पीने, रहने-सहने और सोने-जागने की ज़रूरतों को समझते नहीं, या यह कि उनके मुताल्लिक़ चीज़ों को देखते सुनते नहीं, बल्कि खुद क़ुरआने

करीम ने उन लोगों के बारे में एक जगह फरमाया:

يَعْلَمُونَ ظَاهِرًا مِّنَ الْحَيَاةِ الدُّنْيَا وَهُمْ عَنِ الْآخِرَةِ هُمْ غَفْلُونَ.

यानी ये लोग दुनिया की ज़िन्दगी की ज़ाहिरी हालत को खूब जानते हैं मगर आखिरत से गाफिल व जाहिल हैं। और फिरज़ौन व हामान और उनकी कौमों के बारे में फरमाया:

وَكَانُوا مُسْتَبْصِرِينَ.

यानी ये लोग बड़े रोशन-ख़्याल थे। मगर चूँकि इनकी दानाई व बीनाई को खर्च करने का सारा मौका सिर्फ़ उतना ही रहा जितना आम जानवरों का होता है कि अपने तन बदन की ख़िदमत कर लें, रूह की ख़िदमत और उसकी राहत के मुताल्लिक कुछ न सोचा न देखा, इसलिये वे इन आर्थिक चीज़ों और दुनियावी मामलात में कितनी ही तरक्की कर लें, चाँद और मंगल ग्रह को फ़तह कर लें, नक़ली सय्यारों से दुनिया की फ़िज़ा को भर दें लेकिन यह सब ख़िदमत सिर्फ़ तन बदन के ढाँचे और पेट ही की है, इससे आगे नहीं जो रूह के लिये हमेशा के चैन व राहत का सामान बने, इसलिये क़ुरआने करीम उनको अन्धा बहरा कहता है और इस आयत में उनके समझने, देखने, सुनने की नफ़ी करता है। मतलब यह है कि उन लोगों को जो समझना चाहिये था वह नहीं समझे, जो देखना चाहिये था वह नहीं देखा, जो सुनना चाहिये था वह नहीं सुना, और जो कुछ समझा और देखा और सुना वह आम हैवानों के स्तर की चीज़ें थीं, जिनमें ग़धा घोड़ा, बैल, बकरी सब शरीक हैं।

इसी लिये उक्त आयत के आख़िर में इन लोगों के मुताल्लिक फरमाया:

أُولَٰئِكَ كَالْأَنْعَامِ.

कि ये लोग चौपायों (जानवरों) की तरह हैं कि बदन के सिर्फ़ मौजूदा ढाँचे की ख़िदमत में लगे हुए हैं, रोटी और पेट इनकी सोच और उड़ान की आख़िरी हद है। फिर फरमाया:

بَلْ هُمْ أَضَلُّ.

बल्कि ये लोग चौपायों और जानवरों से भी ज़्यादा बेवक़ूफ़ हैं। वजह यह है कि जानवर शरई अहक़ाम के मुक़ल्लफ़ (पाबन्द) नहीं, उनके लिये जज़ा व सज़ा नहीं, उनका मक़सद अगर सिर्फ़ मौजूदा ज़िन्दगी और इसके ढाँचे की दुरुस्ती तक रहे तो सही है, मगर इनसान को तो अपने आमाल का हिसाब देना है और इस पर जज़ा व सज़ा होने वाली है, इसलिये इसका इन कामों को अपना मक़सद समझ बैठना जानवरों से ज़्यादा बेवक़ूफी है। इसके अलावा जानवर अपने आका व मालिक की ख़िदमत पूरी बजा लाते हैं और नाफ़रमान इनसान अपने रब और मालिक की ख़िदमत में कमी व कोताही करता है, इसलिये वह जानवरों से ज़्यादा बेवक़ूफ़ और गाफ़िल ठहरा। इसी लिये फरमाया “उलाइ-क हुमुल-गाफ़िलून” कि वही लोग गाफ़िल व लापरवाह हैं।

وَلِلّٰهِ الْأَسْمَاءُ الْحُسْنٰى فَادْعُوْهُ بِهَا وَذَرُوا الَّذِيْنَ يُلْحِدُوْنَ فِيْٓ اَسْمَائِهِ�ْ
سَيَجْزُوْنَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝

व लिल्लाहिल्-अस्माउल्-हुस्ना
फ़दअूहु बिहा व जरुल्लजी-न
युल्हिदू-न फी अस्माइही, सयुज्जौ-न
मा कानू यअूमलून (180)

और अल्लाह के लिये हैं सब अच्छे नाम
सो उसको पुकारो वही नाम कहकर और
छोड़ दो उनको जो टेढ़ी राह पर चलते हैं
उसके नामों में, वे बदला पाकर रहेंगे
अपने किये का। (180)

खुलासा-ए-तफसीर

और अच्छे-अच्छे (मख्सूस) नाम अल्लाह तआला ही के लिये (खास) हैं, सो उन (नामों) से अल्लाह तआला ही को नामित किया करो और (दूसरों पर उन नामों का हुक्म मत किया करो बल्कि) ऐसे लोगों से ताल्लुक भी न रखो जो उसके (ज़िक्र हुए) नामों में ग़लत रास्ता इख्तियार करते हैं (इस तरह से कि अल्लाह के ग़ैर पर उनका हुक्म लगाते हैं जैसा कि वे लोग उनको माबूद और खुदा एतिकाद के साथ कहते थे) उन लोगों को उनके किये की ज़रूर सज़ा मिलेगी।

मआरिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में जहन्नम वालों का ज़िक्र था जिन्होंने अपनी अक्ल व हवास (एहसास की कुव्वतों) को अल्लाह तआला की निशानियों के देखने, सुनने और समझने सोचने में खर्च नहीं किया और आखिरत की हमेशा वाली और कभी न खत्म होने वाली ज़िन्दगी के लिये कोई सामान जमा नहीं किया, जिसका नतीजा यह हो गया कि वे खुदा की दी हुई अक्ल व समझ को जाया करके ज़िक्रुल्लाह के ज़रिये अपने नफ़्स के सुधार व फ़लाह से ग़ाफ़िल हो गये और जानवरों से ज्यादा गुमराही और बेवकूफी में मुस्तला हो गये।

मज़कूर आयत में उनके रोग का इलाज और दर्द की दवा बतलाई गयी है कि वह अल्लाह तआला से दुआ और ज़िक्रुल्लाह की अधिकता है। फ़रमाया:

وَلِلّٰهِ الْأَسْمَاءُ الْحُسْنٰى فَادْعُوْهُ بِهَا.

यानी अल्लाह ही के लिये हैं अच्छे नाम, तो तुम पुकारो उसको उन्हीं नामों से।

अस्मा-ए-हुस्ना की वज़ाहत

अच्छे नाम से मुराद वो नाम हैं जो कमाल की सिफ़ात के आला दर्जे पर दलायत करने वाले हैं, और ज़ाहिर है कि किसी कमाल का आला दर्जा जिससे ऊपर कोई दर्जा न हो सके वह सिर्फ़

खालिके कायनात अल्लाह तआला ही को हासिल है, उसके सिवा किसी मख्लूक को यह मकाम हासिल नहीं हो सकता, क्योंकि हर कामिल से दूसरा शख्स उससे ज्यादा कामिल और फाजिल (श्रेष्ठ) से अफजल हो सकता है। कुरआन के फरमान:

فَوْقَ كُلِّ ذِي عِلْمٍ عَلِيمٌ

का यही मतलब है कि हर इल्म वाले से बढ़कर कोई दूसरा अलीम (जानने वाला) हो सकता है। इसी लिये इस आयत में ऐसी इबारत इस्तियार की गयी जिससे मालूम हो कि ये अस्मा-ए-हुस्ना (अच्छे नाम) सिर्फ अल्लाह ही की खुसूसियत है जो दूसरों को हासिल नहीं।

فَادْعُوهُ بِهَا

यानी जब यह मालूम हो गया कि अल्लाह तआला के लिये अस्मा-ए-हुस्ना (अच्छे-अच्छे नाम) हैं और वो नाम उसी की ज़ात के साथ खास हैं तो लाज़िम है कि अल्लाह तआला ही को पुकारो और उन्हीं अच्छे नामों के साथ पुकारो।

पुकारना या बुलाना दुआ का तर्जुमा है, और दुआ का लफ़्ज़ कुरआन में दो मायने के लिये इस्तेमाल होता है- एक अल्लाह का ज़िक्र, उसकी तारीफ़ व प्रशंसा, उसकी पाकी और बुजुर्गी के साथ, दूसरी आवश्यकताओं और मुश्किलों के वक़्त अल्लाह तआला से अपनी हाजत तलब करना और मुसीबतों व आफ़तों से निजात और मुश्किलों की आसानी की दरख़्वास्त करना। इस आयत में “फ़दऊहु बिहा” का लफ़्ज़ दोनों मायने को शामिल है, तो आयत के मायने यह हुए कि तारीफ़ व प्रशंसा और तस्बीह के लायक भी सिर्फ़ उसी की पाक ज़ात है और मुश्किलों व मुसीबतों से निजात और ज़रूरत पूरी करना भी सिर्फ़ उसी के कब्ज़े में है, इसलिये तारीफ़ व खूबी बयान करो तो उसी की करो, और ज़रूरत पूरी करने और मुश्किलों को हल करने के लिये पुकारो तो उसी को पुकारो।

और पुकारने का तरीका भी यह बतला दिया कि उन्हीं अस्मा-ए-हुस्ना (अच्छे-अच्छे नामों) के साथ पुकारो जो अल्लाह तआला के लिये साबित हैं।

दुआ के कुछ आदाब

इसलिये इस आयत से दो हिदायतें उम्मत को मिलीं- एक यह कि अल्लाह तआला के सिवा कोई ज़ात असली तारीफ़ व प्रशंसा या मुश्किलों को दूर करने और ज़रूरतों को पूरी करने के लिये पुकारने के लायक नहीं, दूसरे यह कि उसके पुकारने के लिये भी हर शख्स आज़ाद नहीं कि जो अलफ़ाज़ चाहे इस्तियार कर ले, बल्कि अल्लाह तआला ने अपने फज़ल व करम से हमें वो अलफ़ाज़ भी बतला दिये जो उसकी शान के लायक हैं और हमें पाबन्द कर दिया कि उन्हीं अलफ़ाज़ के साथ उसको पुकारें, अपनी तजवीज़ से दूसरे अलफ़ाज़ न बदलें, क्योंकि इनसान की कुदरत नहीं कि तमाम पहलुओं की रियायत करके उसकी शान के मुनासिब अलफ़ाज़ बना सके।

बुख़ारी व मुस्लिम ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत की है कि रसूलुल्लाह

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया- अल्लाह तआला के निन्नानवे नाम हैं जो शख्स उनको महफूज (याद) कर ले वह जन्नत में दाखिल होगा। ये निन्नानवे नाम इमाम तिमिजी और इमाम हाकिम ने तफ्सील के साथ बतलाये हैं।

अल्लाह तआला के ये निन्नानवे नाम पढ़कर जिस मकसद के लिये दुआ की जाये कुबूल होती है। अल्लाह तआला का वायदा है:

أَدْعُونِي أَجِبْ لَكُمْ.

यानी तुम मुझे पुकारो तो मैं तुम्हारी दुआ कुबूल करूँगा। हाजतों व मुश्किलों के लिये दुआ से बढ़कर कोई तदबीर ऐसी नहीं जिसमें किसी नुकसान का खतरा न हो और नफा यकीनी हो, अपनी हाजतों (ज़रूरतों) के लिये अल्लाह जल्ल शानुहू से दुआ करने में किसी नुकसान का तो कोई शुब्हा ही नहीं, और एक नफा नक़द है कि दुआ एक इबादत है, उसका सवाब दुआ करने वाले के नामा-ए-आमाल में लिखा जाता है। हदीस में है:

اللَّعَاءُ مَخُ الْعِبَادَةِ.

यानी दुआ करना इबादत का मग़ज़ है। और जिस मकसद के लिये उसने दुआ की है अक्सर तो जूँ-का-तूँ मकसद पूरा हो जाता है, और कभी ऐसा भी होता है कि जिस चीज़ को उसने अपना मकसद बनाया था वह उसके हक़ में मुफ़ीद न थी, अल्लाह तआला अपने फज़ल से उसकी दुआ को दूसरी तरफ़ फेर देते हैं जो उसके लिये मुफ़ीद हो। और अल्लाह की हम्द व तारीफ़ के साथ अल्लाह तआला का ज़िक्र करना ईमान की ग़िज़ा है जिसके नतीजा में इनसान का ताल्लुक व मुहब्बत अल्लाह तआला से कायम हो जाती है और दुआ की तकलीफ़ें अगर पेश भी आयें तो मामूली और आसान हो जाती हैं।

इसी लिये बुख़ारी, मुस्लिम, तिमिजी, नसाई की सही हदीसों में आया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया- जिस शख्स को कोई ग़म या बेचैनी या मुश्किल काम पेश आये उसको चाहिये कि ये कलिमात पढ़े, सब मुश्किलें आसान हो जायेंगी। वे कलिमात ये हैं:

لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ الْعَظِيمُ الْحَلِيمُ، لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ رَبُّ الْعَرْشِ الْعَظِيمِ.

لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ رَبُّ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ وَرَبُّ الْعَرْشِ الْكَرِيمِ.

ला इला-ह इल्लल्लाहुल् अज़ीमुल् हलीम। ला इला-ह इल्लल्लाहु रब्बुल-अर्शिल् अज़ीम।

ला इला-ह इल्लल्लाहु रब्बुस्समावाति वल्लअर्जि व रब्बुल-अर्शिल् करीम।

और मुस्तद्रक हाकिम में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मज़कूर है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत फातिमा ज़हरा रज़ियल्लाहु अन्हा से फरमाया कि तुम्हारे लिये इससे क्या चीज़ बाधा और रुकावट है कि तुम मेरी वसीयत को सुन लो (और उस पर अमल किया करो)। वह वसीयत यह है कि सुबह शाम यह दुआ कर लिया करो:

يَا حَيُّ يَا قَيُّوْمُ بِرَحْمَتِكَ أَسْتَغِيْثُ أَصْلِحْ لِيْ شَأْنِيْ كُلَّهُ وَلَا تَكِلْنِيْ إِلَى نَفْسِيْ طَرْفَةَ عَيْنٍ.

या हय्यु या कय्युमु बि-रह्यति-क अस्तगीसु अस्तिह ली शजनी कुल्लहू व ला तकिलनी
इला नफसी तरफ-त ऐनी।

यह दुआ भी तमाम हाजतों व मुश्किलों के लियें बेनजीर है।

खुलासा यह है कि उपरोक्त आयत के इस जुमले में दो हिदायतें उम्मत को दी गयीं- एक यह कि तारीफ व सना और मुश्किलों व हाजतों के लिये सिर्फ अल्लाह तआला को पुकारो मख्तूक़ात को नहीं। दूसरे यह कि उसको उन्हीं नामों से पुकारो जो अल्लाह तआला के लिये साबित हैं, उसके अलफ़ाज़ न बदलो।

आयत के अगले जुमले में इसी के बारे में इरशाद फरमाया:

وَذُرُوا الَّذِينَ يُلْحِنُونَ فِي أَسْمَائِهِ سِجْرُونَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ.

यानी छोड़िये उन लोगों को जो अल्लाह तआला के अस्मा-ए-हुस्ना (अच्छे-अच्छे नामों) में इल्हाद यानी बेदीनी और ग़लत चलन अपनाते हैं, उनको उनकी ग़लत रविश और टेढ़ी चाल का बदला मिल जायेगा। इल्हाद के मायने लुग़त में मैलान और दरमियानी राह से हट जाने के आते हैं, इसी लिये क़ब्र की लहद को लहद कहा जाता है, क्योंकि वह दरमियान से हटी हुई होती है। कुरआने करीम में लफ़्ज़ 'इल्हाद' कुरआन के सही मायनों को छोड़कर इधर-उधर का मलतब बयान करने और रद्दोबदल करने के मायने में बोला जाता है।

इस आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह हिदायत दी गयी है कि आप ऐसे लोगों से ताल्लुक भी छोड़ दें जो अल्लाह तआला के अस्मा-ए-हुस्ना (अच्छे-अच्छे नामों) में इल्हाद यानी रद्दोबदल और ग़लत राह इख़्तियार करने से काम लेते हैं।

अल्लाह के नामों में टेढ़ी चाल चलने की मनाही और उसकी मुख़्तलिफ़ सूरतें

अल्लाह के नामों में तहरीफ़ (रद्दोबदल) या ग़लत राह इख़्तियार करने की कई सूरतें हो सकती हैं, वो सब इस आयत के मज़मून में दाख़िल हैं।

अव्वल यह कि अल्लाह तआला के लिये वह नाम इस्तेमाल किया जाये जो कुरआन व हदीस में अल्लाह तआला के लिये साबित नहीं। उलेमा-ए-हक़ का इत्तिफ़ाक़ है कि अल्लाह तआला के नाम और सिफ़ात में किसी को यह इख़्तियार नहीं कि जो चाहे नाम रख दे, या जिस सिफ़त के साथ चाहे उसकी तारीफ़ व सना करे, बल्कि सिर्फ़ वही अलफ़ाज़ होने ज़रूरी हैं जो कुरआन व सुन्नत में अल्लाह तआला के लिये बतौर नाम या सिफ़त के ज़िक्र किये गये हैं। मसलन अल्लाह तआला को करीम कह सकते हैं, सख़ी नहीं कह सकते। नूर कह सकते हैं अब्यज़ (सफ़ेद) नहीं कह सकते। शाफी कह सकते हैं तबीब (चिकित्सक) नहीं कह सकते, क्योंकि ये दूसरे अलफ़ाज़ मन्कूल नहीं अगरचे इन्हीं अलफ़ाज़ के मायनों वाले हैं।

दूसरी सूत नामों में इल्हाद की यह है कि अल्लाह तआला के जो नाम कुरआन व सुन्नत से साबित हैं उनमें से किसी नाम को नामुनासिब समझकर छोड़ दे, इसका बेअदबी होना ज़ाहिर है।

किसी शख्स को अल्लाह तआला के मख्सूस नाम से नामित या मुखातब करना जायज़ नहीं

तीसरी सूत यह है कि अल्लाह तआला के मख्सूस नामों को किसी दूसरे शख्स के लिये इस्तेमाल करे। मगर इसमें यह तफ्सील है कि अल्लाह के पाक नामों में से कुछ नाम ऐसे भी हैं जिनको खुद कुरआन व हदीस में दूसरे लोगों के लिये भी इस्तेमाल किया गया है, और कुछ वो हैं जिनको सिवाय अल्लाह तआला के और किसी के लिये इस्तेमाल करना कुरआन व हदीस से साबित नहीं। तो जिन नामों का इस्तेमाल गैरुल्लाह के लिये कुरआन व हदीस से साबित है वो नाम तो औरों के लिये भी इस्तेमाल हो सकते हैं, जैसे रहीम, रशीद, अली, करीम, अज़ीज़ वगैरह, और अस्मा-ए-हुस्ना में से वो नाम जिनका गैरुल्लाह के लिये इस्तेमाल करना कुरआन व हदीस से साबित नहीं वो सिर्फ अल्लाह तआला के लिये मख्सूस हैं, उनको गैरुल्लाह (अल्लाह के अलावा) के लिये इस्तेमाल करना उक्त इल्हाद में दाखिल और नाजायज़ व हराम है। मसलन रहमान, सुब्बान, रज़्ज़ाक, ख़ालिक, ग़फ़्फ़ार, कुद्दूस वगैरह।

फिर इन मख्सूस नामों को गैरुल्लाह के लिये इस्तेमाल करना अगर किसी ग़लत अक़ीदे की बिना पर है कि उसको ही ख़ालिक या रज़्ज़ाक समझकर इन अलफ़ाज़ से ख़िताब कर रहा है तब तो ऐसा कहना कुफ़्र है, और अगर अक़ीदा ग़लत नहीं महज़ बेफ़िक़्री या बेसमझी से किसी शख्स को ख़ालिक, रज़्ज़ाक या रहमान, सुब्बान कह दिया तो यह अगरचे कुफ़्र नहीं मगर मुशिरकाना अलफ़ाज़ होने की वजह से सख़्त गुनाह है।

अफ़सोस है कि आजकल आम मुसलमान इस ग़लती में मुब्तला हैं। कुछ लोग तो वो हैं जिन्होंने इस्लामी नाम ही रखने छोड़ दिये, उनकी सूत व सीरत से तो पहले भी मुसलमान समझना उनका मुश्किल था, नाम से पता चल जाता था, अब नये नाम अंग्रेज़ी तर्ज़ के रखे जाने लगे। लड़कियों के नाम इस्लामी औरतों के तर्ज़ के खिलाफ़ ख़दीजा, आयशा, फ़ातिमा के बजाय, नसीम, शमीम, शहनाज़, नजमा, परवीन होने लगे। इससे ज़्यादा अफ़सोस की बात यह है कि जिन लोगों के इस्लामी नाम हैं, अब्दुरहमान, अब्दुल-ख़ालिक, अब्दुरज़्ज़ाक, अब्दुल-ग़फ़्फ़ार, अब्दुल-कुद्दूस वगैरह, उनमें कमी और उनको छोटा करने का यह ग़लत तरीक़ा इस्तिथार कर लिया गया कि सिर्फ़ आखिरी लफ़्ज़ उनके नाम की जगह पुकारा जाता है। रहमान, ख़ालिक, रज़्ज़ाक, ग़फ़्फ़ार का ख़िताब इनसानों को दिया जा रहा है, और इससे ज़्यादा ग़ज़ब की बात यह है कि कुदरतुल्लाह को अल्लाह साहब और कुदरते-खुदा को खुदा साहब के नाम से पुकारा जाता है, यह सब नाजायज़ व हराम और बड़ा गुनाह है, जितनी मर्तबा यह लफ़्ज़ पुकारा जाता है

उतनी ही मर्तबा गुनाह-ए-कबीरा (बड़े गुनाह) के करने का जुर्म होता है और सुनने वाला भी गुनाह से खाली नहीं रहता।

यह बेलज्जत और बेफायदा गुनाह ऐसा है जिसको हमारे हजारों भाई अपने रात-दिन का मशगला बनाये हुए हैं और कोई फिक्र नहीं करते कि इस ज़रा सी हरकत का अन्जाम कितना खतरनाक है, जिसकी तरफ आयते मजकूरा के आखिरी जुमले में तंबीह फरमाई गयी है:

سَيُخْرَوْنَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ

यानी उनको अपने किये का बदला दिया जायेगा। इस बदले को स्पष्ट नहीं किया गया, इस गैर-स्पष्ट रखने से सख्त अज़ाब की तरफ इशारा है।

जिन गुनाहों में कोई दुनियावी फायदा या लज्जत व राहत है उनमें तो कोई कहने वाला यह भी कह सकता है कि मैं अपनी इच्छा या ज़रूरत से मजबूर हो गया, मगर अफ़सोस यह है कि आज मुसलमान ऐसे बहुत से फुज़ूल गुनाहों में भी अपनी जहालत या ग़फ़लत से मुब्तला नज़र आते हैं जिनमें न दुनिया का कोई फायदा है न अदना दर्जे की कोई राहत व लज्जत है। वजह यह है कि हलाल व हराम और जायज़ व नाजायज़ की तरफ ध्यान ही न रहा। अल्लाह तआला हमें इससे अपनी पनाह में रखे।

وَمِمَّنْ خَلَقْنَا أُمَّةً يَهْدُونَ بِالْحَقِّ وَبِهِ يَعْدِلُونَ ۝

الَّذِينَ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا سَنَسْتَدْرِجُهُمْ مِّنْ حَيْثُ لَا يَعْلَمُونَ ۝ وَأُمْلِي لَهُمْ إِنَّ كَيْدِي مَتِينٌ ۝ أَوَلَمْ يَتَفَكَّرُوا لِمَ يَأْتِيهِمُ مِنَ جَنَّةٍ مَّاءٌ هُوَ لَآ نَذِيرٌ مُّبِينٌ ۝ أَوَلَمْ يَنْظُرُوا فِي مَلَكُوتِ السَّمٰوٰتِ وَالْأَرْضِ وَمَا خَلَقَ اللَّهُ مِنْ شَيْءٍ ۚ وَأَنْ عَسَىٰ أَنْ يَكُونَ قَدِ اقْتَرَبَ أَجَلُهُمْ ۚ فَبِأَيِّ حَدِيثٍ بَعْدَهُ يُؤْمِنُونَ ۝

व मिम्-मन् खलक्ना उम्मतुय्-
यह्दू-न बिल्हक्कि व बिही
यअ्दिलून (181) ❀

वल्लज्जी-न कज़्जबू बिआयातिना
सनस्तदरिजुहुम् मिन् हैसु ला
यअल्तमून (182) व उम्ली लहुम्
इन्-न कैदी मतीन (183) अ-व लम्
य-तफक्करू मा बिसाहिबिहिम् मिन्

और उन लोगों में कि जिनको हमने पैदा
किया है एक जमाअत है कि राह बतलाते
हैं सच्ची और उसी के मुवाफ़िक़ इन्साफ़
करते हैं। (181) ❀

और जिन्होंने झुठलाया हमारी आयतों को
हम उनको आहिस्ता-आहिस्ता पकड़ेंगे
ऐसी जगह से जहाँ से उनको ख़बर भी न
होगी। (182) और मैं उनको ढील दूँगा
बेशक मेरा दाव पक्का है। (183) क्या
उन्होंने ध्यान नहीं किया कि उनके रफ़ीक़

जिन्नतिन्, इन् हु-व इल्ला नज़ीरुम्-
मुबीन (184) अ-व लम् यन्ज़ुरु फी
म-लकूतिस्समावाति वल्अर्जि व मा
खा-लक़ल्लाहु मिन् शैइव्-व अन्
असा अय्यकू-न क़दिक्-त-र-ब
अ-जलुहुम् फ़बिअय्यि हदीसिम्-
बअ़्दहू युअ्मिनुन (185)

(साथी) को कुछ भी जुनून नहीं, वह तो
साफ़ डराने वाला है। (184) क्या उन्होंने
नज़र नहीं की सल्तनत में आसमान और
ज़मीन की, और जो कुछ पैदा किया है
अल्लाह ने हर चीज़ से और इसमें कि
शायद करीब आ गया हो उनका वायदा,
सो उसके बाद किस बात पर ईमान
लायेंगे। (185)

खुलासा-ए-तफ़्सीर

और हमारी मख़्लूक (जिन्नात और इंसानों) में (सब गुमराह ही नहीं बल्कि) एक जमाअत (उनमें) ऐसी भी है जो (दीन-ए-) हक़ (यानी दीन इस्लाम) के मुवाफ़िक़ (लोगों को) हिदायत (भी) करते हैं और उसी के मुवाफ़िक़ (अपने और ग़ैरों के मामलों में) इन्साफ़ भी करते हैं। और जो लोग हमारी आयतों को झुठलाते हैं, हम उनको धीरे-धीरे (जहन्नम की तरफ़) लिये जा रहे हैं, इस तरह पर कि उनको ख़बर भी नहीं। और (दुनिया में अज़ाब नाज़िल कर डालने से) उनको में मोहलत देता हूँ, इसमें कोई शक़ नहीं कि मेरी तदबीर बड़ी मज़बूत है। क्या उन लोगों ने इस बात पर ग़ौर न किया कि उनका जिनसे वास्ता है उनको ज़रा भी जुनून नहीं, वह तो (अज़ाब से) सिर्फ़ एक साफ़-साफ़ डराने वाले हैं (जो कि बुनियादी तौर पर पैग़म्बर का काम होता है)। और क्या उन लोगों ने ग़ौर नहीं किया आसमानों और ज़मीन के आलम में, और साथ ही दूसरी चीज़ों में जो अल्लाह तआला ने पैदा की हैं (ताकि उनको तौहीद का तार्किक इल्म हासिल हो जाता) और इस बात में (भी ग़ौर नहीं किया) कि मुम्किन हो सकता है कि उनकी मुद्दत करीब ही आ पहुँची हो? (ताकि अज़ाब के अन्देशे से डरते और उससे बचने की फ़िक्र करते, और उस फ़िक्र से दीन-ए-हक़ मिल जाता और मुद्दत व वक़्त के करीब होने की संभावना हर वक़्त है और जब क़ुरआन जैसे प्रभावी कलाम से उनकी सोच तक को हरकत नहीं होती तो) फिर इस (क़ुरआन) के बाद कौनसी बात पर ये लोग ईमान लाएँगे।

मअ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में जहन्नम वालों के हालात व सिफ़ात और उनकी गुमराही का यह सबब बयान किया था कि उन्होंने खुदा की दी हुई अक्ल व समझ और फ़ितरी कुव्वतों को उनके असली काम में न लगाया और ज़ाया कर दिया। फिर इसके बाद उनके मर्ज़ का इलाज अल्लाह के नामों और ज़िक़ुल्लाह के ज़रिये बतलाया गया था। उक्त आयतों में से पहली आयत में उनके

मुकाबले में ईमान वालों और अहले हक का जिक्र है, जिन्होंने खुदा की दी हुई अक़ल से काम लेकर सही रास्ता इस्तिस्नान किया। इरशाद है:

وَمِنْ خَلْقِنَا أُمَّةٌ يُهْتَدُونَ بِالْحَقِّ وَبِهِ يَعْدِلُونَ.

यानी जिन लोगों को हमने पैदा किया है उनमें एक उम्मत ऐसी है जो हक के मुवाफ़िक़ हिदायत करते हैं यानी लोगों को सही रास्ते की तरफ़ रहनुमाई करते हैं, और जब उनमें आपस में कोई झगड़ा या मुक़द्दिमा पेश आये तो अपने झगड़ों का फैसला भी हक़ यानी अल्लाह के क़ानून के मातहत करते हैं।

इमामे तफ़सीर इब्ने जरीर रह. ने अपनी सनद के साथ नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस आयत को तिलावत करके इरशाद फ़रमाया कि यह उम्मत जिसका जिक्र इस आयत में है, मेरी उम्मत है, जो अपने सब झगड़ों के फैसले हक़ व इन्साफ़ यानी अल्लाह के क़ानून के मुताबिक़ करेंगे और लेने-देने के तमाम मामलों में हक़ व इन्साफ़ को सामने रखेंगे।

और अब्द बिन हुमैद की एक रिवायत में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम को ख़िताब करके फ़रमाया कि यह आयत तुम्हारे हक़ में आई है और तुमसे पहले भी एक उम्मत को यह सिफ़ात अता हो चुकी है, फिर यह आयत तिलावत फ़रमाई:

وَمِنْ قَوْمِ مُوسَى أُمَّةٌ يَهْتَدُونَ بِالْحَقِّ وَبِهِ يَعْدِلُونَ.

मुराद यह है कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की उम्मत में भी एक जमाअत इन सिफ़ात को अपने अन्दर रखती थी कि लोगों की रहनुमाई में और आपसी झगड़ों के निपटारे में हक़ यानी अल्लाह के क़ानून की मुक़म्मल पैरवी करती थी, और उम्मते मुहम्मदिया को भी हक़ तअ़ाला ने इन सिफ़ात में विशेष दर्जा बख़्शा है।

खुलासा इसका दो ख़स्ततें हैं- एक यह कि दूसरे लोगों का नेतृत्व और रहनुमाई या मश्वरे में शरीअत की पैरवी करें। दूसरे यह कि अगर कोई झगड़ा आपस में पेश आ जाये तो उसका फैसला शरीअत के क़ानून के मुताबिक़ करें।

गौर किया जाये तो यही दो सिफ़तें हैं जो किसी क़ौम और जमाअत की ख़ैर व बेहतरी और दुनिया व आख़िरत की कामयाबी की ज़ामिन हो सकती हैं कि सुलह व जंग और दोस्ती व दुश्मनी की हर हालत में उनका मक़सद (लक्ष्य) हक़ व इन्साफ़ ही हो, अपने दोस्तों और साथियों को काम का जो तरीक़ा बतलायें उसमें भी हक़ की पैरवी हो और दुश्मनों और मुकाबले वालों के झगड़ों में भी हक़ के आगे अपने सारे ख़्यालात व इच्छाओं को एक तरफ़ रख दें, जिसका खुलासा है हक़-परस्ती।

उम्मते मुहम्मदिया की दूसरी तमाम उम्मतों पर फ़ज़ीलत और बरतरी का राज़ और इनकी विशेष ख़ूबी और पहचान यही हक़-परस्ती है कि इन्होंने अपनी पूरी ज़िन्दगी को हक़ के ताबे

बनाया। जिस जमाअत या पार्टी का नेतृत्व और रहनुमाई की वह भी ख़ालिस हक़ के तकाज़ों के मुताबिक़ की, अपनी ज़ाती इच्छाओं और ख़ानदानी या कौमी रस्मों को उसमें बिल्कुल भी दख़ल नहीं दिया, और आपसी झगड़ों में भी हमेशा हक़ के सामने गर्दन झुका दी। सहाबा व ताबिईन की पूरी तारीख़ इसकी प्रतीक और गवाह है।

और जब से इस उम्मत में इन दो ख़स्ततों (गुणों) के अन्दर ख़लल और नुक़सान आया उसी वक़्त से इसकी गिरावट और बरबादी शुरू हो गयी।

बहुत ही रंज व अफ़सोस का मक़ाम है कि आज यह हक़-परस्त उम्मत ख़ालिस इच्छा-परस्त बनकर रह गयी है। इसकी पार्टियाँ और जमाअतें बनती हैं तो वे भी ख़ालिस नफ़्सानी स्वार्थों और दुनिया के हकीर व ज़लील फ़ायदे की बुनियादों पर बनती हैं, एक दूसरे को जिन चीज़ों की पाबन्दी की तरफ़ दावत दी जाती है वो भी ख़ालिस नफ़्सानी इच्छा या ख़ानदानी रस्में होती हैं, कोई उनके खिलाफ़ करने लगे तो सब उसका मुक़ाबला करने को तैयार हैं, लेकिन हक़ व शरीअत के मुताबिक़ चलने का न कहीं मुआहदा होता है न कोई उसकी पैरवी करने के लिये किसी को कहता है, न उसकी खिलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करने से किसी के माथे पर बल आता है।

इसी तरह आपसी झगड़ों और विवादी मुक़द्दिमों में दुनिया की चन्द दिन के संभावित नफ़े की खातिर अल्लाह के क़ानून को छोड़कर शैतानी क़ानूनों के ज़रिये फैसला कराने पर राज़ी हैं।

इसी का यह बुरा अन्जाम है जो हर जगह हर मुल्क में नज़र आ रहा है कि यह उम्मत हर जगह ज़लील व रुस्वा नज़र आती है, इल्ला माशा-अल्लाह। इन्होंने हक़ से मुँह मोड़ा, हक़ ने इनकी नुसरत व इमदाद से रुख़ फेर लिया।

हक़-परस्ती के बजाय इच्छा-परस्ती इख़्तियार करके व्यक्तिगत तौर पर किसी-किसी फ़र्द को जो दुनियावी फ़ायदे मिल गये वे उस पर मगन हैं, मगर पूरी कौम व मिल्लत की तबाही जो उसका लाज़िमी नतीजा है उसका कोई देखने सुनने वाला नहीं। अगर पूरी उम्मत की कामयाबी व तरक्की आँखों के सामने हो तो इसके सिवा कोई राह नहीं कि इस कुरआनी उसूल को मज़बूती से पकड़ा जाये, खुद भी इस पर अमल किया जाये और दूसरों को भी इसका पाबन्द बनाने की कोशिश की जाये।

दूसरी आयत में इस शुब्हे का जवाब है कि जब कौमी तरक्की का मदार हक़-परस्ती और हक़ व इन्साफ़ की पैरवी पर है तो दूसरी ग़ैर-मुस्लिम कौमों जो हक़ से पूरी तरह दूर हैं वे क्यों दुनिया में फलती-फूलती नज़र आती हैं? जवाब यह है:

وَالَّذِينَ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا سَنَسْتَدْرِجُهُمْ مِنْ حَيْثُ لَا يَعْلَمُونَ.

यानी हम अपनी आयतों के झुठलाने वालों को अपनी हिक्मत व रहमत की बिना पर एक दम नहीं पकड़ते बल्कि आहिस्ता-आहिस्ता धीरे-धीरे पकड़ते हैं, जिसकी उनको ख़बर भी नहीं होती। इसलिये दुनिया में काफ़िर व बदकार लोगों के मालदार होने या इज़्ज़त व रुतबा हासिल होने से धोखा न खाया जाये, क्योंकि वह दर हकीक़त उनके लिये कोई भलाई का सामान नहीं, बल्कि हक़ तआला की तरफ़ से इस्तिदराज है। इस्तिदराज के मायने दर्जा-ब-दर्जा, आहिस्ता

आहिस्ता कोई काम करने के आते हैं, कुरआन व सुन्नत की परिभाषा में इस्तिदराज इसको कहा जाता है कि बन्दे के गुनाह पर दुनिया में कोई तकलीफ़ व मुसीबत न आये बल्कि जैसे-जैसे वह गुनाह में आगे बढ़ता जाये, दुनियावी माल व असबाब और बढ़ते जायें, जिसका अन्जाम यह होता है कि उसको अपने बुरे आमाल और ग़लत चाल पर किसी वक़्त तंबीह नहीं होती और ग़फलत से आँख नहीं खुलती और अपने बुरे आमाल उसको बुरे नज़र नहीं आते कि वह उनसे बाज़ आने की फ़िक्र करे।

इनसान की यह हालत उस ला-इलाज रोगी के जैसी है जो बीमारी ही को शिफ़ा और ज़हर ही को अमृत समझकर इस्तेमाल करने लगे, जिसका नतीजा यह होता है कि कभी तो दुनिया ही में ही यह शख्स अचानक अज़ाब में पकड़ लिया जाता है और कभी मौत तक यह सिलसिला चलता है, आखिरकार मौत ही उसकी मस्ती और बेहोशी का ख़ात्मा करती है और हमेशा का अज़ाब उसका ठिकाना बन जाता है।

कुरआने करीम ने अनेक सूरतों और आयतों में इस इस्तिदराज का ज़िक्र फ़रमाया है। एक जगह इरशाद है:

فَلَمَّا نَسُوا مَا ذُكِّرُوا بِهِ فَتَحْنَا عَلَيْهِمُ أَبْوَابَ كُلِّ شَيْءٍ حَتَّىٰ إِذَا فَرِحُوا بِمَا أُوتُوا أَخَذْنَاهُم بَغْتَةً فَإِذَا هُمْ مُبْلِسُونَ

यानी जब वे लोग उस चीज़ को भुला बैठे जो उनको याद दिलाई गयी थी तो हमने उन पर हर चीज़ के दरवाज़े खोल दिये, यहाँ तक कि वे अपनी मिली हुई नेमत व दौलत पर अकड़ गये तो हमने उनको अचानक अज़ाब में पकड़ लिया तो वे छुटकारे से नाउम्मीद होकर रह गये।

यह इस्तिदराज काफ़िरों के साथ भी होता है और गुनाहगार मुसलमानों के साथ भी। इसी लिये सहाबा और पहले बुजुर्गों को जब कभी दुनिया की नेमत व दौलत हक़ तअ़ाला ने अता फ़रमाई तो ख़ौफ़ के ग़लबे की वजह से इस्तिदराज से डरा करते थे कि कहीं यह दुनिया की दौलत हमारे लिये इस्तिदराज (अल्लाह की तरफ़ से एक ढील) न हो।

तीसरी आयत में इसी इस्तिदराज का बयान है:

وَأَمْلَىٰ لَهُمْ إِنَّ كَيْدِي مَتِينٌ

यानी मैं उन गुनाहगारों को मोहलत देता रहता हूँ। मेरी तदबीर बड़ी मज़बूत है।

चौथी आयत में काफ़िरों के इस बेहूदा ख़्याल की तरदीद है कि अल्लाह की पनाह! हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जुनून (पागलपन) में मुब्तला हैं। फ़रमाया:

أَلَمْ يَتَفَكَّرُوا مَا بِصَاحِبِهِمْ مِنْ جُنَّةٍ ۚ إِنَّ هُوَ إِلَّا نَذِيرٌ مُّبِينٌ

यानी क्या उन लोगों ने ग़ौर व फ़िक्र (सोच-विचार) नहीं किया कि उनका जिनसे साबक़ा है उनको ज़रा भी जुनून नहीं। उनकी अक़ल व हिक्मत के सामने तो सारी दुनिया के अक़लमन्द व विद्वान हैरान हैं, उनके बारे में जुनून का गुमान करना खुद जुनून (पागलपन) है। हुज़ूरे पाक

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तो साफ़-साफ़ हकीकतों को बयान करके आखिरत और अल्लाह के अज़ाब से डराने वाले हैं।

पाँचवीं आयत में उनको दो चीज़ों की तरफ़ विचार की दावत दी गयी है- अव्वल अल्लाह तआला की मख़्लूक आसमान व ज़मीन और उनके बीच की बेशुमार अजीब-ग़रीब चीज़ों में ग़ौर व फ़िक्र। दूसरे अपनी उम्र की मुदत और अमल के मौक़े और फ़ुर्सत पर नज़र करने की।

कुदरत की कारीगरी और बनाई हुई चीज़ों में ज़रा भी अक्ल व समझ के साथ ग़ौर किया जाये तो एक मोटी समझ वाले इन्सान को भी अल्लाह तआला की कुदरत की शान की पहचान और नज़ारा होने लगता है, और ज़रा गहरी नज़र करने वाले के लिये तो दुनिया का ज़र्ज़र कादिर-ए-मुतलक और हकीम-ए-मुतलक की तारीफ़ व सना का तस्बीह पढ़ने वाला नज़र आने लगता है, जिसके बाद अल्लाह तआला पर ईमान लाना एक फ़ितरी तकाज़ा बन जाता है।

और अपनी उम्र की मुदत में ग़ौर व फ़िक्र का यह नतीजा है कि जब इन्सान यह समझ ले कि मौत का वक़्त मालूम नहीं कब आ जाये तो ज़रूरी कामों के पूरा करने में ग़फ़लत और लापरवाही से बाज़ आ जाता है, और ध्यान से तैयारी के साथ काम करने लगता है। मौत से ग़फ़लत ही इन्सान को तमाम ख़ुराफ़ात और बुराईयों में मुब्तला रखती है, और मौत का ध्यान ही वह चीज़ है जो इन्सान को बहुत से अपराधों और बुराईयों से बचने पर तैयार कर देता है, इसी लिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया:

اَكْثَرُوا ذِكْرَ هَٰذِمِ اللَّذَاتِ الْمَوْتِ.

यानी तुम उस चीज़ को ख़ूब ज़्यादा याद किया करो जो सब लज़्ज़तों को ख़त्म कर देने वाली है, यानी मौत।

इसी लिये उक्त आयत में फ़रमाया गया:

اَوَلَمْ يَنْظُرُوا فِي مَلَكُوتِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا خَلَقَ اللّٰهُ مِنْ شَيْءٍ وَّاَنْ عَسٰى اَنْ يَكُوْنَ قَدِ اقْتَرَبَ اَجَلُهُمْ.

लफ़्ज़ “मलकूत” मुल्क के मायने में मुबालग़े के लिये बोला जाता है, इसके मायने हैं ज़बरदस्त और बड़ा मुल्क। आयत के मायने यह हैं कि इन इन्कारियों ने क्या अल्लाह तआला के अज़ीम और विशाल मुल्क में ग़ौर नहीं किया जो आसमानों और ज़मीनों और बेशुमार चीज़ों को अपने अन्दर घेरे हुए है, और क्या इस पर नज़र नहीं की कि यह हो सकता है कि इनकी मौत करीब हो जिसके बाद ईमान व अमल की फ़ुर्सत ख़त्म हो जायेगी।

आयत के आखिर में फ़रमाया:

فَبَايَ حَدِيثٍ بَعْدَهُ يُؤْمِنُونَ.

यानी जो लोग क़ुरआने करीम की ऐसी स्पष्ट और खुली निशानियों से भी ईमान नहीं लाते वे और किस चीज़ पर ईमान लायेंगे?

مَنْ يُضِلِّ اللَّهُ فَلَا هَادِيَ لَهُ وَيَذَرُهُمْ فِي طُغْيَانِهِمْ

يَعْمَهُونَ ۝ يَسْأَلُونَكَ عَنِ السَّاعَةِ أَيَّانَ مُرْسَاهَا قُلْ إِنَّمَا عِلْمُهَا عِنْدَ رَبِّي لَا يُجَلِّيهَا
لَوْفَتِهَا إِلَّا هُوَ ثَقُلَتْ فِي السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ لَا تَأْتِيكُمُ إِلَّا بَغْثَةً يَسْأَلُونَكَ كَأَنَّكَ حَفِيفٌ عَنْهَا ۚ
قُلْ إِنَّمَا عِلْمُهَا عِنْدَ اللَّهِ وَلَكِنْ أَكْثَرُ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ۝

मंयुज्लिलिल्लाहु फला हादि-य लहु,
व य-जरुहुम् फी तुग्यानिहिम्
यअमहून (186) यस्अलून-क
अनिस्सा-अति अय्या-न मुरसाहा,
कुल् इन्नमा अिल्मुहा अिन्-द रब्बी
ला युजल्लीहा लिवकितहा इल्ला
हु-व। सकुलत् फिस्समावाति वल्अर्जि,
ला तअतीकुम् इल्ला बरत-तन्,
यस्अलून-क कअन्न-क हफिय्युन्
अन्हा, कुल् इन्नमा अिल्मुहा
अिन्दल्लाहि व लाकिन्-न
अक्सरन्नासि ला यअलमून (187)

जिसको अल्लाह बिचलाये उसको कोई नहीं राह दिखलाने वाला, और अल्लाह छोड़े रखता है उनको उनकी शरारत में हैरान व परेशान। (186) तुझसे पूछते हैं क़ियामत को कि क्या है उसके कायम होने का वक़्त? तू कह उसकी ख़बर तो मेरे रब ही के पास है, वही खोल दिखायेगा उसको उसके वक़्त पर। वह भारी बात है आसमानों और ज़मीन में, जब तुम पर आयेगी तो बेख़बर आयेगी। तुझसे पूछने लगते हैं कि गोया तू उसकी तलाश में लगा हुआ है। तू कह दे कि उसकी ख़बर है ख़ास अल्लाह के पास लेकिन अक्सर लोग नहीं समझते। (187)

खुलासा-ए-तफ़सीर

जिसको अल्लाह तआला गुमराह करे उसको कोई राह पर नहीं ला सकता (फिर गुम करना बेकार है)। और अल्लाह तआला उनको उनकी गुमराही में भटकते हुए छोड़ देता है (ताकि एक दफ़ा ही पूरी सज़ा दे)। लोग आप से क़ियामत के बारे में सवाल करते हैं कि वह कब आएगी? आप फ़रमा दीजिये कि उसका (यह) इल्म (कि कब वाक़े होगी) सिर्फ़ मेरे रब ही के पास है (दूसरे किसी को इसकी इत्तिला नहीं), उसके वक़्त पर उसको सिवाय उसके (यानी अल्लाह के) कोई और ज़ाहिर न करेगा (और वह ज़ाहिर करना यह होगा कि उसको कायम कर देगा, उस वक़्त सब को पूरी ख़बर हो जायेगी, उससे पहले वैसे किसी को बतलाने के तौर पर भी उसको ज़ाहिर न किया जायेगा, क्योंकि) वह आसमान और ज़मीन में बड़ा भारी (हादसा) होगा, इसलिये कि वह तुम पर बिल्कुल अचानक (बेख़बरी में) आ पड़ेगी (ताकि वह जिस तरह जिस्मों पर

उनको हालत बदलने और बिखेर देने में भारी है, इसी तरह दिलों पर भी उसका भारी असर होगा, और पहले से बतला देने में यह बात नहीं रहती। और पूछना भी तो उनका मामूली तौर पर नहीं बल्कि वे आप से (इस तरह) (लिपटकर और हृद से आगे बढ़कर) पूछते हैं (जैसे) गोया आप उसकी तहकीकात कर चुके हैं (और तहकीकात के बाद आपको उसका पूरा इल्म हो गया है) आप फ़रमा दीजिये कि उसका (ज़िक्र हुआ) खास इल्म अल्लाह ही के पास है, लेकिन अक्सर लोग (इस बात को) नहीं जानते (कि कुछ चीज़ों के इल्म हक़ तआला ने अपने इल्म के ख़ज़ाने में छुपाकर रखे हैं, नबियों को भी विस्तार से इत्तिला नहीं दी। पस उसके न जानने से किसी नबी के क़ियामत के निर्धारित वक़्त के पता न होने से मज़ाज़ल्लाह उसके नबी न होने की दलील समझते हैं। वे यह समझते हैं कि नबी होने के लिये क़ियामत के निर्धारित वक़्त की जानकारी भी ज़रूरी है, और जब यह नहीं तो इसको नुबुव्वत भी हासिल नहीं, हालाँकि उनकी यह सोच और धारणा ही ग़लत है कि नबी के लिये उसका इल्म ज़रूरी है)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

इनसे पहली आयतों में काफ़िरों व इनकारियों की ज़िद व हठधर्मी और कुदरत की स्पष्ट निशानियों के होते हुए ईमान न लाने का ज़िक्र था, यह मज़मून रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिये उम्मत और आम मख़्लूक के साथ आपकी हृद से ज़्यादा शफ़क़त व रहमत की बिना पर इन्तिहाई रंज व ग़म का सबब हो सकता था इसलिये ऊपर ज़िक्र हुई तीन आयतों में से पहली आयत में आपको तसल्ली देने के लिये इरशाद फ़रमाया कि:

जिसको अल्लाह तआला गुमराह कर दे उसको कोई राह पर नहीं ला सकता और अल्लाह तआला ऐसे लोगों को गुमराही में भटकते हुए छोड़ देता है।

मतलब यह है कि उन लोगों की हठधर्मी और हक़ के कुबूल करने से मुँह मोड़ लेने पर आप गुमगीन न हों क्योंकि आपकी ज़िम्मेदारी और फ़रीज़ा इतना ही था कि हक़ बात को साफ़ साफ़ प्रभावी अन्दाज़ में पहुँचा दें, वह आप पूरा कर चुके, आपकी ज़िम्मेदारी ख़त्म हो चुकी, अब किसी का मानना या न मानना यह एक तकदीरी मामला है जिसमें आपको दख़ल नहीं, फिर आप गुमगीन क्यों हों।

इस सूरत के मज़ामीन में से तीन मज़मून बहुत अहम थे- तौहीद, रिसालत और आख़िरत। और यही तीन चीज़ें ईमान और इस्लाम की असल बुनियादें हैं, इनमें से तौहीद व रिसालत का मज़मून पिछली आयतों में तफ़सील के साथ आ चुका है, मज़क़ूर आयतों में से आख़िरी दो आयतें आख़िरत व क़ियामत के मज़मून के बयान में हैं जिनके नाज़िल होने का एक खास वाकिआ है जो इमामे तफ़सीर इब्ने जरीर और अब्द बिन हुमैद रह. ने हज़रत क़तादा की रिवायत से नक़ल किया है कि मक्का के क़ुरैश ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मज़ाक़ उड़ाने के तौर पर मालूम किया कि आप क़ियामत के आने की ख़बरें देते और लोगों को उससे डराते हैं, अगर आप सच्चे हैं तो मुतैयन करके बतलाईये कि क़ियामत किस सन् और किस

तारीख में आने वाली है, ताकि हम उसके आने से पहले कुछ तैयारी कर लें। आपके और हमारे बीच जो रिश्तेदारी के ताल्लुकात हैं उनका तकाज़ा भी यह है कि अगर आप आम तौर से लोगों को बतलाना नहीं चाहते तो कम से कम हमें बतला दीजिये। इस पर यह आयत नाज़िल हुई:

يَسْأَلُونَكَ عَنِ السَّاعَةِ.....الْحُ

इसमें लफ़्ज़ “साअत” अरबी लुग़त में थोड़े से ज़माने के लिये बोला जाता है जिसकी कोई खास हद और सीमा लुग़त के एतिबार से नहीं है, और नज़ूमी लोगों की परिभाषा में रात और दिन के चौबीस हिस्सों में से एक हिस्से का नाम “साअत” है जिसको उर्दू में घन्टा कहा जाता है, और कुरआन की परिभाषा में यह लफ़्ज़ उस दिन के लिये बोला जाता है जो सारी मख़्लूकात की मौत का दिन होगा, और उस दिन के लिये भी जिसमें सारी मख़्लूकात दोबारा ज़िन्दा होकर रब्बुल-आलमीन के दरबार में हाज़िर होंगी। “अय्या-न” के मायने कब और ‘मुरसा’ के मायने ठहरने और कायम होने के हैं।

“ला युजल्लीहा” ‘तजलीह’ से निकला है जिसके मायने हैं खोलने और ज़ाहिर करने के। ‘बग़ततन्’ के मायने अचानक, ‘हफ़िय्युन’ के मायने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने अलिम और बाख़बर के बयान किये हैं, और असल में उस शख्स को हफ़ी कहा जाता है जो सवालात करके किसी मामले की पूरी तहकीक़ कर ले।

आयत का मतलब यह है कि ये लोग आप से क़ियामत के बारे में सवाल करते हैं कि वह कब आयेगी? आप इनसे कह दीजिये कि उसको मुतैयन करके बतलाने का सही इल्म सिर्फ़ मेरे रब के पास है, न पहले से और किसी को मालूम है और ऐन वक़्त पर भी किसी को पहले मालूम न होगा, जब तयशुदा वक़्त आ जायेगा तो खुद अल्लाह तआला ही उसको ज़ाहिर फ़रमायेंगे, कोई वास्ता बीच में न होगा। क़ियामत की घटना आसमानों और ज़मीन पर बहुत भारी पड़ेगी कि इनके टुकड़े होकर उड़ जायेंगे, इसलिये हिक्मत का तकाज़ा यह है कि ऐसे सख़्त और ज़बरदस्त वाक़िए का इज़हार पहले से न किया जाये वरना यकीन करने वालों की ज़िन्दगी कड़वी और बेमज़ा हो जायेगी और इनकारियों को और ज़्यादा मज़ाक़ उड़ाने और दिल्लगी करने का मौक़ा मिलेगा। इसलिये फ़रमाया:

لَا تَأْتِيَكُمْ إِلَّا بَغْتَةً.

यानी क़ियामत तुम्हारे पास अचानक ही आयेगी।

बुख़ारी व मुस्लिम की हदीस में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने क़ियामत के अचानक और एक दम से आने के मुताल्लिक़ यह बयान फ़रमाया कि लोग अपने-अपने कारोबार में मशगूल होंगे, एक शख्स ने ग्राहक को दिखलाने के लिये कपड़े का धान खोला हुआ होगा, वे अभी मामला तय न कर पायेंगे कि क़ियामत कायम हो जायेगी। एक शख्स अपनी ऊँटनी का दूध दूहकर ले चलेगा और अभी उसको इस्तेमाल करने न पायेगा कि क़ियामत आ जायेगी। कोई शख्स अपने हौज़ की मरम्मत

कर रहा होगा उससे फारिग न हो पायेगा कि कियामत कायम हो जायेगी। कोई शख्स खाने का लुक्मा हाथ में उठायेगा, अभी मुँह तक न पहुँचेगा कि कियामत बरपा हो जायेगी।

(तफसीर रूहुल-मआनी)

इसका मकसद यह है कि जिस तरह इनसान की व्यक्तिगत मौत की तारीख और वक्त को गैर-मुतय्यन और अस्पष्ट रखने में बड़ी हिक्मतें हैं इसी तरह कियामत को जो पूरे आलम की सामूहिक मौत का नाम है, उसको पोशीदा और अस्पष्ट रखने में भी बड़ी हिक्मतें हैं। अब्बल तो यही है कि यकीन करने वालों के लिये उस सूरत में ज़िन्दगी दूभर और दुनिया के काम मुश्किल हो जायेंगे, और उसका इनकार करने वालों को उसकी लम्बी मुद्दत सुनकर मज़ाक व दिल्लगी करने का बहाना मिलेगा और उनकी सरकशी में और इज़ाफ़ा होगा।

इसलिये हिक्मत के तकाज़े के सबब उसकी तारीख को गैर-वाज़ेह और अस्पष्ट रखा गया ताकि लोग उसके होलनाक वाकिआत से हमेशा डरते रहें और यह डर ही इनसान को बुराईयों और अपराधों से बाज़ रखने का सबसे ज़्यादा प्रभावी इलाज है। इसलिये इन आयतों से तालीम यह दी गयी कि जब इसका यकीन है कि कियामत किसी रोज़ आयेगी और रब्बुल-आलमीन के सामने सब की पेशी होगी, उनके उम्र भर के छोटे-बड़े अच्छे-बुरे सब आमाल का जायज़ा लिया जायेगा, जिसके नतीजे में या तो जन्नत की वहम व ख़्याल से ज़्यादा और कभी ख़त्म न होने वाली नेमतें मिलेंगी और या फिर अल्लाह की पनाह! जहन्नम का वह सख़्त अज़ाब होगा जिसके तसव्वुर से भी पित्ता पानी होने लगता है, तो फिर एक अक्लमन्द का काम यह नहीं होना चाहिये कि अमल की फुर्सत के वक्त को इन बहसों में जाया करे कि यह वाकिआ कब किस सन् और किस तारीख में होगा, बल्कि अक्ल का तकाज़ा यह है कि उम्र की फुर्सत को ग़नीमत जानकर उस दिन के लिये तैयारी में मशगूल हो जाये, रब्बुल-आलमीन के अहकाम की खिलाफ़वर्ज़ी (नाफ़रमानी और उल्लंघन करने) से ऐसा डरे जैसे आग से हर इनसान डरता है।

आयत के आखिर में फिर उन लोगों के सवाल को दोहराकर फ़रमाया:

يَسْأَلُونَكَ كَأَنَّكَ حَفِيٌّ عَنْهَا.

पहला सवाल तो इस बात से मुताल्लिक था कि जब ऐसा अहम वाकिआ होने वाला है तो हमें उसका पूरा-पूरा सही तारीख और वक्त के साथ इल्म होना चाहिये। जिसका जवाब दे दिया गया कि यह सवाल बेअक्ली और बेवकूफी से पैदा हुआ है, अक्ल का तकाज़ा ही यह है कि उसके निर्धारित वक्त से किसी को बाख़बर न किया जाये, ताकि हर अमल करने वाला हर वक्त आखिरत के अज़ाब से डरकर नेक अमल के इख़्तियार करने और बुरे आमाल से बाज़ रहने में पूरी तवज्जोह दे।

और इस दूसरे सवाल का मन्शा उन लोगों का यह समझना है कि हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को ज़रूर कियामत की सही तारीख और वक्त मालूम है और आपने अल्लाह तआला से तहकीक़ करके उसका इल्म ज़रूर हासिल कर लिया है, मगर आप किसी वजह से

बताते नहीं। इसलिये अपनी निकटता और रिश्तेदारी का वास्ता देकर आप से सवाल किया कि हमें क़ियामत का पूरा पता बतला दें। इस सवाल के जवाब में इरशाद हुआ:

قُلْ إِنَّمَا عِلْمُهَا عِنْدَ اللَّهِ وَلَكِنْ أَكْثَرُ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ.

यानी आप लोगों को बतला दें कि हकीकत यही है कि क़ियामत की सही तारीख़ का सिवाय अल्लाह जल्ल शानुहू के किसी फ़रिश्ते या नबी को भी इल्म नहीं है, मगर बहुत से लोग इस हकीकत से बेख़बर हैं कि बहुत से उलूम अल्लाह तआला सिर्फ़ अपने लिये सुरक्षित रखते हैं जिनका किसी फ़रिश्ते या पैग़म्बर को भी पता नहीं होता। लोग अपनी जहलत से यह समझते हैं कि क़ियामत की तारीख़ का इल्म नुबुव्वत व रिसालत के लिये लाज़िमी है, और फिर इसका यह नतीजा निकालते हैं कि जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को उसका पूरा इल्म नहीं तो यह इसकी निशानी और पहचान है कि (अल्लाह की पनाह) आप नबी नहीं। मगर ऊपर मालूम हो चुका कि यह ख़्याल सिरे से ग़लत है।

खुलासा यह है कि ऐसे सवालात करने वाले बड़े बेवक़ूफ़ और बेख़बर हैं, न उनको मसले की हकीकत मालूम है, न उसकी हिक्मत और न सवाल करने का तरीका।

हाँ नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को क़ियामत की कुछ अलामतों (निशानियों) का इल्म दिया गया था और यह कि वह अब करीब है, इसका हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बहुत सी सही हदीसों में वाज़ेह तौर पर बयान फ़रमा दिया है। इरशाद फ़रमाया कि मेरा आना और क़ियामत इस तरह मिली हुई हैं जैसे हाथ की दो उंगलियाँ। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

और कुछ इस्लामी किताबों में जो पूरी दुनिया की उम्र सात हज़ार साल बतलाई है यह कोई हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हदीस नहीं, बल्कि इस्राईली रिवायतों से लिया हुआ मज़मून है।

ज़मीनी चीज़ों का इल्म रखने वाले हज़रात ने जो नई तहकीकात से दुनिया की उम्र लाखों साल बतलाई है यह न किसी क़ुरआनी आयत से टकराती है न किसी सही हदीस से। इस्लामी रिवायतों में ऐसी कच्ची बेसनद बातों को दाख़िल कर देने का मक़सद ही शायद इस्लाम के खिलाफ़ बदगुमानियाँ पैदा करना हो, जिनकी तरदीद खुद सही हदीसों में मौजूद है। एक सही हदीस में खुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का अपनी उम्मत को मुख़ातब करके इरशाद है कि तुम्हारी मिसाल पिछली उम्मतों के मुक़ाबले में ऐसी है जैसे काले बैल के बदन पर एक सफ़ेद बाल हो। इससे हर शख्स अन्दाज़ा लगा सकता है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की नज़र में दुनिया की उम्र कितनी लम्बी है कि इसका अन्दाज़ा लगाना भी दुश्वार है, इसी लिये हाफ़िज़ इब्ने हज़म उन्दुलुसी ने फ़रमाया कि हमारा एतिकाद यह है कि दुनिया की उम्र का कोई सही अन्दाज़ा नहीं किया जा सकता, इसका सही इल्म सिर्फ़ पैदा करने वाले ही को है।

(मरागी)

قُلْ لَا أَمْلِكُ لِنَفْسِي نَفْعًا وَلَا ضَرًّا إِلَّا مَا شَاءَ اللَّهُ وَلَوْ كُنْتُ أَعْلَمُ الْغَيْبُ لَا سْتَكْثُرْتُ
مِنَ الْخَيْرِ وَمَا مَسْنِيَ السُّوْءُ إِنْ أَنَا إِلَّا نَذِيرٌ وَبَشِيرٌ لِّقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ۝ هُوَ الَّذِي خَلَقَكُمْ مِّنْ
نَفْسٍ وَاحِدَةٍ وَجَعَلَ مِنْهَا زَوْجَهَا لِيَسْكُنَ إِلَيْهَا فَلَمَّا تَغَشَّاهَا حَمَلَتْ حَمْلًا خَفِيًّا فَلَمَّزَتْ
بِهِ ۖ فَلَمَّا أَثْقَلَتْ دَعَوَا اللَّهَ رَبِّهَا لِيَنزِلَ إِلَيْهَا لِيُخْرِجَ لَهَا صَالِحًا لِّتَكُونَنَّ مِنَ الشَّاكِرِينَ ۝ فَلَمَّا أَثْمَمَتْهُمَا
صَالِحًا جَعَلَهُ شُرَكَاءَ فِيهَا إِذْ نَبَّأَتْهُمَا قَتَلَ اللَّهُ عَمَّا يُشْرِكُونَ ۝ أَيْشُرِكُونَ مَا لَا يَخْلُقُ
شَيْئًا وَهُمْ يُخْلِقُونَ ۝ وَلَا يَسْتَطِيعُونَ لَهُمْ نَصْرٌ وَلَا أَنْفُسُهُمْ يَنْصُرُونَ ۝ وَإِنْ تَدْعُوهُمْ إِلَى
الْهُدَى لَا يَتَّبِعُوكُمْ سَوَاءٌ عَلَيْكُمْ أَدَعَوْتُهُمْ أَمْ أَنْتُمْ صَامِتُونَ ۝

कुल् ला अम्लिकु लिनप्सी नपअं-
व ला जर्नन् इल्ला मा शाअल्लाहु,
लौ कुन्तु अअलमुल्गै-ब लस्तक्सरतु
मिनल्-खैरि, व मा मस्सनियस्-सू-उ
इन् अ-न इल्ला नजीरुं-व बशीरुल्-
लिकौमिय्युअमिनून (188) ❀

हुवल्लजी ख-ल-ककुम् मिन् नप्सिंस्-
-वाहि-दतिंस्-व ज-अ-ल मिन्हा
जौजहा लियस्कु-न इलैहा फ-लम्मा
तगश्शाहा ह-मलत् हमूलन् खफीफन्
फ-मरत् बिही फ-लम्मा अस्कलद्-
द-अवल्ला-ह रब्बहुमा ल-इन् आतैतना
सालिहल् ल-नकूनन्-न मिनश्शाकिरीन
(189) फ-लम्मा आताहुमा सालिहन्
ज-अला लहू शु-रका-अ फीमा
आताहुमा फ-तअलल्लाहु अम्मा

तू कह दे कि मैं मालिक नहीं अपनी जान
के भले का और न बुरे का मगर जो
अल्लाह चाहे, और अगर मैं जान लिया
करता ग़ैब की बात तो बहुत कुछ
भलाईयाँ हासिल कर लेता, और मुझको
बुराई कभी न पहुँचती, मैं तो बस डर
और खुशख़बरी सुनाने वाला हूँ ईमान
वाले लोगों को। (188) ❀

वही है जिसने तुमको पैदा किया एक जान से और उसी से बनाया उसका जोड़ा ताकि उसके पास आराम पकड़े, फिर जब मर्द ने औरत को ढाँका हमल (गर्भ) रहा हल्का सा हमल, तो चलती फिरती रही उसके साथ, फिर जब बोझल हो गई तो दोनों ने पुकारा अपने रब अल्लाह को कि अगर तू हमको बरूशी भला-चंगा तो हम तेरा शुक्र करें। (189) फिर जब उनको दिया भला-चंगा तो बनाने लगे उसके लिये शरीक उसकी बरूशी हुई चीज़ में, सो अल्लाह बरतर है उनके शरीक बनाने से। (190)

युशिरकून (190) अयुशिरकू-न मा ला
 यखलुकु शैअंव-व हुम् युखलकून
 (191) व ला यस्ततीजू-न लहुम्
 नसरंव-व ला अन्फु-सहुम् यन्सुरून
 (192) व इन् तदअहुम् इलल्-हुदा
 ला यत्तबिअुकुम्, सवाउन् अलैकुम्
 अ-दऔतुमूहुम् अम् अन्तुम्
 सामितून (193)

क्या शरीक बनाते हैं ऐसों को जो पैदा न
 करें एक चीज़ भी और वे (खुद) पैदा हुए
 हैं। (191) और नहीं कर सकते हैं उनकी
 मदद, और न अपनी मदद करें। (192)
 और अगर तुम उनको पुकारो रास्ते की
 तरफ़ तो न चले तुम्हारी पुकार पर,
 बराबर है तुम पर कि उनको पुकारो या
 चुपके रहो। (193)

खुलासा-ए-तफ़सीर

आप कह दीजिये कि मैं खुद अपनी खास ज़ात के लिये (भी कहाँ यह कि दूसरे के लिये) किसी (तकदीरी) नफ़े (के हासिल करने) का इख़्तियार नहीं रखता और न किसी (तकदीरी) नुक़सान (को दूर करने) का (इख़्तियार रखता हूँ) मगर उतना ही जितना खुदा तआला ने चाहा हो (कि मुझको इख़्तियार दे दें और जिस मामले में इख़्तियार नहीं दिया उसमें कई बार फ़ायदे हाथ से निकल जाते हैं और नुक़सान सामने आ जाते हैं। एक बात तो यह हुई और (दूसरी बात यह है कि) अगर मैं ग़ैब की बातें (इख़्तियारी मामलों के मुताल्लिक) जानता होता तो मैं (अपने लिये) बहुत-से फ़ायदे हासिल कर लिया करता और कोई नुक़सान मुझको हरगिज़ न होता, (क्योंकि ग़ैब के इल्म के सबब मालूम हो जाता कि फुल्लों मामले में मेरे लिये यकीनन नाफ़ा होगा उसको इख़्तियार कर लिया करता, और फुल्लों काम मेरे लिये यकीनन नुक़सानदेह होगा उससे परहेज़ करता। और अब चूँकि इल्म-ए-ग़ैब नहीं इसलिये कई बार लाभदायक का इल्म नहीं होता कि उसको इख़्तियार करूँ, इसी तरह नुक़सानदेह का इल्म नहीं होता कि उससे बचूँ बल्कि कभी ऐसा भी होता है कि नुक़सान देने वाली चीज़ को लाभदायक और लाभदायक को नुक़सान देने वाली समझ लिया जाता है। हासिल यह निकला कि इल्मे-ग़ैब हासिल होने का मतलब था कि नफ़े-नुक़सान का मालिक हो जाता और आने वाले वक़्त के किसी भी नफ़े-नुक़सान का पेशगी मुझे इल्म नहीं लिहाज़ा साबित हुआ कि मुझे इल्मे ग़ैब भी हासिल नहीं) मैं तो सिर्फ़ (शरई अहक़ाम बतलाकर सवाब की) खुशख़बरी देने वाला और (अज़ाब से) डराने वाला हूँ उन लोगों को जो ईमान रखते हैं (खुलासा यह कि नुबुव्वत का असली मक़सद कुदरती और तकदीरी और कुदरती मामलों का इहाता करना नहीं इसलिये इन मामलों का इल्म जिनमें क़ियामत के निर्धारित वक़्त का इल्म भी दाख़िल है नबी को मिलना ज़रूरी नहीं, अलबत्ता नुबुव्वत का असल मक़सद शरीअत और खुदाई क़ानून का भरपूर इल्म है, तो वह मुझको हासिल है)।

वह (यानी अल्लाह तआला) ऐसा (कादिर और नेमतें देने वाला) है जिसने तुमको एकमात्र बदन (यानी आदम अलैहिस्सलाम) से पैदा किया, और उसी से उसका जोड़ा बनाया (हव्वा अलैहिस्सलाम, जिसकी कैफ़ियत सूर: निसा की शुरू की आयतों की तफ़्सीर में गुज़र चुकी) ताकि वह उस (अपने जोड़े) से उन्स हासिल करे। (पस जब वह ख़ालिफ़ भी है और मोहसिन भी तो इबादत उसी का हक़ है) फिर (आगे उनकी औलाद बढ़ी और उनमें भी मियाँ-बीवी हुए लेकिन उनमें कुछ की यह हालत हुई कि) जब मियाँ ने बीवी से निकटता की तो उसको हल्का सा हमल "गर्भ" रह गया, सो वह उसको (पेट में) लिये हुए (बेतकल्लुफ़) चलती फिरती रही। फिर जब वह (गर्भवती उस हमल के बढ़ जाने से) बोझल हो गई (और दोनों मियाँ-बीवी को यकीन हो गया कि गर्भ है) तो (उस वक़्त उनको तरह-तरह के गुमान और ख़्यालात होने लगे, जैसा कि बाज़े गर्भ में ख़तरे पेश आते हैं, इसलिये) दोनों (मियाँ-बीवी) अल्लाह से जो कि उनका मालिक है दुआ करने लगे कि अगर आपने हमको सही (सालिम औलाद) दे दी तो हम ख़ूब शुक्रगुज़ारी करेंगे। (जैसे कि आम आदत है कि मुसीबत के वक़्त अल्लाह तआला से बड़े-बड़े अहद व पैमान हुआ करते हैं) सो जब अल्लाह तआला ने उन दोनों को सही सालिम औलाद दे दी तो अल्लाह तआला की दी हुई चीज़ में वे दोनों अल्लाह तआला के शरीक करार देने लगे (विभिन्न तौर पर, किसी ने एतिकाद से कि यह औलाद फ़ुलॉ ज़िन्दे या मुर्दे ने दी है। किसी ने अमल से कि उसके नाम की नज़्र व नियाज़ करने लगे, या बच्चे को लेजाकर उसके सामने उसका माथा टेक दिया। या कौल से कि उसकी बन्दगी पर नाम रख दिया, जैसे अब्दे-शम्स या बन्दा-अली वगैरह। यानी यह हक़ तो था खुदा का जो कि नेमत देने वाला, ख़ालिफ़ और कादिर व मोहसिन है और ज़ाहिर व इस्तेमाल किया इसको दूसरे माबूदों के लिये) सो अल्लाह तआला पाक है उनके शिर्क से।

(यहाँ तक तो हक़ तआला की सिफ़ात का बयान था जो इसको चाहती हैं माबूद उसी को बनाया जाये, आगे बातिल और झूठे माबूदों की कमियों और लाचारी का ज़िक्र है जिसका तकाज़ा यह है कि उनके माबूद बनने की पात्रता ज़ाहिर व स्पष्ट हो जाये। पस फ़रमाते हैं कि) क्या (अल्लाह तआला के साथ) ऐसों को शरीक ठहराते हैं जो किसी चीज़ को बना न सकें और (बल्कि) वे खुद ही बनाये जाते हों (चुनाँचे ज़ाहिर है कि बुतों के पुजारी खुद उनको तराशते थे) और (किसी चीज़ का बनाना तो बड़ी बात है) वे (तो ऐसे आजिज़ हैं कि उससे आसान काम भी नहीं कर सकते मसलन) उनको किसी किस्म की मदद (भी) नहीं दे सकते, और (इससे भी बढ़कर यह है कि) वे खुद अपनी भी मदद नहीं कर सकते (अगर कोई हादसा उनको पेश आ जाये, जैसे कोई शख्स उनको तोड़ने फोड़ने ही लगे)। और (इससे भी बढ़कर सुनो कि) अगर तुम उनको कोई बात बतलाने को पुकारो तो तुम्हारे कहने पर न चलें। (इसके दो मतलब हो सकते हैं- एक यह कि तुम उनको पुकारो कि वह तुमको कोई बात बतलायें तो तुम्हारा कहना न करें यानी न बतलायें। और दूसरी इससे ज़्यादा यह कि तुम उनको पुकारो कि आओ हम तुमको कुछ बतलायें तो तुम्हारे कहने पर न चलें, यानी तुम्हारी बतलाई हुई बात पर अमल न कर सकें। बहरहाल) तुम्हारे एतिबार से (दोनों बातें) बराबर हैं, चाहे तुम उनको पुकारो (वे जब नहीं सुनते)

या तुम चुप रहो (जब तो न सुनना जाहिर ही है। खुलासा यह है कि जो काम सबसे ज्यादा आसान है कि कोई बात बतलाने के लिये पुकारे तो सुन लेना, वे इसी से आजिज़ हैं तो जो इससे मुश्किल है कि अपनी हिफाज़त करें और फिर जो इससे मुश्किल है कि दूसरों की इमदाद करना और फिर इन सबसे जो ज्यादा मुश्किल है कि किसी चीज़ को पैदा करना, इनसे तो वे कहीं ज्यादा पूरी तरह आजिज़ होंगे, फिर ऐसे आजिज़ मोहताज माबूद बनने के लायक कैसे हो सकते हैं)।

मआरिफ़ व मसाईल

पहली आयत में मुशिरकों और अ़वाम के उस ग़लत अ़कीदे की तरदीद (ग़लत होने का बयान) है जो उन लोगों ने अम्बिया अलैहिमुस्सलाम के बारे में कायम कर रखा था कि वे ग़ैब के जानने वाले होते हैं, उनका इल्म अल्लाह तआला की तरह तमाम कायनात के ज़र्रे-ज़र्रे पर हावी होता है, तथा यह कि वे हर नफ़े और नुक़सान के मालिक होते हैं, जिसको जो चाहें नफ़ा या नुक़सान पहुँचा सकते हैं।

और इसी अ़कीदे के सबब वे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से कियामत की निर्धारित तारीख़ बतलाने का मुतालबा करते थे, जिसका ज़िक्र इससे पहली आयत में गुज़र चुका है। इस आयत ने उनके इस मुशिरकाना अ़कीदे की तरदीद करते हुए बतला दिया कि इल्मे ग़ैब और तमाम कायनात के ज़र्रे-ज़र्रे का मुकम्मल इल्म सिर्फ़ अल्लाह जल्ल शानुहु की मख़सूस सिफ़त है उसमें किसी मख़्लूक को शरीक ठहराना चाहे वह फ़रिश्ता हो या नबी व रसूल शिर्क और बड़ा भारी जुल्म है। इसी तरह हर नफ़े नुक़सान का मालिक होना सिर्फ़ अल्लाह तआला ही की ख़ास सिफ़त है इसमें किसी को शरीक ठहराना भी शिर्क है, जिसके मिटाने ही के लिये कुरआन नाज़िल हुआ और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लाये।

कुरआने करीम ने बेशुमार आयतों में बार-बार इसको वाज़ेह फ़रमा दिया है कि इल्मे-ग़ैब और हर चीज़ का मुकम्मल इल्म जिससे कोई ज़रा छुपा न रहे, यह सिर्फ़ अल्लाह जल्ल शानुहु की ख़ास सिफ़त है। इसी तरह कामिल क़ुदरत कि हर नफ़ा व नुक़सान कब्ज़े में हो, यह भी ख़ास सिफ़त है हक़ तआला शानुहु की। इन सिफ़तों में ग़ैरुल्लाह को शरीक करार देना शिर्क है।

इस आयत में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हुक्म दिया गया है कि आप इसका ऐलान कर दें कि मैं अपने नफ़्स के लिये भी नफ़े नुक़सान का मालिक नहीं, दूसरों के नफ़े नुक़सान का तो क्या ज़िक्र है।

इसी तरह यह भी ऐलान कर दें कि मैं आलिमुल-ग़ैब (ग़ैब का जानने वाला) नहीं हूँ कि हर चीज़ का इल्म होना मेरे लिये ज़रूरी हो, और अगर मुझे इल्मे ग़ैब होता तो मैं हर नफ़े की चीज़ को ज़रूर हासिल कर लिया करता और कोई नफ़ा मेरे हाथ से न निकलता, और हर नुक़सान की चीज़ से हमेशा महफूज़ ही रहता और कभी कोई नुक़सान मुझे न पहुँचता, हालाँकि ये दोनों बातें नहीं हैं। बहुत से काम ऐसे हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनको हासिल

करना चाह मगर हासिल नहीं हुए, और बहुत सी तकलीफें और नुकसानात ऐसे हैं जिनसे हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बचने का इरादा किया मगर वह नुकसान व तकलीफ पहुँच गयी। गुजवा-ए-हुदैबिया के मौके पर आप सहाबा-ए-किराम के साथ एहराम बाँधकर उमरे का इरादा करके हरम की सीमाओं तक पहुँच गये मगर हरम में दाखिला और उमरे की अदायेगी उस वक्त न हो सकी, सब को एहराम खोलकर वापस होना पड़ा।

इसी तरह गुजवा-ए-उहुद में हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को ज़ख्म पहुँचा और मुसलमानों को वक्ती शिकस्त हुई। इसी तरह के और बहुत से वाकिआत हैं जो हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की जिन्दगी में मारुफ व मशहूर हैं।

और शायद ऐसे वाकिआत के ज़ाहिर करने का मकसद ही यह हो कि लोगों पर अमली तौर पर यह बात वाज़ेह कर दी जाये कि अम्बिया अलैहिमुस्सलाम अगरचे अल्लाह तआला के नज़दीक सबसे ज्यादा मकबूल और मख्लूक में सबसे अफज़ल हैं मगर फिर भी वे खुदाई इल्म व कुदरत के मालिक नहीं, ताकि लोग उस ग़लत-फहमी के शिकार न हो जायें जिसमें ईसाई मुब्तला हो गये कि अपने रसूल को खुदाई सिफ़ात का मालिक समझ बैठे और इस तरह शिर्क में मुब्तला हो गये।

इस आयत ने भी यह वाज़ेह कर दिया कि अम्बिया अलैहिमुस्सलाम न कादिरे मुतलक (हर चीज़ पर पूरा इख्तियार रखने वाले) होते हैं न आलिमुल-ग़ैब, बल्कि उनको इल्म व कुदरत का उतना ही हिस्सा हासिल होता है जितना अल्लाह की तरफ़ से उनको दे दिया जाये।

हाँ इसमें शक व शुब्हा नहीं कि इल्म का जो हिस्सा उनको अता होता है वह सारी मख्लूक से बड़ा हुआ होता है, खुसूसन हमारे रसूले करीम को तमाम पहलों व पिछलों का इल्म अता फरमाया गया था। यानी तमाम नबियों को जितना इल्म दिया गया था वह सब और उससे भी ज्यादा आपको अता फरमाया गया था, और इसी अता किये हुए इल्म के मुताबिक आपने हजारों ग़ैब की बातों की ख़बरें दीं जिनकी सच्चाई को हर आम व ख़ास ने देख लिया। इसकी वजह से यह तो कह सकते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हजारों लाखों ग़ैब की चीज़ों का इल्म अता किया गया था, मगर इसको कुरआन की परिभाषा में इल्मे ग़ैब नहीं कह सकते और इसकी वजह से रसूल को आलिमुल-ग़ैब नहीं कहा जा सकता।

आयत के आखिर में इरशाद फरमाया:

إِنَّا أَنَا نَذِيرٌ وَبَشِيرٌ لِّقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ.

यानी हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम यह भी ऐलान कर दें कि मेरी नुबुव्वत वाली ज़िम्मेदारी सिर्फ़ यह है कि मैं बदकारों को अज़ाब से डराऊँ और नेक लोगों को बड़े सवाब की खुशख़बरी सुनाऊँ।

दूसरी आयत में तौहीद (एक अल्लाह को मानने और उसी को लायक़े इबादत समझने) के अक़ीदे का ज़िक्र है जो इस्लाम का सबसे बड़ा बुनियादी अक़ीदा है और इसके साथ शिर्क के वातिल और नामाकूल होने का बयान किसी क़द्र तफ़सील के साथ आया है।

आयत के शुरू में हक तआला ने अपनी कामिल क़ुदरत का एक निशान व प्रतीक हज़रत आदम व हव्वा की पैदाईश से इस तरह बयान फरमाया:

هُوَ الَّذِي خَلَقَكُمْ مِنْ نَفْسٍ وَاحِدَةٍ وَجَعَلَ مِنْهَا زَوْجَهَا لِيَسْكُنَ إِلَيْهَا.

यानी अल्लाह तआला ही की शान है जिसने सारे इनसानों को एक जात यानी आदम से पैदा किया और उन्हीं से उनकी बीवी हज़रत हव्वा को पैदा किया, जिसका मक़सद यह था कि आदम अलैहिस्सलाम को एक हम-जिन्स साथी के ज़रिये सुकून हासिल हो।

अल्लाह तआल की इस अजीब क़ुदरत व कारीगरी का तज़ाज़ा यह था कि आदम की तमाम औलाद हमेशा उसकी शुक्रगुज़ार होती और किसी मख़्लूक को उसकी कामिल सिफ़ात में शरीक न ठहराती, मगर गुफ़लत में डूबे इनसान ने मामला इसके खिलाफ़ किया जिसका बयान इसी आयत के दूसरे जुमले और बाद की आयत में इस तरह फरमाया गया है:

فَلَمَّا تَغَشَّيْهَا حَمَلَتْ حَمْلًا خَفِيًّا فَمَرَّتْ بِهِ، فَلَمَّا أَثْقَلَتْ دَعَا اللَّهَ رَبَّهُمَا لَئِنْ آتَيْنَا صَالِحًا لَنَكُونَنَّ مِنَ

الشَّاكِرِينَ. فَلَمَّا آتَاهُمَا صَالِحًا جَعَلَهُ لَهُ شُرَكَاءَ فِيمَا آتَاهُمَا فَتَعَالَى اللَّهُ عَمَّا يُشْرِكُونَ.

यानी आदम की औलाद ने अपनी गुफ़लत व नाशुक्री से इस मामले में अमल यह किया कि जब नर व मादा के आपसी मिलाप से हमल (गर्भ) करार पाया तो शुरू में जब तक हमल का कोई बोझ न था औरत आज़ादी के साथ चलती-फिरती रही, फिर जब हक़ तआला ने अपनी कामिल क़ुदरत से तीन अंधेरियों के अन्दर उस हमल की तरबियत करके उसको बढ़ाया और उसका बोझ महसूस होने लगा तो अब माँ-बाप फ़िक्र में पड़ गये और ख़तरे महसूस करने लगे कि इस हमल से कैसी औलाद पैदा होगी। क्योंकि कई बार इनसान ही के पेट से अजीब अजीब तरह की मख़्लूक भी पैदा हो जाती है, और कई बार अधूरा बना हुआ बच्चा पैदा हो जाता है, अंधा या बहरा या गुंगा या हाथ-पैर से माज़ूर। इन ख़तरों और शंकाओं के सबब माँ-बाप ये दुआयें माँगने लगे कि या अल्लाह! हमें सही सालिम बच्चा इनायत फरमाईये, अगर सही सालिम बच्चा पैदा हुआ तो हम शुक्रगुज़ार होंगे।

लेकिन जब अल्लाह तआला ने उनकी दुआयें सुन लीं और बच्चा सही सालिम अता कर दिया तो अब शुक्रगुज़ारी के बजाय शिर्क में मुब्तला हो गये और यह औलाद देना उनके शिर्क में मुब्तला होने का सबब बन गया, जिसकी विभिन्न और अनेक सूरतें होती हैं- कभी तो अक़ीदा ही ख़राब होता है, यूँ समझ बैठते हैं कि यह बेटा किसी वली या बुजुर्ग ने दिया है। कभी यह होता है कि अमली तौर पर उस बच्चे को किसी जिन्दे या मुर्दे बुजुर्ग की तरफ़ मन्सूब करते हैं और उनके नाम की नज़्र व नियाज़ करने लगते हैं, या बच्चे को लेजाकर उनके सामने उसका माथा टेक देते हैं। और कभी बच्चे का नाम रखने में मुशिरकाना अन्दाज़ा इख़्तियार करते हैं, अब्दुल्लात, अब्दुल-उज़्ज़ा, अब्दुशशम्स या बन्दा-अली वग़ैरह ऐसे नाम रख देते हैं जिनसे यह समझा जाता है कि यह बच्चा अल्लाह तआला के बजाय इन बुतों या इन बुजुर्गों का पैदा किया हुआ वन्दा है। ये सब मुशिरकाना अक़ीदे व आमाज़ हैं जो अल्लाह तआला की नेमत के मुकाबले

में शुक्र के बजाय नाशुकी की विभिन्न सूरतें हैं।

तीसरी आयत के आखिर में उन लोगों की बेराही और टेढ़ी चाल को वाजेह करने के लिये फरमाया:

لَعَلَّيْ اللّٰهُ عَمَّا يُشْرِكُوْنَ

यानी पाक है अल्लाह तआला उस शिर्क से जिसको उन लोगों ने इख्तियार किया।

ज़िक्र हुई आयतों की इस तफ़्सील से यह बात वाजेह हो गयी कि इस आयत के पहले जुमले में हज़रत आदम व हव्वा का ज़िक्र करके आदम की औलाद को उनकी पैरवी और शुक्रगुज़ारी की तालीम दी गयी है, और आखिरी जुमलों में बाद में आने वाले इनसानों की गुमराही और गुलत राह पर चलने का बयान किया गया है कि उन्होंने बजाय शुक्रगुज़ारी के शिर्क को इख्तियार कर लिया।

इससे मालूम हुआ कि शिर्क इख्तियार करने वालों के मामले का ताल्लुक हज़रत आदम व हव्वा से बिल्कुल नहीं जिसके सबब हज़रत आदम अलैहिस्सलाम के गुनाहों से मासूम व सुरक्षित होने पर कोई शुब्हा हो, बल्कि इसका ताल्लुक बाद में आने वाली नस्लों के अमल से है। और यह तफ़्सीर जो हमने इख्तियार की है यह तफ़्सीर दुर्-मन्सूर में इब्नुल-मुन्ज़िर व इब्ने अबी हातिम की रिवायत से मुफ़्तिरे कुरआन हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से नक़ल की गयी है।

तिर्मिज़ी और हाकिम की रिवायतों में जो एक किस्सा हज़रत आदम व हव्वा अलैहिमस्सलाम का और शैतान के फ़रेब देने का बयान हुआ है उसको कुछ हज़रात ने इस्राईली रिवायत करार देकर नाकाबिले भरोसा बतलाया है, लेकिन बहुत से मुहद्दीसीन ने उसको मोतबर भी कहा है। उपरोक्त तफ़्सीर पर अगर इस किस्से की रिवायत को सही भी मान लिया जाये तो भी आयत की तफ़्सीर में कोई एतिराज़ व शुब्हा बाकी नहीं रहता।

इस आयत से चन्द अहकाम व फ़ायदे हासिल हुए:

अव्वल यह कि अल्लाह तआला ने औरत व मर्द के जोड़े को हम-जिन्स बनाया ताकि तबई मुवाफ़क़त और पूरा उन्स (ताल्लुक व मुहब्बत) एक दूसरे के साथ हासिल हो सके, और दाम्पत्य जीवन से जो दुनिया को आबाद व कायम रखने के फ़ायदे जुड़े हुए हैं वो पूरी तरह अन्जाम पा सकें।

दूसरे यह कि वैवाहिक जीवन के जैसे हुक्क व फ़राईज़ (अधिकार व ज़िम्मेदारियाँ) दोनों मियाँ-बीवी पर लागू होते हैं उन सब का खुलासा और असल मक़सद सुकून है। दुनिया की नई सामाजिक ज़िन्दगी और नई रस्मों में जो चीज़ें सुकून को बरबाद करने वाली हैं वो मियाँ-बीवी के ताल्लुक की बुनियादी दुश्मन हैं, और आजकी सभ्य दुनिया में जो घरेलू ज़िन्दगी उमूमन बद-मज़ा नज़र आती है और चारों तरफ़ तलाकों की भरमार है, इसका सबसे बड़ा सबब यही है कि रहन-सहन और सामाजिक ज़िन्दगी में ऐसी चीज़ों को अच्छा समझ लिया गया है जो घरेलू ज़िन्दगी के सुकून को सरासर बरबाद करने वाली हैं। औरत की आज़ादी के नाम पर उसकी

बेपर्दगी और बेहयाई जो तूफ़ान की तरह आलमगीर (विश्वव्यापी) होती जाती है इसका मियाँ-बीवी और घरेलू जिन्दगी के सुकून के बरबाद करने में बड़ा दखल है, और तजुर्बा गवाह है कि जैसे-जैसे यह बेपर्दगी और बेहयाई औरतों में बढ़ती जाती है उसी रफ़्तार से घरेलू सुकून व इत्मीनान ख़त्म होता जाता है।

तीसरे यह कि बच्चों के ऐसे नाम रखना जिनसे मुशिरकाना मफ़हूम (मायने व मतलब) लिया जा सकता हो, चाहे नाम रखने वालों की नीयत यह न हो, यह भी एक मुशिरकाना रस्म होने के सबब बहुत बड़ा गुनाह है- जैसे अब्दुशशम्स अब्दुल-उज्ज़ा वगैरह नाम रखना।

चौथे यह कि बच्चों के नाम रखने में भी शुक्र अदा करने का तरीका यह है कि उनके नाम अल्लाह व रसूल के नामों पर रखे जायें। इसी लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अब्दुर्रहमान, अब्दुल्लाह वगैरह को ज़्यादा पसन्द फ़रमाया है।

अफ़सोस है कि आज मुसलमानों में से यह रही-सही इस्लामी रस्म भी ख़त्म होती जाती है। अब्बल तो नाम ही ग़ैर-इस्लामी रखे जाते हैं, और जो कहीं माँ-बाप ने इस्लामी नाम रख भी दिये तो उनको भी अंग्रेज़ी के संक्षिप्त अक्षरों में मुत्तकिल करके ख़त्म कर दिया जाता है। सीरत व सूरत से तो किसी को मुसलमान समझना पहले ही मुश्किल हो चुका था, नामों के इस नये तरीके और अन्दाज़ ने इस्लाम की इस आखिरी निशानी व पहचान को भी रुख़सत कर दिया। अल्लाह तआला हमें दीन की समझ और इस्लाम की मुहब्बत अता फ़रमाये, आमीन।

إِنَّ الَّذِينَ تَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللَّهِ عِبَادٌ أَمْثَالُكُمْ فَادْعُوهُمْ فَلْيَسْتَجِيبُوا لَكُمْ إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ۝ أَلَهُمْ أَرْجُلٌ يَمْشُونَ بِهَا ۚ أَمْ لَهُمْ أَيْدٍ يَبِطْشُونَ بِهَا ۚ أَمْ لَهُمْ أَعْيُنٌ يُبْصِرُونَ بِهَا ۚ أَمْ لَهُمْ آذَانٌ يَسْمَعُونَ بِهَا ۚ قُلْ ادْعُوا شُرَكَاءَكُمْ ثُمَّ كِيدُوا ۚ فَلَا تُنْظَرُونَ ۝ إِنَّ وَلِيََّ اللَّهُ الَّذِي نَزَّلَ الْكِتَابَ ۚ وَهُوَ يَتَوَلَّى الصَّالِحِينَ ۝ وَالَّذِينَ تَدْعُونَ مِنْ دُونِهِ لَا يَسْتَجِيبُونَ نَصْرَكُمْ وَلَا أَنْفُسَهُمْ يَنْصُرُونَ ۝ وَإِنْ تَدْعُوهُمْ إِلَى الْهُدَىٰ لَا يَسْمَعُوا وَتَرَاهُمْ يُنْظَرُونَ إِلَيْكَ وَهُمْ لَا يُبْصِرُونَ ۝

इन्नल्लज़ी-न तद़अू-न मिन् दूनिल्लाहि
अ़िबादुन् अम्सालुकुम् फ़द़अूहुम्
फ़ल्यस्तज़ीबू लकुम् इन् कुन्तुम्
सादिकीन (194) अ-लहुम् अर्जुलुय-
यम्शू-न बिहा अम् लहुम् ऐदिंय-

जिनको तुम पुकारते हो अल्लाह के सिवा
वे बन्दे हैं तुम जैसे भला पुकारो तो उन
को पस चाहिए कि वे कुबूल करें तुम्हारे
पुकारने को अगर तुम सच्चे हो। (194)
क्या उनके पाँव हैं जिनसे चलते हैं, या
उनके हाथ हैं जिनसे पकड़ते हैं, या उनके

यब्तिशू-न बिहा अम् लहुम्
 अज़युनुंयुब्सिरू-न बिहा अम् लहुम्
 आज्ञानुंय्यस्मज़ू-न बिहा, कुलिदज़ू
 शु-रका-अकुम् सुम्-म कीदूनि फला
 तुन्जिरून (195) इन्-न
 वलियि-यल्लाहुल्लाज़ी नज़्ज़लल्-
 किता-ब व हु-व य-तवल्लस्-सालिहीन
 (196) वल्लाज़ी-न तदज़ू-न मिन्
 दूनिही ला यस्ततीज़ू-न नस्कुम् व
 ला अन्फु-सहुम् यन्सुरून (197) व
 इन् तदज़ूहुम् इलल्-हुदा ला यस्मज़ू,
 व तराहुम् यन्ज़ुरून इलै-क व हुम्
 ला युब्सिरून (198)

आँखें हैं जिनसे देखते हैं, या उनके कान
 हैं जिनसे सुनते हैं, तू कह दे कि पुकारो
 अपने शरीकों को फिर बुराई करो मेरे
 हक में और मुझको ढील न दो। (195)
 मेरा हिमायती तो अल्लाह है जिसने उतारी
 किताब, और वही हिमायत करता है नेक
 बन्दों की। (196) और जिनको तुम
 पुकारते हो उसके सिवा वे नहीं कर सकते
 तुम्हारी मदद और न अपनी जान बचा
 सकें। (197) और अगर तुम उनको पुकारो
 रास्ते की तरफ तो कुछ न सुनें, और तू
 देखता है उनको कि तक रहे हैं तेरी
 तरफ और वे कुछ नहीं देखते। (198)

खुलासा-ए-तफसीर

(गर्ज कि) वाकई तुम खुदा को छोड़कर जिनकी इबादत करते हो वे भी तुम जैसे ही (अल्लाह के मम्लूक) बन्दे हैं (यानी तुमसे बढ़कर नहीं, चाहे घटे हुए हों), सो (हम तो तुमको सच्चा तब जानें कि) तुम (तो) उनको पुकारो (और) फिर उनको चाहिए कि तुम्हारा कहना कर दें अगर तुम (उनके खुदा होने के यकीन व अक्कीदे में) सच्चे हो। (और वे बेचारे तुम्हारा कहना तो क्या करेंगे; कहना मानने के माध्यम तक उनको नसीब नहीं, देख लो) क्या उनके पाँव हैं जिनसे वे चलते हैं, या उनके हाथ हैं जिनसे वे किसी चीज़ को थाम सकें, या उनकी आँखें हैं जिनसे वे देखते हों, या उनके कान हैं जिनसे वे सुनते हों? (जब उनमें काम करने की कुव्वतें तक नहीं तो कोई काम और अमल उनसे कैसे होगा, और) आप (यह भी) कह दीजिए कि (जिस तरह वे अपने मोतकिदों को कोई फायदा पहुँचाने से आजिज़ हैं इसी तरह अपने मुखालिफों को नुकसान भी नहीं पहुँचा सकते, जैसा कि तुम कहा करते हो कि हमारे बुतों की बेअदबी न किया करो वरना वे तुम पर कोई आफत डाल देंगे, जैसे कि आयत “व युखव्विफून-क बिल्लाज़ी-न मिन् दूनिही” के तहत इमाम अब्दुरज़्ज़ाक ने ‘लुबाब’ में नक़ल किया है। और अगर तुम समझते हो कि वे मुझको नुकसान पहुँचा सकते हैं तो) तुम (अपना अरमान निकाल लो और) अपने सब

शरीकों को बुला लो, फिर (सब मिलकर) मुझे नुकसान पहुँचाने की तदबीर करो, फिर (जब तदबीर बन जाये तो) मुझको बिल्कुल भी मोहलत मत दो (बल्कि फौरन उसको नाफिज़ कर दो। देखूँ क्या होता है, और खाक भी नहीं होगा क्योंकि तुम्हारे बनाये हुए ये शरीक तो बिल्कुल बेकार व बेबस हैं, रह गये तुम जो कि कुछ हाथ-पाँव हिला सकते हो तो तुम मेरा इसलिये कुछ नहीं कर सकते कि) यकीनन मेरा मददगार अल्लाह तआला है जिस (के मददगार और साथी होने का खुला सुबूत यह है कि उस) ने (मुझ पर) यह (मुबारक) किताब (जो दोनों जहान की बेहतरी व कामयाबी को अपने अन्दर रखती है) नाज़िल फरमाई। (और अगर वह मेरा साथी व मददगार न होता तो इतनी बड़ी नेमत क्यों अता फरमाता) और (इस खास दलील व निशानी के अलावा एक आम कायदे से भी उसका मददगार होना मालूम है, वह कायदा यह है कि) वह (आम तौर पर) नेक बन्दों की मदद किया करता है (तो नबी तो उन नेक बन्दों में फर्दे कामिल हैं और मैं नबी हूँ तो मेरा भी ज़रूर मददगार होगा। गर्ज यह कि जिनके नुकसान पहुँचाने से डराते हो वे आजिज़ और जो मुझको नुकसान से बचाता है वह कादिर, फिर अन्देशा काहे का) और (अगरचे उनका आजिज़ व बेबस होना ऊपर बिल्कुल स्पष्ट तौर पर बयान हो चुका है लेकिन चूँकि वहाँ असल बयान उनके इबादत के हकदार होने की नफी का था, उनकी बेबसी का ज़िक्र ज़िम्नी तौर पर आ गया था अब आगे मुस्तफ़िल तौर पर उनके बेबस व आजिज़ होने का बयान फरमाते हैं कि) तुम जिन लोगों की खुदा को छोड़कर इबादत करते हो वे (तुम्हारे दुश्मन के मुकाबले में जैसा मैं हूँ) तुम्हारी कुछ मदद नहीं कर सकते, और न (अपने दुश्मन के मुकाबले में जैसा मैं हूँ) वे अपनी मदद कर सकते हैं। और (मदद करना तो बड़ी बात है) अगर उनको (तो) कोई बात बताने को पुकारो तो उसको (भी तो) न सुनें, (इसके भी ऊपर बयान हुए वही दोनों मायने हो सकते हैं) और (जैसे उनके पास सुनने का आला नहीं इसी तरह देखने का आला भी नहीं और उनकी तस्वीर में जो आँखें बना दी जाती हैं वे सिर्फ़ नाम ही की होती हैं काम की नहीं, चुनाँचे) उन (बुत्तों) को आप देखते हैं कि (जैसे) वे आपको देख रहे हैं (क्योंकि शकल तो आँखों की सी बनी हुई है) और वे (वास्तव में) कुछ भी नहीं देखते (क्योंकि हकीकत में तो वे आँखें नहीं। इसी पर काम करने वाली हाथ-पैरों की दूसरी कुव्वतों की नफी समझ लेनी चाहिये, पस ऐसे आजिज़ का क्या डरावा दिखलाते हो)।

मअरिफ़ व मसाईल

إِنِّي وَلِيُّ مَالِكٍ الَّذِي نَزَلَ الْكِتَابَ وَهُوَ يَتَوَلَّى الصَّالِحِينَ

यहाँ वली के मायने मुहाफिज़ व मददगार के हैं, और किताब से मुराद कुरआन और सालिहीन से मुराद बकौल इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु वे लोग हैं जो अल्लाह तआला के साथ किसी को बराबर न करें। इसमें अम्बिया अलैहिमुस्सलाम से लेकर आम नेक मुसलमानों तक सब दाखिल हैं। और आयत के मायने यह है कि मुझे तुम्हारी मुखालफ़त की इसलिये परवाह नहीं कि मेरा मुहाफिज़ व मददगार अल्लाह तआला है जिसने मुझ पर कुरआन नाज़िल किया है।

यहाँ अल्लाह तआला की सब सिफात में से कुरआन नाज़िल करने को खुसूसियत से इसलिये ज़िक्र किया कि तुम जो मेरी दुश्मनी व मुख़ालफ़त पर जमे हो, इसकी वजह कुरआन की तालीम व दावत है जो मैं तुम्हें देता हूँ, तो जिसने मुझ पर यह कुरआन नाज़िल किया है वही मेरा मददगार व मुहाफ़िज़ (रक्षक) है, इसलिये मुझे क्यों फ़िक्र हो।

इसके बाद आख़िरी जुमले में आ़म क़ानून व उसूल बतला दिया कि अम्बिया अलैहिमुस्सलाम की तो बड़ी शान है आ़म नेक लोगों और नेक मुसलमानों का भी अल्लाह मददगार और कफ़ील होता है, उनकी मदद करता है, इसलिये उनको किसी दुश्मन की मुख़ालफ़त और दुश्मनी नुक़सान नहीं पहुँचा सकती। बहुत सी बार तो दुनिया ही में वह उन पर ग़ालिब कर दिया जाता है और अगर किसी वक़्त हिक्मत के तकाज़े के सबब ग़ालिब भी न हो तो भी उसके असल मक़सद में कोई ख़लल नहीं पड़ता, वह ज़ाहिर में नाकाम होकर भी मक़सद के लिहाज़ से कामयाब ही होता है, क्योंकि नेक मोमिन का असल मक़सद हर काम में अल्लाह तआला को राज़ी करना और उसकी इताअत करना है, अगर वह दुनिया में किसी वजह से नाकाम भी हो जाये तो अल्लाह की रज़ा हासिल होने का असल मक़सद फिर भी उसको हासिल होता है और वह कामयाब ही होता है। वल्लाहु आलम।

حُذِّ الْعَفْوَ وَأْمُرٌ بِالْعُرْفِ وَأَعْرِضْ عَنِ الْجَاهِلِينَ ۝ وَإِنَّا
يَنْزَعُكَ مِنَ الشَّيْطَانِ نَزْعٌ فَاسْتَعِذْ بِاللَّهِ إِنَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝ إِنَّ الَّذِينَ اتَّقَوْا إِذَا مَسَّهُمْ
طَافٌ مِّنَ الشَّيْطَانِ تَذَكَّرُوا فَإِذَا هُمْ مُبْصِرُونَ ۝ وَإِخْوَانُهُمْ يَمُدُّوهُمْ فِي الْعِصْيِ ثُمَّ لَا يَقْصِرُونَ ۝

खुज़िल्-अफ़-व वअमुर बिल्-अुर्फि व
अअरिज़् अनिल्-जाहिलीन (199) व
इम्मा यन्जगन्न-क मिनशशैतानि
नज़्गुन् फस्तज़िज़् बिल्लाहि, इन्नहू
समीअुन् अलीम (200) इन्नल्लज़ीनत्-
-तकौ इज़ा मस्सहुम् ताइ-फतुम्-
मिनशशैतानि तज़क्कुरू फ-इज़ा हुम्
मुब्सिरुन (201) व इख़वानुहुम्
यमुददूनुहुम् फिल्-गय्यि सुम्-म ला
युदिसरुन (202)

आदत डाल माफ़ करने की और हुक्म कर
नेक काम करने का और किनारा कर
जाहिलों से। (199) और अगर उभारे
तुझको शैतान की छेड़ तो पनाह माँग
अल्लाह से, वही है सुनने वाला जानने
वाला। (200) जिनके दिल में डर है जहाँ
पड़ गया उन पर शैतान का गुज़र चौंक
गये, फिर उसी वक़्त उनको सूझ आ जाती
है। (201) और जो शैतानों के भाई हैं वे
उनको खींचते चले जाते हैं गुमराही में,
फिर वे कमी नहीं करते। (202)

खुलासा-ए-तफसीर

(लोगों से यह बर्ताव रखिये कि उनके आमाल व अख्लाक में से) सरसरी (नज़र में जो) बर्ताव (माकूल व मुनासिब मालूम हों उन) को कुबूल कर लिया कीजिए (उनकी तह और हकीकत को तलाश न कीजिए बल्कि ज़ाहिरी नज़र में सरसरी तौर पर जो काम किसी से अच्छा हो उसको भलाई पर महमूल कीजिये, अन्दर का हाल अल्लाह के सुपुर्द कीजिये। क्योंकि पूरा इख़्लास और कुबूलियत की तमाम शर्तों की पाबन्दी यह तो बहुत ख़ास लोगों का हिस्सा है। हासिल यह कि सामाजिक ज़िन्दगी में आसानी रखिये, सख़्ती न कीजिये। यह बर्ताव तो अच्छे कामों में है) और (जो काम ज़ाहिरी नज़र में भी बुरा हो उसमें यह बर्ताव रखिये कि उस बारे में) नेक काम की तालीम कर दिया कीजिये, और जाहिलों से एक किनारे हो जाया कीजिये (और उनके बहुत पीछे न पड़िये)। और अगर (इत्तिफ़ाक़ से उनकी जहालत पर) आपको शैतान की तरफ़ से कोई वस्वसा (गुस्से का) आने लगे (जिसमें सदेह हो कि कोई बात मस्तेहत के खिलाफ़ हो जायेगी) तो (ऐसी हालत में फ़ौरन) अल्लाह तआला की पनाह माँग लिया कीजिए, बेशक वह ख़ूब सुनने वाला, ख़ूब जानने वाला है (आपके पनाह माँगने को सुनता है, आपके मक़सद को जानता है वह आपको उससे पनाह देगा। और जिस तरह पनाह माँगना और अल्लाह की तरफ़ रुजू होना आपके लिये लाभदायक है इसी तरह खुदा से डरने वाले तमाम लोगों के लिये भी फ़ायदे की चीज़ है, चुनाँचे) यकीनन (यह बात है कि) जो लोग खुदा से डरने वाले हैं जब उनको शैतान की तरफ़ से कोई ख़तरा (गुस्से का या और किसी बात का) आ जाता है तो वे (फ़ौरन खुदा की) याद में लग जाते हैं (जैसे अल्लाह से पनाह माँगना, दुआ करना और खुदा तआला की बड़ाई और अज़ाब व सवाब को याद करना) सो एक दम उनकी आँखें खुल जाती हैं (और उस मामले की हकीकत उन पर खुल जाती है जिससे वह ख़तरा असर नहीं करता), और (इसके विपरीत) जो (शैतानों के ताबे और पैरोकार) हैं वे (शयातीन) उनको गुमराही में खींचे चले जाते हैं, पस वे (पैरोकार गुमराही से) बाज़ नहीं आते (न वे अल्लाह से पनाह माँगें न महफ़ूज़ रहें। सो वे मुश्रिक लोग तो शैतान के ताबे हैं, ये कब बाज़ आयेंगे, इसलिये इनके ग़म व गुस्से में पड़ना बेकार है)।

मआरिफ़ व मसाईल

कुरआनी अख़्लाक़ का एक मुकम्मल हिदायत-नामा

उपरोक्त आयतें कुरआन के बुलन्द अख़्लाक़ का एक जामे और मुकम्मल हिदायत-नामा है जिसके ज़रिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरबियत करके आपको तमाम अव्वलीन व आखिरीन में आला व अज़ीम अख़्लाक़ वाला होने का ख़िताब दिया गया है।

पिछली आयतों में इस्लाम के दुश्मनों की ग़लत रविश, हठधर्मी और बद-अख़्लाक़ियों का

ज़िक्र करने के बाद इन आयतों में इसके विपरीत रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बुलन्द और उम्दा अख़्लाक़ की हिदायत दी गयी है, जिसके तीन जुमले हैं- पहला जुमला 'खुज़िल-अफ़-व' है। अरबी लुग़त के एतिबार से लफ़्ज़ 'अफ़-व' के कई मायने हो सकते हैं और इस मौके पर हर मायने की गुंजाईश है। इसी लिये तफ़्सीर के उलेमा की मुख़लिफ़ जमाअतों ने मुख़लिफ़ मायने लिये हैं। मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत ने जिसको इख़्तियार किया है वह यह है कि 'अफ़-व' कहा जाता है हर ऐसे काम को जो आसानी के साथ बग़ैर किसी कुल्फ़त और मशक्क़त के हो सके, तो इस जुमले के मायने यह हुए कि आप कुबूल कर लिया करें उस चीज़ को जो लोग आसानी से कर सकें, यानी शरई वाजिबात में आप लोगों से आला मेयार का मुतालबा न करें बल्कि वे जिस पैमाने पर आसानी से अमल कर सकें उतने ही दर्जे को कुबूल कर लिया करें। मसलन नमाज़ की असल हकीक़त तो यह है कि बन्दा सारी दुनिया से कटकर और यक्सू होकर अपने रब के सामने हाथ बाँधे हुए इसलिये खड़ा है कि उसकी तारीफ़ व सना के साथ अपने दिल की बात को डायरेक्ट अल्लाह की बारगाह में खुद पेश कर रहा है, गोया वह उस वक़्त डायरेक्ट हक़ तआला शानुहू से मुख़ातिब है। इसके अल्लाह के सामने जो आज़िज़ी व झुकाव, दिल की हाज़िरी और अदब व एहतियाम की कैफ़ियात व निशानात होने चाहियें, ज़ाहिर है कि लाखों नमाज़ियों में से किसी किसी अल्लाह के बन्दे को नसीब होते हैं, आम लोग इस दर्जे को नहीं पा सकते, तो इस आयत ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह तालीम दी कि आप उन लोगों से इस आला मेयार का मुतालबा ही न रखें बल्कि जिस दर्जे को वे आसानी से हासिल कर सकते हैं वही कुबूल फ़रमा लें। इसी तरह दूसरी इबादतों ज़कात, रोज़ा, हज और आम मामलों व समाजी बर्ताव और रहन-सहन के शरई वाजिबात में जो लोग पूरा पूरा हक़ अदा नहीं कर सकते उनसे सरसरी इताअत व फ़रमाँबरदारी ही को कुबूल कर लिया जाये।

सही बुख़ारी में हज़रत अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से खुद हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से आयत के यही मायने नक़ल किये गये हैं।

और एक रिवायत में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस आयत के नाज़िल होने पर फ़रमाया कि मुझे अल्लाह तआला ने लोगों के आमाल व अख़्लाक़ में सरसरी इताअत कुबूल करने का हुक्म दिया है, मैंने इरादा कर लिया है कि जब तक मैं उन लोगों के साथ हूँ ऐसा ही अमल करूँगा। (इब्ने कसीर)

तफ़्सीर के इमामों की एक बड़ी जमाअत हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर, हज़रत अब्दुल्लाह बिन जुबैर, हज़रत सिदीका आयशा रज़ियल्लाहु अन्हुम और मुजाहिद रह. वग़ैरह ने इस जुमले के भी यही मायने क़रार दिये हैं।

दूसरे मायने 'अफ़-व' के माफ़ी और दरगुज़र करने के भी आते हैं। तफ़्सीर के उलेमा की एक जमाअत ने इस जगह यही मायने मुराद लेकर इस जुमले का यह मतलब क़रार दिया है कि आप गुनाहगारों, ख़ताकारों के गुनाह व क़सूर को माफ़ कर दिया करें।

इमामे तफ़्सीर इब्ने जरीर तबरी ने नक़ल किया है कि जब यह आयत नाज़िल हुई तो हुज़ूरे

पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जिब्रीले अमीन से आयत का मतलब पूछा। जिब्रीले अमीन ने अल्लाह तआला से मालूम करने के बाद यह मतलब बतलाया कि इस आयत में आपको यह हुक्म दिया गया है कि जो शख्स आप पर जुल्म करे आप उसको माफ़ कर दें और जो आपको कुछ न दे आप उस पर बख्शि़श करें, और जो आप से ताल्लुक तोड़े आप उससे भी मिला करें।

इस जगह इब्ने मर्दूया ने हज़रत सअद बिन उबादा रज़ियल्लाहु अन्हु की रियायत से नक़ल किया है कि ग़ज़वा-ए-उहुद में जब हुज़ुरे पाक के चचा हज़रत हमज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु को शहीद किया गया और बड़ी बेदर्दी से उनके बदन के अंग काटकर लाश की बेहुर्मती की गयी तो हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने लाश को इस हालत में देखकर फ़रमाया कि जिन लोगों ने हमज़ा के साथ ऐसा मामला किया है मैं उनके सत्तर आदमियों के साथ ऐसा मामला करके छोड़ूँगा, इस पर यह आयत नाज़िल हुई जिसमें आपको बतलाया गया कि आपका यह मक़ाम नहीं, आपके शायाने शान यह है कि माफ़ी व दरगुज़र से काम लें।

सही बुख़ारी में इस जगह एक वाकिआ हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से नक़ल किया है कि हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु की ख़िलाफ़त के ज़माने में उयैना इब्ने हसन मदीना में आया और अपने भतीजे हुर्र इब्ने कैस रज़ियल्लाहु अन्हु का मेहमान हुआ। हज़रत हुर्र बिन कैस उन इल्म वाले हज़रात में से थे जो हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु की सलाहकार समीति में शरीक हुआ करते थे। उयैना ने अपने भतीजे हुर्र बिन कैस रज़ियल्लाहु अन्हु से कहा कि तुम अमीरुल-मोमिनीन के ख़ास और करीबी हो, मेरे लिये उनसे मुलाकात का कोई वक़्त ले लो। हुर्र बिन कैस रज़ियल्लाहु अन्हु ने हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु से दरख़्वास्त की कि मेरा चचा उयैना आप से मिलना चाहता है। आपने इजाज़त दे दी।

मगर उयैना ने फ़ारूके आज़म की मजलिस में पहुँचकर बहुत ही असभ्य और ग़लत गुफ़्तगू की, कि न आप हमें हमारा पूरा हक़ देते हैं न हमारे साथ इन्साफ़ करते हैं। हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु को इस पर गुस्सा आया तो हुर्र बिन कैस ने अर्ज़ किया कि अमीरुल-मोमिनीन! अल्लाह तआला ने फ़रमाया है:

خُذِ الْعَفْوَ وَأْمُرْ بِالْعُرْفِ وَأَعْرِضْ عَنِ الْجَاهِلِينَ.

और यह शख्स भी जाहिलों में से है। यह आयत सुनते ही फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु का सारा गुस्सा ख़त्म हो गया और उसको कुछ नहीं कहा। हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु की यह आदत मारुफ़ व मशहूर थी कि:

كَانَ وَقَافًا عِنْدَ كِتَابِ اللَّهِ عَزَّوَجَلَّ.

यानी किताबुल्लाह के अहक़ाम के आगे गर्दन झुका डालते थे।

यह आयत बुलन्द-अख़्लाकी की जामे आयत है। कुछ उलेमा ने इसका ख़ुलासा यह बयान फ़रमाया है कि लोग दो किस्म के हैं- एक मोहसिन यानी अच्छे काम करने वाले। दूसरे बदकार ज़ालिम। इस आयत ने दोनों तब्क़ों के साथ अच्छे अख़्लाक़ बरतने की यह हिदायत दी है कि

नेक काम करने वालों से उनकी जाहिरी नेकी को कुबूल कर लो, ज्यादा खोज-बीन और खोद-कुदेद में न पड़ो, और नेकी के आला मेयार का उनसे मुतालबा न करो, बल्कि जितना वे आसानी से कर सकें उसको काफी समझो। और बदकारों के मामले में यह हिदायत दी कि उनको नेक काम सिखलाओ और नेकी का रास्ता बतलाओ। अगर वे उसको कुबूल न करें और अपनी गुमराही और ग़लती पर जमे रहें और जाहिलाना गुफ्तगू से पेश आयें तो उनसे अलैहदा हो जायें और उनकी जाहिलाना गुफ्तगू का जवाब न दें, इस तर्ज से यह उम्मीद है कि उनको किसी वक्त होश आये और अपनी ग़लती से बाज़ आ जायें।

दूसरी आयत में इरशाद फरमाया:

وَمَا يَنْزِعُكَ مِنَ الشَّيْطَانِ نَزْعٌ فَاسْتَعِذْ بِاللَّهِ. إِنَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ.

यानी अगर आपको शैतान की तरफ़ से कोई वस्वसा आने लगे तो अल्लाह से पनाह माँग लें, वह सुनने वाला जानने वाला है।

दर हकीकत यह आयत भी पहली आयत के मज़मून की तकमील (पूरा करने वाली) है, क्योंकि इसमें जो हिदायत दी गयी है कि जुल्म करने वालों और जहालत से पेश आने वालों की ख़ता से दरगुज़र करें, उनकी बुराई का जवाब बुराई से न दें। यह बात इनसानी तबीयत के लिये सबसे ज्यादा भारी और मुश्किल है, खुसूसन ऐसे मौकों में शैतान अच्छे भले इनसान को भी गुस्सा दिलाकर लड़ने झगड़ने पर आमादा कर ही देता है। इसलिये दूसरी आयत में यह हिदायत दी गयी है कि अगर ऐसे सब्र की आजमाईश के मौकों में गुस्से के ज़ब्बात ज्यादा भड़कते नज़र आयें तो समझ लो कि यह शैतान की तरफ़ से है और उसका इलाज यह है कि अल्लाह तआला से पनाह माँग लो।

हदीस में है कि दो शख्स हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम के सामने लड़ झगड़ रहे थे और एक शख्स गुस्से में बेकाबू हो रहा था, आपने उसको देखकर फरमाया कि मैं एक ऐसा कलिमा जानता हूँ कि अगर यह शख्स वह कलिमा कह ले तो इसकी यह उत्तेजना और भड़कना जाता रहे। फरमाया वह कलिमा यह है:

أَعُوذُ بِاللَّهِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ

अरुज़ु बिल्लाहि मिनशैतानिर्रजीम

उस शख्स ने हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम से सुनकर फौरन यह कलिमा पढ़ लिया तो फौरन ही सारा गुस्सा, जोश और भड़कना ख़त्म हो गया।

एक अजीब फायदा

इमामे तफसीर इब्ने कसीर रह. ने इस जगह एक अजीब बात यह लिखी है कि पूरे कुरआन में तीन आयतें बुलन्द और आला अख़्लाक की तालीम व हिदायत के लिये जामे आई हैं और तीनों के आखिर में शैतान से पनाह माँगने का ज़िक्र है। एक तो यही सूर: आराफ़ की आयत है, दूसरी सूर: मोमिनून की यह आयत है:

ادْفَعْ بِالَّتِي هِيَ أَحْسَنُ السَّيِّئَةِ. نَعْنُ أَعْلَمُ بِمَا يَصِفُونَ. وَقُلْ رَبِّ اعْوِذْكَ مِنْ هَمَزَاتِ الشَّيْطَانِ، وَاعْوِذْكَ
رَبِّ أَنْ يُخْضِرُونِ.

(यानी सूर: मोमिनून की आयत नम्बर 97)

कि दूर करो बुराई को भलाई से, हम खूब जानते हैं जो कुछ ये कहा करते हैं और आप यूँ दुआ कीजिए कि ऐ मेरे परवर्दिगार! मैं आप से पनाह माँगता हूँ शैतानों के दबाव से, और ऐ मेरे परवर्दिगार! मैं आप से पनाह माँगता हूँ इस बात से कि शयातीन मेरे पास आयें।

तीसरी आयत सूर: हा-मीम सज्दा की यह है:

وَلَا تَسْتَوِ الْحَسَنَةُ وَلَا السَّيِّئَةُ، ادْفَعْ بِالَّتِي هِيَ أَحْسَنُ فَإِذَا الَّذِي بَيْنَكَ وَبَيْنَهُ عَدَاوَةٌ كَأَنَّهُ وَلِيٌّ حَمِيمٌ. وَمَا يُلْقِهَا إِلَّا الَّذِينَ صَبَرُوا وَمَا يُلْقِهَا إِلَّا ذُرْوَعٌ عَظِيمٌ. وَإِنَّمَا يَنزَغَنَّكَ مِنَ الشَّيْطَانِ نَزْعٌ فَاسْتَعِذْ بِاللَّهِ. إِنَّهُ هُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ.

यानी नेकी और बदी बराबर नहीं होती, आप नेक बर्ताव से टाल दिया करें, फिर देखते ही देखते आप में और जिस शख्स में दुश्मनी थी वह ऐसा हो जायेगा जैसा कोई दिली दोस्त होता है। और यह बात उन्हीं लोगों को नसीब होती है जो बड़े मुस्तकिल-मिज़ाज हैं। और यह बात उसको हासिल होती है जो बड़ा नसीब वाला है। और अगर आपको शैतान की तरफ से कुछ वस्वसा (दिल में ख्याल) आने लगे तो अल्लाह की पनाह माँग लिया कीजिए, बिला शुक्ल वह खूब सुनने वाला और खूब जानने वाला है।

इन तीनों आयतों में गुस्सा दिलाने वालों से माफी व दरगुज़र और बुराई के बदले में भलाई करने की हिदायत के साथ-साथ शैतान से पनाह माँगने की हिदायत फरमाई गयी है। इससे मालूम होता है कि शैतान को इन्सानी झगड़ों से खास दिलचस्पी है, जहाँ झगड़े का कोई मौका पेश आता है शयातीन उसको अपने शिकार की जगह बना लेते हैं। और बड़े से बड़े बुर्दबार वफ़ार वाले आदमी को गुस्सा दिलाकर हृद से निकाल देने की कोशिश करते हैं।

इसका इलाज यह है कि जब गुस्सा काबू में न आता देखें तो समझ जायें कि शैतान मुझ पर ग़ालिब आ रहा है और अल्लाह तआला की तरफ रुजू होकर उससे पनाह माँगें, तब अक्लाक के आला मेयार की तकमील हो सकेगी। इसीलिये बाद की तीसरी और चौथी आयत में भी शैतान से पनाह माँगने की हिदायत दी गयी है।

وَإِذَا لَمْ تَأْتِهِمْ بِآيَةٍ قَالُوا لَوْلَا اجْتَبَيْتَهَا قُلْ إِنَّمَا أَتَّبِعُ مَا يُوحَىٰ إِلَيَّ مِنْ رَبِّي ۖ هَذَا بَصَائِرُ مِنْ رَبِّكُمْ وَهُدًى وَرَحْمَةٌ لِّقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ۝ وَإِذَا قُرِئَ الْقُرْآنُ فَاسْتَمِعُوا لَهُ وَأَنْصِتُوا لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُونَ ۝

व इज़ा लम् तअतिहिम् बिआयतिन्
 कालू लौलज्जबै-तहा, कुल् इन्नमा
 अतबिअु मा यूहा इलय-य मिर्ब्बी
 हाज़ा बसा-इरु मिर्ब्बिकुम् व हुदंव-
 व रहमतुल्-लिकौमिंयुअ्मिनून
 (203) व इज़ा कुरिअल्-कुरआनु
 फस्तमिअू लहू व अन्सितू लअल्लकुम्
 तुर्हमून (204)

और जब तू लेकर न जाये उनके पास
 कोई निशानी तो कहते हैं क्यों न छोट
 लाया तू अपनी तरफ से, तू कह दे मैं तो
 चलता हूँ उस पर जो हुक्म आये मेरे पास
 मेरे रब की तरफ से, ये सूझ की बातें हैं
 तुम्हारे रब की तरफ से और हिदायत
 और रहमत है उन लोगों को जो मोमिन
 हैं। (203) और जब कुरआन पढ़ा जाये
 तो उसकी तरफ कान लगाये रहो और
 चुप रहो ताकि तुम पर रहम हो। (204)

खुलासा-ए-तफसीर

और जब आप (उनके फरमाईशी मोजिजों में से जिनकी फरमाईश दुश्मनी के तौर पर करते थे) कोई मोजिज़ा उनके सामने ज़ाहिर नहीं करते (इस वजह से कि हक् तआला उस मोजिजे को अपनी हिक्मत के तकाज़े से पैदा नहीं करते) तो वे लोग (रिसालत का इनकार करने के लिये आप से) कहते हैं कि आप (अगर नबी हैं तो) यह मोजिज़ा क्यों न (ज़हूर में) लाए? आप फरमा दीजिए कि (मेरा काम अपने इख्तियार से मोजिजे लाना नहीं बल्कि मेरा असली काम यह है कि) मैं उसकी पैरवी करता हूँ जो मुझ पर मेरे रब की तरफ से हुक्म भेजा गया है (इसमें तब्लीग़ भी आ गयी। अलबत्ता नुबुव्वत के साबित करने के लिये सिर्फ़ मोजिजे का ज़ाहिर होना ज़रूरी है तो तो वो ज़ाहिर हो चुके हैं, चुनाँचे उनमें सबसे बड़ा एक यही कुरआन है जिसकी शान यह है कि) ये (अपनी जगह) गोया तुम्हारे रब की तरफ से बहुत-सी दलीलें हैं (क्योंकि इसकी हर सूरत की मात्रा मसलन एक मोजिज़ा है तो इस हिसाब से कुरआन का पूरा मजमूआ कितनी दलीलें हुआ और इसका यह दलील होना तो आम है) और (रहा इसका मौजूदा नफ़ा तो वह खास है मानने वालों के साथ, चुनाँचे यह) हिदायत और रहमत है उन लोगों के लिये जो (इस पर) ईमान रखते हैं। और (आप उनसे यह भी कह दीजिये कि) जब कुरआन पढ़ा जाया करे (मसलन जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इसकी तब्लीग़ फरमायें) तो इसकी तरफ कान लगा दिया करो और खामोश रहा करो (ताकि इसका बेमिसाल और खुदाई कलाम होना और इसकी तालीम की खूबी समझ में आये जिससे) उम्मीद है कि तुम पर (नई या और अधिक) रहमत हो।

मआरिफ व मसाईल

उपरोक्त आयतों में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सच्चा रसूल होने का सुबूत और उस पर मुख़ालिफ़ों के शुब्हात व शंकाओं का जवाब और इन दोनों के ज़िम्न में चन्द शर्इ

अहकाम का जिक्र फरमाया गया है।

रिसालत के सुबूत के लिये तमाम अम्बिया अलैहिमुस्सलाम को मोजिजे दिये जाते हैं। तमाम नबियों के सरदार हजरत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इसी ताल्लुक से इतने मोजिजे अता किये गये जो पिछले नबियों के मोजिजों से बहुत अधिक भी हैं और स्पष्ट भी।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मोजिजे जो कुरआन मजीद और हदीस की सही रिवायतों से साबित हैं उनकी बड़ी तायदाद है, उलेमा ने इस पर मुस्तकिल किताबें लिखी हैं। अल्लामा सुयूती रह. की किताब ख़साईस-ए-कुबरा दो मोटी जिल्दों में इसी विषय पर लिखी हुई मशहूर व परिचित है।

मगर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बेशुमार मोजिजे सामने आने के बावजूद मुखालिफ लोग अपनी ज़िद और हठधर्मी से अपनी तरफ से मुतैयन करके नये-नये मोजिजे दिखलाने का मुतालबा करते रहते थे जिसका जिक्र इसी सूरत में पहले भी आ चुका है।

उपरोक्त दो आयतों में से पहली आयत में उनका एक उसूली जवाब दिया गया है जिसका खुलासा यह है कि पैगम्बर का मोजिजा उसकी रिसालत की एक गवाही और सुबूत होता है और जब मुद्दई (दावा करने वाले) का दावा किसी मोतबर गवाही से साबित हो जाये और मुखालिफ पक्ष ने उस पर कोई जिरह भी न की हो तो उसको दुनिया की किसी अदालत में यह हक नहीं दिया जाता कि वह मुद्दई से इसका मुतालबा करे कि फुल्लों-फुल्लों मख्सूस लोगों की गवाही पेश करे तो हम मानेंगे, मौजूदा गवाही पर कोई जिरह पेश किये बगैर हम तस्लीम नहीं करते। इसलिये बहुत से स्पष्ट और खुले मोजिजों के देखने के बाद मुखालिफों का यह कहना कि फुल्लों किस्म का खास मोजिजा दिखलाईये तो हम आपको रसूल मानें, यह एक दुश्मनी भरा मुतालबा है जिसको कोई अदालत सही तस्लीम नहीं कर सकती।

चुनौचे पहली आयत में इरशाद फरमाया कि जब आप इन लोगों का निर्धारित किया हुआ कोई खास मोजिजा नहीं दिखलाते तो ये आपकी रिसालत का इनकार करने के लिये कहते हैं कि आपने फुल्लों मोजिजा क्यों नहीं दिखलाया? तो आप इनको यह जवाब दे दीजिए कि मेरा काम अपने इख्तियार से मोजिजे दिखलाना नहीं बल्कि मेरा असली काम यह है कि मैं उन अहकाम का पालन करूँ जो मुझ पर मेरे रब की तरफ से वही के ज़रिये भेजे जाते हैं, जिनमें तब्लीग भी शामिल है। इसलिये मैं अपने असली काम में मशगूल हूँ और रिसालत के लिये वो दूसरे मोजिजे भी काफी हैं जो तुम सब लोगों की आँखों के सामने आ चुके हैं। उनके देखने के बाद किसी खास मोजिजे का मुतालबा एक मुखालफत और दुश्मनी भरा मुतालबा है जो ध्यान देने और तयज्जोह के काबिल नहीं।

और जो मोजिजे दिखलाये गये हैं उनमें से कुरआन खुद एक ज़बरदस्त और बड़ा मोजिजा है जिसने सारी दुनिया को अपना बल्कि अपनी एक छोटी सी सूरत के जैसा लाने का खुला चैलेंज दिया और सारी दुनिया बावजूद पूरी कोशिशों के इसके जैसा लाने से अजिज हो गयी जो निहायत स्पष्ट और खुली निशानी इस बात की है कि कुरआन किसी इन्सान का कलाम नहीं

कि अल्लाह जल्ल शानुहू का बेमिसल कलाम है। इसलिये फरमाया:

هَذَا بَصَائِرُ مِنْ رَبِّكُمْ.

यानी यह कुरआन तुम्हारे रब की तरफ से बहुत सी दलीलों और मोजिजों का मजमूआ है, जिनमें मामूली सा गौर करने वाला यह यकीन किये बगैर नहीं रह सकता कि यह कलाम अल्लाह तआला शानुहू का ही है, किसी मख्लूक का इसमें कोई दखल नहीं। इसके बाद फरमाया:

وَهَذِي رَحْمَةٌ لِّقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ.

यानी यह कुरआन हक की दलील तो सारे जहान के लिये है मगर मकसद तक पहुँचाने वाला और अल्लाह तआला की रहमत का हकदार बनाने वाला सिर्फ उन लोगों के लिये है जो इस पर ईमान लायें।

दूसरी आयत में बतलाया गया कि कुरआन मजीद मोमिनों के लिये रहमत है मगर इस रहमत से फायदा हासिल करने के लिये कुछ शर्तें और आदाब हैं जिनको सार्वजनिक खिताब के साथ इस तरह जिक्र फरमाया:

وَإِذَا قُرِئَ الْقُرْآنُ فَاسْتَمِعُوا لَهُ وَأَنْصِتُوا.

यानी जब कुरआन पढ़ा जाये तो तुम इस पर कान लगाओ और खामोश रहो।

इस आयत के शाने नुजूल में विभिन्न रिवायतें हैं कि यह हुक्म नमाज की किराअत के बारे में आया है या खुतबे के बारे में या बिना किसी कैद के कुरआन पढ़ने के बारे में, चाहे वह नमाज में हो या खुतबे में या दूसरी हालतों में। लेकिन मुफ़स्सिरिन की अक्सरियत के नज़दीक सही यह है कि जिस तरह आयत के अलफ़ाज़ आम हैं इसी तरह इसका हुक्म भी सब हालात के लिये आम है सिवाय कुछ खास मौकों को छोड़कर।

इसी लिये हनफी हज़रात ने इस आयत से इस पर दलील पकड़ी है कि इमाम के पीछे मुक्तदियों को किराअत नहीं करनी चाहिये, और जिन फुक्हा ने मुक्तदी को फ़ातिहा पढ़ने की हिदायत की है उनमें भी कुछ हज़रात ने इसकी रियायत रखी है कि इमाम के चुप होने के वक़्त फ़ातिहा पढ़ी जाये। यहाँ इस बहस का मौका नहीं, इस बहस में उलेमा ने मुस्तक़िल बहुत सी छोटी-बड़ी किताबें लिखी हैं, उनका अध्ययन किया जाये।

आयत का असल मज़मून यह है कि कुरआने करीम जिन लोगों के लिये रहमत करार दिया गया उसकी शर्त यह है कि वे कुरआन के अदब व एहतियाम को पहचानें और उस पर अमल करें। और कुरआन का बड़ा अदब यह है कि जब वह पढ़ा जाये तो सुनने वाले अपने कान उस पर लगायें और खामोश रहें।

कान लगाने में यह भी दाख़िल है कि उसको सुनें और यह भी कि उसके अहक़ाम पर अमल करने की भरपूर कोशिश करें। (तफ़सीरे मज़हरी व कुर्तुबी)

आयत के आख़िर में "लअल्लकुम् तुहमून" फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया कि कुरआन का रहमत होना उसके मज़कूरा आदाब की रियायत रखने पर मौकूफ़ है।

कुरआन पढ़े जाने के वक्त खामोश रहकर सुनने के

मुताल्लिक चन्द ज़खरी मसाईल

इसके विपरीत यह खुद ज़ाहिर है कि अगर किसी ने इसकी खिलाफवर्जी (उल्लंघन) करके कुरआन की बेकद्री की तो वह रहमत के बजाय अल्लाह के कहर व ग़ज़ब का मुस्तहिक होगा।

नमाज़ के अन्दर कुरआन की तरफ़ कान लगाना और खामोश रहना तो आम तौर पर मुसलमानों को मालूम है कि अगरचे अमल में कोताही करते हैं कि बाज़ लोगों को यह भी ख़बर नहीं होती कि इमाम ने कौनसी सूरत पढ़ी है, उन पर लाज़िम है कि वे कुरआन की बड़ाई को पहचानें और सुनने की तरफ़ ध्यान रखें। जुमे के ख़ुतबे वग़ैरह का भी शरीअत में यही हुक्म है। अलावा इस आयत के रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद ख़ास तौर से ख़ुतबे के बारे में यह आया है कि:

إذا خرج الإمام فلا صلوة ولا كلام.

यानी जब इमाम ख़ुतबे के लिये निकल आये तो न नमाज़ है न कलाम।

और एक हदीस में यह भी है कि उस वक्त कोई शख्स दूसरे को नसीहत के लिये ज़बान से यह भी न कहे कि खामोश रहो (करना ही हो तो हाथ से इशारा कर दे)। गुर्ज़ कि ख़ुतबे के दौरान में किसी तरह का कलाम, तस्बीह, दुस्द या नमाज़ वग़ैरह जायज़ नहीं।

फ़ुकहा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) ने फ़रमाया है कि जो हुक्म जुमे के ख़ुतबे का है वही ईदों के ख़ुतबे का और निकाह वग़ैरह के ख़ुतबे का है, कि उस वक्त कान लगाना और खामोश रहना वाजिब है।

अलबत्ता नमाज़ और ख़ुतबे के अलावा आम हालात में कोई शख्स अपने आप तिलावत कर रहा है तो दूसरों को खामोश रहकर उस पर कान लगाना वाजिब है या नहीं, इसमें फ़ुकहा के अक़वाल भिन्न हैं, कुछ हज़रात ने इस सूरत में भी कान लगाने और खामोश रहने को वाजिब और इसके खिलाफ़ करने को गुनाह करार दिया है, और इसी लिये ऐसी जगह जहाँ लोग अपने कामों में मशगूल हों या आराम करते हों किसी के लिये बुलन्द आवाज़ से कुरआन पढ़ने को जायज़ नहीं रखा, और जो शख्स ऐसे मौकों में कुरआन बुलन्द आवाज़ से पढ़ता है उसको गुनाहगार फ़रमाया है। खुलासतुल-फ़तावा वग़ैरह में ऐसा ही लिखा है।

लेकिन कुछ दूसरे फ़ुकहा (मसाईल के माहिर उलेमा) ने यह वज़ाहत फ़रमाई है कि कान लगाना और सुनना सिर्फ़ उन जगहों में वाजिब है जहाँ कुरआन को सुनाने ही के लिये पढ़ा जा रहा हो, जैसे नमाज़ व ख़ुतबे वग़ैरह में, और अगर कोई शख्स अपने आप तिलावत कर रहा है या चन्द आदमी किसी एक मकान में अपनी-अपनी तिलावत कर रहे हैं तो दूसरे की आवाज़ पर कान लगाना और खामोश रहना वाजिब नहीं, क्योंकि सही हदीसों से यह साबित है कि रसूले

करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम रात की नमाज़ में आवाज़ से क़िराअत फ़रमाते थे और आपकी पाक बीवियाँ उस वक़्त नींद में होती थीं। कई बार हुजूरों से बाहर भी हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की आवाज़ सुनी जाती थी।

और बुख़ारी व मुस्लिम की एक हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक सफ़र में रात को पड़ाव डालने के बाद सुबह को फ़रमाया कि मैंने अपने अश़्शरी सफ़र के साथियों को उनकी तिलावत की आवाज़ों से रात के अंधेरे में पहचान लिया कि उनके ख़ैमे किस तरफ़ और कहाँ हैं, अगरचे दिन में मुझे उनके ठहरने की जगह का इल्म नहीं था।

इस वाक़िए में भी रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन अश़्शरी हज़रात को इससे मना नहीं फ़रमाया कि बुलन्द आवाज़ से क्यों क़िराअत की, और न सोने वालों को हिदायत फ़रमाई कि जब क़ुरआन पढ़ा जा रहा हो तो तुम सब उठ बैठो और क़ुरआन सुनो।

इस किस्म की रिवायतों से फ़ुकहा (दीन के उलेमा) ने नमाज़ से बाहर की तिलावत के मामले में कुछ गुंजाईश दी है, लेकिन अच्छा और बेहतर सब के नज़दीक यही है कि नमाज़ से बाहर भी जब कहीं से क़ुरआन पढ़ने की आवाज़ आये तो उस पर कान लगाये और ख़ामोश रहे, और इसी लिये ऐसे मौकों में जहाँ लोग सोने में या अपने कारोबार में मशगूल हों क़ुरआन को बुलन्द आवाज़ से पढ़ना मुनासिब नहीं।

इससे उन हज़रात की ग़लती मालूम हो गयी जो क़ुरआन पढ़े जाने के वक़्त रेडियो ऐसे मजमे में खोल देते हैं जहाँ लोग उसके सुनने की तरफ़ मुतयज्जह नहीं होते। इसी तरह रात को लाउडस्पीकर लगाकर मस्जिदों में क़ुरआन की तिलावत इस तरह करना कि उसकी आवाज़ से बाहर के सोने वालों की नींद या काम करने वालों के काम में ख़लल आये, दुरुस्त नहीं।

अल्लामा इब्ने हम्माम रह. ने लिखा है कि जिस वक़्त इमाम नमाज़ में या ख़तीब ख़ुतबे में कोई मज़मून जन्नत व दोज़ख़ के मुताल्लिक पढ़ रहा हो तो उस वक़्त जन्नत की दुआ या दोज़ख़ से पनाह माँगना भी जायज़ नहीं, क्योंकि इस आयत के एतिबार से अल्लाह तआला की रहमत का वायदा उस शख्स के लिये है जो क़ुरआन पढ़े जाने के वक़्त ख़ामोश रहे, और जो ख़ामोश न रहे उससे वायदा नहीं। अलबत्ता नफ़िल नमाज़ों में ऐसी आयतों की तिलावत के बाद आहिस्ता दुआ माँगना सुन्नत से साबित है और सवाब का ज़रिया है। (तफ़सीरे मज़हरी)

وَاذْكُرْ رَبَّكَ فِي نَفْسِكَ تَضَرُّعًا وَخِيفَةً وَدُونَ الْجَهْرِ مِنَ الْقَوْلِ

بِالْعُدُوِّ وَالْأَصْغَالِ وَلَا تَكُنْ مِنَ الْغَافِلِينَ ۝ إِنَّ الدِّينَ عِنْدَ رَبِّكَ لَا يَسْتَكْبِرُونَ عَنْ

عِبَادَتِهِ وَيُسَبِّحُونَهُ وَلَهُ يَسْجُدُونَ ۝

वज़कुर रब्ब-क फी नफ़िस-क
तज़रुअं-व ख़ी-फ़तं-व दूनलजसि
मिनल्-कौलि बिल्-गुदुव्वि वल्-
आसालि व ला तकुम् मिनल्-
ग़ाफ़िलीन (205) इन्नल्लजी-न
अिन्-द रब्बि-क ला यस्तक्बिरु-न
अन् अिबा-दतिही व युसब्बिहूनहू व
लहू यस्जुदून। (206) ❀ ❀ ▲

और याद करता रह अपने रब को अपने
दिल में गिड़गिड़ाता हुआ और डरता हुआ,
और ऐसी आवाज़ से जो कि पुकार कर
बोलने से कम हो सुबह के वक़्त और शाम
के वक़्त, और मत रह बेख़बर। (205)
बेशक जो तेरे रब के नज़दीक हैं वे तकबुर
नहीं करते उसकी बन्दगी से और याद
करते हैं उसकी पाक ज़ात को और उसी
को सज्दा करते हैं। (206) ❀ ❀ ▲

खुलासा-ए-तफ़सीर

और (आप हर-हर शख्स से यह भी कह दीजिये कि) ऐ शख्स! अपने रब की याद किया
कर (कुरआन से या तस्बीह वगैरह से, चाहे) अपने दिल में (यानी आहिस्ता आवाज़ से) अज़िज़ी
के साथ, और (चाहे) ख़ौफ़ के साथ, और ज़ोर की आवाज़ के मुक़ाबले में कम-आवाज़ के साथ,
(इसी अज़िज़ी और ख़ौफ़ के साथ) सुबह और शाम (यानी हमेशा), और (हमेशा का मतलब यह
है कि) ग़ाफ़िलों में शुमार मत होना (कि जिन ज़िक्रों का हुक्म है उनको भी छोड़ दो) यकीनन
जो (फ़रिश्ते) तेरे रब के नज़दीक (खास और करीबी) हैं वे उसकी इबादत से (जिसमें असली
अकीदे हैं) तकबुर नहीं करते और उसकी पाकी बयान करते हैं (जो कि ज़बान की नेकी है)
और उसको सज्दा करते हैं (जो कि हाथ-पाँव और जिस्म के अन्य अंगों के आमाल में से है)।

मअरिफ़ व मसाईल

इनसे पहली आयतों में कुरआन मजीद सुनने का ज़िक्र और उसके आदाब का बयान था,
इन दो आयतों में जम्हूर (उलेमा की अक्सरियत) के नज़दीक आम और बिना किसी कैद के
अल्लाह के ज़िक्र का हुक्म और उसके आदाब का बयान है जिसमें कुरआन की तिलावत (पढ़ना)
भी शामिल है, और हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु के नज़दीक इसमें भी ज़िक्र
से मुराद कुरआन ही है और जो आदाब इसमें बयान हुए हैं वो भी कुरआन की तिलावत ही से
संबन्धित हैं, लेकिन यह कोई मतभेद नहीं क्योंकि कुरआन के अलावा दूसरे ज़िक्रों का भी सब
के नज़दीक यही हुक्म और यही आदाब हैं।

खुलासा यह है कि इस आयत में इनसान को अल्लाह की याद और ज़िक्र का हुक्म और
इसके साथ उसके वक़्तों और आदाब का बयान है।

आहिस्ता और आवाज़ से ज़िक्र करने के अहकाम

पहला अदब ज़िक्र के आहिस्ता या बुलन्द आवाज़ से करने के बारे में है। इसके बारे में कुरआने करीम ने इस आयत में दो तरह का इख्तियार दिया है- ज़िक्र-ए-ख़फी और ज़िक्र-ए-जहर। ज़िक्र-ए-ख़फी (पोशीदा तौर पर ज़िक्र) के बारे में फरमाया:

وَاذْكُرْ رَبَّكَ فِي نَفْسِكَ.

यानी अपने रब को याद किया करो अपने दिल में। इसकी भी दो सूरतें हैं- एक यह कि बग़ैर ज़बान की हरकत के सिर्फ दिल में ध्यान और ख़्याल अल्लाह तआला की ज़ात व सिफ़ात का रखे जिसको दिली ज़िक्र या तफ़क्कुर (सोचना और गौर करना) कहा जाता है। दूसरे यह कि इसके साथ ज़बान से भी आहिस्ता आवाज़ में अल्लाह के नामों के हुरूफ़ अदा करे। सब से अफ़ज़ल और बेहतर सूरत यही है कि जो ज़िक्र कर रहा है उसके मफ़हूम (मतलब) को समझकर दिल में भी उसका पूरा ख़्याल और ध्यान हो और ज़बान से भी अदा करे, क्योंकि इस सूरत में दिल के साथ ज़बान भी ज़िक्र में शरीक हो जाती है, और अगर सिर्फ दिल ही दिल में ध्यान और तफ़क्कुर में मशगूल रहे, ज़बान से कोई हर्फ़ अदा न करे वह भी बड़ा सवाब है, और सबसे कम दर्जा इसका है कि सिर्फ ज़बान पर ज़िक्र हो और दिल उससे ख़ाली और गाफ़िल हो। ऐसे ही ज़िक्र को मौलाना रूमी रह. ने फरमाया है:

बर जुबाँ तस्बीह व दर दिल गाव-ख़र

ई चुनीं तस्बीह के दारद असर

और मक़सद मौलाना रूमी रह. का यह है कि गाफ़िल दिल के ज़िक्र करने से ज़िक्र के आसार व बरकतें कामिल हासिल नहीं होते। इसका इनकार नहीं कि यह सिर्फ ज़बानी ज़िक्र भी सवाब और फ़ायदे से ख़ाली नहीं, क्योंकि कई बार यह ज़बानी ज़िक्र ही दिली ज़िक्र का ज़रिया और सबब बन जाता है, ज़बान से कहते-कहते दिल भी प्रभावित होने लगता है और कम से कम बदन का एक अंग तो ज़िक्र में मशगूल है ही, वह भी सवाब से ख़ाली नहीं। इसलिये जिन लोगों को ज़िक्र व तस्बीह में दिली जमाव, सुकून, ध्यान और दिल की हाज़िरी हासिल न हो वे भी ऐसे ज़िक्र को बेफ़ायदा समझ कर छोड़ें नहीं, जारी रखें और ध्यान जमाने की कोशिश करते रहें।

दूसरा तरीका ज़िक्र का इसी आयत में यह बतलाया:

وَدُّوْنَ الْجَهْرِ مِنَ الْقَوْلِ.

यानी जोर की आवाज़ के मुक़ाबले में कम आवाज़ के साथ। यानी ज़िक्रुल्लाह में मशगूल होने वाले को यह भी इख्तियार है कि आवाज़ से ज़िक्र करे, मगर उसका अदब यह है कि बहुत जोर से चीख़कर न करे, दरमियानी आवाज़ के साथ करे, जिसमें अदब व एहतियाम का ध्यान रहे। बहुत जोर से ज़िक्र व तिलावत करना इसकी निशानी होती है कि मुखातब का अदब व एहतियाम उसके दिल में नहीं। जिस हस्ती का अदब व एहतियाम और रौब इन्सान के दिल में

होता है उसके सामने तबई तौर पर इनसान बहुत बुलन्द आवाज़ से नहीं बोल सकता, इसलिये आम ज़िक्रुल्लाह हो या कुरआन की तिलावत जब आवाज़ से पढ़ा जाये तो इसकी रियायत रखना चाहिये कि ज़रूरत से ज्यादा आवाज़ ऊँची न हो।

खुलासा यह है कि इस आयत से ज़िक्रुल्लाह और कुरआन की तिलावत के तीन तरीके हासिल हुए- एक यह कि सिर्फ़ दिली ज़िक्र यानी कुरआन और ज़िक्र के मायनों का ध्यान और ख्याल और उनमें विचार पर बस करे, ज़बान को बिल्कुल हरकत न हो। दूसरे यह कि उसके साथ ज़बान को भी हरकत दे, मगर आवाज़ बुलन्द न हो, जिसको दूसरे आदमी सुन सकें। ज़िक्र के ये दोनों तरीके अल्लाह तआला के इस इरशाद:

وَاذْكُرْ رَبَّكَ فِي نَفْسِكَ.

में दाख़िल हैं। और तीसरा तरीका यह है कि दिल की हाज़िरी और ध्यान के साथ ज़बान की हरकत भी हो और आवाज़ भी, मगर इस तरीके के लिये अदब यह है कि आवाज़ को ज्यादा बुलन्द न करे, दरमियानी हद से आगे न बढ़ाये। यह तरीका कुरआन के इरशाद:

وَذُرْنَ الْجَهْرَ مِنَ الْقَوْلِ.

में तालीम फ़रमाया गया है। कुरआने करीम की एक दूसरी आयत ने इसकी और अधिक वज़ाहत इन लफ़्ज़ों में फ़रमाई है:

وَلَا تَجْهَرُ بِصَلَاتِكَ وَلَا تُخَافِتُ بِهَا وَابْتَغِ بَيْنَ ذَلِكَ سَبِيلًا.

इसमें हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हुक्म है कि अपनी क़िराअत (कुरआन पढ़ने) में न ज्यादा आवाज़ को ज़ाहिर किया करें और न बिल्कुल धीरे और छुपाकर हो, बल्कि आवाज़ की बुलन्दी और बिल्कुल पस्त करने के बीच की कैफ़ियत रखा करें।

नमाज़ में क़िराअत (कुरआन पढ़ने) के बारे में हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत सिद्दीक़े अक़बर रज़ियल्लाहु अन्हु और फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु को यही हिदायत फ़रमाई।

सही हदीस में है कि एक मर्तबा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम रात के आख़िरी हिस्से में घर से निकले। हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु के मकान पर पहुँचे तो देखा कि वह नमाज़ में मशगूल थे मगर तिलावत आहिस्ता कर रहे थे। फिर हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अन्हु के मकान पर पहुँचे तो देखा कि वह बहुत ऊँची आवाज़ से तिलावत कर रहे थे। जब सुबह को ये दोनों हज़रात हाज़िरे ख़िदमत हुए तो आपने सिद्दीक़े अक़बर रज़ियल्लाहु अन्हु से फ़रमाया कि मैं रात तुम्हारे पास गया तो देखा कि तुम पस्त आवाज़ से तिलावत कर रहे थे, सिद्दीक़े अक़बर रज़ियल्लाहु अन्हु ने अर्ज़ किया या रसूलुल्लाह! मुझे जिस ज़ात को सुनाना था उसने सुन लिया यह काफी है। इसी तरह फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु से फ़रमाया कि आप बुलन्द आवाज़ से तिलावत कर रहे थे, उन्होंने अर्ज़ किया कि क़िराअत में आवाज़ ज़ाहिर करने से मेरा मक़सद यह था कि नींद का ग़लबा न रहे और शैतान उसकी आवाज़ से भागे।

हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह फैसला फरमाया कि सिद्दीके अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु को यह हिदायत की कि ज़रा कुछ आवाज़ बुलन्द करें और फ़ारुके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु को यह कि कुछ पस्त किया करें। (अबू दाऊद)

तिर्मिज़ी में रिवायत है कि हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तिलावत के बारे में कुछ हज़रात ने सवाल किया कि आवाज़ बुलन्द और ज़ाहिर करते थे या आहिस्ता रखते थे? उन्होंने फरमाया कि कभी आवाज़ से कभी पोशीदा तौर पर, दोनों तरह तिलावत फरमाते थे।

रात की नफ़िल नमाज़ में और नमाज़ से बाहर तिलावत में कुछ हज़रात ने आवाज़ ऊँची रखने और ज़ाहिर करके पढ़ने को पसन्द किया और कुछ ने आहिस्ता को। इसी लिये इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह. ने फरमाया कि तिलावत करने वाले को इख़्तियार है जिस तरह चाहे तिलावत करे, अलबत्ता आवाज़ से तिलावत करने में चन्द शर्तें सब के नज़दीक ज़रूरी हैं- अव्वल यह कि उसमें नाम व नमूद और दिखावे का अन्देशा न हो। दूसरे उसकी आवाज़ से दूसरे लोगों का हर्ज या तकलीफ़ न हो, किसी दूसरे शख्स की नमाज़ व तिलावत या काम में या आराम में खलल डालने वाली न हो, और जहाँ नाम व नमूद और दिखावे का या दूसरे लोगों के काम या आराम में खलल का अन्देशा हो तो सब के नज़दीक आहिस्ता ही पढ़ना बेहतर है।

और जो हुक्म कुरआन की तिलावत का है वही दूसरे ज़िक्रों और तस्बीह का है कि आहिस्ता और बुलन्द आवाज़ से दोनों तरह जायज़ है बशर्ते कि आवाज़ इतनी बुलन्द न हो जो अजिज़ी व इन्किसारी, तवाज़ो और अदब के ख़िलाफ़ हो, तथा उसकी आवाज़ से दूसरे लोगों के काम या आराम में खलल न आता हो।

और इसका फैसला कि धीरे पढ़ने और आवाज़ से पढ़ने में से अफ़ज़ल क्या है, व्यक्तियों और हालात के एतिबार से अलग-अलग है। कुछ लोगों के लिये आवाज़ से और ज़ाहिर करके बेहतर होता है कुछ के लिये आहिस्ता, और किसी वक़्त आवाज़ से पढ़ना बेहतर होता है और किसी वक़्त धीरे और आहिस्ता पढ़ना। (तफ़सीरे मज़हरी व रूहुल-बयान वगैरह)

दूसरा अदब तिलावत और ज़िक्र का यह है कि अजिज़ी और गिड़गिड़ाने के साथ ज़िक्र किया जाये जो नतीजा इसका होता है कि इनसान को हक़ तआला की बड़ाई व जलाल का ध्यान हो और जो ज़िक्र कर रहा है उसके मायने व मतलब पर नज़र हो।

तीसरा अदब इसी आयत में लफ़ज़ "ख़ौफ़तन्" से यह बतलाया गया कि ज़िक्र व तिलावत के वक़्त इनसान पर हैबत और ख़ौफ़ की कैफ़ियत होनी चाहिये। ख़ौफ़ इसका कि हम अल्लाह तआला की इबादत और बड़ाई का हक़ अदा नहीं कर सकते, मुम्किन है कि हमसे कोई बेअदबी हो जाये, साथ ही अपने गुनाहों के ध्यान व ख़याल से अल्लाह के अज़ाब का ख़ौफ़ तथा अन्जाम और ख़ात्मे का ख़ौफ़, कि मालूम नहीं हमारा ख़ात्मा किस हाल पर होना है। बहरहाल ज़िक्र व तिलावत इस तरह किया जाये जैसे कोई भयभीत और डरने वाला किया करता है।

दुआ के यही आदाब इसी सूरः आराफ़ के शुरू में भी एक आयत में इस तरह आये हैं:

ادْعُوا رَبَّكُمْ تَضَرُّعًا وَخُفْيَةً.

इसमें 'खीफ़तन्' के बजाय 'खुफ़यतन्' का लफ़्ज़ आया है जिसके मायने आहिस्ता आवाज़ से ज़िक्र करने के हैं। गोया ज़िक्र व तिलावत का एक अदब यह भी है कि आहिस्ता पस्त आवाज़ से किया जाये। लेकिन इस आयत ने इसके मायने भी वाज़ेह कर दिये कि अगरचे आवाज़ से ज़िक्र करना भी मना नहीं, मगर शर्त यह है कि ज़रूरत से जायद आवाज़ बुलन्द न करे, और इतनी बुलन्द न करे जिसमें दिल के झुकाव और आज़िज़ी व गिड़गिड़ाने की कैफ़ियत जाती रहे।

आयत के आख़िर में ज़िक्र व तिलावत के वक़्त बतलाये कि सुबह व शाम होना चाहिये। इसके यह मायने भी हो सकते हैं कि कम से कम दिन में दो मर्तबा सुबह और शाम ज़िक्रुल्लाह में मशगूल होना चाहिये। और यह भी हो सकता है कि सुबह शाम बोलकर रात व दिन के तमाम वक़्त मुराद हों, जैसे पूरब व पश्चिम बोलकर सारा आलम मुराद लिया जाता है। इस सूरत में आयत के मायने यह होंगे कि इनसान पर लाज़िम है कि हमेशा हर हाल में ज़िक्र व तिलावत का पाबन्द रहे। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हर वक़्त हर हाल में अल्लाह की याद में मशगूल रहते थे।

आयत के आख़िर में फ़रमाया:

وَلَا تَكُنْ مِنَ الْغَافِلِينَ.

यानी अल्लाह की याद को छोड़कर ग़फ़लत वालों में शामिल न हो जाना, कि यह बहुत बड़ा ख़सारा (घाटा) है।

दूसरी आयत में लोगों की सीख और नसीहत के लिये अल्लाह की बारगाह के नेक और ख़ास बन्दों का एक मख़सूस हाल बयान किया गया है कि जो लोग अल्लाह तआला के पास हैं वे उसकी इबादत से तकब्बुर नहीं करते। अल्लाह तआला के पास होने से मुराद अल्लाह तआला का मक़बूल होना है, जिसमें सब फ़रिश्ते और तमाम अम्बिया अलैहिमुस्सलाम और उम्मत के नेक लोग शामिल हैं। और तकब्बुर करने का मतलब यह है कि अपने आपको बड़ा आदमी समझकर इन इबादतों में कमी और कोताही नहीं करते बल्कि अपने को आज़िज़ व मोहत्ताज समझकर हमेशा अल्लाह की याद और इबादत में मशगूल और तस्बीह करते रहते हैं, और अल्लाह तआला को सज्दा करते रहते हैं।

इससे यह भी मालूम हुआ कि जिन लोगों को हमेशा की इबादत और अल्लाह की याद की तौफ़ीक़ होती है तो यह इसकी निशानी है कि वे हर वक़्त अल्लाह के पास हैं और अल्लाह तआला का साथ उनको हासिल है।

सज्दे के कुछ फ़ज़ाईल और अहक़ाम

यहाँ नमाज़ की इबादत में से सिर्फ़ सज्दे का ज़िक्र इसलिये किया गया कि नमाज़ के तमाम

अरकान में सज्दे को खास फज़ीलत हासिल है।

सही मुस्लिम में है कि एक शख्स ने हज़रत सोबान रज़ियल्लाहु अन्हु से कहा कि मुझे कोई ऐसा अमल बतलाईये जिससे मैं जन्नत में जा सकूँ। हज़रत सोबान रज़ियल्लाहु अन्हु खामोश रहे। उसने फिर सवाल किया, फिर भी खामोश रहे। जब तीसरी मर्तबा सवाल को दोहराया तो उन्होंने कहा कि मैंने यही सवाल रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से किया था, आपने मुझे यह वसीयत फरमाई कि कसरत से सज्दे किया करो क्योंकि जब तुम एक सज्दा करते हो तो उसकी वजह से अल्लाह तआला तुम्हारा एक दर्जा बढ़ा देते हैं और एक गुनाह माफ़ फरमा देते हैं। यह शख्स कहते हैं कि हज़रत सोबान रज़ियल्लाहु अन्हु के बाद मैं हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु से मिला तो उनसे भी यही सवाल किया, उन्होंने भी यही जवाब दिया।

और सही मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया- बन्दा अपने रब के साथ सबसे ज्यादा करीब उस वक़्त होता है जबकि बन्दा सज्दे में हो, इसलिये तुम सज्दे की हालत में ख़ूब दुआ किया करो कि उसके कुबूल होने की बड़ी उम्मीद है।

याद रहे कि तन्हा सज्दे की कोई इबादत परिचित नहीं, इसलिये इमामे आजम अबू हनीफ़ा रह. के नज़दीक सज्दों की कसरत व अधिकता से मुराद यह है कि कसरत से नवाफिल पढ़ा करें, जितनी नफ़लें ज्यादा होंगी सज्दे ज्यादा होंगे।

लेकिन अगर कोई शख्स सिर्फ सज्दे ही करके दुआ कर ले तो इसमें भी कोई हर्ज नहीं और सज्दे में दुआ करने की हिदायत नफ़ली नमाज़ों के लिये मख़सूस है, फ़राईज़ में नहीं।

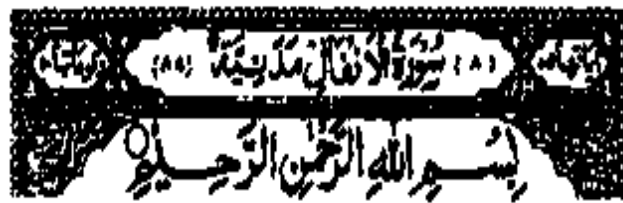
सूर: आराफ़ ख़त्म हुई। इसकी आखिरी आयत सज्दे की आयत है। सही मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है कि जब कोई आदम का बेटा सज्दे की कोई आयत पढ़ता है और फिर सज्दा-ए-तिलावत करता है तो शैतान रोता हुआ भागता है और कहता है कि हाय अफ़सोस इनसान को सज्दा करने का हुक्म मिला और उसने तामील कर ली तो उसका ठिकाना जन्नत हुआ, और मुझे सज्दे का हुक्म हुआ मैंने नाफ़रमानी की तो मेरा ठिकाना जहन्नम हुआ।

(अल्लाह का शुक्र व एहसान है कि सूर: आराफ़ की तफ़सीर पूरी हुई)

* सूरः अजफ़ाल *

यह सूरत मदनी है। इसमें 75 आयतें
और 10 रुकूअ़ हैं।

सूर: अनफ़ाल



يَسْأَلُونَكَ عَنِ الْأَنْفَالِ قُلِ الْأَنْفَالُ لِلَّهِ وَالرَّسُولِ، فَأَتَقُوا اللَّهَ وَأَصْلِحُوا ذَاتَ بَيْنِكُمْ وَأَطِيعُوا اللَّهَ
وَرَسُولَهُ إِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ①

सूर: अनफ़ाल मदीना में नाज़िल हुई। इसमें 75 आयतें और 10 रुकूअ हैं।

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्हीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

यस्अलून-क अ निल्-अन्फालि,
कुलिल्-अन्फालु लिल्लाहि वरसूलि
फत्तकुल्ला-ह व अस्तिहू जा-त
बैनिकुम् व अतीजुल्ला-ह व रसू-लहू
इन् कुन्तुम् मुअ्मिनीन (1)

तुझसे पूछते हैं हुक्म गुनीमत का, तू कह
दे कि गुनीमत का माल अल्लाह का है
और रसूल का, सो डरो अल्लाह से और
सुलह करो आपस में, और हुक्म मानो
अल्लाह का और उसके रसूल का अगर
ईमान रखते हो। (1)

सूरत के मज़ामीन

सूर: अनफ़ाल जो इस वक़्त शुरू हो रही है यह मदनी सूरत है। इससे पहली सूरत यानी सूर: आराफ़ में मुशिरकों और अहले किताब की जहालत व दुश्मनी और कुफ़ व फ़साद का तज़क़िरा और उससे संबन्धित बातों का बयान था।

इस सूरत में ज़्यादातर मज़ामीन ग़ज़वा-ए-बदर के मौक़े पर उन्हीं लोगों के बुरे अन्जाम, नाकामी, शिकस्त और उनके मुकाबले में मुसलमानों की कामयाबी और फ़तूहात से मुताल्लिक हैं जो मुसलमानों के लिये एहसान व इनाम और काफ़िरों के लिये अज़ाब व इन्तिकाम था।

और चूँकि इस इनाम की सबसे बड़ी वजह मुसलमानों का खुलूस और लिल्लाहियत और उनका आपसी इत्तिफ़ाक़ है और यह इख़्लास व इत्तिफ़ाक़ नतीजा है अल्लाह तआला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुकम्मल इताअत का, इसलिये सूरत के शुरू में परहेज़गारी, हक़ की फ़रमाँबरदारी और ज़िक़ुल्लाह व तवक्कुल वगैरह की तालीम दी गयी।

खुलासा-ए-तफसीर

ये लोग आप से ग़नीमतों का हुक्म मालूम करते हैं। आप फ़रमा दीजिये कि ये ग़नीमतें अल्लाह की हैं (यानी वो अल्लाह की मिल्क हैं, उसको ही हक़ है कि उनके बारे में जो चाहे हुक्म दे) और रसूल की हैं (इस मायने में कि वह अल्लाह तआला से हुक्म पाकर उसको नाफ़िज़ करेंगे)। हासिल यह है कि ग़नीमत के मालों के बारे में तुम्हारी राय और तजवीज़ का कोई दख़ल नहीं बल्कि उसका फैसला शरीअत के हुक्म के मुताबिक़ होगा) सो तुम (दुनिया की हिस्स मत करो, आख़िरत के तालिब रहो, इस तरह पर कि) अल्लाह से डरो और अपने आपस के ताल्लुकात का सुधार करो (कि आपस में हसद और बुग़ज़ न रहे), और अल्लाह की और उसके रसूल की इताअत करो, अगर तुम ईमान वाले हो।

मअरिफ़ व मसाईल

यह आयत ग़ज़वा-ए-बदर में पेश आने वाले एक वाक़िए से संबन्धित है। आयत की मुफ़त्सल तफ़सीर से पहले वह वाक़िआ सामने रखा जाये तो तफ़सीर समझना आसान हो जायेगा।

वाक़िआ यह है कि ग़ज़वा-ए-बदर जो कुफ़्र व इस्लाम का सबसे पहला मुक़ाबला और जंग थी, उसमें जब मुसलमानों को फ़तह हुई और कुछ माले ग़नीमत हाथ आया तो सहाबा किराम के बीच उसकी तक़सीम के मुताल्लिक़ एक ऐसा वाक़िआ पेश आ गया जो इख़्लास व इत्तिफ़ाक़ के उस मक़ाम के शायाने शान न था जिस पर सहाबा किराम की पूरी ज़िन्दगी ढली हुई थी, इसलिये सबसे पहली ही आयत में उसका फैसला फ़रमा दिया गया ताकि उस पाकीज़ा ग़िरोह के दिलों में सच्चाई व इख़्लास और इत्तिफ़ाक़ व क़ुरबानी के सिवा कुछ न रहे।

इस वाक़िए की तफ़सीर ग़ज़वा-ए-बदर में शरीक हज़रत उबादा रज़ियल्लाहु अन्हु की जुबानी मुस्नद अहमद, तिर्मिज़ी, इब्ने माजा, मुस्तदरक़ हाकिम वग़ैरह में इस तरह मन्कूल है कि हज़रत उबादा बिन सामित से किसी ने इस आयत में आये लफ़्ज़ अनफ़ाल का मतलब पूछा तो उन्होंने फ़रमाया कि यह आयत तो हमारे यानी बदर वाले सहाबा ही के बारे में नाज़िल हुई है जिसका वाक़िआ यह था कि माले ग़नीमत की तक़सीम के बारे में हमारे बीच कुछ इख़्तिलाफ़ (विवाद और मतभेद) पैदा हो गया था जिसने हमारे अख़्लाक़ पर बुरा असर डाला। अल्लाह तआला ने इस आयत के ज़रिये ग़नीमत के मालों को हमारे हाथों से लेकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सुपुर्द कर दिया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बदर में शरीक सब सहाबा में उसको बराबर तौर पर तक़सीम फ़रमा दिया।

सूरत यह पेश आई थी कि हम सब ग़ज़वा-ए-बदर में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ निकले और दोनों पक्षों में घमासान की जंग के बाद अल्लाह तआला ने दुश्मन को शिकस्त दी तो अब हमारे लश्कर के तीन हिस्से हो गये- कुछ लोगों ने दुश्मन का पीछा

किया ताकि वह फिर वापस न आ सके। कुछ लोग काफिरों के छोड़े हुए गनीमत के माल जमा करने में लग गये और कुछ लोग रसूल करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के गिर्द इसलिये जमा रहे कि किसी तरफ से छुपा हुआ दुश्मन हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर हमला न कर दे। जब जंग खत्म हो गयी और रात को हर शख्स अपने ठिकाने पर पहुँचा तो जिन लोगों ने माले गनीमत जमा किया था वे कहने लगे कि यह माल तो हमने जमा किया है इसलिये इसमें हमारे सिवा किसी का हिस्सा नहीं। और जो लोग दुश्मन का पीछा करने में गये थे उन्होंने कहा कि तुम लोग हमसे ज्यादा इसके हकदार नहीं हो, क्योंकि हमने ही दुश्मन को पीछे हटने पर मजबूर किया और तुम्हारे लिये यह मौका उपलब्ध कराया कि तुम बेफिक्र होकर माले गनीमत जमा कर लो। और जो लोग हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हिफाजत के लिये आपके गिर्द (चारों तरफ) जमा रहे उन्होंने कहा कि हम चाहते तो हम भी माले गनीमत जमा करने में तुम्हारे साथ शरीक होते लेकिन हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हिफाजत जो जिहाद का सबसे अहम काम था हम उसमें मशगूल रहे, इसलिये हम भी इसके हकदार हैं।

सहाबा किराम की यह गुफ्तगू रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तक पहुँची, इस पर यह आयत मजकूर नाज़िल हुई जिसने वाज़ेह कर दिया कि यह माल अल्लाह का है इसका कोई मालिक व हकदार नहीं सिवाय उसके जिसको रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अता फरमायें। हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अल्लाह के हुक्म के मातहत उस माल को जिहाद में शरीक सब हज़रात में बराबर तौर पर तकसीम फरमा दिया। (इब्ने कसीर) और सब के सब अल्लाह व रसूल के इस फैसले पर राजी हो गये। और उनके खिलाफ़े शान जो सूरतेहाल आपस में एक-दूसरे से आगे बढ़ने की पेश आ गयी थी उस पर शर्मिन्दा हुए।

और मुस्नद अहमद ही में इस आयत के शाने नुज़ूल (उतरने के सबब) का एक दूसरा वाकिआ हज़रत सअद बिन अबी वक्कास रज़ियल्लाहु अन्हु का भी मन्कूल है। वह फरमाते हैं कि गुज़वा-ए-बदर में मेरे भाई उमैर शहीद हो गये। मैंने उनके मुकाबले में आने वाले मुशिकों में से सईद बिन आस को क़त्ल कर दिया और उसकी तलवार लेकर हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में हाज़िर हुआ। मैं चाहता था कि यह तलवार मुझे मिल जाये मगर हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हुक्म दिया कि इसको माले गनीमत में जमा कर दो। मैं हुक्म मानने पर मजबूर था मगर मेरा दिल इसकी सख्त तकलीफ़ महसूस कर रहा था कि मेरा भाई शहीद हुआ और मैंने उसके मुकाबले में आये एक दुश्मन को मारकर उसकी तलवार हासिल की वह भी मुझसे ले ली गयी, मगर इस सबके बावजूद हुक्म की तामील के लिये माले गनीमत में जमा करने के लिये आगे बढ़ा तो अभी दूर नहीं गया था कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर सूरः अनफ़ाल की यह आयत नाज़िल हुई और आपने मुझे बुलवाकर यह तलवार मुझे इनायत फरमा दी। कुछ रिवायतों में यह भी है कि हज़रत सअद रज़ियल्लाहु अन्हु ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से अर्ज भी किया था कि यह तलवार मुझे दे दी जाये मगर आपने फरमाया कि न यह मेरी चीज़ है जो किसी को दे दूँ और न आपकी मिल्क है, इसको पूरे माले

गुनीमत में जमा कर दो, इसका फैसला जो कुछ अल्लाह तआला फरमायेंगे उसके मुताबिक होगा। (तफसीर इब्ने कसीर, तफसीरे मजहरी)

हो सकता है कि ये दोनों वाकिए पेश आये हों और दोनों ही के जवाब में यह आयत नाजिल हुई हो।

आयत की पूरी तफसीर

इसमें लफ्ज़ अनफाल नफिल की जमा है जिसके मायने हैं फज़ल व इनाम। नफ़ली नमाज़, रोज़े, सद्के को भी नफिल इसलिये कहा जाता है कि वह किसी के जिम्मे लाज़िम व वाजिब नहीं, करने वाले अपनी खुशी से करते हैं। कुरआन व सुन्नत की परिभाषा में लफ्ज़ नफिल और अनफाल माले गुनीमत के लिये भी बोला जाता है जो काफ़िरों से जिहाद के समय हासिल होता है, मगर कुरआने करीम में इस मायने के लिये तीन लफ्ज़ इस्तेमाल हुए हैं- अनफाल, गुनीमत, फ़ै। लफ्ज़ अनफाल तो इसी आयत में ज़िक्र हुआ है और लफ्ज़ गुनीमत और उसकी तफसील इस सूरा की इक्तालीसवीं आयत में आने वाली है, और लफ्ज़ फ़ै और उसके मुताल्लिक तफसील सूरः हशर में बयान हुई है “व मा अफ़ाअल्लाहु.....” में।

और इन तीनों के मायने थोड़े-थोड़े फ़र्क के साथ अलग-अलग हैं। फ़र्क मामूली और थोड़ा होने की वजह से कई बार एक लफ्ज़ दूसरे की जगह आम तौर पर माले गुनीमत के लिये भी इस्तेमाल कर लिया जाता है। गुनीमत उमूमन उस माल को कहते हैं जो जंग व जिहाद के ज़रिये मुख़ालिफ़ फ़रीक से हासिल हो। और फ़ै उस माल को कहते हैं जो बग़ैर जंग व क़िताल के काफ़िरों से मिले, चाहे वे छोड़कर भाग जायें या रज़ामन्दी से दे देना कुबूल करें। और नफिल और अनफाल का लफ्ज़ अक्सर उस इनाम के लिये बोला जाता है जो अमीरे जिहाद किसी ख़ास मुजाहिद को उसकी कारगुज़ारी के बदले में उसके हिस्से के अलावा इनाम के तौर पर अता करे। यह मायने तफसीर इब्ने जरीर में हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से नक़ल किये हैं। (इब्ने कसीर) और कभी उमूमी तौर पर माले गुनीमत को भी नफिल और अनफाल के लफ्ज़ से ताबीर किया जाता है, इस आयत में अक्सर मुफ़सिरीन ने यही आम मायने लिये हैं। सही बुख़ारी में हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से यही आम मायने नक़ल किये हैं। और हकीकत यह है कि यह लफ्ज़ आम और ख़ास दोनों मायने के लिये बोला जाता है इसलिये कोई इख़िलाफ़ (टकराव और मतभेद) नहीं। और इसकी बेहतरीन व्याख्या व तहकीक़ वह है जो इमाम अबू उबैद रह. ने अपनी क़िताबुल-अमवाल में ज़िक्र की है, वह फ़रमाते हैं कि असल लुग़त में नफिल कहते हैं फज़ल व इनाम को, और इस उम्मत में मरहूमा पर अल्लाह तआला का यह खुसूसी इनाम है कि जिहाद व क़िताल के ज़रिये जो माल काफ़िरों से हासिल हों उनको मुसलमानों के लिये हलाल कर दिया गया, वरना पिछली उम्मतों में यह दस्तूर न था बल्कि माले गुनीमत के लिये क़ानून यह था कि वो किसी के लिये हलाल नहीं थे, गुनीमत के तमाम मालों को एक जगह जमा कर दिया जाता था और आसमान से क़ुदरती तौर पर एक आग (बिजली)

आती थी और उसको जलाकर खाक कर देती थी, यही उस जिहाद के अल्लाह के यहाँ मकबूल होने की निशानी और पहचान होती थी। और अगर कोई माले ग़नीमत जमा किया गया और आसमानी बिजली ने आकर उसको न जलाया तो यह इसकी निशानी होती थी कि यह जिहाद अल्लाह तआला के नज़दीक मकबूल नहीं, इसलिये उस माले ग़नीमत को भी मरदूद और मन्हूस समझा जाता था और उसे कोई इस्तेमाल न करता था।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से बुखारी व मुस्लिम में मन्कूल है कि आपने फ़रमाया- मुझे पाँच चीज़ें ऐसी अता हुई हैं जो मुझसे पहले किसी पैग़म्बर और उनकी उम्मत को नहीं मिलीं। उन्हीं पाँच में से एक यह है कि:

أَحَلَّتْ لِي الْغَنَائِمُ وَلَمْ تَحُلْ لِأَحَدٍ قَبْلِي.

यानी मेरे लिये ग़नीमत के माल हलाल कर दिये गये हालाँकि मुझसे पहले किसी के लिये हलाल न थे।

इसी लिये तफ़सीर के इमामों की एक जमाअत ने जिनमें हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु, इमाम मुजाहिद, इमाम इक्रिमा, इमाम सुदी वग़ैरह दाख़िल हैं यह फ़रमाया कि यह हुक्म इस्लाम के शुरू ज़माने में था जब तक ग़नीमत के मालों की तकसीम का वह क़ानून नाज़िल न हुआ था जो इस सूरत के पाँचवें रुकूअ में आ रहा है। क्योंकि इसमें पूरे माले ग़नीमत को रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मर्ज़ी और बेहतर समझने पर छोड़ दिया है कि जिस तरह चाहें उसमें अपना इख़्तियार इस्तेमाल करें, और आगे जो तफ़सीली अहक़ाम आये हैं उनमें यह है कि ग़नीमत के तमाम माल का पाँचवाँ हिस्सा बैतुल-माल में आम मुसलमानों की ज़रूरतों के लिये सुरक्षित कर दिया जाये और चार हिस्से जिहाद में शरीक हज़रत को एक ख़ास क़ानून के तहत तकसीम कर दिये जायें, जिनकी तफ़सील सही हदीसों में बयान हुई है। इस तफ़सीली बयान ने सूर: अनफ़ाल की पहली आयत को मन्सूख़ (निरस्त) कर दिया। और कुछ हज़रत ने फ़रमाया कि यहाँ कोई नासिख़ मन्सूख़ (हुक्म को रद्द करने वाला या रद्द व निरस्त होने वाला) नहीं, बल्कि मुख़्तसर और तफ़सील से बयान होने का फ़र्क़ है। सूर: अनफ़ाल की पहली आयत में संक्षिप्त रूप से बयान है और इक्तालीसवीं आयत में इसी की तफ़सील है। अलबत्ता फ़ै का माल जिसके अहक़ाम सूर: हशर में बयान हुए हैं वह पूरा का पूरा रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के कब्ज़े व इख़्तियार में है, आप अपनी मर्ज़ी और समझ से जिस तरह चाहें अमल फ़रमायें। इसी लिये उस जगह अहक़ाम बयान फ़रमाने के बाद यह इरशाद फ़रमाया है:

وَمَا أَتَاكُمُ الرَّسُولُ فَخُذُوهُ وَمَا نَهَاكُمْ عَنْهُ فَانْتَهُوا.

यानी जो कुछ तुमको हमारा रसूल दे दे उसको ले लो और जिसको रोक दे उससे बाज़ रहो।

इस तफ़सील से मालूम हुआ कि माल-ए-ग़नीमत वह है जो जंग व जिहाद के ज़रिये हाथ आये और माल-ए-फ़ै वह जो बग़ैर क़िताल व जिहाद के हाथ आ जाये। और लफ़ज़ अनफ़ाल

दोनों के लिये आम भी बोला जाता है और खास उस इनाम को भी कहते हैं जो किसी गाजी (मुजाहिद) को जिहाद का अमीर अता करे।

इस सिलसिले में मुजाहिदों को इनाम देने की चार सूतें हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के दौर से राईज (प्रचलित) हैं- एक यह कि यह ऐलान फरमा दें कि जो शख्स किसी मुखालिफ को कत्ल करे तो जो सामान कत्ल होने वाले सिपाही से हासिल हो वह उसी का है जिसने कत्ल किया। यह सामान माले गनीमत में जमा ही न किया जायेगा। दूसरे यह कि बड़े लश्कर में से कोई जमाअत अलग करके किसी खास दिशा में जिहाद के लिये भेजी जाये और यह हुक्म दे दिया जाये कि उस तरफ से जो माले गनीमत हासिल हो वह उसी खास जमाअत का होगा जो वहाँ गयी है, सिर्फ इतना करना होगा कि उस माल में से पाँचवाँ हिस्सा आम मुसलमानों की जरूरतों के लिये बैतुल-माल में जमा किया जायेगा। तीसरे यह कि पाँचवाँ हिस्सा जो बैतुल-माल में जमा किया जाता है उसमें से किसी खास गाजी (मुजाहिद) को उसकी विशेष कारगुजारी के सिले में अमीर के सही समझने और मर्जी के मुताबिक दिया जाये। चौथे यह कि पूरे माले गनीमत में से कुछ हिस्सा अलग करके सेवा करने वाले लोगों को बतौर इनाम दिया जाये जो मुजाहिदों के घोड़ों वगैरह की निगरानी व देखभाल करते हैं और उनके कामों में मदद करते हैं। (तफसीर इब्ने कसीर)

आयत के मजमून का खुलासा यह हुआ कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को खिताब करके फरमाया कि लोग आप से अनफाल के मुताल्लिक सवाल करते हैं, आप उनसे कह दीजिए कि अनफाल सब अल्लाह के हैं और उसके रसूल के, यानी खुद कोई उनका हकदार या मालिक नहीं, अल्लाह तआला के हुक्म से उसके रसूल जो कुछ फैसला फरमायें वही नाफिज़ और लागू होगा।

लोगों के आपसी इत्तिफाक व एकजुटता की बुनियाद तक़्वा और खौफ़-ए-ख़ुदा है

इस आयत के आखिरी जुमले में इरशाद फरमाया:

فَاتَّقُوا اللَّهَ وَأَطِيعُوا أَمْرَ اللَّهِ وَرَسُولَهُ إِن كُنتُمْ مُؤْمِنِينَ

जिसमें सहाबा किराम को खिताब करके इरशाद फरमाया कि अल्लाह तआला से डरो और आपस के ताल्लुकात को दुरुस्त रखो। इसमें इशारा उस वाकिए की तरफ है जो ग़ज़वा-ए-बदर में गनीमत के मालों की तक़सीम के बारे में सहाबा किराम में आपस में पेश आ गया था, जिसमें आपसी खींचतान और नाराज़गी का खतरा था। हक़ तआला ने गनीमत के माल के बंटवारे का कज़िया तो खुद इस आयत के ज़रिये तय फरमा दिया, अब उनके दिलों की इस्लाह और आपसी ताल्लुकात की बेहतरी की तदबीर बतलाई गयी है जिसका मुख्य बिन्दू तक़्वा और खौफ़-ए-ख़ुदा है।

तज़ुर्बा गवाह है कि जब तक़्वा और ख़ुदा व आखिरत का खौफ़ ग़ालिब होता है तो बड़े

झगड़े झगड़े मिनटों में ख़त्म हो जाते हैं। आपसी मनमुटाव और नफरत के पहाड़ गर्द बनकर उड़ जाते हैं। तक़वे वालों का हाल बकौल मौलाना रूमी रह. यह हो जाता है:

खुद चह जाय-ए-जंग व जदल नेक व बद

कीं अलम अज़ सुल्हहा हम मी रमद

यानी उन लोगों को किसी जंग व जदल और झगड़े से तो क्या दिलचस्पी होती, उनको तो मख़्लूक की सुलह और दुरुस्ती के लिये भी फ़ुर्सत नहीं मिलती। क्योंकि जिसका दिल अल्लाह तआला की मुहब्बत व ख़ौफ़ और याद में मशगूल हो उसको दूसरों से ताल्लुकात बढ़ाने की कहाँ फ़ुर्सत होती है:

ब-सौदा-ए-जानाँ ज जाँ मुश्तग़िल

ब-ज़िक्रे हबीब अज़ जहाँ मुश्तग़िल

इसी लिये इस आयत में तक़वे की तदबीर बतलाकर फरमाया:

اصْلِحُوا ذَاتَ بَيْنِكُمْ

यानी तक़वे (परहेज़गारी) के ज़रिये आपस के ताल्लुकात की इस्लाह (सुधार) करो। इसकी अधिक तशरीह इस तरह फरमाई:

وَاطِيعُوا اللَّهَ وَرَسُولَهُ إِن كُنتُمْ مُؤْمِنِينَ

यानी अल्लाह और रसूल की मुकम्मल इताअत हो अगर तुम मोमिन हो। यानी ईमान का तकाज़ा है इताअत और इताअत नतीजा है तक़वे का, और जब ये चीज़ें लोगों को हासिल हो जायें तो उनके आपस के झगड़े खुद-ब-खुद ख़त्म हो जायेंगे और दुश्मनी की जगह दिलों में दोस्ती व मुहब्बत पैदा हो जायेगी।

إِنَّمَا الْمُؤْمِنُونَ الَّذِينَ إِذَا ذُكِرَ اللَّهُ وَجِلَتْ قُلُوبُهُمْ وَإِذَا تُلِيَتْ

عَلَيْهِمْ آيَاتُهُ زَادَتْهُمْ إِيمَانًا وَعَلَىٰ رَبِّهِمْ يَتَوَكَّلُونَ ۝ الَّذِينَ يُقِيمُونَ الصَّلَاةَ وَمِمَّا رَزَقْنَاهُمْ

يُنْفِقُونَ ۝ أُولَٰئِكَ هُمُ الْمُؤْمِنُونَ حَقًّا ۚ لَهُمْ دَرَجَاتٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَمَغْفِرَةٌ وَرِزْقٌ كَرِيمٌ ۝

इन्नमल् मुअ्मिनूनल्लजी-न इज़ा
ज़ुकिरल्लाहु वजिलत् कुलूबुहुम् व
इज़ा तुलियत् अलैहिम् आयातुहू
ज़ादतुहुम् ईमानं-व अला रब्बिहिम्
य-तवक्कलून (2) अल्लजी-न
युकीमूनस्सला-त व मिम्मा रज़क़नाहुम्

ईमान वाले वही हैं कि जब नाम आये
अल्लाह का तो डर जायें उनके दिल, और
जब पढ़ा जाये उन पर उसका कलाम तो
ज़्यादा हो जाता है उनका ईमान, और वे
अपने रब पर भरोसा रखते हैं। (2) वे
लोग जो कि कायम रखते हैं नमाज़ को
और हमने उनको जो रोज़ी दी है उसमें

युन्फिकून (3) उलाइ-क हुमुल्-
मुअ्मिनु-न हक्कन्, लहुम् द-रजातुन्
अिन्-द रब्बिहिम् व मग्फि-रतुंव-व
रिज़्कुन् करीम (4)

से खर्च करते हैं। (3) वही हैं सच्चे
ईमान वाले, उनके लिये दर्जे हैं अपने रब
के पास और माफी और रोजी इज़्जत
की। (4)

खुलासा-ए-तफ़सीर

(क्योंकि) बस ईमान वाले तो ऐसे होते हैं कि जब (उनके सामने) अल्लाह तआला का ज़िक्र आता है तो (उसकी बड़ाई के ध्यान से) उनके दिल डर जाते हैं, और जब अल्लाह की आयतें उनको पढ़कर सुनाई जाती हैं तो वे (आयतों) उनके ईमान को और ज़्यादा (मज़बूत) कर देती हैं, और वे लोग अपने रब पर भरोसा करते हैं। (और) जो कि नमाज़ की पाबन्दी करते हैं और हमने जो कुछ उनको दिया है उसमें से खर्च करते हैं। (बस) सच्चे ईमान वाले ये लोग हैं। उनके लिये बड़े दर्जे हैं उनके रब के पास और (उनके लिये) मग़फ़िरत है और इज़्जत की रोज़ी।

मअरिफ़ व मसाईल

मोमिन की ख़ास सिफ़ात

ज़िक्र हुई आयतों में उन मख़सूस (विशेष) सिफ़ात का बयान है जो हर मोमिन में होनी चाहियें। इसमें इशारा है कि हर मोमिन अपनी ज़ाहिरी और अन्दरूनी कैफ़ियत, हालत और सिफ़ात का जायज़ा लेता रहे, अगर ये सिफ़ात उसमें मौजूद हैं तो अल्लाह का शुक्र करे कि उसने इसको मोमिनों की सिफ़ात अता फ़रमा दीं। और अगर इनमें से कोई सिफ़त मौजूद नहीं या है मगर ज़ईफ़ व कमज़ोर है तो उसके हासिल करने या मज़बूत करने की फ़िक्र में लग जाये।

पहली सिफ़त ख़ौफ़-ए-ख़ुदा

पहली सिफ़त यह बयान फ़रमाई:

الَّذِينَ إِذَا ذُكِرَ اللَّهُ وَجِلَتْ قُلُوبُهُمْ

यानी जब उनके सामने अल्लाह का ज़िक्र किया जाये तो उनके दिल सहम जाते हैं। मतलब यह है कि अल्लाह तआला की बड़ाई व मुहब्बत उनके दिलों में रची और भरी हुई है जिसका एक तकाज़ा हैबत व ख़ौफ़ है। क़ुरआने करीम की एक दूसरी आयत में इसका ज़िक्र करके मुहब्बत वालों को खुशख़बरी दी गयी है:

وَبَشِّرِ الْمُخْبِتِينَ ۝ الَّذِينَ إِذَا ذُكِرَ اللَّهُ وَجِلَتْ قُلُوبُهُمْ

यानी खुशख़बरी दे दीजिये उन तवाज़ो इख़्तियार करने वाले नरमी की आदत वाले लोगों को जिनके दिल डर जाते हैं जब उनके सामने अल्लाह का ज़िक्र किया जाये। इन दोनों आयतों में

अल्लाह तआला के ज़िक्र और याद के एक खास तकाज़े का ज़िक्र है यानी हैबत और ख़ौफ़। और एक दूसरी आयत में ज़िक्रुल्लाह की यह खासियत भी बयान फ़रमाई गयी है कि उससे दिल मुल्मईन हो जाते हैं। फ़रमाया:

الْأَيُّذُكْرِ اللَّهُ تَطْمَئِنُّ الْقُلُوبُ

यानी अल्लाह ही की याद से दिल मुल्मईन होते (सुकून पाते) हैं।

इससे मालूम हुआ कि इस आयत में जिस ख़ौफ़ व हैबत का ज़िक्र है वह दिल के सुकून व इत्मीनान के खिलाफ़ नहीं, जैसे किसी दरिन्दे (फाड़ खाने वाले जानवर) या दुश्मन का ख़ौफ़ दिल के सुकून को बरबाद कर देता है, ज़िक्रुल्लाह के साथ दिल में पैदा होने वाला ख़ौफ़ इससे बिल्कुल अलग और भिन्न है और इसी लिये यहाँ लफ़्ज़ ख़ौफ़ इस्तेमाल नहीं फ़रमाया, 'वजल' के लफ़्ज़ से ताबीर किया है, जिसका तर्जुमा आम ख़ौफ़ नहीं बल्कि वह हैबत (ख़ौफ़ और डर) है जो बड़ों के रौब और बड़ी शान के सबब दिल में पैदा होती है। कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि इस जगह अल्लाह के ज़िक्र और याद से मुराद यह है कि कोई शख्स किसी गुनाह के करने का इरादा कर रहा था उसी हाल में उसको खुदा तआला की याद आ गयी तो वह अल्लाह के अज़ाब से डर गया और गुनाह से रुक गया। इस सूरत में ख़ौफ़ से मुराद अज़ाब का ख़ौफ़ और डर ही होगा। (तफ़सीर बहरे-मुहीत)

दूसरी सिफ़त ईमान में तरक्की

मोमिन की दूसरी सिफ़त यह बतलाई कि जब उसके सामने अल्लाह की आयतें तिलावत की जाती हैं तो उसका ईमान बढ़ जाता है। ईमान बढ़ने के ऐसे मायने जिन पर सब उलेमा व मुफ़स्सिरीन और मुहद्दिसीन का इत्तिफ़ाक़ है यह हैं कि ईमान की ताक़त व कौफ़ियत और ईमान के नूर में तरक्की हो जाती है। और यह तजुर्बा और आँखों देखा है कि नेक आमाल से ईमान में ताक़त और ऐसा दिल का इत्मीनान पैदा हो जाता है कि नेक आमाल उसकी तबई आदत (मिज़ाज का हिस्सा) बन जाते हैं जिनके छोड़ने से उसको तकलीफ़ होती है। और गुनाह से उसको तबई नफ़रत पैदा हो जाती है कि उनके पास नहीं जाता। ईमान के इसी मक़ाम को हदीस में ईमान की मिठास के लफ़्ज़ से ताबीर फ़रमाया है, जिसको किसी ने इस तरह एक शेर में बयान किया है:

وَإِذَا حَلَّتِ الْحَلَاوَةُ قَلْبًا نَشِطَتْ فِي الْعِبَادَةِ الْأَعْضَاءُ

यानी जब किसी दिल में ईमान की हलावत (मिठास) जगह पकड़ लेती है तो उसके हाथ पैर और सब आज़ा (बदनी अंग) इबादत में राहत व लज़्ज़त महसूस करने लगते हैं।

इसलिये आयत के मज़मून का खुलासा यह हुआ कि कामिल मोमिन की यह सिफ़त होनी चाहिये कि जब उसके सामने अल्लाह तआला की आयतें पढ़ी जायें तो उसके ईमान में ताज़गी और तरक्की हो और नेक आमाल की तरफ़ रग़बत (दिलचस्पी) बढ़े। इससे यह भी मालूम हो गया कि जिस तरह आम मुसलमान क़ुरआन पढ़ते और सुनते हैं कि न क़ुरआन के अदब व

एहतिराम की कोई पाबन्दी व ख्याल है न अल्लाह जल्ल शानुहू की बड़ाई पर नज़र है, ऐसी तिलावत (कुरआन पढ़ना) मकसूद और आला नतीजे पैदा करने वाली नहीं, अगरचे सदाब से वह भी खाली न हो।

तीसरी सिफ़त अल्लाह पर भरोसा

तीसरी सिफ़त मोमिन की यह बयान फ़रमाई कि वह अल्लाह तआला पर तवक्कुल (भरोसा) करे। तवक्कुल के मायने एतिमाद और भरोसे के हैं। मतलब यह है कि अपने तमाम आमाल व हालात में उसका मुकम्मल एतिमाद और भरोसा सिर्फ़ एक ज़ात हक़ तआला पर हो। सही हदीस में हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि इसके यह मायने नहीं कि अपनी ज़रूरतों के लिये माही असबाब और तदबीरों को छोड़ करके बैठ जाये, बल्कि मतलब यह है कि माही असबाब व संसाधनों को असल कामयाबी के लिये काफ़ी न समझे बल्कि अपनी हिम्मत व ताक़त के बक़्दर माही असबाब और तदबीरों को जमा करने और इस्तेमाल करने के बाद मामले को अल्लाह तआला के सुपुर्द करे और समझे कि असबाब भी उसी के पैदा किये हुए हैं और इन असबाब के नतीजे और फल भी वही पैदा करते हैं। होगा वही जो वह चाहेंगे। एक हदीस में फ़रमाया है:

أَجْمِلُوا فِي الطَّلَبِ وَتَوَكَّلُوا عَلَيْهِ.

यानी रिज़्क और अपनी हाज़तों के हासिल करने के लिये दरमियानी दर्जे की तलब और माही असबाब के ज़रिये कोशिश कर लो फिर मामला अल्लाह तआला के सुपुर्द करो। अपने दिल दिमाग़ को सिर्फ़ माही तदबीरों और असबाब (सामानों) ही में न उलझा कर रखो।

चौथी सिफ़त नमाज़ का कायम करना

मोमिन की चौथी सिफ़त इक़ामत-ए-सलात (नमाज़ का कायम करना) बतलाई। इसमें यह बात याद रखने के काबिल है कि यहाँ नमाज़ पढ़ने का नहीं बल्कि नमाज़ की इक़ामत का ज़िक्र है। इक़ामत के लफ़्ज़ मायने किसी चीज़ को सीधा खड़ा करने के हैं। मुराद इक़ामते सलात से यह है कि नमाज़ के पूरे आदाब व शराईत उस तरह पूरे करे जिस तरह रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कौल व अमल से बतलाये हैं। आदाब व शराईत में कोताही हुई तो उसको नमाज़ पढ़ना तो कह सकते हैं मगर इक़ामते सलात नहीं कह सकते। कुरआन मजीद में नमाज़ के जो फ़ायदे, आसार और बरकतें ज़िक्र की गयी हैं और फ़रमाया गया है:

إِنَّ الصَّلَاةَ تَنْهَى عَنِ الْفَحْشَاءِ وَالْمُنْكَرِ.

यानी नमाज़ रोकती है बेहयाई और हर गुनाह से। यह भी इक़ामते सलात ही पर मौकूफ़ है। जब नमाज़ के आदाब में कोताही हुई तो अगरचे फ़तवे की रू से उसकी नमाज़ को जायज़ ही कहा जाये मगर नमाज़ की बरकतों में कोताही की मिक्दार पर फ़र्क़ पड़ जायेगा। और कुछ सूरतों में उन बरकतों से पूरी तरह मेहरूमी हो जायेगी।

पाँचवीं सिफत अल्लाह की राह में खर्च करना

मर्दे मोमिन की पाँचवीं सिफत यह बयान फरमाई कि जो कुछ अल्लाह तआला ने उसको रिज्क दिया है वह उसमें से अल्लाह की राह में खर्च करे। यह अल्लाह की राह में खर्च करना आम है, तमाम सदकों व खैरात और वक्फ व सिले को जिसमें ज़कात, सदका-ए-फित्र वगैरह शर्ई वाजिबात भी दाखिल हैं और नफ़ली सदकात व एहसानात भी। मेहमानों, दोस्तों, बुजुर्गों की माली खिदमत भी।

मर्दे मोमिन की ये पाँच सिफतें बयान करने के बाद इरशाद फरमाया:

أُولَٰئِكَ هُمُ الْمُؤْمِنُونَ حَقًّا.

यानी ऐसे ही लोग सच्चे मोमिन हैं जिनका ज़ाहिर व बातिन एक जैसा और ज़बान और दिल की हालत बराबर है, वरना जिनमें ये सिफतें नहीं वे ज़बान से तो:

أَشْهَدُ أَنْ لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ وَأَشْهَدُ أَنَّ مُحَمَّدًا رَسُولُ اللَّهِ.

कहते हैं (इस्लाम का कलिमा पढ़ते हैं) मगर उनके दिलों में न तौहीद का रंग न इताअते रसूल का। उनके आमाल उनकी बातों की तरदीद करते हैं। इस आयत में इस तरफ भी इशारा है कि हर हक की एक हकीकत होती है जब वह हासिल न हो तो हक हासिल नहीं होता।

एक शख्स ने हज़रत हसन बसरी रश्मतुल्लाहि अलैहि से पूछा कि ऐ अबू सईद! क्या आप मोमिन हैं? तो आपने फरमाया कि भाई ईमान दो किस्म के हैं- तुम्हारे सवाल का मतलब अगर यह है कि मैं अल्लाह तआला और उसके फ़रिश्तों, किताबों और रसूलों पर और जन्नत दोज़ख और क़ियामत और हिसाब किताब पर ईमान रखता हूँ तो जवाब यह है कि बेशक मैं मोमिन हूँ। और अगर तुम्हारे सवाल का मतलब यह है कि मैं वह मोमिने कामिल हूँ जिसका ज़िक्र सूर: अनफाल की आयतों में है तो मुझे कुछ मालूम नहीं कि मैं उनमें दाखिल हूँ या नहीं। सूर: अनफाल की आयतों से वही आयतें मुराद हैं जो अभी आपने सुनी हैं।

ज़िक्र की गयी आयतों में सच्चे मोमिन की सिफतें और निशानियाँ बयान फरमाने के बाद इरशाद फरमाया:

لَهُمْ دَرَجَاتٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَمَغْفِرَةٌ وَرِزْقٌ كَرِيمٌ.

इसमें सच्चे मोमिनों के लिये तीन चीज़ों का वायदा फरमाया- एक बुलन्द और ऊँचे दर्जे, दूसरे मग़फ़िरत, तीसरे बेहतरीन रिज़्क।

तफ़सीर बहरे-मुहीत में है कि इससे पहली आयतों में सच्चे मोमिनों की जो सिफतें बयान हुई हैं वो तीन किस्म की हैं- एक वो जिनका ताल्लुक दिल और अन्दर की हालत के साथ है जैसे ईमान, ख़ौफ़े खुदा, अल्लाह पर भरोसा। दूसरे वो जिनका ताल्लुक जिस्मानी आमाल से है जैसे नमाज़ वगैरह। तीसरे वो जिनका ताल्लुक इन्सान के माल से है जैसे अल्लाह की राह में खर्च करना।

इन तीनों किस्मों के मुकाबले में तीन इनामों का ज़िक्र आया है। बुलन्द दर्जे दिली और

बातिनी सिफात के मुकाबले में, और मग़फ़िरत उन आमाल के मुकाबले में जो इनसान के ज़ाहिरी बदन से संबन्धित हैं जैसे नमाज़ रोज़ा वगैरह जैसा कि हदीस में आया है कि नमाज़ गुनाहों का कफ़ारा हो जाती है। और इज़्ज़त की रोज़ी अल्लाह की राह में खर्च करने के मुकाबले में आयी है कि जो कुछ खर्च किया उससे बहुत बेहतर और बहुत ज़्यादा उसको आख़िरत में मिलेगा।

كَمَا أَخْرَجَكَ رَبُّكَ مِنْ بَيْتِكَ بِالْحَقِّ وَإِنَّ فَرِيقًا مِنَ الْمُؤْمِنِينَ لَكَرِهُونَ ۝ يُجَادِلُونَكَ فِي الْحَقِّ بَعْدَ مَا تَبَيَّنَ كَأَنَّمَا يُسَاقُونَ إِلَى الْمَوْتِ وَهُمْ يَنْظُرُونَ ۝

कमा अख़र-ज-क रब्बु-क मिम्-बैति-क
बिल्हक्कि व इन्-न फरीकम् मिनल्-
मुज्मिनी-न लकारिहून (5)
युजादिलून-क फिल्हक्कि बज़्-द मा
तबय्य-न कअन्नमा युसाकू-न इलल्-
मौति व हुम् यन्जुरून (6)

जैसे निकाला तुझको तेरे रब ने तेरे घर
से हक़ काम के वास्ते, और एक जमाअत
ईमान वालों की राज़ी न थी। (5) वे तुझ
से झगड़ते थे हक़ बात में उसके ज़ाहिर
हो चुकने के बाद, गोया वे हाँके जाते हैं
मौत की तरफ़ आँखों देखते। (6)

खुलासा-ए-तफ़सीर

(माले गुनीमत का लोगों की मर्ज़ी के मुवाफ़िक़ तक़सीम न होना बल्कि अल्लाह की तरफ़ से उसकी तक़सीम होना अगरचे कुछ लोगों को तबई तौर पर भारी गुज़रा हो मगर बहुत सी मस्लेहतों की वजह से यही ख़ैर और बेहतर है। और यह मामला ख़िलाफ़े तबीयत मगर बहुत सी मस्लेहतों को शामिल होने में ऐसा ही है) जैसा कि आपके रब ने आपके घर (और बस्ती) से मस्लेहत के साथ आपको (बदर की तरफ़) ख़ाना किया, और मुसलमानों की एक जमाअत (अपनी संख्या और सामाने जंग की क़िल्लत की वजह से तबई तौर पर) इसको नागवार समझती थी। (और) वे इस मस्लेहत (के काम यानी जिहाद और लश्कर के मुकाबले के मामले) में इसके बाद कि वह ज़ाहिर हो गया था (अपने बचाव के लिये) आप से (मशिवरे के तौर पर) इस तरह झगड़ रहे थे कि जैसे कोई उनको मौत की तरफ़ हाँके लिये जाता है और वे (मौत को गोया) देख रहे हैं (मगर आख़िरकार उसका अन्जाम भी अच्छा हुआ कि इस्लाम ग़ालिब और कुफ़्र मग़लूब हुआ है)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

सूरत के शुरू में यह बयान हो चुका है कि सूर: अनफ़ाल के ज़्यादातर मज़ामीन काफ़िरों व मुशिरकों पर अज़ाब व इन्तिक़ाम और मुसलमानों पर एहसान व इनाम से संबन्धित हैं और उसके

ज़िम्न में दोनों फरीकों के लिये इबत व नसीहत के अहकाम बयान हुए हैं। और उन मामलात में सबसे पहला और सबसे अहम वाक़िआ गुज़वा-ए-बदर का था जिसमें बड़े साज़ व सामान और तायदाद व कुव्वत के बावजूद मुशिरकों को जानी और माली नुकसानों के साथ शिकस्त और मुसलमानों को बावजूद हर तरह की किल्लत और बेसामानी के ज़बरदस्त फ़तह नसीब हुई। इस सूरत में बदर के वाक़िए का तफ़सीली बयान है, जो उक्त आयतों से शुरू हो रहा है।

पहली आयत में इस बात का ज़िक्र है कि कुछ मुसलमानों को बदर के मौक़े पर जिहाद के लिये पहल करना नापसन्द था मगर अल्लाह तआला ने अपने खास फ़रमान के ज़रिये अपने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जिहाद का हुक्म दिया तो नापसन्द करने वाले भी साथ हो गये। इस बात के बयान करने के लिये कुरआने करीम ने जो अलफ़ाज़ अपनाये हैं वो कई तरह से काबिले ग़ौर हैं।

अव्वल यह कि आयत की शुरूआत “कमा अख़-ज-क रब्बु-क” से होता है। इसमें लफ़ज़ ‘कमा’ एक ऐसा लफ़ज़ है जो तशबीह (मिसाल देने) के लिये इस्तेमाल किया जाता है, तो ग़ौर करने की बात यह है कि यहाँ तशबीह किस चीज़ की किस चीज़ से है। हज़राते मुफ़स्सरीन ने इसकी विभिन्न वुजूहात और मतलब बयान फ़रमाये हैं। इमामे तफ़सीर अबू हय्यान ने इस तरह के पन्द्रह कौल नक़ल किये हैं उनमें ज़्यादा करीब तीन संभावित हैं।

अव्वल यह कि इस तशबीह (मिसाल देने) से मक़सद यह बयान करना है कि जिस तरह गुज़वा-ए-बदर के माले ग़नीमत की तफ़सीम के वक़्त सहाबा किराम में आपस में कुछ मतभेद हो गया था, फिर अल्लाह के हुक्म के तहत सब ने आपके हुक्म की तामील की और उसकी बरकतों और अच्छे परिणाम का ज़हूर सामने आ गया, इसी तरह इस जिहाद के शुरू में कुछ लोगों की तरफ़ से नापसन्दीदगी का इज़हार हुआ फिर अल्लाह के हुक्म के मातहत सब ने इताअत की और उसके मुफीद नतीजे और बेहतरीन फल को आँखों से देख लिया। यह व्याख्या इमाम फ़र्रा और इमाम मुबारिद की तरफ़ मन्सूब है। (बहरे-मुहीत) इसी को तफ़सीर बयानुल-कुरआन में तरजीह दी है जैसा कि खुलासा-ए-तफ़सीर से मालूम हो चुका।

दूसरे इस मायने की गुंजाईश है कि पहले गुज़री आयतों में सच्चे मोमिनों के लिये आख़िरत में बुलन्द दर्जों, मग़फ़िरत और इज़्ज़त वाली रोज़ी का वायदा किया गया था। इन आयतों में इस वायदे के यकीनी होने का ज़िक्र इस तरह किया गया कि आख़िरत का वायदा अगरचे अभी आँखों के सामने नहीं मगर अल्लाह तआला का जो मदद व फ़तह का वायदा गुज़वा-ए-बदर में आँखों के सामने आ चुका है उससे सीख लो और यकीन करो कि जिस तरह यह वायदा दुनिया ही में पूरा हो चुका है इसी तरह आख़िरत का वायदा भी ज़रूर पूरा होगा।

(तफ़सीरे कुर्तुबी, नुहास के हवाले से)

तीसरी संभावना और गुंजाईश वह है जिसको अबू हय्यान ने मुफ़स्सरीन के पन्द्रह कौल (रायें) नक़ल करने के बाद लिखा है कि मुझे इनमें से किसी कौल पर इत्मीनान नहीं था, एक दिन मैं इसी आयत पर ग़ौर व फ़िक्र करते हुए सो गया तो मैंने ख़्वाब में देखा कि किसी जगह

जा रहा हूँ और एक शख्स मेरे साथ है, मैं इसी आयत के बारे में उससे बहस कर रहा हूँ और यह कह रहा हूँ कि मुझे कभी ऐसी मुश्किल पेश नहीं आई जैसी इस आयत के अलफ़ाज़ में पेश आई है। ऐसा मालूम होता है कि यहाँ कोई लफ़्ज़ पोशीदा (छुपा) है। फिर अचानक सपने ही में मेरे दिल में यह बात आई कि यहाँ लफ़्ज़ 'न-स-र-क' पोशीदा है, इसको खुद मैंने भी पसन्द किया और जिस शख्स से बहस कर रहा था उसने भी पसन्द किया। सपने से जागने के बाद इस पर गौर किया तो मेरा शुब्ह ख़त्म हो गया, क्योंकि इस सूरत में लफ़्ज़ कमा तशबीह (मिसाल देने) के लिये नहीं बल्कि सबब बयान करने के लिये इस्तेमाल हुआ है और आयत के मायने यह हो गये कि ग़ज़वा-ए-बदर में अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ से जो ख़ास नुसरत व मदद आपकी हुई उसका सबब यह था कि उस जिहाद में आपने जो कुछ किया अपनी किसी इच्छा और राय से नहीं बल्कि ख़ालिस हुक्मे खुदावन्दी के मातहत किया। उसी के हुक्म पर आप अपने घर से निकले। और हक़ की इताअत का यही नतीजा होना चाहिये और यही होता है कि हक़ तआला की इमदाद व नुसरत उसके साथ हो जाती है।

बहरहाल आयत के इस जुमले में ये तीनों मायने संभावित और सही हैं। इसके बाद इस पर नज़र डालिये कि क़ुरआने करीम ने इस जिहाद के लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का खुद निकलना ज़ि़क़्र नहीं किया बल्कि यह बयान फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने आपको निकाला। इसमें इशारा है रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बन्दगी व इताअत के कमाल की तरफ़, कि आपका फ़ेल दर हकीक़त हक़ तआला का फ़ेल होता है जो आपके बदनी अंगों से निकलता और ज़ाहिर होता है। जैसा कि एक हदीस-ए-कुदसी में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि बन्दा जब फ़रमाँबरदारी व बन्दगी के ज़रिये अल्लाह तआला की निकटता हासिल कर लेता है तो अल्लाह तआला उसके बारे में यह फ़रमाते हैं कि मैं उसकी आँख बन जाता हूँ वह जो कुछ देखता है मेरे ज़रिये देखता है, मैं उसके कान बन जाता हूँ वह जो कुछ सुनता है मेरे ज़रिये सुनता है, मैं उसके हाथ-पाँव बन जाता हूँ वह जिसको पकड़ता है मेरे ज़रिये पकड़ता है, जिसकी तरफ़ चलता है मेरे ज़रिये चलता है। खुलासा इसका यही है कि हक़ तआला की ख़ास नुसरत व इमदाद उसके साथ हो जाती है। जिन कामों और हरकतों का सुदूर बज़ाहिर उसके आँख, कान या हाथ-पाँव से होता है दर हकीक़त उसमें हक़ तआला शानुहू की क़ुदरत काम कर रही होती है।

खुलासा यह है कि लफ़्ज़ 'अख़-ज-क' में इस तरफ़ इशारा कर दिया कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का जिहाद के लिये निकलना दर हकीक़त हक़ तआला का निकालना था जो आपकी ज़ात से ज़ाहिर हुआ।

यहाँ यह बात भी काबिले ग़ौर है कि "अख़-ज-क रब्बु-क" फ़रमाया जिसमें अल्लाह जल्ल शानुहू का ज़ि़क़्र रब की सिफ़त के साथ करके इस तरफ़ इशारा कर दिया कि इस जिहाद के लिये आपको निकालना रब होने की शान और तरबियत के तकाज़े से था। क्योंकि इसके ज़रिये जुल्मों का शिकार और दूसरों के मातहत मुसलमानों के लिये विजयी होना और घमण्डी व

जालिम काफिरों के लिये पहले अज़ाब को सामने लाना और ज़ाहिर करना था।

“मिम-बैति-क” के मायने हैं आपके घर से। मतलब यह हुआ कि निकाला आपको आपके ख़ुद ने आपके घर से। मुफ़सिरीन की अक्सरियत के नज़दीक इस घर से मुराद मदीना तय्यिबा का घर या ख़ुद मदीना तय्यिबा है। जिसमें हिजरत के बाद आप मुक़ीम हुए। क्योंकि बदर का वाकिआ हिजरत के दूसरे साल में पेश आया है। इसके साथ लफ़्ज़ ‘बिल्हक्कि’ का इज़ाफ़ा करके बतला दिया कि यह सारी कार्रवाई हक् को ज़ाहिर व साबित करने और बातिल (ग़ैर-हक्) का ग़लत व बातिल होना ज़ाहिर करने के लिये अमल में आई है। दूसरी हुक्मतों की तरह मुल्की दायरा बढ़ाने की हवस या बादशाहों का गुस्सा इसका सबब नहीं।

आयत के आख़िर में फ़रमाया:

وَإِنْ فَرِيقًا مِّنَ الْمُؤْمِنِينَ لَكَرِهُوا

यानी मुसलमानों की एक जमाअत इस जिहाद को भारी और नागवार समझती और नापसन्द करती थी। सहाबा किराम को यह गरानी किस तरह और क्यों पेश आई इसके समझने के लिये तथा आईन्दा आने वाली दूसरी आयतों को पूरी तरह समझने के लिये ग़ज़वा-ए-बदर के शुरूआती हालात और कारणों का पहले मालूम कर लेना मुनासिब है। इसलिये पहले बदर की लड़ाई का पूरा वाकिआ सुन लीजिये।

इब्ने उक्बा व इब्ने आमिर के बयान के मुताबिक़ वाकिआ यह है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मदीना तय्यिबा में यह ख़बर मिली कि अबू सुफ़ियान एक तिजारती काफ़िले के साथ मुल्क शाम से व्यापार का माल लेकर मक्का मुअज़्ज़मा की तरफ़ जा रहे हैं और उस तिजारत में मक्का के तमाम कुरैशी शरीक हैं। इब्ने उक्बा के बयान के मुताबिक़ मक्के का कोई कुरैशी मर्द या औरत बाकी न था जिसका उसमें हिस्सा न हो। अगर किसी के पास सिर्फ़ एक मिस्क़ाल (यानी साढ़े चार माशे) सोना भी था तो उसने उसमें अपना हिस्सा डाल दिया था। उस काफ़िले के पूरे सरमाये के मुताल्लिक़ इब्ने उक्बा की रिवायत यह है कि पचास हजार दीनार थे। दीनार सोने का सिक्का है जो साढ़े चार माशे का होता है। सोने के मौजूदा भाव के हिसाब से उसकी कीमत बावन रुपये और पूरे सरमाये की कीमत छब्बीस लाख रुपये बनती है। और यह भी आज के नहीं बल्कि अब से चौदह सौ बरस पहले के छब्बीस लाख हैं जो आज के छब्बीस करोड़ से भी ज़्यादा की हैसियत रखते थे। उस तिजारती काफ़िले की हिफ़ाज़त और कारोबार के लिये कुरैश के सत्तर जवान और सरदार साथ थे। जिससे मालूम हुआ कि यह तिजारती काफ़िला दर हकीक़त मक्का के कुरैश की एक तिजारती कम्पनी थी।

अल्लामा बग़वी ने हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु वग़ैरह की रिवायत से नक़ल किया है कि इस काफ़िले में कुरैश के चालीस सवार कुरैश के सरदारों में से थे जिनमें अमर बिन आस, मख़मा बिन नौफल ख़ास तौर से काबिले ज़िक्र हैं। और यह भी मालूम है कि कुरैश की सबसे बड़ी ताक़त उनकी यही तिजारत और तिजारती सरमाया था। जिसके बल पर उन्होंने रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आपके साथियों को तंग करके मक्का छोड़ने पर मजबूर

कर दिया था। उस वक्त जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को शाम के सफर से इस काफिले की वापसी की इत्तिला मिली तो आपकी राय हुई कि इस वक्त इस काफिले का मुकाबला करके कुरैश की ताकत तोड़ देने का मौका है। सहाबा किराम से मश्विरा किया तो जमाना रमज़ान का था, पहले से किसी जंग की तैयारी न थी। कुछ हज़रात ने तो चुस्ती और हिम्मत का इज़हार किया मगर कुछ ने कुछ दुविधा का इज़हार किया। आपने भी सब पर इस जिहाद की शिर्कत को लाज़िम न करार दिया बल्कि यह हुक्म दिया कि जिन लोगों के पास सवारियाँ मौजूद हैं वे हमारे साथ चलें। उस वक्त बहुत से आदमी जिहाद में जाने से रुक गये और जो लोग जाना चाहते थे और उनकी सवारियाँ देहात में थीं उन्होंने इजाज़त चाही कि हम अपनी सवारियाँ ले आयें तो साथ चलें। मगर वक्त इतने इन्तिज़ार का न था। इसलिये हुक्म यह हुआ कि जिन लोगों की सवारियाँ पास मौजूद हैं और जिहाद में जाना चाहें सिर्फ वही लोग चलें, बाहर से सवारियाँ मंगाने का वक्त नहीं। इसलिये साथ जाने का इरादा रखने वालों में से भी थोड़े ही आदमी तैयार हो सके। और जिन हज़रात ने इस जिहाद में साथ जाने का इरादा ही नहीं किया उसका सबब भी यह था कि आपने सब के जिम्मे इस जिहाद की शिर्कत को वाजिब न करार दिया था। और उन लोगों को यह भी इत्मीनान था कि यह तिजारती काफिला है कोई जंगी लश्कर नहीं जिसके मुकाबले में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आपके साथियों को ज्यादा लश्कर और मुजाहिदीन की ज़रूरत पड़े। इसलिये सहाबा किराम की बहुत बड़ी तायदाद इस जिहाद में शरीक न हुई।

हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जब बीर-ए-सुकिया (सुकिया कुएँ) पर पहुँचकर कैस बिन सअ्सआ रज़ियल्लाहु अन्हु को हुक्म दिया कि लश्कर को शुमार करें तो उन्होंने शुमार करके इत्तिला दी कि तीन सौ तेरह हज़रात हैं। हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सुनकर खुश हुए और फरमाया कि यह तायदाद तालूत के साथियों की है इसलिये नेक शगुन फ़तह और कामयाबी का है। सहाबा किराम के साथ कुल सत्तर ऊँट थे। हर तीन आदमी के लिये एक ऊँट था जिस पर वे बारी-बारी सवार होते थे, खुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ भी दो हज़रात एक ऊँट के शरीक थे, अबू लुबाबा रज़ियल्लाहु अन्हु और हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु। जब आपकी बारी पैदल चलने की आती तो ये हज़रात अर्ज करते कि आप सवार रहें हम आपके बदले पैदल चलेंगे। रहमतुल-लिल्आलमीन की तरफ से यह जवाब मिलता कि न तो तुम मुझसे ज्यादा ताकतवर हो और न मैं आखिरत के सवाब से बेपरवाह हूँ कि अपने सवाब का मौका तुम्हें दे दूँ। इसलिये अपनी बारी में हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम भी पैदल ही चलते थे।

दूसरी तरफ किसी शख्स ने मुल्क शाम के मशहूर मक़ाम ऐन-ए-ज़रका पर पहुँचकर काफिले के सरदार अबू सुफ़ियान को इसकी ख़बर पहुँचा दी कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उनके काफिले के इन्तिज़ार में हैं, उनका पीछा करेंगे। अबू सुफ़ियान ने एहतियाती तदबीरें इस्तिज़ार कीं। जब यह काफिला हिजाज़ की सीमाओं में दाखिल हुआ तो एक होशियार चालाक

आदमी ज़मज़म बिन उमर को बीस मिस्काल सोना यानी तकरीबन दो हजार रुपया उजरत देकर इस पर राजी किया कि वह तेज़-रफ़्तार साँडनी पर सवार होकर जल्द से जल्द मक्का मुकर्रमा में यह ख़बर पहुँचा दे कि उनके काफ़िले को सहाबा किराम (यानी मुहम्मद के साथियों) से ख़तरा लाहिक है।

ज़मज़म बिन उमर ने उस ज़माने की खास रस्म के मुताबिक़ ख़तरे का ऐलान करने के लिये अपनी ऊँटनी के नाक-कान काट दिये और अपने कपड़े आगे पीछे से फाड़ डाले, और कज़ावे को उल्टा करके ऊँटनी की पुश्त पर रखा। ये निशानियाँ उस ज़माने में ख़तरे की घण्टी समझी जाती थी। जब वह इस अन्दाज़ से मक्का में दाख़िल हुआ तो पूरे मक्का में हलचल मच गयी और तमाम कुरैश काफ़िले की रक्षा और बचाव के लिये तैयार हो गये। जो लोग उस जंग के लिये निकल सकते थे खुद निकले और जो किसी वजह से माज़ूर थे उन्होंने किसी को अपना कायम-मक़ाम बनाकर जंग के लिये तैयार किया।

उनमें जो लोग इस जंग में शिक़त से हिचकिचाते उसको ये लोग सदिग्ध नज़रों से देखते और मुसलमानों का हम-ख़याल समझते, इसलिये ऐसे लोगों को विशेष तौर पर जंग के वास्ते निकलने पर मजबूर किया। जो लोग खुलेआम मुसलमान थे और अभी तक अपनी कुछ मजबूरियों के सबब हिजरत नहीं कर सके थे बल्कि मक्का में ही रह रहे थे उनको और बनू हाशिम के ख़ानदान में जिस पर भी यह गुमान था कि यह मुसलमानों से हमदर्दी रखता है उनको भी इस जंग के लिये निकलने पर मजबूर किया। उन्हीं मजबूर लोगों में हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चचा हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु और अबू तालिब के दो बेटे तालिब और अक़ील भी थे।

इस तरह उस लश्कर में एक हजार जवान, दो सौ घोड़े और छह सौ ज़िरहें और तराने गाने वाली बाँदियाँ और उनके तबले वगैरह लेकर बदर की तरफ़ निकल खड़े हुए। हर मन्ज़िल पर दस ऊँट उन लोगों के खाने के लिये ज़िबह होते थे।

दूसरी तरफ़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सिर्फ़ एक तिजारती काफ़िले के अन्दाज़ से मुकाबले की तैयारी करके बारह रमज़ान को शनिवार के दिन मदीना तय्यिबा से निकले और कई मन्ज़िल तय करने के बाद बदर के करीब पहुँच कर आपने दो शख्सों को आगे भेजा कि वे अबू सुफ़ियान के काफ़िले की ख़बर लायें। (तफ़सीरे मज़हरी)

मुखबिरो ने यह ख़बर पहुँचाई कि अबू सुफ़ियान का काफ़िला हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पीछा करने की ख़बर पाकर दरिया के किनारे-किनारे गुज़र गया और उसकी हिफ़ाज़त और मुसलमानों के मुकाबले के लिये मक्का से एक हजार जवानों का लश्कर जंग के लिये आ रहा है। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

ज़ाहिर है कि इस ख़बर ने हालात का नक्शा पलट दिया। उस वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने साथी सहाबा किराम से मश्विरा फ़रमाया कि इस आने वाले लश्कर से जंग करना है या नहीं। हज़रत अबू अय्यूब अन्सारी और कुछ दूसरे हज़रत ने अर्ज किया कि

हममें उनके मुकाबले की ताकत नहीं और न हम इस इरादे से आये हैं। इस पर हज़रत सिद्दीके अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु खड़े हुए और हुक्म की तामील के लिये अपने आपको पेश किया। फिर फारूक़े आजम रज़ियल्लाहु अन्हु खड़े हुए और इसी तरह तामीले हुक्म और जिहाद के लिये तैयार होने का इज़हार किया। फिर हज़रत मिक़दाद रज़ियल्लाहु अन्हु खड़े हुए और अर्ज किया:

या रसूलल्लाह! जो कुछ आपको अल्लाह तआला का हुक्म मिला है आप उसको जारी करें हम आपके साथ हैं। खुदा की क़सम हम आपको वह जवाब न देंगे जो बनी इस्राईल ने मूसा अलैहिस्सलाम को दिया था:

فَاذْهَبْ أَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَالِ إِنَّا هُنَا قَاعِدُونَ

यानी जाइये आप और आपका रब लड़-भिड़ लें हम तो यहाँ बैठे हैं।

क़सम है उस ज़ात की जिसने आपको दीने हक़ के साथ भेजा है अगर आप हमें मुल्क हब्शा के मक़ाम बर्कुल-ग़िमाद तक भी ले जायेंगे तो हम आपके साथ जंग के लिये चलेंगे।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम खुश हुए और उनको दुआयें दीं। मगर अभी तक अन्सार सहाबा की तरफ़ से मुवाफ़क़त में कोई आवाज़ न उठी थी और यह संदेह था कि अन्सारी सहाबा ने जो नुसरत व इमदाद का समझौता हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ किया था वह मदीना के अन्दर का था, मदीना से बाहर इमदाद करने के वे पाबन्द नहीं, इसलिये आपने फिर मजमे को ख़िताब करके फ़रमाया कि लोगो मुझे मश्विरा दो कि इस जिहाद पर क़दम बढ़ायें या नहीं? इस ख़िताब का इशारा अन्सार की तरफ़ था। हज़रत सअद बिन मुआज़ अन्सारी रज़ियल्लाहु अन्हु समझ गये और अर्ज किया कि या रसूलल्लाह! क्या आप हमसे पूछना चाहते हैं? आपने फ़रमाया हाँ। सअद बिन मुआज़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने अर्ज किया:

या रसूलल्लाह! हम आप पर ईमान लाये और इसकी शहादत दी कि जो कुछ आप फ़रमाते हैं सब हक़ है, और हमने आप से अहद व पैमान किये हैं कि हर हाल में आपकी इताअत करेंगे। इसलिये आपको जो कुछ अल्लाह तआला का हुक्म मिला हो उसको जारी फ़रमाइये। क़सम है उस ज़ात की जिसने आपको दीने हक़ के साथ भेजा है अगर आप हमको समन्दर में ले जायें तो हम आपके साथ दरिया में घुस जायेंगे, हम में से एक आदमी भी आप से पीछे न रहेगा। हमें इसमें कोई नागवारी नहीं कि आप कल ही हमें दुश्मन से भिड़ा दें। हमें उम्मीद है कि अल्लाह तआला आपको हमारे काम से ऐसे हालात का नज़ारा करायेगा जिससे आपकी आँखें ठण्डी होंगी। हमें अल्लाह के नाम पर जहाँ चाहें ले चलिये।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम यह सुनकर बहुत खुश हुए और काफ़िले को हुक्म दे दिया कि अल्लाह के नाम पर चलो। और यह खुशख़बरी सुनाई कि मुझसे अल्लाह तआला ने यह वायदा फ़रमाया है कि इन दोनों जमाअतों में से एक जमाअत पर हमारा ग़ुलबा होगा। दोनों जमाअतों से मुराद एक अबू सुफ़ियान का तिजारती काफ़िला और दूसरा यह मक्का से आने वाला लश्कर है। फिर फ़रमाया कि खुदा की क़सम मैं गोया अपनी आँखों से मुश्रिक लोगों के क़त्ल होने की जगह को देख रहा हूँ। यह पूरा वाकिआ तफ़सीर इब्ने कसीर और तफ़सीरे मज़हरी

से लिया गया है।

वाकिए की तफ़सील सुनने के बाद इन उपरोक्त आयतों को देखिये। पहली आयत में जो यह इरशाद फ़रमाया:

وَأَنْفِرْنَا مِنَ الْمُؤْمِنِينَ لَكْرَهُوْنَ.

यानी एक जमाअत मुसलमानों की इस जिहाद को भारी समझ रही थी। इससे इशारा उस हाल की तरफ़ है जो सहाबा किराम से मश्विरा लेने के वक़्त कुछ सहाबा किराम की तरफ़ से ज़ाहिर हुआ कि उन्होंने जिहाद से पस्त-हिम्मती (कमज़ोरी) का इज़हार किया।

और इसी वाकिए का बयान एक दूसरी आयत में है:

يُجَادِلُونَكَ فِي الْحَقِّ بَعْدَ مَا تَبَيَّنَ كَأَنَّمَا يُسَاقُونَ إِلَى الْمَوْتِ وَهُمْ يَنْظُرُونَ.

यानी ये लोग आप से हक़ के मामले में झगड़ा और इख़िलाफ़ करते हैं गोया. इनको मौत की तरफ़ खींचा जा रहा है जिसको वे अपनी आँखों से देख रहे हैं।

सहाबा किराम ने अगरचे हुक्म के कुछ भी ख़िलाफ़ नहीं किया था बल्कि मश्विरा के जवाब में अपनी कमज़ोरी और पस्त-हिम्मती का इज़हार किया था, मगर रसूल के साथियों से ऐसी राय का इज़हार भी उनके ऊँचे मक़ाम के एतिबार से अल्लाह तआला के नज़दीक नापसन्दीदा था इसलिये नाराज़ी के अलफ़ाज़ से इसको बयान फ़रमाया गया।

وَإِذْ يَعِدُكُمُ اللَّهُ إِحْدَى الطَّائِفَتَيْنِ أَنَّهَا لَكُمْ وَتَوَدُّونَ أَنَّ غَيْرَ ذَاتِ الشُّكَّةِ تَكُونُ لَكُمْ وَيُرِيدُ اللَّهُ أَنْ يُخَيِّطَ الْحَقَّ بِكَلِمَاتِهِ وَيَقْطَعَ دَابِرَ الْكَافِرِينَ ۝
لِيُخَيِّطَ الْحَقَّ وَيُبْطِلَ الْبَاطِلَ وَلَوْ كَرِهَ الْجَاهِلُونَ ۝ إِذْ تَسْتَغِيثُونَ رَبَّكُمْ فَاسْتَجَابَ لَكُمْ أَنِّي مُمِدُّكُم بِآلِيفٍ مِّنَ السَّمَاءِ مَرْدِفِينَ ۝ وَمَا جَعَلَهُ اللَّهُ إِلَّا بُشْرًا وَلِتَطْمَئِنَّ بِهِ قُلُوبُكُمْ ۝ وَمَا النَّصْرُ إِلَّا مِنْ عِنْدِ اللَّهِ إِنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝

व इज़् यज़िदुकुमुल्लाहु इह्दत्-
-ताइ-फ़तैनि अन्नहा लकुम् व
तवद्दू-न अन्-न गै-र ज़ातिशौकति
तकूनु लकुम् व युरीदुल्लाहु
अय्युहिकल्-हक्-क बिकलिमातिही
व यक्त-अ दाबिरल्-काफ़िरीन (7)
लियुहिकल्-हक्-क व युब्तिलल्-

और जिस वक़्त तुम से वायदा करता था
अल्लाह दो जमाअतों में से एक का कि
वह तुम्हारे हाथ लगेगी और तुम चाहते
थे कि जिसमें काँटा न लगे वह तुमको
मिले और अल्लाह चाहता था कि सच्चा
कर दे सच को अपने कलामों से और
काट डाले जड़ काफ़िरों की। (7) ताकि
सच्चा करे सच को और झूठा कर दे झूठ

बाति-ल व लौ करिहल-मुजिमून (8)
 इज़ तस्तगीसून रब्बकुम् फस्तजा-ब
 लकुम् अन्नी मुमिदुदकुम् बिअल्फ़िम्
 मिनल्-मलाइ-कति मुदिफीन (9) व
 मा ज-अ-लहुल्लाहु इल्ला बुश्रा व
 लितत्मइन-न बिही कुलूबुकुम्, व
 मन्नस् इल्ला मिन् अिन्दिल्लाहि,
 इन्नल्ला-ह अज़ीजुन् हकीम (10) ❀

को और अगरचे नाराज़ हों गुनाहगार।
 (8) जब तुम लगे फरियाद करने अपने
 रब से तो वह पहुँचा तुम्हारी फरियाद को
 कि मैं मदद को भेजूँगा तुम्हारी हजार
 फरिश्ते लगातार आने वाले। (9) और
 यह तो दी अल्लाह ने केवल खुशख़बरी
 और ताकि मुल्मईन हो जायें इसमें तुम्हारे
 दिल, और मदद नहीं मगर अल्लाह की
 तरफ़ से, बेशक अल्लाह ज़ोरावर है
 हिक्मत वाला। (10) ❀

खुलासा-ए-तफ़सीर

और (तुम लोग उस वक़्त को याद करो) जबकि अल्लाह तआला तुमसे उन दो जमाअतों (यानी व्यापारी काफ़िले या लश्कर) में से एक (जमाअत) का वायदा करते थे कि वह (जमाअत) तुम्हारे हाथ आ जायेगी (यानी पस्त हो जायेगी)। यह वायदा मुसलमानों से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के माध्यम से वही के ज़रिये हुआ था) और तुम इस तमन्ना में थे कि हथियारों से ख़ाली जमाअत (यानी तिजारती काफ़िला) तुम्हारे हाथ आ जाये और अल्लाह तआला को यह मन्ज़ूर था कि अपने अहक़ाम से हक़ का हक़ होना (अमली तौर पर) साबित कर दे, और (यह मन्ज़ूर था कि) उन काफ़िरों की बुनियाद (और ताक़त) को काट दे। ताकि हक़ का हक़ होना और बातिल का बातिल होना (अमली तौर पर) साबित कर दे, अगरचे ये मुजरिम लोग (यानी पस्त होने और हारने वाले काफ़िर इसको कितना ही) ना-पसन्द करें।

(उस वक़्त को याद करो) जबकि तुम अपने रब से (अपनी संख्या और जंग के सामान की कमी और दुश्मन की अधिकता देखकर) फरियाद कर रहे थे। फिर उसने (यानी अल्लाह तआला ने) तुम्हारी सुन ली (और वायदा फरमाया) कि मैं तुमको एक हजार फरिश्तों से मदद दूँगा जो सिलसिलेवार चले आएँगे। और अल्लाह तआला ने यह (इमदाद) सिर्फ़ इस (हिक्मत के) लिये की कि (तुमको ग़लबा पाने की) खुशख़बरी हो, और ताकि तुम्हारे दिलों को (बेचैनी से) करार हो जाये (यानी इनसान की तसल्ली तबई तौर पर असबाब, सामान से होती है इसलिये वह भी जमा कर दिया गया) और (हकीकत में तो) मदद (और ग़लबा) सिर्फ़ अल्लाह ही की तरफ़ से है, बेशक अल्लाह तआला ज़बरदस्त हैं, हिक्मत वाले हैं।

मआरिफ़ व मसाईल

उक्त आयतों में ग़ज़वा-ए-बदर का वाकिआ और उसमें जो हक़ तआला की तरफ़ से नुसरत

व इमदाद के मख़सूस इनामात मुसलमानों पर हुए उनका बयान है।

पहली और दूसरी आयत में यह बयान किया गया है कि जिस वक़्त हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम को यह सूचना मिली कि कुरैश वालों का एक ज़बरदस्त लश्कर अपने तिजारती काफ़िले की हिफ़ाज़त के लिये मक्का से निकल चुका है तो अब मुसलमानों के सामने दो जमाअतें थीं- एक तिजारती काफ़िला जिसको रिवायतों में 'ज़ीर' से ताबीर किया गया है और दूसरी यह हथियारबन्द फौज जो मक्का से चली थी जिसको 'नफीर' के नाम से ताबीर किया गया है। इस आयत में यह बतलाया कि उस वक़्त अल्लाह तआला ने अपने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आपके माध्यम से सब मुसलमानों से यह वायदा फ़रमाया था कि इन दोनों जमाअतों में से किसी एक जमाअत पर तुम्हारा मुकम्मल कब्ज़ा हो जायेगा, कि उसके मुताल्लिक जो तुम चाहोगे कर सकोगे।

अब यह ज़ाहिर है कि तिजारती काफ़िले पर कब्ज़ा आसान और बिना ख़तरे वाला था, और सशस्त्र फौज पर मुश्किल और ख़तरों से भरा। इसलिये इस अस्पष्ट वायदे को सुनकर बहुत से सहाबा किराम की तमन्ना और इच्छा यह हुई कि वह जमाअत जिस पर मुसलमानों का कब्ज़ा होने का वायदा अल्लाह तआला की तरफ़ से हुआ है, वह ग़ैर-हथियारबन्द तिजारती काफ़िला हो जाये, लेकिन रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और बहुत से बड़े सहाबा का अल्लाह के इशारों से यह इरादा हुआ कि सशस्त्र फौज पर कब्ज़ा हो तो बेहतर होगा।

इस आयत में ग़ैर-हथियारबन्द जमाअत पर कब्ज़ा चाहने वाले मुसलमानों को चेताया गया है कि तुम्हें तो अपनी सहूलत पसन्दी और ख़तरों से बचाव के पेशे नज़र यही पसन्द था कि ग़ैर-हथियारबन्द तिजारती काफ़िले पर तुम्हारा कब्ज़ा हो जाये, मगर अल्लाह तआला का इरादा यह था कि इस्लाम का असल मक़सद हासिल हो, यानी हक़ का हक़ होना वाज़ेह हो जाये और काफ़िरों की जड़ कट जाये। और ज़ाहिर है कि यह काम उसी वक़्त हो सकता था जबकि हथियारबन्द फौज से मुकाबला और उस पर मुसलमानों का मुकम्मल कब्ज़ा और ग़लबा हो।

खुलासा इसका मुसलमानों को इस पर तंबीह है कि तुमने जो सूरत पसन्द की वह बहुत ही पस्त-हिम्मती, आराम-तलबी, वक़्ती और हंगामी फ़ायदे की चीज़ थी और अल्लाह तआला ने जो इरादा फ़रमाया वह बुलन्द-हिम्मती, बुलन्द-मक़ासिद और मुकम्मल हमेशा के फ़ायदों पर मुश्तमिल था। फिर दूसरी आयत में इसको और अधिक स्पष्ट फ़रमा दिया कि अल्लाह तआला के कब्ज़ा-ए-कुदरत से तो कोई चीज़ बाहर न थी अगर वह चाहते तो तिजारती काफ़िले पर मुसलमानों का ग़लबा और कब्ज़ा हो जाता, मगर उसने रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम की शान के लायक इसको समझा कि सशस्त्र फौज से मुकाबला होकर उस पर कब्ज़ा हो ताकि हक़ का हक़ होना और बातिल का बातिल होना स्पष्ट हो जाये।

यहाँ यह बात ग़ौर-तलब है कि हक़ तआला तो अलीम, ख़बीर और हर काम के आगाज़ व अन्जाम से बाख़बर हैं, उनकी तरफ़ से इस अस्पष्ट वायदे में क्या मस्तेहत थी कि इन दोनों जमाअतों में से किसी एक जमाअत पर मुसलमानों का ग़लबा और कब्ज़ा होगा। वह इनमें से

किसी एक को मुतैयन करके भी फरमा सकते थे कि फुलॉ जमाअत पर कब्ज़ा हो जायेगा।

इस गैर-स्पष्ट रखने की वजह (वैसे तो अल्लाह ही को मालूम है, फिर भी) यह मालूम होती है कि इसमें सहाबा किराम का इम्तिहान करना था कि आसान काम को पसन्द करते हैं या मुश्किल को, और उनकी अख़लाकी तरबियत भी थी जिसके ज़रिये उनको बुलन्द-हिम्मती और ऊँचे मक़ासिद की जिहोजहद और ख़तरों से न घबराना सिखाया गया।

तीसरी और चौथी आयतों में उस वाकिए का बयान है जो हथियारबन्द फौज से मुकाबला ठन जाने के बाद पेश आया कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जब यह देखा कि आपके साथी सिर्फ़ तीन सौ तेरह और वह भी अक्सर बना हथियार के हैं और मुकाबले पर तफ़रीबन एक हजार जवानों का हथियारबन्द लश्कर है तो अल्लाह जल्ल शानुहु की बारगाह में नुसरत व इमदाद की दुआ के लिये हाथ उठाये। आप दुआ माँगते थे और सहाबा किराम आपके साथ आमीन कहते थे। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की दुआ के ये कलिमात नक़ल फरमाये हैं।

या अल्लाह! मुझसे जो वायदा आपने फरमाया है उसको जल्द पूरा फरमा दीजिये। या अल्लाह! अगर मुसलमानों की यह थोड़ी सी जमाअत फना हो गयी तो फिर ज़मीन में कोई तेरी इबादत करने वाला बाकी न रहेगा (क्योंकि सारी ज़मीन कुफ़्र व शिर्क से भरी हुई है, यही चन्द मुसलमान हैं जो सही इबादत करते हैं)।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बराबर इसी तरह दिल की तड़प के साथ दुआ में मशगूल रहे यहाँ तक कि आपके कंधों से चादर भी सरक गयी। हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने आगे बढ़कर चादर उढ़ाई और अर्ज किया या रसूलल्लाह! आप ज़्यादा फ़िक्र न करें अल्लाह तआला आपकी दुआ ज़रूर कुबूल फरमायेंगे और अपना वायदा पूरा फरमायेंगे।

आयत में:

اِذْ تَسْتَغِيثُونَ رَبَّكُمْ

के अलफ़ाज़ से यही वाक़िआ मुराद है जिसके मायने यह हैं कि वह वक़्त याद रखने के क़ाबिल है जब तुम अपने रब से फ़रियाद कर रहे थे और मदद तलब कर रहे थे। यह फ़रियाद करना अगरचे दर असल रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ़ से हुआ था मगर तमाम सहाबा आमीन कह रहे थे, इसलिये पूरी जमाअत की तरफ़ मन्सूब किया गया।

इसके बाद इस दुआ की कुबूलियत का बयान इस तरह फरमाया:

فَاسْتَجَابَ لَكُمْ اَنِّي مُبِدُّكُمْ بِالْفِ مِّنَ الْمَلٰٓئِكَةِ مُرَدِّفِيْنَ۝

यानी अल्लाह तआला ने तुम्हारी फ़रियाद सुन ली और फरमाया कि एक हजार फ़रिश्तों से तुम्हारी इमदाद करूँगा जो एक के बाद एक क़तार की सूरत में आने वाले होंगे।

फ़रिश्तों को अल्लाह तआला ने जो बेनज़ीर कुव्वत व ताक़त अता फरमाई है उसका अन्दाज़ा उस वाक़िआ से हो सकता है जो कौमे लूत की ज़मीन का तख़्ता उलटने के वक़्त पेश आया कि जिब्रीले अमीन ने एक पर के ज़रिये यह तख़्ता उलट दिया। ऐसी बेमिसाल ताक़त

वाले फरिश्तों की इतनी बड़ी तायदाद मुकाबले में भेजने की ज़रूरत नहीं थी, एक भी काफी था। मगर अल्लाह तआला अपने बन्दों की फितरत से वाकिफ हैं कि वे तायदाद से भी मुतास्सिर होते हैं इसलिये मुकाबिल फरीक की तायदाद के मुताबिक फरिश्तों की तायदाद भेजने का वायदा फरमाया ताकि उनके दिल पूरी तरह मुल्मईन हो जायें।

चौथी आयत में भी यही मज़मून इरशाद फरमाया:

وَمَا جَعَلَهُ اللَّهُ إِلَّا بُشْرَىٰ وَلِتَطْمَئِنَّ بِهِ قُلُوبُكُمْ

यानी अल्लाह तआला ने यह सिर्फ इसलिये किया कि तुम्हें खुशखबरी हो और ताकि तुम्हारे दिल इससे मुल्मईन हो जायें।

ग़ज़वा-ए-बदर में जो अल्लाह तआला के फरिश्ते इमदाद के लिये भेजे गये उनकी तायदाद इस जगह एक हजार बयान हुई है और सूर: आले इमरान में तीन हजार और पाँच हजार ज़िक्र की गयी है। इसका सबब दर असल तीन अलग-अलग वायदे हैं जो अलग-अलग हालात में किये गये हैं। पहला वायदा एक हजार फरिश्तों का हुआ जिसका सबब रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की दुआ और आम मुसलमानों की फरियाद थी। दूसरा वायदा जो तीन हजार फरिश्तों का सूर: आले इमरान में पहले ज़िक्र हुआ है वह उस वक़्त किया गया जब मुसलमानों को यह खबर मिली कि कुरैशी लश्कर के लिये और कुमक (मदद और सहायता) आ रही है। तफ़सीर रुहुल-मअानी में इब्ने अबी शैबा और इब्नुल-मुन्ज़िर वगैरह से इमाम शाबी की रिवायत से मन्कूल है कि मुसलमानों को बदर के दिन यह खबर पहुँची कि कुरज़ बिन जाबिर मुहारिबी मुशिरकों की इमदाद के लिये कुमक लेकर आ रहा है। इस खबर से मुसलमानों में बेचैनी पैदा हुई। इस पर सूर: आले इमरान की आयत:

أَلَمْ يَكْفِكُمْ أَنْ يُمَدِّكُمْ رَبُّكُمْ بِثَلَاثَةِ آفٍ مِنَ الْمَلَائِكَةِ مُزْلِينَ ۝

नाज़िल हुई, जिसमें तीन हजार फरिश्ते इमदाद के लिये आसमान से नाज़िल करने का वायदा ज़िक्र किया गया।

और तीसरा वायदा पाँच हजार का इस शर्त के साथ बंधा था कि अगर मुखालिफ़ पक्ष ने एक ही बार में हमला कर दिया तो पाँच हजार फरिश्तों की मदद भेज दी जायेगी और आले इमरान की मज़कूरा आयत के बाद की आयत में इस तरह बयान हुआ है:

بَلَىٰ إِنْ تَصْبِرُوا وَتَتَّقُوا وَيَأْتُوكُمْ مِنْ فُورِهِمْ هَذَا يُمَدِّدْكُمْ رَبُّكُمْ بِخَمْسَةِ آفٍ مِنَ الْمَلَائِكَةِ مُسَوِّمِينَ ۝

यानी अगर तुम साबित-कदम (जमे) रहे और तक्वे पर कायम रहे और मुकाबिल लश्कर एक बार में तुम पर टूट पड़ा तो तुम्हारा रब तुम्हारी इमदाद पाँच हजार फरिश्तों से करेगा जो खास निशान यानी खास वर्दी में होंगे।

कुछ मुफ़स्सिरीन हज़रात ने फरमाया कि इस वायदे में तीन शर्तें थीं- एक साबित-कदमी (जमाव), दूसरे तक्वा तीसरे मुखालिफ़ फरीक का एक ही बार में हमला। पहली दो शर्तें तो सहाबा किराम में मौजूद थीं और इस मैदान में अव्वल से आखिर तक उनमें कहीं फर्क नहीं आया, मगर तीसरी शर्त एक बार में हमले (यानी अचानक और एक साथ धावा बोलने) की

हालत पेश नहीं आई इसलिये पाँच हजार फ़रिश्तों के लश्कर की नौबत नहीं आई।

इसलिये मामला एक हजार और तीन हजार में दायर रहा। जिसमें यह भी संभावना है कि तीन हजार से मुराद यह हो कि एक हजार जो पहले भेजे गये उनके साथ और दो हजार शामिल करके तीन हजार कर दिये गये, और यह भी हो सकता है कि ये तीन हजार उस पहले हजार के अलावा हों।

यहाँ यह बात भी गौर करने के काबिल है कि इन तीन आयतों में फ़रिश्तों की तीन जमाअतों के भेजने का वायदा है और हर जमाअत के साथ एक खास सिफ़त का ज़िक्र है। सूरः अनफ़ाल की आयत जिसमें एक हजार का वायदा है उसमें तो उन फ़रिश्तों की सिफ़त में “मुरदिफ़ीन” फ़रमाया है जिसके मायने हैं पीछे लगाने वाले। इसमें शायद इस तरफ़ पहले ही इशारा कर दिया गया कि उन फ़रिश्तों के पीछे दूसरे भी आने वाले हैं। और सूरः आले इमरान की पहली आयत में फ़रिश्तों की सिफ़त “मुन्ज़लीन” इरशाद फ़रमाई। यानी ये फ़रिश्ते आसमान से उतारे जायेंगे। इसमें इशारा खास अहमियत की तरफ़ है कि ज़मीन में जो फ़रिश्ते पहले से मौजूद हैं उनसे काम लेने के बजाय खास एहतिमाम के साथ ये फ़रिश्ते आसमान से इसी काम के लिये भेजे जायेंगे, और सूरः आले इमरान की दूसरी आयत जिसमें पाँच हजार का ज़िक्र है उसमें फ़रिश्तों की सिफ़त ‘मुसब्बिमीन’ इरशाद फ़रमाई है कि वे एक खास लिबास और निशानी के साथ होंगे। जैसा कि हदीस की रिवायतों में है कि बदर में नाज़िल होने वाले फ़रिश्तों की पगड़ियाँ सफ़ेद और ग़ज़वा-ए-हुनैन में मदद के लिये आने वाले फ़रिश्तों की पगड़ियाँ सुर्ख़ थी।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमाया:

وَمَا النَّصْرُ إِلَّا مِنْ عِنْدِ اللَّهِ. إِنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ

इसमें मुसलमानों को तंबीह फ़रमा दी कि जो मदद भी कहीं से मिलती है चाहे ज़ाहिरी सूरत से हो या पोशीदा अन्दाज़ से सब अल्लाह तआला ही की तरफ़ से है, उसी के कब्ज़े में है, फ़रिश्तों की मदद भी उसके फ़रमान के ताबे है, इसलिये तुम्हारी नज़र सिर्फ़ उसी अकेली ज़ात की तरफ़ होनी चाहिये जिसका कोई शरीक नहीं, क्योंकि वह बड़ा कुदरत वाला हिक्मत वाला है।

إِذْ يُغَشِّيكُمُ النَّعَاسَ أَمْنَةً مِنْهُ ۖ وَ يُنْزِلُ عَلَيْكُمْ مِنَ السَّمَاءِ مَاءً لِّيُطَهِّرَكُم بِهِ وَيُذْهِبَ عَنْكُم رِجْزَ الشَّيْطَانِ وَلِيَرْبِطَ عَلَى قُلُوبِكُمْ وَيُثَبِّتَ بِهِ الْأَقْدَامَ ۖ إِذْ يُوحِي رَبُّكَ إِلَى الْمَلَأَةِ أَنِّي مَعَكُمْ فَثَبَّتُوا الَّذِينَ آمَنُوا ۖ سَالِقِي فِي قُلُوبِ الَّذِينَ كَفَرُوا الرُّعْبَ فَأَصْرَبُوا فَوْقَ الْأَعْنَاقِ ۖ وَاصْرَبُوا مِنْهُمْ كُلُّ بَنَانٍ ۖ ذَٰلِكَ بِأَنَّهُمْ شَاقُوا اللَّهَ وَرَسُولَهُ ۚ وَمَنْ يُشَاقِقِ اللَّهَ وَرَسُولَهُ فَإِنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ۖ ذَٰلِكُمْ فَذُوقُوهُ ۖ وَأَنَّ لِلْكَافِرِينَ عَذَابَ النَّارِ ۖ

इज़् युग़श्शीकुमुन्नुआ-स अ-म-नतम्
 मिन्हु व युनज़िज़लु अलैकुम्
 मिनस्समा-इ माअल्-लियुतस्हि-रकुम्
 बिही व युज़िह-ब अन्कुम् रिज़ज़श-
 -शैतानि व लियरबि-त अला
 कुलूबिकुम् व युसब्बि-त बिहिल-
 अक्दाम (11) इज़् यूही रब्बु-क
 इलल्-मलाइ-कति अन्नी म-अकुम्
 फ-सब्बितुल्लजी-न आमनू, सउल्की
 फी कुलूबिल्लजी-न क-फ़रुहू-ब
 फज़िरबू फौकल्-अज़्नाकि वज़िरबू
 मिन्हुम कुल्-ल बनान (12) ज़ालि-क
 बिअन्नहुम् शाक्कुल्ला-ह व रसूलहू
 व मय्युशाकिकिल्ला-ह व रसूलहू
 फ-इन्नल्ला-ह शदीदुल्-अिकाब
 (13) ज़ालिकुम् फज़ूकूहु व अन्-न
 लिक्काफिरी-न अज़ाबन्नार (14)

जिस वक़्त कि डाल दी उसने तुम पर
 ऊँघ अपनी तरफ़ से सुकून व तसल्ली के
 वास्ते और उतारा तुम पर आसमान से
 पानी कि उससे तुमको पाक कर दे और
 दूर कर दे तुमसे शैतान की नजासत और
 मज़बूत कर दे तुम्हारे दिलों को और जमा
 दे उससे तुम्हारे क़दम। (11) जब हुक्म
 भेजा तेरे रब ने फ़रिश्तों को कि मैं साथ
 हूँ तुम्हारे सो तुम दिल जमाकर रखो
 मुसलमानों के, मैं डाल दूँगा दिल में
 काफ़िरों के दहशत, सो मारो गर्दनो पर
 और काटो उनकी पोर-पोर। (12) यह
 इस वास्ते है कि वे मुख़ालिफ़ हुए अल्लाह
 के और उसके रसूल के, और जो कोई
 मुख़ालिफ़ हुआ अल्लाह का और उसके
 रसूल का तो बेशक अल्लाह का अज़ाब
 सख़्त है। (13) यह तो तुम चख़ लो और
 जान लो कि काफ़िरों के लिये है अज़ाब
 दोज़ख़ का। (14)

खुलासा-ए-तफ़सीर

(उस वक़्त को याद करो) जबकि अल्लाह तआला तुम पर ऊँघ को तारी कर रहा था अपनी तरफ़ से चैन-सुकून देने के लिये, और (उससे पहले) तुम पर आसमान से पानी बरसा रहा था, ताकि उस (पानी) के ज़रिये से तुमको (बेवजू या बेगुस्त होने की हालत से) पाक कर दे, और (ताकि उसके ज़रिये) तुमसे शैतानी वस्वसे को दूर कर दे, और (ताकि) तुम्हारे दिलों को मज़बूत कर दे, और (ताकि) तुम्हारे पाँव जमा दे (यानी तुम रेंग में न धँसो)।

(और उस वक़्त को याद करो) जबकि आपका रब (उन) फ़रिश्तों को (जो इमदाद के लिये नाज़िल हुए थे) हुक्म देता था कि मैं तुम्हारा साथी (और मददगार) हूँ, सो (मुझको मददगार समझकर) तुम ईमान वालों की हिम्मत बढ़ाओ, मैं अभी काफ़िरों के दिलों में रौब डाले देता हूँ,

सो तुम (काफिरों की) गर्दनो पर (हथियार) मारो और उनके पोर-पोर को मारो। यह (सज़ा) इसलिये है कि उन्होंने अल्लाह की और उसके रसूल की मुख़ालफ़त की, और जो अल्लाह और उसके रसूल की मुख़ालफ़त करता है सो अल्लाह तआला (उसको) सख़्त सज़ा देते हैं (चाहे दुनिया में किसी हिक्मत से या आख़िरत में या दोनों में)। सो (फिलहाल) यह (सज़ा) चखो, और (जान लो कि) काफ़िरों के लिए जहन्नम का अज़ाब (मुकरर ही) है।

मअरिफ़ व मसाईल

सूर: अनफ़ाल के शुरू से अल्लाह तआला के उन इनामों का बयान हो रहा है जो उसके फ़रमाँबरदार बन्दों पर हुए। ग़ज़वा-ए-बदर के वाकिआत भी इसी सिलसिले की कड़ियाँ हैं। ग़ज़वा-ए-बदर में जो इनामात हक़ तआला की तरफ़ से अता हुए उनमें से पहला इनाम तो खुद उस जिहाद के लिये मुसलमानों को निकालना है जिसका बयान आयत “कमा अख़-ज-क” में आया है। तीसरा इनाम दुआ की कुबूलियत और मदद का वायदा पूरा करना है जिसका ज़िक्र आयत “इज़् तस्तगीसू-न रब्बकुम” में हुआ है। ऊपर बयान हुई आयतों में से पहली आयत में चौथे इनाम का तज़क़िरा है जिसमें मुसलमानों के लिये दो नेमतों का ज़िक्र है- एक सब पर नींद ग़ालिब आकर परेशानी और थकान का दूर हो जाना, दूसरे बारिश के ज़रिये उनके लिये पानी मुहैया फ़रमाना और मैदाने जंग को उनके लिये हमवार और दुश्मन के लिये दलदल बना देना।

तफ़सील इस वाकिए की यह है कि जिस वक़्त कुफ़्र व इस्लाम का यह पहला मुकाबला ठन गया तो मक्का के काफ़िरों का लश्कर पहले पहुँचकर एक ऐसे मक़ाम पर पड़ाव डाल चुका था जो ऊँचाई पर था और पानी उसके करीब था। हज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा किराम उस जगह पहुँचे तो वादी के निचले हिस्से में जगह मिली। कुरआने करीम ने उस मैदाने जंग का नक्शा इसी सूरत की बयालीसवीं आयत में इस तरह खींचा है:

إِذْ أَنتَم بِالْعُدْوَةِ الدُّنْيَا وَهُمْ بِالْعُدْوَةِ الْقُصْوَى

जिसका तफ़सीली बयान बाद में आयेगा।

जिस जगह पहुँचकर रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने शुरू में क़ियाम फ़रमाया उस मक़ाम के जानने वाले हज़रत हुबाब बिन मुन्ज़िर रज़ियल्लाहु अन्हु ने उसको जंगी एतिबार से नामुनासिब समझकर अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! जो मक़ाम (स्थान) आपने इख़्तियार फ़रमाया है यह अल्लाह तआला के हुक्म से है जिसमें हमें कोई इख़्तियार नहीं या महज़ राय और मस्तेहत के पेशे-नज़र इख़्तियार फ़रमाया गया है? आपने इरशाद फ़रमाया कि नहीं, यह कोई अल्लाह का हुक्म नहीं, इसमें तब्दीली की जा सकती है। तब हज़रत हुबाब बिन मुन्ज़िर रज़ियल्लाहु अन्हु ने अर्ज़ किया कि फिर तो बेहतर है कि इस मक़ाम से आगे बढ़कर मक्की सरदारों के लश्कर के करीब एक पानी का मक़ाम है उस पर कब्ज़ा किया जाये, वहाँ हमें पानी अधिकता और फ़रावानी के साथ मिल जायेगा।

हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनका मशिवरा कुबूल फरमाया और वहाँ जाकर पानी पर कब्ज़ा किया। एक हौज़ पानी के लिये बनाकर उसमें पानी का जखीरा जमा फरमाया।

इससे मुत्सईन होने के बाद हज़रत सअद बिन मुआज़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने अर्ज किया या रसूलुल्लाह! हमें ख्याल यह है कि हम आपके लिये एक सायबान (सायेदार जगह यानी खेमा) किसी महफूज़ जगह में बना दें जहाँ आप मुकीम रहें और आपकी सवारियाँ भी आपके पास रहें।

मन्शा इसका यह है कि हम दुश्मन के मुकाबले में जिहाद करेंगे, अल्लाह तआला ने हमें फतह नसीब फरमाई तो यही मकसद है, और अगर खुदा न ख्वास्ता कोई दूसरी सूरत हो तो आप अपनी सवारी पर सवार होकर उन सहाबा किराम के साथ जा मिलें जो मदीना तय्यिबा में रह गये हैं, क्योंकि मेरा गुमान यह है कि वे लोग भी आप पर जान न्यौछावर करने और आप से मुहब्बत करने में हमसे कम नहीं, और अगर उनको आपके निकलने के वक़्त यह ख्याल होता कि आपका इस हथियारबन्द लश्कर से मुकाबला होगा तो उनमें से कोई भी पीछे न रहता। आप मदीना में पहुँच जायेंगे तो वे आपके साथी और जौनिसार बनकर रहेंगे। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनकी इस बहादुराना पेशकश पर दुआयें दीं और एक मुख़्तसर सा सायबान आपके लिये बना दिया गया जिसमें हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सिदीके अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु के सिवा कोई न था। हज़रत मुआज़ रज़ियल्लाहु अन्हु दरवाजे पर हिफाज़त के लिये तलवार लिये खड़े थे।

मुकाबले और जंग की पहली रात थी। तीन सौ तेरह बेसामान लोगों का मुकाबला अपने से तीन गुनी तायदाद यानी एक हजार हथियारबन्द फौज से था। मैदाने जंग का भी अच्छा मक़ाम उनके कब्ज़े में आ चुका था। निचला हिस्सा वह भी सख़्त रेतीला जिसमें चलना दुश्वार मुसलमानों के हाथ आया था। तबई परेशानी और फ़िक्र सब को थी। कुछ लोगों के दिल में शैतान ने ये वस्वसे (बुरे ख्याल) भी डालने शुरू किये कि तुम लोग अपने आपको हक़ पर कहते हो और इस वक़्त भी बजाय आराम करने के नमाज़े तहज्जुद वगैरह में मशगूल हो, मगर हाल यह है कि दुश्मन हर हैसियत से तुम पर ग़ालिब और तुमसे बढ़ा हुआ है। इन हालात में अल्लाह तआला ने मुसलमानों पर एक ख़ास किस्म की नींद मुसल्लत फरमा दी जिसने हर मुसलमान को चाहे उसका इरादा सोने का था या नहीं, जबरन सुला दिया।

हाफ़िज़े हदीस अबू यज़ूला ने नक़ल किया है कि हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु ने फरमाया कि ग़ज़वा-ए-बदर की इस रात में हममें से कोई बाकी नहीं रहा जो सो न गया हो, सिर्फ़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तमाम रात जागकर सुबह तक नमाज़े तहज्जुद में मशगूल रहे।

और इमाम इब्ने कसीर ने सही हवाले से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उस रात में जबकि अपने सायबान में नमाज़े तहज्जुद में मशगूल थे आपको भी किसी कद्र ऊँच आ गयी, मगर फौरन ही हंसते हुए बेदार होकर फरमाया- ऐ अबू बक्र! खुशख़बरी सुनो। यह जिब्रील अलैहिस्सलाम टीले के करीब खड़े हैं और यह कहकर आप सायबान से बाहर

यह आयत पढ़ते हुए तशरीफ ले गये:

سَيَزِيدُ الْيَوْمَ وَيَكُونُ الْيَوْمَ

यानी बहुत जल्द दुश्मन की जमाअत हार जायेगी और पीठ फेरकर भागेगी।

कुछ रिवायतों में है कि आपने बाहर निकल कर विभिन्न जगहों की तरफ इशारा करके फरमाया कि यह अबू जहल के कत्ल होने की जगह है, यह फुलों की, यह फुलों की। और फिर ठीक उसी तरह वाकिआत पेश आये। (तफसीरे मजहरी)

और जैसे गज़वा-ए-बदर में थकान और परेशानी दूर करने के लिये अल्लाह तआला ने तमाम सहाबा किराम पर खास किस्म की नींद मुसल्लत फरमाई इसी तरह गज़वा-ए-उहुद में भी इसी तरह का वाकिआ हुआ।

सुफियान सौरी रह. ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि जंग की हालत में नींद अल्लाह तआला की तरफ से अमन व इत्मीनान की निशानी होती है, और नमाज़ में नींद शैतान की तरफ से होती है। (इब्ने कसीर)

दूसरी नेमत मुसलमानों को इस रात में यह मिली कि बारिश हो गयी जिसने मैदाने जंग का नक्शा बिल्कुल पलट दिया। कुरैशी लोगों ने जिस जगह पर कब्ज़ा किया था वहाँ तो बारिश बहुत तेज़ आई और मैदान में दलदल होकर चलना मुश्किल हो गया। और जिस जगह हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम मुक़ीम थे यहाँ रेत की वजह से चलना मुश्किल था, यहाँ बारिश हल्की हुई जिसने तमाम रेत को जमाकर मैदान को निहायत हमवार खुशगवार बना दिया।

उक्त आयत में इन्हीं दो नेमतों का ज़िक्र है नींद और बारिश जिसने मैदाने जंग का नक्शा पलटकर वो शैतानी ख्यालात और दिल में डाली हुई शंकायें धो डालीं जो कुछ कमज़ोर लोगों को सता रहे थे कि हम हक़ पर होने के बावजूद दबे हुए, परेशानियों में घिरे और मग़लूब नज़र आते हैं, और दुश्मन बातिल (ग़ैर-हक़) पर होने के बावजूद कुव्वत व शौकत और इत्मीनान की हालत में है।

ज़िक्र हुई आयत में फरमाया कि उस वक़्त को याद करो जबकि अल्लाह तआला तुम पर ऊँघ तारी कर रहा था चैन देने के लिये, और तुम पर पानी बरसा रहा था ताकि उस पानी से तुमको पाक कर दे। और तुम से शैतानी वस्वसे (बुरे ख्याल) को दूर कर दे, और तुम्हारे दिलों को मज़बूत कर दे और तुम्हारे पाँव जमा दे।

दूसरी आयत में पाँचवें इनाम का ज़िक्र है जो इस गज़वा-ए-बदर के मैदाने जंग में मुसलमानों पर हुआ। वह यह कि अल्लाह तआला ने जो फ़रिश्ते मुसलमानों की इमदाद के लिये भेजे थे उनको खिताब करके फरमाया कि मैं तुम्हारे साथ हूँ तुम ईमान वालों की हिम्मत बढ़ाओ मैं अभी काफ़िरों के दिलों में रौब डाले देता हूँ। सो तुम काफ़िरों की गर्दनो पर हरबा मारो और उनके पोर-पोर को मारो।

इसमें फ़रिश्तों को दो काम सुपुर्द किये गये एक यह कि मुसलमानों की हिम्मत बढ़ायें। यह

इस तरह भी हो सकता है कि फरिश्ते मैदान में आकर उनकी जमाअत को बढ़ायें और उनके साथ मिलकर जंग में हिस्सा लें, और इस तरह भी कि अपने अमल-दखल से मुसलमानों के दिलों को मजबूत कर दें और उनमें कुव्वत पैदा कर दें। दूसरा काम यह भी उनके सुपुर्द हुआ कि फरिश्ते खुद भी जंग में हिस्सा लें और काफिरों पर हमलावर हों। इस आयत से ज़ाहिर यही है कि फरिश्तों ने दोनों काम अन्जाम दिये, मुसलमानों के दिलों में असर डाल करके हिम्मत व कुव्वत भी बढ़ाई और जंग में भी हिस्सा लिया। और इसकी ताईद हदीस की चन्द रिवायतों से भी होती है जो तफसीर दुर्रे मन्सूर और तफसीरे मज़हरी में तफसील के साथ बयान की गयी हैं और फरिश्तों के जंग में हिस्सा लेने की आँखों देखी शहादतें सहाबा किराम से नक़ल की हैं।

तीसरी आयत में यह इरशाद फरमाया कि इस कुफ़ व इस्लाम के मुकाबले और जंग में जो कुछ हुआ उसका सबब यह था कि उन काफिरों ने अल्लाह तआला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुखालफत की और जो अल्लाह व रसूल की मुखालफत करता है उसके लिये अल्लाह तआला का अज़ाब शदीद और सख्त हुआ करता है। इससे मालूम हुआ कि ग़ज़वा-ए-बदर में एक तरफ तो मुसलमानों पर इनामात नाज़िल हुए, फतह व नुसरत उनको हासिल हुई, दूसरी तरफ काफिरों पर मुसलमानों के हाथों से अज़ाब नाज़िल फरमाकर उनके बुरे आमाल और ग़लत हरकतों की थोड़ी सी सज़ा दे दी गयी। और इससे ज़्यादा भारी सज़ा आखिरत में होने वाली है जिसको चौथी आयत में बयान फरमाया:

ذَٰلِكُمْ فَذَوْقُوهُ وَإِنَّ لِلْكَافِرِينَ عَذَابَ النَّارِ

यानी यह हमारा थोड़ा सा अज़ाब है इसको चखो और समझ लो कि इसके बाद काफिरों के लिये जहन्नम का अज़ाब आने वाला है जो बहुत ही सख्त, लम्बा और नाकाबिले गुमान है।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا إِذَا لَقِيتُمُ الَّذِينَ كَفَرُوا زَحْفًا فَلَا

تَوَلَّوْهُمْ الْأَدْبَارَ ۖ وَمَنْ يُوَلِّهِمْ يَوْمَئِذٍ دُبُرَهُ إِلَّا مُتَحَرِّفًا لِّقِتَالٍ أَوْ مُتَحَيِّزًا إِلَىٰ فِئَةٍ فَقَدْ بَاءَ بِغَضَبٍ مِّنَ اللَّهِ وَمَا وَهُ جَهَنَّمُ ۖ وَبِئْسَ الْمَصِيرُ ۝ فَلَمْ تَقْتُلُوهُمْ وَلَكِنَّ اللَّهَ قَتَلَهُمْ ۖ وَمَا رَمَيْتَ إِذْ رَمَيْتَ وَلَكِنَّ اللَّهَ رَمَىٰ ۚ وَلِيُبْلِيَ الْمُؤْمِنِينَ مِنْهُ بَلَاءً حَسَنًا ۚ إِنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝ ذَٰلِكُمْ وَأَنَّ اللَّهَ مُوهِنُ كَيْدِ الْكَافِرِينَ ۝ إِنْ تَسْتَفِئِحُوا فَقَدْ جَاءَكُمْ الْفَتْحُ ۚ وَإِنْ تَنْتَهُوا فهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ وَإِنْ تَعُودُوا نَعُدْ ۚ وَلَكِنْ تَغْنِي عَنْكُمْ فِتْنَتُكُمْ شَيْئًا ۚ وَلَوْ كَثُرَتْ ۚ وَأَنَّ اللَّهَ مَعَ الْمُؤْمِنِينَ ۝

या अय्युहल्लजी-न आमनू इज़ा	ऐ ईमान वालो! जब भिड़ो तुम काफिरों
लकीतुमुल्लजी-न क-फरु जहफन्	से मैदाने जंग में तो मत फेरो उनसे

फ़ला तुवल्लूहुमुल्-अदबार (15) व
 मय्युवल्लिहिम् यौमइजिन् दुबु-रहू
 इल्ला मु-तहरिफ़ल् लिक्ितालिन् औ
 मु-तहय्यिज़न् इला फ़ि-अतिन् फ़-क़द्
 बा-अ बि-ग़-ज़बिम् मिनल्लाहि व
 मअ़्वाहु जहन्नमु, व बिअ्सल्-मसीर
 (16) फ़-लम् तक्तुलूहुम् व
 लाकिन्नल्ला-ह क़-त-लहुम् व मा
 रमै-त इज़् रमै-त व लाकिन्नल्ला-ह
 रमा व लियुब्लियल्-मुअ्मिनी-न
 मिन्हु बलाअन् ह-सनन्, इन्नल्ला-ह
 समीअन् अलीम (17) ज़ालिकुम् व
 अन्नल्ला-ह मूहिनु कैदिल्-काफ़िरीन
 (18) इन् तस्तफ़ितहू फ़-क़द्
 जा-अकुमुल्-फ़हू व इन् तन्तहू फ़हू-व
 खैरुल्लकुम् व इन् तअ़्दू नअ़्दू व
 लन् तुग़्नि-य अन्कुम् फ़ि-अतुकुम्
 शैअंव-व व लौ कसुरत् व अन्नल्ला-ह
 मअ़ल्-मुअ्मिनीन (19) ❀

पीठ। (15) और जो कोई उनसे फेरे पीठ
 उस दिन मगर यह कि हुनर करता हो
 लड़ाई का, या जा मिलता हो फौज में,
 सो वह फिरा अल्लाह का गुज़ब लेकर
 और उसका ठिकाना दोज़ख़ है, और वह
 क्या बुरा ठिकाना है। (16) सो तुमने
 उनको नहीं मारा लेकिन अल्लाह ने
 उनको मारा, और तूने नहीं फेंकी मुट्ठी
 खाक की जिस वक़्त कि फेंकी थी लेकिन
 अल्लाह ने फेंकी, और ताकि करे ईमान
 वालों पर अपनी तरफ़ से ख़ूब एहसान,
 बेशक अल्लाह है सुनने वाला जानने
 वाला। (17) यह तो हो चुका और जान
 लो कि अल्लाह सुस्त कर देगा तदबीर
 काफ़िरों की। (18) अगर तुम चाहते हो
 फ़ैसला तो पहुँच चुका तुम्हारे पास
 फ़ैसला, और अगर बाज़ आओ तो तुम्हारे
 लिये बेहतर है, और अगर यही करोगे तो
 हम भी फिर यही करेंगे, और कुछ काम
 न आयेगा तुम्हारे तुम्हारा जत्था अगरचे
 बहुत हों, और जान लो कि अल्लाह ईमान
 वालों के साथ है। (19) ❀

ख़ुलासा-ए-तफ़्सीर

ऐ ईमान वाले! जब तुम (जिहाद में) काफ़िरों से आमने-सामने हो जाओ तो उनसे पुश्त मत
 फेरना (यानी जिहाद से मत भागना)। और जो शख्स उनसे उस मौके पर (यानी मुकाबले के
 वक़्त) पुश्त फेरेगा, मगर हाँ जो लड़ाई के लिये पैतरा बदलता हो या जो अपनी जमाअत की
 तरफ़ पनाह लेने आता हो (वह इससे अलग है, बाकी और जो ऐसा करेगा) तो वह अल्लाह
 तआला के गुज़ब में आ जायेगा और उसका ठिकाना दोज़ख़ होगा और वह बहुत ही बुरी जगह

है। ('फलम् तक्तुलुहुम्.....' के अन्दर भी एक किस्से की तरफ इशारा है वह यह कि आपने बदर के दिन एक मुट्ठी कंकरियों की उठाकर काफिरों की तरफ फेंकी जिसके टुकड़े सब की आँखों में जा गिरे और उनको शिकस्त हुई, और फरिश्तों का इमदाद के लिये आना ऊपर आ चुका है, इन्हीं चीजों को बयान करते हुए फरमाते हैं कि जब ऐसे अजीब वाकिआत हुए जो कि बिल्कुल तुम्हारे इख्तियार से बाहर हैं) सो (इससे मालूम हुआ कि वास्तविकता के एतिबार से) तुमने उन (काफिरों) को क़त्ल नहीं किया, लेकिन (हाँ वास्तव में) अल्लाह तआला ने (बेशक) उनको क़त्ल किया, (यानी असल असर करने वाली उसकी क़ुदरत है) और (इसी तरह असर करने के लिये वास्तविक तौर पर) आपने खाक की मुट्ठी (उनकी तरफ) नहीं फेंकी जिस वक़्त आपने वह फेंकी थी, लेकिन (हाँ उसको प्रभावी करने में) अल्लाह ने (वाकई) वह फेंकी, और (बावजूद इसके असल असर करने वाली चीज़ अल्लाह की क़ुदरत है, फिर जो क़त्ल वगैरह के आसार को बन्दे की क़ुदरत के साथ जोड़ दिया तो इसमें हिक्मत यह है कि) ताकि मुसलमानों को अपनी तरफ से (उनके अमल का) उनकी मेहनत का ख़ूब बदला दे (और अज़्र का मिलना अल्लाह की आदत और क़ानून के मुताबिक इस पर निर्भर है कि काम उनके इरादे व इख्तियार से सादिर हो) बेशक अल्लाह तआला (उन मोमिनों की बातों के) ख़ूब सुनने वाले (और उनके कामों व हालात के) ख़ूब जानने वाले हैं।

(इन फरियाद के अक़वाल और जंग व परेशानी और चिंता के हालात वगैरह में जो उनको मेहनत व मशक्कत पेश आई हमको उसकी इत्तिला है, उनको उस पर बदला देंगे) एक बात तो यह हुई और दूसरी बात यह है कि अल्लाह तआला को काफिरों की तदबीर को कमज़ोर करना था (और ज़्यादा कमज़ोरी उस वक़्त ज़ाहिर होती है जब अपने बराबर वाले के बल्कि अपने से कमज़ोर के हाथ से पराजित हो जाये और यह भी निर्भर है इस पर कि वह आसार "निशानियाँ और हालात" मोमिनों के हाथ से ज़ाहिर हों, वरना कह सकते थे कि तदबीरें तो हमारी मज़बूत थीं लेकिन अल्लाह की तदबीर के सामने न चल सकीं चूँकि वह हमसे ज़्यादा मज़बूत और ताक़तवर है, तो इससे आईन्दा के लिये मुसलमानों के मुकाबले में उनका हौसला पस्त न हो क्योंकि उनको तो कमज़ोर ही समझते) अगर तुम लोग फैसला चाहते हो तो वह फैसला तुम्हारे सामने आ मौजूद हुआ (कि जो हक़ पर था उसका ग़लबा हो गया) और अगर (अब हक़ ज़्यादा स्पष्ट होने के बाद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुख़ालफ़त से) बाज़ आ जाओ तो यह तुम्हारे लिये बहुत ही अच्छा है, और अगर (अब भी बाज़ न आये बल्कि) तुम फिर वही काम करोगे (यानी मुख़ालफ़त) तो हम भी फिर वही काम करेंगे (यानी तुमको मग़लूब और मुसलमानों को ग़ालिब कर देना) और (अगर तुमको अपनी भारी संख्या और संगठन का घमण्ड हो कि अब की बार इससे ज़्यादा अफ़राद जमा कर लेंगे तो याद रखो कि) तुम्हारी भारी संख्या "यानी जमाअत व संगठन" तुम्हारे ज़रा भी काम न आयेगी, अगरचे कितनी ही ज़्यादा हो, और वाकई बात यह है कि अल्लाह तआला (असल में) ईमान वालों के साथ (यानी उनका मददगार) है (चाहे किसी वक़्ती सबब की वजह से किसी वक़्त उनके ग़लबे का ज़हूर न हो लेकिन असल

ग़लबे के पात्र यही हैं इसलिये इनसे मुकाबला करना अपना नुकसान करना है)।

मअरिफ़ व मसाईल

उक्त आयतों में से पहली दो आयतों में इस्लाम का एक जंगी क़ानून बतलाया गया है। पहली आयत में लफ़्ज़ 'ज़ोस्फ़' से मुराद दोनों लश्करों का मुकाबला और मुठभेड़ है। मायने यह है कि ऐसी जंग छिड़ जाने के बाद पुश्त फेरना और मैदान से भागना मुसलमानों के लिये जायज़ नहीं।

दूसरी आयत में इस हुक्म से एक हालत को अलग रखने का ज़िक्र और नाजायज़ तौर पर भागने वालों के लिये सख़्त अज़ाब का बयान है।

दो हालतों को इस हुक्म से बाहर रखा गया है:

الْمُتَحَرِّفًا لِّقِتَالٍ أَوْ مُتَحَرِّفًا إِلَى فِتْنَةٍ

यानी जंग के वक़्त पीठ फेरना सिर्फ़ दो हालतों में जायज़ है- एक तो यह कि मैदान से पीठ फेरना महज़ एक जंगी चाल के तौर पर दुश्मन को दिखलाने के लिये हो, हकीकत में मैदान से हटना मक़सद न हो बल्कि मुख़ालिफ़ को एक ग़फलत और धोखे में डालकर एक ही बार में अचानक हमला मक़सद हो। यह मायने है "इल्ला मु-तहरिफ़ल् लिक्वितालिन्" के, क्योंकि 'तहरिफ़' के मायने किसी एक ओर माईल होने के आते हैं। (तफ़सीर रूहुल-मअानी)

दूसरी हालत इस हुक्म से बाहर जिसमें मैदान से पीठ फेरने की इजाज़त है यह है कि अपने मौजूदा लश्कर की कमज़ोरी का एहसास करके इसलिये पीछे हटें कि मुजाहिदीन की अतिरिक्त मदद हासिल करके फिर हमलावर हों "औ मु-तहय्यिज़न् इला फि-अतिन्" के यही मायने हैं। क्योंकि 'तहय्यिज़' के लफ़्ज़ी मायने विलय और मिलने के हैं, और फि-अतिन् के मायने जमाअत के। मतलब यह है कि अपनी जमाअत से मिलकर कुव्वत हासिल करने और फिर हमला करने की नीयत से मैदान छोड़े तो यह जायज़ है।

हुक्म से बाहर की ये हालतें ज़िक्र करने के बाद उन लोगों की सज़ा का ज़िक्र है जिन्होंने इन गुंजाईश वाली हालतों के बग़ैर नाजायज़ तौर पर मैदान छोड़ा या पुश्त मोड़ी। इरशाद है:

لَقَدْ بَاءَ بِغَضَبٍ مِّنَ اللَّهِ وَمَأْوَاهُ جَهَنَّمُ وَبِئْسَ الْمَصِيرُ

यानी मैदान से भागने वाले अल्लाह तआला का ग़ज़ब लेकर लौटे और उनका ठिकाना जहन्नम है, और वह बुरा ठिकाना है।

इन दोनों आयतों से यह हुक्म मालूम हुआ कि मुक़ाबिल पक्ष कितनी ही ज़्यादा तायदाद और ताक़त व शौक़त में हो मुसलमानों को उनके मुकाबले से पीठ फेरना हराम है सिवाय दो अलग रखी गयी सूरतों के। यह कि पुश्त फेरना भागने के लिये न हो बल्कि या तो पैतरा बदलने के तौर पर हो और या मदद हासिल करके दोबारा हमला करने के इरादे से हो।

ग़ज़वा-ए-बदर में ये आयतें नाज़िल हुई उस वक़्त यह हुक्म आम था कि चाहे कितनी ही

बड़ी तायदाद से मुकाबला हो जाये और अपनी संख्या से उनकी कोई तुलना न हो फिर भी पीठ फेरना और मैदान छोड़ना जायज़ नहीं। बदर के मैदान में यही सूरत थी कि तीन सौ तेरह का मुकाबला तीन गुनी तायदाद यानी एक हजार से हो रहा था। बाद में अहकाम में कमी व रियायत सूर: अनफ़ाल की आयत 65 और 66 में नाज़िल हुई। आयत 65 में बीस मुसलमानों को दो सौ काफ़िरों के और सौ मुसलमानों को एक हजार काफ़िरों के मुकाबले में जिहाद करने का हुक्म है, और आयत 66 में और कमी का यह कानून नाज़िल हो गया:

الْآن خَفَّفَ اللَّهُ عَنْكُمْ وَعَلِمَ أَنَّ فِيكُمْ ضَعْفًا. فَإِنْ يَكُنْ مِنْكُمْ مِائَةٌ صَابِرَةٌ يَغْلِبُوا مِائَتَيْنِ..... الْآيَةُ.

यानी अब अल्लाह तआला ने तुम्हारे लिये आसानी कर दी और तुम्हारी कमजोरी को सामने रखते हुए यह कानून जारी कर दिया कि अगर मुसलमान सौ आदमी साबित-क़दम हों तो दो सौ काफ़िरों पर ग़ालिब आ सकेंगे। इसमें इशारा कर दिया कि अपने से दोगुनी तायदाद तक तो मुसलमानों ही के ग़ालिब रहने की उम्मीद है इसलिये पीठ फेरना जायज़ नहीं। हाँ मुख़ालिफ़ पक्ष की तायदाद दोगुनी से भी ज़्यादा हो जाये तो ऐसी हालत में मैदान छोड़ देना जायज़ है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि जो शख्स अकेला तीन आदमियों के मुकाबले से भागा वह भागा नहीं, हाँ जो दो आदमियों के मुकाबले से भागा वह भागने वाला है, यानी गुनाहे कबीरा का मुजरिम है। (रुहुल-बयान)। अब यही हुक्म क़ियामत तक बाकी है। उम्मत की अक्सरियत और चारों इमामों के नज़दीक शरई हुक्म यही है कि जब तक मुख़ालिफ़ पक्ष की तायदाद दोगुनी से ज़ायद न हो उस वक़्त तक मैदाने जंग से भागना हराम और गुनाहे कबीरा (बड़ा गुनाह) है।

बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सात कामों को इनसान के लिये तबाहकुन फ़रमाया है, उनमें मैदाने जंग से भागना भी शुमार फ़रमाया, और हुनैन की लड़ाई के वाक़िए में सहाबा किराम के शुरूआती क़दम पीछे हटाने को क़ुरआने करीम ने एक शैतानी चूक क़रार दिया जो उसके बड़ा गुनाह होने की दलील है। इरशाद फ़रमाया:

إِنَّمَا اسْتَزَلَّهُمُ الشَّيْطَانُ.

और तिमिज़ी व अबू दाऊद की एक रिवायत में जो किस्सा हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु का मन्कूल है कि एक मर्तबा जंग से भागकर उन्होंने मदीना में पनाह ली और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर होकर अपने जुर्म का इकरार किया कि हम मैदाने जंग से भागने वाले मुजरिम हो गये, हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बजाय नाराज़गी के इज़हार के उनको तसल्ली दी और फ़रमाया:

بَلْ أَنْتُمْ الْعَكَارُونَ وَأَنَا فَتَكُم.

यानी तुम भागने वाले नहीं बल्कि मदद और ताक़त हासिल करके दोबारा हमला करने वाले हो और मैं तुम्हारे लिये ताक़त व मदद हूँ। इसमें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस

हकीकत को वाजेह फरमा दिया कि उन लोगों का भागकर मदीना में पनाह लेना उस हालत के अन्दर दाखिल है जिसमें मदद हासिल करने के लिये मैदान छोड़ने की इजाजत दी गयी है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु को हक़ तआला के ख़ौफ़ और हैबत व अज़मत का जो मक़ाम ख़ास हासिल था उसकी बिना पर वह इस ज़ाहिरी तौर पर पीछे हटने से भी घबराये और अपने आपको मुजरिम की हैसियत में हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में पेश कर दिया।

तीसरी आयत में ग़ज़वा-ए-बदर के बाकी वाकिए का बयान करने के साथ मुसलमानों को इसकी हिदायत की गयी है कि ग़ज़वा-ए-बदर की चमत्कारिक फ़तह में कसरत के किल्लत से और ताक़त के कमज़ोरी से मग़लूब हो जाने को अपनी कोशिश व अमल का नतीजा न समझो बल्कि उस पाक ज़ात की तरफ़ देखो जिसकी नुसरत व इमदाद ने यह जंग का नक़्शा पलट दिया।

जो वाक़िआ इस आयत में बयान हुआ उसकी तफ़सील इब्ने जरीर तबरी और इमाम बैहकी वग़ैरह ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास वग़ैरह से यह नक़ल की है कि बदर की जंग के दिन जब मक्का के एक हज़ार जवानों का लश्कर टीले के पीछे से मैदान में आया तो मुसलमानों की कम संख्या व कमज़ोरी और अपनी अधिकता व ताक़त पर फ़ख़र करता हुआ घमण्डी अन्दाज़ से सामने आया। उस वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दुआ की कि या अल्लाह! ये तेरे झुठलाने वाले कुरैश इतराते व तकब्बुर करते हुए आ रहे हैं, आपने जो फ़तह का वायदा मुझसे फ़रमाया है उसको जल्द पूरा फ़रमा। (तफ़सीर रूहुल-बयान) तो जिब्रीले अमीन नाज़िल हुए और अर्ज़ किया कि आप एक ख़ाक की मुट्ठी लेकर दुश्मन के लश्कर की तरफ़ फेंक दें। आपने ऐसा ही किया। और इब्ने अबी हातिम ने हज़रत इब्ने ज़ैद की रिवायत से नक़ल किया है कि हुज़ुर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तीन मर्तबा मिट्टी और कंकरोں की मुट्ठी भरी, एक लश्कर के दाहिने हिस्से पर दूसरी बायें हिस्से पर तीसरी सामने की तरफ़ फेंक दी। जिसका नतीजा यह हुआ कि उस एक या तीन मुट्ठी भर कंकरियों को क़ुदरत ने चमत्कारी अन्दाज़ में इस तरह फैला दिया कि मुख़ालिफ़ लश्कर का कोई आदमी बाकी न रहा जिसकी आँखों में और चेहरों पर यह धूल और कंकरियाँ न पहुँची हों। जिसका असर यह हुआ कि पूरे लश्कर में भगदड़ मच गयी और मुसलमानों ने उनका पीछा किया, फ़रिश्ते अलग उनके साथ जंग में शरीक थे।

(तफ़सीरे मज़हरी, रूहुल-मआनी)

आख़िरकार कुछ लोग मुख़ालिफ़ पक्ष के क़त्ल हो गये, कुछ गिरफ़्तार कर लिये गये, बाकी भाग गये और मैदान मुसलमानों के हाथ आ गया।

बिल्कुल मायूसी और नाउम्मीदी की हालत में यह ज़बरदस्त फ़तह मुसलमानों को हासिल हुई। मैदाने जंग से वापस आकर आपस में गुफ़्तगूएँ शुरू हुईं। सहाबा किराम अपने-अपने कारनामे एक दूसरे से बयान करने लगे, इस पर यह आयत नाज़िल हुई:

فَلَمْ تَقْتُلُوهُمْ وَلَكِنَّ اللَّهَ قَتَلَهُمْ

जिसमें उनको यह हिदायत दी गयी कि अपनी कोशिश व अमल पर नाज़ न करो, यह जो कुछ हुआ वह सिर्फ़ तुम्हारी मेहनत व कोशिश का नतीजा नहीं बल्कि हक़ तआला की ख़ालिस नुसरत व इमदाद का फल था। जो दुश्मन तुम्हारे हाथों क़त्ल हुए उनको दर हकीकत तुमने क़त्ल नहीं किया बल्कि अल्लाह तआला ने क़त्ल किया है।

इसी तरह रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को ख़िताब करके इरशाद हुआ:

وَمَا رَمَيْتُ إِذْ رَمَيْتُ وَلَسَكُنَّ اللَّهُ رَمِيَّ.

यानी यह मुट्ठी कंकरियों की जो आपने फेंकी वह दर हकीकत आपने नहीं फेंकी बल्कि अल्लाह तआला ने फेंकी है। मतलब यह है कि फेंकने का यह नतीजा कि दुश्मन की फौज के हर फर्द की आँखों में पहुँचकर सब को हैरान व परेशान कर दे यह आपके फेंकने का असर नहीं था बल्कि हक़ तआला ने अपनी कामिल कुदरत से यह सूरत पैदा फ़रमाई।

गौर किया जाये तो मुसलमानों के लिये जिहाद की फ़तह व कामयाबी से ज़्यादा कीमती यह हिदायत थी जिसने उनके ज़ेहनों को असबाब से फेरकर असबाब के पैदा करने वाले से जोड़ दिया और उसके ज़रिये उस फ़ख़्र व नाज़ करने की ख़राबी से बचा लिया जिसके नशे में उमूमन विजयी कौमें मुब्तला हो जाया करती हैं। और उसके बाद यह बतलाया कि हार जीत हमारे हुक्म के ताबे हैं, और हमारी फ़तह व मदद उन लोगों के साथ होती है जो नेक हों:

وَلِيْلِيَ الْمُؤْمِنِينَ مِنْهُ بَلَاءٌ حَسَنًا.

यानी यह ज़बरदस्त और बड़ी फ़तह हमने इसलिये दी कि मोमिनों को उनकी मेहनत का पूरा सिला दे दे। 'बला' के लफ़्ज़ी मायने इम्तिहान के हैं और अल्लाह तआला का इम्तिहान कभी मुसीबत व मशक्क़त में मुब्तला करके होता है और कभी राहत व दौलत देकर। "बला-ए-हसन" उस इम्तिहान को कहा गया है जो राहत, दौलत और फ़तह व मदद देकर लिया जाता है कि ये लोग इसको हमारा इनाम समझकर शुक्रगुज़ार होते हैं या उसको अपनी ज़ाती काबलियत का असर समझकर फ़ख़्र व घमण्ड में मुब्तला हो जाते और अपने अमल को बरबाद कर देते हैं, क्योंकि अल्लाह तआला की बारगाह में किसी के फ़ख़्र व घमण्ड की कोई गुंजाईश नहीं है। बक़ौल मौलाना रूमी रस्मतुल्लाहि अलैहि:

فهم و खातिर तेज़ करदन् नेस्त राह

जुज़् शिकस्ता मी नगीरद् फज़ले शाह

यानी अक़ल व होश और समझदारी के बढ़ा लेने ही से इस रास्ते की कामयाबी हासिल नहीं होती, बल्कि आज़िज़ी व इन्किसारी इख़्तियार करने वाला ही अल्लाह तआला के फज़ल व करम को हासिल कर पाता है। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

चौथी आयत में इसके मुक़ाबले में इस फ़तह का एक और फ़ायदा भी बतलाया गया कि:

ذَلِكُمْ وَأَنَّ اللَّهَ مُوهِنُ كَيْدِ الْكَافِرِينَ.

यानी यह फ़तह व मदद इसलिये भी मुसलमानों को दी गयी कि इसके ज़रिये काफ़िरों की

तदबीरों को नाकाम और नाकारा बना दिया जाये। जिससे वे समझ लें कि अल्लाह तआला की मदद हमारे साथ नहीं। और कोई तदबीर बगैर अल्लाह तआला की मदद के कामयाब नहीं हो सकती।

पाँचवीं आयत में शिकस्त खाये हुए कुरैशी काफ़िरो को खिताब और एक वाकिए की तरफ इशारा है जो कुरैशी लश्कर के मुसलमानों के मुकाबले पर मक्का से निकलने के वक्त पेश आया था। वह यह कि जब कुरैशी काफ़िरो का लश्कर मुसलमानों के मुकाबले के लिये तैयार हो गया तो मक्का से निकलने से पहले लश्कर के सरदार अबू जहल वगैरह ने बैतुल्लाह का पर्दा पकड़कर दुआयें माँगी थीं, और अजीब बात यह है कि इस दुआ में उन्होंने अपनी फतह की दुआ करने के बजाय आम अलफाज़ में इस तरह दुआ माँगी:

या अल्लाह! दोनों लश्करो में से जो बेहतर व अच्छा है और दोनों जमाअतों में से जो ज्यादा हिदायत पर है और दोनों पार्टियों में से जो ज्यादा करीम व शरीफ है और दोनों में से जो दीन अफज़ल है उसको फतह दीजिये। (तफ़सीरे मज़हरी)

ये बेवक़ूफ़ तो यूँ समझ रहे थे कि मुसलमानों के मुकाबले में हम ही बेहतर व अफज़ल और ज्यादा हिदायत पर हैं, इसलिये यह दुआ हमारे हक़ में है, और इस दुआ के ज़रिये वे यह चाहते थे कि खुदा तआला की तरफ़ से हक़ व बातिल का फैसला हो जाये। और जब हम फतह पायें तो यह गोया अल्लाह तआला की तरफ़ से हमारे हक़ पर होने का फैसला होगा।

मगर उनको यह ख़बर न थी कि इस दुआ में दर हकीकत वे अपने लिये बददुआ और मुसलमानों के लिये दुआ कर रहे हैं। जंग का अन्जाम सामने आने के बाद कुरआने करीम ने उनको बतलाया:

إِنْ تَسْتَفِخُوا فَقَدْ جَاءَكُمْ الْفَتْحُ.

यानी अगर तुम खुदाई फैसला चाहते हो तो वह सामने आ चुका कि हक़ को फतह और बातिल को शिकस्त हो गयी:

وَأِنْ تَسْتَعِزُّوا فَلَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ.

और अगर तुम अब भी अपने कुफ़ व दुश्मनी से बाज़ आ गये तो यह तुम्हारे लिये बेहतर है:

وَأِنْ تَعُودُوا نَعَذِّبْ.

और अगर तुम फिर अपनी शरारत और जंग की तरफ़ लौटे तो हम भी मुसलमानों की इमदाद की तरफ़ लौटेंगे:

وَلَنْ نُّغْنِيَ عَنْكُمْ فِتْنًا وَلَوْ كَثُرَتْ.

यानी तुम्हारी जमाअत और जत्था कितना ही ज्यादा हो अल्लाह तआला की मदद के मुकाबले में तुम्हें कुछ काम न देगा:

وَأَنَّ اللَّهَ مَعَ الْمُؤْمِنِينَ.

यानी कोई जमाअत तुम्हें क्या काम दे सकती है जबकि कादिर मुतलक अल्लाह तआला मुसलमानों के साथ है।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا أَطِيعُوا اللَّهَ وَرَسُولَهُ وَلَا

تَوَلَّوْا عَنْهُ وَأَنْتُمْ تَسْمَعُونَ ۖ وَلَا تَكُونُوا كَالَّذِينَ قَالُوا سَمِعْنَا وَهُمْ لَا يَسْمَعُونَ ۚ إِنَّ
شَرَّ الدَّوَابِّ عِنْدَ اللَّهِ الصُّمُّ الْبُكْمُ الَّذِينَ لَا يَعْقِلُونَ ۚ وَلَوْ عَلِمَ اللَّهُ فِرْمًا خَيْرًا لَأَسْمَعَهُمْ وَلَوْ
أَسْمَعَهُمْ لَتَوَلَّوْا وَهُمْ مُعْرِضُونَ ۚ يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اسْتَجِيبُوا لِلَّهِ وَلِلرَّسُولِ إِذَا دَعَاكُمْ
لِمَا يُحْيِيكُمْ، وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ يَحُولُ بَيْنَ الْمَرْءِ وَقَلْبِهِ وَأَنَّهُ إِلَيْهِ تُحْشَرُونَ ۚ

या अय्युहल्लजी-न आमनू
अतीअुल्ला-ह व रसूलहू व ला
तवल्लौ अन्हु व अन्तुम् तस्मअून
(20) व ला तकूनू कल्लजी-न कालू
समिअूना व हुम् ला यस्मअून (21)
इन्-न शरह्दवाब्बि अिन्दल्लाहिस्सुम्मुल्-
बुक्मुल्लजी-न ला यअूकिलून (22)
व लौ अलिमल्लाहु फीहिम् खौरल्
ल-अस्म-अहुम्, व लौ अस्म-अहुम्
ल-तवल्लौ व हुम् मुअरिजून (23)
या अय्युहल्लजी-न आमनुस्तजीबू
लिल्लाहि व लिर्सूलि इजा दआकुम्
लिमा युह्यीकुम् वअूलमू अन्नल्ला-ह
यहूलु बैनल्-मरइ व कलिबही व
अन्नहू इलैहि तुहशरून (24)

ऐ ईमान वालो! हुक्म मानो अल्लाह का
और उसके रसूलों का और उससे मत
फिरो सुनकर। (20) और उन जैसे मत
हो जिन्होंने कहा हमने सुन लिया और वे
सुनते नहीं। (21) बेशक सब जानदारों में
बदतर अल्लाह के नज़दीक वही बेहरे गूंगे
हैं जो नहीं समझते। (22) और अगर
अल्लाह जानता उनमें कुछ भलाई तो
उनको सुना देता, और अगर उनको अब
सुना दे तो जरूर भागें मुँह फेरकर। (23)
ऐ ईमान वालो! हुक्म मानो अल्लाह का
और रसूल का जिस वक़्त बुलाये तुमको
उस काम की तरफ़ जिसमें तुम्हारी
जिन्दगी है, और जान लो कि अल्लाह
रोक लेता है आदमी से उसके दिल को,
और यह कि उसी के पास तुम जमा
होगे। (24)

खुलासा-ए-तफसीर

ऐ ईमान वालो! अल्लाह का कहना मानो और उसके रसूल का, और उस (का कहना

मानने) से मुँह मत फेरना, और तुम (एतिकाद से) सुन तो लेते ही हो (यानी जैसे एतिकाद से सुन लेते हो ऐसे ही अमल भी किया करो)। और तुम (नेकी की राह छोड़ देने में) उन लोगों की तरह मत होना जो दावा तो करते हैं कि हमने सुन लिया (जैसे काफिर लोग कि सिर्फ सुनने के और मुनाफिक लोग सिर्फ एतिकाद के साथ सुनने के दावेदार थे) हालाँकि वे सुनते-सुनाते कुछ नहीं (क्योंकि समझना और यकीन लाना दोनों के अन्दर नहीं)। मतलब यह कि सुनने और यकीन लाने का नतीजा व असर अमल है, जब अमल न हुआ तो एक तरह से यह ऐसा ही हो गया जैसे एतिकाद के साथ सुना ही नहीं, जिसको तुम भी सख्त बुरा और नापसन्दीदा जानते हो) बेशक (यह बात ज़रूर है कि एतिकाद से सुनकर अमल न करने वाले और एक बिना यकीन व एतिकाद के सुनने वाले जो कि एक तरह से न सुनना है, बुरे होने में अलग-अलग ज़रूर हैं क्योंकि काफिर और गुनाहगार बराबर नहीं, चुनाँचे) मख्लूक में सबसे बदतर अल्लाह के नज़दीक वे लोग हैं जो (हक़ बात को एतिकाद के साथ सुनने से) बहरे हैं, (और हक़ बात के कहने से) गुँगे हैं, (और) जो कि (हक़ बात को) ज़रा नहीं समझते (और बावजूद एतिकाद व यकीन के हक़ से अमल में कोताही हो जाती है वे बदतर नहीं हैं अगरचे बुरे हैं, सो बुरा भी न होना चाहिये)।

और (जिनका हाल बयान हुआ कि वे एतिकाद से नहीं सुनते वजह उसकी यह है कि उनमें एक बड़ी ख़ूबी की कमी है और वह ख़ूबी हक़ की तलब है, क्योंकि एतिकाद व यकीन की उपज का मक़ाम भी तलब और तलाश है अगरचे उस वक़्त एतिकाद न हो मगर कम से कम शक़ व दुविधा तो हो, फिर उसी शक़ व दुविधा और तलब की बरक़त से हक़ वाज़ेह हो जाता है, और वह शक़ व दुविधा एतिकाद बन जाता है जिस पर सुनने का लाभदायक होना मौक़ूफ़ है, सो उनमें यही ख़ूबी नदारद है। चुनाँचे) अगर अल्लाह तआला उनमें कोई ख़ूबी देखते (मुराद यह कि उनमें वह उक्त ख़ूबी होती, क्योंकि ख़ूबी के वजूद के वक़्त अल्लाह के इल्म का ताल्लुक़ लाज़िम है, पस लाज़िम बोलकर उसके साथ जुड़ी हुई चीज़ को मुराद ले लिया, और “कोई ख़ूबी” इसलिये कहा कि जब ऐसी ख़ूबी नहीं जिस पर निजात का मदार है तो गोया कोई ख़ूबी भी नहीं। यानी अगर उनमें हक़ की तलब होती तो (अल्लाह तआला) उनको (एतिकाद के साथ) सुनने की तौफ़ीक़ देते (जैसा कि ऊपर ज़िक्र हुआ कि तलब से एतिकाद पैदा हो जाता है) और अगर (अल्लाह तआला) उनको अब (मौजूदा हालत में जबकि उनमें हक़ की तलब नहीं है) सुना दें (जैसा कि कभी-कभी जाहिरी कानों से सुन ही लेते हैं) तो ज़रूर मुँह फेर लेंगे बेरुख़ी करते हुए (यानी यह नहीं कि सोच-विचार के बाद ग़लती जाहिर हो जाने के सबब मुँह फेरा हो, क्योंकि यहाँ ग़लती का नाम व निशान ही नहीं, बल्कि ग़ज़ब तो यह है कि उधर तवज्जोह ही नहीं करते और) ऐ ईमान वालो! (हमने जो ऊपर तुमको इताअत का हुक्म किया है तो याद रखो इसमें तुम्हारा ही फ़ायदा है कि वह हमेशा वाली ज़िन्दगी है, जब यह बात है तो) तुम अल्लाह और रसूल के कहने पर अमल किया करो, जबकि रसूल (जिनका इरशाद खुदा ही का इरशाद है) तुमको तुम्हारी ज़िन्दगी देने वाली चीज़ की तरफ़ (यानी दीन की तरफ़ जिससे हमेशा

वाली ज़िन्दगी मयस्सर होती है) बुलाते हों, (तो इस हालत में जबकि हर तरह तुम्हारा ही फायदा है कोई वजह नहीं कि तुम अमल न करो)। और (इसके बारे में दो बातें और) जान लो (एक बात यह) कि अल्लाह तआला आड़ बन जाया करता है आदमी के और उसके दिल के दरमियान में, (दो तरीके से- एक तरीका यह कि मोमिन के दिल में नेकी पर चलने और फरमाँबरदारी की बरकत से कुफ़्र व नाफ़रमानी को नहीं आने देता। दूसरा तरीका यह कि काफ़िर के दिल में मुख़ालफ़त की नहूसत से ईमान व नेकी को नहीं आने देता। इससे मालूम हुआ कि नेकी व फरमाँबरदारी की पाबन्दी बड़ी नाफ़े की चीज़ है, और मुख़ालफ़त पर अड़े रहना बड़ी नुक़सानदेह चीज़ है) और (दूसरी बात यह जान लो कि) बेशक तुम सब को खुदा ही के पास जमा होना है (उस वक़्त नेकी व भलाई पर जज़ा और मुख़ालफ़त पर सज़ा होगी, इससे भी नेकी और अल्लाह के हुक्म पर चलने का नाफ़े वाला होना और मुख़ालफ़त का नुक़सान वाला होना साबित हुआ)।

मअरिफ़ व मसाईल

जंगे-ए-बदर जिसका वाकिआ पिछली आयतों में किसी क़द्र तफ़सील के साथ बयान हुआ है उसमें मुसलमानों और काफ़िरों दोनों के लिये सबक़ लेने और हिक्मत की बहुत सी बातें हैं जिनकी तरफ़ किस्से के दरमियानी जुमलों में इशारे फ़रमाये गये हैं।

मसलन पिछली आयतों में मक्का के मुशिरकों की शिकस्त व ज़िल्लत का वाकिआ बयान फ़रमाने के बाद इरशाद फ़रमाया था:

ذَلِكَ بِأَنَّهُمْ شَاؤُوا اللَّهَ وَرَسُولَهُ.

यानी हर तरह की कुव्वत व सामान के बावजूद मक्का के मुशिरकों की शिकस्त का असली सबब अल्लाह और उसके रसूल की मुख़ालफ़त थी। इसमें उन लोगों के लिये एक सबक़ लेने वाली बात और सख़्त चेतावनी है जो ज़मीन व आसमान के ख़ालिक व मालिक की कामिल क़ुदरत और ग़ैबी कुव्वत से नज़र हटा करके सिर्फ़ मादी कुव्वतों पर भरोसा करते हैं, या अल्लाह तआला की नाफ़रमानियों के बावजूद उसकी इमदाद व नुसरत की ग़लत आरज़ुओं से अपने नफ़्स को फ़रेब देते हैं।

उक्त आयतों में इसी मसले का दूसरा रुख़ मुसलमानों को ख़िताब करके बयान फ़रमाया गया है जिसका खुलासा यह है कि बावजूद कम संख्या और बेसामानी होने के यह ज़बरदस्त फ़तह सिर्फ़ अल्लाह जल्ल शानुहू की नुसरत व इमदाद से हासिल हुई और यह नुसरत व इमदाद नतीजा है उनकी फ़रमाँबरदारी और हक़ पर चलने का। इस इताअत पर मज़बूती से कायम रहने के लिये मुसलमानों को हुक्म दिया गया:

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا أَطِيعُوا اللَّهَ وَرَسُولَهُ.

यानी ऐ ईमान वाले! अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इताअत इख़्तियार करो और उस पर मज़बूती से कायम रहो। फिर इसी मज़मून को और ज़्यादा ताक़ीद

के लिये फरमाया:

وَلَا تَوَلَّوْا عَنْهُ وَأَنْتُمْ تَسْمَعُونَ

यानी कुरआन और हक् का कलिमा सुन लेने के बावजूद इताअत से मुँह न मोड़ो।

सुन लेने से मुराद हक् बात का सुनना है और सुनने के चार दर्जे हैं- एक यह कि कोई आवाज़ सिर्फ़ कानों से सुन ली मगर न उसको समझने की कोशिश की न समझा और न उस पर यकीन व भरोसा किया और न अमल किया। दूसरे यह कि कानों से सुना भी और समझा भी मगर न उस पर एतिकाद किया न अमल। तीसरे यह कि सुना भी और समझा भी और एतिकाद व भरोसा भी किया मगर अमल नहीं किया। चौथे यह कि सुना भी समझा भी और भरोसा भी किया और अमल भी।

यह ज़ाहिर है कि सुनने का असल मक़सद पूरी तरह तो चौथे दर्जे ही से हासिल होता है जो कामिल मोमिनो का मक़ाम है और शुरू के तीनों दर्जों में सुनना अधूरा और नामुकम्मल है जिसको एक हैसियत से न सुनना भी कह सकते हैं, जैसा कि अगली आयतों में आता है। और तीसरा दर्जा जिसमें हक् का सुनना, समझना, एतिकाद करना तो मौजूद है मगर अमल नहीं, उसमें अगरचे सुनने का असल मक़सद पूरा नहीं होता मगर यकीन भी एक खास अहमियत रखता है, इसलिये वह भी बेकार नहीं। यह दर्जा गुनाहगार मुसलमानों का है। और दूसरा दर्जा जिसमें सिर्फ़ सुनना और समझना है, न एतिकाद है न अमल, यह मुनाफ़िकों का दर्जा है कि कुरआन को सुनते भी हैं, समझते भी हैं और ज़ाहिर में एतिकाद व अमल का दावा भी है मगर हकीकत में अंकीदे और अमल से ख़ाली हैं, और पहला दर्जा आम मुशिरकों व काफ़िरों का है जिन्होंने हक् के कलिमे और कुरआन की आयतों को कानों से तो सुन लिया मगर कभी समझने और गौर करने की तरफ़ ध्यान ही नहीं दिया।

उक्त आयतों में मुसलमानों को खिताब है कि तुम लोग हक् बात को सुन तो लेते ही हो यानी सुनना, समझना, एतिकाद रखना तो तुम्हारी तरफ़ से मौजूद है मगर आगे उस पर अमल भी पूरा करो, फ़रमाँबरदारी से मुँह मत मोड़ो ताकि सुनने का असल मक़सद मुकम्मल हो जाये।

दूसरी आयत में इसी मज़मून की और ज़्यादा ताकीद के लिये इरशाद फ़रमाया:

وَلَا تَكُونُوا كَالَّذِينَ قَالُوا سَمِعْنَا وَهُمْ لَا يَسْمَعُونَ

यानी तुम उन लोगों की तरह न हो जाना जो कहते तो यह हैं कि हमने सुन लिया मगर हकीकत में सुना सुनाया कुछ नहीं। इन लोगों से मुराद आम काफ़िर भी हैं जो सुनने का दावा करते हैं यकीन लाने का नहीं करते, और मुनाफ़िक भी हैं जो सुनने के साथ समझने और एतिकाद रखने के भी दावेदार हैं, मगर हकीकत यह है कि ग़ौर व फ़िक्र और सही समझ से ये दोनों मेहरूम हैं। इसलिये इनका सुनना न सुनने के हुक्म में है। मुसलमानों को इन लोगों के जैसा बनने से मना फ़रमाया गया है।

तीसरी आयत में उन लोगों की सख़्त निंदा और बुराई बयान की गयी है जो हक् बात को

गौर व फिक्र के साथ नहीं सुनते और उसको कुबूल नहीं करते। ऐसे लोगों को कुरआने करीम ने जानवरों से भी बदतर (ज्यादा बुरा) करार दिया है। इरशाद फरमाया:

إِنَّ شَرَّ الدَّوَابِّ عِنْدَ اللَّهِ الضُّمُ الْبُكْمُ الَّذِينَ لَا يَعْقِلُونَ ۝

लफ्ज़ 'दवाब्बि' 'दाब्बतुन्' की जमा (बहुवचन) है, असल लुगत के एतिबार से हर ज़मीन पर चलने वाले को 'दाब्बा' कहा जाता है मगर आम बोलचाल और मुहावरे में सिर्फ चौपाये जानवरों को 'दाब्बा' कहते हैं। आयत के मायने यह हुए कि सबसे बदतरीन चौपाये अल्लाह के नज़दीक वो हैं जो हक़ को सुनने से बहरे और उसके कुबूल करने से गूँगे हैं, और बहरे-गूँगे में अगर कुछ अक्ल हो तो वह भी इशारों से अपने दिल की बात कह लेता है और दूसरों की बात समझ लेता है, यह लोग बहरे-गूँगे होने के साथ बेअक्ल भी हैं, और यह ज़ाहिर है जो बहरा-गूँगा अक्ल से भी खाली हो उसके समझने समझाने का कोई रास्ता नहीं।

इस आयत में हक़ तआला ने यह वाज़ेह कर दिया कि इनसान को जो 'खूबसूरत ढाँचे' में ढाला और पैदा किया गया और तमाम मख़्लूक़ात में बेहतर और कायनात का मख़दूम बनाया गया (यानी सारी कायनात इसकी सेवा में लगी हुई हैं) ये सब इनामात सिर्फ़ हक़ की इताअत में छुपे हुए और सीमित हैं। जब इनसान ने हक़ बात के सुनने समझने और मानने से मुँह मोड़ लिया तो ये सारे इनामात उससे छीन लिये जाते हैं और वह जानवरों से भी बदतर हो जाता है।

तफसीर रुहुल-बयान में है कि इनसान अपनी असल पैदाईश के एतिबार से सब जानदारों से अफ़ज़ल व आला है और फ़रिश्तों से कम दर्जा रखता है, लेकिन जब वह अपनी कोशिश व अमल और हक़ की इताअत में जिद्दोज़हद करता है तो फ़रिश्तों से भी आला व अशरफ़ हो जाता है। और अगर उसने हक़ की इताअत से मुँह मोड़ा तो फिर वह सबसे घटिया मख़्लूक़ के दर्जे में पहुँच जाता और जानवरों से भी ज़्यादा बदतर हो जाता है।

चौथी आयत में इरशाद है:

وَلَوْ عَلِمَ اللَّهُ فِيهِمْ خَيْرًا لَأَسْمَعَهُمْ وَلَوْ أَسْمَعَهُمْ لَتَوَلَّوْا وَهُمْ مُّعْرِضُونَ ۝

यानी अगर अल्लाह तआला उनमें कोई भलाई देखते तो उनको एतिकाद (यकीन व ईमान) के साथ सुनने की तौफ़ीक़ बख़्श देते, और अगर उनकी मौजूदा हालत में कि उनमें हक़ की तलब नहीं है, हक़ बात सुना दें तो वे ज़रूर मुँह मोड़ लेंगे बेरुख़ी करते हुए।

भलाई से मुराद इस जगह हक़ की तलब व जुस्तजू है कि तलब ही के ज़रिये सोचने-समझने और गौर व फिक्र करने के दरवाज़े खुलते हैं, और इसी से ईमान व अमल की तौफ़ीक़ होती है। और जिसमें हक़ की तलब नहीं गया उसमें कोई भलाई नहीं। मायने यह हैं कि अगर उनमें कोई भलाई मौजूद होती तो ज़ाहिर है कि वह अल्लाह तआला के इल्म में होती, जब अल्लाह तआला के इल्म में उनके अन्दर कोई भलाई नहीं तो मालूम हुआ कि वास्तव में वे हर भलाई से मेहरूम हैं और इस मेहरूमी की हालत में अगर उनको सोच-विचार और हक़ पर यकीन व ईमान लाने की दावत दी जाये तो वे हरगिज़ कुबूल न करेंगे बल्कि उससे मुँह फेरकर भागेंगे। यानी उनका

यह मुँह फेरना इस बिना पर न होगा कि दीन में उनको एतिराज़ की बात नज़र आ गयी इसलिये नहीं माना, बल्कि हकीकत यह है कि उन्होंने हक़ बात पर ध्यान ही नहीं दिया।

पाँचवीं आयत में फिर ईमान वालों को खिताब करके अल्लाह और रसूल के अहक़ाम की तामील व इताअत का हुक्म एक खास अन्दाज़ से दिया गया कि अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तुम्हें जिस चीज़ की दावत देते हैं उसमें अल्लाह और रसूल का अपना कोई फ़ायदा नहीं छुपा बल्कि सब अहक़ाम तुम्हारे ही फ़ायदे के लिये दिये गये हैं।

इरशाद फ़रमाया:

اسْتَجِیْبُوا لِلّٰهِ وَلِلرَّسُولِ اِذَا دَعَاكُمْ لِمَا یُحْیِیْکُمْ

यानी बात मानो अल्लाह की और रसूल की जबकि रसूल तुमको ऐसी चीज़ की तरफ़ बुलाये जो तुम्हारे लिये ज़िन्दगी बख़्शने वाली है।

वह ज़िन्दगी जिसका ज़िक्र इस आयत में है, क्या है? इसमें कई संभावनायें हैं इसलिये उलेमा-ए-तफ़सीर न मुज़्तलिफ़ कौल इस्तियार किये हैं। इमाम सुदी ने कहा कि वह ज़िन्दगी बख़्शने वाली चीज़ ईमान है, क्योंकि काफ़िर मुर्दा है। क़तादा रह. ने फ़रमाया कि वह कुरआन है जिसमें दुनिया व आख़िरत की ज़िन्दगी और कामयाबी छुपी है। इमाम मुजाहिद रह. ने फ़रमाया कि वह हक़ है। इब्ने इस्हाक रह. ने फ़रमाया कि इससे मुराद जिहाद है जिसके ज़रिये अल्लाह तआला ने मुसलमानों को इज़्ज़त बख़्शी। और ये सब संभावनायें और मायनों की गुंजाईशें अपनी-अपनी जगह सही हैं, इनमें कोई टकराव नहीं। मुराद यह है कि ईमान या कुरआन या हक़ की पैरवी वगैरह ऐसी चीज़ें हैं जिनसे इनसान का दिल ज़िन्दा होता है और दिल की ज़िन्दगी यह है कि बन्दे और अल्लाह तआला के बीच जो ग़फ़लत व इच्छा वगैरह के पर्दे रुकावट हैं वो राह से हट जायें और पर्दों की अंधेरी दूर होकर मारिफ़त (अल्लाह की पहचान) का नूर दिल में जगह कर ले।

तिर्मिज़ी और नसाई ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक दिन उबई बिन कअब रज़ियल्लाहु अन्हु को बुलाया। उबई बिन कअब नमाज़ पढ़ रहे थे, जल्दी-जल्दी नमाज़ पूरी करके हाज़िर हुए। आपने फ़रमाया कि मेरे पुकारने पर आने में देर क्यों लगाई? हज़रत उबई बिन कअब ने अर्ज़ किया कि मैं नमाज़ में था। आपने फ़रमाया कि क्या तुमने अल्लाह तआला का यह इरशाद नहीं सुना?

اسْتَجِیْبُوا لِلّٰهِ وَلِلرَّسُولِ اِذَا دَعَاكُمْ

हज़रत उबई बिन कअब रज़ियल्लाहु अन्हु ने अर्ज़ किया कि आईन्दा इस हुक्म पर अमल करूँगा, अगर नमाज़ की हालत में भी आप बुलायेंगे तो फौरन हाज़िर हो जाऊँगा।

इस हदीस की बिना पर कुछ फुक्हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) ने फ़रमाया कि रसूल के हुक्म की इताअत (पालन) से नमाज़ में जो काम भी करें उससे नमाज़ में ख़लल नहीं होता और कुछ हज़रत ने फ़रमाया कि अगरचे नमाज़ के खिलाफ़ वाले काम करने से नमाज़ टूट

जायेगी और उसकी बाद में क़ज़ा करना पड़ेगी लेकिन करना यही चाहिये कि जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम किसी को बुलायें और वह नमाज़ में भी हो तो नमाज़ को तोड़कर हुक्म की तामील करे।

यह सूरत तो सिर्फ़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ मख्सूस है लेकिन दूसरे ऐसे काम जिनमें देरी करने से किसी सख्त नुक़सान का ख़तरा हो उस वक़्त भी नमाज़ बीच में तोड़ देना और फिर क़ज़ा कर लेना चाहिये, जैसे कोई नमाज़ी यह देखे कि अंधा आदमी कुएँ या गड्ढे के करीब पहुँचकर गिरने वाला है तो फ़ौरन नमाज़ तोड़कर उसको बचाना चाहिये।

आयत के आखिर में इरशाद फरमाया:

وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ يَحُولُ بَيْنَ الْمَرْءِ وَقَلْبِهِ.

यानी यह बात समझ लो कि अल्लाह तआला आड़ बन जाया करता है आदमी के और उसके दिल के दरमियान। इस जुमले के दो मायने हो सकते हैं और दोनों में बहुत बड़ी हिक्मत व नसीहत पाई जाती है जो हर इनसान को हर वक़्त याद रखनी चाहिये।

एक मायने तो यह हो सकते हैं कि जब किसी नेक काम के करने या गुनाह से बचने का मौका आये तो उसको फ़ौरन कर गुज़रो, देर न करो और उस फ़ुर्सत के वक़्त को ग़नीमत समझो क्योंकि कई बार आदमी के इरादे के बीच अल्लाह की तक्दीर रुकावट हो जाती है, वह अपने इरादे में कामयाब नहीं हो सकता। कोई बीमारी पेश आ जाये या मौत आ जाये या कोई ऐसा मशगला (व्यस्तता) पेश आ जाये कि उस काम की फ़ुर्सत न मिले। इसलिये इनसान को चाहिये कि वक़्त और उम्र की फ़ुर्सत को ग़नीमत समझकर आज का काम कल पर न डाले क्योंकि मालूम नहीं कल क्या होना है:

मन नमी गोयम जियाँ कुन या ब-फिक्रे सूद बाश

ऐ ज-फ़ुर्सत बेख़बर दर हर चे बाशी ज़ूद बाश

मेरा कहना यह नहीं कि तू नुक़सान उठा या नफ़ा जुटाने की फ़िक्र में लग, मेरा तो कहना यह है कि वक़्त की इस फ़ुर्सत को ग़नीमत जान, ग़फ़लत से जाग और जो कुछ करना है जल्द से जल्द कर ले। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

और दूसरा मतलब इस जुमले का यह हो सकता है कि इसमें अल्लाह तआला का अपने बन्दे से बहुत ही करीब होना बतलाया गया है। जैसे एक दूसरी आयत में है:

نَحْنُ أَقْرَبُ إِلَيْهِ مِنْ حَبْلِ الْوَرِيدِ.

कि अल्लाह तआला इनसान की गर्दन की रग से भी ज़्यादा करीब हैं।

मतलब यह है कि इनसान का दिल हर वक़्त हक़ तआला के खास तसरूफ़ (कब्जे व इख़्तियार) में है, जब वह किसी बन्दे की बुराईयों से हिफ़ाज़त करना चाहते हैं तो उसके दिल और गुनाहों के बीच आड़ कर दी जाती है, इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपनी दुआओं में अक्सर यह दुआ किया करते थे:

يَا مُقَلِّبَ الْقُلُوبِ ثَبِّتْ قَلْبِي عَلَى دِينِكَ.

यानी ऐ दिलों के पलटने वाले! मेरे दिल को अपने दीन पर साबित और कायम रखिये।
हासिल इसका भी वही है कि अल्लाह और रसूल के अहकाम की तामील में देर न लगाओ
और वक़्त की फ़ुर्सत को ग़नीमत जानकर फ़ौरन कर गुज़रो, मालूम नहीं कि फिर दिल में नेकी
का यह जज़्बा और उमंग बाकी रहती है या नहीं।

وَاتَّقُوا فِتْنَةً لَا تُصِيبُ الَّذِينَ ظَلَمُوا مِنْكُمْ خَاصَّةً،

وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ۝ وَادْكُرُوا إِذْ أَنْتُمْ قَلِيلٌ مُسْتَضْعَفُونَ فِي الْأَرْضِ
تَخَافُونَ أَنْ يَتَخَطَّفَكُمُ النَّاسُ فَآوَاكُمْ وَأَيَّدَكُمْ بِبَصَرِهِ وَرَزَقَكُمْ مِنَ الطَّيِّبَاتِ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ۝
يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَخُونُوا اللَّهَ وَالرَّسُولَ وَتَخُونُوا أَمْنَتَكُمْ وَأَنْتُمْ تَعْلَمُونَ ۝ وَاعْلَمُوا أَنَّمَا
أَمْوَالُكُمْ وَأَوْلَادُكُمْ فِتْنَةٌ ۝ وَأَنَّ اللَّهَ عِنْدَهُ أَجْرٌ عَظِيمٌ ۝

वक्तकू फिलतल्-ला तुसीबन्नल्लजी-न
ज़-लमू मिन्कुम् ख़ास्स-तन् वज़लमू
अन्नल्ला-ह शदीदुल्-अिकाब (25)
वज़कुरू इज़् अन्तुम् कलीलुम्
मुस्तज़अफू-न फिल्अर्जि तख़ाफू-न
अय्य-तख़त्त-फकुमुन्नासु फ़आवाकुम्
व अय्य-दकुम् बिनस्रिही व
र-ज़-ककुम् मिनत्तय्यिबाति लअल्लकुम्
तशकुरून (26) या अय्युहल्लजी-न
आमनू ला तख़ूनल्ला-ह वरसू-ल व
तख़ूनू अमानातिकुम् व अन्तुम्
तज़लमून (27) वज़लमू अन्नमा
अम्वालुकुम् व औलादुकुम् फिल्तुं-
व अन्नल्ला-ह अिन्दहू अज़रुन्
अजीम (28) ❀

और बचते रहो उस फ़साद से कि नहीं
पड़ेगा तुम में से ख़ास ज़ालिमों ही पर,
और जान लो कि अल्लाह का अज़ाब
सख़्त है। (25) और याद करो जिस वक़्त
तुम थोड़े थे मग़लूब पड़े हुए मुल्क में,
डरते थे कि उचक लें तुमको लोग, फिर
उसने तुमको ठिकाना दिया और कुव्वत
दी तुमको अपनी मदद से, और रोज़ी दी
तुमको सुथरी चीज़ें ताकि तुम शुक्र करो।
(26) ऐ ईमान वालो! ख़ियानत न करो
अल्लाह से और रसूल से और ख़ियानत
न करो आपस की अमानतों में जानकर।
(27) और जान लो कि बेशक तुम्हारे
माल और औलाद ख़राबी में डालने वाले
हैं और यह कि अल्लाह के पास बड़ा
सवाब है। (28) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

और (जिस तरह तुम पर अपनी इस्लाह के बारे में नेकी व फ़रमाँबरदारी करना और सही रास्ते पर चलना वाजिब है इसी तरह यह भी लाज़िमी नेकी में दाख़िल है कि अपनी हिम्मत व गुंजाईश के मुताबिक़ हाथ, ज़बान से या ताल्लुकात तोड़ने और गुनाह को दिल में बुरा समझने से 'अमर बिल्मारूफ़ व नही अनिल-मुन्कर' के ज़रिये दूसरों की इस्लाह व सुधार में कोशिश की जाये। वरना अगर सुस्ती की और लोगों की बुराईयों को नज़र-अन्दाज़ किया तो उन बुराईयों और गुनाहों का वबाल जैसा उन गुनाहों को करने वालों पर पड़ेगा ऐसा ही किसी दर्जे में इन दूसरों की बुराईयों को देखकर नसीहत में सुस्ती या तब्लीग़ के फ़रीजे को नज़र-अन्दाज़ करने वालों पर भी पड़ेगा। जब यह बात है तो) तुम ऐसे वबाल से बचो कि जो खास उन्हीं लोगों पर न पड़ेगा जो तुममें से उन गुनाहों के करने वाले हुए हैं (बल्कि उन गुनाहों को देखकर जिन लोगों ने उनकी तरफ़ से आँख बचाई है वे भी इसमें शरीक होंगे। और इससे बचना यही है कि दीन के मामले में सुस्ती और नसीहत करने में किसी की नाराज़ी के ख़्याल से ज़िम्मेदारी से चश्म-पोशी मत करो) और यह जान लो कि अल्लाह तआला सज़ा देने वाले हैं (उनकी सज़ा से डरकर दावत व तब्लीग़ की ज़िम्मेदारी में सुस्ती मत करो) और (इस गर्ज से कि नेमतों के याद करने से नेमत देने वाले की फ़रमाँबरदारी का शौक़ होता है, खुदा तआला की नेमतों को और खास कर) उस हालत को याद करो जबकि तुम (एक वक़्त में यानी हिजरत से पहले संख्या में भी) थोड़े से थे (और ताक़त के एतिबार से भी मक्का की) सरज़मीन में कमज़ोर शुमार किये जाते थे (और अपनी हालत की बहुत ज़्यादा कमज़ोरी से) इस ख़ौफ़ में रहते थे कि तुमको (मुख़ालिफ़) लोग नोच-खसोट न लें। सो (ऐसी हालत में) अल्लाह ने तुमको (मदीना में इल्मीनान से) रहने को जगह दी, और तुमको अपनी मदद से क़ुव्वत दी, (सामान से भी और संख्या को ज़्यादा करने से भी जिससे तायदाद की कमी, हालत की कमज़ोरी और दूसरों की नोच-खसोट सब दूर हो गया) और (सिर्फ़ यही नहीं कि तुम्हारी मुसीबत ही को दूर कर दिया हो बल्कि आला दर्जे की खुशहाली भी अता फ़रमाई कि दुश्मनों पर तुमको ग़लबा देकर कामयाबियों की अधिकता से) तुमको अच्छी-अच्छी चीज़ें (खाने को) अता फ़रमाई, ताकि तुम (उन नेमतों का) शुक्र करो (और बड़ा शुक्र यह है कि अल्लाह की फ़रमाँबरदारी करो)।

ऐ ईमान वाले! (हम मुख़ालिफ़ और नाफ़रमानी से इसलिये मना करते हैं क्योंकि अल्लाह और रसूल के तुम पर कुछ हुक्म हैं जिनका नफ़ा तुम्हारी ही तरफ़ लौटता है, और नाफ़रमानी से उन हुक्म में ख़लल पड़ता है जिससे वास्तव में तुम्हारे ही नफ़े में ख़लल पड़ता है। जब यह बात है तो) तुम अल्लाह और रसूल के हुक्म में ख़लल मत डालो और (अन्जाम के एतिबार से इस मज़मून को इस तरह कहा जा सकता है कि तुम) अपनी हिफ़ाज़त के काबिल चीज़ों में (कि वो तुम्हारे फ़ायदे हैं जो आमाल पर मुरतब होते हैं) ख़लल मत डालो, और तुम तो (इसका नुक़सानदेह होना) जानते हो। और (बहुत सी बार माल व औलाद की मुहब्बत नेकी पर चलने में

खलल डालने वाली हो जाती है इसलिये तुमको आगाह किया जाता है कि) तुम इस बात को जान लो कि तुम्हारे माल और तुम्हारी औलाद एक इम्तिहान की चीज़ है (कि देखें कौन इनकी मुहब्बत को तरजीह देता है और कौन अल्लाह तआला की मुहब्बत को तरजीह देता है, सो तुम इनकी मुहब्बत को तरजीह मत देना) और (अगर इनके फायदों की तरफ नज़र जाये तो तुम) इस बात को भी जान रखो कि अल्लाह तआला के पास (उन लोगों के लिये जो अल्लाह की मुहब्बत को तरजीह देते हैं) बड़ा भारी अज़्र (मौजूद) है (कि उसके सामने ये फ़ानी फ़ायदे और वक्ती लाभ कुछ हकीकत नहीं रखते)।

मआरिफ़ व मसाईल

क़ुरआने करीम ने बदर की लड़ाई की कुछ तफ़सीलात और उसमें मुसलमानों पर अपने इनामात का ज़िक्र फ़रमाने के बाद उससे हासिल होने वाले परिणामों और फिर उसके मुनासिब मुसलमानों को कुछ सीख व नसीहत के इरशादात बयान फ़रमाये हैं जिनका सिलसिला:

بَايَئِهَا الدِّينَ اٰمَنُوا اسْتَجِيبُوا لِلّٰهِ وَلِلرَّسُولِ.

(यानी इसी सूरत की आयत 24) से शुरू हुआ है। इसी सिलसिले की ये आयतें हैं जो ऊपर लिखी गयी हैं।

इनमें से पहली आयत में ऐसे गुनाह से बचने की खास तौर पर हिदायत की गयी है जिसका सख्त अज़ाब सिर्फ़ गुनाह करने वालों पर सीमित नहीं रहता बल्कि गुनाह न करने वाले लोग भी उसमें मुब्तला हो जाते हैं।

वह गुनाह कौनसा है इसमें तफ़सीर के उलेमा के अनेक कौल हैं। कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि यह गुनाह 'अमर बिल्मरूफ़ और नही अनिल-मुन्कर' (यानी लोगों को नेक कामों की हिदायत और बुरे कामों से रोकने) की जिद्दोज़हद का छोड़ देना है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने मुसलमानों को इसका हुक्म दिया है कि किसी जुर्म व गुनाह को अपने माहौल में कायम न रहने दें क्योंकि अगर उन्होंने ऐसा न किया यानी जुर्म व गुनाह देखते हुए बावजूद ताक़त के उसको मना न किया तो अल्लाह तआला उन सब पर अपना अज़ाब आम कर देंगे जिससे न गुनाहगार बचेंगे न बेगुनाह।

और बेगुनाह से मुराद यहाँ वे लोग हैं जो असल गुनाह में उनके साथ शरीक नहीं मगर नेकी का हुक्म करने को छोड़ने के गुनाहगार वे भी हैं इसलिये यहाँ यह शुब्ह नहीं होना चाहिये कि एक के गुनाह का अज़ाब दूसरे पर डालना बेइन्साफी और क़ुरआनी फैसला अपने इस हुक्म के खिलाफ़ है किसी का बोझ कोई दूसरा नहीं उठायेगा। क्योंकि यहाँ गुनाहगार अपने असल गुनाह के बदाल में और बेगुनाह अच्छाई का हुक्म (यानी दीन की तब्लीग़) करने को छोड़ने के गुनाह में पकड़े गये, किसी का गुनाह दूसरे पर नहीं डाला गया।

इमाम बग़वी रह. ने शरह-सुन्ना और मआलिम में हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु

अन्हु और हज़रत सिद्दीक़ा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की रिवायतों से यह रिवायत नक़ल की है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला किसी खास जमाअत के गुनाह का अज़ाब आम लोगों पर नहीं डालते जब तक कि ऐसी सूरत पैदा न हो जाये कि वे अपने माहौल में गुनाह होता हुआ देखें और उनको यह ताक़त भी हो कि उसको रोक सकें, इसके बावजूद उन्होंने उसको रोका नहीं, तो उस वक़्त अल्लाह तआला का अज़ाब उन सब को घेर लेता है।

और तिर्मिज़ी व अबू दाऊद वगैरह में सही सनद के साथ मन्कूल है कि हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने अपने एक खुतबे में फ़रमाया कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से सुना कि आपने फ़रमाया- जब लोग किसी ज़ालिम को देखें और जुल्म से उसका हाथ न रोकें तो करीब है कि अल्लाह तआला उन सब पर अपना अज़ाब आम कर दें।

सही बुख़ारी में हज़रत नौमान बिन बशीर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो लोग अल्लाह तआला की कानूनी हदों को तोड़ने वाले गुनाहगार हैं और जो लोग उनको देखकर बेजा चश्म-पोशी करने वाले हैं, यानी बावजूद ताक़त के उनको गुनाह से नहीं रोकते, इन दोनों तब्क़ों की मिसाल ऐसी है जैसे किसी समुद्री जहाज़ के दो तब्क़े (हिस्से और दर्जे) हों और नीचे के तब्क़े वाले ऊपर आकर अपनी ज़रूरत के लिये पानी लेते हों जिससे ऊपर वाले तकलीफ़ महसूस करें। नीचे वाले यह देखकर यह सूरत इख़्तियार करें कि कश्ती के निचले हिस्से में सुराख़ करके उससे अपने लिये पानी हासिल करें और ऊपर के लोग उनकी इस हरकत को देखें और मना न करें तो ज़ाहिर है कि पानी पूरी कश्ती में भर जायेगा और जब नीचे वाले ग़र्क़ होंगे तो ऊपर वाले भी डूबने से न बचेंगे।

इन रिवायतों की बिना पर बहुत से मुफ़त्सिरीन हज़रत ने यह करार दिया कि इस आयत में फ़ितने से मुराद यही 'अच्छाई का हुक्म करने' और 'बुराई से न रोकने' का गुनाह है।

और तफ़सीरे मज़हरी में है कि इस गुनाह से मुराद जिहाद को छोड़ देने का गुनाह है, खास तौर पर उस वक़्त जबकि अमीरुल-मोमिनीन की तरफ़ से जिहाद की आम दावत मुसलमानों को दे दी जाये और इस्लामी निशानात की हिफ़ाज़त उस पर निर्भर हो, क्योंकि उस वक़्त जिहाद के छोड़ देने का वबाल सिर्फ़ जिहाद के छोड़ने वालों पर नहीं बल्कि पूरे मुसलमानों पर पड़ता है। काफ़िरों के ग़लबे के सबब औरतें बच्चे बूढ़े और बहुत से बेगुनाह मुसलमान क़त्ल व ग़ारत का शिकार हो जाते हैं, उनके जान व माल ख़तरे में पड़ जाते हैं। इस सूरत में अज़ाब से मुराद दुनियावी मुसीबतें और तकलीफ़ें होंगी।

और इशारा इस तफ़सीर का यह है कि पिछली आयतों में भी जिहाद को छोड़ने वालों पर मलामत की गयी है:

وَإِنْ فَرِيقًا مِّنَ الْمُؤْمِنِينَ لَكَرِهُوا

और:

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا إِذَا لَقِيتُمُ الَّذِينَ كَفَرُوا زَحْفًا فَلَا تُولُوهُمْ الْأَدْبَارَ ۝

वगैरह पहले जिक्र हुई आयतें इसी बयान में आई हैं।

और ग़ज़वा-ए-उहुद में जबकि चन्द मुसलमानों से चूक और ग़लती हुई कि घाटी की हिफाज़त छोड़कर नीचे आ गये तो उसकी मुसीबत सिर्फ़ ग़लती करने वालों पर नहीं बल्कि पूरे मुस्लिम लश्कर पर पड़ी, यहाँ तक कि खुद नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इस जंग में ज़ख्म आया।

दूसरी आयत में भी अल्लाह के अहकाम की इताअत (तामील और फ़रमाँबरदारी) को आसान करने और उस पर दिलचस्पी पैदा करने के लिये मुसलमानों को उनकी पिछली ख़स्ता हालत और कमज़ोरी फिर उसके बाद अपने फज़ल व इनाम से हालात बदलकर उनको कुव्वत और इत्मीनान अता फ़रमाने का जिक्र है। इरशाद फ़रमाया:

وَادْكُرُوا إِذْ أَنتُمْ قَلِيلٌ مُسْتَضْعَفُونَ فِي الْأَرْضِ تَخَافُونَ أَنْ يَخَطِفَكُمُ النَّاسُ فَأُولَئِكَم بِبَصَرِهِ وَرَزَقَكُمُ

مِنَ الطَّيِّبَاتِ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ۝

यानी ऐ मुसलमानो! अपने उस हाल को याद करो जो हिजरत से पहले मक्का मुअज़्ज़मा में था कि संख्या में भी कम थे और ताक़त में भी, हर वक़्त यह ख़तरा लगा हुआ था कि दुश्मन उनको नोच-खसोट लेंगे। अल्लाह तआला ने उनको मदीने में बेहतरीन ठिकाना अता फ़रमाया। और न सिर्फ़ ठिकाना बल्कि अपनी ताईद व मदद से उनको ताक़त और दुश्मनों पर फ़तह और बड़े ज़बरदस्त माल अता फ़रमा दिये। आयत के आख़िर में फ़रमाया 'लअल्लकुम तशकुरुन' यानी तुम्हारे हालात की इस काया-पलट और अल्लाह के इनामों का मक़सद यह है कि तुम शुक्रगुज़ार बन्दे बनो। और ज़ाहिर है कि शुक्रगुज़ारी उसके अहकाम की इताअत में सीमित है।

तीसरी आयत में मुसलमानों को यह हुक्म दिया गया है कि अल्लाह तआला के हुक्क में या आपस में बन्दों के हुक्क में ख़ियानत न करें कि हक़ अदा ही न करें या उसमें कोई और कोताही करके अदा करें। आयत के आख़िर में 'य अन्तुम तअलमून' फ़रमाकर यह बतला दिया कि तुम तो ख़ियानत (चोरी और कोताही) की बुराई और उसके वबाल को जानते ही हो, फिर उस पर क़दम बढ़ाना अक्लमन्दी नहीं, और चूँकि अल्लाह और बन्दों के हुक्क की अदायेगी से गुफ़लत व कोताही का सबब उमूमन इन्सान के माल व औलाद हुआ करते हैं इसलिये इस पंर तंबीह करने (चेताने) के लिये फ़रमाया:

وَاعْلَمُوا أَنَّمَا أَمْوَالُكُمْ وَأَوْلَادُكُمْ فِتْنَةٌ وَأَنَّ اللَّهَ عِنْدَهُ أَجْرٌ عَظِيمٌ ۝

यानी यह बात अच्छी तरह समझ लो कि तुम्हारे माल व औलाद तुम्हारे लिये फ़ितना हैं।

फ़ितने के मायने इम्तिहान के भी आते हैं और अज़ाब के भी, और ऐसी चीज़ों को भी फ़ितना कहा जाता है जो अज़ाब का सबब बनें। कुरआने करीम की अनेक आयतों में इन तीनों

मायने के लिये लफ़्ज़ फ़ितना इस्तेमाल हुआ है। यहाँ तीनों मायने की गुंजाईश है। कई बार माल व औलाद खुद भी इनसान के लिये दुनिया ही में वबाले जान बन जाते हैं और उनके सबब ग़फलत व नाफ़्ग़मानी में मुब्तला होकर अज़ाब का सबब बन जाना तो बिल्कुल ज़ाहिर है। अब्बल यह कि माल व औलाद के ज़रिये तुम्हारा इम्तिहान लेना मकसूद है कि ये चीज़ें हमारे इनामात हैं, तुम इनाम लेकर शुक्रगुज़ार और फ़रमाँबरदार बनते हो या नाशुक्रे और नाफ़रमान। दूसरे और तीसरे मायने यह भी हो सकते हैं कि माल और औलाद की मुहब्बत में मुब्तला होकर अल्लाह तआला को नाराज़ किया तो यही माल व औलाद तुम्हारे लिये अज़ाब बन जायेंगी। कई बार तो दुनिया ही में ये चीज़ें इनसान को सख़्त भुसीबतों में मुब्तला कर देती हैं और दुनिया ही में माल व औलाद को वे अज़ाब महसूस करने लगते हैं, वरना यह तो लाज़िमी है कि दुनिया में जो माल अल्लाह तआला के अहकाम के खिलाफ़ कमाया गया या ख़र्च किया गया वह माल ही आख़िरत में उसके लिये साँप बिच्छू और आग में दाग़ देने का ज़रिया बन जायेगा, जैसा कि कुरआने करीम की अनेक आयतों और हदीस की बेशुमार रिवायतों में इसकी स्पष्टता और वज़ाहतें मौजूद हैं। और तीसरे मायने यह कि ये चीज़ें अज़ाब का सबब बन जायें, यह तो ज़ाहिर ही है कि जब ये चीज़ें अल्लाह तआला से ग़फलत और उसके अहकाम के उल्लंघन का सबब बनें तो अज़ाब का सबब बन गयीं। आयत के आख़िर में फ़रमाया:

وَأَنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ أَعْرَظٌ

यानी यह भी समझ लो कि जो शख्स अल्लाह और रसूल के अहकाम की तामील में माल व औलाद की मुहब्बत से मग़लूब न हो उसके लिये अल्लाह तआला के पास बहुत बड़ा अज़्र है।

इस आयत का मज़मून तो सब मुसलमानों को आम और शामिल है मगर इसके नाज़िल होने का वाकिआ अक्सर मुफ़स्सिरीन के नज़दीक हज़रत अबू लुबाबा रज़ियल्लाहु अन्हु का किस्सा है जो बनू कुरैज़ा की मुहिम में पेश आया कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा किराम ने बनू कुरैज़ा के क़िले का इक्कीस दिन तक घेराव जारी रखा जिससे अज़िज़ होकर उन्होंने वतन छोड़कर मुल्क शाम चले जाने की दरख़्वास्त की, आपने उनकी शरारतों को देखते हुए इसको क़बूल नहीं फ़रमाया बल्कि यह इरशाद फ़रमाया कि सुलह की सिर्फ़ यह सूरत है कि सअद बिन मुआज़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) तुम्हारे बारे में जो कुछ फैसला करें उस पर राज़ी हो जाओ। उन्होंने दरख़्वास्त की कि सअद बिन मुआज़ के बजाय अबू लुबाबा (रज़ियल्लाहु अन्हु) को यह काम सुपुर्द कर दिया जाये। क्योंकि हज़रत अबू लुबाबा रज़ियल्लाहु अन्हु के बाल-बच्चे और जायदाद बनू कुरैज़ा में थे, उनसे यह उम्मीद थी कि वह हमारे मामले में रियायत करेंगे। आपने उनकी दरख़्वास्त पर हज़रत अबू लुबाबा को भेज दिया। बनू कुरैज़ा के सब मर्द व औरत उनके गिर्द जमा होकर रोने लगे और यह पूछा कि अगर हम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हुक्म पर उतर आयें तो क्या हमारे मामले में वह कुछ नर्मी फ़रमायेंगे। अबू लुबाबा रज़ियल्लाहु अन्हु को मालूम था कि उनके मामले में नर्मी बरतने की राय

नहीं है, उन्होंने कुछ उन लोगों के रोने-गिड़गिड़ाने से और कुछ अपने बाल-बच्चों और घर वालों की मुहब्बत से मुतास्सिर होकर अपने गले पर तलवार की तरह हाथ फेरकर इशारे से बतला दिया कि ज़िबह किये जाओगे। गोया इस तरह हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का राज खोल दिया।

माल व औलाद की मुहब्बत में यह काम कर तो गुजरे मगर फौरन चौंके कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से खियानत की। जब वहाँ से वापस हुए तो इस दर्जा शर्मिन्दगी सवार हुई कि आपकी खिदमत में लौटने के बजाय सीधे मस्जिद में पहुँचे और मस्जिद के एक सुतून के साथ अपने आपको बाँध दिया और कसम खाई कि जब तक मेरी तौबा कुबूल न होगी इसी तरह बंधा रहूँगा चाहे इसी हालत में मौत आ जाये। चुनाँचे सात दिन मुकम्मल इसी तरह बंधे खड़े रहे, उनकी बीवी और लड़की निगरानी और देखभाल करती थीं, इनसानी ज़रूरत (पेशाब-पाखाने) के वक़्त और नमाज़ के वक़्त खोल देतीं और फ़ारिग होने के बाद फिर बाँध देती थीं, खाने पीने के पास न जाते थे यहाँ तक कि बेहोशी तारी हो जाती थी।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जब इसकी इत्तिला मिली तो फरमाया कि अगर वह शुरू ही में मेरे पास आ जाते तो मैं उनके लिये इस्तिग़फ़ार करता और तौबा कुबूल हो जाती, अब जबकि वह यह काम कर गुजरे तो अब तौबा की कुबूलियत नाज़िल होने का इन्तिज़ार ही करना है।

चुनाँचे सात दिन के बाद रात के आखिर में आप पर ये आयतें उनकी तौबा कुबूल होने के मुताल्लिक नाज़िल हुईं। कुछ हज़रात ने उनको खुशख़बरी सुनाई और खोलना चाहा मगर उन्होंने कहा कि जब तक खुद हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मुझे न खोलेंगे मैं खुलना पसन्द न करूँगा। चुनाँचे जब आप सुबह की नमाज़ के वक़्त मस्जिद में तशरीफ़ लाये तो अपने हाथ मुबारक से उनको खोला। उक्त आयत में जो खियानत करने और माल व औलाद की मुहब्बत से मग़लूब (प्रभावित) होने की मनाही का ज़िक्र आया है इसका असल सबब यह वाकिआ है। वल्लाहु आलम।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا إِن تَتَّقُوا اللَّهَ يَجْعَلْ لَكُمْ فُرْقَانًا وَيُكَفِّرْ عَنْكُمْ سَيِّئَاتِكُمْ وَيَغْفِرْ لَكُمْ وَاللَّهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِيمِ ۝ وَإِذْ يَبْكُرُ بِكَ الَّذِينَ كَفَرُوا لِيُثْبِتُوكَ أَوْ يَقْتُلُوكَ أَوْ يُخْرِجُوكَ وَيَمْكُرُونَ وَيَمْكُرُ اللَّهُ وَاللَّهُ خَيْرُ الْمَكْرِيينَ ۝ وَإِذَا تَتَلَّى عَلَيْهِمْ آيَاتُنَا قَالُوا قَدْ سَمِعْنَا لَوْ نَشَاءُ لَقُلْنَا مِثْلَ هَذَا إِنْ هَذَا إِلَّا أَسَاطِيرُ الْأَوَّلِينَ ۝ وَإِذْ قَالُوا اللَّهُمَّ إِنْ كَانَ هَذَا هُوَ الْحَقُّ مِنْ عِنْدِكَ فَأَمْطِرْ عَلَيْنَا حِجَابًا مِنَ السَّمَاءِ أَوْ ائْتِنَا بِعَذَابٍ أَلِيمٍ ۝ وَمَا كَانَ اللَّهُ لِيُعَذِّبَهُمْ وَأَنْتَ فِيهِمْ وَمَا كَانَ اللَّهُ مُعَذِّبَهُمْ وَهُمْ يَسْتَغْفِرُونَ ۝

या अय्युहल्लजी-न आमनू इन्
 तत्तकुल्ला-ह यज्जल्लकुम् फुरकानं-
 व युक्फिफ्र अन्कुम् सय्यिआतिकुम्
 व यग्गफिर् लकुम्, वल्लाहु
 जुल्फज़िलल्-अजीम (29) व इज्ज
 यम्कुरु बिकल्लजी-न क-फरू
 लियुस्बितू-क औ यक्तुलू-क औ
 युद्धिरजू-क, व यम्कुरु-न व
 यम्कुरुल्लाहु, वल्लाहु खैरुल्-माकिरीन
 (30) व इज्जा तुल्ला अलैहिम्
 आयातुना कालू कद् समिअना लौ
 नशा-उ लकुल्ला मिस्र-ल हाज़ा इन्
 हाज़ा इल्ला असातीरुल्-अव्वलीन
 (31) व इज्ज कालुल्लाहुम्-म इन् का-न
 हाज़ा हुवल-हक्-क मिन् अिन्दि-क
 फअम्तिर् अलैना हिजा-रतम्
 मिनस्समा-इ अविअतिना बिअज़ाबिन्
 अलीम (32) व मा कानल्लाहु
 लियुअज़िज़-बहुम् व अनू-त फीहिम्,
 व मा कानल्लाहु मुअज़िज़-बहुम् व
 हुम् यस्तग़्फिरून (33)

ऐ ईमान वालो! अगर तुम डरते रहो
 अल्लाह से तो कर देगा तुम में फैसला
 और दूर कर देगा तुमसे तुम्हारे गुनाह
 और तुमको बख्श देगा, और अल्लाह का
 फज़ल बड़ा है। (29) और जब फ़रेब
 करते थे काफ़िर कि तुझको कैद कर दें
 या मार डालें या निकाल दें, और वे भी
 दाँव करते थे और अल्लाह भी दाँव करता
 था, और अल्लाह का दाँव सबसे बेहतर
 है। (30) और जब कोई पढ़े उन पर
 हमारी आयतें तो कहें हम सुन चुके अगर
 हम चाहें तो हम भी कह लें ऐसा, यह तो
 कुछ भी नहीं मगर अहवाल हैं जगलों के।
 (31) और जब वे कहने लगे कि या
 अल्लाह! अगर यही दीन हक़ है तेरी
 तरफ़ से तो हम पर बरसा दे पत्थर
 आसमान से, या ला हम पर कोई दर्दनाक
 अज़ाब। (32) और अल्लाह हरगिज़ न
 अज़ाब करता उन पर जब तक तू रहता
 उनमें, और अल्लाह हरगिज़ न अज़ाब
 करेगा उन पर जब तक वे माफी माँगते
 रहेंगे। (33)

खुलासा-ए-तफसीर

(और) ऐ ईमान वालो! (अल्लाह की फ़रमाँबरदारी की और बरकतें सुनो, वह यह कि) अगर
 तुम अल्लाह से डर कर (हुक्मों का पालन करते) रहोगे तो अल्लाह तआला तुमको एक फैसले
 की चीज़ देगा (इसमें हिदायत और दिल का नूर जिससे हक़ व बातिल में इल्मी फैसला होता है

और दुश्मनों पर ग़लबा और आखिरत की निजात जिससे हक़ व बातिल में अमली फैसला होता है सब आ गया)। और तुमसे तुम्हारे गुनाह दूर कर देगा, और तुमको बख़्श देगा, और अल्लाह तआला बड़े फज़ल वाला है (खुदा जाने अपने फज़ल से और क्या-क्या दे दे, जो अन्दाज़े और गुमान में भी न आता हो)। और (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम! मुसलमानों के सामने नेमत की याददेहानी के लिये) उस वाकिए का भी ज़िक्र कीजिए जबकि काफ़िर लोग आपके बारे में (बड़ी-बड़ी) तदबीरें सोच रहे थे कि (आया) कैद कर लें या आपको क़त्ल कर डालें, या आपको वतन से निकाल दें, और वे तो अपनी तदबीरें कर रहे थे और अल्लाह (पाक) अपनी तदबीरें (उन तदबीरों को दफ़ा करने के लिये) कर रहे थे, और सबसे ज़्यादा मज़बूत तदबीर वाला अल्लाह है (जिसके सामने उनकी सारी तदबीरें बेकार हो गयीं और आप बाल-बाल महफ़ूज़ रहे और सही सालिम मदीना आ पहुँचे। चूँकि आपका इस तरह बच रहना मोमिनों के हक़ में नेकबख़्ती के बहुत से दरवाज़े खुलने का ज़रिया है इसलिये इस वाकिए के ज़िक्र का हुक्म फ़रमाया)। और (उन काफ़िरों की यह हालत है कि) जब उनके सामने हमारी आयतें पढ़ी जाती हैं तो कहते हैं कि हमने सुन (कर देख) लिया, (यह तो कोई मोज़िज़ा वग़ैरह नहीं क्योंकि) अगर हम इरादा करें तो इसके बराबर हम भी कहकर ले आएँ, यह तो कुछ भी नहीं, सिर्फ़ बेसनद बातें हैं, जो पहलों से (नक़ल होती हुई) चली आ रही हैं (कि पहली मिल्लतों और मज़हबों वाले भी यही तौहीद और मरने के बाद क़ियामत में ज़िन्दा होकर उठने वग़ैरह के दावे करते आये हैं, उन्हीं के मज़ामीन आप नक़ल कर रहे हैं)।

और (इससे बढ़कर क़ाबिले ज़िक्र यह हालत है) जबकि उन लोगों ने (अपने इस हद से बढ़े हुए जहल, दिल की सख़्ती और हठधर्मी ज़ाहिर करने को यह भी) कहा कि ऐ अल्लाह! अगर यह (क़ुरआन) वाकई आपकी तरफ़ से है, तो हम पर (इसके न मानने की वजह से) आसमान से पत्थर बरसाईये, या हम पर (और) कोई दर्दनाक अज़ाब भेज दीजिये (जो कि असाधारण होने में पत्थरों की बारिश की तरह हो। और जब ऐसे अज़ाब उन पर न पड़े तो अपने सही रास्ते और दीन पर होने का नाज़ करते हैं) और (यह नहीं समझते कि उनके बातिल और ग़ैर-हक़ पर होने के बावजूद कुछ ख़ास रुकावटों और बाधाओं की वजह से यह ज़िक्र हुई सज़ायें नाज़िल नहीं होतीं। उन रुकावटों और बाधाओं का बयान यह है कि) अल्लाह तआला ऐसा न करेंगे कि उनमें आपके होते हुए उनको (ऐसा) अज़ाब दें, और (यह कि) अल्लाह तआला उनको (ऐसा) अज़ाब न देंगे जिस हालत में कि वे इस्तिग़फ़ार भी करते रहते हैं (यह और बात है कि वह इस्तिग़फ़ार ईमान न होने के सबब आखिरत में लाभदायक न हो, लेकिन चूँकि नेक अमल है इसलिये दुनिया में तो काफ़िरों को नफ़ा देने वाला हो जाता है। मतलब यह कि इन असाधारण सज़ाओं से दो बातें रोक और बाधा हैं- एक हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मक्का में या दुनिया में तशरीफ़ रखना और दूसरा उन लोगों का अपने तवाफ़ वग़ैरह में यह कहना 'गुफ़रान-क' जो कि हिजरत और वफ़ात के बाद भी बाकी था। और एक और बाधा और रुकावट का बयान हदीसों में है कि किसी का हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की उम्मत में होना, चाहे उम्मत-ए-दावत

ही हो, यह बाधा और रुकावट बावजूद किसी के इस्तिग़फ़ार न करने के भी बाकी है। पस ये चीज़ें अपनी जात के एतिबार से रोक और बाधा हुई, यह अलग बात है कि कभी किसी मौके पर रोक और बाधा के होते हुए भी कोई असाधारण अज़ाब किसी अस्थायी और वक़्ती मस्लेहत से जाहिर हो जाये, जैसे कि पत्थरों की बारिश और सूरतों का बदल जाने वगैरह का क़ियामत के नज़दीक में होना हदीसों में बयान हुआ है।

मज़ारिफ़ व मसाईल

पिछली आयत में इसका ज़िक्र था कि इनसान के लिये माल और औलाद एक फ़ितना यानी आजमाईश की चीज़ है। क्योंकि इन चीज़ों की मुहब्बत में मग़लूब होकर इनसान उमूमन खुदा तआला और आख़िरत से ग़ाफ़िल हो जाता है, हालाँकि इस अज़ीम नेमत का अक्ली तकाज़ा यह था कि वह अल्लाह तआला के इस एहसान की वजह से उसकी तरफ़ और ज़्यादा झुकता।

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत इसी मज़मून की पूरक है। इसमें फ़रमाया है कि जो शख्स अक्ल को तबीयत पर ग़ालिब रखकर इस इम्तिहान में साबित-क़दम रहे और अल्लाह तआला की फ़रमाँबरदारी व मुहब्बत को सब चीज़ों पर आगे रखे जिसको क़ुरआन व शरीअत की परिभाषा में तक्वा कहा जाता है, तो उसको उसके सिले में तीन चीज़ें अता होती हैं- फ़ुरकान, कफ़ारा-ए-सय्यिआत, मग़फ़िरत।

फ़ुरकान और फ़र्क़ दोनों मस्दर एक ही मायने के हैं। मुहावरों में फ़ुरकान उस चीज़ के लिये बोला जाता है जो दो चीज़ों में स्पष्ट तौर पर फ़र्क़ और फ़ासला कर दे। इसी लिये फैसले को फ़ुरकान कहते हैं, क्योंकि वह हक़ और नाहक़ में फ़र्क़ स्पष्ट कर देता है। अल्लाह तआला की मदद को भी फ़ुरकान कहा जाता है क्योंकि उसके ज़रिये हक़ वालों को फ़तह और उनके मुखालिफ़ को शिकस्त होकर हक़ व बातिल का फ़र्क़ स्पष्ट हो जाता है। क़ुरआने करीम में इसी मायने के लिये गुज़वा-ए-बदर को यौमुल-फ़ुरकान के नाम से नामित किया है।

इस आयत में तक्वा इख़्तियार करने वालों को फ़ुरकान अता होने का अवसर मुफ़स्सिरीन सहाबा के नज़दीक यही मतलब है कि अल्लाह तआला की नुसरत व इमदाद और हिफ़ाज़त उनके साथ होती है, कोई दुश्मन उनको तकलीफ़ नहीं पहुँचा सकता और तमाम मक़ासिद में कामयाबी उनकी साथी होती है:

हर कि तरसीद अज़ हक़ व तक्वा ग़जीद

तरसद अज़ वे जिन्न व इन्स व हर कि दीद

यानी जो अल्लाह से डरता और परहेज़गारी इख़्तियार करता है उससे अल्लाह की तमाम मख़्लूक़ात डरती (यानी उसकी रियायत करती) हैं। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

तफ़सीर-ए-महाईमी में है कि इसमें इस बात की तरफ़ इशारा है कि पिछले वाक़िए में हज़रत अबू लुबाबा रज़ियल्लाहु अन्हु से जो अपने बाल-बच्चों और घर वालों की हिफ़ाज़त की खातिर ग़लती और चूक हो गयी थी वह इसलिये भी ख़ता थी कि बाल-बच्चों की हिफ़ाज़त का भी सही

रास्ता यही था कि अल्लाह तआला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पूरी फरमाँबरदारी को अपना चलन बनाया जाता तो सब माल व औलाद अल्लाह तआला की पनाह और हिफाजत में आ जाते। और कुछ मुफ़सिरीन हज़रात ने फरमाया कि फुरकान से मुराद इस आयत में वह अक्ल व समझ है जिसके ज़रिये हक़ व बातिल, ख़रे ख़ोटे में फ़र्क़ करना आसान हो जाये, तो मायने यह हुए कि तक्वा इख़्तियार करने वालों को अल्लाह तआला ऐसी समझ और अक्ल अता फरमा देते हैं कि उनको अच्छे बुरे में फैसला करना आसान हो जाता है।

दूसरी चीज़ जो तक्वा (परहेज़गारी) के सिले में अता होती है वह गुनाहों का कफ़ारा है, यानी जो ख़तायें और कोताहियाँ उससे सर्जद होती हैं दुनिया में उनका कफ़ारा और बदल कर दिया जाता है, यानी उसको ऐसे नेक आमाल की तौफ़ीक़ हो जाती है जो उसकी सब ख़ताओं पर ग़ालिब आ जाते हैं। तीसरी चीज़ जो तक्वे के सिले में मिलती है वह आख़िरत की मग़फ़िरत और सब गुनाहों, ख़ताओं की माफ़ी है।

आयत के आख़िर में इरशाद फरमाया:

وَاللَّهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِيمِ

यानी अल्लाह तआला बड़े फज़ल व एहसान वाले हैं। इसमें इस तरफ़ इशारा कर दिया गया कि अमल की जज़ा (बदला) तो अमल के पैमाने पर होती है। यहाँ भी तक्वे की जो बेहतरीन जज़ा तीन चीज़ों में बयान हुई है वह तो जज़ा और बदले के तौर पर है, मगर अल्लाह तआला बड़े फज़ल व एहसान वाले हैं, उनका देना और अता फरमाना किसी पैमाने के साथ ख़ास और पाबन्द नहीं, और उनके एहसान व इनाम का कोई अन्दाज़ा नहीं लगा सकता, इसलिये तक्वा इख़्तियार करने वालों के लिये अल्लाह तआला के फज़ल व इनाम से इन तीन चीज़ों के अलावा भी बहुत बड़ी उम्मीदें रखना चाहिये।

दूसरी आयत में अल्लाह तआला के एक ख़ास इनाम व एहसान का ज़िक्र है जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा किराम पर बल्कि पूरी दुनिया पर हुआ है, कि हिजरत (मदीना में तशरीफ़ लाने) से पहले जब हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम काफ़िरों के घेरे में थे और वे आपको कैद या क़त्ल करने के मश्विरा कर रहे थे तो अल्लाह तआला ने उनके नापाक इरादों को ख़ाक़ में मिला दिया और हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सलामत व आफ़ियत के साथ मदीना तय्यिबा पहुँचा दिया।

जिसका वाकिआ तफ़सीर इब्ने कसीर और तफ़सीरे मज़हरी में मुहम्मद बिन इस्हाक़, इमाम अहमद और इब्ने जरीर रह. की रिवायत वग़ैरह से यह नक़ल किया गया है कि जब मदीना तय्यिबा से आने वाले अन्सार का मुसलमान हो जाना मक्का में मशहूर हुआ तो मक्का के कुरैशियों को यह फ़िक्र हुई कि अब तक तो इनका मामला सिर्फ़ मक्का में सीमित था जहाँ हर तरह की ताक़त हमारे हाथ में है और अब जबकि मदीना में इस्लाम फैलने लगा और बहुत से सहाबा किराम हिजरत करके मदीना तय्यिबा पहुँच गये तो अब इसकी भी प्रबल संभावना है कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) भी वहाँ चले जायें, इसलिये मक्का के सरदारों ने मश्विरे

के लिये दारुन्नदवा (मक्का के सरदारों की मशिवरा कमेटी) में एक खास मीटिंग तलब की। दारुन्नदवा मस्जिदे हराम के निकट कुसई बिन किलाब का मकान था जिसको उन लोगों ने कौमी समस्याओं में मशिवरे और मीटिंग करने के लिये मख्सूस कर रखा था और इस्लामी दौर में उसको मस्जिदे हराम में दाखिल कर लिया गया है। कहा जाता है कि मौजूदा बाबुज्जियादात ही वह जगह थी जिसको दारुन्नदवा कहा जाता था।

आदत के अनुसार इस अहम और खास मशिवरे के लिये कुरैशी सरदारों का इज्तिमा दारुन्नदवा में हुआ जिसमें अबू जहल, नज़र बिन हारिस, उतबा, शैबा, उमैया बिन खलफ, अबू सुफियान वगैरह कुरैश के तमाम बड़े और वरिष्ठ व्यक्ति शामिल हुए और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और इस्लाम की बढ़ती हुई ताक़त के मुकाबले की तदबीरें विचाराधीन आयीं।

अभी मशिवरे की मीटिंग शुरू ही हुई थी कि शैतान मरदूद एक उम्र रसीदा अरबी शैख की सूरत में दारुन्नदवा के दरवाज़े पर खड़ा हुआ। लोगों ने पूछा कि तुम कौन हो और क्यों आये हो? बतलाया कि मैं नज्द का बाशिन्दा हूँ। मुझे मालूम हुआ है कि आप लोग एक अहम मशिवरा कर रहे हैं तो कौमी हमदर्दी का ख्याल रखते हुए मैं भी हाज़िर हो गया कि मुम्किन है मैं कोई मुफीद मशिवरा दे सकूँ।

यह सुनकर उसको अन्दर बुला लिया गया और मशिवरा शुरू हुआ तो सुहैली की रिवायत के मुताबिक अबुल-बुख्तरी इब्ने हिशाम ने यह मशिवरा पेश किया कि उनको (यानी हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को) लोहे की ज़न्जीरों में कैद करके मकान का दरवाज़ा बन्द कर दिया जाये और छोड़ दिया जाये, यहाँ तक कि (अल्लाह की पनाह) वह आप अपनी मौत मर जायें। यह सुनकर शैख नज्दी शैतान मरदूद ने कहा कि यह राय सही नहीं। क्योंकि अगर तुमने ऐसा किया तो भामला छुपेगा नहीं, बल्कि इसकी शोहरत दूर-दूर पहुँच जायेगी और उनके साथी और दोस्तों के जौनिसारी के कारमाने तुम्हारे सामने हैं, बहुत मुम्किन है कि ये लोग जमा होकर तुम पर हमला कर दें और अपने कैदी को तुमसे छुड़ा लें। सब तरफ से आवाज़ें उठीं कि शैख नज्दी की बात सही है। उसके बाद अबुल-अस्वद ने यह राय पेश की कि उनको मक्का से निकाल दिया जाये, यह बाहर जाकर जो चाहें करते रहें हमारा शहर उनके फ़साद से सुरक्षित हो जायेगा और हमें कुछ लड़ाई-झगड़ा भी करना न पड़ेगा।

शैख नज्दी यह सुनकर फिर बोला कि यह राय भी सही नहीं। क्या तुम्हें मालूम नहीं कि वह कैसे मीठी बोली और दिलकश कलाम वाले आदमी हैं, लोग उनका कलाम सुनकर फ़िदा हो जाते और उनकी बातों के जाल में फँस जाते हैं। अगर उनको इस तरह आज़ाद छोड़ दिया तो बहुत जल्दी अपनी ताक़तवर जमाअत बना लेंगे और तुम पर हमला करके तुमको शिकस्त दे देंगे। अबू जहल बोला कि जो करने का काम है तुममें से किसी ने नहीं समझा। मेरी समझ में एक बात आई है वह यह कि हम अरब के सब कबीलों में से हर कबीले का एक-एक नौजवान ले लें और हर एक को तेज़ धारदार तलवार दे दें। ये सब लोग एक ही बार में एक साथ उन पर हमला करके क़त्ल कर दें। हम उनके फ़साद से तो इस तरह निजात हासिल कर लें। अब रहा उनके

कबीले बनू अब्दे मुनाफ का मुतालबा जो उनके कत्ल के सबब हम पर आयद होगा सो ऐसी सूरत में जबकि कत्ल किसी एक ने नहीं बल्कि हर कबीले के एक-एक शख्स ने किया है तो किसान यानी जान के बदले जान लेने का मुतालबा तो बाकी नहीं रह सकता, सिर्फ खून-बहा या दियत के माल का मुतालबा रह जायेगा वह हम सब कबीलों से जमा करके उनको दे देंगे और बेफिक्र हो जायेंगे।

शैख नज्दी शैतान मरदूद ने यह सुनकर कहा कि बस राय यही है और इसके सिवा कोई चीज कारगर नहीं। पूरी मजलिस ने इसी के हक में राय दे दी और आज ही रात में अपना यह नापाक इरादा पूरा करने का फैसला कर लिया गया।

मगर अम्बिया अलैहिमुस्सलाम की गैबी ताकत को ये जाहिल क्या समझ सकते थे। इस तरफ जिब्रीले अमीन ने उनके दारुल-मशिवरा की सारी कैफियत से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बाख़बर करके यह तदबीर बतलाई कि आज रात में आप अपने बिस्तर पर आराम न करें और बतलाया कि अब अल्लाह तआला ने आपको मक्का से हिजरत करने की इजाजत दे दी है।

उधर मशिवरे के मुताबिक शाम ही से कुरैशी नौजवानों ने सरवरे दो आलम के मकान का घेराव कर लिया। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह देखा तो हज़रत अली मुर्तज़ा कर्मल्लाहु वज्हेहू को हुक्म दिया कि आज की रात वह आपके बिस्तर पर आराम करें और यह खुशख़बरी सुना दी कि अरगचे बज़ाहिर इसमें आपकी जान का ख़तरा है मगर दुश्मन आपका कुछ न बिगाड़ सकेंगे।

हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु ने इस काम के लिये अपने आपको पेश कर दिया और आपके बिस्तर पर लेट गये, मगर अब मुश्किल यह सामने थी कि हुजूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इस घेराबन्दी से कैसे निकलें। इस मुश्किल को अल्लाह तआला ने मोजिजे के ज़रिये हल किया, वह यह कि अल्लाह के हुक्म से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम एक मुट्ठी में मिट्टी भरकर बाहर तशरीफ़ लाये और घेराबन्दी करने वाले जो कुछ आपके बारे में गुफ्तगू कर रहे थे उसका जवाब दिया, मगर अल्लाह तआला ने उनकी नज़रों और फ़िक्रों को आपकी तरफ़ से फेर दिया कि किसी ने आपको न देखा, हालाँकि आप उनमें से हर एक के सर पर खाक डालते हुए निकले चले गये। आपके तशरीफ़ ले जाने के बाद किसी आने वाले ने उन लोगों से पूछा कि यहाँ क्यों खड़े हो तो उन्होंने बतलाया कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के इन्तिज़ार में। उसने कहा कि तुम किस ग़लत-फ़हमी में हो, वह तो यहाँ से निकलकर जा भी चुके हैं और तुम में से हर एक के सर पर खाक डालते हुए गये हैं। उन लोगों ने अपने अपने सरो पर हाथ रखा तो इसकी पुष्टि हुई कि हर एक के सर पर मिट्टी पड़ी हुई थी।

हज़रत अली कर्मल्लाहु वज्हेहू आपके बिस्तर पर लेटे हुए थे मगर घेराबन्दी करने वालों ने उनके करवटें बदलने से पहचान लिया कि यह मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) नहीं इसलिये कत्ल करने के लिये आगे नहीं बढ़े। सुबह तक घेराव करने के बाद ये लोग नाकाम व

नामुराद होकर वापस हो गये। यह रात और इसमें रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिये अपनी जान को खतरे में डालना हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु के खास फ़ज़ाईल (विशेषताओं) में से है।

कुरैशी सरदारों के मशिवरे में जो तीन रायें हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुताल्लिक पेश की गयी थीं उन तीनों को कुरआने करीम की इस आयत में ज़िक्र फ़रमाया है:

وَإِذْ يَمْكُرُ بِكَ الَّذِينَ كَفَرُوا الْيُسْبُوكَ أَوْ يَقْتُلُونَ أَوْ يَنْخِرُ جَوْكَ

यानी वह वक़्त याद रखने के काबिल है जबकि काफ़िर आपके खिलाफ़ तदबीरें सोच रहे थे कि आपको कैद करें या क़त्ल कर दें या शहर-बदर कर दें।

मगर अल्लाह तआला ने उनकी सब तदबीरें खाक में मिला दीं। इसी लिये आयत के आख़िर में फ़रमाया:

وَاللَّهُ خَيْرُ الْمَكْرِينِ ۝

यानी अल्लाह तआला बेहतर तदबीर करने वाले हैं। जो सारी तदबीरों पर ग़ालिब आ जाती है, जैसा कि इस वाकिए में सब ने देख लिया।

लफ़ज़ मकर के मायने अरबी लुग़त में यह हैं कि किसी हीले व तदबीर के ज़रिये अपने मुकाबिल शख्स को उसके इरादे से रोक दिया जाये। फिर अगर यह काम किसी नेक मक़सद से किया जाये तो यह अच्छा और काबिले तारीफ़ मकर है और किसी बुरे मक़सद से किया जाये तो नापसन्दीदा और बुरा है। इसलिये यह लफ़ज़ इनसान के लिये भी बोला जा सकता है और अल्लाह तआला के लिये भी। मगर अल्लाह तआला के लिये सिर्फ़ ऐसे माहौल में इस्तेमाल होता है जहाँ कलाम के मज़मून और तकाबुल के ज़रिये बुरे मकर का शुब्हा न हो सके। (तफ़सीरे मज़हरी) जैसे यहाँ है।

इस जगह यह बात भी काबिले तवज्जोह है कि आयत के आख़िर में जो अलफ़ाज़ इरशाद फ़रमाये वो मुज़ारे के कलिमे के साथ हैं, जो वर्तमान व भविष्य के मायने पर दलालत करता है। इरशाद फ़रमाया:

وَيَمْكُرُونَ وَيَمْكُرُ اللَّهُ

यानी वे लोग ईमान वालों को तकलीफ़ देने की तदबीरें करते रहेंगे और अल्लाह तआला उनकी तदबीरों के नाकाम करने की तदबीर करते रहेंगे। इसमें इशारा है कि काफ़िरों का यह चलन हमेशा रहेगा कि मुसलमानों को नुक़सान पहुँचाने की तदबीरें करें, इसी तरह अल्लाह तआला की नुसरत व मदद भी हमेशा ही सच्चे मुसलमानों से उनकी तदबीरों को दूर करती रहेगी।

इकत्तीसवीं और बत्तीसवीं आयतों में इसी दारुन्नदवा के एक शरीक नज़र बिन हारिस की एक बेहूदा गुफ़्तगू और तैंतीसवीं आयत में उसका जवाब बयान हुआ है। नज़र बिन हारिस चूँकि व्यापारी आदमी था, विभिन्न मुल्कों के सफ़रों में यहूदियों व ईसाईयों की किताबें और उनकी

इबादतें देखने का बार-बार इतिफाक होता था, इसलिये जब उसने कुरआने करीम में पिछली उम्मतों के हालात सुने तो कहने लगा कि:

قَدْ سَمِعْنَا لَوْ نَشَاءُ لَقُلْنَا مِثْلَ هَذَا إِنْ هَذَا إِلَّا أَسَاطِيرُ الْأَوَّلِينَ ۝

यानी ये बातें तो हमारी सुनी हुई हैं। अगर हम चाहें तो हम भी कह सकते हैं। ये तो पिछले लोगों की कहानियाँ हैं।

और जब कुछ सहाबा ने उसको लाजवाब किया कि अगर तुम ऐसा कलाम कह सकते हो तो फिर कहते क्यों नहीं जबकि कुरआन ने हक व बातिल का फैसला इस पर रख दिया है और पूरी दुनिया को यह चैलेंज दिया है कि अगर विरोधी सच्चे हैं तो कुरआन की एक छोटी सी सूरत ही की मिसाल पेश करें। और विरोध व मुखालफत में सरधड़ की बाजी लगाने वाले माल व औलाद कुरबान करने वाले सब मिलकर भी एक छोटी सी सूरत कुरआन के मुकाबले में पेश न कर सके तो अब यह कहना कि हम चाहें तो हम भी ऐसा कलाम कह सकते हैं, एक ऐसी बात है जो कोई गैरतमन्द आदमी नहीं कह सकता। फिर जब नज़र बिन हारिस से सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने अल्लाह के इस कलाम का हक होना बयान किया तो अपने ग़लत मज़हब पर पुख्तगी और जमाव दिखलाने के लिये कहने लगा:

اللَّهُمَّ إِنْ كَانَ هَذَا هُوَ الْحَقُّ مِنْ عِنْدِكَ فَأَمْطِرْ عَلَيْنَا حِجَارَةً مِنَ السَّمَاءِ وَإِنَّا بِعَذَابِكَ أَلِيمٌ ۝

यानी ऐ अल्लाह! अगर यही कुरआन आपकी तरफ़ से हक़ है तो हम पर पत्थर बरसा दीजिए या कोई दूसरा सख्त अज़ाब नाज़िल कर दीजिए।

कुरआने करीम ने खुद इसका जवाब दिया। पहले इरशाद फ़रमाया:

وَمَا كَانَ اللَّهُ لِيُعَذِّبَهُمْ وَأَنْتَ فِيهِمْ ۝

यानी अल्लाह तआला ऐसा नहीं करेंगे कि आपके मक्का में होते हुए उन पर अज़ाब नाज़िल करें। क्योंकि अब्बल तो तमाम ही नबियों के साथ हक़ तआला का दस्तूर यह है कि जिस बस्ती में वे मौजूद हों उस पर उस वक़्त तक अज़ाब नाज़िल नहीं फ़रमाते जब तक अपने पैग़म्बरों को वहाँ से निकाल न लें। जैसे हज़रत हूद अलैहिस्सलाम और सालेह अलैहिस्सलाम और लूत अलैहिस्सलाम के मामले में सामने आया कि जब तक ये हज़रात बस्ती में रहे अज़ाब नहीं आया, जब वहाँ से निकाल लिये गये उस वक़्त अज़ाब नाज़िल हुआ। खुसूसन तमाम नबियों के सरदार जो रहमतुल्लिलआलमीन का लक़ब देकर भेजे गये हैं, आपके किसी बस्ती में मौजूद होते हुए उन पर अज़ाब आना आपकी शान के खिलाफ़ था।

जवाब का खुलासा यह हुआ कि तुम तो कुरआन और इस्लाम की मुखालफ़त की वजह से इसी के हक़दार हो कि तुम पर पत्थर बरसाये जायें, मगर हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मक्का में मौजूद होना इससे बाधा और रोक है। इमाम इब्ने जरीर रह. ने फ़रमाया कि आयत का यह हिस्सा उस वक़्त नाज़िल हुआ जबकि आप मक्का मुकर्रमा में मौजूद थे, फिर मदीना की हिजरत के बाद आयत का दूसरा हिस्सा यह नाज़िल हुआ:

وَمَا كَانَ اللَّهُ مُعَذِّبَهُمْ وَهُمْ يَسْتَغْفِرُونَ

यानी अल्लाह तआला उन पर अज़ाब नाज़िल करने वाले नहीं जबकि वे इस्तिग़फ़ार करते हैं। मुराद इससे यह है कि आपके मदीना शरीफ़ चले जाने के बाद अगरचे सार्वजनिक अज़ाब की यह बाधा दूर हो गयी कि आप वहाँ मौजूद थे, मगर उस वक़्त भी एक अज़ाब की एक बाधा और रुकावट यह मौजूद रही कि बहुत से कमज़ोर मुसलमान जो हिजरत न कर सकते थे मक्का में रह गये थे और वे अल्लाह तआला से इस्तिग़फ़ार करते रहते थे। उनकी खातिर से मक्का वालों पर अज़ाब नाज़िल नहीं किया गया।

फिर जब ये सब हज़रात भी हिजरत करके मदीना मुनव्वरा पहुँच गये तो बाद वाली आयत का यह जुमला नाज़िल हुआ:

وَمَا لَهُمْ إِلَّا يَعْذِّبُهُمُ اللَّهُ وَهُمْ يَصُفِّرُونَ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ

यानी यह कैसे हो सकता है कि अल्लाह तआला उनको अज़ाब न दें हालाँकि वे लोगों को मस्जिदे हराम (यानी ख़ाना काबा की मस्जिद) में इबादत करने से रोकते हैं।

मतलब यह है कि अब अज़ाब को रोकने वाली दोनों रुकावटें और बाधाएँ दूर हो चुकीं, न हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मक्का में रहे और न इस्तिग़फ़ार करने वाले मुसलमान मक्का में बाकी रहे, तो अब अज़ाब आने से कोई रुकावट बाकी नहीं।

खुसूसन उनके अज़ाब का हक़दार होने में खुद इस्लाम विरोधी होने के अलावा इस जुर्म का भी इज़ाफ़ा हो गया कि ये लोग खुद तो इबादत के काबिल न थे और जो मुसलमान इबादत उमरा व तवाफ़ के लिये मस्जिदे हराम (यानी काबे और काबे की मस्जिद) में जाना चाहें उनको रोकने लगे, तो अब इनका अज़ाब का हक़दार होना बिल्कुल मुकम्मल हो गया। चुनाँचे मक्का फ़तह होने के ज़रिये इन पर अज़ाब नाज़िल किया गया।

मस्जिदे हराम में दाख़िल होने से रोकने का वाकिआ हुदैबिया की मुहिम में पेश आया था जबकि हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सहाबा किराम के साथ उमरे के इरादे से तशरीफ़ ले गये और मक्का के मुश्रिकों ने आपको मक्का में दाख़िल होने से रोक दिया और आपको और सब सहाबा किराम को अपने एहराम खोलने और वापस जाने पर मजबूर किया। यह वाकिआ सन् ६ हिजरी का है, इसके दो साल बाद सन् ८ हिजरी में मक्का मुकर्रमा फ़तह हो गया। इस तरह उन पर मुसलमानों के हाथों अल्लाह तआला का अज़ाब नाज़िल हुआ।

इमाम इब्ने जरीर रह. की इस तफ़सीर का मदार इस पर है कि अज़ाब को रोकने वाली चीज़ आपका मक्का में होना क़रार दिया जाये। और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का दुनिया में मौजूद रहना ही अज़ाब के लिये रुकावट है, जब तक आप दुनिया में तशरीफ़ रखते हैं आपकी क़ौम पर अज़ाब नहीं आ सकता। और वजह इसकी ज़ाहिर है कि आपका हाल दूसरे नबीयों की तरह नहीं कि वे ख़ास-ख़ास मक़ामात या क़बीलों की तरफ़ भेजे गये थे। जब वहाँ से निकल कर किसी दूसरे ख़िल्ले में पहुँच गये तो उनकी क़ौम पर

अज़ाब आ जाता था, बख़िलाफ़ सैयदुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के, कि आपकी नुबुव्वत व रिसालत सारे आलम के लिये और कियामत तक के लिये आम और शामिल है। पूरी दुनिया आपके नबी बनाकर भेजे जाने का मक़ाम और रिसालत का दायरा है, इसलिये जब तक आप दुनिया के किसी हिस्से में मौजूद हैं आपकी कौम पर अज़ाब नहीं आ सकता।

इस तफ़सीर पर मतलब यह होगा कि मक्का वालों की हरकतों का तकाज़ा तो यही था कि उन पर पत्थर बरसाये जायें मगर दो चीज़ें इस अज़ाब से रोक हुई- एक हुज़ूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का दुनिया में तशरीफ़ फ़रमा होना। दूसरे मक्का वालों का इस्तिग़फ़ार करना (अल्लाह से माफ़ी चाहना) क्योंकि ये लोग मुश्रिक व काफ़िर होने के बावजूद अपने तवाफ़ वगैरह में 'गुफ़रान-क, गुफ़रान-क' कहा करते और अल्लाह तआला से मग़फ़िरत (माफ़ी) तलब किया करते थे। उनका यह इस्तिग़फ़ार कुफ़्र व शिर्क के साथ अगरचे आख़िरत में फ़ायदेमन्द न हो मगर दुनिया में इसका भी यह नफ़ा उनको मिल गया कि दुनिया में अज़ाब से बच गये। अल्लाह तआला किसी के अमल को ज़ाया नहीं करते, काफ़िर व मुश्रिक लोग अगर कोई नेक अमल करते हैं तो उसका बदला उनको इसी दुनिया में दे दिया जाता है। इसके बाद जो यह इरशाद फ़रमाया कि यह कैसे हो सकता है कि अल्लाह तआला इनको अज़ाब न दे हालाँकि ये लोग मुसलमानों को मस्जिदे हराम में इबादत करने से रोकते हैं, इसका मतलब इस सूरात में यह होगा कि दुनिया में अज़ाब न होने से ये लोग घमण्डी और मुल्मईन न हो जायें कि हम मुज़रिम ही नहीं, या हम पर अज़ाब नहीं होगा। अगर दुनिया में न हुआ तो आख़िरत के अज़ाब से इनको किसी तरह छुटकारा नहीं। इस तफ़सीर पर "मा लहुम अल्ला युअज़िज़-बहुम" में अज़ाब से आख़िरत का अज़ाब मुराद होगा।

ज़िक्र हुई इन आयतों से चन्द फ़ायदे हासिल हुए। अब्बल यह कि जिस बस्ती में लोग इस्तिग़फ़ार करते हों अल्लाह तआला का दस्तूर यह है कि उस पर अज़ाब नाज़िल नहीं करते।

दूसरे यह कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के होते हुए आपकी उम्मत पर चाहे मुस्लिम हों या काफ़िर अज़ाब नहीं आयेगा, और मुराद इससे यह है कि आम और सार्वजनिक अज़ाब जिससे पूरी कौम तबाह हो जाये ऐसा अज़ाब नहीं आयेगा, जैसे कौमे नूह, कौमे लूत, कौमे शुऐब वगैरह के साथ पेश आया, कि उनका नाम व निशान मिट गया। कुछ अफ़राद या व्यक्तियों पर कोई अज़ाब आ जाये वह इसके विरुद्ध नहीं जैसा कि खुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मेरी उम्मत में ख़स्फ़ और मस्ख़ का अज़ाब आयेगा। 'ख़स्फ़' के मायने ज़मीन में उतर जाना और 'मस्ख़' के मायने सूरात बिगड़कर बन्दर या सुअर वगैरह जानवरों की शक्ल में तब्दील हो जाना है। इसकी मुराद यही है कि उम्मत के कुछ अफ़राद पर ऐसे अज़ाब भी आयेंगे।

और हुज़ूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का दुनिया में होना कियामत तक बाकी रहेगा, क्योंकि आपकी रिसालत कियामत तक के लिये है, और हुज़ूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इस वक़्त भी ज़िन्दा हैं अगरचे उस ज़िन्दगी की सूरात पहली ज़िन्दगी से अलग और भिन्न है,

और यह बहस बेकार और फुजूल है कि इन दोनों ज़िन्दगियों में फर्क क्या है, क्योंकि न इस पर उम्मत का कोई दीनी या दुनियावी काम टिका है न खुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा किराम ने ऐसी फुजूल और बेज़रूरत बहसों को पसन्द फरमाया, बल्कि मना फरमाया है।

खुलासा यह है कि हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का अपने रौजे में ज़िन्दा होना और आपकी रिसालत का कियामत तक कायम रहना इसकी दलील है कि आप कियामत तक दुनिया में हैं, इसलिये यह उम्मत कियामत तक अम अज़ाब से सुरक्षित रहेगी।

وَمَا لَهُمْ آلَا يُعَذِّبُهُمُ اللَّهُ وَهُمْ يَصُدُّونَ عَنِ الْمَسْجِدِ

الْحَرَامِ وَمَا كَانُوا أَوْلِيَاءَهُ إِنْ أُولِيَاءُؤُهُ إِلَّا الَّذِينَ كَفَرُوا وَلَكِنْ أَكْثَرُهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ۝ وَمَا كَانَ صَلَاتُهُمْ عِنْدَ الْبَيْتِ إِلَّا مُكَاءً وَتَصْدِيَةً فَذُوقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنْتُمْ كَافِرُونَ ۝ إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا يُنْفِقُونَ أَمْوَالَهُمْ لِيَصُدُّوا عَنْ سَبِيلِ اللَّهِ فَسَيُنْفِقُونَهَا ثُمَّ يَكُونُ عَلَيْهِمْ حَسْرَةٌ ثُمَّ يُغْلِبُونَ ۝ وَالَّذِينَ كَفَرُوا إِلَىٰ جَهَنَّمَ يُحْشَرُونَ ۝ لِيَمِيزَ اللَّهُ الْخَبِيثَ مِنَ الطَّيِّبِ وَيَجْعَلَ الْخَبِيثَ بَعْضُهُ عَلَىٰ بَعْضٍ فَيَرْكَبُ جَمِيعًا فَيَجْعَلُهُ فِي جَهَنَّمَ أُولَٰئِكَ هُمُ الْخٰسِرُونَ ۝ قُلْ لِلَّذِينَ كَفَرُوا إِنْ يَنْتَهُوا يُغْفَرْ لَهُمْ مَا قَدْ سَلَفَ وَإِنْ يَعُودُوا فَقَدْ مَضَتْ سُنَّتُ الْأَوَّلِينَ ۝

व मा लहुम् अल्ला युअज़्ज़ि-बहुमु-
-ल्लाहु व हुम् यसुद्दू-न अनिल्
मस्जिदिल्-हरामि व मा कानू
औलिया-अहू, इन् औलिया-उहू
इल्लल्-मुत्तकू-न व लाकिन्-न
अक्स-रहुम् ला यज़लमून (34) व
मा का-न सलातुहुम् अिन्दल्-बैति
इल्ला मुकाअंव्-व तस्दि-यतन्,
फज़ूकुल्-अज़ा-ब बिमा कुन्तुम्
तक्फुरुन (35) इन्नल्लज़ी-न क-फरू

और उनमें क्या बात है कि अज़ाब न करे
उन पर अल्लाह और वे तो रोकते हैं
मस्जिदे हराम से, और वे उसके इस्तिथार
वाले नहीं, उसके इस्तिथार वाले तो वही
हैं जो परहेज़गार हैं, लेकिन उनमें अक्सरों
को इसकी ख़बर नहीं। (34) और उनकी
नमाज़ नहीं थी काबे के पास मगर
सीटियाँ बजानी और तालियाँ, सो चखो
अज़ाब बदला अपने कुफ़ का। (35)
बेशक जो लोग काफ़िर हैं वे ख़र्च करते

युन्फिकू-न अम्वालहुम् लि-यसुदू अन् सबीलिल्लाहि, फ-सयुन्फिकूनहा सुम्-म तकूनु अलैहिम् हसरतन् सुम्-म युगूलबू-न, वल्लजी-न क-फरु इला जहन्न-म युहशरून (36) लि-यमीज ललाहुल्-खाबी-स मिनत्तय्यिबि व यज्जलल् खाबी-स बज्जहू अला बज्जिन् फ-यर्कु-महू जमीअन् फ-यज्ज-लहू फी जहन्न-म, उलाइ-क हुमुल्-खासिरून (37) ● कुल् लिल्लजी-न क-फरु इय्यन्तहू युगुफर् लहुम् मा कद् स-ल-फ, व इय्यजूदू फ-कद् मज्जत् सुन्नतुल्- अव्वलीन (38)	हैं अपने माल ताकि रोकें अल्लाह की राह से, सो अभी और छार्च करेंगे फिर आखिर होगा वह उन पर अफसोस, और आखिर मग़लूब होंगे, और जो काफिर हैं वे दोज़ख़ की तरफ़ हॉके जायेंगे। (36) ताकि अलग कर दे अल्लाह नापाक को पाक से और रखे नापाक को एक को एक पर, फिर उसको ढेर कर दे इकट्ठा, फिर डाल दे उसको दोज़ख़ में, वही लोग हैं नुक़सान में। (37) ● तू कह दे काफ़िरों को कि अगर वे बाज़ आ जायें तो माफ़ हो उनको जो कुछ हो चुका, और अगर फिर भी वही करेंगे तो पड़ चुकी है राह अगलों की। (38)

खुलासा-ए-तफसीर

और (इन रुकावटों के सबब असाधारण और खुदाई अज़ाब नाज़िल न होने से बिल्कुल ही अज़ाब से मुत्मईन न हो जायें, क्योंकि जिस तरह उपरोक्त अज़ाब को रोकने वाली चीज़ें मौजूद हैं इसी तरह उनकी हरकतें अज़ाब को लाने वाली भी हैं। पस अज़ाब को रोकने वाली चीज़ का असर असाधारण और मोजिज़ाती अज़ाब के न आने में ज़ाहिर हुआ और उनकी हरकतों का असर अज़ाब के ज़ाहिर होने में होगा, कि मोजिज़ाती और असाधारण अज़ाब न सही मगर अज़ाब तो उनपर नाज़िल होगा। चुनाँचे इसी तकाज़े का बयान फरमाते हैं कि) उनका क्या हक् बनता है कि उनको अल्लाह तआला (बिल्कुल ही मामूली) सज़ा भी न दे, हालाँकि (उनकी ये हरकतें सज़ा को लाने वाली हैं, मसलन) वे लोग (पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और मुसलमानों को) मस्जिदे-हराम (में जाने और उसमें नमाज़ पढ़ने और उसमें तवाफ़ करने) से रोकते हैं, (जैसा कि हुदैबिया में हक़ीकतन रोका जिसका किस्सा सूर: ब-करह में गुज़र चुका, और मक्का में रहने के ज़माने में हुक्मन रोका कि इस क़द्र तंग किया कि हिजरत की ज़रूरत हुई) हालाँकि वे लोग इस मस्जिद के मुतवल्ली (बनने के भी लायक) नहीं। (और इबादत करने

वालों को रोकना तो दरकिनार रहा जिसका इस्तिथार खुद मुतवल्ली को भी नहीं होता), उसके मुतवल्ली (बनने के लायक) तो सिवाय मुत्तकी लोगों के (जो कि ईमान वाले हैं) और कोई भी नहीं, लेकिन उनमें अक्सर लोग (अपनी नालायकी) का इल्म भी नहीं रखते। (चाहे इल्म ही न हो या यह कि जब इस इल्म पर अमल न किया तो वह भी एक तरह से इल्म न होने के जैसा ही है। गर्ज कि जो सचमुच नमाज़ी थे उनको तो मस्जिद से इस तरह रोका) और (खुद मस्जिद का कैसा हक अदा किया और उसमें कैसी अच्छी नमाज़ पढ़ी जिसका बयान यह है कि) उनकी नमाज़ खाना काबा (जिसको मस्जिदे हराम के उनवान से ज़िक्र किया है) के पास सिर्फ यह थी, सीटियाँ बजाना और तालियाँ बजाना (यानी बजाय नमाज़ के उनकी ये नामाकूल हरकतें होती थीं) सो (इन हरकतों का लाज़िमी असर तो यह है कि उन पर कोई न कोई अज़ाब चाहे वह मामूली और साधारण हो नाज़िल करके उनको खिताब किया जाये कि लो) इस अज़ाब का मज़ा चखो अपने कुफ़ के सबब (जिसका एक असर वह कौल है “अगर हम चाहें तो हम भी ऐसा कह लें.....” और एक असर वह कौल है “अगर यह दीन हक है.....” और एक असर वह हरकत है “रोकते हैं मस्जिदे हराम से.....” और एक असर वह काम है “सीटियाँ और तालियाँ बजाना.....”। चुनाँचे अनेक लड़ाईयों और मुहिमों में यह सज़ा ज़ाहिर हुई जैसा कि इस सूरत के दूसरे रुकूअ में भी है:

ذَلِكُمْ فَذَوْقُوهُ..... الخ

بَعْدَ ذَلِكَ بَأْتَهُمْ شَأْوَاهُ..... الخ

के यहाँ तक तो उन लोगों के कौल और बदनी आमाल का ज़िक्र था, आगे उनके माली आमाल का बयान है कि) बेशक ये काफ़िर लोग अपने मालों को इसलिए खर्च कर रहे हैं ताकि अल्लाह तआला की राह से (यानी दीन से लोगों को) रोकें, (चुनाँचे हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुकाबले और मुखालफ़त के सामान जमा करने में ज़ाहिर है कि जो खर्च होता था उसमें यही गर्ज थी) सो ये लोग अपने मालों को (इसी गर्ज के लिये) खर्च करते ही रहेंगे (मगर) फिर (आखिर में जब नाकामी के आसार को महसूस होंगे तो) वे माल उनके हक में अफ़सोस का सबब हो जाएँगे (कि ख़्वाह-मख़्वाह खर्च किया और) फिर (आखिर) मग़लूब (ही) हो जाएँगे (जिससे अफ़सोस और माल की बरबादी के साथ यह दूसरी हसरत हार जाने और नाकाम रहने की जमा हो जायेगी) और (यह सज़ा व हसरत व मग़लूब हो जाना तो उनकी दुनिया में है, बाकी आखिरत की सज़ा वह अलग है जिसका बयान यह है कि) काफ़िर लोगों को दोज़ख़ की तरफ़ (ले जाने के लिये क़ियामत में) जमा किया जायेगा ताकि अल्लाह तआला नापाक (लोगों) को पाक (लोगों) से अलग कर दे (क्योंकि जब दोज़ख़ियों को दोज़ख़ की तरफ़ लायेंगे ज़ाहिर है कि जन्नत वाले उनसे अलग रह जायेंगे) और (उनसे अलग करके) नापाकों को एक-दूसरे से मिला दे यानी उन सब को एक जगह कर दे। फिर (मिला करके) उन सब को जहन्नम में डाल दे। ऐसे ही लोग पूरे ख़सारे “यानी घाटे” में हैं (जिसकी कोई आखिरी सीमा नहीं)।

(ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) आप उन काफिरों से कह दीजिए कि अगर ये लोग (अपने कुफ़ से) बाज़ आ जाएँगे (और इस्लाम कुबूल कर लेंगे) तो उनके सारे गुनाह जो (इस्लाम से) पहले हो चुके हैं सब माफ़ कर दिये जाएँगे। (यह हुक्म तो इस्लाम की हालत का हुआ) और अगर अपनी वही (कुफ़ की) आदत जारी रखेंगे तो (सुना दीजिये कि) पहले गुज़रे (काफिरों के हक) में (हमारा) कानून नाफिज़ हो चुका है (कि दुनिया में हलाक और आखिरत में अज़ाब, वही तुम्हारे लिये होगा। चुनौचे क़त्ल से हलाक भी हुए और अरब से बाहर के काफिरों का जिम्मी बनना भी हलाक होना है, तुम जानो)।

मआरिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में यह बतलाया गया था कि मक्का के मुशिरक अपने कुफ़ व इनकार की वजह से अगरचे इसके हक़दार हैं कि उन पर आसमानी अज़ाब आ जाये लेकिन रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मक्का में मौजूद होना आम और सार्वजनिक अज़ाब आने से रुकावट है, और हिजरत के बाद उन कमज़ोर मुसलमानों की वजह से ऐसा अज़ाब नहीं आता जो मक्का में रहकर अल्लाह से इस्तिग़फ़ार करते रहते हैं।

उक्त आयतों में यह बयान है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम या कमज़ोर मुसलमानों की रियायत से अगर दुनिया में इनका अज़ाब टल ही गया तो इन लोगों को यह न समझना चाहिये कि ये अज़ाब के मुस्तहिक् नहीं, बल्कि इनका अज़ाब का हक़दार होना खुला हुआ है और कुफ़ व इनकार के अलावा और भी इनके ऐसे जराईम हैं जिनकी वजह से इन पर अज़ाब आ जाना चाहिये। इन दोनों आयतों में उनके तीन जुर्म शुमार किये गये हैं।

अव्वल यह कि ये लोग खुद तो मस्जिद-ए-हराम में इबादत-गुज़ारी के काबिल ही नहीं और जो मुसलमान वहाँ इबादत- नमाज़ तवाफ़ वगैरह अदा करना चाहते हैं उनको आने से रोक देते हैं। इसमें हुदैबिया के वाकिए की तरफ़ इशारा है जबकि सन् 6 हिजरी में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सहाबा किराम के साथ उमरा अदा करने के लिये मक्का मुकर्रमा पहुँचे थे और मक्का के मुशिरकों ने आपको रोककर वापस जाने पर मजबूर किया था।

दूसरा जुर्म यह बयान फ़रमाया कि ये बेवकूफ़ यूँ समझते और कहते हैं कि हम मस्जिद हाराम के मुतवल्ली (जिम्मेदार) हैं, जिसको चाहें उसमें आने की इजाज़त दें जिसको चाहें न दें।

उनका यह ख़्याल दो ग़लत-फ़हमियों का नतीजा था- अव्वल यह कि अपने आपको मस्जिद हाराम का मुतवल्ली समझा हालाँकि कोई काफिर किसी मस्जिद का मुतवल्ली (प्रबंधक) नहीं हो सकता। दूसरे यह कि मुतवल्ली को यह हक़ है कि जिसको चाहे मस्जिद में आने से रोक दे। जबकि मस्जिद अल्लाह का घर है उसमें आने से रोकने का किसी को हक़ नहीं सिवाय ऐसी खास सूरतों के जिनमें मस्जिद की बेहुर्मती (बेक़द्री) या दूसरे नमाज़ियों की तकलीफ़ का अन्देशा हो। जैसे रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अपनी मस्जिदों को बचाव छोटे बच्चों से, और पागल आदमियों और आपसी झगड़ों से। छोटे बच्चों से मुराद वे बच्चे हैं

जिनसे नापाकी का ख़तरा है, और पागल से नापाकी का भी ख़तरा है और नमाज़ियों को तकलीफ़ पहुँचाने का भी, और आपसी झगड़ों से मस्जिद की बेहर्मती भी है और नमाज़ियों की तकलीफ़ भी।

इस हदीस के एतिबार से मस्जिद के मुतवल्ली के लिये यह तो हक़ है कि ऐसे छोटे बच्चों, पागलों को मस्जिद में न आने दे और आपसी झगड़े मस्जिद में न होने दे, लेकिन बग़ैर ऐसी सूरतों के किसी मुसलमान को मस्जिद से रोकने का किसी मस्जिद के मुतवल्ली को हक़ नहीं।

कुरआने करीम की उपरोक्त आयत में सिर्फ़ पहली बात बयान करने पर बस किया कि उन लोगों को मस्जिदे हराम का मुतवल्ली कैसे माना जाये जबकि उसूल यह है कि उसके मुतवल्ली सिर्फ़ मुत्तकी मुसलमान ही हो सकते हैं। इससे मालूम हुआ कि मस्जिद का मुतवल्ली (ज़िम्मेदार व प्रबंधक) मुसलमान दीनदार परहेज़गार होना चाहिये और कुछ मुफ़स्सरीन हज़रात ने 'इन औलियाउहू' (उसके इख़्तियार वाले) में जिसकी तरफ़ इशारा है उससे अल्लाह तआला की ज़ात मुराद लेकर यह मायने लिखे हैं कि अल्लाह के वली मुत्तकी परहेज़गार लोग हो सकते हैं।

इस तफ़सीर के मुताबिक़ आयत से यह नतीजा निकला कि जो लोग शरीअत व सुन्नत के खिलाफ़ अमल करने के बावजूद अल्लाह का वली होने का दावा करें वे झूठे हैं और जो ऐसे लोगों को अल्लाह का वली समझें वे धोखे में हैं।

तीसरा ज़ुर्म उन लोगों का यह बतलाया कि कुफ़्र व शिर्क की गन्दगी तो थी ही उनके कामों और आमाल तो आम इनसानी सतह से भी गिरे हुए हैं। क्योंकि ये लोग अपने जिस फ़ैल का नाम नमाज़ रखते हैं वह सिवाय इसके नहीं कि उसमें मुँह से कुछ सीटियाँ बजायें, हाथों से कुछ तालियाँ, और यह ज़ाहिर है कि जिसको ज़रा भी अक्ल हो वह इन कामों को इबादत व नमाज़ क्या कोई सही इनसानी काम भी नहीं कह सकता इसलिये आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमाया:

فَذُوقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنتُمْ تَكْفُرُونَ

यानी तुम्हारे कुफ़्र और ज़ुर्मों का अन्जाम यही है कि अब अल्लाह का अज़ाब चखो। अज़ाब से इस जगह आख़िरत का अज़ाब भी मुराद हो सकता है और दुनिया का अज़ाब भी, जो बदर की जंग में मुसलमानों के हाथों उन पर नाज़िल हुआ।

इसके बाद छत्तीसवीं आयत में मक्का के काफ़िरों के एक और वाकिए का बयान है जिसमें उन्होंने इस्लाम और मुसलमानों के खिलाफ़ ताक़त इकट्ठी करने के लिये बहुत माल जमा किया और फिर उसको देने हक़ और मुसलमानों के मिटाने के लिये खर्च किया। मगर नतीजा यह हुआ कि वह माल भी हाथ से गया और मक़सद हासिल होने के बजाय खुद ज़लील व रुस्वा हुए।

वाक़िआ इसका मुहम्मद बिन इस्हाक़ की रिवायत से हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से यह नक़ल किया गया है कि जंगे बदर के शिकस्त से दोचार, ज़ख़्म खाये हुए, बचे-खुचे मक्का के काफ़िर जब वहाँ से वापस मक्का पहुँचे तो जिन लोगों के बाप बेटे इस जिहाद में मारे गये थे वे तिजारती काफ़िले के अमीर अबू सुफ़ियान के पास पहुँचे और कहा कि आप जानते हैं कि यह जंग तुम्हारे तिजारती काफ़िले की हिफ़ाज़त के लिये लड़ी गयी जिसके

नतीजे में यह तमाम जानी और माली नुक़सान उठाने पड़े। इसलिये हम चाहते हैं कि इस साझा व्यापारी कम्पनी से हमारी कुछ मदद की जाये ताकि हम आईन्दा मुसलमानों से अपना बदला ले सकें। उन लोगों ने इसको मन्ज़ूर करके एक बड़ी रक़म दे दी जिसको उन्होंने ग़ज़वा-ए-बदर का इन्तिक़ाम लेने के लिये ग़ज़वा-ए-उहुद में ख़र्च किया और उसमें भी परिणाम स्वरूप मग़लूब हुए और शिकस्त के ग़म के साथ माल ज़ाया करने का अफ़सोस अलग से हुआ।

क़ुरआने करीम ने यह वाकिआ पेश आने से पहले ही इस आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इसके अन्जाम की ख़बर दे दी। इरशाद फ़रमाया- वे लोग जो काफ़िर हैं अपने मालों को इस काम के लिये ख़र्च करना चाहते हैं कि लोगों को अल्लाह के दीन से रोक दें, तो इसका अन्जाम यह होगा कि ये अपना माल भी ख़र्च कर डालेंगे और फिर इनको माल ख़र्च करने पर हसरत होगी, और अन्जाम कार मग़लूब हो जायेंगे। चुनाँचे ग़ज़वा-ए-उहुद (उहुद की जंग) में ठीक यही सूरत हुई कि जमा किया हुआ माल भी ख़र्च कर डाला और फिर पराजित हुए तो शिकस्त के ग़म के साथ माल ज़ाया होने पर अलग से अफ़सोस व शर्मिन्दगी हुई।

और इमाम बग़वी वग़ैरह कुछ मुफ़स्सिरीन ने इस आयत के मज़मून को खुद ग़ज़वा-ए-बदर के ख़र्चों पर महमूल फ़रमाया है कि जंगे बदर में एक हज़ार जवानों का जो लश्कर मुसलमानों के मुकाबले पर गया था उनके खाने पीने वग़ैरह के तमाम ख़र्चें मक्का के बारह सरदारों ने अपने ज़िम्मे लिये थे, जिनमें अबू जहल, उतबा, शैबा वग़ैरह शामिल थे। ज़ाहिर है कि एक हज़ार आदमियों के आने-जाने खाने-पीने वग़ैरह के ख़र्चों पर बड़ी रक़म ख़र्च हुई, तो उन लोगों को अपनी शिकस्त के साथ अपने माल ज़ाया होने पर भी सख़्त अफ़सोस व शर्मिन्दगी पेश आई।

(तफ़्सीरे मज़हरी)

आयत के आख़िर में आख़िरत के एतिबार से उन लोगों के बुरे अन्जाम का बयान है:

وَالَّذِينَ كَفَرُوا إِلَىٰ جَهَنَّمَ يُخْشَرُونَ

यानी जो लोग काफ़िर हैं उनका हशर जहन्नम की तरफ़ होगा।

मज़कूरा आयतों में दीने हक़ से रोकने के लिये माल ख़र्च करने का जो बुरा अन्जाम ज़िक्र किया गया है उसमें आज के वे काफ़िर भी दाख़िल हैं जो लोगों को इस्लाम से रोकने और अपने बातिल (ग़ैर-हक़ और ग़लत रास्ते) की तरफ़ दावत देने पर लाखों रुपया अस्पतालों, स्कूलों और सड़के ख़ैरात के नाम से ख़र्च करते हैं। इसी तरह वे गुमराह लोग भी इसमें दाख़िल हैं जो इस्लाम के माने हुए और निश्चित अक़ीदों में शक व शुब्हे और भ्रम पैदा करके उनके खिलाफ़ लोगों को दावत देने के लिये अपने माल ख़र्च करते हैं, लेकिन हक़ तआला अपने दीन की हिफ़ाज़त फ़रमाते हैं और बहुत से मौकों में देखा भी जाता है कि ये लोग बड़े-बड़े माल ख़र्च करने के बावजूद अपने मक़सद में नाकाम रहते हैं।

सैंतीसवीं आयत में उक्त वाकिआत के कुछ परिणामों का बयान है जिसका खुलासा यह है कि अपने जो माल काफ़िरों ने इस्लाम के खिलाफ़ इस्तेमाल किये और फिर उनको अफ़सोस व

शर्मिन्दगी हुई और ज़लील व रुस्वा हुए इसका फायदा यह है कि:

لِيَمِيزَ اللَّهُ الْخَبِيثَ مِنَ الطَّيِّبِ.

यानी ताकि अल्लाह तआला गन्दी चीज़ और पाक साफ़ चीज़ में फर्क ज़ाहिर कर दें।

लफ़्ज़ ख़बीस और तय्यिब दो एक-दूसरे के विपरीत और मुक़ाबले के लफ़्ज़ हैं। लफ़्ज़ ख़बीस नापाक, गन्दे और हराम के लिये बोला जाता है, और तय्यिब इसके उलट पाक, साफ़ सुधरे और हलाल के लिये बोला जाता है। इस जगह इन दोनों लफ़्ज़ों से काफ़िरों के बुरे माल और मुसलमानों के पाक और अच्छे माल भी मुराद हो सकते हैं। इस सूरत में मतलब यह है कि काफ़िरों ने जो बहुत अधिक माल खर्च किये वो माल ख़बीस और नापाक थे, इसका बुरा नतीजा यह हासिल हुआ कि माल भी गया और जानें भी गयीं। इसके मुक़ाबले में मुसलमानों ने बहुत थोड़ा माल खर्च किया मगर वह माल पाक और हलाल था, उनके खर्च करने वाले कामयाब हुए और ऊपर से माल-ए-ग़नीमत भी हाथ आया। इसके बाद इरशाद फरमाया:

وَيَجْعَلُ الْخَبِيثَ بَعْضُهُ عَلَى بَعْضٍ فَيَرْكُمَهُ جَمِيعًا فَيَجْعَلُهُ فِي جَهَنَّمَ أُولَئِكَ هُمُ الْخَسِرُونَ ۝

यानी अल्लाह तआला जमा कर देता है एक ख़बीस को दूसरे ख़बीस के साथ, फिर उन सब को जमा कर देगा जहन्नम में, यही लोग ख़सारे (घाटे) में पड़ने वाले हैं।

मतलब यह है कि जिस तरह दुनिया में मक्नातीस लोहे को खींचता है, कहरबा (एक किस्म का गोंद जो रगड़ने पर लकड़ी को अपनी तरफ़ खींचता है) घास को खींचता है और विज्ञान की नई तहकीक़ व तर्जुबात में सारी दुनिया का निज़ाम ही आपसी कशिश पर कायम है, इसी तरह आमाल व अज़लाक़ में भी कशिश है। एक बुरा अमल दूसरे बुरे अमल को और एक अच्छा अमल दूसरे अच्छे अमल को खींचता है। बुरा माल दूसरे बुरे माल को खींचता है और फिर ये बुरे माल बुरे और ख़बीस आसार पैदा करते हैं। इसका नतीजा यह है कि जितने बुरे माल हैं अल्लाह तआला आख़िरत में उन सब को जहन्नम में जमा फ़रमा देंगे, और ये माल वाले बड़े ख़सारे में पड़ जायेंगे।

और बहुत से मुफ़त्सिरीन हज़रात ने इस जगह ख़बीस और तय्यिब की मुराद आम करार दी है, यानी पाक और नापाक। पाक से मोमिन और नापाक से काफ़िर मुराद हैं। इस सूरत में मतलब यह होगा कि ज़िक्र हुए हालात के ज़रिये अल्लाह तआला यह चाहते हैं कि पाक व नापाक यानी मोमिन व काफ़िर में भेद और फर्क हो जाये, मोमिन हज़रात जन्नत में और काफ़िर सब एक जगह जहन्नम में जमा कर दिये जायें।

अइतीसवीं आयत में काफ़िरों के लिये फिर एक तरबियत भरा ख़िताब है जिसमें तवज्जोह और दिलचस्पी दिलाना भी है और डराना भी। दिलचस्पी और तवज्जोह इसकी कि अगर वे इन तमाम बुरे कामों के बाद अब भी तौबा कर लें और ईमान ले आयें तो पिछले सब गुनाह माफ़ कर दिये जायेंगे, और डरावा यह कि अगर वे अब भी बाज़ न आयें तो समझ लें कि उनके लिये अल्लाह तआला को कोई नया क़ानून बनाना या सोचना नहीं पड़ता। पहले ज़माने के काफ़िरों के

लिये जो क़ानून जारी हो चुका है वही उन पर भी जारी होगा कि दुनिया में हलाक व बरबाद हुए और आखिरत में अज़ाब के हकदार हुए।

وَقَاتِلُوهُمْ حَتَّى لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدِّينُ كُلَّهُ لِلَّهِ ۚ فَإِنِ انْتَهَوْا فَإِنَّ اللَّهَ
بِمَا يَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ۝ وَإِن تَوَلَّوْا فَإِنَّمَا عَلَيْكُمْ الْبَوْلَىٰ وَنِعْمَ النَّصِيرُ ۝

व कातिलूहुम् हत्ता ला तकू-न
फ़िततुंव-व यकूनद्दीनु कुल्लुहू
लिल्लाहि फ़-इनित्तहौ फ़-इन्नल्ला-ह
बिमा यअूमलू-न बसीर (39) व इन्
तवल्लौ फ़अलमू अन्नल्ला-ह
मौलाकुम्, निअमल्-मौला व
निअमन्-नसीर (40)

और लड़ते रहो उनसे यहाँ तक कि न रहे
फ़साद और हो जाये हुक्म सब अल्लाह
का, फिर अगर वे बाज़ आ जायें तो
अल्लाह उनके काम को देखता है। (39)
और अगर वे न मानें तो जान लो कि
अल्लाह तुम्हारा हिमायती है, क्या ख़ूब
हिमायती है और क्या ख़ूब मददगार
है। (40)

खुलासा-ए-तफ़्सीर

और (फिर उनके इस काफ़िर रहने की सूरत में ऐ मुसलमानो!) तुम उन (अरब के काफ़िरों) से इस हद तक लड़ो कि उनमें अक़ीदे की ख़राबी (यानी शिक) न रहे, और (अल्लाह का) दीन (ख़ालिस) अल्लाह ही का हो जाये (और किसी के दीन का ख़ालिस अल्लाह ही के लिये हो जाना मौक़ूफ़ है इस्लाम क़बूल करने पर, तो हासिल यह हुआ कि शिक छोड़कर इस्लाम इख़्तियार करें। खुलासा यह कि अगर इस्लाम न लायें तो उनसे लड़ो जब तक इस्लाम न लायें, क्योंकि अरब के काफ़िरों से जिज़या नहीं लिया जाता)। फिर अगर ये (कुफ़ से) बाज़ आ जाएँ तो (इनके ज़ाहिरी इस्लाम को क़बूल करो, दिल का हाल मत टटोलो, क्योंकि अगर ये दिल से ईमान न लायेंगे तो) अल्लाह तआला इनके आमाल को ख़ूब देखते हैं (वह खुद समझ लेंगे तुमको क्या)। और अगर (इस्लाम से) मुँह मोड़ें तो (अल्लाह का नाम लेकर उनके मुक़ाबले से मत हटो और) यकीन रखो कि अल्लाह तआला (उनके मुक़ाबले में) तुम्हारा साथी है, वह बहुत अच्छा साथी है और बहुत अच्छा मददगार है (सो वह तुम्हारा साथ देगा और मदद करेगा)।

मअरिफ़ व मसाईल

यह सूर: अन्फ़ाल की उन्तालीसवीं आयत है। इसमें दो लफ़्ज़ क़ाबिले ग़ौर हैं- एक लफ़्ज़ फ़ितना दूसरा दीन। ये दोनों लफ़्ज़ अरबी लुग़त के एतिबार से कई मायने के लिये इस्तेमाल होते हैं।

तफ़सीर के इमामों सहाबा व ताबिईन से इस जगह दो मायने नक़ल किये गये हैं- एक यह कि फ़ितने से मुराद कुफ़्र व शिर्क और दीन से मुराद दीने इस्लाम लिया जाये। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से यही तफ़सीर मन्कूल है। इस तफ़सीर पर आयत के मायने यह होंगे कि मुसलमानों को काफ़िरों से लड़ाई उस वक़्त तक जारी रखनी चाहिये जब तक कि कुफ़्र मिटकर उसकी जगह इस्लाम आ जाये, इस्लाम के सिवा कोई दीन व मज़हब बाकी न रहे। इस सूरत में यह हुक्म सिर्फ़ मक्का वालों और अरब वालों के लिये मख़सूस होगा। क्योंकि अरब ख़िल्ला इस्लाम का घर है, उसमें इस्लाम के सिवा कोई दूसरा दीन रहे तो दीने इस्लाम के लिये ख़तरा है, बाकी सारी दुनिया में दूसरे धर्म और मज़ाहिब को कायम रखा जा सकता है। जैसा कि क़ुरआने करीम की दूसरी आयतें और हदीस की रिवायतें इस पर सुबूत और ग़वाह हैं।

और दूसरी तफ़सीर जो हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु वग़ैरह से मन्कूल है वह यह है कि फ़ितने से मुराद इस जगह वह तकलीफ़ और अज़ाब व मुसीबत है जिसका सिलसिला मक्का के काफ़िरों की तरफ़ से मुसलमानों पर हमेशा जारी रहा था, जब तक वे मक्का में थे तो हर वक़्त उनके घेरे में फंसे हुए तरह-तरह की तकलीफ़ें सहते रहे, फिर जब मदीना तय्यिबा की तरफ़ हिजरत की तो एक-एक मुसलमान का पीछा करके उसको क़त्ल व ग़ारत करते रहे, मदीना में पहुँचने के बाद भी पूरे मदीने पर हमलों की सूरत में उनका गुस्सा व आक्रोश ज़ाहिर होता रहा।

और इसके उलट और विपरीत दीन के मायने छा जाने और ग़ालिब आने के हैं। इस सूरत में आयत की तफ़सीर यह होगी कि मुसलमानों को काफ़िरों से उस वक़्त तक जंग करते रहना चाहिये जब तक कि मुसलमान उनके जुल्म व अत्याचारों से सुरक्षित न हो जायें और दीने इस्लाम का ग़लबा न हो जाये, कि वह ग़ैरों के जुल्म व सितम से मुसलमानों की हिफ़ाज़त कर सके। हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के एक वाक़िए से भी इस तफ़सीर की ताईद होती है। वाक़िआ यह है कि जब अमीरे मक्का हज़रत अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु के मुक़ाबले में हज्जाज बिन यूसुफ़ ने फौजी चढ़ाई की और दोनों तरफ़ मुसलमानों की तलवारें मुसलमानों के मुक़ाबले पर चल रही थीं तो दो शख्स हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के पास हाज़िर हुए और कहा कि इस वक़्त जिस बला (मुसीबत) में मुसलमान मुब्तला हैं आप देख रहे हैं, हालाँकि आप उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अन्हु के बेटे हैं जो किसी तरह ऐसे फ़ितनों को बरदाश्त करने वाले न थे। क्या सबब है कि आप इस फ़ितने को दूर करने के लिये मैदान में नहीं आते? तो हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि सबब यह है कि अल्लाह तआला ने किसी मुसलमान का ख़ून बहाना हराम करार दिया है। उन दोनों ने अर्ज़ किया कि क्या आप क़ुरआन की यह आयत नहीं पढ़ते?

فَاتْلُوهُمْ حَتَّى لَا تَكُونَ فِتْنَةً

यानी जंग व क़िताल करते रहो यहाँ तक कि फ़ितना न रहे।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि बेशक मैं यह आयत पढ़ता हूँ और इस पर अमल भी करता हूँ। हमने इस आयत के मुताबिक़ काफ़िरों से फ़िताल (जंग) जारी रखा यहाँ तक कि फ़ितना ख़त्म हो गया और ग़लबा दीने इस्लाम का हो गया। और तुम लोग यह चाहते हो कि अब आपस में जंग करके फ़ितना फिर पैदा कर दो और ग़लबा ग़ैरुल्लाह का और दीने हक़ के खिलाफ़ का हो जाये। मतलब यह था कि जंग व जिहाद का हुक्म कुफ़्र के फ़ितने और काफ़िरों के जुल्मों के मुकाबले में था वह हम कर चुके और बराबर करते रहे यहाँ तक कि यह फ़ितना ख़त्म हो गया। मुसलमानों के आपसी गृहयुद्ध को इस पर क्यास करना सही नहीं, बल्कि मुसलमानों की आपसी जंग के वक़्त तो हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हिदायतें ये हैं कि उसमें बैठा रहने वाला खड़ा होने वाले से बेहतर है।

इस तफ़सीर का खुलासा यह है कि मुसलमानों पर इस्लाम के दुश्मनों के खिलाफ़ जंग व जिहाद उस वक़्त तक वाजिब है जब तक कि मुसलमानों पर उनके अत्याचारों और जुल्म व सितम का फ़ितना ख़त्म न हो जाये, और इस्लाम को सब धर्मों पर ग़लबा हासिल न हो जाये। और यह सूरत सिर्फ़ क़ियामत के निकट होगी इसलिये जिहाद का हुक्म क़ियामत तक जारी और बाकी है।

इस्लाम के दुश्मनों के खिलाफ़ जंग व जिहाद के नतीजे में दो सूरतें पैदा हो सकती थीं- एक यह कि वे मुसलमानों पर जुल्म व ज़्यादती से बाज़ आ जायें, चाहें इस तरह कि इस्लामी बिरादरी में दाख़िल होकर भाई बन जायें, या इस तरह कि अपने मज़हब पर रहते हुए मुसलमानों पर जुल्म व सितम से बाज़ आ जायें और इताअत (फ़रमाँबरदारी) का समझौता कर लें।

दूसरे यह कि वे इन दोनों सूरतों में से किसी को क़ुबूल न करें और मुकाबले पर जमे रहें। अगली आयत में इन दोनों सूरतों के अहक़ाम बयान हुए हैं। इरशाद फ़रमाया:

فَإِنْ اتَّخَذُوا فَإِنَّ اللَّهَ بِمَا يَعْمَلُونَ بَصِيرٌ

यानी अगर वे बाज़ आ जायें तो अल्लाह तआला उनके आमाल को ख़ूब देखते हैं।

उसके मुताबिक़ उनके साथ मामला फ़रमायेंगे, जिसका हासिल यह है कि अगर वे बाज़ आ जायें तो उनके खिलाफ़ जिहाद को बन्द कर दिया जाये। इस सूरत में मुसलमानों को यह ख़तरा हो सकता था कि जंग व जिहाद के बाद काफ़िरों की तरफ़ से सुलह का समझौता या मुसलमान हो जाने का इज़हार बहुत मुम्किन है कि सिर्फ़ कोई जंगी चाल और धोखा हो, ऐसी सूरत में जंग बन्द कर देना मुसलमानों के लिये नुक़सानदेह हो सकता है। इसका जवाब इन अलफ़ाज़ से दिया गया कि मुसलमान तो ज़ाहिरी आमाल के पाबन्द हैं, दिलों का देखने वाला और उनके छुपे भेदों का जानने वाला सिर्फ़ अल्लाह तआला है। इसलिये जब वे मुसलमान होने का इज़हार करें या सुलह का समझौता कर लें तो मुसलमान इस पर मजबूर हैं कि जंग व जिहाद बन्द कर दें। रहा यह मामला कि उन्होंने सच्चे दिल से इस्लाम या सुलह को क़ुबूल किया है या उसमें धोखा है, इसको अल्लाह तआला ख़ूब देखते जानते हैं। अगर वे ऐसा करेंगे तो उसका दूसरा इन्तिज़ाम हो

जायेगा। मुसलमानों को इन ख्यालों और खतरों पर अपने मामलात की बुनियाद नहीं रखनी चाहिये।

अगर इस्लाम के इजहार या सुलह के समझौते के बाद उन पर हाथ उठाया गया तो जिहाद करने वाले मुजरिम हो जायेंगे जैसा कि सही बुखारी व मुस्लिम की एक हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि मुझे इसका हुक्म दिया गया है कि मैं इस्लाम के दुश्मनों से जंग करता रहूँ यहाँ तक कि वे कलिमा ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुररसूलुल्लाह को कुबूल कर लें और नमाज़ कायम करें और ज़कात अदा करें, और जब वे ऐसा कर लें तो उनके खून और माल सब सुरक्षित हो जायेंगे, सिवाय इसके कि इस्लामी कानून के मातहत किसी जुर्म के नतीजे में उनको सज़ा दी जाये। और उनके दिलों का हिसाब अल्लाह पर रहेगा कि वे सच्चे दिल से इस कलिमे और इस्लाम के आमाल को कुबूल कर रहे हैं या निफ़ाक़ से (यानी सिर्फ़ दिखावे के लिये ज़बान से)।

दूसरी एक हदीस जो अबू दाऊद ने बहुत से सहाबा किराम की रिवायत से नक़ल की है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया- जो शख्स किसी समझौता करने वाले पर यानी उस शख्स पर जिसने इस्लामी हुक्मत के कानूनों के पालन और वफ़ादारी का समझौता कर लिया हो, कोई जुल्म करे या उसको नुक़सान पहुँचाये, या उससे कोई ऐसा काम ले जो उसकी ताक़त से ज़ायद है, या उसकी कोई चीज़ बग़ैर उसकी दिली रज़ामन्दी के हासिल करे तो मैं कियामत के दिन उस मुसलमान के खिलाफ़ उस समझौते वाले की हिमायत करूँगा।

कुरआन मजीद की उक्त आयत और हदीस की रिवायतों ने बज़ाहिर मुसलमानों को एक सियासी ख़तरे में मुब्तला कर दिया कि बड़े से बड़ा इस्लाम का दुश्मन जब उनकी ज़द में (हाथ के नीचे) आ जाये और सिर्फ़ जान बचाने के लिये इस्लाम का कलिमा पढ़ ले तो मुसलमानों पर लाज़िम कर दिया कि फ़ौरन अपना हाथ रोक लें। इस तरह तो वे किसी दुश्मन पर भी काबू नहीं पा सकते, मगर अल्लाह तआला ने उनके छुपे भेदों को अपने जिम्मे लेकर चमत्कारी अन्दाज़ में यह कर दिखाया कि अमली तौर पर मुसलमानों को किसी मैदाने जंग में ऐसा इम्तिहान पेश नहीं आया, अलबत्ता सुलह की हालत में सैकड़ों मुनाफ़िक़ पैदा हुए जिन्होंने धोखा देने के लिये अपने आपको मुसलमान ज़ाहिर किया और बज़ाहिर नमाज़ रोज़ा भी अदा करने लगे। उनमें से कुछ कम-ज़र्फ़ लोगों का तो इतना ही मक़सद था कि मुसलमानों से कुछ फ़ायदे हासिल कर लें और दुश्मनी करने के बावजूद उनके बदला लेने से बचे रहें। और कुछ वे भी थे जो सियासी मक़सद के लिये मुसलमानों के राज़ मालूम करने और मुख़ालिफ़ों से साज़िश करने के लिये ऐसा कर रहे थे, मगर अल्लाह तआला के कानून ने उन सब के बारे में मुसलमानों को यही हिदायत दी कि वे उनके साथ मुसलमानों जैसा मामला करें, जब तक खुद उनकी तरफ़ से इस्लाम-दुश्मनी और समझौते का उल्लंघन साबित न हो जाये।

कुरआन की यह तालीम तो उस सूरत में थी जबकि इस्लाम के दुश्मन अपनी दुश्मनी से बाज़ आ जाने का इक़रार और समझौता कर लें। और दूसरी सूरत यह है कि वे अपनी ज़िद

और दुश्मनी पर कायम रहें, इसके बारे में हुक्म इसके बाद की आयत में इरशाद फरमाया:

وَأَنْ تَوَلُّوا فَأَعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ مَوْلَاكُمْ. نِعَمَ الْمَوْلَى وَنِعَمَ النَّصِيرِ ۝

यानी अगर वे बात न मानें तो तुम यह समझ लो कि अल्लाह तआला तुम्हारा मददगार हिमायती है, और वह बहुत अच्छा हिमायती और बहुत अच्छा मददगार है।

इसका हासिल यह है कि अगर वे अपने जुल्म व ज़्यादती और कुफ़्र व शिर्क से बाज़ न आयें तो मुसलमानों के ज़िम्मे वही हुक्म है जो ऊपर बयान हुआ कि उनसे जंग जारी रखें। और जंग व जिहाद चूँकि बड़े लश्कर और बहुत से हथियारों और साज़ व सामान पर आदतन मौकूफ है और मुसलमानों को आम तौर पर ये चीज़ें कम हासिल थीं, इसलिये यह हो सकता था कि मुसलमानों को जंग का हुक्म भारी मालूम हो, या वे अपनी संख्या की कमी और सामान की कमी की वजह से यह महसूस करने लगें कि हम मुकाबले में कामयाब नहीं हो सकते। इसलिये इसका इलाज इस तरह किया गया कि मुसलमानों को बतलाया गया कि अगरचे संख्या और सामान उन लोगों के पास मुसलमानों से ज़्यादा हो मगर वे अल्लाह तआला की ग़ैबी मदद व हिमायत कहाँ से लायेंगे जो मुसलमानों को हासिल है, जिसको वे हर मैदान में अपने साथ महसूस करते और देखते रहे हैं। और फरमाया कि यूँ तो इमदाद व हिमायत दुनिया में हर फरीक किसी न किसी से हासिल कर ही लेता है मगर काम का मदार उस मददगार की ताक़त व कुव्वत और इल्म व तजुर्बे पर होता है। और यह ज़ाहिर है कि अल्लाह तआला की ताक़त व कुव्वत और जानने व देखने से ज़्यादा तो क्या बराबर भी सारे जहान को हासिल नहीं हो सकता, क्योंकि वह सबसे बेहतर हिमायती और मददगार है।

पारा नम्बर 10 (वअ़्लमू)

وَأَعْلَمُوا أَنَّمَا غَنِمْتُمْ مِنْ شَيْءٍ فَإِنَّ لِلَّهِ خُمُسَهُ وَلِلرَّسُولِ وَلِذِي الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسْكِينِ وَ
ابْنِ السَّبِيلِ إِن كُنْتُمْ أَمِنْتُمْ بِاللَّهِ وَمَا أُنْزِلْنَا عَلَىٰ عَبْدِنَا يَوْمَ الْفُرْقَانِ يَوْمَ التَّقَىٰ الْجَمْعِينَ
وَاللَّهُ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝

वअ़्लमू अन्नमा ग़निम्तुम् मिन्
शैइन् फ-अन्-न लिल्लाहि ख़ुमु-सहू
व लिर्सूलि व लिज़िल्कुरबा वल्यतामा
वल्मसाकीनि वब्निस्सबीलि इन् कुन्तुम्
आमन्तुम् बिल्लाहि व मा अन्ज़ल्ना

और जान रखो कि जो कुछ तुमको
ग़नीमत मिले किसी चीज़ से सो अल्लाह
के वास्ते है उसमें से पाँचवाँ हिस्सा और
रसूल के वास्ते और उसके रिश्तेदारों के
वास्ते और यतीमों और मोहताजों और
मुसाफ़िरो के वास्ते, अगर तुमको यकीन

अला अब्दिना यौमल्-फुरकानि
यौमल्-तकल्जम्आनि, वल्लाहु अला
कुल्लि शैइन् कदीर (41)

है अल्लाह पर और उस चीज़ पर जो हम
ने उतारी अपने बन्दे पर फैसले के दिन,
जिस दिन भिड़ गई दोनों फौजें, और
अल्लाह हर चीज़ पर कादिर है। (41)

खुलासा-ए-तफसीर

और (इस बात को) जान लो कि जो चीज़ (काफ़िरों से) ग़नीमत के तौर पर तुमको हासिल हो तो (उसका हुक्म यह है कि) (उसके कुल पाँच हिस्से किये जायें, जिनमें से चार हिस्से तो मुजाहिदीन का हक है और एक हिस्सा यानी) उसका पाँचवाँ हिस्सा (फिर पाँच हिस्सों पर तकसीम होगा जिनमें से एक तो) अल्लाह का और उसके रसूल का है (यानी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मिलेगा, जिनको देना गोया ऐसा ही है जैसे कि अल्लाह तआला के हुजूर में पेश कर दिया) और (एक हिस्सा) आपके रिश्तेदारों का है, और (एक हिस्सा) यतीमों का है, और (एक हिस्सा) ग़रीबों का है, और (एक हिस्सा) मुसाफ़िरों का है, अगर तुम अल्लाह पर यकीन रखते हो और उस चीज़ पर (यकीन रखते हो) जिसको हमने अपने बन्दे (मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) पर फैसले के दिन (यानी) जिस दिन कि (बदर में) (मोमिनों व काफ़िरों की) दोनों जमाअतें आपस में आमने-सामने हुई थीं, नाज़िल फ़रमाया था। (इससे मुराद फ़रिश्तों के माध्यम से ग़ैबी मदद है, यानी अगर हम पर और हमारे ग़ैबी इनामात पर यकीन रखते हो तो इस हुक्म को जान लो और अमल करो। यह इसलिये बढ़ा दिया कि पाँचवाँ हिस्सा निकालना भारी और नागवार न हो, और यह समझ लें कि यह सारी ग़नीमत अल्लाह ही की इमदाद से तो हाथ आई, फिर अगर हमको एक पाँचवाँ हिस्सा न मिला तो क्या हुआ, वो चार पाँचवे हिस्से भी तो हमारी क़ुदरत से ख़ारिज थे बल्कि सिर्फ़ अल्लाह की क़ुदरत से हासिल हुए) और अल्लाह तआला (ही) हर चीज़ पर पूरी क़ुदरत रखने वाले हैं (फिर तुम्हारा तो इतना भी हक़ न बनता था, यह भी बहुत मिल गया)।

मआरिफ़ व मसाईल

इस आयत में ग़नीमत के माल के अहक़ाम और उसकी तकसीम का क़ानून बयान हुआ है। इससे पहले चन्द ज़रूरी अलफ़ाज़ की वज़ाहत सुन लीजिए।

लफ़्ज़ ग़नीमत लुग़त में उस माल के लिये बोला जाता है जो दुश्मन से हासिल किया जाये। शरीअत की इस्तिलाह में ग़ैर-मुस्लिमों से जो माल जंग व लड़ाई और फ़तह व ग़लबे के ज़रिये हासिल हो उसको ग़नीमत कहते हैं, और जो सुलह व रज़ामन्दी से हासिल हो जैसे जिज़्या व ख़िराज (टैक्स) वग़ैरह उसको फ़ै कहा जाता है। क़ुरआने करीम में इन्हीं दो लफ़्ज़ों से इन दोनों किस्मों के अहक़ाम बतलाये गये हैं। सूर: अनफ़ाल में माले ग़नीमत के अहक़ाम का ज़िक्र है जो

जंग व लड़ाई के वक़्त ग़ैर-मुस्लिमों से हासिल हो।

यहाँ सबसे पहले एक बात पेशे नज़र रहनी चाहिये, वह यह कि इस्लामी और कुरआनी नज़रिये के मुताबिक़ तमाम कायनात की असली मिल्कियत सिर्फ़ उस ज़ाते हक़ तआला की है जिसने उन्हें पैदा किया है, इनसान की तरफ़ किसी चीज़ की मिल्कियत का सिर्फ़ एक ही तरीक़ा है कि अल्लाह तआला ने अपने क़ानून के ज़रिये किसी शख्स की मिल्कियत करार दे दी हो। जैसे सूर: यासीन में चौपाये जानवरों के ज़िक्र में इरशाद फ़रमाया:

أَوَلَمْ يَرَوْا أَنَّا خَلَقْنَا لَهُمْ مِمَّا عَمِلَتْ أَيْدِينَا أَنْعَامًا فَهُمْ لَهَا مَالِكُونَ.

यानी क्या ये लोग नहीं देखते कि चौपायों को हमने अपने हाथों से बनाया, फिर लोग उनके मालिक बन गये। मतलब यह है कि उनकी मिल्कियत ज़ाती नहीं, हमने अपने फ़ज़ल से उनको मालिक बना दिया।

जब कोई कौम अल्लाह तआला से बगावत करती है यानी कुफ़्र व शिर्क में मुब्तला हो जाती है तो पहले हक़ तआला उनकी इस्लाह (सुधार) के लिये अपने रसूल और किताबें भेजते हैं, जो बदबख़्त अल्लाह के इस इनाम से भी मुतास्सिर नहीं होते तो अल्लाह तआला अपने रसूलों को उनके मुक़ाबले में जंग व जिहाद का हुक्म दे देते हैं, जिसका हासिल यह होता है कि उन बाग़ियों के जान व माल सब मुबाह (हलाल व जायज़) कर दिये गये, उनको अल्लाह तआला के दिये हुए मालों से नफ़ा उठाने का हक़ नहीं रहा, बल्कि उनके माल सरकार के हक़ में ज़ब्त हो गये। उन्हीं ज़ब्त हुए मालों का दूसरा नाम माल-ए-ग़नीमत है। जो काफ़िरों की मिल्कियत से निकलकर ख़ालिस हक़ तआला की मिल्कियत में रह गये।

उन ज़ब्त हुए मालों के लिये पुराने ज़माने से हक़ तआला का क़ानून यह रहा है कि उनसे किसी को फ़ायदा उठाने की इजाज़त नहीं होती थी बल्कि ऐसे मालों को जमा करके किसी खुली जगह रख दिया जाता और आसमान से एक बिजली आकर उनको जला देती थी। यही पहचान होती थी उस जिहाद के कुबूल होने की।

खातमुल-अम्बिया हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को चन्द खुसूसियतें हक़ तआला की तरफ़ से अता हुई, उनमें एक यह भी है कि माले ग़नीमत आपकी उम्मत के लिये हलाल कर दिया गया (जैसा कि मुस्लिम शरीफ़ की हदीस में है)। और हलाल भी ऐसा कि उसको तमाम मालों से पाक और बेहतरीन माल कहा जाता है। वजह यह है कि जो माल इनसान अपनी मेहनत और कमाई से हासिल करता है उसमें इनसानों की मिल्कियत से वास्ता दर वास्ता मुन्ताकिल होकर एक माल उसकी मिल्कियत में आता है और उन वास्तों में हराम व नाजायज़ या बुरे तरीक़ों का शुब्हा व गुमान रहता है, बख़िलाफ़ माले ग़नीमत के कि काफ़िरों की मिल्कियत उनसे ख़त्म होकर डायरेक्ट हक़ तआला की मिल्कियत रह गयी और अब जिसको मिलता है डायरेक्ट हक़ तआला की मिल्कियत से मिलता है, जिसमें कोई शुब्हा और हराम होने या बुरा होने का गुमान नहीं रहता। जैसे कुएँ से निकाला हुआ पानी या खुद अपने आप उगी

हुई घास जो डायरेक्ट हक़ तअ़ाला का इनाम इनसान को मिलता है कोई इनसानी वास्ता (माध्यम) दरमियान में नहीं होता।

खुलासा-ए-कलाम यह है कि माले ग़नीमत जो पिछली उम्मतों के लिये हलाल नहीं था उसे उम्मत मुहम्मदिया के लिये इनाम के तौर पर हलाल कर दिया गया। ज़िक्र हुई आयत में उसकी तक़सीम का ज़ाब्त (क़ानून) इस उनवान से बयान फ़रमाया गया है कि:

وَأَعْلَمُوا أَنَّمَا غَنِمْتُمْ مِّن شَيْءٍ

इसमें अरबी लुग़त के कायदे के एतिबार से अब्बल तो लफ़ज़ 'मा' आम होने पर दलालत करता है, फिर उस उमूम की अतिरिक्त ताकीद के लिये लफ़ज़ 'मिन शैईन' बढ़ाया गया, जिसके मायने यह है कि जो कुछ छोटी बड़ी चीज़ माले ग़नीमत में हासिल हो वह सब इसी क़ानून के तहत दाख़िल है, किसी चीज़ को मामूली या छोटा समझकर कोई शख्स तक़सीम के क़ानून के अलावा अगर ले लेगा तो वह सख़्त मुजरिम क़रार पायेगा। इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि एक सूई और उसका धागा भी जो माले ग़नीमत का हिस्सा हो किसी के लिये उसका बग़ैर अपने शरई हिस्से के ले लेना जायज़ नहीं। और माले ग़नीमत में से कोई चीज़ बग़ैर हिस्से के लेने को हदीस में "ग़लूल" फ़रमाकर उस पर सख़्त वईद (सज़ा की धमकी और डाँट) फ़रमाई है, और आम चोरी से ज़्यादा सख़्त हराम क़रार दिया है।

तक़सीम (बंटवारे) का क़ानून यह उनवान देकर तमाम मुजाहिद मुसलमानों को इससे बाख़बर कर दिया गया कि अल्लाह तअ़ाला ने यह माल तुम्हारे लिये हलाल कर दिया है मगर एक खास ज़ाब्त (उसूल) के तहत हलाल है, उसके ख़िलाफ़ अगर कोई लेगा तो वह जहन्नम का एक अंगारा होगा।

क़ुरआनी क़ानून का यही वह इम्तियाज़ (ख़ूबी और विशेषता) है जो दुनिया के दूसरे क़ानूनों को हासिल नहीं। और यही क़ानूने क़ुरआनी की कामिल तासीर और कामयाबी का असली राज़ है कि पहले ख़ौफ़े खुदा व आख़िरत को सामने करके उससे डराया गया, दूसरे नम्बर में क़ानूनी सज़ायें भी जारी की गयीं।

वरना ग़ौर का मक़ाम है कि ऐन मैदाने जंग की अफ़रा-तफ़री के वक़्त जो माल ग़ैर-मुस्लिमों के कब्ज़े से हासिल किये जायें, जिनकी तफ़सील न पहले से मुसलमानों के अमीर के इल्म में है न किसी दूसरे के, और मौका मैदाने जंग का है जो उमूमन जंगल और बयाबान होते हैं, जिनमें छुपने-छुपाने के हज़ारों मौके होते हैं, सिर्फ़ क़ानून के जोर से उन मालों की हिफ़ाज़त किसी के बस में नहीं, सिर्फ़ खुदा व आख़िरत का ख़ौफ़ ही वह चीज़ थी जिसने एक-एक मुसलमान को उन मालों में मामूली सा तसरुफ़ (उलट-फेर) करने से बाज़ रखा।

अब तक़सीम और बंटवारे के इस ज़ाब्त (क़ानून) को देखिये। इरशाद फ़रमाया:

فَإِنَّ لِلَّهِ خُمُسَهُ وَلِلرَّسُولِ وَلِلَّذِي الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسْكِينِ وَابْنِ السَّبِيلِ

यानी माले ग़नीमत का पाँचवाँ हिस्सा अल्लाह का और उसके रसूल का और उसके

रिश्तेदारों का और यतीमों, मिस्कीनों, मुसाफिरों का है।

यहाँ पहले तो यह बात ध्यान देने के काबिल है कि ज़ाब्ता (कानून और उसूल) पूरे माले ग़नीमत की तकसीम का बयान हो रहा है मगर कुरआन ने सिर्फ उसके पाँचवें हिस्से की तकसीम का ज़ाब्ता यहाँ ज़िक्र फरमाया, बाकी चार हिस्सों का कोई ज़िक्र नहीं किया गया। इसमें क्या राज़ है और बाकी चार हिस्सों की तकसीम का क्या कानून है? लेकिन कुरआन में गौर व ख़ौज़ करने से इन दोनों बातों का जवाब इन्हीं लफ़्ज़ों से निकल आता है कि कुरआने करीम ने जिहाद करने वाले मुसलमानों को ख़िताब करके फरमाया- 'मा ग़निमतुम' यानी जो कुछ तुमने ग़नीमत में हासिल किया। इसमें इशारा पाया जाता है कि यह माल उन हासिल करने वालों का हक़ है और इसके बाद जब यह इरशाद फरमा दिया कि उसमें से पाँचवाँ हिस्सा अल्लाह और रसूल वगैरह का है तो इसका नतीजा साफ़ यह निकल आया कि बाकी चार हिस्से ग़नीमत हासिल करने वाले यानी मुजाहिदीन के हैं। जैसे कुरआने करीम के कानूने विरासत में एक जगह इरशाद है:

وَوَرَثَةُ آبَائِهِ فَلِلَّهِ

यानी जब किसी शख्स के वारिस उसके माँ-बाप हों तो माँ का तीसरा हिस्सा है। यहाँ भी सिर्फ माँ के ज़िक्र पर बस किया गया, जिससे मालूम हुआ कि बाकी दो हिस्से बाप का हक़ हैं। इसी तरह 'मा ग़निमतुम' के बाद जब सिर्फ पाँचवें हिस्से को अल्लाह के लिये रखा गया तो मालूम हुआ कि बाकी चार हिस्से मुजाहिदीन का हक़ हैं। फिर रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बयान और अमल ने इसको और इसकी पूरी तफ़सीलात को वाज़ेह कर दिया कि ये चार हिस्से मुजाहिदीन में एक खास कानून के तहत तकसीम फरमाये।

अब उस पाँचवें हिस्से की तफ़सील सुनिये जिसको कुरआने करीम ने इस आयत में मुतैयन फरमा दिया है। कुरआनी अलफ़ाज़ में इस जगह छह अलफ़ाज़ बयान हुए हैं:

لِلَّهِ، لِلرَّسُولِ، لِلذِّى الْقَرْبَىٰ، الْيَتَامَىٰ، الْمَسَاكِينِ، وَإِنَّ السَّبِيلِ

इसमें लफ़्ज़ 'लिल्लाहि' तो बड़ा और मुख्य उनवान है उन खर्च की जगहों का जिनमें यह पाँचवाँ हिस्सा तकसीम होगा, यानी ये सब मौके ख़ालिस अल्लाह के लिये हैं। और इस लफ़्ज़ के इस जगह लाने में एक खास हिकमत है जिसकी तरफ़ तफ़सीरे मज़हरी में इशारा किया गया है। वह यह कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आपके ख़ानदान के लिये सदकों का माल हराम करार दिया है कि वह आपकी शान के लायक नहीं, क्योंकि आम लोगों के मालों को पाक करने के लिये उनमें से निकाला हुआ हिस्सा है जिसको हदीस में "औसाखुन्नास" फरमाया है, यानी लोगों का मैल-कुचैल। वह शाने नुबुव्वत के लायक नहीं।

माले ग़नीमत के पाँचवें हिस्से में से चूँकि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आपके ख़ानदान को भी कुरआन की इस आयत ने हिस्सा दिया है इसलिये इस पर सचेत किया गया कि यह हिस्सा लोगों की मिल्कियत से मुन्तकिल होकर नहीं आया बल्कि डायरेक्ट अल्लाह तआला शानुहू की तरफ़ से है। जैसा कि अभी ज़िक्र किया गया है कि माले ग़नीमत काफ़िरों की

मिल्क से निकलकर डायरेक्ट हक़ तआला की ख़ालिस मिल्कियत हो जाता है, फिर अल्लाह तआला की तरफ़ से इनाम के तौर पर तकसीम होता है। इसलिये इस बात की तरफ़ इशारा करने के लिये कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और “आपके रिश्तेदारों” को जो हिस्सा माले ग़नीमत के पाँचवें हिस्से में से दिया गया है वह लोगों के सदक़े का नहीं बल्कि डायरेक्ट हक़ तआला की तरफ़ से फ़ज़ल व इनाम है। आयत के शुरू में फ़रमाया गया ‘लिल्लाहि’ यानी यह सब माल असल में ख़ालिस मिल्कियत अल्लाह तआला की है, उसी के फ़रमान के मुताबिक़ उक्त ख़र्च की जगहों में ख़र्च किया जायेगा।

इसलिये इस खुम्स (पाँचवें हिस्से) के ख़र्च करने के असली मौक़े पाँच रह गये- रसूल, रिश्तेदार, यतीम, मिस्कीन, मुसाफ़िर। फिर इनमें पात्रता के दर्जे अलग-अलग और भिन्न हैं। क़ुरआने करीम के बयान की ख़ूबी और स्पष्टता देखिये कि इन पात्रता के दर्जों का फ़र्क़ किस बारीक़ और लतीफ़ अन्दाज़ से ज़ाहिर फ़रमाया गया है, कि इन पाँच में से पहले दो पर हर्फ़ लाम लाया गया - ‘लिर्सूलि’, व ‘लिज़िलक़ुरबा’ और बाकी तीन किस्मों को बग़ैर हर्फ़ लाम के आपस में एक दूसरे से जोड़कर ज़िक़र कर दिया गया।

हर्फ़ लाम अरबी भाषा में किसी खुसूसियत (विशेषता) के इज़हार के लिये इस्तेमाल किया जाता है। लफ़ज़ ‘लिल्लाहि’ में हर्फ़ लाम मिल्कियत को ख़ास करने के बयान के लिये है, कि असल मालिक सब चीज़ों का अल्लाह तआला है। और लफ़ज़ ‘लिर्सूलि’ में पात्रता की खुसूसियत (विशेषता) का बयान मक़सूद है कि अल्लाह तआला ने माले ग़नीमत के पाँचवें हिस्से के ख़र्च करने और तकसीम करने का हक़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को अता फ़रमाया। जिसका हासिल इमाम तहावी की तहकीक़ और तफ्सीरे मज़हरी की तकरीर के मुताबिक़ यह है कि अगरचे इस जगह खुम्स (पाँचवे हिस्से) के ख़र्च के मौक़ों और स्थानों में पाँच नामों का ज़िक़र है लेकिन दर हकीक़त इसमें पूरा इख़्तियार नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हासिल है कि आप अपनी मर्ज़ी और बेहतर समझने के मुताबिक़ इन पाँच किस्मों में ग़नीमत के पाँचवे हिस्से को ख़र्च फ़रमायें जैसा कि सूर: अनफ़ाल की पहली आयत में पूरे माले ग़नीमत का हुक्म यही था कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपनी मर्ज़ी और बेहतर समझने के मुताबिक़ जहाँ चाहें ख़र्च फ़रमायें, जिसको चाहें दें। आयत “वज़लमू अन्नमा ग़निमतुम.....” ने कुल माले ग़नीमत के पाँच हिस्से करके चार को मुजाहिदीन का हक़ करार दे दिया मगर पाँचवाँ हिस्सा बदस्तूर उसी हुक्म में रहा कि उसका ख़र्च करना रसूलुल्लाह की मर्ज़ी पर छोड़ा गया, सिर्फ़ इतनी बात का इज़ाफ़ा हुआ कि उस पाँचवें हिस्से के पाँच मसारिफ़ (ख़र्च के मौक़े) बयान कर दिये गये कि ये उनमें सीमित रहेगा। मगर मुहक्किकीन की अक्सर जमाअत के नज़दीक़ आपके ज़िम्मे यह लाज़िम नहीं था कि उस खुम्स के पाँच हिस्से बराबर करें और आयत में दर्ज हुई पाँचों किस्मों में बराबर तकसीम करें, बल्कि सिर्फ़ इतना ज़रूरी था कि ग़नीमत के पाँचवे हिस्से को इन्हीं पाँच किस्मों के अन्दर सब को या कुछ को अपनी मर्ज़ी और बेहतर समझने के मुताबिक़ अता फ़रमायें।

इसकी सबसे बड़ी स्पष्ट दलील खुद इस आयत के अलफाज और उनमें बयान की हुई खर्च करने की जगहों की किस्में हैं कि ये सब किस्में अमली तौर पर अलग-अलग नहीं बल्कि आपस में साझा और संयुक्त भी हो सकती हैं, मसलन जो शख्स रिश्तेदारों में दाखिल है वह यतीम भी हो सकता है, मिस्कीन और मुसाफिर भी। इसी तरह मिस्कीन और मुसाफिर यतीम भी हो सकते हैं और रिश्तेदार भी, जो मिस्कीन है वह मुसाफिर की फेहरिस्त में भी आ सकता है। अगर इन सब किस्मों में अलग-अलग बराबर तकसीम कराना मकसूद होता तो ये किस्में ऐसी होनी चाहिये थीं कि एक किस्म का आदमी दूसरी किस्म में दाखिल न हो, वरना फिर यह लाज़िम आयेगा कि जो करीबी रिश्तेदारों में से है और वह यतीम भी है मिस्कीन भी मुसाफिर भी तो उसको हर हैसियत से एक-एक हिस्सा मिलाकर चार हिस्से दिये जायें, जैसा कि मीरास की तकसीम का यही कायदा है कि एक शख्स को मय्यित के साथ विभिन्न किस्म की निकटतायें (रिश्तेदारियाँ) हासिल हैं तो हर रिश्ते का हिस्सा उसको अलग मिलता है, और उम्मत में इसका कोई कायल नहीं कि एक शख्स को चार हिस्से दिये जायें। इससे मालूम हुआ कि मकसूद इस आयत का हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर यह पाबन्दी आयद करना नहीं है कि इन सब किस्मों को ज़रूर ही दें और बराबर दें, बल्कि मकसूद यह है कि ग़नीमत के पाँचवे हिस्से का माल इन पाँच किस्मों में से जिस किस्म पर जितना खर्च करना आपकी राय में मुनासिब हो उतना दे दें।

(तफसीरे मज़हरी)

यही वजह है कि हज़रत फ़ातिमा ज़हरा रज़ियल्लाहु अन्हा ने जब इस खुम्स (माले ग़नीमत के पाँचवे हिस्से) में से एक खादिम का सवाल हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में पेश किया और घर के कामों में अपनी मेहनत व मशवक़त और कमज़ोरी का सबब भी ज़ाहिर किया तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह उज़्र फ़रमाकर उनको देने से इनकार कर दिया कि मेरे सामने तुम्हारी ज़रूरत से ज़्यादा सुपफ़ा वाले सहाबा की ज़रूरत है, जो बहुत ही ज़्यादा ग़रीबी और तंगी में मुब्तला हैं, उनको छोड़कर मैं तुम्हें नहीं दे सकता।

(सही बुख़ारी व मुस्लिम)

इससे वाज़ेह हो गया कि हर एक किस्म का अलग हक़ नहीं था वरना करीबी रिश्तेदारों के हक़ में हज़रत फ़ातिमा ज़हरा रज़ियल्लाहु अन्हा से कौन मुक़द्दम (पहले और आगे) होता। बल्कि यह सब खर्च करने की जगहों का बयान है पात्रता और हक़दार बनने का बयान नहीं।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात

के बाद ग़नीमत के पाँचवे हिस्से की तकसीम

इमामों की अक्सरियत के नज़दीक ग़नीमत के पाँचवे हिस्से में जो हिस्सा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का रखा गया वह आपके नुबुव्वत व रिसालत के पद की बिना पर ऐसा ही था जैसे आपको खुसूसी तौर पर यह भी हक़ दिया गया था कि पूरे माले ग़नीमत में

आप अपने लिये कोई चीज़ चुन और छाँट करके ले लें जिसकी वजह से कुछ ग़नीमतों में से हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कुछ चीज़ें ली भी थीं। और ग़नीमत के पाँचवे हिस्से में से आप अपना और अपने घर वालों का खर्च अदा फ़रमाते थे। आपकी वफ़ात के बाद यह हिस्सा खुद-ब-खुद ख़त्म हो गया क्योंकि आपके बाद कोई रसूल व नबी नहीं।

खुम्स में करीबी रिश्तेदारों का हिस्सा

इसमें तो किसी का मतभेद नहीं कि फ़कीर और ग़रीब रिश्तेदारों का हक़ ग़नीमत के पाँचवे हिस्से में खर्च के दूसरे मौकों यानी यतीम, मिस्कीन, मुसाफ़िर से पहले है। क्योंकि रिश्तेदारों में के ग़रीब-ग़ुरबा की इमदाद ज़कात व सदकात से नहीं हो सकती, ज़कात व सदकों के दूसरे खर्च होने वाले मालों से भी हो सकती है (जैसा कि हिदाया में इसकी वज़ाहत की गयी है)। अलबत्ता मालदार रिश्तेदारों को उसमें से दिया जायेगा या नहीं, इसमें इमामे आजम अबू हनीफ़ा रह. का फ़रमाना यह है कि खुद हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम भी जो अपने करीबी रिश्तेदारों को अता फ़रमाते थे तो उसकी दो बुनियादें थीं- एक उनकी ज़रूरतमन्दी व तंगदस्ती, दूसरे दीन को कायम करने और इस्लाम की रक्षा में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की नुसरत व इमदाद। दूसरा सबब तो नबी करीम की वफ़ात के साथ ख़त्म हो गया सिर्फ़ पहला सबब तंगदस्ती व आवश्यकता वाला होना रह गया, इसकी बिना पर क़ियामत तक हर इमाम व अमीर उनको दूसरों से आगे और पहले रखेगा। (हिदाया, तफ़सीरे जस्सास) इमाम शाफ़ई रह. से भी यही कौल नक़ल किया गया है। (तफ़सीरे कुर्तुबी)

और कुछ फ़ुकहा (दीनी मसाल के माहिर उलेमा) के नज़दीक रिश्तेदारों वाला हिस्सा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिश्ते और निकटता के हिसाब से हमेशा के लिये बाकी है, जिसमें मालदार व ग़रीब सब शरीक हैं, अलबत्ता वक़्त का हाकिम अपनी राय और बेहतर समझने के मुताबिक़ उनको हिस्सा देगा। (तफ़सीरे मज़हरी)

और असल चीज़ इस मामले में ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन का अमल है कि उन्होंने हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद क्या अमल किया। हिदाया के लेखक ने इसके मुताल्लिक़ लिखा है:

ان الخلفاء الاربعة الراشدين قسموه على ثلاثة اسهم.

चारों ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन (यानी हज़रत अबू बक्र, हज़रत उमर, हज़रत उस्मान और हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हुम) ने हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद ग़नीमत के पाँचवे हिस्से को सिर्फ़ तीन किस्मों में तक्सीम फ़रमाया है- यतीम, मिस्कीन, फ़कीर।

अलबत्ता हज़रत फ़ारूक़े आजम रज़ियल्लाहु अन्हु से साबित है कि नबी करीम के ग़रीब रिश्तेदारों को ग़नीमत के पाँचवे हिस्से में से दिया करते थे। (अबू दाऊद) और ज़ाहिर है कि यह ख़ुम्सियत सिर्फ़ फ़ारूक़े आजम रज़ियल्लाहु अन्हु की नहीं दूसरे ख़ुलफ़ा का भी यही अमल होगा।

और जिन रिवायतों से यह साबित है कि सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु और फारूके आजम रज़ियल्लाहु अन्हु अपने आखिरी ज़माना-ए-ख़िलाफ़त तक नबी करीम के रिश्तेदारों का हक़ निकालते थे और हज़रत अली कर्मल्लाहु वज्हू को उसका मुतवल्ली (ज़िम्मेदार) बनाकर रिश्तेदारों में तक़सीम कराते थे। (किताबुल-ख़िराज, इमाम अबू यूसुफ़) तो यह इसके विरुद्ध नहीं है कि वह तक़सीम रिश्तेदारों में के ग़रीबों के लिये ख़ास हो। वल्लाहु सुब्हानहू व तआला आलम।

फ़ायदा: ज़विल-क़ुरबा (रिश्तेदारों में कौन लोग शामिल हैं इस) का निर्धारण खुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने अमल से इस तरह फ़रमा दिया कि बन्ू हाशिम (हाशिम की औलाद) तो आपका अपना क़बीला ही था, बन्ू मुत्तलिब (मुत्तलिब की औलाद) को भी उनके साथ इसलिये शामिल फ़रमा लिया था कि ये लोग भी इस्लाम से पहले और इस्लाम के आने के बाद कभी बन्ू हाशिम से अलग नहीं हुए यहाँ तक कि मक्का के क़ुरैश ने बन्ू हाशिम का जब खाने-पीने का बायकाट किया और उनको अबी तालिब की घाटी में बन्द कर दिया तो बन्ू मुत्तलिब को अगरचे क़ुरैश ने बायकाट में दाख़िल नहीं किया था मगर ये लोग अपनी रज़ामन्दी और खुशी से बायकाट में शरीक हो गये। (तफ़सीरे मज़हरी)

बदर की लड़ाई के दिन को यौमुल-फ़ुरक़ान फ़रमाया गया

ऊपर बयान हुई आयत में बदर के दिन को यौमुल-फ़ुरक़ान फ़रमाया है, वजह इसकी यह है कि सबसे पहले माही और ज़ाहिरी तौर पर मुसलमानों की खुली फ़तह और काफ़िरों की सबक़ लेने वाली शिकस्त उस दिन में होने की बिना पर कुफ़्र व इस्लाम का ज़ाहिरी फैसला भी उस दिन हो गया।

إِذْ أَنْتُمْ بِالْعُدُوَّةِ الدِّينِ وَأَنْتُمْ بِالْعُدُوَّةِ الْقُصُوءِ وَالرَّكْبِ أَسْفَلَ مِنْكُمْ وَلَوْ تَوَاعَدْتُمْ لَأَخْتَلَفْتُمْ فِي الْبَيْعِ وَلَكِنْ لَيَقْضَى اللَّهُ أَمْرًا كَانَ مَفْعُولًا لِيَهْلِكَ مَنْ هَلَكَ عَنْ بَيِّنَةٍ وَيَحْيَى مَنْ حَيَّ عَنْ بَيِّنَةٍ وَإِنَّ اللَّهَ لَسَبِيْعٌ عَلِيمٌ ۝ إِذْ يُرِيكُهُمُ اللَّهُ فِي مَنَامِكَ قَلِيلًا وَلَوْ أَرَاكَهُمْ كَثِيرًا لَفَشَيْتُمْ وَلَتُنَازِعْتُمْ فِي الْأَمْرِ وَلَكِنَّ اللَّهَ سَلَّمَ إِنَّهُ عَلِيمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ۝ وَإِذْ يُرِيكُمُوهُمْ إِذِ التَّفَقُّتُمْ فِي أَعْيُنِكُمْ قَلِيلًا وَيُقَلِّلُكُمْ فِي أَعْيُنِهِمْ لِيَقْضَى اللَّهُ أَمْرًا كَانَ مَفْعُولًا وَإِلَى اللَّهِ تُرْجَعُ الْأُمُورُ ۝

इज़् अन्तुम् बिल्अुद्वतिदुन्या व
हुम् बिल्अुद्वतिल्-कुस्वा वर्क्बु

जिस वक़्त तुम थे इस किनारे पर और वे
उस किनारे पर और काफ़िला नीचे उतर
गया था तुम से, और अगर तुम आपस

अस्फ़-ल मिन्कुम्, व लौ तवाअत्तुम्
 लख़त-लफ़्तुम् फ़िल्मीआदि व
 लाकिल्-लियदिजयल्लाहु अम्रन्
 का-न मफ़अूलल्-लियह्लि-क मन्
 ह-ल-क अम्-बय्यि-नतिव्-व यस्या
 मन् हय्-य अम्बय्यि-नतिन्, व
 इन्नल्ला-ह ल-समीअुन् अलीम (42)
 इज़् युरीकहुमुल्लाहु फी मनामि-क
 कलीलन्, व लौ अराकहुम् कसीरल्
 ल-फ़शिल्तुम् व ल-तनाजअ्तुम्
 फ़िल् अम्रि व लाकिन्नल्ला-ह
 सल्ल-म, इन्नहू अलीमुम्-बिज़ातिस-
 -सुदूर (43) व इज़् युरीकुमूहूम्
 इजिल्तकैतुम् फी अअ्युनिकुम्
 कलीलं-व युक्लिल्लुकुम् फी
 अअ्युनिहिम् लि-यदिजयल्लाहु
 अम्रन् का-न मफ़अूलन्, व इलल्लाहि
 तुरजअुल्-उमूर (44) ❀

में वायदा करते तो न पहुँचते वायदे पर
 एक साथ लेकिन अल्लाह को कर डालना
 था एक काम को जो मुकर्रर हो चुका था,
 ताकि मरे जिसको मरना है हुज्जत
 (दलील) कायम होने के बाद और जिये
 जिसको जीना है हुज्जत कायम होने के
 बाद, और बेशक अल्लाह सुनने वाला
 जानने वाला है। (42) जब अल्लाह ने वे
 काफ़िर दिखलाये तुझको तेरे सपने में
 थोड़े, और अगर तुझको बहुत दिखला
 देता तो तुम लोग नामर्दी करते और
 झगड़ा डालते काम में, लेकिन अल्लाह ने
 बचा लिया, उसको ख़ूब मालूम है जो
 बात है दिलों में। (43) और जब तुमको
 दिखलाई वह फौज मुकाबले के वक़्त
 तुम्हारी आँखों में थोड़ी और तुमको थोड़ा
 दिखलाया उनकी आँखों में, ताकि कर
 डाले अल्लाह एक काम जो मुकर्रर हो
 चुका था, और अल्लाह तक पहुँचता है
 हर काम। (44) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

(यह वह वक़्त था कि) जब तुम (उस मैदान के) इधर वाले किनारे पर थे और वे लोग
 (यानी काफ़िर उस मैदान के) उधर वाले किनारे पर थे (इधर वाले से मुराद मदीना से नज़दीक
 का मौका और उधर वाले से मुराद मदीना से दूर का मौका) और वह (कुरैश का) काफ़िला तुमसे
 नीचे की तरफ़ (बचा हुआ) था, (यानी समुद्र के किनारे-किनारे जा रहा था। हासिल यह कि पूरे
 जोश का सामान जमा हो रहा था कि दोनों आपस में आमने-सामने थे कि हर एक दूसरे को
 देखकर जोश में आये। उधर काफ़िला रास्ते ही में था जिसकी वजह से काफ़िरों के लश्कर को
 उसकी मदद का ख़्याल दिल में बैठा हुआ जिससे और जोश में ज्यादाती हो, गर्ज कि वह ऐसा

सख्त वक्त था, फिर भी खुदा तअाला ने तुम पर गैबी मदद नाज़िल की जैसा ऊपर इरशाद हुआ है “अन्ज़लना अला अब्दिना”) और (वह तो मस्तेहत यह हुई कि इतिफाकन मुकाबला हो गया करना) अगर (पहले से आदत व मामूल के अनुसार) तुम (और वे) (लड़ाई के लिये) कोई बात तय करते (कि फुल्लों वक्त लड़ेंगे) तो (मौजूदा हालात का तकाज़ा यह था कि) ज़रूर उस तय करने के बारे में तुममें मतभेद होता, (यानी चाहे सिर्फ़ मुसलमानों में आपस में इसलिये कि सामान और हथियारों की कमी थी, कोई कुछ कहता कोई कुछ कहता। और चाहे काफ़िरों के साथ झगड़ा व विवाद होता जिसकी वजह से इस तरफ़ सामान व हथियारों की कमी और उस तरफ़ मुसलमानों का रौब, बहरहाल दोनों तरह इस जंग की नौबत न आती। पस इस जंग के बाद जो फायदे सामने आये वो न आते जिनका बयान “ताकि मरे जिसको मरना है....” में आता है) लेकिन (अल्लाह तअाला ने ऐसा सामान कर दिया कि इसकी नौबत नहीं आई, बिना इरादे के लड़ाई ठन गयी) ताकि जो बात अल्लाह को कस्नी मन्ज़ूर थी उसको पूरी कर दे, यानी ताकि (हक़ का निशान ज़ाहिर हो जाये और) जिसको बरबाद (यानी गुमराह) होना है वह निशान आने के बाद बरबाद हो, और जिसको ज़िन्दा (हिदायत पाने वाला) होना है वह (भी) निशान आने के बाद ज़िन्दा हो, (मतलब यह कि अल्लाह तअाला को मन्ज़ूर था लड़ाई होना ताकि एक खास तरीक़े से इस्लाम का हक़ होना ज़ाहिर हो जाये कि इस क़द्र अफ़राद और सामान की कमी के बावजूद मुसलमान ग़ालिब आये जो कि आम मामूल के खिलाफ़ और एक चमत्कारी बात है, जिससे मालूम हुआ कि इस्लाम हक़ है। पस इससे अल्लाह की हुज्जत पूरी हो गयी। उसके बाद जो गुमराह होगा वह हक़ के स्पष्ट और वाज़ेह होने के बाद होगा, जिसमें अज़ाब का पूरा हक़दार होना ज़ाहिर हो गया और उज़्र की गुंजाईश ही न रही। इसी तरह जिसको हिदायत मिलनी होगी वह हक़ को कुबूल कर लेगा। लड़ाई की इस हिक़मत का खुलासा यह हुआ कि हक़ वाज़ेह हो जाये) और बेशक अल्लाह तअाला ख़ूब सुनने वाले, ख़ूब जानने वाले हैं (कि इस हक़ के स्पष्ट और वाज़ेह होने के बाद ज़बान और दिल से कौन कुफ़्र करता है और कौन ईमान लाता है)।

(और वह वक्त भी ज़िक्र करने के काबिल है) जब अल्लाह ने आपके सपने में आपको वे लोग कम दिखलाये (चुनाँचे आपने सहाबा को उस सपने की ख़बर की, उनके दिल ख़ूब मज़बूत हो गये) और अगर अल्लाह आपको उन लोगों को ज़्यादा करके दिखा देते (और आप सहाबा से फ़रमा देते) तो (ऐ सहाबा) तुम्हारी हिम्मतें हार जातीं, और इस मामले (यानी जंग) में तुम में आपस में झगड़ा (व मतभेद) हो जाता, लेकिन अल्लाह ने (उस कम-हिम्मती और झगड़े से तुमको) बचा लिया, बेशक वह दिलों की बात को ख़ूब जानता है। (उसको मालूम था कि इस तरह कमज़ोरी पैदा होगी और इस तरह मज़बूती, इसलिये ऐसी तदबीर की) और (सिर्फ़ सपने ही में आपको कम दिखलाने पर बस नहीं किया बल्कि हिक़मत को पूरा करने के लिये जागने की हालत में मुकाबले के वक्त मुसलमानों की नज़र में भी काफ़िर कम दिखलाई दिये जैसा कि इसके उलट भी हुआ जो कि हकीक़त के मुताबिक़ भी था, चुनाँचे फ़रमाते हैं कि उस वक्त को

याद करो) जबकि अल्लाह तुमको जबकि तुम आमने-सामने हुए, वे लोग तुम्हारी नज़र में कम करके दिखला रहे थे और (इसी तरह) उनकी निगाह में तुमको कम करके दिखला रहे थे, ताकि जो बात अल्लाह को करनी मन्ज़ूर थी उसको पूरा कर दे (जैसा कि पहले बयान हो चुका है कि जो मरे व मर जाये.....) और सब मुकद्दमे खुदा ही की तरफ लौटाये जाएँगे (वह हलाक होने वाले और जिन्दा रहने वाले यानी गुमराह और हिदायत पाने वाले को सज़ा व जज़ा देंगे)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

बदर की लड़ाई कुफ़ व इस्लाम का वह पहला मुकाबला और जंग थी जिसने ज़ाहिरी और माही तौर पर भी इस्लाम की बरतरी और हक्कानियत का सुबूत दिया, इसलिये कुरआने करीम ने इसकी तफ्सीलात बयान करने को खास प्रमुखता दी। उपर्युक्त आयतों में इसी का बयान है। जिसके जिक्र में बहुत सी हिक्मतों और मस्तेहतों के अलावा एक खास मस्तेहत इसका इज़हार है कि इस लड़ाई में ज़ाहिरी और माही तौर पर मुसलमानों के फ़तह पाने की कोई संभावना न थी और मक्का के मुशिरकों की शिकस्त का कोई गुमान व ख्याल न था। मगर अल्लाह तआला की ग़ैबी कुव्वत ने सारे साज़ व सामान और ज़ाहिरी असबाब की काया पलट दी। इसी वाकिए की वज़ाहत के लिये इन आयतों में ग़ज़वा-ए-बदर के जंग के मोर्चे का पूरा नक्शा कुरआने करीम ने बयान फ़रमाया है। इन आयतों के खुलासे से पहले चन्द अलफ़ाज़ की वज़ाहत देख लीजिए।

‘उदवतुन’ के मायने एक तरफ़ (दिशा) के आते हैं और लफ़ज़ ‘दुनिया’ अदना से बना है जिसके मायने हैं ज़्यादा करीब। आख़िरत के मुकाबले में इस जहान को भी ‘दुनिया’ इसलिये कहा जाता है कि यह आख़िरत के जहान की तुलना में इंसान की तरफ़ ज़्यादा करीब है। और लफ़ज़ ‘कुस्वा’ अक्सा से बना है ‘अक्सा’ के मायने हैं बहुत दूर।

बयालीसवीं आयत में हलाकत (मौत) और उसके मुकाबले में हयात (ज़िन्दगी) का जिक्र आया है। इन दोनों लफ़ज़ों से मौत व हयात के ज़ाहिरी मायने मुराद नहीं बल्कि मानवी मौत व हयात या हलाकत व निजात मुराद है। मानवी ज़िन्दगी इस्लाम व ईमान है और मौत शिर्क व कुफ़। कुरआने करीम ने कई जगह ये अलफ़ाज़ इस मायने में इस्तेमाल किये। एक जगह इरशाद फ़रमाया है:

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اسْتَجِيبُوا لِلَّهِ وَلِلرَّسُولِ إِذَا دَعَاكُمْ لِمَا يُحْيِيكُمْ

यानी ऐ ईमान वालो! तुम कहा मानो अल्लाह व रसूल का जब तुमको वे ऐसी चीज़ की तरफ़ बुलायें जिसमें तुम्हारी हयात (ज़िन्दगी) है। मुराद हयात से वह वास्तविक ज़िन्दगी और हमेशा की राहत है जो ईमान व इस्लाम के सिले में मिलती है। अब आयतों की तफ्सीर यह हुई कि बयालीसवीं आयत में जंगे-बदर के लड़ाई के मोर्चे का नक्शा यह बतलाया गया है कि मुसलमान ‘उदवा-ए-दुनिया’ के पास थे और काफ़िर ‘उदवा-ए-कुस्वा’ के पास। मुसलमानों का मक़ाम उस मैदान के उस किनारे पर था जो मदीने से करीब था और काफ़िर मैदान के दूसरे

किनारे पर थे जो मदीने से दूर था। और अबू सुफियान का तिजारती काफिला जिसकी वजह से यह जिहाद खड़ा किया गया था वह भी मक्का से आने वाले काफिरों के लश्कर से करीब और मुसलमानों की पकड़ से बाहर तीन मील के फासले पर समन्दर के किनारे-किनारे चल रहा था।

जंग के इस नक्शे के बयान से मकसद यह बतलाना है कि जंगी एतिबार से मुसलमान बिल्कुल बेमौका ग़लत जगह ठहरे थे, जहाँ से दुश्मन पर काबू पाने का बल्कि अपनी जान बचाने का भी कोई इमकान (संभावना) ज़ाहिरी एतिबार से न था। क्योंकि उस मैदान की वह जानिब जो मदीना से करीब थी एक रेतीली ज़मीन थी जिसमें चलना भी दूभर था। फिर पानी की कोई जगह उनके पास न थी। और मदीना से दूर वाली जानिब जिस पर काफिरों ने अपना पड़ाव डाला था वह साफ़ ज़मीन थी और पानी भी वहाँ से करीब था।

और उस मैदान के दोनों किनारों का पता देकर यह भी बतला दिया कि दोनों लश्कर बिल्कुल आमने-सामने थे कि किसी की ताक़त या कमज़ोरी दूसरे से छुपी न रह सकती। साथ ही यह भी बतला दिया कि मक्का के मुशिरकों के लश्कर को यह भी इत्मीनान हासिल था कि हमारा तिजारती काफिला मुसलमानों की पहुँच से निकल चुका है। अब अगर हमें ज़रूरत पड़े तो वह भी हमारी इमदाद कर सकता है। इसके उलट मुसलमान अपनी जगह के एतिबार से भी तकलीफ़ व परेशानी में थे और कहीं से मदद मिलने का भी कोई गुमान व ख़्याल न था। और यह बात पहले से भुतैन और हर लिखे-पढ़े आदमी को मालूम है कि मुसलमानों के लश्कर की कुल तायदाद तीन सौ तेरह थी और काफिरों की तायदाद एक हज़ार। मुसलमानों के पास न सवारियों की काफ़ी तायदाद थी और न हथियारों की। उसके मुक़ाबले में काफिरों का लश्कर इन सब चीज़ों से लैस था।

मुसलमान इस जिहाद में न किसी हथियारबन्द लश्कर से जंग की तैयारी करके निकले थे, वक़्ती तौर पर अचानक एक तिजारती काफ़िले का रास्ता रोकने और दुश्मन की ताक़त को तोड़ने के ख़्याल से सिर्फ़ तीन सौ तेरह मुसलमान बेसामानी के आलम में निकल खड़े हुए थे, अचानक ग़ैर-इरादी तौर पर एक हज़ार जवानों के हथियारबन्द लश्कर से मुक़ाबला पड़ गया।

क़ुरआन की इस आयत ने बतलाया कि लोगों की नज़र में यह वाक़िआ अगरचे एक इत्तिफ़ाकी हादसे की सूरत में बिना इरादे के पेश आया, लेकिन दुनिया में जितने इत्तिफ़ाकात ग़ैर-इख़्तियारी सूरत से पेश आया करते हैं उनकी सतह और सूरत अगरचे महज़ इत्तिफ़ाक़ की होती है लेकिन कायनात के बनाने वाले की नज़र में वो सब के सब एक स्थिर निज़ाम की लगी बंधी कड़ियाँ होती हैं, उनमें कोई चीज़ बेजोड़ या बेमौका नहीं होती। जब वह पूरा निज़ाम सामने आ जाये उस वक़्त इन्सान को पता लग सकता है कि उस इत्तिफ़ाकी वाक़िए में क्या-क्या हिक्मतें छुपी थीं।

बदर की लड़ाई ही के वाक़िए को ले लीजिए। इसकी इत्तिफ़ाकी और ग़ैर-इख़्तियारी सूरत से ज़ाहिर होने में यह मस्तेहत थी कि:

وَلَوْ تَوَاعَدْتُمْ لَا خُتِفْتُمْ فِي الْمِيعَادِ.

यानी अगर दुनिया की आम जंगों की तरह यह जंग भी तमाम पहलुओं पर गौर व फिक्र और आपसी करारदाओं के जरिये लड़ी जाती तो हालात का तकाज़ा यह था कि यह जंग होती ही नहीं, बल्कि इसमें मतभेद और विवाद पड़ जाता, चाहे इस तरह कि खुद मुसलमानों की राय में अपनी कम संख्या व कमजोरी और सामने वाले की अधिकता व कुव्वत को देखकर सहमति न हो पाती या इस तरह कि दोनों फरीक़ यानी मुसलमान व काफिर तयशुदा वायदे पर मैदान में न पहुँचते। मुसलमान तो अपनी कम संख्या व कमजोरी को देखकर आगे बढ़ने की हिम्मत न करते और काफिरों पर हक़ तआला ने मुसलमानों का रौब जमाया हुआ था, वे अपनी अधिक संख्या और ताक़त के बावजूद मुकाबले पर आने से घबराते।

इसलिये कुदरत के स्थिर निज़ाम ने दोनों तरफ़ ऐसे हालात पैदा कर दिये कि ज्यादा सोचने समझने का मौका ही न मिले। मक्का वालों को तो अबू सुफ़ियान के काफ़िले की घबराई हुई फ़रियाद ने एक हौलनाक सूरत में सामने आकर बेसोचे-समझे चलने पर आमादा कर दिया। मुसलमानों को इस ख़्याल ने कि हमारे मुकाबले पर कोई जंगी हथियारबन्द लश्कर नहीं, एक मामूली तिजारती काफ़िला है। मगर अलीम व ख़बीर (सब कुछ जानने वाले और हर चीज़ की ख़बर रखने वाले यानी अल्लाह तआला) को मन्ज़ूर यह था कि दोनों में बाक़ायदा जंग हो जाये ताकि उस जंग के बाद जो परिणाम इस्लाम की फ़तह की शक्ल में ज़ाहिर होने वाले हैं वो सामने आ जायें। इसी लिये फ़रमाया:

وَلَكِنْ لِّيَقْضِيَ اللَّهُ أَمْرًا كَانَ مَفْعُولًا

यानी इन हालात के बावजूद जंग इसलिये होकर रही कि अल्लाह तआला को जो काम करना है उसको पूरा कर दिखाये। और वह यह था कि एक हज़ार जवानों के हथियारबन्द सामान से लैस लश्कर के मुकाबले में तीन सौ तेरह साज़ व सामान से ख़ाली, फाँके के मारे हुए मुसलमानों की एक टोली और वह भी जंग के मोर्चे के एतिबार से बेमौका, जब इस पहाड़ से टकराती है तो यह पहाड़ टुकड़े-टुकड़े हो जाता है, और यह छोटी सी जमाअत कामयाब होती है, जो खुली आँखों यह दिखाता है कि इस जमाअत की पीठ पर कोई बड़ी कुदरत और ताक़त काम कर रही थी, जिससे यह एक हज़ार का लश्कर मेहरूम था। और यह भी ज़ाहिर है कि इसकी ताईद इस्लाम की वजह से और उसकी मेहरूमी कुफ़्र की वजह से थी। जिससे हक़ व बातिल और ख़रे खोटे का पूरा फ़र्क़ हर समझदार इन्सान के सामने आ गया। इसी लिये आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमाया:

لِيَهْلِكَ مَنْ هَلَكَ عَنْ بَيِّنَةٍ وَيَحْيَىٰ مَنْ حَيَّ عَنْ بَيِّنَةٍ

यानी बदर के वाकिए में इस्लाम की खुली हक़ानियत और कुफ़्र व शिर्क के बातिल व मरदूद होने को इसलिये खोल दिया गया कि आईन्दा जो हलाकत में पड़े वह देख-भालकर पड़े, और जो ज़िन्दा रहे वह भी देख-भालकर रहे। अंधेरे और मुग़ालते में कोई काम न हो।

इस आयत के अलफ़ाज़ में हलाकत से मुराद कुफ़्र और हयात व ज़िन्दगी से मुराद इस्लाम

है। मतलब यह है कि हक् सामने आ जाने और खुल जाने के बाद ग़लत-फहमी का शुद्ध व गुमान और उज़्र तो ख़त्म हो गया, अब जो कुफ़्र इस्तिथार करता है वह देखती आँखों हलाकत (तबाही) की तरफ़ जा रहा है, और जो इस्लाम इस्तिथार करता है वह देख-भालकर हमेशा की जिन्दगी इस्तिथार कर रहा है। फिर फरमाया:

وَاللّٰهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ

यानी अल्लाह तआला ख़ूब सुनने वाले जानने वाले हैं कि सब के दिलों में छुपे हुए कुफ़्र व ईमान तक उनके सामने हैं, और हर एक की सज़ा व जज़ा भी।

तैंतालीसवीं और चवालीसवीं दोनों आयतों में कुदरत के एक खास करिश्मे का ज़िक्र है जो ग़ज़वा-ए-बदर के मैदान में इस ग़र्ज़ के लिये अमल में लाया गया कि ऐसा न होने पाये कि दोनों लश्करों में से कोई भी मैदाने जंग छोड़कर इस जंग को ही ख़त्म कर डाले, क्योंकि उस जंग के नतीजे में माही हैसियत से भी इस्लाम की हक्कानियत का प्रदर्शन करना मुक़द्दर था।

और वह कुदरत का करिश्मा यह था कि काफ़िरो का लश्कर अगरचे वास्तव में मुसलमानों से तीन गुना था मगर अल्लाह तआला ने महंज़ अपनी कामिल कुदरत से मुसलमानों को उनकी तायदाद बहुत कम करके दिखलाई, ताकि मुसलमानों में कमज़ोरी और मतभेद व विवाद पैदा न हो जाये। और यह वाकिआ दो मर्तबा पेश आया- एक मर्तबा हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सपने में दिखला गया, आपने सब मुसलमानों से बतला दिया, जिससे उनकी हिम्मत बढ़ गयी। दूसरी मर्तबा ऐन मैदाने जंग में जबकि दोनों फ़रीक़ आमने-सामने खड़े थे, मुसलमानों को उनकी तायदाद कम दिखलाई गयी। आयत 43 में सपने का वाकिआ और 44 में जागने की हालत का वाकिआ बयान हुआ है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु फरमाते हैं कि हमारी नज़रों में अपना मुकाबिल लश्कर ऐसा नज़र आ रहा था कि मैंने अपने करीब के एक आदमी से कहा कि ये लोग नब्बे आदमियों की संख्या में होंगे। उस शख्स ने कहा कि नहीं सौ होंगे।

आखिरी आयत में इसके साथ यह भी ज़िक्र हुआ है:

يَقْلَبُكُمْ فِيْ اَعْيُنِهِمْ

यानी अल्लाह तआला ने मुसलमानों को भी मुकाबले में आये लश्कर की नज़र में कम करके दिखलाया। इसके यह मायने भी हो सकते हैं कि मुसलमानों की तायदाद तो हकीकत ही में कम थी, वह सही तायदाद उनको दिखला दी, और यह भी हो सकते हैं कि जितनी असली तायदाद थी उससे भी कम करके दिखलाया गया, जैसा कि कुछ रिवायतों में है कि अबू जहल ने मुसलमानों के लश्कर को देखकर अपने साथियों से कहा कि इनकी संख्या तो इससे ज्यादा मालूम नहीं होती जिनकी खुराक एक ऊँट हो। अरब में किसी लश्कर की तायदाद मालूम करने के लिये इससे अन्दाज़ा लगाया जाता था कि कितने जानवर उनकी खुराक के लिये ज़िबह होते हैं। एक ऊँट सौ आदमियों की खुराक समझा जाता था। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने भी इस मैदाने बदर में वहाँ के कुछ लोगों से मक्का के कुरैश के लश्कर का पता

चलाने के लिये पूछा था कि उनके लश्कर में रोज़ाना कितने ऊँट ज़िबह किये जाते हैं, तो आपको दस ऊँट रोज़ाना बतलाये गये, जिससे आपने एक हजार लश्कर का अनुमान लगाया। खुलासा यह है कि अबू जहल की नज़र में मुसलमान कुल सौ आदमी की संख्या में दिखलाये गये। यहाँ भी कम करके दिखलाने में यह हिम्मत थी कि मुशिकों के दिलों पर मुसलमानों का रौब पहले ही न छा जाये, जिसकी वजह से वे मैदान छोड़ भागें।

फायदा: इस आयत से यह भी मालूम हुआ कि कई बार मोजिज़े के तौर पर और आम आदत के विपरीत यह भी हो सकता है कि आँखों का देखा हुआ ग़लत हो जाये, जैसे यहाँ हुआ। इसी लिये इस जगह दोबारा फ़रमाया:

لَقَضَى اللَّهُ أَمْرًا كَانَ مَفْعُولًا

यानी क़ुदरत का यह करिश्मा और आँखों के देखे हुए पर उलट-फेर इसलिये ज़ाहिर किया गया कि जो काम अल्लाह तआला करना चाहते हैं वह पूरा हो जाये। यानी मुसलमानों को कम संख्या और बेसामानी के बावजूद फ़तह देकर इस्लाम की हक़ानियत और इसके साथ ग़ैबी तार्ईद का इज़हार जो इस जंग से मक़सद था वह पूरा कर दिखाये।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमाया:

وَالِلَّهِ تُرْجَعُ الْأُمُورُ

यानी आख़िरकार सब काम अल्लाह तआला ही की तरफ़ लौटते हैं जो चाहे करे जो चाहे हुक्म दे। कम को ज़्यादा पर और ताक़त को कमज़ोरी पर ग़लबा दे दे। कम को ज़्यादा, ज़्यादा को कम कर दे। मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अलैहि ने ख़ूब फ़रमाया है:

गर तू ख़्वाही ऐने ग़म शादी शव्द ★ ऐने बन्द-पाये आज़ादी शव्द
चूँ तू ख़्वाही आतिश आबे ख़ुश शव्द ★ वर तू ख़्वाही आब हम आतिश शव्द
ख़ाक़ व बाद व आब व आतिश बन्दा अन्द ★ बा मन् व तू मुर्दा बा-हक़ जिन्दा अन्द

यानी अगर तू चाहे ग़म खुशी में बदल जाये और अगर तू चाहे तो बन्धन से मुक्ति मिल जाये। जब तू चाहे तो आग़ एक उम्दा पानी की जगह ले ले, और तू चाहे तो पानी को आग़ का रूप दे दे। मिट्टी, हवा, पानी और आग़ तेरे हुक्म के ताबे हैं अगरचे हमें तुम्हें ये बेजान और मुर्दा मालूम होते हैं मगर अल्लाह तआला के साथ इनका जो मामला है वह ज़िन्दों की तरह है, कि ज़िन्दों की तरह उसके हुक्म की तामील करते हैं।" मुहम्मद इमसान कासमी बिज्ञानवी

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا إِذَا لَقِيتُمْ فِئَةً فَاثْبُتُوا وَاذْكُرُوا اللَّهَ كَثِيرًا لَّعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ٥

وَاطِيعُوا اللَّهَ وَرَسُولَهُ وَلَا تَنَازَعُوا فَتَفْشَلُوا وَتَذْهَبَ رِيحُكُمْ وَاصْبِرُوا إِنَّ اللَّهَ مَعَ الصَّابِرِينَ ٦

وَلَا تَكُونُوا كَالَّذِينَ خَرَجُوا مِنْ دِيَارِهِمْ بَطَرًا وَرِئَاءَ النَّاسِ وَيَصُدُّونَ عَنْ سَبِيلِ

اللَّهِ وَاللَّهُ بِمَا يَعْمَلُونَ مُحِيطٌ ٧

या अय्युहल्लजी-न आमनू इज़ा
लकीतुम् फ़ि-अतन् फ़स्बुतू
वज़्कुरुल्ला-ह कसीरल्-लअल्लकुम्
तुफ़िलहून (45) व अतीज़ुल्ला-ह व
रसूलहू व ला तनाज़ू फ़-तफ़शलू व
तज़ह-ब रीहुकुम् वस्बिरू, इन्नल्ला-ह
मअस्साबिरीन (46) व ला तकूनू
कल्लजी-न ख़-रजू मिन् दियारिहिम्
ब-तरंव-व रिआअन्नासि व यसुद्दून
अन् सबीलिल्लाहि, वल्लाहु बिमा
यअूमलू-न मुहीत (47)

ऐ ईमान वालो! जब भिड़ो किसी फौज से
तो कदम जमाकर रहो और अल्लाह को
बहुत याद करो ताकि तुम मुराद पाओ।
(45) और हुक्म मानो अल्लाह का और
उसके रसूल का और आपस में न झगड़ो,
पस नामर्द हो जाओगे और जाती रहेगी
तुम्हारी हवा और सब्र करो, बेशक अल्लाह
साथ है सब्र वालों के। (46) और न हो
जाओ उन जैसे जो कि निकले अपने घरों
से इतराते हुए और लोगों के दिखाने को,
और रोकते थे अल्लाह की राह से, और
अल्लाह के काबू में है जो कुछ वे करते
हैं। (47)

खुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! जब तुमको (काफ़िरों की किसी) जमाअत से (जिहाद में) मुकाबले का
इत्तिफ़ाक़ हुआ करे तो (इन आदाब का लिहाज़ रखो। एक यह कि) साबित-क़दम रहो (भागो
मत) और (दूसरे यह कि) अल्लाह तआला का ख़ूब कसरत से ज़िक्र करो (कि ज़िक्र से दिल में
कुव्वत पैदा होती है) उम्मीद है कि तुम (मुकाबले में) कामयाब हो (क्योंकि क़दमों और दिल का
जमाव जब जमा हो तो कामयाबी ग़ालिब है)। और (तीसरे यह कि जंग से संबन्धित तमाम
मामलों में) अल्लाह और उसके रसूल की इताअत (का लिहाज़) किया करो (कि कोई कार्रवाई
शरीअत के खिलाफ़ न हो) और (चौथे यह कि अपने इमाम से और आपस में भी) झगड़ा मत
करो, वरना (आपस की नाइत्तिफ़ाकी से) कम-हिम्मत हो जाओगे (क्योंकि ताक़तें बिखर जायेंगी,
एक को दूसरे पर भरोसा न होगा और अकेला आदमी क्या कर सकता है) और तुम्हारी हवा
उखड़ जायेगी (हवा उखड़ने से मुराद रौब का ख़त्म हो जाना है क्योंकि दूसरों को उस
नाइत्तिफ़ाकी की ख़बर होने से यह बात लाज़िमी है)। और (पाँचवे यह कि अगर कोई मामला
नागवारी का पेश आवे तो उस पर) सब्र करो, बेशक अल्लाह तआला सब्र करने वालों के साथ हैं
(और अल्लाह तआला का साथ उसकी मदद के साथ होने का ज़रिया है) और (छठे यह कि
नीयत ख़ालिस रखो, बड़ाई जताने, इतराने और दिखावा करने में) उन (काफ़िर) लोगों के जैसे
मत होना कि जो (इसी बदर के वाकिए में) अपने घरों से इतराते हुए और लोगों को (अपनी

शान व सामान) दिखलाते हुए निकले और (इस घमण्ड व दिखावे के साथ यह भी नीयत थी कि) लोगों को अल्लाह के रास्ते (यानी दीन) से रोकते थे (क्योंकि मुसलमानों को नुकसान पहुँचाने और चोट देने चले थे जिसका असर आम तबीयतों पर भी दीन से दूरी होता) और अल्लाह तआला (उन लोगों को पूरी सज़ा देगा, चुनौते वह) उनके आमाल को (अपने इल्म के धरे में लिये हुए है।

मआरिफ़ व मसाईल

जंग व जिहाद में कामयाबी के लिये कुरआनी हिदायतें

पहली दो आयतों में हक़ तआला ने मुसलमानों को मैदान-ए-जंग और दुश्मन के मुकाबले के लिये एक खास हिदायत नामा दिया है जो उनके लिये दुनिया में कामयाबी और फ़तह हासिल करने का और आखिरत की निजात व फ़लाह का अक्सीर नुस्खा है और इस्लाम के शुरूआती ज़माने की तमाम जंगों में मुसलमानों की आश्चर्यजनक कामयाबियों और फ़तूहात का राज़ इसी में छुपा है। और वो चन्द चीज़ें हैं।

अव्वल सबात यानी साबित रहना और जमना। जिसमें दिल का जमाव और कदमों का डटे रहना दोनों दाख़िल हैं। क्योंकि जब तक किसी शख्स का दिल मज़बूत और साबित न हो उसका कदम और जिस्मानी अंग साबित नहीं रह सकते और यह चीज़ ऐसी है जिसको हर मोमिन व काफ़िर जानता और समझता है, और दुनिया की हर कौम अपनी जंगों में इसका विशेष ध्यान और पाबन्दी करती है। क्योंकि तजुर्बा रखने वालों से छुपा नहीं कि मैदाने जंग का सबसे पहला और सबसे ज़्यादा कामयाब हथियार दिल और कदमों का जमाव ही है, दूसरे सारे हथियार इसके बग़ैर बेकार हैं।

दूसरे अल्लाह का ज़िक्र यह वह मख़सूस और अन्दरूनी हथियार है जिससे मोमिन के सिवा आम दुनिया ग़ाफ़िल है। पूरी दुनिया के लिये बेहतरीन हथियार और नये से नया सामान मुहैया करने और फ़ौज के साबित-क़दम रखने की तो पूरी तदबीरें करती है मगर मुसलमानों के इस रूहानी और मानवी हथियार से बेख़बर और नावाक़िफ़ है। यही वजह है कि हर मैदान में जहाँ मुसलमानों का मुकाबला इन हिदायतों के मुताबिक़ किसी कौम से हुआ मुख़ालिफ़ की पूरी ताक़त और हथियार व सामान को बेकार कर दिया। ज़िक्रुल्लाह की अपनी ज़ाती और मानवी बरक़तें तो अपनी जगह हैं ही, यह भी हकीक़त है कि क़दम के जमाने का इससे बेहतर कोई नुस्खा भी नहीं। अल्लाह की याद और उस पर भरोसा वह बिजली की ताक़त है जो एक कमज़ोर इन्सान को पहाड़ों से टकरा जाने पर तैयार कर देती है और कैसी ही मुसीबत और परेशानी हो अल्लाह की याद सब को हवा में उड़ा देती है, और इन्सान के दिल को मज़बूत और क़दम को साबित रखती है।

यहाँ यह बात भी ध्यान में रखिये कि जंग व क़िताल का वक़्त आदतन ऐसा वक़्त होता है कि उसमें कोई किसी को याद नहीं करता, अपनी फ़िक्र पड़ी होती है। इसी लिये अरब के जाहिली दौर में शायर मैदाने जंग में भी अपने महबूब को याद करने पर फ़ख़्र किया करते हैं कि वह बड़ी दिल की ताक़त और मुहब्बत की पुख़्तगी की दलील है, जाहिली दौर के एक शायर ने कहा है:

ذَكَرْتُكَ وَالْخَطَى بِخَطَرِيْنَا.

यानी मैंने तुझे उस वक़्त भी याद किया जब कि नेज़े हमारे दरमियान लचक रहे थे।

क़ुरआने करीम ने इस ख़तरों भरे मौक़े में मुसलमानों को ज़िक़ुल्लाह की तालीम फ़रमाई और वह भी अधिकता की ताक़ीद के साथ।

यहाँ यह बात भी ध्यान देने के काबिल है कि पूरे क़ुरआन में ज़िक़ुल्लाह के सिवा किसी इबादत को कसरत से (अधिकता के साथ) करने का हुक्म नहीं। नमाज़ को बहुत ज़्यादा पढ़ने या रोज़ों को बहुत ज़्यादा रखने का कहीं ज़िक्र नहीं। सबब यह है कि ज़िक़ुल्लाह एक ऐसी आसान इबादत है कि इसमें न कोई बड़ा वक़्त ख़र्च होता है न मेहनत न किसी दूसरे काम में इससे रुकावट पैदा होती है। इस पर अतिरिक्त यह कि अल्लाह तआला ने महज़ अपने फज़ल से ज़िक़ुल्लाह के लिये कोई शर्त और पाबन्दी, वुजू, तहारत, लिबास और क़िल्बे वग़ैरह की भी नहीं लगाई, हर शख्स हर हाल में, बावजू बेवजू, खड़े बैठे, लेटे कर सकता है, और इस पर अगर इमाम जज़री रह. की उस तहकीक़ का इज़ाफ़ा कर लिया जाये जो उन्होंने 'हिस्ने-हसीन' में लिखी है कि ज़िक़ुल्लाह सिर्फ़ ज़बान या दिल से ज़िक्र करने ही को नहीं कहते बल्कि हर जायज़ काम जो अल्लाह तआला और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इताअत में रहकर किया जाये वह भी ज़िक़ुल्लाह है, तो इस तहकीक़ पर ज़िक़ुल्लाह का मफ़हूम इस क़द्र आम और आसान हो जाता है कि सोते हुए भी इनसान को ज़ाकिर (ज़िक्र करने वाला) कह सकते हैं। जैसे कुछ रिवायतों में है:

نَوْمُ الْعَالِمِ عِبَادَةٌ.

यानी आलिम की नींद भी इबादत में दाख़िल है। क्योंकि आलिम जो अपने इल्म के तकाज़े पर अमल करता हो उसके लिये यह लाज़िम है कि उसका सोना और जागना सब अल्लाह तआला की इताअत ही के दायरे में हो।

मैदाने जंग में ज़िक़ुल्लाह की अधिकता का हुक्म अगरचे बज़ाहिर मुजाहिदीन के लिये एक काम का इज़ाफ़ा नज़र आता है जो आदतन मशक्क़त व मेहनत को चाहता है। लेकिन ज़िक़ुल्लाह की यह अजीब खुसूसियत है कि वह मेहनत नहीं लेता बल्कि एक खुशी व ताक़त और लज़ज़त बख़्शता है, और इनसान के काम में सहायक व मददगार बनता है। वैसे भी मेहनत व मशक्क़त के काम करने वालों की आदत होती है कि कोई कलिमा या गीत गुनगुनाया करते हैं। क़ुरआने करीम ने मुसलमानों को इसका बेहतरीन बदल दे दिया जो हज़ारों फ़ायदों और

हिक्मतों पर आधारित है। इसी लिये आयत के आखिर में फरमाया:

لَعَلَّكُمْ تَفْلَحُونَ

यानी अगर तुमने दिल व कदम के जमाव और जिक्रुल्लाह के दो गुर याद कर लिये और इनको मैदाने जंग में इस्तेमाल किया तो फलाह व कामयाबी तुम्हारी है।

मैदाने जंग का जिक्र एक तो वह है जो आम तौर पर नारा-ए-तकबीर के अन्दाज़ में किया जाता है, इसके अलावा अल्लाह तआला पर नज़र और भरोसा व तवक्कुल और दिल से उसकी याद। लफ़्ज़ जिक्रुल्लाह इन सब को शामिल है।

छियालीसवीं आयत में एक तीसरी चीज़ की तालीम और की गयी, वह है:

اطِيعُوا اللَّهَ وَرَسُولَهُ

यानी अल्लाह और उसके रसूल की इताअत (फरमाँबरदारी) को लाज़िम पकड़ो। क्योंकि अल्लाह तआला की इमदाद व नुसरत उसकी इताअत ही के ज़रिये हासिल की जा सकती है, गुनाह और नाफ़रमानी तो अल्लाह की नाराज़ी और उसके हर फज़ल से मेहरूमी के असबाब होते हैं। इस तरह मैदाने जंग के लिये कुरआनी हिदायत नामे की तीन धारारें हो गयीं- दिल व कदमों का जमाव, अल्लाह का जिक्र, अल्लाह व रसूल की फरमाँबरदारी। इसके बाद फरमाया:

وَلَا تَنَازَعُوا فَتَفْشَلُوا وَتَذْهَبَ رِيحُكُمْ وَاصْبِرُوا

इसमें नुक़सानदेह पहलुओं पर तंबीह करके उनसे बचने की हिदायत है। और वह नुक़सान का पहलू जो जंग की कामयाबी में रुकावट होता है वह आपसी झगड़ा व इख़िलाफ़ है। इसलिये फरमाया:

وَلَا تَنَازَعُوا

यानी आपस में झगड़ा और खींचतान न करो, वरना तुममें बुज़दिली फैल जायेगी और तुम्हारी हवा उखड़ जायेगी।

इसमें आपसी झगड़ों के दो नतीजे बयान किये गये हैं- एक यह कि तुम ज़ाती तौर पर कमज़ोर और बुज़दिल हो जाओगे। दूसरे यह कि तुम्हारी हवा उखड़ जायेगी, दुश्मन की नज़रों में हकीर हो जाओगे। आपसी खींचतान और झगड़े से दूसरों की नज़र में हकीर (बेवज़न और बेहकीकत) हो जाना तो आसानी से समझ में आने वाली चीज़ है लेकिन खुद अपनी कुव्वत पर इसका क्या असर पड़ता है कि उसमें कमज़ोरी और बुज़दिली आ जाये। इसकी वजह यह है कि आपसी मेल-मिलाप, एकजुटता और भरोसे की सूरत में हर एक इन्सान के साथ पूरी जमाअत की ताक़त लगी हुई होती है, इसलिये एक आदमी अपने अन्दर अपनी जमाअत के बराबर कुव्वत महसूस करता है, और जब आपसी इत्तिहाद व भरोसा न हो तो उसकी अकेली कुव्वत रह गयी, वह ज़ाहिर है कि जंग व क़िताल के मैदान में कोई चीज़ नहीं।

इसके बाद इरशाद फरमाया 'वसिब्रू' यानी सब को लाज़िम पकड़ो। मज़मून के अगले पिछले हिस्से से ऐसा मालूम होता है कि यह झगड़े, विवाद और मनमुटाव से बचने का कामयाब

नुस्खा बतलाया गया है, और बयान इसका यह है कि कोई जमाअत ख्याल व मकसद में कितनी ही एकजुट हो मगर इनसानी अफ़राद की तबई विशेषताएँ ज़रूर विभिन्न हुआ करती हैं, और किसी मकसद (उद्देश्य) के लिये कोशिश व मेहनत में अक़ल व तजुर्बे वालों की रायों का मतभेद भी लाज़िमी है। इसलिये दूसरों के साथ चलने और उनको साथ रखने के लिये इसके सिवा कोई चारा नहीं कि आदमी खिलाफ़े तबीयत बातों पर सब्र करने और उनको नज़र-अन्दाज़ करने का आदी हो, और अपनी राय पर इतना जमाव और ज़िद न हो कि उसको कुबूल न किया जाये तो लड़ बैठे। इसी सिफ़त का दूसरा नाम सब्र है।

आजकल यह तो हर शख्स जानता और कहता है कि आपस का झगड़ा बहुत बुरी चीज़ है मगर उससे बचने का जो गुर है कि आदमी खिलाफ़े तबीयत बातों पर सब्र करने का आदी बने, अपनी बात मनवाने और चलाने की फ़िक्र में न पड़े, यह बहुत कम लोगों में पाया जाता है। इसी लिये एकता व इत्तिफ़ाक़ के सारे भाषण और नसीहतें बेफ़ायदा होकर रह जाते हैं। आदमी को दूसरे से अपनी बात मनवाने पर तो ताक़त नहीं होती मगर खुद दूसरे की बात मान लेना और अगर उसकी अक़ल व दियानत का तकाज़ा यही है कि उसको न माने तो कम से कम झगड़े से बचने के लिये ख़ामोशी इख़्तियार कर लेना तो बहरहाल इख़्तियार में है, इसलिये कुरआने करीम ने झगड़े से बचने की हिदायत के साथ-साथ सब्र की तालीम भी हर फ़र्द और हर जमाअत को कर दी, ताकि झगड़े से बचना अमली दुनिया में आसान हो जाये।

यहाँ यह बात भी काबिले ध्यान है कि कुरआने करीम ने इस जगह “ला तना-ज़ुज़” फ़रमाया है, यानी आपसी खींचतान और मनमुटाव को रोका है, राय के इख़्तिलाफ़ या उसके इज़हार से मना नहीं किया। राय का इख़्तिलाफ़ (मतभेद) जो दियानत और इख़्लास (ईमानदारी और सच्चाई) के साथ हो वह कभी झगड़े की सूरत इख़्तियार नहीं किया करता। झगड़ा व विवाद वहीं होता है जहाँ मतभेद के साथ अपनी बात मनवाने और दूसरे की बात न मानने का ज़ब्बा काम कर रहा हो। और यही वह ज़ब्बा है जिसको कुरआने करीम ने ‘वस्बिरू’ के लफ़्ज़ से ख़त्म किया है, और आख़िर में सब्र करने का एक अज़ीमुश्शान फायदा बतलाकर सब्र की कड़वाहट को दूर फ़रमा दिया। इरशाद फ़रमाया:

إِنَّ اللَّهَ مَعَ الصَّابِرِينَ

यानी सब्र करने वालों को अल्लाह तआला का साथ हासिल होता है, अल्लाह तआला हर वक़्त हर हाल में उनका साथी होता है। और यह इतनी बड़ी दौलत है कि दोनों जहान की सारी दौलतें इसके मुक़ाबले में कुछ नहीं।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कुछ लड़ाईयों और जंगी मुहिमों में इन्हीं हिदायतों को याद दिलाने और ध्यान में रखने के लिये ऐन मैदाने जंग में यह ख़ुतबा दिया “ऐ लोगो! दुश्मन से मुक़ाबले की तमन्ना न करो बल्कि अल्लाह तआला से आफ़ियत और अमन माँगो और जब मजबूरन मुक़ाबला हो ही जाये तो फिर सब्र और जमाव को लाज़िम पकड़ो, और यह समझ लो कि जन्नत तलवारों के साये में है।” (मुस्लिम शरीफ़)

सैंतालीसवीं आयत में एक और नुकसान देने वाले पहलू पर तंबीह और उससे परहेज की हिदायत दी गयी है। वह है अपनी ताकत व अधिकता पर नाज़ या काम में इज़्ज़ास के बजाय अपनी कोई और गर्ज पोशीदा होना, क्योंकि ये दोनों चीज़ें भी बड़ी-बड़ी ताकतवर जमाअतों को शिकस्त से दोचार कर दिया करती हैं।

इस आयत में इशारा मक्का के कुरैश के हालात की तरफ भी है जो अपने तिजारती काफिले की हिफाज़त के लिये भारी संख्या में फौज और सामान लेकर अपनी कुव्वत व अधिकता पर इतराते हुए निकले थे। और जब तिजारती काफिला मुसलमानों की पकड़ से बाहर हो गया उस वक़्त भी इसलिये वापस नहीं हुए कि अपनी बहादुरी का प्रदर्शन करना था।

मोतबर रिवायतों में है कि जब अबू सुफ़ियान अपना तिजारती काफिला लेकर मुसलमानों की पहुँच और पकड़ से बच निकले तो अबू जहल के पास कासिद भेजा कि अब तुम्हारे आगे बढ़ने की ज़रूरत नहीं रही, वापस आ जाओ। और भी बहुत से कुरैशी सरदारों की यही राय थी, मगर अबू जहल अपने घमण्ड व गुरूर और शोहरत की तलब के ज़ब्बे में कसम खा बैठा कि हम उस वक़्त तक वापस न होंगे जब तक चन्द दिन बदर के मक़ाम पर पहुँचकर अपनी फ़तह का जश्न न मना लें।

जिसके नतीजे में वह और उसके बड़े-बड़े साथी सब वहीं ढेर हुए और एक गढ़े में डाले गये। इस आयत में मुसलमानों को उनके जैसे रवैये और तरीके से परहेज करने की हिदायत फ़रमाई गयी।

وَإِذْ زَيْنَ لَهُمُ الشَّيْطَانُ أَعْمَالَهُمْ وَقَالَ لَا غَالِبَ لَكُمْ
الْيَوْمَ مِنَ النَّاسِ وَإِنِّي جَارٌ لَّكُمْ ۚ فَلَمَّا تَرَآءَ الْفِئَتَيْنِ نَكَصَ عَلَىٰ عَقِبَيْهِ وَقَالَ إِنِّي بَرِيءٌ
مِّنْكُمْ إِنِّي أَرَىٰ مَا لَا تَرَوْنَ إِنِّي أَخَافُ اللَّهَ ۚ وَاللَّهُ شَدِيدُ الْعِقَابِ ۝ إِذْ يَقُولُ الْمُفِقُونَ
وَالَّذِينَ فِي قُلُوبِهِمْ مَّرَضٌ غَرَّهُمْ هُوَ لَا دِينَ لَهُمْ ۚ وَمَنْ يَتَوَكَّلْ عَلَى اللَّهِ فَإِنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝

व इज़् ज़य्य-न लहुमुशशैतानु
अज़्मालहुम् व का-ल ला ग़ालि-ब
लकुमुल्यौ-म मिनन्नासि व इन्नी
ज़ारुल्-लकुम् फ-लम्मा तरा-अतिल्-
फि-अतानि न-क-स अला अकिबैहि
व का-ल इन्नी बरीउम् मिन्कुम् इन्नी
अरा मा ला तरौ-न इन्नी

और जिस वक़्त अच्छा दिखने वाला बना
दिया शैतान ने उनकी नज़रों में उनके
अमलों को और बोला कि कोई भी ग़ालिब
न होगा तुम पर आज के दिन लोगों में
से, और मैं तुम्हारा हिमायती हूँ। फिर
जब सामने हुई दोनों फौजें तो वह उल्टा
फिरा अपनी एड़ियों पर और बोला मैं
तुम्हारे साथ नहीं हूँ, मैं देखता हूँ जो तुम

अख़ाफ़ुल्ला-ह, वल्लाहु शदीदुल्-
ज़िकाब (48) ❀

इज़् यक़ूलुल्-मुनाफ़िकू-न वल्लज़ी-न
फी कुलूबिहिम् म-रज़ुन् गर्-र
हा-उला-इ दीनुहुम्, व मय्य-तवक्कल्
अलल्लाहि फ़-इन्नल्ला-ह अज़ीज़ुन्
हकीम (49)

नहीं देखते, मैं डरता हूँ अल्लाह से, और
अल्लाह का अज़ाब सख़्त है। (48) ❀

जब कहने लगे मुनाफ़िक और जिनके
दिलों में बीमारी है, ये लोग घमण्डी हैं
अपने दीन पर, और जो कोई भरोसा करे
अल्लाह पर तो अल्लाह ज़बरदस्त है
हिक्मत वाला। (49)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (उस वक़्त का इनसे ज़िक्र कीजिये) जबकि शैतान ने उन (काफ़िरों) को (दिल में
ख़याल डालने के ज़रिये) उनके (कुफ़िया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की
मुख़ालफ़त व दुश्मनी वाले) आमांल अच्छे करके दिखलाये (कि उन्होंने उन बातों को अच्छा
समझा) और (दिल में बात डालने से बढ़कर यह किया कि सामने आकर उनसे) कहा कि
(तुमको वह कुव्वत व दबदबा हासिल है कि तुम्हारे मुख़ालिफ़) लोगों में से आज कोई तुम पर
ग़ालिब आने वाला नहीं और मैं तुम्हारा हिमायती हूँ (न बाहरी दुश्मनों से डरो और न अन्दरूनी
दुश्मनों से अन्देशा करो)। फिर जब (काफ़िरों और मुसलमानों की) दोनों जमाअतें एक-दूसरे के
आमने-सामने हुई (और उसने फ़रिश्तों का आसमान से उतरना देखा) तो वह उल्टे पाँव भागा
और (यह) कहा कि मेरा तुमसे कोई वास्ता नहीं (मैं हिमायती वगैरह कुछ नहीं बनता, क्योंकि)
मैं उन चीज़ों को देख रहा हूँ जो तुमको नज़र नहीं आतीं (यानी फ़रिश्ते), मैं तो खुदा से डरता हूँ
(कभी किसी फ़रिश्ते से दुनिया ही में मेरी ख़बर लिवा दे) और अल्लाह तआला सख़्त सज़ा देने
वाले हैं।

और वह वक़्त भी ज़िक्र करने के काबिल है कि जब (मदीना वालों में से) मुनाफ़िक लोग
और (मक्का वालों में से) जिनके दिलों में (शक की) बीमारी थी (मुसलमानों का बिना सामान व
हथियार के काफ़िरों के मुकाबले में आ जाना देखकर यूँ) कहते थे कि इन (मुसलमान) लोगों को
इनके दीन ने भूल में डाल रखा है (कि अपने दीन के हक़ होने के भरोसे ऐसे ख़तरे में आ पड़े।
अल्लाह जवाब देते हैं) और जो शख्स अल्लाह पर भरोसा करता है तो (वह अक्सर ग़ालिब ही
आता है, क्योंकि) बेशक अल्लाह तआला ज़बरदस्त हैं (इसलिये अपने ऊपर भरोसा करने वाले
को ग़ालिब कर देते हैं, और कभी इत्तिफ़ाक़ से ऐसा शख्स मग़लूब हो जाये तो उसमें कुछ
मस्लेहत होती है, क्योंकि) वह हिक्मत वाले (भी) हैं (ग़र्ज़ कि ज़ाहिरी सामान व बेसामानी पर
मदार नहीं, कुदरत वाला कोई और ही है)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

सूर: अनफ़ाल में शुरू से बदर की लड़ाई में पेश आने वाले वाकिआत और हालात का और उनसे हासिल होने वाली नसीहतों और सबकों का और संबन्धित अहकाम का बयान चल रहा है। इसी में एक वाकिआ मक्का के कुरैश को शैतान के फरेब देकर मुसलमानों के मुकाबले पर उभारने और फिर ऐन मैदाने जंग में साथ छोड़कर अलग हो जाने का है, जो ऊपर दर्ज हुई आयतों के शुरू में बयान हुआ है।

शैतान का यह फरेब कुरैश के दिलों में वस्वसा डालने की सूरत से था या इनसानी शक्ल में आकर रू-ब-रू गुफ्तगू से, इसमें दोनों संभावनायें हैं, मगर कुरआन के अलफ़ाज़ से ज्यादातर ताईद दूसरी ही सूरत की होती है कि इनसानी शक्ल में सामने आकर फरेब दिया।

इमाम इब्ने जरीर रह. ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि जब मक्का के कुरैश का लश्कर मुसलमानों के मुकाबले के लिये मक्का से निकला तो उनके दिलों पर एक ख़तरा (शंका और डर) इसका सवार था कि हमारे करीब में कबीला बनू बक्र भी हमारा दुश्मन है, ऐसा न हो कि हम मुसलमानों के मुकाबले पर जायें और यह दुश्मन कबीला मौका पाकर हमारे घरों और औरतों-बच्चों पर छापा मार दे। काफ़िले के सरदार अबू सुफ़ियान की घबराई हुई फ़रियाद पर तैयार होकर निकल तो खड़े हुए मगर यह ख़तरा उनके लिये पैरों की ज़न्जीरे बना हुआ था कि अचानक शैतान सुराका बिन मालिक की सूरत में इस तरह सामने आया कि उसके हाथ में झण्डा और उसके साथ बहादुर फ़ौज की एक टुकड़ी थी। सुराका बिन मालिक उस इलाके और कबीले का बड़ा सरदार था जिससे हमले का ख़तरा था। उसने आगे बढ़कर कुरैशी जवानों के लश्कर से ख़िताब किया और दो तरह से फरेब में मुक्ता किया- अव्वल यह कि:

لَا غَالِبَ لَكُمْ الْيَوْمَ مِنَ النَّاسِ.

यानी आज तमाम लोगों में तुम पर कोई ग़ालिब आने वाला नहीं। मतलब यह था कि मुझे तुम्हारे मुकाबिल फ़रीक की कुव्वत का भी अन्दाज़ा है और तुम्हारी ताक़त व कसरत को भी देख रहा हूँ इसलिये तुम्हें यकीन दिलाता हूँ कि तुम बेफ़िक्र होकर आगे बढ़ो, तुम्हीं ग़ालिब रहोगे, कोई तुम्हारे मुकाबले पर ग़ालिब आने वाला नहीं।

दूसरे यह कि:

إِنِّي جَارٌ لَّكُمْ.

यानी तुम्हें जो बनू बक्र वगैरह से ख़तरा लगा हुआ है कि वे तुम्हारे पीछे मक्का पर चढ़ दौड़ेंगे, इसकी ज़िम्मेदारी मैं लेता हूँ कि ऐसा न होगा, मैं तुम्हारा मददगार हूँ। मक्का के कुरैश सुराका बिन मालिक, उसकी बड़ी शख़्सियत और असर व रसूख से पहले से वाकिफ़ थे, उसकी बात सुनकर उनके दिल जग गये और कबीला बनू बक्र के ख़तरे से बेफ़िक्र होकर मुसलमानों के

मुकाबले के लिये आमादा हो गये।

इस दोहरे फरेब से शैतान ने उन लोगों को उनके क़त्ल होने के स्थान की तरफ़ हाँक दिया:

لَمَّا تَرَأَتْ الْفِتْنُ نَكْصَ عَلَى عَقِبِهِ.

जब मक्का के मुश्रिक लोगों और मुसलमानों की दोनों जमाअतें (बदर के स्थान में) आमने सामने हुई तो शैतान पिछले पाँव लौट गया।

ग़ज़वा-ए-बदर में चूँकि मक्का के मुश्रिक लोग की पीठ पर एक शैतानी लश्कर भी आ गया था इसलिये अल्लाह तआला ने उनके मुकाबले में फ़रिश्तों का लश्कर जिब्रील व मीकाईल के नेतृत्व में भेज दिया। इमाम इब्ने जरीर वगैरह ने हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि शैतान ने जो उस वक़्त इनसानी शक्ल में सुराका बिन मालिक बनकर अपने शैतानी लश्कर का नेतृत्व कर रहा था, जब जिब्रीले अमीन और उनके साथ फ़रिश्तों का लश्कर देखा तो घबरा उठा, उस वक़्त उसका हाथ एक कुरैशी जवान हारिस बिन हिशाम के हाथ में था, फौरन उससे अपना हाथ छुड़ाकर भागना चाहा। हारिस ने टोका कि यह क्या करते हो? तो उसके सीने पर मारकर हारिस को गिरा दिया और अपने शैतानी लश्कर को लेकर भाग पड़ा। हारिस ने उसको सुराका समझते हुए कहा कि ऐ अरब के सरदार सुराका! तूने तो यह कहा था कि मैं तुम्हारा हामी और मददगार हूँ और ऐन मैदाने जंग में यह हरकत कर रहे हो? तो शैतान ने सुराका की शक्ल में जवाब दिया:

إِنِّي بَرِيءٌ مِنْكُمْ إِنِّي أَرَى مَا لَا تَرَوْنَ إِنِّي أَخَافُ اللَّهَ.

यानी मैं तुम्हारे समझौते से बरी होता हूँ क्योंकि मैं वह चीज़ देख रहा हूँ जो तुम्हारी आँखें नहीं देखतीं। मुराद फ़रिश्तों का लश्कर था। और यह कि मैं अल्लाह से डरता हूँ इसलिये तुम्हारा साथ छोड़ता हूँ।

शैतान ने फ़रिश्तों का लश्कर देखा तो उनकी ताक़त से वह वाकिफ़ था, समझ गया कि अब अपनी ख़ैर नहीं। और यह जो कहा कि मैं अल्लाह से डरता हूँ, इमामे तफ़सीर क़तादा रह. ने कहा कि यह उसने झूठ बोला, अगर वह खुदा से डरा करता तो नाफ़रमानी क्यों करता, मगर अक्सर हज़रत ने फ़रमाया कि डरना भी अपनी जगह सही है, क्योंकि वह अल्लाह तआला की कामिल कुदरत और उसके सख़्त अज़ाब को पूरी तरह जानता है, इसलिये न डरने की कोई वजह नहीं, अलबत्ता सिर्फ़ डरना बिना ईमान व इताअत के कोई फ़ायदा नहीं रखता।

अबू जहल ने जब सुराका और उसके लश्कर के पीछे हटने से अपने लश्कर की हिम्मत को टूटते देखा तो बात बनाई और कहा कि सुराका के भाग जाने से तुम मुतास्सिर न हो, उसने तो ख़ुफ़िया तौर पर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के साथ साज़िश कर रखी थी। शैतान के पीछे हटने के बाद उनका जो हशर होना था हो गया। फिर जब ये लोग मक्का वापस आये और इनमें से किसी की मुलाक़ात सुराका बिन मालिक के साथ हुई तो उसने सुराका को मलामत की कि जंगे बदर में हमारी शिकस्त और सारे नुक़सान की ज़िम्मेदारी तुझ पर है, तूने ऐन मैदाने जंग

में मैदान छोड़कर हमारे जवानों की हिम्मत तोड़ दी। उसने कहा कि मैं न तुम्हारे साथ गया न तुम्हारे किसी काम में शरीक हुआ। मैंने तुम्हारी शिकस्त की खबर भी तुम्हारे मक्का पहुँचने के बाद सुनी।

यह सब रिवायतें इमाम इब्ने कसीर ने अपनी तफसीर में नक़ल करने के बाद फ़रमाया कि शैतान मरदूद की यह आम आदत है कि इनसान को बुराई में मुब्तला करके ऐन मौके पर अलग हो जाता है। कुरआने करीम ने उसकी यह आदत बार-बार बयान फ़रमाई है। एक आयत में है:

كَمَثَلِ الشَّيْطَانِ إِذْ قَالَ لِلْإِنْسَانِ اكْفُرْ فَلَمَّا كَفَرَ قَالَ إِنِّي بَرِيءٌ مِّنْكَ إِنِّي أَخَافُ اللَّهَ رَبَّ الْعَالَمِينَ ۝

शैतानी धोखा व फ़रेब और उससे बचने का तरीका

ऊपर बयान हुई आयत के इस वाकिए से चन्द फ़ायदे हासिल हुए:

अव्वल यह कि शैतान इनसान का दुश्मन है, इसको नुक़सान पहुँचाने के लिये तरह-तरह के हीले करता और बहुरूप बदलता है। कई बार महज़ दिल में वस्वसा (ख़याल) डाल कर परेशान करता है और कई बार सामने आकर धोखा देता है।

दूसरे यह कि शैतान को अल्लाह तआला ने इसकी कुदरत दी है कि वह मुख़लिफ़ शक्तों में ज़ाहिर हो सकता है। एक मशहूर हनफी फ़कीह (आलिम) की किताब 'आकामुल-मरजान फी अहकामिल-जान्न' में इसको वज़ाहत से साबित किया गया है। इसी लिये मुहक्किनीन सूफ़ियाये किराम जो कश्फ़ वाले हैं उन्होंने लोगों को इस पर सचेत फ़रमाया है कि किसी शख्स को देखकर या उसका कलाम सुनकर बग़ैर तहक्कीक के उसके पीछे चलना बड़ा ख़तरनाक होता है। कश्फ़ व इल्हाम में भी शैतानी धोखे हो सकते हैं। मौलाना रूमी रह. ने फ़रमाया है:

ऐ बसा इब्लीस आदम-रू-ए-स्त पस बहर दस्ते नशायद दाद दस्त

कि बहुत सी बार इनसानी शक्ल में शैतान होता है इसलिये हर एक के हाथ में अपना हाथ न दे देना चाहिये। (मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी)

और हाफ़िज़ ने फ़रमाया:

दर राहे इश्क़ वस्वसा अहरमन बसेस्त हुशदार व गोश रा ब-प्याम-ए-सरोश दार

इश्क़ के रास्ते में बहुत सी शैतानी आवाज़ों से भी साबका पड़ता है (यानी बहकाने और ईमान को लूटने वाले मिलते हैं) तू चौकन्ना रह और अल्लाह की तरफ़ से आने वाली आवाज़ (यानी उसके दीन और पैग़ाम) को सुन और उसी की पैरवी कर। (मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी)

प्यामे सरोश से मुराद अल्लाह की वही (पैग़ाम व दीन) है।

कामयाबी के लिये सिर्फ़ नीयत ही का सही होना काफी

नहीं, उससे पहले रास्ता सीधा होना ज़रूरी है

तीसरे यह कि जो लोग कुफ़्र व शिर्क या दूसरे नाजायज़ आमाल में मुब्तला होते हैं इसका

ज्यादातर सबब यही होता है कि शैतान उनके बुरे आमाल को खूबसूरत, पसन्दीदा और नफा देने वाला ज़ाहिर करके उनके दिल व दिमाग को हक व सच्चाई और सही नतीजों की तरफ से फेर देता है। वे अपने बातिल (ग़लत रास्ते) ही को हक और बुरे को भला समझने लगते हैं और हक वालों की तरह अपने बातिल पर जान देने के लिये तैयार हो जाते हैं। इसी लिये कुरैशी लश्कर और उसके सरदार जब बैतुल्लाह से रुख़सत हो रहे थे तो बैतुल्लाह के सामने इन अलफाज़ से दुआ करके चले थे कि:

اللَّهُمَّ انصُرْ أَهْلَ الطَّائِفَتَيْنِ

यानी ऐ अल्लाह! हम दोनों जमाअतों में से जो ज्यादा हिदायत पर है उसकी मदद फरमाईये और फ़तह दीजिये। ये बेख़बर लोग शैतानी फ़रेब में आकर अपने आप ही को ज्यादा हिदायत पर और हक रास्ते वाला समझते थे। और पूरे इख़्लास के साथ (सच्चे दिल से) अपने बातिल की हिमायत व मदद में जान क़ुरबान करते थे।

इससे मालूम हो गया कि सिर्फ़ इख़्लास काफी नहीं जब तक कि अमल का रुख सही न हो।

इसके बाद की दूसरी आयत में मदीना के मुनाफ़िकों और मक्का के मुशिरकों का एक मुश्तरक (साझा) मक़ूला मुसलमानों के बारे में यह नक़ल किया जो गोया उन पर तरस खाकर कहा गया है कि:

غُرِّهَؤُلَاءِ دِينُهُمْ

यानी मैदाने बदर में ये मुट्ठी भर मुसलमान इतने भारी और ताक़तवर लश्कर से टकराने आ गये, इन बेचारों को इनके दीन ने फ़रेब में डालकर मौत के मुँह में दे दिया है। अल्लाह तआला ने उनके जवाब में फरमाया:

وَمَنْ يَتَوَكَّلْ عَلَى اللَّهِ فَإِنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ

यानी जो शख्स अल्लाह पर तवक्कुल और भरोसा कर लेता है तो याद रखो कि वह कभी ज़लील नहीं होता, क्योंकि अल्लाह तआला सब पर ग़ालिब है, उसकी हिक्मत के सामने सब की अक़ल व समझ रखी रह जाती है। मतलब यह है कि तुम लोग सिर्फ़ ज़ाहिरी चीज़ों और असबाब को जानने वाले और उसी पर भरोसा करने वाले हो, तुम्हें उस छुपी ताक़त की ख़बर नहीं जो उस माद्रे और असबाब के पैदा करने वाले के खज़ानों में है, और जो उन लोगों के साथ होती है जो अल्लाह तआला पर ईमान और भरोसा रखते हैं।

आज भी दीनदार भोले-भाले मुसलमानों को देखकर बहुत से अक़ल व समझ के दावेदार यँ ही कहा करते हैं:

अगले वक्तों के हैं ये लोग इन्हें कुछ न कहो

लेकिन अगर उनमें अल्लाह पर ईमान और भरोसा पूरा हो तो उन्हें इससे कोई नुक़सान नहीं पहुँच सकता।

وَلَوْ تَرَىٰ إِذْ يَتَوَفَّى الَّذِينَ كَفَرُوا الْمَلَائِكَةُ

يَضْرِبُونَ وُجُوهَهُمْ وَأَدْبَارَهُمْ، وَذُوقُوا عَذَابَ الْحَرِيقِ ۖ ذَٰلِكَ بِمَا قَدَّمْتُمْ أَيْدِيكُمْ
وَأَنَّ اللَّهَ لَيْسَ بِظَلَّامٍ لِّلْعَبِيدِ ۖ كَذَٰلِكَ أَلْهَىٰ ٱلْأَفْرَاقَ ۖ وَٱلَّذِينَ مِن قَبْلِهِمْ، كَفَرُوا بِآيَاتِ ٱللَّهِ
فَٱخَذَهُمُ ٱللَّهُ بِذُنُوبِهِمْ، إِنَّ ٱللَّهَ قَوِيٌّ شَدِيدُ ٱلْعِقَابِ ۖ ذَٰلِكَ بِأَنَّ ٱللَّهَ لَمْ يَكُ مُغَيِّرًا نِّعْمَةً
أَنعَمَهَا عَلَىٰ قَوْمٍ حَتَّىٰ يُغَيِّرَ مَا بِأَنفُسِهِمْ ۖ وَأَنَّ ٱللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝

व लौ तरा इज़् य-तवप्फल्लजी-न
क-फ़रुल्-मालाइ-कतु यज़िरबू-न
वुजू-हहुम् व अद्बारहुम् व ज़ूकू
अज़ाबल्-हरीक (50) ज़ालि-क बिमा
कद्द-मत् ऐदीकुम् व अन्नल्ला-ह
लै-स बिज़ल्लामिल्-लिल्अबीद (51)
कदअबि आलि फिरऔ-न वल्लजी-न
मिन् कब्बिहिम्, क-फ़रु
बिआयातिल्लाहि फ-अ-ख़-ज़हुमुल्लाहु
बिज़ुनूबिहिम्, इन्नल्ला-ह कविय्युन्
शदीदुल्-अिकाब (52) ज़ालि-क
बिअन्नल्ला-ह लम् यकु मुगय्यिरन्
निज़्-मतन् अन्अ-महा अला कौमिन्
हत्ता युगय्यिरु मा बिअन्फुसिहिम् व
अन्नल्ला-ह समीअुन् अलीम (53)

और अगर तू देखे जिस वक्त जान कब्ज
करते हैं काफ़िरों की फ़रिश्ते, मारते हैं
उनके मुँह पर और उनके पीछे, और
कहते हैं चखो अज़ाब जलने का। (50)
यह बदला है उसी का जो तुमने आगे
भेजा अपने हाथों और इस वास्ते कि
अल्लाह जुल्म नहीं करता बन्दों पर। (51)
जैसे दस्तूर फिरऔन वालों का और जो
उनसे पहले थे, कि इनकारी हुए अल्लाह
की बातों से, सो पकड़ा उनको अल्लाह ने
उनके गुनाहों पर, बेशक अल्लाह जोरावर
है सख्त अज़ाब करने वाला। (52) इसका
सबब यह है कि अल्लाह हरगिज़ बदलने
वाला नहीं उस नेमत को जो दी थी उसने
किसी कौम को जब तक वही न बदल
डालें अपने जी की बात, और यह कि
अल्लाह सुनने वाला जानने वाला है। (53)

खुलासा-ए-तफसीर

और अगर आप (उस वक्त का वाकिआ) देखें (तो अजीब वाकिआ नज़र आये) जबकि
फ़रिश्ते इन (मौजूदा) काफ़िरों की जान कब्ज करते जाते हैं (और) इनके मुँह पर और इनकी पीठ
पर मारते जाते हैं, और यह कहते जाते हैं कि (अभी क्या है आगे चलकर) आग की सज़ा

झेलना। (और) यह (अज़ाब) उन (कुफ़िया आमाल) की वजह से है जो तुमने अपने हाथों समेटे हैं और यह बात साबित ही है कि अल्लाह तआला बन्दों पर जुल्म करने वाले नहीं। (सो अल्लाह तआला ने बिना जुर्म के सज़ा नहीं दी, पस) उनकी हालत (इस बारे में कि कुफ़ पर सज़ा पाने वाले हुए ऐसी है) जैसी फिरऔन वालों की, और उनसे पहले के (काफ़िर) लोगों की हालत थी कि उन्होंने अल्लाह की आयतों का इनकार किया, सो खुदा तआला ने उनके (उन) गुनाहों पर उनको (अज़ाब में) पकड़ लिया, बेशक अल्लाह तआला बड़ी कुव्वत वाले, सख्त सज़ा देने वाले हैं (कि उनके मुकाबले में कोई ऐसी कुव्वत नहीं कि उनके अज़ाब को हटा सके, और) यह बात (कि बिना जुर्म हम सज़ा नहीं देते) इस सबब से है (कि हमारा एक मुस्तक़िल कायदा मुकर्रर है और बिना जुर्म सज़ा न देना उसी कायदे की रू से है, और वह कायदा यह है) कि अल्लाह तआला किसी ऐसी नेमत को जो किसी कौम को अता फ़रमाई हो नहीं बदलते जब तक कि वही लोग अपने ज़ाती आमाल को नहीं बदल डालते, और यह (बात साबित ही है) कि अल्लाह तआला बड़े सुनने वाले, बड़े जानने वाले हैं (पस वह बात के बदलने को सुनते हैं और अमल के बदलने को जानते हैं। सो इन मौजूदा काफ़िरों ने अपनी यह हालत बदली कि इनमें बावजूद कुफ़ के शुरू में ईमान लाने की सलाहियत करीब थी इनकार व मुख़ालफ़त कर-करके उसको दूर कर डाला, पस हमने अपनी नेमत यानी ढील और छूट देने को जो पहले से उनको हासिल थी अपनी पकड़ से बदल दिया। इसकी वजह यह हुई कि उन्होंने उक्त तरीक़े पर सलाहियत व इस्तेदाद के करीब होने की नेमत को बदल डाला)।

मअरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली दो आयतों में मौत के वक़्त काफ़िरों के अज़ाब और फ़रिश्तों की डाँट-डपट का ज़िक्र है। इसमें नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को ख़िताब करके फ़रमाया है कि अगर आप इन काफ़िरों का हाल उस वक़्त देखते जबकि अल्लाह के फ़रिश्ते इनकी रूह कब्ज़ करने के वक़्त इनके चेहरों और पुश्तों पर मार रहे थे और यह कहते जाते थे कि आग में जलने का अज़ाब चखो, तो आप एक बड़ा डरावना मन्ज़र देखते।

तफ़सीर के इमामों में से कुछ हज़रात ने इसको उन कुरैश के काफ़िरों के बारे में क़रार दिया है जो मैदाने बदर में मुसलमानों के मुकाबले पर आये थे और अल्लाह तआला ने मुसलमानों की इमदाद के लिये फ़रिश्तों का लश्कर भेज दिया था। इस सूरत में आयत के मायने ये हो गये कि मैदाने बदर में जो कुरैशी सरदार मारे गये उनके मारने में फ़रिश्तों का हाथ था, जो उनके सामने से चेहरों पर और पीछे से उनकी पीठों पर मारकर उनको हलाक कर रहे थे, और साथ ही आख़िरत में जहन्नम के अज़ाब की ख़बर सुना रहे थे।

और जिन हज़रात ने आयत के अलफ़ाज़ के आम होने की बिना पर इसका मज़मून आम रखा है उनके मुताबिक़ आयत के मायने यह हैं कि जब कोई काफ़िर मरता है तो मौत का फ़रिश्ता उसकी रूह कब्ज़ करने के वक़्त उसके चेहरे और पुश्त पर मारता है। कुछ रिवायतों में

है कि आग के कोड़े और लोहे के गुर्ज उनके हाथ में होते हैं जिनसे वे मरने वाले काफिर को मारते हैं। मगर चूँकि इस अज़ाब का ताल्लुक इस जहान से नहीं बल्कि क़ब्र के जहान से है जिसको बर्ज़ख़ कहा जाता है इसलिये यह अज़ाब आम तौर पर आँखों से नहीं देखा जाता।

इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से यह ख़िताब किया गया कि अगर आप देखते तो बड़ा सबक लेने वाला मन्ज़र देखते। इससे मालूम हुआ कि मौत के बाद बर्ज़ख़ के जहान में काफ़िरों को अज़ाब होता है मगर उसका ताल्लुक ग़ैब की दुनिया से है इसलिये आम तौर पर देखा नहीं जाता। क़ब्र के अज़ाब का ज़िक्र कुरआन मजीद की दूसरी आयतों में भी आया है और हदीस की रिवायतें तो इस मामले में बेशुमार हैं।

दूसरी आयत में काफ़िरों को ख़िताब करके इरशाद फ़रमाया कि यह दुनिया व आख़िरत का अज़ाब तुम्हारे अपने हाथों की कमाई है, चूँकि आम कारोबार हाथों ही से वजूद में आते हैं इसलिये हाथों का ज़िक्र कर दिया गया। मतलब यह है कि यह अज़ाब तुम्हारे अपने आमाल का नतीजा है। और यह कि अल्लाह तआला अपने बन्दों पर जुल्म करने वाले नहीं कि बिना वजह किसी को अज़ाब में मुब्तला कर दें।

तीसरी आयत में बतलाया गया कि इन मुजरिमों पर अल्लाह तआला का यह अज़ाब कोई अनोखी चीज़ नहीं बल्कि अल्लाह की आदत और क़ानून यही है कि अल्लाह तआला अपने बन्दों की हिदायत के लिये उनको अक्ल व समझ देते हैं, आस-पास में उनके लिये बेशुमार ऐसी चीज़ें मौजूद होती हैं जिनमें ग़ौर व फ़िक्र करने से वे अल्लाह तआला की अज़ीम कुदरत व बड़ाई को पहचानें और अज़िज़ मख़्लूक को उसका शरीक न बनायें, फिर और ज़्यादा तंबीह के लिये अपनी किताबें और रसूल भेजते हैं। अल्लाह के रसूल उनके समझाने-बुझाने में कोई कमी नहीं छोड़ते, वे उनको अल्लाह तआला की ज़बरदस्त कुव्वत की निशानियाँ भी मोजिज़ों की शक्ल में दिखलाते हैं। जब कोई फ़र्द (व्यक्ति) या क़ौम इन सब चीज़ों से बिल्कुल आँखें बन्द कर ले और खुदाई चेतावनियों में से किसी पर कान न धरे तो फिर अल्लाह तआला की आदत ऐसे लोगों के बारे में यही है कि दुनिया में भी उन पर अज़ाब आता है और आख़िरत के हमेशा के अज़ाब में भी गिरफ़्तार होते हैं। इरशाद फ़रमाया:

كَذَّابِ الْفِرْعَوْنَ وَالَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ

‘दअब’ के मायने आदत के हैं। मतलब यह है कि जैसे फिरऔन की आल और उनसे पहले सरकश व नाफ़रमान काफ़िरों के बारे में अल्लाह तआला की आदत (क़ानून) दुनिया को मालूम हो चुकी है कि फिरऔन को उसके सारे ताम-झाम और लाव-लश्कर समेत दरिया में ग़र्क़ कर दिया और उनसे पहले आद व समूद की क़ौमों को विभिन्न किस्म के अज़ाबों से हलाक कर दिया।

كَفَرُوا بِآيَاتِ اللَّهِ فَآخَذَهُمُ اللَّهُ بِذُنُوبِهِمْ

उन लोगों ने अल्लाह तआला की आयतों और निशानियों को झुठलाया तो अल्लाह तआला

ने उनको अपने अज़ाब में पकड़ लिया:

إِنَّ اللَّهَ قَوِيٌّ شَدِيدُ الْعِقَابِ ۝

वजह यह है कि अल्लाह तआला ताक़तवर है, कोई कुव्वत व बहादुरी वाला अपनी कुव्वत के बल पर उसके अज़ाब से नहीं छूट सकता। और अल्लाह तआला की सज़ा भी बड़ी सख़्त है।

चौथी आयत में हक़ तआला ने अपने इनाम व अज़ाब के कायम और बाक़ी रखने का एक नियम बयान फ़रमाया है। इरशाद फ़रमाया:

بِأَنَّ اللَّهَ لَمْ يَكُ مُغَيِّرًا نِّعْمَةً أَنْعَمَهَا عَلَىٰ قَوْمٍ حَتَّىٰ يُغَيِّرُوا مَا بِأَنْفُسِهِمْ.

यानी अल्लाह तआला जो नेमत किसी कौम को अज़ाब फ़रमाते हैं उसको उस वक़्त तक बदलते नहीं जब तक वे लोग खुद अपने हालात और आमाल को न बदल दें।

यहाँ पहली बात काबिले ग़ौर यह है कि हक़ तआला ने नेमत के अज़ाब करने लिये कोई ज़ाब्ला (नियम व क़ानून) नहीं बयान फ़रमाया, न इसके लिये कोई क़ैद व शर्त लगाई, न इसको किसी के अच्छे अमल पर निर्भर रखा, क्योंकि अगर ऐसा होता तो सबसे पहली नेमत जो खुद हमारा वजूद है और इसमें हक़ तआला की क़ुदरत की अज़ीब कारीगरी से हज़ारों हैरत-अंगेज़ नेमतें अमानत रखी गयी हैं, ये नेमतें ज़ाहिर है कि उस वक़्त अज़ाब हुई जबकि न हम थे न हमारा कोई अमल था:

मा नबूदेम व तकाज़ा-ए-मा न बूद

लुत्फ़े तू नागुफ़ता-ए-मा मी शनवद

न हमारा कोई वजूद था और न हमारी कुछ माँग और तकाज़ा था। यह तेरा लुत्फ़ व करम है कि तू हमारी बिना माँगी ज़रूरत व तकाज़े सुन लेता और अपनी रहमत से उसे कुबूल फ़रमाता है। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

अगर अल्लाह तआला के इनामात व एहसानात बन्दों के नेक आमाल के मुत्ताज़िर रहा करते तो हमारा वजूद ही कायम न होता।

हक़ तआला की नेमत व रहमत तो उसके रब्बुल-अलमीन और रहमान व रहीम होने के नतीजे में खुद-ब-खुद है। हाँ उस नेमत व रहमत के कायम और बाक़ी रहने का एक ज़ाब्ला इस आयत में यह बयान किया गया कि जिस कौम को अल्लाह तआला कोई नेमत देते हैं उससे उस वक़्त तक वापस नहीं लेते जब तक वह अपने हालात और आमाल को बदलकर खुद ही अल्लाह के अज़ाब को दावत न दे।

हालात के बदलने से मुराद यह है कि अच्छे आमाल और हालात को बदलकर बुरे आमाल और बुरे हालात इख़्तियार कर ले, या यह कि अल्लाह की नेमतें उसे मिलने के वक़्त जिन बुरे आमाल और गुनाहों में मुब्तला था नेमतों के मिलने के बाद उनसे ज़्यादा बुरे आमाल में मुब्तला हो जाये।

इस तफ़सील से यह भी मालूम हो गया कि जिन कौमों का ज़िक्र पिछली आयतों में आया

है यानी कुरैश के काफिर और आले फिरऔन, उनका ताल्लुक इस आयत से इस बिना पर है कि ये लोग अगरचे अल्लाह तआला की नेमतें मिलने के वक्त भी कुछ अच्छे हालात में नहीं थे सब के सब मुशरिक और काफिर ही थे, लेकिन इनामात के बाद ये लोग अपने बुरे आमाल और शरारतों में पहले से ज्यादा तेज हो गये।

आले फिरऔन ने बनी इस्राईल पर तरह-तरह के जुल्म व सितम करने शुरू कर दिये, फिर हजरत मूसा अलैहिस्सलाम के मुकाबले और मुखालफत पर आमादा हो गये जो उनके पिछले अपराधों में एक सख्त इजाफा था, जिसके जरिये उन्होंने अपने हालात और ज्यादा बुराई की तरफ बदल डाले तो अल्लाह तआला ने भी अपनी नेमत को मुसीबत व अजाब से बदल दिया। इसी तरह मक्का के कुरैश अगरचे मुशरिक और बद-अमल थे लेकिन उसके साथ उनमें कुछ अच्छे आमाल जैसे सिला-रहमी, मेहमान-नवाजी, हाजियों की खिदमत, बैतुल्लाह का सम्मान वगैरह भी थे, अल्लाह तआला ने उन पर दीन व दुनिया की नेमतों के दरवाजे खोल दिये। दुनिया में उनकी तिजारतों को तरक्की दी और ऐसे मुल्क में जहाँ किसी का तिजारती काफिला सलामती से न गुजर सकता था उन लोगों के तिजारती काफिले मुल्के शाम व यमन में जाते और कामयाब वापस आते थे, जिसका जिक्र कुरआने करीम ने सूर: 'लिईलाफि' में "रिह्लतशिशता-इ वसैफि" के उनवान से किया है।

और दीन के एतिबार से वह अजीम नेमत उनको अता हुई जो पिछली किसी कौम को नहीं मिली थी, कि तमाम नबियों के सरदार खातमुन्नबियीन सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उनमें भेजे गये, अल्लाह तआला की आखिरी और जामे किताब कुरआन उनमें भेजी गयी।

मगर उन लोगों ने अल्लाह तआला के इन इनामों की शुक्रगुजारी और कद्र करने और इनके जरिये अपने हालात को सही करने के बजाय पहले से भी ज्यादा गन्दे कर दिये कि सिला-रहमी को छोड़कर मुसलमान हो जाने वाले भाई भतीजों पर बर्बरता पूर्ण जुल्म व सितम करने लगे। मेहमान-नवाजी के बजाय उन मुसलमानों पर दाना-पानी बन्द करने के अहद-नामे लिखे गये। हाजियों की खिदमत के बजाय मुसलमानों को हरम में दाखिल होने से रोकने लगे। ये वो हालात थे जिनको कुरैश के काफिरों ने बदला। इसके नतीजे में अल्लाह तआला ने अपनी नेमतों को मुसीबतों और अजाब की सूत में तब्दील कर दिया कि वह दुनिया में भी जलील व रुस्वा हुए और जो जात रहमतुल्-लिल्आलमीन बनकर आई थी उसी के जरिये उन्होंने अपनी मौत व बरबादी को दावत दे दी।

और तफ्सीरे मजहरी में तारीख की विश्वसनीय किताबों के हवाले से लिखा है कि किलाब बिन मुरा जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के नसब में तीसरे दादा के दादा हैं, यह शुरू से इब्राहीम व इस्माईल अलैहिमस्सलाम के दीन के पाबन्द और उस पर कायम थे, और नस्ल दर नस्ल उस दीन का नेतृत्व और सरदारी इनके हाथ में रही। कुसई बिन किलाब के जमाने में इन लोगों में बुतों की पूजा का आगाज हुआ। इनसे पहले कअब बिन लुवी इनके दीनी पेशवा थे, जुमे के दिन जिसको उनकी भाषा में अरूबा कहा जाता था, सब लोगों को जमा

करके संबोधित किया करते और बतलाया करते थे कि उनकी औलाद में खातमुल-अम्बिया (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) पैदा होंगे। उनकी पैरवी सब पर लाज़िम होगी। जो उन पर ईमान न लायेगा उसका कोई अमल काबिले कुबूल न होगा। हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बारे में उनके अरबी अश्आर जाहिलीयत के शायरों में मशहूर व परिचित हैं। और कुसई बिन किलाब तमाम हाजियों के लिये खाने और पानी का इन्तिज़ाम करते थे, यहाँ तक कि ये चीज़ें हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के खानदान में आपके मुबारक ज़माने तक कायम रहीं। इसी तारीखी वज़ाहत से यह भी कहा जा सकता है कि कुरैश के हालात के बदलने से यह मुराद हो कि इब्राहीमी दीन को छोड़कर बुत-परस्ती (मूर्ति-पूजा) इस्तिज़ार कर ली।

बहरहाल आयत के मज़मून से यह मालूम हुआ कि कई बार हक़ तआला अपनी नेमत कुछ ऐसे लोगों को भी अता फ़रमाते हैं जो अपने अमल से उसके पात्र और हक़दार नहीं होते लेकिन नेमत देने के बाद अगर वे अपने आमाल का रुख सुधार व दुरुस्ती की तरफ़ फेरने के बजाय बुरे आमाल में और ज़्यादती करने लगे तो फिर यह नेमत उनसे छीन ली जाती है और वे अल्लाह के अज़ाब के हक़दार हो जाते हैं।

आयत के आखिर में फ़रमाया:

وَأَنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ

यानी अल्लाह तआला उनकी हर गुप्तगू को सुनने वाले और उनके तमाम आमाल व कामों को जानने वाले हैं। इसमें किसी ग़लती या ग़लत-फ़हमी की संभावना नहीं।

كَذَّابٍ أَلٍ فِرْعَوْنُ ۖ وَالَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ ۚ كَذَّبُوا بِآيَاتِ رَبِّهِمْ
فَأَهْلَكْنَاهُمْ بِذُنُوبِهِمْ وَأَعْرَجْنَاهُ ۖ فِرْعَوْنُ ۚ وَكُلُّ كَانُوا ظَالِمِينَ ۝ إِنَّ شَرَّ الدَّوَابِّ عِنْدَ
اللَّهِ الَّذِينَ كَفَرُوا فَهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ۝ الَّذِينَ عَاهَدَتْ مِنْهُمْ ثُمَّ يَنْقُضُونَ عَهْدَهُمْ فِي
كُلِّ مَرَّةٍ وَهُمْ لَا يَتَّقُونَ ۝ فَمَا تَتَّقُهُمْ فِي الْحَرْبِ فَشَرُّدَرِبِهِمْ مَنْ خَلَفَهُمْ لَعَلَّهُمْ يَذْكُرُونَ ۝
وَأَمَّا تَخَافَنَّ مِنْ قَوْمٍ خِيَانَةً فَاطْبِذْ إِلَيْهِمْ عَلَى سَوَاءٍ ۚ إِنَّ اللَّهَ لَا يُحِبُّ الْخَائِنِينَ ۝

कदअब्बि आलि फिरऔ-न वल्लजी-न
मिन् कब्लिहिम् कज़्ज़बू बिआयाति
रब्बिहिम् फ़-अहलकनाहुम्
बिजुनूबिहिम् व अग्रकना आ-ल
फिरऔ-न व कुल्लुन् कानू ज़ालिमीन
(54) इन्-न शरद्ववाब्बि

जैसे दस्तूर फिरऔन वालों का और जो
उनसे पहले थे, कि उन्होंने झुठलाई बातें
अपने रब की, फिर हलाक कर दिया हमने
उनको उनके गुनाहों पर और डुबो दिया
हमने फिरऔन वालों को, और सारे
ज़ालिम थे। (54) बदतर सब जानदारों में

अिन्दल्लाहिल्लाजी-न क-फरु फहुम्
 ला युअ्मिनून (55) अल्लजी-न
 आहत-त मिन्हुम् सुम्-म यन्कुजू-न
 अह-दहुम् फी कुल्लि मरतिंव-व हुम्
 ला यत्तकून (56) फ-इम्मा
 तस्कफन्नहुम् फिल्हर्बि फ-शरिद्
 बिहिम् मन् खाल्फहुम् लअल्लहुम्
 यज़्जक्करून (57) व इम्मा
 तख्राफन्-न मिन् कौमिन् ख्रिया-नतन्
 फम्बिज़् इलैहिम् अला सवाइन्,
 इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुल्-
 खाइनीन (58) ❀

अल्लाह के यहाँ वो हैं जो मुन्किर हुए
 फिर वे नहीं ईमान लाते। (55) जिनसे
 तुने समझौता किया है उनमें से फिर वे
 तोड़ते हैं अपना अहद हर बार, और वे
 डर नहीं रखते। (56) सो अगर कभी तू
 पाये उनको लड़ाई में तो उनको ऐसी
 सजा दे कि देखकर भाग जायें उनके
 पिछले ताकि उनको इब्त हो। (57) और
 अगर तुझको डर हो किसी कौम से दगा
 का तो फेंक दे उनका अहद उनकी तरफ
 ऐसी तरह पर कि हो जाओ तुम और वे
 बराबर, बेशक अल्लाह को पसन्द नहीं
 आते दगाबाज़। (58) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

(पस इस बदलने वाले मामले में भी) उनकी हालत फिरऔन वालों और उनसे पहले वालों के जैसी हालत है कि उन्होंने अपने रब की आयतों को झुठलाया, इस पर हमने उनको उनके (उन) गुनाहों के सबब हलाक कर दिया और (उनमें) फिरऔन वालों को खास तौर पर हलाक किया कि (उनको) गर्क कर दिया, और वे (फिरऔन वाले और पहले वाले) सब ज़ालिम थे। बिला शुब्हा मख्लूक में सबसे बुरे अल्लाह तआला के नज़दीक ये काफिर लोग हैं (जब ये अल्लाह के इल्म में ऐसे हैं) तो ये ईमान न लाएँगे। जिनकी यह कैफ़ियत है कि आप उनसे (कई बार) अहद ले चुके हैं (मगर) फिर (भी) वे हर बार अपना अहद तोड़ डालते हैं, और वे (अहद तोड़ने से) डरते नहीं। सो अगर आप लड़ाई में इन लोगों पर काबू पाएँ (और ये आपके हाथ आयें) तो इन (पर हमला करके उस) के ज़रिये से और लोगों को जो कि उनके अलावा हैं मुन्तशिर 'यानी तितर-बितर' कर दीजिये, ताकि वे लोग समझ जाएँ (कि अहद को तोड़ने का यह बवाल हुआ, हम ऐसा न करें। यह हुक्म तो उस वक़्त है कि जब उन लोगों ने अहद खुलेआम तोड़ दिया हो) और अगर (अभी तक खुले तौर पर तो नहीं तोड़ा लेकिन) आपको किसी कौम से ख़ियानत (यानी अहद तोड़ने) की शंका हो तो (इजाज़त है कि) आप (वह अहद) उनको इस तरह वापस कर दीजिये (यानी इस तरह उस अहद के बाकी न रहने की इत्तिला कर दीजिये) कि (आप और वे उस इत्तिला में) बराबर हो जाएँ, (और बिना ऐसी साफ़ इत्तिला के लड़ना ख़ियानत है और)

बेशक अल्लाह तआला ख़ियानत करने वालों को पसन्द नहीं करते।

मजारिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत का मज़मून बल्कि अलफ़ाज़ तक़रीबन वही हैं जो एक आयत पहले आ चुके हैं:

كَذَابَ الَّذِينَ يُرْعَوْنَ وَالَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ، كَفَرُوا بِآيَاتِ اللَّهِ فَأَخَذَهُمُ اللَّهُ بِذُنُوبِهِمْ.

मगर बयान का मक़सद दोनों में अलग-अलग है। पहली आयत में इसका बयान करना मक़सूद था कि उन लोगों का कुफ़्र उनके अज़ाब का सबब बना और इस आयत में मक़सद यह है कि अल्लाह तआला का आम क़ानून यह है कि जब किसी क़ौम पर अल्लाह तआला की नेमतें मुतवज्जह हों और वह उनकी क़द्र न पहचाने और अल्लाह के सामने न झुके तो उसकी नेमतें अज़ाब और मुसीबतों से बदल दी जाती हैं। फिरऔन की क़ौम और उनसे पहली क़ौमों ने भी जब अल्लाह तआला की नेमतों की क़द्र न की तो उनसे नेमतें छीन ली गयीं और नेमतों के बजाय अज़ाब में पकड़ लिये गये। कुछ अलफ़ाज़ में भी कहीं-कहीं फ़र्क़ करके खास-खास इशारे फ़रमाये गये हैं। मसलन पहली आयत में 'क-फ़रू बिआयातिल्लाहि' के अलफ़ाज़ थे और यहाँ 'बिआयाति रब्बिहिम' का लफ़ज़ है। लफ़ज़ अल्लाह के बजाय सिफ़त रब ज़िक्र करके इसकी तरफ़ इशारा कर दिया कि ये लोग बड़े ही ज़ालिम हक़ न पहचानने वाले थे कि जो ज़ात उनकी रब (पालने वाली) है इनके वजूद की शुरूआत से लेकर मौजूदा हालात तक उसकी नेमतों ही में इनकी परवरिश हुई है, उसी की निशानियों को झुठलाने लगे।

और पहली आयत 'फ़-अ-ख़-जहुमुल्लाहु बिजुनूबिहिम' फ़रमाया था, यहाँ 'फ़-अह्लकनाहुम बिजुनूबिहिम' इरशाद फ़रमाया। इसमें उस संक्षिप्तता की तफ़सील व खुलासा हो गया, क्योंकि पहली आयत में उनका अज़ाब में पकड़ा जाना ज़िक्र किया गया जिसकी विभिन्न और अनेक सूरतें हो सकती हैं- ज़िन्दा और बाकी रहते हुए मुसीबतों में गिरफ़्तार हो जायें या सिरे से उनका वजूद ही ख़त्म कर दिया जाये। इस आयत में "अह्लकनाहुम" फ़रमाकर स्पष्ट कर दिया कि उन सब क़ौमों की सज़ा सज़ा-ए-मौत थी, हमने उन सब को हलाक कर डाला। हर क़ौम की हलाक़त की मुख़लिफ़ सूरतें ज़ाहिर हुईं, उनमें से फिरऔन चूँकि खुदाई का दावेदार था और उसकी क़ौम उसकी तस्दीक़ करती थी इसलिये खुसूसियत के साथ उसका ज़िक्र कर दिया गया:

وَأَغْرَقْنَا آلَ فِرْعَوْنَ.

यानी हमने आले फिरऔन को ग़र्क़ कर दिया। दूसरी क़ौमों की हलाक़त की सूरतें यहाँ बयान नहीं की गयीं, दूसरी आयतों में उसकी भी तफ़सील मौजूद है कि किसी पर ज़लज़ला आया, कोई ज़मीन के अन्दर धंसा दी गयी, किसी की सूरतें बदल दी गयीं, किसी पर हवा का तूफ़ान मुसल्लत हो गया। और आखिर में मक्का के मुशिरकों पर ग़ज़वा-ए-बदर में मुसलमानों के हाथों से अज़ाब आया।

इसके बाद की आयत में उन्हीं काफ़िरों के बारे में इरशाद फ़रमाया:

إِنَّ شَرَّ الدَّوَابِّ عِنْدَ اللَّهِ الَّذِينَ كَفَرُوا.

इसमें लफ़्ज़ 'दवाब्ब' दाब्बतुन की जमा (बहुवचन) है जिसके लुगवी मायने ज़मीन पर चलने वाले के हैं, इसलिये इनसान और जितने जानवर ज़मीन पर चलते हैं सब को यह लफ़्ज़ शामिल है, मगर आम मुहावरों में यह लफ़्ज़ खास चौपाये जानवरों के लिये बोला जाता है। उन लोगों का हाल बेशक़र होने में जानवरों से भी ज्यादा गिरा हुआ था इसलिये इस लफ़्ज़ से ताबीर किया गया। आयत के मायने वाज़ेह हैं कि तमाम जानवरों और इनसानों में सबसे बदतरीन जानवर ये लोग हैं। आख़िर में फ़रमाया 'फ़हुम् ला युअ्मिनुन्' यानी ये लोग ईमान नहीं लायेंगे। मतलब यह है कि इन लोगों ने अपनी खुदा की दी हुई और फ़ितरी क्षमता व काबलियत को बरबाद कर दिया, चौपाये जानवरों की तरह खाने पीने सोने जागने को ज़िन्दगी का मक़सद बना लिया, इसलिये इनकी ईमान तक पहुँच नहीं हो सकती।

हज़रत सईद बिन जुबैर रह. ने फ़रमाया कि यह आयत यहूदियों के छह आदमियों के बारे में आई है जिनके मुताल्लिक हक़ तअ़ाला ने पेशगी ख़बर दे दी कि ये लोग आख़िर तक ईमान नहीं लायेंगे।

साथ ही इस लफ़्ज़ में उन लोगों को अज़ाब से अलग रखना मन्ज़ूर है जो अगरचे इस वक़्त काफ़िरों के साथ लगे हुए मुसलमानों और इस्लाम के खिलाफ़ जिद्दोज़हद में मशगूल हैं मगर आईन्दा किसी वक़्त इस्लाम कुबूल करके अपनी पहली ग़लत हरकतों से तौबा कर लेंगे। चुनाँचे ऐसा ही हुआ कि उनमें से बहुत बड़ी जमाअत मुसलमान होकर न सिर्फ़ खुद नेक व मुत्तकी बन गयी बल्कि दुनिया के लिये सुधारक और तक़वे की दाजी (दावत देने वाली) बनकर खड़ी हुई।

तीसरी आयत:

الَّذِينَ عَاهَدْتَ مِنْهُمْ ثُمَّ يَنْقُضُونَ عَهْدَهُمْ فِي كُلِّ مَرَّةٍ وَهُمْ لَا يَتَّقُونَ

यह आयत मदीना के यहूदियों बनू कुरैज़ा और बनू नज़ीर के मुताल्लिक है। पिछली आयतों में मक्का के मुशिरकों पर बदर के मैदान में मुसलमानों के हाथों अल्लाह का अज़ाब नाज़िल होने का ज़िक्र और पिछली उम्मतों के काफ़िरों से उनकी मिसाल देने का बयान हुआ था, इस आयत में उस ज़ालिम जमाअत का ज़िक्र है जो मदीने में हिजरत करने के बाद मुसलमानों के लिये आस्तीन का साँप (यानी छुपी दुश्मन) बनी, और जो एक तरफ़ मुसलमानों के साथ अमन व सुलह की दावेदार थी। दूसरी तरफ़ मक्का के मुशिरकों में इस्लाम के खिलाफ़ सबसे बड़ा झण्डा वाहक अबू जहल था, इसी तरह मदीना के यहूदियों में इसका झण्डा उठाने वाला कअब बिन अशरफ़ था।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब हिजरत के बाद मदीना तय्यिबा में तशरीफ़ लाये और यहाँ रहने लगे। मुसलमानों के बढ़ते हुए ग़लबे व ताक़त को देखकर ये लोग मरऊब तो हुए मगर दिल में इस्लाम की दुश्मनी की आग़ हमेशा सुलगती रहती थी।

इस्लामी सियासत का तकाज़ा था कि जहाँ तक मुम्किन हो मदीना के यहूदियों को किसी न किसी समझौते के तहत साथ लगाया जाये, ताकि वे मक्का वालों को मदद न पहुँचायें। यहूदी भी अपने मरऊब होने की बिना पर इसी के इच्छुक थे।

इस्लामी सियासत का पहला कदम इस्लामी कौमियत

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मदीना तय्यिबा पहुँचकर इस्लामी सियासत की सबसे पहली बुनियाद इसको बनाया कि मुहाजिरीन व अन्सार के वतनी और कौमी भेदभावों को खत्म करके एक नई कौमियत इस्लाम के नाम पर कायम फ़रमाई। मुहाजिरीन व अन्सार के विभिन्न कबीलों को आपस में भाई-भाई बना दिया। और आपके ज़रिये अल्लाह तआला ने अन्सार के आपसी झगड़े और विवाद जो सदियों से चले आ रहे थे सब को दूर फ़रमाकर आपस में भी और मुहाजिरीन के साथ भी भाई-भाई बना दिया।

दूसरा कदम यहूदियों के साथ समझौता

इस सियासत का दूसरा कदम यह था कि मुकाबले में दो थे एक मक्का के मुशिरक लोग जिनके तकलीफ़ पहुँचाने ने मक्का छोड़ने पर मजबूर कर दिया था। दूसरे मदीना के यहूदी जो अब मुसलमानों के पड़ोसी बन गये थे, इनमें से यहूदियों के साथ एक समझौता किया गया जिसका अहद-नामा तफ़सीली लिखा गया। इस समझौते की पाबन्दी मदीना के आस-पास के सब यहूदियों पर और इस तरफ़ तमाम मुहाजिरीन व अन्सार पर लागू थी। समझौते का पूरा मतन (असल इबारत) किताब 'अलबिदाया वन्निहाया' इब्ने कसीर में और सीरत इब्ने हिशाम वगैरह में मुफ़स्सल मौजूद है। इसका सब से अहम हिस्सा यह था कि आपसी झगड़ों के वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फैसला सब के लिये माननीय होगा। दूसरा हिस्सा यह था कि मदीना के यहूदी मुसलमानों के खिलाफ़ किसी दुश्मन को ज़ाहिरी या अन्दरूनी तौर पर कोई इमदाद नहीं देंगे। लेकिन उन लोगों ने ग़ज़वा-ए-बदर के वक़्त अहद को तोड़ा और मक्का के मुशिरकों को हथियारों और जंग के सामान से मदद पहुँचाई। मगर जब ग़ज़वा-ए-बदर का अन्जाम मुसलमानों की खुली फ़तह और काफ़िरों की बड़ी शिकस्त की सूरत में सामने आया तो फिर उन लोगों पर रौब छा गया और हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने हाज़िर होकर अर्ज़ किया कि इस मर्तबा हमसे ग़लती हो गयी, इसको माफ़ फ़रमा दें, आईन्दा अहद व समझौता नहीं तोड़ेंगे।

हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस्लामी बुर्दबारी व करम जो आपकी आदत व मिजाज था उसकी बिना पर दोबारा समझौते का नवीकरण फ़रमा दिया, मगर ये लोग अपनी शरारत से मजबूर थे, ग़ज़वा-ए-उहुद में मुसलमानों की शुरूआती शिकस्त और नुक़सान का इल्म होकर इनके हौसले बढ़ गये और इनका सरदार कअब बिन अशरफ़ खुद सफ़र करके मक्का पहुँचा और मक्का के मुशिरकों को इस पर तैयार किया गया कि अब वे पूरी तैयारी के साथ

मुसलमानों पर हमला करें और मदीना के यहूदी उनके साथ होंगे।

यह दूसरी बार अहद तोड़ना था जो उन लोगों ने इस्लाम के खिलाफ़ किया। उक्त आयत में इस बार-बार के अहद तोड़ने का जिक्र फरमाकर उन लोगों की शरारत बयान की गयी है कि ये वे लोग हैं जिनसे आपने समझौता कर लिया मगर ये हर बार अपने अहद को तोड़ते रहे। आयत के आखिर में इरशाद फरमाया:

وَهُمْ لَا يَتَّقُونَ

यानी ये लोग डरते नहीं। इसका यह मतलब भी हो सकता है कि ये बदनसीब लोग चूँकि दुनिया की हवस में मस्त व बेहोश हैं, आखिरत की फ़िक्र ही नहीं, इसलिये आखिरत के अज़ाब से नहीं डरते। और यह मतलब भी हो सकता है कि ऐसे बदकिरदार अहद को तोड़ने वाले लोगों का जो बुरा अन्जाम इस दुनिया में हुआ करता है ये लोग अपनी ग़फ़लत व नादानी की वजह से उससे नहीं डरते।

फिर सारी दुनिया ने आँखों से देख लिया कि उन लोगों ने अपनी इस बद-किरदारी (बुरे आमाल और ग़लत चलन) की सज़ा चखी। अबू जहल की तरह कअब बिन अशरफ़ मारा गया, और मदीना के यहूदी वतन से निकाल दिये गये।

चौथी आयत में हक़ तआला ने अपने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम को उन बद-अहदों (अहद का उल्लंघन करने वालों) के बारे में एक हिदायत नामा दिया जिसके अलफाज़ ये हैं:

فَإِنَّمَا تَشْفِقُهُمْ فِي الْحَرْبِ فَشَرِّدْ بِهِمْ مَنْ خَلْفَهُمْ لَعَلَّهُمْ يَدْعُرُونَ

इसमें लफ़ज़ 'तस्वफन्नहुम' के मायने हैं उन पर काबू पाने के, और 'शरिद' तशरीद के मस्दर से बना है जिसके असली मायने भगा देने और तितर-बितर कर देने के हैं। आयत के मायने यह हैं कि अगर आप किसी जंग में उन पर काबू पा लें तो उनको ऐसी सख़्त दर्दनाक सज़ा दें जो दूसरों के लिये एक सबक हो। उनके पीछे जो लोग इस्लाम की दुश्मनी में लगे हैं वे यह समझ लें कि अब ख़ैर इसी में है कि यहाँ से भागकर अपनी जान बचायें। मुराद इससे यह है कि उनको ऐसी सज़ा दी जाये जिसको देखकर मक्का के मुशरिक लोग और दूसरे दुश्मन कबीले भी मुतास्सिर हों और आईन्दा उनको मुसलमानों के मुकाबले में आने की जुरत न रहे।

आयत के आखिर में 'लअल्लहुम यत्तकून' फरमाकर रब्बुल-आलमीन की आम रहमत की तरफ़ इशारा कर दिया कि इस दर्दनाक सज़ा का असली मक़सद भी कोई बदला लेना या अपने गुस्से को ठण्डा करना नहीं बल्कि उन्हीं की यह मस्लेहत और बेहतरी है कि शायद यह सूरतेहाल देखकर ये लोग कुछ होश में आ जायें और अपने किये पर पछताकर अपना सुधार कर लें।

सुलह के समझौते को ख़त्म करने की सूरत

पाँचवीं आयत में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम को जंग व सुलह के क़ानून की एक अहम धारा बतलाई गयी है जिसमें समझौते की पाबन्दी की खास अहमियत के साथ यह

भी बतलाया गया है कि अगर किसी समझौता करने वाले दूसरे पक्ष की तरफ से ख़ियानत यानी अहद व समझौता तोड़ने का ख़तरा पैदा हो जाये तो यह ज़रूरी नहीं कि हम समझौते की पाबन्दी को बदस्तूर बाकी रखें, लेकिन यह भी जायज़ नहीं कि समझौते को स्पष्ट रूप से ख़त्म कर देने से पहले हम उनके खिलाफ़ कोई क़दम उठायें, बल्कि सही सूरत यह है कि उनको इत्मीनान व फ़ुर्सत की हालत में इससे आगाह कर दिया जाये कि तुम्हारी बद-नीयती या उल्लंघन हम पर खुल चुका है, या यह कि तुम्हारे मामलात हमें संदिग्ध नज़र आते हैं इसलिये हम आईन्दा इस समझौते के पाबन्द नहीं रहेंगे, तुमको भी हर तरह का इख़्तियार है कि हमारे खिलाफ़ जो कार्रवाई चाहो करो। आयत के अलफ़ाज़ ये हैं:

وَأَمَّا تَخَافَنَّ مِنْ قَوْمٍ خِيَانَةً فَانْبِذْ إِلَيْهِمْ عَلَى سَوَاءٍ. إِنَّ اللَّهَ لَا يُحِبُّ الْخَائِنِينَ ۝

यानी अगर आपको किसी समझौता करने वाली क़ौम से ख़ियानत (बद-दियानती) और अहद तोड़ने का अन्देशा पैदा हो जाये तो उनका अहद उनकी तरफ़ ऐसी सूरत से वापस कर दें कि आप और वे बराबर हो जायें। क्योंकि अल्लाह तआला ख़ियानत करने वालों को पसन्द नहीं करते।

मतलब यह है कि जिस क़ौम के साथ सुलह का समझौता हो चुका है उसके मुक़ाबले में कोई जंगी पहल करना ख़ियानत में दाख़िल है और अल्लाह तआला ख़ियानत करने वालों को पसन्द नहीं करते। अगरचे यह ख़ियानत दुश्मन काफ़िरों ही के हक़ में की जाये, वह भी जायज़ नहीं, अलबत्ता अगर दूसरी तरफ़ से अहद तोड़ने और समझौते के खिलाफ़ करने का ख़तरा पैदा हो जाये तो ऐसा किया जा सकता है कि खुले तौर पर उनको ऐलान के साथ आगाह कर दें कि हम आईन्दा समझौते के पाबन्द नहीं रहेंगे। मगर यह ऐलान ऐसी तरह हो कि मुसलमान और दूसरा फ़रीक़ इसमें बराबर हों। यानी ऐसी सूरत न की जाये कि इस ऐलान व तंबीह से पहले उनके मुक़ाबले की तैयारी कर ली जाये और वे ख़ाली ज़ेहन होने की बिना पर तैयारी न कर सकें, बल्कि जो कुछ तैयारी करनी है वह इस ऐलान व तंबीह के बाद करें।

यह है इस्लाम का अदल व इन्साफ़ कि ख़ियानत करने वाले दुश्मनों के भी हुक्क की हिफ़ाज़त की जाती है और मुसलमानों को उनके मुक़ाबले में इसका पाबन्द किया जाता है कि समझौता ख़त्म करने से पहले कोई तैयारी भी उनके खिलाफ़ न करें। (तफ़सीरे मज़हरी वग़ैरह)

अहद पूरा करने का एक अजीब वाकिआ

अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, नसाई, इमाम अहमद बिन हंबल रह. ने सलीम बिन आमिर की रिवायत से नक़ल किया है कि हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु का एक क़ौम के साथ एक समय-सीमा तक के लिये जंग बन्दी का समझौता था। हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु ने इरादा फ़रमाया कि इस समझौते के दिनों में अपना लश्कर और जंग का सामान उस क़ौम के करीब पहुँचा दें ताकि समझौते की मियाद ख़त्म होते ही वे दुश्मन पर टूट पड़ें। मगर ऐन उस

वक्त जब हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु का लश्कर उस तरफ़ रवाना हो रहा था यह देखा गया कि एक बड़ी उम्र के आदमी घोड़े पर सवार बड़े जोर से यह नारा लगा रहे हैं:

اللَّهُ أَكْبَرُ اللَّهُ أَكْبَرُ وَلَقَاءُ لَأَعْدَاءِ.

यानी तकबीर के नारे के साथ यह कहा कि हमको समझौता पूरा करना चाहिये उसकी खिलाफ़वर्जी न करनी चाहिये। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि जिस कौम से कोई सुलह या जंग-बन्दी का समझौता हो जाये तो चाहिये कि उनके खिलाफ़ न कोई गिरह खोलें और न बाँधें। हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु को इसकी ख़बर की गयी। देखा तो यह कहने वाले बुजुर्ग हज़रत अमर बिन अबसा रज़ियल्लाहु अन्हु सहाबी थे। हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु ने फौरन अपनी फौज को वापसी का हुक्म दे दिया ताकि जंग-बन्दी की मियाद में लश्कर चढ़ाने का क़दम उठाकर ख़ियानत में दाख़िल न हो जायें। (इब्ने कसीर)

وَلَا يَحْسِبَنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا سَبَقُوا إِنَّهُمْ لَا يُعْجِزُونَ ۝

وَأَعِدُّوا لَهُمْ مَا اسْتَطَعْتُمْ مِنْ قُوَّةٍ وَمِنْ رِبَاطِ الْخَيْلِ تُرْهِبُونَ بِهِ عَدُوَّ اللَّهِ وَعَدُوَّكُمْ وَ
آخِرِينَ مِنْ دُونِهِمْ ۚ لَا تَعْلَمُونَهُمُ ۚ اللَّهُ يَعْلَمُهُمْ ۚ وَمَا تُنْفِقُوا مِنْ شَيْءٍ فِي سَبِيلِ اللَّهِ
يُؤْتِ إِلَيْكُمْ وَأَنْتُمْ لَا تَظْلُمُونَ ۝ وَإِنْ جَنَحُوا لِلسَّلَامِ فَاجْعَلْ لَهَا وَتَوَكَّلْ عَلَى اللَّهِ ۚ إِنَّهُ هُوَ
السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ۝ وَإِنْ يُرِيدُوا أَنْ يَخْدَعُوكَ فَإِنْ حَسِبَكَ اللَّهُ هُوَ الَّذِي إِلَيْكَ مِصْرُهَا وَ
بِالْمُؤْمِنِينَ ۝

व ला यह्स-बन्नल्लजी-न कं-फरु
स-बकू, इन्नहुम् ला युअ्जिज़ून
(59) व अज़िदू लहुम् मस्ततअतुम्
मिन् कुव्वतिव्-व मिरिबातिल्लैलि
तुहिबू-न बिही अदुव्वल्लाहि व
अदुव्वकुम् व आख़ारी-न मिन्
दूनिहिम् ला तअलमूनहुम् अल्लाहु
यअलमुहुम्, व मा तुन्फिकू मिन्
शैइन् फी सबीलिल्लाहि युवफ़-फ़

और यह न समझें काफ़िर लोग कि वे
भाग निकले, वे हरगिज़ थका न सकेंगे
हमको। (59) और तैयार करो उनकी
लड़ाई के वास्ते जो कुछ जमा कर सको
कुव्वत से और पले हुए घोड़ों से कि
उससे धाक पड़े अल्लाह के दुश्मनों पर
और तुम्हारे दुश्मनों पर और दूसरों पर
उनके अलावा, जिनको तुम नहीं जानते,
अल्लाह उनको जानता है, और जो कुछ
तुम खर्च करोगे अल्लाह की राह में वह
पूरा मिलेगा तुमको, और तुम्हारा हक़ न

इलैकुम् व अन्तुम् ला तुज्जलमून (60)
व इन् ज-नहू लिस्सलिम् फज्जह लहा
व तवक्कल् अलल्लाहि, इन्नहू
हुवस्समीअुल्-अलीम (61) व
इय्युरीदू अय्यददअू-क फ-इन्-न
हस्ब-कल्लाहु हुवल्लजी अय्य-द-क
बिनसिही व बिल्मुअ्मिनीन (62)

रह जायेगा। (60) और अगर वे झुकें
सुलह की तरफ तो तू भी झुक उसी तरफ
और भरोसा कर अल्लाह पर, बेशक वही
है सुनने वाला जानने वाला। (61) और
अगर वे चाहें कि तुझको दगा दें तो
तुझको काफी है अल्लाह, उसी ने तुझको
जोर दिया अपनी मदद का और
मुसलमानों का। (62)

खुलासा-ए-तफसीर

और काफिर लोग अपने को यह ख्याल न करें कि वे बच गये, यकीनन वे लोग (खुदा तआला को) आजिज नहीं कर सकते (कि उसके हाथ न आयें। या तो दुनिया ही में सज़ा में मुब्तला कर देगा वरना आखिरत में तो यकीनी है) और उन (काफिरों) से (मुकाबला करने) के लिये जिस कद्र तुमसे हो सके कुव्वत (यानी हथियार) से और पले हुए घोड़ों से, सामान दुरुस्त रखो, कि उस (सामान) के जरिये से तुम उन पर (अपना) रौब जमाए रखो जो कि (कुफ़ की वजह से) अल्लाह के दुश्मन हैं और (तुम्हारी फ़िक्र में रहने की वजह से) तुम्हारे दुश्मन हैं, (जिनसे रात-दिन तुमको साबका पड़ता रहता है) और उनके अलावा दूसरे (काफिरों) पर भी (रौब जमाये रखो) जिनको तुम (यकीन के साथ) नहीं जानते (बल्कि) उनको अल्लाह ही जानता है (जैसे फ़ारस और रोम वगैरह के काफिर, जिनसे उस वक़्त साबका नहीं पड़ा मगर सहाबा का साज व सामान और जंग की तैयारी व महारत अपने वक़्त में उनके मुकाबले में भी काम आयी और उन पर भी रौब जमा। कुछ तो मुकाबले में आकर पराजित हुए कुछ ने जिज़या देना कुबूल किया कि यह भी रौब का असर है) और अल्लाह की राह में (जिसमें जिहाद भी आ गया) जो कुछ भी खर्च करोगे (जिसमें वह खर्च भी आ गया जो लड़ाई का सामान व हथियार दुरुस्त करने में किया जाये) वह (यानी उसका सवाब) तुमको (आखिरत में) पूरा-पूरा दे दिया जायेगा, और तुम्हारे लिये (उसमें) कुछ कमी न होगी। और अगर वे (काफिर) सुलह की तरफ झुकें तो आप (को) भी (इजाज़त है कि अगर उसमें मस्लेहत देखें तो) उस तरफ झुक जाइये और (अगर बावजूद मस्लेहत के यह संदेह हो कि यह उनकी चाल न हो तो) तो अल्लाह पर भरोसा रखिये, (ऐसे गुमानों और संदेह से अन्देशा न कीजिये) बिला शुब्हा वह ख़ूब सुनने वाला, ख़ूब जानने वाला है (उनकी बातों और अहवाल को सुनता जानता है, उनका खुद इन्तिज़ाम कर देगा)। और अगर (वास्तव में वह शंका व गुमान सही हो और) वे लोग (सचमुच सुलह से) आपको धोखा देना चाहें तो अल्लाह तआला आप (की मदद और हिफ़ाज़त करने) के लिये काफी हैं, (जैसा कि

इससे पहले भी आपका साथ देते थे चुनाँचे) वह वही है जिसने आपको अपनी (गैबी) इमदाद (फ़रिशतों) से और (ज़ाहिरी इमदाद यानी) मुसलमानों से क़ुव्वत दी।

मज़ारिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत में उन काफ़िरों का ज़िक्र है जो ग़ज़वा-ए-बदर में शरीक नहीं थे इसलिये बच गये या शरीक होने के बाद भाग निकले, इस तरह अपनी जान बचा ली। उन लोगों के मुताल्लिक़ इस आयत में इरशाद फ़रमाया कि ये लोग यूँ न समझें कि हम बच निकले। क्योंकि ग़ज़वा-ए-बदर काफ़िरों के लिये अल्लाह का एक अज़ाब था और उसकी पकड़ से बचना किसी के बस में नहीं। इसलिये फ़रमाया:

إِنَّهُمْ لَا يَنْجِرُونَ

यानी ये लोग अपनी चालाकी से अल्लाह को अज़िज़ नहीं कर सकते, वह जब पकड़ना चाहेंगे ये एक क़दम न सरक सकेंगे। हो सकता है कि दुनिया ही में पकड़ लिये जायें वरना आख़िरत में तो इनकी गिरफ़्तारी ज़ाहिर है।

इस आयत ने इस तरफ़ इशारा कर दिया कि कोई मुजरिम गुनाहगार अगर किसी मुसीबत और तकलीफ़ से निजात पा जाये और फिर भी तौबा न करे बल्कि अपने जुर्म पर डटा रहे तो यह इसकी निशानी न समझो कि वह कामयाब हो गया और हमेशा के लिये छूट गया, बल्कि वह हर वक़्त अल्लाह तआला की गिरफ़्त में है और यह ढील उसके अज़ाब और मुसीबत को और बढ़ा रही है, अगरचे उसको महसूस न हो।

जिहाद के लिये हथियार और जंग के सामान की तैयारी फ़र्ज़ है

दूसरी आयत में इस्लाम की रक्षा और काफ़िरों के मुक़ाबले के लिये तैयारी के अहक़ाम हैं। इरशाद फ़रमाया:

وَأَعِزُّوا لَهُمْ مَا اسْتَطَعْتُمْ

यानी जंग के सामान की तैयारी करो काफ़िरों के लिये जिस क़द्र तुमसे हो सके। इसमें जंग के सामान की तैयारी के साथ "मस्ततअतुम" की कैद लगाकर यह इशारा फ़रमा दिया कि तुम्हारी कामयाबी के लिये यह ज़रूरी नहीं कि तुम्हारे मुक़ाबिल (सामने वाले) के पास जैसा और जितना सामान है तुम भी उतना ही हासिल कर लो, बल्कि इतना काफ़ी है कि अपनी हिम्मत भर जो सामान हो सके वह जमा कर लो तो अल्लाह तआला की नुसरत व इमदाद तुम्हारे साथ होगी।

इसके बाद उस सामान की कुछ तफ़सील इस तरह बयान फ़रमाई:

مِنْ قُوَّةٍ

यानी मुकाबले की कुव्वत व ताकत जमा करो। इसमें तमाम जंगी सामान, हथियार, सवारी वगैरह भी दाखिल हैं और अपने बदन की वर्जिश, जंगी तरीकों का सीखना भी। कुरआने करीम ने इस जगह उस जमाने के प्रचलित हथियारों का जिक्र नहीं फरमाया, बल्कि कुव्वत का आम लफ्ज़ इस्तिहार फरमाकर इस तरफ भी इशारा कर दिया कि यह कुव्वत हर जमाने और हर मुल्क व मकाम के एतिबार से अलग और भिन्न हो सकती है। उस जमाने के असलेहा तीर, तलवार, नेजे थे, उसके बाद बन्दूक तोप का जमाना आया। फिर अब बमों और रॉकेटों का वक्त आ गया। लफ्ज़ कुव्वत इन सब को शामिल है। इसलिये आज के मुसलमानों को अपनी हिम्मत के हिसाब से ऐटमी ताकत, टैंक और लड़ाकू विमान, समुद्री बेड़े जमा करने चाहियें, क्योंकि यह सब इसी कुव्वत के मफहूम (मायने) में दाखिल हैं। और इसके लिये जिस इल्म व फन को सीखने की जरूरत पड़े वह सब अगर इस नीयत से हो कि इसके जरिये इस्लाम और मुसलमानों की रक्षा और काफिरों के मुकाबले का काम लिया जायेगा तो वह भी जिहाद के हुक्म में है।

लफ्ज़ कुव्वत आम जिक्र करने के बाद एक खास कुव्वत का विशेष और स्पष्ट रूप से भी जिक्र फरमा दिया:

وَمِنْ رِبَاطِ الْخَيْلِ

लफ्ज़ 'रिबात' मस्दरी मायने में भी इस्तेमाल होता है और मरबूत के मायने में भी। पहली सूरत में इसके मायने होंगे घोड़े बाँधना या पले हुए घोड़ों को जमा करना। जंग के सामान में से विशेष तौर पर घोड़ों का जिक्र इसलिये कर दिया कि उस जमाने में किसी मुल्क व कौम के फतह करने में सबसे ज्यादा प्रभावी व मुफीद घोड़े ही थे। और आज भी बहुत से ऐसे मकामात हैं जिनको घोड़ों के बगैर फतह नहीं किया जा सकता। इसी लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि घोड़ों की पेशानी (माथे) में अल्लाह तआला ने बरकत रख दी है।

सही हदीसों में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जंग के सामान जमा करने और उसके इस्तेमाल की मशक करने को बड़ी इबादत और बड़े सवाब का जरिया करार दिया है। तीर बनाने और चलाने पर बड़े-बड़े अज्र व सवाब का वायदा है।

और चूँकि जिहाद का असल मकसद इस्लाम और मुसलमानों की रक्षा और बचाव है और रक्षा व बचाव हर जमाने और हर कौम का अलग होता है इसलिये हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया:

جَاهِدُوا الْمُشْرِكِينَ بِأَمْوَالِكُمْ وَأَنْفُسِكُمْ وَالسِّيَرِ كُمْ. (رواه ابو داود والنسائي والدارمي عن انس رضي الله عنه)

इस हदीस से मालूम हुआ कि जिस तरह रक्षा व बचाव और जिहाद हथियारों से होता है इसी तरह कई बार ज़बान से भी होता है और कलम भी ज़बान ही के हुक्म में है। इस्लाम और कुरआन का बचाव, बेदीनी के हमलों और कुरआन व हदीस में किसी तरह की रद्दोबदल का बचाव और रक्षा ज़बान या कलम से यह भी इस शर्ई स्पष्ट दलील की बिना पर जिहाद में

दाखिल है।

उक्त आयत में जंग के सामान की तैयारी का हुक्म देने के बाद उस सामान के जमा करने की मस्लेहत और असल मकसद भी इन अलफाज में बयान फरमाया:

تَرْهَوْنَ بِهِ عَدُوَّ اللَّهِ وَعَدُوَّكُمْ

यानी जंग के सामान और बचाव की चीज़ जमा करने का असल मकसद कत्ल व क़िताल (जंग और मार-काट) नहीं बल्कि कुफ़ व शिर्क को पस्त करना और मरऊब व मगलूब कर देना है, वह कभी सिर्फ़ ज़बान या कलम से भी हो सकता है और कई बार इसके लिये कत्ल व क़िताल ज़रूरी होता है। जैसी सूरतेहाल हो उसके मुताबिक़ बचाव और रक्षा करना फ़र्ज़ है।

इसके बाद इरशाद फरमाया कि जंग व जिहाद की तैयारी से जिन लोगों को मरऊब करना मकसूद है उनमें से कुछ को तो मुसलमान जानते हैं और वो वे लोग हैं जिनसे मुसलमानों का मुकाबला जारी था, यानी मक्का के काफ़िर और मदीना के यहूदी। और कुछ वे लोग भी हैं जिनको अभी तक मुसलमान नहीं जानते। इससे मुराद पूरी दुनिया के काफ़िर और मुशिरक हैं जो अभी तक मुसलमानों के मुकाबले पर नहीं आये मगर आईन्दा उनसे भी टकराव होने वाला है। कुरआने करीम की इस आयत ने बतला दिया कि अगर मुसलमानों ने अपने मौजूदा दुश्मन व मुकाबिल के मुकाबले की तैयारी कर ली तो इसका रौब सिर्फ़ उन्हीं पर नहीं बल्कि दूर-दूर के काफ़िर किसरा व कैसर बग़ैरह पर भी पड़ेगा। चुनाँचे ऐसा ही हुआ और खुलफ़ा-ए-राशिदीन के दौर में ये सब पराजित व मरऊब हो गये।

जंगी सामान जमा करने और जंग करने में माल की भी ज़रूरत पड़ती है, बल्कि जंग का सामान भी माल ही के ज़रिये तैयार किया जा सकता है, इसलिये आयत के आख़िर में अल्लाह की राह में माल खर्च करने की फज़ीलत और उसका बड़ा अज़्र इस तरह बयान फरमाया है कि इस राह में तुम जो कुछ भी खर्च करोगे उसका पूरा-पूरा बदला तुम्हें दे दिया जायेगा। कई बार तो दुनिया में भी माले ग़नीमत की सूरत में यह बदला मिल जाता है वरना आख़िरत का बदला तो मुतैयन (तय) है, और ज़ाहिर है कि वह ज़्यादा क़ाबिले क़द्र है।

तीसरी आयत में सुलह के अहकाम और उससे संबन्धित चीज़ों का बयान है। इरशाद फरमाया:

وَإِنْ جَنَحُوا لِلسَّلْمِ فَاجْنَحْ لَهَا

लफ़ज़ 'सल्म' और 'सिल्म' दोनों तरह सुलह के मायने में आता है। आयत के मायने यह हैं कि अगर काफ़िर किसी वक़्त सुलह की तरफ़ झुकें तो आपको भी झुक जाना चाहिये। यहाँ हुक्म देने का कलिमा इख़्तियार देने के लिये इस्तेमाल फरमाया है। मुराद यह है कि जब काफ़िर सुलह की तरफ़ माईल हों तो आपको भी इख़्तियार है अगर मुसलमानों की मस्लेहत सुलह में महसूस करें तो सुलह कर सकते हैं। और 'व इन ज-नहू' की कैद से मालूम हुआ कि सुलह उसी वक़्त की जा सकती है जब काफ़िरों की तरफ़ से सुलह की इच्छा ज़ाहिर हो। क्योंकि बग़ैर उनकी

इच्छा के अगर मुसलमान खुद ही सुलह की पेशकश करें तो यह उनकी कमजोरी समझी जायेगी।

हैं अगर कोई मौका ऐसा आ पड़े कि मुसलमान किसी मुसीबत व हमले में घिर जायें और अपनी सलामती के लिये कोई सूरत सिवाय सुलह के नज़र न आये तो सुलह में अपनी तरफ से पहल करना भी कुछ फुकहा के कौल के मुताबिक जायज़ और शरई दलीलों से साबित है।

और चूँकि दुश्मन की जानिब से सुलह की इच्छा होने में यह संदेह रहता है कि वे मुसलमानों को धोखा देकर ग़फ़लत में डाल दें और फिर अचानक से हमला कर दें, इसलिये आयत के आखिर में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह हिदायत दी गयी कि:

وَتَوَكَّلْ عَلَى اللَّهِ إِنَّهُ هُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ۝

यानी आप अल्लाह तआला पर भरोसा करें कि वही ख़ूब सुनने वाले जानने वाले हैं। वह उनकी गुप्तगू को भी सुनते हैं और उनके दिलों में छुपे हुए इरादों को भी जानते हैं, वह आपकी मदद के लिये काफी हैं। आप ऐसे बेदलील संदेह और शुब्हों व गुमानों पर अपने कामों की बुनियाद न रखें और ऐसे ख़तरों को अल्लाह के हवाले कर दें।

इसके बाद चौथी आयत में इसी मज़मून को और ज्यादा स्पष्टता और बज़ाहत के साथ इस तरह बयान फरमाया:

وَإِنْ يُرِيدُوا أَنْ يَخْدَعُوكَ فَإِنْ حَسِبَكَ اللَّهُ هَادِيًا تَائِبًا ۝

यानी अगर यही संदेह सामने आ जाये कि सुलह करने से उनकी नीयत ख़राब हो, आपको धोखा ही देना चाहें तब भी आप कोई परवाह न करें, क्योंकि अल्लाह तआला आपके लिये काफी हैं, पहले भी अल्लाह तआला ही की इमदाद व ताईद से आपका काम चला है, अल्लाह तआला ने अपनी खास मदद से आपकी ताईद फ़रमाई जो आपकी फ़तह व कामयाबी की असल बुनियाद और हकीकत है और ज़ाहिरी तौर पर मुसलमानों की जमाअत आपकी इमदाद के लिये खड़ी कर दी जो ज़ाहिरी असबाब में से है। तो जिस हकीकी मालिक और कादिर मुतलक ने फ़तह व कामयाबी के तमाम असबाब और साधनों को वजूद अता फ़रमाया वह आज भी दुश्मनों के धोखे व फ़रेब के मामले में आपकी मदद फ़रमायेगा। अल्लाह के इसी वायदे के तहत इस आयत के उतरने के बाद हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को उम्र भर कभी ऐसा इत्तिफ़ाक़ नहीं हुआ कि दुश्मनों के धोखे फ़रेब से कोई तकलीफ़ पहुँची हो। इसी लिये तफ़सीर के उलेमा ने फ़रमाया है कि यह वायदा हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिये ऐसा है जैसा कि "वल्लाहु यअसिमु-क मिनन्नासि" का वायदा, कि इस आयत के नाज़िल होने के बाद हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी निगरानी करने वाले सहाबा किराम को मुत्मईन और कार्यमुक्त फ़रमा दिया था। इसी से यह मालूम होता है कि यह वायदा हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ मख़सूस था। (बयानुल-कुरआन) दूसरे लोगों को ज़ाहिरी तदबीर और अपने आस-पास के हालात के तहत काम करना चाहिये।

وَأَلْفَ بَيْنٍ قُلُوبِهِمْ ۖ لَوْ أَنْفَقْتَ مَا فِي الْأَرْضِ جَمِيعًا مَّا أَلْفَتْ بَيْنَ قُلُوبِهِمْ
 وَلَكِنَّ اللَّهَ أَلْفَ بَيْنَهُمْ ۚ إِنَّهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝ يَأَيُّهَا النَّبِيُّ حَسْبُكَ اللَّهُ وَمَنِ اتَّبَعَكَ مِنَ
 الْمُؤْمِنِينَ ۝ يَأَيُّهَا النَّبِيُّ حَرِّضِ الْمُؤْمِنِينَ عَلَى الْقِتَالِ ۚ إِنْ يَكُنْ مِنْكُمْ عِشْرُونَ صَابِرُونَ
 يَغْلِبُوا مِائَتَيْنِ ۚ وَإِنْ يَكُنْ مِنْكُمْ مِائَةٌ يَغْلِبُوا أَلْفًا مِنَ الَّذِينَ كَفَرُوا ۚ بِأَنَّهُمْ قَوْمٌ
 لَا يَفْقَهُونَ ۝ أَلَنْ خَفَّفَ اللَّهُ عَنْكُمْ وَعَلِمَ أَنَّ فِيكُمْ ضَعْفًا ۚ فَإِنْ يَكُنْ مِنْكُمْ مِائَةٌ صَابِرَةٌ
 يَغْلِبُوا مِائَتَيْنِ ۚ وَإِنْ يَكُنْ مِنْكُمْ أَلْفٌ يَغْلِبُوا أَلْفَيْنِ بِإِذْنِ اللَّهِ ۚ وَاللَّهُ مَعَ الصَّابِرِينَ ۝

व अल्ल-फ़ बै-न कुलूबिहिम्, लौ
 अन्फक्-त मा फिलअर्जि जमीअम्-
 मा अल्लफ़-त बै-न कुलूबिहिम् व
 लाकिन्नल्ला-ह अल्ल-फ़ बैनहुम्, इन्नहू
 अज़ीजुन् हकीम (63) या अय्युहन्-
 नबिय्यु हस्बुकल्लाहु व मनित्त-ब-अ-क
 मिनल्-मुअमिनीन (64) ●

या अय्युहन्नबिय्यु हरिज़िल्-मुअमिनी-न
 अलल्-कितालि, इय्यकुम्-मिन्कुम्
 अिशरू-न साबिरू-न यग़िलबू मि-अतैनि
 व इय्यकुम्-मिन्कुम् मि-अतुय्यग़िलबू
 अल्फ़म्-मिनल्लज्जी-न क-फ़रू
 बिअन्नहुम् कौमुल्-ला यप्कहून
 (65) अल्आ-न ख़ाफ़-फ़ल्लाहु
 अन्कुम् व अलि-म अन्-न फ़ीकुम्
 ज़अफ़न्, फ़-इय्यकुम्-मिन्कुम्
 मि-अतुन् साबि-रतुय्यग़िलबू मि-अतैनि
 व इय्यकुम्-मिन्कुम् अल्फ़ुय-यग़िलबू

और उलफ़त डाली उनके दिलों में, अगर
 तू खर्च कर देता जो कुछ ज़मीन में है
 सारा न उलफ़त डाल सकता उनके दिलों
 में लेकिन अल्लाह ने उलफ़त डाली उनमें,
 बेशक वह जोरावर है हिक्मत वाला। (63)
 ऐ नबी! काफी है तुझको अल्लाह और
 जितने तेरे साथ हैं मुसलमान। (64) ●

ऐ नबी! शौक दिला मुसलमानों को लड़ाई
 का, अगर हों तुम में बीस शख्स साबित-
 कदम रहने वाले तो ग़ालिब हों दो सौ
 पर, और अगर हो तुम में सौ शख्स तो
 ग़ालिब हों हजार काफ़िरों पर, इस वास्ते
 कि वे लोग समझ नहीं रखते। (65) अब
 बोझ हल्का कर दिया अल्लाह ने तुम पर
 से और जाना कि तुम में सुस्ती है, सो
 अगर हों तुम में सौ शख्स साबित-कदम
 रहने वाले तो ग़ालिब हों दो सौ पर, और
 अगर हों तुम में हजार तो ग़ालिब हों दो

अल्फैनि बि-इज़िनल्लाहि, वल्लाहु
मज़स्-साबिरीन (66)

हज़ार पर अल्लाह के हुक्म से, और
अल्लाह साथ है साबित-क़दम रहने वालों
के। (66)

खुलासा-ए-तफ़सीर

और (मुसलमानों को इमदाद का ज़रिया बनाने के लिये) उनके दिलों में इत्तिफ़ाक़ पैदा कर दिया (चुनौचे ज़ाहिर है कि अगर आपस में इत्तिफ़ाक़ न हो तो कोई काम ख़ास कर दीन की मदद मिलकर नहीं कर सकते, और उनमें सरदारी की चाहत और आपसी दुश्मनी व नफ़रत के हद से ज़्यादा होने के सबब ऐसी एकता व एकजुटता दुश्वार थी कि) अगर आप (इसके बावजूद कि अक्ल व तदबीर भी कामिल रखते हैं और सामान भी उसके लिये आपके पास काफी होता यहाँ तक कि) दुनिया भर का माल (इस काम के लिये) खर्च करते तब भी उनके दिलों में इत्तिफ़ाक़ पैदा न कर सकते, लेकिन (यह) अल्लाह ही (का काम था कि उस) ने उनमें आपस में इत्तिफ़ाक़ पैदा कर दिया, बेशक वह ज़बरदस्त हैं (कि जो चाहें अपनी क़ुदरत से कर दें और) हिक्मत वाले हैं (कि जिस तरीक़े से मुनासिब जानें उस काम को कर दें, और जब अल्लाह तआला का अपनी ग़ैबी इमदाद और मोमिनों से आपकी मदद फ़रमाना मालूम हो गया तो) ऐ नबी! (इससे साबित हो गया कि) आपके लिये (हकीक़त में) अल्लाह तआला काफी है, और जिन मोमिनों ने आपकी पैरवी की है (ज़ाहिरन) वे काफी हैं।

ऐ पैग़म्बर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम)! आप मोमिनों को जिहाद का शौक दिलाइये (और उसके बारे में यह क़ानून सुना दीजिये कि) अगर तुम में के बीस आदमी साबित-क़दम रहने वाले होंगे तो (अपने से दस गुनी संख्या पर यानी) दो सौ पर ग़ालिब आ जाएँगे, और (इसी तरह) तुम में के सौ आदमी हों तो एक हज़ार काफ़िरों पर ग़ालिब आ जाएँगे। इस वजह से कि वे ऐसे लोग हैं जो (दीन को) कुछ नहीं समझते (और इस वजह से कुफ़्र पर अड़े हुए हैं, और इस सबब से उनको ग़ैबी इमदाद नहीं पहुँचती। इस सबब से वह मग़लूब हो जाते हैं। पस तुम पर वाजिब है कि अपने से दस गुना के मुकाबले से भी पीछे न हटो। पहले यह हुक्म नाज़िल हुआ था जब सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम पर भारी हुआ तो उन्होंने अर्ज किया। एक मुद्दत के बाद यह दूसरी आयत जिससे वह पहला हुक्म ख़त्म हो गया, नाज़िल हुई। यानी) अब अल्लाह ने तुम पर तख़्फ़ीफ़ “यानी कमी और नमी” कर दी और मालूम कर लिया कि तुम में हिम्मत की कमी है सो (यह हुक्म दिया जाता है कि) अगर तुम में के सौ आदमी साबित-क़दम रहने वाले होंगे तो (अपने से दोगुनी संख्या पर यानी) दो सौ पर ग़ालिब आ जाएँगे, और (इसी तरह) अगर तुम में के हज़ार होंगे तो दो हज़ार पर अल्लाह के हुक्म से ग़ालिब आ जाएँगे। और (हमने जो साबिर “जमे रहने वालों” की कैद लगाई तो इसलिये कि) अल्लाह तआला सब्र करने वालों (यानी जो दिल और क़दम से साबित और जमे रहें उन) के साथ हैं (यानी उनकी मदद करते हैं)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

सूर: अनफ़ाल की ज़िक्र हुई चार आयतों में से पहली आयत में मुसलमानों की फ़तह व कामयाबी के असली सबब और उसके हासिल होने का तरीका बयान किया गया है। इससे पहली आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह खिताब किया गया था कि अल्लाह तआला ही की ज़ात है जिसने अपनी खास मदद से और मुसलमानों की जमाअत से आपकी ताईद और मदद फ़रमाई है। इस आयत में यह बतलाया गया है कि मुसलमानों की जमाअत से किसी की इमदाद व नुसरत ज़ाहिर है कि सिर्फ़ उसी सूरत में हो सकती है जबकि यह जमाअत आपस में मुत्तफ़क़ और एकजुट हो। और जितना इत्तिफ़ाक़ व एकजुटता हो उतनी ही उसकी कुव्वत और वज़न होता है। आपसी इत्तिहाद व एकजुटता के रिश्ते मज़बूत हैं तो पूरी जमाअत मज़बूत व ताक़तवर है, और अगर ये रिश्ते ढीले हैं तो पूरी जमाअत ढीली और कमज़ोर है। इस आयत में हक़ तआला ने अपने उस खास इनाम का ज़िक्र फ़रमाया जो हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ताईद व मदद के लिये आम मुसलमानों पर हुआ कि उनके दिलों में मुकम्मल एकता व मुहब्बत पैदा कर दी गयी। हालाँकि हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मदीने की हिजरत से पहले उनके दो कबीलों- औस व खज़रज में आपस में भयानक जंगें लड़ी जा चुकी थीं और झगड़े चलते रहते थे। हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बरकत से अल्लाह तआला ने उन जानी दुश्मनों को आपस में घुला-मिला दिया और भाई-भाई बना दिया। मदीना में कायम होने वाली नई इस्लामी हुकूमत के बाकी व कायम रहने और दुश्मनों पर ग़ालिब आने का असली और अन्दरूनी सबब तो अल्लाह तआला की नुसरत व इमदाद थी, और ज़ाहिरी सबब मुसलमानों की आपस में मुकम्मल उलफ़त व मुहब्बत और इत्तिफ़ाक़ व एकजुटता थी।

इसी के साथ इस आयत में यह भी बतला दिया गया कि विभिन्न (यानी एक-दूसरे से विमुख) लोगों के दिलों को जोड़कर उनमें उलफ़त व मुहब्बत पैदा करना किसी इन्सान के बस का काम नहीं, सिर्फ़ उस ज़ात का काम है जिसने सब को पैदा किया है। अगर कोई इन्सान सारी दुनिया की दौलत भी इस काम के लिये खर्च कर डाले कि आपस में नफ़रत व दुश्मनी रखने वाले लोगों के दिलों में उलफ़त पैदा कर दे तो वह कभी इस पर क़ाबू नहीं पा सकता।

मुसलमानों का आपस में वास्तविक और पायदार इत्तिफ़ाक़

अल्लाह तआला की इताअत-गुज़ारी पर मौक़ूफ़ है

इससे यह भी मालूम हुआ कि लोगों के दिलों में आपसी उलफ़त व मुहब्बत अल्लाह तआला का इनाम है, और यह भी ज़ाहिर है कि अल्लाह तआला की नाफ़रमानी के साथ उसके इनाम को हासिल नहीं किया जा सकता, बल्कि इनाम के हासिल करने के लिये उसकी इताअत व रज़ा

की तलब शर्त है।

जमाअतों और व्यक्तियों के बीच एकता व इत्तिफाक एक ऐसी चीज़ है जिसके अच्छा, पसन्दीदा और मुफीद होने से किसी मज़हब व मिल्लत और किसी फ़िक्र व नज़र (विचार धारा) वाले को इख़िलाफ़ (इनकार व विरोध) नहीं हो सकता, और इसी लिये हर शख्स जो लोगों की इस्लाह (सुधार) की फ़िक्र करता है वह उनको आपस में मुत्तफ़िक़ (एकजुट) करने पर जोर देता है, लेकिन आम दुनिया इस हकीकत से बेख़बर है कि दिलों का पूरा और पायदार इत्तिफाक ज़ाहिरी तदबीरों से हासिल नहीं होता, यह सिर्फ़ अल्लाह तआला की इताअत व रज़ा तलब करने से हासिल होता है। कुरआने हकीम ने इस हकीकत की तरफ़ कई आयतों में इशारे फ़रमाये हैं। एक जगह इरशाद है:

وَاَعْتَصِمُوا بِحَبْلِ اللَّهِ جَمِيعًا وَلَا تَفَرَّقُوا

इसमें झगड़े व विवाद और आपसी फूट से बचने की यह तदबीर बतलाई गयी है कि सब मिलकर अल्लाह की रस्सी यानी कुरआन या इस्लामी शरीअत को मज़बूत थाम लें तो सब आपस में खुद-बखुद मुत्तफ़िक़ हो जायेंगे और आपसी फूट और विवाद ख़त्म हो जायेंगे। राय का इख़िलाफ़ दूसरी चीज़ है और वह जब तक अपनी हद के अन्दर रहे फूट और झगड़े का सबब कभी नहीं बनता। झगड़ा फ़साद तभी होता है जबकि शर्ई हदों से निकला जाये। आज इत्तिफाक-इत्तिफाक तो सब पुकारते हैं मगर इत्तिफाक के मायने हर शख्स के नज़दीक यह होते हैं कि लोग मेरी बात मान लें तो इत्तिफाक हो जाये। और दूसरे भी इत्तिफाक के लिये इसी फ़िक्र में होते हैं कि वे हमारी बात मान लें तो इत्तिफाक हो जाये। हालाँकि जब रायों का इख़िलाफ़ (भेद) अक्ल व दियानत रखने वालों में लाज़िमी और ज़रूरी है तो यह ज़ाहिर है कि अगर हर शख्स दूसरे के साथ मुत्तफ़िक़ होने को इस पर मौकूफ़ रखे कि दूसरा उसकी बात मान ले तो कियामत तक आपस में इत्तिफाक नहीं हो सकता, बल्कि इत्तिफाक की सही और फ़ितरी सूरत वही है जो कुरआन ने बतलाई कि दोनों मिलकर किसी तीसरे की बात को तस्लीम कर लें और तीसरा वही होना चाहिये जिसके फ़ैसले में ग़लती की संभावना न हो। वह ज़ाहिर है कि हक़ तआला ही हो सकता है, इसलिये उक्त आयत में इसकी हिदायत फ़रमाई गयी कि सब मिलकर अल्लाह की किताब को मज़बूत थाम लो तो आपस के झगड़े ख़त्म होकर पूरा इत्तिफाक पैदा हो जायेगा। एक दूसरी आयत में इरशाद है:

إِنَّ الدِّينَ أَمْنٌ وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ سَيَجْعَلُ لَهُمُ الرَّحْمَنُ وُدًّا

यानी जो लोग ईमान लायें और नेक अमल करें अल्लाह तआला उनमें आपस में मुहब्बत व दोस्ती पैदा फ़रमा देते हैं। इस आयत ने वाज़ेह कर दिया कि दिलों में असली मुहब्बत व दोस्ती पैदा होने का सही तरीका ईमान और नेक अमल की पाबन्दी है, इसके बग़ैर अगर कहीं कोई इत्तिफाक व इत्तिहाद ज़ाहिरी तौर पर कायम कर भी लिया जाये तो वह बिल्कुल बेबुनियाद और कमज़ोर होगा, ज़रा सी ठेस में ख़त्म हो जायेगा। जिसको दुनिया की तमाम कौमों के हालात व

तजुर्बात से देखा जाता है। खुलासा यह है कि इस आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर हक़ तआला के उस इनाम की वज़ाहत की गयी है जो मदीना के तमाम कबीलों के दिलों में उलफ़त पैदा करके रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इमदाद व नुसरत के लिये उनको एक मज़बूत दीवार की तरह बनाकर किया गया है।

दूसरी आयत में भी यही मज़मून खुलासे के तौर पर बयान फ़रमाकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को तसल्ली दी गयी है कि आपके लिये हकीकत के एतिबार से अल्लाह तआला और ज़ाहिर के एतिबार से मोमिनों की जमाअत काफ़ी है, आप किसी बड़े से बड़े दुश्मन की संख्या या सामान से भयभीत न हों। मुफ़स्सिरीन हज़रत ने फ़रमाया है कि यह आयत बदर की जंग के मैदान में जंग शुरू होने से पहले नाज़िल हुई थी ताकि कम संख्या वाले, बेसामान अपने मुक़ाबिल की भारी संख्या और ज़्यादा सामान से मरज़ुब न हो जायें।

तीसरी और चौथी आयत में मुसलमानों के लिये एक जंगी क़ानून का ज़िक्र है कि उनको किस हद तक अपने हरीफ़ (मुक़ाबिल और प्रतिद्वंदी) के मुक़ाबले पर जमना फ़र्ज़ और उससे हटना गुनाह है। पिछली आयतों और वाकिआत में इसका ज़िक्र तफ़सील के साथ आ चुका है कि अल्लाह तआला की ग़ैबी इमदाद मुसलमानों के साथ होती है इसलिये उनका मामला दुनिया की आम कौमों के जैसा मामला नहीं, यह थोड़े भी बहुत सारों पर ग़ालिब आ सकते हैं, जैसा कि कुरआने करीम में इरशाद है:

كَمْ مِنْ فِئَةٍ قَلِيلَةٍ غَلَبَتْ فِئَةً كَثِيرَةً بِإِذْنِ اللَّهِ

(यानी बहुत सी कम संख्या वाली जमाअतें अल्लाह तआला के हुक्म से अधिक संख्या वाले मुक़ाबिल पर ग़ालिब आ जाती हैं)

इसलिये इस्लाम के सबसे पहले ज़िहाद ग़ज़वा-ए-बदर में दस मुसलमानों को सौ आदमियों के बराबर क़रार देकर यह हुक्म दिया गया कि:

अगर तुम में बीस आदमी साबित-क़दम रहने वाले होंगे तो दो सौ दुश्मनों पर ग़ालिब आ जायेंगे, और अगर तुम सौ होंगे तो एक हज़ार काफ़िरों पर ग़ालिब आ जाओगे।

इस इबारत में उनवान एक ख़बर का रखा गया है कि सौ मुसलमान एक हज़ार काफ़िरों पर ग़ालिब आ जायेंगे, मगर मक़सद यह हुक्म देना है कि सौ मुसलमानों को एक हज़ार काफ़िरों के मुक़ाबले से भागना जायज़ नहीं। ख़बर का उनवान रखने में मस्तेहत यह है कि मुसलमानों के दिल इस खुशख़बरी से मज़बूत हो जायें कि अल्लाह का वायदा हमारी हिफ़ाज़त और ग़लबे का है। अगर हुक्म को हुक्म देने के अलफ़ाज़ की सूरत क़ानून बनाकर पेश किया जाता तो फ़ितरी तौर पर वह भारी मालूम होता।

ग़ज़वा-ए-बदर पहले पहल की जंग ऐसी हालत में थी जबकि मुसलमानों की कुल तायदाद ही बहुत कम थी, और वे भी सब के सब जंग के मोर्चे पर गये न थे बल्कि फ़ौरी तौर पर जो लोग तैयार हो सके वही उस जंग की फ़ौज बने, इसलिये इस ज़िहाद में सौ मुसलमानों को एक

हज़ार काफ़िरोँ का मुकाबला करने का हुक्म दिया, और ऐसे अन्दाज़ में दिया कि फ़तह व मदद का वायदा साथ था।

चौथी आयत में इस हुक्म को आगे के लिये निरस्त करके दूसरा हुक्म यह दिया गया कि:

अब अल्लाह तआला ने कमी कर दी और मालूम कर लिया कि तुम में हिम्मत की कमी है सो अगर तुम में के सौ आदमी साबित-क़दम रहने वाले होंगे तो दो सौ पर ग़ालिब आ जायेंगे।

यहाँ भी मक़सद यह है कि सौ मुसलमानों को दो सौ काफ़िरोँ के मुकाबले से भागना जायज़ नहीं। पहली आयत में एक मुसलमान को दस के मुकाबले से बचना और भागना मना करार दिया था इस आयत में एक को दो के मुकाबले से गुरेज़ से मना किया गया। और यही आखिरी हुक्म है जो हमेशा के लिये जारी और बाकी है।

यहाँ भी हुक्म को हुक्म के उनवान से नहीं बल्कि ख़बर और खुशख़बरी के अन्दाज़ से बयान फ़रमाया गया है, जिसमें इशारा है कि एक मुसलमान को दो काफ़िरोँ के मुकाबले पर ज़मने का हुक्म (अल्लाह की पनाह) कोई बेइन्साफ़ी या सख़्ती नहीं, बल्कि अल्लाह तआला ने मुसलमान में उसके ईमान की वजह से वह कुव्वत रख दी है कि उनमें का एक दो के बराबर रहता है।

मगर दोनों जगह इस फ़तह व मदद की खुशख़बरी को इस शर्त के साथ बाँधा गया है कि ये मुसलमान साबित-क़दम रहने (यानी मुकाबले में ज़मने) वाले हों और ज़ाहिर है कि क़त्ल व क़िताल के मैदान में अपनी जान को ख़तरे में डालकर साबित-क़दम रहना उसी का काम हो सकता है जिसका ईमान कामिल हो। क्योंकि कामिल ईमान इनसान को शहादत के शौक़ का ज़ब्बा अता करता है और यह ज़ब्बा उसकी ताक़त को बहुत कुछ बढ़ा देता है।

आयत के आखिर में आम क़ानून की सूरत में बतला दिया:

وَاللَّهُ مَعَ الصَّابِرِينَ

यानी अल्लाह तआला साबित-क़दम रहने वालों का साथी है। इसमें मैदाने जंग में साबित क़दम रहने वाले भी शामिल हैं और आम शरई अहक़ाम की पाबन्दी पर साबित-क़दम रहने वाले हज़रात भी। उन सब के लिये अल्लाह की मदद और साथ का वायदा है और यह साथ ही उनकी फ़तह व कामयाबी का असली राज़ है। क्योंकि जिसको क़ादिर मुतलक़ का साथ नसीब हो गया उसको सारी दुनिया मिलकर भी अपनी जगह से नहीं हिला सकती।

مَا كَانَ لِنَبِيٍّ أَنْ يَكُونَ لَهُ أَسْرَىٰ حَتَّىٰ يُثْخِنَ فِي

الْأَرْضِ ۖ تُرِيدُونَ عَرَضَ الدُّنْيَا ۗ وَاللَّهُ يُرِيدُ الْآخِرَةَ ۚ وَاللَّهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝ لَوْلَا كِتَابٌ مِّنَ اللَّهِ

سَبَقَ لَكُمْ فِيمَا أَخَذْتُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ۝ فَكُلُوا مِنَّمَا غَنِمْتُمْ حَلَالًا طَيِّبًا ۚ وَاتَّقُوا اللَّهَ ۚ إِنَّ اللَّهَ

عَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝

मा का-न लि-नबिद्यिन् अय्यकू-न
लहू अस्सा हत्ता युस्सि-न फित्तिअर्जि,
तुरीदू-न अ-रज्जदुन्या वल्लाहु युरीदुत्
आखि-र-त्त, वल्लाहु अजीजुन् हकीम
(67) लौ ला किताबुम्-मिनल्लाहि
स-ब-क्क लमस्सकुम् फीमा अख्खत्तुम्
अज्जाबुन् अज्जीम (68) फकुलू मिम्मा
गनिम्तुम् हलालन् तय्यिबन्-वत्तकुल्ला-ह,
इन्नल्ला-ह गुफूरुर्हीम (69) ❀

नबी को नहीं चाहिए कि अपने यहाँ रखे
कैदियों को जब तक खूब रक्तपात न कर
ले मुल्क में, तुम चाहते हो असबाब
दुनिया का और अल्लाह के यहाँ चाहिए
आखिरत, और अल्लाह जोरावर है हिक्मत
वाला। (67) अगर न होती एक बात
जिसको लिख चुका अल्लाह पहले से तो
तुमको पहुँचता इस लेने में बड़ा अज़ाब।
(68) सो खाओ जो तुमको ग़नीमत में
मिला हलाल सुथरा। और डरते रहो
अल्लाह से, बेशक अल्लाह है बख़्शने
वाला मेहरबान। (69) ❀

खुलासा-ए-तफ़सीर

(ऐ मुसलमानो! तुमने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जो उन कैदियों से कुछ लेकर
छोड़ देने का मशिवरा दिया यह बेजा था, क्योंकि) नबी (की शान) के लायक नहीं कि उनके कैदी
(बाकी) रहें (बल्कि क़त्ल कर दिए जाएँ) जब तक कि वह ज़मीन में अच्छी तरह (काफ़िरों का)
खून न बहा लें (क्योंकि जिहाद के लागू होने की असली गर्ज फ़साद को दूर करना है, और बिना
उस सज़ा के जिसमें काफ़िरों का जोर व ताक़त बिल्कुल टूट जाये फ़साद को दूर करना मुम्किन
नहीं, पस इस नौबत से पहले कैदियों का ज़िन्दा छोड़ देना आपकी सुधारक शान के मुनासिब
नहीं, अलबत्ता जब ऐसी क़ुव्वत हासिल हो जाये फिर क़त्ल ज़रूरी नहीं बल्कि और सूत्रों भी
जायज़ की गयी हैं। पस ऐसी नामुनासिब राय तुमने आपको क्यों दी) तुम तो दुनिया का माल व
असबाब चाहते हो (इसलिये फ़िदये की राय दी) और अल्लाह तआला आखिरत (की मस्लेहत)
को चाहते हैं (और वह इसमें है कि काफ़िर ख़ौफ़ से मग़लूब हो जायें जिसमें आज़ादी से इस्लाम
का नूर व हिदायत फैले और बिना रोक-टोक लोग खूब ज़्यादा मुसलमान हों और निजात पायें)
और अल्लाह तआला बड़े ज़बरदस्त हैं, बड़ी हिक्मत वाले हैं (वह तुमको काफ़िरों पर ग़ालिब
करते और कामयाबियों की अधिकता से तुमको मालदार कर देते अगरचे किसी हिक्मत के सबब
इसमें देर होती, जो फ़ेल तुमसे ज़ाहिर हुआ है वह ऐसा नापसन्दीदा है कि) अगर खुदा तआला
का एक लिखा हुआ (मुक़द्दर) न हो चुकता (वह यह कि उन कैदियों में के लोग मुसलमान हो
जायेंगे जिससे संभाविक फ़साद उत्पन्न न होगा। अगर यह न होता) तो जो मामला तुमने
इख़्तियार किया है उसके बारे में तुम पर कोई बड़ी सज़ा आ पड़ती। (लेकिन चूँकि कोई फ़साद

न हुआ और इत्तिफाकन तुम्हारा मशिवरा सही निकल आया इसलिये तुम सज़ा से बच गये, यानी हमने इस फ़िदये को जायज़ कर दिया) सो जो कुछ तुमने (उनसे फ़िदये में) लिया है उसको हलाल पाक (समझकर) खाओ और अल्लाह तआला से डरते रहो (कि आईन्दा हर तरह की एहतियात रखो) बेशक अल्लाह तआला बड़े बख़्शाने वाले, बड़ी रहमत वाले हैं (कि तुम्हारा गुनाह भी माफ़ कर दिया, यह मग़फ़िरत है, और फ़िदया भी हलाल कर दिया यह रहमत है)।

मआरिफ़ व मसाईल

उक्त आयतों का ताल्लुक़ ग़ज़वा-ए-बदर (बदर की जंग) के एक ख़ास वाकिए से है इसलिये इनकी तफ़सीर से पहले हदीस की सही और विश्वसनीय रिवायतों के ज़रिये उस वाकिए का बयान ज़रूरी है।

वाक़िआ यह है कि ग़ज़वा-ए-बदर इस्लाम में सबसे पहला जिहाद है और अचानक पेश आया है, उस वक़्त तक जिहाद से संबन्धित अहक़ाम की तफ़सील कुरआन में नाज़िल नहीं हुई थी। जिहाद में अगर माले ग़नीमत हाथ आ जाये तो उसे क्या किया जाये, दुश्मन के सिपाही अपने कब्ज़े में आ जायें तो उनको गिरफ़्तार करना जायज़ है या नहीं, और गिरफ़्तार कर लिया जाये तो फिर उनके साथ मामला क्या करना चाहिये।

माले ग़नीमत के मुताल्लिक़ पिछले तमाम अम्बिया की शरीअतों में क़ानून यह था कि मुसलमानों को उससे नफ़ा उठाना और इस्तेमाल करना हलाल नहीं था, बल्कि हुक्म यह था कि पूरा माले ग़नीमत जमा करके किसी मैदान में रख दिया जाये और दस्तूरे इलाही यह था कि आसमान से एक आग़ आती और उस सारे माल को जलाकर खाक कर देती। यही निशानी उस जिहाद के मक़बूल होने की समझी जाती थी। अगर माले ग़नीमत को जलाने के लिये आसमानी आग़ न आये तो यह इसकी पहचान होती थी कि जिहाद में कोई कोताही रही है जिसके सबब वह अल्लाह तआला के नज़दीक मक़बूल नहीं।

सही बुख़ारी व मुस्लिम की रिवायत में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मुझे पाँच चीज़ें ऐसी अता की गयी हैं जो मुझसे पहले किसी नबी को अता नहीं हुईं। उनमें से एक यह भी है कि काफ़िरों से हासिल होने वाला माले ग़नीमत किसी के लिये हलाल नहीं था मगर मेरी उम्मत के लिये हलाल कर दिया गया। माले ग़नीमत का इस उम्मत के लिये खुसूसी तौर पर हलाल होना अल्लाह तआला के तो इल्म में था मगर ग़ज़वा-ए-बदर के वाक़िए तक इसके बारे में कोई वही (अल्लाह का हुक्म) हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर उसके हलाल होने के बारे में नाज़िल नहीं हुई थी। और ग़ज़वा-ए-बदर में सूरतेहाल यह पेश आई कि अल्लाह तआला ने मुसलमानों को बिल्कुल ख़िलाफ़े अन्दाज़ा ग़ैर-मामूली (असाधारण) फ़तह अता फ़रमाई। दुश्मन ने माल भी छोड़ा जो बतौर ग़नीमत मुसलमानों के हाथ आया और उनके बड़े-बड़े सत्तर सरदार मुसलमानों ने गिरफ़्तार कर लिये। मगर इन दोनों चीज़ों के जायज़ होने की स्पष्टता अल्लाह के किसी पैग़ाम के ज़रिये अभी तक नहीं हुई थी।

इसलिये सहाबा-ए-किराम की इस जल्दबाजी पर नाराजगी का इज़हार हुआ। इसी गुस्से व नाराजगी का इज़हार एक वही के ज़रिये किया गया जिसमें जंगी कैदियों के बारे में बज़ाहिर तो मुसलमानों को दो चीज़ों का इज़्तिहार दिया गया था मगर उसी इज़्तिहार देने में एक इशारा इसकी तरफ़ भी कर दिया गया था कि भसले के दोनों पहलुओं में से अल्लाह तआला के नज़दीक एक पसन्दीदा और दूसरा नापसन्दीदा है। तिमिज़ी, सुनन नसाई, सही इब्ने हिब्बान में हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है कि उस मौके पर हज़रत जिब्रीले अमीन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास आये और यह हुक्म सुनाया कि आप सहाबा किराम को दो चीज़ों में इज़्तिहार दे दीजिये- एक यह कि उन कैदियों को कत्ल करके दुश्मन का दबदबा व जोर हमेशा के लिये ख़त्म कर दें, दूसरे यह कि उनको फ़िदया यानी कुछ माल लेकर छोड़ दिया जाये। लेकिन इस दूसरी सूरत में अल्लाह का हुक्म यह तयशुदा है कि इसके बदले अगले साल मुसलमानों के इतने ही आदमी शहीद होंगे जितने कैदी आज माल लेकर छोड़ दिये जायेंगे। यह सूरत अगरचें इज़्तिहार की थी और सहाबा किराम को दोनों चीज़ों का इज़्तिहार दे दिया गया था मगर दूसरी सूरत में सत्तर मुसलमानों की शहादत का फैसला ज़िक्र करने में इस तरफ़ एक हल्का सा इशारा ज़रूर मौजूद था कि यह सूरत अल्लाह तआला के नज़दीक पसन्द नहीं, क्योंकि अगर यह पसन्द होती तो सत्तर मुसलमानों का खून इसके नतीजे में लाज़िम न होता।

सहाबा किराम के सामने जब ये दोनों सूरतें बतौर इज़्तिहार के पेश हुईं तो कुछ सहाबा किराम का ख्याल यह हुआ कि अगर इन लोगों को फ़िदया लेकर छोड़ दिया गया तो बहुत मुम्किन है कि ये सब या इनमें के कुछ किसी वक़्त मुसलमान हो जायें, जो असली फायदा और जिहाद का मक़सद है। दूसरे यह भी ख्याल था कि मुसलमान इस वक़्त गुर्बत व संगदस्ती की हालत में हैं अगर सत्तर आदमियों का माली फ़िदया इनको मिल गया तो इनकी तकलीफ़ भी दूर होगी और आईन्दा के लिये जिहाद की तैयारी में भी मदद मिल जायेगी। रहा सत्तर मुसलमानों का शहीद होना तो वह मुसलमानों के लिये ख़ुब एक नेमत व सआदत है, उससे घबराना नहीं चाहिये। इन ख्यालात को सामने रखते हुए सिद्दीके अक़बर रज़ियल्लाहु अन्हु और अक्सर सहाबा किराम ने यही राय दी कि इन कैदियों को फ़िदया लेकर आज़ाद कर दिया जाये, सिर्फ़ हज़रत उमर बिन ख़त्ताब और सअद बिन मुआज़ वगैरह ख़न्द हज़रत ने इस राय से इत्तिफ़ाक़ (मतभेद) करके उन सब को कत्ल कर देने की राय इस बुनियाद पर दी कि यह एक इत्तिफ़ाक़ है कि इस्लाम के मुक़ाबले में कुव्वत व ताक़त जमा करने वाले सारे कुरैशी सरदार इस वक़्त काबू में आ गये हैं, इनका इस्लाम कुबूल करना तो एक दूर की बात और संभावित चीज़ है मगर यह गुमान ग़ालिब है कि ये लोग वापस होकर पहले से ज़्यादा मुसलमानों के खिलाफ़ सरगर्मी का सबब बनेंगे।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जो रहमतुल-लिलआलमीन होकर तशरीफ़ लाये थे और पूरी तरह रहमत थे, सहाबा किराम की दो रायें देखकर आपने उस राय को कुबूल कर लिया

यानी तुम लोग दुनिया को चाहते हो हालाँकि अल्लाह तआला तुमसे यह चाहता है कि तुम आखिरत के तालिब बनो।

यहाँ बतौर नाराज़गी व डाँट के उनके सिर्फ़ उस फ़ेल का ज़िक्र किया गया जो नाराज़गी का कारण था, दूसरा सबब यानी कैदियों के मुसलमान हो जाने की उम्मीद, इसका यहाँ ज़िक्र नहीं फ़रमाया। जिसमें इस तरफ़ इशारा है कि सहाबा किराम जैसी पाकबाज़ मुख़्तस जमाअत के लिये ऐसी साझा नीयत जिसमें कुछ दीन का हिस्सा हो कुछ अपने दुनियावी नफ़े का, यह भी काबिले कुबूल नहीं। यहाँ यह बात भी काबिले ध्यान है कि इस आयत में नाराज़गी व चेतावनी का ख़िताब सहाबा किराम की तरफ़ है अगरचे रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने भी उनकी राय को कुबूल फ़रमाकर एक तरह से उनके साथ शिर्कत कर ली थी, मगर हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह अमल ख़ालिस आपके “रहमतुल्-लिल्आलमीन” होने का प्रतीक था, कि सहाबा में राय का इख़िलाफ़ होने की सूरत में उस सूरत को इख़्तियार फ़रमा लिया जो कैदियों के हक़ में सहूलत व मेहरबानी की थी।

आयत के आख़िर में ‘वल्लाहु अज़ीजुन हकीम’ फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया कि अल्लाह तआला ज़बरदस्त, हिक्मत वाले हैं। अगर आप लोग जल्दबाज़ी न करते तो वह अपने फ़ज़ल से आगे की फ़तूहात में तुम्हारे लिये माल व दौलत का भी सामान कर देते।

दूसरी आयत भी इसी नाराज़गी का पूरक है जिसमें फ़रमाया कि अगर अल्लाह तआला का एक तक़दीर का लिखा हुआ न हो चुका होता तो जो काम तुमने इख़्तियार किया कि माल लेकर कैदियों को छोड़ने का फैसला कर लिया, इसके बारे में तुम पर कोई बड़ी सज़ा आ पड़ती।

इस तक़दीर के लिखे से क्या मुराद है, इसके बारे में तिर्मिज़ी में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि माले ग़नीमत तुमसे पहले किसी कौम किसी उम्मत के लिये हलाल नहीं था, बदर के मौक़े में जब मुसलमान माले ग़नीमत जमा करने में लग गये हालाँकि अभी तक उनके लिये माले ग़नीमत हलाल नहीं किया गया था, इस पर यह आयत नाज़िल हुई कि माले ग़नीमत के हलाल होने का हुक्म नाज़िल होने से पहले मुसलमानों का यह क़दम उठाना ऐसा गुनाह था कि इस पर अज़ाब आ जाना चाहिये था, लेकिन चूँकि अल्लाह तआला का यह हुक्म लौह-ए-महफ़ूज़ में लिखा हुआ था कि इस उम्मत के लिये माले ग़नीमत हलाल किया जायेगा इसलिये मुसलमानों की इस ख़ता पर अज़ाब नाज़िल नहीं किया था। (तफ़सीरे मज़हरी)

हदीस की कुछ रिवायतों में है कि इस आयत के नाज़िल होने पर रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह का अज़ाब बिल्कुल सामने आ चुका था, अल्लाह ने अपने फ़ज़ल से रोक दिया, और अगर अज़ाब आ जाता तो सिदाय उमर बिन ख़त्ताब और सअद बिन मुआज़ के कोई उससे न बचता। इससे मालूम होता है कि अज़ाब व नाराज़गी का सबब कैदियों से फ़िदया लेकर छोड़ देना था और तिर्मिज़ी की पहले बयान हुई रिवायत से इसका सबब माले ग़नीमत जमा करना मालूम होता है, मगर दोनों में कोई टकराव नहीं, कैदियों से फ़िदया

लेना भी माले ग़नीमत ही का हिस्सा है।

मसला: बयान हुई आयत में कैदियों से फिदया लेकर आज़ाद करने या माले ग़नीमत जमा करने पर जो नाराज़गी नाज़िल हुई और अल्लाह के अज़ाब से डराया गया मगर फिर माफ़ी दे दी गयी, इससे यह बात स्पष्ट न हुई कि आईन्दा के लिये इन मामलों में मुसलमानों को क्या करना चाहिये। इसलिये अगली आयत में माले ग़नीमत का मसला तो साफ़ कर दिया गया:

فَكُلُوا مِمَّا غَنِمْتُمْ

यानी जो माले ग़नीमत तुमको हाथ आ गया है वह अब खा सकते हो, वह आईन्दा के लिये तुम्हारे वास्ते हलाल कर दिया गया। मगर इसमें भी एक शुब्हा यह रह जाता है कि माले ग़नीमत हलाल करने का हुक्म तो अब मिला है, इस हुक्म से पहले जो ग़लती से जमा कर लिया गया था शायद उसमें किसी किस्म की बुराई हो इसलिये इसके बाद 'हलालन् तय्यिबन्' फरमाकर यह शुब्हा भी दूर कर दिया गया कि अगरचे हुक्म के नाज़िल होने से पहले माले ग़नीमत जमा करने का इफ़्दाय़ा दुरुस्त न था मगर अब जबकि माले ग़नीमत हलाल होने का हुक्म आ गया तो पहला जमा किया हुआ भी बग़ैर किसी कराहत (बुराई) के हलाल है।

मसला: यहाँ उसूले फ़िक्का का एक मसला ध्यान में रखने और याद रखने के फ़ाय़िल है कि जब किसी नाजायज़ पहल करने के बाद मुस्तफ़िल आयत के ज़रिये उस माल को हलाल करने का हुक्म नाज़िल हो जाये तो पहले के उठाये हुए क़दम का उसमें कोई असर नहीं रहता। यह माल हलाल व पाक हो जाता है, जैसा कि यहाँ हुआ। लेकिन इसी की एक दूसरी नज़ीर यह है कि किसी मामले में हुक्म तो पहले से नाज़िल शुदा था मगर उसका ज़हूर अमल करने वालों पर नहीं था, इस बिना पर उसके खिलाफ़ अमल कर गुज़रे, बाद में मालूम हुआ कि हमारा यह अमल क़ुरआन व सुन्नत के फ़ुल्लौ हुक्म के खिलाफ़ था, तो इस सूरत में हुक्म के ज़ाहिर होने के बाद वह माल हलाल नहीं रहता अगरचे पहले की ग़लती को माफ़ भी कर दिया जाये।

(मूरत-अनघार मुस्ला जीयन)

ज़िफ़ा हुई आयत में माले ग़नीमत को हलाल व पाक तो करार दे दिया गया मगर आयत के आख़िर में यह क़ैद लगा दी गयी 'बत्तकुल्ला-ह, इन्नल्ला-ह ग़फ़ूररहीम'। इसमें इशारा कर दिया कि माले ग़नीमत अगरचे हलाल कर दिया गया है मगर वह भी एक खास क़ानून के तहत हलाल हुआ है, उस क़ानून के खिलाफ़ या अपने हक़ से ज़्यादा लिया जायेगा तो वह जायज़ नहीं।

यहाँ दो मामले थे- एक माले ग़नीमत, दूसरे कैदियों को फिदया लेकर छोड़ना। पहले मामले के मुताल्लिक तो इस आयत ने बात साफ़ कर दी मगर दूसरा मामला अभी तक साफ़ नहीं हुआ, इसके मुताल्लिक सूर: मुहम्मद में यह आयत नाज़िल हुई:

لَا لِلْهَيْمِ الَّذِينَ كَفَرُوا فَضْرَ الرِّقَابِ، حَتَّىٰ إِذَا الْخُسُوفُ لَهُمْ لُشْدٌ وَالْوَلَقُ لِمَا مَنَّا، بَعْدَ وَإِنَّا لَنَدَاءُ حَتَّىٰ

نُفِخَ الْخُرْبُ أَوْ رَأَوْهَا.

(यानी जब जंग में क़ाफ़िरों से तुम्हारा मुकाबला हो तो उनकी गर्दन में धार दो यहाँ तक कि

जब तुम खून बहाने के जरिये उनकी कुव्वत व जोर तोड़ चुको तो फिर उनको कैद करके मजबूत बाँधो। उसके बाद या तो उन पर एहसान करके बगैर किसी मुआवजे के आजाद कर दो या फिदया लेकर छोड़ दो। यहाँ तक कि जंग अपने हथियार डाल दे।)

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु फरमाते हैं कि ग़ज़वा-ए-बदर में कैदियों को फिदया लेकर आजाद करने पर अल्लाह की नाराज़गी नाज़िल हुई, यह इस्लाम का पहला जिहाद था, उस वक़्त तक काफ़िरों की कुव्वत व दबदबा टूट नहीं चुका था, इत्तिफ़ाक़न उन पर एक मुसीबत पड़ गयी थी, फिर जब इस्लाम और मुसलमानों को मुकम्मल ग़लबा हासिल हो गया तो अल्लाह तआला ने वह हुक्म मन्सूख (निरस्त व ख़त्म) करने के लिये सूर: मुहम्मद की उक्त आयत नाज़िल फरमा दी। जिसमें नबी करीम और मुसलमानों को कैदियों के बारे में चार इस्तिथार दे दिये गये- वो हैं:

إِنْ شَاءَ وَالْقَوْمُ وَإِنْ شَاءَ وَالْأَعْرَابُ وَإِنْ شَاءَ وَالْأَعْرَابُ

यानी चाहें तो सब को क़त्ल कर दें, या चाहें तो गुलाम बना लें, या चाहें तो फिदया लेकर छोड़ दें, या चाहें तो बगैर फिदये के आजाद कर दें। (तफ़सीरे मज़हरी)

उक्त चार इस्तिथारों में से पहले दो पर तो पूरी उम्मत की सहमति और एक राय है कि मुसलमानों के अमीर के लिये कैदियों को क़त्ल कर देने का भी इस्तिथार है और गुलाम बना लेने का भी, लेकिन उनको बिना मुआवजे छोड़ देने या मुआवज़ा लेकर छोड़ देने में उम्मत के फ़ुक़हा का इत्तिहाफ़ (मतभेद) है।

इमाम मालिक, इमाम शाफ़ई, इमाम अहमद बिन हंबल, इमाम सौरी, इमाम इस्हाक और ताबिईन में से हज़रत इसन बसरी और अता का क़ौल यह है कि ये दोनों सूरतें भी मुसलमानों के अमीर के लिये जायज़ हैं कि कैदियों को मुआवज़ा लेकर छोड़ दे या बिना मुआवज़े के आजाद कर दे, या मुसलमान कैदियों से तबादला कर ले।

और इमाम अबू हनीफ़ा, इमाम अबू यूसुफ़, इमाम मुहम्मद, इमाम औज़ाई, इमाम क़तादा, इमाम ज़ुहरी, इमाम सुदी और इमाम इब्ने ज़ुरैज फरमाते हैं कि बिना मुआवज़े के छोड़ना तो बिल्कुल जायज़ नहीं, फिदया लेकर छोड़ना भी इमाम अबू हनीफ़ा रह. के मशहूर मज़हब में जायज़ नहीं। अलबत्ता किताब 'सियर-ए-कबीर' की रिवायत यह है कि अगर मुसलमानों को माल की ज़रूरत हो तो फिदया लेकर छोड़ सकते हैं। अलबत्ता मुसलमान कैदियों के तबादले में उनको छोड़ देना इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़ व इमाम मुहम्मद के नज़दीक जायज़ है। (तफ़सीरे मज़हरी)

जिन हज़रत ने फिदया लेकर या बिना फिदये के छोड़ देने की इजाज़त दी है वे हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु के क़ौल के मुताबिक सूर: मुहम्मद की आयत को सूर: अनफ़ाल की आयत का नासिख़ (निरस्त व मौकूफ़ करने वाला) और सूर: अनफ़ाल की आयत को मन्सूख़ (हुक्म के एतिबार से निरस्त और रद्द) करार देते हैं। इनकी फ़ुक़हा ने सूर: मुहम्मद की आयत को मन्सूख़ करार दिया है और सूर: अनफ़ाल की आयत:

और आयत:

اَقْتُلُوا الْمُشْرِكِينَ حَيْثُ وَجَدْتُمُوهُمْ

को उसका नासिख (हुक्म को रद्द और निरस्त करने वाला) करार दिया है, इसलिये कैदियों को आजाद कर देना चाहे फ़िदया लेकर हो या बिना फ़िदये के, उनके नज़दीक जायज़ नहीं।

(तफ़सीरे मज़हरी)

लेकिन अगर सूर: अनफ़ाल की आयत के अलफ़ाज़ और सूर: मुहम्मद के अलफ़ाज़ में ग़ौर किया जाये तो ऐसा मालूम होता है कि इन दोनों में कोई नासिख व मन्सूख नहीं, बल्कि दो विभिन्न हालतों के दो हुक्म हैं।

सूर: अनफ़ाल की आयत में भी असल हुक्म क़त्ल के ज़रिये काफ़िरों की ताक़त को तोड़ देना है और सूर: मुहम्मद की आयत में भी जो कैदियों को बिना मुआवज़े के या मुआवज़ा लेकर आजाद करने का इख़्तियार दिया गया है उससे पहले खून बहाने के ज़रिये कुफ़्र की ताक़त को टूट जाने का बयान हो चुका है, उसके बाद यह भी इख़्तियार है कि कैदियों को फ़िदये पर या बिना फ़िदये के आजाद कर दिया जाये।

इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा रह. की 'सियर-ए-कबीर' वाली रिवायत का भी यही मन्शा हो सकता है कि मुसलमानों के हालात और ज़रूरत पर नज़र करके दोनों किस्म के अहक़ाम दिये जा सकते हैं। वल्लाहु सुब्बानहू व तआला आलम।

يَا أَيُّهَا النَّبِيُّ قُلْ لِّمَن فِي أَيْدِيكُمْ مِّنَ الْأَسْرَىٰ إِن يَعْلَمِ اللَّهُ فِي قُلُوبِكُمْ خَيْرًا
يُّؤْتِكُمْ خَيْرًا مِّمَّا أُخِذَ مِنْكُمْ وَيَغْفِرْ لَكُمْ ۗ وَاللَّهُ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝ وَإِن تُرِيدُوا خِيَانَتَكَ
فَقَدْ خَانُوا اللَّهَ مِن قَبْلُ فَأَمْكَنَ مِنْهُمْ ۗ وَاللَّهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ۝

या अय्युहन्नबिय्यु कुल् लिमन् फी
ऐदीकुम् मिनल्अस्रा इय्यअ-लमित्लाहु
फी कुलूबिकुम् खैरय्युअतिकुम् खैरम्
मिम्मा उख़ि-ज़ मिन्कुम् व यग़िफ़्
लकुम्, वल्लाहु ग़फ़ूररहीम (70) व
इय्युरीदू ख़ायान-त-क फ़-क़द्
ख़ानुल्ला-ह मिन् कब्लु फ़-अम्क-न
मिन्हुम्, वल्लाहु अलीमुन् हकीम (71)

ऐ नबी! कह दे उनसे जो तुम्हारे हाथ में
हैं कैदी अगर जानेगा अल्लाह तुम्हारे
दिलों में कुछ नेकी तो देगा तुमको बेहतर
उससे जो तुमसे छिन गया और तुमको
बढ़शेगा, और अल्लाह है बढ़शने वाला
मेहरबान। (70) और अगर चाहेंगे तुझसे
दगा करनी सो वे दगा कर चुके हैं
अल्लाह से इससे पहले, फिर उसने उनको
पकड़वा दिया, और अल्लाह सब कुछ
जानने वाला हिक्मत वाला है। (71)

खुलासा-ए-तफसीर

ऐ पैगम्बर! आपके कब्जे में जो कैदी हैं (उनमें जो मुसलमान हो गये हैं) आप उनसे फरमा दीजिये कि अगर अल्लाह तआला को तुम्हारे दिल में ईमान मालूम होगा (यानी तुम दिल से मुसलमान हुए होगे, क्योंकि अल्लाह तआला का इल्म तो हकीकत के मुताबिक होता है, अल्लाह तआला मुसलमान उसी को जानेंगे जो वास्तव में मुसलमान होगा, और जो शख्स गैर-मुस्लिम होगा उसको गैर-मुस्लिम ही जानेंगे। पर अगर तुम दिल से मुसलमान होगे) तो जो कुछ (फिदये में) तुमसे लिया गया है (दुनिया में) उससे बेहतर तुमको दे देगा, और (आखिरत में) तुमको बख्श देगा, और अल्लाह तआला बड़ी मग़फ़िरत वाले हैं (इसलिये तुमको बख्श देंगे और) बड़ी रहमत वाले हैं (इसलिये तुमको बेहतरीन बदला देंगे)। और अगर (फर्ज कर लो) ये लोग (सच्चे दिल से मुसलमान न हुए हों बल्कि इस्लाम को जाहिर करने से सिर्फ आपको धोखा ही देना चाहें और दिल में) आपके साथ ख़ियानत करने का (यानी अहद तोड़कर मुख़ालफ़त व मुकाबले का) इरादा रखते हों तो (कुछ फ़िक्र न कीजिए अल्लाह तआला उनको फिर आपके हाथों में गिरफ़्तार करा देगा जैसे) इससे पहले उन्होंने अल्लाह के साथ ख़ियानत की थी (और आपकी मुख़ालफ़त और मुकाबला किया) फिर अल्लाह तआला ने उनको (आपके हाथों में) गिरफ़्तार करा दिया, और अल्लाह तआला ख़ूब जानने वाले हैं (कि कौन ख़ियानत करने वाला है और) बड़ी हिक्मत वाले हैं (ऐसी सूरतें पैदा कर देते हैं जिससे ख़ियानत करने वाला पस्त हो जाये)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

जंग-ए-बदर के कैदियों को फिदया लेकर छोड़ दिया गया। इस्लाम और मुसलमानों के वे दुश्मन जिन्होंने उनके सताने, मारने, क़त्ल करने में किसी वक़्त भी कोई कसर उठा नहीं रखी और जब मौका मिल गया इन्तिहाई वहशियाना अत्याचार उन पर किये, मुसलमानों के हाथों में कैद हो जाने के बाद उनकी जान-बख़्शी कर देना कोई मामूली बात न थी, उनके लिये बड़ी ग़नीमत और बहुत बड़ा लुफ़ व करम था, फिदये में जो रक़म उनसे ली गयी वह बहुत मामूली थी।

अल्लाह तआला का लुफ़ व करम देखिये कि इस मामूली रक़म के देने से जो एक किस्म की तकलीफ़ उनको पेश आई उसको भी किस तरह दूर फ़रमाया जाता है। उक्त आयत में इरशाद है कि अगर अल्लाह तआला तुम्हारे दिलों में कोई ख़ैर पायेंगे तो जो कुछ तुमसे लिया गया है उससे बेहतर तुम्हें दे देंगे। और इस पर अतिरिक्त यह कि तुम्हारे पिछले गुनाह बख़्श देंगे। ख़ैर से मुराद ईमान और इख़्लास है। मतलब यह है कि आज़ाद होने के बाद उन कैदियों में जो लोग ईमान व इस्लाम को इख़्लास (सच्चे दिल) के साथ इख़्तियार कर लेंगे तो जो कुछ फिदये में दिया है उससे ज़्यादा और बेहतर उनको मिल जायेगा। कैदियों को आज़ाद व खुदमुख़्तार कर देने के साथ इस तरह दावत दी गयी कि वे आज़ादी के साथ अपने नफ़े नुक़सान

पर गौर करें। चुनाँचे वाकिआत सामने हैं कि उन लोगों में से जो मुसलमान हो गये अल्लाह तआला ने उनकी मगफिरत और जन्नत के बुलन्द दर्जों के अलावा दुनिया में भी उनको इतना माल व दौलत दे दिया जो उनके फिदये से कई दर्जे जायद था।

अक्सर मुफस्सिरीन ने फरमाया कि यह आयत हज़रत रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चचा हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु के बारे में नाज़िल हुई थी, क्योंकि वह भी बदर के कैदियों में शामिल थे और उनसे भी फिदया लिया गया था। उनकी खुसूसियत इस मामले में यह थी कि जंगे बदर में यह मक्का से अपने साथ तकरीबन सात सौ गिन्नी सोना लेकर चले थे ताकि वह काफिरों के लश्कर पर खर्च किया जाये। और अभी यह खर्च होने नहीं पाया था कि वह उस सोने सहित गिरफ्तार कर लिये गये।

जब फिदया देने का वक़्त आया तो इन्होंने हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से अर्ज़ किया कि मेरे साथ जो सोना था उसको मेरे फिदये की रक़म में लगा लिया जाये। हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि जो माल आप कुफ़ की इमदाद के लिये लाये थे वह तो मुसलमानों का माल ग़नीमत बन गया, फिदया उसके अलावा होना चाहिये। और साथ ही यह भी फरमाया कि अपने दो भतीजों अक़ील बिन अबी तालिब और मौफ़ल बिन हारिस का फिदया भी आप अदा करें। हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने अर्ज़ किया कि अगर इतना माली बोझ मुझ पर डाला गया तो मुझे क़ुरैश से भीख माँगनी पड़ेगी, मैं बिल्कुल फकीर हो जाऊँगा। हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया क्यों! क्या आपके पास वह माल मौजूद नहीं जो मक्का से रवानगी के वक़्त आपने अपनी बीबी उम्मुल-क़ज़ल के हवाले किया है। हज़रत अब्बास ने पूछा कि आपको यह कैसे मालूम हुआ जबकि वह मैंने रात की अंधेरी और तन्हाई में अपनी बीबी के सुपुर्द किया था, और कोई तीसरा आदमी उससे वाकिफ़ नहीं। आपने फरमाया कि मुझे मेरे रब ने उसकी पूरी तफ़सील बतला दी। हज़रत अब्बास के दिल में यह सुनकर हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सच्चे रसूल होने का यकीन हो गया। इससे पहले भी वह आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के दिल से मोतफ़िद थे मगर कुछ श्रुछात थे जो अल्लाह तआला ने इस वक़्त दूर फरमा दिये और वह दर हकीक़त उसी वक़्त से मुसलमान हो गये। मगर उनका बहुत सारा रुपया मक्का के क़ुरैश के ज़िम्मे कर्ज़ था। अगर यह उसी वक़्त अपने मुसलमान होने का ऐलान कर देते तो वह रुपया मारा जाता, इसलिये ऐलान नहीं किया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने भी किसी से इसका इज़हार नहीं किया। मक्का फ़तह होने से पहले इन्होंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से इसकी इजाज़त चाही कि मक्का से हिजरत करके मदीना तय्यिबा आ जायें मगर हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इनको यही नशिबरा दिया कि अभी हिजरत न करें।

हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की इस गुप्तगू पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह उक्ता आयत में आया हुआ शायदा भी उनको बतला दिया कि अगर आपने इस्लाम कुज़ूल

कर लिया और इस्त्रास के साथ मोमिन हो गये तो जो कुछ माल फिदये में खर्च किया है उससे बेहतर अल्लाह तआला आपको अता फरमा देंगे। घुनाँचे हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु इस्लाम ज़ाहिर करने के बाद फरमाया करते थे कि मैं तो इस वायदे का नज़ारा अपनी आँखों से देख रहा हूँ। क्योंकि मुझसे बीस औकिया सोना फिदये में लिया गया था, इस वक़्त मेरे बीस गुलाम मुज़्तलिफ़ जगहों में तिजारात का कारोबार कर रहे हैं और किसी का कारोबार बीस हज़ार दिरहम से कम का नहीं है। और इस पर अतिरिक्त यह इनाम है कि मुझे हाजियों को आब-ए-ज़मज़म पिलाने की खिदमत मिल गयी है जो मेरे नज़दीक ऐसा सम्मानित और काबिले क़द्र काम है कि सारे मक्का वालों के माल भी इसके मुक़ाबले में बेहकीक़त समझता हूँ।

ग़ज़वा-ए-बदर के कैदियों में से कुछ लोग मुसलमान हो गये थे मगर उनके बारे में यह ख़टक लोगों के दिल में थी कि शायद ये लोग मक्का पहुँचकर इस्लाम से फिर जायें और फिर हमें कोई नुक़सान पहुँचायें। हक़ तआला ने इसके बाद वाली आयत में इस ख़तरे को इस तरह दूर फरमा दिया:

إِنْ يُرِيدُوا خِيَانَتَكَ فَقَدْ خَانُوا اللَّهَ مِنْ قَبْلُ فَأَمْكَنَ مِنْهُمْ وَاللَّهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ

यानी अगर ये लोग आपके साथ ख़ियानत (बददियानती) ही का इरादा कर लें तो इससे आपको कोई नुक़सान न पहुँचेगा। ये तो वही लोग हैं जो इससे पहले अल्लाह के साथ ख़ियानत कर चुके हैं यानी रोज़-ए-अव्वल के किये हुए वायदे व अहद में जो अल्लाह तआला के रब्बुल-आलमीन होने का इक़रार किया था उसकी मुख़ालफ़त करने लगे थे। लेकिन उनकी यह ख़ियानत खुद उन्हीं के लिये नुक़सानदेह साबित हुई कि अंजामकार ज़लील व रुस्वा और गिरफ़्तार हुए। और अल्लाह तआला तो दिलों के राज़ों को जानने वाले और बड़ी हिक़मत वाले हैं। अगर ये लोग अब भी आपकी मुख़ालफ़त करने लगेंगे तो अल्लाह तआला के कब्ज़े से बाहर कहाँ चले जायेंगे, वह फिर इनको इसी तरह पकड़ लेगा। पिछली आयत में आज़ाद होने वाले कैदियों को इस्लाम की तरफ़ दावत लुभावने अन्दाज़ में दी गयी थी, इस आयत में डराने के ज़रिये उनको आगाह कर दिया कि तुम्हारी दुनिया व आख़िरत की भलाई इस्लाम व ईमान में सीमित और निहित है।

यहाँ तक काफ़िरों के साथ क़त्ल व क़िताल (जंग व जिहाद) और उनके कैद करने, आज़ाद करने के और उनसे सुलह व समझौते के अहक़ाम का बयान हो रहा था। अगली आयतों में सूरत के आख़िर तक इसी सिलसिले के एक ख़ास अध्याय का ज़िक़्र और उसके अहक़ाम की कुछ तफ़्सील बयान हुई है और वो हिज़रत के अहक़ाम हैं, क्योंकि काफ़िरों के साथ मुक़ाबले में कभी ऐसे हालात भी पेश आ सकते हैं कि न मुसलमानों को उनके मुक़ाबले पर क़त्ल व क़िताल की ताक़त है और न वे सुलह पर राज़ी हैं। ऐसी कमज़ोरी की हालत में इस्लाम और मुसलमानों की निजात की राह हिज़रत है, कि उस शहर और मुल्क को छोड़कर किसी दूसरी ज़मीन में जाकर क़ियाम करें, जहाँ इस्लामी अहक़ाम पर आज़ादाना अमल हो सके।

إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَهَاجَرُوا وَجَاهَدُوا بِأَمْوَالِهِمْ وَأَنْفُسِهِمْ
 فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَالَّذِينَ آوَوْا وَنَصَرُوا أُولَئِكَ بَعْضُهُمْ أَوْلِيَاءُ بَعْضٍ، وَالَّذِينَ
 آمَنُوا وَلَمْ يُهَاجِرُوا مَا لَكُمْ مِنْ شَيْءٍ حَتَّى يُهَاجِرُوا، وَإِنْ اسْتَنْصَرُوكُمْ
 فِي الدِّينِ فَعَلَيْكُمُ النَّصْرُ إِلَّا عَلَى قَوْمٍ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مِيثَاقٌ، وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ۝
 وَالَّذِينَ كَفَرُوا بَعْضُهُمْ أَوْلِيَاءُ بَعْضٍ، إِلَّا تَفْعَلُوا لَكِنَّ فِتْنَةً فِي الْأَرْضِ وَفَسَادٌ كَبِيرٌ ۝
 وَالَّذِينَ آمَنُوا وَهَاجَرُوا وَجَاهَدُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَالَّذِينَ آوَوْا وَنَصَرُوا أُولَئِكَ
 هُمُ الْمُؤْمِنُونَ حَقًّا لَهُمْ مَغْفِرَةٌ وَرِزْقٌ كَرِيمٌ ۝ وَالَّذِينَ آمَنُوا مِنْ بَعْدِ وَهَاجَرُوا وَجَاهَدُوا مَعَكُمْ
 فَأُولَئِكَ مِنْكُمْ وَأُولُوا الْأَرْحَامِ بَعْضُهُمْ أَوْلَى بِبَعْضٍ فِي كِتَابِ اللَّهِ إِنَّ اللَّهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ۝

१०
 ५

इन्नल्लजी-न आमनू व हाजरू व
 जाहदू बिअम्वालिहिम् व अन्फुसिहिम्
 फी सबीलिल्लाहि वल्लजी-न आवव-
 व न-सरू उलाइ-क बअज़्ज़ुहुम्
 औलिया-उ बअज़्ज़िन्, वल्लजी-न
 आमनू व लम् युहाजिरू मा लकुम्
 मिंवल्ला-यतिहिम् मिन् शैइन् हत्ता
 युहाजिरू व इनिस्तन्सरूकुम् फिदीनि
 फ-अलैकुमुन्नरू इल्ला अला कौमिम्
 बैनकुम् व बैनहुम् मीसाकुन्, वल्लाहु
 बिमा तअमलू-न बसीर (72)
 वल्लजी-न क-फरू बअज़्ज़ुहुम्
 औलिया-उ बअज़्ज़िन्, इल्ला
 तफअलूहु तकुन् फिलतुन् फिल्अर्जि
 व फसादुन् कबीर (73) वल्लजी-न

जो लोग ईमान लाये और घर छोड़ा और
 लड़े अपने माल और जान से अल्लाह की
 राह में, और जिन लोगों ने जगह दी और
 मदद की वे एक दूसरे के रफीक (साथी)
 हैं, और जो ईमान लाये और घर नहीं
 छोड़ा तुमको उनके साथ (दोस्ती) से कुछ
 काम नहीं जब तक वे घर न छोड़ आयें,
 और अगर वे तुमसे मदद चाहें दीन में तो
 तुमको लाजिम है उनकी मदद करनी,
 मगर मुकाबले में उन लोगों के कि उनमें
 और तुममें अहद हो, और अल्लाह जो
 तुम करते हो उसको देखता है। (72)
 और जो लोग काफिर हैं वे एक-दूसरे के
 रफीक (साथी) हैं, अगर तुम यूँ न करोगे
 तो फितना फैलेगा मुल्क में और बड़ी
 खराबी होगी। (73) और जो लोग ईमान

आमनू व हाजरू व जाहदू फी
 सबीलिल्लाहि वल्लजी-न आवव्- व
 न-सरू उलाइ-क हुमुल्-मुअमिनू-न
 हक्कन्, लहुम् मगिफ-रतुंव-व रिज्कुन्
 करीम (74) वल्लजी-न आमनू मिम्-
 बअदु व हाजरू व जाहदू म-अकुम्
 फ-उलाइ-क मिन्कुम्, व उलुल्-अरहामि
 बअजुहुम् औला बिबअज़िन् फी
 किताबिल्लाहि, इन्नल्ला-ह बिकुल्लि
 शैइन् अलीम (75) ❀ ❖

लाये और अपने घर छोड़े और लड़े
 अल्लाह की राह में और जिन लोगों ने
 उनको जगह दी और उनकी मदद की
 वही हैं सच्चे मुसलमान, उनके लिये
 बख्शिष है और रोज़ी इज्जत की। (74)
 और जो ईमान लाये उसके बाद और घर
 छोड़ आये और लड़े तुम्हारे साथ होकर
 सो वे लोग भी तुम्हीं में हैं, और रिश्तेदार
 आपस में हक्दार ज्यादा हैं एक दूसरे के
 अल्लाह के हुक्म में, तहकीक कि अल्लाह
 हर चीज़ से ख़बरदार है। (75) ❀ ❖

खुलासा-ए-तफसीर

बेशक जो लोग ईमान लाये और उन्होंने हिजरत भी की और अपने माल और जान से अल्लाह के रास्ते में जिहाद भी किया (ये सब चीज़ें हिजरत के साथ जुड़ी हुई हैं, मीरास के हुक्म का इन पर मदार नहीं, और इससे मुराद वे हज़रात हैं जिन्होंने मदीना के लिये हिजरत की), और जिन लोगों ने (उन मुहाजिरों को) रहने को जगह दी और (उनकी) मदद की (और इससे मदीना के अन्सार हज़रात मुराद हैं) ये (दोनों किस्म के) लोग आपस में एक-दूसरे के वारिस होंगे। और जो लोग ईमान तो लाये और हिजरत नहीं की, तुम्हारा (यानी मुहाजिरों का) उनसे मीरास का कोई ताल्लुक नहीं, (न ये उनके वारिस न वे इनके) जब तक कि वे हिजरत न करें (और जब हिजरत कर लें फिर वे भी इसी हुक्म में दाखिल हो जायेंगे)। और (अगरचे उनसे तुम्हारा वारिस होने का ताल्लुक न हो लेकिन) अगर वे तुमसे दीन के काम (यानी काफिरों के साथ जंग) में मदद चाहें तो तुम्हारे ज़िम्मे (उनकी) मदद करना (वाजिब) है, मगर उस कौम के मुकाबले में (नहीं) कि तुम में और उनमें आपस में (सुलह का) अहद हो, और अल्लाह तआला तुम्हारे सब कामों को देखते हैं (पस उनके मुकरर किये हुए अहकाम में खलल डालकर अल्लाह की नाराज़ी का पात्र मत बनना)।

और (जिस तरह आपस में तुम में वारिस होने का ताल्लुक है इसी तरह) जो लोग काफिर हैं वे आपस में एक-दूसरे के वारिस हैं (न तुम उनके वारिस न वे तुम्हारे वारिस), अगर इस (ऊपर जिक्र हुए हुक्म) पर अमल न करोगे (बल्कि बावजूद दीन में एक-दूसरे के मुखालिफ होने के सिर्फ रिश्तेदारी की बिना पर मोमिन व काफिर में वारिस होने का ताल्लुक कायम रखोगे) तो

दुनिया में बड़ा फ़ितना और बड़ा फ़साद फैलेगा (क्योंकि विरासत का सिलसिला होने से सब एक जमाअत समझी जायेगी और बिना अलग जमाअत हुए इस्लाम को कुब्वत व शौकत हासिल नहीं हो सकती, और इस्लाम का कमज़ोर रहना दुनिया में पूरी तरह फ़ितना व फ़साद फैलने और बाकी रहने का कारण है जैसा कि ज़ाहिर है) और (मुहाजिरीन व अन्सार के बीच वारिस बनने के इस हुक्म में हर चन्द कि सब मुहाजिरीन बराबर हैं चाहे हुजुरे पाक के ज़माने में उन्होंने हिजरत की हो या बाद में, लेकिन फ़ज़ीलत व मर्तबे में आपस में भिन्न हैं, चुनाँदे) जो लोग (पहले) मुसलमान हुए और उन्होंने (नबी की हिजरत के ज़माने में) हिजरत की, और (शुरू ही से) अल्लाह की राह में जिहाद (भी) करते रहे, और जिन लोगों ने (उन हिजरत करने वालों को) अपने यहाँ ठहराया और (उनकी) मदद की, ये लोग (तो) ईमान का पूरा हक़ अदा करने वाले हैं, (क्योंकि उसका हक़ यही है कि उसके कुबूल करने में पहले करे) उनके लिये (आखिरत में बड़ी) मग़फ़िरत और (जन्नत में बड़ी) इज़्ज़त वाली रोज़ी (मुकर्रर) है। और जो लोग (नबी के हिजरत के ज़माने के) बाद के ज़माने में ईमान लाये और हिजरत की और तुम्हारे साथ जिहाद किया, (यानी काम तो सब किये मगर बाद में) सो ये लोग (अगरचे फ़ज़ीलत में तुम्हारे बराबर नहीं लेकिन फिर भी) तुम्हारी ही गिनती में हैं, (फ़ज़ीलत में तो इस हैसियत से क्योंकि आमाल के फ़र्क से मर्तबे में बढ़ोतरी हो जाती है और मीरास के अहकाम में पूरी तरह क्योंकि आमाल की ज़्यादती से शरई अहकाम में फ़र्क नहीं होता)। और (इन बाद वाले मुहाजिरीन में) जो लोग (आपस में पहले वाले मुहाजिरीन के) रिश्तेदार हैं (अगरचे फ़ज़ीलत व रुतबे में कम हों लेकिन मीरास के एतिबार से) किताबुल्लाह (यानी शरई हुक्म या मीरास की आयत) में एक-दूसरे (की मीरास) के (दूसरे रिश्तेदारों के मुकाबले में) ज़्यादा हक़दार हैं (चाहे ग़ैर-रिश्तेदार फ़ज़ीलत व रुतबे में ज़्यादा हों), बेशक अल्लाह तआला हर चीज़ को ख़ूब जानते हैं (इसलिये हर वक़्त की मस्तेहत के मुनासिब हुक्म मुकर्रर फ़रमाते हैं)।

मआरिफ़ व मसाईल

ये सूर: अनफ़ाल की आखिरी चार आयतें हैं। इनमें असल मक़सूद हिजरत के वो अहकाम हैं जिनका ताल्लुक़ मुहाजिर मुसलमानों की विरासत से है। इसके मुकाबले में ग़ैर-मुहाजिर मुसलमान और ग़ैर-मुस्लिमों की विरासत का भी ज़िक्र आया है।

खुलासा इन अहकाम का यह है कि जिन लोगों पर शरई अहकाम आयद (लागू) होते हैं वे शुरू में दो किस्म पर हैं- मुस्लिम, काफ़िर। फिर मुस्लिम उस वक़्त के लिहाज़ से दो किस्म के थे एक मुहाजिर जो मक्का से हिजरत फ़र्ज़ होने पर मदीना तय्यिबा में आकर मुक़ीम हो गये थे। दूसरे ग़ैर-मुहाजिर जो किसी जायज़ उज़्र (माकूल मजबूरी) से या किसी दूसरी वजह से मक्का ही में रह गये थे।

आपसी रिश्तेदारी और नज़दीकी इन सब किस्म के अफ़राद में पाई जाती थी, क्योंकि इस्लाम के शुरू दौर में अधिकतर ऐसा था कि बेटा मुसलमान है बाप काफ़िर, या बाप मुसलमान

है बेटा काफिर। इसी तरह भाई भतीजों और नाने मामूँ वगैरह का हाल था। और मुसलमान मुहाजिर और गैर-मुहाजिर में रिश्तेदारियाँ होना तो ज़ाहिर ही है।

अल्लाह तआला ने अपनी कामिल रहमत और हिक्मत की वजह से मरने वाले इनसान के छोड़े हुए माल का मुस्तहक उसी के करीबी अज़ीजों, रिश्तेदारों को करार दिया है हालाँकि असल हकीकत यह थी कि जिसको जो कुछ दुनिया में मिला वह सब का सब अल्लाह तआला की असली मिल्क था, उसी की तरफ से ज़िन्दगी भर इस्तेमाल करने, फायदा उठाने के लिये इनसान को देकर वक्ती और अस्थायी मालिक बना दिया गया था, इसलिये अक्ल व इन्साफ का तकाज़ा तो यह था कि हर मरने वाले का तर्का (छोड़ा हुआ माल) अल्लाह तआला की मिल्क की तरफ लौट जाता, जिसकी अमली सूरत इस्लामी बैतुल-माल में दाखिल करना था, जिसके ज़रिये अल्लाह तआला की सारी मख़्लूक की परवरिश और तरबियत (पालन-पोषण) होती है। मगर ऐसा करने में एक तो हर इनसान के तबई जज़्बात को ठेस लगती जबकि वह जानता कि मेरा माल मेरे बाद न मेरी औलाद को मिलेगा न माँ-बाप और बीवी को। और फिर उसका यह परिणाम भी तबई तौर पर लाज़िमी सा था कि कोई शख्स अपना माल बढ़ाने और उसको महफूज़ रखने की फ़िक्र न करता, सिर्फ़ अपनी ज़िन्दगी की हद तक आवश्यकतायें जमा रखने से जायद कोई शख्स मेहनत व कोशिश न करता। और यह ज़ाहिर है कि इसका नतीजा पूरे इनसानों और शहरों के लिये तबाही व बरबादी की सूरत इख़्तियार करता।

इसलिये हक़ तआला शानुहू ने मीरास को इनसान के रिश्तेदारों का हक़ करार दे दिया, खास तौर से ऐसे रिश्तेदारों का जिनके फायदे ही के लिये वह अपनी ज़िन्दगी में माल जमा करता और तरह-तरह की मेहनत मशक्कत उठाता था।

इसके साथ इस्लाम ने उस अहम मक़सद को भी विरासत की तक़सीम में सामने रखा जिसके लिये इनसान की पैदाईश हुई, यानी अल्लाह तआला की इताअत व इबादत। और उसके लिहाज़ से पूरी इनसानी दुनिया को दो अलग-अलग कौमों करार दे दिया- मोमिन और काफिर। कुरआन की आयत:

خَلَقَكُمْ فَمِنْكُمْ كَافِرٌ وَمِنْكُمْ مُّؤْمِنٌ

का यही मतलब है।

इसी दो कौमी नज़रिये ने नसबी और ख़ानदानी रिश्तों को मीरास की हद तक ख़त्म कर दिया, कि न किसी मुसलमान को किसी काफिर रिश्तेदार की मीरास से कोई हिस्सा मिलेगा और न किसी काफिर का किसी मुसलमान रिश्तेदार की विरासत में कोई हक़ होगा। पहली दो आयतों में यही मज़मून बयान हुआ है। और यह हुक्म हमेशा के लिये और नाकाबिले तब्दील है कि इस्लाम के शुरू ज़माने से लेकर क़ियामत तक यही इस्लाम का उसूले विरासत है।

इसी के साथ एक दूसरा हुक्म मुसलमान मुहाजिर और गैर-मुहाजिर दोनों की आपस में विरासत का है। जिसके बारे में पहली आयत में यह बतलाया गया है कि मुसलमान जब तक

मक्का से हिजरत न करे उस वक्त तक उसका ताल्लुक भी हिजरत करने वाले मुसलमानों से विरासत के बारे में कटा हुआ है, न मुहाजिर मुसलमान अपने गैर-मुहाजिर मुसलमान रिश्तेदार का वारिस होगा और न गैर-मुहाजिर किसी मुहाजिर मुसलमान की विरासत में से कोई हिस्सा पायेगा। यह हुक्म जाहिर है कि उस वक्त तक था जब तक कि मक्का मुकर्रमा फतह नहीं हुआ था, मक्का फतह होने के बाद तो खुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ऐलान फरमा दिया था:

لا هجرة بعد الفتح.

यानी मक्का फतह होने के बाद हिजरत का हुक्म खत्म हो गया। और जब हिजरत का हुक्म ही खत्म हो गया तो हिजरत न करने वालों से बेताल्लुकी का सवाल खत्म हो गया।

इसी लिये अक्सर मुफ़्तिरीन ने फरमाया है कि यह हुक्म मक्का फतह होने से मन्सूख (खत्म और निरस्त) हो चुका है और मुहक्क उलेमा के नज़दीक यह हुक्म भी हमेशा के लिये गैर-मन्सूख (खत्म न होने वाला) है, मगर हालात के ताबे बदला है। जिन हालात में कुरआन उतरने के वक्त यह हुक्म आया था अगर किसी ज़माने में या किसी मुल्क में फिर वैसे ही हालात पैदा हो जायें तो फिर यही हुक्म जारी हो जायेगा।

वज़ाहत और खुलासा इसका यह है कि मक्का फतह होने से पहले हर मुसलमान मर्द व औरत पर मक्का से हिजरत को लाज़िमी फर्ज़ करार दिया गया था। इस हुक्म की तामील में सिवाय चन्द गिने-चुने मुसलमानों के सभी मुसलमान हिजरत करके मदीना तय्यिबा आ गये थे और उस वक्त मक्का से हिजरत न करना इसकी पहचान बन गया था कि वह मुसलमान नहीं, इसलिये उस वक्त गैर-मुहाजिर का इस्लाम भी संदिग्ध और शक में था, इसलिये मुहाजिर और गैर-मुहाजिर की आपसी विरासत को खत्म कर दिया गया था।

अब अगर किसी मुल्क में फिर भी ऐसे ही हालात पैदा हो जायें कि वहाँ रहकर इस्लामी फ़राईज़ की अदायेगी बिल्कुल न हो सके तो उस मुल्क से हिजरत करना फिर फर्ज़ हो जायेगा और ऐसी हालत में बिना प्रबल उज़्र के हिजरत न करना अगर यकीनी तौर पर कुफ़्र की निशानी हो जाये तो फिर भी यही हुक्म आयद होगा कि मुहाजिर और गैर-मुहाजिर में आपसी विरासत जारी न रहेगी। इस तक़रीर से यह भी स्पष्ट हो गया कि मुहाजिर और गैर-मुहाजिर में विरासत का ताल्लुक खत्म होने का हुक्म दर हकीकत कोई अलग से और नया हुक्म नहीं बल्कि वह पहला ही हुक्म है जो मुस्लिम और गैर-मुस्लिम में विरासत के खत्म होने को बयान करता है। फर्क इतना है कि कुफ़्र की इस पहचान की वजह से विरासत से तो मेहरूम कर दिया गया मगर महज़ इतनी निशानी की वजह से उसको काफ़िर नहीं करार दिया, जब तक उससे खुले और स्पष्ट तौर पर कुफ़्र का सुबूत न हो जाये।

और ग़ालिबन इसी मस्लेहत से इस जगह एक और हुक्म गैर-मुहाजिर मुसलमानों का ज़िक्र कर दिया गया है कि अगर ये मुहाजिर मुसलमानों से मदद व सहयोग के तालिब हों तो मुहाजिर

मुसलमानों को उनकी इमदाद करना ज़रूरी है। ताकि यह मालूम हो जाये कि गैर-मुहाजिर मुसलमानों को बिल्कुल काफ़िरों की सफ़ में नहीं रखा बल्कि उनका यह इस्लामी हक़ बाकी रखा गया कि ज़रूरत के वक़्त उनकी इमदाद की जाये।

और चूँकि इस आयत का शाने नुज़ूल (उतरने का मौक़ा और सबब) एक खास हिजरत है यानी मक्का से मदीना की तरफ़, और गैर-मुहाजिर मुसलमान वही थे जो मक्का में रह गये थे और मक्का के काफ़िरों के घेरे में थे, तो यह ज़ाहिर है कि उनका इमदाद तलब करना उन्हीं मक्का के काफ़िरों के मुकाबले में हो सकता था। और जब कुरआने करीम ने मुहाजिर मुसलमानों को उनकी इमदाद का हुक्म दे दिया तो बज़ाहिर इससे यह समझा जा सकता था कि हर हाल में और हर कौम के मुकाबले में उनकी इमदाद करना मुसलमानों पर लाज़िम कर दिया गया है अगरचे वह कौम जिसके मुकाबले पर उनको इमदाद दरकार है उससे मुसलमानों का कोई जंग बन्दी का समझौता भी हो चुका हो। हालाँकि इस्लामी उसूल में अदल व इन्साफ़ और मुआहदे व संधि की पाबन्दी एक अहम फ़रीज़ा है। इसलिये इसी आयत में बयान हुए हुक्म से एक सूत को अलग कर दिया गया कि अगर गैर-मुहाजिर मुसलमान मुहाजिर मुसलमानों से किसी ऐसी कौम के मुकाबले पर मदद तलब करें जिससे मुसलमानों ने युद्ध न करने का समझौता कर रखा है तो फिर अपने भाई मुसलमानों की इमदाद भी उन काफ़िरों के मुकाबले में जायज़ नहीं जिनसे समझौता कर रखा है।

यह है पहली दो आयतों के मज़मून का खुलासा। अब अलफ़ाज़ से इसको मिलाकर देखिये। इरशाद होता है:

إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَهَاجَرُوا وَجَاهَدُوا بِأَمْوَالِهِمْ وَأَنْفُسِهِمْ فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَالَّذِينَ أَوْوُوا وَنَصَرُوا أُولَٰئِكَ بَعْضُهُمْ أَوْلِيَاءُ بَعْضٍ. وَالَّذِينَ آمَنُوا وَلَمْ يَهَاجَرُوا مَا لَكُمْ مِنْ شَيْءٍ حَتَّىٰ يُهَاجَرُوا.

यानी वे लोग जो ईमान लाये और जिन्होंने अल्लाह के लिये अपने वतन और प्यारों व रिश्तेदारों को छोड़ा और अल्लाह की राह में अपने मालों और जानों से जिहाद किया, माल खर्च करके हथियार और जंग का सामान ख़रीदा और मैदान-ए-जंग के लिये अपनी जानों को पेश कर दिया। इससे मुराद शुरू के मुहाजिरीन हैं। और वे लोग जिन्होंने रहने का जगह दी और मदद की। इससे मुराद मदीना के अन्सार हैं। इन दोनों फ़रीक़ के बारे में यह इरशाद फ़रमाया कि वे आपस में एक दूसरे के वली हैं। फिर फ़रमाया कि वे लोग जो ईमान तो ले आये मगर हिजरत नहीं की, तुम्हारा उनसे कोई ताल्लुक नहीं जब तक वे हिजरत न करें।

इस जगह कुरआने करीम ने लफ़ज़ 'वली' और 'वलायत' इस्तेमाल फ़रमाया है जिसके असली मायने दोस्ती और गहरे ताल्लुक के हैं। हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु, हसन रह., क़तादा रह., मुजाहिद रह. वग़ैरह तफ़सीर के इमामों ने फ़रमाया कि इस जगह वलायत से मुराद विरासत और वली से मुराद वारिस है, और कुछ हज़रात ने वलायत के लुगवी मायने यानी दोस्ती और मदद व सहायता ही मुराद लिये हैं।

पहली तफसीर के मुताबिक आयत का मतलब यह हुआ कि मुसलमान मुहाजिर व अन्सार आपस में एक दूसरे के वारिस होंगे, उनका विरासत का ताल्लुक न गैर-मुस्लिम के साथ कायम रहेगा न उन मुसलमानों के साथ जिन्होंने हिजरत नहीं की। पहला हुक्म यानी दीन व धर्म के अलग होने की बिना पर विरासत का ताल्लुक खत्म होना तो हमेशा के लिये और बाकी रहा मगर दूसरा हुक्म मक्का फतह होने के बाद जबकि हिजरत ही की ज़रूरत न रही तो मुहाजिर और गैर-मुहाजिर में विरासत के ताल्लुक का खत्म होने का हुक्म भी बाकी न रहा। इससे कुछ फुकहा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) ने इस पर दलील पकड़ी है कि जिस तरह मज़हब का अलग और भिन्न होना विरासत का ताल्लुक टूट जाने और खत्म होने का सबब है इसी तरह दारैन (स्थानों और जगहों) का अलग-अलग होना भी विरासत के कट जाने और खत्म होने का सबब है, जिसकी तफसीली बहस मसाईल की किताबों में बयान हुई है।

इसके बाद इरशाद फ़रमाया:

وَإِنْ اسْتَشْرَوْكُمْ فِي الَّذِينَ النُّصْرُ الْأَعْلَىٰ قَوْمٌ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مِيثَاقٌ ۖ وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ۝

यानी ये लोग जिन्होंने हिजरत नहीं की अगरचे इनसे विरासत का ताल्लुक खत्म कर दिया गया है मगर वे बहरहाल मुसलमान हैं, अगर वे अपने दीन की हिफाज़त के लिये मुहाजिर मुसलमानों से मदद तलब करें तो उनके ज़िम्मे उनकी इमदाद करना वाजिब है। मगर इसके साथ अदल व इन्साफ़ के उसूलों और समझौते व अहद की पाबन्दी को हाथ से नहीं जाने देना चाहिये। अगर वे किसी ऐसी कौम के मुकाबले पर तुम से इमदाद तलब करें जिस कौम से तुम्हारा युद्ध न करने का मुआहदा व समझौता हो चुका है तो उनके मुकाबले में उन मुसलमानों की इमदाद भी जायज़ नहीं।

सुलह हुदैबिया के वक़्त ऐसा ही वाकिआ पेश आया। जिस वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मक्का के काफ़िरों से सुलह कर ली और सुलह की शर्तों में यह भी दाख़िल था कि मक्का से जो शख्स अब मदीना जाये उसको रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम वापस कर दें। ऐन इसी मामला-ए-सुलह के वक़्त अबू जन्दल रज़ियल्लाहु अन्हु जिनको मक्का के काफ़िरों ने कैद करके तरह-तरह की तकलीफ़ों में डाला हुआ था, किसी तरह हाज़िरे ख़िदमत हो गये और अपने ऊपर हुए जुल्मों का इज़हार करके रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मदद के तालिब हुए। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जो रहमते आलम बनकर आये थे एक मज़लूम मुसलमान की फ़रियाद से कितने मुतास्सिर हुए होंगे इसका अन्दाज़ा करना भी हर शख्स के लिये आसान नहीं, मगर इस मुतास्सिर होने के बावजूद उक्त आयत के हुक्म के मुताबिक उनकी इमदाद करने से उज़्र फ़रमाकर वापस कर दिया।

उनकी यह वापसी सभी मुसलमानों के लिये बुरी तरह दिल को दुखाने वाली थी मगर सरवरे कायनात सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अल्लाह के हुक्म के मातहत गोया इसको देख रहे थे कि अब इन जुल्मों और अत्याचारों की उम्र ज़्यादा नहीं रही, और चन्द दिन के सब्र का सवाब अबू

जन्दल को और मिलना है, उसके बाद बहुत जल्द मक्का फतह होकर ये सारे किस्से ख़त्म होने वाले हैं। बहरहाल उस वक़्त कुरआनी हुक्म के मुताबिक़ हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने समझौते की पाबन्दी को उनकी व्यक्तिगत मुसीबत पर तरजीह दी। यही इस्लामी शरीअत की वह विशेष खूबी है जिसने उनको दुनिया में फतह व इज़्ज़त और आख़िरत की कामयाबी का मालिक बनाया है। वरना आम तौर पर दुनिया की हुक्मतें समझौतों का एक खेल खेलती हैं जिसके ज़रिये कमज़ोर को दबाना और ताक़तवर को फ़रेब देना मक़सद होता है। जिस वक़्त अपनी ज़रा सी मस्तेहत सामने होती है तो सौ तरह की बातें बनाकर समझौते को ख़त्म कर डालते हैं और इल्ज़ाम दूसरों के सर लगाने की फ़िक्र करते हैं।

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमाया:

وَالَّذِينَ كَفَرُوا بَعْضُهُمْ أَوْلِيَاءُ بَعْضٍ

यानी काफ़िर लोग आपस में एक दूसरे के वली हैं। लफ़ज़ वली जैसा कि पहले बयान हो चुका है एक आम मफ़हूम रखता है जिसमें विरासत भी दाख़िल है और मामलात की वलायत व सरपरस्ती भी। इसी लिये इस आयत से मालूम हुआ कि काफ़िर लोग आपस में एक दूसरे के वारिस समझे जायेंगे, और विरासत के बंटवारे का जो क़ानून उनके अपने मज़हब में राईज है उनकी विरासत के मामले में उसी क़ानून को नाफ़िज़ (लागू) किया जायेगा। साथ ही उनके यतीम बच्चों का वली लड़कियों के निकाह का वली भी उन्हीं में से होगा जिसका खुलासा यह है कि ख़ानदानी और शादी-विवाह के मसाले में ग़ैर-मुस्लिमों का अपना मज़हबी क़ानून इस्लामी हुक्मत में सुरक्षित रखा जायेगा।

आयत के आख़िर में इरशाद है:

إِلَّا تَفْعَلُوهُ تَكُنْ فِتْنَةٌ فِي الْأَرْضِ وَفَسَادٌ كَبِيرٌ

यानी अगर तुमने ऐसा न किया तो पूरी ज़मीन में फ़ितना और बड़ा फ़साद फैल जायेगा।

इस जुमले का ताल्लुक उन तमाम अहक़ाम के साथ है जो इससे पहले ज़िक्र किये गये हैं, मसलन यह कि मुहाजिरीन और अन्सार को आपस में एक दूसरे का वली (वारिस व सरपरस्त) होना चाहिये, जिसमें आपसी इमदाद व सहायता भी दाख़िल है और विरासत भी। दूसरे यह कि उस वक़्त के मुहाजिर और ग़ैर-मुहाजिर मुसलमानों में आपस में विरासत का ताल्लुक न रहना चाहिये, मगर इमदाद व सहायता का ताल्लुक अपनी शर्तों के साथ बाकी रहना चाहिये। तीसरे यह कि काफ़िर आपस में एक दूसरे के वली हैं, उनके वलायत और विरासत के क़ानून में कोई दख़ल अन्दाज़ी मुसलमानों को नहीं करनी चाहिये।

अगर इन अहक़ाम पर अमल न किया गया तो ज़मीन में फ़ितना और बड़ा फ़साद फैल जायेगा। यह तंबीह ग़ालिबन इसलिये की गयी कि जो अहक़ाम इस जगह बयान हुए हैं वो अदल व इन्साफ़ और आम अमन के लिये बुनियादी उसूल की हैसियत रखते हैं। क्योंकि इन आयतों ने यह वाज़ेह कर दिया कि आपसी इमदाद व सहयोग और विरासत का ताल्लुक जैसे रिश्तेदारी पर

आधारित है ऐसे ही इसमें मजहबी और दीनी रिश्ता भी काबिले लिहाज है। बल्कि नसबी रिश्ते पर दीनी रिश्ते को तरजीह हासिल है। इसी वजह से काफिर मुसलमान का और मुसलमान काफिर का वारिस नहीं हो सकता, अगरचे वे आपस में नसबी रिश्ते से बाप और बेटे या भाई भाई हों। इसके साथ ही मजहबी भेदभाव और कट्टरता तथा जाहिली दौर की बेजा तरफदारी की रोकथाम करने के लिये यह भी हिदायत दे दी गयी है कि मजहबी रिश्ता अगरचे इतना ताकतवर और मजबूत है मगर समझौते की पाबन्दी इससे भी ज्यादा अहम, पहले और काबिले तरजीह है। मजहबी तास्सुब के जोश में समझौते का उल्लंघन करना जायज नहीं। इसी तरह यह भी हिदायत दे दी गयी कि काफिर आपस में एक दूसरे के वली और वारिस हैं, उनकी व्यक्तिगत वलायत व विरासत में दखल-अन्दाजी न की जाये। देखने को तो ये चन्द ऊपर के और आंशिक अहकाम हैं मगर दर हकीकत विश्व शांति के लिये अदल व इन्साफ के बेहतरीन और मुकम्मल बुनियादी उसूल हैं। इसी लिये इस जगह इन अहकाम को बयान फरमाने के बाद ऐसे अलफाज से तंबीह फरमाई गयी जो आम तौर पर दूसरे अहकाम के लिये नहीं की गयी, कि अगर तुमने इन अहकाम पर अमल न किया तो जमीन में फितना और बड़ा फसाद (खराबी और बिगाड़) फैल जायेगा। इन अलफाज में भी इसकी तरफ इशारा है कि ये अहकाम फितने व फसाद को रोकने में खास दखल और असर रखते हैं।

तीसरी आयत में मक्का से हिजरत करने वाले सहाबा और उनकी मदद करने वाले मदीना के अन्सार की तारीफ व प्रशंसा और उनके सच्चा मुसलमान होने की गवाही और उनसे मगफिरत और इज्जत वाली रोजी का वायदा बयान हुआ है। इरशाद फरमाया:

أُولَئِكَ هُمُ الْمُؤْمِنُونَ حَقًّا.

यानी यही लोग सच्चे पक्के मुसलमान हैं। इसमें इशारा इस तरफ है कि हिजरत न करने वाले हजरात भी अगरचे मुसलमान हैं मगर उनका इस्लाम कामिल भी नहीं और यकीनी भी नहीं, क्योंकि यह संभावना व गुमान और शुब्हा भी है कि वास्तव में मुनाफिक हों, बजाहिर इस्लाम का दावा रखते हों। इसके बाद इरशाद फरमाया:

لَهُمْ مَغْفِرَةٌ.

यानी उनके लिये तयशुदा है मगफिरत। जैसा कि सही हदीसों में है:

الْإِسْلَامُ يَهْدِمُ مَا كَانَ قَبْلَهُ وَالْهَجْرَةُ تَهْدِمُ مَا كَانَ قَبْلَهَا.

यानी मुसलमान हो जाना पिछले सब गुनाहों के अंबार को ढहा देता है, इसी तरह हिजरत करना पिछले सब गुनाहों को खत्म कर देता है।

चौथी आयत में मुहाजिरीन के विभिन्न तब्कों का हुक्म बयान फरमाया है कि अगरचे उनमें कुछ लोग शुरू के हिजरत करने वाले हैं जिन्होंने सुलह हुदैबिया से पहले हिजरत की और कुछ दूसरे दर्जे के मुहाजिर हैं जिन्होंने सुलह हुदैबिया के बाद हिजरत की, और इसकी वजह से उनके आखिरत के दर्जों में फर्क होगा मगर दुनिया के अहकाम में उनका हुक्म भी वही है जो शुरू के

हिजरत करने वाले हज़रात का है, कि वे एक दूसरे के वारिस हैं। इसी लिये मुहाजिरीन को खिताब करके इरशाद फरमाया:

فَأُولَٰئِكَ مِنْكُمْ

यानी ये दूसरे दर्जे के मुहाजिरीन भी तुम्हारे ही दर्जे में शामिल हैं, इसी लिये विरासत के अहकाम में भी उनका हुक्म आम मुहाजिरीन की तरह है।

यह सूर: अनफ़ाल की बिल्कुल आखिरी आयत है, इसके आखिर में मीरास के कानून का एक मुकम्मल कानून बयान फरमाया गया है जिसके ज़रिये उस वक्ती और अस्थायी हुक्म को रद्द और निरस्त कर दिया गया है जो हिजरत के शुरू के दौर में मुहाजिरीन और अन्सार के बीच भाईचारे के ज़रिये एक दूसरे का वारिस बनने के मुताल्लिक जारी हुआ था:

وَأُولُوا الْأَرْحَامِ بَعْضُهُمْ أَوْلَىٰ بِبَعْضٍ فِي كِتَابِ اللَّهِ

लफ़्ज़ 'उलू' अरबी भाषा में साहिब के मायने में आता है, जिसका तर्जुमा उर्दू में वाले से किया जाता है। 'उलुल-अक्ल' अक्ल वाले, 'उलुल-अम्र' अम्र वाले, इसलिये 'उलुल-अरहाम' के मायने हुए 'अरहाम वाले'। अरहाम रहम की जमा (बहुवचन) है, जो असल में उस अंग का नाम है जिसके अन्दर बच्चे की रचना अमल में आती है, और चूँकि रिश्तेदारी का ताल्लुक रहम की शिकत से कायम होता है इसलिये उलुल-अरहाम रिश्तेदारों के मायने में इस्तेमाल होता है।

आयत के मायने यह हैं कि अगरचे एक उमूमी वलायत (रिश्ता) सब मुसलमानों को आपस में एक दूसरे के साथ हासिल है, जिसके सबब ज़रूरत के वक़्त एक दूसरे की इमदाद व सहयोग भी वाजिब होता है, और एक दूसरे के वारिस भी होते हैं, लेकिन जो मुसलमान आपस में कराबत और रिश्ते का ताल्लुक रखते हों वे दूसरे मुसलमानों से पहले हैं 'फी किताबिल्लाहि' के मायने इस जगह 'फी हुक्मिल्लाहि' के हैं। यानी अल्लाह तआला ने अपने खास हुक्म से यह कानून बना दिया है।

इस आयत ने यह ज़ाबता (उसूल और कायदा) बता दिया कि विरासत का बंटवारा रिश्तेदारी के मेयार पर होना चाहिये। और लफ़्ज़ उलुल-अरहाम करीबी और रिश्तेदारों के लिये आम बोला जाता है, उनमें से खास-खास रिश्तेदारों के हिस्से तो खुद कुरआने करीम ने सूर: निसा में मुतैयन फरमा दिये, जिनको इल्मे मीरास की परिभाषा में अहल-ए-फ़राईज़ या ज़विल-फ़ुरूज़ कहा जाता है। उनको देने के बाद जो माल बचे वह इस आयत के एतिबार से दूसरे रिश्तेदारों में तकसीम होना चाहिये। और यह भी ज़ाहिर है कि सब रिश्तेदारों में किसी माल का तकसीम करना किसी की ताक़त में नहीं, क्योंकि दूर की रिश्तेदारी तो बिला शुब्हा सारी दुनिया के इनसानों के बीच मौजूद है क्योंकि सब के सब एक ही बाप और माँ यानी आदम व हव्वा अलैहिमस्सलाम से पैदा हुए हैं। इसलिये रिश्तेदारों में तकसीम करने की अमली सूरत यही हो सकती है कि करीबी रिश्तेदारों को दूर वालों पर मुकद्दम (आगे और पहले) रखकर करीब के सामने दूर वाले को मेहरूम किया जाये। जिसका तफ़सीली बयान रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की

हदीसों में इस तरह मौजूद है कि ज़विल-फरूज के हिस्से देने के बाद जो कुछ बचे वह मरने वाले के असबात यानी बाप-दादा की तरफ़ वाले रिश्तेदारों को दर्जा-ब-दर्जा दिया जाये, यानी करीबी असबा को दूर वाले पर आगे रखकर करीब के सामने दूर वाले को मेहरूम किया जाये।

और अगर असबात (बाप-दादा की तरफ़ वाले रिश्तेदारों) में से कोई भी जिन्दा मौजूद नहीं तो फिर बाकी रिश्तेदारों में तक़सीम किया जाये।

असबात के अलावा जो दूसरे रिश्तेदार होते हैं इल्मे मीरास व फ़राईज की खास परिभाषा में लफ़्ज़ ज़विल-अरहाम उन्हीं के लिये विशेष कर दिया गया है। लेकिन यह परिभाषा बाद में मुक़रर की गयी है, क़ुरआने करीम में 'उलुल-अरहाम' का लफ़्ज़ लुगवी मायने के मुताबिक़ तमाम रिश्तेदारों को शामिल है, जिसमें ज़विल-फ़रूज, असबात और ज़विल-अरहाम संक्षिप्त रूप से सब दाख़िल हैं।

फिर इसकी कुछ तफ़सील सूर: निसा की आयतों में आ गयी, जिनमें खास-खास रिश्तेदारों के हिस्से हक़ तआला ने खुद मुक़रर फ़रमा दिये, जिनको मीरास की इस्तिलाह में ज़विल-फ़रूज कहते हैं, और बाकी के मुताल्लिक़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया:

الحقوا الفرائض باهلها لما بقى فهو لاولى رجل ذكر.

यानी जिनके हिस्से क़ुरआन ने तय कर दिये हैं वो पूरे उनको देने के बाद जो कुछ बचे वो उन लोगों को दिये जायें जो मर्द हों और मरने वाले से ज़्यादा करीब हों। (बुख़ारी शरीफ़)

इनको मीरास की परिभाषा में असबात कहा जाता है। अगर किसी मय्यित के असबात में कोई मौजूद न हो तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इरशाद के मुताबिक़ फिर दूसरे रिश्तेदारों को दिया जाता है जिनको इस्तिलाह में ज़विल-अरहाम कहते हैं जैसे मामूँ ख़ाला वग़ैरह।

सूर: अनफ़ाल की इस आख़िरी आयत के आख़िरी जुमले ने इस्लामी विरासत का वह क़ानून मन्सूख़ (रद्द और ख़त्म) कर दिया जो इससे पहली आयतों में बयान हुआ है। जिसकी वज़ाहत के मुताबिक़ मुहाजिरीन व अन्सार में आपस में विरासत जारी होती थी, चाहे उनके बीच कोई रिश्तेदारी न हो। क्योंकि यह हुक्म एक वक्ती और आपातकालीन हुक्म है जो हिजरत के शुरू के दौर में दिया गया था।

सूर: अनफ़ाल ख़त्म हो गयी, अल्लाह तआला हम सब को इसके समझने और फिर इस पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमायें।

अल्लाह की मदद व तौफ़ीक़ से इस सूरत की तफ़सीर 28 जुमादल-उख़रा सन् 1381 हिजरी को जुमेरात की रात को पूरी हुई। और इस पर नज़रे-सानी जुमे के दिन 19 जुमादल-ऊला सन् 1390 हिजरी को पूरी हुई। अल्लाह तआला कुबूल फ़रमायें। तमाम तारीफ़ें अल्लाह ही के लिये हैं और उसी की मदद और तौफ़ीक़ से यह ख़िदमत अन्जाम पाई और आगे भी उसी की मदद व तौफ़ीक़ दरकार है। (मुहम्मद शफी उफ़ि-य अन्हु)

(अल्लाह का शुक्र व एहसान है कि सूर: अनफ़ाल की तफ़सीर पूरी हुई)

* सूरः तौबा *

यह सूरत मदनी है। इसमें 129 आयतें
और 16 रुकूअ हैं।

सूर: तौबा

آياتها (1) سُورَةُ التَّوْبَةِ مَدَنِيَّةٌ (2) لُكْنُهَا (3)

بَرَاءَةٌ مِّنَ اللَّهِ وَرَسُولِهِ إِلَى الَّذِينَ عَاهَدْتُمْ مِّنَ الْمُشْرِكِينَ ۖ فَسِيحُوا فِي الْأَرْضِ أَرْبَعَةَ أَشْهُرٍ وَاعْلَمُوا أَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللَّهِ ۚ وَأَنَّ اللَّهَ مُخِزُّ الْكَافِرِينَ ۝ وَأَذَانٌ مِّنَ اللَّهِ وَرَسُولِهِ إِلَى النَّاسِ يَوْمَ الْحَجِّ الْأَكْبَرِ أَنَّ اللَّهَ بَرِيءٌ مِّنَ الْمُشْرِكِينَ ۖ وَرَسُولُهُ ۚ فَإِنْ تُبْتُمْ فَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ وَإِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَأَعْلَمُوا أَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللَّهِ ۚ وَبَشِّرِ الَّذِينَ كَفَرُوا بِعَذَابٍ أَلِيمٍ ۝ إِلَّا الَّذِينَ عَاهَدْتُمْ مِّنَ الْمُشْرِكِينَ ثُمَّ لَمْ يَنْقُصُوكُمْ شَيْئًا وَلَمْ يُظَاهِرُوا عَلَيْكُمْ أَحَدًا فَأَتُوا إِلَيْهِمْ عَهْدُهُمْ إِلَىٰ مَدِينِهِمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِينَ ۝ فَإِذَا انسَلَخَ الْأَشْهُرُ الْحُرُمُ فَاقْتُلُوا الْمُشْرِكِينَ حَيْثُ وَجَدْتُمُوهُمْ وَخُذُوهُمْ وَأَحْصُرُوهُمْ وَأَقْعُدُوا لَهُمْ كُلَّ مَرْصَدٍ ۚ فَإِنْ تَابُوا وَأَقَامُوا الصَّلَاةَ وَآتَوُا الزَّكَاةَ فَخَلُّوا سَبِيلَهُمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝

सूर: तौबा मदीना में नाज़िल हुई। इसमें 129 आयतें और 16 रुकूअ हैं।

बराअतुम्-मिनल्लाहि व रसूलिही
इलल्लजी-न आहत्तुम् मिनल्
मुशिरकीन (1) फसीहू फिल्अर्जि
अर्ब-अ-त अशहुरिर्व्वज्जलमू अन्नकुम्
गैरु मुअ्जिज़िल्लाहि व अन्नल्ला-ह
मुख्जिल्-काफिरीन (2) व अजानुम्
मिनल्लाहि व रसूलिही इलन्नासि
यौमल्-हज्जिल्-अक्बरि अन्नल्ला-ह
बरीउम् मिनल्-मुशिरकी-न व रसूलुह
फ-इन् तुब्तुम् फहु-व खैरुल्लकुम् व

साफ़ जवाब है अल्लाह की तरफ़ से और
उसके रसूल की, उन मुशिरकों को जिनसे
तुम्हारा अहद हुआ था। (1) सो फिर तो
इस मुल्क में चार महीने और जान लो
कि तुम न थका सकोगे अल्लाह को और
यह कि अल्लाह रुस्वा करने वाला है
काफ़िरों को। (2) और सुना देना है
अल्लाह की तरफ़ से और उसके रसूल
की, लोगों को दिन बड़े हज के कि
अल्लाह अलग है मुशिरकों से और उसका
रसूल, सो अगर तुम तौबा करो तो तुम्हारे
लिये बेहतर है, और अगर न मानो तो

इन् तवल्लैतुम् फअलम् अन्नकुम्
 गैरु मुअ्जिज़िल्लाहि, व बशिशरिल्-
 लज़ी-न क-फरु बि-अज़ाबिन् अलीम
 (3) इल्लल्लज़ी-न आहत्तुम् मिनल्-
 मुशिरकी-न सुम्-म लम् यन्कुसूकुम्
 शैअव्-व लम् युज़ाहिरु अलैकुम्
 अ-हदन् फ-अतिम्मु इलैहिम् अह-दहुम्
 इला मुदतिहिम्, इन्नल्ला-ह युहिब्बुल्-
 -मुत्तकीन (4) फ-इजन्स-लखाल्
 अशहरुल्-हरुमु फक्तुलुल्-मुशिरकी-न
 हैसु वजत्तुमूहुम् व खुजूहुम् वत्सुरूहुम्
 वक्अुदू लहुम् कुल्-ल मर्सदिन्
 फ-इन् ताबू व अकामुस्सला-त व
 आतवुज़्ज़का-त फ-खल्लू सबीलहुम्,
 इन्नल्ला-ह ग़फूररहीम (5)

जान लो कि तुम हरगिज़ न थका सकोगे
 अल्लाह को, और खुशख़ाबरी सुना दे
 काफ़िरों को दर्दनाक अज़ाब की। (3)
 मगर जिन मुशिरकों से तुमने अहद किया
 था फिर उन्होंने कुछ कसूर न किया
 तुम्हारे साथ और मदद न की तुम्हारे
 मुकाबले में किसी की, सो उनसे पूरा कर
 दो उनका अहद उनके वायदे तक, बेशक
 अल्लाह को पसन्द हैं एहतियात वाले।
 (4) फिर जब गुज़र जायें महीने पनाह के
 तो मारो मुशिरकों को जहाँ पाओ और
 पकड़ो और घेरो और बैठो हर जगह
 उनकी ताक में, फिर अगर वे तौबा करें
 और कायम रखें नमाज़ और दिया करें
 ज़कात तो छोड़ दो उनका रस्ता, बेशक
 अल्लाह है बख़्शने वाला मेहरबान। (5)

खुलासा-ए-तफसीर

अल्लाह की तरफ़ से और उसके रसूल की तरफ़ से, उन मुशिरकों (के अहद) से अलग होना
 है जिनसे तुमने (बिना मुदत तय किये हुए) अहद कर रखा था। (यह तीसरी जमाअत का हुक्म
 है, इन जमाअतों की तफसील मज़ारिफ़ व मसाईल में आ रही है) और (चौथी जमाअत यानी
 जिनसे कुछ भी अहद न था उनका भी हुक्म इससे और अच्छी तरह समझ में आ गया, कि जब
 समझौते वालों से अमान का हुक्म खत्म कर दिया तो जिनसे कोई समझौता नहीं हुआ उनसे तो
 कोई गुमान व ख्याल अमन का पहले से भी नहीं है) सो (इन दोनों जमाअतों को इत्तिला कर दो
 कि) तुम लोग इस सरज़मीन में चार महीने चल-फिर लो, (इजाज़त है तांकि अपना रहने का
 ठिकाना और पनाह ढूँढ लो) और (इसके साथ) (यह भी) जान रखो कि (इस मोहलत की
 बदौलत सिर्फ़ मुसलमानों के हाथ डालने से बच सकते हो लेकिन) तुम खुदा तआला को आजिज़
 नहीं कर सकते (कि उसके कब्ज़े से निकल सको), और यह (भी जान रखो) कि बेशक अल्लाह
 तआला (आखिरत में) काफ़िरों को रुस्वा करेंगे (यानी अज़ाब देंगे, तुम्हारा चलना और सफ़र

करना उससे नहीं बचा सकता, और दुनिया में क़त्ल हो जाने का अन्देशा अलग रहा। इसमें लुभाना है तौबा के लिये)।

और (पहली दूसरी जमाअत का हुक्म यह है कि) अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ से बड़े हज़ की तारीख़ों में आम लोगों के सामने ऐलान किया जाता है कि अल्लाह तआला और उसका रसूल दोनों (बिना किसी मियाद के तय किये अभी) अलग होते हैं उन मुशिरकों (को अमन देने) से (जिन्होंने खुद अहद को तोड़ा। इससे पहली जमाअत मुराद है, मगर) फिर (भी उनसे कहा जाता है कि) अगर तुम (कुफ़्र से) तौबा कर लो तो तुम्हारे लिये (दोनों जहान में) बेहतर है, (दुनिया में तो इसलिये कि तुम्हारे अहद तोड़ने का जुर्म माफ़ हो जायेगा और क़त्ल से बच जाओगे और आख़िरत में ज़ाहिर है कि निजात होगी) और अगर तुमने (इस्लाम से) मुँह मोड़ा तो यह समझ लो कि तुम खुदा तआला को अज़िज़ नहीं कर सकोगे (कि कहीं निकल कर भाग जाओ)। और (आगे खुदा को अज़िज़ न कर सकने की तफ़्सीर है कि) उन काफ़िरों को एक दर्दनाक सज़ा की ख़बर सुना दीजिये (जो आख़िरत में ज़ाहिर होगी। यह तो यकीनी है और दुनिया की सज़ा का अन्देशा व संभावना अलग। मतलब यह हुआ कि अगर मुँह मोड़ोगे तो सज़ा भुगतोगे) हाँ मगर वे मुशिरक लोग (इससे अलग हैं) जिनसे तुमने अहद लिया, फिर उन्होंने (अहद पूरा करने में) तुम्हारे साथ ज़रा कमी नहीं की और न तुम्हारे मुक़ाबले में (तुम्हारे) किसी (दुश्मन) की मदद की (इससे मुराद दूसरे नम्बर की जमाअत है) सो उनसे किये हुए मुआहदे को उनकी (तयशुदा) मुद्दत तक पूरा करो, (और अहद के खिलाफ़ न करो, क्योंकि) वाकई अल्लाह तआला (अहद के खिलाफ़ करने से) एहतियात रखने वालों को पसन्द करते हैं (पस तुम एहतियात रखोगे तो तुम भी अल्लाह के पसन्दीदा हो जाओगे)।

(आगे पहली जमाअत के हुक्म का आख़िरी हिस्सा है कि जब उनको कोई मोहलत नहीं तो अगरचे उनसे भी जंग की गुंजाईश हो सकती थी लेकिन अभी मुहर्रम के ख़त्म तक सम्मानित महीने हैं जिनमें जंग करना मना है) सो (उनके गुज़रने का इन्तिज़ार कर लो और) जब सम्मानित महीने गुज़र जाएँ तो (उस वक़्त) इन मुशिरकों (यानी पहली जमाअत वालों) को जहाँ पाओ वहाँ मारो, और पकड़ो और बाँधो, और दाव-घात के मौकों में उनकी ताक में बैठो (यानी लड़ाई में जो-जो होता है सब की इजाज़त है) फिर अगर वे (कुफ़्र से) तौबा कर लें और (इस्लाम के काम करने लगे यानी मसलन) नमाज़ पढ़ने लगे और ज़कात देने लगे तो उनका रास्ता छोड़ दो (यानी उनको क़त्ल न करो और बन्दी मत बनाओ, क्योंकि) वाकई अल्लाह तआला बड़ी मग़फ़िरत करने वाले, बड़ी रहमत करने वाले हैं (इस वास्ते ऐसे शख्स का कुफ़्र बख़्श दिया और उसकी जान बचा ली, और यही हुक्म बाकी की जमाअतों का होगा, उनकी मियादें गुज़रने के बाद)।

मआरिफ़ व मसाईल

सूर: बराअत शुरू हो रही है जिसको सूर: तौबा भी कहा जाता है। बराअत इसलिये कहा जाता है कि इसमें काफ़िरों से बराअत (बरी होने) का ज़िक्र है और तौबा इसलिये कि इसमें

मुसलमानों की तौबा कुबूल होने का बयान है। (तफ्सीरे मज्हीरी)

इस सूरत की एक खूबसूरत (विशेषता) यह है कि कुरआन के मुसहफों में इस सूरत के शुरू में बिस्मिल्लाह नहीं लिखी जाती, इसके अलावा तमाम कुरआनी सूरतों के शुरू में बिस्मिल्लाह लिखी जाती है। इसकी वजह मालूम करने से पहले यह जान लेना चाहिये कि कुरआन मजीद तेईस साल की मुदत में थोड़ा-थोड़ा नाज़िल हुआ है, एक ही सूरत की आयतें विभिन्न वक्तों में नाज़िल हुईं। जिब्रीले अमीन जब वही लेकर आते तो साथ ही अल्लाह के हुक्म से यह भी बतलाते थे कि यह आयत फुलों सूरत में फुलों आयत के बाद रखी जाये। उसी के मुताबिक़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम वही लिखने वालों को हिदायत फरमाकर लिखवा देते थे।

और जब एक सूरत खत्म होकर दूसरी सूरत शुरू होती थी तो सूरत शुरू होने से पहले बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम नाज़िल होती थी जिससे यह समझ लिया जाता था कि पहली सूरत खत्म हो गयी, अब दूसरी सूरत शुरू हो रही है। कुरआन मजीद की तमाम सूरतों में ऐसा ही हुआ। सूर: तौबा नाज़िल होने के एतिबार से बिल्कुल आखिरी सूरतों में से है। इसके शुरू में आम दस्तूर के मुताबिक़ न बिस्मिल्लाह नाज़िल हुई और न रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने वही लिखने वालों को इसकी हिदायत फरमाई। इसी हाल में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात हो गयी।

जामे-ए-कुरआन (यानी कुरआन को मौजूदा तरतीब में जमा करने और इसकी प्रतियाँ तैयार कराकर अरब और अरब से बाहर इसको फैलाने वाले) हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अन्हु ने अपनी खिलाफ़त के दौर में जब कुरआन मजीद को किताबी सूरत में तरतीब दिया तो सब सूरतों के खिलाफ़ सूर: तौबा के शुरू में बिस्मिल्लाह न थी, इसलिये यह शुब्हा हो गया कि शायद यह कोई मुस्तक़िल सूरत न हो बल्कि किसी दूसरी सूरत का हिस्सा हो। अब इसकी फ़िक्र हुई कि अगर यह किसी दूसरी सूरत का हिस्सा हो तो वह कौनसी सूरत हो सकती है। मज़ामीन के एतिबार से सूर: अनफ़ाल इसके मुनासिब मालूम हुई।

और हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु अन्हु से एक रिवायत में यह भी नक़ल किया गया है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने में इन दोनों सूरतों को करीनतैन (यानी मिली हुई) कहा जाता था (तफ्सीरे मज्हीरी)। इसलिये सूर: अनफ़ाल के बाद इसको रख दिया गया। यह एहतियात तो इसलिये की गयी कि यह दूसरी सूरत का हिस्सा हो तो इसके साथ रहना चाहिये, मगर शुब्हा और संभावना यह भी थी कि यह अलग मुस्तक़िल सूरत हो, इसलिये लिखने में यह सूरत इख़्तियार की गयी कि सूर: अनफ़ाल के ख़त्म पर सूर: तौबा के शुरू से पहले कुछ जगह ख़ाली छोड़ दी गयी जैसे आम सूरतों में बिस्मिल्लाह की जगह होती है।

सूर: बराअत या तौबा के शुरू में बिस्मिल्लाह न लिखे जाने की यह तहकीक़ खुद कुरआन के जामे हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु अन्हु से अबू दाऊद, नसाई, मुस्नद इमाम अहमद, तिर्मिज़ी में कुरआन के व्याख्यापक हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु के एक सवाल के जवाब

में मन्कूल है। इस सवाल में हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अन्हु से यह भी मालूम किया था कि कुरआन की सूरतों की जो तरतीब कायम की गयी है कि सबसे पहले बड़ी सूरतें रखी गयीं जिनमें सौ आयतों से ज्यादा हों जिनको इस्तिलाह में मिज़ैन कहा जाता है, उसके बाद वो बड़ी सूरतें रखी गयी हैं जिनमें सौ से कम आयतें हैं जिनको मसानी कहा जाता है। उसके बाद छोटी सूरतें रखी गयी हैं जिनको मुफ़स्सलात कहा जाता है। इस तरतीब का भी तकाज़ा यह है कि सूरः तौबा को सूरः अनफ़ाल से पहले रखा जाये क्योंकि सूरः तौबा की आयतें सौ से जायद और अनफ़ाल की सौ से कम हैं। शुरू की सात बड़ी सूरतें जिनको "सबअ-ए-तिवाल" कहा जाता है इसमें भी बजाय अनफ़ाल के सूरः तौबा ही ज्यादा मुनासिब है। इसके खिलाफ़ करने में क्या मस्तेहत है? हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि ये सब बातें सही हैं लेकिन कुरआन के मामले में एहतियात का तकाज़ा वही है जो इख़्तियार किया गया। क्योंकि अगर सूरः तौबा मुस्तक़िल सूरत न हो बल्कि सूरः अनफ़ाल का हिस्सा हो तो यह ज़ाहिर है कि सूरः अनफ़ाल की आयतें पहले नाज़िल हुई हैं और तौबा की उसके बाद। इसलिये उनको अनफ़ाल की आयतों से पहले लाना बग़ैर वही के जायज़ नहीं, और वही में हमें कोई ऐसी हिदायत नहीं मिली, इसलिये अनफ़ाल को पहले और तौबा को बाद में रखा गया।

इस तहकीक़ से यह मालूम हो गया कि सूरः तौबा के शुरू में बिस्मिल्लाह न लिखने की वजह यह है कि इसका शुब्हा व गुमान है कि सूरः तौबा अलैहदा सूरत न हो बल्कि सूरः अनफ़ाल का हिस्सा हो, इस शुब्हे व गुमान पर यहाँ बिस्मिल्लाह लिखना ऐसा ना-दुरुस्त होगा जैसे कोई शख्स किसी सूरत के बीच में बिस्मिल्लाह लिख दे।

इसी बिना पर फुफ़हा (कुरआन व हदीस के माहिर उलेमा) हज़रत ने फ़रमाया है कि जो शख्स ऊपर से सूरः अनफ़ाल की तिलावत करता आया हो और सूरः तौबा शुरू कर रहा हो वह बिस्मिल्लाह न पढ़े, लेकिन जो शख्स इसी सूरत के शुरू या बीच से अपनी तिलावत शुरू कर रहा है उसको चाहिये कि बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम पढ़कर शुरू करे। कुछ नावाकिफ़ यह समझते हैं कि सूर तौबा की तिलावत में किसी हाल में बिस्मिल्लाह पढ़ना जायज़ नहीं, यह ग़लत है और इस पर दूसरी ग़लती यह है कि बजाय बिस्मिल्लाह के ये लोग इसके शुरू में "अऊजु बिल्लाहि भिनन्नार" पढ़ते हैं जिसका कोई सबूत हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा किराम से नहीं है।

और हज़रत अली कर्मल्लाहु वज़्हू से जो हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से यह मन्कूल है कि सूरः बराअत के शुरू में बिस्मिल्लाह न लिखने की वजह यह है कि "बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम" अमान है और सूरः बराअत में काफ़िरों के अमान और अहद व समझौते को ख़त्म किया गया है, सो यह एक नुक्ता और लतीफ़ा है जो असली सबब के विरुद्ध नहीं। यानी असली सबब तो यही है कि सूरः अनफ़ाल और सूरः तौबा के एक होने के शुब्हे की बिना पर बिस्मिल्लाह नहीं लिखी गयी, फिर इस न लिखे जाने का एक लतीफ़ा यह भी हो

सकता है कि इस सूरत में काफ़िरों से बराजत और अमान का उठा लेना बयान हुआ है जो बिस्मिल्लाह के मुनासिब नहीं इसलिये कुदरती तौर पर यहाँ ऐसे असबाब पैदा कर दिये गये कि बिस्मिल्लाह यहाँ न लिखी जाये।

सूर: तौबा की उक्त आयतों को पूरे तौर पर समझने के लिये चन्द वाकिआत का जानना ज़रूरी है जिनके सबब से ये आयतें नाज़िल हुई हैं, इसलिये पहले उन वाकिआत की मुख़्तसर तफ़्सील लिखी जाती है।

1. पूरी सूर: तौबा में चन्द ग़ज़वात (इस्लामी जिहादों व लड़ाईयों) और उनसे संबन्धित वाकिआत का और उनके तहत में बहुत से अहक़ाम व मसाल का बयान हुआ है। मसलन अरब के तमाम कबीलों से मुआहदों (समझौतों और संधियों) का ख़त्म कर देना, मक्के का फ़तह होना, ग़ज़वा-ए-हुनैन, ग़ज़वा-ए-तबूक। इन वाकिआत में मक्के का फ़तह होना सबसे पहले सन् 8 हिजरी में फिर ग़ज़वा-ए-हुनैन उसी साल में फिर ग़ज़वा-ए-तबूक रजब सन् 9 हिजरी में फिर अरब के तमाम कबीलों से समझौते और मुआहदे ख़त्म करने का ऐलान ज़िलहिज्जा सन् 9 हिजरी में हुआ।

2. मुआहदों और समझौतों को ख़त्म कर देने के मुताल्लिक़ जो मज़ामीन इन आयतों में बयान हुए हैं उनका खुलासा यह है कि सन् 6 हिजरी में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उमरे का इरादा फ़रमाया और मक्का के कुरैश ने आपको मक्का में दाख़िल न होने दिया और हुदैबिया के स्थान में उनसे सुलह हुई। इस सुलह की मियाद तफ़्सीर रूहुल-मज़ानी के बयान के मुताबिक़ दस साल की थी। मक्का में कुरैश के अलावा दूसरे कबीले भी थे, सुलह के समझौते की एक धारा यह भी रखी गयी कि कुरैश के अलावा दूसरे कबीलों में से जिसका जी चाहे वह कुरैश का हलीफ़ और साथी बन जाये और जिसका जी चाहे वह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हलीफ़ (साथी और दोस्त) होकर आपके साथ हो जाये। चुनाँचे कबीला खुज़ाआ ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हलीफ़ (साथी) बनना पसन्द किया और आपके साथ हो गये, और कबीला बनू बक्र ने कुरैश के साथ होना इख़्तियार कर लिया। इस समझौते के लिहाज़ से यह लाज़िमी था कि दस साल के अन्दर न आपस में जंग होगी न किसी जंग करने वाले को किसी तरफ़ से कोई मदद दी जायेगी, और जो कबीला किसी फ़रीक़ का हलीफ़ (साथी) है वह भी उसी के हुक्म में समझा जायेगा, कि उस पर हमला करना या हमलावर को मदद देना समझौते का उल्लंघन समझा जायेगा।

यह समझौता सन् 6 हिजरी में हुआ, सन् 7 हिजरी में समझौते के मुताबिक़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मय सहाबा किराम के छूटे हुए उमरे की क़ज़ा करने के लिये मक्का मुअज़्ज़मा तशरीफ़ ले गये और तीन दिन क़ियाम करके समझौते के अनुसार वापस तशरीफ़ ले आये। उस वक़्त तक किसी पक्ष की तरफ़ से सुलह के समझौते का कोई उल्लंघन न हुआ था।

उसके बाद पाँच-छह महीने गुज़रे थे कि कबीला बनू बक्र ने कबीला खुज़ाआ पर रात के वक़्त छापा मारा और कुरैश ने भी यह समझकर कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम

बहुत दूर हैं और रात का वक्त है आप तक वाकिए की तफ़्सीलात पहुँचना मुश्किल है, उस हमले में बनू बक्र को हथियारों और अपने जवानों से मदद दी।

इन वाकिआत और हालात के मुताबिक़ जिनको आखिरकार कुरैश ने भी तस्लीम कर लिया सुलह का वह समझौता टूट गया जो हुदैबिया में दस साल के युद्ध विराम का हुआ था।

कबीला खुजाआ जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हलीफ़ थे उन्होंने इस वाकिए की इत्तिला आपको दे दी। हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कुरैश के अहद तोड़ने की ख़बर पाकर कुरैश के खिलाफ़ जंग की ख़ुफ़िया तैयारी शुरू कर दी।

कुरैश को बदर व उहुद और अहज़ाब की मुहिमों और लड़ाईयों में मुसलमानों की गैबी और रब्बानी ताक़त का अन्दाज़ा होकर अपनी कुव्वत व ताक़त का नशा उतर चुका था, उस वक्त अहद तोड़ने के बाद मुसलमानों की तरफ़ से जंग का ख़तरा तो पैदा हो ही चुका था। हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इत्तिला पहुँचने के बाद मुकम्मल ख़ामोशी से यह ख़तरा और ज़्यादा प्रबल हो गया। मजबूर होकर अबू सुफ़ियान को मदीना भेजा कि वह खुद जाकर हालात का अन्दाज़ा लगायें और अगर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ़ से जंग की तहरीक का अन्दाज़ा हो तो पिछले वाकिए पर उज़्र व माज़िरत (माफी-तलाफी) करके आईन्दा के लिये नये सिरे से समझौते का नवीकरण कर लें।

अबू सुफ़ियान को मदीना पहुँचकर रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की जंगी तैयारियों का कुछ इल्म हुआ तो परेशान होकर बड़े सहाबा में से एक-एक के पास गये कि वे सिफ़ारिश करके समझौते को नये सिरे से तय करा दें, मगर सब ने उनके पहले के मामलात और मौजूदा कड़वे अनुभवों के सबब इनकार कर दिया और अबू सुफ़ियान नाकाम वापस आये। मक्का के कुरैश पर ख़ौफ़ व बेचैनी तारी हो गयी।

इधर बिदाया और इब्ने कसीर की रिवायत के मुताबिक़ हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने 10 रमज़ान सन् 8 हिजरी को मदीना तय्यिबा से सहाबा किराम की भारी संख्या के साथ मक्का पर हमला करने के इरादे से कूच फ़रमाया और आखिरकार मक्का मुकर्रमा फ़तह हो गया।

मक्का फ़तह होने के वक्त मग़लूब दुश्मनों के साथ

बेमिसाल करीमाना सुलूक

फ़तह के वक्त कुरैश के बहुत से सरदार जो पहले से इस्लाम की हक्कानियत (हक़ और सच होने) का यकीन रखते थे मगर बिरादरी के ख़ौफ़ से इज़हार न कर सकते थे, अब उनको मौक़ा मिल गया वे इस्लाम ले आये और जो उस वक्त भी अपने पुराने मज़हब यानी कुफ़्र पर जमे रहे उनको भी सिवाय चन्द गिनेचुने अफ़राद के रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सब को जान व माल की अमान देकर पैग़म्बराना और चमत्कारी अख़्लाक़ का वह सुबूत दिया

जिसकी दूसरे लोगों से कल्पना भी नहीं हो सकती, उनकी पिछली तमाम दुश्मनियों, अत्याचारों और बेरहमी के वाकिआत को बिल्कुल नज़र-अन्दाज़ फ़रमाकर इरशाद फ़रमाया कि मैं आज तुमसे वही बात कहता हूँ जो यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने अपने भाईयों से उस वक़्त कही थी जब कि वे माँ-बाप के साथ यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के पास मिस्र पहुँचे थे।

لَا تَرْبِ عَلَيْهِمُ الْيَوْمَ.

यानी तुम्हारे जुल्म व सितम का बदला लेना या कोई सज़ा देना तो क्या हम तुमको मलामत करना भी ग़वारा नहीं करते।

फ़तह-ए-मक्का के वक़्त मुशिरकों की चार किस्में और उनके अहकाम

बहरहाल उस वक़्त मक्का पर मुसलमानों का मुकम्मल कब्ज़ा हो गया, मक्का और मक्का के आस-पास में रहने वाले ग़ैर-मुस्लिमों को जान व माल की अमान दे दी गयी। लेकिन उस वक़्त उन ग़ैर-मुस्लिमों के विभिन्न हालात थे। एक किस्म के तो वे लोग थे जिनसे हुदैबिया में सुलह का समझौता हुआ और उन्होंने खुद उसको तोड़ दिया, और वही फ़तह-ए-मक्का का सबब हुआ। दूसरे कुछ ऐसे लोग थे जिनसे सुलह का समझौता किसी खास मियाद के लिये किया गया और वे उस समझौते पर कायम रहे जैसे बनू किनाना के दो कबीले बनू ज़मरा और बनू मुदलिज जिनसे एक मुदत के लिये सुलह हुई थी और सूरः बराअत नाज़िल होने के वक़्त बकौल खाज़िन उनकी सुलह की मियाद के नौ महीने बाकी थे।

तीसरे कुछ ऐसे लोग भी थे जिनसे सुलह का समझौता बिना किसी मुदत को निर्धारित किये हुआ था। चौथे वे लोग थे जिनसे किसी किस्म का समझौता न था।

मक्का फ़तह होने से पहले जितने मुशिरक या अहले किताब से रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने समझौते किये उन सब का यह कड़वा तजुर्बा लगातार होता रहा कि उन्होंने छुपे या खुले अहद और समझौते को तोड़ा और दुश्मनों से साज़िश करके रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और मुसलमानों को नुकसान पहुँचाने की संभावित पूरी कोशिशें कीं। इसलिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने निरंतर तजुर्बे और खुदावन्दी इशारों के मातहत यह फैसला कर लिया था कि आईन्दा उनमें से किसी के साथ सुलह का कोई समझौता न किया जायेगा और अरब इलाक़े को एक इस्लामी क़िले की हैसियत से सिर्फ़ मुसलमानों के लिये मख़सूस कर दिया जायेगा, जिसका तकाज़ा यह था कि मक्का और अरब के इलाक़े पर हुकूमत व इख़्तियार हासिल होते ही ऐलान कर दिया जाता कि ग़ैर-मुस्लिम यहाँ से दूसरी जगह मुत्तकिल हो जायें। लेकिन इस्लाम के अदल व इन्साफ़ भरे उसूल, रहीमाना सुलूक और रहमुतल-लिल्आलमीन की रहमते आम्मा के मातहत बिना मोहलत के ऐसा करना मुनासिब न था, इसलिये

सूर: बराअत के शुरू में इन चारों किस्म की गैर-मुस्लिम जमाअतों के अलग-अलग अहकाम नाज़िल हुए।

पहली जमाअत जो मक्का के कुरैश की थी, जिन्होंने हुदैबिया के समझौते को खुद तोड़ दिया था, अब ये किसी मज़ीद मोहलत के मुस्तहिक न थे, मगर चूँकि यह ज़माना 'सम्मानित महीनों' का ज़माना था जिनमें जंग व किताल अल्लाह की जानिब से मना और प्रतिबन्धित था, इसलिये उनके मुताल्लिक तो वह हुक्म आया जो सूर: तौबा की पाँचवीं आयत में ज़िक्र हुआ है:

فَإِذَا انسَلَخَ الْأَشْهُرُ الْحُرُمُ فَاقْتُلُوا الْمُشْرِكِينَ حَيْثُ وَجَدْتُمُوهُمْ..... الآية.

जिसका हासिल यह था कि इन लोगों ने अहद व समझौते को तोड़कर अपना कोई हक बाकी नहीं छोड़ा मगर 'सम्मानित महीनों' का एहतियाम बहरहाल ज़रूरी है इसलिये सम्मानित महीने खत्म होते ही या तो वे अरब के ख़ित्ते से निकल जायें या मुसलमान हो जायें, वरना उनसे जंग की जाये।

और दूसरी जमाअत जिनसे किसी खास मियाद के लिये सुलह का समझौता किया गया और वे उस पर कायम रहे, उनका हुक्म सूर: तौबा की चौथी आयत में यह आया:

إِلَّا الَّذِينَ عَاهَدْتُمْ مِنَ الْمُشْرِكِينَ ثُمَّ لَمْ يَنْقُصُوا شَيْئًا وَلَمْ يُظَاهِرُوا عَلَيْكُمْ أَحَدًا فَأَتِمُوا الْبَيْعَ عَنْهُمْ إِلَىٰ مَلَّتِهِمْ. إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِينَ ॥

यानी वे मुशिरक लोग जिनसे तुमने सुलह का समझौता कर लिया फिर उन्होंने समझौते पर कायम रहने में कोई कमी नहीं की, और न तुम्हारे मुकाबले में तुम्हारे किसी दुश्मन की मदद की, तो तुम उनके समझौते को उसकी मुद्दत तक पूरा कर दो, क्योंकि अल्लाह तआला एहतियात रखने वालों को पसन्द करते हैं। यह हुक्म बनू ज़मरा और बनू मुदलिज का था जिसकी रू से उनको नौ महीने की मोहलत मिल गयी।

और तीसरी और चौथी दोनों जमाअतों का एक ही हुक्म आया जो सूर: तौबा की पहली और दूसरी आयत में बयान हुआ है:

بَرَاءَةٌ مِنَ اللَّهِ وَرَسُولِهِ إِلَى الَّذِينَ عَاهَدْتُمْ مِنَ الْمُشْرِكِينَ. فَسِيحُوا فِي الْأَرْضِ أَرْبَعَةَ أَشْهُرٍ وَعَلِمُوا أَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللَّهِ. وَأَنَّ اللَّهَ مُخْزِي الْكَافِرِينَ ॥

यानी अलग होने का ऐलान अल्लाह तआला की तरफ़ से और उसके रसूल की तरफ़ से है उन मुशिरकों के लिये जिनसे तुमने मुआहदा किया था। सो तुम लोग इस सरज़मीन में चार महीने चल फिर लो, और यह जान लो कि तुम अल्लाह तआला को आजिज़ नहीं कर सकते, और यह कि बेशक अल्लाह तआला काफ़िरों को रुस्वा करेंगे।

ग़र्ज़ कि पहली दूसरी आयतों के हिसाब से उन सब लोगों को जिनसे बिना किसी मुद्दत के निर्धारण के कोई मुआहदा (समझौता) था, या जिनके साथ कोई मुआहदा न था, चार महीने की मोहलत मिल गयी।

और चौथी आयत के एतिबार से उन लोगों को समझौता पूरा होने तक मोहलत मिल गयी जिनके साथ किसी खास मियाद का समझौता था, और पाँचवीं आयत से मक्का के मुशिरकों को 'सम्मानित महीने' खत्म होने तक मोहलत मिल गयी।

काफ़िरों से समझौते ख़त्म हो जाने पर भी उनको मोहलत देने का करीमाना सुलूक

इन अहकाम का लागू होना और मोहलत का शुरू होना उस वक़्त से तय हुआ जबकि इन अहकाम का ऐलान तमाम अरब में हो जाये। इस सार्वजनिक ऐलान के लिये यह इत्तिज़ाम किया गया कि सन् 9 हिजरी के हज के दिनों में मिना व अरफ़ात की आम सभाओं में इसका ऐलान किया जाये जिसका ज़िक्र सूर: तौबा की तीसरी आयत में इस तरह आया है:

وَإِذَا ن مِنَ اللَّهِ وَرَسُولِهِ إِلَى النَّاسِ يَوْمَ الْحَجِّ الْأَكْبَرِ أَنَّ اللَّهَ بَرِيءٌ مِنَ الْمُشْرِكِينَ وَرَسُولُهُ فَإِنْ تُبْتُمْ فَهُوَ خَيْرٌ لَكُمْ وَإِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَأَعْلَمُوا أَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللَّهِ. وَبَشِّرِ الَّذِينَ كَفَرُوا بِعَذَابٍ أَلِيمٍ

यानी सार्वजनिक ऐलान है आम लोगों के सामने अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ से बड़े हज की तारीखों में, इस बात का कि अल्लाह और उसका रसूल दोनों अलग होते हैं इन मुशिरकों से। फिर अगर तुम तौबा कर लो तो तुम्हारे लिये बेहतर है, और अगर तुमने मुँह मोड़ा तो यह समझ लो कि तुम खुदा को आजिज़ नहीं कर सकोगे, और इन काफ़िरों को एक दर्दनाक अज़ाब की ख़बर सुना दीजिये।

समझौता ख़त्म करने के लिये एक अहम हिदायत

काफ़िरों से मुआहदा ख़त्म किया जाये तो ऐलान-ए-आम और सब को होशियार ख़बरदार किये बग़ैर उनके खिलाफ़ कोई कार्रवाई दुरुस्त नहीं।

चुनाँचे अल्लाह के इस हुक्म की तामील के लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम ने सन् 9 हिजरी के हज में हज़रत सिद्दीक़े अक्बर और अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हुमा को मक्का मुकर्रमा भेजकर मैदान-ए-अरफ़ात और मिना में जहाँ अरब के तमाम कबीलों का इज्तिमा था यह ऐलान करा दिया, और यह भी ज़ाहिर था कि उस अज़ीमुशशान मजमे के द्वारा पूरे अरब में इस हुक्म का फैल जाना लाज़िमी था। फिर एहतियातन हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु की मारिफ़त यमन में खास तौर पर इसका ऐलान करा दिया।

इस आम ऐलान के बाद सूरतेहाल यह हो गयी कि पहली जमाअत यानी मक्का के मुशिरकों को सम्मानित महीनों के ख़ात्मे यानी मुहर्रम सन् 10 हिजरी के ख़त्म तक और दूसरी जमाअत को रमज़ान सन् 10 हिजरी तक और तीसरी व चौथी जमाअतों को 10 रबीउस्सानी सन् 10 हिजरी तक सीमाओं से निकल जाना चाहिये, और जो इसकी खिलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करे उसके जंग

किया जाना सही है। इस तरह अगले साल के हज के जमाने तक कोई काफिर सीमाओं के अन्दर दाखिल न रहने पायेगा। जिसका जिक्र सूर: तौबा की अट्ठाईसवीं आयत में आयेगा जिसमें इरशाद है:

فَلَا يَقْرَبُوا الْمَسْجِدَ الْحَرَامَ بَعْدَ عَامِهِمْ هَذَا.

यानी ये लोग इस साल के बाद मस्जिद-ए-हराम (काबा शरीफ) के पास न जा सकेंगे। और हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम के इरशाद:

لا يحجّن بعد العام مشركة.

का ही मतलब है। सूर: तौबा की शुरू की पाँच आयतों की तफ़सीर वाकिआत की रोशनी में सामने आ चुकी।

ज़िक्र हुई पाँच आयतों से संबन्धित चन्द मसाईल और फायदे

1. पहला यह कि मक्का फ़तह होने के बाद रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम ने मक्का के कुरैश और दूसरे दुश्मन कबीलों के साथ जो माफी व दरगुज़र और रहम व करम का मामला फ़रमाया उसने अमली तौर पर मुसलमानों को यह अख़्लाकी सबक़ दिया कि जब तुम्हारा कोई दुश्मन तुम्हारे काबू में आ जाये और तुम्हारे सामने बेबस हो जाये तो उससे पिछली दुश्मनियों और सताने का इन्तिकाम न लो बल्कि माफी व करम से काम लेकर इस्लामी अख़्लाक का सुबूत दो। अगरचे ऐसा करना अपने तबई ज़ज्बात को कुचलना है लेकिन इसमें चन्द अजीम फायदे हैं- अख़्तल खुद अपने लिये कि इन्तिकाम (बदला) लेकर अपना गुस्सा उतार लेने से वक़्ती तौर पर अगरचे नफ़्स को कुछ राहत महसूस हो लेकिन यह राहत फ़ना होने वाली है और इसके मुकाबले में अल्लाह तआला की रज़ा और जन्नत के बुलन्द दर्जे जो उसको मिलने वाले हैं वो इससे हर हैसियत में ज़्यादा भी हैं और हमेशा रहने वाले भी। और अक्ल का तकाज़ा यही है कि हमेशा बाकी रहने वाली चीज़ को फ़ानी पर तरजीह दे।

दूसरे यह कि दुश्मन पर काबू पाने के बाद अपने गुस्से के ज़ज्बात को दबा देना इसका सुबूत है कि उनकी लड़ाई अपने नफ़्स के लिये नहीं बल्कि महज़ अल्लाह तआला के लिये थी और यही वह आला मक़सद है जो इस्लामी जिहाद और आम बादशाहों की जंग में फ़र्क़ और जिहाद व फ़साद में फ़र्क़ करने वाला है, कि जो लड़ाई अल्लाह के लिये और उसके अहक़ाम जारी करने के लिये हो वह जिहाद है वरना फ़साद।

तीसरा फायदा यह है कि दुश्मन जब कब्ज़े में आने और मग़लूब होने के बाद इन उम्दा अख़्लाक को देखेगा तो शराफ़त का तकाज़ा यह है कि उसको इस्लाम और मुसलमानों से मुहब्बत पैदा होगी जो उसके लिये कामयाबी की चाबी है और यही जिहाद का असल मक़सद है।

काफिरों से माफी व दरगुज़र के यह मायने नहीं कि उनके नुक़सान से बचने का एहतिमाम भी न किया जाये

2. दूसरा मसला जो ज़िक्र हुई आयतों से समझा गया यह है कि माफी व मेहरबानी के यह मायने नहीं कि दुश्मनों के शर (बुराई और नुक़सान) से अपनी हिफ़ाज़त न करे और उनको ऐसा आज़ाद छोड़ दे कि वे फिर इनको नुक़सान और तकलीफ़ पहुँचाते रहें। बल्कि माफी व करम के साथ अक्ल का तकाज़ा यह है कि पिछले तज़ुबों से आईन्दा ज़िन्दगी के लिये सबक़ हासिल करे और उन तमाम छेदों को बन्द करे जहाँ से यह खुद दुश्मनों की ज़द में आ सके। इसी लिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हकीमाना इरशाद है:

لَا يُلْدَغُ الْمَرْءُ مِنْ حَجَرٍ وَاحِدٍ مَرَّتَيْنِ.

यानी अक्लमन्द आदमी एक सुराख़ से दो मर्तबा नहीं डसा जाता। जिस सुराख़ से एक मर्तबा किसी ज़हरीले जानवर ने उसको काटा है उसमें दोबारा हाथ नहीं देता।

सन् 9 हिजरी के बराअत के कुरआनी ऐलान और मुशिरकों को मोहलत व इत्मीनान के साथ हरम की सीमायें ख़ाली कर देने की हिदायतें इसी रणनीति का सुबूत हैं।

3. तीसरा फ़ायदा सूर: तौबा की शुरू की आयतों से यह मालूम हुआ कि कमज़ोर कौमों को बिना मोहलत दिये किसी जगह से निकल जाने का हुक्म या उन पर अचानक से हमला करना बुज़दिली और ग़ैर-शरीफ़ाना फ़ैल है। जब ऐसा करना हो तो पहले से आम ऐलान कर दिया जाये और उनको इसकी पूरी मोहलत दी जाये कि वे अगर हमारे क़ानून को तस्लीम नहीं करते तो आज़ादी के साथ जहाँ चाहें आसानी से जा सकें, जैसा कि मज़क़ूरा आयतों में सन् 9 हिजरी के आम ऐलान और उसके बाद तमाम जमाअतों को मोहलत देने के अहक़ाम से वाज़ेह हुआ।

4. चौथा मसला उक्त आयतों से यह मालूम हुआ कि किसी कौम के साथ सुलह का समझौता कर लेने के बाद अगर मियाद से पहले उस समझौते को ख़त्म कर देने की ज़रूरत पेश आ जाये तो अगरचे चन्द शर्तों के साथ इसकी इजाज़त है, मगर बेहतर यही है कि समझौते को उसकी मियाद तक पूरा कर दिया जाये जैसा कि सूर: तौबा की चौथी आयत में बनू ज़मरा और बनू मुदलिज का समझौता नौ महीने तक पूरा करने का हुक्म आया है।

5. पाँचवाँ मसला इन आयतों से यह मालूम हुआ कि दुश्मनों के साथ हर मामले में इसका ख़्याल रहना चाहिये कि मुसलमानों की दुश्मनी उनकी ज़ात के साथ नहीं बल्कि उनके काफ़िराना अक़ीदों व ख़्यालात के साथ है, जो उन्हीं के लिये दुनिया व आख़िरत की बरबादी के असबाब हैं। और मुसलमानों की उनसे मुख़ालफ़त भी दर हकीक़त उनकी हमदर्दी और भला चाहने पर आधारित है। इसी लिये जंग व सुलह के हर मक़ाम पर उनको नसीहत व ख़ैरख़्वाही भरी तंबीह और समझाना किसी वक़्त न छोड़ना चाहिये। जैसा कि इन आयतों में जगह-जगह इसका ज़िक्र है कि अगर तुम अपने ख़्यालात से तौबा करने वाले हो गये तो यह तुम्हारे लिये दुनिया व

आखिरत की कामयाबी है और इसके साथ यह भी बतला दिया कि अगर तौबा करने वाले न हुए तो सिर्फ़ यही नहीं कि तुम दुनिया में क़त्ल व ग़ारत किये जाओगे, जिसको बहुत से काफ़िर अपना कौमी कारनामा समझकर इख़्तियार कर लेते हैं, बल्कि यह भी समझ लो कि मरने के बाद भी अज़ाब से निजात न पाओगे। उक्त आयतों में बरी और अलग होने के ऐलान के साथ हमदर्दी के साथ तंबीह व समझाने का सिलसिला भी जारी है।

6. छठा मसला यह है कि चौथी आयत में जहाँ मुसलमानों को सुलह की मियाद के ख़त्म होने तक अहद को पूरा करने की हिदायत फ़रमाई गयी है, उसी के साथ आयत को इस जुमले पर ख़त्म किया गया है:

إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِينَ

यानी बेशक अल्लाह तआला एहतियात रखने वालों को पसन्द करते हैं। जिसमें इस तरफ़ इशारा है कि मुआहदा व समझौता पूरा करने में बड़ी एहतियात से काम लें। आम कौमों की तरह इसमें बहाने और तावीलें (उल्टे-सीधे मतलब) निकाल कर उल्लंघन की राह न ढूँढ़ें।

7. सातवाँ मसला पाँचवीं आयत की तफ़्सीलात से यह मालूम हुआ कि जब सही मक़सद के लिये किसी कौम से जंग छिड़ जाये तो फिर उनके मुक़ाबले के लिये हर तरह की कुव्वत पूरे तौर पर इस्तेमाल करना चाहिये। उस वक़्त रहम-दिली या नमी दर हकीकत रहम-दिली नहीं बल्कि बुज़दिली होती है।

8. आठवाँ मसला मज़कूरा पाँचवीं आयत से यह साबित हुआ कि किसी गैर-मुस्लिम के मुसलमान हो जाने पर भरोसा तीन चीज़ों पर मौकूफ़ है- एक तौबा, दूसरे नमाज़ को कायम करना, तीसरे ज़कात अदा करना। जब तक इस पर अमल न हो महज़ कलिमा पढ़ लेने से उनके साथ जंग बन्द न की जायेगी। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद जिन लोगों ने ज़कात देने से इनकार कर दिया था उनके मुक़ाबले पर सिद्दीक़े अक़बर रज़ियल्लाहु अन्हु ने जिहाद करने के लिये इसी आयत से दलील लेकर तमाम सहाबा को मुत्मईन कर दिया था।

9. नवाँ मसला इन आयतों में यह है कि 'यौमल् हज्जिल् अक्बरि' से क्या मुराद है। इसमें हज़राते मुफ़स्सिरीन के विभिन्न अक़वाल हैं, हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास, हज़रत फारुक़े आज़म, हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर, हज़रत अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ियल्लाहु अन्हुम वग़ैरह ने फ़रमाया कि 'यौमल् हज्जिल् अक्बरि' से मुराद अरफ़े का दिन है, क्योंकि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है 'अल्हज्जु अ-र-फ़तुन' (कि हज अरफ़ा है)। (अबू दाऊद, तिर्मिज़ी)

और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इससे मुराद यौमुन्नहर (क़ुरबानी का दिन) यानी ज़िलहिज्जा की दसवीं तारीख़ है। हज़रत सुफ़ियान सौरी रह. और कुछ दूसरे इमामों ने इन सब अक़वाल को जमा करने के लिये फ़रमाया कि हज के पाँचों दिन 'यौमल् हज्जिल् अक्बरि' का मिस्दाक़ हैं, जिनमें अरफ़ा और क़ुरबानी का दिन दोनों दाख़िल हैं, और लफ़्ज़ यौम (दिन) मुफ़रद (एक वचन) लाना इस मुहावरे के मुताबिक़ है जैसे ग़ज़वा-ए-बदर के चन्द दिनों को क़ुरआन करीम में यौमुल-क़ुरक़ान (फ़ैसले का दिन) के मुफ़रद नाम से ताबीर किया है। और अरब की

आम जंगों को लफ़्ज़ यौम ही से ताबीर किया जाता है, अगरचे उनमें कितने ही दिन खर्च हुए हों जैसे 'यौम-ए-बुआस, यौम-ए-उहुद' वगैरह। और चूँकि उमरे को हज्ज-ए-असगर यानी छोटा हज कहा जाता है इससे नुमायों और फर्क करने के लिये हज को हज्ज-ए-अकबर कहा गया। इससे मालूम हुआ कि कुरआनी परिभाषा में हर साल का हज हज्ज-ए-अकबर ही है। अ़वाम में जो यह मशहूर है कि जिस साल अरफ़ा जुमे के दिन पड़े सिर्फ़ वही हज्ज-ए-अकबर है, इसकी असलियत इसके सिवा नहीं है कि इत्तिफ़ाकी तौर पर जिस साल रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हज्जतुल-विदा हुआ है उसमें अरफ़ा जुमे के दिन हुआ था। यह अपनी जगह एक फज़ीलत ज़रूर है मगर आयते मज़क़ूरा के मफ़हूम से इसका ताल्लुक नहीं।

इमाम जस्सास ने अहकामुल-कुरआन में फ़रमाया कि हज के दिनों को हज्ज-ए-अकबर फ़रमाने से यह मसला भी निकल आया कि हज के दिनों में उमरा नहीं हो सकता, क्योंकि उन दिनों को कुरआने करीम ने हज्ज-ए-अकबर के लिये मख़सूस फ़रमा दिया है।

وَإِنْ أَحَدٌ مِنَ الْمُشْرِكِينَ اسْتَجَارَكَ فَأَجِرْهُ حَتَّىٰ

يَسْمَعَ كَلِمَاتِ اللَّهِ ثُمَّ ابْلِغْهُ مَأْمَنَهُ ذَٰلِكَ بِأَنَّهُمْ قَوْمٌ لَا يَعْلَمُونَ ۝ كَيْفَ يَكُونُ لِلْمُشْرِكِينَ عَهْدٌ عِنْدَ اللَّهِ وَعِنْدَ رَسُولِهِ إِلَّا الَّذِينَ عَاهَدْتُمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ۚ فَمَا اسْتَقَامُوا لَكُمْ فَاسْتَقِيمُوا لَهُمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِينَ ۝ كَيْفَ وَإِنْ يَظْهَرُوا عَلَيْكُمْ لَا يَرْقُبُوا فِيكُمْ إِلَّا ذِمَّةً ۚ يَرْضَوْنَكُمْ بِأَوَاهِيرِهِمْ وَتَابَ قُلُوبُهُمْ ۚ وَالْكَثْرُهُمْ فُسْخُون ۝ اِشْتَرُوا بِآيَاتِ اللَّهِ ثَمَنًا قَلِيلًا فَصَدُّوا عَنْ سَبِيلِهِ ۚ إِنَّهُمْ سَاءَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ۝ لَا يَرْقُبُونَ فِي مُؤْمِنٍ إِلَّا وَلَا ذِمَّةً ۚ وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُعْتَدُونَ ۝ فَإِنْ تَابُوا وَأَقَامُوا الصَّلَاةَ وَآتَوُا الزَّكَاةَ فَخِوَاهُمْ فِي الدِّينِ ۚ وَتَفَصَّلُ الْآيَاتِ لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ۝

व इन् अ-हदुम् मिनल् मुशिरकीन-
स्तजार-क फ-अजिरहु हत्ता यस्म-अ
कलामल्लाहि सुम्-म अब्लिरहु
मअम्-नहू, जालि-क बिअन्नहुम्
कौमुल् ला यअलमून (6) ❀
कै-फ यकूनु लिल्मुशिरकी-न अह्दुन्
अिन्दल्लाहि व अिन्-द रसूलिही

और अगर कोई मुशिरक तुझसे पनाह माँगे तो उसको पनाह दे यहाँ तक कि वह सुन ले कलाम अल्लाह का, फिर पहुँचा दे उस को उसकी अमन की जगह, या इस वास्ते कि वे लोग इल्म नहीं रखते। (6) ❀
क्योंकर होवे मुशिरकों के लिये अहद अल्लाह के नज़दीक और उसके रसूल के नज़दीक मगर जिन लोगों से तुमने अहद

इल्लल्लजी-न आहत्तुम् अिन्दल्
मस्जिदिल्-हरामि फ़मस्तकामू लकुम्
फ़स्तकीमू लहुम्, इन्नल्ला-ह युहिब्बुल्
मुत्तकीन (7) कै-फ़ व इय्यज़हस
अलैकुम् ला यरकुबू फ़ीकुम् इल्लव्-
व ला जिम्म-तन्, युरज़ूनकुम्
बिअप्वाहिहिम् व तअबा कुलूबुहुम्
व अक्सरुहुम् फ़ासिकून (8) इश्तरौ
बिआयातिल्लाहि स-मनन् कलीलन्
फ़-सद्दू अन् सबीलिही, इन्नहुम्
सा-अ मा कानू यअमलून (9) ला
यरकुबू-न फ़ी मुअ्मिनिन् इल्लव्-व
ला जिम्म-तन्, व उलाइ-क हुमुल्
मुअ्तदून (10) फ़-इन् ताबू व
अकामुस्सला-त व आतवुज़्ज़का-त
फ़-इख़वानुकुम् फ़िद्दीनि, व
नुफ़्सिलुल्-आयाति लिक्ौमिय्-
यअलमून (11)

किया था मस्जिदे हराम के पास, सो जब
तक वे तुमसे सीधे रहें तुम उनसे सीधे
रहो, बेशक अल्लाह को पसन्द है
एहतियात वाले। (7) क्योंकि रहे सुलह
और अगर वे तुम पर काबू पायें तो न
लिहाज़ करें तुम्हारी रिश्तेदारी का और न
अहद का, तुमको राजी कर देते हैं अपने
मुँह की बात से और उनके दिल नहीं
मानते, और अक्सर उनमें बद-अहद हैं।
(8) बेच डाले उन्होंने अल्लाह के हुक्म
थोड़ी कीमत पर फिर रोका उसके रस्ते
से, बुरे काम हैं जो वे लोग कर रहे हैं।
(9) नहीं लिहाज़ करते किसी मुसलमान
के हक में रिश्तेदारी का और न अहद
का, और वही हैं ज़्यादती पर। (10) सो
अगर तौबा करें और कायम रखें नमाज़
और देते रहें ज़कात तो तुम्हारे भाई हैं
शरीअत के हुक्म में, और हम खोलकर
बयान करते हैं हुक्मों को जानने वाले
लोगों के वास्ते। (11)

खुलासा-ए-तफ़्सीर

और अगर मुश्रिकों में से कोई शख्स (अमन की मियाद खत्म होने के बाद उस ज़माने में
जबकि उसे क़त्ल करना जायज़ हो, तौबा और इस्लाम के फायदे व बरकतें सुनकर इस तरफ
दिलचस्पी ले और इस्लाम की हकीकत और सच्चाई की तलाश की गर्ज से आपके पास आकर)
आप से पनाह का तालिब हो (ताकि इत्मीनान से सुन सके और समझ सके) तो (ऐसी हालत में)
आप उसको पनाह दीजिये ताकि वह अल्लाह का कलाम (यानी दीन-ए-हक़ की दलीलें) सुन ले,
फिर (उसके बाद) उसको उसकी अमन की जगह पहुँचा दीजिये (यानी पहुँचने दीजिये ताकि वह

सोच-समझकर अपनी राय कायम कर ले) यह हुक्म (इतनी पनाह देने का) इस सबब से (दिया जाता) है कि वे ऐसे लोग हैं कि पूरी ख़बर नहीं रखते (इसलिये थोड़ी मोहलत देना ज़रूरी है)।

(पहली जमाअत ने जो अहद को तोड़ा था उनके अहद तोड़ने से पहले भविष्यवाणी के तौर पर फरमाते हैं कि) इन (क्रूरों के) मुश्रिकों का अहद अल्लाह तआला के नज़दीक और उसके रसूल के नज़दीक कैसे (रियायत के काबिल) रहेगा (क्योंकि रियायत तो उस अहद की होती है जिसको दूसरा शख्स खुद न तोड़े, वरना रियायत बाकी नहीं रहती। मतलब यह कि ये लोग अहद को तोड़ देंगे उस वक़्त इस तरफ़ से भी रियायत न होगी) मगर जिन लोगों से तुमने मस्जिदे-हराम (यानी हरम) के नज़दीक अहद लिया है (इससे मुराद दूसरी जमाअत है जिनको हुक्म से अलग रखने का ऊपर भी ज़िक्र आ चुका है, यानी इनसे उम्मीद है कि ये अहद को कायम रखेंगे) सो जब तक ये लोग तुमसे सीधी तरह रहें (यानी अहद न तोड़ें) तुम भी इनसे सीधी तरह रहो (और अहद की मियाद इनसे पूरी कर दो, चुनाँचे बराअत नाज़िल होने के वक़्त से इस मुद्दत में नौ महीने बाकी रहे, और उनके अहद न तोड़ने के सबब उनकी यह मुद्दत पूरी की गयी) बेशक अल्लाह तआला (अहद के खिलाफ़ करने से) एहतियात रखने वालों को पसन्द करते हैं (पस तुम भी एहतियात रखने से अल्लाह के पसन्दीदा हो जाओगे। हुक्म से बाहर रहने वाली यह सूरत ब्यान करके फिर पहली जमाअत के मज़मून की तरफ़ लौटते हैं कि) कैसे (उनका अहद रियायत के काबिल रहेगा) हालाँकि (उनकी हालत यह है कि) अगर वे तुम पर कहीं ग़लब पा जायें तो तुम्हारे बारे में न रिश्तेदारी का ख़्याल करें और न क़ौल व क़रार का (क्योंकि उनकी यह सुलह मजबूरी और जिहाद के ख़ौफ़ से है दिल से नहीं, पस) ये लोग तुमको (सिर्फ़) अपनी जबानी बातों से राज़ी कर रहे हैं और इनके दिल (उन बातों को) नहीं मानते (पस जब दिल से उस अहद को पूरा करने का इरादा नहीं है तो क्या पूरा होगा), और उनमें ज़्यादा आदमी शरीर हैं (कि अहद पूरा करना नहीं चाहते। और अगर एक-आध पूरा करना भी चाहता हो तो ज़्यादा के सामने एक दो की कब चलती है, और वजह उनके शरीर होने की यह है कि) उन्होंने अल्लाह के अहक़ाम के बदले (दुनिया की) बाकी न रहने वाली मता “यानी सामान और फ़ायदे” को इस्तिथार कर रखा है (जैसा कि काफ़िरों की हालत होती है कि दीन को छोड़कर दुनिया को उस पर तरज़ीह देते हैं। जब दुनिया ज़्यादा महबूब होगी तो जब अहद तोड़ने में दुनियावी गर्ज हासिल होती नज़र आयेगी उसमें कुछ अन्देशा न होगा, बख़िलाफ़ उस शख्स के जो दीन को तरज़ीह देता है वह अल्लाह के अहक़ाम और अहद के पूरा करने वग़ैरह का पाबन्द होगा) सो (इस दीन पर दुनिया को तरज़ीह की वजह से) ये लोग अल्लाह तआला के (सीधे) रास्ते से (जिसमें अहद का पूरा करना भी दाख़िल है) हटे हुए हैं (और) यकीनन इनका यह अमल बहुत ही बुरा है।

(और हमने जो ऊपर कहा है ‘तो न लिहाज़ करें तुम्हारी रिश्तेदारी का.....’ सो इसमें तुम्हारी कुछ विशेषता नहीं इनकी तो यह हालत है कि) ये लोग किसी मुसलमान के बारे में (भी) न रिश्तेदारी का पास करें और न क़ौल व क़रार का, और ये लोग (ख़ास तौर पर इस बारे में)

बहुत ही ज्यादाती कर रहे हैं। सो (जब इनके अहद पर भरोसा व इत्मीनान नहीं बल्कि अहद तोड़ने का शुब्हा व गुमान भी है जैसा कि इसकी भी संभावना है कि अहद को पूरा करें, इसलिये हम इनके बारे में विस्तार से हुक्म सुनाते हैं कि) अगर ये लोग (कुफ़ से) तौबा कर लें (यानी मुसलमान हो जायें) और (उस इस्लाम को ज़ाहिर भी कर दें मसलन) नमाज़ पढ़ने लगे और ज़कात देने लगे तो (फिर उनके अहद तोड़ने वगैरह पर बिल्कुल नज़र न होगी चाहे उन्होंने कुछ ही किया हो, इस्लाम लाने से) वे तुम्हारे दीनी भाई हो जाएँगे (और पिछला किया हुआ सब माफ़ हो जायेगा) और हम समझदार लोगों (को बतलाने) के लिये अहकाम को खूब तफ़सील से बयान करते हैं (चुनाँचे इस जगह पर भी ऐसा ही किया गया)।

मअारिफ़ व मसाईल

सूर: तौबा की शुरू की पाँच आयतों में इसका ज़िक्र था कि मक्का फ़तह होने के बाद मक्का और उसके आस-पास के तमाम मुशिरक व काफ़िर लोगों को जान व माल की आम अमान दे दी गयी मगर उनकी पिछली ग़दारी और अहद तोड़ने के तजुर्बे की बिना पर आईन्दा के लिये उनसे कोई समझौता न किया जाना तय हो गया। इस करारदाद के बावजूद जिन लोगों से कोई समझौता इससे पहले हो चुका था और उन्होंने उस अहद के खिलाफ़ नहीं किया था तो उनके समझौते को मियाद ख़त्म होने तक पूरा करने के अहकाम इन आयतों में नज़िल हुए। और जिनसे कोई समझौता नहीं था या किसी निर्धारित मियाद का समझौता नहीं था उनके साथ भी यह रियायत की गयी कि उनको फ़ौरी तौर पर मक्का छोड़ देने के हुक्म के बजाय चार महीने की लम्बी मोहलत दे दी गयी कि इस अरसे में वे मक्का छोड़कर जहाँ मुनासिब समझें सहूलत व इत्मीनान के साथ चले जायें। या अगर इस्लाम की हक्कानियत (हक़ और सच्चा होना) उन पर रोशन हो चुकी है तो मुसलमान हो जायें।

इन अहकाम का नतीजा यह था कि अगले साल तक मक्का मुकर्रमा सहूलत के साथ उन सब ग़दार मुशिरकों से ख़ाली हो जाये और चूँकि यह ख़ाली करना भी किसी बदले की भावना से नहीं बल्कि लगातार तजुर्बों के बाद अपनी हिफ़ाज़त को देखते हुए अमल में लाया गया था, इसलिये उनकी भलाई व बेहतरी का दरवाज़ा अब भी खुला रखा गया, जिसका ज़िक्र छठी आयत में है। जिसका हासिल यह है कि अगर मुशिरकों में से कोई शख्स आप से पनाह माँगे तो आपको पनाह देनी चाहिये ताकि वह आपके करीब आकर अल्लाह का कलाम सुन सके और इस्लाम के हक़ होने को समझ सके। और सिर्फ़ यही नहीं कि वक्ती तौर पर उसको पनाह दे दी जाये बल्कि जब वह अपने इस काम से फ़ारिग़ हो जाये तो अपनी हिफ़ाज़त और निगरानी में उसको उस स्थान तक पहुँचाना भी मुसलमानों के ज़िम्मे है जहाँ वह अपने आपको सुरक्षित व मुल्मईन समझता है। आयत के आख़िर में फ़रमाया कि यह हुक्म इसलिये दिया गया है कि ये लोग पूरी ख़बर नहीं रखते, करीब आकर बाख़बर हो सकते हैं।

इस आयत से भी चन्द मसाईल और फ़ायदे हासिल हुए जिनको इमाम अबू बक्र जस्सास ने

तफसील से बयान किया है।

इस्लाम के हक़ और सच्चा होने को दलीलों के साथ समझाना उलेमा-ए-दीन का फर्ज़ है

अव्वल यह कि इस आयत से साबित हुआ कि अगर कोई काफ़िर मुसलमानों से इसका मुतालबा करे कि मुझे इस्लाम की हक़ानियत (हक़ और सच्चा होना) दलील से समझाओ तो मुसलमानों पर लाज़िम है कि उसका मुतालबा पूरा करें।

दूसरे यह कि जो शख्स इस्लाम की तहकीक़ और मालूमात हासिल करने के लिये हमारे पास आये तो हम पर बाज़िब है कि उसको इजाज़त दें और उसकी हिफ़ाज़त करें। उसको किसी किस्म की तकलीफ़ या नुक़सान पहुँचाना जायज़ नहीं। तफ़सीरे कुर्तुबी में है कि यह हुक्म उस सूरत में है जबकि उसके आने का मक़सद अल्लाह का कलाम सुनना और इस्लाम की तहकीक़ करना हो, और अगर कोई दूसरी ग़र्ज़ तिजारत वगैरह हो तो वह मुसलमानों की मस्लेहतों और मुसलमानों के हाकिम की मर्ज़ी और राय पर मौकूफ़ है, मुनासिब समझे तो इजाज़त दे वरना इख़्तियार है।

बाहरी ग़ैर-मुस्लिमों को ज़रूरत से ज़्यादा ठहरने की इजाज़त न दी जाये

तीसरे यह कि ग़ैर-मुस्लिम हरबी जिसके साथ हमारा कोई समझौता न हो उसको ज़रूरत से ज़्यादा ठहरने की इजाज़त न दी जाये। क्योंकि आयते मज़क़ूरा में पनाह देने और ठहराने की यह हद मुक़रर कर दी गयी है:

حَتَّى يَسْمَعَ كَلَامَ اللَّهِ.

यानी उसको अपने यहाँ इतना ठहराओ कि वह अल्लाह का कलाम सुन ले।

चौथे यह कि मुसलमान हाकिम व अमीर के फ़राईज़ में से है कि जब कोई हरबी ग़ैर-मुस्लिम (यानी वह ग़ैर मुस्लिम जिनके साथ मुसलमानों की लड़ाई ठनी हुई हो, अमन का कोई समझौता न हो) किसी ज़रूरत की बिना पर हमसे इजाज़त (वीज़ा) लेकर हमारे मुल्क में दाख़िल हो तो उसके हालात पर नज़र रखे और जब वह अपना काम पूरा कर चुके तो उसको हिफ़ाज़त के साथ वापस कर दे।

सातवीं, आठवीं, नवीं और दसवीं चार आयतों में बराअत के उस ऐलान की हिक्मत का बयान है जो सूर: तौबा की शुरू की आयतों में ज़िक्र किया गया है। इस आयत में अहद तोड़ने और समझौते का उल्लंघन करने वाले मुशिरकों की तबई कमीनगी और मुसलमानों से नफ़रत व

दुश्मनी की शिद्दत का जिक्र करके यह बतलाया गया है कि उनसे अहद व समझौते के पूरा करने की उम्मीद रखना ही ग़लत है। इरशाद फ़रमाया कि सिवाय चन्द लोगों के जिनसे मस्जिदे हराम के पास तुम्हारा समझौता हुआ था उन मुश्रिकों का कोई अहद अल्लाह और उसके रसूल के नज़दीक रियायत के काबिल कैसे हो सकता है, जबकि उनका यह हाल है कि अगर उनको किसी वक़्त भी ज़रा मौका मिल जाये तो वे तुम्हारे बारे में न किसी रिश्तेदारी की रियायत करें न अहद व पैमान की। और वजह इसकी यह है कि ये लोग मुआहदा और समझौता करने के वक़्त भी दिल में उसके पूरा करने का कोई इरादा नहीं रखते बल्कि सिर्फ़ अलफ़ाज़ से तुम्हें खुश करना चाहते हैं और उनमें से अक्सर लोग फ़ासिक़ यानी अहद को तोड़ने वाले ग़द्दार हैं।

काफ़िरों के मुकाबले में भी सच्चाई पर कायम रहें

क़ुरआने करीम के इस बयान ने मुसलमानों को यह हिदायत दी कि अपने दुश्मन मुख़ालिफ़ों के मामले में भी जब कोई गुफ़्तगू आये तो सच्चाई और इन्साफ़ को हाथ से न जाने दें, हद से आगे न बढ़ें जैसा कि इन आयतों में मक्का के मुश्रिकों के बारे में इसकी पूरी रियायत की गयी है कि अगरचे चन्द गिनेचुने लोगों के सिवा सभी ने धोखेबाज़ी, ग़द्दारी और अहद का उल्लंघन किया था और ऐसे हालात में आम तौर पर कहने वाले सभी को बुरा कहा करते हैं, मगर क़ुरआने करीम ने:

إِلَّا الَّذِينَ عَاهَدْتُمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ

फ़रमाकर उन लोगों को इससे अलग कर दिया जिन्होंने अहद का उल्लंघन नहीं किया, और यह हुक्म दिया कि जब तक वे सही रास्ते पर और अहद के पूरा करने पर कायम रहें तुम भी अहद पर कायम रहो, दूसरे लोगों की ख़ियानत (बददियानती) से मुतास्सिर होकर उनके अहद को न तोड़ो।

इसके बाद अहद तोड़ने वालों का जहाँ यह हाल बयान फ़रमाया कि उन लोगों के दिलों में शुरू ही से ख़ियानत (बेईमानी) थी, अहद व समझौते को पूरा करने का इरादा ही न था, यहाँ भी 'अक्सरुहुम फ़ासिक़ून' फ़रमाकर इशारा कर दिया कि उनमें भी सब का यह हाल नहीं, कुछ शरीफ़ लोग ऐसे भी हैं जो अहद पर कायम रहना चाहते थे मगर दूसरों के सामने उनकी बात न चली।

यह वही मज़मून है जिसकी हिदायत क़ुरआने करीम ने दूसरी जगह साफ़ लफ़्ज़ों में इस तरह दी है:

لَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلَىٰ اَلَّا تَعْدِلُوْا

यानी किसी क़ौम की दुश्मनी तुम्हें इस पर आमादा न कर दे कि तुम इन्साफ़ को छोड़ बैठो।

इसके बाद नवीं आयत में उन ग़द्दार मुश्रिकों की ग़द्दारी की वजह और उनके रोग का सबब

बयान फरमाकर उनको भी एक हिदायत नामा दे दिया कि अगर ये गौर करें तो अपनी इस्लाह (सुधार) कर लें और आम मुसलमानों को भी चौकन्ना कर दिया कि जिस सबब से ये लोग गद्दारी करने और धोखा देने के जुर्म में मुब्तला हुए उस सबब से पूरे तौर पर परहेज को अपना शिआर बना लें। और वह सबब है दुनिया की मुहब्बत, कि दुनिया के माल व असबाब की मुहब्बत ने उनको अन्धा कर दिया है, थोड़े से पैसों के बदले में अल्लाह की आयतों और अपने ईमान को बेच डालते हैं। और उनका यह किरदार बहुत ही बुरा है।

दसवीं आयत में उन्हीं लोगों की हद से ज्यादा टेढ़ी चाल और गुमराही का यह बयान है:

لَا يَرْقُبُونَ فِي مُؤْمِنٍ إِلَّا وِلَا ذِمَّةً

यानी सिर्फ यही नहीं कि उन लोगों ने अहद करने वाले मुसलमानों से गद्दारी की और उनके ताल्लुक और अहद व पैमान को पीछे डाल दिया, बल्कि उनका हाल यह है कि किसी मुसलमान के बारे में न ये रिश्ते व ताल्लुक की रियायत करने वाले हैं न किसी अहद व पैमान की।

मुश्रिकों के उक्त हालात का तबई तकाज़ा यह हो सकता था कि मुसलमान उनसे हमेशा के लिये बेज़ार हो जायें और किसी हालत में भी उनके साथ भाईचारे के ताल्लुकात कायम करने के लिये तैयार न हों। इसीलिये कुरआनी अदल व इन्साफ़ ने ग्यारहवीं आयत में यह हिदायत दे दी।

فَإِنْ تَابُوا وَأَقَامُوا الصَّلَاةَ وَآتَوُا الزَّكَاةَ فَخِوْا أَنْكُمْ فِي الدِّينِ

यानी अगर ये लोग तौबा कर लें और नमाज़ कायम करें और ज़कात अदा करें तो अब ये भी तुम्हारे दीनी भाई हैं।

इसमें बतला दिया कि कोई कैसा ही दुश्मन हो और कितनी ही तकलीफ़ उसने पहुँचाई हो जब वह मुसलमान हो गया तो जिस तरह अल्लाह तआला उसके सब पिछले गुनाहों को माफ़ फरमा देते हैं, मुसलमानों पर भी लाज़िम है कि पिछले सब मामलात को दिल से भुला दें और आज से उसको अपना दीनी भाई समझें और बिरादराना ताल्लुक के हुक्क अदा करें।

इस्लामी बिरादरी में दाख़िल होने की तीन शर्तें

इस आयत ने स्पष्ट कर दिया कि इस्लामी बिरादरी में दाख़िल होने के लिये तीन शर्तें हैं- अव्वल कुफ़्र व शिर्क से तौबा, दूसरे नमाज़, तीसरे ज़कात। क्योंकि ईमान व तौबा तो एक छुपी हुई चीज़ है जिसकी हकीकत का आम मुसलमानों को इल्म नहीं हो सकता, इसलिये उसकी दो जाहिरी निशानियों को बयान कर दिया गया, यानी नमाज़ और ज़कात।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फरमाया कि इस आयत ने क़िब्ले की तरफ़ रुख़ करने वाले मुसलमानों के खून को हाराम कर दिया, यानी जो लोग नमाज़, ज़कात के पाबन्द हों और इस्लाम के खिलाफ़ कोई कौल व फ़ेल उनका साबित न हो वे तमाम अहकाम में मुसलमान समझे जायेंगे, अगरचे उनके दिल में सही ईमान न हो, या निफ़ाक़ (दोगलापन) हो।

हज़रत सिद्दीक़े अक़बर रज़ियल्लाहु अन्हु ने हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बाद

जकात से इनकार करने वालों पर जिहाद करने के लिये इसी आयत से दलील देकर सहाबा-ए-किराम रजियल्लाहु अन्हुम को मुल्मईन किया था। (तफसीर इब्ने कसीर)

आयत के आखिर में समझौता करने वालों और तौबा करने वालों से संबन्धित जिक्र हुए अहकाम की पाबन्दी की ताकीद करने के लिये इरशाद फरमाया:

وَنَقُصِّلُ الْآيَاتِ لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ

यानी हम समझदार लोगों के लिये अहकाम को खूब तफसील से बयान करते हैं।

وَأِنْ تَكُونُوا آيْمَانَهُمْ مِنْ بَعْدِ عَهْدِهِمْ وَطَعْنُوا فِي دِينِكُمْ فَقَاتِلُوا إِنَّهُ
الْكُفْرُ إِنَّهُمْ لَا آيْمَانَ لَهُمْ لَعَلَّهُمْ يَنْتَهُونَ ۝ أَلَا تَقَاتِلُونَ قَوْمًا نَكَثُوا آيْمَانَهُمْ وَهُمْ
يُخْرِجُونَ الرُّسُولَ وَهُمْ بَدَءُوكُمْ أَوَّلَ مَرَّةٍ فَتَخْشَوْنَهُمْ فَاللَّهُ أَحَقُّ أَنْ تَخْشَوْهُ إِنْ كُنْتُمْ
مُؤْمِنِينَ ۝ قَاتِلُوهُمْ يُعَذِّبُهُمُ اللَّهُ بِأَيْدِيكُمْ وَيُخْزِهِمْ وَيَنْصَرِّكُمْ عَلَيْهِمْ وَيُشْفِ صُدُورَ
قَوْمٍ مُؤْمِنِينَ ۝ وَيَذْهَبُ عِظٌ قُلُوبِهِمْ وَيَتُوبُ اللَّهُ عَلَى مَنْ يَشَاءُ وَاللَّهُ عَلِيمٌ
حَكِيمٌ ۝ أَمْ حَسِبْتُمْ أَنْ تُتْرَكُوا وَلَمَّا يَعْلَمِ اللَّهُ الَّذِينَ جَاهَدُوا مِنْكُمْ وَلَمْ يَتَّخِذُوا مِنْ
دُونِ اللَّهِ وَلَا رَسُولِهِ وَلَا الْمُؤْمِنِينَ وَلِيجَةً وَاللَّهُ خَبِيرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ ۝

व इन्न-कसू ऐमानहुम् मिम्-बअदि
अस्दिहिम् व त-अनू फी दीनिकुम्
फकातिलू अ-इम्मतल्-कुफिर इन्नहुम्
ला ऐमा-न लहुम् लअल्लहुम् यन्तहून
(12) अला तुकातिलू-न कौमन्
न-कसू ऐमानहुम् व हम्मू
बि-इस्त्राजिरसूलि व हुम् ब-दऊकुम्
अव्व-ल मरतिन्, अतदशौनहुम्
फल्लाहु अहक्कु अन् तदशौहु इन्
कुन्तुम् मुअमिनीन (13) कातिलूहुम्
युअज़िज़बहुमुल्लाहु बिऐदीकुम् व
युख़िज़हिम् व यन्सुरकुम् अलैहिम् व

और अगर वे तोड़ें अपनी कसमें अहद
करने के बाद और ऐब लगायें तुम्हारे
दीन में तो लड़ो कुफ़ के सरदारों से
बेशक उनकी कसमें कुछ नहीं, ताकि वे
बाज़ आयें। (12) क्या नहीं लड़ते ऐसे
लोगों से जो तोड़ें अपनी कसमें और
फिक्क में रहें कि रसूल को निकाल दें और
उन्होंने पहले छेड़ की तुम से, क्या उनसे
डरते हो? सो अल्लाह का डर चाहिए
तुमको ज़्यादा अगर तुम ईमान रखते हो।
(13) लड़ो उनसे ताकि अज़ाब दे अल्लाह
उनको तुम्हारे हाथों और रुस्वा करे और
तुमको उन पर ग़ालिब करे और ठंडे करे

यशिफ सुदूर-र कौमिम्-मुअ्मिनीन
 (14) व युज़िहब् गै-ज़ कुलूबिहिम्, व
 यतूबुल्लाहु अला मय्यशा-उ, वल्लाहु
 अलीमुन् हकीम (15) अम् हसिबुम्
 अन् तुतरकू व लम्मा
 यअल्मिल्लाहुल्लजी-न जाहदू
 मिन्कुम् व लम् यत्तछिज़ू मिन्
 दूनिल्लाहि व ला रसूलिही व
 लम्मुअ्मिनी-न वली-जतन्, वल्लाहु
 ख़बीरुम्-बिमा तअ्मलून (16) ❀

दिल मुसलमान लोगों के। (14) और
 निकाले उनके दिल की जलन, और अल्लाह
 तौबा नसीब करेगा जिसको चाहेगा और
 अल्लाह सब कुछ जानने वाला हिक्मत
 वाला है। (15) क्या तुम यह मुमान करते
 हो कि छूट जाओगे और हालाँकि अभी
 मालूम नहीं किया अल्लाह ने तुम में से
 उन लोगों को जिन्होंने जिहाद किया है।
 और नहीं पकड़ा उन्होंने सिवाय अल्लाह
 के और उसके रसूल के और मुसलमानों
 के किसी को भेदी, और अल्लाह को
 ख़बर है जो तुम कर रहे हो। (16) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

और अगर वे लोग अहद करने के बाद अपनी कसमों (अहदों) को तोड़ डालें (जैसा कि उनकी हालत से ज़ाहिर है) और (अहद तोड़कर ईमान भी न लायें बल्कि अपने कुफ़्र पर कायम रहें जिसका एक असर यह है कि) तुम्हारे दीन (इस्लाम) पर ताना मारें तो तुम लोग इस इरादे से कि ये (अपने कुफ़्र से) बाज़ आ जाएँ उन कुफ़्र के पेशवाओं से (ख़ूब) लड़ो, क्योंकि (इस सूरत में) उनकी कसमें (बाकी) नहीं रहीं। (यहाँ तक अहद को तोड़ने से पहले ही भविष्यवाणी हो चुकी, आगे अहद व समझौते को तोड़ने के बाद उनसे जंग व किताल की तरफ़ तवज्जोह दिलाना है कि) तुम ऐसे लोगों से क्यों नहीं लड़ते जिन्होंने अपनी कसमों को तोड़ डाला (और बनू बक्र की खुज़ाआ के मुक़ाबले में मदद की) और रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को वतन से निकालने की तजवीज़ की, और उन्होंने तुमसे खुद पहले छेड़ निकाली (कि तुम्हारी तरफ़ से अहद को पूरा करने में कोई कमी नहीं हुई, उन्होंने बैठे-बिठाये खुद एक शोशा छोड़ा, पस ऐसे लोगों से क्यों न लड़ो) क्या उनसे (लड़ने में) तुम डरते हो? (कि उनके पास जमाअत ज़्यादा है) सो (अगर यह बात है तो हरगिज़ उनसे मत डरो, क्योंकि) अल्लाह तआला इस बात के ज़्यादा मुस्तहिक हैं कि तुम उनसे डरो, अगर तुम ईमान रखते हो (और उनसे डरने का तकाज़ा यह है कि उनके हुक्म के खिलाफ़ मत करो, और वह हुक्म देते हैं जंग व जिहाद का, पस) उनसे लड़ो, अल्लाह तआला (का वायदा है कि) उनको तुम्हारे हाथों सज़ा देगा और उनको ज़लील (व रुस्वा) करेगा, और तुमको उन पर ग़ालिब करेगा, और (उनको इस अज़ाब व सज़ा देने और तुम्हारी नफ़रत से) बहुत-से (ऐसे) मुसलमानों के दिलों को शिफ़ा (सुकून) देगा और उनके दिलों के आक्रोश (गुस्से व ग़ज़ब) को दूर करेगा (जो खुद मुक़ाबले की हिम्मत नहीं रखते और इनकी हरकतों को देखकर दिल ही दिल में

घुटते हैं) और (उन्हीं काफिरों में से) जिस पर (तवज्जोह व फज़ल करना) मन्ज़ूर होगा अल्लाह तआला तवज्जोह (भी) फरमायेगा (यानी मुसलमान होने की तौफीक देगा, चुनाँचे मक्का फतह होने के वक़्त बाज़े लड़े और ज़लील व मक्तूल हुए और बाज़े मुसलमान हो गये) और अल्लाह तआला बड़े इल्म वाले, बड़ी हिक्मत वाले हैं (कि इल्म से हर एक का अन्जाम कि इस्लाम है या कुफ़्र जानते हैं, और इसी लिये अपनी हिक्मत से मुनासिब अहकाम मुकर्रर फरमाते हैं)।

(और तुम जो लड़ने से जी चुराते हो चाहे बाज़े ही सही, तो) क्या तुम यह ख्याल करते हो कि तुम यूँ ही (इसी हाल पर) छोड़ दिये जाओगे, हालाँकि अभी अल्लाह तआला ने (ज़ाहिरी तौर पर) उन लोगों को तो देखा ही नहीं जिन्होंने तुम में से (ऐसे मौक़े पर) जिहाद किया हो, और अल्लाह व रसूल और मोमिनों के सिवा किसी को खुसूसी दोस्त न बनाया हो, (जिसके ज़ाहिर होने का अच्छा ज़रिया ऐसे मौक़े का जिहाद है, जहाँ मुकाबला अपनों और रिश्तेदारों से हो कि पूरा इम्तिहान हो जाता है कि कौन अल्लाह को चाहता है और कौन बिरादरी को) और अल्लाह तआला को सब ख़बर है तुम्हारे सब कामों की (पस अगर जिहाद में चुस्ती दिखाओगे या सुस्ती करोगे तो उसी के मुवाफ़िक़ तुमको जज़ा देगा)।

मआरिफ़ व मसाईल

मक्का के कुरैश जिनसे सन् 6 हिजरी में हुदैबिया के स्थान पर एक समझौता जंग-बन्दी का हुआ था, उनके बारे में सूर: तौबा की शुरू की आयतों में पेशीनगोई के तौर पर यह इत्तिला दे दी गयी थी कि ये लोग अपने समझौते पर कायम न रहेंगे। जिसका जिक्र सूर: तौबा की सातवीं आयत में:

كَيْفَ يَكُونُ لِلْمُشْرِكِينَ عَهْدٌ

के अलफ़ाज़ में गुज़र चुका है। और फिर आठवीं, नवीं और दसवीं आयतों में उनके अहद तोड़ने के कारणों का बयान हुआ। ग्यारहवीं आयत में इसका बयान आया कि अहद तोड़ने के इस बड़े जुर्म के बाद भी अगर ये लोग मुसलमान हो जायें और अपने इस्लाम का इज़हार नमाज़ व रोज़े के ज़रिये करने लगें तो फिर मुसलमानों पर लाज़िम है कि इनके पिछले जुर्मों का कोई असर अपने मामलात में बाक़ी न रखें, बल्कि इनको अपना दीनी भाई समझें और बिरादराना मामलात करें। उक्त बारहवीं आयत में इसका बयान है कि भविष्यवाणी के मुताबिक़ जब ये लोग अहद व समझौते को तोड़ ही डालें तो फिर इनके साथ मुसलमानों को क्या करना चाहिये।

इसमें इरशाद फरमाया:

وَإِنْ نَكَثُوا أَيْمَانَهُمْ مِنْ بَعْدِ عَهْدِهِمْ وَطَعَنُوا فِي دِينِكُمْ فَقَاتِلُوا أَتِمَّةَ الْكُفْرِ

“यानी अगर ये लोग अपने समझौते और क़समों को तोड़ डालें और मुसलमान भी न हों बल्कि बदस्तूर तुम्हारे दीन इस्लाम पर ताने व तशने करते रहें तो इन कुफ़्र के पेशवाओं के साथ जंग करो।”

यहाँ यह बात काबिले गौर है कि इस जगह मक़ाम का तकाज़ा बज़ाहिर यह था कि 'फ़क़ातिलूहुम' फ़रमाया जाता, यानी उन लोगों से जंग व क़िताल करो। क़ुरआने करीम ने इस जगह मुख़्तसर इशारा इस्तेमाल करने के बजाय स्पष्ट तौर पर:

فَقَاتِلُوا أَئِمَّةَ الْكُفْرِ

फ़रमाया। अईम्मा इमाम की जमा (बहुवचन) है, मायने यह है कि ये लोग अपने अहद तोड़ने की वजह से कुफ़्र के इमाम और लीडर होकर इसके मुस्तहिक़ हो गये कि इनसे जंग की जाये। इसमें जंग व क़िताल के हुक्म की वजह और सबब भी बयान हो गया, और कुछ हज़राते मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि यहाँ कुफ़्र के पेशवाओं से मुराद मक्का वाले क़ुरैश के वे सरदार हैं जो लोगों को मुसलमानों के खिलाफ़ उभारने और जंगी तैयारियों में लगे रहते थे, उनसे जंग करने को खास तौर पर इसलिये ज़िक्र फ़रमाया कि मक्का वालों की असल ताक़त का स्रोत यही लोग थे, इसके अलावा मुसलमानों की करीबी रिश्तेदारी भी इन्हीं लोगों से थी, जिसकी वजह से इसका ख़तरा हो सकता था कि इनके मामले में कोई रियायत बरती जाये। (तफ़सीरे मज़हरी)

इस्लामी हुक्मत में ग़ैर-मुस्लिमों को इस्लाम को

बुरा-भला कहने की इजाज़त नहीं

दारुल-इस्लाम में ग़ैर-मुस्लिम ज़िम्मियों को इस्लाम पर इल्मी आलोचना की तो इजाज़त है मगर ताने और बुराई करने की इजाज़त नहीं।

“त-अनू फ़ी दीनिकुम” के लफ़्ज़ से कुछ हज़रात ने इस पर दलील पकड़ी है कि मुसलमानों के दीन पर ताने व तशने करना अहद तोड़ने में दाख़िल है। जो शख्स इस्लाम और इस्लामी शरीअत पर ताने मारे वह मुसलमानों का मुआहिद (समझौते वाला पक्ष) नहीं रह सकता, मगर तमाम फ़ुकह इस पर सहमत हैं कि इससे मुराद वो ताने और बुराई करना है जो इस्लाम और मुसलमानों का अपमान और ज़लील करने के तौर पर खुलेआम की जाये। अहक़ाम व मसाल्ल की तहक़ीक़ में कोई इल्मी आलोचना करना इससे अलग है, और लुग़त में इसको ताने व तशने मारना कहते भी नहीं।

इसलिये दारुल-इस्लाम (इस्लामी हुक्मत) के ग़ैर-मुस्लिम बाशिन्दों को इल्मी आलोचना की तो इजाज़त दी जा सकती है, मगर इस्लाम पर ताने मारने और तौहीन व अपमान करने की इजाज़त नहीं दी जा सकती।

इसी आयत में फ़रमाया:

إِنَّهُمْ لَا آيْمَانَ لَهُمْ

‘यानी ये लोग ऐसे हैं कि इनकी क़सम कोई काबिले एतिबार क़सम नहीं, क्योंकि ये लोग क़सम तोड़ने और अहद का उल्लंघन करने के आदी हैं। और इस जुमले के यह मायने भी हो

सकते हैं कि जब उन्होंने अपनी कसम तोड़ दी तो अब मुसलमानों पर भी उनकी कसम और अहद की कोई ज़िम्मेदारी नहीं रही।

आयत के आखिर में है:

لَعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ

ताकि वे बाज़ आ जायें। इस आखिरी जुमले में बतला दिया कि मुसलमानों की जंग व जिहाद का मकसद आम दुनिया के लोगों की तरह दुश्मन को सताना और बदले के जोश को ठंडा करना या आम बादशाहों की तरह दूसरों का मुल्क छीनना न होना चाहिये, बल्कि उनकी जंग का मकसद दुश्मनों की खैरख्वाही और हमदर्दी और यह जज़्बा होना चाहिये कि वे लोग अपने ग़लत तरीक़े और गुमराही से बाज़ आ जायें।

इसके बाद तेरहवीं आयत में मुसलमानों को जिहाद व क़िताल की तरगीब (रुचि दिलाने) के लिये फ़रमाया कि तुम ऐसी कौम के साथ जंग के लिये क्यों तैयार न होगे जिसने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को निकालने की योजना बनाई। इससे मुराद मदीना के यहूदी हैं, जिन्होंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मदीना से निकालने का मन्सूबा बनाया था, और कहा था:

لَيُخْرِجَنَّ الْأَعَزُّ مِنْهَا الْأَذَلَّ

यानी “ऐसा ज़रूर होगा कि इज़्ज़त व ताक़त वाला कमज़ोर व ज़लील को मदीना से निकाल देगा।” उनके नज़दीक इज़्ज़त वाले वे लोग थे और मुसलमानों को वे कमज़ोर व ज़लील समझते थे, जिसके जवाब में हक़ तआला ने उनके ही कौल को इस तरह पूरा कर दिखाया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम ने उनको मदीना से निकाल कर यह साबित कर दिया कि इज़्ज़त वाले मुसलमान ही हैं और कमज़ोर व ज़लील यहूदी थे। दूसरी वजह उनसे जंग करने की यह इरशाद फ़रमाई:

وَهُمْ بَدَأُوا كُمْ أَوَّلَ مَرَّةٍ

यानी जंग व क़िताल की पहल उन्हीं लोगों की तरफ़ से हुई, अब तो सिर्फ़ रक्षात्मक कार्रवाई है, जो हर सही फ़ितरत का तकाज़ा है।

फिर मुसलमानों के दिलों से उन लोगों का रौब दूर करने के लिये फ़रमाया:

اتَّخِشُوا لَهُمْ فَأَلَلَهُ أَحَقُّ أَنْ تَخْشَوْهُ

“यानी क्या तुम लोग उनसे खौफ़ खाते हो, हालाँकि खौफ़ और डरना सिर्फ़ अल्लाह तआला से चाहिये।” जिसके अज़ाब को कोई ताक़त टला नहीं सकती, आखिर में ‘इन कुन्तुम मुअ्मिनीन’ फ़रमाकर बतला दिया कि ग़ैरुल्लाह से ऐसा खौफ़ खाना जो शरई अहक़ाम की अदायेगी में बाधा हो सके किसी मोमिन मुसलमान का काम नहीं।

चौदहवीं और पन्द्रहवीं आयत में भी मुसलमानों को जंग व जिहाद की तरगीब (शौक़ व रुचि) एक दूसरे उनवान से दी गयी है, जिसमें चन्द चीज़ें बतलाई गयीं।

अब्वल यह कि अगर तुम उनसे जंग के लिये तैयार हो गये तो अल्लाह तआला की मदद तुम्हारे साथ होगी, और यह कौम अपने बुरे आमाँल की वजह से अल्लाह के अज़ाब की मुस्तहिक तो हो ही चुकी है, मगर इन पर अल्लाह का अज़ाब पिछली कौमों की तरह आसमान या ज़मीन से नहीं आयेगा, बल्कि:

يَعْلَبُهُمُ اللَّهُ بِأَيْدِيكُمْ

“यानी इनको अल्लाह तआला तुम्हारे हाथों से अज़ाब देंगे।”

दूसरे यह कि इस जंग के नतीजे में अल्लाह तआला मुसलमानों के दिलों को उस रंज व ग़म से शिफा अता फ़रमायेंगे जो काफ़िरों की तरफ़ से उनको लगातार पहुँचता रहा है।

तीसरे यह कि उनकी ग़द्दारी और अहद तोड़ने के सबब जो नाराज़गी व गुस्सा मुसलमानों के दिलों में पैदा हुआ था, उन्हीं के हाथों इनको अज़ाब देकर उनके गुस्से व आक्रोश को दूर फ़रमा देंगे।

पिछली आयत में ‘लअल्लहुम यन्तहून’ फ़रमाकर मुसलमानों को इसकी हिदायत की गयी थी कि वे किसी कौम से अपना गुस्सा उतारने के लिये न लड़ें, बल्कि उनकी बेहतरी व सुधार और हिदायत को मक़सद बनायें। इस आयत में यह बतला दिया कि जब वे अपनी नीयत को अल्लाह के लिये साफ़ कर लें और महज़ अल्लाह के लिये लड़ें तो फिर अल्लाह तआला अपने फज़ल से ऐसी सूरतें भी पैदा फ़रमा देंगे कि उनके ग़म व गुस्से का इन्तिक़ाम भी खुद-ब-खुद हो जाये।

चौथी चीज़ यह इरशाद फ़रमाई:

وَيُؤْتِ اللَّهُ عَلَىٰ مَنْ يَشَاءُ

“यानी उनमें से जिसके मुताल्लिक अल्लाह तआला को मन्ज़ूर होगा उसकी तौबा कुबूल फ़रमा लेंगे।”

जिससे मालूम हुआ कि इस जिहाद का एक फ़ायदा यह भी होगा कि दुश्मन की जमाअत में से बहुत से लोगों को इस्लाम की तौफीक हो जायेगी, वे मुसलमान हो जायेंगे। चुनाँचे मक्का फ़तह होने के वक़्त बहुत से सरकश ज़लील व रुस्वा हुए और बहुत से लोग इस्लाम ले आये।

इन आयतों में जिन हालात व वाकिआत की ख़बर भविष्यवाणी के तौर पर दी गयी है इतिहास गवाह है कि वो सब एक-एक करके इसी तरह सामने आये और ज़ाहिर हुए जिस तरह कुरआने हकीम ने ख़बर दी थी, इसलिये ये आयतें बहुत से मोजिज़ों पर आधारित हैं।

مَا كَانَ لِلْمُشْرِكِينَ أَنْ يَعْمُرُوا مَسْجِدَ اللَّهِ شَاهِدِينَ عَلَىٰ أَنْفُسِهِمْ

بِالْكَفْرِ ۚ أُولَٰئِكَ حَبِطَتْ أَعْمَالُهُمْ ۖ وَفِي النَّارِ هُمْ خَالِدُونَ ۝ إِنَّمَا يَعْمُرُ مَسْجِدَ اللَّهِ مَنْ آمَنَ

بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَأَقَامَ الصَّلَاةَ وَآتَى الزَّكَاةَ وَلَمْ يَخْشَ إِلَّا اللَّهَ ۚ فَعَسَىٰ أُولَٰئِكَ أَنْ يَكُونُوا

مِنَ الْمُهْتَدِينَ ۝

मा का-न लिम्शिरकी-न अय्यअमुरु
मसाजिदल्लाहि शाहिदी-न अला
अन्फुसिहिम् बिल्कुफिर, उलाइ-क
हबितत् अअमालुहुम् व फिन्नारि हुम्
खालिदून (17) इन्नमा यअमुरु
मसाजिदल्लाहि मन् आम-न बिल्लाहि
वलयौमिल्-आखिरि व अकामस्सला-त
व आतज्जका-त व लम् यख्र-श
इल्लल्ला-ह, फ-असा उलाइ-क
अय्यकूनू मिनल्-मुस्तदीन (18)

मुशिरकों का काम नहीं कि आबाद करें
अल्लाह की मस्जिदें और तस्लीम कर रहे
हों अपने ऊपर कुफ़ को, वे लोग खराब
गये उनके अमल और आग में रहेंगे वे
हमेशा। (17) वही आबाद करता है
मस्जिदें अल्लाह की जो यकीन लाया
अल्लाह पर और आखिरत के दिन पर,
और कायम किया नमाज़ को और देता
रहा ज़कात और न डरा सिवाय अल्लाह
के किसी से, सो उम्मीदवार हैं वे लोग
कि हों हिदायत वालों में। (18)

खुलासा-ए-तफ़सीर

मुशिरकों में यह काबलियत ही नहीं कि वे अल्लाह की मस्जिदों को (जिनमें मस्जिद-ए-हराम भी आ गयी) आबाद करें, जिस हालत में कि वे खुद अपने ऊपर कुफ़ (की बातों) का इक़्रार कर रहे हैं (चुनाँचे वे खुद अपना चलन और तरीका बतलाने के वक़्त ऐसे अकीदों का इक़्रार करते थे जो वास्तव में कुफ़ हैं। मतलब यह कि मस्जिदों का आबाद करना अगरचे पसन्दीदा अमल है लेकिन बावजूद शिर्क के कि उसके विरुद्ध है इस अमल की अहलियत ही मौजूद नहीं है, और इसलिये वह बिल्कुल नाकाबिले तवज्जोह है, फिर फ़ख़ करने की क्या गुंजाईश है)। उन लोगों के (जो मुशिरक हैं) सब (नेक) आमाल (जैसे मस्जिदों को आबाद करना वगैरह) बेकार (और ज़ाया) हैं (इस वजह से कि उनके क़बूल होने की शर्त नहीं पाई जाती, और बरबाद अमल पर फ़ख़ ही क्या) और दोज़ख़ में वे लोग हमेशा रहेंगे (क्योंकि वह अमल जो कि निजात होने का सबब और ज़रिया है वह तो ज़ाया ही हो गया था) हाँ अल्लाह की मस्जिदों को आबाद करना उन लोगों का काम है (यानी पूरी तरह उनसे मक़बूल होता है) जो अल्लाह पर और क़ियामत के दिन पर (दिल से) ईमान लाएँ (और हाथ-पैर व ज़ाहिरी हालात से उसका इज़हार भी करें, मसलन इस तरह कि) नमाज़ की पाबन्दी करें और ज़कात दें और (अल्लाह पर ऐसा तवक्कुल रखते हों कि) सिवाय अल्लाह के किसी से न डरें, सो ऐसे लोगों के मुताल्लिक उम्मीद (यानी वायदा) है कि अपने मक़सूद (यानी जन्नत व निजात) तक पहुँच जाएँगे (क्योंकि उनके आमाल ईमान की वजह से मक़बूल होंगे, इसलिये आखिरत में नफ़ा होगा और मुशिरक लोग इस शर्त से मेहरम हैं, और जिस अमल का कोई फल न मिले उस पर फ़ख़ करना बेफ़ायदा है)।

मअारिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में मक्का के मुशिरकों की टेढ़ी चाल, अहद व समझौता तोड़ने और अपने बातिल दीन के लिये हर तरह की कोशिश का और उसके मुकाबले पर मुसलमानों को जिहाद की तरगीब (रुचि दिलाने) का बयान आया था, इन ज़िक्र हुई आयतों में मुसलमानों को जिहाद की ताकीद के साथ यह बतलाया गया है कि जंग व जिहाद ही वह चीज़ है जिसमें मुसलमान की परीक्षा होती है, मुनाफ़िक़ या कमज़ोर ईमान वाले का फ़र्क़ होता है, और यह इम्तिहान ज़रूरी है।

सोलहवीं आयत में इरशाद फ़रमाया कि क्या तुमने यह समझ रखा है कि तुम सिर्फ़ इस्लाम का कलिमा ज़बान से कह लेने और इस्लाम का दावा कर लेने पर आज़ाद छोड़ दिये जाओगे, जब तक अल्लाह तआला ज़ाहिरी तौर पर भी उन सच्चे और पक्के मुसलमानों को न देख लें जो तुम में से जिहाद करने वाले हैं, और जो अल्लाह और रसूल और मुसलमानों के सिवा किसी को अपना राज़दार दोस्त नहीं बनाते।

इसी आयत में उन आम लोगों को खिताब है जो मुसलमान समझे जाते थे, अगरचे उनमें से कुछ मुनाफ़िक़ (सिर्फ़ दिखावे के मुसलमान) भी और कुछ कमज़ोर ईमान वाले और दुविधा में पड़े हुए थे, ऐसे ही लोगों का यह हाल था कि अपने ग़ैर-मुस्लिम दोस्तों को मुसलमानों के राज़ और भेदों पर मुत्तला कर दिया करते थे। इसलिये इस आयत में मुख़्तस (सच्चे) मुसलमान की दो निशानियाँ बतला दी गयीं।

सच्चे मुसलमान की दो निशानियाँ

अव्वल यह कि अल्लाह के वास्ते काफ़िरों से जिहाद करें, दूसरे यह कि किसी ग़ैर-मुस्लिम को अपना राज़दार, दोस्त न बनायें। आयत के आख़िर में फ़रमाया:

وَاللّٰهُ خَبِيرٌۢ بِمَا تَعْمَلُونَ

यानी तुम जो कुछ करते हो अल्लाह तआला उससे बाख़बर हैं। उनके आगे किसी का हीला व तावील (बहाना और इधर-उधर का मतलब) नहीं चल सकती।

यही मज़मून कुरआन मजीद की एक दूसरी आयत में इन अलफ़ाज़ के साथ आया है:

أَحْسِبَ النَّاسُ أَنْ يُتْرَكُوا أَنْ يَقُولُوا آمَنَّا وَهُمْ لَا يُفْتَنُونَ

“यानी क्या लोगों ने यूँ समझ रखा है कि वे सिर्फ़ ज़बानी अपने आपको मोमिन कहने पर आज़ाद छोड़ दिये जायेंगे, और उनका कोई इम्तिहान न लिया जायेगा।”

किसी ग़ैर-मुस्लिम को हमराज़ दोस्त बनाना दुरुस्त नहीं

ज़िक्र हुई आयत में जो लफ़ज़ बली-जतुन आया है इसके मायने दख़ल देने वाले और भेदी के हैं। और एक दूसरी आयत में इसी मायने के लिये लफ़ज़ ‘बितानतुन’ इस्तेमाल किया गया है,

बिताना के असली मायने उस कपड़े के हैं जो दूसरे कपड़ों के नीचे पेट और बदन के साथ मिला हुआ हो। मुराद इससे ऐसा आदमी है जो अन्दर के राजों से वाकिफ़ हो। उस आयत के अलफाज़ ये हैं:

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَتَّخِذُوا بَاطِلًا مِن دُونِكُمْ لَا يَأْلُونَكُمْ خَبَالًا

“ऐ ईमान वालो! अपने मुसलमानों के सिवा किसी को हमराज और भेदी दोस्त न बनाओ, वे तुम्हें धोखा देकर बरबाद करने में कोई कसर न छोड़ेंगे।”

इसके बाद सत्रहवीं और अठारहवीं आयतों में मस्जिद-ए-हराम (काबा शरीफ वाली मस्जिद) और दूसरी मस्जिदों को ग़लत और बातिल इबादतों से पाक करने और सही व मकबूल तरीके पर इबादत करने की हिदायतें हैं।

और तफ़सील इसकी यह है कि मक्का फ़तह होने के बाद रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बैतुल्लाह और मस्जिदे हराम से उन तमाम बुतों को निकाल डाला जिनकी मुशिरक लोग इबादत किया करते थे। इस तरह ज़ाहिरी तौर पर तो मस्जिदे हराम बुतों से पाक हो गयी, लेकिन रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने पुराने दुश्मनों पर ग़ालिब आने के बाद सब को माफ़ी और अमान दे दिया था, और वे मुशिरक लोग अब भी बैतुल्लाह और सम्मानित हरम में इबादत व तवाफ़ वग़ैरह अपने बातिल तरीकों पर किया करते थे।

अब ज़रूरत इस बात की थी कि जिस तरह मस्जिदे हराम को बुतों से पाक कर दिया गया, इसी तरह बुत-परस्ती और उसके तमाम बातिल तरीकों से भी इस पवित्र ज़मीन को पाक किया जाये। और उससे पाक करने की ज़ाहिरी सूरत यही थी कि मुशिरक लोगों का दाख़िला मस्जिदे हराम में वर्जित और प्रतिबन्धित कर दिया जाये। लेकिन यह उस दिये हुए अमान के खिलाफ़ होता, और मुआहदे की पाबन्दी इस्लाम में इन सब चीज़ों से पहले और अहम थी, इसलिये फौरी तौर पर ऐसे अहकाम नहीं दिये गये बल्कि मक्का फ़तह होने के अगले ही साल में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत सिद्दीक़े अक़बर और हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हुमा के ज़रिये मिना और अरफ़ात के आम इज्तिमा में यह ऐलान करा दिया कि आईन्दा कोई मुशिरकों वाले तर्ज की इबादत और हज व तवाफ़ वग़ैरह हरम में न हो सकेगी, और जाहिलीयत में जो नंगे होकर तवाफ़ करने की बुरी रस्म चल पड़ी थी आईन्दा उस हरकत की इजाज़त न दी जायेगी। चुनाँचे हज़रत अली ने मिना के आम इज्तिमे में इसका ऐलान कर दिया कि:

لَا يَحُجُّ بَعْدَ الْعَامِ مُشْرِكٌ وَلَا يَطُوفُ بِالْبَيْتِ عُرْيَانٌ

“यानी इस साल के बाद कोई मुशिरक हज न कर सकेगा, और कोई नंगा आदमी बैतुल्लाह का तवाफ़ न कर सकेगा।”

और यह साल भर की मोहलत इसलिये दे दी गयी कि उनमें बहुत से वे लोग भी थे जिनके साथ मुसलमानों का समझौता था और वे अभी तक अपने समझौते पर कायम थे, समझौते की मियाद पूरी होने से पहले उनको किसी नये क़ानून का पाबन्द करना इस्लामी रवादारी के खिलाफ़

था, इसलिये एक साल पहले से यह ऐलान जारी कर दिया गया कि सम्मानित हरम को मुश्रिकाना इबादतों और रस्मों से पाक करना तय कर दिया गया है, क्योंकि इस किस्म की इबादत दर हकीकत इबादत और मस्जिद की आबादी नहीं बल्कि वीरानी व बरबादी है।

ये मक्का के मुश्रिक अपनी मुश्रिकाना रस्मों को इबादत और मस्जिदे हराम की तामीर व आबादी का नाम देते और इस पर फख्र किया करते थे, कि हम बैतुल्लाह और मस्जिदे हराम के मुतवल्ली (प्रबन्धक) और उसके आबाद करने के जिम्मेदार हैं। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु फरमाते हैं कि हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु जब इस्लाम लाने से पहले ग़ज़वा-ए-बदर में गिरफ्तार हुए और मुसलमानों ने उनको कुफ़ व शिर्क पर कायम रहने से शर्म दिलाई तो उन्होंने जवाब दिया कि तुम लोग सिर्फ हमारी बुराईयाँ याद रखते हो और भलाईयाँ का कोई जिक्र नहीं करते, क्या तुम्हें मालूम नहीं कि हम बैतुल्लाह और मस्जिदे हराम को आबाद रखने, उसका इन्तिज़ाम करने और हाजियों को पानी पिलाने वगैरह की खिदमात के जिम्मेदार भी हैं। इस पर कुरआने करीम की ये आयतें नाज़िल हुईं:

مَا كَانَ لِلْمُشْرِكِينَ أَنْ يَعْمُرُوا مَسْجِدَ اللَّهِ

यानी मुश्रिकों को यह हक नहीं कि वे अल्लाह की मस्जिदों की तामीर करें, क्योंकि मस्जिद सिर्फ वही जगह है जो एक अल्लाह की इबादत के लिये बनाई गयी है, शिर्क व कुफ़ इसके उलट और ज़िद है, वह मस्जिद के आबाद करने के साथ जमा नहीं हो सकती।

मस्जिद की इमारत (आबाद करने) का लफ्ज़ जो इस आयत में आया है यह कई मायनों में इस्तेमाल किया जाता है- एक ज़ाहिरी दर व दीवार की तामीर, दूसरे मस्जिद की हिफाज़त और सफाई और ज़रूरतों का इन्तिज़ाम, तीसरे इबादत के लिये मस्जिद में हाज़िर होना, उमरे को उमरा इसी मुनासबत से कहा जाता है कि उसमें बैतुल्लाह की ज़ियारत और इबादत के लिये हाज़िरी होती है।

मक्का के मुश्रिक लोग तीनों मायनों के एतिबार से अपने आपको बैतुल्लाह को आबाद करने वाला और मस्जिदे हराम की तामीर का जिम्मेदार समझते और इस पर फख्र (गर्व) किया करते थे। इन आयतों में अल्लाह तआला ने स्पष्ट फरमा दिया कि मुश्रिकों को अल्लाह की मस्जिदों की इमारत (आबाद करने और इन्तिज़ाम संभालने) का कोई हक नहीं जबकि वे खुद अपने कुफ़ व शिर्क के गवाह हैं। उन लोगों के आमाल ज़ाया और बरबाद हो गये और वे हमेशा जहन्नम की आग में रहेंगे।

खुद अपने कुफ़ व शिर्क की गवाही का मतलब या तो यह है कि अपने शिर्क भरे कामों और आमाल के सबब गोया खुद अपने कुफ़ व शिर्क की गवाही दे रहे हैं, और या यह कि आदतन जब किसी ईसाई या यहूदी से पूछा जाये कि तुम कौन हो? तो वह अपने आपको ईसाई या यहूदी कहता है, इसी तरह आग को पूजने वाले और बुत-परस्त अपने कुफ़ वाले नामों ही से अपना परिचय कराते हैं, यही उनका कुफ़ व शिर्क को मानना और गवाही है। (इब्ने कसीर)

इस आयत में मस्जिद की तामीर का नकारात्मक पहलू बयान किया गया था कि मुश्कि लोग इसके अहल (पात्र) नहीं हैं।

दूसरी आयत में मस्जिद की इमारत का सकारात्मक पहलू इस तरह इरशाद फरमाया:

أَتْمِمْ مَرْمَسَ الْجِدِّ اللَّهِ مَنْ آمَنَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَأَقَامَ الصَّلَاةَ وَآتَى الزَّكَاةَ وَلَمْ يَخْشَ إِلَّا اللَّهَ. فَعَسَىٰ أُولَٰئِكَ أَنْ يَكُونُوا مِنَ الْمُهْتَدِينَ ۝

“यानी मस्जिदों को आबाद करना उन्हीं लोगों का काम है जो अल्लाह पर और कियामत के दिन पर ईमान लायें और नमाज़ की पाबन्दी करें और ज़कात दें और सिवाय अल्लाह तआला के किसी से न डरें, सो ऐसे लोगों के बारे में उम्मीद है कि वे अपने मकसद में कामयाब होंगे।”

मतलब यह है कि मस्जिदों की असली इमारत (बनाना व आबाद करना) सिर्फ़ वही लोग कर सकते हैं जो अक्कीदे और अमल के एतिबार से अल्लाह के अहकाम के पाबन्द हों। अल्लाह और आखिरत के दिन पर ईमान रखते हों और नमाज़ ज़कात के पाबन्द हों, और अल्लाह के सिवा किसी से न डरते हों। इस जगह सिर्फ़ अल्लाह तआला और आखिरत के दिन पर ईमान का ज़िक्र किया गया, रसूल पर ईमान के ज़िक्र करने की इसलिये ज़रूरत न समझी गयी कि अल्लाह तआला पर ईमान लाने की कोई सूरत सिवाय इसके हो ही नहीं सकती कि रसूल पर ईमान लायें, और उसके ज़रिये जो अहकाम अल्लाह तआला की तरफ़ से आयें उनको दिल से क़बूल करे, इसलिये अल्लाह पर ईमान में रसूल पर ईमान फ़ितरी तौर पर दाख़िल है। यही वजह है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक मर्तबा सहाबा-ए-किराम से पूछा कि तुम जानते हो कि अल्लाह पर ईमान क्या चीज़ है? सहाबा ने अर्ज किया कि अल्लाह और रसूल ही ज़्यादा जानते हैं। आपने फ़रमाया कि अल्लाह पर ईमान यह है कि आदमी दिल से इसकी गवाही दे कि अल्लाह के सिवा कोई क़ाबिले इबादत नहीं, और यह कि मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अल्लाह के रसूल हैं। इस हदीस ने बतला दिया कि रसूल पर ईमान लाना अल्लाह पर ईमान लाने में दाख़िल और शामिल है। (तफ़्सीरे मज़हरी, बुख़ारी व मुस्लिम के हवाले से)

और यह जो इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह के सिवा किसी से न डरे, इसके मायने यह हैं कि दीन के मामले में किसी के ख़ौफ़ से अल्लाह के हुक्म को न छोड़े, वरना डरने की चीज़ों से डरना और दहशत खाना तो अक्ल व फ़ितरत का तकाज़ा है। दरिन्दे और ज़हरीले जानवरों से, चोर डाकू से तबई तौर पर डरना इसके खिलाफ़ नहीं। यही वजह है कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के सामने जब जादूगरों ने रस्सियों के साँप बनाकर दिखलाये तो वह डर गये:

فَأَوْجَسَ فِي نَفْسِهِ خِيفَةً مُّوسَىٰ

इसलिये तकलीफ़ और नुक़सान पहुँचाने वालों से तबई ख़ौफ़ न क़ुरआनी हुक्म के खिलाफ़ है न रिसालत और विलायत के, हाँ उस ख़ौफ़ से मग़लूब होकर अल्लाह तआला के अहकाम में ख़लल डालना, उनको छोड़ देना यह मोमिन की शान नहीं। यही इस जगह मुराद है।

इस आयत से संबन्धित कुछ और मसाईल

और मस्जिद की तामीर (बनाने और आबाद करने) जिसके बारे में इन आयतों में यह जिक्र है कि मुश्रिक काफिर नहीं कर सकते, बल्कि वह सिर्फ़ नेक सालेह मुसलमान ही का काम है, इससे मुराद मस्जिदों की देखभाल और प्रबन्धन की ज़िम्मेदारी है।

जिसका हासिल यह है कि किसी काफिर को किसी इस्लामी वक्फ़ का मुतवल्ली और प्रबन्धक बनाना जायज़ नहीं। बाकी रहा ज़ाहिरी इमारत वगैरह का बनाना सो इसमें किसी गैर-मुस्लिम से भी काम लिया जाये तो कोई हर्ज नहीं। (तफसीर मसगी)

इसी तरह अगर कोई गैर-मुस्लिम सवाब समझकर मस्जिद बना दे या मस्जिद बनाने के लिये मुसलमानों को चन्दा दे दे तो उसका क़ुबूल कर लेना भी इस शर्त से जायज़ है कि उससे किसी दीनी या दुनियावी नुक़सान या इल्ज़ाम का, या आईन्दा उस पर कब्ज़ा कर लेने का या एहसान जतलाने का ख़तरा न हो। (दुर्रै मुख्तार, शामी, मरागी)

और इस आयत में जो यह इरशाद फ़रमाया कि मस्जिदों की इमारत और आबादी सिर्फ़ नेक मुसलमान ही का काम है, इससे यह भी साबित हुआ कि जो शख्स मस्जिदों की हिफ़ाज़त, सफ़ाई और दूसरी ज़रूरतों का इन्तिज़ाम करता है, और जो इबादत और ज़िक्रुल्लाह के लिये या इल्मे दीन और क़ुरआन पढ़ने पढ़ाने के लिये मस्जिद में आता जाता है उसके ये आमाल उसके कामिल मोमिन होने की गवाही और सुबूत है।

इमाम तिर्मिज़ी और इब्ने माजा ने हज़रत अबू सईद खुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब तुम किसी शख्स को देखो कि वह मस्जिद की हाज़िरी का पाबन्द है तो उसके ईमान की गवाही दो, क्योंकि अल्लाह तआला ने फ़रमाया है:

إِنَّمَا يَغْمُرُ مَسْجِدَ اللَّهِ مَنْ آمَنَ بِاللَّهِ.

और बुख़ारी व मुस्लिम की हदीस में है कि हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख्स सुबह शाम मस्जिद में हाज़िर होता है अल्लाह तआला उसके लिये जन्नत का एक दर्जा तैयार फ़रमा देते हैं। और हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु अन्हु ने रिवायत किया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया- जो शख्स मस्जिद में आया वह अल्लाह तआला की ज़ियारत करने वाला मेहमान है, और मेज़बान पर हक़ है कि मेहमान का इकराम करे (यानी उसके साथ इज़्ज़त से पेश आये)। (मज़हरी, तबरानी, इब्ने जरीर, बैहकी के हवाले से)

मुफ़स्सिरे क़ुरआन हज़रत काज़ी सनाउल्लाह पानीपती रस्मतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि मस्जिद की तामीर में यह भी दाख़िल है कि मस्जिद को ऐसी चीज़ों से पाक करे जिनके लिये मस्जिदें नहीं बनाई गयीं, मसलन ख़रीद व फ़रोख़्त, दुनिया की बातें, किसी गुमशुदा चीज़ की तलाश, या दुनिया की चीज़ों का लोगों से सवाल, या फ़ुजूल किस्म के शे'र, झगड़ा, लड़ाई और शोर-शराबा वगैरह। (तफ़सीरे मज़हरी)

तत्तख़िज़ू आबा-अकुम् व इख़्वानकुम्
 औलिया-अ इनिस्त-हब्बुल्-कुफ़्-र
 अलल्-ईमानि, व मय्य-तवल्लहुम्
 मिन्कुम् फ-उलाइ-क हुमुज़्-
 ज़ालिमून (23)

और भाईयों को साथी अगर वे अज़ीज़
 (दोस्त) रखें कुफ़ को ईमान से, और जो
 तुम में उनका साथ दे (यानी दोस्ती रखे)
 सो वही लोग हैं गुनाहगार। (23)

खुलासा-ए-तफसीर

क्या तुम लोगों ने हाजियों के पानी पिलाने को और मस्जिदे-हराम के आबाद रखने को उस शख्स (के अमल) के बराबर करार दे लिया जो कि अल्लाह पर और कियामत के दिन पर ईमान लाया हो, और उसने अल्लाह की राह में जिहाद किया हो, (वह अमल ईमान और जिहाद है, यानी यह अमल बराबर नहीं, और जब आमाल बराबर नहीं तो) ये (अमल करने वाले) लोग (भी आपस में) बराबर नहीं अल्लाह के नज़दीक (गर्ज कि अमल अमल आपस में और अमल करने वाले आपस में बराबर नहीं। कलाम का मकसद यह है कि ईमान और जिहाद में से हर फर्द अफ़ज़ल है, पानी पिलाने और मस्जिदे हराम के आबाद करने वाले हर फर्द से, यानी ईमान भी दोनों से अफ़ज़ल है। और इससे मुश्रिक लोगों का जवाब हो गया क्योंकि उनमें ईमान न था, और जिहाद भी दोनों कामों से अफ़ज़ल है, इससे जवाब हो गया कुछ मोमिनों का जो कि ईमान के बाद हाजियों को पानी पिलाने और मस्जिदे हराम को आबाद करने को जिहाद से बेहतर समझते थे)। और (यह ज़िक्र हुई बात बहुत ही ज़ाहिर है लेकिन) जो लोग बेइन्साफ़ हैं (इससे मुराद मुश्रिक लोग हैं) अल्लाह तआला उनको समझ नहीं देता (इसलिये वे नहीं मानते, बख़िलाफ़ ईमान वालों के कि वे इस तहकीक़ को फ़ौरन मान गये)।

(आगे उस मज़मून की वज़ाहत है जो ऊपर 'ला यस्तवू-न' से मकसूद था, यानी) जो लोग ईमान लाये और (अल्लाह के वास्ते) उन्होंने वतन छोड़ा और अल्लाह की राह में अपने माल और जान से जिहाद किया, वे दर्जे में अल्लाह के नज़दीक (हाजियों को पानी पिलाने और मस्जिदे हराम की देखभाल करने वालों के मुक़ाबले में) बहुत बड़े हैं (क्योंकि अगर पानी पिलाने वालों और हरम को आबाद करने वालों में ईमान न हो तब तो यह बड़ाई उन्हीं मुहाजिर व मुजाहिद मोमिनों में सीमित है और अगर उनमें ईमान हो तो अगरचे वे भी बड़े हैं मगर ये ज़्यादा बड़े हैं) और यही लोग पूरे कामयाब हैं (क्योंकि अगर इनके मुक़ाबले वालों में ईमान न हो तब तो कामयाबी खास इन्हीं के लिये है, और अगर ईमान हो तो कामयाबी साझा है, लेकिन इनकी कामयाबी उनसे बड़ी है। आगे उस दर्जे और कामयाबी का बयान है कि) उनका रब उनको खुशख़बरी देता है अपनी तरफ़ से बड़ी रहमत और बड़ी रज़ामन्दी और (जन्नत के) ऐसे बाग़ों की, कि इनके लिये उन (बाग़ों) में हमेशा रहने वाली नेमत होगी (और) उनमें ये हमेशा-हमेशा

को रहेंगे। बेशक अल्लाह तआला के पास बड़ा अज़्र है (उसमें से इनको दिया जायेगा)।

ऐ ईमान वाले! अपने बापों को, अपने भाईयों को (अपना) रफ़ीक़ “यानी साथी और दोस्त” मत बनाओ, अगर वे लोग कुफ़्र को ईमान के मुकाबले में (ऐसा) प्यारा और पसन्दीदा रखें (कि उनके ईमान लाने की उम्मीद न रहे), और जो शख्स तुम में से उनके साथ दोस्ती और दिली ताल्लुक रखेगा सो ऐसे लोग बड़े नाफ़रमान हैं (मतलब यह कि हिजरत करने और वतन छोड़ने से एक बड़ी रुकावट उन लोगों का ताल्लुक है और खुद वही जायज़ नहीं, फिर हिजरत में क्या मुश्किल और कठिनाई है)।

मअरिफ़ व मसाईल

शुरू की चार आयतें 19 से 22 तक एक ख़ास वाकिए से संबन्धित हैं, वह यह कि मक्का के बहुत से मुश्रिक लोग मुसलमानों के मुकाबले में इस पर फ़ख़ (गर्व) किया करते थे कि हम मस्जिदे हराम की आबादी और हाजियों को पानी पिलाने का इन्तिज़ाम करते हैं, इससे बढ़कर किसी का कोई अमल नहीं हो सकता। इस्लाम लाने से पहले जब हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ग़ज़वा-ए-बदर में गिरफ़्तार होकर मुसलमानों की कैद में आये, और उनके मुस्लिम रिश्तेदारों ने उनको इस पर मलामत की कि आप ईमान की नेमत से मेहरूम हैं तो उन्होंने ने भी यही कहा था कि आप लोग ईमान व हिजरत को अपनी बड़ाई और श्रेष्ठ का सरमाया समझते हैं, मगर हम भी तो मस्जिदे हराम की आबादी और हाजियों को पानी पिलाने की अहम ख़िदमत की ज़िम्मेदारी उठाने वाले हैं जिनके बराबर किसी का अमल नहीं हो सकता। इस पर ये आयतें नाज़िल हुईं। (इब्ने कसीर, हज़रत इब्ने अब्बास की रिवायत हज़रत अली बिन अबी तल्हा के हवाले से)

और मुस्नद अब्दुर्रज़ज़ाक की कुछ रिवायतों में है कि हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु के मुसलमान हो जाने के बाद हज़रत तल्हा बिन शैबा, हज़रत अब्बास और हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हुम में आपस में गुफ़्तगू हो रही थी, तल्हा ने कहा कि मुझे वह फ़ज़ीलत (बड़ाई व सम्मान) हासिल है जो तुम में से किसी को हासिल नहीं, कि बैतुल्लाह की चाबी मेरे हाथ में है, मैं अगर चाहूँ तो बैतुल्लाह के अन्दर जाकर रात गुज़ार सकता हूँ। हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि मैं हाजियों को पानी पिलाने का मुतवल्ली और प्रबन्धक हूँ और मस्जिदे हराम में मेरे इख़्तियारात हैं। हज़रत अली कर्मल्लाहु वज्हेहू ने फ़रमाया कि मेरी समझ में नहीं आता कि आप हज़रात किस चीज़ पर फ़ख़ कर रहे हैं, मेरा हाल तो यह है कि मैंने सब लोगों से छह महीने पहले बैतुल्लाह की तरफ़ नमाज़ें पढ़ी हैं, और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ जिहाद में शरीक रहा हूँ। इस पर ये आयतें नाज़िल हुईं, जिनमें वाज़ेह कर दिया गया कि कोई अमल कितना ही ऊँचा व अफ़ज़ल हो ईमान के बग़ैर अल्लाह के नज़दीक उसकी कोई कीमत नहीं, और न शिर्क की हालत में ऐसे आमाँल करने वाला अल्लाह के नज़दीक मक़बूल है।

और सही मुस्लिम में हज़रत नौमान बिन बशीर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से यह वाक़िआ नक़ल किया गया है कि वह एक दिन जुमे के दिन मस्जिदे नबवी में चन्द हज़राते

सहाबा के साथ नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मिम्बर के पास जमा थे। उपस्थित हज़रात में से एक शख्स ने कहा कि इस्लाम व ईमान के बाद मेरे नज़दीक हाजियों को पानी पिलाने से बढ़कर कोई अमल नहीं, और मुझे इसके मुकाबले में किसी दूसरे अमल की परवाह नहीं। एक दूसरे साहिब ने उनके जवाब में कहा कि नहीं! अल्लाह की राह में जिहाद सबसे बड़ा अमल है। इन दोनों में बहस होने लगी तो हज़रत फ़ारुके आजम रज़ियल्लाहु अन्हु ने दोनों को डाँटकर कहा कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मिम्बर के पास शोर-शराबा न करो, मुनासिब बात यह है कि जुमे की नमाज़ पढ़ने के बाद यह बात खुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मालूम कर लो। इस तजवीज़ के मुताबिक़ हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मालूम किया गया, इस पर ये आयतें नाज़िल हुईं, जिनमें जिहाद को मस्जिदे हराम की जिम्मेदारी संभालने और हाजियों को पानी पिलाने से अफ़ज़ल अमल बतलाया गया।

और इसमें कोई दूर की बात नहीं कि आयतों का असल उतरना तो मुशिरकों के फ़ख़्र व तकब्बुर के जवाब में हुआ हो, फिर उसके बाद जो वाकिआत मुसलमानों में आपस में पेश आये उनमें भी इन्हीं आयतों को दलील के तौर पर पेश किया गया हो, जिससे सुनने वालों को यह महसूस हुआ कि ये आयतें इस वाकिए में नाज़िल हुईं।

बहरहाल उक्त आयतों में दोनों किस्म के वाकिआत का यह जवाब है कि शिर्क के साथ तो कोई अमल कितना ही बड़ा हो मकबूल और काबिले ज़िक्र ही नहीं, इसलिये किसी मुशिरक को मस्जिद के आबाद करने या हाजियों को पानी पिलाने की वजह से कोई फ़ज़ीलत व बड़ाई मुसलमानों के मुकाबले में हासिल नहीं हो सकती, और ईमान के बाद भी ईमान व जिहाद का दर्जा मस्जिदे हराम के आबाद करने और हाजियों को पानी पिलाने की तुलना में बहुत ज्यादा है। जो मुसलमान ईमान व जिहाद में आगे रहे वे उन मुसलमानों से अफ़ज़ल (बेहतर) हैं जिन्होंने जिहाद में शिर्कत नहीं की, सिर्फ़ मस्जिदे हराम की तामीर और हाजियों के पानी पिलाने की ख़िदमत अन्जाम देते रहे।

इस भूमिका के बाद ज़िक्र हुई आयतों के अलफ़ाज़ और तर्जुमे पर फिर एक नज़र डालिये। इरशाद फ़रमाया कि क्या तुमने हाजियों को पानी पिलाने और मस्जिदे हराम के आबाद रखने को उस शख्स के बराबर करार दिया जो कि अल्लाह पर और क़ियामत के दिन पर ईमान लाया हो, और उसने अल्लाह की राह में जिहाद किया हो, यह लोग बराबर नहीं अल्लाह के नज़दीक।

मज़मून का मतलब यह है कि ईमान और जिहाद में से हर एक अफ़ज़ल है, हाजियों को पानी पिलाना और मस्जिद को आबाद करने से। यानी ईमान भी दोनों से अफ़ज़ल है और जिहाद भी। ईमान के अफ़ज़ल होने से मुशिरकों की बात का जवाब हो गया, और जिहाद के अफ़ज़ल होने से उन मुसलमानों की बात का जवाब हो गया जो मस्जिद के आबाद करने और हाजियों को पानी पिलाने को जिहाद से अफ़ज़ल (बेहतर) कहते थे।

अल्लाह का जिक्र जिहाद से अफज़ल है

तफ़सीर-ए-मज़हरी में हज़रत काज़ी सनाउल्लाह रस्मतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि इस आयत में जो मस्जिद के आबाद करने पर जिहाद को फ़ज़ीलत और तरज़ीह दी गयी है, यह इमारत (आबाद करने) के ज़ाहिरी मायने के एतिबार से है। यानी मस्जिद की तामीर और ज़रूरी इन्तिज़ामात, कि जिहाद का इनके मुक़ाबले में अफ़ज़ल होना माना हुआ है।

लेकिन मस्जिद को आबाद करने के एक दूसरे मायने इबादत और अल्लाह के जिक्र के लिये मस्जिद में हाज़िरी के भी आते हैं, और दर हकीकत मस्जिद की असली इमारत व आबादी इसी से है। इस मायने के एतिबार से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के स्पष्ट इरशादात की बिना पर मस्जिद का आबाद करना जिहाद से अफ़ज़ल व आला है, जैसा कि मुस्नद अहमद, तिर्मिज़ी और इब्ने माजा में हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया- क्या मैं तुम्हें ऐसा अमल बतलाऊँ जो तुम्हारे तमाम आमाल से बेहतर और तुम्हारे मालिक के नज़दीक सबसे ज़्यादा अफ़ज़ल हो, और तुम्हारे दर्जों को सबसे ज़्यादा बुलन्द करने वाला और सोने-चाँदी को अल्लाह की राह में खर्च करने से भी अफ़ज़ल हो, और इससे भी अफ़ज़ल हो कि तुम जिहाद में दुश्मन से सख़्त मुक़ाबला करो जिसमें तुम उनको क़त्ल करो वे तुम्हें क़त्ल करें। सहाबा-ए-किराम ने अर्ज किया या रसूलुल्लाह! वह अमल ज़रूर बतलाइये। आपने फ़रमाया कि वह अमल अल्लाह का जिक्र है। इससे मालूम हुआ कि जिक्रुल्लाह की फ़ज़ीलत जिहाद से भी ज़्यादा है, और मस्जिद आबाद करना जब जिक्रुल्लाह के मायने में लिया जाये तो वह भी जिहाद से अफ़ज़ल है। मगर इस जगह मुश्रिकों का फ़ख़्र व ग़ुरूर ज़ाहिर है कि जिक्रुल्लाह और इबादत की बिना पर न था बल्कि ज़ाहिरी तामीर और इन्तिज़ामात की बिना पर था, इसलिये जिहाद को इससे अफ़ज़ल करार दिया गया।

और क़ुरआन व सुन्नत के मजमूई इरशादात में ग़ौर करने से मालूम होता है कि किसी अमल का दूसरे अमल से अफ़ज़ल व आला होना हालात व वाकिआत के ताबे होता है। कई बार एक अमल दूसरे से अफ़ज़ल होता है और हालात बदलने के बाद मामला इसके उलट भी हो सकता है। जिस वक़्त इस्लाम और मुसलमानों की रक्षा की सख़्त ज़रूरत हो उस वक़्त यकीनन जिहाद तमाम इबादतों से अफ़ज़ल होगा, जैसा कि ग़ज़वा-ए-ख़न्दक में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की चार नमाज़ें क़ज़ा हो जाने के वाकिए से ज़ाहिर है। और जिस वक़्त ऐसी सख़्त ज़रूरत न हो तो जिक्रुल्लाह और इबादत जिहाद के मुक़ाबले में अफ़ज़ल होगा।

आयत के आख़िर में “वल््लाहु ला यहदिल्-कौमज़ज़ालिमीन” फ़रमाकर यह बतला दिया कि यह कोई गहरी और बारीक बात नहीं बल्कि बिल्कुल स्पष्ट है कि ईमान सारे आमाल की बुनियाद और उन सबसे अफ़ज़ल है, और यह कि जिहाद मस्जिद के आबाद करने और हाज़ियों को पानी पिलाने के मुक़ाबले में अफ़ज़ल है, मगर अल्लाह तआला बेइन्साफ़ लोगों को समझ नहीं देता, इसलिये वे ऐसी खुली और ज़ाहिरी बातों में भी बेकार की बहस करते रहते हैं।

बीसवीं आयत में उस मजमून की तफसील है जो पहली आयत में “ला यस्तवून” के अलफाज से बयान किया गया है, यानी ईमान लाने वाले मुजाहिद और सिर्फ मस्जिदों की तामीर व आबाद करने वाले और हाजियों को पानी पिलाने वाले अल्लाह के नज़दीक बराबर नहीं हैं। इसमें इरशाद फरमाया:

الَّذِينَ آمَنُوا وَهَاجَرُوا وَجْهَهُمْ إِلَى سَبِيلِ اللَّهِ بِأَمْوَالِهِمْ وَأَنْفُسِهِمْ أَكْثَرُ دَرَجَةً عِنْدَ اللَّهِ وَأُولَئِكَ هُمُ

الْفَائِزُونَ

“यानी वे लोग जो ईमान लाये और जिन्होंने हिजरत की और अपनी जान व माल से अल्लाह की राह में जिहाद किया, वे अल्लाह के नज़दीक दर्जे में बड़े हैं, और पूरे कामयाब यही लोग हैं।”

क्योंकि उनके मुकाबले में जो मुश्रिक हैं उनको तो कामयाबी का कोई दर्जा ही हासिल नहीं, और जो मुसलमान हैं अगरचे कामयाबी में वे भी शरीक हैं, मगर इनकी कामयाबी उनसे बड़ी हुई है, इसलिये पूरे कामयाब यही लोग हैं।

इक्कीसवीं और बाईसवीं आयतों में इन कामयाब लोगों के बड़े अज़्र और आखिरत के दर्जों का बयान है, फरमाया:

يَسِّرُهُمْ رَبُّهُمْ بِرَحْمَةٍ مِنْهُ وَرِضْوَانٍ وَجَنَّتْ لَهُمْ فِيهَا نَعِيمٌ مُّقِيمٌ. خَالِدِينَ فِيهَا أَبَدًا. إِنَّ اللَّهَ عِنْدَهُ أَجْرٌ عَظِيمٌ.

“यानी उन लोगों को उनका परवरिगार खुशखबरी सुनाता है अपनी रहमत और रज़ा की और ऐसी जन्नतों की जिनमें उनके लिये हमेशा कायम रहने वाली नेमतें होंगी, और ये लोग भी उन नेमतों में हमेशा रहेंगे, उनको यहाँ से कभी न निकाला जायेगा। बेशक अल्लाह के पास बहुत बड़ा अज़्र है।”

उक्त आयतों में हिजरत और जिहाद के फज़ाईल का बयान आया है, जिनमें वतन और रिश्तेदारों व करीबी लोगों, यार दोस्तों और माल व जायदाद सब को छोड़ना पड़ता है। और ज़ाहिर है कि इनसान की तबीयत पर ये काम सब से ज़्यादा भारी और दुश्वार हैं, इसलिये अगली आयत में इन चीज़ों के साथ हद से ज़्यादा ताल्लुक और मुहब्बत की मज़म्मत (निंदा और बुराई) फरमाकर मुसलमानों के ज़ेहनों को हिजरत व जिहाद के लिये आमदा किया गया है। इरशाद फरमाया:

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَتَّخِذُوا آبَاءَكُمْ وَإِخْوَانَكُمْ أَوْلِيَاءَ إِنِ اسْتَحَبُّوا الْكُفْرَ عَلَى الْإِيمَانِ وَمَنْ يَتَوَلَّهُمْ مِنْكُمْ

فَأُولَئِكَ هُمُ الظَّالِمُونَ

“यानी ऐ ईमान वालो! तुम अपने बाप-दादा और भाईयों को रफ़ीक (साथी) मत बनाओ अगर वे लोग कुफ़्र को ईमान के मुकाबले में अज़ीज़ (प्यारा और पसन्दीदा) रखें, और तुम में से जो शख्स उनके साथ बावजूद उनके कुफ़्र के दोस्ती रखेगा सो ऐसे लोग बड़े नाफरमान हैं।”

माँ-बाप भाई-बहन और तमाम रिश्तेदारों से ताल्लुक को मज़बूत रखने और उनके साथ अच्छा सुलूक करने की हिदायतों से सारा कुरआन भरा हुआ है, मगर इस आयत में यह बतला

दिया कि हर ताल्लुक की एक हद है, इनमें से हर ताल्लुक चाहे माँ-बाप और औलाद का हो, या सगे भाई-बहन का, अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ताल्लुक के मुकाबले में नज़र-अन्दाज़ करने के काबिल है। जिस मौके पर ये दोनों रिश्ते टकरा जायें तो फिर रिश्ता व ताल्लुक अल्लाह व रसूल का ही कायम रखना है, उसके मुकाबले में सारे ताल्लुकात से नज़र हटा लेनी है।

उक्त आयतों से संबन्धित चन्द फायदे और मसाईल

ज़िक्र हुई पाँच आयतों से चन्द फायदे और मसाईल हासिल हुए:

अव्वल यह कि ईमान अमल की रूह और जान है, इसके बगैर कैसा ही अच्छा अमल हो वह सिर्फ बेजान सूरत और नाकाबिले कुबूल है। आखिरत की निजात में उसकी कोई कीमत नहीं, हाँ अल्लाह तआला के यहाँ बेइन्साफी नहीं, काफ़िरों के ऐसे बेरूह नेक आमाल भी बिल्कुल ज़ाया नहीं किये जाते, उनका बदला उनको दुनिया ही में आराम व ऐश और दौलत व रहत देकर बेबाक कर दिया जाता है। जिसका बयान कुरआने करीम की अनेक आयतों में आया है।

दूसरा फायदा इन आयतों से यह हासिल हुआ कि गुनाह व नाफ़रमानी से इनसान की अक्ल भी ख़राब हो जाती है, अच्छे को बुरा और बुरे को अच्छा समझने लगता है। उन्नीसवीं आयत के आखिर में “इन्नल्ला-ह ला यहदिल-कौमज़्ज़ालिमीन” फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया है जैसा कि इसके मुकाबले में एक आयत में:

إِنْ تَتَّقُوا اللَّهَ يَجْعَلْ لَكُمْ فُرْقَانًا.

फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया है कि फ़रमाँबरदारी व परहेज़गारी से इनसान की अक्ल को ताक़त व ताज़गी मिलती है, सही फ़िक्र नसीब होती है, वह अच्छे बुरे की तमीज़ में ग़लती नहीं करता।

तीसरा मसला यह मालूम हुआ कि नेक आमाल में भी आपस में कम-ज़्यादा दर्जे हैं, और उसी की मुनासबत से अमल करने वालों के दर्जों में कमी-ज़्यादती कायम होती है। सब अमल करने वाले एक दर्जे में नहीं रखे जा सकते। और मदार अमल की अधिकता पर नहीं बल्कि अमल की अच्छाई और ख़ूबी पर है। सूर: मुल्क में आया है:

لِيَلْوَكُمْ أَيْكُمُ أَحْسَنُ عَمَلًا.

“यानी अल्लाह तआला तुम्हारी आजमाईश करेंगे कि कौन ज़्यादा अच्छा अमल करने वाला है।”

चौथा फ़ायदा यह हासिल हुआ कि रहत व नेमत के हमेशा रहने के लिये दो चीज़ें ज़रूरी हैं- एक यह कि वो नेमतें किसी वक़्त ख़त्म न हो जायें, दूसरे यह कि किसी वक़्त उन लोगों को उन नेमतों से अलग न किया जाये। इसलिये अल्लाह के मक़बूल बन्दों के लिये दोनों चीज़ों की ज़मानत दे दी गयी। ‘नईमुम-मुकीम’ फ़रमाकर नेमतों का हमेशा के लिये होना बयान फ़रमाया

दिया, और 'खालिदीन फीहा अब्दन्' फरमाकर उन लोगों को कभी उन नेमतों से अलग न करने का इत्मीनान दिला दिया।

असल रिश्ता इस्लाम व ईमान का रिश्ता है

नसबी व वतनी ताल्लुकात सब इस पर कुरबान करने हैं

पाँचवाँ मसला एक बुनियादी मसला है कि रिश्तेदारी और दोस्ती के सारे ताल्लुकात पर अल्लाह तआला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का ताल्लुक मुकद्दम (आगे) है, जो ताल्लुक इससे टकराये वह तोड़ने के काबिल है। सहाबा-ए-किराम का वह अमल जिसकी वजह से वे सारी उम्मत से अफज़ल व आला करार पाये यही चीज़ थी कि उन्होंने रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर अपनी जान व माल और हर रिश्ते व ताल्लुक को कुरबान करके ज़बाने हाल से कहा कि हमने अपने तमाम ताल्लुकात व ज़ब्जात को हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ जोड़ लिया है और बाकी सबसे तोड़ लिया है।

बिलाल हब्शी, सुहैब रूमी, सलमान फारसी, मक्का के कुरैश और मदीना के अन्सार तो सब आपस में भाई-भाई हो गये, और बदर व उहुद के मैदानों में बाप बेटे, भाई-भाई की तलवारें आपस में टकरा कर इसकी गवाही दी कि उनका मस्लक यह था कि:

हज़ार ख़ेश कि बेगाना अज़ खुदा बाशद

फ़िदा-ए-यक तने बेगाना कि आशना बाशद

हज़ारों अपने जो कि खुदा तआला से बेगाने हों उस एक जान पर निसार व कुरबान हैं जो कि अल्लाह तआला की फरमाँबरदार है। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

या अल्लाह! हमें भी उन हज़रात की पैरवी नसीब फ़रमा और अपनी मुहब्बत तमाम चीज़ों से ज़्यादा अता फ़रमा और हर चीज़ के ख़ौफ़ से ज़्यादा अपना ख़ौफ़ ग़ालिब फ़रमा। आमीन

قُلْ إِنْ كَانَ آبَاؤُكُمْ وَأَبْنَاؤُكُمْ وَإِخْوَانُكُمْ وَأَزْوَاجُكُمْ وَعَشِيرَتُكُمْ وَأَمْوَالٌ

اِقْتَرَفْتُمُوهَا وَتِجَارَةٌ تَخْشَوْنَ كَسَادَهَا وَمَسْكِنٌ تَرْضَوْنَهَا أَحَبَّ إِلَيْكُمْ مِّنْ اللَّهِ وَ

رَسُولِهِ وَجِهَادٍ فِي سَبِيلِهِ فَتَرَبَّصُوا حَتَّى يَأْتِيَ اللَّهُ بِأَمْرٍ ۚ وَاللَّهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفَاسِقِينَ ٩

कुल् इन् का-न आबाउकुम् व

अब्नाउकुम् व इख्वानुकुम् व

अज़्वाजुकुम् व अशीरतुकुम् व

अम्वालु-निक्त-रफ्तुमूहा व तिजारतुन्

तू कह दे अगर तुम्हारे बाप और बेटे और भाई और औरतें और बिरादरी और माल जो तुमने कमाये हैं और सौदागरी जिसके बन्द होने से तुम डरते हो और हवेलियाँ जिनको पसन्द करते हो, तुमको

तख़शौ-न कसादहा व मसाकिनु
तरज़ौनहा अहब्-ब इलैकुम् मिनल्लाहि
व रसूलिही व जिहादिन् फी सबीलिही
फ़-तरब्बसू हत्ता यअतियल्लाहु
बिअम्रिही, वल्लाहु ला यस्दिल्
कौमल्-फ़ासिकीन (24) ❁

ज़्यादा प्यारी हैं अल्लाह से और उसके
रसूल से और लड़ने से उसकी राह में तो
इन्तिज़ार करो यहाँ तक कि भेजे अल्लाह
अपना हुक्म, और अल्लाह रास्ता नहीं
देता नाफ़रमान लोगों को। (24) ❁

खुलासा-ए-तफ़सीर

(आगे इसी मज़मून की अधिक तफ़सील है कि ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) आप (इनसे) कह दीजिये कि अगर तुम्हारे बाप और तुम्हारे बेटे और तुम्हारे भाई और तुम्हारी बीवियाँ और तुम्हारा कुनबा और वो माल जो तुमने कमाये हैं, और वह तिजारत जिसमें निकासी न होने की तुमको शंका हो, और वे घर जिनमें (रहने) को तुम पसन्द करते हो, (अगर ये चीज़ें) तुमको अल्लाह से और उसके रसूल से और उसकी राह में जिहाद करने से ज़्यादा प्यारे हों तो तुम इन्तिज़ार करो यहाँ तक कि अल्लाह तआला (हिजरत न करने की सज़ा का) अपना हुक्म भेज दें (जैसा कि दूसरी आयत में है):

إِنَّ الَّذِينَ تَوَفَّيْنَاهُمُ الْمَلَائِكَةُ..... إِلَى قَوْلِهِ..... فَأُولَٰئِكَ مَا لَهُمْ جَهَنَّمَ.

और अल्लाह तआला नाफ़रमानी करने वालों को उनके मकसूद तक नहीं पहुँचाता (यानी उनका मकसूद था इन चीज़ों से फ़ायदा उठाना और वह बहुत जल्द उनकी उम्मीद के खिलाफ़ मौत से ख़त्म हो जाता है)।

मअरिफ़ व मसाईल

सूर: तौबा की यह आयत दर असल उन लोगों के बारे में नाज़िल हुई जिन्होंने मक्का से हिजरत फ़र्ज होने के वक़्त हिजरत नहीं की। माँ-बाप, भाई-बहन, औलाद, बीवी और माल व जायदाद की मुहब्बत ने उनको हिजरत का फ़रीज़ा अदा करने से रोक दिया, उनके बारे में हक़ तआला ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह हुक्म दिया कि आप उन लोगों से कह दें कि:

“अगर तुम्हारे बाप, तुम्हारे बेटे और तुम्हारे भाई और तुम्हारी बीवियाँ और तुम्हारा कुनबा और वो माल जो तुमने कमाये हैं, और वह तिजारत जिसमें निकासी न होने का तुमको अन्देश हो, और वह घर जिनको तुम पसन्द करते हो, तुमको अल्लाह से और उसके रसूल से और उसकी राह में जिहाद करने से ज़्यादा प्यारे हों तो तुम मुन्ताज़िर रहो यहाँ तक कि अल्लाह

तअला अपना हुक्म भेज दें, और अल्लाह तअला नाफरमानी करने वालों को उनके मकसूद तक नहीं पहुँचाता।”

इस आयत में जो यह इरशाद फरमाया कि “मुत्तज़िर रहो यहाँ तक कि अल्लाह तअला अपना हुक्म भेज दें।” इमामे तफसीर मुजाहिद रह. ने फरमाया कि हुक्म से मुराद जिहाद व क़िताल और मक्का फ़तह होने का हुक्म है, और मतलब यह है कि उस वक़्त दुनियावी ताल्लुकात पर अल्लाह व रसूल के ताल्लुकात को क़ुरबान करने वालों का बुरा अन्जाम अन्करीब सामने आने वाला है, जबकि मक्का फ़तह होगा और नाफरमानी करने वाले ज़लील व रुस्वा होंगे, और उनके ये ताल्लुकात उस वक़्त उनके काम न आयेंगे।

और हज़रत हसन बसरी रह. ने फरमाया कि इस जगह हुक्म से मुराद अज़ाब का हुक्म है, कि दुनियावी ताल्लुकात पर आख़िरत के ताल्लुकात को क़ुरबान करके हिज़रत न करने वालों पर अल्लाह तअला का अज़ाब का हुक्म जल्दी ही आने वाला है, या तो दुनिया ही में उन पर अज़ाब आयेगा वरना आख़िरत का अज़ाब तो यकीनी है। आयत में इस जगह असल मक़सद तो हिज़रत न करने पर वईद (सज़ा की धमकी और डाँट) है, मगर ज़िक्र बजाय हिज़रत के जिहाद का किया गया, जो हिज़रत के बाद का अगला क़दम है। इसमें इशारा कर दिया गया कि अभी तो सिर्फ़ हिज़रत और वतन छोड़ने ही का हुक्म हुआ है, इसमें कुछ लोग हिम्मत हार बैठे, आगे जिहाद का हुक्म आने वाला है जिसमें अल्लाह और रसूल की मुहब्बत पर सारी मुहब्बतों को और खुद अपनी जान को क़ुरबान करना पड़ता है। और यह भी मुम्किन है कि इस जगह हिज़रत ही को जिहाद से ताबीर कर दिया हो, क्योंकि वह भी हकीकत में जिहाद ही का एक विभाग है।

और आयत के आख़िर आयत में ‘वल्लाहु ला यहदिल् कौमल् फ़ासिक्कीन’ फरमाकर यह भी बतला दिया कि जो लोग हिज़रत के हुक्म के बावजूद अपने दुनियावी ताल्लुकात को तरज़ीह देकर अपने प्यारों, रिश्तेदारों और माल व मकान से चिमटे रहे, उनका यह अमल दुनिया में भी उनके लिये मुफ़ीद नहीं होगा और उनका यह मक़सद हासिल नहीं होगा कि हमेशा अपने बाल-बच्चों और माल व मकान में अमन व चैन से बैठे रहें, बल्कि जिहाद का हुक्म शुरू होते ही ये सब चीज़ें उनके लिये वबाले जान बन जायेंगी। क्योंकि अल्लाह तअला नाफरमानी करने वालों को उनके मक़सूद (उद्देश्य और मन्ज़िल) तक नहीं पहुँचाते।

हिज़रत से संबन्धित मसाईल

अव्वल: जब मक्का से मदीना की तरफ़ हिज़रत फ़र्ज़ कर दी गयी तो वह सिर्फ़ एक फ़र्ज़ ही नहीं बल्कि मुसलमान होने की निशानी भी थी, जो बावजूद कुदरत के हिज़रत न करे वह मुसलमान न समझा जाता था। यह हुक्म मक्का फ़तह होने के बाद मन्सूख़ (ख़त्म और निरस्त) हो गया, और असल हुक्म यह बाक़ी रह गया कि जिस ज़मीन पर इनसान को अल्लाह के अहक़ाम नमाज़ रोज़े वगैरह की तामील (पालन करना) मुम्किन न हो उससे हिज़रत करना हमेशा के लिये फ़र्ज़ है, बशर्ते कि हिज़रत पर कुदरत हो।

दूसरा दर्जा यह है कि आदमी हर ऐसी जगह को छोड़ दे जहाँ बुराई व बदकारी का गलबा हो, यह हमेशा के लिये मुस्तहब (पसन्दीदा) है। (तफसील फत्हुल-बारी में है)

ऊपर जिक्र हुई आयत में डायरेक्ट खिताब तो उन लोगों से है जिन्होंने हिजरत फर्ज होने के वक्त दुनियावी ताल्लुकात की मुहब्बत से मगलूब होकर हिजरत नहीं की, लेकिन आयत के अलफ़ाज़ का आ़म होना तमाम मुसलमानों को यह हुक्म देता है कि अल्लाह तआला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत इस दर्जे होनी लाज़िम व वाज़िब है कि दूसरा कोई ताल्लुक और कोई मुहब्बत उस पर ग़ालिब न आये, और जिसने इस दर्जे की मुहब्बत पैदा न की वह अज़ाब का हक़दार हो गया, उसको अल्लाह के अज़ाब का मुन्ताज़िर रहना चाहिये।

सच्चे ईमान की निशानी

सच्चा ईमान इसके बग़ैर नहीं हो सकता कि अल्लाह और रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत सारी दुनिया और खुद अपनी जान से भी ज़्यादा हो। इसी लिये एक सही हदीस में जो बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है, रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि कोई आदमी उस वक्त तक मोमिन नहीं हो सकता जब तक कि मैं उसके नज़दीक उसके बाप, औलाद और दुनिया के तमाम लोगों से ज़्यादा महबूब (प्यारा) न हो जाऊँ।

और अबू दाऊद, तिर्मिज़ी में हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिसने किसी से दोस्ती की तो अल्लाह के लिये की और दुश्मनी की तो वह भी अल्लाह ही के लिये और माल को ख़र्च किया तो वह भी अल्लाह के लिये, और किसी जगह ख़र्च करने से रुका तो वह भी अल्लाह के लिये, उसने अपना ईमान मुकम्मल कर लिया।

हदीस की इन रिवायतों से भी साबित हुआ कि ईमान की तकमील इस पर निर्भर है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत सब मुहब्बतों पर ग़ालिब हो, और इनसान की दोस्ती दुश्मनी, देना या न देना सब अल्लाह व रसूल के हुक्म के ताबे हो।

इमाम-ए-तफ़सीर काज़ी बैज़ावी वग़ैरह ने फ़रमाया कि बहुत कम लोग हैं जो इस आयत की वर्इद से अलग और बाहर हों, क्योंकि आ़म तौर पर बड़े से बड़े आबिद व ज़ाहिद और आलिम व मुत्तकी भी बीबी-बच्चों और माल व मता की मुहब्बत से मगलूब नज़र आते हैं, हाँ मगर जिसको अल्लाह चाहे। साथ ही काज़ी बैज़ावी ने फ़रमाया कि मुहब्बत से मुराद इस जगह इख़्तियारी मुहब्बत है, ग़ैर-इख़्तियारी और तबई मुहब्बत मुराद नहीं, क्योंकि अल्लाह तआला किसी इनसान को उसकी ताक़त व इख़्तियार से ज़्यादा तकलीफ़ (ज़िम्मेदारी) नहीं देते, इसलिये अगर किसी शख्स का दिल इन दुनियावी ताल्लुकात की तबई मुहब्बत से भरा हुआ हो मगर उनसे इतना मगलूब न हो कि अल्लाह व रसूल के अहक़ाम की ख़िलाफ़वर्ज़ी को परवाह न करे, तो वह भी इस वर्इद से बाहर और अल्लाह व रसूल की मुहब्बत को ग़ालिब रखने वाला है। जैसे कोई बीमार दवा की कड़वाहट या ऑप्प्रेशन की तकलीफ़ से तबई तौर पर घबराता है, मगर अज़ली

तौर पर उसको अपनी निजात व सलामती का ज़रिया समझकर इस्तियार करता है, तो वह किसी के नज़दीक काबिले मलामत नहीं, और न सही अक्ल उसको इस पर मजबूर करती है कि तबई और ग़ैर-इस्तियारी घबराहट और बुरा समझने को भी दिल से निकाल दे। इसी तरह अगर किसी को माल व औलाद वगैरह की मुहब्बत के सबब अल्लाह के कुछ अहकाम की तामील में ग़ैर-इस्तियारी तौर पर तकलीफ़ महसूस हो, मगर इसके बावजूद वह उस तकलीफ़ को बरदाश्त करके अल्लाह के अहकाम पूरे करे तो वह भी काबिले मलामत नहीं, बल्कि काबिले तारीफ़ है, और अल्लाह व रसूल की मुहब्बत को इस आयत के मुताबिक़ ग़ालिब रखने वाला कहलायेगा।

हाँ इसमें शुब्हा नहीं कि मुहब्बत का आला मक़ाम यही है कि मुहब्बत तबीयत पर भी ग़ालिब आ जाये, और महबूब के हुक्म की तामील की लज़्ज़त हर कड़वाहट व तकलीफ़ को भी मजेदार बना दे। जैसा कि दुनिया की फ़ानी लज़्ज़त व राहत के तलबगारों को रात-दिन देखा जाता है कि बड़ी से बड़ी मेहनत व मशक्कत को हंस खेलकर इस्तियार कर लेते हैं, किसी दफ़्तर की नौकरी में महीने के ख़त्म पर मिलने वाले चन्द सिक्कों की मुहब्बत इनसान की नींद, आराम और सारे ताल्लुकात पर ऐसी ग़ालिब आ जाती है कि उसके पीछे हजारों मशक्कतों को बड़ी कोशिशों, सिफ़ारिशों और रिश्वतों के ज़रिये हासिल करता है।

अल्लाह वालों को यह मक़ाम अल्लाह व रसूल और आख़िरत की नेमतों की मुहब्बत में ऐसा ही हासिल होता है कि उसके मुकाबले में कोई तकलीफ़ तकलीफ़ नज़र नहीं आती। बुख़ारी व मुस्लिम की एक हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तीन ख़स्ततें ऐसी हैं कि वो जिस शख्स में पाई जायें तो उसको ईमान की मिठास हासिल हो जाती है। वे तीन ख़स्ततें ये हैं- एक यह कि अल्लाह और उसका रसूल उसके नज़दीक उनके अलावा हर चीज़ से ज़्यादा महबूब हो। दूसरे यह कि वह किसी अल्लाह के बन्दे से सिर्फ़ अल्लाह ही के लिये मुहब्बत रखे। तीसरे यह कि कुफ़्र व शिर्क उसको आग में डाले जाने के बराबर महसूस हो।

इस हदीस में ईमान की मिठास से मुराद मुहब्बत का यही मक़ाम है जो इनसान के लिये हर मशक्कत व मेहनत को लज़ीज़ बना देता है। मुहब्बत से बहुत सी कड़वाहटें मिठास में बदल जाती हैं। इसी मक़ाम के मुताल्लिक़ कुछ उलेमा ने फ़रमाया है:

وَإِذَا حَلَّتِ الْحَلَاوَةُ قَلْبًا نَشِطَتْ فِي الْعِبَادَةِ الْأَعْضَاءُ

“यानी जब किसी दिल में ईमान की मिठास पैदा हो जाती है तो इबादत व इताअत में उसके आज़ा (बदनी अंग) लज़्ज़त पाने लगते हैं।”

इसी को कुछ रिवायतों में ईमान की ताज़गी से ताबीर किया गया है। और हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मेरी आँखों की ठण्डक नमाज़ में है।

काज़ी सनाउल्लाह पानीपती रह. ने तफ़सीरे मज़हरी में फ़रमाया कि खुदा व रसूल की मुहब्बत का यह मक़ाम एक बहुत बड़ी नेमत है, मगर वह सिर्फ़ अल्लाह वालों की सोहबत व साथ ही से हासिल होती है, इसी लिये सूफ़िया-ए-किराम इसको बुजुर्गों की ख़िदमत से हासिल

करना जरूरी करार देते हैं। 'सुहल-बयान' के लेखक ने फरमाया कि दोस्ती का यह मकाम उसी को हासिल होता है जो खलीलुल्लाह की तरह अपने माल, औलाद और जान को अल्लाह की मुहब्बत में कुरबान करने के लिये तैयार हो।

काजी बैजावी रह. ने फरमाया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत व शरीअत की हिफाजत और उसमें रुकावटें डालने वालों से इसकी रक्षा भी अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत का एक खुला निशान है। अल्लाह तआला हमें और तमाम मुसलमानों को अपनी और अपने रसूल की मुहब्बत अपनी रज़ा व पसन्दीदगी के मुताबिक नसीब फरमाये। आमीन।

لَقَدْ نَصَرَكُمُ اللَّهُ فِي مَوَاطِنَ كَثِيرَةٍ ۖ وَيَوْمَ حُنَيْنٍ ۖ إِذْ أَعْجَبَتْكُمْ كَثْرَتُكُمْ فَلَمْ تُغْنِ عَنْكُمْ شَيْئًا وَضَاقَتْ عَلَيْكُمُ الْأَرْضُ بِمَا رَحُبَتْ ثُمَّ وَلَّيْتُم مُّدْبِرِينَ ۖ ثُمَّ أَنْزَلَ اللَّهُ سَكِينَتَهُ عَلَى رَسُولِهِ وَعَلَى الْمُؤْمِنِينَ وَأَنْزَلَ جُنُودًا لَمْ تَرَوْهَا وَعَذَّبَ الَّذِينَ كَفَرُوا ۚ وَذَلِكَ جَزَاءُ الْكَافِرِينَ ۖ ثُمَّ يَتُوبُ اللَّهُ مِنْ بَعْدِ ذَلِكَ عَلَى مَن يَشَاءُ ۚ وَاللَّهُ غَفُورٌ رَحِيمٌ ۝

लकद् न-स-रकुमुल्लाहु फी मवाति-न
कसीरतिंव-व यौ-म हुनैनिन् इज़्
अज़्-जबत्कुम् कसूरतुकुम् फ-लम्
तुगिन अन्कुम् शौअंव-व जाकत्
अलैकुमुल्-अरज़ु बिमा रहबत् सुम्-म
वल्लैतुम्-मुद्बिरीन (25) सुम्-म
अन्ज़लल्लाहु सकीन-तहू अला
रसूलिही व अलल्-मुअ्मिनी-न व
अन्ज़-ल जुनूदल् लम् तरौहा व
अज़्ज़बल्लज़ी-न क-फरू, व ज़ालि-क
जज़ाउल्-काफिरीन (26) सुम्-म
यतूबुल्लाहु मिम्-बअ्दि ज़ालि-क
अला मय्यशा-उ, वल्लाहु ग़फूर-
रहीम (27)

मदद कर चुका है अल्लाह तुम्हारी बहुत
मैदानों में, और हुनैन के दिन, जब खुश
हुए तुम अपनी अधिकता पर, फिर वह
कुछ काम न आई तुम्हारे और तंग हो
गई तुम पर जमीन बावजूद अपनी
फराखी के, फिर हट गये तुम पीठ देकर।
(25) फिर उतारी अल्लाह ने अपनी तरफ
से तसकीन (सुकून व इत्मीनान) अपने
रसूल पर और ईमान वालों पर और
उतारीं फौजें कि जिनको तुमने नहीं देखा
और अज़ाब दिया काफिरों को, और यही
सज़ा है इनकारियों की। (26) फिर तौबा
नसीब करेगा अल्लाह उसके बाद जिसको
चाहे, और अल्लाह बख्शने वाला मेहरबान
है। (27)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

तुमको खुदा तआला ने (लड़ाई के) बहुत-से मौकों में (काफ़िरों पर) ग़लबा दिया, (जैसे बदर वगैरह) और हुनैन के दिन भी (जिसका किस्सा अजीब व ग़रीब है, तुमको ग़लबा दिया) जबकि (यह वाकिआ हुआ था कि) तुमको अपने मजमे के ज्यादा होने से ग़रा "यानी एक तरह का अभिमान" हो गया था, फिर वह ज्यादाती तुम्हारे लिए कुछ कारामद न हुई, और (काफ़िरों के तीर बरसाने से ऐसी परेशानी हुई कि) तुम पर ज़मीन बावजूद अपनी (इस) फ़राखी के तंगी करने लगी, फिर (आखिर) तुम पीठ देकर भाग खड़े हुए। फिर (उसके बाद) अल्लाह तआला ने अपने रसूल (के दिल) पर और दूसरे मोमिनों (के दिलों) पर अपनी (तरफ़ से) तसल्ली नाज़िल फ़रमाई, और (मदद के लिये) ऐसे लश्कर (आसमान से) नाज़िल फ़रमाये जिनको तुमने नहीं देखा (मुराद फ़रिश्ते हैं जिसके बाद तुम फिर जंग के लिये मुस्तैद हुए और ग़ालिब आये) और (अल्लाह तआला ने) काफ़िरों को सज़ा दी (कि उन पर शिकस्त और क़त्ल व कैद की आफ़त पड़ी) और यह काफ़िरों की (दुनिया में) सज़ा है। फिर (इसके बाद) खुदा तआला (उन काफ़िरों में से) जिसको चाहें तौबा नसीब कर दें (चुनाँचे बहुत से मुसलमान हो गये) और अल्लाह तआला बड़ी मग़फ़िरत करने वाले, बड़ी रहमत करने वाले हैं (कि जो शख्स उनमें से मुसलमान हुआ उसके सब पिछले गुनाह माफ़ करके जन्नत का हक़दार बना दिया)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

ऊपर बयान हुई आयतों में ग़ज़वा-ए-हुनैन की शिकस्त व फ़तह के वाकिआत और उनके तहत में बहुत से उसूली और उनसे निकलने वाले मसाईल और फ़ायदों का बयान है, जैसा कि इससे पहली सूरत में मक्का के फ़तह होने और उससे संबन्धित बातों का ज़िक्र था। आयत के शुरू में हक़ तआला ने अपने उस इनाम व एहसान का ज़िक्र फ़रमाया है जो मुसलमानों पर हर मौके और हर हालत में होता रहा है। इरशाद फ़रमाया:

لَقَدْ نَصَرَكُمُ اللَّهُ فِي مَوَاطِنَ كَثِيرَةٍ.

"यानी अल्लाह तआला ने तुम्हारी मदद फ़रमाई बहुत से मक़ामात में" और इस भूमिका के बाद खुसूसियत के साथ फ़रमाया:

وَيَوْمَ حُنَيْنٍ.

"यानी हुनैन की जंग के दिन भी अल्लाह तआला की मदद पहुँची।"

ग़ज़वा-ए-हुनैन (हुनैन की लड़ाई) को विशेषता के साथ इस वजह से बयान फ़रमाया है कि उसमें बहुत से वाकिआत और हालात उम्मीद के खिलाफ़ अजीब अन्दाज़ से जाहिर हुए जिनमें ग़ौर करने से इनसान के ईमान में मज़बूती और अमल में हिम्मत पैदा होती है, इसलिये उक्त आयतों की लफ़्ज़ी तफ़सीर से पहले इस ग़ज़वे (जंग और मुहिम) के ज़रूरी वाकिआत जो हदीस

व तारीख की मोतबर किताबों में जिक्र हुए हैं किसी कद्र तफसील से बयान कर देना मुनासिब है, ताकि उक्त आयतों के समझने में आसानी हो और जिन फायदों के लिये ये वाकिआत बयान फरमाये गये हैं वो सामने आ जायें। इन वाकिआत का ज्यादातर हिस्सा तफसीर-ए-मजहरी से लिया गया है, जिनमें हदीस व तारीख की किताबों के हवाले से वाकिआत का जिक्र है।

हुनैन मक्का मुकर्रमा और तार्इफ के बीच में एक जगह का नाम है, जो मक्का मुकर्रमा से दस मील से कुछ ज्यादा फासले पर स्थित है। रमजान 8 हिजरी में जब मक्का मुकर्रमा फतह हुआ और मक्का के कुरैश ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने हथियार डाल दिये तो अरब का एक बहुत बड़ा मशहूर बहादुर लड़ाका और मालदार कबीला हवाजिन जिसकी एक शाख तार्इफ के रहने वाले बनू सकीफ भी थे, उनमें हलचल मच गयी। उन्होंने जमा होकर यह कहना शुरू किया कि मक्का फतह हो जाने के बाद मुसलमानों को काफी कुव्वत हासिल हो गयी है, उससे फांश होने के बाद लाजिमी है कि उनका रुख हमारी तरफ होगा, इसलिये अक्लमन्दी की बात यह है कि उनके हमलावर होने से पहले हम खुद उन पर हमला कर दें। इस काम के लिये कबीला हवाजिन ने अपनी सब शाखों को जो मक्का से तार्इफ तक फैली हुई थीं जमा कर लिया। इस कबीले के सब बड़े-छोटे सिवाय चन्द गिने-चुने अफराद के जिनकी तायदाद सौ से भी कम थी, सब ही जमा हो गये।

इस तहरीक (आंदोलन) के लीडर मालिक बिन औफ थे, जो बाद में मुसलमान हो गये, और इस्लाम के बड़े झण्डा वाहक साबित हुए। उस वक्त मुसलमानों के खिलाफ हमले का सबसे ज्यादा जोश इन्हीं में था। कबीले की भारी अक्सरियत ने इनकी राय से इत्तिफाक करके जंग की तैयारियाँ शुरू कर दीं। इस कबीले की छोटी-छोटी दो शाखें बनू कअब और बनू किलाब इस राय से सहमत नहीं हुई, अल्लाह तआला ने उनको कुछ समझ दे दी थी, उन्होंने कहा कि अगर पूरब से पश्चिम तक सारी दुनिया भी मुहम्मद के खिलाफ जमा हो जायेगी तो वह उन सब पर भी गालिब आयेंगे, हम खुदाई ताकत के साथ जंग नहीं कर सकते। बाकी सब के सब ने अहद किये और मालिक इब्ने औफ ने उन सब को पूरी कुव्वत से जंग पर कायम रहने की एक तदबीर यह की कि हर शख्स के तमाम बाल-बच्चे और घर वाले भी साथ चलें, और अपना-अपना पूरा माल भी साथ लेकर निकलें, जिसका मकसद यह था कि वे मैदान से भागने लगे तो बीवी-बच्चों और माल की मुहब्बत उनके पाँव की ज़न्जीर बन जाये, मैदान से भागने का उनके लिये कोई मौका न रहे। उनकी तायदाद के बारे में इतिहासकारों के कौल विभिन्न हैं, हाफिजे हदीस अल्लामा इब्ने हजर वगैरह ने ज्यादा सही इसको करार दिया है कि चौबीस या अट्ठाईस हजार का मजमा था, और कुछ हज़रात ने चार हज़ार की तायदाद बयान की है। यह मुम्किन है कि सब बीवी-बच्चों और औरतों समेत तायदाद चौबीस या अट्ठाईस हज़ार हो, और लड़ने वाले जवान उनमें चार हज़ार हों।

बहरहाल रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मक्का मुकर्रमा में उनके खतरनाक इरादों की इत्तिला मिली तो आपने उनके मुकाबले पर जाने का इरादा फरमा लिया। मक्का

जान से भी ज्यादा महबूब हो जाते हैं। हुजूर पैक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुझे हुक्म दिया कि जाओ काफिरों का मुकाबला करो, अब तो मेरा यह हाल था कि मैं अपनी जान आप पर कुरबान कर रहा था और बड़ी बहादुरी के साथ दुश्मन का मुकाबला किया। जब हुजूर पैक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इस जिहाद से वापस आये तो मैं खिदमत में हाज़िर हुआ, आपने मेरे दिल के तमाम ख्यालात की निशानदेही कर दी, कि तुम मक्का से इस नीयत से चले थे और मेरे गिर्द मेरे क़त्ल के लिये घूम रहे थे, मगर अल्लाह तआला का इरादा तुमसे नेक काम लेने का था जो होकर रहा।

इसी तरह का वाकिआ नज़र बिन हरिस को पेश आया कि वह भी इसी नीयत से हुनैन गये थे। वहाँ पहुँचकर अल्लाह तआला ने उनके दिल में रसूल करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मासूमियत और मुहब्बत डाल दी, और एक मर्दे मुजाहिद बनकर दुश्मनों की सफ़ों से टकरा गये।

इसी सफ़र में अबू बर्दा बिन नय्यार रज़ियल्लाहु अन्हु को यह वाकिआ पेश आया कि औतास के स्थान पर पहुँचकर देखा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम एक दरख़्त के नीचे तशरीफ़ रखते हैं, और एक और शख्स आपके पास बैठा है। आपने ज़िक्र फ़रमाया कि मैं सो गया था, यह शख्स आया और मेरी तलवार अपने कब्ज़े में लेकर मेरे सर पर खड़ा हो गया और कहने लगा कि ऐ मुहम्मद! अब बतलाओ तुम्हें कौन मेरे हाथ से बचा सकता है? मैंने जवाब दिया कि अल्लाह बचा सकता है। यह सुनकर तलवार उसके हाथ से गिर गयी। अबू बर्दा ने अर्ज़ किया या रसूलुल्लाह! इजाज़त दीजिए कि मैं इस दुश्मने खुदा की गर्दन मार दूँ, यह दुश्मन कौम का जासूस मालूम होता है। हुजूर पैक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अबू बर्दा ख़ामोश रहो, अल्लाह तआला मेरी हिफ़ाज़त करने वाला है, जब तक कि मेरा दीन सारे दीनों पर ग़ालिब न आ जाये। और आपने उस शख्स को कोई मलामत भी न फ़रमाई, और आज़ाद छोड़ दिया।

हुनैन के मक़ाम पर पहुँचकर मुसलमानों ने पड़ाव डाला तो हज़रत सुहैल बिन हन्ज़ला रज़ियल्लाहु अन्हु रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में यह ख़बर लेकर हाज़िर हुए कि एक घोड़े सवार आदमी अभी दुश्मन की तरफ़ से आया है, वह बतला रहा है कि कबीला-ए-हवाज़िन पूरा का पूरा मय अपने सब सामान के मुकाबले पर आ गया है। हुजूर पैक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम यह सुनकर मुस्कुराये और कहा कि परवाह न करो, यह सारा सामान मुसलमानों के लिये माले ग़नीमत बनकर हाथ आयेगा।

इस जगह ठहरकर हुजूर पैक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन हद्दाद को जासूस बनाकर भेजा कि दुश्मन के हालात का पता चलायें। वह उनकी कौम में जाकर दो दिन रहे, सब हालात देखते सुनते रहे। उनके लीडर और कमाण्डर मालिक बिन औफ़ को देखा कि वह अपने लोगों से कह रहा है कि मुहम्मद को अब तक किसी बहादुर तजुर्बेकार कौम से साबका नहीं पड़ा, मक्का के भोले-भाले क़ुरैशियों का मुकाबला करके उन्हें अपनी ताक़त का घमण्ड हो गया। अब उनको पता लगेगा, तुम सब लोग सुबह होते ही इस तरह सफ़ बन्दी करो

कि हर एक के पीछे उसके बीबी बच्चे और माल हो, और अपनी तलवार की म्यानो को तोड़ डालो, और सब मिलकर एक ही बार में हल्ला बोलो। ये लोग जंग के बड़े तजुर्बेकार थे, अपनी फौज के चन्द दस्तों को विभिन्न घाटियों में छुपा दिया था।

इस तरफ काफ़िरो के लश्कर की यह तैयारियाँ थीं, दूसरी तरफ मुसलमानों का यह पहला जिहाद था, जिसमें चौदह हजार सिपाही मुकाबले के लिये निकले थे, और जंग का सामान भी हमेशा से ज्यादा था, और ये लोग बदर व उहुद के मैदानों में यह देख चुके थे कि सिर्फ़ तीन सौ तेरह बेसामान लोगों ने एक हजार के ज़बरदस्त लश्कर पर फ़तह पाई, तो आज अपनी अधिक संख्या और तैयारी पर नज़र करके हाकिम और बज़ार की रिवायत के मुताबिक़ उनमें से कुछ की ज़बान से ऐसे कलिमात निकल गये कि आज तो यह मुम्किन नहीं कि हम किसी से हार जायें, आज तो मुकाबले की देर है कि दुश्मन फ़ौरन भागेगा।

मालिकुल-मुल्क दल्म-लकूत (यानी अल्लाह तआला) को यही चीज़ नापसन्द थी कि अपनी ताक़त पर कोई भरोसा किया जाये। चुनाँचे मुसलमानों को इसका सबक़ इस तरह मिला कि जब कबीला हवाज़िन ने अपनी योजना के मुताबिक़ एक ही बार में हल्ला बोला और घाटियों में छुपे हुए दस्तों ने चारों तरफ़ से घेरा डाला, गर्द व गुबार ने दिन को रात बना दिया तो सहाबा किराम के पाँव उखड़ गये और भागने लगे। सिर्फ़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपनी सवारी पर सवार पीछे हटने के बजाय आगे बढ़ रहे थे, और बहुत थोड़े से सहाबा-ए-किराम जिनकी तायदाद तीन सौ और कुछ हज़रात ने एक सौ या इससे भी कम बतलाई है, हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ जमे रहे। वे भी यह चाहते थे कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम आगे न बढ़ें।

यह हालत देखकर आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु को हुक्म दिया कि बुलन्द आवाज़ से सहाबा को पुकारो कि वे लोग कहाँ हैं जिन्होंने पेड़ के नीचे जिहाद की बैअत की थी, और सूर: ब-क़रह वाले हज़रात कहाँ हैं, और वे अन्सार कहाँ हैं जिन्होंने जान की बाज़ी लगाने का अहद किया था। सब को चाहिये कि वापस आयें और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम यहाँ हैं।

हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की एक आवाज़ बिजली की तरह दौड़ गयी और फ़ौरन सब भागने वालों को शर्मिन्दगी हुई, और बड़ी बहादुरी के साथ लौटकर दुश्मन का पूरा मुकाबला किया। उसी हालत में अल्लाह तआला ने फ़रिश्तों की मदद भेज दी, उनका कमाण्डर मालिक बिन औफ़ अपने बाल-बच्चों और सब माल को छोड़कर भागा, और तार्इफ़ के क़िले में जा छुपा, और फिर बाकी पूरी क़ौम भाग खड़ी हुई। उनके सत्तर सरदार मारे गये, कुछ मुसलमानों के हाथ से कुछ बच्चे ज़ख्मी हो गये तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सख़्ती से मना फ़रमाया। उनका सब माल मुसलमानों के कब्ज़े में आया, छह हजार जंगी कैदी, चौबीस हजार ऊँट, चालीस हजार बकरियाँ, चार हजार औकिया चाँदी हाथ आई।

पहली और दूसरी आयत में इसी मज़मून का बयान है। इरशाद फ़रमाया कि जब तुमको

अपने मजमे की अधिकता से घमण्ड हो गया था फिर वह अधिकता तुम्हारे कुछ काम न आई और ज़मीन बावजूद फ़राखी के तुम पर तंग हो गयी। फिर तुम पीठ देकर भाग खड़े हुए। फिर अल्लाह तआला ने अपनी तसल्ली नाज़िल फ़रमाई अपने रसूल पर और मुसलमानों पर, और ऐसे लश्कर फ़रिश्तों के नाज़िल कर दिये जिनको तुमने नहीं देखा, और काफ़िरों को तुम्हारे हाथ से सज़ा दिलवा दी।

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमाया:

ثُمَّ أَنْزَلَ اللَّهُ سَكِينَتَهُ عَلَى رَسُولِهِ وَعَلَى الْمُؤْمِنِينَ

‘यानी फिर अल्लाह तआला ने अपने रसूल पर और सब मुसलमानों पर अपनी तसल्ली नाज़िल फ़रमा दी।’

मायने इसके यह हैं कि ग़ज़वा-ए-हुनैन के शुरूआती हल्ले में जिन सहाबा-ए-किराम के पाँव उखड़ गये थे अल्लाह तआला ने उनके दिलों पर अपनी तसल्ली नाज़िल फ़रमा दी, जिससे उनके उखड़े हुए क़दम जम गये और भागने वाले फिर लौट आये, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर और उन सहाबा पर जो मज़बूती के साथ मोर्चे पर जमे रहे तसल्ली नाज़िल फ़रमाने का मतलब यह है कि उनको अपनी फ़तह क़रीब नज़र आने लगी, और चूँकि तसल्ली की ये दो किस्में थीं- एक भागने वालों के लिये, दूसरी रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ जमे रहने वालों के लिये, इसी तरफ़ इशारा करने के लिये:

عَلَى رَسُولِهِ وَعَلَى الْمُؤْمِنِينَ

को अलग-अलग बयान फ़रमाया गया है।

इसके बाद फ़रमाया:

وَأَنْزَلَ جُنُودًا لَمْ تَرَوْهَا

यानी ऐसे लश्कर नाज़िल फ़रमा दिये जिनको तुमने नहीं देखा। इससे मुराद लोगों का आम तौर पर न देखना है, इक्का-दुक्का हज़रात से जो कुछ रिवायतों में इस लश्कर का देखना मन्कूल है वह इसके खिलाफ़ नहीं।

फिर फ़रमाया:

وَعَذَّبَ الَّذِينَ كَفَرُوا وَذَلِكَ جَزَاءُ الْكَافِرِينَ

“यानी काफ़िरों को अल्लाह तआला ने सज़ा दे दी और काफ़िरों की यही सज़ा है।”

इस सज़ा से मुराद उनका मुसलमानों के हाथों पराजय और मग़लूब होना है, जो खुले तौर सब के सामने आया। मतलब यह है कि यह दुनियावी सज़ा थी, जो फ़ौरी तौर पर मिल गयी, आगे आख़िरत के मामले का ज़िक्र बाद वाली आयत में इस तरह आया है:

ثُمَّ يَتُوبُ اللَّهُ مِنْ بَعْدِ ذَلِكَ عَلَى مَنْ يَشَاءُ وَاللَّهُ غَفُورٌ رَحِيمٌ

“यानी फिर खुदा तआला जिसको चाहे तौबा नसीब कर दें, और अल्लाह तआला बड़ी मग़फ़िरत करने वाले, बड़ी रहमत करने वाले हैं।”

इसमें इशारा है कि इस जिहाद में जिन लोगों को मुसलमानों के हाथों मग़लूब और पराजित होने की सज़ा मिल चुकी है, और अभी तक वे अपने कुफ़्र पर कायम हैं, उनमें से भी कुछ लोगों को ईमान की तौफ़ीक़ नसीब होगी, चुनाँचे ऐसा ही वाकिआ पेश आया जिसकी तफ़्सील यह है:

हुनैन की फ़तह, हवाज़िन व सकीफ़ के सरदारों का मुसलमान होकर हाज़िर होना और कैदियों की वापसी

हुनैन में कबीला हवाज़िन व सकीफ़ के कुछ सरदार मारे गये, कुछ भाग खड़े हुए। उनके साथ जो उनके बीवी-बच्चे और माल थे वो मुसलमानों के कैदी और माले ग़नीमत बनकर मुसलमानों के हाथ आये। जिसमें छह हजार कैदी, चौबीस हजार ऊँट, चालीस हजार से ज़्यादा बकरियाँ और चार हजार औकिया चाँदी थी, जिसके तक्रीबन चार मन (160 किलो) होते हैं, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अबू सुफ़ियान बिन हर्ब को ग़नीमत के मालों का निगराँ मुकर्रर फ़रमाया।

फिर हारे हुए हवाज़िन और सकीफ़ ने विभिन्न मक़ामात पर मुसलमानों के खिलाफ़ इज्तिमा किया मगर हर मक़ाम पर उनको शिकस्त होती गयी। वे सख़्त मरऊब होकर तार्इफ़ के अति मज़बूत क़िले में क़िला-बन्द हो गये। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पन्द्रह बीस दिन इस क़िले का घेराव किया। ये क़िले में बन्द दुश्मन अन्दर ही से तीर बरसाते रहे, सामने आने की किसी को हिम्मत न हुई। सहाबा-ए-क़िराम ने अज़्र किया कि या रसूलुल्लाह! इन लोगों के लिये बन्दुआ फ़रमाइये, मगर आपने उनके लिये हिदायत की दुआ फ़रमाई और आख़िरकार रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-क़िराम से मश्विरा फ़रमाकर वापसी का इरादा फ़रमाया, और जअराना के स्थान पर पहुँचकर इरादा फ़रमाया कि पहले मक्का मुअज़्ज़मा जाकर उमरा अदा करें, फिर मदीना तय्यिबा को वापसी हो। मक्का वालों की बड़ी तायदाद जो तमाशाई बनकर मुसलमानों की हार-जीत का इम्तिहान करने आई थी, इस जगह पहुँचकर उनमें से बहुत लोगों ने मुसलमान होने का ऐलान कर दिया।

इसी मक़ाम पर पहुँचकर माले ग़नीमत की तक्सीम का इन्तिज़ाम किया गया था। अभी ग़नीमत के माल तक्सीम हो ही रहे थे कि अचानक हवाज़िन के चौदह सरदारों का एक मण्डल जुहैर बिन सर्द के नेतृत्व में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ जिनमें हुज़ूरे पाक के दूध-शरीक चचा अबू यरक़ान भी थे। उन्होंने हाज़िर होकर अज़्र किया कि हम मुसलमान हो चुके हैं और यह दरख़्वास्त की कि हमारे बाल-बच्चे और माल हमें वापस दे दिये जायें। इस दरख़्वास्त में अज़्र किया गया कि या रसूलुल्लाह! हम दूध-शरीक होने के रिश्ते से आपके करीबी और अपने हैं, और जो मुसीबत हम पर पड़ी है वह आपसे छुपी नहीं। आप हम पर एहसान फ़रमायें। मण्डल का सरदार एक शायर अदमी था, उसने कहा कि या रसूलुल्लाह! अगर हम रोम या इराक़ के बादशाह से अपनी ऐसी मुसीबत के पेशे नज़र कोई दरख़्वास्त करते

तो हमारा ख्याल यह है कि वे भी हमारी दरख्वास्त को रद्द न करते, और आपको तो अल्लाह तआला ने ऊँचे अख़लाक में सबसे ज्यादा विशेषता अता फ़रमायी है। आप से हम बड़ी उम्मीद लेकर आये हैं।

रसूलुल्लाह-सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिये यह मौका दोहरी मुश्किल का था। एक तरफ़ इन लोगों पर रहम व करम का तकाज़ा यह कि इनके सब कैदी और माल इनको वापस कर दिये जायें, दूसरी तरफ़ यह कि ग़नीमत के मालों में तमाम मुजाहिदीन का हक़ होता है, उन सब को उनके हक़ से मेहरूम कर देना इन्साफ़ की रू से दुरुस्त नहीं। इसलिये सही बुखारी की रिवायत के मुताबिक़ हुज़ूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इनके जवाब में फ़रमाया:

मेरे साथ किस क़द्र मुसलमानों का लश्कर है जो इन मालों के हक़दार हैं। मैं सच्ची और साफ़ बात को पसन्द करता हूँ इसलिये आप लोगों को इख़्तियार देता हूँ कि या तो अपने कैदी वापस ले लो या ग़नीमत के माल। इन दोनों में से जिसको तुम चुनो वह तुम्हें दे दिये जायेंगे। सब ने कैदियों की वापसी को इख़्तियार किया, तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तमाम सहाबा को जमा फ़रमाकर एक ख़ुतबा दिया, जिसमें अल्लाह की हम्द व सना के बाद फ़रमाया कि:

“ये तुम्हारे भाई तौबा करके आये हैं। मैं यह चाहता हूँ कि इनके कैदी इनको वापस दे दिये जायें, तुम में से जो लोग खुशदिली के साथ अपना हिस्सा वापस देने के लिये तैयार हों वे एहसान करें और जो इसके लिये तैयार न हों तो हम उनको आईन्दा फ़ै के माल में से इसका बदला दे देंगे।”

हुक्क के मामले में राय कैसे ली जाये, इसकी तालीम

हुक्क के मामले में सार्वजनिक राय मालूम करने के लिये अ़वामी जलसों की आवाज़ें काफी नहीं, हर एक से अलग राय मालूम करनी चाहिये।

हर तरफ़ से यह आवाज़ उठी कि हम दिल की खुशी के साथ सब कैदी वापस करने के लिये तैयार हैं, मगर अदल व इन्साफ़ और हुक्क के मामले में एहतियात को सामने रखते हुए रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस तरह की मुख़लिफ़ आवाज़ों को काफी न समझा और फ़रमाया कि मैं नहीं जानता कि कौन लोग अपना हक़ छोड़ने के लिये दिल की खुशी से तैयार हुए और कौन ऐसे हैं जो शर्मा-शर्मी ख़ामोश रहे। मामला लोगों के हुक्क का है, इसलिये ऐसा किया जाये कि हर जमाअत और ख़ानदान के सरदार अपनी-अपनी जमाअत के लोगों से अलग-अलग सही बात मालूम करके मुझे बतायें।

इसके मुताबिक़ सरदारों ने हर एक से अलग-अलग इजाज़त हासिल करने के बाद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बतलाया कि सब लोग दिल की खुशी से अपना हक़ छोड़ने के लिये तैयार हैं तब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ये सब कैदी उनको वापस कर दिये।

यही वे लोग थे जिनके तौबा कर लेने के बारे में मज़हूर तीसरी आयत में इरशाद फ़रमाया गया है:

ثُمَّ يَتُوبُ اللَّهُ مِنْ بَعْدِ ذَلِكَ..... الآية

ग़ज़वा-ए-हुनैन (हुनैन की जंग) में पेश आने वाले वाकिआत की जो तफ़्सील बयान की गयी है इसका कुछ हिस्सा तो खुद कुरआने करीम में बयान हुआ है और बाकी हदीस की विश्वसनीय रिवायतों से लिया गया है। (तफ़्सीरे मज़हरी व इब्ने कसीर)

अहकाम व मसाईल

इन वाकिआत के ज़िम्न में बहुत से अहकाम व हिदायतें और ज़िम्नी फ़वाईद आये हैं। वही इन वाकिआत को बयान करने का असल मक़सद हैं।

उक्त आयतों में सबसे पहली हिदायत तो यह दी गयी कि मुसलमानों को किसी वक़्त भी अपने संगठन और ताक़त पर घमण्ड न होना चाहिये। जिस तरह कमज़ोरी और बेसामानी के वक़्त उनकी नज़र अल्लाह तआला की मदद व नुसरत पर रहती है इसी तरह कुव्वत व ताक़त के वक़्त भी उनका मुकम्मल भरोसा सिर्फ़ अल्लाह तआला की इमदाद ही पर होना चाहिये।

ग़ज़वा-ए-हुनैन में मुसलमानों की संख्यात्मक अधिकता और लड़ाई के सामान के काफ़ी होने की वजह से कुछ सहाबा किराम की ज़बान पर जो बड़ा बोल आ गया था कि आज तो किसी की मजाल नहीं जो हमसे बाज़ी लेजा सके, अल्लाह तआला को अपनी इस महबूब जमाअत की ज़बान से ऐसे कलिमात पसन्द न आये, और उसका नतीजा यह हुआ कि शुरूआती हल्ले के वक़्त मुसलमानों के पाँव उखड़ गये और भागने लगे, फिर अल्लाह तआला ही की ग़ैबी मदद से यह मैदान फ़तह हुआ।

पराजित व मग़लूब काफ़िरों के मालों में अदल व

इन्साफ़ और एहतियात

दूसरी हिदायत इस वाक़िए से यह हासिल हुई कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ग़ज़वा-ए-हुनैन के लिये मक्का के पराजित ग़ैर-मुस्लिमों से जो जंग का सामान ज़िरहें और नेजे लिये थे, यह ऐसा मौक़ा था कि उनसे ज़बरदस्ती भी ये चीज़ें ली जा सकती थीं, मगर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने आरियत कहकर लिया और फिर सब को उनकी माँग के तौर पर ली हुई चीज़ें वापस कर दीं।

इस वाक़िए ने मुसलमानों को दुश्मनों के साथ भी पूरे अदल व इन्साफ़ और रहम व करम के मामले का सबक़ दिया।

तीसरी हिदायत उस इरशादे नबवी से हासिल हुई जिसमें हुनैन की तरफ़ जाते हुए खैफ़े बनी

कनाना में पड़ाव के वक़्त फ़रमाया कि कल हम ऐसे मक़ाम पर पड़ाव करेंगे जिसमें बैठकर हमारे दुश्मन मक्का के कुरैशियों ने मुसलमानों के खिलाफ़ बायकाट की करारदाद (प्रस्ताव) पर समझौता किया था। इसमें इशारा है कि जब मुसलमानों को हक़ तआला ने फ़तह व ताक़त अता फ़रमा दी तो अपने पिछले मुसीबत के दर्द को न भुला दें, ताकि अल्लाह तआला का शुक्र अदा हो सके। हवाज़िन के शिकस्त खाये हुए लोगों के बार-बार हमलावर होने और तीर बसाने के जवाब में रहमतुल-लिल्आलमीन की मुबारक ज़बान से बददुआ के बजाय उनके लिये हिदायत की दुआ मुसलमानों को यह सबक़ दे रही है कि मुसलमानों की जंग व जिहाद का मक़सद सिर्फ़ दुश्मन को पस्त व पराजित करना नहीं, बल्कि उनको हिदायत पर लाना है। इसलिये इसकी कोशिश से किसी वक़्त ग़फलत न होनी चाहिये।

तीसरी आयत ने यह हिदायत कर दी कि जो काफ़िर मुक़ाबले में मग़लूब (पराजित) हो जायें उनमें से भी मायूस न हों कि शायद अल्लाह तआला उनको फिर इस्लाम व ईमान की हिदायत दे दें, जैसा कि हवाज़िन के मण्डल के इस्लाम लाने के वाक़िए से साबित हुआ।

हवाज़िन कबीले के वपद की दरख़्वास्त पर उनके जंगी कैदियों की वापसी के वक़्त जब सहाबा-ए-किराम के मजमे से हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सवाल किया और मजमे की तरफ़ से यह आवाज़ें आयीं कि हम सब उनकी वापसी के लिये दिल की खुशी से रज़ामन्द हैं, तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसको काफ़ी न समझा बल्कि अलग-अलग हर एक की इजाज़त मालूम करने का एहतिमाम फ़रमाया।

इससे साबित हुआ कि हुक्क के मामले में जब तक दिल की खुशी का इत्मीनान न हो जाये किसी का हक़ लेना जायज़ नहीं, मजमे के रौब या लोगों की शर्म से किसी का ख़ामोश रहना रज़ामन्दी के लिये काफ़ी नहीं। इसी से हज़रात-ए-फ़ुक़हा ने फ़रमाया कि किसी शख्स पर अपने दबदबे और शान का रौब डालकर किसी दीनी मक़सद के लिये चन्दा करना भी दुरुस्त नहीं, क्योंकि ऐसे हालात में बहुत से शरीफ़ आदमी महज़ शर्मा-शर्मी कुछ दे देते हैं, पूरी रज़ामन्दी नहीं होती। इस तरह के माल में बरक़त भी नहीं होती।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا إِنَّمَا الْمُشْرِكُونَ نَجَسٌ فَلَا يَقْرَبُوا الْمَسْجِدَ
الْحَرَامَ بَعْدَ عَامِهِمْ هَذَا وَإِنْ خِفْتُمْ عَيْلَةً فَسَوْفَ يُغْنِيكُمُ اللَّهُ مِنْ فَضْلِهِ إِن شَاءَ مَا رَأَ
اللَّهُ عَلَيْهِمْ حَكِيمٌ ⑤

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू इन्नमल्-
मुशिरकू-न न-जसुन् फ़ला यक़्रबुल्
मस्जिदल्-हरा-म बअ-द आमिहिम्

ऐ ईमान वालो! मुशिरक जो हैं सो पलीद
(नापाक) हैं, सो नज़दीक न आने पायें
मस्जिदे हराम के इस साल के बाद, और
अगर तुम डरते हो फ़क्र (गुर्बत और

हाज़ा व इन् ख़िप्तुम् अल-तन्
फ़सौ-फ़ युग्नीकुमुल्लाहु मिन्
फ़ज़िलही इन् शा-अ, इन्नल्ला-ह
अलीमुन् हकीम (28)

तंगदस्ती) से तो आईन्दा गुनी कर देगा
तुमको अल्लाह अपने फ़ज़ल से अगर
चाहे, बेशक अल्लाह सब कुछ जानने
वाला, हिक्मत वाला है। (28)

खुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वाले! मुश्रिक लोग (अपने गन्दे और नापाक अक़ीदों की वजह से) बिल्कुल नापाक हैं, सो (इस नापाकी पर जो अहक़ाम निकलते हैं उनमें से एक यह है कि) ये लोग इस साल के बाद मस्जिदे-हराम (यानी हरम) के पास (भी) न आने पायें (यानी हरम के अन्दर दाख़िल न हों) और अगर तुमको (इस हुक्म के जारी करने से इस वजह से) तंगदस्ती का अन्देशा हो (कि लेन-देन इन्हीं से ज़्यादा जुड़ा हुआ है, जब ये न रहेंगे तो काम कैसे चलेगा) तो (खुदा पर भरोसा रखो) खुदा तुमको अपने फ़ज़ल से अगर चाहेगा (उनका) मोहताज न रखेगा, बेशक अल्लाह (अहक़ाम की मस्लेहतों को) ख़ूब जानने वाला है (और उन मस्लेहतों के पूरा करने के मामले में) बड़ा हिक्मत वाला है (इसलिये यह हुक्म मुक़र्रर किया और तुम्हारी गुर्बत व तंगदस्ती के ख़ात्मे का सामान भी कर देगा)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

सूर: तौबा के शुरू में काफ़िरों व मुश्रिकों से बराअत का ऐलान किया गया था, उपरोक्त आयत में बराअत के उस ऐलान से संबन्धित अहक़ाम का ज़िक्र है। बराअत के ऐलान का हासिल यह था कि साल भर के अरसे में तमाम काफ़िरों के समझौते और संधियाँ ख़त्म या पूरे कर दिये जायें, और ऐलान के एक साल बाद कोई मुश्रिक हरम की सीमाओं में न रहने पाये।

इस आयत में इसी का बयान एक ख़ास अन्दाज़ में किया गया है, जिसमें इस हुक्म की हिक्मत व मस्लेहत भी बतला दी और इसकी तामील में जो कुछ मुसलमानों को ख़तरे थे उनका भी जवाब दे दिया। इसमें लफ़ज़ नजस इस्तेमाल फ़रमाया है, जो नजासत के मायने में है, और नजासत कहा जाता है हर गन्दगी को, जिससे इनसान की तबीयत नफ़रत करे। इमाम राग़िब अस्फ़हानी रह. ने फ़रमाया कि इसमें वह नजासत भी दाख़िल है जो आँख, नाक या हाथ वगैरह से महसूस हो, और वह भी जो इल्म व अक्ल के ज़रिये मालूम हो, इसलिये लफ़ज़ नजस उस ग़िलाज़त और गन्दगी को भी शामिल है जो ज़ाहिरी तौर पर सब महसूस करते हैं, और उस बातिनी नजासत को भी जिसकी बिना पर शरअन वुजू या गुस्ल वाजिब होता है, जैसे जनाबत (नापाकी की हालत) या माहवारी व निफ़ास (बच्चे की पैदाईश के बाद आने वाले खून) के ख़त्म होने के बाद की हालत, और वह बातिनी नजासत भी जिसका ताल्लुक़ इनसान के दिल से है,

जैसे बुरे अक्कीदे और घटिया अख्लाक।

उक्त आयत में इन्नमा का लफ्ज़ लाया गया है जो खास और सीमित करने के लिये इस्तेमाल होता है, इसलिये 'इन्नमल् मुशिरकून न-जसुन' के मायने यह हो गये कि मुशिरक लोग निरी नजासत ही हैं, और सही बात यह है कि आम तौर पर मुशिरकों में तीनों किस्म की नजासतें (गंदगियाँ) होती हैं, क्योंकि बहुत सी जाहिरी नापाक चीज़ों को वे नापाक नहीं समझते, इसलिये उन जाहिरी नजासतों से भी नहीं बचते जैसे शराब और उससे बनी हुई चीज़ें, और अन्दरूनी नजासत से नापाकी के बाद पाक होने के गुस्ल वगैरह के तो वे मोतकिद (यकीन रखने वाले) ही नहीं। इसी तरह बुरे अक्कीदों और घटिया अख्लाक को भी वे कुछ नहीं समझते।

इसी लिये जिक्र हुई आयत में मुशिरकों को निरी नजासत करार देकर यह हुक्म दिया गया:

فَلَا يَقْرَبُوا الْمَسْجِدَ الْحَرَامَ بَعْدَ عَامِهِمْ هَذَا.

“यानी ऐसा करना चाहिये कि इस साल के बाद ये मुशिरक लोग मस्जिदे हराम के पास न जा सकें।”

मस्जिदे हराम का लफ्ज़ आम तौर पर तो उस जगह के लिये बोला जाता है जो बैतुल्लाह के गिर्द चारदीवारी से घिरी हुई है, लेकिन कुरआन व हदीस में कई बार यह लफ्ज़ मक्का के पूरे हरम के लिये भी इस्तेमाल हुआ है, जो कई मील मुरब्बा का रक्बा और चारों तरफ हज़रत इब्राहीम खलीलुल्लाह अलैहिस्सलाम की स्थापित की हुई सीमाओं से घिरा हुआ है, जैसा कि मेराज के वाकिए में “मिनल्-मस्जिदिल् हरामि” से सब के नज़दीक यही मायने मुराद लिये गये हैं। क्योंकि मेराज का वाकिआ परिचित मस्जिदे हराम के अन्दर से नहीं बल्कि हज़रत उम्मे हानी रज़ियल्लाहु अन्हा के मकान से हुआ है। इसी तरह आयते करीमा:

إِلَّا الَّذِينَ عَاهَدْتُمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ.

में मस्जिदे हराम से पूरा हरम ही मुराद है, क्योंकि सुलह के जिस वाकिए का इसमें जिक्र है वह हुदैबिया के स्थान पर हुआ है, जो हरम की हद्दों से बाहर उससे मिला हुआ है। (जस्सास)

इसलिये आयत के मायने यह हो गये कि इस साल के बाद मुशिरकों का दाखिला हरम की सीमाओं में वर्जित और प्रतिबन्धित है। इस साल से मुराद कौनसा साल है, कुछ हज़रात ने फरमाया कि सन् 10 हिजरी मुराद है, मगर मुफ़सिरीन की अवसरियत के नज़दीक सन् 9 हिजरी वरीयता प्राप्त है, क्योंकि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बराअत का ऐलान हज़रत सिद्दीके अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु और अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु के ज़रिये हज के दिनों में इसी 9 हिजरी में कराया है, इसलिये सन् 9 हिजरी से 10 हिजरी तक मोहलत का साल है, 10 हिजरी के बाद यह क़ानून नाफिज़ हुआ।

मुशिरकों के मस्जिदे हराम में दाखिले की मनाही का मतलब

मुशिरकीन के मस्जिदे हराम में दाखिले की मनाही का मतलब और यह कि यह मनाही

मस्जिदे हराम की खुसूसियत है या सब मस्जिदों के लिये आम है।

उक्त आयत में जो हुक्म दिया गया है कि सन् 10 हिजरी के बाद से कोई मुशिरक मस्जिदे हराम के पास न जाने पाये इसके बारे में तीन बातें गौर-तलब हैं, कि यह हुक्म मस्जिदे हराम के साथ मख्सूस है या दुनिया की दूसरी मस्जिदें भी इसी हुक्म में दाखिल हैं। और अगर मस्जिदे हराम के साथ मख्सूस है तो किसी मुशिरक का दाखिला मस्जिदे हराम में पूरी तरह मना है या सिर्फ हज व उमरे के लिये दाखिले की मनाही है, वैसे जा सकता है। तीसरे यह कि आयत में यह हुक्म मुशिरकों का बयान किया गया है, काफिर अहले किताब भी इसमें शामिल हैं या नहीं?

इन तफसीलात के मुताल्लिक चूँकि कुरआन के अलफ़ाज़ ख़ामोश हैं इसलिये कुरआनी इशारात और हदीस की रिवायतों को सामने रखकर मुज्ताहिद इमामों ने अपने अपने इज्तिहाद (गौर व फ़िक्र और कुरआन व हदीस में खोज) के मुताबिक अहकाम बयान फरमाये। इस सिलसिले में पहली बहस इसमें है कि कुरआने करीम ने मुशिरकों को नजस (नापाक और गंदगी) किस एतिबार से करार दिया है, अगर ज़ाहिरी नजासत या अन्दरूनी नापाकी वगैरह मुराद है तो ज़ाहिर है कि किसी मस्जिद में नजासत का दाखिल करना जायज़ नहीं। इसी तरह जनाबत वाले (यानी नापाक, जिस पर गुस्ल बाजिब हो) शख्स या माहवारी व ज़चगी वाली औरत का दाखिला किसी मस्जिद में जायज़ नहीं। और अगर इसमें नजासत से मुराद कुफ़ व शिर्क की बातिनी नजासत है तो मुम्किन है कि इसका हुक्म ज़ाहिरी नजासत से अलग हो।

तफसीरे कुतुबी में है कि मदीना के फ़ुकहा इमाम मालिक वगैरह ने फरमाया कि मुशिरक लोग हर मायने के एतिबार से नापाक हैं, ज़ाहिरी नजासत से भी उमूमन बचाव नहीं करते और जनाबत (नापाक हो जाने) वगैरह के बाद गुस्ल का भी एहतिमाम नहीं करते, और कुफ़ व शिर्क की अन्दरूनी नजासत तो उनमें है ही, इसलिये यह हुक्म तमाम मुशिरकों और तमाम मस्जिदों के लिये आम है। और इसकी दलील में हज़रत उमर बिन अब्दुल-अज़ीज़ रह. का यह फरमान पेश किया जिसमें उन्होंने शहरों के हाकिमों को हिदायत की थी कि काफिरों को मस्जिदों में दाखिल न होने दें, इस फरमान में इसी आयते मज़कूरा को तहरीर फरमाया था।

साथ ही यह कि हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इश्शाद है:

لَا أَحِلُّ الْمَسْجِدَ لِحَائِضٍ وَلَا جُنُبٍ

“यानी मस्जिद में दाखिल होना किसी माहवारी वाली औरत या जुनुबी (जिस पर गुस्ल फर्ज़ हो, यानी नापाक) शख्स के लिये मैं हलाल नहीं समझता।”

और मुशिरक व काफिर लोग उमूमन नापाकी की हालत में गुस्ल का एहतिमाम नहीं करते, इसलिये उनका दाखिला मसाजिद में वर्जित और मना है।

इमाम शाफई रह. ने फरमाया कि यह हुक्म मुशिरकों, काफिरों और अहले किताब सब के लिये आम है, मगर मस्जिदे हराम के लिये मख्सूस है, दूसरी मसाजिद में उनका दाखिला वर्जित नहीं। (तफसीरे कुतुबी) और दलील में समामा इब्ने उसाल का बाकिआ पेश करते हैं कि

मुसलमान होने से पहले यह गिरफ़्तार हुए तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इनको मस्जिदे नबवी के एक सुतून से बाँध दिया था।

इमामे आजम अबू हनीफ़ा रह. के नज़दीक आयत में मुशिरकों को मस्जिदे हराम के क़रीब जाने से मना करने का मतलब यह है कि आईन्दा साल से उनको मुशिरकाना तर्ज पर हज व उमरा करने की इजाज़त न होगी, और दलील यह है कि जिस वक़्त हज के मौसम में हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु के ज़रिये बराअत का ऐलान कर दिया गया तो उसमें ऐलान इसी का था कि:

لَا يَحُجُّ بَعْدَ الْعَامِ مُشْرِكٌ

जिसमें ज़ाहिर कर दिया गया था कि इस साल के बाद कोई मुशिरक हज न कर सकेगा, इसलिये इस आयत में 'अलमस्जिदल् हराम' के मायने भी इस ऐलान के मुताबिक़ यही हैं कि उनको हज व उमरे की मनाही कर दी गयी, और किसी ज़रूरत से अमीरुल-मोमिनीन की इजाज़त से दाख़िल हो सकते हैं। सकीफ़ के प्रतिनिधि मण्डल का वाकिआ इसका सुबूत है कि फ़त्हे-मक्का के बाद जब उनका एक वफ़द (प्रतिनिधि मण्डल) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ तो आपने उनको मस्जिद में ठहराया, हालाँकि ये लोग उस वक़्त काफ़िर थे। सहाबा किराम ने अर्ज भी किया- या रसूलुल्लाह! ये नापाक कौम है, तो आपने फ़रमाया कि मस्जिद की ज़मीन पर इन लोगों की नापाकी का कोई असर नहीं पड़ता। (जस्सास)

इस रिवायत ने यह बात भी स्पष्ट कर दी कि कुरआने करीम में मुशिरकों को नापाक और गन्दगी कहने से उनकी कुफ़्र व शिर्क की गन्दगी मुराद है, जैसा कि इमामे आजम अबू हनीफ़ा रह. का मस्तक़ है। इसी तरह हज़रत जाबिर इब्ने अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि कोई मुशिरक मस्जिद के पास न जाये, सिवाय उसके कि वह किसी मुसलमान का गुलाम या बाँदी हो तो ज़रूरत की वजह से उसको दाख़िल कर सकते हैं। (तफ़सीरे कुर्तुबी)

यह हदीस भी इसका सुबूत है कि ज़ाहिरी गन्दगी को सबब करार देकर मुशिरकों को मस्जिदे हराम से नहीं रोका गया वरना इसमें गुलाम और बाँदी की कोई तख़सीस (खास करना) न थी, बल्कि बुनियाद असल कुफ़्र व शिर्क और उनके गुलबे का ख़तरा है, गुलाम व बाँदी में यह ख़तरा नहीं, उनको इजाज़त दे दी गयी। इसके अलावा ज़ाहिरी नापाकी के एतिबार से तो मुसलमान भी इसमें दाख़िल हैं कि नजासत या गुस्ल वाजिब होने की हालत में उनके लिये भी मस्जिदे हराम का दाख़िला वर्जित और मना है।

और अक्सर उलेमा की तफ़सीर के मुताबिक़ मस्जिदे हराम से इस जगह जब पूरा हरम मुराद है तो वह भी इसी को चाहता है कि यह मनाही ज़ाहिरी नापाकी व गन्दगी की बुनियाद पर नहीं बल्कि कुफ़्र व शिर्क की नजासत की बिना पर है। इसी लिये सिर्फ़ मस्जिदे हराम में उनका दाख़िला मना और वर्जित नहीं किया गया बल्कि पूरे सम्मानित हरम में वर्जित और मना करार

दिया गया, क्योंकि वह इस्लाम का एक क़िला है, उसमें किसी गैर-मुस्लिम को रखना ग़वारा नहीं किया जा सकता।

इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा रह. की इस तहक़ीक़ का हासिल यह है कि अगरचे नज़ासतों (गंदगियों व नापाकियों) से मस्जिदों को पाक करना भी एक मुस्तक़िल मसला है, जो क़ुरआन मजीद और हदीसों से साबित है, लेकिन इस आयत का ताल्लुक इस मसले से नहीं बल्कि इस्लाम के उस सियासी हुक्म से है जिसका ऐलान सूर: बराअत के शुरू में किया गया है, कि जितने मुश्रिक मक्का में मौजूद थे उन सबसे सम्मानित हरम को ख़ाली कराना मक़सूद था, लेकिन अदल व इन्साफ़ और रहम व करम के तकाज़े से मक्का फ़तह होते ही सब को एक दम ख़ारिज करने का हुक्म नहीं दिया गया, बल्कि जिन लोगों से किसी ख़ास मियाद का समझौता था और वे लोग उस समझौते पर कायम रहे तो उनके समझौते की मियाद पूरी करके और बाकियों को कुछ-कुछ मोहलत देकर साल भर के अन्दर इस तजवीज़ को पूरा करना पेशे नज़र था। इसी का बयान इस आयत में आया कि इस साल के बाद मुश्रिकों का दाख़िला हरम की हदों में मना और वर्जित हो जायेगा। वे मुश्रिकाना तरीक़े पर हज़ व उमरा न करने पायेंगे।

और जिस तरह सूर: तौबा की आयतों में स्पष्ट तौर पर यह बयान कर दिया गया है कि सन् 9 हिजरी के बाद कोई मुश्रिक हरम की हदों में दाख़िल न हो सकेगा, हदीस की रिवायतों में हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस दायरे को और फैलाकर पूरे अरब ख़िल्ले के लिये भी हुक्म दे दिया था, मगर हुज़ुरे पाक के दौर में इसकी तक़मील न होने पाई, फिर सिद्दीक़े अक़बर रज़ियल्लाहु अन्हु भी दूसरे हंगामी मसाईल की वजह से इस पर तवज्जोह न दे सके, हज़रत फ़ारुक्के आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने अपने ज़माने में इस हुक्म को नाफ़िज़ फ़रमाया।

अब रहा काफ़िरों की नज़ासत (नापाकी व गंदगी) और मस्जिदों को नज़ासतों से पाक करने का मसला, वह अपनी जगह है, जिसके मसाईल फ़िक्हा की किताबों में तफ़सील से बयान हुए हैं। कोई मुसलमान भी जाहिरी नज़ासत (नापाकी व गंदगी) या नापाकी की हालत में किसी मस्जिद में दाख़िल नहीं हो सकता, और आम काफ़िर व मुश्रिक हों या अहले किताब वे भी उमूमन इन नज़ासतों से पाक नहीं होते, इसलिये बिना सख़्त ज़रूरत के उनका दाख़िला भी किसी मस्जिद में जायज़ नहीं।

इस आयत की रू से जब काफ़िर व मुश्रिक का दाख़िला हरम में मना और वर्जित कर दिया गया तो मुसलमानों के सामने एक आर्थिक समस्या यह पेश आयी कि मक्का में कोई पैदावार नहीं, बाहर के आने वाले ही अपने साथ ज़रूरत की चीज़ें लाते थे, और हज़ के मौसम में मक्का वालों के लिये सब ज़रूरतें जमा हो जाती थीं। अब उनका दाख़िला मना हो जाने के बाद काम कैसे चलेगा? इसका जवाब क़ुरआन में यह दिया गया कि:

وَأَنْ خِفْتُمْ غَيْلَةً فَسَوْفَ يُغْنِيَكُمْ اللَّهُ مِنْ فَضْلِهِ إِنْ شَاءَ.

“यानी अगर तुम्हें आर्थिक समस्याओं का डर हो तो समझ लो कि तमाम मख़्लूक की रोज़ी का निज़ाम अल्लाह तआला के हाथ में है। अगर वह चाहेंगे तो तुम्हें उन सब काफ़िरों से

बेपरवाह कर देंगे। और यहाँ “अगर चाहेंगे” की कैद लगाने का मतलब यह नहीं कि इसमें कोई शक व शुक्का है, बल्कि इशारा इस बात की तरफ है कि सिर्फ़ माही असबाब पर नज़र रखने वालों के लिये अगरचे यह बात बहुत दूर की और मुश्किल नज़र आती है कि ज़ाहिरी तौर पर रोज़ी का ज़रिया और माध्यम यही गैर-मुस्लिम थे, इनका दाखिला वर्जित और मना करना अपने लिये रोज़ी व रोज़गार के साधनों को ख़त्म करने के बराबर है, मगर उनको मालूम होना चाहिये कि अल्लाह तआला इन माही असबाब (माध्यमों और साधनों) का मोहताज नहीं, जब उनका इरादा किसी काम के बारे में हो जाये तो सब असबाब मुवाफ़िक़ होते चले जाते हैं, बस चाहने की देर है और कुछ नहीं। इसलिये इन् शा-अ फ़रमाकर इसकी तरफ़ इशारा कर दिया।

قَاتِلُوا الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِاللَّهِ وَلَا بِالْيَوْمِ الْآخِرِ وَلَا يُحَرِّمُونَ مَا حَرَّمَ
 اللَّهُ وَرَسُولُهُ وَلَا يَدِينُونَ دِينَ الْحَقِّ مِنَ الَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ حَتَّى يُعْطُوا الْجِزْيَةَ عَنْ يَدٍ وَهُمْ
 صَغِيرُونَ ۖ وَقَالَتِ الْيَهُودُ عُزَيْرٌ ابْنُ اللَّهِ وَقَالَتِ النَّصَارَى الْمَسِيحُ ابْنُ اللَّهِ ذَلِكَ قَوْلُهُمْ
 بِأَفْوَاهِهِمْ يُضَاهَوْنَ قَوْلَ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ قَبْلُ قَتَلَهُمُ اللَّهُ إِنْ يَتُوفَكُونَ ۖ

कातिलुल्लजी-न ला युअ्मिनु-न
 बिल्लाहि व ला बिल्यौमिल्-आख़िरि
 व ला युहरिमु-न मा हरमल्लाहु व
 रसूलुहु व ला यदीनु-न दीनल्-हक्कि
 मिनल्लजी-न ऊतुल्किता-ब हत्ता
 युअ्तुल् जिज़य-त अय्यदिंव्-व हुम्
 सागिरुन (29) ❀

व कालतिल्-यहूदु अज़ैरु-निबुल्लाहि
 व कालतिन्नसारल्-मसीहुबुल्लाहि,
 ज़ालि-क कौलुहुम् बिअफ़वाहिहिम्
 युज़ाहिऊ-न कौलल्लजी-न क-फ़रु
 मिन् कब्लु, कात-लहुमुल्लाहु अन्ना
 युअ्फ़कून् (30)

लड़ो उन लोगों से जो ईमान नहीं लाते
 अल्लाह पर और न आख़िरत के दिन पर,
 और न हराम जानते हैं उसको जिसको
 हराम किया अल्लाह ने और उसके रसूल
 ने, और न कुबूल करते हैं दीन सच्चा उन
 लोगों में से जो अहले किताब हैं, यहाँ
 तक कि वे जिज़या दें अपने हाथ से
 ज़लील होकर। (29) ❀

और यहूद ने कहा कि उज़ैर अल्लाह का
 बेटा है और ईसाईयों ने कहा कि मसीह
 अल्लाह का बेटा है। ये बातें कहते हैं
 अपने मुँह से, रीस करने लगे पहले
 काफ़िरों की बात की, हलाक करे उनको
 अल्लाह, कहाँ से फिरे जाते हैं। (30)

खुलासा-ए-तफसीर

अहले किताब जो कि न खुदा पर (पूरा-पूरा) ईमान रखते हैं और न क़ियामत के दिन पर (पूरा ईमान रखते हैं), और न उन चीज़ों को हराम समझते हैं जिनको खुदा तआला ने और उसके रसूल (मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने हराम बतलाया है, और न सच्चे दीन (इस्लाम) को कुबूल करते हैं, उनसे यहाँ तक लड़ो कि वे मातहत होकर और रइय्यत बनकर जिज़या "यानी इस्लामी हुक्मत में रहने का टैक्स" देना मन्ज़ूर करें।

और यहूद (में से कुछ) ने कहा कि (नऊजु बिल्लाह) उज़ैर (अलैहिस्सलाम) खुदा के बेटे हैं, और ईसाइयों (में से अक्सर) ने कहा कि मसीह (अलैहिस्सलाम) खुदा के बेटे हैं, यह उनका कौल है उनके मुँह से कहने का (जिसका वास्तव में कहीं नाम व निशान नहीं)। ये भी उन लोगों जैसी बातें करने लगे जो इनसे पहले काफ़िर हो चुके हैं (मुराद अरब के मुश्रिक लोग हैं जो फ़रिश्तों को खुदा की बेटियाँ कहते थे। मतलब यह कि उनको तो ये भी काफ़िर समझते हैं, फिर उन्हीं के जैसी कुफ़्रिया बातें बकते हैं। और पहले होना इस मायने पर है कि मुश्रिक लोगों की गुमराही पुरानी थी) खुदा इनको ग़ारत करे, ये किधर उल्टे जा रहे हैं (कि खुदा पर ऐसे बोहतान बाँधते हैं, ये तो उनकी कुफ़्रिया बातें थीं)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत में मक्का के मुश्रिकों से जिहाद व क़िताल का ज़िक्र था, इन आयतों में अहले किताब से जिहाद का बयान है। यह गोया ग़ज़वा-ए-तबूक की भूमिका है जो अहले किताब के मुकाबले में पेश आया है। तफ़सीर दुर्र मन्सूर में मुफ़स्सिर कुरआन हज़रत मुजाहिद रह. से नक़ल किया गया है कि ये आयतें ग़ज़वा-ए-तबूक के बारे में नाज़िल हुई हैं, और लफ़ज़ अहले किताब अगरचे अपने लुगवी मायने के एतिबार से हर उस काफ़िर जमाअत पर हावी है जो किसी आसमानी किताब पर ईमान रखती हो, लेकिन कुरआने करीम की परिभाषा में यह लफ़ज़ सिर्फ़ यहूदियों व ईसाइयों के लिये इस्तेमाल हुआ है, क्योंकि अरब के आस-पास में अहले किताब के यही दो फ़िर्के परिचित थे, इसी लिये कुरआने करीम ने अरब के मुश्रिकों को संबोधित करते हुए फ़रमाया है:

أَنْ تَقُولُوا إِنَّمَا أُنْزِلَ الْكِتَابُ عَلَى طَائِفَتَيْنِ مِنْ قَبْلِنَا وَإِنْ كُنَّا عَنْ دِرَاسَتِهِمْ لَغَافِلِينَ ۝

और जिहाद व जंग का जो हुक्म इस आयत में अहले किताब के मुकाबले में दिया गया है वह दर हकीकत अहले किताब के साथ मख़सूस नहीं, बल्कि काफ़िरों की तमाम जमाअतों का यही हुक्म है, क्योंकि इस आयत में जंग के हुक्म की जो वजह आगे बयान की गयी है वो सब काफ़िरों में साझा हैं, तो हुक्म भी साझा और संयुक्त होना चाहिये, मगर ज़िक्र में अहले किताब की खुसूसियत इसलिये की गयी कि यह मुम्किन था कि मुसलमानों को उनके मुकाबले में जिहाद

व किताब (जंग) करने से इस बिना पर झिझक हो कि ये लोग किसी दर्जे में ईमान रखते हैं, तौरात व इंजील और हज़रत मूसा व ईसा अलैहिमस्सलाम पर इनका ईमान है, तो मुश्किन था कि पहले नबियों और उनकी किताबों के साथ इनका मन्सूब होना मुसलमानों के लिये जिहाद से रुकावट का सबब बन जाये, इसलिये विशेष तौर पर उनके साथ जंग व किताब का जिक्र कर दिया गया।

दूसरे इस जगह जिक्र में अहले किताब के साथ तख़सीस (खास) करने से इस तरफ़ भी इशारा हो गया कि एक हैसियत से ये लोग ज्यादा सज़ा के मुस्तहिक हैं, क्योंकि ये इल्म रखने वाले थे, इनके पास तौरात व इंजील का इल्म था, जिनमें आखिरी नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का जिक्र मुबारक और हुलिया तक तफ़सील से बयान हुआ है। उस इल्म के बावजूद इनका कुफ़्र व इनकार और इस्लाम व मुसलमानों के खिलाफ़ साजिशें, तो एक हैसियत से इनका जुर्म ज्यादा सज़ा हो गया, इसलिये खुसूसी तौर पर इनसे जंग का जिक्र किया गया।

जंग के हुक्म के चार कारण इस आयत में बताये गये हैं- अव्वल:

لَا يُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ

यानी वे अल्लाह पर ईमान नहीं रखते। दूसरे:

وَلَا بِالْيَوْمِ الْآخِرِ

यानी आखिरत पर ईमान नहीं रखते। तीसरे:

لَا يُحَرِّمُونَ مَا حَرَّمَ اللّٰهُ

यानी उन चीज़ों को हराम नहीं समझते जिनको अल्लाह ने हराम बतलाया है। चौथे:

لَا يَدِينُونَ دِينَ الْحَقِّ

यानी सच्चे दीन को कुबूल नहीं करते।

यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि अहले किताब यहूदी व ईसाई तो बज़ाहिर खुदा तआला पर भी ईमान रखते हैं और आखिरत व क़ियामत के भी कायल हैं, फिर इन चीज़ों पर उनके ईमान की नफ़ी क्यों की गयी? वजह यह है कि महज़ ईमान लाने के अलफ़ाज़ तो काफी नहीं, जिस तरह का ईमान अल्लाह तआला के नज़दीक मतलूब है, जब उस तरह का ईमान न हुआ तो वह न होने के हुक्म में है। यहूदियों व ईसाईयों ने अगरचे ऐलानिया तौर पर तौहीद का इनकार नहीं किया मगर जैसा कि अगली आयत में आ रहा है कि यहूद ने हज़रत उज़ैर अलैहिस्सलाम को और ईसाईयों ने हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को खुदा का बेटा कहकर उसकी खुदाई में शरीक ठहरा दिया, इसलिये उनका तौहीद का इक़रार बेकार और ईमान का दावा ग़लत हो गया।

इसी तरह आखिरत पर जिस तरह का ईमान मतलूब है वह भी अक्सर अहले किताब में नहीं रहा था। उनमें से बहुत से लोग यह अक़ीदा रखते थे कि क़ियामत में मादी जिस्मों के साथ दोबारा उठना और ज़िन्दा होना न होगा, बल्कि एक किस्म की रूहानी ज़िन्दगी होगी, और जन्नत व दोज़ख़ भी कोई खास मक़ामात नहीं, रूह की खुशी का नाम जन्नत और रंज का नाम

जहन्नम है, जो अल्लाह के इरशादात के सरासर खिलाफ है, इसलिये आखिरत के दिन पर भी उनका ईमान दर हकीकत ईमान न हुआ।

तीसरी चीज़ जो यह फरमाई कि जिन चीज़ों को अल्लाह तआला ने हराम करार दिया है ये उनको हराम नहीं समझते। इससे मुराद यह है कि बहुत सी चीज़ें जिनको तौरात या इंजील ने हराम करार दिया था ये उसकी हुर्मत के कायल नहीं, जैसे सूद, इसी तरह और बहुत सी खाने पीने की चीज़ें जो तौरात व इंजील में हराम करार दी गयी थीं इन्होंने उनको हराम न समझा, और उनमें मुब्तला हो गये।

इससे यह मसला भी मालूम हो गया कि जिस चीज़ को अल्लाह तआला ने हराम करार दिया है उसको हलाल समझना सिर्फ एक गुनाह करने ही का जुर्म नहीं बल्कि कुफ़्र है। इसी तरह किसी हलाल चीज़ को हराम करार देना भी कुफ़्र है, हाँ अगर हराम को हराम समझते हुए अमली कोताही ग़लती से हो जाये तो वह कुफ़्र नहीं, बुराई और गुनाह है।

उक्त आयत में इन लोगों से जिहाद व क़िताल (जंग) करते रहने की एक हद और इन्तिहा भी बतलाई है:

حَتَّىٰ يُعْطُوا الْجِزْيَةَ عَنْ يَدٍ وَهُمْ صَاغِرُونَ ۝

यानी जंग का यह हुक्म उस वक़्त तक जारी रहेगा जब तक कि वे मातहत होकर, रइय्यत बनकर जिज़या (टैक्स) देना मन्ज़ूर न कर लें।

जिज़या के लफ़्ज़ी मायने बदले और जज़ा के हैं, शरीअत की परिभाषा में इससे मुराद वह रक़म है जो काफ़िरों से क़त्ल के बदले में ली जाती है।

वजह यह है कि कुफ़्र व शिर्क अल्लाह और रसूल की बगावत है, जिसकी असली सज़ा क़त्ल है, मगर अल्लाह तआला ने अपनी कामिल रहमत से उनकी सज़ा में यह कमी कर दी कि अगर वे इस्लामी हुक्मत की रइय्यत बनकर आम इस्लामी क़ानून के मातहत रहना मन्ज़ूर करें तो उनसे एक मामूली रक़म जिज़ये की लेकर छोड़ दिया जाये, और इस्लामी मुल्क का बाशिन्दा (रहने वाला) होने की हैसियत से उनकी जान व माल, आबरू की हिफ़ाज़त इस्लामी हुक्मत के ज़िम्मे होगी। उनकी मज़हबी रस्मों में कोई रोक-टोक न की जाये, इसी रक़म को जिज़या कहा जाता है।

जिज़ये का निर्धारण अगर आपसी समझौते और रज़ामन्दी से हो तो शरअन उसकी कोई हद बन्दी नहीं, जितनी मिक्दार (मात्रा) और जिस चीज़ पर आपसी समझौता सुलह का हो जाये वही उनसे लिया जायेगा, जैसा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने नजरान वालों के साथ ऐसा ही मामला फरमाया कि उनकी पूरी जमाअत से सालाना दो हज़ार हुल्ले देने पर समझौता हो गया। हुल्ला दो कपड़ों के जोड़े को कहते हैं, एक तहबन्द एक चादर। हर हुल्ले की कीमत का अन्दाज़ा भी तय कर दिया गया था कि एक औकिया चाँदी की कीमत का होगा, औकिया चालीस दिरहम यानी हमारे वज़न के एतिबार से तक्रीबन साढ़े ग्यारह तौले चाँदी होती है।

इसी तरह बनू तग़लिब से हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु का इस पर समझौता हुआ कि उनका जिज़या इस्लामी ज़कात के हिसाब से वसूल किया जाये, मगर ज़कात से दुगना।

और अगर मुसलमानों ने किसी मुल्क को जंग के ज़रिये फ़तह किया, फिर वहाँ के बाशिन्दों की जायदादों को उन्हीं की मिल्कियत पर बरकरार रखा, और वे रइय्यत बनकर रहने पर रज़ामन्द हो गये तो उनके जिज़ये की मुक़रर दर यह होगी जो हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने अपनी ख़िलाफ़त के ज़माने में नाफ़िज़ फ़रमाई कि सरमायेदार मालदारों से चार दिरहम और दरमियानी हालत वालों से इसका आधा सिर्फ़ दो दिरहम, और ग़रीब से जो तन्दुरुस्त और मेहनत मज़दूरी या कारीगरी व तिजारत वग़ैरह के ज़रिये कमाता है उससे इसका भी आधा सिर्फ़ एक दिरहम माहाना, यानी साढ़े तीन माशे चाँदी या उसकी कीमत ली जाये, और जो बिल्कुल ग़रीब या अपाहिज या अपंग व विकलांग हैं उनसे कुछ न लिया जाये। इसी तरह औरतों, बच्चों, बूढ़ों और उनके दुनिया से किनाराक़श धार्मिक पेशवाओं से कुछ न लिया जाये।

इतनी थोड़ी और मामूली मात्रा के लेने के लिये भी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हिदायतें ये थीं कि किसी शख्स पर उसकी ताक़त से ज़्यादा भार न डाला जाये, और जो शख्स किसी ग़ैर-मुस्लिम बाशिन्दे पर जुल्म करेगा तो मैं क़ियामत के दिन ज़ालिम के मुक़ाबले में उस ग़ैर-मुस्लिम की हिमायत करूँगा। (तफ़सीरे मज़हरी)

इसी तरह की रिवायतों से कुछ फ़िका के इमामों का मज़हब यह है कि दर असल जिज़ये की कोई ख़ास दर शरीअत में मुक़रर नहीं है, बल्कि हाकिमे वक़्त की मर्ज़ी और बेहतर समझने पर है, उन लोगों के हालात का जायज़ा लेकर उसके मुनासिब तजवीज़ करें।

इस बयान से यह हकीक़त भी स्पष्ट हो गयी कि जिज़या काफ़िरों से क़त्ल की सज़ा ख़त्म करने का मुआवज़ा है, इस्लाम का बदला नहीं। इसलिये यह शुब्हा नहीं हो सकता कि थोड़े से दाम लेकर इस्लाम से विमुख होने और कुफ़्र पर कायम रहने की इजाज़त कैसे दे दी गयी, और इसकी वाज़ेह दलील यह है कि अपने मज़हब पर कायम रहते हुए इस्लामी हुकूमत में रहने की इजाज़त बहुत से उन लोगों को भी मिलती है जिनसे जिज़या नहीं लिया जाता, मसलन औरतें, बच्चे, बूढ़े, मज़हबी पेशवा, अपाहिज माज़ूर। अगर जिज़या इस्लाम का बदला होता तो उनसे भी लिया जाना चाहिये था।

उक्त आयत में जिज़या देने के साथ जो “अंय-यदिन्” फ़रमाया है इसमें हर्फ़ अन् सबब के मायने में और यदिन् कुव्वत व ग़लबे के मायने में है। और मायने यह हैं कि यह जिज़ये का देना इख़्तियारी चन्दे या ख़ैरात के तौर पर न हो बल्कि इस्लामी ग़लबे को तस्लीम करने और उसके मातहत रहने की हैसियत से हो (जैसा कि तफ़सीर रुहुल-मअानी में है) और ‘व हुम् सागिरून’ के मायने इमाम शाफ़ई रह. की तफ़सीर के मुताबिक़ ये हैं कि वे लोग इस्लाम के आम (जनरल) क़ानून के पालन को अपने ज़िम्मे लाज़िम करार दें। (रुहुल-मअानी व मज़हरी)

और इस आयत में जो यह हिदायत की गयी है कि जब ये लोग जिज़या अदा करना मन्ज़ूर कर लें तो जंग बन्द कर दी जाये, इसमें फ़ुक़हा की अक्सरियत के नज़दीक़ तमाम काफ़िर

शामिल हैं, चाहे अहले किताब हों या गैर-अहले किताब, अलबत्ता अरब के मुशरिक लोग इस हुक्म से अलग और बाहर हैं, कि उनसे जिज्या कुबूल नहीं किया गया।

दूसरी आयत में इसी मज़मून की और अधिक तफसील है, जिसका जिक्र पहली आयत में संक्षिप्त रूप से आया है कि ये अहले किताब अल्लाह पर ईमान नहीं रखते, इस दूसरी आयत में फरमाया कि यहूद तो हज़रत उज़ैर अलैहिस्सलाम को खुदा का बेटा कहते हैं और ईसाई हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को, इसलिये उनका तौहीद (अल्लाह को एक मानने) और ईमान का दावा ग़लत हुआ। फिर फरमाया:

ذَلِكَ قَوْلُهُمْ بِأَفْوَاهِهِمْ.

“यानी ये उनका कौल है उनके मुँह से” इसके मायने यह भी हो सकते हैं कि ये लोग साफ़ तौर पर अपनी ज़बानों से इसका इक़्रार करते हैं, कोई छुपी चीज़ नहीं। और ये मायने भी हो सकते हैं कि कुफ़्र का यह कलिमा सिर्फ़ उनकी ज़बानों पर है, न इसकी कोई वजह बता सकते हैं न दलील। फिर इरशाद फरमाया:

يُضَاهِيُونَ قَوْلَ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ قَبْلُ. قَتَلَهُمُ اللَّهُ أَلَىٰ يُؤْلَكُونَ ۝

“यानी ये उन लोगों के जैसी बातें करने लगे जो इनसे पहले काफ़िर हो चुके हैं, खुदा इनको ग़ारत करे, ये किधर उल्टे जा रहे हैं।”

मतलब यह है कि यहूदी व ईसाई नबियों को खुदा का बेटा कहने में ऐसे ही हो गये जैसे पिछले काफ़िर व मुशरिक लोग थे, कि फ़रिश्तों को और लात व मनात को खुदा की बेटियाँ कहते थे।

اتَّخَذُوا أَحْبَابَهُمْ وَرُهْبَانَهُمْ أَرْبَابًا مِنْ دُونِ اللَّهِ

وَالْمَسِيحَ ابْنَ مَرْيَمَ، وَمِمَّا أُمِرُوا إِلَّا لِيَعْبُدُوا إِلَهًا وَاحِدًا لَا إِلَهَ إِلَّا هُوَ سُبْحَنَهُ عَمَّا يُشْرِكُونَ ॥

يُرِيدُونَ أَنْ يُطْفِئُوا نُورَ اللَّهِ بِأَفْوَاهِهِمْ وَيَأْبَىٰ اللَّهُ إِلَّا أَنْ يَتِمَّ نُورُهُ وَلَوْ كَرِهَ الْكَافِرُونَ ॥ هُوَ

الَّذِي أَرْسَلَ رَسُولَهُ بِالْهُدَىٰ وَدِينِ الْحَقِّ لِيُظْهِرَهُ عَلَى الدِّينِ كُلِّهِ ۚ وَلَوْ كَرِهَ الْمُشْرِكُونَ ॥

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا إِن كَثِيرًا مِنَ الْآخِبَارِ وَالرُّهْبَانِ كَيَّاكُلُونَ أَمْوَالَ النَّاسِ بِالْبَاطِلِ وَ

يَصُدُّونَ عَنْ سَبِيلِ اللَّهِ وَالَّذِينَ يَكْنِزُونَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَا يَنْفِقُونَهَا فِي سَبِيلِ اللَّهِ ۖ

فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ أَلِيمٍ ۝ يَوْمَ يُخْتِىٰ عَلَيْهَا فِي نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوَىٰ بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوبُهُمْ

وَوُجُوهُهُمْ ۚ هَذَا مَا كُنْتُمْ لَا تُفْسِكُمْ فَذُوقُوا مَا كُنْتُمْ تَكْنِزُونَ ॥

अर्बाबम् मिन् दूनिल्लाहि
 वल्मसीहब्-न मर्य-म व मा उमिरु
 इल्ला लियअबुदू इलाहंवाहिदन् ला
 इला-ह इल्ला हु-व, सुब्हानहू अम्मा
 युशिरकून (31) युरीदू-न अय्युत्फिऊ
 नूरल्लाहि बिअफ़वाहिहिम् व
 यअबल्लाहु इल्ला अय्युतिम्-म नूरहू
 व लौ करिहल् काफिरून (32)
 हुवल्लजी अर्स-ल रसूलहू बिल्हुदा व
 दीनिल्-हदिक् लियुज़िह-रहू
 अलद्दीनि कुल्लिही व लौ करिहल्
 मुशिरकून। (33) ● या
 अय्युहल्लजी-न आमनू इन्-न
 कसीरम् मिनल् अह्वारि वरुह्वानि
 ल-यअकुलू-न अम्वालन्नासि
 बिल्बातिलि व यसुद्दू-न अन्
 सबीलिल्लाहि, वल्लजी-न
 यक्निज़ूनज़-ह-ब वल्-फिज़-त व
 ला युन्फिकूनहा फी सबीलिल्लाहि
 फ-बशिशरहुम् बिअज़ाबिन् अलीम
 (34) यौ-म युस्मा अलैहा फी नारि
 जहन्न-म फतुक्वा बिहा जिबाहुहुम् व
 जुनूबुहुम् व जुहूरुहुम्, हाज़ा मा
 कनज़तुम् लिअन्फुसिकुम् फज़ूकू मा
 कुन्तुम् तक्निज़ून (35)

दुर्वेशों को खुदा, अल्लाह को छोड़कर,
 और मसीह मरियम के बेटे को भी, और
 उनको हुक्म यही हुआ था कि बन्दगी करें
 एक माबूद की, किसी की बन्दगी नहीं
 उसके सिवा, वह पाक है उनके शरीक
 बतलाने से। (31) चाहते हैं कि बुझा दें
 रोशनी अल्लाह की अपने मुँह से, और
 अल्लाह न रहेगा बिना पूरा किये अपनी
 रोशनी के, और पड़े बुरा मानें काफिर।
 (32) उसी ने भेजा अपने रसूल को
 हिदायत और सच्चा दीन देकर ताकि
 उसको ग़लबा दे हर दीन पर, और पड़े
 बुरा मानें मुशिरक। (33) ● ऐ ईमान
 वालो! बहुत से आलिम और दुर्वेश अहले
 किताब के खाते हैं माल लोगों के नाहक
 और रोकते हैं अल्लाह की राह से, और
 जो लोग गाड़कर रखते हैं सोना और
 चाँदी और उसको खर्च नहीं करते अल्लाह
 की राह में, सो उनको खुशख़बरी सुना दे
 दर्दनाक अज़ाब की। (34) जिस दिन कि
 आग दहकायेंगे उस माल पर दोज़ख़ की,
 फिर दागेंगे उससे उनके माथे और करवटें
 और पीठें (कहा जायेगा) यह है जो तुमने
 गाड़कर रखा था अपने वास्ते, अब मज़ा
 चखो अपने गाड़ने का। (35)

खुलासा-ए-तफसीर

(आगे कुफ्रिया कामों का बयान है कि) उन्होंने (यानी यहूदियों व ईसाईयों ने फरमाँबरदारी में) खुदा (की तौहीद) को छोड़कर अपने आलिमों और बुजुर्ग हस्तियों को (इताअत के एतिबार से) रब बना रखा है (कि हलाल व हराम करने में उनकी इताअत अल्लाह की इताअत की तरह करते हैं कि शरीअत के हुक्म पर उनके कौल को तरजीह देते हैं और ऐसी फरमाँबरदारी बिल्कुल इबादत है। पस इस हिसाब से वे उनकी इबादत करते हैं) और मसीह मरियम के बेटे को भी (एक एतिबार से रब बना रखा है कि उनको अल्लाह का बेटा कहते हैं, जिससे उनको खुदा मानना लाज़िम आता है) हालाँकि उनको (अल्लाह की किताबों में) सिर्फ यह हुक्म किया गया है कि सिर्फ एक (बरहक) माबूद की इबादत करें जिसके सिवा कोई इबादत के लायक नहीं, वह इनके शिर्क से पाक है। (यह तो बयान था बातिल की पैरवी करने का, आगे बयान है इसका कि वे हक़ दीन को रद्द करते हैं, कि यह भी कुफ़्र है, यानी) वे लोग (यूँ) चाहते हैं कि अल्लाह के नूर (यानी दीने इस्लाम) को अपने मुँह से (फूँक मार-मारकर) बुझा दें (यानी मुँह से रद्द व एतिराज़ की बातें इस गर्ज़ से करते हैं कि दीने हक़ को तरक्की न हो) हालाँकि अल्लाह तआला अपने (ज़िक्र हुए) नूर को कमाल (ऊँचाईयों और शिखर) तक पहुँचाये बग़ैर नहीं मानेगा, चाहे काफ़िर लोग (जिनमें ये भी आ गये) कैसे ही नाखुश हों। (चुनाँचे) वह (अल्लाह) ऐसा है कि (इसी नूर के पूरा करने के लिये) उसने अपने रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को हिदायत (का सामान यानी कुरआन) और सच्चा दीन (यानी इस्लाम) देकर (दुनिया में) भेजा है, ताकि इस (दीन) को (जो कि वही ज़िक्र किया गया नूर है, बाकी के) तमाम दीनों पर ग़ालिब कर दे (कि यही पूरा करना है) चाहे मुश्रिक (जिनमें ये भी दाख़िल हो गये) कैसे ही नाखुश हों।

ऐ ईमान वालो! अक्सर अहबार और रुहबान (यानी यहूदियों व ईसाईयों के उलेमा व बुजुर्ग अ़वाम) लोगों के माल नाजायज़ तरीक़े से खाते (उड़ाते) हैं (यानी हक़ के अहक़ाम को छुपाकर अ़वाम की मर्ज़ी के मुवाफ़िक़ फ़तवा देकर उनसे नज़राने लेते हैं) और (इसकी वजह से वे) अल्लाह की राह (यानी दीने इस्लाम) से (लोगों को) रोकते हैं (क्योंकि आम लोग उनके झूठे फ़तवों के धोखे में आकर गुमराही में फंसे रहते हैं और हक़ को कुबूल बल्कि तलब भी नहीं करते) और (अपने हृद से बढ़े हुए लालच के सबब माल भी जमा करते हैं जिसके बारे में यह धमकी है कि) जो लोग सोना-चाँदी जमा करके रखते हैं और उनको अल्लाह की राह में खर्च नहीं करते (यानी ज़कात नहीं निकालते) सो आप उनको एक बड़ी दर्दनाक सज़ा की ख़बर सुना दीजिए। जो कि उस दिन ज़ाहिर होगी कि उनको (पहले) दोज़ख़ की आग में तपाया जाएगा फिर उनसे उनकी पेशानियों "यानो माथों" और उनकी करवटों और उनकी पुश्तों को दाग़ दिया जायेगा। (और यह जतलाया जायेगा कि) यह है वह जिसको तुमने अपने वास्ते जमा करके रखा था, सो अब अपने जमा करने का मज़ा चखो।

मअरिफ व मसाईल

इन चारों आयतों में यहूदियों व ईसाईयों के उलेमा और बुजुर्गों व आबिदों की गुमराही और उनकी कुफ्र भरी बातों और आमाल का जिक्र है। अहबार 'हिब' की जमा (बहुवचन) है और रुहबान 'राहिब' की जमा है। 'हिब' यहूदियों व ईसाईयों के आलिम को और राहिब आबिद व जाहिद को कहा जाता है।

पहली आयत में फरमाया है कि इन लोगों ने अपने उलेमा और इबादत-गुजारों को अल्लाह के सिवा अपना रब और माबूद बना रखा है। इसी तरह ईसा बिन मरियम अलैहिस्सलाम को अपना रब बना लिया है। हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को रब व माबूद बनाना तो इसलिये जाहिर है कि वे उनको खुदा तआला का बेटा मानते और कहते थे, और उलेमा व बुजुर्गों को माबूद बनाने का जो इल्जाम उन पर लगाया गया है अगरचे वे स्पष्ट तौर पर उनको अपना रब न कहते थे, इसकी वजह यह है कि उन्होंने पूर्ण फरमाँबरदारी जो खालिस अल्लाह जल्ल शानुहू का हक है इस हक को उनके हवाले कर दिया था, कि हर हाल में उनके कहने की पैरवी करते थे, चाहे उनका कौल अल्लाह और रसूल के खिलाफ ही क्यों न हो। तो यह जाहिर है कि किसी की ऐसी इताअत (फरमाँबरदारी व पैरवी) करना कि अल्लाह व रसूल के फरमान के खिलाफ भी कहे तो उसकी इताअत न छोड़े, यह ऐसा ही है जैसे किसी को अपना रब और माबूद कहे, जो खुला हुआ कुफ्र है।

इससे मालूम हुआ कि दीनी मसाईल से नावाकिफ अ़वाम के लिये उलेमा के फतवे की पैरवी या इज्तिहादी मसाईल में मुज्ताहिद इमामों की पैरवी करना, इसका इस आयत से कोई ताल्लुक नहीं, क्योंकि यह पैरवी हकीकत में खुदा और रसूल ही के अहकाम का पालन करना होता है। इल्म व नज़र रखने वाले हज़रात डायरेक्ट अल्लाह व रसूल के कलाम को देखकर उस पर अमल करते हैं, और नावाकिफ अ़वाम उलेमा से पूछकर उन्हीं अहकाम पर अमल करते हैं, और जो उलेमा इज्तिहाद (कुरआन व हदीस में गौर व फ़िक्र करके अहकाम मालूम कर लेने का) दर्जा नहीं रखते वे भी इज्तिहादी मसाईल में मुज्ताहिद इमामों की पैरवी करते हैं। यह पैरवी खुद कुरआने करीम के हुक्म के मुताबिक है और हक तआला ही की इताअत (हुक्मों का पालन और फरमाँबरदारी) है जैसा कि इरशाद है:

فَسَلُوا أَهْلَ الذِّكْرِ إِنْ كُنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ

“यानी अगर तुम खुद खुदा और रसूल के अहकाम से वाकिफ नहीं तो इल्म रखने वालों से पूछकर अमल किया करो।”

यहूदियों व ईसाईयों के अ़वाम ने अल्लाह की किताब और अल्लाह व रसूल के अहकाम को पूरी तरह नज़र-अन्दाज़ करके खुदगर्ज पेशेवर उलेमा या जाहिल इबादत-गुजारों के कौल व अमल ही को अपना दीन बना लिया था, इसकी निंदा व बुराई इस आयत में फरमाई गयी है।

इसके बाद फरमाया कि उन लोगों ने यह गुमराही इख्तियार कर ली हालाँकि उनको अल्लाह

तआला की तरफ से सिर्फ एक अल्लाह की इबादत का हुक्म दिया गया था जो उन तमाम चीजों के शिर्क से پاک है जिनको ये लोग अल्लाह तआला का शरीक ठहराते हैं।

इस आयत में तो उनकी बातिल की पैरवी और गैरुल्लाह की नाजायज़ इताअत (फरमाँबरदारी) का जिक्र था, इसके बाद की आयत में उनकी एक और गुमराही का जिक्र है कि ये लोग सिर्फ इसी पर बस नहीं करते कि खुद गुमराही में पड़े हुए हैं, बल्कि हिदायत और दीने हक के मिटाने और रद्द करने की कोशिश करते हैं। इसी मज़मून को मिसाल के तौर पर इस तरह बयान फरमाया है कि ये लोग अपने मुँह की फूँकों से अल्लाह के नूर को बुझाना चाहते हैं, हालाँकि यह इनके बस की बात नहीं, अल्लाह तआला यह तय कर चुके हैं कि वह अपने नूर यानी दीने इस्लाम को मुकम्मल और पूरा ही करेंगे चाहे काफिर लोग कैसे ही नाखुश हों।

इसके बाद तीसरी आयत के मज़मून का खुलासा भी यही है कि अल्लाह तआला ने अपने रसूल को हिदायत का सामान यानी कुरआन और दीने हक यानी इस्लाम देकर इसी लिये भेजा है ताकि इसको दुनिया के बाकी तमाम दीनों पर ग़ालिब कर दे, तक़रीबन इन्हीं लफ्ज़ों के साथ कुरआने करीम में अनेक आयतें आई हैं, जिनमें यह वायदा है कि दीने इस्लाम को दुनिया के तमाम दीनों पर ग़ालिब किया जायेगा।

तफ़सीर-ए-मज़हरी में है कि दीने इस्लाम को तमाम दूसरे दीनों पर ग़ालिब करने की यह खुशख़बरी अक्सर ज़मानों और अक्सर हालात के एतिबार से है, जैसा कि हज़रत मिक्दाद की हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया- रू-ए-ज़मीन पर कोई कच्चा पक्का मकान बाकी न रहेगा जिसमें इस्लाम का कलिमा दाख़िल न हो जाये, इज़्ज़तदारों की इज़्ज़त के साथ और ज़लील लोगों की ज़िल्लत के साथ, जिनको अल्लाह तआला इज़्ज़त देंगे वे मुसलमान हो जायेंगे और जिनको ज़लील करना होगा वे इस्लाम को कुबूल तो न करेंगे मगर इस्लामी हुक्मत के ताबे (अधीन) हो जायेंगे। चुनाँचे अल्लाह तआला का यह वायदा पूरा हुआ, एक हज़ार साल के करीब इस्लाम की शान व शौकत पूरी दुनिया पर छाई रही।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और पहले बुजुर्गों के मुबारक दौर में तो इस नूर की तक़मील व पूर्णता को सारी दुनिया देख ही चुकी है, और आईन्दा भी दलीलों और तथ्यों के एतिबार से हर ज़माने में दीने इस्लाम ऐसा मुकम्मल दीन है कि किसी माकूल पसन्द इनसान को इस पर एतिराज़ करने और इसमें कोई कमी निकालने का मौका नहीं मिल सकता। इसलिये काफ़िरों की मुख़ालफ़तों के बावजूद यह दीने हक अपनी हुज्जत व दलील के एतिबार से हमेशा ग़ालिब है, और जब मुसलमान इस दीन की पूरी पैरवी करें तो उनका ज़ाहिरी ग़लबा और हुक्मत व सल्लनत भी इसके लवाज़िम (अनिवार्यता) में से है, जैसा कि इस्लामी इतिहास का तज़ुर्बा इस पर सुबूत व गवाह है कि जब भी मुसलमानों ने कुरआन व सुन्नत पर पूरी तरह अमल किया तो कोई पहाड़ व दरिया उनके इरादों की राह में रुकावट नहीं बन सका, और ये पूरी दुनिया पर ग़ालिब आकर रहे। और जब कभी जहाँ कहीं इनको मग़लूब व पराजित होने की नौबत आई है तो वह कुरआन व सुन्नत के अहक़ाम से ग़फ़लत और उल्लंघन का बुरा नतीजा था, जो इनके

सामने आया, दीने हक फिर भी अपनी जगह कामयाब व विजयी ही रहा।

चौथी आयत में मुसलमानों को संबोधित करके यहूदियों व ईसाईयों के उलेमा व बुजुर्गों के ऐसे हालात का जिक्र है जिनकी वजह से अंजाम में गुमराही फैली। मुसलमानों को मुखातब करने से शायद इस तरफ इशारा है कि अगरचे ये हालात यहूदियों व ईसाईयों के उलेमा व बुजुर्गों के बयान हो रहे हैं लेकिन इनको भी इससे सचेत रहना चाहिये कि उनके ऐसे हालात न हो जायें।

इस आयत में इरशाद फरमाया कि यहूदियों व ईसाईयों के बहुत से उलेमा व बुजुर्गों का यह हाल है कि बातिल (ग़लत और ग़ैर-हक) तरीकों से लोगों का माल खाते हैं और अल्लाह तआला के सीधे रास्ते से उनको रोकते हैं।

यहूदियों व ईसाईयों के अक्सर उलेमा व बुजुर्गों का यही हाल था और ऐसे हालात में आम तौर पर कहने वाले सभी को बुरा कहा करते हैं, लेकिन कुरआने करीम ने इस जगह लफ़्ज़ कसीरन (ज्यादातर) का इज़ाफ़ा करके मुसलमानों को दुश्मनों के मामले में भी एहतियात के साथ कलाम करने की तालीम फ़रमा दी, कि यह हाल सब लोगों की तरफ़ मन्सूब नहीं फ़रमाया, बल्कि यह फ़रमाया कि उनमें बहुत से लोग ऐसा करते हैं। उनकी गुमराही यह बतलाई गयी कि वे लोगों के माल बातिल (नाजायज़) तरीके से खाते हैं। बातिल तरीके से मुराद यह है कि वे लोग कई बार उन लोगों से पैसे लेकर अल्लाह की किताब तौरात के हुक्म के खिलाफ़ फ़तवा दे देते थे, और कई बार अल्लाह के अहक़ाम छुपाने और उसमें मिलावट करने से काम लेते थे। इससे आगे बढ़कर उनकी यह गुमराही बतलाई गयी कि वे कमबख़्त सिर्फ़ खुद ही गुमराह नहीं बल्कि दूसरे हिदायत व हक़ के इच्छुक लोगों को अल्लाह के रास्ते से रोकने का सबब भी हैं। क्योंकि जब लोग अपने मुक्त्तदाओं (धर्म गुरुओं) को ऐसे काम करते देखें तो उनमें भी हक़ परस्ती की भावना मर जाती है। इसके अलावा उनके ग़लत फ़तवों की बुनियाद पर वे गुमराही और ग़लती ही को अच्छा और सही समझने लगते हैं।

यहूदियों व ईसाईयों के उलेमा व बुजुर्गों की यह बीमारी कि पैसों के लालच में ग़लत फ़तवा दे दें, चूँकि माल की मुहब्बत और दुनिया के लालच की वजह से पैदा हुई थी, इसलिये उक्त आयत में माल की मुहब्बत के अन्दर हद बढ़ने के बुरे परिणामों और दर्दनाक अज़ाब का बयान और इस बीमारी से निजात हासिल करने का तरीका ज़िक्र किया गया है। इरशाद है:

وَالَّذِينَ يَكْتِزُونَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَا ينفِقُونَهَا فِي سَبِيلِ اللَّهِ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ أَلِيمٍ

“यानी जो लोग सोने-चाँदी को जमा करते रहते हैं और उसको अल्लाह की राह में खर्च नहीं करते उनको दर्दनाक अज़ाब की खुशख़बरी सुना दीजिये।”

“उसको खर्च नहीं करते हैं” के लफ़्ज़ों से इस तरफ़ इशारा हो गया कि जो लोग ज़रूरत के मुताबिक़ अल्लाह की राह में खर्च करते हैं तो बाकी बचा जमा किया हुआ माल उनके हक़ में नुक़सानदेह नहीं।

हदीस में खुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस माल की ज़कात अदा कर दी जाये वह ‘माल जमा करने’ में दाख़िल नहीं। (अबू दाऊद, अहमद वगैरह)

जिससे मालूम हुआ कि जकात निकालने के बाद जो माल बाकी रहे उसका जमा रखना कोई गुनाह नहीं। इमामों और फुक्हा की अवसरियत का यही मस्लक है।

“उसमें से खर्च नहीं करते हैं” में उस से फिज़्ज़ा की तरफ इशारा है, जिसके मायने चाँदी के हैं। ऊपर सोने और चाँदी दो चीज़ों का जिक्र था मगर इशारा सिर्फ चाँदी की तरफ किया गया। तफसीरे मज़हरी में इसको इस बात का इशारा करार दिया है कि जब किसी शख्स के पास सोना और चाँदी थोड़ा-थोड़ा मौजूद हो तो एतिबार चाँदी का किया जायेगा, सोने की कीमत भी चाँदी के हिसाब में लगाकर जकात अदा की जायेगी।

पाँचवीं आयत में उस दर्दनाक अज़ाब की तफसील इस तरह बयान फरमाई है:

يَوْمَ يُخْمَلُ عَلَيْهَا فِي نَارِ جَهَنَّمَ فُتُكْوَى بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوبُهُمْ وَظُهُورُهُمْ، هَذَا مَا كُنْتُمْ لَا تَفْقَهُمْ فُلُوقُوا

مَا كُنْتُمْ تَكْتُمُونَ ۝

“यानी जकात न अदा करने वालों को यह दर्दनाक अज़ाब उस दिन होगा जबकि उनके जमा किये हुए सोने-चाँदी को जहन्नम की आग में तपाया जायेगा, फिर उससे उनकी पेशानियों, करवटों और पुश्तों पर दाग दिये जायेंगे, और उनसे जबानी सज़ा के तौर पर कहा जायेगा कि यह वह चीज़ है जिसको तुमने अपने लिये जमा किया था, सो अपने जमा किये हुए सरमाये को चखो। इससे मालूम हुआ कि अमल का बदला वही अमल है, जो सरमाया नाजायज़ तौर पर जमा किया था, या असल सरमाया तो जायज़ था मगर उसकी जकात अदा नहीं की तो खुद वह सरमाया ही उन लोगों का अज़ाब बन गया।

इस आयत में दाग लगाने के लिये पेशानियों, करवटों, पुश्तों का जिक्र किया गया है। या तो इससे मुराद पूरा बदन है, और या फिर इन तीन चीज़ों को खास करना इस बिना पर है कि बखील (कन्जूस और लालची) आदमी जो अपना सरमाया अल्लाह की राह में खर्च करना नहीं चाहता, जब कोई माँगने वाला या जकात का तलबगार उसके सामने आता है तो उसको देखकर सबसे पहले उसकी पेशानी (माथे) पर बल आते हैं, फिर उससे नज़र बचाने के लिये यह दाये बाये मुड़ना चाहता है, और इससे भी माँगने वाला न छोड़े तो उसकी तरफ पुश्त (पीठ) कर लेता है, इसलिये पेशानी, करवट और पुश्त इस अज़ाब के लिये मख्सूस किये गये।

إِنَّ عَذَابَ الشُّهُورِ عِنْدَ اللَّهِ اثْنَا عَشَرَ شَهْرًا فِي كِتَابِ اللَّهِ يَوْمَ خُلِقَ

السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ مِنْهَا أَرْبَعَةٌ حُرْمٌ ذَلِكَ الدِّينُ الْقَيِّمُ ۚ فَلَا تَظْلِمُوا فِيهِنَّ أَنْفُسَكُمْ وَقَاتِلُوا الْمُشْرِكِينَ كَافَّةً كَمَا يُقَاتِلُونَكُمْ كَافَّةً وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ مَعَ الْمُتَّقِينَ ۝ اثْنَا عَشَرَ شَهْرًا فِي كِتَابِ اللَّهِ يَوْمَ خُلِقَ النَّاسُ زِيَادَةً فِي الْكَفْرِ يُضَلُّ بِهِ الَّذِينَ كَفَرُوا يُحْلُونَهُ عَامًا وَيُحَرِّمُونَهُ عَامًا لِيُؤْطُوا عَذَابَ مَا حَرَّمَ اللَّهُ فَيَجْلُؤُوا مَا حَرَّمَ اللَّهُ ۚ زَيْنَ لَهُمْ سُوءُ أَعْمَالِهِمْ ۚ وَاللَّهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكَافِرِينَ ۝

इन्-न अिद-तश्शुहूरि अिन्दल्लाहिस्ना
 अ-श-र शहरन् फी किताबिल्लाहि
 यौ-म ख़ा-लक़स्समावाति वल्अर-ज़
 मिन्हा अरब-अतुन् हुरुमुन्,
 ज़ालिकद्दीनुल्-क़य्यिमु फ़ला
 तज़िलमू फ़ीहिन्-न अन्फु-सकुम्, व
 कातिलुल् मुशिरकी-न काफ़-तन्
 कमा युकातिलूनकुम् काफ़-तन्,
 वज़लमू अन्नल्ला-ह मज़ल्-मुत्तकीन
 (36) इन्नमन्नसी-उ ज़ियादतुन्
 फिल्कुफ़िर युज़ल्लु बिहिल्लजी-न
 क-फ़रु युहिल्लूनहू अामं-व-व
 युहरिमूनहू अामल्-लियुवातिऊ
 अिद-त मा हरमल्लाहु फ़युहिल्लू मा
 हरमल्लाहु, ज़ुय्यि-न लहुम् सू-उ
 अज़्मालिहिम्, वल्लाहु ला यस्दिल्
 कौमल्-काफ़िरीन (37) ❀

महीनों की गिनती अल्लाह के नज़दीक
 बारह महीने हैं अल्लाह के हुक्म में जिस
 दिन उसने पैदा किये थे आसमान और
 ज़मीन उनमें चार महीने हैं अदब के, यही
 है सीधा दीन सो इनमें जुल्म मत करो
 अपने ऊपर, और लड़ो सब मुशिरकों से
 हर हाल में जैसे वे लड़ते हैं तुम सबसे
 हर हाल में, और जान लो कि अल्लाह
 साथ है डरने वालों के। (36) यह जो
 महीना हटा देना है सो बढ़ाई हुई बात है
 कुफ़्र के दौर में, गुमराही में पड़ते हैं इस
 से काफ़िर, हलाल कर लेते हैं इस महीने
 को एक साल और हराम रखते हैं दूसरे
 साल, ताकि पूरी कर लें गिनती उन
 महीनों की जो अल्लाह ने अदब के लिये
 रखे हैं, फिर हलाल कर लेते हैं जो महीना
 कि अल्लाह ने हराम किया, भले कर दिये
 गये उनकी नज़र में उनके बुरे काम, और
 अल्लाह रास्ता नहीं देता काफ़िर लोगों
 को। (37) ❀

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

यकीनन महीनों की गिनती (जो कि) अल्लाह की किताब (यानी शरई अहकाम) में अल्लाह
 के नज़दीक (मोतबर हैं) बारह महीने (चाँद के) हैं, (और कुछ आज से नहीं बल्कि) जिस दिन
 उसने (यानी अल्लाह तआला ने) आसमान और ज़मीन पैदा किए थे (उसी दिन से, और) उनमें
 चार खास महीने अदब के हैं (ज़ीकादा, ज़िलहिज्जा, मुहर्रम, रजब) यही (जो ज़िक्र किया गया
 सच्चा और) सीधा दीन है (यानी इन महीनों का बारह होना और चार का खुसूसियत से
 सम्मानित महीने होना, और बख़िलाफ़ जाहिलीयत के ज़माने की आदत के, कभी साल के महीनों
 की संख्या बढ़ा देते और कभी सम्मानित महीनों के खास करने को छोड़ देते कि यह बद-दीनी है)
 सो तुम सब इन (महीनों) के बारे में (दीन के ख़िलाफ़ करके) अपना नुक़सान मत करना (यानी

जाहिलीयत की इस आदत के मुवाफ़िक़ मत करना), और इन मुश्रिकों से (जबकि ये अपनी कुफ़्रिया हरकतों को जिनमें यह ख़ास आदत भी आ गयी न छोड़ी) सबसे लड़ना जैसा कि वे तुम सब (मुसलमानों) से लड़ने (को हर वक़्त तैयार रहा करते) हैं, और (अगर उनके भारी संख्या और सामान से अन्देशा हो तो) यह जान लो कि अल्लाह तआला मुत्तकियों का साथी है (पस ईमान व तक़वे को अपना शिआर रखो और किसी से मत डरो)।

(आगे उनकी जाहिलीयत वाली आदत का बयान है कि) यह (महीनों का या उनके सम्मानित होने का आगे को) हटा देना कुफ़्र में और बढ़ोतरी है जिससे (और आम) काफ़िर लोग गुमराह किए जाते हैं (इस तरीक़े से) कि वे उस (हराम महीने) को किसी साल (अपने नफ़्सानी स्वार्थ के लिये) हलाल कर लेते हैं, और किसी साल (जब कोई गर्ज न हो तो) हराम समझते हैं, ताकि अल्लाह तआला ने जो (महीने) हराम किए हैं (सिर्फ़) उनकी गिनती (बिना किसी विशेषता और निर्धारण के) पूरी कर लें, फिर (जब विशेषता व निर्धारण न रहा तो) अल्लाह के हराम किये हुए (महीने) को हलाल कर लेते हैं। उनके बुरे आमाल उनको अच्छे मालूम होते हैं, और (उनके कुफ़्र पर जमे रहने का ग़म करना बेफ़ायदा है क्योंकि) अल्लाह तआला ऐसे काफ़िरों को हिदायत (की तौफ़ीक़) नहीं देता (क्योंकि ये खुद राह पर आना नहीं चाहते)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में काफ़िरों व मुश्रिकों के कुफ़्र व शिर्क, गुमराही और बुरे आमाल का ज़िक्र था। इन दो आयतों में भी इसी सिलसिले का एक मज़मून और अरब के जाहिली दौर की एक जाहिलाना बुरी रस्म का बयान और मुसलमानों को उससे बचने व परहेज़ करने की हिदायत है। वह बुरी रस्म एक वाक़िए से संबन्धित है, जिसकी तफ़सील यह है कि पुराने ज़माने से पहले तमाम नबियों की शरीअतों में साल के बारह महीने माने जाते थे और उनमें से चार महीने बड़े बरक़त वाले और अदब व एहतिराम के महीने समझे जाते थे, तीन महीने लगातार- ज़ीकादा, ज़िलहिज्जा और मुहर्रम, और एक रजब का महीना।

तमाम अम्बिया अलैहिमुस्सलाम की शरीअतें इस पर एकमत हैं कि इन चार महीनों में हर इबादत का सवाब ज़्यादा होता है, और इनमें कोई गुनाह करे तो उसका वबाल और अज़ाब भी ज़्यादा है। पहली शरीअतों में इन महीनों के अन्दर क़त्ल व क़िताल (जंग वगैरह) भी मना थी।

मक्का मुकर्रमा के रहने वाले चूँकि हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम के वास्ते से हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह अलैहिस्सलाम की औलाद हैं, इसलिये ये सब लोग हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की नुबुव्वत व रिसालत के कायल और उनकी शरीअत को मानने का दावा करते थे, और चूँकि मिल्लते इब्राहीम में भी इन चार महीनों (यानी सम्मानित महीनों) में क़त्ल व क़िताल और शिकार वर्जित और मना था, जाहिलीयत के दौर वाले अरबों पर इस हुक्म की तामील इसलिये सख़्त दुश्वार थी कि जाहिली दौर में क़त्ल व क़िताल ही उनका पेशा बनकर रह गया था, इसलिये इसमें आसानी पैदा करने के लिये उन्होंने अपने नफ़्सानी स्वार्थों के लिये तरह

तरह के हाल बहाने निकाले, कभी सम्मानित महीनों के किसी महीने में जंग की ज़रूरत पड़े आती या लड़ते लड़ते अदब वाला महीना आ जाता तो कह देते कि अब के साल यह महीना हराम नहीं हुआ अगला महीना हराम (अदब वाला) होगा। मसलन मुहर्रम आ गया तो कहते कि इस साल मुहर्रम का महीना हराम नहीं बल्कि सफर का महीना हराम होगा, और मज़ीद ज़रूरत पड़ती तो कहते कि रबीउल-अव्वल हराम होगा। या यह कहते कि इस साल सफर का महीना पहले आ गया, मुहर्रम बाद में आयेगा। इस तरह मुहर्रम को सफर बना दिया, गर्ज कि साल भर में चार महीने तो पूरे कर लेते थे लेकिन अल्लाह की मुतैयन की हुई तरतीब और निर्धारण का लिहाज़ न करते थे। जिस महीने को चाहें ज़िलहिज्जा कह दें और जिसको चाहें रमज़ान कह दें जिसको चाहें पहले कर दें जिसको चाहें बाद में कर दें। और कभी ज्यादा ज़रूरत पड़ती, मसलन लड़ते लड़ते दस महीने गुज़र गये और साल के सिर्फ़ दो ही महीने बाकी रह गये तो ऐसे मौकों पर साल के महीनों की संख्या बढ़ा देते, और कहते कि अब के बरस साल चौदह महीनों का होगा। इसी तरह बाकी बचे चार महीनों को अदब व सम्मान वाले महीने बना लेते थे।

गर्ज कि दीने इब्राहीम का इतना तो एहतियाम करते थे कि साल में चार महीनों का एहतियाम करते और उनमें क़त्ल व क़िताल (लड़ाई और जंग) से बाज़ रहते थे, मगर अल्लाह तआला ने जो तरतीब महीनों की मुतैयन फ़रमाई और उसी तरतीब से चार महीनों को अदब वाले महीने करार दिया, इसमें तरह-तरह की तावीलों (मतलब बयान) करके अपनी नफ़्सानी इच्छाओं को पूरा करते थे।

इसका नतीजा यह था कि उस ज़माने में इसका फ़र्क और भेद ही दुश्वार हो गया था कि कौनसा महीना रमज़ान या शव्वाल का है और कौनसा ज़ीकादा, ज़िलहिज्जा या रजब का है। हिजरत के आठवें साल जब मक्का मुकर्रमा फ़तह हुआ और नवें साल में हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सिद्दीके अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु को हज के मौसम में तमाम काफ़िरों व मुश्रिकों से बराअत का ऐलान करने के लिये भेजा तो यह महीना असल हिसाब से अगरचे ज़िलहिज्जा का महीना था, मगर जाहिलीयत के उसी पुराने दस्तूर के मुताबिक़ यह महीना ज़ीकादा का करार पाया था, और इस साल उनके नज़दीक हज का महीना बजाय ज़िलहिज्जा के ज़ीकादा मुकर्रर था। फिर सन् 10 हिजरी में जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हज्जतुल-विदा के लिये तशरीफ़ ले गये तो क़ुदरती तौर पर ऐसा निज़ाम बन गया कि महीना असली ज़िलहिज्जा का था, जाहिलीयत वालों के हिसाब में भी ज़िलहिज्जा ही करार पाया, इसलिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने मिना के ख़ुतबे में इरशाद फ़रमाया:

إِنَّ الزَّمَانَ قَدِ اسْتَدَارَ كَهَيْئَتِهِ يَوْمَ خَلَقَ اللَّهُ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضَ.

यानी ज़माना फिर-फिराकर फिर अपनी उसी हालत व सूरत पर आ गया जिस पर उसको अल्लाह तआला ने ज़मीन व आसमान की पैदाईश के वक़्त रखा था, यानी जो महीना असली ज़िलहिज्जा का था जाहिलीयत वालों के नज़दीक भी इस साल वही महीना ज़िलहिज्जा का महीना

करार पाया।

यह थी वह जाहिलीयत की रस्म जो महीनों की संख्या, तरतीब और निर्धारण में कमी-बेशी और रद्दोबदल करके की जाती थी, जिसके नतीजे में उन तमाम शरई अहकाम में खलल आता था जो किसी खास महीने या उसकी किसी खास तारीख से संबन्धित हैं, या जो साल के शुरू में या खत्म से मुताल्लिक हैं। मसलन ज़िलहिज्जा के दशक में हज के अहकाम और मुहर्रम के दशक के रोज़े और साल के खत्म पर ज़कात वगैरह के अहकाम।

बात तो मुख्तसर सी थी कि महीने का नाम बदल कर आगे पीछे कर दिया, कि मुहर्रम को सफ़र और सफ़र को मुहर्रम बना दिया, लेकिन उसके नतीजे में सैंकड़ों शरई अहकाम की तहरीफ़ (रद्दोबदल) होकर अमल बरबाद हुआ। कुरआन मजीद की इन दो आयतों में जाहिलीयत की इस रस्म की खराबी और मुसलमानों को इससे बचने की हिदायत है।

पहली आयत में इरशाद है:

إِنَّ عِدَّةَ الشُّهُورِ عِنْدَ اللَّهِ اثْنَا عَشَرَ شَهْرًا.

इसमें लफ़्ज़ 'इद्दत' तायदाद के मायने में है और शुहूर शहर की जमा (बहुवचन) है, शहर के मायने महीना है। मायने यह है कि अल्लाह तआला के नज़दीक महीनों की तायदाद बारह मुतैयन है, इसमें किसी को कमी-बेशी का कोई इख्तियार नहीं।

इसके बाद 'फी किताबिल्लाहि' का लफ़्ज़ बढ़ाकर बतला दिया कि यह बात पहले दिन से लौह-ए-महफूज़ में लिखी हुई थी। फिर 'यौ-म ख-लक़स्समावाति वल्अर-ज़' फ़रमाकर इशारा कर दिया कि अल्लाह की तक्दीर इस मामले में अगरचे अज़ल (कायनात के पहले दिन) में जारी हो चुकी थी लेकिन यह महीनों की तरतीब और निर्धारण उस वक़्त अमल में आया जब आसमान व ज़मीन पैदा किये गये।

फिर इरशाद फ़रमाया:

مِنْهَا أَرْبَعَةٌ حُرُمٌ.

यानी इन बारह महीनों में से चार महीने हुर्मत (अदब व एहतिराम और सम्मान) वाले हैं, इनको हुर्मत वाला दो मायने के एतिबार से कहा गया- एक तो इसलिये कि इनमें क़त्ल व किताल (जंग और मरना-मारना) हराम है, दूसरे इसलिये कि ये महीने बरक़त और सम्मान वाले हैं, इनमें इबादतों का सवाब ज़्यादा मिलता है। इनमें से पहला हुक्म तो इस्लामी शरीअत में मन्सूख़ (ख़त्म और रद्द) हो गया, मगर दूसरा हुक्म यानी इनका सम्मान व एहतिराम करना इनमें इबादत-गुज़ारी का एहतिराम इस्लाम में भी बाकी है।

हज्जतुल-विदा (नबी करीम के आखिरी हज) के कुरबानी वाले दिन के खुतबे (संबोधन) में रसूल करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इन महीनों का खुलासा यह फ़रमाया कि तीन महीने लगातार हैं- ज़ीक़ादा, ज़िलहिज्जा, मुहर्रम, और एक महीना रजब का है। मगर रजब के महीने के मामले में अरब वालों के दो कौल मशहूर थे, कुछ कबीले उस महीने को रजब कहते थे जिसको

हम रमज़ान कहते हैं, और कबीला मुज़र के नज़दीक रजब वह महीना था जो जमादियुस्सानी और शाबान के बीच है। इसलिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम ने इसको रजब-ए-मुज़र फरमाकर यह वज़ाहत भी फरमा दी कि जो जमादियुस्सानी और शाबान के बीच है वह रजब व महीना मुराद है।

ذَلِكَ الدِّينُ الْقَيِّمُ

यह है दीन-ए-मुस्तकीम। यानी महीनों के निर्धारण, तरतीब और उनमें हर महीना विशेष तौर पर सम्मानित महीनों के मुताल्लिक जो अहकाम हैं उनको अल्लाह तआला के पहले दिन रं दिये हुए हुक्म के मुताबिक रखना ही दीने मुस्तकीम है। इसमें अपनी तरफ से कमी-बेशी और रद्दोबदल करना टेढ़ी समझ और उल्टी तबीयत की निशानी है।

فَلَا تَظْلِمُوا فِيهِنَّ أَنْفُسَكُمْ

यानी इन पवित्र महीनों में तुम अपना नुकसान न कर बैठना कि इनके निर्धारित अहकाम और एहतियाम की खिलाफवर्जी करो, या इनमें इबादत-गुज़ारी में कोताही करो।

इमाम जस्सास ने अहकामुल-कुरआन में फरमाया कि इसमें इशारा इस बात की तरफ है कि इन बरकत वाले और पवित्र महीनों की विशेषता यह है कि इनमें जो शख्स कोई इबादत करत है उसको बाकी के महीनों में भी इबादत की तौफीक और हिम्मत होती है। इसी तरह जो शख्स कोशिश करके इन महीनों में अपने आपको गुनाहों और बुरे कामों से बचा ले तो साल के बाक़ महीनों में उसको उन बुराईयों से बचना आसान हो जाता है। इसलिये इन महीनों से फायदा न उठाना एक ज़बरदस्त नुकसान है।

यहाँ तक मक्का के मुशिरकों की एक ख़ास जाहिली रस्म का बयान और उसको रद्द व बातिल करना था, आयत के आखिर में फिर उस हुक्म को दोहराया है जो सूरत के शुरू में दिया गया था कि समझौते की मियाद ख़त्म होने के बाद तमाम मुशिरकों व काफ़िरों से जिहाद वाजिब है। दूसरी आयत में भी इसी जाहिली रस्म का ज़िक्र इस तरह फरमाया है:

إِنَّمَا النَّسِيءُ زِيَادَةٌ فِي الْكُفْرِ

लफ़्ज़ नसी मस्दर है, जिसके मायने पीछे हटा देने और बाद में कर देने के हैं, और बाद में हो जाने के मायनों में भी इस्तेमाल होता है।

अरब के मुशिरक लोगों ने इन महीनों के आगे पीछे करने को यह समझा था कि इस तरह हमारे नफ़्सानी स्वार्थ भी ख़त्म न होंगे और अल्लाह के हुक्म की तामील भी हो जायेगी। हक़ तआला ने फरमाया कि यह तुम्हारा महीनों को बाद में करना और अपनी जगह से हटा देना कुफ़्र में और बढ़ोतरी है, जिससे उन काफ़िरों की गुमराही और बढ़ती है, कि वे अदब व सम्मान वाले महीनों को किसी साल तो हराम करार दें और किसी साल हलाल कर लें:

يُؤَاظِنُوا عِدَّةَ مَا حَرَّمَ اللَّهُ

यानी ताकि वे पूरी कर लें गिनती उन महीनों की जिनको अल्लाह ने हराम करार दिया है।

मतलब यह है कि केवल गिनती पूरी कर लेने से हुक्म की तामील नहीं होती, बल्कि जो हुक्म जिस महीने के लिये दिया गया है उसी महीने में उसको पूरा करना ज़रूरी है।

अहकाम व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों से साबित हुआ कि महीनों की जो तरतीब और इन महीनों के जो नाम इस्लाम में परिचित हैं वह इनसानों की बनाई हुई इस्तिलाह (पहचान और परिभाषा) नहीं, बल्कि रब्बुल-आलमीन ने जिस दिन आसमान व ज़मीन पैदा किये उसी दिन यह तरतीब और ये नाम और इनके साथ खास-खास महीनों के खास-खास अहकाम मुतैयन फरमा दिये थे। इससे यह भी मालूम हुआ कि अल्लाह तआला के नज़दीक शरई अहकाम में चाँद के महीनों का एतिबार है, उसी चाँद के हिसाब पर तमाम शरई अहकाम- रोज़ा, हज, ज़कात वगैरह चलते हैं, लेकिन कुरआने करीम ने तारीख़ व साल मालूम करने के लिये जैसे चाँद को अलामत करार दिया है इसी तरह सूरज को भी इसकी अलामत (निशानी और पहचान) फरमाया है।

لَتَعْلَمُوا عَدَدَ السِّنِّينَ وَالْحِسَابَ.

इसलिये तारीख़ व साल का हिसाब चाँद और सूरज दोनों से जायज़ है, लेकिन अल्लाह तआला ने अपने अहकाम के लिये चाँद के हिसाब को पसन्द फरमाया और शरई अहकाम उस पर जारी फरमाये, इसलिये चाँद के हिसाब का महफूज़ रखना फर्ज़-किफ़ाया है। अगर सारी उम्मत चाँद का हिसाब छोड़कर उसको भुला दे तो सब गुनाहगार होंगे, और अगर वह महफूज़ रहे तो दूसरे हिसाब का इस्तेमाल भी जायज़ है, लेकिन अल्लाह की सुन्नत और पहले बुजुर्गों की सुन्नत (तरीके) के खिलाफ़ ज़रूर है, इसलिये बिना ज़रूरत उसको इस्तिथार करना अच्छा नहीं।

हिसाब को पूरा करने के लिये जो लौंद का महीना बढ़ाया जाता है, कुछ लोगों ने उसको भी इस आयत के तहत नाजायज़ समझा है, मगर वह सही नहीं, क्योंकि जिस हिसाब में लौंद का महीना बढ़ाते हैं उससे शरई अहकाम का ताल्लुक नहीं, जाहिलीयत के ज़माने के लोग चाँद के और शरई महीनों में ज़्यादती करके शरई अहकाम को बदलते थे, इसलिये मना किया गया, लौंद का कोई असर शरई अहकाम पर नहीं पड़ता, इसलिये वह इस मनाही में दाख़िल नहीं।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا مَا لَكُمْ إِذَا قِيلَ لَكُمْ انْفِرُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ أَثَأَقَلْتُمْ إِلَى الْأَرْضِ
أَرْضَيْتُمْ بِالْحَيَاةِ الدُّنْيَا مِنَ الْآخِرَةِ، فَمَا مَتَاءُ الْحَيَاةِ الدُّنْيَا فِي الْآخِرَةِ إِلَّا قَلِيلٌ ۝
يَعَذِّبُكُمْ عَذَابًا أَلِيمًا ۚ وَيَسْتَبْدِلُ قَوْمًا غَيْرَكُمْ وَلَا تَضُرُّوهُ شَيْئًا ۚ وَاللَّهُ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝
إِلَّا تَضُرُّوهُ فَقَدْ نَصَرَهُ اللَّهُ إِذْ أَخْرَجَهُ الَّذِينَ كَفَرُوا ثَانِيَ اثْنَيْنِ إِذْ هُمَا فِي الْغَارِ إِذْ يَقُولُ
لِصَاحِبِهِ لَا تَحْزَنْ إِنَّ اللَّهَ مَعَنَا ۚ فَأَنْزَلَ اللَّهُ سَكِينَتَهُ عَلَيْهِ وَأَيَّدَهُ بِجُنُودٍ لَمْ تَرَوْهَا وَ

جَعَلَ كَلِمَةَ الَّذِينَ كَفَرُوا السُّفْلَى ۚ وَكَلِمَةُ اللَّهِ هِيَ الْعُلْيَا ۚ وَاللَّهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝
 خِفَافًا وَثِقَالًا وَجَاهِدُوا بِأَمْوَالِكُمْ وَأَنْفُسِكُمْ فِي سَبِيلِ اللَّهِ ۚ ذَٰلِكُمْ خَيْرٌ لَّكُمْ إِن كُنْتُمْ
 تَعْلَمُونَ ۝ لَوْ كَانَ عَرَضًا قَرِيبًا وَسَفَرًا قَاصِدًا لَاتَّبَعُوكَ وَلَكِنْ بَعَدَتْ عَلَيْهِمُ السُّفَّةُ ۚ
 وَسَيَحْلِفُونَ بِاللَّهِ لَوِ اسْتَطَعْنَا لَخَرَجْنَا مَعَكُمْ يُهْلِكُونَ أَنْفُسَهُمْ ۚ وَاللَّهُ يَعْلَمُ إِنَّهُمْ لَكَاذِبُونَ ۝

या अय्युहल्लजी-न आमनू मा लकुम्
 इजा की-ल लकुमुन्फिरु फी
 सबीलिल्लाहिस्साकल्लुम् इलल्-अर्जि,
 अ-रजीतुम् बिल्हयातिदुन्या मिनल्-
 आखिरति फमा मताअुल्-हयातिदु-
 न्या फिल्आखिरति इल्ला कलील
 (38) इल्ला तन्फिरु युअज़िज़बकुम्
 अज़ाबन् अलीमं व-व यस्तब्दिल्
 कौमन् गैरकुम् व ला तजुरुहु शैअन्,
 वल्लाहु अला कुल्लि शैइम् कदीर
 (39) इल्ला तन्सुरुहु फ-कद्
 न-सरहुल्लाहु इज़् अख्र-जहुल्लजी-न
 क-फरु सानियस्नैनि इज़् हुमा
 फिल्गारि इज़् यकूलु लिसाहिबिही
 ला तहजन् इन्नल्ला-ह म-अना
 फ-अन्ज़लल्लाहु सकीन-तहू अलैहि व
 अय्य-दहू बिजुनूदिल्लम् तरौहा व
 ज-अ-ल कलि-मतल्लजी-न
 क-फरुस्सुफ्ला, व कलि-मतुल्लाहि

ऐ ईमान वालो! तुमको क्या हुआ जब
 तुमसे कहा जाता है कि कूच करो अल्लाह
 की राह में तो गिरे जाते हो ज़मीन पर,
 क्या खुश हो गये दुनिया की ज़िन्दगी पर
 आखिरत को छोड़कर, सो कुछ नहीं नफा
 उठाना दुनिया की ज़िन्दगी का आखिरत
 के मुकाबले में मगर बहुत थोड़ा। (38)
 अगर तुम न निकलोगे तो देगा तुमको
 दर्दनाक अज़ाब और बदले में ला देगा
 और लोग तुम्हारे सिवा, और कुछ न
 बिगाड़ सकोगे तुम उसका, और अल्लाह
 सब चीज़ पर कादिर है। (39) अगर तुम
 मदद न करोगे रसूल की तो उसकी मदद
 की है अल्लाह ने जिस वक़्त उसको
 निकाला था काफ़िरों ने कि वह दूसरा था
 दो में का, जब वे दोनों थे ग़ार (गुफा) में,
 जब वह कह रहा था अपने साथी से तू
 ग़म न खा, बेशक अल्लाह हमारे साथ है,
 फिर अल्लाह ने उतारी अपनी तरफ़ से उस
 पर तसल्ली व सुकून और उसकी मदद
 को वो फौज़ें भेजीं कि तुमने नहीं देखीं,
 और नीचे डाली बात काफ़िरों की, और
 अल्लाह की बात हमेशा ऊपर है, और

हियल्-अल्या, वल्लाहु अजीज़ुन्
हकीम (40) इन्फ़िरु ख़िफ़ाफ़ं-व
सिक़ालं-व जाहिदू बिअम्वालिкуम्
व अन्फ़ुसिकुम् फी सबीलिल्लाहि,
ज़ालिकुम् ख़ौरुल्लकुम् इन् कुन्तुम्
तज़लमून (41) लौ-का-न अ-रज़न्
क़रीबं-व स-फ़रन् कासिदल्-
लत्त-बज़ू-क व लाकिम्-बज़ुदत्
अलैहिमुश्शुक्कतु, व स-यस्लिफू-न
बिल्लाहि लविस्त-तज़ना ल-ख़रज्जा
म-अकुम् युस्लिक्-न अन्फ़ु-सहुम्
वल्लाहु यज़लमु इन्नहुम्
लकाज़िबून (42) ❀

अल्लाह ज़बरदस्त है हिक्मत वाला। (40)
निकलो हल्के और बोझल और लड़ो अपने
माल से और जान से अल्लाह की राह में,
यह बेहतर है तुम्हारे हक़ में अगर तुमको
समझ है। (41) अगर माल होता नज़दीक
और सफ़र हल्का तो वे लोग ज़रूर तेरे
साथ हो लेते, लेकिन लम्बी नज़र आई
उनको दूरी और अब क़समें ख़ायेंगे
अल्लाह की कि अगर हमसे हो सकता तो
हम ज़रूर चलते तुम्हारे साथ, वबाल में
डालते हैं अपनी जानों को, और अल्लाह
जानता है कि वे झूठे हैं। (42) ❀

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वाले! तुम लोगों को क्या हुआ कि जब तुमसे कहा जाता है कि अल्लाह की राह में (जिहाद के लिये) निकलो तो तुम ज़मीन को लगे जाते हो? (यानी उठते और चलते नहीं) क्या तुमने आख़िरत के बदले दुनियावी ज़िन्दगी पर क़नाअत कर ली? सो दुनियावी ज़िन्दगी से फ़ायदा हासिल करना तो आख़िरत के मुक़ाबले में (कुछ भी नहीं) बहुत कम है। अगर तुम (इस जिहाद के लिये) न निकलोगे तो वह (यानी अल्लाह तआला) तुमको सज़ा सज़ा देगा (यानी तुमको हलाक कर देगा) और तुम्हारे बदले दूसरी कौम को पैदा कर देगा (और उनसे अपना काम लेगा) और तुम अल्लाह (के दीन) को कुछ नुक़सान नहीं पहुँचा सकोगे, और अल्लाह को हर चीज़ पर पूरी क़ुदरत है। अगर तुम लोग उनकी (यानी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की) मदद न करोगे तो (अल्लाह तआला आपकी मदद करेगा, जैसा कि) अल्लाह तआला आपकी मदद उस वक़्त कर चुका है जबकि (इससे ज़्यादा मुसीबत व परेशानी का वक़्त था, जबकि) आपको काफ़िरों ने (तंग कर-करके मक्का से) ज़िला-वतन कर दिया था, जबकि दो आदमियों में से एक आप थे (और दूसरे हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु आपके साथ थे) जिस वक़्त कि दोनों (हज़रत) ग़ार (-ए-सौर) में (मौजूद) थे, जबकि आप अपने साथी से फ़रमा रहे थे

कि तुम (कुछ) ग़म न करो यकीनन अल्लाह तआला (की मदद) हमारे साथ है। सो (वह मदद यह हुई कि) अल्लाह तआला ने आप (के दिल) पर अपनी (तरफ़ से) तसल्ली नाज़िल फ़रमाई और आपको (फ़रिश्तों के) ऐसे लश्करों से क़ुव्वत दी जिनको तुमने नहीं देखा, और अल्लाह तआला ने काफ़िरों की बात (और तदबीर) नीची कर दी (कि वे नाकाम रहे) और अल्लाह ही का बोल-बाला रहा (कि उनकी तदबीर और हिफ़ाज़त ग़ालिब रही) और अल्लाह ज़बरदस्त है, हिक्मत वाला है (इसी लिये उसी की बात और हिक्मत ग़ालिब रही)।

(जिहाद के लिये) निकल पड़ो (चाहे) थोड़े सामान से (हो) और (चाहे) ज़्यादा सामान से (हो) और अल्लाह तआला की राह में अपने माल और जान से जिहाद करो, यह तुम्हारे लिये बेहतर है अगर तुम यकीन रखते हो (तो देर मत करो)। अगर कुछ हाथ के हाथ मिलने वाला होता और सफ़र भी मामूली-सा होता तो ये (मुनाफ़िक़) लोग आपके साथ हो लेते, लेकिन इनको तो सफ़र का फ़ासला ही दूर-दराज़ मालूम होने लगा (इसी लिये यहाँ ही रह गये) और अभी (जब तुम लोग वापस आओगे तो) खुदा की क़समें खा जाँएंगे कि अगर हमारे बस की बात होती तो हम ज़रूर तुम्हारे साथ चलते। ये लोग (झूठ बोल-बोलकर) अपने आपको तबाह (यानी अज़ाब का हक़दार) कर रहे हैं, और अल्लाह तआला जानता है कि ये लोग यकीनन झूठे हैं (बिला शुब्हा ये जा सकते थे मगर नहीं गये)।

मअरिफ़ व मसाईल

उक्त आयतों में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ग़ज़वात (जंगी मुहिमों) में से एक अहम ग़ज़वे (जंग) का बयान और उसके तहत में बहुत से अहक़ाम और हिदायतें हैं। यह ग़ज़वा ग़ज़वा-ए-तबूक के नाम से जाना जाता है, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का तक़रीबन आख़िरी ग़ज़वा है।

तबूक मदीना के उत्तर में शाम की सरहद पर एक स्थान का नाम है। शाम उस वक़्त रूमी ईसाईयों की हुकूमत का एक राज्य था, रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सन् 8 हिजरी में जब फ़त्हे-मक्का और ग़ज़वा-ए-हुनैन से फ़ारिग़ होकर मदीना तय्यिबा पहुँचे तो उस वक़्त अरब ख़ित्ते के अहम हिस्से इस्लामी हुकूमत के अधीन आ चुके थे, और मक्का के मुश्रिकों की आठ वर्षीय लगातार जंगों के बाद अब मुसलमानों को ज़रा सुकून का वक़्त मिला था।

मगर जिस ज़ात के बारे में अल्लाह तआला ने पहले ही 'लियुज़िह-रहू अलद्दीनि कुल्लिही' नाज़िल फ़रमाकर पूरे आलम पर छा जाने और उसमें अपने दीने हक़ को ग़ालिब करने की खुशख़बरी दे दी थी उसको और उसके साथियों को फ़ुर्सत कहाँ। मदीना पहुँचते ही मुल्के शाम से आने वाले व्यापारी लोग जो शाम से जैतून का तेल लाकर मदीना बग़ैरह में बेचा करते थे, उन लोगों ने यह ख़बर पहुँचाई कि रोम के बादशाह हिरक्ल ने अपनी फ़ौजें तबूक के स्थान में शाम की सरहद पर जमा कर दी हैं, और फ़ौजियों को पूरे एक साल की तन्ख़ाहें पेशगी देकर संतुष्ट और खुश कर दिया है, और अरब के कुछ कबीलों से भी उनकी साठगाँठ है। उनका

इरादा यह है कि मदीना पर एक ही बार में हमला करें।

जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इसकी ख़बर पहुँची तो आपने यह इरादा फ़रमा लिया कि उनके हमला करने से पहले आगे बढ़कर वहीं उनका मुकाबला किया जाये जहाँ उनकी फ़ौजें जमा हैं। (तफसीरे मज़हरी, मुहम्मद बिन यूसुफ़ सालिही के हवाले से)

यह ज़माना इत्तिफ़ाक़ से सख़्त गर्मी का ज़माना था, और मदीना के हज़रात उमूमन खेती पेशा लोग थे, उनकी खेतियाँ और बागात के फल पक रहे थे जिस पर उनकी सारी रोज़ी-रोटी और पूरे साल के गुज़ारे का मदार था। और यह भी मालूम है कि जिस तरह नौकरी पेशा लोगों की जेबें महीने के आखिरी दिनों में ख़ाली हो जाती हैं इसी तरह खेती पेशा लोग फसल के ख़त्म पर ख़ाली हाथ होते हैं। एक तरफ़ तंगदस्ती दूसरी तरफ़ करीब आमदनी की उम्मीद, इस पर अतिरिक्त यह कि गर्मी के मौसम की शिद्दत, इस कौम के लिये जिसको अभी-अभी एक मुकाबिल के साथ आठ साल लगातार जंगों के बाद ज़रा दम लेने का मौका मिला था, एक इन्तिहाई सब्र वाला इम्तिहान था।

मगर वक़्त का तकाज़ा था, और यह जिहाद अपने अन्दाज़ में पहली सब जंगों से इसलिये भी अलग और ख़ास था कि पहले तो अपनी ही तरह के अ़वाम से जंग थी, और यहाँ रोम के बादशाह हिरक्ल की प्रशिक्षित फ़ौज से मुकाबला था। इसलिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मदीना तय्यिबा के पूरे मुसलमानों को इस जिहाद के लिये निकलने का हुक्म दे दिया, और कुछ आस-पास के दूसरे क़बीलों को भी जिहाद में शिर्कत के लिये दावत दी थी।

यह सार्वजनिक ऐलान इस्लाम के फ़िदाकारों का एक सख़्त इम्तिहान था, और मुनाफ़िक़ दावेदारों के फ़र्क़ करने का भी। इसके अ़लावा लाज़िमी नतीजे के तौर पर इस्लाम का कलिमा पढ़ने वालों के विभिन्न हालात हो गये, क़ुरआने करीम ने उनमें से हर हालत के मुताल्लिक़ अलग-अलग इरशादात फ़रमाये हैं।

एक हालत उन कामिल व मुकम्मल हज़रात की थी जो बिना किसी संकोच के जिहाद के लिये तैयार हो गये। दूसरे वे लोग जो शुरू में कुछ दुविधा के बाद साथ हो गये, इन दोनों तब्क़ों के मुताल्लिक़ क़ुरआने करीम ने फ़रमाया:

الَّذِينَ اتَّبَعُوهُ فِي سَاعَةِ الْعُسْرَةِ مِنْ بَعْدِ مَا كَادَ يَزِيغُ قُلُوبُ لَرِيقٍ مِنْهُمْ.

“यानी वे लोग क़ाबिले तारीफ़ हैं जिन्होंने सख़्त तंगी के वक़्त रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इत्तिबा (हुक्म की पैरवी) किया, बाद इसके कि उनमें से एक पक्ष के दिल चूक और ग़लती करने लगे थे।”

तीसरी हालत उन लोगों की थी जो किसी सही उज़्र (मजबूरी) की बिना पर इस जिहाद में न जा सके। उनके मुताल्लिक़ क़ुरआने करीम ने आयत:

لَيْسَ عَلَى الضُّعَفَاءِ وَلَا عَلَى الْمَرْضَى.

में उनके उज़्र (मजबूरी) के कुबूल होने का इज़हार फ़रमा दिया।

चौथी किस्म उन लोगों की थी जो बावजूद कोई उज़्र न होने के अपनी सुस्ती के सबब जिहाद में शरीक नहीं हुए। उनके बारे में कई आयतें नाज़िल हुईं:

اٰخَرُونَ اعْتَرَفُوا بِذُنُوْبِهِمْ

और:

اٰخَرُونَ مُّرْجَوْنَ لِأَمْرِ اللَّهِ

और:

وَعَلَى الثَّلَاثَةِ الَّذِينَ خَلَفُوا

तीनों आयतें ऐसे ही हज़रात के बारे में नाज़िल हुईं, जिनमें उनकी काहिली (सुस्ती व लापरवाही) पर डाँट-डपट और तंबीह भी है और आखिरकार उनकी तौबा के कुबूल होने की खुशखबरी भी।

पाँचवाँ गिरोह मुनाफ़िकों का था जो अपने निफ़ाक़ (दिखावे के ईमान और दिल में कुफ़्र होने) की वजह से इस सख़्त इम्तिहान में अपने निफ़ाक़ को छुपा न सका, और जिहाद में शिर्कत से अलग रहा। इस तब्क़े का ज़िक्र बहुत सी आयतों में आया है।

छठा तब्क़ा उन मुनाफ़िकों का था जो जासूसी और शरारत के लिये मुसलमानों के साथ हो लिया था, उनकी हालत का ज़िक्र क़ुरआने करीम की इन आयतों में है:

وَفِيكُمْ سَمْعَوْنٌ لَهُمْ وَلَئِن سَأَلْتَهُمْ لَيَقُولُنَّ وَهُمْ أَيْمَانُكُمْ يَنْتَلُونَ

लेकिन इस सारी सख़्ती और तकलीफ़ के बावजूद जिहाद में शिर्कत से रुक जाने वालों की कुल संख्या फिर भी बहुत मामूली थी, भारी अक्सरियत उन्हीं मुसलमानों की थी जो अपने सारे फ़ायदों और राहत को क़ुरबान करके अल्लाह की राह में हर तरह की मशक्कत बरदाश्त करने के लिये तैयार हो गये। इसी लिये उस जिहाद में निकलने वाले इस्लामी लश्कर की तायदाद तीस हज़ार थी, जो उससे पहले किसी जिहाद में नज़र नहीं आई।

नतीजा इस जिहाद का यह हुआ कि जब रोम के बादशाह हिरक्ल को मुसलमानों की इतनी बड़ी जमाअत के मुकाबले पर आने की ख़बर पहुँची तो उस पर रौब तारी हो गया, मुकाबले पर नहीं आया। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपने फ़रिश्तों जैसी ख़स्तत वाले सहाबा-ए-किराम के लश्कर के साथ चन्द दिन जंग के मोर्चे पर क़ियाम करके जब मुख़ालिफ़ के मुकाबले पर आने से मायूस हो गये तो वापस तशरीफ़ ले आये।

जो आयतें ऊपर लिखी गयी हैं बज़ाहिर उनका ताल्लुक़ इस चौथी जमाअत से है जो बग़ैर किसी सही उज़्र (मजबूरी) के अपनी सुस्ती और काहिली की बिना पर शरीके जिहाद नहीं हुए। पहली आयत में उनको इस सुस्ती और ग़फलत पर तंबीह की गयी और उसके साथ उनके इस ग़फलत व काहिली के रोग का सबब और फिर उसका इलाज भी इरशाद फ़रमाया गया, जिसके अंतर्गत यह भी स्पष्ट हो गया कि दुनिया की मुहब्बत और आख़िरत से ग़फलत तमाम अपराधों और बुराईयों की बुनियाद है।

दुनिया की मुहब्बत और आखिरत से ग़फलत तमाम जुर्मों की बुनियाद है

क्योंकि रोग का जो सबब और इलाज इस जगह बयान फरमाया गया है अगरचे इस जगह उसका ताल्लुक एक खास वाकिए से था लेकिन अगर गौर किया जाये तो साबित होगा कि दीन के मामले में हर कोताही, सुस्ती, ग़फलत और तमाम जराईम और गुनाहों का असली सबब यही दुनिया की मुहब्बत और आखिरत से ग़फलत है। इसी लिये हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है:

حُبُّ الدُّنْيَا رَأْسُ كُلِّ خَطِيئَةٍ.

यानी दुनिया की मुहब्बत हर ख़ता व गुनाह की बुनियाद (जड़) है। इसीलिये उक्त आयत में फरमाया गया कि: “ऐ ईमान वालो! तुम्हें क्या हो गया कि जब तुम्हें अल्लाह के रास्ते में निकलने के लिये कहा जाता है तो तुम ज़मीन को लगे जाते हो (हरकत करना नहीं चाहते), क्या तुम आखिरत के बदले सिर्फ दुनिया की ज़िन्दगी पर मगन हो गये!”

रोग की जाँच के बाद उसका इलाज अगले जुमले में इस तरह इरशाद हुआ कि:

“दुनियावी ज़िन्दगी से नफ़ा उठाना तो कुछ भी नहीं, बहुत थोड़ा और हकीर है।”

जिसका हासिल यह है कि बड़ी फ़िक्र आखिरत की हमेशा वाली ज़िन्दगी की करनी चाहिये, और यह आखिरत की फ़िक्र ही दर हकीकत सारे रोगों का एकमात्र और मुकम्मल इलाज है, और अपराधों व गुनाहों की रोकथाम के लिये बेनज़ीर कामयाब नुस्खा है।

इस्लामी अक़ीदों के बुनियादी उसूल तीन हैं- तौहीद, रिसालत और आखिरत। इनमें आखिरत का अक़ीदा दर हकीकत अमल के सुधार की रूह और बुराईयों और गुनाहों के आगे एक लोहे की दीवार है। अगर गौर किया जाये तो बहुत आसानी से मालूम हो जायेगा कि दुनिया में अमन व सुकून इस अक़ीदे के बग़ैर कायम ही नहीं हो सकता। आजकी दुनिया में माही तरक्कियाँ अपने शिखर को पहुँची हुई हैं, अपराधों की रोकथाम के लिये भी किसी मुल्क व कौम में माही तदबीरों की कोई कमी नहीं, कानून की जकड़-बन्द और उसके लिये इन्तिज़ामी मशीनरी दिन प्रति दिन तरक्की पर है, मगर इसके साथ यह भी आँखों देखा हाल है कि जराईम (अपराध) हर जगह और हर कौम में दिन-ब-दिन तरक्की ही पर हैं। हमारी नज़र में इसकी वजह इसके सिवा नहीं कि रोग की जाँच, पहचानने और इलाज का रुख सही नहीं। रोग का स्रोत (असल सबब) मादा-परस्ती (भौतिकवाद) और माही चीज़ों में व्यस्तता, हद से ज्यादा मशगूली और आखिरत से ग़फलत व मुँह मोड़ना है, और इसका एकमात्र इलाज अल्लाह का ज़िक्र और आखिरत की फ़िक्र है। जिस वक़्त और जिस जगह भी दुनिया में इस अचूक नुस्खे को इस्तेमाल किया गया पूरी कौम और उसका समाज सही इन्सानियत की तस्वीर बनकर फ़रिश्तों के लिये काबिले रश्क हो गया। हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम के ज़माने को सामने रखना इसके लिये काफी दलील है।

आजकी दुनिया अपराधों और बुराईयों पर बन्दिश तो चाहती है मगर खुदा तआला और आखिरत से गाफिल होकर चाहती है, और कदम-कदम पर ऐसे सामान जमा करती है जिनमें रहकर खुदा तआला व आखिरत की तरफ ध्यान भी न आये, तो इसका लाजिमी नतीजा वही था जो आँखों के सामने आ रहा है, कि बेहतर से बेहतर कानून और कानूनी मशीनरियाँ सब फेल नज़र आती हैं, अपराध और बुराईयाँ अपनी जगह न सिर्फ मौजूद बल्कि दिन-ब-दिन तूफानी रफ्तार से बढ़ रहे हैं। काश एक मर्तबा दुनिया के बुद्धिजीवी इस कुरआनी नुस्खे को इस्तेमाल करके देखें तो उन्हें मालूम हो कि किस कदर आसानी के साथ अपराधों और बुराईयों पर काबू पाया जा सकता है।

दूसरी आयत में सुस्ती और काहिली बरतने वालों को उनके रोग और इलाज पर आगाह व सचेत करने के बाद आखिरी फैसला यह भी सुना दिया कि:

“अगर तुम जिहाद के लिये न निकले तो अल्लाह तआला तुम्हें दर्दनाक अज़ाब में मुब्तला कर देंगे और तुम्हारी जगह किसी और कौम को खड़ा कर देंगे। और दीन पर अमल न करने से तुम अल्लाह को या अल्लाह के रसूल को कोई नुकसान न पहुँचा सकोगे, क्योंकि अल्लाह तआला हर चीज़ पर कादिर है।”

तीसरी आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हिजरत का वाकिआ पेश करके यह बतला दिया गया कि अल्लाह तआला का रसूल किसी इनसान की नुसरत व मदद का मोहताज नहीं, अल्लाह तआला आपको डायरेक्ट गैब से इमदाद पहुँचा सकते हैं, जैसा कि हिजरत के वक़्त पेश आया, जब आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को आपकी बिरादरी और वतन के लोगों ने वतन से निकलने पर मजबूर कर दिया, सफ़र में आपका साथी भी एक सिदीक़ के सिवा कोई न था। दुश्मनों के प्यादे और सवार पीछा कर रहे थे, आपकी पनाह की जगह भी कोई मज़बूत क़िला न था बल्कि एक ग़ार (खोह और गुफा) था, जिसके किनारे तक तलाश करने वाले दुश्मन पहुँच चुके थे, और ग़ार के साथी हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अन्हु को अपनी जान का तो ग़म न था मगर इसलिये सहम रहे थे कि ये दुश्मन सरदार-ए-दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर हमलावर हो जायेंगे, मगर रसूलुल्लाह हिम्मत व मज़बूती के पहाड़ बने हुए न सिर्फ़ खुद मुत्मईन थे बल्कि अपने साथी सिदीक़ को फ़रमा रहे थे:

لَا تَحْزَنُ إِنَّ اللَّهَ مَعَنَا.

“तुम ग़मगीन न हो, क्योंकि अल्लाह हमारे साथ है।”

यह बात कहने को तो दो लफ़ज़ हैं जिनका बोलना कुछ मुश्किल नहीं, मगर सुनने वाले हालात का पूरा नक्शा सामने रखकर दिल पर हाथ रखकर देखें कि सिर्फ़ माही चीज़ों और असबाब पर नज़र रखने वाले से यह इत्मीनान मुम्किन ही नहीं। इसका सबब उसके सिवा न था जिसको कुरआन ने अगले जुमले में इरशाद फ़रमाया कि:

“अल्लाह तआला ने आपके दिल मुबारक पर तसल्ली नाज़िल फ़रमा दी, और ऐसे लश्करो से आपकी इमदाद फ़रमाई जिनको तुम लोगों ने नहीं देखा।”

यह लश्कर फरिश्तों के लश्कर भी हो सकते हैं और पूरे आलम की कुव्वतें खुद भी खुदाई लश्कर हैं, वो भी हो सकती हैं। जिसका नतीजा यह हुआ कि आखिरकार कुफ्र का कलिमा पस्त होकर रहा और अल्लाह ही का बोलबाला हुआ।

चौथी आयत में फिर ताकीद के तौर पर इस हुक्म को दोहराया कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तुम लोगों को जिहाद के लिये निकलने का हुक्म दे दिया तो तुम पर निकलना हर हाल में फर्ज हो गया, और इस हुक्म की तामील ही में तुम्हारी हर भलाई छुपी हुई है।

पाँचवीं आयत में ग़फलत व सुस्ती की वजह से जिहाद में शरीक न होने वालों के एक उज़्र का बयान करके उसको रद्द किया गया है और फरमाया गया है कि यह उज़्र काबिले कुबूल नहीं। क्योंकि अल्लाह तआला ने उनको जो इस्त्रियार और कुदरत अता फरमाई थी उन्होंने उसको अल्लाह की राह में अपनी हिम्मत भर इस्तेमाल नहीं किया, इसलिये हिम्मत व ताकत न होने का उज़्र (बहाना) सही नहीं।

عَفَا اللَّهُ عَنْكَ، لِمَ أَذْنَتْ لَهُمْ حَتَّى يَتَّبِعِينَ لَكَ الَّذِينَ صَدَقُوا وَتَعْلَمَ الْكَذِبِينَ ۝ لَا يَسْتَأْذِنُكَ الَّذِينَ يُؤْمِنُونَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ أَنْ يُجَاهِدُوا بِأَمْوَالِهِمْ وَأَنْفُسِهِمْ، وَاللَّهُ عَلَيْهِمُ بِالْبَتِّينِ ۝ إِنَّمَا يَسْتَأْذِنُكَ الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَارْتَابَتْ قُلُوبُهُمْ فَهُمْ فِي رَيْبِهِمْ يَتَرَدَّدُونَ ۝ وَلَوْ أَرَادُوا الْخُرُوجَ لَأَعَدُّوا لَهُ عُدَّةً وَلَكِنْ كَرِهَ اللَّهُ انْبِعَاثَهُمْ فَثَبَّطَهُمْ وَقِيلَ اقْعُدُوا مَعَ الْقَاعِدِينَ ۝ لَوْ خَرَجُوا فِئَكُم مَّا زَادُوكُمْ إِلَّا خَبَالًا وَلَا أَوْضَعُوا خِلَالَكُمْ يَبْغُونَكُمُ الْفِتْنَةَ، وَفِيكُمْ سَعَعُونَ لَهُمْ، وَاللَّهُ عَلِيمٌ بِالظَّالِمِينَ ۝ لَقَدْ ابْتَغُوا الْفِتْنَةَ مِنْ قَبْلُ وَقَلَبُوا لَكَ الْأُمُورَ حَتَّى جَاءَ الْحَقُّ وَظَهَرَ أَمْرُ اللَّهِ وَهُمْ كَرِهُونَ ۝ وَمِنْهُمْ مَنْ يَقُولُ ائْذَنْ لِي وَلَا تَفْتِنِّي، أَلَا فِي الْفِتْنَةِ سَقَطُوا وَإِنْ جَهَنَّمُ لَمُحِيطَةٌ بِالْكَافِرِينَ ۝ إِنْ تُصِيبَكَ حَسَنَةٌ تَسُؤْهُمْ، وَإِنْ تُصِيبَكَ مُصِيبَةٌ يَقُولُوا قَدْ أَخَذْنَا أَمْرًا مِنْ قَبْلُ وَيَتَوَلَّوْا وَهُمْ فَرِحُونَ ۝ قُلْ لَنْ يُصِيبَنَا إِلَّا مَا كَتَبَ اللَّهُ لَنَا، هُوَ مَوْلَانَا، وَعَلَى اللَّهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ ۝ قُلْ هَلْ تَرَبَّصُونَ بِنَا إِلَّا أَحَدًا، الْحَسَنِيُّينَ، وَنَحْنُ نَرَبَّصُ بِكُمْ أَنْ يُصِيبَكُمْ اللَّهُ بِعَذَابٍ مِنْ عِنْدِهِ أَوْ بِأَيْدِينَا ۚ فَتَرَبَّصُوا إِنَّا مَعَكُمْ مُتَرَبِّصُونَ ۝

अफ़ल्लाहु अन्-क लि-म अज़िन्-त

लहुम् हत्ता य-तबय्य-न लकल्लज़ी-न

अल्लाह बख़्शे तुझको, क्यों छूट दे दी

तूने उनको यहाँ तक कि ज़ाहिर हो जाते

स-द-कू व तअ-लमल्-काजिबीन (43)
 ला यस्तअजिनुकल्लजी-न युअमिनू-न
 बिल्लाहि वल्यौमिल्-आछारि
 अंग्युजाहिदू बिअम्वालिहिम् व
 अन्फुसिहिम्, वल्लाहु अलीमुम्
 बिल्मुत्ताकीन (44) इन्नमा
 यस्तअजिनुकल्लजी-न ला युअमिनू-न
 बिल्लाहि वल्यौमिल्-आछारि
 वर्ताबत् कुलूबुहुम् फहुम् फी
 रैबिहिम् य-तरद्दून (45) व लौ
 अरादुल्-खुरू-ज ल-अअद्दू लहू
 अुदतंव-व लाकिन् करिहल्लाहुम्-
 -बिअ-सहुम् फ-सब्ब-तहुम् व
 कीलकअुदू मअल्-काजिदीन (46)
 लौ खा-रजू फीकुम् मा जादूकुम्
 इल्ला खाबालंव-व ल-औजअू
 खिलालकुम् यबूनकुमुल्-फित्न-त व
 फीकुम् सम्पाअू-न लहुम्, वल्लाहुम्
 अलीमुम्-बिज्जालिमीन (47)
 ल-कदिब्त-गवुल् फित्न-त मिन्
 कब्नु व कल्लबू ल-कल् उमूर हत्ता
 जाअल्-हक्कु व ज-ह-र अम्रुल्लाहि
 व हुम् कारिहून (48) व मिन्हुम्
 मंग्यकूलुअजल्ली व ला तफित्नी,

तुझ पर सच कहने वाले, और जान लेता
 तू झूठों को। (43) नहीं छूट और
 रियायत माँगते तुझसे वे लोग जो ईमान
 लाये अल्लाह पर और आखिरत के दिन
 पर, इससे कि लड़ें अपने माल और जान
 से, और अल्लाह खूब जानता है डर वालों
 को। (44) छूट वही माँगते हैं तुझसे जो
 नहीं ईमान लाये अल्लाह पर और
 आखिरत के दिन पर और शक में पड़े हैं
 दिल उनके, सो वे अपने शक ही में भटक
 रहे हैं। (45) और अगर वे चाहते
 निकलना तो जरूर तैयार करते कुछ
 सामान उसका लेकिन पसन्द न किया
 अल्लाह ने उनका उठना, सो रोक दिया
 उनको और हुक्म हुआ कि बैठे रहो साथ
 बैठने वालों के। (46) अगर निकलते तुम
 में तो कुछ न बढ़ाते तुम्हारे लिये मगर
 खराबी, और घोड़े दौड़ाते तुम्हारे अन्दर
 बिगाड़ करवाने की तलाश में, और तुम
 में बाजे जासूस हैं उनके, और अल्लाह
 खूब जानता है जालिमों को। (47) वे
 तलाश करते रहे हैं बिगाड़ की पहले से
 और उलटते रहे हैं तेरे काम यहाँ तक कि
 आ पहुँचा सच्चा वायदा और गालिब हुआ
 हुक्म अल्लाह का और वे नाखुश ही रहे।
 (48) और बाजे उनमें कहते हैं कि
 मुझको छूट दे और गुमराही में न डाल,

अला फिल्-फित्नति स-कतू, व
 इन्-न जहन्न-म लमुही-ततुम्
 बिल्काफिरीन (49) इन् तुसिब्-क
 ह-स-नतुन् तसुअहुम् व इन्
 तुसिब्-क मुसीबतुंयकूलू कद्
 अखाज्ना अम्-रना मिन् कब्लु व
 य-तवल्लौ व हुम् फरिहून (50) कुल्
 लंयुसीबना इल्ला मा क-तबल्लाहु
 लना हु-व मौलाना व अलल्लाहि
 फल्य-तवक्कलिल् मुअ्मिनून (51)
 कुल् हल् तरब्बसू-न बिना इल्ला
 इस्दल् हुस्-नयैनि, व नह्नु न-तरब्बसु
 बिकुम् अंयुसी-बकुमुल्लाहु
 बिअज़ाबिम् मिन् अिन्दिही औ
 बिऐदीना फ-तरब्बसू इन्ना म-अकुम्
 मु-तरब्बिसून (52)

सुनता है! वे तो गुमराही में पड़ चुके हैं
 और बेशक दोज़ख़ घेर रही है काफ़िरों
 को। (49) अगर तुझको पहुँचे कोई ख़ूबी
 (भलाई और फायदा) तो वह बुरी लगती
 है उनको, और अगर पहुँचे कोई सख़्ती
 तो कहते हैं हमने तो संभाल लिया था
 अपना काम पहले ही, और लौटकर जायें
 खुशियाँ मनाते। (50) तू कह दे कि
 हमको हरगिज़ न पहुँचेगा मगर वही जो
 लिख दिया अल्लाह ने हमारे लिये, वही है
 हमारा कारसाज़, और अल्लाह ही पर
 चाहिए कि भरोसा करें मुसलमान। (51)
 तू कह दे- तुम क्या उम्मीद करोगे हमारे
 हक़ में मगर दो ख़ूबियों में से एक की,
 और हम उम्मीदवार हैं तुम्हारे हक़ में कि
 डाले तुम पर अल्लाह कोई अज़ाब अपने
 पास से या हमारे हाथों, सो इन्तिज़ार
 करने वाले रहो हम भी तुम्हारे साथ
 इन्तिज़ार करने वाले हैं। (52)

खुलासा-ए-तफसीर

अल्लाह तआला ने आपको माफ़ (तो) कर दिया (लेकिन) आपने उनको (ऐसी जल्दी)
 इजाज़त क्यों दे दी थी? जब तक कि आपके सामने सच्चे लोग ज़ाहिर न हो जाते, और (जब
 तक कि) आप झूठों को मालूम न कर लेते (ताकि वे खुश तो न होने पाते, कि हमने आपको
 धोखा दे दिया। और) जो लोग अल्लाह तआला पर और कियामत के दिन पर ईमान रखते हैं वे
 अपने माल और जान से जिहाद करने के बारे में (उसमें शरीक न होने की कभी) आप से
 रुख़सत न माँगेंगे (बल्कि वे हुक्म के साथ दौड़ पड़ेंगे), और अल्लाह तआला (उन) मुत्तकियों को
 ख़ूब जानता है (उनको अज़्र व सवाब देगा)। अलबत्ता वे लोग (जिहाद में न जाने की) आप से
 रुख़सत माँगते हैं जो अल्लाह पर और कियामत के दिन पर ईमान नहीं रखते, और उनके दिल
 (इस्लाम से) शक़ में पड़े हैं, सो वे अपने शकों में पड़े हुए हैरान हैं (कभी मुवाफ़क़त का ख़्याल

होता है कभी मुखालफ़त का), और अगर वे लोग (लड़ाई में) चलने का इरादा करते (जैसा कि वे अपने उज़्र के वक़्त ज़ाहिर करते हैं कि चलने का तो इरादा था लेकिन क्या किया जाये फुल्लों ज़रूरत पेश आ गयी, सो अगर ऐसा होता) तो उस (चलने) का कुछ सामान तो दुरुस्त करते (जैसा कि आदतन यह चीज़ सफ़र का लाज़िमी हिस्सा है) लेकिन (उन्होंने तो शुरू से इरादा ही नहीं किया, और इसमें ख़ैर हुई जैसा कि आगे आता है कि अगर वे तुम में निकलते.... और उसके ख़ैर होने की वजह से) अल्लाह तआला ने उनके जाने को पसन्द नहीं किया, इसलिए उनको तौफीक नहीं दी, और (कुदरती हुक्म की वजह से यूँ) कह दिया गया कि अपाहिज लोगों के साथ तुम भी यहाँ ही धरे रहो। (और उनके जाने में ख़ैर न होने की वजह यह है कि) अगर ये लोग तुम्हारे साथ शामिल होकर जाते तो सिवाय इसके कि और दोगुना फ़साद करते और क्या होता। (वह फ़साद यह होता कि) तुम्हारे बीच फ़ितना डालने की फ़िक्र में दौड़े-दौड़े फिरते (यानी लगाई बुझाई दिलों में डालने की कोशिश करते, इसलिये उनका न जाना ही अच्छा हुआ) और (अब भी) तुम में उनके कुछ जासूस (मौजूद) हैं (जिनको इससे ज़्यादा फ़साद की तदबीर में महारत नहीं) और (उन) ज़ालिमों को अल्लाह तआला ख़ूब समझेगा।

(और उन लोगों का फ़साद फैलाना और फ़ितने खड़े करना कुछ आज नया नहीं) उन्होंने तो पहले (जंग-ए-उहुद वगैरह में) भी फ़ितना खड़ा करने की फ़िक्र की थी, (कि साथ होकर हट गये ताकि मुसलमानों के दिल टूट जायें) और (इसके अलावा भी) आप (के सताने और नुक़सान पहुँचाने) के लिये कार्रवाईयों की उलट-फेर करते ही रहे, यहाँ तक कि हक़ (का वायदा) आ गया, और (उसका आना यह है कि) अल्लाह का हुक्म ग़ालिब रहा, और उनको नागवार ही गुज़रता रहा (इसी तरह आईन्दा भी बिल्कुल तसल्ली रखिये कुछ फ़िक्र न कीजिए)। और उन (पीछे रह जाने वाले मुनाफ़िकों) में बाज़ा शख़्स वह है जो (आप से) कहता है कि मुझको (जंग में न जाने की और घर रहने की) इजाज़त दे दीजिए और मुझको ख़राबी में न डालिए। ख़ूब समझ लो कि ये लोग ख़राबी में तो पड़ ही चुके हैं (क्योंकि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम की नाफ़रमानी और कुफ़्र से बढ़कर और कौनसी ख़राबी होगी) और यकीनन (आख़िरत में) दोज़ख़ इन काफ़िरों को घेरगी। अगर आपको कोई अच्छी हालत पेश आती है तो वह इनके लिए ग़म का सबब होती है, और अगर आप पर कोई हादसा आ पड़ता है तो (खुश होकर) कहते हैं कि हमने तो (इसी लिए) पहले से अपनी एहतियात का पहलू इस्तियार कर लिया था (कि इनके साथ लड़ाई वगैरह में नहीं गये थे) और (यह कहकर) वे खुश होते हुए वापस चले जाते हैं।

आप (जवाब में इनसे दो बातें) फ़रमा दीजिए (एक तो यह) कि हम पर कोई हादसा नहीं पड़ सकता मगर वही जो अल्लाह ने हमारे लिए मुक़द्दर फ़रमाया है, वह हमारा मालिक है (पस मालिके हकीकी जो तजवीज़ करे मम्लूक को उस पर राज़ी रहना वाजिब है) और (हमारी क्या खुसूसियत है) सब मुसलमानों को अपने सब काम अल्लाह ही के सुपुर्द रखने चाहिए। (दूसरी बात यह) आप फ़रमा दीजिए कि (हमारे लिये जैसी अच्छी हालत बेहतर है वैसे ही हादसे भी अन्जाम के एतिबार से बेहतर हैं कि इसमें दरजात बुलन्द होते और गुनाह ख़त्म होते हैं, पस)

तुम तो हमारे हक़ में दो बेहतरीयों में से एक बेहतरी ही के मुन्तज़िर रहते हो (यानी तुम जो हमारी हालत के मुन्तज़िर रहते हो कि देखिये क्या हो तो चाहे वह अच्छी हो या मुसीबत, हमारे लिये दोनों ही में बेहतरी है) और हम तुम्हारे हक़ में इसके मुन्तज़िर रहा करते हैं कि अल्लाह तआला तुम पर कोई अज़ाब भेजेगा (चाहे) अपनी तरफ़ से (दुनिया या आखिरत में) या हमारे हाथों से, (जबकि तुम अपने कुफ़्र को ज़ाहिर कर दो, तो दूसरे काफ़िरों की तरह क़त्ल किये जाओ) सो तुम (अपने तौर पर) इन्तिज़ार करो (और) हम तुम्हारे साथ (अपने तौर पर) इन्तिज़ार में हैं।

मआरिफ़ व मसाईल

इस पूरे रुकूअ की सत्रह आयतों में से ज्यादातर में उन मुनाफ़िकों का ज़िक्र है जिन्होंने झूठे उज़्र (मजबूरी और बहाने) पेश करके जंग-ए-तबूक में न जाने की इजाज़त रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से हासिल कर ली थी। इसके ज़िम्न में बहुत से अहक़ाम व मसाईल और हिदायतें हैं।

पहली आयत में एक बारीक अन्दाज़ से हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से इस बात की शिकायत है कि इन मुनाफ़िकों ने झूठ बोलकर अपने आपको माज़ूर (मजबूर) ज़ाहिर किया और आपने इससे पहले कि उनके हाल की तहकीक़ करके झूठ सच का पता लगाते उनको रुख़्सत (छूट और इजाज़त) दे दी, जिसकी बिना पर ये लोग खुशियाँ मनाते और यह कहते हुए वापस हुए कि हमने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को ख़ूब धोखा दिया। अगरचे अगली आयतों में हक़ तआला ने इसका भी इज़हार फ़रमा दिया कि ये लोग सिर्फ़ बहाना बनाने के लिये उज़्र पेश कर रहे थे, वरना अगर इनको इजाज़त न दी जाती तब भी ये लोग जाने वाले न थे। और एक आयत में इसका भी इज़हार फ़रमाया कि अगर मान लो ये लोग इस जिहाद में जाते भी तो इनसे मुसलमानों को कोई फ़ायदा न पहुँचता, बल्कि इनकी साज़िश और फ़ितने खड़े करने से और ख़तरा होता।

लेकिन मंशा यह है कि इनको अगर इजाज़त न दी जाती तो फिर भी ये जाने वाले तो न थे मगर इनका निफ़ाक़ (दिल से ईमान वाला न होना) खुल जाता, और इनको मुसलमानों पर ये ताने कसने का मौक़ा न मिलता कि हमने उनको ख़ूब बेवक़ूफ़ बनाया। और मक़सद हकीक़त में नाराज़गी का इज़हार नहीं बल्कि यह बात है कि आईन्दा उन लोगों की चालों से ख़बरदार रहें और देखने में जो एक किस्म की नाराज़गी का इज़हार भी है तो सिर्फ़ लुत्फ़ व इनायत के साथ कि नाराज़गी की बात जो 'लि-म अज़िन्-त लहुम' से शुरू हुई है, यानी आपने उन लोगों को क्यों इजाज़त दे दी, इसके ज़िक्र करने से पहले ही 'अफ़ल्लाहु अन्-क' ज़िक्र फ़रमा दिया, जिसके मायने यह है कि अल्लाह तआला ने आपको माफ़ फ़रमा दिया।

और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पद व मक़ाम और आपके अल्लाह के साथ ताल्लुक़ पर नज़र रखने वाले हज़रात ने फ़रमाया है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम को जो बेइन्तिहा ताल्लुक अल्लाह तआला शानुहू के साथ था उसको सामने रखते हुए आपका दिल मुबारक इसको बरदाश्त ही नहीं कर सकता था कि हक तआला की तरफ से किसी मामले में आप से जवाब तलब किया जाये। अगर शुरू में 'लि-म अजिन्-त लहुम' के अलफाज जिक्र फरमा दिये जाते जिनमें देखने में जवाब-तलबी का उनवान है, तो हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का दिल मुबारक इसको बरदाश्त न कर सकता। इसलिये उससे पहले 'अफल्लाहु अन्-क' फरमाकर एक तरफ तो इस पर मुत्तला कर दिया कि कोई ऐसा काम हो गया है जो अल्लाह के नजदीक पसन्दीदा न था, दूसरी तरफ उसकी माफी की इत्तिला पहले दे दी ताकि अगला कलाम दिल मुबारक पर ज्यादा भारी न हो।

और लफ्ज़ माफी से यह शुब्हा न किया जाये कि माफी तो जुर्म व गुनाह की हुआ करती है, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम गुनाह से मासूम हैं, तो फिर माफी के यहाँ क्या मायने हो सकते हैं। वजह यह है कि माफी जैसे गुनाह की होती है ऐसे ही नामुनासिब और नापसन्दीदा चीज़ के लिये भी माफी का इस्तेमाल किया जा सकता है, और वह मासूम (गुनाहों से सुरक्षित होने) के विरुद्ध नहीं।

दूसरी और तीसरी आयत में मोमिनों और मुनाफिकों का यह फर्क बतला दिया कि अल्लाह तआला पर सही ईमान रखने वाले ऐसे मौके पर कभी अपनी जान व माल की मुहब्बत में जिहाद से जान चुराने के लिये आप से रुख़सत (छूट और इजाज़त) नहीं माँगा करते, बल्कि यह काम सिर्फ उन्हीं लोगों का है जिनका अल्लाह पर और आखिरत के दिन पर ईमान सही नहीं, और अल्लाह तआला मुत्तकी लोगों को ख़ूब जानते हैं।

चौथी आयत में उनका उज़्र (मजबूरी ज़ाहिर करना) ग़लत होने का एक इशारा यह बतलाया गया है कि:

وَلَوْ أَرَادُوا الْخُرُوجَ لَأَعَدُّوا لَهُ عُدَّةً

यानी अगर वाकई ये लोग जिहाद के लिये निकलने का इरादा रखते तो उसके लिये ज़रूरी था कि कुछ तैयारी भी तो करते, लेकिन इन्होंने कोई तैयारी नहीं की, जिससे मालूम हुआ कि उज़्र का बहाना ग़लत था, हकीकत में उनका इरादा ही जिहाद के लिये निकलने का नहीं था।

माक़ूल और नामाक़ूल उज़्र में फ़र्क

इस आयत से एक अहम उसूल निकला जिससे माक़ूल और नामाक़ूल उज़्र में फ़र्क किया जा सकता है। वह यह कि उज़्र उन्हीं लोगों का क़ाबिले क़बूल हो सकता है जो हुक्म की तामील के लिये तैयार हों, फिर किसी इत्तिफ़ाकी हादसे के सबब माज़ूर हो गये, माज़ूरों के तमाम मामलात का यही हुक्म है। जिसने हुक्म की तामील के लिये कोई तैयारी ही नहीं की और इरादा ही नहीं किया, फिर कोई उज़्र भी पेश आ गया तो यह उज़्र न समझा जायेगा। जो शख्स नमाज़े जुमा की हाज़िरी के लिये तैयारी मुकम्मल कर चुका है और जाने का इरादा कर रहा है फिर अचानक कोई

ऐसा उज़्र पेश आ गया जिसकी वजह से न जा सका तो उसका उज़्र माकूल है, और अल्लाह तआला ऐसे शख्स को उसकी इबादत का पूरा अज़्र अता फरमाते हैं, और जिसने कोई तैयारी की ही नहीं, फिर इत्तिफ़ाक़न कोई उज़्र भी सामने आ गया तो वह महज़ एक बहाना है।

सुबह को सवेरे नमाज़ के लिये उठने की तैयारी पूरी की, घड़ी में अलार्म लगाया, या किसी को मुक़रर किया जो वक़्त पर जगाये, फिर इत्तिफ़ाक़ से ये तदबीरें ग़लत हो गयीं जिसकी वजह से नमाज़ क़ज़ा हो गयी, जैसे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को तारीस की रात में पेश आया, कि वक़्त पर जागने के लिये यह इन्तिज़ाम फ़रमाया कि हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु को बैठा दिया कि वह सुबह होते ही सब को जगा दें, मगर इत्तिफ़ाक़ से उन पर भी नींद ग़ालिब आ गयी और सूरज निकल आने के बाद सब की आँख खुली, तो यह उज़्र सही और माकूल है, जिसकी बिना पर हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम को तसल्ली देते हुए फ़रमाया:

لَا تَفْرِيطُ فِي النَّوْمِ إِنَّمَا التَّفْرِيطُ فِي الْيَقَظَةِ.

“यानी नींद में आदमी माज़ूर है, कोताही वह है जो जागते हुए कोताही करे।” वजह यह थी कि अपनी तरफ़ से वक़्त पर जागने का इन्तिज़ाम मुकम्मल कर लिया गया था।

ख़ुलासा यह है कि हुक्म के पालन के लिये तैयारी करने या न करने ही से किसी उज़्र के माकूल या नामाकूल होने का फैसला किया जा सकता है, महज़ ज़बानी जमा-खर्च से कुछ नहीं होता।

पाँचवीं आयत में धोखे से इजाज़त लेने वाले मुनाफ़िकों का यह हाल भी बतला दिया गया कि इनका जिहाद में न जाना ही बेहतर था, अगर ये जाते तो साज़िशों और झूठी ख़बरों से फ़साद ही फैलाते:

وَفِيكُمْ سَمْعُونُ لَهُمْ.

“यानी तुम में कुछ भोले-भाले मुसलमान ऐसे भी हैं जो उनकी झूठी अफवाहों से प्रभावित हो सकते थे।”

لَقَدْ ابْتَغُوا الْفِتْنَةَ مِنْ قَبْلُ.

“यानी ये लोग इससे पहले भी ऐसा फ़ितना व फ़साद फैला चुके हैं।” जैसे जंग-ए-उहुद में पेश आया था।

وَزَهَرَأْمُرُ لِلَّهِ وَهُمْ كَرُهُونَ.

यानी “ग़ालिब आया हुक्म अल्लाह का हालाँकि मुनाफ़िक़ लोग इससे बहुत गुस्से में और बुरा मान रहे थे।” इससे इशारा फ़रमाया कि ग़लबा और फ़तह हक़ तआला के कब्ज़े में है, जैसे पहले वाकिआत में आपको फ़तह दी गयी, इस जिहाद में भी ऐसा ही होगा और मुनाफ़िकों की सब चालें नाकाम हो जायेंगी।

छठी आयत में एक ख़ास मुनाफ़िक़ जद बिन कैस का एक ख़ास बहाना ज़िक्र करके उसकी

गुमराही बयान फ़रमाई है। उसने जिहाद में जाने से यह उज़्र पेश किया था कि मैं नौजवान आदमी हूँ, रूम वालों के मुकाबले पर जाऊँगा तो उनकी हसीन औरतों के फ़ितने में मुब्तला हो जाने का ख़तरा है। क़ुरआने करीम ने उसके जवाब में फ़रमाया:

أَلَا فِي الْفِتْنَةِ مَقْطُورٌ

कि ये बेवक़ूफ़ एक ख़्याली फ़ितने का बहाना करके एक यकीनी फ़ितने यानी रसूल के हुक्म का उल्लंघन करके और जिहाद को छोड़कर गुनाह में फ़िलहाल मुब्तला हो गये।

وَأَنَّ جَهَنَّمَ لَمُحِيطَةٌ بِالْكَافِرِينَ ۝

यानी जहन्नम इन सब काफ़िरों को अपने घेरे में लिये हुए है, जिससे निकल नहीं सकते। इसका मतलब या तो यह है कि आख़िरत में जहन्नम उनको घेरे में ले लेगी और या यह कि जहन्नम में पहुँचने के असबाब जो इस वक़्त उनको अपने घेरे में लिये हुए हैं, उन्हीं को जहन्नम से ताबीर फ़रमा दिया। इस मायने के एतिबार से गोया फ़िलहाल भी ये लोग जहन्नम ही के दायरे में हैं।

सातवीं आयत में उनकी एक और बेमुरव्वती का बयान है कि ये लोग अगरचे ज़ाहिर में मुसलमानों के साथ मिले रहते हैं लेकिन हाल यह है कि:

إِنْ تُصِيبَكَ حَسَنَةٌ تَسُؤْهُمْ

यानी अगर आपको कोई फ़तह और कामयाबी हासिल होती है तो इनको सख्त नागवार होता है:

وَأِنْ تُصِيبَكَ مُصِيبَةٌ يَقُولُوا قَدْ أَخَذْنَا أَمْرًا مِنْ قَبْلٍ وَيَعُولُوا وَهُمْ فَرِحُونَ ۝

“यानी अगर आपको कोई मुसीबत पहुँचती है तो ये लोग कहने लगते हैं कि हम तो पहले ही जानते थे कि ये लोग अपने आपको मुसीबत में डाल रहे हैं, इसी लिये हमने अपनी मस्तेहत को इख़्तियार किया, इनके साथ शरीक नहीं हुए। और यह कहकर वे खुशी-खुशी वापस हो जाते हैं।

आठवीं आयत में हक़ तआला ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और मुसलमानों को मुनाफ़िकों की उक्त बातों से प्रभावित न होने और असल हकीकत को हमेशा सामने रखने की हिदायत इन अलफ़ाज़ में दी:

قُلْ لَنْ يُصِيبَنَا إِلَّا مَا كَتَبَ اللَّهُ لَنَا هُمْ مَوْلَانَا وَعَلَى اللَّهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ ۝

“यानी आप इन माद्दी असबाब (ज़ाहिरी सामान व संसाधनों) की पूजा करने वालों को बतला दीजिए कि तुम धोखे में हो, ये माद्दी असबाब महज़ एक पर्दा हैं, इनके अन्दर काम करने वाली कुव्वत सिर्फ़ अल्लाह तआला की है, हमें जो हाल पेश आता है वह सब वही है जो अल्लाह तआला ने हमारे लिये लिख दिया है, और वही हमारा मौला और मददगार है, और मुसलमानों को चाहिये कि उस पर असली भरोसा रखें, माद्दी असबाब को सिर्फ़ असबाब (माध्यम

एवं साधन) व पहचान ही की हैसियत से देखें, उन पर किसी भलाई या बुराई का मदार न जानें।

तक़दीर पर यकीन के साथ तदबीर का इस्तेमाल होना

चाहिये, बेतदबीरी का नाम तवक्कुल रखना ग़लत है

इस आयत ने तक़दीर और तवक्कुल के मसले की असल हकीकत भी स्पष्ट कर दी, कि तक़दीर व तवक्कुल पर यकीन रखने का यह हासिल न होना चाहिये कि आदमी हाथ पर हाथ रखकर बैठ जाये, और यह कहे कि जो कुछ किस्मत में होगा वह हो जायेगा, बल्कि होना यह चाहिये कि इस्त्रियारी असबाब के लिये अपनी पूरी ताक़त और हिम्मत खर्च की जाये और अपनी हिम्मत भर असबाब जमा करने के बाद मामले को तक़दीर व तवक्कुल के हवाले करें, नज़र सिर्फ़ अल्लाह तआला पर रखें कि हर काम के परिणाम उसी की क़ुदरत के कब्ज़े में हैं।

तक़दीर व तवक्कुल के मसले में आम दुनिया के लोग बड़ी बेएहतियाती में नज़र आते हैं। कुछ बेदीन लोग तो वे हैं जो सिरे से तक़दीर व तवक्कुल के कायल ही नहीं, उन्होंने माद़ी असबाब को खुदा बनाया हुआ है, और कुछ नायाकिफ़ ऐसे भी हैं जिन्होंने तक़दीर व तवक्कुल को अपनी कम-हिम्मती और बेकारी का बहाना बना लिया है। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की जिहाद के लिये पूरी-पूरी तैयारी और उसके बाद इस आयत के नाज़िल होने से इस हद से निकलने और बेएहतियाती को ख़त्म करके सही राह दिखला दी कि इस्त्रियारी असबाब भी अल्लाह तआला ही की दी हुई नेमत हैं, उनसे फ़ायदा न उठाना नाशुक्ऱी और बेवक़ूफी है, अलबत्ता असबाब (साधनों और माध्यमों) को असबाब के दर्जे से आगे न बढ़ाओ, और अक़ीदा यह रखो कि परिणाम और फल इन असबाब के ताबे नहीं, बल्कि हक़ तआला के फ़रमान के ताबे हैं।

नवीं आयत ने मर्दे-मोमिन की एक अलबेली शान का ज़िक्र करके उनकी मुसीबत पर खुश होने वाले मुनाफ़िकों को यह जवाब दे दिया कि तुम जिस चीज़ को हमारे लिये मुसीबत समझकर खुश होते हो हमारे नज़दीक वह मुसीबत भी मुसीबत नहीं, बल्कि राहत व कामयाबी ही की एक दूसरी सूरत है। क्योंकि मर्दे-मोमिन अपने इरादे में नाकाम होकर भी हमेशा के अज़्र व सिले का मुस्तहिक़ बनता है, जो सारी कामयाबियों का असली मक़सद है, इसलिये वह नाकाम होकर भी कामयाब रहता है, और बिगड़ने में भी बनता है:

न शोख़ी चल सकी बादे-सबा की बिगड़ने में भी जुल्फ़ उसकी बना की
जिक्र हुई आयत में:

تَرَبُّصُونَ بِنَا إِلَّا إِحْدَى الْحُسَيْنَيْنِ

का यही मतलब है। इसके साथ ही यह भी बतला दिया कि काफ़िरों का हाल इसके बिल्कुल उलट है, कि उनको किसी हाल में अज़ाब व मुसीबत से छुटकारा नहीं, या तो दुनिया ही

में मुसलमानों के हाथों उन पर खुदा का अज़ाब आ जायेगा, और इस तरह दुनिया व आखिरत दोनों में वे अज़ाब चखेंगे। और अगर दुनिया में किसी तरह इससे बच गये तो आखिरत के अज़ाब से छुटकारे की कोई संभावना नहीं।

قُلْ أَنْفِقُوا طَوْعًا أَوْ كَرْهًا لَنْ يَقْبَلَ مِنْكُمْ دَانِكُمْ كُنْتُمْ قَوْمًا
فَاسِقِينَ ۝ وَمَا مَنَعَهُمْ أَنْ تُقْبَلَ مِنْهُمْ نَفَقَتُهُمْ إِلَّا أَنَّهُمْ كَفَرُوا بِاللَّهِ وَرَسُولِهِ وَلَا يَأْتُونَ
الصَّلَاةَ إِلَّا وَهُمْ كُسَالَى وَلَا يُنْفِقُونَ إِلَّا وَهُمْ كَرِهُونَ ۝ فَلَا تَعْبِكُمْ أَمْوَالُهُمْ وَلَا أَوْلَادُهُمْ
إِنَّمَا يُرِيدُ اللَّهُ لِيُعَذِّبَهُمْ بِهَا فِي الْحَيَاةِ الدُّنْيَا وَتَرْهَقَ أَنْفُسُهُمْ وَهُمْ كَافِرُونَ ۝ وَيَخْلِفُونَ
بِاللَّهِ إِنَّهُمْ لَمِنْكُمْ وَمَا هُمْ مِنْكُمْ وَلَكِنَّهُمْ قَوْمٌ يَفْرُقُونَ ۝ لَوْ يَجِدُونَ مَلْجَأً أَوْ مَغْرَبًا
أَوْ مَدْخَلًا لَوَلَّوْا إِلَيْهِ وَهُمْ يَجْحَدُونَ ۝ وَمِنْهُمْ مَنْ يَلْمِزُكَ فِي الصَّدَقَاتِ فَإِنْ أُعْطُوا مِنْهَا
رَضُوا وَإِنْ لَمْ يُعْطُوا مِنْهَا إِذَا هُمْ يَسْخَطُونَ ۝ وَلَوْ أَنَّهُمْ رَضُوا مَا آتَاهُمُ اللَّهُ وَرَسُولُهُ
وَقَالُوا حَسْبُنَا اللَّهُ سَيُؤْتِينَا اللَّهُ مِنْ فَضْلِهِ وَرَسُولُهُ ۝ إِنَّا إِلَى اللَّهِ رَاغِبُونَ ۝

कुल अन्फिकू तौअन् औ करहल्-
लंय्यु-तकब्ब-ल मिन्कुम्, इन्नकुम्
कुन्तुम् कौमन् फासिकीन (53) व
मा म-न-अहुम् अन् तुक्ब-ल मिन्हुम्
न-फकातुहुम् इल्ला अन्नहुम् क-फरु
बिल्लाहि व बि-रसूलिही व ला
यअतूनस्सला-त इल्ला व हुम्
कुसाला व ला युन्फिकू-न इल्ला व
हुम् कारिहून (54) फला तुअजिबू-क
अम्वालुहुम् व ला औलादुहुम्,
इन्नमा यरीदुल्लाहु लियुअज़िज-बहुम्
बिहा फिल्हयातिद्दुन्या व तज़ह-क
अन्फुसुहुम् व हुम् काफिरून (55)

कह दे कि माल खर्च करो खुशी से या
नाखुशी से हरगिज़ कुबूल न होगा तुमसे,
बेशक तुम नाफरमान लोग हो। (53)
और स्थगित नहीं हुआ कुबूल होना उनके
खर्च का मगर इसी बात पर कि वे
मुन्किर हुए अल्लाह से और उसके रसूल
से और नहीं आते नमाज़ को मगर हारे
जी से, और खर्च नहीं करते मगर बुरे
दिल से। (54) सो तू ताज्जुब न कर
उनके माल और औलाद से, यही चाहता
है अल्लाह कि उनको अज़ाब में रखे इन
चीज़ों की वजह से दुनिया की ज़िन्दगी में
और निकले उनकी जान और वे उस
वक्त तक काफिर ही रहें। (55)

व यहिलफू-न बिल्लाहि इन्नहुम्
 लमिन्कुम्, व मा हुम् मिन्कुम् व
 लाकिन्नहुम् कौमुय्यफरकून (56) लौ
 यजिदू-न मल्ज-अन् औ मगारातिन्
 औ मुद्द-खलल्-लवल्ली इलैहि व
 हुम् यज्महून (57) व मिन्हुम्
 मय्यल्मिजु-क फिस्स-दकाति फ-इन्
 उज्जूत् मिन्हा रज़ू व इल्लम् युज्जूतौ
 मिन्हा इज़ा हुम् यस्-ख़तून (58) व
 लौ अन्नहुम् रज़ू मा आताहुमुल्लाहु
 व रसूलुहू व कालू हस्बुनल्लाहु
 सयुज्ज़ीनल्लाहु मिन् फज़िलही व
 रसूलुहू इन्ना इलल्लाहि
 रागिबून (59) ❀

और कसमें खाते हैं अल्लाह की कि वे
 बेशक तुम में हैं और वे तुम में नहीं, व
 लेकिन वे लोग डरते हैं तुम से। (56)
 अगर वे पायें कोई पनाह की जगह या
 गुफा या सर घुसाने की जगह तो उल्टे
 भागें उसी तरफ़ रस्सियाँ तुड़ाते। (57)
 और बाजे उनमें वे हैं कि तुझको ताने
 देते हैं ख़ैरात बाँटने में, सो अगर उनको
 मिले उसमें से तो राजी हों और अगर न
 मिले तो जब ही वे नाख़ुश हो जायें।
 (58) और क्या अच्छा होता अगर वे
 राजी हो जाते उसी पर जो दिया उनको
 अल्लाह ने और उसके रसूल ने, और
 कहते कि काफी है हमको अल्लाह और
 वह देगा हमको अपने फ़ज़ल से और
 उसका रसूल, हमको तो अल्लाह ही
 चाहिए। (59) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

आप (इन मुनाफ़िकों से) फ़रमा दीजिए कि तुम (जिहाद वगैरह में) चाहे खुशी से खर्च करो
 या नाखुशी से, तुम किसी तरह (खुदा के नज़दीक) मक़बूल नहीं (क्योंकि) बेशक तुम नाफ़रमानी
 करने वाले लोग हो (मुराद इससे कुफ़्र है जैसा कि आगे आता है)। और उनकी (ख़ैर-) ख़ैरात
 कुबूल होने से और कोई चीज़ इसके अलावा रुकावट नहीं कि उन्होंने अल्लाह के साथ और
 उसके रसूल के साथ कुफ़्र किया, (इसी को ऊपर नाफ़रमानी कहा था और काफ़िर का कोई
 अमल मक़बूल नहीं) और (इस अन्दरूनी कुफ़्र की निशानी ज़ाहिर में यह है कि) वे लोग नमाज़
 नहीं पढ़ते मगर हारे जी से, और (नेक काम में) खर्च नहीं करते मगर नागवारी के साथ।
 (क्योंकि दिल में ईमान तो है नहीं जिससे सवाब की उम्मीद हो और उस उम्मीद से रुचि पैदा हो,
 केवल बदनामी से बचने के लिये करते हैं जो कुछ करते हैं, और जब वे ऐसे मरदूद हैं) सो उनके
 माल और औलाद आपको (इस) ताज्जुब में न डालें (कि ऐसे ग़ैर-मक़बूल मरदूद लोगों को इतने
 इनामात किस तरह अता हुए, क्योंकि ये चीज़ें वास्तव में उनके लिये नेमत नहीं एक किस्म का

अज़ाब ही है, क्योंकि) अल्लाह तआला को सिर्फ यह मन्ज़ूर है कि इन (ज़िफ़ की हुई) चीज़ों की वजह से दुनियावी ज़िन्दगी में (भी) उनको अज़ाब में गिरफ़्तार रखे और उनकी जान कुफ़्र ही की हालत में निकल जाये (जिससे आख़िरत में भी अज़ाब में गिरफ़्तार हों, तो जिस माल व औलाद का यह अन्जाम हो उसको इनाम समझना ही ग़लती है)।

और ये (मुनाफ़िक) लोग अल्लाह तआला की कसमें खाते हैं कि वे तुम में के हैं (यानी मुसलमान हैं) हालाँकि (हकीकत में) वे तुम में के नहीं, लेकिन (बात यह है कि) वे डरपोक लोग हैं (डर के मारे झूठी कसमें खाकर अपने कुफ़्र को छुपाते हैं, ताकि हमारे साथ दूसरे काफ़िरों जैसा मामला मुसलमानों की तरफ़ से न होने लगे, और किसी दूसरी जगह उनका ठिकाना नहीं जहाँ आज़ादी से जाकर रहें, वरना) उन लोगों को अगर कोई पनाह मिल जाती, या (कहीं पहाड़ वगैरह में) गुफायें (मिल जाती) या कोई घुस-बैठने की ज़रा सी जगह (मिल जाती) तो वे ज़रूर मुँह उठाकर उधर ही चल देते (मगर यह सूरत है नहीं, इसलिये झूठी कसमें खाकर अपने आपको मुसलमान बताते हैं)।

और उनमें बाज़े वे लोग हैं जो सदकों (को तकसीम करने) के बारे में आप पर ताने मारते हैं (कि उस बंटवारे में नऊजु बिल्लाह इन्साफ़ नहीं किया गया) सो अगर उन (सदकों) में से (उनकी इच्छा के मुवाफ़िक) उनको मिल जाता है तो वे राज़ी हो जाते हैं, और अगर उन (सदकों) में से उनको (उनकी इच्छा व तमन्ना के मुवाफ़िक) नहीं मिलता तो वे नाराज़ हो जाते हैं। (जिससे मालूम हुआ कि उनके एतिराज़ का मन्शा असल में कोई उसूल नहीं, बल्कि दुनिया की हिर्स, लालच और खुदगर्ज़ी है) और (उनके लिये बेहतर होता) अगर वे लोग उस पर राज़ी रहते जो कुछ उनको अल्लाह ने (दिलवाया था) और उसके रसूल ने दिया था, और (उसके मुताल्लिक) यूँ कहते कि हमको अल्लाह (का दिया) काफ़ी है (हमको इतना ही कायदे से मिल सकता था, इसी में ख़ैर व बरकत होगी, और फिर अगर ज़रूरत पेश आयेगी और मस्तेहत होगी तो) आईन्दा अल्लाह अपने फ़ज़ल से हमको (और) देगा, और उसके रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) देंगे। हम (शुरू से) अल्लाह ही की तरफ़ मुतवज्जह हैं (उसी से सब उम्मीदें रखते हैं)।

मआरिफ़ व मसाईल

पहले बयान हुई आयतों में मुनाफ़िकों की बद-अख़लाकी और बुरे आमाल का ज़िक्र था, अब इन ज़िक्र की गयी आयतों में भी यही मज़मून है।

أَمَّا يُرِيدُ اللَّهُ لِيُعَذِّبَهُمْ بِهَا

में जो यह इरशाद फ़रमाया कि मुनाफ़िकों के माल व औलाद उनके लिये नेमत नहीं अज़ाब हैं, वजह इसकी यह है कि दुनिया की मुहब्बत में फंसना इनसान के लिये इस दुनिया ही में एक अज़ाब व मुसीबत बन जाता है। पहले दुनिया के माल को हासिल करने की तमन्नायें और फिर तदबीरों में कैसी-कैसी जिस्मानी व रूहानी मेहनत, मशक्कत और परेशानी उठानी पड़ती है, न दिन का चैन न रात की नींद, न अपने तन बदन की ख़बर, न बाल-बच्चों ही में दिल बहलाने

फुर्सत। फिर अगर वह हासिल हो गया तो उसकी हिफाज़त और उसके बढ़ाने की फ़िक्र दिन का अज़ाब है। और अगर सारी चीज़ें इत्तिफ़ाक़ से तबीयत और इच्छा के मुताबिक़ हासिल हो जायें तो उसके घट जाने का अन्देशा और बढ़ाते चले जाने की फ़िक्र किसी वक़्त चैन न लेने देती।

फिर जब आख़िरकार ये चीज़ें मौत के वक़्त या पहले ही उसके हाथ से जाती हैं तो उस पर यूसी व हसरत मुसल्लत हो जाती है। यह सब अज़ाब ही अज़ाब है, जिसको बेवकूफ़ इन्सान सने राहत के सामान का नाम राहत रख लिया है, और असली राहत यानी दिल के सुकून व मीनान की उसको हवा भी नहीं लगी, इसलिये राहत के सामान ही को राहत समझकर उस पर न रहता है, जो हकीकत में उसके लिये दुनिया के चैन व आराम का भी दुश्मन है और ख़िरत के अज़ाब की शुरूआत भी।

क्या सदकों का माल काफ़िर को दिया जा सकता है?

आख़िरी आयत से मालूम होता है कि सदकों के माल में से मुनाफ़िकों को भी हिस्सा मिला जाता था, मगर वे इच्छा के मुताबिक़ न मिलने पर नाराज़ हो जाते और ताने व तशने करने प़ते थे। यहाँ अगर सदकों से मुराद आम मायने लिये जायें जिसमें वाजिब और नफ़ली सब शक़े सब शामिल हैं तो कोई शुब्हा व एत़िराज़ ही नहीं, क्योंकि नफ़ली सदकों में से ग़ैर-मुस्लिमों को देना उम्मत की सर्वसम्मति से जायज़ और सुन्नत से साबित है, और अगर सदकों से मुराद जगह फ़र्ज़ सदके, ज़कात, उश्र वग़ैरह ही हों तो मुनाफ़िकों को उसमें से हिस्सा देना इस ना पर था कि वे अपने आपको मुसलमान ज़ाहिर करते थे, और ज़ाहिरी कोई हुज्जत (दलील) शक़े कुफ़्र पर कायम न हुई थी, और अल्लाह तआला ने मस्लेहत के सबब हुक्म यही दे रखा कि मुनाफ़िकों के साथ वही मामला किया जाये जो मुसलमानों के साथ किया जाता था।

(तफ़सीर बयानुल-कुरआन संक्षिप्त रूप से)

لَا يَأْتُونَ الصَّلَاةَ إِلَّا وَهُمْ كَسَالَى

इस आयत में मुनाफ़िकों की दो निशानियाँ बतलाई गयी हैं- एक यह कि नमाज़ को आयें सुस्ती काहिली और हारे जी से आयें, दूसरे अल्लाह की राह में खर्च करें तो नागवारी के साथ च करें। इसमें मुसलमानों को भी इस पर तंबीह है कि नमाज़ में सुस्ती, काहिली और ज़कात सदकात से दिली नागवारी पैदा होना निफ़ाक़ की निशानी है, मुसलमानों को कोशिश करके न निशानियों से बचना चाहिये।

إِنَّمَا الصَّدَقَاتُ لِلْفُقَرَاءِ وَالْمَسْكِينِ وَالْعَمِلِينَ عَلَيْهَا

وَالْمُؤَلَّفَةِ قُلُوبُهُمْ وَفِي الرِّقَابِ وَالْغَرَمِيِّينَ وَفِي سَبِيلِ اللَّهِ وَابْنِ السَّبِيلِ ۖ فَرِيضَةً مِّنَ

اللَّهِ ۗ وَاللَّهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ۝

इन्नमस्स-दक़ातु लिल्फु-करा-इ
वल्मसाकीनि वल्अमिली-न अलैहा
वल्मुअल्ल-फति कुलूबुहुम् व फिरिकाबि
वल्गारिमी-न व फी सबीलिल्लाहि
वब्निस्सबीलि, फरी-ज़तम् मिनल्लाहि,
वल्लाहु अलीमुन् हकीम (60)

ज़कात जो है सो वह हक़ है मुफ़लिसों
का और मोहताजों का और ज़कात के
काम पर जाने वालों का और जिनका
दिल परचाना मन्ज़ूर है, और गर्दनों के
छुड़ाने में और जो तावान (जुर्माना) भरें
और अल्लाह के रास्ते में और राह के
मुसाफ़िर को, मुकर्रर किया हुआ है
अल्लाह का, और अल्लाह सब कुछ जानने
वाला हिक्मत वाला है। (60)

खुलासा-ए-तफ़सीर

(फ़ज़ी) सदक़ात तो सिर्फ़ ग़रीबों का हक़ है और मोहताजों का, और जो कार्यकर्ता उन
सदक़ात (के हासिल व वसूल करने) पर मुतैयन हैं, और जिनकी दिलजोई करना (मन्ज़ूर) है, और
गुलामों की गर्दन छुड़ाने में (ख़र्च किया जाये) और कर्ज़दारों के कर्ज़ (अदा करने) में, और जिहाद
(वालों के सामान) में, और मुसाफ़िरों (की इमदाद) में, यह हुक्म अल्लाह की तरफ़ से (मुकर्रर)
है, और अल्लाह तआला बड़े इल्म वाले बड़ी हिक्मत वाले हैं।

मअरिफ़ व मसाईल

सदक़ात के ख़र्च करने की जगहें

इससे पहली आयतों में सदकों के बारे में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर कुछ
मुनाफ़िकों के एतिराज़ों और जवाब का ज़िक्र था, जिसमें मुनाफ़िकों ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु
अलैहि व सल्लम पर यह इल्ज़ाम लगाया था कि आप (अल्लाह की पनाह) सदक़ात की तक़सीम
में इन्साफ़ नहीं करते, जिसको चाहते हैं जो चाहते हैं दे देते हैं।

इस आयत में हक़ तआला ने सदकों के ख़र्च करने की जगहों को मुतैयन फ़रमाकर उनकी
इस ग़लत-फ़हमी को दूर कर दिया कि अल्लाह तआला ने यह बात खुद मुतैयन फ़रमा दी है कि
सदक़ात किन लोगों को देने चाहियें, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सदकों के
बाँटने में अल्लाह के उसी इरशाद की तामील फ़रमाते हैं, अपनी राय से कुछ नहीं करते।

इसकी तस्दीक़ उस हदीस से भी होती है जो अबू दाऊद और दारे कुतनी ने हज़रत ज़ियाद
बिन हारिस सुदाई की रिवायत से नक़ल की है। यह फ़रमाते हैं कि मैं रसूले करीम सल्लल्लाहु
अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ तो मालूम हुआ कि आप उनकी क़ौम के मुकाबले
के लिये मुसलमानों का एक लश्कर ख़ाना फ़रमा रहे हैं। मैंने अज़ किया कि या रसूलल्लाह!

आप लश्कर न भेजें, मैं इसका जिम्मा लेता हूँ कि वे सब ताबेदार व फ़रमाँबरदार होकर आ जायेंगे। फिर मैंने अपनी कौम को ख़त लिखा तो सब के सब मुसलमान हो गये, इस पर आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

يَا أَخَا صَدَاءِ الْمُطَاعِ فِي قَوْمِهِ.

जिसमें गोया उनको यह ख़िताब दिया गया कि यह अपनी कौम के महबूब और लीडर हैं। मैंने अर्ज किया कि इसमें मेरा कोई कमाल नहीं, अल्लाह तआला के करम से उनको हिदायत हो गयी और वे मुसलमान हो गये। यह फ़रमाते हैं कि मैं अभी उस मज्लिस में हाज़िर था कि एक शख्स हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में कुछ सवाल करने के लिये हाज़िर हुआ, आपने उसको यह जवाब दिया कि:

“सदक़ात की तक्सीम को अल्लाह तआला ने किसी नबी या ग़ैर-नबी के भी हवाले नहीं किया, बल्कि खुद ही उसके आठ मस्रफ़ (खर्च के मौक़े) मुतैयन फ़रमा दिये, अगर तुम उन आठ में दाख़िल हो तो तुम्हें दे सकता हूँ.....। (तफ़्सीरे कुर्तुबी, पेज 168 जिल्द 8)

आयत का शाने नुज़ूल मालूम करने के बाद आयत की मुकम्मल तफ़्सीर और व्याख्या सुनने से पहले यह समझ लीजिए कि अल्लाह जल्ल शानुहू ने तमाम मख़्लूक़ात इनसान व हैवान वग़ैरह को रिज़्क देने का वायदा फ़रमाया है:

وَمَا مِنْ ذَاتٍ فِي الْأَرْضِ إِلَّا عَلَى اللَّهِ رِزْقُهَا.

और साथ ही अपनी कामिल हिक्मत से ऐसा नहीं किया कि सब को रिज़्क में बराबर कर देते, ग़नी व फ़कीर का फ़र्क़ न रहता। इसमें इनसान की अख़लाकी तरबियत और दुनिया के निज़ाम (सिस्टम) से संबन्धित सैंकड़ों हिक्मतें हैं जिनकी तफ़्सील का यह मौक़ा नहीं। इस हिक्मत के मातहत किसी को मालदार बना दिया किसी को ग़रीब फ़कीर, फिर मालदारों के माल में ग़रीब फ़कीर का हिस्सा लगा दिया। इरशाद फ़रमाया:

وَفِي أَمْوَالِهِمْ حَقٌّ مَّعْلُومٌ لِلسَّائِلِ وَالْمَحْرُومِ.

जिसमें बतला दिया कि मालदारों के माल में अल्लाह तआला ने एक निर्धारित मात्रा का हिस्सा फ़कीरों ग़रीबों के लिये रख दिया है, जो उन ग़रीबों का हक़ है।

इससे एक तो यह मालूम हुआ कि मालदारों के माल में से जो सदक़ा निकालने का हुक्म दिया गया है यह कोई उनका एहसान नहीं, बल्कि ग़रीबों व फ़कीरों का एक हक़ है, जिसकी अदायेगी उनके जिम्मे ज़रूरी है। दूसरे यह भी मालूम हुआ कि यह हक़ अल्लाह तआला के नज़दीक मुतैयन है, यह नहीं कि जिसका जी चाहे जब चाहे उसमें कमी-बेशी कर दे, अल्लाह तआला ने उस निर्धारित हक़ की मात्रा भी बतलाने का काम रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सुपुर्द फ़रमाया, और इसी लिये आपने उसका इस क़द्र एहतिमाम फ़रमाया कि सहाबा-ए-किराम को सिर्फ़ ज़बानी बतला देने पर किफ़ायत नहीं फ़रमाई, बल्कि इस मामले के मुताल्लिक़ तफ़्सीली फ़रमान लिखवाकर इज़रत फ़ारूके आज़म और अमर बिन हज़म को सुपुर्द

फरमाये, जिससे वाज़ेह तौर पर साबित हो गया कि ज़कात के निसाब और हर निसाब में से ज़कात की मात्रा हमेशा के लिये अल्लाह तआला ने अपने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के माध्यम से मुतैयन करके बतला दी हैं, उसमें किसी ज़माने और किसी मुल्क में किसी को कमी बेशी या तब्दीली का कोई हक नहीं।

सही यह है कि सदके, ज़कात की फ़र्जियत इस्लाम के शुरू दौर ही में मक्का मुकर्रमा के अन्दर नाज़िल हो चुकी थी, जैसा कि इमामे तफ़सीर अल्लामा इब्ने कसीर रह. ने सूर: मुज्ज़म्मिल की आयत “फ-अकीमुस्सला-त व आतुज्ज़का-त” से दलील पकड़ी है, क्योंकि यह सूरत वही की बिल्कुल शुरू के ज़माने की सूरतों में से है, उनमें नमाज़ के साथ ज़कात का हुक्म भी है, अलबत्ता हदीस की रिवायतों से ऐसा मालूम होता है कि इस्लाम के शुरू के दौर में ज़कात के लिये कोई खास निसाब या खास मात्रा मुकर्रर न थी, बल्कि जो कुछ एक मुसलमान की अपनी ज़रूरतों से बच जाये वह सब अल्लाह की राह में खर्च किया जाता था, निसाबों का निर्धारण और ज़कात की मात्रा का बयान मदीना तय्यिबा की हिजरत के बाद हुआ है, और फिर ज़कात व सदकात की वसूलयाबी का निज़ाम मजबूती के साथ तो मक्का फतह होने के बाद अमल में आया है।

इस आयत में सहाबा व ताबिईन के नज़दीक मुत्तफिका तौर पर उसी वाजिब सदके के खर्च करने के मौकों का बयान है जो नमाज़ की तरह मुसलमानों पर फ़र्ज़ है। क्योंकि खर्च करने के जो मौके और जगहें इस आयत में मुतैयन की गयी हैं वो फ़र्ज़ व वाजिब सदकों के खर्च करने के मौके हैं, नफ़ली सदकों में रिवायतों की वज़ाहतों की बिना पर बहुत गुंजाईश है, वो इन आठ मौकों में सीमित नहीं हैं।

अगरचे ऊपर की आयत में सदकात का लफ़्ज़ आम सदकों के लिये इस्तेमाल हुआ है, जिसमें वाजिब और नफ़ली दोनों दाख़िल हैं, मगर इस आयत में उम्मत एकमत है कि फ़र्ज़ सदकों ही के खर्च के मौकों का बयान मुराद है। और तफ़सीरे कुर्तुबी में है कि कुरआन में जहाँ कहीं लफ़्ज़ सदका बिना किसी कैद के बोला गया है और कोई इशारा नफ़ली सदके का नहीं है तो वहाँ फ़र्ज़ सदका ही मुराद होता है।

इस आयत को लफ़्ज़ ‘इन्नमा’ से शुरू किया गया है। यह लफ़्ज़ सीमित व ख़ास करने के लिये इस्तेमाल होता है। इस शुरू ही के कलिमे ने बतला दिया कि सदकों के जो मस़ारिफ़ (खर्च के मौके) आगे बयान हो रहे हैं तमाम वाजिब सदके सिर्फ़ उन्हीं में खर्च होने चाहियें, उनके अलावा किसी दूसरे ख़ैर के मौके और जगह में वाजिब सदके खर्च नहीं हो सकते। जैसे जिहाद की तैयारी या मस्जिदों व मदरसों की तामीर या दूसरे उम्मी फ़ायदे के इदारे, ये सब चीज़ें भी अगरचे ज़रूरी हैं और इनमें खर्च करने का बहुत बड़ा सवाब है, मगर फ़र्ज़ व वाजिब सदके जिनकी मात्रा मुतैयन कर दी गयी हैं, उनको इनमें नहीं लगाया जा सकता।

आयत का दूसरा लफ़्ज़ ‘सदकात’ सदके की जमा (बहुवचन) है। सदका लुग़त में उस माल के हिस्से को कहा जाता है जो अल्लाह के लिये खर्च किया जाये। (क़ामूस) इमाम राग़िब रह. ने

मुफ़दातुल-कुरआन में फ़रमाया कि सद्क़े को सद्का इसलिये कहते हैं कि उसका देने वाला गोया यह दावा करता है कि मैं अपने कौल व फ़ेल में सादिक़ (सच्चा) हूँ, इसके ख़र्च करने की कोई दुनियावी ग़र्ज़ नहीं, बल्कि सिर्फ़ अल्लाह की रज़ा के लिये ख़र्च कर रहा हूँ। इसी लिये जिस सद्क़े में कोई नाम व नमूद या दुनियावी ग़र्ज़ शामिल हो जाये कुरआने करीम ने उसको बेकार और बेजान करार दिया है।

लफ़्ज़ सद्का अपने असली मायने की रू से आम है, नफ़ली सद्क़े को भी कहा जाता है, फ़र्ज़ ज़कात को भी। नफ़िल के लिये इसका इस्तेमाल आम है ही, फ़र्ज़ के लिये भी कुरआने करीम में बहुत जगह यह लफ़्ज़ इस्तेमाल हुआ है। जैसे:

خُذْ مِنْ أَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً

और यही आयत जिसका बयान चल रहा है यानी “इन्मस्सद्कातु” वाली, और इसके अलावा भी हैं, बल्कि अल्लामा कुतुबी की तहकीक़ तो यह है कि कुरआन में जब लफ़्ज़ सद्का आम और बिना किसी क़ैद के बोला जाता है तो उससे फ़र्ज़ सद्का ही मुराद होता है, और हदीस की रिवायतों में लफ़्ज़ सद्का हर नेक काम के लिये भी इस्तेमाल हुआ है, जैसे हदीस में है कि किसी मुसलमान से खुश होकर मिलना भी सद्का है, किसी बोझ उठाने वाले का बोझ उठवा देना भी सद्का है, कुएँ से पानी का डोल अपने लिये निकाला उसमें से किसी को दे देना भी सद्का है। इस हदीस में लफ़्ज़ सद्का मजाज़ी तौर पर आम मायने में इस्तेमाल किया गया है।

तीसरा लफ़्ज़ इसके बाद ‘लिल्फु-क़रा-इ’ से शुरू हुआ है। इसके शुरू में हर्फ़ लाम है जो तख़सीस (ख़ास करने) के मायने में इस्तेमाल होता है, इसलिये जुमले के मायने यह होंगे कि तमाम सद्क़े सिर्फ़ उन्हीं लोगों का हक़ है जिनका ज़िक्र बाद में किया गया है। अब उन आठ मसारिफ़ (ख़र्च करने के मौक़ों) की तफ़्सील सुनिये जो इसके बाद बयान हुए हैं:-

उनमें से पहला मस्रफ़ (ख़र्च का मौक़ा) ग़रीब व फ़कीर लोग हैं। दूसरा मिस्कीन लोग। फ़कीर और मिस्कीन के असली मायने में अगरचे मतभेद है, एक के मायने हैं जिसके पास कुछ न हो, दूसरे के मायने हैं जिसके पास निसाब (ज़कात की मात्रा) से कम हो। लेकिन ज़कात के हुक्म में दोनों बराबर हैं, कोई मतभेद नहीं। जिसका हासिल यह है कि जिस शख्स के पास उसकी असली ज़रूरत से ज़ायद निसाब के बराबर माल न हो उसको ज़कात दी जा सकती है, और उसके लिये ज़कात लेना भी जायज़ है। ज़रूरत में रहने का मकान, इस्तेमाली बरतन और कपड़े और फ़र्नीचर वगैरह सब दाख़िल हैं। निसाब यानी सोना साढ़े सात तौले या चाँदी साढ़े बावन तौले या उसकी कीमत। जिसके पास कुछ चाँदी या कुछ पैसे नक़द हैं और थोड़ा सा सोना है तो सब की कीमत लगाकर अगर साढ़े बावन तौले चाँदी की कीमत के बराबर हो जाये तो वह भी निसाब का मालिक है, उसको ज़कात देना और लेना जायज़ नहीं। और जो शख्स निसाब वाला नहीं मगर तन्दुरुस्त, ताक़तवर और कमाने के काबिल है और एक दिन का गुज़ारा उसके पास भौजूद है उसको अगरचे ज़कात देना जायज़ है मगर यह जायज़ नहीं कि वह लोगों से

सवाल करता फिरे। इसमें बहुत से लोग गुफ़लत बरतते हैं, सवाल करना ऐसे लोगों के लिये हाराम है। ऐसा शख्स जो कुछ सवाल करके हासिल करता है उसको रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जहन्नम का अंगारा फरमाया है। (अबू दाऊद, हज़रत अली की रिवायत से, कुतुबी)

हासिल यह है कि फ़कीर और मिस्कीन में ज़कात के बारे में कोई फ़र्क नहीं, अलबत्ता वसीयत के हुक्म में फ़र्क पड़ता है कि मसाकीन के लिये वसीयत की है तो कैसे लोगों को दिया जाये, और फ़कीरों के लिये है तो कैसे लोगों को दिया जाये, जिसके बयान की यहाँ ज़रूरत नहीं। फ़कीर और मिस्कीन के दोनों मस्फ़ों (खर्च करने के मौकों) में यह बात साझा है कि जिसको ज़कात का माल दिया जाये वह मुसलमान हो और अपनी असल ज़रूरतों से जायद निसाब के बराबर माल का मालिक न हो।

अगरचे आम सदके ग़ैर-मुस्लिमों को भी दिये जा सकते हैं, रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है:

نَصَّدُ قُرَآءَتِي أَهْلَ الْأَدْيَانِ كُلِّهَا

“यानी हर मज़हब वाले पर सदका करो।”

लेकिन ज़कात के सदके के बारे में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत मुआज़ रज़ियल्लाहु अन्हु को यमन भेजने के वक़्त यह हिदायत फ़रमाई थी कि ज़कात का माल सिर्फ़ मुसलमानों के मालदारों से लिया जाये, और उन्हीं के फ़कीरों व ग़रीबों पर खर्च किया जाये, इसलिये ज़कात के माल को सिर्फ़ मुस्लिम ग़रीबों व मिस्कीनों ही पर खर्च किया जा सकता है, ज़कात के अलावा दूसरे सदके यहाँ तक कि सदका-ए-फ़ित्र भी ग़ैर-मुस्लिम फ़कीर को देना जायज़ है। (हिदाया)

और दूसरी शर्त निसाब का मालिक न होने की खुद फ़कीर व मिस्कीन के मायने से स्पष्ट हो जाती है, क्योंकि या तो उसके पास कुछ न होगा, या कम से कम निसाब के माल की मिक़दार से कम होगा, इसलिये फ़कीर और मिस्कीन दोनों इतनी बात में साझी हैं कि उनके पास निसाब के बराबर माल मौजूद नहीं। इन दोनों मस्फ़ों (खर्च के मौकों) के बाद और छह मसारिफ़ का बयान आया है, उनमें से पहला मस्फ़ सदके के कार्यकर्ता हैं।

तीसरा मस्फ़ ‘सदके के आमिलीन’

यहाँ आमिलीन से मुराद वे लोग हैं जो इस्लामी हुक्ूमत की तरफ़ से सदकात, ज़कात और उशर वग़ैरह लोगों से वसूल करके बैतुल-माल (सरकारी खज़ाने) में जमा करने की ख़िदमत पर लगाये हुए होते हैं। ये लोग चूँकि अपना पूरा वक़्त इस ख़िदमत में खर्च करते हैं इसलिये इनकी ज़रूरतों की ज़िम्मेदारी इस्लामी हुक्ूमत पर लागू है। कुरआने करीम की इस आयत ने ज़कात के मसारिफ़ (खर्च के मौकों) में उनका हिस्सा रखकर यह मुतैयन कर दिया कि उनकी मेहनत व ख़िदमत का हक़ इसी ज़कात के फ़ण्ड से दिया जायेगा।

इसमें असल यह है कि हक़ तआला ने मुसलमानों से ज़कात व सदकात वसूल करने का

फरीजा डायरेक्ट रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सुपर्द फरमाया है, जिसका जिक्र इसी सूरत में आगे आने वाली इस आयत में है:

خُذْ مِنْ أَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً

“यानी वसूल करें आप मुसलमानों के मालों में से सदका।” इस आयत का तफसीली बयान तो आईन्दा आयेगा, यहाँ यह बतलाना मन्जूर है कि इस आयत के अनुसार मुसलमानों के अमीर पर यह फरीजा लागू होता है कि वह जकात व सदकात वसूल करे, और यह ज़ाहिर है कि अमीर खुद इस काम को पूरे मुल्क में बगैर अपने सहयोगियों और मददगारों के नहीं कर सकता, उन्हीं सहयोगियों और मददगारों का जिक्र उपर्युक्त आयत में ‘वल्आमिलीन अलैहा’ के अलफ़ाज़ से किया गया है।

इन्हीं आयतों की तामील में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बहुत से सहाबा-ए-किराम को सदके वसूल करने के लिये आमिल (कारकुन) बनाकर विभिन्न खिल्तों में भेजा है, और उपर्युक्त आयत की हिदायत के मुवाफ़िक़ जकात ही की हासिल शुदा रक़म में से उनको उनका मेहनताना दिया है। उनमें वे सहाबी हज़रात भी शामिल हैं जो खुद मालदार थे। हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सदका किसी ग़नी यानी मालदार के लिये हलाल नहीं, सिवाय पाँच शख्सों के- एक वह शख्स जो जिहाद के लिये निकला है और वहाँ उसके पास ज़रूरत के मुताबिक़ माल नहीं, अगरचे घर में मालदार हो। दूसरे सदके का आमिल जो सदका वसूल करने की ख़िदमत अन्जाम देता हो। तीसरे वह शख्स कि अगरचे उसके पास माल है मगर वह मौजूदा माल से ज़्यादा का कर्ज़दार है। चौथे वह शख्स जो सदके का माल किसी ग़रीब मिस्कीन से पैसे देकर ख़रीद ले। पाँचवें वह शख्स जिसे किसी ग़रीब फ़कीर ने सदके का हासिल शुदा माल बतौर हदिये-तोहफ़े के पेश कर दिया हो।

रहा यह मसला कि सदके के आमिलीन को उसमें से कितनी रक़म दी जाये सो इसका हुक्म यह है कि उनकी मेहनत व काम की हैसियत के मुताबिक़ दी जायेगी।

(अहकामुल-कुरआन, जस्सास, तफसीरे कुर्तुबी)

अलबत्ता यह ज़रूरी होगा कि आमिलीन (सदकों को जमा करने वालों) की तन्ज़ाहें जकात की रक़म के आधे से बढ़ने न पायें, अगर जकात की वसूलयाबी इतनी कम हो कि आमिलीन की तन्ज़ाहें देकर आधी रक़म भी बाकी नहीं रहती तो फिर तन्ज़ाहों में कमी की जायेगी, आधे से ज़ायद नहीं खर्च किया जायेगा। (तफसीरे मज़हरी, ज़हीरीया)

उक्त बयान से मालूम हुआ कि सदके के जमा करने के लिये काम करने वालों को जो रक़म जकात की मद से दी जाती है वह सदके की हैसियत से नहीं बल्कि उनकी ख़िदमत का मुआवज़ा है। इसी लिये ग़नी और मालदार होने के बावजूद भी वे उस रक़म के हक़दार हैं, और जकात से उनको देना जायज़ है। और जकात के मसारिफ़ (खर्च के मौकों) की आठ मदों में से सिर्फ़ एक यही मद (रक़म) ऐसी है जिसमें जकात की रक़म ख़िदमत के मुआवज़े के तौर पर दी

जाती है, वरना ज़कात नाम ही उस अतीये का है जो ग़रीबों को बग़ैर किसी मुआवज़ा-ए-ख़िदमत के दिया जाये, और अगर किसी ग़रीब फ़कीर से कोई ख़िदमत लेकर उसको ज़कात का माल दिया गया तो ज़कात अदा नहीं हुई।

इसी लिये यहाँ दो सवाल पैदा होते हैं- अब्बल यह कि ज़कात के माल को ख़िदमत के मुआवज़े में कैसे दिया गया, दूसरे यह कि मालदार के लिये यह ज़कात का माल हलाल कैसे हुआ। इन दोनों सवालों का एक ही जवाब है, कि सदक़े के अमिलीन की असली हैसियत को समझ लिया जाये, वह यह है कि ये हज़रात ग़रीबों-फ़कीरों के वकील की हैसियत रखते हैं, और यह सब ही जानते हैं कि वकील का क़ब्ज़ा असल मुवक्किल के क़ब्ज़े के हुक्म में होता है, अगर कोई शख्स अपना कर्ज़ वसूल करने के लिये किसी को वकील मुख्तार बना दे, और कर्ज़दार यह कर्ज़ वकील को सुपुर्द कर दे तो वकील का क़ब्ज़ा होते ही कर्ज़दार बरी हो जाता है। तो जब ज़कात की रक़म सदक़े के लिये काम करने वालों ने फ़कीरों के वकील होने की हैसियत से वसूल कर ली तो उनकी ज़कात अदा हो गयी, अब यह पूरी रक़म उन फ़कीरों की मिल्क है जिनकी तरफ़ से बतौर वकील उन्होंने वसूल की है, अब जो रक़म ख़िदमत के मुआवज़े के तौर पर उनको दी जाती है वह मालदारों की तरफ़ से नहीं बल्कि फ़कीरों-ग़रीबों की तरफ़ से हुई, और फ़कीरों को उसमें हर तरह के तसरुफ़ करने का इख़्तियार है। उनको यह भी हक़ है कि जब अपना काम उन लोगों से लेते हैं तो अपनी रक़म में से उनको ख़िदमत का मुआवज़ा दे दें।

अब सवाल यह रह जाता है कि फ़कीरों-ग़रीबों ने तो उनको वकील मुख्तार बनाया नहीं, ये उनके वकील कैसे बन गये? इसकी वजह यह है कि इस्लामी हुक्मत का मुखिया जिसको अमीर कहा जाता है वह कुदरती तौर पर अल्लाह की जानिब से पूरे मुल्क के फ़कीरों-ग़रीबों का वकील होता है, क्योंकि उन सब की ज़रूरतों की ज़िम्मेदारी उस पर आयद होती है। हुक्मत का मुखिया जिस-जिसको सदकों की वसूलयाबी पर अमिल (कारकुन) बना दे वे सब उसके नायब की हैसियत से फ़कीरों के वकील हो जाते हैं।

इससे मालूम हो गया कि सदक़े के लिये अमल करने वालों को जो कुछ दिया गया वह दर हकीकत ज़कात नहीं दी गयी बल्कि ज़कात जिन फ़कीरों का हक़ है उनकी तरफ़ से ख़िदमत का मुआवज़ा दिया गया, जैसे कोई ग़रीब फ़कीर किसी को अपने मुकद्दमे का वकील बनाये और उसकी ख़िदमत का मुआवज़ा ज़कात के हासिल शुदा माल से अदा कर दे तो यहाँ न तो देने वाला बतौर ज़कात के दे रहा है और न लेने वाला ज़कात की हैसियत से ले रहा है।

फ़ायदा

बयान हुई तफ़सील से यह भी मालूम हो गया कि आजकल जो इस्लामी मदरसों और अंजुमनों के मोहतमिम, या उनकी तरफ़ से भेजे हुए सफ़ीर सदकात ज़कात वग़ैरह मदरसों और अंजुमनों के लिये वसूल करते हैं, उनका वह हुक्म नहीं जो सदक़े के लिये काम करने वालों का इस आयत में बयान हुआ है, कि ज़कात की रक़म में से उनकी तन्ज़ाह दी जा सके, बल्कि

उनको मदरसों और अंजुमनों की तरफ़ से अलग से तन्ज़ाह देना ज़रूरी है, ज़कात की रक़म से उनकी तन्ज़ाह नहीं दी जा सकती। वजह यह है कि ये लोग फ़कीरों-ग़रीबों के वकील नहीं, बल्कि ज़कात देने वाले मालदारों के वकील हैं, उनकी तरफ़ से ज़कात के माल को सही मस्रफ़ पर लगाने का इनको इस्तिथार दिया गया है, इसी लिये इनका कब्ज़ा हो जाने के बाद भी ज़कात उस वक़्त तक अदा नहीं होती जब तक ये हज़रात उसको सही मस्रफ़ पर खर्च न कर दें।

फ़कीरों का वकील न होना इसलिये ज़ाहिर है कि दर हकीकत किसी फ़कीर ने इनको अपना वकील बनाया नहीं, और अमीरुल-मोमिनीन की आम वलायत की बिना पर जो खुद-ब-खुद ग़रीबों-फ़कीरों की वकालत हासिल होती है वह भी इनको हासिल नहीं, इसलिये सिवाय इसके कोई सूरत नहीं कि इनको ज़कात देने वालों का वकील करार दिया जाये, और जब तक ये उस माल को मस्रफ़ (खर्च की जगह) पर खर्च न कर दें इनका कब्ज़ा ऐसा ही है जैसा कि ज़कात की रक़म खुद माल वाले के पास रखी हो।

इस मामले में आम तौर पर ग़फ़लत (लापरवाही) बरती जाती है, बहुत से इदारे ज़कात का फण्ड वसूल करके उसको सालों साल रखे रहते हैं, और ज़कात देने वाले समझते हैं कि हमारी ज़कात अदा हो गयी, हालाँकि उनकी ज़कात उस वक़्त अदा होगी जब उनकी रक़म ज़कात के मस्रिफ़ में खर्च हो जाये।

इसी तरह बहुत से लोग नावाक़फ़ियत से उन लोगों को सद्क़े के लिये काम करने वालों के हुक्म में दाख़िल समझकर ज़कात ही की रक़म से उनकी तन्ज़ाह देते हैं, यह न देने वालों के लिये जायज़ न लेने वालों के लिये।

एक और सवाल- इबादत पर उजरत

यहाँ एक और सवाल यह पैदा होता है कि कुरआन मजीद के इशारात और रसूले पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हदीसों की बहुत सी स्पष्टताओं से यह बात साबित है कि किसी इबादत पर उजरत व मुआवज़ा लेना हराम है। मुस्नद अहमद की हदीस में हज़रत अब्दुर्रहमान बिन शिबल की रिवायत से मन्कूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

اقْرَأُوا الْقُرْآنَ وَلَا تَاْكُلُوْا مِنْهُ

“यानी कुरआन पढ़ो, मगर उसको खाने का ज़रिया न बनाओ।”

और बाज़ रिवायतों में उस मुआवज़े को जहन्नम का एक टुकड़ा फ़रमाया है जो कुरआन पर लेया जाये। इसकी बिना पर उम्मत के फुक़हा का इत्तिफ़ाक़ है कि नेकियों व इबादतों पर उजरत लेना जायज़ नहीं। और यह भी ज़ाहिर है कि सद्क़ात वसूल करने का काम एक दीनी ख़ेदमत और इबादत है, रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसको एक किस्म का ज़ेहाद फ़रमाया है। इसका तकाज़ा यह था कि इस पर भी कोई उजरत व मुआवज़ा लेना हराम ग़ैत, हालाँकि कुरआने करीम की इस आयत ने स्पष्ट तौर पर इसको जायज़ करार दिया, और

ज़कात के आठ मसारिफ़ (खर्च के मौकों) में इसको दाख़िल फ़रमाया।

इमाम कुर्तुबी ने अपनी तफ़्सीर में इसके बारे में फ़रमाया है कि जो इबादतें फ़र्ज़ ऐन या वाजिब हैं उन पर उजरत लेना बिल्कुल हaram है, लेकिन जो फ़र्ज़ किफ़ाय़ा हैं उन पर कोई मुआवज़ा लेना इसी आयत के हिसाब से जायज़ है। फ़र्ज़ किफ़ाय़ा के मायने यह हैं कि एक काम पूरी उम्मत या पूरे शहर के ज़िम्मे फ़र्ज़ किया गया है, मगर वह लाज़िम नहीं कि सब ही उसको करें, अगर कुछ लोग अदा कर लें तो सब ज़िम्मेदारी से बरी हो जाते हैं, अलबत्ता अगर कोई भी न करे तो सब गुनाहगार होते हैं।

इमाम कुर्तुबी रह. ने फ़रमाया कि इसी आयत से साबित हुआ कि इमामत व ख़िताबत का मुआवज़ा लेना भी जायज़ है, क्योंकि वह भी वाजिब अलल्-ऐन नहीं बल्कि वाजिब अलल्-किफ़ाय़ा हैं। इसी तरह क़ुरआन व हदीस और दूसरे दीनी उलूम की तालीम का भी यही हाल है, कि ये सब काम पूरी उम्मत के ज़िम्मे फ़र्ज़ किफ़ाय़ा हैं, अगर कुछ लोग कर लें तो सब भारमुक्त हो जाते हैं, इसलिये अगर इस पर कोई मुआवज़ा और तन्ख़्वाह ली जाये तो वह भी जायज़ है।

ज़कात के मसारिफ़ में से चौथा मस्रफ़ (खर्च करने की जगह) मुअल्लफ़तुल्-कुलूब हैं। ये वे लोग हैं जिनकी दिलजोई के लिये उनको सदक़े दिये जाते थे। आम तौर पर यह बयान किया जाता है कि उनमें तीन चार किस्म के लोग शामिल थे- कुछ मुसलमान कुछ ग़ैर-मुस्लिम। फिर मुसलमानों में कुछ तो वे लोग थे जो ग़रीब ज़रूरत मन्द भी थे और नवमुस्लिम भी, उनकी दिलजोई इसलिये की जाती थी कि इस्लाम पर पुख़्ता हो जायें। और कुछ वे थे जो मालदार भी थे और मुसलमान हो गये थे, मगर अभी तक ईमान का रंग उनके दिलों में रचा नहीं था। और कुछ वे लोग थे जो खुद तो पक्के मुसलमान थे मगर उनकी क़ौम को उनके ज़रिये हिदायत पर लाना और पुख़्ता करना मक़सूद था। और ग़ैर-मुस्लिमों में भी कुछ वे लोग थे जिनके शर (बुराई) से बचने के लिये उनकी दिलजोई की जाती थी। और कुछ वे थे जिनके बारे में यह तजुर्बा था कि न तब्लीग़ व तालीम से प्रभावित होते हैं, न जंग व सख़्ती से, बल्कि एहसान और अच्छे सुलूक से प्रभावित होते हैं। रहमतुल्-लिल्आलमीन तो यह चाहते थे कि अल्लाह की मख़्लूक को कुफ़्र की अंधेरी से निकाल कर ईमान के नूर में ले आयें, इसके लिये हर वह जायज़ तदबीर करते थे जिससे ये लोग मुतास्सिर हो सकें। ये सब किस्में आम तौर पर “मुअल्लफ़तुल्-कुलूब” में दाख़िल समझी जाती हैं, जिनको सदकात का चौथा मस्रफ़ इस आयत में क़रार दिया है।

चौथा मस्रफ़ मुअल्लफ़तुल्-कुलूब हैं, इनके मुताल्लिक ऊपर यह बतलाया जा चुका है कि ये वे लोग हैं जिनकी दिलजोई के लिये उनको सदकों में से हिस्सा दिया जाता था। आम ख़्याल के मुताबिक़ उनमें मुस्लिम व ग़ैर-मुस्लिम दोनों तरह के लोग थे, ग़ैर-मुस्लिमों की दिलजोई इस्लाम की तरफ़ दिलचस्पी के लिये और नवमुस्लिमों की दिलजोई इस्लाम पर पुख़्ता करने के लिये की जाती थी। आम तौर पर मशहूर यह है कि उनको रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुबारक ज़माने में एक ख़ास वजह और मस्तेहत के लिये जिसका ज़िक्र अभी आ चुका है,

सदकात दिये जाते थे। हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफात के बाद जबकि इस्लाम को मादी कुव्वत भी हासिल हो गयी और काफिरों के शर से बचने या नवमुस्लिमों को इस्लाम पर पुख्ता करने के लिये इस तरह की तदबीरों की ज़रूरत न रही तो वह वजह और मस्लेहत खत्म हो गयी, इसलिये उनका हिस्सा भी खत्म हो गया, जिसको कुछ फुकह (मसाईल के माहिर उलेमा) ने मन्सूख हो जाने से ताबीर फरमाया है। फारूके आजम रज़ियल्लाहु अन्हु, हसन बसरी, इमाम शाबी, इमाम अबू हनीफा, इमाम मालिक बिन अनस रह. की तरफ यही कौल मन्सूब है।

और बहुत से हज़रात ने फरमाया कि मुअल्लफतुल-कुलूब का हिस्सा मन्सूख (खत्म और रद्द) नहीं, बल्कि सिद्दीके अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु और फारूके आजम रज़ियल्लाहु अन्हु के ज़माने में इसको स्थगित करने का मतलब यह है कि ज़रूरत न रहने की वजह से उनका हिस्सा रोक दिया गया, आईन्दा किसी ज़माने में फिर ऐसी ज़रूरत पेश आ जाये तो फिर दिया जा सकता है। इमाम जोहरी, काज़ी अब्दुल-वह्हाब, इब्ने अरबी, इमाम शाफई और इमाम अहमद रह. का यही मज़हब है, लेकिन तहकीकी और सही बात यह है कि गैर-मुस्लिमों को सदकात वगैरह से किसी वक्त किसी ज़माने में हिस्सा नहीं दिया गया, और न ये मुअल्लफतुल-कुलूब में दाखिल हैं, जिनका ज़िक्र सदकात के मसारिफ़ में आया है।

इमाम कुर्तुबी रह. ने अपनी तफ्सीर में उन सब लोगों के नाम तफ्सील के साथ गिनाये हैं जिनकी दिलजोई के लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सदकात की मद (फण्ड और रक़म) से हिस्सा दिया है, और ये सब शुमार करने के बाद फरमाया है:

وَبِالْجُمْلَةِ فَكُلُّهُمْ مُؤْمِنٌ وَلَمْ يَكُنْ فِيهِمْ كَافِرٌ

यानी खुलासा यह है कि मुअल्लफतुल-कुलूब सब के सब मुसलमान ही थे, उनमें कोई काफिर शामिल नहीं था।

इसी तरह तफ्सीरे मज़हरी में है:

لَمْ يَثْبُتْ أَنَّ النَّبِيَّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ أَعْطَى أَحَدًا مِنَ الْكُفَّارِ لِلْإِيْلَافِ شَيْئًا مِنَ الزَّكَاةِ

“यानी यह बात किसी रिवायत से साबित नहीं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने किसी काफिर को ज़कात के माल में से उसकी दिलजोई के लिये हिस्सा दिया हो। इसकी ताईद तफ्सीर-ए-कश्शाफ़ की इस बात से भी होती है कि सदकात के मसारिफ़ का बयान यहाँ उन काफिरों व मुनाफ़िकों के जवाब में आया है जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर सदकों की तफ्सीम के बारे में एतिराज़ किया करते थे कि हमको सदकात नहीं देते। इस आयत में सदकों के मसारिफ़ की तफ्सील बयान फरमाने से मक़सद यह है कि उनको बतला दिया जाये कि काफिरों का कोई हक़ सदक़े के मालों में नहीं है। अगर मुअल्लफतुल-कुलूब में काफिर भी शामिल हों तो इस जवाब की ज़रूरत न थी।

तफ्सीरे मज़हरी में उस मुग़ालते (धोखे) को भी अच्छी तरह वाज़ेह कर दिया है जो हदीस की कुछ रिवायतों के सबब लोगों को पेश आया है, जिनसे यह साबित होता है कि रसूलुल्लाह

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कुछ गैर-मुस्लिमों को कुछ अतीये दिये हैं। चुनाँचे सही मुस्लिम और तिर्मिजी की रिवायत में जो यह मज़कूर है कि हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सफ़वान इब्ने उमैया को काफ़िर होने के ज़माने में कुछ अतीये दिये, इसके मुताल्लिक़ इमाम नववी रह. के हवाले से लिखा है कि ये अतीयात ज़कात के माल से न थे, बल्कि ग़ज़वा-ए-हुनैन के माले ग़नीमत का जो खुम्स (पाँचवाँ हिस्सा) बैतुल-माल में दाख़िल हुआ उसमें से दिये गये। और यह ज़ाहिर है कि बैतुल-माल की इस मद (फण्ड) से मुस्लिम व गैर-मुस्लिम दोनों पर खर्च करना सब फ़ुक़हा के नज़दीक़ जायज़ है। फिर फ़रमाया कि इमाम बैहकी, इब्ने सय्यिदुन्नास, इमाम इब्ने कसीर रह. वग़ैरह सब ने यही क़रार दिया है कि यह माल देना ज़कात से नहीं बल्कि माले ग़नीमत के खुम्स (पाँचवें हिस्से) में से था।

एक बड़ा फ़ायदा

इससे यह भी मालूम हो गया कि खुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुबारक ज़माने में सदकों के माल अगरचे बैतुल-माल में जमा किये जाते थे मगर उनका हिसाब बिल्कुल अलग था, और बैतुल-माल की दूसरी मदों जैसे ग़नीमत के पाँचवें हिस्से या कानों से निकलने वाली चीज़ों और ख़ज़ाने के पाँचवें हिस्से वग़ैरह इनका हिसाब अलग, और हर एक के मसारिफ़ (खर्च करने के मौक़े) अलग थे, जैसा कि उलेमा हज़रात ने इसकी वज़ाहत फ़रमाई है कि इस्लामी हुक्मत के बैतुल-माल में चार मद (हिसाब व फण्ड) अलग-अलग रहनी चाहियें, और असल हुक्म यह है कि सिर्फ़ हिसाब अलग रखना नहीं बल्कि हर एक मद का बैतुल-माल अलग होना चाहिये, ताकि हर एक को उसके मसफ़ में खर्च करने की पूरी एहतियात कायम रहे, अलबत्ता अगर किसी वक़्त किसी ख़ास मद में कमी हो तो दूसरी मद से बतौर कर्ज़ लेकर उस पर खर्च किया जा सकता है, बैतुल-माल की ये मदें इस तरह हैं:

अव्वल खुम्स-ए-ग़नाईम यानी जो माल काफ़िरों से जंग के ज़रिये हासिल हो उसके चार हिस्से मुजाहिदीन में तक़सीम करके बाकी पाँचवाँ हिस्सा बैतुल-माल का हक़ है। और खुम्स-ए-मअ़ादिन यानी विभिन्न किस्म की कानों से निकलने वाली चीज़ों में से पाँचवाँ हिस्सा बैतुल-माल का हक़ है। खुम्स-ए-रिकाज़ यानी जो पुराना ख़ज़ाना किसी ज़मीन से बरामद हो उसका भी पाँचवाँ हिस्सा बैतुल-माल का हक़ है। ये तीनों किस्म के खुम्स बैतुल-माल की एक ही मद में दाख़िल हैं।

दूसरी मद सदकात हैं, जिसमें मुसलमानों की ज़कात, सदका-ए-फ़ित्र और उनकी ज़मीनों का उश्र दाख़िल है।

तीसरी मद ख़िराज और फ़ै का माल है, जिसमें गैर-मुस्लिमों की ज़मीनों से हासिल होने वाला ख़िराज और उनका जिज़या और उनसे हासिल होने वाला व्यापारिक टैक्स और वो तमाम माल दाख़िल हैं जो गैर-मुस्लिमों से उनकी रज़ामन्दी के साथ समझौते के तौर पर हासिल हों।

चौथी मद ज़वाये की है, जिसमें लावारिस माल, लावारिस शख्स की मीरास वग़ैरह दाख़िल

हैं। इन चार मदों के मसारिफ (खर्च की जगहें) अगरचे अलग-अलग हैं लेकिन फकीरों व मसाकीन का हक इन चारों मदों में रखा गया है, जिससे अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि इस्लामी हुकूमत में कौम के इस कमजोर हिस्से को मजबूत करने का किस कद्र एहतिमाम किया गया है, जो दर हकीकत इस्लामी हुकूमत की विशेषता और खूबी है, वरना दुनिया के आम निज़ामों में एक वर्ग विशेष ही बढ़ता रहता है, गरीब को उभरने का मौका नहीं मिलता। जिसके रहेअमल (प्रतिक्रिया) ने इश्तिराकियत और कम्युनिज़म (साम्यवाद) को जन्म दिया, मगर वह बिल्कुल एक गैर-फितरी उसूल और बारिश से भागकर परनाले के नीचे खड़े हो जाने के बराबर और इनसानी अख़लाक के लिये ज़हर-ए-कातिल है।

खुलासा यह है कि इस्लामी हुकूमत में चार बैतुल-माल चार मदों के लिये अलग-अलग मुकरर हैं और ग़रीबों व मिस्कीनों का हक चारों में रखा गया है। उनमें से पहली तीन मदों के मसारिफ (खर्च के मौके) खुद कुरआने करीम ने तफसील के साथ मुतैयन फ़रमाकर वाज़ेह तौर पर बयान कर दिये हैं। पहली मद यानी ग़नीमतों के खुम्स के मसारिफ का बयान सूर: अनफ़ाल दसवें पारे के शुरू में है, और दूसरी मद यानी सदकात के मसारिफ का बयान सूर: तौबा की उपर्युक्त साठवीं आयत में आया है, जिसकी तफसील इस वक़्त बयान हो रही है, और तीसरी मद जिसको इस्तिलाह में फै के माल से ताबीर किया जाता है, उसका बयान सूर: हशर में तफसील के साथ आया है। इस्लामी हुकूमत की अक्सर मदें फौजी खर्चों और हुकूमत के कामों में लगे लोगों की तन्ज़ाहें वगैरह इसी मद से खर्च की जाती हैं। चौथी मद यानी लावारिस माल, रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हिदायतों और खुलफ़ा-ए-राशिदीन के तरीका-ए-अमल से अपाहिज मोहताजों और लावारिस बच्चों के लिये मख़सूस है। (शामी, किताबुज्जकात)

खुलासा-ए-कलाम यह है कि हज़राते फ़ुक़हा ने बैतुल-माल की चारों मदें बिल्कुल अलग-अलग रखने और अपने-अपने निर्धारित मसारिफ में खर्च करने की जो हिदायतें दी हैं, यह सब कुरआनी इरशादात और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फिर खुलफ़ा-ए-राशिदीन के अमल व तरीके से वाज़ेह तौर पर साबित हैं।

इस अंतरिम फ़ायदे के बाद फिर असल मसले 'मुल्लफ़तुल-कुलूब' को समझिये कि उपर्युक्त बयान में मुहक्किनीन, मुहदिसीन व फ़ुक़हा की वज़ाहतों से यह बात साबित हो चुकी है कि मुअल्लफ़तुल-कुलूब का हिस्सा किसी काफ़िर को किसी वक़्त भी नहीं दिया गया, न रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुबारक दौर में और न खुलफ़ा-ए-राशिदीन के ज़माने में, और जिन ग़ैर-मुस्लिमों को देना साबित है वह सदकात व ज़कात की मद से नहीं बल्कि ग़नीमत के खुम्स (पाँचवें हिस्से) में से दिया गया है, जिसमें से हर ज़रूरत मन्द मुस्लिम व ग़ैर-मुस्लिम को दिया जा सकता है। तो मुअल्लफ़तुल-कुलूब सिर्फ़ मुस्लिम रह गये, और उनमें जो ग़रीब हैं उनका हिस्सा बदस्तूर बाकी होने पर पूरी उम्मत का इत्तिफ़ाक़ है, मतभेद सिर्फ़ इस सूरत में रह गया कि ये लोग ग़नी (मालदार) निसाब के बराबर माल के मालिक हों तो इमाम शाफ़ई और इमाम अहमद रह. के नज़दीक घूँकि ज़कात के तमाम मसारिफ में ग़रीबी व तंगदस्ती और हाज़त-मन्दी

शर्त नहीं, इसलिये वे मुअल्लफतुल-कुलूब में ऐसे लोगों को भी दाखिल करते हैं जो ग़नी और निसाब के बराबर माल वाले हैं। इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा और इमाम मालिक रह. के नज़दीक़ सदक़े के जमा करने वाले आमिलीन के अलावा बाकी तमाम मसारिफ़ में गुर्बत व हाजत-मन्दी शर्त है। इसलिये मुअल्लफतुल-कुलूब का हिस्सा भी उनको इसी शर्त के साथ दिया जायेगा कि वे फ़कीर व हाजत-मन्द हों, जैसे तावान भरने वाले, गुलाम व कैदी, मुसाफ़िर वगैरह सब में इसी शर्त के साथ उनको ज़कात दी जाती है कि वे उस जगह हाजत-मन्द हों, अगरचे वे अपने मक़ाम (वतन और घर) में मालदार हों।

इस तहकीक़ का नतीजा यह निकला कि मुअल्लफतुल-कुलूब का हिस्सा चारों इमामों के नज़दीक़ मन्सूख़ (ख़त्म और रद्द) नहीं, फ़र्क़ सिर्फ़ इतना है कि कुछ हज़रात ने फ़कीरों व मसाकीन के अलावा किसी दूसरे मस्रफ़ में गुर्बत व हाजत-मन्दी के साथ लाज़िम नहीं किया और कुछ ने यह शर्त लगायी है। जिन हज़रात ने यह शर्त रखी है वे मुअल्लफतुल-कुलूब में भी सिर्फ़ उन्हीं लोगों को देते हैं जो ज़रूरत मन्द और ग़रीब हों। बहरहाल यह हिस्सा कायम और बाकी है। (तफ़सीरे मज़हरी)

यहाँ तक सदक़ात के आठ मसारिफ़ (खर्च करने की जगहों) में से चार का बयान आया है, इन चारों का हक़ हर्फ़ लाम के तहत बयान हुआ “लिफ़्फ़-करा-इ वल्मसाकीनि”। आगे जिन चार मसारिफ़ का ज़िक्र है उनमें उनवान बदल कर लाम की जगह हर्फ़ फ़ी इस्तेमाल फ़रमाया “व फ़िरिकाबि वल्-ग़ारिमी-न”। अल्लामा ज़मख़शरी ने तफ़सीर-ए-क़श्शाफ़ में इसकी वजह यह बयान की है कि इससे इस बात की तरफ़ इशारा करना मन्ज़ूर है कि ये आखिरी चार मसारिफ़ पहले के चार मसारिफ़ के मुक़ाबले में ज़्यादा मुस्तहिक़ हैं। क्योंकि हर्फ़ फ़ी ज़रफ़ियत के लिये बोला जाता है, जिसकी वजह से मायने यह पैदा होते हैं कि सदक़ात को उन लोगों के अन्दर रख देना चाहिये, और उनके ज़्यादा मुस्तहिक़ होने की वजह उनका ज़्यादा ज़रूरत मन्द होना है। क्योंकि जो शख्स किसी की मिल्क में और गुलाम है आम ग़रीबों के मुक़ाबले में वह ज़्यादा तकलीफ़ में है। इसी तरह जो किसी का कर्ज़दार है और कर्ज़ वसूल करने वालों का उस पर तकाज़ा है वह आम ग़रीबों फ़कीरों से ज़्यादा तंगी में है कि अपने खर्चों की फ़िक्र से भी ज़्यादा कर्ज़दारों के कर्ज़ की फ़िक्र उसके ज़िम्मे है।

इन बाकी बचे चार मसारिफ़ में सबसे पहले ‘व फ़िरिकाबि’ का ज़िक्र फ़रमाया है। रिकाब रक़बा की जमा (बहुवचन) है। असल में गर्दन को रक़बा कहते हैं, आम बोल-चाल में उस शख्स को रक़बा कह दिया जाता है जिसकी गर्दन किसी दूसरे की गुलामी में मुक़ैयद हो।

इसमें फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) का मतभेद है कि रिकाब से मुराद इस आयत में क्या है? फ़ुक़हा व मुहद्दीसीन की अवसरियत इस पर है कि इससे मुराद वे गुलाम हैं जिनके आकाओं ने माल की कोई मात्रा मुतैयन करके कह दिया है कि इतना माल कमाकर हमें दे दो तो तुम आज़ाद हो, जिसको क़ुरआन व सुन्नत की परिभाषा में मुकातब कहा जाता है। ऐसे शख्स को आका इसकी इजाज़त दे देता है कि वह तिजारात या मज़दूरी के ज़रिये माल कमाये

और आका को लाकर दे, उक्त आयत में रिकाब से मुराद यह है कि उस शख्स को ज़कात की रक़म में से हिस्सा देकर उसकी जान छुड़ाने में इमदाद की जाये।

गुलामों की यह किस्म मुफ़सिरीन व फ़ुकहा की सर्वसम्मति से लफ़्ज़ 'व फिरिकाबि' की मुराद है, कि ज़कात की रक़म उनको देकर उनकी गर्दन को छुड़ाने में इमदाद की जाये। इनके अलावा दूसरे गुलामों को ख़रीदकर आज़ाद करना या उनके आकाओं को ज़कात की रक़म देकर यह समझौता कर लेना कि वे उनको आज़ाद कर देंगे, इसमें इमामों और दीनी मसाईल के माहिर उलेमा के बीच मतभेद है। इमामों की अवसरियत- इमाम अबू हनीफ़ा, इमाम शाफ़ई, इमाम अहमद बिन हंबल वगैरह इसको जायज़ नहीं समझते, और हज़रत इमाम मालिक रह. भी एक रिवायत में जमहूर के साथ सहमत हैं कि 'फिरिकाबि' को सिर्फ़ मुकातब गुलामों के साथ मख़सूस फ़रमाते हैं, और एक रिवायत में इमाम मालिक रह. से यह भी मन्कूल है कि वह फिरिकाबि में आम गुलामों को दाख़िल करके इसकी भी इजाज़त देते हैं कि ज़कात की रक़म से गुलाम ख़रीद कर आज़ाद किये जायें। (अहकामुल-कुरआन इब्ने अरबी मालिकी)

इमामों व फ़ुकहा की अवसरियत जो इसको जायज़ नहीं रखते, उनके सामने एक फ़िक्ही इश्काल (शुब्हा) है, कि अगर ज़कात की रक़म से गुलाम को ख़रीदकर आज़ाद किया गया तो उस पर सदक़े की परिभाषा ही पूरी नहीं उतरती, क्योंकि सदक़ा वह माल है जो किसी मुस्तहिक को बिना किसी मुआवज़े के दिया जाये। ज़कात की रक़म अगर आका को दी जाये तो ज़ाहिर है कि न वह ज़कात का मुस्तहिक है और न उसको यह रक़म बिना मुआवज़े और बदले के दी जा रही है, और गुलाम जो ज़कात का मुस्तहिक (पात्र) है उसको यह रक़म दी नहीं गयी। यह अलग बात है कि इस रक़म के देने का फ़ायदा गुलाम को पहुँच गया कि उसने ख़रीद कर आज़ाद कर दिया, मगर आज़ाद करना सदक़े की तारीफ़ में दाख़िल नहीं होता, और असल मायने को बिना वजह छोड़कर सदक़े के मजाज़ी (दूर के) मायने यानी आम मुराद लेने का कोई जवाज़ नहीं, और यह भी ज़ाहिर है कि उक्त आयत में सदक़ात के मसारिफ़ (ख़र्च के मौके) बयान किये जा रहे हैं, इसलिये फिरिकाबि का मिस्ताक़ कोई ऐसी चीज़ नहीं बन सकती जिस पर सदक़े की तारीफ़ ही सादिक (फिट) न आये, और अगर ज़कात की यह रक़म खुद गुलाम को दी जाये तो गुलाम की कोई मिल्क नहीं होती, वह खुद-ब-खुद आका का माल बन जायेगा, फिर आज़ाद करना न करना भी उसके इस्तिथार में रहेगा।

इस फ़िक्ही इश्काल की वजह से इमामों और फ़ुकहा की अवसरियत ने फ़रमाया कि फिरिकाबि से मुराद सिर्फ़ मुकातब गुलाम हैं। इससे यह भी मालूम हो गया कि सदक़े की अदायेगी के लिये यह शर्त है कि किसी मुस्तहिक को मालिक बनाकर उसके कब्ज़े में दे दिया जाये, जब तक मुस्तहिक का मालिकाना कब्ज़ा उस पर नहीं होगा ज़कात अदा नहीं होगी।

छठा मस्रफ़ 'अलग़ारिमीन'। ग़ारिम की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने कर्ज़दार के हैं। यह पहले ज़िक्र किया जा चुका है कि पाँचवाँ और छठा मस्रफ़ जो हर्फ़ फ़ी के साथ बयान किया गया है, पात्रता और हक़ रखने में पहले चारों मसारिफ़ से ज़्यादा हैं, इसलिये गुलाम को आज़ादी

दिलाने के लिये या कर्जदार को कर्ज अदा करने के लिये देना आम फ़कीरों व मसाकीन को देने से ज्यादा अफ़ज़ल है, शर्त यह है कि उस कर्जदार के पास इतना माल न हो जिससे वह कर्ज अदा कर सके, क्योंकि ग़ारिम लुग़त में ऐसे ही कर्जदार को कहा जाता है। और कुछ इमामों व उलेमा ने यह शर्त भी लगाई है कि यह कर्ज उसने किसी नाजायज़ काम के लिये न लिया हो, और अगर किसी गुनाह के लिये कर्ज कर लिया जैसे शराब वग़ैरह या शादी ग़मी की नाजायज़ रस्में वग़ैरह तो ऐसे कर्जदार को ज़कात की मद से न दिया जायेगा, ताकि उसकी नाफ़रमानी और बेजा फ़ुज़ूल ख़र्ची की हौसला अफ़जाई न हो।

सातवाँ मसफ़ 'फी सबीलिल्लाह' है। यहाँ फिर हर्फ़ फ़ी को दोहराया गया। तफ़सीर-ए-क़श्शाफ़ में है कि दोबारा इस फ़ी को लाने से इस तरफ़ इशारा करना मन्ज़ूर है कि यह मसफ़ (ख़र्च का मौक़ा) पहले सब मसारिफ़ से अफ़ज़ल और बेहतर है। वजह यह है कि इसमें दो फ़ायदे हैं- एक तो ग़रीब मुफ़लिस की इमदाद, दूसरे एक दीनी ख़िदमत में सहयोग, क्योंकि फ़ी सबीलिल्लाह (अल्लाह के रास्ते में) से मुराद वह गाज़ी और मुजाहिद है, जिसके पास हथियार और जंग का ज़रूरी सामान ख़रीदने के लिये माल न हो, या वह शख्स जिसके ज़िम्मे हज फ़र्ज हो चुका हो मगर उसके पास अब माल नहीं रहा, जिससे वह फ़र्ज हज अदा करे। ये दोनों काम ख़ालिस दीनी ख़िदमत और इबादत हैं, इसलिये ज़कात के माल को इन पर ख़र्च करने में एक मुफ़लिस की इमदाद भी है और एक इबादत की अदायेगी में सहयोग भी। इसी तरह फ़ुक़हा हज़रात ने तालिब-इल्मों (दीन का इल्म सीखने वालों) को भी इसमें शामिल किया है कि वे भी एक इबादत की अदायेगी के लिये लेते हैं। (रुहुल-मआनी, ज़हीरिया के हवाले से)

और बदाये के लेखक ने फ़रमाया कि हर वह शख्स जो कोई नेक काम या इबादत करना चाहता है और उसकी अदायेगी में माल की ज़रूरत है तो वह भी फ़ी सबीलिल्लाह में दाख़िल है, बशर्ते कि उसके पास इतना माल न हो जिससे उस काम को पूरा कर सके, जैसे दीन की तालीम और तब्लीग़ और उनके लिये प्रकाशन व प्रसार, कि अगर कोई ज़कात का हक़दार यह काम करना चाहे तो उसकी इमदाद ज़कात के माल से कर दी जाये, मगर मालदार निसाब के मालिक को नहीं दिया जा सकता।

बयान हुई तफ़सील से मालूम हुआ कि इन तमाम सूरतों में जो 'फी सबीलिल्लाह' की तफ़सीरें मज़कूर हैं उनमें फ़क़ व ज़रूरत मन्दी की शर्त ध्यान में रखी गयी है। ग़नी (मालदार) निसाब के मालिक का इस मद में भी हिस्सा नहीं, सिवाय इसके कि उसका मौजूदा माल उस ज़रूरत को पूरा न कर सकता हो जो जिहाद के लिये पेश आ गयी है। तो अगरचे निसाब के बराबर माल मौजूद होने की वजह से उसको ग़नी (शर्ई तौर पर मालदार) कह सकते हैं, जैसा कि एक हदीस में उसको ग़नी (मालदार) कहा गया है, मगर वह भी इस एतिबार से फ़कीर व हाजत मन्द ही हो गया कि जिस क़द्र माल जिहाद या हज के लिये दरकार है वह उसके पास मौजूद नहीं। फ़तुल-क़दीर में शैख़ इब्ने हुमाम रह. ने फ़रमाया कि सदकात की आयत में जितने मसारिफ़ (ख़र्च के मौक़े) ज़िक्र किये गये हैं हर एक के अलफ़ाज़ खुद इस पर दलालत करते हैं

कि वे गरीबी व ज़रूरत की बिना पर मुस्तहिक हैं। लफ़्ज़ फ़कीर, मिस्कीन में तो यह ज़ाहिर ही है, रिकाब, ग़ारिमीन, फ़ी सबीलिल्लाह, इब्नुस्सबील के अलफ़ाज़ भी इस तरफ़ इशारा करते हैं कि उनकी ज़रूरत पूरी करने की बिना पर उनको दिया जाता है, अलबत्ता आमिलीन को ख़िदमत के मुआवज़े के तौर पर दिया जाता है, इसी लिये इसमें ग़नी व फ़कीर बराबर हैं, जैसे ग़ारिमीन के मस्रफ़ में बयान किया जा चुका है कि जिस शख्स के ज़िम्मे दस हजार रुपया कर्ज़ है और पाँच हजार रुपया उसके पास मौजूद है तो उसको पाँच हजार के बराबर ज़कात दी जा सकती है, क्योंकि जो माल उसके पास मौजूद है वह कर्ज़ की वजह से न होने के हुक्म में है।

तंबीह

लफ़्ज़ फ़ी सबीलिल्लाह के लफ़्ज़ी मायने बहुत आम हैं, जो-जो काम अल्लाह की रज़ा तलब करने के लिये किये जायें वो सब उस आम मफ़हूम के एतिबार से फ़ी सबीलिल्लाह में दाख़िल हैं। जो लोग रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तफ़सीर व बयान और तफ़सीर के इमामों के इरशादात से नज़र हटाकर महज़ लफ़्ज़ी तर्जुमे के ज़रिये कुरआन समझना चाहते हैं यहाँ उनको यह मुग़ालता लगा है कि लफ़्ज़ फ़ी सबीलिल्लाह देखकर ज़कात के मसारिफ़ में उन तमाम कामों को दाख़िल कर दिया जो किसी हैसियत से नेकी या इबादत हैं। मस्जिदों, मदरसों, शिफ़ा ख़ानों, मुसाफ़िर ख़ानों वगैरह की तामीर, कुएँ, पुल और सड़कें बनाना, और उन उमूमी फ़ायदे के इदारों के मुलाज़िमों की तन्ज़ाहें और तमाम दफ़्तरी ज़रूरतें इन सब को उन्होंने फ़ी सबीलिल्लाह (अल्लाह के रास्ते) में दाख़िल करके ज़कात का मस्रफ़ (खर्च करने का मौका) करार दे दिया, जो सरासर ग़लत है, और उम्मत की सर्वसम्मति के खिलाफ़ है। सहाबा-ए-किराम जिन्होंने कुरआन को डायरेक्ट रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से पढ़ा और समझा है उनकी और ताबिईन में के इमामों की जितनी तफ़सीरें इस लफ़्ज़ के बारे में नक़ल की गयी हैं उनमें इस लफ़्ज़ को हाजियों और मुजाहिदों के लिये मख़सूस करार दिया गया है।

और एक हदीस में है कि एक शख्स ने अपने एक ऊँट को फ़ी सबीलिल्लाह (अल्लाह के रास्ते में) वक्फ़ कर दिया था तो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसको फ़रमाया कि इस ऊँट को हाजियों के सफ़र में इस्तेमाल करो। (मब्सूत, सरख़्सी- पेज 10 जिल्द 3)

इमाम इब्ने जरीर और इमाम इब्ने कसीर कुरआन की तफ़सीर हदीस की रिवायतों ही से करने के पाबन्द हैं, उन सब ने लफ़्ज़ 'फ़ी सबीलिल्लाह' को ऐसे मुजाहिदों और हाजियों के लिये मख़सूस किया है जिनके पास जिहाद या हज का सामान न हो, और जिन फ़ुक़हा हज़रात ने तालिब-इल्मों (दीन का इल्म सीखने वालों) या दूसरे नेक काम करने वालों को इसमें शामिल किया है तो इस शर्त के साथ किया है कि वे फ़कीर व हाजत मन्द हों, और यह ज़ाहिर है कि फ़कीर व हाजत मन्द तो खुद ही ज़कात के मसारिफ़ में सब से पहला मस्रफ़ हैं, उनको फ़ी सबीलिल्लाह के मफ़हूम में शामिल न किया जाता तब भी वे ज़कात के मुस्तहिक़ थे, लेकिन चारों इमामों और उम्मत के फ़ुक़हा में से यह किसी ने नहीं कहा कि अ़वामी फ़ायदों के इदारों और

मसजिद व मदारिस की तामीर और उनकी तमाम ज़रूरतें ज़कात के मसरफ़ (खर्च की जगह और मौके) में दाखिल हैं, बल्कि इसके विपरीत इसकी वज़ाहतें फ़रमाई हैं कि ज़कात का माल इन चीज़ों में खर्च करना जायज़ नहीं। हनफी फ़ुकहा में से शम्सुल-अइम्मा सरख़्सी ने मन्सूत और शरह सियर में और शाफ़ई फ़ुकहा में से अबू उबैद ने किताबुल-अमवाल में और मालिकी फ़ुकहा में से दरदीर ने शरह मुहत्तसर ख़लील में और हंबली फ़ुकहा में से मुवफ़फ़ ने मुग़नी में इसको पूरी तफ़सील से लिखा है।

तफ़सीर के इमामों और उम्मत के फ़ुकहा के ज़िक्र हुए स्पष्टीकरणों के अलावा अगर एक बात पर ग़ौर कर लिया जाये तो इस मसले के समझने के लिये बिल्कुल काफी है, वह यह कि अगर ज़कात के मसले में इतना उमूम (फैलाव और आम होना) होता कि तमाम नेक कामों, इबादतों और हर किस्म की नेकी पर खर्च करना इसमें दाखिल हो तो फिर कुरआन में इन आठ मसारिफ़ (खर्च के मौक़ों) का बयान (मआज़ल्लाह) बिल्कुल फ़ुज़ूल हो जाता है, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद जो पहले इसी सिलसिले में बयान हो चुका है कि आपने फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने सदकात के मसारिफ़ (खर्च के मौक़ों) मुतैयन करने का काम नबी को भी सुपुर्द नहीं किया, बल्कि खुद ही उसके आठ मसारिफ़ मुतैयन फ़रमा दिये।

तो अगर फ़ी सबीलिल्लाह के मफ़हूम में तमाम ताज़तें और नेकियाँ दाखिल हैं और उनमें से हर एक में ज़कात का माल खर्च किया जा सकता है तो मआज़ल्लाह (अल्लाह की पनाह) यह इरशादे नबवी बिल्कुल ग़लत ठहरता है। मालूम हुआ कि फ़ी सबीलिल्लाह के लुग़वी तर्जुमे से जो नावाकिफ़ को उमूम समझ में आता है वह अल्लाह की मुराद नहीं है, बल्कि मुराद वह है जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बयान और सहाबा व ताबिईन की वज़ाहतों से साबित है।

आठवाँ मसरफ़ इब्नुस्सबील है। सबील के मायने रास्ता और इब्न का लफ़ज़ असल में तो बेटे के लिये बोला जाता है, लेकिन अरबी मुहावरों में इब्न और अबुन और अख़ुन वगैरह के अलफ़ाज़ उन चीज़ों के लिये भी बोले जाते हैं जिनका गहरा ताल्लुक किसी से हो। इसी मुहावरे के मुताबिक़ इब्नुस्सबील, राहगीर व मुसाफ़िर को कहा जाता है। क्योंकि उनका गहरा ताल्लुक रास्ता तय करने और मन्ज़िले मक़सूद पर पहुँचने से है, और ज़कात के मसारिफ़ में इससे मुराद वह मुसाफ़िर है जिसके पास सफ़र में ज़रूरत के मुताबिक़ माल न हो, अगरचे उसके वतन में उसके पास कितना ही माल हो। ऐसे मुसाफ़िर को ज़कात का माल दिया जा सकता है, जिससे वह अपने सफ़र की ज़रूरतें पूरी कर लै, और वतन वापस जा सके।

यहाँ तक उन आठ मसारिफ़ का बयान पूरा हो गया जो उक्त आयत में सदकात व ज़कात के लिये बयान फ़रमाये गये हैं, अब कुछ ऐसे मसाईल बयान किये जाते हैं जिनका ताल्लुक इन तमाम मसारिफ़ से समान रूप से है।

मसला-ए-तमलीक

फ़ुकहा (मसाईल के माहिर उलेमा) की अक्सरियत इस पर एकमत है कि ज़कात के

निर्धारित आठ मसारिफ़ में भी ज़कात की अदायेगी के लिये यह शर्त है कि उन मसारिफ़ में से किसी मुस्तहिक को ज़कात के माल पर मालिकाना कब्ज़ा दे दिया जाये, बग़ैर मालिकाना कब्ज़ा दिये अगर कोई माल उन्हीं लोगों के फ़ायदे के लिये खर्च कर दिया गया तो ज़कात अदा नहीं होगी। इसी वजह से चारों इमामों और फ़ुक़हा-ए-उम्मत की अक्सरियत इस पर एकमत हैं कि ज़कात की रक़म को मस्जिदों और मदरसों या शिफ़ाख़ानों, यतीम ख़ानों की तामीर में या उनकी दूसरी ज़रूरतों में खर्च करना जायज़ नहीं, अगरचे इन तमाम चीज़ों से फ़ायदा उन फ़ुक़रा और दूसरे हज़रात को पहुँचता है जो ज़कात का मस्रफ़ हैं, मगर उनका मालिकाना कब्ज़ा इन चीज़ों पर न होने के सबब ज़कात इससे अदा नहीं होती।

अलबत्ता यतीम ख़ानों में अगर यतीमों का ख़ाना कपड़ा वग़ैरह मालिकाना हैसियत से दिया जाता है तो सिर्फ़ उतने खर्च की हद तक ज़कात की रक़म खर्च हो सकती है। इसी तरह शिफ़ा ख़ानों में जो दवा ज़रूरत मन्द ग़रीबों को मालिकाना हैसियत से दे दी जाये उसकी कीमत ज़कात की रक़म में लगाई जा सकती है। इसी तरह उम्मत के उलेमा की वज़ाहतें हैं कि लावारिस मय्यित का कफ़न ज़कात की रक़म से नहीं लगाया जा सकता, क्योंकि मय्यित में मालिक होने की सलाहियत नहीं, हाँ यह हो सकता है कि ज़कात की रक़म किसी ग़रीब मुस्तहिक को दे दी जाये और वह अपनी खुशी से उस रक़म को लावारिस मय्यित के कफ़न पर खर्च कर दे। इसी तरह अगर उस मय्यित के जिम्मे कर्ज़ है तो उस कर्ज़ को ज़कात की रक़म से डायरेक्ट अदा नहीं किया जा सकता, हाँ उसके वारिस ग़रीब ज़कात के मुस्तहिक हों तो उनको मालिकाना तौर से दिया जा सकता है। वे उस रक़म के मालिक होकर अपनी रज़ामन्दी के साथ उस रक़म से मय्यित का कर्ज़ अदा कर सकते हैं। इसी तरह आम फ़ायदों के सब काम जैसे कुआँ या पुल या सड़क वग़ैरह की तामीर, अगरचे इनका फ़ायदा ज़कात के मुस्तहिक लोगों को भी पहुँचता है मगर उनका मालिकाना कब्ज़ा न होने के सबब इससे ज़कात की अदायेगी नहीं होती।

इन मसालों में चारों मुज्ताहिद इमाम- इमाम अबू हनीफ़ा, इमाम शाफ़ई, इमाम मालिक, इमाम अहमद बिन हंबल रह. और फ़ुक़हा-ए-उम्मत की अक्सरियत एकमत है। शम्सुल-अइम्मा सरख़्सी ने इस मसले को इमाम मुहम्मद की किताबों की शरह मब्सूत और शरह सियर में पूरी तहकीक़ और तफ़सील के साथ लिखा है, और शाफ़ई, मालिकी, हंबली फ़ुक़हा की आम किताबों में इसकी वज़ाहतें मौजूद हैं।

शाफ़ई फ़कीह इमाम अबू उबैद ने किताबुल-अमवाल में फ़रमाया कि मय्यित की तरफ़ से उसके कर्ज़ की अदायेगी या उसके दफ़न के खर्चों में और मसाजिद की तामीर में, नहर खोदने वग़ैरह में ज़कात का माल खर्च करना जायज़ नहीं, क्योंकि हज़रत सुफ़ियान सौरी रह. और तमाम इमाम हज़रात इस पर सहमत हैं कि उसमें खर्च करने से ज़कात अदा नहीं होती, क्योंकि ये उन आठ मसारिफ़ (खर्च करने की जगहों) में से नहीं हैं जिनका ज़िक्र कुरआन करीम में आया है।

इसी तरह हंबली फ़कीह मुवफ़फ़ रह. ने मुग़नी में लिखा है कि सिवाय उन मसारिफ़ के जिनका बयान कुरआने करीम में भज़कूर है और किसी नेक काम में ज़कात का माल खर्च करना

जायज़ नहीं, जैसे मस्जिदों या पुलों और पानी की सबीलों की तामीर, या सड़कों की मरम्मत या मुर्दों को कफ़न देना या मेहमानों को खाना खिलाना वगैरह, जो बिला शुब्हा सवाब का ज़रिया हैं, मगर सद्कात के मसारिफ़ में दाख़िल नहीं।

मलिकुल-उलेमा ने बदाये में ज़कात की अदायेगी के लिये तमलीक (मालिक बनाने) की शर्त की यह दलील दी है कि कुरआन में उम्मन ज़कात और वाजिब सद्कात का लफ़्ज़ ईता (देने) के साथ ज़िक्र किया गया है। जैसे फ़रमाया:

أَقَامُوا الصَّلَاةَ وَآتُوا الزَّكَاةَ،

أَقِيمُوا الصَّلَاةَ وَآتُوا الزَّكَاةَ،

أَقَامِ الصَّلَاةَ وَآتِ الزَّكَاةَ،

آتُوا حَقَّهُ يَوْمَ حَصَادِهِ.

वगैरह। और लफ़्ज़ ईता लुग़त में अता करने के मायने में आता है। इमाम राग़िब अस्फ़हानी रह. ने मुफ़रदातुल-कुरआन में फ़रमाया:

وَالْإِيتَاءُ الْإِعْطَاءُ وَخَصَّ وَضَعَ الصَّدَقَةِ فِي الْقُرْآنِ بِالْإِيتَاءِ.

“यानी ईता के मायने अता फ़रमाने के हैं, और कुरआन में वाजिब सद्के अदा करने को ईता के लफ़्ज़ के साथ मख़सूस फ़रमाया है।”

और ज़ाहिर है कि किसी को कोई चीज़ अता करने का असली मतलब यही है कि उसको उस चीज़ का मालिक बना दिया जाये।

और ज़कात व सद्कात के अलावा भी लफ़्ज़ ईता कुरआने करीम में मालिक बना देने ही के लिये इस्तेमाल हुआ है, जैसे:

آتُوا النِّسَاءَ صَدُقَتِهِنَّ.

यानी दे दो औरतों को उनके मेहर। ज़ाहिर है कि मेहर की अदायेगी तब ही मानी जाती है जब मेहर की रक़म पर औरत का मालिकाना कब्ज़ा करा दे।

दूसरे यह कि कुरआने करीम में ज़कात को सद्के के लफ़्ज़ से ताबीर फ़रमाया है:

إِنَّمَا الصَّدَقَتُ لِلْفُقَرَاءِ.

और सद्के के असली मायने यही हैं कि किसी फ़कीर हाजत मन्द को उसका मालिक बना दिया जाये।

किसी को खाना खिला देना या आम फ़ायदे के कामों में खर्च कर देना असल मायने के एतिबार से सद्का नहीं कहलाता। शैख़ इब्ने हुमाम ने फ़तहुल-कदीर में फ़रमाया कि हकीकत सद्के की भी यही है कि किसी फ़कीर को उस माल का मालिक बना दिया जाये। इसी तरह इमाम जस्सास ने अहकामुल-कुरआन में फ़रमाया कि लफ़्ज़ सद्का तमलीक (मालिक बना देने) का नाम है। (तफ़सीरे जस्सास, पेज 52 जिल्द 2)

ज़कात अदा करने के मुताल्लिक कुछ अहम मसाल्ल

मसला: सही हदीस में है कि हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत मुआज़ रज़ियल्लाहु अन्हु को सदकात वसूल करने के बारे में यह हिदायत दी थी कि:

خُذْهَا مِنْ أَغْيَايِهِمْ وَرُدَّهَا فِيْ فُقَرَائِهِمْ.

यानी सदकात मुसलमानों के मालदारों से लेकर उन्हीं के फ़कीरों में खर्च कर दो। इसकी बिना पर फ़ुकहा (मसाल्ल के माहिर उलेमा) ने फ़रमाया है कि बिना ज़रूरत एक शहर या बस्ती की ज़कात दूसरे शहर या बस्ती में न भेजी जाये, बल्कि उसी शहर और बस्ती की फ़कीर-ग़रीब उसके ज़्यादा हक़दार हैं, अलबत्ता अगर किसी शख्स के करीबी रिश्तेदार ग़रीब हैं और वे किसी दूसरे शहर में हैं तो अपनी ज़कात उनको भेज सकता है, क्योंकि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसमें दोहरे अज़्र व सवाब की खुशख़बरी दी है।

इसी तरह अगर किसी दूसरी बस्ती के लोगों का फ़क़ व फ़ाक़ा और अपने शहर से ज़्यादा ज़रूरत मालूम हो तो भी वहाँ भेजा जा सकता है, क्योंकि सदकात देने का मक़सद फ़कीरों की आवश्यकता को दूर करना है, इसी वजह से हज़रत मुआज़ रज़ियल्लाहु अन्हु यमन के सदकात में अक्सर कपड़े लिया करते थे ताकि ग़रीब मुहाजिरीन के लिये मदीना तय्यिबा भेज दें।

(तफ़सीरे कुतुबी, दारे कुतनी के हवाले से)

अगर एक शख्स खुद किसी शहर में रहता है मगर उसका माल दूसरे शहर में है तो जिस शहर में खुद रहता है उसका एतबार होगा, क्योंकि ज़कात के अदा करने का मुखातब यही शख्स है। (तफ़सीरे कुतुबी)

मसला: जिस माल की ज़कात वाजिब है उसकी अदायेगी के लिये यह भी जायज़ है कि उसी माल का चालीसवाँ हिस्सा निकाल कर मुस्तहिक़ लोगों को दे दे। जैसे तिजारी कपड़ा, बर्तन, फ़र्नीचर वगैरह, और यह भी सही है कि ज़कात के माल के बराबर कीमत निकाल कर वो कीमत मुस्तहिक़ लोगों में तक़सीम करे। सही हदीसों से ऐसा करना साबित है। (तफ़सीरे कुतुबी)

और कुछ फ़कीह इमांमों ने फ़रमाया कि इस ज़माने में नक़द कीमत ही देना ज़्यादा बेहतर है, क्योंकि ग़रीबों की ज़रूरतें विभिन्न और अधिक हैं, नक़द पैसों को किसी भी ज़रूरत के काम में लाया जा सकता है।

मसला: अगर अपने रिश्तेदार ग़रीब लोग ज़कात के मुस्तहिक़ हों तो उनको ज़कात व सदकात देना ज़्यादा बेहतर और दोहरा सवाब है- एक सवाब सदके का, दूसरा सिला-रहमी का। इसमें यह भी ज़रूरी नहीं कि उनको यह बताकर और जाहिर करके दे कि सदका या ज़कात दे रहा हूँ, किसी तोहफ़े या हदिये के नाम से भी दिया जा सकता है, ताकि लेने वाले शरीफ़ आदमी को अपनी ज़िल्लत और हल्कापन महसूस न हो।

मसला: जो शख्स अपने आपको अपने कौल या अमल से ज़कात का मुस्तहिक़ और ज़रूरत

मन्द ज़ाहिर करे और सदकें वगैरह का सवाल करे, क्या देने वालों के लिये यह ज़रूरी है कि उसके असली और वास्तविक हालात की तहकीक़ करे, और बगैर उसके सदका न दे? इसके बारे में हदीस की रिवायतें और फ़ुक़हा के अक़वाल ये हैं कि इसकी ज़रूरत नहीं, बल्कि उसके ज़ाहिरी हाल से अगर यह गुमान ग़ालिब हो कि यह शख्स हकीक़त में फ़कीर और ज़रूरत मन्द है तो उसको ज़कात दी जा सकती है, जैसा कि हदीस में है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में कुछ लोग बहुत ही शिकस्ता हालत में आये, आपने उनके लिये लोगों से सदकात जमा करने के लिये फ़रमाया, काफी मात्रा जमा हो गयी तो वह उनको दे दी गयी। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसकी ज़रूरत नहीं समझी कि उन लोगों के अन्दरूनी हालात की छानबीन फ़रमाते। (तफ़सीरे कुर्तुबी)

अलबत्ता इमाम कुर्तुबी ने अहकामुल-क़ुरआन में फ़रमाया कि सदकों के मसारिफ़ में से एक कर्ज़दार भी है, अगर कोई शख्स यह कहे कि मेरे ज़िम्मे इतना कर्ज़ है, उसकी अदायेगी के लिये मुझे ज़कात की रक़म दे दी जाये तो उस कर्ज़ का सुबूत उससे तलब करना चाहिये। (कुर्तुबी) और ज़ाहिर यह है कि ग़ारिम (जुर्माना भरने वाला), फ़ी सबीलिल्लाह (अल्लाह के रास्ते में निकलने वाले), इब्नुस्सबील (मुसाफ़िर) वगैरह में भी ऐसी तहकीक़ कर लेना दुश्वार नहीं, इन मसारिफ़ में मौक़े के अनुसार तहकीक़ कर लेना चाहिये।

मसला: ज़कात का माल अपने अज़ीज़ रिश्तेदारों को देना ज़्यादा सवाब है, मगर मियाँ बीवी और माँ-बाप व औलाद आपस में एक दूसरे को नहीं दे सकते। वजह यह है कि उनको देना एक हैसियत से अपने ही पास रखना है, क्योंकि उन लोगों के मसारिफ़ (खर्च के मौक़े) उमूमन साझा होते हैं। शौहर ने अगर बीवी को या बीवी ने शौहर को अपनी ज़कात दे दी तो दर हकीक़त वह अपने ही इस्तेमाल में रही, इसी तरह माँ-बाप और औलाद का मामला है, औलाद की औलाद और दादा परदादा का भी यही हुक्म है कि उनको ज़कात देना जायज़ नहीं।

मसला: अगर किसी शख्स ने किसी शख्स को अपने गुमान के मुताबिक़ मुस्तहिक़ और ज़कात का मस्रफ़ समझकर ज़कात दे दी, बाद में मालूम हुआ कि वह उसी का गुलाम या काफ़िर था तो ज़कात अदा नहीं होगी, दोबारा देनी चाहिये। क्योंकि गुलाम की मिल्कियत तो आका ही की मिल्कियत होती है, वह उसकी मिल्क से निकला ही नहीं, इसलिये ज़कात अदा नहीं हुई, और काफ़िर ज़कात का मस्रफ़ (खर्च का मौक़ा) नहीं है।

इसके अलावा अगर बाद में यह साबित हो कि जिसको ज़कात दी गयी है वह मालदार या सैयद हाशमी या अपना बाप या बेटा या बीवी या शौहर है तो ज़कात को दोबारा देने की ज़रूरत नहीं, क्योंकि ज़कात की रक़म उसकी मिल्क से निकलकर सवाब के महल में पहुँच चुकी है, और मस्रफ़ के निर्धारण में जो ग़लती किसी अंधेरे या मुग़ालते की वजह से हो गयी वह माफ़ है। (दुर्रे मुख़्तार) सदकात की आयत की तफ़सीर और उससे संबन्धित मसालों की तफ़सील ज़रूरत के मुताबिक़ पूरी हो गयी।

وَمِنْهُمْ الَّذِينَ يُؤْذُونَ النَّبِيَّ وَيَقُولُونَ هُوَ أَذُنٌ قُلْ أَذُنٌ
خَيْرٌ لَّكُمْ يُؤْمِنُ بِاللَّهِ وَيُؤْمِنُ لِلْمُؤْمِنِينَ وَرَحْمَةٌ لِّلَّذِينَ آمَنُوا مِنْكُمْ وَالَّذِينَ
يُؤْذُونَ رَسُولَ اللَّهِ لَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ۝ يَخْلِفُونَ بِاللَّهِ لَكُمْ لِيَرْضَوْكُمْ وَاللَّهُ وَرَسُولُهُ
أَحَقُّ أَنْ يَرْضَوْهُ إِنَّ كَانُوا مُؤْمِنِينَ ۝ أَلَمْ يَعْلَمُوا أَنَّهُ مَنْ يُحَادِدِ اللَّهَ وَرَسُولَهُ فَأَنَّ
لَهُ نَارَ جَهَنَّمَ خَالِدًا فِيهَا ذَلِكَ الْخِزْيُ الْعَظِيمُ ۝ يَحْذَرُ الْمُنَافِقُونَ أَنْ تُنْزَلَ عَلَيْهِمْ
سُورَةٌ تَتْلِيهِمْ بِمَا فِي قُلُوبِهِمْ قُلْ اسْتَهِزُّوْا إِنَّا اللَّهُ مُخْرِجٌ مَا تَحْذَرُونَ ۝ وَلَئِنْ سَأَلْتَهُمْ
لَيَقُولَنَّ إِنَّمَا كُنَّا نَخُوضُ وَنَلْعَبُ قُلْ أَبِاللَّهِ وَآيَاتِهِ وَرَسُولِهِ كُنْتُمْ تَسْتَهْزِءُونَ ۝ لَا
تَعْتَذِرُوا قَدْ كَفَرْتُمْ بَعْدَ إِيمَانِكُمْ إِنَّ نَعْفَ عَنْ طَائِفَةٍ مِنْكُمْ يُغِيبُ طَائِفَةٌ بِأَنَّهُمْ
كَانُوا مُجْرِمِينَ ۝

व मिन्हुमुल्लजी-न युअज़ूनन्नबिय-य
व यकूलू-न हु-व उज़्जुनुन्, कुल्
उज़्जुनु खैरिल्लिकुम् युअमिनु बिल्लाहि
व युअमिनु लिल्मुअमिनी-न व
रस्मतुल् लिल्लजी-न आमनू मिन्कुम्,
वल्लजी-न युअज़ू-न रसूलल्लाहि
लहुम् अज़ाबुन् अलीम (61)
यह्लिफू-न बिल्लाहि लकुम्
लियुरज़ूकुम् वल्लाहु व रसूलुहु
अहक्कु अय्युरज़ूहु इन् कानू
मुअमिनीन (62) ▲ अलम् यअलमू
अन्नहू मय्युहादिदिल्ला-ह व रसूलहू
फ-अन्-न लहू ना-र जहन्न-म
खालिदन् फीहा, जालिकल् खिज़्युल्-

और बाजे उनमें बदगोई करते हैं नबी की
और कहते हैं यह शख्स तो कान है, तू
कह कान है तुम्हारे भले के वास्ते, यकीन
रखता है अल्लाह पर और यकीन करता
है मुसलमानों की बात का, और रहमत है
ईमान वालों के हक में तुम में से, और
जो लोग बदगोई करते हैं अल्लाह के
रसूल की उनके लिये अज़ाब है दर्दनाक।
(61) कसमें खाते हैं अल्लाह की तुम्हारे
आगे ताकि तुमको राजी करें, और
अल्लाह को और उसके रसूल को बहुत
जरूरी है राजी करना अगर वे ईमान
रखते हैं। (62) ▲ क्या वे जान नहीं
चुके कि जो कोई मुकाबला करे अल्लाह
से और उसके रसूल से तो उसके वास्ते है
दोज़ख की आग, हमेशा रहे उसमें, यही

अजीम (63) यहज़रुल् मुनाफिकू-न
 अन् तुनज़ज़-ल अलैहिम् सूरतुन्
 तुनब्बिउहुम् बिमा फी कुलूबिहिम्,
 कुलिस्तहिज़ऊ इन्नल्ला-ह मुख़िज़ुम्
 मा तहज़रुन (64) व ल-इन्
 सअल्लतहुम् ल-यकूलुन्-न इन्नमा
 कुन्ना नख़ूज़ु व नलअबु, कुल्
 अबिल्लाहि व आयातिही व रसूलिही
 कुन्तुम् तस्तहिज़ऊन (65) ला
 तज़ूतज़िरु कद् कफरतुम् बज़्-द
 ईमानिकुम्, इन्-नज़्फु अन्
 ताइ-फ़तिम् मिन्कुम् नुअज़िज़ब्
 ताइ-फ़तम् बिअन्नहुम् कानू
 मुज़िमीन (66) ●

है बड़ी रुस्वाई। (63) डरा करते हैं
 मुनाफिक इस बात से कि नाज़िल हो
 मुसलमानों पर ऐसी सूरत कि जता दे
 उनको जो उनके दिल में है, तू कह दे
 मजाक उड़ाते रहो, अल्लाह खोल कर
 रहेगा उस चीज़ को जिसका तुमको डर
 है। (64) और अगर तू उनसे पूछे तो वे
 कहेंगे हम तो बातचीत करते थे और
 दिल्लगी, तू कह- क्या अल्लाह से और
 उसके हुक्मों से और उसके रसूल से तुम
 ठट्टे करते थे? (65) बहाने मत बनाओ
 तुम तो काफिर हो गये ईमान जाहिर
 करने के बाद, अगर हम माफ़ कर देंगे
 तुम में से कुछ को तो अलबत्ता अज़ाब
 भी देंगे बाज़ों को, इस सबब से कि वे
 गुनाहगार थे। (66) ●

खुलासा-ए-तफ़सीर

और उन (मुनाफिकों) में से बाज़े ऐसे हैं कि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को
 तकलीफें पहुँचाते हैं (यानी आपकी शान में ऐसी बातें कहते हैं कि सुनकर आपको तकलीफ़ हो)
 और (जब कोई रोकता है तो) कहते हैं कि आप हर बात कान देकर सुन लेते हैं (आपको झूठ
 बोलकर धोखा दे देना आसान है, इसलिये कुछ फ़िक्र नहीं), आप (जवाब में) फ़रमा दीजिये कि
 (तुमको खुद धोखा हुआ, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का किसी बात को सुन लेना
 दो तरीक़े पर है- एक तस्दीक़ के तौर पर कि दिल से भी उसको सही समझें, दूसरे सादगी और
 अच्छे अख़्लाक़ के प्रदर्शन के तौर पर, कि बावजूद यह जान लेने के कि यह बात बिल्कुल ग़लत
 है शराफ़ते नफ़्स और अच्छे अख़्लाक़ की बिना पर उसको टाल दें और कहने वाले पर पकड़
 और पूछगछ न करें या उसको स्पष्ट तौर पर न झुठलायें, सो) वह नबी कान देकर तो वही बात
 सुनते हैं जो तुम्हारे हक़ में ख़ैर (ही ख़ैर) है, (जिसका हासिल और नतीजा यह है) कि वह
 अल्लाह (की बातें वही से मातूम करके उन) पर ईमान लाते हैं (जिनकी तस्दीक़ का ख़ैर होना
 तमाम आलम के लिये जाहिर है, क्योंकि तालीम देना और अदल व इन्साफ़ इसी तस्दीक़ पर
 मौक़ूफ़ है), और (सच्चे मुख़्तस) मोमिनों (की बातों) का (जो ईमान व इख़्लास की हैसियत से

हों) यकीन करते हैं, (इसका ख़ैर होना भी ज़ाहिर है कि आम अदल मौक़ूफ़ है हालात की सही जानकारी पर और उसका माध्यम यही सच्चे मुख़्तस मोमिन हैं। गर्ज़ कि कान देकर और सच्चा समझकर तो सिर्फ़ सच्चे और मुख़्तस लोगों की बातें सुनते हैं) और (बाकी तुम्हारी शरारत भरी बातें जो सुन लेते हैं तो इसकी वजह यह है कि) आप उन लोगों के हाल पर मेहरबानी फ़रमाते हैं जो तुम में ईमान का इज़हार करते हैं (अगरचे दिल में ईमान न हो। पस इस मेहरबानी और अच्छा अख़लाक़ बरतने की वजह से तुम्हारी बातें सुन लेते हैं और बावजूद उसकी हकीक़त समझ जाने के दरगुज़र और ख़ामोशी बरतते हैं। पस उन बातों का सुनना दूसरे अन्दाज़ का है, तुमने अपनी बेवक़ूफी से इसको भी पहले अन्दाज़ और तरीक़े पर महमूल कर लिया। खुलासा यह कि तुम यह समझते हो कि नबी-ए-पाक हकीक़त को नहीं समझते और वास्तव में हकीक़त को तुम ही नहीं समझते)। और जो लोग अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को तकलीफ़ें पहुँचाते हैं (चाहे उन बातों से जिनके कहने के बाद उजुन कहा था या खुद इसी हु-व उजुनुन के कहने से, क्योंकि उनका आपको उजुन "कान" कहना आपके अपमान के लिये था कि मज़ल्लाह आपको समझ नहीं, जो कुछ सुन लेते हैं उसको मान लेते हैं) उनके लिए दर्दनाक सज़ा होगी। ये लोग तुम्हारे (मुसलमानों के) सामने अल्लाह तआला की (झूठी) क़समें खाते हैं (कि हमने फ़ुलॉ बात नहीं कही, या हम जंग में फ़ुलॉ मजबूरी से न जा सके) ताकि तुमको राज़ी कर लें (जिस से माल व जान महफ़ूज़ रहे) हालाँकि अल्लाह और उसका रसूल ज़्यादा हक़ रखते हैं, कि अगर ये लोग सच्चे मुसलमान हैं तो उसको राज़ी करें (जो कि मौक़ूफ़ है इज़्ज़ास और ईमान पर)।

क्या इनको ख़बर नहीं कि जो शख्स अल्लाह की और उसके रसूल की मुख़ालफ़त करेगा (जैसा कि ये लोग कर रहे हैं) तो यह बात तय हो चुकी है कि ऐसे शख्स को दोज़ख़ की आग (इस तौर पर) नसीब होगी (कि) वह उसमें हमेशा रहेगा (और) यह बड़ी रुस्वाई (की बात) है। मुनाफ़िक़ लोग (तबई तौर पर) इससे अन्देशा करते हैं कि मुसलमानों पर (पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वही के ज़रिये) कोई ऐसी सूरः (मसलन या आयत) नाज़िल (न) हो जाये जो उनको उन (मुनाफ़िक़ों) के दिल के हाल की इत्तिला दे दे। (यानी उन्होंने जो मज़ाक़-ठट्ठा उड़ाने की बातें छुपकर की हैं जो कि मुसलमानों के एतिबार से वो उन भेदों की तरह हैं जो दिलों में छुपे हैं, उनकी ख़बर न हो जाये) आप फ़रमा दीजिये कि अच्छा तुम मज़ाक़ उड़ाते रहो (इसमें उनके मज़ाक़ उड़ाने पर बाख़बर हो जाने को जतला दिया, चुनाँचे आगे खुद इरशाद है कि) बेशक अल्लाह तआला उस चीज़ को ज़ाहिर करके रहेगा जिस (के इज़हार) से तुम अन्देशा करते थे (चुनाँचे ज़ाहिर कर दिया कि तुम मज़ाक़ उड़ा रहे थे) और (ज़ाहिर हो जाने के बाद) अगर आप उनसे (उस मज़ाक़ उड़ाने की वजह) पूछें तो कह देंगे कि हम तो बस मज़ाक़ और दिल्लगी कर रहे थे (इस कलाम के असली मायने मक़सूद न थे, केवल जी खुश करने को जिससे सफ़र आसानी से कट जाये ऐसी बातें जुबानी कर रहे थे)। आप (उनसे) कह दीजिए कि क्या अल्लाह के साथ और उसकी आयतों के साथ और उसके रसूल के साथ तुम हंसी करते थे?

(यानी चाहे गुर्ज कुछ भी हो मगर यह तो देखो कि तुम मज़ाक़ किसका उड़ा रहे हो, जिनके साथ मज़ाक़ उड़ाना किसी गुर्ज से भी दुरुस्त नहीं) तुम अब (यह बेहूदा) उज़्र मत करो (मतलब यह है कि यह उज़्र स्वीकारीय नहीं, और इस उज़्र से मज़ाक़ उड़ाना जायज़ नहीं हो जाता) तुम तो अपने को मोमिन कहकर कुफ़्र करने लगे (क्योंकि दीन के साथ हंसी-दिल्लीगी करना किसी भी तरीक़े से हो, कुफ़्र है। अगरचे दिल में तो पहले भी ईमान न था, अलबत्ता अगर कोई दिल से तौबा कर ले और सच्चा मोमिन बन जाये तो यकीनन कुफ़्र और कुफ़्र के अज़ाब से छूट जाये, लेकिन इसकी भी सब को तौफीक़ न होगी, हाँ यह ज़रूर है कि कुछ लोग मुसलमान हो जायेंगे और वे माफ़ कर दिये जायेंगे। पस हासिल यह निकला कि) अगर हम तुम में से कुछ लोगों को छोड़ भी दें (इसलिये कि वे मुसलमान हो गये) फिर भी कुछ को तो (ज़रूर ही) सज़ा देंगे, इस वजह से कि वे (तकदीरी तौर ही) मुजिरम थे (यानी वे मुसलमान नहीं हुए)।

मआरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में भी पहले गुज़री आयतों की तरह मुनाफ़िकों के बेहूदा एतिराज़ों, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को तकलीफ़ें पहुँचाने और फिर झूठी कसमें खाकर अपने ईमान का यकीन दिलाने के वाकिआत और उन पर तंबीह है।

पहली आयत में बयान हुआ है कि ये लोग रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुताल्लिक़ मज़ाक़ उड़ाने के तौर पर यह कहते हैं कि “वह तो बस कान हैं” यानी जो कुछ किसी से सुन लेते हैं उसी पर यकीन कर लेते हैं, इसलिये हमें कुछ फ़िक्र नहीं, अगर हमारी साज़िश खुल भी गयी तो हम फिर कसम खाकर आपको अपनी बराअत का यकीन दिलायेंगे। जिसके जवाब में हक़ तआला ने उनकी बेवकूफी को वाज़ेह फ़रमा दिया कि वह (यानी नबी पाक) जो मुनाफ़िकों और मुखालिफ़ों की ग़लत बातों को सुनकर अपने बुलन्द अख़्लाक़ की बिना पर ख़ामोश हो रहते हैं, इससे यह न समझो कि आपको वास्तविकता की समझ नहीं, सिर्फ़ तुम्हारे कहने पर यकीन करते हैं, बल्कि वह सब की पूरी-पूरी हक़ीक़त से बाख़बर हैं, तुम्हारी ग़लत बातें सुनकर वह तुम्हारी सच्चाई के कायल नहीं हो जाते, अलबत्ता अपनी शराफ़ते नफ़्स और करम की बिना पर तुम्हारे मुँह पर तुम्हारी तरदीद नहीं करते।

إِنَّ اللَّهَ مُخْرِجٌ مَا تَحْذَرُونَ

इस आयत में यह ख़बर दी गयी है कि हक़ तआला मुनाफ़िकों की गुप्त साज़िशों और शरारतों को ज़ाहिर फ़रमा देंगे, जिसका एक वाकिआ गुज़वा-ए-तबूक से वापसी का है जबकि कुछ मुनाफ़िकों ने आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के क़त्ल की साज़िश की थी, हक़ तआला ने आपको उस पर ज़िब्रील अलैहिस्सलाम के ज़रिये अवगत करके उस रास्ते से हटा दिया जहाँ ये मुनाफ़िक़ लोग इस काम के लिये जमा हुए थे। (तफ़सीरे मज़हरी, तफ़सीरे बग़वी के हवाले से)

और हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हक़ तआला ने सत्तर मुनाफ़िकों

के नाम मय उनके पिताओं और पूरे निशान पते के रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बतला दिये थे, मगर रहमतुल-लिल्आलमीन ने उनको लोगों पर जाहिर नहीं फरमाया। (मजहरी)

وَقُلْ لَّيْسَ

الْمُنْفِقُونَ وَالْمُنْفِقَاتُ بَعْضُهُمْ مِّنْ بَعْضٍ يَأْمُرُونَ بِالْمُنْكَرِ وَيَنْهَوْنَ
عَنِ الْمَعْرُوفِ وَيَقْبِضُونَ أَيْدِيَهُمْ ۚ نَسُوا اللَّهَ فَنَسِيَهُمْ إِنَّ الْمُنْفِقِينَ هُمُ الْفَاسِقُونَ ۝ وَعَدَ
اللَّهُ الْمُنْفِقِينَ وَالْمُنْفِقَاتِ وَالْكُفَّارَ نَارَ جَهَنَّمَ خَالِدِينَ فِيهَا ۚ هِيَ حَسْبُهُمْ وَلَعْنَهُمُ
اللَّهُ وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّقِيمٌ ۝ كَالَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ كَانُوا أَشَدَّ مِنْكُمْ قُوَّةً وَكَثُرَ أَمْوَالُهُمْ
وَأَوْلَادُهُمْ فَاسْتَمْتَعُوا بِخَلَائِقِهِمْ فَاسْتَمْتَعْتُمْ بِخَلَائِقِكُمْ كَمَا اسْتَمْتَعَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ بِخَلَائِقِهِمْ
وَكُفَّتُمْ كَالَّذِينَ خَالَفُوا وَآوَلَيْكَ خِطْتُ أَغْيَالُهُمْ فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ ۚ وَأُولَئِكَ هُمُ
الْخَسِرُونَ ۝ أَلَمْ يَأْتِهِمْ نَبَأُ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ قَوْمِ نُوحٍ وَعَادٍ وَثَمُودَ ۚ وَقَوْمِ إِبْرَاهِيمَ
وَأَصْحَابِ مَدْيَنَ وَالْمُؤْتَفِكَةَ ۚ أَتَتْهُمْ رُسُلُهُم بِالْبَيِّنَاتِ ۚ فَمَا كَانَ اللَّهُ لِيَظْلِمَهُمْ وَلَكِنْ كَانُوا
أَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ۝

अल्मुनाफिकू-न वल्मुनाफिकातु
बअज़ुहुम् मिम्-बअज़िन्। यअमुरू-न
बिल्मुन्कारि व यन्हौ-न अनिल्-
मअरूफि व यन्निबजू-न ऐदि-यहुम्,
नसुल्ला-ह फ-नसि-यहुम्, इन्नल्-
मुनाफिकी-न हुमुल्-फासिकून (67)
व-अदल्लाहुल् मुनाफिकी-न
वल्मुनाफिकाति वल्कुफ्फा-र ना-र
जहन्न-म ख़ालिदी-न फीहा, हि-य
हस्बुहुम् व ल-अ-नहुमुल्लाहु व लहुम्
अज़ाबुम् मुकीम (68) कल्लजी-न
मिन् क़ब्लिकुम् कानू अशद्-द

मुनाफिक मर्द और मुनाफिक औरतें सब
की एक चाल है, सिखायें बात बुरी और
छेड़ दें बात भली, और बन्द रखें अपनी
मुड़ी, भूल गये अल्लाह को, सो वह भूल
गया उनको, तहकीक़ कि मुनाफिक वही
हैं नाफरमान। (67) वायदा दिया है
अल्लाह ने मुनाफिक मर्द और मुनाफिक
औरतों को और काफ़िरों को दो ज़ख की
आग का, पड़े रहेंगे उसमें वही बस है
उनको, और अल्लाह तआला ने उनको
फटकार दिया, और उनके लिये अज़ाब है
बरकरार रहने वाला। (68) जिस तरह
तुमसे पहले लोग ज़्यादा थे तुमसे जोर में
और ज़्यादा रखते थे माल और औलाद,

मिन्कुम् कुव्वतं व-व अक्स-र
 अम्वालं व-व औलादन्, फस्तम्तअ
 बि-खलाकिहिम् फस्तम्तअतुम्
 बि-खलाकिकुम् कमस्तम्त-अल्लजी-न
 मिन् कब्लिकुम् बि-खलाकिहिम् व
 खुज्तुम् कल्लजी खाज़्, उलाइ-क
 हबितत् अअमालुहुम् फिदुन्या
 वल्आखिरति व उलाइ-क हुमुल्-
 खासिरून (69) अलम् यअतिहिम्
 न-बउल्लजी-न मिन् कब्लिहिम् कौमि
 नूहिं व-व आदिं व-व समू-द व कौमि
 इब्राही-म व अस्हाबि मद्य-न
 वल्मुअतफिकाति, अतत्तुम् रुसुलुहुम्
 बिल्बयिनाति फमा कानल्लाहु
 लि-यज़िल-महुम् व लाकिन् कानू
 अन्फु-सहुम् यज़िलमून (70)

फिर फायदा उठा गये अपने हिस्से से,
 फिर फायदा उठाया तुमने अपने हिस्से से
 जैसे फायदा उठा गये तुमसे पहले अपने
 हिस्से से, और तुम भी चलते हो उन्हीं
 की सी चाल। वे लोग मिट गये उनके
 अमल दुनिया में और आखिरत में और
 वही लोग पड़े नुकसान में। (69) क्या
 पहुँची नहीं उनको खबर उन लोगों की
 जो उनसे पहले थे- नूह की कौम की
 और आद की समूद की, और इब्राहीम
 की कौम की और मद्यन वालों की और
 उन बस्तियों की खबर जो उलट दी गई
 थीं, पहुँचे उनके पास उनके रसूल साफ़
 हुक्म लेकर, सो अल्लाह तो ऐसा न था
 कि उन पर जुल्म करता लेकिन वे अपने
 ऊपर खुद ही जुल्म करते थे। (70)

खुलासा-ए-तफसीर

मुनाफ़िक़ मर्द और मुनाफ़िक़ औरतें सब एक तरह के हैं, कि बुरी बात (यानी कुफ़्र और इस्लाम की मुख़ालफ़त) की तालीम देते हैं और अच्छी बात (यानी ईमान व नबी-ए-करीम की पैरवी) से मना करते हैं, और (खुदा की राह में खर्च करने से) अपने हाथों को बन्द रखते हैं, उन्होंने खुदा का ख़्याल न किया (यानी फ़रमाँबरदारी न की) तो खुदा ने उनका ख़्याल न किया (यानी उन पर अपनी ख़ास रहमत न की), बेशक ये मुनाफ़िक़ बड़े ही नाफ़रमान हैं। अल्लाह तआला ने मुनाफ़िक़ मर्दों और मुनाफ़िक़ औरतों और (खुले आम) कुफ़्र करने वालों से दोज़ख़ की आग का अहद कर रखा है, जिसमें वे हमेशा रहेंगे। वह उनके लिये काफी (सज़ा) है, और अल्लाह तआला उनको अपनी रहमत से दूर कर देगा, और उनको (ज़िक्र हुए वायदे के अनुसार) हमेशा का अज़ाब होगा। (ऐ मुनाफ़िक़ो!) तुम्हारी हालत (कुफ़्र और कुफ़्र की सज़ा की पात्रता में) उन लोगों की-सी है जो तुमसे पहले (ज़माने में) हो चुके हैं, जो कुव्वत में तुमसे ज़बरदस्त

और माल व औलाद की कसरत में तुमसे भी ज्यादा थे, तो उन्होंने अपने (दुनियावी) हिस्से से ख़ूब फ़ायदा हासिल किया, सो तुमने भी अपने (दुनियावी) हिस्से से ख़ूब फ़ायदा हासिल किया जैसा कि तुमसे पहले लोगों ने अपने (दुनियावी) हिस्से से ख़ूब फ़ायदा हासिल किया था। और तुम भी (बुरी बातों में) ऐसे ही घुसे जैसे वे लोग (बुरी बातों में) घुसे थे, और उन लोगों के (अच्छे) आमाल दुनिया व आख़िरत (सब) में बेकार गये (कि दुनिया में उन आमाल पर सवाब की खुशख़बरी नहीं, और आख़िरत में सवाब नहीं) और (इसी दुनिया व आख़िरत की बरबादी की वजह से) वे लोग बड़े नुक़सान में हैं (कि दोनों ज़हान में खुशी और राहत से मेहरूम हैं। पस इसी तरह तुम भी उनकी तरह कुफ़्र करते हो तो उन्हीं की तरह नुक़सान न घाटा उठाने वाले होगे, और जैसे उनके माल व औलाद उनके काम न आये तुम तो इन चीज़ों में उनसे कम हो इसलिये तुम्हारे तो और भी काम न आयेंगे। यह तो आख़िरत के नुक़सान की धमकी हुई, आगे दुनिया के नुक़सान का सदेह जताते हुए सचेत फ़रमाते हैं कि) क्या इन लोगों को उन (के अज़ाब व हलाक होने) की ख़बर नहीं पहुँची जो इनसे पहले हुए हैं, जैसे कौमे नूह और आद और समूद और इब्राहीम की कौम और मद्यन वाले और उल्टी हुई बस्तियाँ (यानी कौमे लूत की बस्तियाँ) कि उनके पास उनके पैग़म्बर (हक़ की) साफ़ निशानियाँ लेकर आये (लेकिन न मानने से बरबाद हुए)। सो (इस बरबादी में) अल्लाह ने उन पर जुल्म नहीं किया, लेकिन वे खुद ही अपनी जानों पर जुल्म करते थे (इसी तरह इन मुनाफ़िकों को भी डरना चाहिये)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

उपर्युक्त आयतों में से पहली आयत में मुनाफ़िकों का एक हाल यह बतलाया कि वे अपने हाथ बन्द रखते हैं 'यक्बजू-न ऐदियहुम'। तफ़सीरे कुर्तुबी में है कि हाथ बन्द रखने से मुराद जिहाद का छोड़ना और वाजिब हुक्म का अदा न करना है।

نَسُوا اللَّهَ فَنَسِيَهُمْ

इसके ज़ाहिरी मायने यह हैं कि उन लोगों ने अल्लाह को भुला दिया तो अल्लाह ने उनको भुला दिया। अल्लाह तआला तो भूल से पाक हैं, इस जगह मुराद यह है कि उन लोगों ने अल्लाह के अहक़ाम को इस तरह छोड़ दिया जैसे भूल गये हों, तो अल्लाह तआला ने भी आख़िरत के सवाब के मामले में उनको ऐसा ही कर छोड़ा कि नेकी और सवाब में कहीं उनका नाम न रहा।

आयत (69) 'कल्लजी-न मिन् क़ब्लिकुम.....' में एक तफ़सीर यह है कि यह ख़िताब मुनाफ़िकों को है, जैसा कि खुलासा-ए-तफ़सीर में आ चुका, और दूसरी तफ़सीर यह है कि ख़िताब मुसलमानों को है यानी तुम लोग भी अपने से पहले लोगों की तरह हो, जिस तरह वे लोग दुनिया की लज़्ज़तों में फंसकर आख़िरत को भुला बैठे और तरह-तरह के गुनाहों और बुरे अख़लाक में मुब्तला हो गये तुम भी ऐसे ही लोग होगे।

इसी आयत की तफ़सीर में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु ने रिवायत किया कि

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि तुम भी वही तरीके इस्तियार करोगे जो तुमसे पहली उम्मतें कर चुकी हैं, हाथ दर हाथ और बालिशत दर बालिशत। यानी बिल्कुल उनकी नकल उतारोगे, यहाँ तक कि अगर उनमें से कोई गोह के बिल में घुसा है तो तुम भी घुसोगे। हज़रत अबू हुदैरह रज़ियल्लाहु अन्हु ने यह रिवायत नकल करके फरमाया कि इस हदीस की तस्दीक के लिये तुम्हारा जी चाहे तो कुरआन की यह आयत पढ़ लो 'कल्लजी-न मिन् कब्लिकुम' (यानी यही आयत जिसकी तफसीर बयान हो रही है)।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने यह सुनकर फरमाया:

مَا أَشَبَّ اللَّيْلَةَ بِالْبَارِحَةِ.

यानी आजकी रात गुज़री रात से कैसी मिलती-जुलती और समान है। ये बनी इस्राईल हैं हमें उनके साथ तश्बीह दी गयी है। (तफसीरे कुर्तुबी)

हदीस का मकसद वाज़ेह है कि आखिरी ज़माने में मुसलमान भी यहूदियों व ईसाईयों के तरीकों पर चलने लगेंगे। और मुनाफ़िकों का अज़ाब बयान करने के बाद इसका बयान करना इस तरफ़ भी इशारा है कि यहूदियों व ईसाईयों के तरीकों की पैरवी करने वाले मुसलमान वही होंगे जिनके दिलों में मुकम्मल इमान नहीं, निफ़ाक़ के ज़रासीम उनमें पाये जाते हैं, उम्मत के नेक लोगों को इससे बचने और बचाने की हिदायत इस आयत में दी गयी है।

وَالْمُؤْمِنُونَ وَالْمُؤْمِنَاتُ بَعْضُهُمْ أَوْلِيَاءُ بَعْضٍ يَأْمُرُونَ بِالْمَعْرُوفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَيُقِيمُونَ الصَّلَاةَ وَيُؤْتُونَ الزَّكَاةَ وَيُطِيعُونَ اللَّهَ وَرَسُولَهُ أُولَئِكَ سَيَرْحَمُهُمُ اللَّهُ إِنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝ وَعَدَ اللَّهُ الْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا وَمَسْكِنٌ طَيِّبٌ فِي جَنَّاتٍ عَدْنٍ وَرِضْوَانٌ مِّنَ اللَّهِ أَكْبَرُ ذَلِكَ هُوَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ۝ يَا أَيُّهَا النَّبِيُّ جَاهِدِ الْكُفَّارَ وَالْمُنَافِقِينَ وَاغْلُظْ عَلَيْهِمْ وَمَا لَهُمْ جَهَنَّمَ وَبِئْسَ الْمَصِيرُ ۝

वल्मुअमिनु-न वल्मुअमिनातु बअज़ुहुम् औलिया-उ बअज़िन्। यअमुरू-न बिल्मअरूफि व यन्हौ-न अनिल्मुन्कारि व युकीमूनस्सला-त व युअतूनज़-ज़का-त व युतीअूनल्ला-ह व रसूलह् उलाइ-क स-यरहमुहुमुल्लाहु,

और इमान वाले मर्द और इमान वाली औरतें एक दूसरे के मददगार हैं, सिखलाते हैं नेक बात और मना करते हैं बुरी बात से, और कायम रखते हैं नमाज़ और देते हैं ज़कात और हुक्म पर चलते हैं अल्लाह के और उसके रसूल के, वही लोग हैं जिन पर रहम करेगा अल्लाह, बेशक

इन्नल्ला-ह अजीज़ुन् हकीम (71)
 व-अदल्लाहुल् मुअ्मिनी-न
 वल्मुअ्मिनाति जन्नातिन् तजरी मिन्
 तस्तिहल्-अन्हारु ख़ालिदी-न फ़ीहा
 व मसाकि-न तय्यि-बतन् फ़ी
 जन्नाति अदनिन्, व रिज़वानुम्
 मिनल्लाहि अक्बरु, ज़ालि-क हुवल्
 फौज़ुल्-अज़ीम (72) ❀

या अय्युहन्नबिय्यु जाहिदिल्-
 कुफ़्फ़ा-र वल्मुनाफ़िक्की-न वरलुज़्
 अलैहिम्, व मअ्वाहुम् जहन्नमु, व
 बिअ्सल्-मसीर (73)

अल्लाह ज़बरदस्त है हिक्मत वाला। (71)
 वायदा दिया है अल्लाह ने ईमान वाले
 मर्दों और ईमान वाली औरतों को बाग़ों
 का कि बहती हैं नीचे उनके नहरें, रहा
 करें उन्हीं में और सुथरे मकानों का रहने
 के बाग़ों में, और रज़ामन्दी अल्लाह की
 उन सब से बड़ी है, यही है बड़ी
 कामयाबी। (72) ❀

ऐ नबी! लड़ाई कर काफ़िरों से और
 मुनाफ़िकों से और सख़्त-मिज़ाजी अपना
 उन पर, और उनका ठिकाना दोज़ख़ है
 और वह बुरा ठिकाना है। (73)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और मुसलमान मर्द और मुसलमान औरतें आपस में एक-दूसरे के (दीनी) साथी हैं, नेक बातों की तालीम देते हैं और बुरी बातों से मना करते हैं, और नमाज़ की पाबन्दी रखते हैं और ज़कात देते हैं, और अल्लाह और उसके रसूल का कहना मानते हैं। उन लोगों पर ज़रूर अल्लाह तआला रहमत करेगा (जिसकी तफ़सील “व-अदल्लाहु.....” में अभी आगे आती है) बेशक अल्लाह तआला (पूरी तरह) कादिर है (पूरा बदला दे सकता है), हिक्मत वाला है (मुनासिब बदला देता है। अब उस रहमत का बयान होता है कि) और अल्लाह तआला ने मुसलमान मर्दों और मुसलमान औरतों से ऐसे बाग़ों का वायदा कर रखा है जिनके नीचे से नहरें चलती होंगी, जिनमें वे हमेशा रहेंगे, और उम्दा मकानों का (वायदा कर रखा है) जो कि उन हमेशा रहने वाले बाग़ों में होंगे, और (इन नेमतों के साथ) अल्लाह तआला की रज़ामन्दी (जो जन्नत वालों को हमेशा-हमेशा हासिल रहेगी, इन) सब (नेमतों) से बड़ी चीज़ है। यह (ज़िक्र हुई जज़ा) बड़ी कामयाबी है।

ऐ नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम)! काफ़िरों (से तलवार के साथ) और मुनाफ़िकों से (ज़बान से) जिहाद कीजिये, और उन पर सख़्ती कीजिये। (ये दुनिया में तो इसके हक़दार हैं) और (आख़िरत में) इनका ठिकाना दोज़ख़ है, और वह बुरी जगह है।

मअरिफ व मसाईल

पहले की आयतों में मुनाफ़िकों के हालत, उनकी साज़िशों और तकलीफ़ें देने और उनके अज़ाब का बयान था। कुरआनी अन्दाज़ के मुताबिक़ मुनासिब था कि इस जगह सच्चे-पक्के मोमिनों के हालात और उनके सवाब और दर्जात का भी बयान आ जाये, उक्त आयतों में इसी का बयान है।

यहाँ यह बात गौर करने के काबिल है कि इस मौके पर मुनाफ़िकों और सच्चे मोमिनों के हालात का तुलनात्मक ज़िक्र किया गया, मगर एक जगह मुनाफ़िकों के बारे में तो यह फ़रमाया कि 'बअज़ुहुम मिम्-बअज़िन्' और उसके मुकाबिल मोमिनों का ज़िक्र आया तो उसमें फ़रमाया 'बअज़ुहुम औलिया-उ बअज़िन्'। इसमें इशारा है कि मुनाफ़िकों के आपसी ताल्लुकात और रिश्ते तो सिर्फ़ ख़ानदानी शिर्कत या स्वार्थों पर आधारित होते हैं, न उनकी उम्र ज़्यादा होती है और न उन पर वो परिणाम और फल मुरत्तब होते हैं जो दिली दोस्ती और दिली हमदर्दी के ताल्लुक पर मुरत्तब होते हैं, बख़िलाफ़ मोमिनों के कि वे एक दूसरे के मुख़्लिस, दिली दोस्त और सच्चे हमदर्द होते हैं। (तफ़सीरे कुर्तुबी)

और चूँकि यह दोस्ती और हमदर्दी ख़ालिस अल्लाह के लिये होती है वह ज़ाहिरन व बातिनन और हाज़िर व ग़ायब एक जैसी होती है, और हमेशा पायदार रहती है। सच्चे मोमिन की यही निशानी है, ईमान और नेक अमल की विशेषता ही यह है कि आपस में दोस्ती और मुहब्बत पैदा करता है। कुरआने करीम का इरशाद इसी के मुताल्लिक़ है:

سَيَجْعَلُ لَهُمُ الرَّحْمَنُ وُدًّا

यानी जो लोग ईमान लाये और नेक अमल के पाबन्द हुए अल्लाह तआला उनमें आपस में दिली और गहरी दोस्ती पैदा फ़रमा देते हैं। आजकल हमारे ईमान और नेक अमल ही की कोताही है कि मुसलमानों में आपस के ताल्लुकात कभी ऐसे नज़र नहीं आते, बल्कि स्वार्थों और ग़र्जों के ताबे हैं।

جَاهِدِ الْكُفَّارَ وَالْمُنَافِقِينَ وَاغْلُظْ عَلَيْهِمْ

इस आयत में काफ़िरों और मुनाफ़िकों दोनों से जिहाद और उनके मामले में सख़्ती इख़्तियार करने का हुक्म रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को दिया गया है, ज़ाहिरी काफ़िरों से जिहाद का मामला तो स्पष्ट है लेकिन मुनाफ़िकों से जिहाद का मतलब खुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अमल व रवैय से यह साबित हुआ कि उनके साथ जिहाद से मुराद ज़बानी जिहाद है, कि उनको इस्लाम की हक़क़ानिबत समझने की तरफ़ दावत दें ताकि वे अपने दावा-ए-इस्लाम में मुख़्लिस हो जायें। (तफ़सीरे कुर्तुबी व मज़हरी)

وَاغْلُظْ عَلَيْهِمْ

लफ़ज़ ग़िल्ज़ के अस्ली मायने यह हैं कि मुख़ातब जिस तरह के व्यवहार का हक़दार है उसमें कोई रियायत और नमी न बरती जाये, और लफ़ज़ राफ़त के मुकाबिल इस्तेमाल होता है,

जिसके मायने रहमत और नर्म-दिली के हैं।

इमाम कुतुबी ने फरमाया कि इस जगह ग़िल्ज़त इस्तेमाल करने से अमली ग़िल्ज़त मुराद है कि उन पर शरई अहकाम जारी करने में कोई रियायत और नमी न बरती जाये, ज़बान और कलाम में ग़िल्ज़त (सख़्ती) इख़्तियार करना मुराद नहीं, क्योंकि वह नबियों की सुन्नत और आदत के खिलाफ़ है, वे किसी से सख़्त-कलामी और बुरा-भला कहना नहीं करते। एक हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है:

إِذَا زَنْتَ أُمَّةً أَحَدَكُمْ فَلْيَجْلِدْهَا الْحَدَّ وَلَا يَرْبُ عَلَيْهِا.

“अगर तुम्हारी कोई बाँदी जिना का जुर्म कर बैठे तो उस पर उसकी शरई सज़ा जारी कर दो मगर ज़बानी मलामत और बुरा-भला कहना न करो।”

और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हाल में खुद हक़ तआला ने फरमाया:

وَلَوْ كُنْتَ فَظًا غَلِظَ الْقَلْبُ لَا نَقُصُّوا مِنْ حَوْلِكَ.

“यानी अगर आप सख़्त कलाम करने वाले और सख़्त-दिल होते तो लोग आपके पास से भाग जाते।”

और हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अमल व आचरण में भी कहीं यह साबित नहीं कि काफ़िरों व मुनाफ़िकों से गुफ़्तगू और ख़िताब में कभी ग़िल्ज़त इख़्तियार फरमाई हो।

तंबीह

अफ़सोस कि संबोधन और कलाम में ग़िल्ज़त (सख़्ती और बुरा-भला कहना) जिसको काफ़िरों के मुकाबले में भी इस्लाम ने इख़्तियार नहीं किया, आजकल के मुसलमान दूसरे मुसलमानों के बारे में बेधड़क इस्तेमाल करते हैं, और बहुत से लोग तो इसको दीन की ख़िदमत समझकर खुश होते हैं। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिकुन।

يَخْلِفُونَ بِاللّٰهِ مَا قَالُوا ۖ وَلَقَدْ قَالُوا كَلِمَةَ الْكُفْرِ وَكَفَرُوا بَعْدَ إِسْلَامِهِمْ وَ هَتُّوا بِمَا لَمْ يَنَالُوا ۖ وَمَا نَقَمُوا إِلَّا أَنْ أَغْنَاهُمُ اللّٰهُ وَرَسُولُهُ مِنْ فَضْلِهِ ۚ فَإِنْ يَتُوبُوا يَكُ خَيْرًا لَهُمْ ۚ وَإِنْ يَتَوَلَّوْا يُعَذِّبُهُمُ اللّٰهُ عَذَابًا أَلِيمًا فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ ۚ وَمَا لَهُمْ فِي الْأَرْضِ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا نَصِيرٍ ۝ وَمِنْهُمْ مَّنْ عٰهَدَ اللّٰهُ لَئِنْ آتٰنَا مِنْ فَضْلِهِ لَنَصَّدَّقَنَّ وَلَنَكُونَنَّ مِنَ الصّٰلِحِينَ ۝ فَلَمَّا آتٰهُمْ مِنْ فَضْلِهِ بَخِلُوا بِهِ وَتَوَلَّوْا وَهُمْ مُّعْرِضُونَ ۝ فَأَعْقَبَهُمْ نِفَاقًا فِي قُلُوبِهِمْ إِلَى يَوْمِ يَلْقَوْنَهُ بِمَا أَخْلَفُوا اللّٰهَ مَا وَعَدُوْهُ وَبِمَا كَانُوا يَكْذِبُونَ ۝ أَلَمْ يَعْلَمُوا أَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ سَرَّهُمْ وَنَجْوَاهُمْ وَأَنَّ اللّٰهَ عَلٰمُ الْغُيُوبِ ۝

यस्लिफू-न बिल्लाहि मा कालू, व
 ल-कद् कालू कलि-मतल्कुफिर व
 क-फरू बअ-द इस्लामिहिम् व हम्पू
 बिमा लम् यनालू व मा न-कम्
 इल्ला अन् अग्नाहुमुल्लाहु व रसूलुहु
 मिन् फज़िलही फ-इंय्यतूबू यकु
 छौरत्तलहुम् व इंय्य-तवत्तलौ
 युअज़िज़ुमुल्लाहु अज़ाबन् अलीमन्
 फिदुन्या वल्आखिरति व मा लहुम्
 फिलुअर्जि मिंवलियिं-व ला नसीर
 (74) व मिन्हुम् मन् आ-हदल्ला-ह
 ल-इन् आताना मिन् फज़िलही
 लनस्सद्-द-कन्-न व ल-नकूनन्-न
 मिनस्सालिहीन (75) फ-लम्मा
 आताहुम् मिन् फज़िलही बख़िलू बिही
 व त-वत्तलौ व हुम् मुअरिज़ून (76)
 फ-अअक-बहुम् निफ़ाकन् फी
 कुलूबिहिम् इला यौमि यल्कौनहू
 बिमा अख़्लफुल्ला-ह मा व-अदूहु व
 बिमा कानू यक्ज़िबून (77) अलम्
 यअलमू अन्नल्ला-ह यअलमु सिरहुम्
 व नज्वाहुम् व अन्नल्ला-ह अल्लामुल्
 गुयूब (78)

कसमें खाते हैं अल्लाह की कि हमने नहीं
 कहा और बेशक कहा उन्होंने लफ़्ज़ कुफ़
 का, और इनकारी हो गये मुसलमान
 होकर, और इरादा किया था उस चीज़
 का जो उनको न मिली, और यह सब
 कुछ इसी का बदला था कि दौलतमन्द
 कर दिया उनको अल्लाह ने और उसके
 रसूल ने अपने फज़ल से, सो अगर तौबा
 कर लें तो भला है उनके हक में और
 अगर न मानेंगे तो अज़ाब देगा उनको
 अल्लाह दर्दनाक अज़ाब, दुनिया और
 आख़िरत में, और नहीं उनका पूरी दुनिया
 में कोई हिमायती और मददगार। (74)

और बाज़े उनमें वे हैं कि अहद किया था
 अल्लाह से कि अगर दे हमको अपने
 फज़ल से तो हम ज़रूर ख़ैरात करें और
 हो जायें हम नेकी वालों में। (75) फिर
 जब दिया उनको अपने फज़ल से तो
 उसमें कन्ज़ूसी की और फिर गये टला
 कर। (76) फिर इसका असर रख दिया
 निफ़ाक उनके दिलों में जिस दिन तक कि
 वे उससे मिलेंगे, उस वजह से कि उन्होंने
 ख़िलाफ़ किया अल्लाह से जो वायदा
 उससे किया था और इस वजह से कि
 बोलते थे झूठ। (77) क्या वे जान नहीं
 चुके कि अल्लाह जानता है उनका भेद
 और उनका मश्वरा, और यह कि अल्लाह
 ख़ूब जानता है सब छुपी बातों को। (78)

खुलासा-ए-तफसीर

वे लोग अल्लाह की कसमें खा जाते हैं कि हमने फुल्लों बात (मसलन यह कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को कत्ल कर दें) नहीं कही, हालाँकि यकीनन उन्होंने कुफ़्र की बात कही थी, (क्योंकि आपके कत्ल के बारे में गुप्तगू करने का कुफ़्र होना ज़ाहिर है) और (वह बात कहकर) अपने (ज़ाहिरी) इस्लाम के बाद (ज़ाहिर में भी) काफ़िर हो गये (चाहे अपने ही मजमे में सही, जिसकी ख़बर मुसलमानों को भी हो गयी और इससे सबके सामने कुफ़्र खुल गया) और उन्होंने ऐसी बात का इरादा किया था जो उनके हाथ न लगी (कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को कत्ल करना, मगर नाकाम रहे) और यह उन्होंने सिर्फ़ इस बात का बदला दिया है कि उनको अल्लाह ने और उसके रसूल ने अल्लाह के रिज़्क से मालदार कर दिया (इस एहसान का बदला उनके नज़दीक यही होगा कि बुराई करें), सो अगर (इसके बाद भी) तौबा करें तो उनके लिये (दोनों जहान में) बेहतर (और नफ़ा देने वाला) होगा (चुनाँचे हज़रत जुल्लास को तौबा की तौफीक हो गयी)। और अगर (तौबा से) मुँह मोड़ा (और कुफ़्र व निफ़ाक़ ही पर जमे रहे) तो अल्लाह तआला उनको दुनिया और आख़िरत (दोनों जगह) में दर्दनाक सज़ा देगा (चुनाँचे उम्र भर बदनाम, परेशान और डरते रहना और मरते वक़्त मुसीबत को अपनी आँखों से देखना यह दुनियावी अज़ाब है और आख़िरत में दोज़ख़ में जाना ज़ाहिर ही है) और उनका दुनिया में न कोई यार है और न मददगार (कि अज़ाब से बचा ले, और जब दुनिया ही में कोई यार व मददगार नहीं जहाँ अक्सर मदद हो जाती है तो आख़िरत में तो कोई मदद न हो सकेगी)।

और इन (मुनाफ़िकों) में कुछ आदमी ऐसे हैं कि खुदा तआला से अहद करते हैं (क्योंकि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से अहद करना और खुदा से अहद करना बराबर है, और वह अहद यह था कि) अगर अल्लाह तआला हमको अपने फ़ज़ल से (बहुत-सा माल) अता फ़रमा दे तो हम (उसमें से) ख़ूब ख़ैरात करें, और हम (उसके ज़रिये से) ख़ूब नेक-नेक काम किया करें। सो जब अल्लाह तआला ने उनको अपने फ़ज़ल से (बहुत-सा माल) दे दिया तो वे उसमें बुख़्त करने लगे (कि ज़कात न दी) और (इताअत से) मुँह मोड़ने लगे, और वे मुँह फेरने के (पहले ही से) आदी हैं। सो अल्लाह तआला ने उन (के इस फ़ैल) की सज़ा में उनके दिलों में निफ़ाक़ (क़ायम) कर दिया (जो) खुदा के पास जाने के दिन तक (यानी मरते दम तक) रहेगा, इस सबब से कि उन्होंने खुदा तआला से अपने वायदे में ख़िलाफ़ किया और इस सबब से कि वे (उस वायदे में शुरू ही से) झूठ बोलते थे (यानी वायदे को पूरा करने की नीयत उस वक़्त भी न थी, पस निफ़ाक़ तो उस वक़्त भी दिल में था जिसका परिणाम यह झूठ और वायदा-ख़िलाफ़ी करना है। फिर इस झूठ और उल्लंघन के ज़ाहिर होने से और ज़्यादा ग़ज़ब के हक़दार हुए, और उस ज़्यादा ग़ज़ब का असर यह हुआ कि वह शुरू का निफ़ाक़ अब हमेशा का और ख़त्म न होने वाला हो गया, कि तौबा भी नसीब न होगी। इसी हालत पर मरकर हमेशा हमेशा के लिये जहन्नम में रहना नसीब होगा, और बावजूद छुपे कुफ़्र के जो इस्लाम और फ़रमाँबरदारी का

इज़हार करते हैं तो) क्या उन (मुनाफ़िकों) को यह ख़बर नहीं कि अल्लाह तआला को उनके दिल का राज़ और उनका चुपके-चुपके गोपनीय बातें करना सब मालूम है, और यह कि अल्लाह तआला तमाम ग़ैब की बातों को ख़ूब जानते हैं (और इसलिये वह ज़ाहिरी इस्लाम और इताअत उनके काम नहीं आ सकते, खास तौर पर आख़िरत में, यस जहन्नम की सज़ा ज़रूरी है)।

मआरिफ़ व मसाईल

उपर्युक्त आयतों में से पहली आयत 'यहलिफू-न बिल्लाहि' में फिर मुनाफ़िकों का तज़क़िरा है, कि वे अपनी मज्लिसों में 'कुफ़्र' के कलिमे कहते रहते हैं, फिर अगर मुसलमानों को इत्तिला हो गयी तो झूठी कसमें खाकर अपनी बराअत साबित करते हैं। इस आयत के शाने नुज़ूल में इमाम बग़वी रह. ने यह वाकिआ नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने गुज़वा-ए-तबूक के मौके पर एक संबोधन किया, जिसमें मुनाफ़िकों की बदहाली और बुरे अन्जाम का ज़िक्र फ़रमाया। मौजूद लोगों में एक मुनाफ़िक जुल्लास भी मौजूद था, उसने अपनी मज्लिस में जाकर कहा कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) जो कुछ कहते हैं अगर वह सच है तो हम ग़धों से भी ज़्यादा बदतर हैं, उसका यह कलिमा एक सहाबी हज़रत आमिर बिन कैस रज़ियल्लाहु अन्हु ने सुन लिया तो उन्होंने कहा बेशक रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जो कुछ फ़रमाया वह सच है और तुम वाकई ग़धों से भी ज़्यादा बदतर हो।

जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तबूक के सफ़र से वापस मदीना तय्यिबा पहुँचे तो आमिर बिन कैस रज़ियल्लाहु अन्हु ने यह वाकिआ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सुनाया, मगर जुल्लास अपने कहे से मुकर गया, और कहने लग कि आमिर बिन कैस ने मुझ पर तोहमत बाँधी है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दोनों को हुक्म दिया कि मिंबरे नबवी के पास खड़े होकर कसम खायें, जुल्लास ने बेधड़क झूठी कसम खाई और फिर दुआ के लिये हाथ उठाये कि या अल्लाह! अपने रसूल पर वही के द्वारा इस मामले की हकीकत खोल दे। उनकी दुआ पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और मुसलमानों ने आमीन कही, अभी ये लोग उस जगह से हटे भी नहीं थे कि ज़िब्रीले अमीन वही लेकर हाज़िर हो गये, जिसमें यही ज़िक्र हुई आयत थी।

जुल्लास ने जब आयत सुनी तो फौरन खड़े होकर कहने लगे कि या रसूलल्लाह! अब मैं इफ़रार करता हूँ कि यह ग़लती मुझसे हुई थी, और आमिर बिन कैस ने जो कुछ कहा वह सच था। मगर इसी आयत में हक़ तआला ने मुझे तौबा का भी हक़ दे दिया है, मैं अब अल्लाह तआला से मग़फ़िरत माँगता हूँ और तौबा करता हूँ। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनकी तौबा कुबूल फ़रमा ली, और बाद में यह अपनी तौबा पर कायम रहे। इनके हालात दुरुस्त हो गये। (तफ़सीरे मज़हरी)

कुछ हज़राते मुफ़सिरीन ने इसी तरह के दूसरे वाकिआत इसके शाने नुज़ूल में बयान फ़रमाये हैं, खुसूसन इसलिये कि इस आयत का एक जुमला यह भी है:

وَمَنْ أَسْلَمَ يَأْتُوا

यानी उन्होंने इरादा किया एक ऐसे काम का जिसमें वह कामयाब नहीं हो सके। इससे मालूम होता है कि यह आयत किसी ऐसे वाकिए से संबन्धित है जिसमें मुनाफ़िकों ने हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और मुसलमानों के खिलाफ़ कोई साजिश की थी, जिसमें वे कामयाब नहीं हो सके। जैसे इसी ग़ज़वा-ए-तबूक से वापसी का वाक़िआ मशहूर है कि बारह आदमी मुनाफ़िकों में से पहाड़ की एक घाटी में इस ग़ज़ से छुपकर बैठे थे कि जब आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम यहाँ पहुँचे तो अचानक से एक साथ मिलकर हमला करके आपको क़त्ल कर दें, जिब्रीले अमीन ने आपको ख़बर दे दी तो आप उस रास्ते से हट गये, और उनकी साजिश मिट्टी में मिल गयी।

और कुछ दूसरे वाक़िआत भी मुनाफ़िकों की तरफ़ से ऐसे पेश आये हैं, मगर इसमें टकराव, या असंभावना की कोई बात नहीं, हो सकता है वो सब ही वाक़िआत इस आयत में मुराद हों।

दूसरी आयत:

وَمِنْهُمْ مَنْ عٰهَدَ اللّٰهَ

भी एक खास वाक़िआ से संबन्धित है, जो इब्ने जरीर, इब्ने अबी हातिम, इब्ने मर्दूया, तबरानी और बैहकी ने हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अन्हु बाहिली की रिवायत से नक़ल किया है कि एक शख्स सालबा इब्ने हातिब अन्सारी ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में हाज़िर होकर यह दरख़्वास्त की कि आप दुआ करें कि मैं मालदार हो जाऊँ। आपने फ़रमाया कि क्या तुमको मेरा तरीक़ा पसन्द नहीं, क़स्म है उस ज़ात की जिसके कब्ज़े में मेरी जान है, अगर मैं चाहता तो मदीना के पहाड़ सोना बनकर मेरे साथ फिरा करते, मगर मुझे ऐसी मालदारी पसन्द नहीं। यह शख्स चला गया, मगर दोबारा फिर आया और फिर यही दरख़्वास्त इस वायदे और इक़रार के साथ पेश की कि अगर मुझे माल मिल गया तो मैं हर हक़ वाले को उसका हक़ पहुँचाऊँगा। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दुआ कर दी, जिसका असर यह ज़ाहिर हुआ कि उसकी बकरियों में बेपनाह ज़्यादती शुरू हुई, यहाँ तक कि मदीना की जगह उस पर तंग हो गयी तो बाहर चला गया, और जोहर अ़सर की दो नमाज़ें मदीना में आकर आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ पढ़ता था, बाकी नमाज़ें भी जंगल में जहाँ उसका यह माल था वहीं अदा करता था।

फिर उन्हीं बकरियों में और ज़्यादती इतनी हो गयी कि यह जगह भी तंग हो गयी और मदीना शहर से दूर जाकर कोई जगह ली, वहाँ से सिर्फ़ जुमे की नमाज़ के लिये मदीना में आता और पाँचों वक़्त की नमाज़ें वहीं पढ़ने लगा। फिर उस माल की अधिकता और बढ़ी तो यह जगह भी छोड़नी पड़ी और मदीना से बहुत दूर चला गया, जहाँ जुमा और जमाअत सबसे मेहरूम हो गया।

कुछ अरसे के बाद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने लोगों से उसका हाल मालूम

किया तो लोगों ने बतलाया कि उसका माल इतना ज्यादा हो गया कि शहर के करीब में उसकी गुंजाईश ही नहीं, इसलिये किसी दूर जगह पर जाकर वह रहने लगा है, और अब यहाँ नज़र नहीं पड़ता। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह सुनकर तीन मर्तबा फरमाया "वै-ह साल-ब-त" यानी सालबा पर अफ़सोस है, सालबा पर अफ़सोस है, सालबा पर अफ़सोस है।

इत्तिफ़ाक़ से उसी ज़माने में सदकात की आयत नाज़िल हो गयी, जिसमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मुसलमानों के सदकात वसूल करने का हुक्म दिया गया है यानी:

خُذْ مِنْ أَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً

आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मवेशियों (जानवरों) के सदकात का मुकम्मल क़ानून लिखवाकर दो शख्सों को सदके के कार्यकर्ता की हैसियत से मुसलमानों के मवेशी के सदकात वसूल करने के लिये भेज दिया, और उनको हुक्म दिया कि सालबा बिन हातिब के पास भी पहुँचें, और बनी सुलैम के एक और शख्स के पास जाने का भी हुक्म दिया।

ये दोनों जब सालबा के पास पहुँचे और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फ़रमान दिखाया तो सालबा कहने लगा कि यह तो जिज़्या (एक तरह का टैक्स) हो गया, जो ग़ैर-मुस्लिमों से लिया जाता है, और फिर कहा कि अच्छा अब तो आप जायें जब वापस हों तो यहाँ आ जायें। ये दोनों चले गये।

और दूसरे शख्स सुलैमी ने जब हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फ़रमान सुना तो अपने मवेशी ऊँट और बकरियों में जो सबसे बेहतर जानवर थे, सदके के निसाब के मुताबिक़ वो जानवर लेकर खुद रसूले पाक के उन दोनों कासिदों के पास पहुँच गये, उन्होंने कहा कि हमें तो हुक्म यह है कि जानवरों में आला (उच्च क्वालिटी) छाँट कर न लें, बल्कि दरमियाने दर्जे के वसूल करें, इसलिये हम तो ये नहीं ले सकते। सुलैमी ने ज़िद की कि मैं अपनी खुशी से यही पेश करना चाहता हूँ, यही जानवर कुबूल कर लीजिए।

फिर ये दोनों हज़रात दूसरे मुसलमानों से सदकात वसूल करते हुए वापस आये तो फिर सालबा के पास पहुँचे, तो उसने कहा कि लाओ सदकात का वह क़ानून मुझे दिखलाओ। फिर उसको देखकर यही कहने लगा कि यह तो एक किस्म का जिज़्या हो गया, जो मुसलमानों से नहीं लेना चाहिये। अच्छा अब तो आप जायें मैं ग़ौर करूँगा फिर कोई फैसला करूँगा।

जब ये दोनों हज़रात वापस मदीना तय्यिबा पहुँचे और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए तो आपने इनसे हालात पूछने से पहले ही फिर वह क़लिमा दोहराया जो पहले फरमाया था:

يَاوَيْحَ ثَعْلَبَةَ يَاوَيْحَ ثَعْلَبَةَ يَاوَيْحَ ثَعْلَبَةَ

(यानी सालबा पर सख़्त अफ़सोस है) यह जुमला तीन मर्तबा इरशाद फरमाया। फिर सुलैमी शख्स के मामले पर खुश होकर उसके लिये दुआ फरमाई। इस वाक़िए पर यह आयत उतरी:

وَمِنْهُمْ مَّنْ عٰهَدَ اللّٰهَ

यानी उनमें से कुछ लोग ऐसे भी हैं जिन्होंने अल्लाह से अहद किया था कि अगर अल्लाह तआला उनको माल अता फरमा देंगे तो वे सदका ख़ैरात करेंगे, और उम्मत के नेक लोगों की तरह सब हक़ वालों, रिश्तेदारों और ग़रीबों के हुक्क अदा करेंगे। फिर जब अल्लाह ने उनको अपने फज़ल से माल दिया तो बुख़ल (कन्जूसी) करने लगे, और अल्लाह और रसूल की इताअत से फिर गये।

فَاعْقَبَهُمْ نِفَاقًا فِي قُلُوبِهِمْ

यानी अल्लाह तआला ने उनकी इस बद-अमली और अहद के खिलाफ़ करने के नतीजे में उनके दिलों में निफाक को और पुख़्ता कर दिया, कि अब उनको तौबा की तौफीक ही न होगी।

फायदा

इससे मालूम हुआ कि कुछ बुरे आमाल की नहूसत ऐसी होती है कि तौबा की तौफीक छीन ली जाती है। नऊजु बिल्लाहि मिन्हा।

इमाम इब्ने जरीर ने हज़रत अबू उमामा की तफ्सीली रिवायत जो अभी ज़िक्र की गयी है इसके आख़िर में लिखा है कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सालबा के लिये:

يَاوَيْحَ ثَعْلَبَةَ

तीन मर्तबा फरमाया तो उस मज्लिस में सालबा के कुछ करीबी और रिश्तेदार लोग भी मौजूद थे। यह सुनकर उनमें से एक आदमी फौरन सफ़र करके सालबा के पास पहुँचा और उसको बुरा-भला कहा, और बतलाया कि तुम्हारे बारे में कुरआन की आयत नाज़िल हो गयी। यह सुनकर सालबा घबराया और मदीना हाज़िर होकर दरख़्वास्त की कि मेरा सदका कुबूल कर लिया जाये। हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि मुझे हक़ तआला ने तुम्हारा सदका कुबूल करने से मना फरमा दिया है, यह सुनकर सालबा अपने सर पर खाक डालने लगा।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि यह तो तुम्हारा अपना अमल है, मैंने तुम्हें हुक्म दिया तुमने पालन न किया, अब तुम्हारा सदका कुबूल नहीं हो सकता। सालबा नाकाम वापस हो गया, और उसके कुछ दिन बाद ही रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात हो गयी और सिद्दीके अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु खलीफ़ा हुए तो सालबा हज़रत अबू बक्र सिद्दीक की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और कहा कि मेरा सदका कुबूल कर लीजिये। हज़रत सिद्दीके अकबर ने फरमाया जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कुबूल नहीं किया तो मैं कैसे कुबूल कर सकता हूँ।

फिर सिद्दीके अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु की वफ़ात के बाद सालबा, हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और वही दरख़्वास्त की और वही जवाब मिला जो सिद्दीके अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु ने दिया था। फिर हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अन्हु के ज़माना-ए-ख़िलाफ़त में उनसे दरख़्वास्त की, उन्होंने भी इनकार कर दिया, और ख़िलाफ़ते उस्मान के ज़माने में ही सालबा मर गया (अल्लाह तआला आमाल की बुराई से हमारी हिफ़ाज़त

फरमाये। (तफसीरे मजहरी)

मसला

यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि जब सालबा तौबा करके हाज़िर हो गया तो उसकी तौबा क्यों कुबूल न की गयी। वजह ज़ाहिर है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को वही के ज़रिये मालूम हो गया था कि यह अब भी इस्लाम के साथ (सच्चे दिल से) तौबा नहीं कर रहा है, इसके दिल में निफ़ाक मौजूद है, केवल वक्ती मस्तेहत से मुसलमानों को धोखा देकर राज़ी करना चाहता है, इसलिये कुबूल नहीं। और जब हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसको मुनाफ़िक़ करार दे दिया तो बाद के ख़लीफ़ाओं को उसका सदका कुबूल करने का हक़ नहीं रहा, क्योंकि ज़कात के लिये मुसलमान होना शर्त है, अलबत्ता रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बाद चूँकि किसी शख्स के दिल का निफ़ाक़ यकीनी और निश्चित तौर पर किसी को मालूम नहीं हो सकता इसलिये आईन्दा का हुक्म यही है कि जो शख्स तौबा कर ले और इस्लाम व ईमान का इकरार कर ले तो उसके साथ मुसलमानों के जैसा मामला किया जाये, चाहे उसके दिल में कुछ भी हो। (तफसीर बयानुल-कुरआन)

الَّذِينَ يَلْمِزُونَ الْمُطَّوِّعِينَ مِنَ الْمُؤْمِنِينَ فِي الصَّدَقَاتِ وَالَّذِينَ لَا يَجِدُونَ
إِلَّا جُهْدَهُمْ فَيَسْخَرُونَ مِنْهُمْ ۖ سَخِرَ اللَّهُ مِنْهُمْ وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ۝ اَسْتَغْفِرُ لَهُمْ
أَوْ لَا تَسْتَغْفِرُ لَهُمْ ۖ إِنْ تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ سَبْعِينَ مَرَّةً فَلَنْ يَغْفِرَ اللَّهُ لَهُمْ ۚ ذَٰلِكَ بِأَنَّهُمْ كَفَرُوا
بِاللَّهِ وَرَسُولِهِ ۚ وَاللَّهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفَاسِقِينَ ۝

अल्लजी-न यल्मिज़ूनल् मुत्तव्विज़ी-न
मिनल् मुअ्मिनी-न फ़िस्स-दकाति
वल्लजी-न ला यजिदू-न इल्ला
जुह्दहुम् फ़-यसूख़रू-न मिन्हुम्,
सख़िरल्लाहु मिन्हुम् व लहुम्
अज़ाबुन् अलीम (79) इस्तग़फ़िर्
लहुम् औ ला तस्तग़फ़िर् लहुम्, इन्
तस्तग़फ़िर् लहुम् सब्ज़ी-न मरतन्
फ़-लंय्यग़फ़िरल्लाहु लहुम्, ज़ालि-क

वे लोग जो ताने मारते हैं उन मुसलमानों
पर जो दिल खोलकर ख़ैरात करते हैं और
उन पर जो नहीं रखते मगर अपनी
मेहनत का, फिर उन पर ठट्ठे करते हैं,
अल्लाह ने उनसे ठट्ठा किया है, और
उनके लिये दर्दनाक अज़ाब है। (79) तू
उनके लिये बख़्शिश माँग या न माँग,
अगर तू उनके लिये सत्तर बार बख़्शिश
माँगे तो भी हरगिज़ न बख़्शेगा उनको
अल्लाह, यह इस वास्ते कि वे मुन्किर हुए

बिअन्नहुम् क-फ़रु बिल्लाहि व
रसूलिही, वल्लाहु ता यहिदल्
कौमल्-फ़ासिकीन (80) ❀

अल्लाह से और उसके रसूल से, और
अल्लाह रास्ता नहीं देता नाफरमान लोगों
को। (80) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

ये (मुनाफिक लोग) ऐसे हैं कि नफ़ली सदका देने वाले मुसलमानों पर सदकात के बारे में (थोड़ा होने पर) ताना मारते हैं, और (खासकर) उन लोगों पर (और ज़्यादा) जिनको सिवाय मेहनत (व मज़दूरी की आमदनी) के और कुछ मयस्सर नहीं होता (और वे बेचारे उसी मज़दूरी में से हिम्मत करके कुछ सदका निकाल देते हैं), यानी उनसे मज़ाक़-ठट्टा करते हैं (यानी ताना तो सब ही को देते हैं कि क्या थोड़ी सी चीज़ सदके में लाये हो, और उन मेहनत-कश ग़रीबों का मज़ाक़ भी उड़ाते हैं कि लो ये भी सदका देने के काबिल हो गये) अल्लाह उनको इस मज़ाक़ उड़ाने का (तो ख़ास) बदला देगा और (उम्मी ताना मारने का यह बदला मिलेगा ही कि) उनके लिए (आखिरत में) दर्दनाक सज़ा होगी। आप चाहे उन (मुनाफिकों) के लिए इस्तिग़फ़ार (माफ़ी व मग़फ़िरत की प्रार्थना) करें या उनके लिए इस्तिग़फ़ार न करें (दोनों हाल बराबर हैं कि उनको उससे कोई नफ़ा नहीं होगा, उनकी मग़फ़िरत नहीं की जायेगी) अगर आप उनके लिए सत्तर बार (यानी बहुत ज़्यादा) भी इस्तिग़फ़ार करेंगे तब भी अल्लाह तआला उनको न बख़्शेगा। यह इस वजह से है कि उन्होंने अल्लाह और उसके रसूल के साथ कुफ़्र किया, और अल्लाह तआला ऐसे नाफरमान लोगों को (जो कभी ईमान और हक़ की तलब ही न करें) हिदायत नहीं किया करता (इस वजह से ये उम्र भर कुफ़्र ही पर कायम रहे और उसी पर मर गये)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

पहली आयत में नफ़ली सदकात देने वाले मुसलमानों पर मुनाफिकों के ताने मारने व कटाक्ष करने का ज़िक्र है। सही मुस्लिम में है कि हज़रत अबू मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु ने फरमाया कि अल्लाह तआला की तरफ़ से हमें सदके का हुक्म दिया गया और हमारा हाल यह था कि हम मेहनत मज़दूरी करते थे (कोई माल हमारे पास न था, उसी मज़दूरी से जो कुछ हमें मिलता था उसी में से सदका भी निकालते थे)। चुनौचे अबू अक़ील ने आधा साअ (तक़रीबन पौने दो सैर) सदका पेश किया, दूसरा आदमी आया उसने उससे कुछ ज़्यादा सदका किया। मुनाफिक लोग उन पर ताने मारने लगे कि क्या हकीर और ज़रा सी चीज़ सदके में लाये, अल्लाह तआला को ऐसी चीज़ की ज़रूरत नहीं। और जिसने कुछ ज़्यादा सदका किया उस पर यह इल्ज़ाम लगाया कि उसने लोगों को दिखलाने के लिये सदका किया है। इस पर यह आयत नाज़िल हुई।

दूसरी आयत में जो मुनाफिकों के बारे में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह

फरमाया गया कि आप उनके लिये इस्तिग़फ़ार करें या न करें बराबर है, और कितना ही इस्तिग़फ़ार करें उनकी मग़फ़िरत नहीं होगी, इसका पूरा बयान आगे आने वाली आयत 'ला तुसल्लि.....' (यानी आयत नम्बर 84) के तहत आयेगा।

فَرِحَ الْمُخَلَّفُونَ بِبَقْعَدِهِمْ خَلْفَ رَسُولِ اللَّهِ وَكَرِهُوا أَنْ يُجَاهِدُوا بِأَمْوَالِهِمْ
وَأَنْفُسِهِمْ فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَقَالُوا لَا تَنْفِرُوا فِي الْحَرِّ قُلْ نَارُ جَهَنَّمَ أَشَدُّ حَرًّا لَوْ كَانُوا يَفْقَهُونَ ۝
فَلْيَضْحَكُوا قَلِيلًا وَلْيَبْكُوا كَثِيرًا جَزَاءً بِمَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ۝ فَإِنْ رَجَعَكَ اللَّهُ إِلَى طَائِفَةٍ
مِّنْهُمْ فَاسْتَأْذَنُوكَ لِلْخُرُوجِ فَقُلْ لَّنْ تَخْرُجُوا مَعِيَ أَبَدًا وَلَنُتَقَاتِلَ مَعِيَ عَدُوًّا
إِنَّكُمْ رَضِيتُمْ بِالْقُعُودِ أَوَّلَ مَرَّةٍ فَاقْعُدُوا مَعَ الْخَلَفِينَ ۝

फरिहल्-मुखल्लफू-न बिमक्अदिहिम्
छिला-फ़ रसूलिल्लाहि व करिहू
अंयुजाहिदू बिअम्वालिहिम् व
अन्फुसिहिम् फी सबीलिल्लाहि व
कालू ला तन्फिरू फिल्हरि, कुल्
नारु जहन्न-म अशददु हरन्, लौ
कानू यफ़कहून (81) फ़त्यज़्हकू
कलीलं व ल्यब्कू कसीरन् जज़ाअम्-
बिमा कानू यक्सिबून (82)
फ़-इर-ज-अकल्लाहु इला ताइ-फ़तिम्
मिन्हुम् फ़स्तअ-ज़नू-क लिल्लख़ुसजि
फ़ कुल्-लन् तदुरुजू मज़ि-य
अ-बदं-व लन् तुकातिलू मज़ि-य
अदुव्वन्, इन्नकुम् रजीतुम्
बिल्कुअदि अव्व-ल मरतिन् फ़वअदू
मअल्-ख़ालिफ़ीन (83)

खुश हो गये पीछे रहने वाले अपने बैठ
रहने से अलग होकर रसूलुल्लाह से और
घबराये इससे कि लड़ें अपने माल से और
जान से अल्लाह की राह में, और बोले
कि मत कूच करो गर्मी में, तू कह-
दोज़्खा की आग सख़्त गर्म है, अगर
उनको समझ होती। (81) सो वे हंस लें
थोड़ा और रोयें बहुत ज़्यादा, बदला
उसका जो वे कमाते थे। (82) सो अगर
फिर ले जाये तुझको अल्लाह किसी फ़िर्क
की तरफ़ उनमें से, फिर इजाज़त चाहें
तुझसे निकलने की तो तू कह देना कि
तुम हरगिज़ न निकलोगे मेरे साथ कभी,
और न लड़ोगे मेरे साथ होकर किसी
दुश्मन से, तुमको पसन्द आया बैठ रहना
पहली बार सो बैठे रहो पीछे रहने वालों
के साथ। (83)

खुलासा-ए-तफसीर

ये पीछे रह जाने वाले खुश हो गये अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के (जाने के) बाद अपने बैठे रहने पर, और इनको अल्लाह तआला की राह में अपने माल और जान के साथ जिहाद करना नागवार हुआ (दो वजह से- अब्बल कुफ़, दूसरे आराम-तलबी) और (दूसरों को भी) कहने लगे कि तुम (ऐसी तेज़) गर्मी में (घर से) मत निकलो। आप (जवाब में) कह दीजिये कि जहन्नम की आग (इससे भी) ज्यादा (तेज़ और) गर्म है (सो ताज्जुब है कि इस गर्मी से तो बचते हो और जहन्नम में जाने का खुद सामान कर रहे हो, कि कुफ़ व मुख़ालफ़त को नहीं छोड़ते) क्या ख़ूब होता अगर वे समझते। सो (इन ज़िक्र हुई बातों का नतीजा यह है कि दुनिया में) थोड़े दिनों हंस (खेल) लें और (फिर आख़िरत में) बहुत दिनों (यानी हमेशा) रोते रहें (यानी हंसना थोड़े दिनों का है फिर रोना हमेशा-हमेशा का), उन कामों के बदले में जो कुछ (कुफ़, निफ़ाक़ और मुख़ालफ़त) किया करते थे।

(जब उनका हाल मालूम हो गया) तो अगर खुदा तआला आपको (इस सफ़र से मदीना को सही-सालिम) उनके किसी ग़िरोह की तरफ़ वापस लाये (ग़िरोह इसलिये कहा कि मुम्किन है कि कुछ लोग उस वक़्त तक मर जायें, या कोई कहीं चला जाये और) फिर ये लोग (खुशामद करने और पहले इल्ज़ाम को दूर करने के लिये किसी जिहाद में आपके साथ) चलने की इजाज़त माँगें (और दिल में उस वक़्त भी यही होगा कि ऐन वक़्त पर कुछ बहाना कर देंगे) तो आप यूँ कह दीजिए कि (अगरचे इस वक़्त बातें बना रहे हो, लेकिन अल्लाह तआला ने तुम्हारे दिल की बात बतला दी है, इसलिये पूरे एतिमाद के साथ कहता हूँ कि) तुम कभी भी मेरे साथ (जिहाद में) न चलोगे, और न मेरे साथ होकर किसी (दीन के) दुश्मन से लड़ोगे (जो कि असली मक़सद है चलने से, क्योंकि) तुमने पहले भी बैठे रहने को पसन्द किया था (और अब भी इरादा वही है) तो (ख़्वाह-मख़्वाह झूठी बातें क्यों बनाते हो, बल्कि पहले की तरह अब भी) उन लोगों के साथ बैठे रहो (जो वाकई) पीछे रह जाने के लायक़ ही हैं (किसी मजबूरी की वजह से जैसे बूढ़े, बच्चे और औरतें)।

मअरिफ़ व मसाईल

ऊपर से मुनाफ़िकों के हालात का सिलसिला चल रहा है जो ग़ज़वा-ए-तबूक में आ़ाम हुक्म के बावजूद शरीक नहीं हुए। उपर्युक्त आयतों में भी उन्हीं का एक हाल और फिर उसकी आख़िरत की सज़ा की वर्ड और दुनिया में आईन्दा के लिये उनका नाम इस्लाम के मुजाहिदों की फ़ेहरिस्त से ख़ारिज कर देना और आईन्दा उनको किसी जिहाद में शिरक़त की इजाज़त न होना बयान हुआ है।

‘मुख़ल्लफू-न’ मुख़ल्लफ़ुन् की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने हैं मतरूक, यानी जिसको छोड़ दिया गया हो। इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि ये लोग तो यह समझकर खुश हो रहे

हैं कि हमने अपनी जान को मुसीबत में डालने से बचाया और जिहाद में शिकस्त नहीं की, मगर हकीकत यह है कि अल्लाह तआला ने उनको इस काबिल नहीं समझा कि वे इस फज़ीलत (सम्मान) को पा सकें, इसलिये वे जिहाद के छोड़ने वाले नहीं बल्कि वे खुद छोड़े हुए हैं, कि अल्लाह व रसूल ने ही उनको छोड़ देने के काबिल समझा।

خَلَفَ رَسُولُ اللَّهِ

लफ़्ज़ 'खिलाफ़' के मायने यहाँ 'पीछे' और 'बाद' के भी हो सकते हैं। अबू उबैद ने यही मायने लिये हैं, जिसका मतलब यह हुआ कि ये लोग रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के जिहाद पर चले जाने के बाद आपके पीछे रह जाने पर खुश हो रहे हैं, जो दर हकीकत खुशी की चीज़ नहीं।

दूसरे मायने खिलाफ़ के इस जगह मुखालफ़त भी हो सकते हैं, कि ये लोग रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हुक्म की मुखालफ़त करके घर में बैठे रहे, और सिर्फ़ खुद ही नहीं बैठे बल्कि दूसरों को भी यह तालीम की कि:

لَا تَنْفِرُوا فِي الْحَرِّ

यानी गर्मी के ज़माने में जिहाद के लिये न निकलो।

यह पहले मालूम हो चुका है कि ग़ज़वा-ए-तबूक का हुक्म उस वक़्त हुआ था जबकि गर्मी सख़्त पड़ रही थी, हक़ तआला ने उनकी बात का जवाब यह दिया:

قُلْ نَارُ جَهَنَّمَ أَشَدُّ حَرًّا

यानी ये बदनसीब इस वक़्त की गर्मी को तो देख रहे हैं और उससे बचने की फ़िक्र कर रहे हैं, इसके नतीजे में खुदा और रसूल के हुक्म की नाफ़रमानी पर जो जहन्नम की आग से साबका पड़ने वाला है उसकी फ़िक्र नहीं करते। क्या यह मौसम की गर्मी जहन्नम की गर्मी से ज़्यादा है? उसके बाद फ़रमाया:

فَلْيَضْحَكُوا قَلِيلًا.....الخ

जिसके लफ़्ज़ी मायने यह हैं कि हंसो थोड़ा, रोओ ज़्यादा। यह लफ़्ज़ अगरचे हुक्म के लफ़्ज़ के साथ लाया गया है मगर मुफ़स्सिरीन हज़रत ने इसको ख़बर (सूचना देने) के मायने में करार दिया है, और हुक्म के लफ़्ज़ से ज़िक्र करने की यह हिक्मत बयान की है कि ऐसा होना निश्चित और यकीनी है। यानी यह बात यकीनी तौर पर होने वाली है कि इन लोगों की यह खुशी और हंसी सिर्फ़ चन्द दिन की है, उसके बाद आख़िरत में हमेशा के लिये रोना ही रोना होगा। इब्ने अबी हातिम ने हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से इस आयत की तफ़सीर में नक़ल किया है कि:

الدُّنْيَا قَلِيلٌ فَلْيَضْحَكُوا فِيهَا مَا شَاءُوا فَإِذَا انْقَطَعَتِ الدُّنْيَا وَصَارُوا إِلَى اللَّهِ فَلْيَسْتَأْنِفُوا الْبُكَاءَ بُكَاءً لَا تَنْقُطِعُ أَبَدًا

“दुनिया चन्द दिन की है, इसमें जितना चाहो हंस लो। फिर जब दुनिया ख़त्म होगी और अल्लाह के पास हाज़िर होंगे तो रोना शुरू होगा, जो कभी ख़त्म न होगा।”

दूसरी आयत में 'लन् तख़जू' का इरशाद है। इसका मफ़हूम उपर्युक्त खुलासा-ए-तफ़सीर में तो यह लिया गया है कि ये लोग अगर आईन्दा किसी जिहाद में शिरकत का इरादा भी करें तो चूँकि इनके दिलों में ईमान नहीं, वह इरादा भी इज़्ज़ास (नेक नीयती) से न होगा। जब निकलने का वक़्त आयेगा उस वक़्त पहले की तरह हीले-बहाने करके टल जायेंगे। इसलिये आपको हुक्म हुआ कि जब वे किसी जहाद में शरीक होने को खुद भी कहें तो आप यह असल हकीकत उनको बतला दें कि तुम्हारे किसी कौल व फ़ेल पर भरोसा नहीं, तुम न जिहाद को निकलोगे न इस्लाम के किसी दुश्मन से मेरे साथ जंग व लड़ाई करोगे।

मुफ़सिरीन में के अक्सर हज़रात ने फ़रमाया है कि यह हुक्म उनके लिये दुनियावी सज़ा के तौर पर नाफ़िज़ किया गया, कि अगर वे सचमुच किसी जिहाद में शिरकत को कहें तो भी उन्हें शरीक न किया जाये।

وَلَا تُصَلِّ عَلَى أَحَدٍ مِّنْهُمْ مَّا تَابَ إِلَّا وَلَا تَقُمْ عَلَى قَبْرِهِ ۚ إِنَّهُمْ كَفَرُوا بِاللّٰهِ وَرَسُولِهِ ۚ وَمَاتُوا وَهُمْ فَسِقُونَ ﴿٨٤﴾

व ला तुसल्लि अला अ-हदिम्
मिन्हुम् मा-त अ-बदव-व ला तकुम्
अला कब्रिही, इन्नहुम् क-फ़रू
बिल्लाहि व रसूलिही व मातू व हुम्
फ़ासिकून (84)

और नमाज़ न पढ़ उनमें से किसी पर जो
मर जाये कभी, और न खड़ा हो उसकी
कब्र पर, वे मुन्किर हुए अल्लाह से और
उसके रसूल से, और वे मर गये
नाफ़रमान। (84)

खुलासा-ए-तफ़सीर

और उनमें कोई मर जाये तो उस (के जनाज़े) पर कभी नमाज़ न पढ़िये और न (दफ़न के लिये) उसकी कब्र पर खड़े होईए, क्योंकि उन्होंने अल्लाह और उसके रसूल के साथ कुफ़्र किया है और वे कुफ़्र ही की हालत में मरे हैं।

मज़ारिफ़ व मसाईल

सही हदीसों से उम्मत की सर्वसम्मति से साबित है कि यह आयत अब्दुल्लाह इब्ने उबई मुनाफ़िक् की मौत और उस पर जनाज़े की नमाज़ के बारे में नाज़िल हुई, और बुख़ारी व मुस्लिम की रियायत से साबित है कि उसके जनाज़े पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने नमाज़ पढ़ी, पढ़ने के बाद यह आयत नाज़िल हुई और उसके बाद आपने कभी किसी मुनाफ़िक् के जनाज़े की नमाज़ नहीं पढ़ी।

सही मुस्लिम में हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से इस आयत के नाज़िल होने के वाकिए की यह तफ़सील बयान की गयी है कि जब अब्दुल्लाह बिन उबई इब्ने सलूल मर गया तो उसके बेटे हज़रत अब्दुल्लाह जो पक्के सच्चे मुसलमान और सहाबी थे, वह हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में हाज़िर हुए और दरख्वास्त की कि आप अपना कुर्ता अता फ़रमायें ताकि मैं अपने बाप को उसका कफ़न पहनाऊँ। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी कमीस मुबारक अता फ़रमा दी। फिर हज़रत अब्दुल्लाह ने यह भी दरख्वास्त की कि आप उसके जनाजे की नमाज़ भी पढ़ायें, आपने कुबूल फ़रमा लिया और नमाज़े जनाज़ा के लिये खड़े हो गये तो हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अन्हु ने आपका कपड़ा पकड़कर अर्ज किया कि आप इस मुनाफ़िक़ की नमाज़े जनाज़ा पढ़ते हैं हालाँकि अल्लाह तआला ने आपको इनकी नमाज़े जनाज़ा से मना फ़रमा दिया है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मुझे अल्लाह तआला ने इख़्तियार दिया है कि मैं दुआ-ए-मग़फ़िरत करूँ या न करूँ, और आयत में जो सत्तर मर्तबा इस्तिग़फ़ार पर भी मग़फ़िरत न होने का ज़िक्र है तो मैं सत्तर मर्तबा से ज़्यादा इस्तिग़फ़ार कर सकता हूँ। आयत से मुराद सूर: तौबा की वही आयत है जो अभी गुज़र चुकी है, यानी:

اَسْتَغْفِرُ لَهُمْ اَوْ لَا تَسْتَغْفِرُ لَهُمْ اِنْ تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ سَبْعِينَ مَرَّةً فَلَنْ يَغْفِرَ اللَّهُ لَهُمْ.

फिर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसके जनाजे की नमाज़ पढ़ी, नमाज़ के बाद ही यह आयत नाज़िल हुई:

لَا تَصَلِّ عَلَىٰ أَحَدٍ مِّنْهُمْ..... الخ.

(यानी यही आयत नम्बर 84) चुनाँचे उसके बाद आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कभी किसी मुनाफ़िक़ के जनाजे की नमाज़ नहीं पढ़ी।

ज़िक्र हुए वाकिए पर चन्द शुब्हात और उनके जवाब

यहाँ एक सवाल तो यह पैदा होता है कि अब्दुल्लाह बिन उबई एक ऐसा मुनाफ़िक़ था जिसका निफ़ाक़ विभिन्न वक्तों में ज़ाहिर भी हो चुका था, और सब मुनाफ़िक़ों का सरदार माना जाता था, उसके साथ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह विशेष सुलूक कैसे हुआ कि उसके कफ़न के लिये अपनी कमीस मुबारक अता फ़रमा दी?

इसका जवाब यह है कि इसके दो सबब हो सकते हैं- अव्वल उसके बेटे जो पक्के-सच्चे सहाबी थे, उनकी दरख्वास्त पर सिर्फ़ उनकी दिलजोई के लिये ऐसा किया गया। दूसरा सबब एक और भी हो सकता है जो बुखारी की हदीस में हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है कि ग़ज़वा-ए-बदर के मौक़े पर जब कुछ कुरैशी सरदार गिरफ़्तार किये गये तो उनमें हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चचा अब्बास भी थे। आपने देखा कि उनके बदन पर कुर्ता नहीं, तो सहाबा से इरशाद फ़रमाया कि इनको कमीस पहना दी जाये। हज़रत अब्बास

रज़ियल्लाहु अन्हु लम्बे कद के थे, अब्दुल्लाह बिन उबई के सिवा किसी की कमीस उनके बदन पर फिट न आयी, तो अब्दुल्लाह बिन उबई की कमीस लेकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने चचा अब्बास को पहना दी थी, उसके इसी एहसान का बदला अदा करने के लिये हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी कमीस उनको अता फरमा दी। (कुतुबी)

दूसरा सवाल यहाँ यह है कि फारूके आजम रज़ियल्लाहु अन्हु ने जो हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से यह अर्ज किया कि अल्लाह तआला ने आपको मुनाफ़िक के जनाजे की नमाज़ से मना फरमाया है, यह किस बिना पर कहा? क्योंकि उससे पहले किसी आयत में स्पष्ट तौर पर आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मुनाफ़िक की नमाजे जनाज़ा से मना नहीं फरमाया गया। इससे ज़ाहिर यही है कि हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अन्हु ने मनाही का मज़मून इसी सूर: ताबा की ऊपर बयान हुई आयत 'इस्तिग़फ़िर लहुम.....' से समझा होगा। तो अब सवाल यह होता है कि अगर यह आयत नमाजे जनाज़ा की मनाही पर दलालत करती है तो हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इससे मनाही क्यों न करार दी, बल्कि यह फरमाया कि इस आयत में मुझे इख़्तियार दिया गया है।

जवाब यह है कि दर हकीकत आयत के अलफ़ाज़ का ज़ाहिरी मतलब इख़्तियार ही देना है, और यह भी ज़ाहिर है कि सत्तर मर्तबा का ज़िक्र भी इस जगह सीमित करने के लिये नहीं बल्कि अधिकता बयान करने के लिये है। तो इस आयत का हासिल इसके ज़ाहिरी मफ़हूम के एतिबार से यह हो गया कि मुनाफ़िक की मग़फ़िरत तो न होगी, चाहे आप कितनी ही मर्तबा इस्तिग़फ़ार कर लें। लेकिन इसमें स्पष्ट तौर पर आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इस्तिग़फ़ार करने से रोका भी नहीं गया, और कुरआने करीम की सूर: यासीन की एक दूसरी आयत इसकी नज़ीर है, जिसमें फरमाया गया है:

سَوَاءٌ عَلَيْهِمْ أُنذِرْتَهُمْ أَمْ لَمْ تُنذِرْهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ

जैसे इस आयत ने हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को डराने और तब्लीग़ से मना नहीं किया बल्कि दूसरी आयतों से तब्लीग़ व दावत का सिलसिला उनके लिये भी जारी रखना साबित है:

يَلْغُ مَا أُنْزِلَ إِلَيْكَ مِنْ رَبِّكَ.

और:

إِنَّمَا أَنْتَ مُنْذِرُ وَكُلِّ قَوْمٍ هَادٍ.

वगैरह।

हासिल यह है कि आयत:

وَأَنْذَرْتَهُمْ أَمْ لَمْ تُنْذِرْهُمْ.

से तो आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इख़्तियार ही देना साबित हुआ था, फिर मुस्तक़िल दलील से डराने को जारी रखना साबित हो गया। हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम ने उक्त आयत से भी यह तो समझ लिया था कि इसकी मगफिरत नहीं होगी, मगर किसी दूसरी आयत के जरिये अब तक आपको इस्तिगफार करने से रोका भी नहीं गया था।

और हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जानते थे कि मेरी कमीस से या नमाज़ पढ़ाने से इसकी तो मगफिरत नहीं होगी, मगर इससे दूसरी इस्लामी मस्लेहतें हासिल होने की उम्मीद थी, कि उसके खानदान के लोग और दूसरे काफिर जब हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह मामला उसके साथ देखेंगे तो वे इस्लाम के करीब आ जायेंगे और मुसलमान हो जायेंगे, और स्पष्ट मनाही नमाज़ पढ़ने की उस वक्त तक मौजूद न थी, इसलिये आपने नमाज़ पढ़ ली।

इस जवाब का सुबूत एक तो वह जुमला है जो सही बुखारी में हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है कि अगर मुझे यह मालूम होता कि सत्तर मर्तबा से ज्यादा दुआ-ए-मगफिरत करने से इसकी मगफिरत हो जायेगी तो मैं यह भी करता। (कुर्तुबी)

दूसरा सुबूत वह हदीस है जिसमें हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि मेरा कुर्ता उसको अल्लाह के अज़ाब से नहीं बचा सकता, मगर मैंने यह काम इसलिये किया कि मुझे उम्मीद है कि इस अमल से उसकी कौम के हजार आदमी मुसलमान हो जायेंगे। चुनाँचे मगाज़ी इब्ने इस्हाक और तफसीर की कुछ किताबों में है कि इस वाकिए को देखकर खज़्रज कबीले के एक हजार आदमी मुसलमान हो गये। (तफसीरे कुर्तुबी जिल्द 8 पेज 221)

खुलासा यह है कि पहली आयत से खुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को भी यह तो यकीन हो गया था कि हमारे किसी अमल से इस मुनाफ़िक की मगफिरत नहीं होगी, मगर चूँकि आयत के ज़ाहिरी अलफ़ाज़ में इख़्तियार दिया गया था और किसी दूसरी आयत से भी इसकी मनाही अब तक नहीं आई थी, दूसरी तरफ़ एक काफ़िर के एहसान से दुनिया में निजात हासिल करने का फ़ायदा भी था, और इस मामले में दूसरे काफ़िरों के मुसलमान होने की उम्मीद व संभावना भी, इसलिये आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने नमाज़ पढ़ने को तरज़ीह दी। और फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने यह समझा कि जब इस आयत से यह साबित हो गया कि मगफिरत नहीं होगी तो इसके लिये नमाज़े जनाज़ा पढ़कर दुआ-ए-मगफिरत करना एक बेकार और बेफ़ायदा काम है, जो नुबुव्वत की शान के खिलाफ़ है। इसी को उन्होंने मनाही से ताबीर फरमाया, और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अगरचे इस फ़ेल को अपने आप में मुफ़ीद न समझते थे मगर दूसरों के इस्लाम लाने का फ़ायदा सामने था, इसलिये यह काम बेकार न रहा। इस तरह न रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अमल पर कोई शुब्हा रहता है न फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु के कौल पर। (तफ़सीर बयानुल-कुरआन)

अलबत्ता जब स्पष्ट तौर पर यह आयत नाज़िल हो गयी 'ला तुसल्लि' (यानी यही सूर: तौबा की आयत 84) तो मालूम हुआ कि अगरचे नमाज़ पढ़ने में एक दीनी मस्लेहत आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने थी, मगर उसमें एक ख़राबी और भी थी, जिसकी तरफ़ हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का ध्यान नहीं हुआ, वह यह कि खुद सच्चे मुसलमानों में इस अमल से एक बेदिली पैदा होने का ख़तरा था कि इनके यहाँ सच्चे मुसलमान और मुनाफ़िक

सब एक पल्ले में तौले जाते हैं। इस खतरे को सामने रखते हुए कुरआन में यह मनाही नाज़िल हो गयी, और फिर कभी आपने किसी मुनाफ़िक की नमाज़े जनाज़ा नहीं पढ़ी।

मसला: इस आयत से मालूम हुआ कि किसी काफ़िर के जनाज़े की नमाज़ और उसके लिये दुआ-ए-मग़फ़िरत जायज़ नहीं।

मसला: इसी आयत से यह भी साबित हुआ किसी काफ़िर के सम्मान व इकराम के लिये उसकी कब्र पर खड़ा होना या उसकी ज़ियारत के लिये जाना हराम है। इब्रत (सबक) हासिल करने के लिये हो या किसी मजबूरी के लिये तो वह इसके विरुद्ध नहीं, जैसा कि हिदाया में है कि अगर किसी मुसलमान का काफ़िर रिश्तेदार मर जाये और उसका कोई वली वारिस न हो तो मुसलमान रिश्तेदार उसको इसी तरह सुन्नत तरीके की रियायत किये बग़ैर गढ़े में दबा सकता है। (तफसीर बयानुल-कुरआन)

وَلَا تُعْجِبْكَ أَمْوَالُهُمْ وَأَوْلَادُهُمْ إِنَّا نَرِيدُ اللَّهُ أَنْ يُعَذِّبَهُمْ

بِهَذَا فِي الدُّنْيَا وَتَرْهَقَ أَنْفُسُهُمْ وَهُمْ كَافِرُونَ ۝ وَإِذَا أَنْزَلْتُ سُورَةً أَنْ آمَنُوا بِهَا لِلَّهِ وَجَاهِدُوا مَعَ رَسُولِهِ اسْتَأْذَنَكَ أُولُوا الطَّوْلِ مِنْهُمْ وَقَالُوا ذَرْنَا لِنُكُنْ مَعَ الْقَعِيدِينَ ۝ رَضُوا بِأَنْ يَكُونُوا مَعَ الْخَوَالِفِ وَطُبِعَ عَلَى قُلُوبِهِمْ فَهُمْ لَا يَفْقَهُونَ ۝ لَكِنَّ الرَّسُولَ وَالَّذِينَ آمَنُوا مَعَهُ جَاهِدُوا بِأَمْوَالِهِمْ وَأَنْفُسِهِمْ وَأُولَئِكَ لَهُمُ الْخَيْرَاتُ ۚ وَأُولَئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ۝ أَعَدَّ اللَّهُ لَهُمْ جَذْبًا تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا ۚ ذَلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ۝

व ला तुअज़िब-क अम्वालुहुम् व
औलादुहुम्, इन्नमा युरीदुल्लाहु
अय्युअज़िज-बहुम् बिहा फिदुदुन्या व
तज़ह-क अन्फुसुहुम् व हुम् काफिरून.
(85) व इज़ा उन्ज़िलत् सूरतुन् अन्
आमिनु बिल्लाहि व जाहिदू म-अ
रसूलिहिसूतअज-न-क उलुत्तौलि
मिन्हुम् व कालू जर्ना नकुम् मअल्
काज़िदीन (86) रज़ू बिअय्यकून्
मअल्-ख़्वालिफि व तुबि-अ अला

और ताज्जुब न कर उनके माल और
औलाद से, अल्लाह तो यही चाहता है कि
अज़ाब में रखे उनको. इन चीज़ों के सबब
दुनिया में और निकले उनकी जान और
वे उस वक़्त तक काफ़िर ही रहें। (85)
और जब नाज़िल होती है कोई सूरात कि
ईमान लाओ अल्लाह पर और लड़ाई करो
उसके रसूल के साथ होकर तो तुझसे
रुख़सत माँगते हैं गुंजाईश व कुदरत वाले
उनमें के और कहते हैं कि हमको छोड़ दे
कि रह जायें साथ बैठने वालों के। (86)
खुश हुए कि रह जायें पीछे रहने वाली

कुलूबिहिम् फहुम् ला यफकहून (87)
 लाकिनिरसूलु वल्लजी-न आमनू
 म-अहू जाहदू बिअम्वालिहिम् व
 अन्फुसिहिम्, व उलाइ-क
 लहुमुल्-खौरातु व उलाइ-क हुमुल्
 मुफ्लिहून (88) अ-अद्दल्लाहु लहुम्
 जन्नातिन् तजरी मिन् तस्तिहल्-अन्हारु
 ख़ालिदी-न फीहा, ज़ालिकल्
 फौजुल्-अज़ीम (89) ❀

औरतों के साथ, और मुहर कर दी गयी
 उनके दिलों पर सो वे नहीं समझते।
 (87) लेकिन रसूल और जो लोग ईमान
 लाये हैं साथ उसके वे लड़े हैं अपने माल
 और जान से, और उन्हीं के लिये हैं
 ख़ूबियाँ, और वही हैं मुराद को पहुँचने
 वाले। (88) तैयार कर रखे हैं अल्लाह ने
 उनके वास्ते बाग़ कि बहती हैं नीचे उनके
 नहरें, रहा करें-उनमें, यही है बड़ी
 कामयाबी। (89) ❀

खुलासा-ए-तफ़सीर

और उनके माल और औलाद आपको (इस) ताज्जुब में न डालें (कि अल्लाह के गुज़ब के पात्र ऐसे लोगों पर ये नेमतें कैसे हुई, सो वास्तव में ये उनके लिये नेमतें नहीं बल्कि अज़ाब के सामान हैं, क्योंकि) अल्लाह तआला को सिर्फ़ यह मन्ज़ूर है कि इन (ज़िक्र हुई चीज़ों) की वजह से उनको दुनिया में (भी) अज़ाब में गिरफ्तार रखे और उनका दम कुफ़्र ही की हालत में निकल जाए (जिससे आखिरत में भी अज़ाब में मुब्तला रहें)। और जब कभी कुरआन का कोई टुकड़ा (इस मज़मून में) नाज़िल किया जाता है कि तुम (दिल के खुलूस से) अल्लाह पर ईमान लाओ और उसके रसूल के साथ होकर जिहाद करो, तो उनमें के ताक़त वाले आप से रुख़्सत “यानी न जाने के लिए छूट” माँगते हैं और (रुख़्सत का यह मज़मून होता है कि) कहते हैं- हमको इजाज़त दीजिए कि हम भी यहाँ ठहरने वालों के साथ रह जाएँ (अलबत्ता ईमान व इख़्लास के दावे में कुछ करना नहीं पड़ता, इसको कह दिया कि हम तो मुख़्लिस हैं) वे लोग (निहायत बेग़ैरती के साथ) घर में बैठी औरतों के साथ रहने पर राज़ी हो गये और उनके दिलों पर मोहर लग गई, जिससे वे (ग़ैरत या बेग़ैरती को) समझते ही नहीं। हाँ लेकिन रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) और आपके साथ में जो मुसलमान हैं उन्होंने (इस हुक्म को माना और) अपने मालों से और अपनी जानों से जिहाद किया, और इन्हीं के लिए सारी ख़ूबियाँ हैं, और यही लोग कामयाब हैं। (और वह ख़ूबी और कामयाबी यह है कि) अल्लाह तआला ने उनके लिए ऐसे बाग़ तैयार कर रखे हैं जिनके नीचे से नहरें जारी हैं (और) वे उनमें हमेशा के लिये रहेंगे, यह बड़ी कामयाबी है।

मअरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में भी उन्हीं मुनाफ़िकों का हाल बयान किया गया जो गुज़वा-ए-तबूक में शरीक होने से हीले-बहाने करके रुक गये थे। उन मुनाफ़िकों में कुछ मालदार खुशहाल लोग भी थे, उनके हाल से मुसलमानों को यह ख़्याल हो सकता था कि जब ये लोग अल्लाह के नज़दीक मर्दूद व नामक़बूल हैं तो इनको दुनिया में ऐसी नेमतें क्यों मिलीं।

इसके जवाब में पहली आयत में फ़रमाया कि अगर ग़ौर करोगे तो उनके माल व औलाद उनके लिये रहमत व नेमत नहीं बल्कि दुनिया में भी अज़ाब ही हैं, आख़िरत का अज़ाब इसके अलावा है। दुनिया में अज़ाब होना इस तरह है कि माल की मुहब्बत, उसकी हिफ़ाज़त की और फिर उसके बढ़ाने की फ़िक्रें उनको ऐसी लगी रहती हैं कि किसी वक़्त किसी हाल चैन नहीं लेने देतीं। राहत का साज़ व सामान उनके पास कितना ही हो मगर राहत नहीं होती, जो दिल के सुकून व इत्मीनान का नाम है। इसके अलावा यह दुनिया का माल व असबाब चूँकि उनको आख़िरत से गाफ़िल करके कुफ़्र व नाफ़रमानी में व्यस्त रखने का सबब भी बन रहा है इसलिये अज़ाब का सबब होने की वजह से भी इसको अज़ाब कहा जा सकता है, इसी लिये कुरआन के अलफ़ाज़ में 'लियुअज़िज़-बहुम बिहा' फ़रमाया, कि अल्लाह तआला इन मालों ही के ज़रिये उनको सज़ा देना चाहता है।

'उलुत्तौलि' (ताक़त व गुंजाईश वालों) का लफ़ज़ ख़ास करने के लिये नहीं, बल्कि इससे ताक़त व गुंजाईश न रखने वाले लोगों का हाल और भी अच्छी तरह मालूम हो गया, कि उनके पास तो एक ज़ाहिरी उज़्र (मजबूरी और बहाना) भी था।

وَجَاءَ الْمَعَذِّرُونَ مِنَ الْأَعْرَابِ لِيُؤْذِنَ لَهُمْ وَقَعَدَ الَّذِينَ كَذَبُوا
اللّهَ وَرَسُولَهُ سَيُصِيبُ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ۝

व जाअल्-मुअज़िज़-न मिनल्-
अअ़राबि लियुअज़-न लहुम् व
क-अदल्लजी-न क-ज़बुल्ला-ह व
रसूलहू, सयुसीबुल्लजी-न क-फ़रू
मिन्हुम् अज़ाबुन् अलीम (90)

और आये बहाना करने वाले ग़वार ताकि
उनको रुख़्सत मिल जाये और बैठ रहें
जिन्होंने झूठ बोला था अल्लाह से और
उसके रसूल से, अब पहुँचेगा उनको जो
काफ़िर हैं उनमें दर्दनाक अज़ाब। (90)

खुलासा-ए-तफ़सीर

और कुछ बहाना बनाने वाले लोग देहातियों में से आये ताकि उनको (घर रहने की) इजाज़त

मिल जाये और (उन देहातियों में से) जिन्होंने खुदा से और उसके रसूल से (ईमान के दावे में) बिल्कुल ही झूठ बोला था, वे बिल्कुल ही बैठ रहे, (झूठे बहाने करने भी न आये) उनमें से जो (आखिर तक) काफिर रहेंगे उनको (आखिरत में) दर्दनाक अज़ाब होगा (और जो तौबा कर लें तो अज़ाब से बच जायेंगे)।

मअरिफ व मसाईल

इस तफसील से मालूम हुआ कि उन देहातियों में दो किस्म के लोग थे- एक तो वे जो हीले बहाने पेश करने हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में हाज़िर हुए कि उनको जिहाद में चलने से रुख़सत (छूट) दे दी जाये, और कुछ ऐसे नाफरमान व सरफिरे भी थे जिन्होंने इसकी भी परवाह नहीं कि रुख़सत ले लें, वे अपने आप ही अपने घरों में बैठ रहे।

हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अन्हु फरमाते हैं कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जद बिन कैस को जिहाद में न जाने की इजाज़त दे दी तो चन्द मुनाफ़िक लोग भी खिदमत में हाज़िर हुए और कुछ हीले बहाने पेश करके जिहाद छोड़ने की इजाज़त माँगी। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इजाज़त तो दे दी मगर यह समझ लिया कि ये झूठे बहाने कर रहे हैं, इसलिये उनसे मुँह फेर लिया, इस पर यह आयत नाज़िल हुई, जिसने बतला दिया कि उनका उज़्र (मजबूरी जाहिर करना और बहाने बनाना) काबिल कुबूल नहीं, इसलिये उनको दर्दनाक अज़ाब की वईद सुनाई गयी। अलबत्ता इसके साथ 'अल्लज़ी-न क-फ़रु मिन्हुम' फरमाकर इशारा कर दिया कि उनमें से कुछ लोगों का उज़्र कुफ़ व निफ़ाक की वजह से नहीं था बल्कि तबई सुस्ती के सबब था, वे इन काफ़िरो के अज़ाब में शामिल नहीं।

لَيْسَ عَلَى الضُّعَفَاءِ وَلَا عَلَى الْمُرُطَةِ وَلَا عَلَى الَّذِينَ لَا يَجِدُونَ مَا يَنْفِقُونَ حَرَجٌ إِذَا
نَصَحُوا لِلَّهِ وَرَسُولِهِ مَا عَلَى الْحُسَيْنِينَ مِنْ سَبِيلٍ ۚ وَاللَّهُ غَفُورٌ رَحِيمٌ ۝ وَلَا عَلَى الَّذِينَ
إِذَا مَا أُوْكُ لِحَبْلِهِمْ قُلْتُ لَا أَجِدُ مَا أَحْبَبْتُكُمْ عَلَيْهِ تَوَلَّوْا وَأَعْيُنُهُمْ تَفِيضُ مِنَ
الدَّمْعِ حَزَنًا أَلَّا يَجِدُوا مَا يَنْفِقُونَ ۝ إِنَّمَا السَّبِيلُ عَلَى الَّذِينَ يَسْتَأْذِنُوكَ وَهُمْ
أَغْنِيَاءُ رَضُوا بِأَنْ يَكُونُوا مَعَ الْخَوَالِفِ ۚ وَطَبَعَ اللَّهُ عَلَى قُلُوبِهِمْ فَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ۝

लै-स अलज़ज़ु-अफ़ा-इ व ला
अलल्-मरज़ा व ला अलल्लज़ी-न ला
यजिदू-न मा युन्फिकू-न ह-रजुन्
इज़ा न-सहू लिल्लाहि व रसूलिही,

नहीं है जईफों पर और न मरीज़ों पर
और न उन लोगों पर जिनके पास नहीं है
खर्च करने को, कुछ गुनाह जबकि दिल से
साफ़ हों अल्लाह और उसके रसूल के
साथ, नहीं है नेकी वालों पर इल्ज़ाम की

मा अलल्-मुस्सिनी-न मिन् सबीलिन,
 वल्लाहु गफूर्-रहीम (91) व ला
 अलल्लजी-न इजा मा अतौ-क
 लितस्मि-लहुम् कुल्-त ला अजिदु मा
 अस्मिलुकुम् अलैहि तवल्लौ व
 अअयुनुहुम् तफीजु मिनद्-दम्अि
 ह-ज़नन् अल्ला यजिदू मा युन्फिकून
 (92) इन्नमस्सबीलु अलल्लजी-न
 यस्तअज़िनून-क व हुम् अग्निया-उ
 रज़ू बिअय्यकूनू मअल् ख़्वालिफि व
 त-बअल्लाहु अला कुलूबिहिम् फहुम्
 ला यअलमून (93)

कोई राह और अल्लाह बख़्शने वाला
 मेहरबान है। (91) और न उन लोगों पर
 कि जब तेरे पास आये ताकि तू उनको
 सवारी दे, तूने कहा मेरे पास कोई चीज़
 नहीं कि तुमको उस पर सवार कर दूँ तो
 उल्टे फिरे और उनकी आँखों से बहते थे
 आँसू इस ग़म में कि नहीं पाते वह चीज़
 जो खर्च करें। (92) राह इल्ज़ाम की तो
 उन पर है जो रुख़्सत माँगते हैं तुझसे
 और वे मालदार हैं, खुश हुए इस बात से
 कि वे रह जायें साथ पीछे रहने वालों के,
 और मुहर कर दी अल्लाह ने उनके दिलों
 पर सो वे नहीं जानते। (93)

ख़ुलासा-ए-तफ़्सीर

कम ताक़त वाले लोगों पर कोई गुनाह नहीं, और न बीमारों पर, और न उन लोगों पर
 जिनको (जिहाद के सामान की तैयारी में) खर्च करने को मयस्सर नहीं, जबकि ये लोग अल्लाह
 और रसूल के साथ (दूसरे अहक़ाम में) खुलूस (सही नीयत) रखें (और दिल से इताअत करते रहें
 तो) इन नेक काम करने वालों पर किसी किस्म का इल्ज़ाम (आयद) नहीं (क्योंकि अल्लाह
 तआला किसी पर उसकी ताक़त से ज़्यादा बोझ नहीं डालता) और अल्लाह पाक बड़ी मग़फ़िरत
 वाले, बड़ी रहमत वाले हैं (कि अगर ये लोग अपने इल्म में माज़ूर हों और अपनी तरफ़ से नेकी
 व फ़रमाँबरदारी में कोशिश करें और वास्तव में कुछ कमी रह जाये तो माफ़ कर देंगे)। और न
 उन लोगों पर (कोई गुनाह और इल्ज़ाम है) कि जिस वक़्त वे आपके पास इस वास्ते आते हैं कि
 आप उनको कोई सवारी दे दें और आप (उनसे) कह देते हैं कि मेरे पास तो कोई चीज़ नहीं
 जिस पर मैं तुमको सवार कर दूँ, तो वे (नाकाम) इस हालत से वापस चले जाते हैं कि उनकी
 आँखों से आँसू बहते होते हैं, इस ग़म में कि (अफ़सोस) उनको (जिहाद के सामान की तैयारी
 में) खर्च करने को कुछ भी मयस्सर नहीं (न खुद है और न दूसरी जगह से मिला। गर्ज़ कि इन
 ज़िक्र हुए माज़ूरों पर कोई पकड़ नहीं)। पस इल्ज़ाम (और पकड़) तो सिर्फ़ उन लोगों पर है जो
 बावजूद सामान (और ताक़त) वाले होने के (घर रहने की) इजाज़त चाहते हैं, वे लोग (निहायत

बेशर्मी से) घर में बैठी औरतों के साथ रहने पर राजी हो गये, और अल्लाह ने उनके दिलों पर मुहर लगा दी, जिससे वे (गुनाह व सवाब को) जानते ही नहीं।

मआरिफ व मसाईल

ऊपर बयान हुई आयतों में ऐसे लोगों के हालात का बयान था जो दर हकीकत जिहाद में शिकत से माजूर न थे मगर सुस्ती के सबब उज़्र (बहाना) करके बैठ रहे, या ऐसे मुनाफ़िक जिन्होंने अपने कुफ़्र व निफ़ाक की वजह से हीले-बहाने गढ़कर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से इजाज़त ले ली थी, और कुछ वे नाफ़रमान भी थे जिन्होंने उज़्र करने और इजाज़त लेने की भी ज़रूरत न समझी, वैसे ही बैठ रहे, उनका ग़ैर-माजूर होना और उनमें जो कुफ़्र व निफ़ाक के मुजरिम थे उनके लिये दर्दनाक अज़ाब का होना पिछली आयतों में बयान हुआ है।

उपर्युक्त आयतों में उन मुख़ि़स (पक्के-सच्चे) मुसलमानों का ज़िक्र है जो हकीकत में माजूर (मजबूर) होने के सबब जिहाद में शरीक न हो सके। उनमें कुछ तो अंधे या बीमार माजूर थे जिनका उज़्र सब के सामने था, और कुछ वे लोग भी थे जो जिहाद में शिकत के लिये तैयार थे, बल्कि जिहाद में जाने के लिये बेकरार थे, मगर उनके पास सफ़र के लिये सवारी का जानवर न था, सफ़र लम्बा और मौसम गर्मी का था, उन्होंने अपने ज़ब्बा-ए-जिहाद और सवारी न होने की मजबूरी का ज़िक्र करके रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से दरख़्वास्त की कि हमारे लिये सवारी का कोई इन्तिज़ाम हो जाये।

तफ़सीर व तारीख़ की किताबों में इस किस्म के अनेक वाकिआत लिखे हैं, कुछ का मामला तो यह हुआ कि शुरू में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनसे उज़्र कर दिया कि हमारे पास सवारी का कोई इन्तिज़ाम नहीं, मगर ये लोग रोते हुए वापस हुए और रोते रहे तो अल्लाह तआला ने उनके लिये ऐसा सामान कर दिया कि छह ऊँट रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास उसी वक़्त आ गये, आपने ये उनको दे दिये। (तफ़सीरे मज़हरी) और उनमें से तीन आदमियों के लिये सवारी का इन्तिज़ाम हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अन्हु ने कर दिया हालाँकि वे इससे पहले बहुत बड़ी तायदाद का इन्तिज़ाम अपने खर्च से कर चुके थे।

कुछ वे भी रहे कि जिनको आख़िर तक सवारी न मिली और मजबूर होकर रह गये। बयान हुई आयतों में उन्हीं सब हज़रत का ज़िक्र आया है जिनका उज़्र अल्लाह तआला ने कुबूल फ़रमाया। आख़िर में फिर इस पर तंबीह फ़रमा दी कि बबाल तो सिर्फ़ उन लोगों पर है जिन्होंने कुदरत व ताक़त के बावजूद जिहाद में ग़ैर-हाज़िर रहना औरतों की तरह पसन्द किया:

إِنَّمَا السَّبِيلُ عَلَى الَّذِينَ يَسْتَأْذِنُونَكَ وَهُمْ أَغْيَاءُ

का यही मतलब है।

पारा (11) यअ्तजिरु-न

الحجرات - عاشر - 11

يَعْتَذِرُونَ إِلَيْكُمْ إِذَا رَجَعْتُمْ إِلَيْهِمْ ؕ قُلْ لَا تَعْتَذِرُونَ لِي أَن تُوْثِنَ لَكُمْ قَدْ نَبَأَ اللَّهُ مِنْ أَخْبَارِكُمْ
وَسَيَرَى اللَّهُ عَمَلَكُمْ وَرَسُولُهُ ثُمَّ تُرَدُّونَ إِلَىٰ عِلْمِ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ
تَعْمَلُونَ ۝ سَيَحْلِفُونَ بِاللَّهِ لَكُمْ إِذَا انْقَلَبْتُمْ إِلَيْهِمْ لَتَعْرِضُوا عَنْهُمْ ؕ فَاعْرِضُوا عَنْهُمْ ؕ إِنَّهُمْ
رِجْسٌ وَمَاؤَمَّةٌ جَهَنَّمُ ۖ جَزَاءُ مَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ۝ يَحْلِفُونَ لَكُمْ لَتَرْضُوا عَنْهُمْ ؕ فَإِنْ تَرْضَوْا عَنْهُمْ
فَإِنَّ اللَّهَ لَا يَرْضَىٰ عَنِ الْقَوْمِ الْفَاسِقِينَ ۝

यअ्तजिरु-न इलैकुम् इज्जा र-जअ्तुम्
इलैहिम्, कुल्-ला तअ्तजिरु लन्-
नुअमि-न लकुम् कद् नब्ब-अनल्लाहु
मिन् अखबारिकुम्, व स-यरल्लाहु
अ-म-लकुम् व रसूलुहू सुम्-म
तुरददू-न इला आलिमिल्-गै बि
वशहादति फयुनब्बिउकुम् बिमा
कुन्तुम् तअमलून (94) स-यस्लिफू-न
बिल्लाहि लकुम् इज्जन्कलब्तुम् इलैहिम्
लितुअरिजू अन्हुम्, फ-अअरिजू
अन्हुम्, इन्नहुम् रिज्सुव-व मअ्वाहुम्
जहन्नमु जज्जाअम् बिमा कानू
यक्सिबून (95) यस्लिफू-न लकुम्
लितरजौ अन्हुम् फ-इन् तरजौ अन्हुम्
फ-इन्नल्ला-ह ला यरजा अनिल्
कौमिल्-फासिकीन (96)

बहाने लायेंगे तुम्हारे पास जब तुम
लौटकर जाओगे उनकी तरफ, तू कह
बहाने मत बनाओ हम हरगिज़ न मानेंगे
तुम्हारी बात, हमको बता चुका है अल्लाह
तुम्हारे हालात, और अभी देखेगा अल्लाह
तुम्हारे काम और उसका रसूल फिर तुम
लौटाये जाओगे उस छुपे और खुले के
जानने वाले की तरफ, सो वह बतलायेगा
तुमको जो तुम कर रहे थे। (94) अब
कसमें खायेंगे अल्लाह की तुम्हारे सामने
जब तुम लौटकर जाओगे उनकी तरफ
ताकि तुम उनसे दरगुज़र करो, सो तुम
दरगुज़र करो उनसे बेशक वे लोग पलीद
हैं और उनका ठिकाना दोज़ख है, बदला
उनके कामों का। (95) वे लोग कसमें
खायेंगे तुम्हारे सामने ताकि तुम उनसे
राज़ी हो जाओ, सो अगर तुम राज़ी हो
गये उनसे तो अल्लाह राज़ी नहीं होता
नाफरमान लोगों से। (96)

खुलासा-ए-तफसीर

ये लोग तुम्हारे (सब के) सामने उज़्र पेश करेंगे जब तुम उनके पास वापस जाओगे (सो ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम!) आप (सब की तरफ से साफ) कह दीजिए कि (बस रहने दो) यह उज़्र पेश मत करो, हम कभी तुमको सच्चा न समझेंगे, (क्योंकि) अल्लाह तआला हमको तुम्हारी (असली हालत की) ख़बर दे चुके हैं (कि तुमको कोई वास्तविक उज़्र न था) और (खैर) आगे भी अल्लाह तआला और उसका रसूल तुम्हारी कारगुजारी देख लेंगे (मालूम हो जायेगा कि तुम अपने गुमान के मुताबिक कितने फ़रमाँबरदार और मुख़्तस हो)। फिर ऐसे के पास लौटाये जाओगे जो छुपे और ज़ाहिर सब का जानने वाला है (जिससे तुम्हारा कोई एतिकाद कोई अमल छुपा नहीं) फिर वह तुमको बतला देगा जो-जो कुछ तुम करते थे (और उसका बदला देगा)। हाँ वे अब तुम्हारे सामने अल्लाह की क़समें खा जाएँगे (कि हम माज़ूर थे) जब तुम उनके पास वापस जाओगे, ताकि तुम उनको उनकी हालत पर छोड़ दो (और मलामत वगैरह न करो), सो तुम (उनका मतलब पूरा कर दो और) उनको उनकी हालत पर छोड़ दो, (इस फ़ानी गर्ज के हासिल होने से उनका कुछ भला न होगा, क्योंकि) वे लोग बिल्कुल गन्दे हैं, और (अख़ीर में) उनका ठिकाना दोज़ख़ है, उन कामों के बदले में जो कुछ वे (निफ़ाक़ व मुख़ालफ़त वगैरह) किया करते थे। (और इसका भी तकाज़ा यही है कि उनको उनके हाल पर छोड़ दिया जाये, क्योंकि उनसे बात करने से मक़सद है उनकी इस्लाह और इसकी उनकी ख़बासत की वजह से उम्मीद नहीं, और साथ ही) ये इसलिए क़समें खाएँगे कि तुम उनसे राज़ी हो जाओ। सो (अव्वल तो तुम अल्लाह के दुश्मनों से राज़ी ही क्यों होने लगे, लेकिन मान लो) अगर तुम उनसे राज़ी भी हो जाओ तो (उनको क्या लाभ, क्योंकि) अल्लाह तआला तो ऐसे शरीर लोगों से राज़ी नहीं होता (और बिना अल्लाह के राज़ी हुए मख़्लूक का राज़ी होना बेफ़ायदा है)।

मआरिफ़ व मसाईल

पहली आयतों में उन मुनाफ़िकों का ज़िक्र था जिन्होंने ग़ज़वा-ए-तबूक में निकलने से पहले झूठे हीले-बहाने करके जिहाद में जाने से उज़्र कर दिया था। उपर्युक्त आयतों में उनका ज़िक्र है जिन्होंने जिहाद से वापसी के बाद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर होकर अपनी जिहाद से ग़ैर-हाज़िरी के झूठे उज़्र (हीले-बहाने) पेश किये। ये आयतें मदीना तय्यिबा वापस आने से पहले नाज़िल हो चुकी थीं जिनमें इस आईन्दा पेश आने वाले वाकिए की ख़बर थी कि जब आप मदीना वापस पहुँचेंगे तो मुनाफ़िक लोग उज़्र करने के लिये आपके पास आयेंगे, चुनाँचे इसी तरह वाकिआ पेश आया।

ज़िक्र हुई आयतों में उनके बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को तीन हुक्म दिये गये- अव्वल यह कि जब ये उज़्र करने के लिये आयें तो आप उनसे कह दें कि फुज़ूल झूठे उज़्र न करो, हम तुम्हारी बात की पुष्टि न करेंगे, क्योंकि अल्लाह तआला ने वही के ज़रिये हमें

तुम्हारे सब हालात और ख्यालात और तुम्हारी शरारत और दिलों में छुपे हुए खुफिया इरादे सब बतला दिये हैं, जिससे तुम्हारा झूठा होना हम पर खुल गया। इसलिये उग्र बयान करना फुजूल है। उसके बाद फरमाया:

وَسَيَرَى اللَّهُ عَمَلَكُمْ..... الآية.

इसमें उनको मोहलत दी गयी कि अब भी तौबा कर लें, निफाक छोड़कर सच्चे मुसलमान हो जायें। क्योंकि इसमें यह फरमाया कि आईन्दा अल्लाह तआला और उसके रसूल तुम्हारा अमल देखेंगे कि वह क्या और कैसा रहता है, उसके मुताबिक अमल होगा। अगर तुम तौबा करके सच्चे मुसलमान हो गये तो तुम्हारे गुनाह माफ हो जायेंगे वरना ये झूठे हीले-बहाने तुम्हें कोई फायदा न देंगे।

दूसरा हुक्म दूसरी आयत में बयान हुआ है कि ये लोग आपकी वापसी के बाद झूठी कसमें खाकर आपको मुल्मईन करना चाहेंगे, और मकसद उससे यह होगा कि आप उनकी जिहाद में इस गैर-हाजिरी को नज़र-अन्दाज़ कर दें, इस पर मलामत न करें। इस पर यह इरशाद हुआ कि उनकी यह इच्छा आप पूरी कर दें, यानी आप उनसे मुँह फेर लें, न तो उन पर मलामत व तंबीह करें और न उनसे अच्छे ताल्लुकात रखें, क्योंकि मलामत से तो कोई फायदा नहीं, जब उनके दिल में ईमान ही नहीं और उसकी तलब भी नहीं तो मलामत करने (बुरा-भला कहने) से क्या होगा, फुजूल अपना वक़्त क्यों बरबाद किया जाये।

तीसरा हुक्म तीसरी आयत में यह है कि ये लोग कसमें खाकर आपको और मुसलमानों को राजी करना चाहेंगे, इसके बारे में हक़ तआला ने यह हिदायत फरमा दी कि उनकी यह इच्छा पूरी न की जाये, आप उनसे राजी न हों। और यह भी फरमा दिया कि फर्ज करो अगर आप राजी भी हो गये तो उनको कोई फायदा इसलिये नहीं पहुँचेगा कि अल्लाह तआला उनसे राजी नहीं है, और अल्लाह कैसे राजी हो जबकि ये अपने कुफ़ व मुनाफ़क़त पर कायम हैं।

الْأَعْرَابُ أَشَدُّ كُفْرًا وَنِفَاقًا وَأَجْدَرُ أَنْ يَعْلَمُوا حُدُودَ مَا

أَنْزَلَ اللَّهُ عَلَى رَسُولِهِ ۗ وَاللَّهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ۝ وَمِنَ الْأَعْرَابِ مَنْ يَتَّخِذُ مَا يُنْفِقُ مَغْرَمًا وَيَتَرَبَّصُّ

بِكُمْ الدَّوَابِرَ عَلَيْهِمْ دَائِرَةُ السَّوْءِ ۗ وَاللَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝ وَمِنَ الْأَعْرَابِ مَنْ يُؤْمِنُ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ

الْآخِرِ وَيَتَّخِذُ مَا يُنْفِقُ قُرْبًا عِنْدَ اللَّهِ وَصَلَوَاتِ الرَّسُولِ ۚ أَلَا إِنَّهَا قُرْبَةٌ لَّهُمْ سِذَّ خَلَتْهُمْ اللَّهُ

فِي رَحْمَتِهِ ۚ إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ۝

अल्अअराबु अशददु कुफ़रं व-

निफाकं व-व अज्दरु अल्ला यअलमू

गंवार बहुत सख़्त हैं कुफ़ में और निफाक में, और इसी लायक हैं कि न सीखें वो कायदे जो नाज़िल किये अल्लाह ने अपने

हुदू-द मा अन्जलल्लाहु अला
रसूलिही, वल्लाहु अलीमुन् हकीम
(97) व मिनल्-अअराबि मय्यत्तखिजु
मा युन्फिकु मगरमं-व य-तरब्बसु
बिकुमुद्दवाइ-र, अलैहिम् दाइ-रतुस्-
सौ-इ, वल्लाहु समीअुन् अलीम (98)
व मिनल्-अअराबि मय्युअ्मिनु
बिल्लाहि वल्यौमिल् आखिरि व
यत्तखिजु मा युन्फिकु कुरुबातिन्
अिन्दल्लाहि व स-लवातिरसूलि, अला
इन्नहा कुरबतुल्लहुम् सयुद्दखिलु-
हुमुल्लाहु फी रस्मतिही, इन्नल्ला-ह
गफूररहीम (99) ❀

रसूल पर, और अल्लाह सब कुछ जानने
वाला हिक्मत वाला है। (97) और बाजे
गंवार ऐसे हैं कि शुमार करते हैं अपने
खर्च करने को तावान और इन्तिजार
करते हैं तुम पर जमाने की गर्दिशों का,
उन्हीं पर आये बुरी गर्दिश, और अल्लाह
सुनने वाला जानने वाला है। (98) और
बाजे गंवार वे हैं कि ईमान लाते हैं
अल्लाह पर और कियामत के दिन पर
और शुमार करते हैं अपने खर्च करने को
नजदीक होना अल्लाह से और दुआ लेनी
रसूल की। सुनता है! वह उनके हक में
नजदीकी है, दाखिल करेगा उनको
अल्लाह अपनी रहमत में, बेशक अल्लाह
बख्शने वाला मेहरबान है। (99) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

(इन मुनाफिकों में जो) देहाती लोग (हैं वे अपनी सख्त-मिजाजी की वजह से) कुफ़ और
निफ़ाक में बहुत ही सख्त लोग हैं, और (अलिमों और अक्लमन्दों से दूरी की वजह से) उनको
ऐसा होना ही चाहिए कि उनको उन अहकाम का इल्म न हो जो अल्लाह तआला ने अपने रसूल
(सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) पर नाज़िल फरमाये हैं (क्योंकि जब जानने वालों से दूर दूर रहेंगे
तो उनका जाहिल रहना तो इसका लाज़िमी नतीजा है, और इसी वजह से मिजाज में सख्ती और
इन दोनों चीज़ों से कुफ़ व निफ़ाक से शिद्दत होगी) और अल्लाह तआला बड़े इल्म वाले, बड़ी
हिक्मत वाले हैं (वह इन सब बातों पर बाख़बर हैं और हिक्मत से मुनासिब सज़ा देंगे)। और इन
(ज़िक्र हुए मुनाफ़िक) देहातियों में से बाज़ा-बाज़ा ऐसा है कि (कुफ़ व निफ़ाक और अज्ञानता के
अलावा कन्ज़ूसी और दुश्मनी की सिफ़तें भी अपने अन्दर रखता है, यहाँ तक कि) जो कुछ
(जिहाद और ज़कात वगैरह के मौकों में मुसलमानों की शर्मा शर्मी) वह खर्च करता है उसको
(एक) जुर्माना (की तरह) समझता है (यह तो कन्ज़ूसी है) और (दुश्मनी यह है कि) तुम
मुसलमानों के वास्ते (जमाने की) गर्दिशों का मुत्तज़िर रहता है (कि कहीं इन पर कोई हादसा
पड़ जाये तो इनका खात्मा हो, सो) बुरा वक़्त उन ही (मुनाफ़िकों) पर (पड़ने वाला) है (चुनाँचे

फुतूहात (विजय और कामयाबियों) की वुस्तुत हुई, काफ़िर ज़लील हुए, उनकी सारी हसरतें दिल ही में रह गयीं, और तमाम उम्र रंज और ख़ौफ़ में कटी। और अल्लाह तआला (उनके कुफ़्र व निफ़ाक़ की बातें) सुनते हैं (और उनके दिली ख़्यालात यानी खर्च करने को जुर्माना समझने और मुसलमानों का बुरा चाहने को) जानते हैं (पस इन सब की सज़ा देंगे)।

और बाज़े देहात वाले ऐसे भी हैं जो अल्लाह पर और क़ियामत के दिन पर (पूरा-पूरा) ईमान रखते हैं, और जो कुछ (नेक कामों में) खर्च करते हैं उसको अल्लाह के पास कुर्ब "यानी निकटता" हासिल होने का सबब और रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम) की दुआ (लेने) का ज़रिया बनाते हैं, (क्योंकि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम की आदतें शरीफ़ा थी कि ऐसे मौकों पर खर्च करने वाले को दुआ देते थे जैसा कि हदीसों में है)। याद रखो कि (उनका) यह (खर्च करना) बेशक उनके लिये निकटता का सबब है (और दुआ का होना तो ये खुद देख-सुन लेते हैं, इसकी ख़बर देने की ज़रूरत न थी, और वह निकटता यह है कि) ज़रूर उनको अल्लाह तआला अपनी (खास) रहमत में दाख़िल कर लेंगे (क्योंकि) अल्लाह तआला बड़ी मग़फ़िरत वाले, बड़ी रहमत वाले हैं (पस उनकी ख़तायें माफ़ करके अपनी रहमत में ले लेंगे)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

पहले की आयतों में मदीना के मुनाफ़िकों का ज़िक्र था, इन आयतों में उन मुनाफ़िकों का ज़िक्र है जो मदीना के आस-पास और देहात के रहने वाले थे।

आराब यह लफ़्ज़ अरब की जमा (बहुवचन) नहीं, बल्कि इस्मे जमा है, जो देहात के बाशिन्दों के लिये बोला जाता है। इसका एक वचन बनाना होता है तो आराबी कहते हैं, जैसे अन्सार का वाहिद अन्सारी आता है।

उनका हाल उक्त आयतों में यह बतलाया कि ये कुफ़्र व निफ़ाक़ में शहर वालों से भी बढ़े हुए हैं, जिसकी वजह यह बतलाई कि ये लोग इल्म और उलेमा से दूर रहने के सबब उमूमन जहालत और सख़्ती में मुब्तला होते हैं, सख़्त-दिल होते हैं:

أَجْمَرُوا لَا يَعْلَمُوا حُدُودَ مَا أَنْزَلَ اللَّهُ

यानी उन लोगों का माहौल ही ऐसा है कि वे अल्लाह की नाज़िल की हुई हदों से बेख़बर रहें, क्योंकि न कुरआन उनके सामने आता है न उसके मायने व मतलब और अहक़ाम से उनको वाक़फ़ियत होती है।

दूसरी आयत में भी इन्हीं आराब (देहातियों) का एक हाल यह बयान किया गया है कि ये लोग जो ज़कात वग़ैरह में खर्च करते हैं उसको तावान (जुर्माना और डांड) समझकर देते हैं, वजह यह है कि दिल में ईमान तो है नहीं, महज़ अपने कुफ़्र को छुपाने के लिये नमाज़ भी पढ़ लेते हैं और फ़र्ज़ ज़कात भी दे देते हैं, मगर दिल में कुद्वते हैं कि यह माल फ़ुज़ूल गया। इसी लिये इस इन्तिज़ार में रहते हैं कि किसी तरह मुसलमानों पर कोई मुसीबत पड़े और उनको शिकस्त हो जाये तो इस तावान से हमें छुटकारा मिले।

‘अद्वदाइर’ दायरे की जमा (बहुवचन) है। अरबी लुगत के एतिबार से दायरा उस बदली हुई हालत को कहते हैं जो पहली अच्छी हालत के बाद बुरी हो जाये, इसी लिये कुरआने करीम ने उनके जवाब में फरमाया:

عَلَيْهِمْ ذَاتُ الرُّسُو.

यानी उन्हीं पर बुरी हालत आने वाली है, और ये अपने आमाल और बातों की बिना पर और ज्यादा ज़लील होंगे।

देहाती मुनाफ़िकों के हालात का ज़िक्र करने के बाद कुरआनी अन्दाज़ के मुताबिक तीसरी आयत में उन देहातियों का ज़िक्र करना भी मुनासिब समझा गया जो सच्चे और पक्के मुसलमान हैं, ताकि मालूम हो जाये कि देहात के बाशिन्दे भी सब एक जैसे नहीं होते, उनमें नेक और सच्चे मुसलमान और समझदार लोग भी होते हैं, उनका हाल यह है कि वे जो ज़कात व सदकात देते हैं तो उसको अल्लाह तआला की निकटता का ज़रिया समझकर और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की दुआओं की उम्मीद पर देते हैं।

सदकात का अल्लाह तआला की निकटता का ज़रिया होना तो ज़ाहिर ही है, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की दुआओं की उम्मीद इस बिना पर है कि कुरआने हकीम ने जहाँ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मुसलमानों से ज़कात के माल वसूल करने का हुक्म दिया है वहीं यह भी हिदायत फरमाई है कि ज़कात अदा करने वालों के लिये आप दुआ भी किया करें, जैसा कि आगे आने वाली आयत में इरशाद है:

خُذْ مِنْ أَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً تُطَهِّرُهُمْ وَتُزَكِّيهِمْ بِهَا وَصَلِّ عَلَيْهِمْ.

इस आयत में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सदकात वसूल करने के लिये यह हुक्म भी दिया है कि उनके लिये दुआ किया करें, यह हुक्म लफ़्ज़ सलवात के साथ आया है ‘व सल्लि अलैहिम’ इसी लिये ऊपर ज़िक्र हुई आयत में भी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की दुआओं को लफ़्ज़ सलवात से ताबीर किया है।

وَالسَّابِقُونَ الْأَوَّلُونَ مِنَ الْمُهَاجِرِينَ وَالْأَنْصَارِ وَالَّذِينَ
اتَّبَعُوهُمْ بِإِحْسَانٍ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُمْ وَرَضُوا عَنْهُ وَأَعَدَّ لَهُمْ جَنَّاتٍ تَجْرِي تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ
خَالِدِينَ فِيهَا أَبَدًا ذَلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ.

वस्साबिकूनल् अव्वलू-न मिनल्- मु हाजिरी-न वल्-अन्सारि वल्लज़ीनत्त-बज़ूहुम् बि-इस्सानिर्- रज़ियल्लाहु अन्हुम् व रज़ू अन्हु व	और जो लोग पुराने हैं सबसे पहले हिजरत करने वाले और मदद करने वाले और जो उनकी पैरवी करने वाले हुए नेकी के साथ, अल्लाह राज़ी हुआ उनसे

अ-अद-द लहुम् जन्नातिन् तजरी
तस्तहल्-अन्हारु खालिदी-न फीहा
अ-बदन, जालिकल् फौजुल्-
अजीम (100)

और वे राजी हुए उससे, और तैयार कर
रखे हैं वास्ते उनके बाग़ कि बहती हैं
नीचे उनके नहरें, रहा करें उनमें हमेशा,
यही है बड़ी कामयाबी। (100)

खुलासा-ए-तफसीर

और जो मुहाजिरीन और अन्सार (ईमान लाने में सब उम्मत से) पहले और मुकद्दम हैं, और (बकीया उम्मत में) जितने इख़्लास के साथ (ईमान लाने में) उनके पैरोकार हैं, अल्लाह उन सबसे राजी हुआ (कि उनका ईमान कुबूल फरमाया, जिस पर उनको जज़ा मिलेगी) और वे सब उससे (यानी अल्लाह से) राजी हुए (कि इताअत इख़्तियार की, जिसकी जज़ा से यह रज़ा और ज्यादा होगी) और उसने (यानी अल्लाह ने) उनके लिए ऐसे बाग़ तैयार कर रखे हैं जिनके नीचे नहरें जारी होंगी, जिनमें वे हमेशा-हमेशा रहेंगे (और) यह बड़ी कामयाबी है।

मज़ारिफ़ व मसाईल

इससे पहली आयत में पक्के-सच्चे देहाती मोमिनों का ज़िक्र था, इस आयत में तमाम पक्के-सच्चे मोमिनों का ज़िक्र है, जिनमें उनके फज़ीलत वाले दर्जों का भी बयान है।

السُّقُونَ الْأَوَّلُونَ مِنَ الْمُهَاجِرِينَ وَالْأَنْصَارِ

इस जुमले में अक्सर हज़राते मुफ़स्सिरीन ने हर्फ़ मिन तबईज़िया करार देकर मुहाजिरीन व अन्सार सहाबा-ए-किराम के दो तब्क़े कायम किये हैं- एक शुरू के और पहले हज़रात का, दूसरा दूसरे दर्जे के हज़राते सहाबा-ए-किराम का।

फिर इसमें अक़वाल विभिन्न हैं, बाज़ हज़रात ने सहाबा-ए-किराम में से शुरू के और पहले उनको करार दिया है जिन्होंने दोनों किब्लों की तरफ़ नमाज़ पढ़ी है, यानी किब्ला बदलने से पहले जो मुसलमान हो चुके थे, वे साबिकीन-ए-अव्वलीन (शुरू के और पहले) हैं, यह कौल सईद बिन मुसैयब और क़तादा रह. का है। हज़रात अता बिन अबी रबाह ने फरमाया कि साबिकीन-ए-अव्वलीन वे सहाबा हैं जो ग़ज़वा-ए-बदर में शरीक हुए, और इमाम शाबी रह. ने फरमाया कि जो सहाबा हुदैबिया की बैअत-ए-रिज़वान में शरीक हुए वे साबिकीन-ए-अव्वलीन (शुरू के और पहले) हैं, और हर कौल के मुताबिक़ बाकी सहाबा-ए-किराम मुहाजिर हों या अन्सार साबिकीन-ए-अव्वलीन के बाद दूसरे दर्जे में हैं। (तफ़सीरे मज़हरी, तफ़सीरे कुतुबी)

और तफ़सीरे मज़हरी में एक कौल यह भी नक़ल किया है कि हर्फ़ मिन को इस आयत में तबईज़ के लिये न लिया जाये बल्कि बयान के मायने में हो तो मफ़हूम इस जुमले का यह होगा कि तमाम सहाबा-ए-किराम बाकी उम्मत के मुक़ाबले में साबिकीन-ए-अव्वलीन हैं, और 'मिनल्

मुहाजिरी-न वल्अन्सारि' इसका बयान है। बयानुल-कुरआन का खुलासा-ए-तफसीर जो ऊपर नकल किया गया उसमें इसी तफसीर को इख्तियार किया गया है।

पहली तफसीर के मुताबिक सहाबा-ए-किराम में दो तब्के हो जाते हैं- एक साबिकीने अव्वलीन का, दूसरा वह जो क़िब्ला बदलने या ग़ज़वा-ए-बदर या बैअत-ए-रिज़वान के बाद मुसलमान हुए। और आखिरी तफसीर का हासिल यह हुआ कि सहाबा-ए-किराम सब के सब साबिकीने अव्वलीन ही हैं, क्योंकि उनका ईमान बाकी उम्मत से पहले और साबिक है।

وَالَّذِينَ اتَّبَعُوهُمْ بِإِحْسَانٍ

“यानी जिन लोगों ने आमाँल व अख़्लाक में साबिकीन-ए-अव्वलीन (पहले और शुरू वालों) की पैरवी मुकम्मल तरीके पर की।”

पहले जुमले की पहली तफसीर के मुताबिक उन लोगों में पहला दर्जा उन मुहाजिरीन व अन्सार सहाबा का है जो क़िब्ला बदलने या ग़ज़वा-ए-बदर या बैअत-ए-हुदैबिया के बाद मुसलमान होकर सहाबा-ए-किराम में दाखिल हुए। दूसरा दर्जा उनके बाद के सब मुसलमानों का है जो क़ियामत तक ईमान, नेक आमाँल और ऊँचे अख़्लाक में सहाबा किराम के नमूने पर चले, और उनकी मुकम्मल पैरवी की। और दूसरी तफसीर के मुताबिक 'अल्लज़ीनत्त-बऊ' में सहाबा-ए-किराम के बाद के हज़रात दाखिल हैं जिनको इस्तिलाह में ताबिईन कहा जाता है, और फिर उन इस्तिलाही ताबिईन के बाद क़ियामत तक आने वाले वे सब मुसलमान भी इसमें शामिल हैं जो ईमान व नेक अमल में सहाबा-ए-किराम की मुकम्मल पैरवी करें।

सहाबा-ए-किराम सब के सब बिना किसी को अलग किये जन्नती और अल्लाह की रज़ा से सम्मानित हैं

मुहम्मद बिन कअब कुरज़ी रह. से किसी ने मालूम किया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सहाबा-ए-किराम के बारे में आप क्या फरमाते हैं? उन्होंने कहा कि सहाबा-ए-किराम सब के सब जन्नत में हैं अगरचे वे लोग हों जिनसे दुनिया में ग़लतियाँ और गुनाह भी हुए हैं। उस शख्स ने मालूम किया कि यह बात आपने कहाँ से कही (इसकी क्या दलील है)? उन्होंने फरमाया कि कुरआने करीम की यह आयत पढ़ो:

السَّابِقُونَ الْأَوَّلُونَ

(यानी यही आयत 100) इसमें तमाम सहाबा किराम के बारे में बिना किसी शर्त के 'रज़ियल्लाहु अन्हुम व रज़ू अन्हु' (कि उनसे अल्लाह राज़ी हुआ और वे अल्लाह से राज़ी हुए) इरशाद फरमाया है, अलबत्ता ताबिईन (उनकी पैरवी करने वालों) के मामले में 'नेकी के साथ पैरवी' की शर्त लगाई गयी है, जिससे मालूम हुआ कि सहाबा-ए-किराम बिना किसी कैद व शर्त के सब के सब बिना किसी को अलग किये अल्लाह की रज़ा से सम्मानित हैं।

तफ़सीरे मज़हरी में यह कौल नक़ल करने के बाद फ़रमाया कि मेरे नज़दीक सब सहाबा-ए-किराम के जन्मती होने पर इससे भी ज्यादा स्पष्ट सुबूत इस आयत में है:

لَا يَسْتَوِي مِنْكُمْ مَنْ أَنْفَقَ مِنْ قَبْلِ الْفَتْحِ وَقَتْلِ أُولَئِكَ أَعْظَمُ دَرَجَةً مِنَ الَّذِينَ أَنْفَقُوا مِنْ بَعْدِ وَقَتْلِهِمْ ۚ وَكَذَلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ لَكُمُ الْآيَاتِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ

इस आयत में पूरी स्पष्टता से यह बयान कर दिया गया है कि सहाबा-ए-किराम अव्वलीन (शुरू वाले) हों या आखिरीन (बाद वाले) सब से अल्लाह तआला ने हुस्ना यानी जन्नत का वायदा फ़रमाया है।

और हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि जहन्नम की आग उस मुसलमान को नहीं छू सकती जिसने मुझे देखा है या मेरे देखने वालों को देखा है।

(तिर्मिज़ी हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से)

तंबीह: जो लोग सहाबा-ए-किराम के आपसी विवादों और उनमें पेश आने वाले वाकिआत की बिना पर कुछ सहाबा-ए-किराम के मुताल्लिक ऐसी आलोचनायें करते हैं जिनको पढ़कर पढ़ने वालों के दिल उनकी तरफ़ से बदगुमानी में मुब्तला हो सकें, वे अपने आपको एक ख़तरनाक रास्ते पर डाल रहे हैं। अल्लाह तआला हमें इससे अपनी पनाह में रखे।

وَمِنْ حَوْلِكُم مِّنَ الْأَعْرَابِ مُنَافِقُونَ ۚ وَمِنْ أَهْلِ الْمَدِينَةِ مَرَدُّوا عَلَى النَّفَاقِ لَا يَعْلَمُهُمْ ۚ نَحْنُ نَعْلَمُهُمْ ۚ سَنُعَذِّبُهُمْ مُّزَيَّنِينَ ثُمَّ يَرْدُّونَ إِلَىٰ عَذَابٍ عَظِيمٍ ۝

व मिम्मन् हौलकुम् मिनल्-अज़राबि मुनाफ़िकू-न, व मिन् अस्तिल्-मदीनति म-रदू अलन्निफ़ाकि, ला तअलमुहुम्, नहनु नअलमुहुम्, सनुअज़िबुहुम् मरतैनि सुम्-म युरदू-न इत्ता अज़ाबिन् अज़ीम (101)

और बाज़े तुम्हारे गिर्द के गंवार मुनाफ़िक हैं, और बाज़े लोग मदीना वाले अड़ रहे हैं निफ़ाक़ पर तू उनको नहीं जानता हमको वे मालूम हैं, उनको हम अज़ाब देंगे दो बार, फिर वे लौटाये जायेंगे बड़े अज़ाब की तरफ़। (101)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और कुछ तुम्हारे आस-पास वाले देहातियों में और कुछ मदीना वालों में ऐसे मुनाफ़िक हैं कि निफ़ाक़ की आखिरी हद को पहुँचे हुए हैं (कि) आप (भी) उनको नहीं जानते (कि ये मुनाफ़िक हैं, बस) उनको हम ही जानते हैं। हम उनको (यानी मुनाफ़िकों को आखिरत से पहले भी) दोहरी सज़ा देंगे (एक निफ़ाक़ की दूसरे निफ़ाक़ में हद से बढ़ने की) और फिर (आखिरत में) वे बड़े भारी अज़ाब की तरफ़ (यानी जहन्नम में हमेशा के लिये) भेजे जाएँगे।

मआरिफ व मसाईल

पहले की बहुत सी आयतों में उन मुनाफिकों का जिक्र आया है जिनका निफाक (दिल से ईमान वाला न होना) उनकी बातों और कामों से ज़ाहिर हो चुका था और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पहचानते थे कि ये मुनाफिक हैं। इस आयत में ऐसे मुनाफिकों का जिक्र है जिनका निफाक हद से ज्यादा बढ़ा होने की वजह से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर अब तक छुपा रहा, इस आयत में ऐसे सख्त मुनाफिकों पर आखिरत से पहले ही दो अज़ाब होने का जिक्र आया है- एक दुनिया ही में कि हर वक्त अपने निफाक को छुपाने की फिक्र और ज़ाहिर होने के डर में मुब्तला रहते हैं, और इस्लाम और मुसलमानों से बेहद दुश्मनी व नफरत रखने के बावजूद ज़ाहिर में उनकी इज़्ज़त व सम्मान और उनकी पैरवी पर मजबूर होना भी कुछ कम अज़ाब नहीं, और दूसरा अज़ाब क़ब्र व बर्ज़ख़ का अज़ाब है जो क़ियामत व आखिरत से पहले ही उनको पहुँचेगा।

وَاٰخَرُونَ اعْتَرَفُوا بِذُنُوْبِهِمْ خَلَطُوْا عَمَلًا صَالِحًا وَّاٰخَرَسِيْئًا اَعْسَى اللّٰهُ اَنْ يَّتُوْبَ عَلَيْهِمْ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝ خُذْ مِنْ اَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً تُطَهِّرُهُمْ وَتُزَكِّيْهِمْ بِهَا وَصَلِّ عَلَيْهِمْ اِنَّ صَلٰوةَكَ سَكَنٌ لَّهُمْ وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ۝ اَلَمْ يَعْلَمُوْا اَنَّ اللّٰهَ هُوَ يَقْبَلُ التَّوْبَةَ عَنْ عِبَادِهٖ وَيَاْخُذُ الصَّدَقٰتِ وَاَنَّ اللّٰهَ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِيْمُ ۝ وَقُلْ اَعْمَلُوْا فَاَسِيْرَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَسُوْلُهُ وَالْمُؤْمِنُوْنَ وَوَسَّوْهُمْ اِلَى عِلْمِ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُوْنَ ۝ وَاٰخَرُونَ مُّرْجُوْنَ لَا مُرِ اللّٰهُ اَمَّا يَعْزِبُهُمْ وَاَمَّا يَتُوْبُ عَلَيْهِمْ ۝ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝

व आखिरून अ-त-रफू बिज्नुबिहिम्
ख-लतू अ-मलन् सालिहव्-व आख-र
सय्यिअन्, असल्लाहु अंय्यतू-ब
अलैहिम्, इन्नल्ला-ह गफूररहीम
(102) ख़ुज़् मिन् अम्वालिहिम्
स-द-क़तन् तुतहिहरुहुम् व
तुजक्कीहिम् बिहा व सल्लि
अलैहिम्, इन्-न सलात-क

और बाजे लोग हैं कि इकरार किया
उन्होंने अपने गुनाहों का, मिलाया उन्होंने
एक काम नेक और दूसरा बुरा, करीब है
कि अल्लाह माफ़ करे उनको, बेशक
अल्लाह बख्शने वाला मेहरबान है। (102)
ले उनके माल में से ज़कात कि पाक करे
तू उनको और बरकत वाला करे तू
उनको उसकी वजह से, और दुआ दे
उनको, बेशक तेरी दुआ उनके लिये
तस्कीन (सुकून का सामान) है और

स-कनुल्लहुम्, वल्लाहु समीअुन्
अलीम (103) अलम् यअलमू
अन्नल्ला-ह हु-व यक्बलुतौब-त अन्
अिबादिही व यअखुजुस्स-दकाति व
अन्नल्ला-ह हुवत्-तव्वाबुरहीम (104)
व कुलिअमलू फ-स-यरल्लाहु
अ-म-लकुम् व रसूलुहू वल्-मुअमिनू-न,
व सतुरद्दू-न इला आलिमिल्-गैबि
वशहा-दति फ-युनब्बिउकुम् बिमा
कुन्तुम् तअमलून (105) व आखरू-न
मुरजौ-न लिअम्रिल्लाहि इम्मा
युअज्जिबुहुम् व इम्मा यतूबु अलैहिम्,
वल्लाहु अलीमुन् हकीम (106)

अल्लाह सब कुछ सुनता जानता है। (103)
क्या वे जान नहीं चुके कि अल्लाह खुद
कुबूल करता है तौबा अपने बन्दों से और
लेता है ज़कातें, और यह कि अल्लाह ही
तौबा कुबूल करने वाला मेहरबान है।
(104) और कह कि अमल किये जाओ
फिर आगे देख लेगा अल्लाह तुम्हारे काम
को और उसका रसूल और मुसलमान, और
तुम जल्द लौटाये जाओगे उसके पास जो
तमाम छुपी और खुली चीजों से वाकिफ
है, फिर वह जता देगा तुमको जो कुछ तुम
करते थे। (105) और बाज़े वे लोग हैं कि
उनका काम ढील में है हुक्म पर अल्लाह
के, या तो वह उनको अज़ाब दे और या
उनको माफ़ करे, और अल्लाह सब कुछ
जानने वाला हिक्मत वाला है। (106)

खुलासा-ए-तफसीर

और कुछ और लोग हैं जो अपनी खता के इकरारी हो गये। जिन्होंने मिले-जुले अमल किए
थे, कुछ भले (जैसे अपनी ग़लती स्वीकार करना जिसका मन्शा शर्मिन्दगी है और यही तौबा है,
और जैसे और जंगें जो पहले हो चुकी हैं। गर्ज कि ये काम तो अच्छे किये) और कुछ बुरे (किये
जैसे बिना किसी मजबूरी के पीछे रह जाना और बैठ रहना, सो) अल्लाह तआला से उम्मीद
(यानी उनका वायदा) है कि उन (के हाल) पर रहमत के साथ तवज्जोह फरमाएँ (यानी तौबा
कुबूल कर लें), बेशक अल्लाह तआला बड़ी मग़फिरत वाले, बड़ी रहमत वाले हैं।

(जब इस आयत से तौबा कुबूल हो चुकी और वे हज़रात सुतूनों से खुल चुके तो अपना
माल आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में लेकर आये और दरख्वास्त की कि इसको
अल्लाह की राह में खर्च किया जाये, तो इरशाद हुआ कि) आप उनके मालों में से सदका
(जिसको ये लाये हैं) ले लीजिए, जिसके (लेने के) ज़रिये से आप उनको (गुनाह के आसार से)
पाक व साफ़ कर देंगे। और (जब आप लें तो) उनके लिये दुआ कीजिए, बेशक आपकी दुआ
उनके लिये (दिल के) इत्मीनान का सबब है, और अल्लाह तआला (उनके स्वीकार कर लेने को)
खूब सुनते हैं (और उनकी शर्मिन्दगी को) खूब जानते हैं। (इसलिये उनके इज़्जास को देखकर

आपको ये अहकाम दिये गये। इन जिक्र हुए नेक आयाल यानी तौबा, किये पर शर्मिन्दगी और खैर के रास्ते में खर्च करने की तरगीब, और बुरे आयाल जैसे जंग में शिकत से पीछे और बैठ रहने वगैरह से आईन्दा के लिये डरावा है। पस पहले शौक व प्रेरणा है यानी) क्या आपको यह खबर नहीं कि अल्लाह तआला ही अपने बन्दों की तौबा कुबूल करता है और वही सदकों को कुबूल फरमाता है (और क्या आपको खबर नहीं कि) अल्लाह तआला ही तौबा कुबूल करने (की सिफत में, और) रहमत करने (की सिफत) में कामिल हैं। (इसी लिये उनकी तौबा कुबूल की, और अपनी रहमत से माल कुबूल करने का हुक्म और उनके लिये दुआ करने का हुक्म फरमाया। पस आईन्दा भी ख़ता या गुनाह हो जाने पर तौबा कर लिया करें, और अगर तौफीक हो तो खैर-खैरात किया करें) और (रुचि दिलाने के बाद आगे डरावा और चेतावनी है, यानी) आप (उनसे यह भी) कह दीजिए कि (जो चाहो) अमल किये जाओ, सो (अव्वल तो दुनिया ही में) अभी देख लेता है तुम्हारे अमल को अल्लाह और उसका रसूल और ईमान वाले, (पस बुरे अमल पर दुनिया ही में ज़िल्लत और रुस्वाई हो जाती है) और (फिर आखिरत में) ज़रूर तुमको ऐसे (यानी अल्लाह) के पास जाना है जो तमाम छुपी और खुली चीज़ों को जानने वाला है। सो वह तुमको तुम्हारा सब किया हुआ बतला देगा। (पस बुरे अमल से जैसे जंग में साथ जाने से पीछे रह जाने वगैरह से आईन्दा एहतियात रखो, यह पहली किस्म का बयान था, आगे दूसरी किस्म का जिक्र है) और कुछ और लोग हैं जिनका मामला खुदा का हुक्म आने तक मुलतवी "यानी अधर में" है कि (सच्चे दिल से तौबा न करने की वजह से) उनको सज़ा देगा या (सच्चे दिल से करने की वजह से) उनकी तौबा कुबूल कर लेगा, और अल्लाह (सच्चे दिल और नेक-नीयती से होने या न होने का हाल) ख़ूब जानने वाला है (और) बड़ा हिक्मत वाला है (पस अपनी हिक्मत के तकाज़े के सबब सच्चे दिल से की गयी तौबा को कुबूल करता है, और सच्चे दिल से न की गयी को कुबूल नहीं करता, और अगर कभी बिना तौबा के माफ़ करने में हिक्मत हो तो ऐसा भी कर देता है)।

मआरिफ़ व मसाईल

गज़वा-ए-तबूक (तबूक की लड़ाई) के लिये जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ़ से आम ऐलान और सब मुसलमानों को चलने का हुक्म हुआ तो ज़माना सख्त गर्मी का था, मन्ज़िल दूर-दराज़ की थी, और एक बाकायदा बड़ी हुक्मत की प्रशिक्षित फौज से मुकाबला था, जो इस्लाम की तारीख़ में पहला ही वाकिआ था। ये असबाब थे जिनकी वजह से इस हुक्म के बारे में लोगों के हालात भिन्न हो गये और उनकी जमाअतों की कई किस्में हो गयीं।

एक किस्म सच्चे और मुख़्तस हज़रात की थी जो पहला हुक्म सुनते ही बिना किसी शंका के जिहाद के लिये तैयार हो गये, दूसरी किस्म वे लोग थे जो शुरू में कुछ शंका और दुविधा में रहे फिर साथ हो लिये। आयत:

الَّذِينَ اتَّبَعُوهُ فِي سَاعَةِ الْعُسْرَةِ مِنْ بَعْدِ مَا كَادَ يَزِيغُ قُلُوبُ فَرِيقٍ مِنْهُمْ

में उन्हीं हज़रात का ज़िक्र है।

तीसरी किस्म उन हज़रात की है जो वाकई माज़ूर थे, इसलिये न जा सके। उनका ज़िक्र आयत:

لَيْسَ عَلَى الضُّعَفَاءِ

में है। चौथी किस्म उन सच्चे मोमिनों की है जो उज़्र न होने के बावजूद सुस्ती काहिली के सबब जिहाद में शरीक नहीं हुए, उनका ज़िक्र उपर्युक्त आयत नम्बर 102 और आयत नम्बर 106 में आया है। पाँचवीं किस्म मुनाफ़िकों की थी जो निफ़ाक के सबब जिहाद में शरीक नहीं हुए, उनका ज़िक्र पीछे गुज़री बहुत सी आयतों में आ चुका है। खुलासा यह है कि पहले बयान हुई आयतों में ज्यादातर ज़िक्र पाँचवीं किस्म यानी मुनाफ़िकों का हुआ है, उपर्युक्त आयतों में चौथी किस्म के हज़रात का ज़िक्र है जो मोमिन होने के बावजूद सुस्ती व काहिली के कारण जिहाद में शरीक नहीं हुए।

पहली आयत में फ़रमाया कि कुछ लोग ऐसे भी हैं जिन्होंने अपने गुनाहों का इफ़रार कर लिया, उन लोगों के आमाल मिले-जुले हैं, कुछ अच्छे कुछ बुरे, उम्मीद है कि अल्लाह तआला उनकी तौबा कुबूल फ़रमा लें। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि दस हज़रात थे जो बिना किसी सही उज़्र के ग़ज़वा-ए-तबूक में न गये थे, फिर उनको अपने फ़ेल पर शर्मिन्दगी हुई, उनमें से सात आदमियों ने अपने आपको मस्जिदे नबवी के सुतूनों के साथ बाँध लिया, और यह अहद किया कि जब तक हमारी तौबा कुबूल करके खुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हमें न खोलेंगे हम इसी तरह बंधे हुए कैदी रहेंगे। उन हज़रात में अबू लुबाबा रज़ियल्लाहु अन्हु के नाम पर सब रिवायतें सहमत हैं, दूसरे हज़रात के नामों के बारे में रिवायतें अलग-अलग हैं।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जब उनको बंधा हुआ देखा और मालूम हुआ कि उन्होंने अहद यह किया है कि जब तक रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम खुद उनको न खोलेंगे उस वक़्त तक बंधे रहेंगे, तो आपने फ़रमाया कि मैं भी अल्लाह की क़सम खाता हूँ कि उस वक़्त तक न खोलूँगा जब तक अल्लाह तआला मुझे इनके खोलने का हुक्म न देगा, क्योंकि ज़ुर्म बड़ा है। इस पर उक्त आयत नाज़िल हुई और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनके खोलने का हुक्म दे दिया, और वे खोल दिये गये। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

हज़रत सईद बिन मुसैयब रह. की रिवायत में है कि जब अबू लुबाबा को खोलने का इरादा किया गया तो उन्होंने इनकार किया और कहा कि जब तक खुद हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम राजी होकर मुझे अपने हाथ से न खोलेंगे मैं बंधा रहूँगा। चुनाँचे सुबह की नमाज़ में जब आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लाये तो अपने हाथ मुबारक से उनको खोला।

अच्छे और बुरे मिले-जुले अमल क्या थे?

आयत में फ़रमाया है कि उन लोगों के कुछ अमल नेक थे, कुछ बुरे। उनके नेक आमाल तो

उनका ईमान, नमाज़, रोज़े की पाबन्दी और इस जिहाद से पहले जंगों व मुहिमों में हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ शिरकत और खुद इस तबूक के वाकिए में अपने जुर्म का इकरार कर लेना और शर्मिन्दा होकर तौबा करना वगैरह हैं। और बुरे अमल ग़ज़वा-ए-तबूक में शरीक न होना और अपने अमल से मुनाफ़िकों की मुवाफ़क़त करना है।

जिन मुसलमानों के आमाल अच्छे-बुरे मिले-जुले हों क़ियामत तक वे भी इस हुक्म में दाख़िल हैं

तफ़सीर-ए-क़ुर्तुबी में है कि अगरचे यह आयत एक ख़ास जमाअत के बारे में नाज़िल हुई है मगर इसका हुक्म क़ियामत तक आम है उन मुसलमानों के लिये जिनके आमाल नेक व बंद मिले-जुले हों, अगर वे अपने गुनाहों से तौबा कर लें तो उनके लिये माफ़ी और मग़फ़िरत की उम्मीद है।

हज़रत अबू उस्मान रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि क़ुरआने करीम की यह आयत इस उम्मत के लिये बड़ी उम्मीद दिलाने वाली है, और सही बुख़ारी में हज़रत समुरा बिन जुन्दुब रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से हुजूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मेराज की एक तफ़सीली हदीस में है कि सातवें आसमान पर जब हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुलाक़ात हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के साथ हुई तो उनके पास कुछ लोग देखे जिनके चेहरे सफ़ेद थे, और कुछ ऐसे कि उनके चेहरों में कुछ दाग़-धब्बे थे। ये दूसरी किस्म के लोग एक नहर में दाख़िल हुए और गुस्ल करके वापस आये तो उनके चेहरे भी बिल्कुल साफ़ सफ़ेद हो गये थे। ज़िब्रील अलैहिस्सलाम ने आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बतलाया कि ये सफ़ेद चेहरे वाले वे लोग हैं जो ईमान लाये और फिर गुनाहों से पाक साफ़ रहे:

الَّذِينَ آمَنُوا وَلَمْ يَلْبِسُوا إِيمَانَهُمْ بِظُلْمٍ

और दूसरे वे लोग हैं जिन्होंने मिले-जुले अच्छे-बुरे सब तरह के काम किये, फिर तौबा कर ली, अल्लाह ने उनकी तौबा कुबूल फ़रमा ली और गुनाह माफ़ हो गये। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

خُذْ مِنْ أَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً

इस आयत का वाक़िआ यह है कि जिन हज़रात का ऊपर ज़िक्र हुआ कि बिना उज़्र के ग़ज़वा-ए-तबूक से पीछे रह गये थे, फिर शर्मिन्दा होकर अपने आपको मस्जिद के सुतूनों से बाँध लिया, फिर उपर्युक्त आयत में उनकी तौबा की कुबूलियत नाज़िल हुई और कैद से खोले गये तो इन हज़रात ने शुक्राने के तौर पर अपना सारा माल सदका करने के लिये पेश कर दिया। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कुबूल करने से इनकार फ़रमाया कि मुझे माल लेने का हुक्म नहीं है, इस पर यह आयत नम्बर 103 नाज़िल हुई और आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पूरे माल के बजाय एक तिहाई माल का सदका करना कुबूल फ़रमा लिया, क्योंकि आयत में

इसकी तरफ इशारा है कि पूरा माल न लिया जाये बल्कि उसका कोई हिस्सा लिया जाये। हर्फ मिन इस पर सुबूत है।

इस्लामी हुक्मत की एक जिम्मेदारी

मुसलमानों के सदकात जकात वगैरह वसूल करना और उनके सही मस्फ (खर्च की जगह) पर खर्च करना इस्लामी हुक्मत की जिम्मेदारी है। इस आयत में अगरचे शाने नुजूल के एतिबार से एक खास जमाअत से सदका वसूल करने का हुक्म दिया गया है लेकिन यह आयत अपने मफहूम (मायने) के एतिबार से आम है।

तफसीर-ए-कुर्तुबी, अहकामुल-कुरआन, तफसीर-ए-जस्तास, तफसीर-ए-मजहरी वगैरह में इसी को तरजीह दी गयी है। और कुर्तुबी और जस्तास ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि अगर इस आयत में शाने नुजूल वही खास वाकिआ करार दिया जाये जिसका जिक्र ऊपर आया है तो फिर भी कुरआनी उसूल की रू से यह हुक्म आम ही रहेगा, और कियामत तक के मुसलमानों पर हावी होगा, क्योंकि कुरआने करीम के ज्यादातर अहकाम खास-खास वाकिआत में नाज़िल हुए मगर उनका दायरा-ए-अमल किसी के नज़दीक उस खास वाकिआ तक सीमित नहीं होता, बल्कि जब तक कोई सीमित और खास करने की दलील न हो वह हुक्म तमाम मुसलमानों के लिये आम और सब को शामिल ही करार दिया जाता है।

यहाँ तक कि पूरी उम्मत मुहम्मदिया का इस पर भी इत्तिफाक (सहमति) है कि इस आयत में अगरचे खिताब खास नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को है मगर यह हुक्म न आपके साथ मखसूस है और न आपके जमाने तक सीमित, बल्कि हर वह शख्स जो हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के कायम-मकाम (जानशीन व नायब बनकर) मुसलमानों का अमीर होगा वह इस हुक्म का मुख़ातब और मामूर (पाबन्द) होगा। उसके फ़राईज़ (जिम्मेदारी और कर्तव्य) में दाख़िल होगा कि मुसलमानों की जकात व सदकात के वसूल करने और सही जगह पर खर्च करने का इन्तिज़ाम करे।

हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु की ख़िलाफ़त के शुरू के जमाने में जो जकात के रोक लेने वालों पर जिहाद करने का वाकिआ पेश आया उसमें भी जकात न देने वाले कुछ तो वे लोग थे जो खुल्लम-खुल्ला इस्लाम से बागी और मुर्तद (बेदीन) हो गये थे, और कुछ ऐसे लोग भी थे जो अपने आपको मुसलमान ही कहते थे मगर जकात न देने का यह बहाना करते थे कि इस आयत में हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हमसे जकात व सदकात वसूल करने का हुक्म आपकी ज़िन्दगी तक था, हमने उसकी तामील की, आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद हज़रत अबू बक्र को क्या हक़ है कि हमसे जकात व सदकात तलब करें। और शुरू-शुरू में हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु को उन पर जिहाद करने से इसी लिये दुविधा और असमंजस की हालत पेश आयी कि ये मुसलमान हैं, एक आयत की आड़ लेकर जकात से बचना चाहते हैं, इसलिये इनके साथ वह मामला न किया जाये जो आम मुर्तद (इस्लाम से फिर

जाने वालों) के साथ किया जाता है। मगर सिद्दीके अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु ने पूरी हिम्मत और पक्के इरादे के साथ फरमाया कि जो शख्स नमाज़ और ज़कात में फर्क करेगा हम उस पर जिहाद करेंगे।

इशारा इस बात की तरफ़ था कि जो लोग ज़कात के हुक्म को हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ मख़सूस करने और आपके बाद उसके ख़त्म हो जाने के कायल हुए वे कल को यह भी कह सकते हैं कि नमाज़ भी हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ मख़सूस थी, क्योंकि कुरआने करीम में यह आयत आई है:

اقِمِ الصَّلَاةَ لِذُلُوكِ الشَّمْسِ.

जिसमें नमाज़ के कायम करने के मुखातब नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हैं। मगर जिस तरह नमाज़ की आयत का हुक्म पूरी उम्मत के लिये आम है और इसको हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ मख़सूस होने की ग़लत तावील उनको कुफ़्र से नहीं बचा सकती, इसी तरह आयत 'खुज़् मिन अमवालिहिम' (यानी आयत नम्बर 103) में यह तावील (मतलब बयान करना) उनको कुफ़्र और इस्लाम से बाहर हो जाने से नहीं बचायेगी। इस पर हज़रत फारुके आजम रज़ियल्लाहु अन्हु को भी इत्मीनान हो गया और तमाम सहाबा की राय से उन लोगों के खिलाफ़ जिहाद किया गया।

ज़कात हुक्मत का टैक्स नहीं बल्कि इबादत है

कुरआन-ए-करीम ने ज़िक्र हुई आयत नम्बर 103 में 'खुज़् मिन अमवालिहिम' के बाद जो यह इरशाद फरमाया:

صَدَقَةٌ تُطَهِّرُهُمْ وَتُزَكِّيهِمْ بِهَا.

“यानी उनको पाक-साफ़ करने के लिये” इसमें यह इशारा पाया जाता है कि ज़कात व सदकात कोई हुक्मत का टैक्स नहीं, जो आम हुक्मतें मुल्क का निज़ाम चलाने के लिये वसूल करती हैं, बल्कि इसका मक़सद खुद मालदार लोगों को गुनाहों से पाक साफ़ करना है।

यहाँ यह बात भी गौर करने के काबिल है कि ज़कात व सदकात को वसूल करने से दर हकीकत दो फायदे हासिल होते हैं- एक फायदा खुद माल वाले का है कि इसके ज़रिये से वह गुनाहों से और माल की हिस्स व मुहब्बत से पैदा होने वाली अख़लाकी बीमारियों के जरासीम से पाक व साफ़ हो जाता है। दूसरा फायदा यह है कि इसके ज़रिये कौम के उस कमज़ोर वर्ग की परवरिश होती है जो खुद अपनी ज़रूरतें मुहैया करने से मजबूर या कासिर है, जैसे यतीम बच्चे, बेवा औरतें, अपाहिज व माज़ूर मर्द व औरतें और आम ग़रीब व मिस्कीन लोग वगैरह।

लेकिन कुरआने हकीम ने इस जगह सिर्फ़ पहला फायदा बयान करने पर बस करके इस तरफ़ भी इशारा कर दिया कि ज़कात व सदकात का असल मक़सद पहला ही फायदा है, दूसरा फायदा इससे ज़िम्नी तौर पर हासिल हो जाता है। इसलिये अगर मान लो किसी जगह या किसी

वक्त कोई यतीम, बेवा, फकीर, मिस्कीन मौजूद न हो तब भी माल वालों से ज़कात का हुक्म खत्म न होगा।

इस मजमून की ताईद इससे भी होती है कि पिछली उम्मतों में जो माल अल्लाह तआला के लिये निकाला जाता था उसका इस्तेमाल किसी के लिये जायज़ न था, बल्कि दस्तूर यह था कि उसको किसी अलैहदा जगह पर रख दिया जाता था और आसमानी बिजली आकर उसको जला देती थी। यही निशानी थी इस बात की कि यह सदका अल्लाह तआला ने कुबूल फरमा लिया। और जहाँ यह आसमानी आग न आती तो सदके के गैर-मकबूल होने की निशानी समझी जाती थी, फिर उस मन्हूस माल को कोई हाथ न लगाता था।

इससे वाज़ेह हो गया कि ज़कात व सदकात का हुक्म असल में किसी की ज़रूरत पूरी करने के लिये नहीं, बल्कि वह एक माली हक और इबादत है, जैसे नमाज़ व रोज़ा जिस्मानी इबादतें हैं। यह इस उम्मत की ख़ुसूसियत में से है कि जो माल अल्लाह के रास्ते में निकाला गया है इस उम्मत के ग़रीबों और ज़रूरत मन्दों के लिये उसका इस्तेमाल जायज़ कर दिया गया, जैसा कि मुस्लिम शरीफ़ की सही हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से इसकी वज़ाहत नक़ल की गयी है।

एक सवाल और उसका जवाब

यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि ज़िक्र हुए वाकिए में जब उन हज़रात की तौबा कुबूल कर ली गयी तो गुनाह की माफ़ी और पाकीज़गी तौबा ही के ज़रिये हो चुकी, फिर माल लेने को पाक करने का ज़रिया करार देने के मायने क्या होंगे?

जवाब यह है कि अगरचे तौबा से गुनाह माफ़ हो गया मगर गुनाह माफ़ होने के बाद उसकी कुछ अंधेरी और मैल बाकी रह सकता है जो आगे फिर भी गुनाह करने का सबब बन सकता है, सदका करने से वह मैल-कुचैल दूर होकर मुकम्मल पाकीज़गी हो जायेगी।

‘व सल्लि अलैहिम’ इसमें लफ़्ज़ सलात से मुराद उनके लिये रहमत की दुआ करना है, और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मन्कूल यही है कि कुछ लोगों के लिये आपने लफ़्ज़ सलात ही से दुआ फ़रमाई जैसे:

اللَّهُمَّ صَلِّ عَلَى آلِ أَبِي أَوْفَى

(या अल्लाह! अबू औफ़ा की औलाद पर रहमत फ़रमा) हदीस में आया है, लेकिन बाद में लफ़्ज़ सलात अम्बिया अलैहिमुस्सलाम की विशेष पहचान बन गयी, इसलिये अक्सर फ़ुकहा रह. का यह कौल है कि अब किसी शख्स के लिये सलात के लफ़्ज़ के साथ दुआ न की जाये, बल्कि इस लफ़्ज़ को सिर्फ़ अम्बिया अलैहिमुस्सलाम के लिये मख्सूस रखा जाये, ताकि शुब्हा और धोखा न हो। (तफ्सीर बयानुल-कुरआन वगैरह)

यहाँ आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सदका देने वालों के लिये दुआ करने का हुक्म

है, इस वजह से कुछ फुकहा हज़रात ने फरमाया कि इमाम व अमीर को सदका करने वालों के लिये दुआ करना वाजिब है, और कुछ हज़रात ने इसको लाज़िमी हुक्म नहीं बल्कि एक अच्छा और पसन्दीदा अमल बतलाया है। (तफसीरे कुतुबी)

وَاٰخَرُونَ مَرْجُوْنَ لِاَمْرِ اللّٰهِ

दस मोमिन हज़रात जो बिना मजबूरी और उज़्र के ग़ज़वा-ए-तबूक से पीछे रह गये थे उनमें से सात ने तो अपनी शर्मिन्दगी व अफ़सोस का पूरा इज़हार अपने आपको मस्जिद के सुतूनों से बाँधकर कर दिया था, उनका हुक्म पहली आयत यानी आयत 102 में आ चुका। इस आयत से बाकी वे तीन हज़रात मुराद हैं जिन्होंने यह अमल मस्जिद में कैद होने का नहीं किया था, और इस तरह खुले तौर पर इकरार नहीं किया। उनके बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम को हुक्म दे दिया कि मुसलमान उनका बायकाट करें, उनसे सलाम कलाम बन्द कर दें। यह मामला होने के बाद उनकी हालत ठीक हो गयी और सच्चे दिल के साथ अपने जुर्म व ख़ता का इकरार करके उन्होंने तौबा कर ली तो उनके लिये भी माफ़ी के अहकाम दे दिये गये। (सही बुख़ारी व मुस्लिम)

وَالَّذِينَ اتَّخَذُوا مَسْجِدًا ضَرَارًا وَكُفْرًا وَتَفْرِيقًا بَيْنَ الْمُؤْمِنِينَ وَإِرْصَادًا لِّمَنْ حَارَبَ
اللّٰهَ وَرَسُولَهُ مِنْ قَبْلُ وَلَيَحْلِفُنَّ اِنْ اَرَادْنَا اِلَّا الْحَسَنَ ۖ وَاللّٰهُ يَشْهَدُ اَنَّهُمْ لَكَاذِبُونَ ۝ لَا تَقُمْ
فِيْهِ اَبَدًا ۚ لِّلْمَسْجِدِ اَسْسٌ عَلَى التَّقْوَىٰ مِنْ اَوَّلِ يَوْمٍ اَحَقُّ اَنْ تَقُومَ فِيْهِ ۚ فِيْهِ رَجَالٌ يُحِبُّوْنَ اَنْ
يُتَّطَهَرُوْا ۚ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُطَهَّرِيْنَ ۝ اَفَسَنْ اَسْسَ بُنْيَانَهُ عَلَى تَقْوٰى مِنَ اللّٰهِ وَرِضْوَانٍ خَيْرٍ اَمْ مَنْ
اَسْسَ بُنْيَانَهُ عَلَى شَفَا جُرْفٍ هَارٍ فَانْهَارَ بِهِ فِي نَارِ جَهَنَّمَ ۚ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ۝
لَا يَزَالُ بُنْيَانُهُمُ الَّذِي بَنَوْا رِيْبَةً فِيْ قُلُوْبِهِمْ اِلَّا اَنْ تَقَطَّعَ قُلُوْبُهُمْ ۚ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝

वल्लज़ीनत्त-ख़ज़ू मस्जिदन् ज़िरारं-
वकुफ़रं-व तफ़रीकम्-बैनल्मुअमिनी-न
व इरसादल्-लिमन् हा-रबल्ला-ह व
रसूलहू मिन् कब्लु, व ल-यस्लिफुन्-न
इन् अरदना इल्लल्-हुस्ना, वल्लाहु
यशहदु इन्नहुम् लकाज़िबून् (107)
ला तक़ुम् फ़ीहि अ-बदन्,

और जिन्होंने बनाई है एक मस्जिद ज़िद
पर और कुफ़्र पर और फूट डालने को
मुसलमानों में, और घात लगाने को उस
शख्स की जो लड़ रहा है अल्लाह से और
उसके रसूल से पहले से, और वे कसमें
खायेंगे कि हमने तो भलाई ही चाही थी
और अल्लाह गवाह है कि वे झूठे हैं।
(107) तू न खड़ा हो उसमें कभी,
अलबत्ता वह मस्जिद जिसकी बुनियाद

ल-मस्जिदुन् उसिस-स अलत्तक्वा मिन्
 अव्वलि यौमिन् अ-हक्कु अन्
 तकू-म फीहि, फीहि रिजालुंयुहिब्बू-न
 अंय्यत-तह्ररु, वल्लाहु युहिब्बुल्
 मुत्तहिहरीन (108) अ-फ-मन्
 अस्स-स बुन्यानहू अला तक्वा
 मिनल्लाहि व रिज्वानिन् खौरुन्
 अम्-मन् अस्स-स बुन्यानहू अला
 शफा जुरुफिन् हारिन् फन्हा-र बिही
 फी नारि जहन्न-म, वल्लाहु ला
 यहिदल् कौमज्-जालिमीन (109) ला
 यज्जालु बुन्यानहुमुल्लजी बनौ
 री-बतन् फी कुलूबिहिम् इल्ला अन्
 त-कत्त-अ कुलूबुहुम्, वल्लाहु
 अलीमुन् हकीम (110) ●

रखी गई परहेजगारी पर पहले दिन से वह
 लायक है कि तू खड़ा हो उसमें, उसमें
 ऐसे लोग हैं जो दोस्त रखते हैं पाक रहने
 को, और अल्लाह दोस्त रखता है पाक
 रहने वालों को। (108) भला जिसने
 बुनियाद रखी अपनी इमारत की अल्लाह
 से डरने पर और उसकी रज़ामन्दी पर वह
 बेहतर है या जिसने बुनियाद रखी अपनी
 इमारत की किनारे पर एक खाई के जो
 गिरने को है, फिर उसको लेकर ढे पड़ा
 दोज्ख की आग में, और अल्लाह राह
 नहीं देता ज़ालिम लोगों को। (109)
 हमेशा रहेगा उस इमारत से जो उन्होंने
 बनाई थी शुद्धा उनके दिलों में मगर जब
 टुकड़े हो जायें उनके दिल, और अल्लाह
 ही सब कुछ जानने वाला हिक्मत वाला
 है। (110) ●

खुलासा-ए-तफसीर

और (बाजे ऐसे हैं कि) जिन्होंने (इन उद्देश्यों के लिये) मस्जिद बनाई है कि (इस्लाम को)
 नुकसान पहुँचाएँ और (उसमें बैठ-बैठकर) कुफ्र (यानी रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की
 दुश्मनी) की बातें करें, और (उसकी वजह से) ईमान वालों (के मजमे) में फूट डालें। (क्योंकि
 जब दूसरी मस्जिद बनाई जाये और जाहिर किया जाये कि वह अच्छी नीयत से बनी है तो
 लाजिमी है कि पहली मस्जिद का मजमा कुछ न कुछ मुन्तशिर हो ही जाता है) और (यह भी
 गर्ज है कि) उस शख्स के ठहस्रो का सामान करें जो इस (मस्जिद बनाने) से पहले से ही खुदा
 और रसूल का मुखालिफ है (इससे मुराद अबू आमिर राहिब है)। और (पूछो तो) कसमें खा
 जाएँगे (जैसे एक दफा पहले भी पूछने पर खा चुके हैं) कि सिवाय भलाई के हमारी और कुछ
 नीयत नहीं (भलाई से मुराद राहत और गुंजाईश है) और अल्लाह गवाह है कि वे (इस दावे में)
 बिल्कुल झूठे हैं। (जब उस मस्जिद की यह हालत है कि वह असलियत में मस्जिद ही नहीं बल्कि

इस्लाम को नुकसान पहुँचाने वाली है तो) आप उसमें कभी (नमाज़ के लिये) खड़े न हों। अलबत्ता जिस मस्जिद की बुनियाद अब्बल दिन से (यानी प्रस्तावित दिन से) तक़वे (और इख़्लास) पर रखी गई है (इससे मुराद मस्जिद-ए-कुबा है) वह (वाकई) इस लायक है कि आप उसमें (नमाज़ के लिये) खड़े हों (चुनाँचे कभी-कभी आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम वहाँ तशरीफ़ ले जाते और नमाज़ पढ़ते)। उस (मस्जिद-ए-कुबा) में ऐसे (अच्छे) आदमी हैं कि वे ख़ूब पाक होने को पसन्द करते हैं, और अल्लाह तआला ख़ूब पाक होने वालों को पसन्द करता है।

(जब दोनों मस्जिदों के संस्थापकों का हाल मालूम हो गया तो) फिर (समझ लो) क्या ऐसा शख्स बेहतर है जिसने अपनी इमारत (यानी मस्जिद) की बुनियाद अल्लाह तआला से डरने पर और उसकी रज़ा पर रखी हो, या वह शख्स (बेहतर होगा) जिसने अपनी इमारत (यानी मस्जिद) की बुनियाद किसी घाटी (यानी गुफा) के किनारे पर रखी हो जो कि गिरने ही को हो, (इससे मुराद बातिल और कुफ़्रिया उद्देश्य हैं, नापायदारी में उसके साथ तशबीह दी गयी) फिर वह (इमारत) उस (बनाने वाले) को लेकर दोज़ख़ की आग में गिर पड़े (यानी वह इमारत तो गिरी इस वजह से कि वह किनारे पर है, जब वह किनारा पानी से कटकर गिरेगा तो वह इमारत भी गिरेगी, और बनाने वाला गिरा इसलिये कि वह उस इमारत में रहता था, और चूँकि इससे मुराद कुफ़्रिया उद्देश्य हैं जो दोज़ख़ की तरफ़ लेजाने वाले हैं इसलिये यह फरमाया कि वह उसको लेकर जहन्नम में जा गिरी) और अल्लाह तआला ऐसे ज़ालिमों को (दीन की) समझ नहीं देता (कि बनाई तो मस्जिद के नाम से जो कि दीन के निशानात में से है, और गर्जें उसमें कैसी कैसी फ़ासिद कर लीं)। उनकी (यह) इमारत (यानी मस्जिद) जो उन्होंने बनाई है (हमेशा) उनके दिलों में (काँटा-सा) खटकती रहेगी, (क्योंकि जिस गर्ज से बनाई थी वह पूरी न हुई और कलई खुल गयी सो अलग, और फिर ऊपर से उसको ध्वस्त कर दिया गया, गर्ज कि कोई अरमान न निकला, इसलिये सारी उम्र उसका अफ़सोस और अरमान बाकी रहेगा)। (हाँ) मगर उनके (वे) दिल ही (जिनमें वह अरमान है) फना हो जाएँ तो ख़ैर (वह अरमान भी उस वक़्त ख़त्म हो जाये) और अल्लाह तआला बड़े इल्म वाले, बड़ी हिक्मत वाले हैं (उनकी हालत को जानते हैं और उसी के मुनासिब सज़ा देंगे)।

मअरिफ़ व मसाईल

मुनाफ़िकों के हालात और खिलाफ़े इस्लाम उनकी हरकतों का ज़िक्र ऊपर बहुत सी आयतों में आ चुका है। उपर्युक्त आयतों में भी उनकी एक साज़िश का ज़िक्र है जिसका वाकिआ यह है कि मदीना तथियबा में एक शख्स अबू आमिर नाम का ज़माना-ए-जाहिलीयत में ईसाई हो गया था, और अबू आमिर राहिब के नाम से मशहूर था। यह वही शख्स है जिसके लड़के हन्ज़ला रज़ियल्लाहु अन्हु मशहूर सहाबी हैं जिनकी लाश को फ़रिश्तों ने गुस्ल दिया, इसलिये "ग़सील-ए-मलाईका" के नाम से परिचित हुए, मगर बाप अपनी गुमराही और ईसाईयत पर कायम रहा।

जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मदीना तय्यिबा तशरीफ लाये तो अबू आमिर राहिब आपकी खिदमत में हाजिर हुआ और इस्लाम पर एतिराज किये। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के जवाब पर भी इस बदनसीब को इत्मीनान न हुआ, बल्कि यह कहा कि हम दोनों में जो झूठा हो वह मर्दूद और अपने यारों-रिश्तेदारों से दूर होकर सफर की हालत में मरे, और कहा कि आपके मुकाबले में जो भी दुश्मन आयेगा मैं उसकी मदद करूँगा। चुनाँचे गज़वा-ए-हुनैन तक तमाम गज़वात (लड़ाईयों और जंगों) में मुसलमानों के दुश्मनों के साथ जंग में शिकस्त की, जब हवाज़िन का बड़ा और ताकतवर कबीला भी शिकस्त खा गया तो यह मायूस होकर मुल्क शाम भाग गया, क्योंकि यही मुल्क ईसाईयों का मर्कज़ था, वहीं जाकर अपने यारों-रिश्तेदारों से दूर मर गया। जो दुआ की थी वह उसके सामने आ गयी। जब किसी शख्स की रुस्वाई मुक़्दर होती है तो वह ऐसे ही काम किया करता है, खुद ही अपनी दुआ से जलील व रुस्वा हुआ।

मगर जब तक ज़िन्दा रहा इस्लाम और मुसलमानों के खिलाफ़ साजिशों में लगा रहा, चुनाँचे रोम के बादशाह कैसर को इस पर तैयार करने की कोशिश की कि वह अपने लश्कर से मदीना पर चढ़ाई कर दे और मुसलमानों को यहाँ से निकाल दे।

इसी साजिश का एक मामला यह पेश आया कि इसने मदीना के मुनाफ़िकों को जिनके साथ इसकी साजबाज़ थी, ख़त लिखा कि मैं इसकी कोशिश कर रहा हूँ कि रोम का बादशाह कैसर मदीना पर चढ़ाई करे, मगर तुम लोगों की कोई सामूहिक ताक़त होनी चाहिये जो उस वक़्त कैसर की मदद करे। इसकी सूरत यह है कि तुम मदीने ही में एक मकान बनाओ और यह ज़ाहिर करो कि हम मस्जिद बना रहे हैं, ताकि मुसलमानों को शुब्हा न हो। फिर उस मकान में तुम अपने लोगों को जमा करो और जिस क़द्र हथियार और सामान जमा कर सकते हो वह भी करो, यहाँ मुसलमानों के खिलाफ़ आपस के मशिवरे से मामलात तय किया करो।

उसके मशिवरे पर बारह मुनाफ़िकों ने मदीना तय्यिबा के मौहल्ले कुबा में जहाँ हिजरत के मौके पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने क़ियाम फ़रमाया और एक मस्जिद बनाई थी वहीं एक दूसरी मस्जिद की बुनियाद रखी। उन मुनाफ़िकों के नाम भी इब्ने इस्हाक़ वग़ैरह ने नक़ल किये हैं। फिर मुसलमानों को फ़रेब देने और धोखे में रखने के लिये यह इरादा किया कि खुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से एक नमाज़ उस जगह पढ़वा दें, ताकि सब मुसलमान मुत्मईन हो जायें कि यह भी एक मस्जिद है, जैसा कि इससे पहले एक मस्जिद यहाँ बन चुकी है।

उनका एक वफ़द (प्रतिनिधि मण्डल) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में हाजिर हुआ और अर्ज किया कि कुबा की मौजूदा मस्जिद बहुत से लोगों से दूर है, ज़ईफ़ बीमार आदमियों का वहाँ तक पहुँचना मुश्किल है, और खुद मस्जिदे कुबा इतनी लम्बी-चौड़ी भी नहीं कि पूरी बस्ती के लोग उसमें समा सकें, इसलिये हमने एक दूसरी मस्जिद इस काम के लिये बनाई है ताकि कमज़ोर व ज़ईफ़ मुसलमानों को फ़ायदा पहुँचे। आप उस मस्जिद में एक नमाज़

पढ़ लें ताकि बरकत हो जाये।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उस वक्त ग़ज़वा-ए-तबूक की तैयारी में मशगूल थे, आपने यह वायदा कर लिया कि इस वक्त तो हमें सफ़र दरपेश है, वापसी के बाद हम उसमें नमाज़ पढ़ लेंगे।

लेकिन ग़ज़वा-ए-तबूक से वापसी के वक्त जबकि आपने मदीना तय्यिबा के करीब एक मक़ाम पर पड़ाव किया तो उक्त आयतें आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर नाज़िल हुईं जिनमें उन मुनाफ़िकों की साज़िश खोल दी गयी थी। इन आयतों के नाज़िल होने पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने चन्द सहाबा जिसमें अमिर बिन सक्न और वहशी (हज़रत हमज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु के कातिल) वगैरह शरीक थे, उनको हुक्म दिया कि अभी जाकर उस मस्जिद को ढहा दो और उसमें आग लगा दो। ये सब हज़रात उसी वक्त गये और हुक्म की तामील करके उसकी इमारत को ढहाकर ज़मीन बराबर कर दी। यह तमाम वाकिआ तफ़सीरे कुर्तुबी और तफ़सीरे मज़हरी की बयान की हुई रिवायतों से लिया गया है।

तफ़सीरे मज़हरी में मुहम्मद बिन यूसुफ़ सालेही के हवाले से यह भी ज़िक्र किया है कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम कुबा से मदीना मुनव्वरा में पहुँच गये तो मस्जिद-ए-ज़िरार की जगह खाली पड़ी थी, आपने आसिम बिन अदी को इसकी इजाज़त दी कि वह उस जगह में अपना घर बना लें, उन्होंने अर्ज़ किया- या रसूलुल्लाह जिस जगह के बारे में क़ुरआने करीम की ये आयतें नाज़िल हो चुकी हैं मैं तो उस मन्हूस जगह में घर बनाना पसन्द नहीं करता, अलबत्ता साबित बिन अक़रम ज़रूरतमन्द हैं, उनके पास कोई घर नहीं, उनको इजाज़त दे दीजिए कि वह यहाँ मकान बना लें। उनके मश्वरे के मुताबिक़ आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह जगह साबित बिन अक़रम को दे दी, मगर हुआ यह कि जब से हज़रत साबित उस मकान में आकर रहने लगे उनके कोई बच्चा नहीं हुआ या ज़िन्दा नहीं रहा।

इतिहासकारों ने लिखा है कि इनसान तो क्या उस जगह में कोई मुर्गी भी अण्डे देने के काबिल न रही, कोई कबूतर और जानवर भी उसमें फला-फूला नहीं। चुनाँचे उसके बाद से यह जगह आज तक मस्जिद-ए-कुबा के कुछ फ़ासले पर वीरान पड़ी है।

वाक़िए की तफ़सील सुनने के बाद उक्त आयतों के मतन को देखिये। पहली आयत में फ़रमाया:

وَالَّذِينَ اتَّخَذُوا مَسْجِدًا

यानी जिस तरह ऊपर दूसरे मुनाफ़िकों के अज़ाब और ज़िल्लत व रुस्वाई का ज़िक्र हुआ है ये मुनाफ़िक भी उनमें शामिल हैं जिन्होंने मस्जिद का नाम रखकर एक ऐसी इमारत बनाई जिसका मक़सद मुसलमानों को नुक़सान पहुँचाना था।

इस आयत में उक्त मस्जिद के बनाने की तीन गुर्जे ज़िक्र की गयी हैं- अव्वल “ज़िरारन” यानी मुसलमान को नुक़सान पहुँचाने के लिये। तफ़ज़ ‘ज़रर’ और ‘ज़िरार’ दोनों अरबी भाषा में

नुकसान पहुँचाने के मायने में इस्तेमाल होते हैं। कुछ हज़रत ने यह फ़र्क़ बयान किया है कि 'ज़रर' तो उस नुक़सान को कहा जाता है जिसमें उसके करने वाले का अपना तो फ़ायदा हो दूसरों को नुक़सान पहुँचे, और 'ज़िरार' दूसरों को वह नुक़सान पहुँचाना है जिसमें उस पहुँचाने वाले का कोई फ़ायदा भी नहीं। चूँकि इस मस्जिद का अन्जाम यही होने वाला था कि बनाने वालों को इससे कोई फ़ायदा न पहुँचे इसलिये यहाँ लफ़्ज़ ज़िरार इस्तेमाल किया गया।

दूसरी गर्ज़ उस मस्जिद की 'तफ़रीक़म बैनल्-मुअ्मिनीन' बतलाई गयी है। यानी उनका मक़सद उस मस्जिद के बनाने से यह भी था कि मुसलमानों की जमाअत के दो टुकड़े हो जायें, एक टुकड़ा उस मस्जिद में नमाज़ पढ़ने वालों का अलग हो जाये और यह कि पुरानी मस्जिदे कुबा के नमाज़ी घट जायें और कुछ लोग यहाँ नमाज़ पढ़ा करें।

तीसरी गर्ज़ 'इरसादल् लिमन् हारबल्ला-ह' बतलाई गयी। जिसका हासिल यह है कि उस मस्जिद से यह काम भी लेना था कि यहाँ अल्लाह और रसूल के दुश्मनों को पनाह मिले और वे यहाँ मुसलमानों के खिलाफ़ साजिश किया करें।

इस मजमूए से यह साबित हो गया कि जिस मस्जिद को कुरआने करीम ने मस्जिद-ए-ज़िरार करार दिया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हुक्म से उसको ढहाया गया और आग लगाई गयी, दर हकीकत न वह मस्जिद थी न उसका मक़सद नमाज़ पढ़ने के लिये बनाना था बल्कि मक़ासिद वो तीन थे जिनका ज़िक्र ऊपर आया है। इससे मालूम हो गया कि आजकल अगर किसी मस्जिद के मुकाबले में उसके करीब कोई दूसरी मस्जिद कुछ मुसलमान बना लें, और बनाने का मक़सद यही आपसी फूट, बिखराव और पहली मस्जिद की जमाअत तोड़ना वगैरह बुरे मक़ासिद हों तो अगरचे ऐसी मस्जिद बनाने वाले को सवाब तो न मिलेगा बल्कि मुसलमानों में फूट डालने की वजह से गुनाहगार होगा, लेकिन इस सब के बावजूद उस जगह को शरई हैसियत से मस्जिद ही कहा जायेगा, और तमाम आदाब और अहकाम मसाजिद के उस पर जारी होंगे। उसका ढहाना, आग लगाना जायज़ नहीं होगा, और जो लोग उसमें नमाज़ पढ़ेंगे उनकी नमाज़ भी अदा हो जायेगी, अगरचे ऐसा करना (यानी इस तरह बनाना) अपने आप में गुनाह रहेगा।

इससे यह भी मालूम हो गया कि इस दिखावे व नमूद के लिये या ज़िद व हठधर्मी की वजह से जो मुसलमान कोई मस्जिद बना ले अगरचे बनाने वाले को मस्जिद का सवाब न मिलेगा बल्कि गुनाह होगा, मगर उसको कुरआनी इस्तिलाह वाली मस्जिद-ए-ज़िरार नहीं कहा जायेगा। बाज़ लोग जो इस तरह की मस्जिद को मस्जिदे ज़िरार कह देते हैं यह दुरुस्त नहीं, अलबत्ता उसको मस्जिदे ज़िरार के जैसी कह सकते हैं, इसलिये उसके बनाने को रोका भी जा सकता है, जैसा कि हज़रत उमर फारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने एक फ़रमान जारी फ़रमाया था जिसमें हिदायत की गयी थी कि एक मस्जिद के करीब दूसरी मस्जिद न बनाई जाये जिससे पहली मस्जिद की जमाअत और रौनक प्रभावित हो। (तफ़सीर-ए-क़श्शाफ़)

इस मस्जिदे ज़िरार के मुताल्लिक़ दूसरी आयत में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह हुक्म दिया गया है:

इसमें कियाम (खड़े होने) से मुराद नमाज़ के लिये कियाम है। मतलब यह है कि आप इस नाम की मस्जिद में हरगिज़ नमाज़ न पढ़ें।

मसला: इससे इतना मालूम होता है कि आज भी अगर कोई नई मस्जिद पहली मस्जिद के करीब बिना किसी ज़रूरत के महज़ दिखावे व नमूद के लिये या ज़िद व हठधर्मी की वजह से बनाई जाये तो उसमें नमाज़ पढ़ना बेहतर नहीं, अगरचे नमाज़ हो जाती है।

इसी आयत में आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह भी हिदायत दी गयी कि आपका नमाज़ पढ़ना उसी मस्जिद में दुरुस्त है जिसकी बुनियाद पहले दिन से तक़वे पर रखी गयी है, और उसमें ऐसे लोग नमाज़ पढ़ते हैं जिनको पाकी और तहारत में पूरी एहतियात पसन्द है, और अल्लाह भी ऐसे पाक रहने वालों को पसन्द करता है।

आयत के मज़मून से ज़ाहिर यह है कि इससे मस्जिदे कुबा मुराद है, जिसमें उस वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम नमाज़ पढ़ा करते थे। और हदीस की कुछ रिवायतों से भी इसकी ताईद होती है (जैसा कि इब्ने मर्दूया ने हज़रत इब्ने अब्बास व अमर बिन शैबा से और इब्ने खुज़ैमा ने अपनी सही में उवैमर बिन साज़िदा से रिवायत किया है। तफ़सीरे मज़हरी)

और कुछ रिवायतों में जो यह आया है कि इससे मुराद मस्जिद-ए-नबवी है वो भी इसके खिलाफ़ नहीं, क्योंकि मस्जिदे नबवी जिसकी बुनियाद वही (अल्लाह की तरफ़ से आयै पैग़ाम) के मुताबिक़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने हाथ मुबारक से रखी, ज़ाहिर है कि उसकी बुनियाद तक़वे पर है, और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से ज़्यादा पाक रहने वाला कौन हो सकता है, इसलिये वह भी इसकी मिस्दाक़ ज़रूर है। (जैसा कि इमाम तिर्मिज़ी ने रिवायत किया। तफ़सीर-ए-कुर्तुबी)

فِيهِ رَجَالٌ يُحِبُّونَ أَنْ يَتَطَهَّرُوا

उक्त आयत में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की नमाज़ के लिये उस मस्जिद को ज़्यादा हक़दार करार दिया जिसकी बुनियाद शुरू दिन से तक़वे पर रखी गयी कि उस मस्जिद के नमाज़ी ऐसे लोग हैं जो तहारत (पाकी) का बहुत ज़्यादा ख़्याल और एहतियाम करते हैं। तहारत के मतलब में इस जगह आम नापाकी और गन्दगियों से पाक होना भी दाख़िल है और गुनाहों और बुरे व अख़्लाक़ से पाकी भी। मस्जिदे कुबा और मस्जिदे नबवी के नमाज़ी उमूमन इन सब सिफ़तों के मालिक थे।

फ़ायदा

इससे यह भी मालूम हुआ कि किसी मस्जिद की फ़ज़ीलत का असली मदार तो इस पर है कि वह इख़्लास (नेक-नीयती) के साथ अल्लाह के लिये बनाई गयी हो, उसमें किसी दिखावे और नाम व नमूद का या किसी और बुरे मक़सद का कोई दख़ल न हो। और यह भी मालूम हुआ कि

नमाज़ियों के नेक, सालेह, आलिम, आबिद होने से भी मस्जिद की फज़ीलत बढ़ जाती है, जिस मस्जिद के नमाज़ी आम तौर पर आलिम, नेक लोग और तक्वे वाले हों उसमें नमाज़ अदा करने की फज़ीलत ज्यादा है।

तीसरी और चौथी आयत में इस मकबूल मस्जिद के मुकाबले में मुनाफ़िकों की बनाई हुई मस्जिदें ज़िरार की बुराई बयान की गयी है, कि उसकी मिसाल ऐसी है जैसे दरिया के किनारे कई बार पानी ज़मीन के हिस्से को अन्दर से खा लेता है और ऊपर ज़मीन की सतह हमवार नज़र आती है, उस पर अगर कोई इमारत बनाये तो ज़ाहिर है कि वह फौरन गिर जायेगी। इसी तरह इस मस्जिदें ज़िरार की बुनियाद नापायेदार थी, इसका अन्जाम यह हुआ कि वह गिर पड़ी और जहन्नम की आग में गयी। जहन्नम की आग में जाना इस मायने में भी हो सकता है कि उसके बनाने वालों के लिये उसने जहन्नम का रास्ता हमवार कर दिया, और कुछ हज़रात ने इसको हकीकत पर भी महमूल किया है कि हकीकत में यह मस्जिद गिराई गयी है तो जहन्नम में गई। वल्लाहु आलम।

आगे फरमाया कि उनकी यह तामीर (इमारत) हमेशा उनके शक और निफ़ाक को बढ़ाती ही रहेगी, जब तक कि उनके दिल कट न जायें। यानी जब तक उनकी ज़िन्दगी ख़त्म न हो जाये उनका शक व निफ़ाक और जलन व गुस्सा बढ़ता ही रहेगा।

إِنَّ اللَّهَ اشْتَرَىٰ مِنَ الْمُؤْمِنِينَ أَنْفُسَهُمْ وَأَمْوَالَهُمْ بِأَنَّ

لَهُمُ الْجَنَّةَ وَيُقَاتِلُونَ فِي سَبِيلِ اللَّهِ فَيَقْتُلُونَ وَيُقْتَلُونَ وَعَدًا عَلَيْهِ حَقًّا فِي التَّوْرَةِ وَالْإِنْجِيلِ وَالْقُرْآنِ وَمَنْ أَوْفَىٰ بِعَهْدِهِ مِنَ اللَّهِ فَاسْتَبْشِرُوا بِلَيْعِكُمُ الَّذِي بَايَعْتُمْ بِهِ مَوَدَّةَ هُوَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ۝ الثَّائِبُونَ الْعَبَدُونَ الْحِمْدُونَ السَّائِحُونَ الرُّكْعُونَ السُّجِدُونَ الْأَمْرُونَ بِالْمَعْرُوفِ وَالنَّاهُونَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَالْحَفِظُونَ لِحُدُودِ اللَّهِ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ ۝

इन्नल्लाह शतरा मिनल्मुअमिनी-न
अन्फु-सहुम् व अम्वालहुम् बिअन्-न
लहुमुल्जन्न-त, युकातिलू-न फी
सबीलिल्लाहि फ-यक्तुलू-न व
युक्तलू-न, वअदन् अलैहि हक्कन्
फितौराति वल्दन्जीलि वल्कुरआनि,
व मन् औफा बि-अस्दिही मिनल्लाहि

अल्लाह ने ख़रीद ली मुसलमानों से उनकी
जान और उनका माल इस कीमत पर कि
उनके लिये जन्नत है, लड़ते हैं अल्लाह
की राह में फिर मारते हैं और मरते हैं,
वादा हो चुका उसके जिम्मे पर सच्चा
तौरात और इन्जील और कुरआन में,
और कौन है कौल का पूरा अल्लाह से
ज्यादा, सो खुशियाँ करो उस मामले पर

फ़स्तबिशरू बिबैअिकुमुल्लज़ी
बायअतुम् बिही, व ज़ालि-क हुवल
फौज़ुल्-अज़ीम (111) अत्ता-इबूनल्-
आबिदूनल्-हामिदूनस्-सा-इहूनर्
-राकिअूनस्-साजिदूनल्-आमिरू-न
बिल्मअरूफ़ि वन्नाहू-न अनिल्मुन्करि
वल्हाफ़िज़ू-न लिहुदूदिल्लाहि, व
बश्शिरिल् मुअ्मिनीन (112)

जो तुमने किया है उससे, और यही है
बड़ी कामयाबी। (111) वे तौबा करने
वाले हैं बन्दगी करने वाले शुक्र करने वाले
बेताल्लुक रहने वाले रुकूअ करने वाले
सज्दा करने वाले, हुक्म करने वाले नेक
बात का और मना करने वाले बुरी बात
से, और हिफाज़त करने वाले उन हदों
की जो बाँधी अल्लाह ने, और खुशख़बरी
सुना दे ईमान वालों को। (112)

खुलासा-ए-तफ़सीर

बेशक अल्लाह तअ़ाला ने मुसलमानों से उनकी जानों और उनके मालों को इस बात के बदले ख़रीद लिया है कि उनको जन्नत मिलेगी (और खुदा के हाथ माल व जान बेचने का मतलब यह है कि) वे लोग अल्लाह की राह में (यानी जिहाद में) लड़ते हैं, (जिसमें) (कभी) क़त्ल करते हैं और (कभी) क़त्ल किये जाते हैं, (यानी वह बै जिहाद करना है चाहे उसमें क़ातिल होने की नौबत आये या मक्तूल होने की)। इस (क़िताल) पर (उनसे जन्नत का) सच्चा वायदा (किया गया) है तौरात में (भी) और इन्ज़ील में (भी) और क़ुरआन में (भी), और (यह माना हुआ है कि) अल्लाह से ज़्यादा अपने अहद को कौन पूरा करने वाला है (और उसने इस बै पर वायदा जन्नत का किया है) तो (इस हालत में) तुम लोग (जो कि जिहाद कर रहे हो) अपनी इस (ज़िक्र हुई) बै पर जिसका तुमने उससे (यानी अल्लाह पाक से) मामला ठहराया है खुशी मनाओ, (क्योंकि इस बै (सौदे) पर तुमको वायदे अनुसार मज़क़ूरा जन्नत मिलेगी) और यह (जन्नत मिलना) बड़ी कामयाबी है (तो ज़रूर तुमको यह सौदा करना चाहिये)। वे (मुजाहिद लोग ऐसे हैं जो अ़लावा जिहाद के इन सिफ़तों को भी अपने अन्दर रखते हैं कि गुनाहों से) तौबा करने वाले हैं (और अल्लाह की) इबादत करने वाले (हैं और अल्लाह की) तारीफ़ करने वाले (हैं और) रोज़ा रखने वाले (हैं और) रुकूअ करने वाले (और) सज्दा करने वाले (हैं, यानी नमाज़ पढ़ते हैं और) नेक बातों की तालीम करने वाले (हैं) और बुरी बातों से रोकने वाले (हैं) और अल्लाह की हदों का (यानी उसके अहकाम का) ख़्याल रखने वाले (हैं), और ऐसे मोमिनों को (जिनमें जिहाद और ये सिफ़तें हैं) आप खुशख़बरी सुना दीजिये (कि उनसे जन्नत का वायदा बयान हुआ है)।

मआरिफ़ व मसाईल

इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़

पहले गुज़री आयतों में जिहाद से बिना उज़्र रुकने की मज़म्मत (बुराई और निंदा) का बयान था, इन आयतों में मुजाहिदीन की फज़ीलत (बड़ाई और श्रेष्ठता) का बयान है।

शान-ए-नुज़ूल

अक्सर हज़राते मुफ़स्सिरीन की वज़ाहत के मुताबिक़ ये आयतें बैअत-ए-अक़बा में शामिल हज़रात के बारे में नाज़िल हुई हैं जो हिजरत से पहले मक्का मुकर्रमा में मदीना के अन्सार से ली गयी थी, इसी लिये पूरी सूरत के मदनी होने के बावजूद इन आयतों को मक्की कहा गया है।

अक़बा पहाड़ के हिस्से को कहा जाता है, इस जगह वह अक़बा मुराद है जो मिना में जमरा-ए-अक़बा के साथ पहाड़ का हिस्सा है (आजकल हाजियों की अधिकता के सबब पहाड़ का यह हिस्सा साफ़ करके मैदान बना दिया गया है सिर्फ़ जमरा रह गया है) इस अक़बा पर मदीना तय्यिबा के हज़रात से तीन मर्तबा बैअत ली गयी है, पहली बैअत हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की नुबुव्वत से ग्यारहवें साल में हुई, जिसमें छह हज़रात मुसलमान होकर बैअत करके मदीना वापस हुए तो मदीना के घर-घर में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और इस्लाम का चर्चा होने लगा। अगले साल हज के मौसम में बारह हज़रात उसी जगह जमा हुए जिनमें पाँच पहले और सात नये थे, सब ने बैअत की। अब मदीना में मुसलमानों की खासी तायदाद हो गयी, जो चालीस व्यक्तियों से जायद थी, उन्होंने दरख्वास्त की कि हमें कुरआन पढ़ाने के लिये किसी को भेज दिया जाये, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत मुस्तअब बिन उमैर रज़ियल्लाहु अन्हु को भेज दिया, उन्होंने मौजूदा मुसलमानों को कुरआन भी पढ़ाया और इस्लाम की तब्तीग़ भी की, जिसके नतीजे में मदीना की बड़ी जमाअतें इस्लाम के दायरे में आ गयीं।

उसके बाद नुबुव्वत मिलने के तेरहवें साल में सत्तर मर्द व औरतें उसी जगह जमा हुए, यह तीसरी बैअत-ए-अक़बा है जो आखिरी है, और उमूमन बैअते अक़बा से यही बैअत मुराद होती है। यह बैअत इस्लाम के उसूली अक़ीदों व आमाल के साथ खुसूसी तौर पर काफ़िरों से जिहाद और जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हिजरत करके मदीना पहुँचें तो आपकी हिफ़ाज़त व हिमायत पर ली गयी। इसमें हज़रत अब्दुल्लाह बिन रवाहा रज़ियल्लाहु अन्हु ने अर्ज किया कि या रसूलुल्लाह! इस वक़्त मुआहिदा हो रहा है, आप जो शर्तें अपने रब के मुताल्लिक़ या अपने मुताल्लिक़ करना चाहें वो स्पष्ट कर दी जायें, आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैं अल्लाह तआला के लिये तो यह शर्त रखता हूँ कि आप सब उसकी इबादत करेंगे, उसके सिवा किसी की इबादत नहीं करेंगे, और अपने लिये यह शर्त है कि मेरी हिफ़ाज़त इस तरह करेंगे जैसे अपनी जानों और अपने माल व औलाद की हिफ़ाज़त करते हो। उन लोगों

ने मालूम किया कि अगर हम ये दोनों शर्तें पूरी कर दें तो हमें इसके बदले में क्या मिलेगा? आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया जन्नत मिलेगी। इन सब हज़रात ने खुश होकर कहा कि हम इस सौदे पर राजी हैं, और ऐसे राजी हैं कि अब इसको न खुद खत्म करने की दरखास्त करेंगे, न इसके खत्म होने और टूटने को पसन्द करेंगे।

इस जगह चूँकि इस बैअत में जाहिरी सूरत एक लेन-देन के मामले की बन गयी तो इस पर यह आयत खरीद व बेच के अलफाज़ के साथ नाज़िल हुई:

إِنَّ اللَّهَ اشْتَرَى مِنَ الْمُؤْمِنِينَ أَنْفُسَهُمْ وَأَمْوَالَهُمْ بِأَنْ لَهُمُ الْجَنَّةُ.

यह आयत सुनकर सबसे पहले हज़रात बरा बिन मारूर और अबुल-हैसम और अस्अद रज़ियल्लाहु अन्हुम ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हाथ मुबारक पर अपना हाथ रख दिया, कि हम इस मामले पर तैयार हैं। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हिफाज़त अपनी औरतों बच्चों की तरह करेंगे, और आपके मुकाबले पर अगर दुनिया के काले और गोरे सब जमा हो जायें तो भी हम सब का मुकाबला करेंगे।

जिहाद की सबसे पहली यही आयत है

मक्का मुअज़्ज़मा में जिहाद व क़िताल के अहकाम नहीं थे, यह सब से पहली आयत है जो मक्का मुकर्रमा ही में क़िताल (जंग व जिहाद) के बारे में नाज़िल हुई, और इसका अमल हिजरत के बाद शुरू हुआ। इसके बाद दूसरी आयत नाज़िल हुई:

أُذِنَ لِلَّذِينَ يُقَاتِلُونَ.

जब यह बैअत-ए-अक़बा मक्का के कुरैश काफ़िरों से खुफ़िया मुकम्मल हो गयी तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम को मक्का मुकर्रमा से मदीना की हिजरत का हुक्म दे दिया, और धीरे-धीरे सहाबा-ए-किराम की हिजरत का सिलसिला शुरू हो गया। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हक़ तआला की तरफ़ से इजाज़त मिलने के मुन्ताज़िर रहे, सिद्दीके अक़बर रज़ियल्लाहु अन्हु ने हिजरत का इरादा किया तो आपने उनको अपने साथ के लिये रोक लिया (यह पूरा वाक़िआ तफ़सीरी मज़हरी में लिखा हुआ है)।

يُقَاتِلُونَ فِي سَبِيلِ اللَّهِ.....(الْي)..... فِي الثَّوْرَةِ وَالْإِنْجِيلِ وَالْقُرْآنِ.

इस आयत से मालूम होता है कि जिहाद व क़िताल का हुक्म तमाम पिछली उम्मतों के लिये भी सब किताबों में नाज़िल किया गया, और यह जो मशहूर है कि इंजील में जिहाद का हुक्म नहीं, मुम्किन है कि बाद के लोगों ने जो रद्दोबदल उसमें की हैं उसमें जिहाद के अहकाम को निकाल दिया गया हो। वल्लाहु आलम।

فَأَنْبَشُوا بِعَبْكُمْ.

बैअत-ए-अक़बा के इस वाक़िए में जो मुआहिदा (समझौता) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से हुआ उसकी जाहिरी सूरत खरीद व बेच की बन गयी, इसलिये आयत के शुरू में शिरा

(ख़रीद) के लफ़्ज़ से ताबीर किया गया था। इस जुमले में मुसलमानों को मुखातब करके फ़रमाया कि बै का यह मामला तुम्हारे लिये नफ़े का सौदा और मुबारक है। क्योंकि एक फ़ानी चीज़ यानी जान व माल देकर हमेशा बाकी रहने वाली चीज़ बदले में मिल गयी, और ग़ौर किया जाये तो ख़र्च सिर्फ़ माल हुआ, जान यानी रूह तो मरने के बाद भी बाकी रहेगी और हमेशा रहेगी। और माल पर ग़ौर किया जाये तो वह भी तो हक़ तआला ही का दिया हुआ है, इनसान तो अपनी पैदाईश के वक़्त ख़ाली हाथ आया था, उसी ने सब सामान और माल व दौलत का इसको मालिक बनाया है, अपने ही दिये हुए को आख़िरत की नेमतों और जन्नत का मुआवज़ा बनाकर जन्नत दे दी। इसी लिये हज़रत फ़ारूके आजम रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि अजीब बै (सौदा) है कि माल और कीमत दोनों तुम्हें ही दे दिये।

हज़रत हसन बसरी रह. ने फ़रमाया कि सुनो! यह कैसी नफ़े की तिजारत है जो अल्लाह ने हर मोमिन के लिये खोल दी है, और फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने ही तुम्हें माल बख़्शा है तुम उसमें से थोड़ा ख़र्च करके जन्नत ख़रीद लो। (तफ़सीरे मज़हरी)

الْمُتَّقِينَ الْعَبْدُونَ..... الآية.

ये सिफ़तें उन्हीं मोमिनों की हैं जिनके बारे में ऊपर यह फ़रमाया है कि अल्लाह ने उनकी जान और माल को जन्नत के बदले में ख़रीद लिया है। अगरचे यह आयत एक ख़ास जमाअत के बारे में नाज़िल हुई जो बैअते अक़बा में शरीक हुई मगर आयत का मफ़हूम अल्लाह के रास्ते में तमाम जिहाद करने वालों को शामिल है, और जो गुण व सिफ़तें उनकी 'अत्ताइबून-.....' से बयान किये गये ये शर्त के तौर पर नहीं, क्योंकि जन्नत का वायदा तो सिर्फ़ जिहाद फी सबीलिल्लाह पर आया है इन सिफ़तों और खूबियों के बयान से मक़सद यह है कि जो लोग जन्नत के अहल होते हैं उनकी ऐसी सिफ़तें हुआ करती हैं, ख़ास तौर पर बैअते अक़बा में शरीक होने वाले सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम का यही हाल था।

'अत्ताइबून' के मायने मुफ़स्सरीन की अक्सरियत के नज़दीक 'साइमून' यानी रोज़ेदारों के हैं। असल में यह लफ़्ज़ सियाहत से लिया गया है, इस्लाम से पहले ईसाई दीन में सियाहत एक इबादत समझी जाती थी, कि इनसान अपने घर-बार को छोड़कर इबादत के लिये निकल खड़ा हो, इस्लाम में इसको रहबानीयत करार दिया गया, और इससे मना किया गया। इसके कायम-मक़ाम रोज़े की इबादत मुक़रर की गयी, क्योंकि सियाहत का मक़सद दुनिया को छोड़ना था, रोज़ा ऐसी चीज़ है कि अपने घर में रहते हुए एक निर्धारित वक़्त में दुनिया की तमाम इच्छाओं को छोड़ देना होता है, और इसी बिना पर कुछ रिवायतों में जिहाद को भी सियाहत करार दिया गया है। इब्ने माजा, हाकिम, बैहकी ने सही सनद के साथ रिवायत किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

سِيَاحَةُ امْنِي الْجِهَادُ فِي سَبِيلِ اللَّهِ

“यानी इस उम्मत की सियाहत अल्लाह के रास्ते में जिहाद है।

हजरत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फरमाया कि कुरआने करीम में जहाँ कहीं साइहीन का लफ़्ज़ आया है उससे मुराद साइमीन (रोज़ा रखने वाले) हैं। हजरत इक्रिमा रह. ने साइहीन की तफ़सीर में फरमाया कि ये तालिबे-इल्म हैं जो इल्म सीखने के लिये अपने घर-बार को छोड़कर निकलते हैं। (तफ़सीरे मज़हरी)

इस जगह मोमिन मुजाहिदीन की सिफ़तों और गुण ताईबून, आबिदून, हामिदून, साइहून, राकिऊन, साजिदून, आमिरून-न बिल्-मारूफ़ वन्नाहू-न अनिल्-मुन्कर सात चीज़ें बयान फरमाने के बाद आठवाँ वस्फ़ (खूबी) 'अल्हाफ़िज़ू-न लिहुददिल्लाहि' फरमाया। यह दर हकीकत पहले ज़िक्र हुई तमाम सिफ़तों का एक जामे (अपने अन्दर सब को समोने वाला) लफ़्ज़ है, गोया सात सिफ़तों में जो तफ़सील बतलाई गयी उसका संक्षिप्त यह है कि ये लोग अपने हर काम और कलाम में अल्लाह की हदों यानी शरई अहकाम के पाबन्द हैं, उनकी हिफ़ाज़त करते हैं।

आयत के आखिर में फरमाया:

وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ

यानी जिन मोमिनों की ये सिफ़ात और विशेषतायें हों जो ऊपर बयान की गयीं उनको ऐसी नेमतों की खुशख़बरी सुना दीजिए जिनको किसी का वहम व ख़्याल भी नहीं पा सकता, और न किसी मज़मून व तहरीर से उसको समझाया जा सकता है, और न किसी के कानों ने उनका तज़क़िरा सुना है, मुराद जन्नत की नेमतें हैं।

مَا كَانَ لِلنَّبِيِّ وَالَّذِينَ آمَنُوا أَنْ يَسْتَغْفِرُوا لِلشَّارِكِينَ وَلَوْ كَانُوا

أُولَىٰ قُرْبَىٰ مِنْ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُمْ أَنَّهُمْ أَصْحَابُ الْجَحِيمِ ۝ وَمَا كَانَ اسْتِغْفَارُ إِبْرَاهِيمَ لِأَبِيهِ إِلَّا عَنْ مَوْعِدَةٍ وَعَدَهَا إِيَّاهُ فَلَمَّا تَبَيَّنَ لَهُ أَنَّهُ عَدُوٌّ لِلَّهِ تَبَرَّأَ مِنْهُ إِنَّ إِبْرَاهِيمَ لَأَوَّاهٌ حَلِيمٌ ۝

मा का-न लिन्नबिय्यि वल्लज़ी-न
आमनू अय्यस्तग़फ़िरु लिल्मुशिकी-न
व लौ कानू उली कुरबा मिम्-बअदि
मा तबय्य-न लहुम् अन्नहुम्
अस्हाबुल्-जहीम (113) व मा
कानस्तिग़फ़ारु इब्राही-म लि-अबीहि
इल्ला अम्मौअि-दतिंव् व-अ-दहा
इय्याहु फ़-लम्मा तबय्य-न लहु

लायक नहीं नबी को और मुसलमानों को
कि बख़्शिश चाहें मुशिकों की अगरचे वे
हों रिश्तेदार व करीबी, जबकि खुल चुका
उन पर कि वे हैं दोज़ख़ वाले। (113)
और बख़्शिश माँगना इब्राहीम का अपने
बाप के वास्ते, सो न था मगर वायदे के
सबब कि वायदा कर चुका था उससे,
फिर जब खुल गया इब्राहीम पर कि वह

अन्नहू अदुव्वुल्-लिल्लाहि त-बर्-अ
मिन्हु, इन्-न इब्राही-म त-अव्वाहुन्
हलीम (114)

दुश्मन है अल्लाह का तो उससे बेज़ार हो
गया, बेशक इब्राहीम बड़ा नर्म-दिल था
बरदाश्त करने वाला। (114)

खुलासा-ए-तफ़्सीर

पैग़म्बर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को और दूसरे मुसलमानों को जायज़ नहीं कि मुशिरकों के लिये मग़फ़िरत की दुआ माँगें अगरचे वे रिश्तेदार ही (क्यों न) हों, इस (बात) के उन पर ज़ाहिर हो जाने के बाद कि ये लोग दोज़खी हैं (इस वजह से कि काफ़िर होकर मरे हैं)। और (अगर हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के किस्से से शुब्हा हो कि उन्होंने अपने बाप के लिये दुआ-ए-मग़फ़िरत की थी तो इसका जवाब यह है कि) इब्राहीम (अलैहिस्सलाम) का अपने बाप के लिये मग़फ़िरत की दुआ माँगना (वह इससे पहले था कि उसका दोज़खी होना ज़ाहिर हो जाये और) वह (भी) सिर्फ़ वायदे के सबब था, जो उन्होंने उससे वायदा कर लिया था (इस कौल में 'स-अस्तग़्फ़िरु ल-क रब्बी' गर्ज़ कि जवाज़ तो इसलिये था कि उसका दोज़खी होना ज़ाहिर न हुआ था और उसके पेश आने को इससे तरजीह हो गयी थी कि वायदा कर लिया था, वरना बावजूद जायज़ होने के भी ऐसा ज़ाहिर न होता)। फिर जब उन पर यह बात ज़ाहिर हो गई कि वह खुदा का दुश्मन (यानी काफ़िर होकर मरा) है तो वह उससे बिल्कुल बेताल्लुक हो गये (कि इस्तिग़फ़ार भी छोड़ दिया, क्योंकि उस वक़्त दुआ-ए-मग़फ़िरत करना बेमानी है, क्योंकि काफ़िर में मग़फ़िरत होने की गुंजाईश है ही नहीं, जबकि जिन्दगी की हालत में दुआ-ए-मग़फ़िरत करने के मायने उस वक़्त हिदायत की तौफ़ीक़ माँगने के हो सकते हैं, क्योंकि हिदायत की तौफ़ीक़ के लिये मग़फ़िरत लाज़िम है, और रहा यह कि वायदा कर लिया था, वजह इसकी यह है कि) वाकई इब्राहीम (अलैहिस्सलाम) बड़े रहम वाले मिज़ाज, बरदाश्त करने वाली तबीयत के थे (कि इसके बावजूद कि बाप ने उनको कैसी-कैसी सख़्त बातें कहीं, मगर संयम से काम लिया, और उस पर यह भी कि शफ़क़त के जोश से वायदा कर लिया और जब तक फ़ायदा होने की संभावना दिखी उस वायदे को पूरा फ़रमाया, जब नाउम्मीदी हो गयी तो हारकर छोड़ दिया, बख़िलाफ़ तुम्हारे इस्तिग़फ़ार के कि वह मुशिरकों के मरने के बाद हो रहा है, जिनका शिरक़ की हालत पर मरना ज़ाहिरी तौर पर देखने से मालूम है, और शरई अहक़ाम में ऐसा ज़ाहिर काफ़ी है, फिर कियास (अन्दाज़ा करना) कब सही है, और उस कियास पर शुब्हे व गुंजाईश बनने का कोई आधार कैसे हो सकता है)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

पूरी सूर: ताबा काफ़िरों व मुशिरकों से बराअत और अलैहदगी के अहक़ाम पर आधारित है।

सूरत का शुरू ही 'बराअतुम् मिनल्लाहि' से हुआ है, और इसी लिये इस सूरत का एक नाम सूरः बराअत भी परिचित है। ऊपर जिस कद्र अहकाम आये वो दुनियावी ज़िन्दगी में काफ़िरों व मुशिरकों से बराअत और ताल्लुक ख़त्म करने के बारे में हैं, इस आयत में यही हुक्म आख़िरत की ज़िन्दगी में बराअत और ताल्लुक ख़त्म करने के लिये आया है, कि मरने के बाद काफ़िर व मुशिरक के लिये दुआ-ए-मग़फ़िरत करना भी जायज़ नहीं, जैसा कि इससे पहले एक आयत में मुनाफ़िकों की नमाज़े जनाज़ा पढ़ने से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मना किया गया है।

इस आयत के नाज़िल होने का वाक़िआ सही बुख़ारी व मुस्लिम की रिवायत के मुताबिक़ यह है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चचा अबू तालिब अगरचे मुसलमान न हुए थे मगर उम्रभर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हिमायत व हिफ़ाज़त करते रहे, और इस मामले में बिरादरी के किसी फ़र्द का कहना नहीं माना। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को भी इसका बड़ा ध्यान था कि किसी तरह यह इस्लाम का कलिमा पढ़ लें और ईमान ले आयें तो शफ़ाअत का मौक़ा मिल जायेगा और यह जहन्नम के अज़ाब से बच जायेंगे। मौत की बीमारी में जब उनका आख़िरी वक़्त हुआ तो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बड़ी फ़िक्र थी कि इस वक़्त भी कलिमा शरीफ़ पढ़ लें तो काम हो जाये, चुनाँचे उस हालत में आप उनके पास पहुँचे, मगर अबू जहल, अब्दुल्लाह बिन उमैया पहले से वहाँ मौजूद थे। आपने फ़रमाया कि मेरे चचा! कलिमा ला इला-ह इल्लल्लाहु पढ़ लें तो मैं आपकी बख़्शिश के लिये कोशिश करूँगा, मगर अबू जहल बोल उठा कि क्या आप अब्दुल-मुत्तलिब के दीन को छोड़ देंगे? रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कई मर्तबा फिर अपना कलाम दोहराया, मगर हर मर्तबा अबू जहल यही बात कह देता, यहाँ तक कि आख़िरी कलाम में अबू तालिब ने यही कहा कि मैं अब्दुल-मुत्तलिब के दीन पर हूँ। इसी हालत में वफ़ात हो गयी, तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने क़सम खाई कि मैं आपके लिये बराबर इस्तिग़फ़ार करता रहूँगा जब तक मुझे उससे मना न कर दिया जाये। इस पर मनाही की यह आयत नाज़िल हुई, जिसमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सब मुसलमानों को काफ़िरों व मुशिरकों के लिये मग़फ़िरत की दुआ करने से मना फ़रमा दिया, चाहे वे करीबी रिश्तेदार ही हों।

इस पर कुछ मुसलमानों को यह शुब्हा हुआ कि हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने भी तो अपने काफ़िर बाप के लिये दुआ की थी, इसके जवाब में दूसरी आयत नाज़िल हुई:

مَا كَانَ اسْتِغْفَارُ اِبْرٰهٖمَ..... الْاٰیة.

जिसका हासिल यह है कि इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने जो अपने वालिद के लिये दुआ की थी उसका मामला यह है कि शुरू में जब तक इब्राहीम अलैहिस्सलाम को यह मालूम न था कि आख़िर तक कुफ़्र ही पर कायम रहेगा, उसी पर मरेगा, तो उसका दोज़खी होना यकीनी नहीं था, उस वक़्त उन्होंने यह वायदा कर लिया था कि मैं आपके लिये दुआ-ए-मग़फ़िरत करूँगा:

سَامِعُ لَكَ رَبِّي

फिर जब हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम पर यह बात खुल गयी कि वह अल्लाह का दुश्मन है यानी कुफ़ ही पर उसका ख़ात्मा हुआ है तो उससे बेताल्लुकी इख़्तियार कर ली और इस्तिग़फ़ार (अल्लाह से बख़्शिश की दुआ) करना छोड़ दिया।

क़ुरआन मजीद के विभिन्न मौकों में जो हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम का अपने वालिद के लिये दुआ-ए-मग़फ़िरत करना नक़ल किया है वह सब इसी पर महमूल होना चाहिये। उसका मतलब यह होगा कि उनको ईमान व इस्लाम की तौफ़ीक़ दे ताकि उनकी मग़फ़िरत हो सके।

ग़ज़वा-ए-उहुद में जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चेहरा-ए-मुबारक को काफ़िरों ने ज़ख्मी कर दिया तो आप चेहरे से खून साफ़ करते हुए यह दुआ फरमा रहे थे:

اللَّهُمَّ اغْفِرْ لِقَوْمِي إِنَّهُمْ لَا يَعْلَمُونَ

“यानी या अल्लाह! मेरी कौम की मग़फ़िरत फरमा दे, वे नादान हैं।”

काफ़िरों के लिये इस दुआ-ए-मग़फ़िरत का हासिल भी यही है कि इनको ईमान व इस्लाम की तौफ़ीक़ अता फरमा दे कि ये मग़फ़िरत के काबिल हो जायें।

इमाम कुतुबी रह. ने फरमाया कि इससे साबित हुआ कि ज़िन्दा काफ़िर के लिये इस नीयत से दुआ-ए-मग़फ़िरत करना जायज़ है कि उसको ईमान की तौफ़ीक़ हो और यह मग़फ़िरत का हक़दार हो जाये।

إِنَّ إِبْرَاهِيمَ لَأَوَّاهٌ حَلِيمٌ

लफ़ज़ अव्वाहुन बहुत से मायनों के लिये इस्तेमाल होता है। इमाम कुतुबी रह. ने इसमें पन्द्रह कौल नक़ल किये हैं, मगर सब मायने एक दूसरे के करीब और मिलते-जुलते हैं, कोई बुनियादी टकराव नहीं। उनमें से चन्द मायने ये हैं- बहुत ज़्यादा आह करने वाला, या बहुत ज़्यादा दुआ करने वाला, अल्लाह के बन्दों पर रहम करने वाला, हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु से यही मायने नक़ल किये गये हैं।

وَمَا كَانَ اللَّهُ لِيُضِلَّ قَوْمًا بَعْدَ إِذْ هَدَاهُمْ حَتَّى يُبَيِّنَ لَهُمْ مَا يَتَّقُونَ إِنَّ اللَّهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ۝ إِنَّ اللَّهَ لَهُ مُلْكُ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ يُحْيِي وَيُمِيتُ وَمَا لَكُمْ مِنْ دُونِ اللَّهِ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا نَصِيرٍ ۝

व मा कानल्लाहु लियुजिल्-ल कौमम्
बअ-द इज़् हदाहुम् हत्ता युबय्यि-न
लहुम् मा यत्तकू-न, इन्नल्ला-ह
बिकुल्लि शैइन् अलीम (115)
इन्नल्ला-ह लहू मुल्कुस्समावाति

और अल्लाह ऐसा नहीं कि गुमराह करे
किसी कौम को जबकि उनको राह पर ला
चुका, जब तक खोल न दे उन पर जिससे
उनको बचना चाहिए, बेशक अल्लाह हर
चीज़ से वाकिफ़ है। (115) अल्लाह ही

वलअर्जि, युह्यी व युमीतु, व मा
लकुम् मिन् दूनिल्लाहि मिंवलियिन्-
व ला नसीर (116)

की सल्लत है आसमानों और ज़मीन में,
जिलाता है और मारता है, और तुम्हारा
कोई नहीं अल्लाह के सिवा हिमायती और
न मददगार। (116)

खुलासा-ए-तफसीर

और अल्लाह तआला ऐसा नहीं करता कि किसी कौम को हिदायत देने के बाद गुमराह कर दे जब तक कि उन चीज़ों को साफ़-साफ़ न बतला दे जिनसे वे बचते रहें (पस जब हमने तुमको (यानी मुसलमानों को) हिदायत की और इससे पहले मुश्रिकों के लिये इस्तिग़फ़ार करने की मनाही न बतलाई थी तो उसके करने से तुमको यह सज़ा नहीं दी जायेगी कि तुम में गुमराही का माद्दा पैदा कर दिया जाये) बेशक अल्लाह तआला हर चीज़ को ख़ूब जानते हैं (सो वह यह भी जानते हैं कि बिना हमारे बतलाये हुए ऐसे अहकाम को कोई नहीं जान सकता, इसलिये उन कामों से नुक़सान भी नहीं पहुँचने देते, और) बेशक अल्लाह ही की हुकूमत है आसमानों और ज़मीन की, वही जिलाता है और मारता है (यानी हर तरह की हुकूमत और क़ुदरत उसी के लिये खास है, जो चाहे हुक्म दे सकता है, और जिस नुक़सान से चाहे बचा सकता है) और तुम्हारा अल्लाह के सिवा न कोई यार है और न मददगार (बल्कि वही यार व मददगार है, इसलिये रोकने से पहले तुमको नुक़सान से बचाता है, और अगर तुमने रोकने और मना करने के बाद हुक्म का पालन न किया तो और कोई बचाने वाला नहीं)।

لَقَدْ تَابَ اللَّهُ عَلَى النَّبِيِّ وَالْمُهَاجِرِينَ وَالْأَنْصَارِ الَّذِينَ

اتَّبَعُوهُ فِي سَاعَةِ الْعُسْرَةِ مِنْ بَعْدِ مَا كَادَ يَزِيغُ قُلُوبُ فَرِيقٍ مِّنْهُمْ ثُمَّ تَابَ عَلَيْهِمْ إِنَّهُ بِهِمْ رَؤُوفٌ
رَّحِيمٌ ۖ وَعَلَى الثَّلَاثَةِ الَّذِينَ خُلِقُوا حَتَّىٰ إِذَا صَافَتْ عَلَيْهِمُ الْأَرْضُ بِمَا رَحُبَتْ وَضَاقَتْ
عَلَيْهِمْ أَنْفُسُهُمْ وَظَنُّوا أَنْ لَا مَلْجَأَ مِنَ اللَّهِ إِلَّا إِلَيْهِ ثُمَّ تَابَ عَلَيْهِمْ لِيَتُوبُوا إِنَّ اللَّهَ هُوَ التَّوَّابُ
الرَّحِيمُ ۝ يَٰ أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اتَّقُوا اللَّهَ وَكُونُوا مَعَ الصَّادِقِينَ ۝

ल-क़ ताबल्लाहु अलन्नबिय
वल्मुहाजिरी-न वलअन्सारिल्लज़ीनत्-
त-बअूहु फी सा-अतिल्-अुस्रति
मिम्-बअूदि मा का-द यज़ीगु कुलूब
फरीकिम् मिन्हुम् सुम्-म ता-ब

अल्लाह मेहरबान हुआ नबी पर और
मुहाजिरीन और अन्सार पर जो साथ रहे
नबी के मुशिकल की घड़ी में उसके बाद
कि करीब था कि दिल फिर जायें बाज़ों
के उनमें से, फिर मेहरबान हुआ उन पर,

अलैहिम्, इन्नहू बिहिम् रुफ़ूरहीम्
(117) व अलस्सलासतिल्लजी-न
ख़ुल्लिफू हत्ता इज़ा ज़ाक़त्
अलैहिमुल्-अरज़ु बिमा रहबत् व
ज़ाक़त् अलैहिम् अन्फुसुहुम् व ज़न्नु
अल्ला मल्ज-अ मिनल्लाहि इल्ला
इलैहि, सुम्-म ता-ब अलैहिम्
लि-यतूबू, इन्नल्ला-ह हुवत्तव्वाबुर-
रहीम् (118) ❀

या अय्युहल्लज़ी-न आमनुत्तकुल्ला-ह
व कूनु मज़स्सादिकीन (119)

बेशक वह उन पर मेहरबान है, रहम करने वाला। (117) और उन तीन शख्सों पर जिनको पीछे रखा था यहाँ तक कि जब तंग हो गई उन पर ज़मीन बावजूद अपने फैलाव के और तंग हो गई उन पर उनकी जानें और समझ गये कि कहीं पनाह नहीं अल्लाह से मगर उसी की तरफ़, फिर मेहरबान हुआ उन पर ताकि वे फिर आयें, बेशक अल्लाह ही है मेहरबान रहम वाला। (118) ❀

ऐ ईमान वालो! डरते रहो अल्लाह से और रहो साथ सच्चों के। (119)

खुलासा-ए-तफ़सीर

अल्लाह तआला ने पैग़म्बर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हाल) पर तवज्जोह फ़रमाई (कि आपको नुबुव्वत और जिहाद की इमामत और तमाम ख़ूबियाँ अता फ़रमाई) और मुहाजिरीन और अन्सार (के हाल) पर भी (तवज्जोह फ़रमाई कि उनको ऐसी मशक्कत के जिहाद में साबित-क़दम रखा) जिन्होंने (ऐसी) तंगी के वक़्त में पैग़म्बर का साथ दिया, इसके बाद कि उनमें से एक ग़िरोह के दिलों में कुछ डगमगाना हो चला था (और जिहाद में जाने से हिम्मत हारने को थे मगर) फिर उसने (यानी अल्लाह ने) उन (ग़िरोह) (के हाल) पर तवज्जोह फ़रमाई (कि उनको संभाल लिया और आख़िर साथ हो ही लिये। पस) बेशक अल्लाह उन सब पर बहुत ही शफ़ीक़ (और) मेहरबान है (कि अपनी मेहरबानी से हर एक के हाल पर किस-किस तरह तवज्जोह फ़रमाई)। और उन तीन शख्सों (के हाल) पर भी (तवज्जोह फ़रमाई) जिनका मामला पीछे डाल दिया "यानी स्थगित कर दिया" गया था, यहाँ तक कि जब (उनकी परेशानी की यह नौबत पहुँची कि) ज़मीन बावजूद अपनी (इतनी बड़ी) वुस्अत के उन पर तंगी करने लगी और वे खुद अपनी जान से तंग आ गये और उन्होंने समझ लिया कि खुदा (की पकड़) से कहीं पनाह नहीं मिल सकती सिवाय इसके कि उसी की तरफ़ रुजू किया जाये (उस वक़्त वे ख़ास तवज्जोह के क़ाबिल हुए)। फिर उन (के हाल) पर (भी ख़ास) तवज्जोह फ़रमाई ताकि वे (आगे भी) मुसीबत व नाफ़रमानी के ऐसे मौकों में अल्लाह की तरफ़ रुजू (रहा) करें, बेशक अल्लाह तआला बहुत तवज्जोह फ़रमाने वाले, बड़े रहम करने वाले हैं।

ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो और (अमल में) सच्चों के साथ रहो (यानी जो नीयत और बात में सच्चे हैं उनकी राह चलो ताकि तुम भी सच्चाई इख्तियार करो)।

मआरिफ व मसाईल

यहाँ से चन्द आयतों पहले आयत 'व आखरून अत-रफू' (यानी आयत नम्बर 102) के बयान में यह लिखा गया था कि ग़ज़वा-ए-तबूक के लिये सब मुसलमानों को निकलने का आम हुक्म होने के वक़्त मदीना वाले लोगों की पाँच किस्में हो गयी थीं, दो किस्में बिना किसी मजबूरी के पीछे रह जाने वालों की थीं जिनका बयान ऊपर की आयतों में तफ़सील के साथ आ चुका है। उपर्युक्त आयतों में सच्चे मुख़्तस मोमिनों की तीन किस्मों का ज़िक्र है- अब्बल वे लोग जो जिहाद का हुक्म पाते ही फ़ौरन तैयार हो गये, उनका बयान उक्त आयत के शुरू के जुमले में:

اَتَّبَعُوهُ فِي سَاعَةِ الْعُسْرَةِ.

में हुआ है। दूसरे वे लोग जो शुरू में कुछ दुविधा और असमंजस में रहे, मगर फिर संभल गये और जिहाद के लिये सब के साथ हो गये, उनका बयान इसी आयत के इस जुमले में है:

مِنْ اَبْعَدِ مَا كَادَ يَرِيغُ قُلُوبُ فَرِيقٍ مِّنْهُمْ.

तीसरे वे मोमिन हज़रात थे जो अगरचे वक़्ती काहिली व सुस्ती की वजह से जिहाद में न गये मगर बाद में शर्मिन्दा हुए और तौबा की और आखिरकार उन सब की तौबा कुबूल हो गयी। मगर उनमें फिर दो किस्में हो गयी थीं। ये कुल दस आदमी थे, जिनमें से सात आदमियों ने तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वापसी के बाद फ़ौरन अपनी शर्मिन्दगी व तौबा का इज़हार इस अन्दाज़ से किया कि अपने आपको मस्जिदे नबवी के सुतूनों से बाँध लिया, कि जब तक हमारी तौबा कुबूल न होगी बंधे रहेंगे। उनकी तौबा वाली आयत तो उसी वक़्त नाज़िल हो गयी जिसका बयान पहले हो चुका है। तीन आदमी वे थे जिन्होंने यह अमल नहीं किया, उनके बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम को बायकाट और ताल्लुक तोड़ लेने का हुक्म दे दिया, कि कोई उनके साथ सलाम व कलाम न करे, जिससे ये हज़रात सख़्त परेशान हो गये। उनका ज़िक्र दूसरी आयत:

وَعَلَى الثَّلَاثَةِ الَّذِينَ خَلَفُوا.

(यानी आयत 118) में हुआ है, जिसमें आखिरकार उनकी तौबा के कुबूल होने का बयान है, और इसके साथ ही उनसे बायकाट का हुक्म ख़त्म कर दिया गया:

لَقَدْ تَابَ اللَّهُ عَلَى النَّبِيِّ وَالْمُهَاجِرِينَ وَالْأَنْصَارِ الَّذِينَ اتَّبَعُوهُ فِي سَاعَةِ الْعُسْرَةِ.

“यानी अल्लाह तआला ने तौबा कुबूल कर ली, नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) और उन मुहाजिरीन व अन्सार की जिन्होंने तंगी और तकलीफ़ के वक़्त नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की पैरवी की।”

यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि तौबा तो गुनाह व नाफ़रमानी की वजह से होती है।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इससे मासूम (सुरक्षित) हैं, उनकी तौबा कुबूल करने का क्या मतलब है? इसके अलावा मुहाजिरीन व अन्सार में जो सहाबा शुरू ही से जिहाद के लिये तैयार हो गये उन्होंने भी कोई कसूर नहीं किया था, उनकी तौबा किस जुर्म की थी जो कुबूल की गयी? जवाब यह है कि अल्लाह तआला ने उन सब को गुनाह से बचा दिया, इसी को तौबा के नाम से ताबीर किया गया, या यह कि इन सब हज़रात को हक़ तआला ने तव्बाब (तौबा करने वाला) बना दिया, इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि तौबा की हाज़त व ज़रूरत से कोई शख्स बेपरवाह नहीं, यहाँ तक कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आपके मख़सूस सहाबा भी, जैसा कि एक दूसरी आयत में है:

وَتَوْبُوا إِلَى اللَّهِ جَمِيعًا.

“यानी तौबा करो अल्लाह से सब के सब।”

वजह यह है कि अल्लाह की निकटता के दर्जे बेशुमार और असीमित हैं, जो शख्स जिस मक़ाम पर पहुँचा है उससे आगे भी उससे बुलन्द मक़ाम है, जिसके मुकाबले में मौजूदा मक़ाम पर रुक जाना एक नुक्स व कोताही है। मौलाना रूमी रह. ने इसी मज़मून को एक शेर में इस तरह बयान फ़रमाया है:

ऐ बिरादर बेनिहायत दुरगहेस्त हर चे बरवे मी रसी बरवे भायेस्त

इस लिहाज़ से मौजूदा मक़ाम पर होने से तौबा की ज़रूरत है, ताकि अगला मक़ाम हासिल हो सके।

‘साअतिल्-उसरति’। इसी जिहाद के मौक़े को क़ुरआने करीम ने साअतिल्-उसरति से ताबीर किया है, क्योंकि मुसलमान उस वक़्त गुर्बत और तंगी में थे। हज़रत हसन बसरी रह. फ़रमाते हैं कि दस आदमियों के लिये एक सवारी थी जिस पर नम्बर वार सवार होते थे, सफ़र का तोशा (खाने-पीने का सामान) भी बहुत कम और मामूली था। दूसरी तरफ़ गर्मी सख़्त व शदीद थी, ग़नी भी रास्तों में कहीं कहीं और थोड़ा था।

مِنْ بَعْدِ مَا كَادَ يَزِيغُ قُلُوبُ فَرِيقٍ مِنْهُمْ.

इसमें जो कुछ लोगों के दिलों का ‘ज़ैग़’ बयान किया गया है इससे मुराद दीन से विमुख होना नहीं बल्कि मौसम की सख़्ती और सामान की कमी के सबब हिम्मत हार देना और जिहाद से जान चुराना है। हदीस की रिवायतें इस पर सुबूत हैं, इसी कसूर से उनकी तौबा कुबूल की गयी।

وَعَلَى الثَّلَاثَةِ الَّذِينَ خَلَفُوا.

इसमें “खुल्लिफू” के लफ़्ज़ी मायने यह हैं कि जो पीछे छोड़ दिये गये। मुराद यह है कि उनकी तौबा का मामला लेट किया गया। ये तीन हज़रात- हज़रत कअब बिन मालिक शायर, अरत मुरास बिन रबीअ और हज़रत हिलाल बिन उमैया रज़ियल्लाहु अन्हुम हैं। तीनों अन्सारी ज़ुर्ग़ थे, जो इससे पहले बैअत-ए-अक़बा और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ

दूसरी जंगों में शरीक रह चुके थे, मगर इस वक़्त इत्तिफ़ाकी तौर से इस चूक और ग़लती में मुक्तला हो गये और मुनाफ़िक लोग जो इस जिहाद में अपने निफ़ाक की वजह से शरीक नहीं हुए थे उन्होंने भी इनको ऐसे ही मशिवरे दिये जिससे इनकी हिम्मत टूट गयी, मगर जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इस जिहाद से वापस आये तो उन सब मुनाफ़िकों ने हाज़िर होकर झूठे बहाने और मजबूरियाँ पेश करके और झूठी कसमें खाकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को राज़ी करना चाहा, हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनकी अन्दर की हालत को अल्लाह के सुपुर्द किया और जाहिरी कसमों को कुबूल कर लिया। ये लोग आराम से रहने लगे, कुछ लोगों ने इन तीनों अन्सारी बुजुर्गों को भी यही मशिवरा दिया कि तुम भी झूठे उज़्र करके अपनी सफ़ाई पेश कर दो, मगर इनके दिलों ने मलामत की कि एक गुनाह तो जिहाद से पीछे रह जाने का कर चुके हैं अब दूसरा गुनाह हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने झूठ बोलने का करें, इसलिये साफ़-साफ़ अपने कसूर का इक़रार कर लिया, जिसकी सज़ा में इनसे सलाम व कलाम का बायकाट जारी किया गया। अन्जाम यह हुआ कि अल्लाह तआला ने कुरआन में उन सब की हकीकत खोल दी, झूठी कसमें खाकर उज़्र करने वालों का पर्दा फ़ाश कर दिया, जिसका जिक़्र और उनके बुरे अन्जाम का हाल इससे पहली कई आयतों में:

يَعْتَذِرُونَ إِلَيْكُمْ إِذَا رَجَعْتُمْ إِلَيْهِمْ عَلَيْهِمْ ذَاتُ السُّوءِ

तक बयान हुआ है। और इन तीन बुजुर्गों ने जो सच बोला और अपनी ख़ता का इक़रार किया, इनकी तौबा इस आयत में नाज़िल हुई। और पचास दिन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बेतवज्जोही बरतने और सहाबा किराम के सलाम व कलाम के बायकाट की इन्तिहाई सख़्त मुसीबत झेलने के बाद बड़ी इज़्ज़त और मुबारकबादों के साथ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सब मुसलमानों में मक़बूल हुए।

इन तीनों अन्सारी बुजुर्गों के वाकिए की तफ़सील सही हदीसों की रोशनी में

बुख़ारी व मुस्लिम और हदीस की अक्सर किताबों में इस वाकिए के मुताल्लिक हज़रत कअब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु की एक लम्बी हदीस लिखी गयी है, जो बहुत से फ़ायदों और मसाल्ल व हक़ाईक़ पर मुश्तमिल है, इसलिये मुनासिब मालूम हुआ कि उसका पूरा तर्जुमा यहाँ नक़ल कर दिया जाये। इन तीन बुजुर्गों में से एक कअब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु थे उन्होंने अपने वाकिए की तफ़सील इस तरह बतलाई है कि:

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जितने ग़ज़वात (इस्लामी जंगों) में शिक़त की मैं उन सब में सिवाय ग़ज़वा-ए-तबूक के आपके साथ शरीक रहा, अलबत्ता ग़ज़वा-ए-बदर का वाक़िआ चूँकि अचानक पेश आया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सब को उसमें शरीक होने का हुक्म भी नहीं दिया था और शरीक न होने वालों पर कोई नाराज़गी भी नहीं

फरमाई थी, उसमें भी शरीक न हो सका था, और मैं लैलतुल-अक़बा की बैअत में भी हाज़िर था, जिसमें हमने इस्लाम की हिमायत व हिफ़ाज़त का अहद किया था, और मुझे यह बैअत अक़बा की हाज़िरी ग़ज़वा-ए-बदर की हाज़िरी से भी ज़्यादा महबूब है, अगरचे ग़ज़वा-ए-बदर लोगों में ज़्यादा मशहूर है और मेरा वाकिआ ग़ज़वा-ए-तबूक में ग़ैर-हाज़िरी का यह है कि मैं किसी वक़्त भी उस वक़्त से ज़्यादा खुशहाल और मालदार न था। खुदा की क़सम मेरे पास कभी उससे पहले दो सवारियाँ जमा नहीं हुई थीं, जो उस वक़्त मौजूद थीं।

और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की आदत शरीफ़ ग़ज़वात (जंगों और मुहिमों) के मामले में यह थी कि मदीना से निकलने के वक़्त अपने इरादे को गोपनीय रखने के लिये ऐसा करते थे कि जिस दिशा में जाकर जिहाद करना होता मदीने से उसकी विपरीत दिशा को निकलते थे, ताकि मुनाफ़िक लोग मुखबिरी करके मुकाबिल फ़रीक़ को आगाह न कर दें, और फरमाया करते थे कि जंग में (इस तरह का) फ़रेब देना जायज़ है।

यहाँ तक कि यह ग़ज़वा-ए-तबूक का वाकिआ पेश आया (यह जिहाद कई वजह से एक अलग हैसियत रखता था) -

1. आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सख़्त गर्मी और तंगदस्ती की हालत में इस जिहाद का इरादा फरमाया।

2. सफ़र भी बड़ी दूर का था।

3. मुकाबले पर दुश्मन की ताक़त और संख्या बहुत ज़्यादा थी, इसलिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस जिहाद का खुलकर ऐलान कर दिया ताकि मुसलमान इस जिहाद के लिये तैयार हो सकें।

इस जिहाद में शरीक होने वालों की तायदाद सही मुस्लिम की रिवायत के मुताबिक़ दस हज़ार से ज़ायद थी, और हाकिम की रिवायत हज़रत मुआज़ रज़ियल्लाहु अन्हु से यह है कि हम इस जिहाद में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ निकले तो हमारी तायदाद तीस हज़ार से ज़ायद थी।

और इस जिहाद में निकलने वालों की कोई फ़ेहरिस्त (सूची) नहीं लिखी गयी थी, इसलिये जो लोग जिहाद में जाना नहीं चाहते थे उनको यह मौक़ा मिल गया कि हम न गये तो किसी को ख़बर भी न होगी। जिस वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इस जिहाद के लिये निकले तो वह वक़्त था कि ख़जूरें पक रही थीं, बाग़ों वाले उनमें मशगूल थे, उसी हालत में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आम मुसलमानों ने सफ़र की तैयारी शुरू कर दी और जुमेरात के दिन आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस सफ़र का आगाज़ किया, और सफ़र के लिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जुमेरात का दिन पसन्द था, चाहे सफ़र जिहाद का हो या किसी दूसरे मक़सद का।

मेरा हाल यह था कि मैं रोज़ सुबह को इरादा करता कि जिहाद की तैयारी करूँ मगर बग़ैर किसी तैयारी के वापस आ जाता। मैं दिल में कहता था कि मैं जिहाद पर कादिर हूँ मुझे

निकलना चाहिये, मगर यूँ ही आज कल परसों में मेरा इरादा टलता रहा, यहाँ तक कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आम मुसलमान जिहाद के लिये रवाना हो गये, फिर भी मेरे दिल में यह आता रहा कि मैं भी रवाना हो जाऊँ और कहीं रास्ते में मिल जाऊँ, और काश कि मैं ऐसा कर लेता, मगर यह काम (अफसोस है कि) न हो सका।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के तशरीफ़ ले जाने के बाद जब मैं मदीने में कहीं जाता तो यह बात मुझे गमगीन करती थी कि उस वक़्त पूरे मदीने में या तो वे लोग नज़र पड़ते थे जो निफ़ाक़ में डूबे हुए थे, या फिर ऐसे बीमार माज़ूर जो कतई तौर पर सफ़र के काबिल न थे। दूसरी तरफ़ पूरे रास्ते में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मेरा ख़्याल कहीं नहीं आया यहाँ तक कि तबूक पहुँच गये, उस वक़्त आपने एक मजलिस में ज़िक्र किया कि कअब बिन मालिक को क्या हुआ (वह कहाँ है)?

बनू सलमा के लोगों में से एक शख्स ने कहा या रसूलुल्लाह! आपको जिहाद से उनके उम्दा लिबास और उस पर नज़र करते रहने ने रोका है। हज़रत मुआज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अन्हु ने अर्ज किया कि तुमने यह बुरी बात कही है, या रसूलुल्लाह! खुदा की क़सम मैंने उनमें ख़ैर के सिवा कुछ नहीं पाया। यह सुनकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ख़ामोश हो गये।

हज़रत कअब रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि जब मुझे यह ख़बर मिली कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम वापस तशरीफ़ ला रहे हैं तो मुझे बड़ी फ़िक्र हुई और करीब था कि मैं अपनी ग़ैर-हाज़िरी का कोई उज़्र (मजबूरी और बहाना) घबराकर तैयार कर लेता, और ऐसी बातें पेश कर देता जिनके ज़रिये मैं रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की नाराज़ी से बच जाता और इसके लिये अपने घर वालों और दोस्तों से भी मदद ले लेता (मेरे दिल में ये ख़्यालात और वस्वसे घूमते रहे) यहाँ तक कि जब यह ख़बर मिली कि हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ ले आये हैं तो बुरे ख़्यालात मेरे दिल से मिट गये और मैंने समझ लिया कि मैं आपकी नाराज़ी से किसी ऐसी बुनियाद पर नहीं बच सकता जिसमें झूठ हो, इसलिये मैंने बिल्कुल सच बोलने का इरादा कर लिया कि मुझे सिर्फ़ सच ही निजात दिला सकता है।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम वापस तशरीफ़ लाये तो (आदत के अनुसार) चाशत के वक़्त यानी सुबह को सूरज कुछ ऊँचा होने के वक़्त मदीना में दाख़िल हुए और आदत शरीफ़ यही थी कि सफ़र से वापसी का उमूमन यही वक़्त हुआ करता था, और आदत यह थी कि पहले मस्जिद में तशरीफ़ ले जाते, दो रकअतें पढ़ते, फिर हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा के पास जाते, उसके बाद अपनी बीवियों से मिलते थे।

इसी आदत के मुताबिक़ आप सबसे पहले मस्जिद में तशरीफ़ ले गये, दो रकअतें अदा कीं फिर मस्जिद में बैठ गये। जब लोगों ने यह देखा तो ग़ज़वा-ए-तबूक में न जाने वाले मुनाफ़िक़ जिनकी संख्या अस्सी से कुछ ऊपर थी ख़िदमत में हाज़िर होकर झूठे उज़्र (मजबूरी और बहाने) पेश करके उस पर झूठी क़समें खाने लगे, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनके जाहिरी कौल व क़रार और क़समों को कुबूल कर लिया, और उनको बैअत कर लिया, उनके

लिये दुआ-ए-मग़फ़िरत फ़रमाई और उनके अन्दर के हालात को अल्लाह के सुपुर्द किया।

इसी हाल में मैं भी हाज़िरे ख़िदमत हो गया और चलते-चलते सामने जाकर बैठ गया। जब मैंने सलाम किया तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ऐसा तबस्सुम फ़रमाया (यानी मुस्कुराये) जैसे नाराज़ आदमी कभी किया करता है। और कुछ रिवायतों में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपना रुख़ फेरे लिया, तो मैंने अर्ज़ किया या रसूलुल्लाह! आप मुझसे चेहरा-ए-मुबारक क्यों फेरते हैं, खुदा की क़सम! मैंने निफ़ाक़ नहीं किया, न दीन के मामले में किसी शुब्हे व शक़ में मुब्तला हुआ, न उसमें कोई तब्दीली की। आपने फ़रमाया कि फिर जिहाद में क्यों नहीं गये? क्या तुमने सवारी नहीं ख़रीद ली थी?

मैंने अर्ज़ किया बेशक़ या रसूलुल्लाह! अगर मैं आपके सिवा दुनिया के किसी दूसरे आदमी के सामने बैठता तो मुझे यकीन है कि मैं कोई उज़्र गढ़कर उसकी नाराज़ी से बच जाता, क्योंकि मुझे बहस करने और बात बनाने में महारत हासिल है, लेकिन क़सम है अल्लाह की कि मैंने यह समझ लिया है कि अगर मैंने आप से कोई झूठी बात कही जिससे आप वक़्ती तौर पर राज़ी हो जायें तो कुछ दूर नहीं कि अल्लाह तआला असल हकीकत आप पर खोलकर मुझसे नाराज़ कर देंगे, और अगर मैंने सच्ची बात बतला दी जिससे इस वक़्त आप मुझ पर नाराज़ हों तो मुझे उम्मीद है कि अल्लाह तआला मुझे माफ़ फ़रमा देंगे। सही बात यह है कि जिहाद से ग़ायब रहने में मेरा कोई उज़्र (मजबूरी और बहाना) नहीं था, मैं किसी वक़्त भी माली और जिस्मानी तौर पर इतना मज़बूत और पैसे वाला नहीं हुआ था जितना इस वक़्त था।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि इस शख्स ने तो सच बोला है। फिर फ़रमाया कि अच्छा जाओ यहाँ तक अल्लाह तआला तुम्हारे मुताल्लिक़ कोई फैसला फ़रमा दें। मैं वहाँ से उठकर चला तो बनू सलमा के चन्द आदमी मेरे पीछे लगे और कहने लगे कि इससे पहले तो हमारे इल्म में तुमने कोई गुनाह नहीं किया, यह तुमने क्या बेवक़ूफी की कि इस वक़्त कोई उज़्र पेश कर देते जैसा दूसरे पीछे रह जाने वालों ने पेश किये, और तुम्हारे गुनाह की माफ़ी के लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इस्तिग़फ़ार करना काफी हो जाता। खुदा की क़सम ये लोग मुझे बार-बार मलामत करते रहे यहाँ तक कि मेरे दिल में यह ख़याल आ गया कि मैं लौट जाऊँ और फिर जाकर अर्ज़ करूँ कि मैंने जो बात पहले कही थी वह ग़लत थी, मेरा सही उज़्र (मजबूरी) मौजूद था।

मगर फिर मैंने दिल में कहा कि मैं एक गुनाह के दो गुनाह न बनाऊँ, एक गुनाह तो जिहाद में ग़ैर-हाज़िर रहने का हो चुका है दूसरा गुनाह झूठ बोलने का कर गुज़रूँ। फिर मैंने उन लोगों से पूछा कि जिहाद से पीछे रह जाने वालों में कोई और भी मेरे साथ है, जिसने अपने जुर्म का इक़रार कर लिया हो? उन लोगों ने बतलाया कि दो आदमी और हैं जिन्होंने तुम्हारी तरह जुर्म का इक़रार कर लिया और उनको भी वही जवाब दिया गया जो तुम्हें कहा गया है (कि अल्लाह के फैसले का इन्तिज़ार करो)। मैंने पूछा कि वे दो कौन हैं? उन्होंने बतलाया कि एक मुरारा इब्ने रबीअ उमरी, दूसरे हिलाल बिन उमैया वाकिफ़ी हैं।

इब्ने अबी हातिम की रिवायत में है कि इनमें से पहले (यानी मुरारा रज़ियल्लाहु अन्हु) के जिहाद में ग़ैर-हाज़िर रहने का तो सबब यह हुआ कि उनका एक बाग़ था जिसका फल उस वक़्त पक रहा था, तो उन्होंने अपने दिल में कहा कि तुमने इससे पहले बहुत से ग़ज़वात (इस्लामी जंगों और जिहादों) में हिस्सा लिया है, अगर इस साल जिहाद में न जाओ तो क्या जुर्म है। उसके बाद जब वह अपने गुनाह पर चेतें तो उन्होंने अल्लाह से अहद कर लिया कि यह बाग़ मैंने अल्लाह की राह में सदका कर दिया।

और दूसरे बुजुर्ग हज़रत हिलाल बिन उमैया का यह वाकिआ हुआ कि उनके अहल व अयाल (बीवी बच्चे) लम्बी मुद्दत से बिखरे हुए थे, इस मौक़े पर सब जमा हो गये तो यह ख़्याल किया कि इस साल में जिहाद में न जाऊँ, अपने बाल-बच्चों में बसर करूँ। उनको भी जब अपने गुनाह का ख़्याल आया तो उन्होंने यह अहद किया कि अब मैं अपने बीवी-बच्चों से अलैहदगी इख़्तियार कर लूँगा।

हज़रत कअब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु फरमाते हैं कि उन लोगों ने ऐसे दो बुजुर्गों का ज़िक्र किया जो ग़ज़वा-ए-बदर के मुजाहिदीन में से हैं, तो मैंने कहा कि बस मेरे लिये उन्हीं दोनों बुजुर्गों का अमल काबिले पैरवी है। यह कहकर मैं अपने घर चला गया।

उधर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम को हम तीनों के साथ सलाम कलाम करने से मना फ़रमा दिया, उस वक़्त हम तो सब मुसलमानों से बदस्तूर मुहब्बत करते थे मगर उन सब का रुख़ हमसे फिर गया था।

इब्ने अबी शैबा की रिवायत में है कि अब हमारा हाल यह हो गया कि हम लोगों के पास जाते तो कोई हम से कलाम न करता, न सलाम करता न सलाम का जवाब देता।

मुस्नद अब्दुर्रज़ाक में है कि उस वक़्त हमारी दुनिया बिल्कुल बदल गयी, ऐसा मालूम होने लगा कि न वे लोग हैं जो पहले थे न हमारे बाग़ और मकान वो हैं जो पहले थे, सब अजनबी नज़र आने लगे। मुझे सबसे बड़ी फ़िक्र यह थी कि अगर मैं इस हाल में मर गया तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मेरे जनाज़े की नमाज़ न पढ़ेंगे, या खुदा न ख़्यास्ता इस अरसे में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात हो गयी तो मैं उम्रभर इसी तरह सब लोगों में ज़लील व रुस्वा फिरता रहूँगा। इसकी वजह से मेरे लिये सारी ज़मीन बेगानी और वीरानी नज़र आने लगी। इसी हाल में हम पर पचास रातें गुज़र गयीं, उस ज़माने में मेरे दोनों साथी (मुरारा और हिलाल) तो टूटे दिल से घर में बैठ रहे और रात दिन रोते थे, लेकिन मैं जवान आदमी था, बाहर निकलता और चलता फिरता था, और नमाज़ में सब मुसलमानों के साथ शरीक होता था और बाज़ारों में फिरता था, मगर न कोई मुझसे कलाम करता न मेरे सलाम का जवाब देता। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मज्लिस में नमाज़ के बाद हाज़िर होता और सलाम करता तो यह देखा करता था कि आपके होंठ मुबारक को सलाम के जवाब के लिये हरकत हुई या नहीं, फिर मैं आपके करीब ही नमाज़ पढ़ता तो नज़र चुराकर आपकी तरफ़ देखता, तो मालूम होता कि जब मैं नमाज़ में मशगूल हो जाता हूँ तो आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मेरी

तरफ़ देखते हैं और जब मैं आपकी तरफ़ देखता हूँ तो रुख़ फेर लेते हैं।

जब लोगों की यह बेवफ़ाई लम्बी हुई तो एक दिन मैं अपने चचाज़ाद भाई हज़रत क़तादा के पास गया जो मेरे सब से ज़्यादा दोस्त थे, मैं उनके बाग़ में दीवार फाँदकर दाख़िल हुआ और उनको सलाम किया। खुदा की क़सम! उन्होंने भी मेरे सलाम का जवाब न दिया, मैंने पूछा कि ऐ क़तादा! क्या तुम नहीं जानते कि मैं अल्लाह तआला और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मुहब्बत रखता हूँ। इस पर भी क़तादा ने चुप्पी साधे रखी, कोई जवाब नहीं दिया। जब मैंने बार-बार यह सवाल दोहराया तो तीसरी या चौथी मर्तबा मैं उन्होंने सिर्फ़ इतना कहा कि अल्लाह जानता है और उसका रसूल। मैं रो पड़ा और उसी तरह दीवार फाँदकर बाग़ से बाहर आ गया। उसी ज़माने में एक दिन मैं मदीना के बाज़ार में चल रहा था कि अचानक मुल्क शाम का एक नब्ती शख्स जो गुल्ला फ़रोख़्त करने के लिये शाम से मदीना में आया था, उसको देखा कि लोगों से पूछ रहा है कि क्या कोई मुझे क़अब बिन मालिक का पता बता सकता है? लोगों ने मुझे देखकर मेरी तरफ़ इशारा किया। वह आदमी मेरे पास आ गया और मुझे गुस्तान के बादशाह का एक ख़त दिया जो एक रेशमी रुमाल पर लिखा हुआ था, जिसका मज़मून यह था:

“अम्मा बाद! मुझे यह ख़बर मिली है कि आपके नबी ने आप से बेवफ़ाई की और आपको दूर कर रखा है, अल्लाह तआला ने तुम्हें ज़िल्लत और हलाकत की जगह में नहीं रखा है, तुम अगर हमारे यहाँ आना पसन्द करो तो आ जाओ, हम तुम्हारी मदद करेंगे।”

मैंने जब यह ख़त पढ़ा तो कहा कि यह और एक मेरा इम्तिहान और आजमाईश आई कि कुफ़्र वालों को मुझसे इसकी अपेक्षा और उम्मीद हो गयी (कि मैं उनके साथ मिल जाऊँ)। मैं यह ख़त लेकर आगे बढ़ा, एक दुकान पर तन्दूर लगा हुआ था, उसमें झोंक दिया।

हज़रत क़अब रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि जब पचास में से चालीस रातें गुज़र चुकी थीं तो अचानक देखा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के एक क़ासिद खुज़ैमा बिन साबित मेरे पास आ रहे हैं, आकर यह कहा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह हुक्म दिया है कि तुम अपनी बीवी से भी अलैहदगी इख़्तियार कर लो। मैंने पूछा कि क्या तलाक़ दे दूँ या क्या करूँ? उन्होंने बतलाया कि नहीं अमलन उससे अलग रहो, करीब न जाओ। इसी तरह का हुक्म मेरे दोनों साथियों के पास भी पहुँचा। मैंने बीवी से कह दिया कि तुम अपने मायके में चली जाओ और वहीं रहो जब तक अल्लाह तआला कोई फ़ैसला फ़रमायें।

हिलाल बिन उमैया की बीवी ख़ौला बन्ते आसिम यह हुक्म सुनकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुई और अर्ज किया कि हिलाल बिन उमैया! एक बूढ़े कमज़ोर आदमी हैं और कोई उनका ख़ादिम नहीं। इन्हे अबी शैबा की रिवायत में यह भी है कि व्हं निगाह के कमज़ोर भी हैं, क्या आप यह पसन्द नहीं फ़रमायेंगे कि मैं उनकी ख़िदमत करती रहूँ? फ़रमाया कि ख़िदमत करने की मनाही नहीं, अलबत्ता वह तुम्हारे पास न जायें। उन्होंने अर्ज किया कि वह तो बुढ़ापे की वजह से ऐसे हो गये हैं कि उनमें कोई हरकत ही नहीं, और अल्लाह की क़सम उन पर लगातार रोना तारी है, रात दिन रोते रहते हैं।

कअब बिन मालिक रजियल्लाहु अन्हु फरमाते हैं कि मुझे भी मेरे कुछ संबन्धियों ने मश्विरा दिया कि तुम भी हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से बीवी को साथ रखने की इजाजत ले लो जैसा कि आपने हजरत हिलाल को इजाजत दे दी है। मैंने कहा कि मैं ऐसा नहीं करूँगा, मालूम नहीं रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम क्या जवाब दें। इसके अलावा मैं जवान आदमी हूँ (बीवी को साथ रखना एहतियात के खिलाफ है)। चुनाँचे इसी हाल पर मैंने दस रातें और गुजारीं, यहाँ तक कि पचास रातें मुकम्मल हो गयीं। मुस्नद अब्दुर्रज्जाक की रिवायत में है कि उस वक्त हमारी तौबा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर एक तिहाई रात गुजरने के वक्त नाज़िल हुई। उम्मुल-भोमिनीन हजरत उम्मे सलमा रजियल्लाहु अन्हु जो उस वक्त हाज़िर थीं उन्होंने अर्ज किया कि इजाजत हो तो कअब बिन मालिक को इसी वक्त इसकी खबर कर दी जाये। आपने फरमाया कि ऐसा हुआ तो अभी लोगों का हुजूम हो जायेगा, रात की नींद मुश्किल हो जायेगी।

हजरत कअब बिन मालिक रजियल्लाहु अन्हु फरमाते हैं कि पचासवीं रात के बाद सुबह की नमाज़ पढ़कर मैं अपने घर की छत पर बैठा था और हालत वह थी जिसका जिक्र अल्लाह तआला ने कुरआन में किया है कि मुझ पर मेरी जान और ज़मीन बावजूद वुस्अत के तंग हो चुकी थी। अचानक मैंने सलअ पहाड़ के ऊपर से किसी चिल्लाने वाले आदमी की आवाज़ सुनी जो बुलन्द आवाज़ से कह रहा था कि ऐ कअब बिन मालिक! खुशखबरी हो।

मुहम्मद बिन अमर की रिवायत में है कि यह बुलन्द आवाज़ से कहने वाले अबू बक्र थे जिन्होंने सलअ पहाड़ पर चढ़कर यह आवाज़ लगाई कि अल्लाह तआला ने कअब की तौबा कुबूल फरमा ली, खुशखबरी हो। और उक्बा की रिवायत में यह है कि यह खुशखबरी हजरत कअब रजियल्लाहु अन्हु को सुनाने के लिये दो आदमी दौड़े, उनमें से एक आगे बढ़ गया तो जो पीछे रह गया था उसने यह किया कि सलअ पहाड़ पर चढ़कर आवाज़ दे दी, और कहा जाता है कि यह दौड़ने वाले दो बुजुर्ग हजरत अबू बक्र सिदीक और हजरत फारुके आजम थे।

कअब बिन मालिक रजियल्लाहु अन्हु फरमाते हैं कि यह आवाज़ सुनकर मैं सज्दे में गिर गया और बेइन्तिहा खुशी से रोने लगा, और मुझे मालूम हो गया कि अब आसानी और सहूलत आ गयी। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सुबह की नमाज़ के बाद सहाबा-ए-किराम को हमारी तौबा कुबूल होने की खबर दी थी, अब सब तरफ से लोग हम तीनों को मुबारकबाद देने के लिये दौड़ पड़े। कुछ लोग घोड़े पर सवार होकर मेरे पास पहुँचे मगर पहाड़ से आवाज़ देने वाले की आवाज़ सब से पहले पहुँच गयी।

कअब बिन मालिक रजियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि मैं रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में हाज़िरी के लिये निकला तो लोग झुण्ड के झुण्ड मुझे मुबारकबाद देने के लिये आ रहे थे। कअब रजियल्लाहु अन्हु फरमाते हैं कि मैं मस्जिदे नबवी में दाखिल हुआ तो देखा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ रखते हैं। आपके गिर्द सहाबा-ए-किराम का मजमा है, मुझे देखकर सबसे पहले तल्हा बिन उबैदुल्लाह खड़े होकर मेरी तरफ़ लपके और मुझसे

मुसाफ़ा करके तौबा के कुबूल होने पर मुबारकबाद दी। तल्हा का यह एहसान मैं कभी नहीं भूलता। जब मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सलाम किया तो आपका चेहरा-ए-मुबारक खुशी की वजह से चमक रहा था। आपने फ़रमाया कि ऐ कअब! खुशख़बरी हो तुम्हें ऐसे मुबारक दिन की जो तुम्हारी उम्र में पैदाईश से लेकर आज तक सबसे ज्यादा बेहतर दिन है। मैंने अर्ज किया या रसूलुल्लाह! यह हुक्म आपकी तरफ़ से है या अल्लाह तआला की तरफ़ से? आपने फ़रमाया कि नहीं, यह हुक्म अल्लाह तआला का है। तुमने सच बोला था अल्लाह तआला ने तुम्हारी सच्चाई को ज़ाहिर फ़रमा दिया।

जब मैं आपके सामने बैठा तो अर्ज किया या रसूलुल्लाह! मेरी तौबा यह है कि मैं अपने सब माल व सामान से निकल जाऊँ, कि सब को अल्लाह की राह में सदका कर दूँ। आपने फ़रमाया नहीं! कुछ माल अपनी ज़रूरत के लिये रहने दो, यह बेहतर है। मैंने अर्ज किया कि अच्छा आधा माल सदका कर दूँ? आपने इससे भी इनकार फ़रमाया, मैंने फिर एक तिहाई माल की इजाज़त माँगी तो आपने इसको कुबूल फ़रमा लिया। मैंने अर्ज किया या रसूलुल्लाह! मुझे अल्लाह ने सच बोलने की वजह से निजात दी है इसलिये मैं अहद करता हूँ कि जब तक मैं जिन्दा हूँ कभी सच के सिवा कोई कलिमा नहीं बोलूँगा। फिर फ़रमाया कि जब से मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से यह सच बोलने का अहद किया था अल्हम्दु लिल्लाह कि आज तक कोई कलिमा झूठ का मेरी ज़बान पर नहीं आया, और मुझे उम्मीद है कि अल्लाह तआला बाकी जिन्दगी में मुझे उससे महफ़ूज़ रखेंगे। हज़रत कअब फ़रमाते हैं कि खुदा की कसम! इस्लाम के बाद इससे बड़ी नेमत मुझे नहीं मिली कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने सच बोला, झूठ से परहेज़ किया, क्योंकि अगर मैं झूठ बोलता तो इसी तरह हलाकत में पड़ जाता जिस तरह दूसरे झूठी कसमें खाने वाले हलाक हुए, जिनके बारे में क़ुरआन में यह नाज़िल हुआ:

سَيَحْلِقُونَ بِاللّٰهِ لَكُمْ اِذَا اُنْقَلَبْتُمْ اِلَيْهِمْ فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يَرْضٰى عَنِ الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ ۝

कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इन तीनों हज़रात से सलाम-कलाम का बायकाट पचास दिन तक जारी रहना शायद इस हिक्मत पर आधारित था कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ग़ज़वा-ए-तबूक में पचास दिन ही खर्च हुए थे (यह पूरी रिवायत और तफ़्सीली वाकिआ तफ़्सीरे मज़हरी से लिया गया है)।

हज़रत कअब बिन मालिक की हदीस से संबन्धित फ़ायदे

हज़रत कअब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु ने अपने वाकिए को जिस तफ़्सील व विस्तार से बयान फ़रमाया है इसमें मुसलमानों के लिये बहुत से फ़ायदे और हिदायतें हैं। इसी लिये इस जगह इस हदीस को पूरा लिखा गया है। वो फ़ायदे ये हैं:

1. इस हदीस में बतलाया गया है कि हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की जंग में जाने की आ़ाम आदत यह थी कि जिस तरफ़ जाना होता उसकी विपरीत दिशा से मदीना तय्यिबा

से खाना होते, ताकि इस्लाम के मुखालिफों को यह मालूम न हो कि आप किस कौम या कबीले के जिहाद के लिये जा रहे हैं। इसी को आपने फरमाया:

الْحَرْبُ خُدَاعٌ

यानी जंग में धोखा देना जायज़ है। इससे कुछ लोग इस मुग़ालते में पड़ जाते हैं कि जंग व जिहाद में झूठ बोलकर मुखालिफ़ को धोखा देना जायज़ है। यह सही नहीं, बल्कि मुराद इस धोखे से यह है कि अपना अमल ऐसा करे जिससे मुखालिफ़ लोग धोखे में पड़ जायें, जैसे जिहाद के लिये विपरीत दिशा से निकलना। खुला झूठ बोलकर धोखा देना मुराद नहीं, वह जंग में भी जायज़ नहीं। इसी तरह यह भी समझ लेना चाहिये कि यह अमली धोखा जिसको जायज़ करार दिया है इसका कोई ताल्लुक अहद व समझौते से नहीं, और अहद का तोड़ना सुलह हो या जंग किसी हाल में जायज़ नहीं।

2. सफ़र के लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जुमेरात का दिन पसन्द था, चाहे सफ़र जिहाद का हो या किसी दूसरी ज़रूरत का।

3. अपने किसी बुजुर्ग, मुर्शिद, उस्ताद या बाप को राज़ी करने के लिये झूठ बोलना जायज़ भी नहीं और उसका अन्जाम भी अच्छा नहीं। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को तो असल हकीकत का इल्म वही के ज़रिये हो जाता था, इसलिये झूठ बोलने का बुरा अन्जाम था जैसा कि कअब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु और दूसरे जंग में पीछे रह जाने वालों के उक्त वाकिए से वाज़ेह हुआ, आपके बाद दूसरे बुजुर्गों को वही तो हो नहीं सकती, इल्हाम व कश्फ़ से इल्म हो जाना भी ज़रूरी नहीं, लेकिन तजुर्बा गवाह है कि झूठ बोलने की एक नहसत होती है कि कुदरती तौर पर ऐसे असबाब जमा हो जाते हैं कि आखिरकार यह बुजुर्ग उससे नाराज़ हो ही जाता है।

4. इस वाकिए से मालूम हुआ कि किसी गुनाह की सज़ा में मुसलमानों के अमीर को यह भी हक़ है कि किसी शख्स से सलाम व कलाम बन्द कर देने का हुक्म दे दे, जैसे इस वाकिए में इन तीन बुजुर्गों के मुताल्लिक पेश आया।

5. इस वाकिए से सहाबा-ए-किराम की रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ इन्तिहाई मुहब्बत मालूम हुई कि इस नाराज़ी और सलाम व कलाम के बायकाट के ज़माने में भी मुहब्बत से हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में हाज़िरी भी नहीं छोड़ी और कन-अंखियों से देखकर आपकी तवज्जोह और ताल्लुक का हाल मालूम करने की फ़िक्र रही।

6. हज़रत कअब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु के गहरे दोस्त हज़रत क़तादा रज़ियल्लाहु अन्हु का मामला, कि उनके सलाम का जवाब न दिया और कोई कलाम न किया। ज़ाहिर है कि यह किसी दुश्मनी व मुखालफ़त या नफ़रत से नहीं बल्कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हुक्म की तामील की वजह से था, इससे मालूम हुआ कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का बनाया हुआ कानून सिर्फ़ लोगों के ज़ाहिर पर नाफ़िज़ न होता था बल्कि दिलों पर भी

उसकी हुकूमत होती थी, और हाज़िर व ग़ायब किसी हाल में उसके खिलाफ़ न करते थे अगरचे उसमें किसी बड़े से बड़े दोस्त अज़ीज़ के खिलाफ़ ही हो।

7. हज़रत क़अब रज़ियल्लाहु अन्हु के पास गुस्तान के बादशाह का ख़त आने और उसको तन्दूर में डालने के वाकिए से सहाबा-ए-किराम के ईमान की हद से ज़्यादा पुख़्तगी मालूम हुई कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और तमाम मुसलमानों के बायकाट से सख़्त परेशान होने के आलम में भी एक बड़े बादशाह के लालच दिलाने से उनके दिल में कोई मैलान व रुज़ान पैदा नहीं हुआ।

8. तौबा कुबूल होने का ऐलान नाज़िल होने के बाद हज़रत सिद्दीक़े अक़बर रज़ियल्लाहु अन्हु और फारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु और आ़म सहाबा-ए-किराम का क़अब बिन मालिक को खुशख़बरी देने के लिये दौड़ना और उससे पहले सब का सलाम व कलाम तक से सख़्त परहेज़ करना यह ज़ाहिर करता है कि बायकाट के ज़माने में भी उन सब के दिलों में हज़रत क़अब से मुहब्बत और ताल्लुक़ था, मगर रसूले पाक के हुक्म के सामने सब कुछ छोड़ा हुआ था। जब तौबा की आयत नाज़िल हुई तो उनके गहरे ताल्लुक़ का अन्दाज़ा हुआ।

9. सहाबा-ए-किराम का हज़रत क़अब रज़ियल्लाहु अन्हु को खुशख़बरी देने और मुबारकबाद के लिये जाने से मालूम हुआ कि किसी खुशी के मौक़े पर अपने दोस्त अहबाब को मुबारकबाद देना सुन्नत से साबित है।

10. किसी गुनाह से तौबा के वक़्त माल का सदका करना गुनाह के असर को दूर करने के लिये बेहतर है, मगर तमाम माल ख़ैरात कर देना अच्छा नहीं, एक तिहाई माल से ज़ायद सदका करना रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पसन्द नहीं फ़रमाया।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اتَّقُوا اللَّهَ وَكُونُوا مَعَ الصّٰدِقِينَ ٥

पहले बयान हुई आयतों में जो जिहाद से पीछे और ग़ैर-हाज़िर रहने का वाक़िआ कुछ पीछे रह जाने वालों की तरफ़ से पेश आया, फिर उनकी तौबा कुबूल हुई, यह सब नतीजा उनके तक़वे और अल्लाह से ख़ौफ़ का था, इसलिये इस आयत में आ़म मुसलमानों को तक़वे (परहेज़गारी) के लिये हिदायत फ़रमाई गयी, और 'कूनू मअस्सादिकीन' में इस तरफ़ इशारा फ़रमाया गया कि तक़वे की सिफ़त हासिल होने का तरीका नेक और सच्चे लोगों की सोहबत और अमल में उनकी मुवाफ़क़त है। इसमें शायद यह इशारा भी हो कि जिन हज़रात से यह चूक और भूल हुई इसमें मुनाफ़िकों की सोहबत, पास बैठने और उनके मश्वरे को भी दख़ल था, अल्लाह के नाफ़रमानों की सोहबत से बचना चाहिये और सच्चे लोगों की सोहबत इख़्तियार करनी चाहिये। इस जगह कुरआने हकीम ने उलेमा और नेक लोगों के बजाये सादिकीन (सच्चों) का लफ़्ज़ इख़्तियार फ़रमाकर आ़लिम व नेक की पहचान भी बतला दी है कि नेक सिर्फ़ वही शख्स हो सकता है जिसका ज़ाहिर व बातिन एक जैसा हो, नीयत व इरादे का भी सच्चा हो, कौल का भी सच्चा हो, अमल का भी सच्चा हो।

مَا كَانَ لِأَهْلِ الْمَدِينَةِ وَمَنْ حَوْلَهُمْ مِنَ الْأَعْرَابِ أَنْ يَتَخَلَّفُوا عَنْ رَسُولِ اللَّهِ
وَلَا يَرْغَبُوا بِأَنْفُسِهِمْ عَنْ نَفْسِهِ، ذَلِكَ بِأَنَّهُمْ لَا يُصِيبُهُمْ ظَمَأٌ وَلَا نَصَبٌ وَلَا مَخِصَةٌ فِي سَبِيلِ
اللَّهِ وَلَا يَطُؤْنَ مَوْطِئًا يَغِيظُ الْكُفَّارَ وَلَا يَنَالُونَ مِنْ عَدُوِّ ثِيلًا إِلَّا كُتِبَ لَهُمْ بِهِ عَمَلٌ صَالِحٌ
إِنَّ اللَّهَ لَا يُضَيِّعُ أَجْرَ الْمُحْسِنِينَ ۝ وَلَا يُنْفِقُونَ نَفَقَةً صَغِيرَةً وَلَا كَبِيرَةً وَلَا يَقْطَعُونَ وَادِيًا
إِلَّا كُتِبَ لَهُمْ لِيَجْزِيَهُمُ اللَّهُ أَحْسَنَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ۝

मा का-न लिअस्तिल्-मदीनति व मन्
हौ-लहुम् भिनल्-अअ-राबि
अंय्य-तखल्लफू अरसूलिल्लाहि व ला
यरगबू बिअन्फुसिहिम् अन्-नफिसही,
जालि-क बिअन्नहुम् ला युसीबुहुम्
ज-मउंव्-व ला न-सबुंव्-व ला
मख्म-सतुन् फी सबीलिल्लाहि व ला
य-तऊ-न मौतिअंय्यगीजुल्-कुफ्फा-र
व ला यनालू-न मिन् अदुव्विन्-नैलन्
इल्ला कुति-ब लहुम् बिही अ-मलुन्
सालिहुन्, इन्नल्ला-ह ला युज़ीअ
अजरल्-मुहिसनीन (120) व ला
युन्फिकू-न न-फ-कतन् सगी-रतंव्-
व ला कबी-रतंव्-व ला यक़तअ-न
वादियन् इल्ला कुति-ब लहुम्
लियज्जि-यहुमुल्लाहु अह्स-न मा
कानू यअमलून (121)

न चाहिए मदीने वालों को और उनके
आस-पास के गंवारों को कि पीछे रह
जायें रसूलुल्लाह के साथ से, और न यह
कि अपनी जान को चाहें ज्यादा रसूल की
जान से, यह इस वास्ते कि जिहाद करने
वाले नहीं पहुँचती उनको प्यास और न
मेहनत और न भूख अल्लाह की राह में
और नहीं कदम रखते कहीं जिससे कि
ख़फ़ा हों काफ़िर और न छीनते हैं दुश्मन
से कोई चीज़ मगर लिखा जाता है उनके
वास्ते इनके बदले नेक अमल, बेशक
अल्लाह नहीं ज़ाया करता हक़ नेकी करने
वालों का। (120) और न खर्च करते हैं
कोई खर्च छोटा और न बड़ा, और न तय
करते हैं कोई मैदान मगर लिख लिया
जाता है उनके वास्ते, ताकि बदला दे
उनको अल्लाह बेहतर उस काम का जो
करते थे। (121)

खुलासा-ए-तफ़सीर

मदीने के रहने वालों को और जो देहाती उनके आस-पास में (रहते) हैं उनको यह मुनासिब

न था कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) का साथ न दें, और न यह (चाहिए था) कि अपनी जान को उनकी जान से ज्यादा प्यारा समझें (कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तो तकलीफें सहें और ये आराम से बैठे रहें, बल्कि आपके साथ जाना ज़रूरी था और) यह (साथ जाने का ज़रूरी होना) इस सबब से है कि (रसूल की मुहब्बत का हक अदा करने के अलावा उन मुजाहिदीन को बात-बात पर सवाब हासिल हुआ है, अगर ये इख्लास के साथ जाते तो इनको भी यह मिलता। चुनाँचे) उनको अल्लाह की राह में जो प्यास लगी और जो थकान पहुँची और जो भूख लगी और जो चलना चले, जो काफ़िरों के लिये आक्रोश और गुस्से का सबब हुआ हो, और दुश्मनों की जो कुछ ख़बर ली, इन सब पर उनके नाम एक-एक नेक काम लिखा गया (इसके बावजूद कि इनमें से कुछ काम इख्तियारी नहीं बल्कि बेकरारी की हालत के हैं लेकिन मकबूलियत व महबूबियत के सबब उनको भी इख्तियारी आमाल की तरह अज़्र व सवाब वाला क़रार दिया गया, और इस वायदे में ख़िलाफ़वर्ज़ी होने का कोई शुब्हा नहीं क्योंकि) यकीनन अल्लाह तआला मुख़्लिस लोगों का अज़्र ज़ाया नहीं करते (पस वायदा कर लिया तो ज़ाया न होगा)। और (यह भी कि) जो कुछ छोटा या बड़ा उन्होंने खर्च किया और जितने मैदान उनको तय करने पड़े, यह सब भी उनके नाम (नेकियों में) लिखा गया ताकि अल्लाह उनको उनके (उन सब) कामों का अच्छे-से-अच्छा बदला दे (क्योंकि जब सवाब लिखा गया तो बदला मिलेगा)।

मआरिफ व मसाईल

इन दोनों आयतों में जिहाद में पीछे और ग़ैर-हाज़िर रह जाने वालों को उनके इस अमल पर तामत और फटकार लगाने और जिहाद में शरीक होने वालों के फ़ज़ाईल और जिहाद के सेलसिले में क़दम क़दम पर हर कौल व फ़ेल और हर मेहनत व मशक्कत पर बड़े अज़्र व बदले का ज़िक्र है, जिसमें जिहाद के वक़्त दुश्मन को कोई तकलीफ़ पहुँचा देना और ऐसी चाल चलना ज़ेससे उनका आक्रोश व गुस्सा बढ़े ये सब नेक आमाल अज़्र व सवाब का ज़रिया हैं।

وَمَا كَانَ الْمُؤْمِنُونَ لِيَنفِرُوا كَافَّةً ۚ فَلَوْلَا نَفَرَ مِن كُلِّ فِرْقَةٍ مِّنْهُمْ طَائِفَةٌ لِّيَتَفَقَّهُوا فِي الدِّينِ
وَلِيُنذِرُوا قَوْمَهُمْ إِذَا رَجَعُوا إِلَيْهِمْ لَعَلَّهُمْ يَحْذَرُونَ ٩

व मा कानल्-मुअ्मिनु-न लियन्फिरु
काफ्फ-तनु, फ़लौ ला न-फ-र मिन्
कुल्लि फि रक़्तिम् मिन्हुम्
ताइ-फ़तुल् लि-य-तफक्कहू फिद्दीनि
व लियुन्जिरु कौमहुम् इज़ा र-जअू

और ऐसे तो नहीं मुसलमान कि कूच करें
सारे, सो क्यों न निकला हर फ़िर्के में से
उनका एक हिस्सा ताकि समझ पैदा करें
दीन में और ताकि ख़बर पहुँचायें अपनी
कौम को जबकि-तौटकर आयें उनकी

खुलासा-ए-तफसीर

और (हमेशा के लिये) मुसलमानों को यह (भी) न चाहिए कि (जिहाद के लिये) सब-के-सब (ही) निकल खड़े हों (कि इसमें दूसरी इस्लामी ज़रूरतें ठप होती हैं) सो ऐसा क्यों न किया जाये कि उनकी हर बड़ी जमाअत में से एक छोटी जमाअत (जिहाद में) जाया करे (और कुछ अपने वतन में रह जाया करें) ताकि बाकी रहने वाले लोग (रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के वक़्त में आप से और आपके बाद शहर के उलेमा से) दीन की समझ-बूझ हासिल करते रहें, और ताकि ये लोग अपनी (उस) कौम को (जो कि जिहाद में गये हुए हैं) जबकि वे इनके पास वापस आएँ (दीन की बातें सुनाकर खुदा की नाफरमानी से) डराएँ। ताकि वे (इनसे दीन की बातें सुनकर बुरे कामों से) एहतियात रखें।

मआरिफ़ व मसाईल

सूर: तौबा में बड़ी अहमियत के साथ ग़ज़वा-ए-तबूक का ज़िक्र लगातार चला आया है, जिसमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ़ से आम ऐलान किया गया था कि सब मुसलमान उसमें शरीक हों। इस हुक्म की खिलाफ़वर्ज़ी बिना वास्तविक मजबूरी के जायज़ न थी, जो लोग खिलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) में मुब्तला हुए उनमें ज़्यादा तो मुनाफ़िक़ थे जिनका ज़िक्र बहुत सी आयतों में ऊपर आया है, कुछ पक्के-सच्चे मोमिन भी थे जो वक़्ती काहिली और सुस्ती के सबब रह गये थे, उनकी तौबा हक़ तआला ने क़बूल फरमा ली। इन सब वाकिआत से बज़ाहिर यह समझा जा सकता है कि हर जिहाद और ग़ज़वे में सब ही मुसलमानों को निकलना फ़र्ज़ और पीछे रह जाना हराम है, हालाँकि शरई हुक्म यह नहीं, बल्कि जिहाद आम हालात में फ़र्ज़ क़ियाया है, जिसका हुक्म यह है कि मुसलमानों की कुछ जमाअत जो जिहाद के लिये काफ़ी हो जिहाद में मशगूल रहे तो बाकी मुसलमान भी फ़र्ज़ से बरी हो जाते हैं, हाँ अगर जिहाद में शरीक होने वाली जमाअत काफ़ी न हो, वह पराजित होने लगे तो आस-पास के मुसलमानों पर उनकी मदद के लिये निकलना और जिहाद में शरीक होना फ़र्ज़ हो जाता है। वे भी काफ़ी न हों तो उनके करीब जो मुसलमान हैं उन पर, यहाँ तक कि सारे आलम के मुसलमानों पर ऐसी हालत में जिहाद फ़र्ज़ ऐन (लाज़िमी फ़र्ज़) हो जाता है, जिससे भागना और पीछे रहना हराम है।

इसी तरह फ़र्ज़ होने की एक सूरत यह है कि मुसलमानों का अमीर ज़रूरत समझकर आम ऐलान करे और सब मुसलमानों को जिहाद की दावत दे, तो उस वक़्त भी जिहाद की शिर्कत फ़र्ज़ और उससे पीछे रहना हराम हो जाता है जैसा कि ग़ज़वा-ए-तबूक के वाक़िए में आम ऐलान की वजह से पेश आया। उपर्युक्त आयत में इसी हुक्म को वाज़ेह किया गया है कि यह ग़ज़वा-ए-तबूक में आम बुलावे की वजह से खुसूसी हुक्म था, आम हालात में जिहाद फ़र्ज़ ऐन

कि, कि सब मुसलमानों पर जिहाद में जाना फर्ज हो, क्योंकि जिहाद की तरह इस्लाम और लमानों के सामूहिक मसाईल और अहम मामलात भी हैं जो जिहाद ही की तरह फर्ज क़िफ़ाया उनके लिये भी मुसलमानों की विभिन्न जमाअतों को काम तकसीम करने के उसूल पर काम ना है, इसलिये सब मुसलमानों को हर जिहाद में निकलना नहीं चाहिये। इसी मज़मून से फर्ज हाया की हकीकत भी आप समझ सकते हैं कि जो काम ज़ाती और व्यक्तिगत नहीं सामूहिक और सब मुसलमानों पर उनके पूरा करने की ज़िम्मेदारी है उनको शरीअत में फर्ज क़िफ़ाया र दिया गया, ताकि काम बाँटने के उसूल पर सब काम अपनी-अपनी जगह चलते रहें और सामूहिक फ़राईज़ सब अदा होते रहें। मुसलमान मर्दों पर नमाज़ जनाज़ा और उसका न-दफ़न करना, मस्जिदें बनाना और उनकी निगरानी, जिहाद, इस्लामी सरहदों की हिफ़ाज़त ये इसी फर्ज क़िफ़ाया के अंग हैं कि इनकी ज़िम्मेदारी तो पूरे आलम के मुसलमानों पर है मगर रत के मुताबिक़ कुछ लोग कर लें तो दूसरे मुसलमान भी फर्ज से मुक्त हो जाते हैं।

इसी फर्ज क़िफ़ाया के सिलसिले का एक अहम काम दीनी तालीम है। इस आयत में सियत से उसके फर्ज होने का इस तरह ज़िक्र फ़रमाया है कि जिहाद जैसे अहम फर्ज में भी फर्ज को छोड़ना नहीं, जिसकी सूरत यह है कि हर बड़ी जमाअत में से एक छोटी जमाअत द के लिये निकले, और बाकी लोग दीन का इल्म हासिल करने में लगें। फिर ये इल्मे दीन ल करके जिहाद में जाने वाले मुसलमानों और दूसरे लोगों को दीन का इल्म सिखायेंगे।

दीनी इल्म को हासिल करने का फर्ज होना और

उसके आदाब व फ़राईज़

इमाम कुतुबी रह. ने फ़रमाया है कि यह आयत दीन का इल्म हासिल करने की असल और याद है, और ग़ौर किया जाये तो इसी आयत में दीन के इल्म का संक्षिप्त पाठ्यक्रम भी ना दिया गया है, और इल्म हासिल करने के बाद आलिम के फ़राईज़ भी। इसलिये इस रून को किसी क़द्र तफ़सील से लिखा जाता है।

इल्मे दीन के फ़ज़ाईल

इल्मे दीन के फ़ज़ाईल, अज़ीम सवाब और उसके मुताल्लिक़ बातों पर उलेमा ने मुस्तक़िल बें लिखी हैं। इस जगह चन्द मुख़्तसर रिवायतें नक़ल की जाती हैं। तिर्मिज़ी ने हज़रत अबू रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को फ़रमाते हुए सुना है कि 'जो शख़्स किसी रास्ते पर चले जिसका मक़सद इल्म हासिल करना अल्लाह तआला उस चलने के सवाब में उसका रास्ता जन्नत की तरफ़ कर देंगे, और यह अल्लाह के फ़रिश्ते तालिब-इल्म (दीन का इल्म हासिल करने वाले) के लिये अपने पर बिछाते और यह कि आलिम के लिये तमाम आसमानों और ज़मीन की मख़्लूक़ात और पानी की

मछलियाँ दुआ व इस्तिगफार करती हैं, और यह कि आलिम की फज़ीलत कसरत से नफ़ली इबादत करने वाले पर ऐसी है जैसे चौदहवीं रात के चाँद की फज़ीलत बाकी सब सितारों पर, और यह कि उलेमा अम्बिया अलैहिमुस्सलाम के वारिस हैं, और यह कि अम्बिया अलैहिमुस्सलाम सोने चाँदी की कोई मीरास नहीं छोड़ते लेकिन इल्म की विरासत छोड़ते हैं, तो जिस शख्स ने इल्म की यह विरासत हासिल कर ली उसने बड़ी दौलत हासिल कर ली।” (तफ़सीरे कुर्तुबी)

और दारमी ने अपने मुस्नद में यह हदीस रिवायत की है कि “रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से किसी शख्स ने मालूम किया कि बनी इस्राईल में दो आदमी थे, एक आलिम था जो सिर्फ़ नमाज़ पढ़ लेता और फिर लोगों को दीन की तालीम देने में मशगूल हो जाता था। दूसरा दिन भर रोज़ा रखता और रात को इबादत में खड़ा रहता था। इन दोनों में कौन अफ़ज़ल है? आपने फ़रमाया कि उस आलिम की फज़ीलत आबिद पर ऐसी है जैसी मेरी फज़ीलत तुम में से अदना आदमी पर।” (यह रिवायत इमाम अब्दुल-बर ने किताब जामे बयानुल-इल्म में सनद के साथ हज़रत अबू सईद खुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु से नक़ल की है) (तफ़सीरे कुर्तुबी)

और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि एक फ़कीह (दीनी इल्म में महारत रखने वाला आलिम) शैतान के मुकाबले में एक हज़ार इबादत-गुज़ारों से ज़्यादा ताक़तवर और भारी है। (तिर्मिज़ी, इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से, मज़हरी) और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब इनसान मर जाता है तो उसका अमल बन्द और ख़त्म हो जाता है मगर तीन अमल ऐसे हैं जिनका सवाब इनसान को मरने के बाद भी पहुँचता रहता है- एक सद्का-ए-जारिया जैसा मस्जिद या दीनी तालीम के लिये इमारत या आम लाभ के इदारे, दूसरे वह इल्म जिससे उसके बाद भी लोग नफ़ा उठाते रहें (मसलन शागिर्द आलिम हो गये, उनसे आगे लोगों को इल्मे दीन सिखाने का सिलसिला चलता रहा, या कोई किताब लिख दी जिससे उसके बाद भी लोग फ़ायदा उठाते रहे), तीसरे नेक औलाद जो उसके लिये दुआ और ईसाल-ए-सवाब करती रहे। (तफ़सीरे कुर्तुबी)

इल्मे दीन के फ़र्ज-एन और फ़र्ज-किफ़ाया की तफ़सील

इब्ने अदी और बैहकी ने सही सनद के साथ हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

طَلَبُ الْعِلْمِ فَرِيضَةٌ عَلَى كُلِّ مُسْلِمٍ. (از مظہری)

“यानी इल्म हासिल करना फ़र्ज है हर एक मुसलमान पर”। यह ज़ाहिर है कि इस हदीस और ऊपर जिक्र हुई हदीसों में इल्म से मुराद दीन का इल्म ही है, दुनियावी उलूम व फ़ुनून आम दुनिया के कारोबार की तरह इनसान के लिये ज़रूरी सही, मगर उनके वो फ़ज़ाईल नहीं जो उपर्युक्त हदीसों में आये हैं। फिर इल्मे दीन एक इल्म नहीं, बहुत से उलूम पर मुश्तमिल एक मुकम्मल निज़ाम है, और यह भी ज़ाहिर है कि हर मुसलमान मर्द व औरत इस पर कादिर नहीं

कि उन सब उलूम को पूरा हासिल कर सके, इसलिये उक्त हदीस में जो हर मुसलमान पर फर्ज फरमाया है इससे मुराद इल्मे दीन का सिर्फ वह हिस्सा है जिसके बगैर आदमी न फराईज अदा कर सकता है न हराम चीजों से बच सकता है, जो ईमान व इस्लाम के लिये ज़रूरी है, बाकी उलूम की तफ्सीलात, कुरआन व हदीस के तमाम मआरिफ व मसाईल, फिर उनसे निकाले हुए अहकाम व मसाईल की पूरी तफ्सील, यह न हर मुसलमान की ताकत में है न हर एक पर फर्ज ऐन है, अलबत्ता पूरी इस्लामी दुनिया के ज़िम्मे फर्ज किफ़ाया है। हर शहर में एक आलिम इन तमाम उलूम व मसाईल का माहिर मौजूद हो तो बाकी मुसलमान इस फर्ज से बरी और भार मुक्त हो जाते हैं, और जिस शहर या क़सबे में एक भी आलिम न हो तो शहर वालों पर फर्ज है कि अपने में से किसी को आलिम बनायें, या बाहर से किसी आलिम को बुलाकर अपने शहर में रखें, ताकि ज़रूरत पेश आने पर बारीक मसाईल को उस आलिम से फ़तवा लेकर समझ सकें और अमल कर सकें। इसलिये इल्मे दीन में फर्ज ऐन और फर्ज किफ़ाया की तफ्सील यह है।

फर्ज-ए-ऐन

हर मुसलमान मर्द व औरत पर फर्ज है कि इस्लाम के सही अक़ीदों का इल्म हासिल करे और पाकी, नापाकी के अहकाम सीखे। नमाज़ रोज़ा और तमाम इबादतें जो शरीअत ने फर्ज व वाजिब करार दी हैं उनका इल्म हासिल करे, जिन चीजों को हराम या मक्रूह करार दिया है उनका इल्म हासिल करे। जिस शख्स के पास ज़कात के निसाब के बराबर माल हो उस पर फर्ज है कि ज़कात के मसाईल व अहकाम मालूम करे, जिसको हज पर जाने की क़ुदरत है उसके लिये फर्ज ऐन है कि हज के अहकाम व मसाईल मालूम करे, जिसको ख़रीद व बेच (यानी कारोबार) करना पड़े या तिजारात व कारीगरी या मज़दूरी व उजरत के काम करने पड़ें उस पर फर्ज ऐन है कि ख़रीद व बेच और मज़दूरी व उजरत वगैरह के मसाईल व अहकाम सीखे। जब निकाह करे तो निकाह के अहकाम व मसाईल और तलाक़ के अहकाम व मसाईल मालूम करे। गुर्ज कि जो काम शरीअत ने हर इन्सान के ज़िम्मे फर्ज व वाजिब किये हैं उनके अहकाम व मसाईल का इल्म हासिल करना भी हर मुसलमान मर्द व औरत पर फर्ज है।

तसव्वुफ़ का इल्म भी फर्ज-ऐन में दाख़िल है

ज़ाहिरी अहकाम नमाज़, रोज़े को तो सब ही जानते हैं कि फर्ज ऐन हैं, और इनका इल्म हासिल करना भी फर्ज ऐन है। हज़रत काज़ी सनाउल्लाह पानीपती रह. ने तफ्सीरे मज़हरी में इसी आयत के तहत लिखा है कि बातिनी आमाल और बातिनी मुहरमात (हराम की गयी चीजों) का इल्म जिसको आम बोलचाल में इल्मे तसव्वुफ़ कहा जाता है, चूँकि ये बातिनी आमाल भी हर शख्स पर फर्ज ऐन हैं तो इनका इल्म भी सब पर फर्ज ऐन है।

आजकल जिसको इल्म-ए-तसव्वुफ़ कहा जाता है वह भी बहुत से उलूम व मआरिफ़ और मुकाशफ़ात व वारदात का मजमूआ बन गया है, इस जगह फर्ज ऐन से मुराद उसका सिर्फ़ वह हिस्सा है जिसमें बातिनी आमाल फर्ज व वाजिब की तफ्सील है। मसलन सही अक़ीदे जिसका

ताल्लुक बातिन से है, या सब्र, शुक, तवक्कुल, कनाअत वगैरह एक खास दर्जे में फर्ज हैं। या गुरुर व तकब्बुर, हसद व जलन, कन्जूसी व दुनिया का लालच वगैरह जो कुरआन व सुन्नत की रू से हराम हैं, उनकी हकीकत और इसके हासिल करने या हराम चीजों से बचने के तरीके मालूम करना भी हर मुसलमान मर्द व औरत पर फर्ज है। इल्मे तसव्वुफ की असल बुनियाद इतनी ही है जो फर्जे-ऐन है।

फर्जे-ए-किफाया

पूरे कुरआन मजीद के मायने व मसाईल को समझना, तमाम हदीसों को समझना और उनमें मोतबर और गैर-मोतबर की पहचान पैदा करना, कुरआन व सुन्नत से जो अहकाम व मसाईल निकलते हैं उन सब का इल्म हासिल करना, इसमें सहाबा व ताबिईन और मुज्ताहिद इमामों के अक्वाल व आसार से वाकिफ होना, यह इतना बड़ा काम है कि पूरी उम्र और सारा वक्त इसमें खर्च करके भी पूरा हासिल होना आसान नहीं। इसलिये शरीअत ने इस इल्म को फर्जे किफाया करार दिया है, कि ज़रूरत के मुताबिक कुछ लोग ये सब उलूम हासिल कर लें तो बाकी मुसलमान अपनी जिम्मेदारी से बरी हो जायेंगे।

दीनी इल्म का कोर्स

कुरआने हकीम ने इस जगह दीनी इल्म की हकीकत और उसका निसाब (कोसी) भी एक ही लफ्ज़ में बतला दिया है, वह है:

لَيَسْفَهُوا فِي الدِّينِ

यह मौका बजाहिर इसका था कि यहाँ:

يَتَعَلَّمُونَ الدِّينَ

कहा जाता। यानी दीन का इल्म हासिल करें। मगर कुरआन ने इस जगह 'तअल्लुम' (पढ़ने और सीखने) का लफ्ज़ छोड़कर 'तफक्कोह' (समझ हासिल करने) का लफ्ज़ इस्तिथार फरमाकर इस तरफ इशारा कर दिया कि दीनी इल्म का महज़ पढ़ लेना काफी नहीं, वह तो बहुत से काफिर यहूदी ईसाई भी पढ़ते हैं, और शैतान को सबसे ज्यादा हासिल है, बल्कि इल्मे दीन से मुराद दीन की समझ पैदा करना है, यही लफ्ज़ 'तफक्कोह' का तर्जुमा है। और यह फिका से निकला है, फिका के मायने समझ-बूझ ही के हैं। यहाँ यह बात भी ध्यान के काबिल है कि कुरआने करीम ने इस जगह मुजरद के सीगे से 'लियफ्कहुद्दीन' "यानी ताकि वे दीन को समझ लें" नहीं फरमाया, बल्कि 'लिय-तफक्कहू फिद्दीनि' फरमाया, जो बाबे 'तफअुल' से है, इसके मायने में मेहनत व मशक्कत का मफहूम शामिल है। मुराद यह है कि दीन की समझ-बूझ पैदा करने में पूरी मेहनत व मशक्कत उठाकर महारत हासिल करें। यह भी ज़ाहिर है कि दीन की समझ-बूझ सिर्फ इतनी बात से पैदा नहीं होती कि पाकी, नापाकी या नमाज़, रोज़े, ज़कात, हज के मसाईल मालूम करे, बल्कि दीन की समझ-बूझ यह है कि वह यह समझे कि उसके हर कौत

व फेल और हरकत व सुकून का आखिर में उससे हिसाब लिया जायेगा। उसको इस दुनिया में किस तरह रहना चाहिये, दर असल इसी फिक्र का नाम दीन की समझ-बूझ है। इसी लिये इमामे आजम अबू हनीफा रह. ने फिका की तारीफ़ (परिभाषा) यह की है कि इनसान उन तमाम कामों को समझ ले जिनका करना उसके लिये ज़रूरी है, और उन तमाम कामों को भी समझ ले जिनसे बचना उसके लिये ज़रूरी है। आजकल जो इल्मे फिका आंशिक मसाल के इल्म को कहा जाता है यह बाद की इस्तिलाह है, कुरआन व सुन्नत में फिका की हकीकत वही है जो इमामे आजम रह. ने बयान फरमाई है, कि जिस शख्स ने दीन की किताबें सब पढ़ डालीं मगर यह समझ-बूझ पैदा न की वह कुरआन व सुन्नत की परिभाषा में आलिम नहीं।

इस तहकीक से मालूम हो गया कि दीनी इल्म हासिल करने का मफ़हूम कुरआन की इस्तिलाह में दीन की समझ-बूझ पैदा करना है, वह जिन माध्यमों से हासिल हो, वह माध्यम और सूत्र चाहे किताबें हों या उस्ताज़ों की सोहबत, सब इस निसाब के अंग हैं।

दीनी इल्म हासिल करने के बाद आलिम के फ़राईज़

इस जगह कुरआने करीम ने इसको भी एक ही जुमले में पूरा बयान फरमा दिया है। वह है:

لِيُنْذِرُوا قَوْمَهُمْ

“यानी ताकि वे अपनी कौम को अल्लाह की नाफ़रमानी से डरायें।”

यहाँ भी यह बात गौर करने के काबिल है कि इस जुमले में आलिम का फ़र्ज़ कौम को इनज़ार बतलाया है। इनज़ार का लफ़्ज़ी तर्जुमा हम उर्दू में डराने से करते हैं, मगर यह इसका पूरा तर्जुमा नहीं। उर्दू ज़बान की तंगी की वजह से कोई एक लफ़्ज़ इसके पूरे तर्जुमे को अदा नहीं करता। हकीकत यह है कि डराना कई तरह का होता है- एक डराना दुश्मन, चोर, डाकू या किसी दरिन्दे, ज़हरीले जानवर से है, एक डराना वह है जो बाप अपनी शफ़क़त से औलाद को तकलीफ़देह चीज़ों जैसे आग, ज़हरीले जानवर नुक़सान देने वाली ग़िज़ा से डराता है, जिसका मन्शा शफ़क़त व मुहब्बत होती है। उसका अन्दाज़ व तरीक़ा भी कुछ और ही होता है। इनज़ार इसी किस्म के डराने का नाम है। इसी लिये पैग़म्बरों और रसूलों को नज़ीर का लक़ब दिया गया है, और आलिम का यह इनज़ार का फ़रीज़ा दर हकीकत नुबुव्वत की विरासत ही का हिस्सा है जो हदीस की दलील से आलिम को हासिल होती है।

मगर यहाँ काबिले गौर यह है कि अम्बिया अलैहिमुस्सलाम के दो लक़ब हैं- बशीर और नज़ीर। नज़ीर के मायने तो अभी आप मालूम कर चुके हैं, बशीर के मायने हैं बशारत और खुशख़बरी सुनाने वाला। अम्बिया अलैहिमुस्सलाम का एक काम यह भी है कि नेक अमल करने वालों को खुशख़बरी सुनायें। इस जगह भी अगरचे स्पष्ट तौर पर ज़िक्र इनज़ार (डराने) का किया गया है मगर दूसरी शरई वज़ाहतों से मालूम होता है कि आलिम का फ़र्ज़ यह भी है कि नेक

काम करने वालों को खुशखबरी भी सुनाये, लेकिन इस जगह सिर्फ़ इनज़ार के ज़िक्र पर बस करना इस तरफ़ इशारा है कि इनसान के जिम्मे दो काम हैं- एक यह कि जो अमल उसके लिये दुनिया व आखिरत में फ़ायदेमन्द हैं उनको इस्तिस्नान करे, दूसरे यह कि जो अमल उसके लिये नुक़सान देने वाले हैं उनसे बचे। उलेमा व विद्वान इस पर सहमत हैं कि इन दोनों कामों में से दूसरा काम सबसे मुक़द्दम और अहम है, इसी को फ़ुक़हा (दीनी मसाल्ल के माहिर उलेमा) की इस्तिस्नाह में जलब-ए-मन्फ़अत (फ़ायदे का हासिल करना) और दफ़-ए-मज़रत (नुक़सान से बचना और दूर रहना) के दो लफ़्ज़ों से ताबीर करके नुक़सान से बचने को फ़ायदा हासिल करने से मुक़द्दम (पहले और ज़रूरी) करार दिया है। इसके अलावा नुक़सान से बचने और उससे दूर रहने में एक हैसियत से फ़ायदा हासिल करने का मक़सद भी पूरा हो जाता है, क्योंकि जो काम इनसान के लिये मुफ़ीद और ज़रूरी हैं उनका छोड़ना बड़ा नुक़सान है, तो जो शख्स नुक़सान देने वाले आमाल से बचने और दूर रहने का एहतिमाम करेगा वह ज़रूरी आमाल को छोड़ने से बचने का भी एहतिमाम करेगा।

यहाँ से यह भी मालूम हो गया कि आजकल जो उमूमन नसीहत व तब्लीग़ बहुत कम असरदार होती है उसकी बड़ी वजह यह है कि उसमें इनज़ार (डराने) के आदाब नहीं होते, जिसके बयान के अन्दाज़ और लब व लहजे से शफ़क़त व रहमत और ख़ैरख़्वाही टक़पती हो। सामने वाले को यकीन हो कि इसके कलाम का मक़सद न मुझे रुस्वा करना है न बदनाम करना, न अपने दिल का गुबार निकालना, बल्कि यह जिस चीज़ को मेरे लिये मुफ़ीद और ज़रूरी समझता है वही मुहब्बत की वजह से मुझे बतला रहा है। अगर आज हमारी तब्लीग़ और शरीअत के खिलाफ़ काम करने वालों को सुधार की दावत का यह तर्ज़ हो जाये तो इसका एक नतीजा तो निश्चित लाज़िम ही है कि सामने वाले को हमारी गुप्तगू से ज़िद पैदा नहीं होगी, वह जवाब देने की फ़िक्र में पड़ने के बजाय अपने आमाल का जायज़ा लेने और अन्जाम सोचने की तरफ़ मुतवज्जह हो जायेगा। और अगर यह सिलसिला जारी रहा तो कभी न कभी उसको कुबूल भी करेगा। और दूसरा नतीजा यह लाज़िमी है कि कम से कम इससे आपसी नफ़रत व दुश्मनी और लड़ाई झगड़ा पैदा नहीं होगा, जिसमें आजकल हमारी पूरी कौम मुब्तला है।

आखिर में 'लअल्लहुम यहज़रून' फ़रमाकर इस तरफ़ भी इशारा कर दिया कि "आलिम" का काम इतना ही नहीं कि अज़ाब से डरा दिया बल्कि इस पर नज़र रखना भी है कि उसकी तब्लीग़ व दावत का असर कितना और क्या हुआ। एक दफ़ा असर नहीं हुआ तो बार-बार करता रहे, ताकि उसका नतीजा 'यहज़रून' बरामद हो सके, यानी कौम का गुनाहों से बचना। (वल्लाहु सुब्कानहू व तआला आलम)

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا قَاتِلُوا الَّذِينَ يَلُونَكُمْ مِنَ الْكُفَّارِ وَلْيَجِدُوا فِيكُمْ غِلْظَةً ۖ وَاعْلَمُوا
 أَنَّ اللَّهَ مَعَ الْمُتَّقِينَ ۝ وَإِذَا مَا أُنْزِلَتْ سُورَةٌ فَمِنْهُمْ مَّن يَقُولُ أَيُّكُمْ زَادَتْهُ هَذِهِ إِيمَانًا ۚ فَأَمَّا
 الَّذِينَ آمَنُوا فزَادَتْهُمْ إِيمَانًا وَهُمْ يَسْتَبْشِرُونَ ۝ وَأَمَّا الَّذِينَ فِي قُلُوبِهِمْ مَّرَضٌ فَزَادَتْهُمْ رِجْسًا إِلَى
 رِجْسِهِمْ وَمَاتُوا وَهُمْ كَافِرُونَ ۝ أَوَلَا يَرَوْنَ أَنَّهُمْ يُفْتَنُونَ فِي كُلِّ عَامٍ مَّرَّةً أَوْ مَرَّتَيْنِ ثُمَّ لَا
 يَتُوبُونَ وَلَا هُمْ يَذْكُرُونَ ۝ وَإِذَا مَا أُنْزِلَتْ سُورَةٌ نَّظَرَ بَعْضُهُمْ إِلَى بَعْضٍ هَلْ يَرِيكُمْ مِّنْ أَحَدٍ ثُمَّ
 انْصَرَفُوا ۖ صَرَفَ اللَّهُ قُلُوبَهُمْ بِأَنَّهُمْ قَوْمٌ لَا يَفْقَهُونَ ۝

الربع

या अय्युहल्लजी-न आमनू
 कातिलुल्लजी-न यलूनकुम्
 मिनल्कुफ़ारि वल्यजिदू फीकुम्
 गिल्ज़-तन्, वअलमू अन्नल्ला-ह
 मअल्मुत्तकीन (123) ❖ व इज़ा मा
 उन्ज़िलत् सूरतुन् फ-मिन्हुम्
 मय्यकूलु अय्युकुम् ज़ादतुहु हाज़िही
 ईमानन् फ-अम्मल्लजी-न आमनू
 फज़ादतुहुम् ईमानव्-व हुम्
 यस्तबिरून (124) व अम्मल्लजी-न
 फी कुलूबिहिम् म-रज़ुन् फज़ादतुहुम्
 रिज़सन् इला रिज़सिहिम् व मातू व
 हुम् काफिरून (125) अ-वला यरौ-न
 अन्नहुम् युप्पतनू-न फी कुल्लि
 आमिम्-मर्-तन् औ मरतैनि सुम्-म
 ला यतूबू-न व ला हुम् यज़्ज़क्करून
 (126) व इज़ा मा उन्ज़िलत् सूरतुन्

ऐ ईमान वालो! लड़ते जाओ अपने
 नज़दीक के काफिरों से और चाहिए कि
 उन पर मालूम हो तुम्हारे अन्दर सख्ती,
 और जानो कि अल्लाह साथ है डरने
 वालों के। (123) ❖ और जब नाज़िल
 होती है कोई सूरत तो बाज़े उनमें कहते
 हैं किसका तुम में से ज़्यादा कर दिया इस
 सूरत ने ईमान, सो जो लोग ईमान रखते
 हैं उनका ज़्यादा कर दिया उस सूरत ने
 ईमान और वे खुश-वक्त्त होते हैं। (124)
 और जिनके दिल में रोग है सो उनके
 लिये बढ़ा दी गन्दगी पर गन्दगी और वे
 मरने तक काफिर ही रहे। (125) क्या
 नहीं देखते कि वे आजमाये जाते हैं हर
 वर्ष में एक बार या दो बार फिर भी
 तौबा नहीं करते और न वे नसीहत
 पकड़ते हैं। (126) और जब नाज़िल होती
 है कोई सूरत तो देखने लगता है उनमें

न-ज़-र बज़्जुहुम् इत्ता बज़्जिन्, हल्
यराकुम् मिन् अ-हदिन् सुम्मन्स-रफू,
स-रफ़ल्लाहु कुलूबहुम् बिअन्नहुम्
कौमुल् ला यफ़्कहून (127)

का एक दूसरे की तरफ़, कि क्या देखता
है तुमको कोई मुसलमान, फिर चल देते
हैं, फेर दिये है अल्लाह ने उनके दिल इस
वास्ते कि वे लोग हैं कि समझ नहीं
रखते। (127)

खुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वाले! उन काफ़िरों से लड़ो जो तुम्हारे आस-पास (रहते) हैं, और उनको तुम्हारे
अन्दर सख्ती पाना चाहिए (यानी जिहाद के वक़्त भी मज़बूत रहना चाहिये और वैसे भी जब
सुलह का ज़माना न हो उसमें उनसे ढीलापन न बरतना चाहिये) और यह यकीन रखो कि
अल्लाह की (इमदाद) मुत्तकी लोगों के साथ है (पस उनसे डरो मत)। और जब कोई (नई) सूरा
नाज़िल की जाती है तो उन (मुनाफ़िकों) में से कुछ ऐसे हैं जो (ग़रीब मुसलमानों से मज़ाक
उड़ाने के तौर पर) कहते हैं कि (कहो) इस (सूरा) ने तुममें से किसके ईमान में तरक्की दी।
(आगे हक़ तआला इरशाद फ़रमाते हैं कि तुम जवाब चाहते हो) सो (सुनो) जो लोग ईमान वाले
हैं इस (सूरा) ने उनके (तो) ईमान में तरक्की दी है और वे (उस तरक्की के पाने से) खुश हो
रहे हैं। (मगर चूँकि वह दिल का मामला है और तुमको नसीब नहीं इसलिये उसका समझना भी
नसीब नहीं, और मज़ाक उड़ाते हो) और जिनके दिलों में (निफ़ाक़ की) बीमारी है उस (सूरा) ने
उनमें उनकी (पहली) गन्दगी के साथ और (नई) गन्दगी बढ़ा दी, (क्योंकि पहले कुरआन के एक
हिस्से का इनकार था अब इस नये हिस्से का इनकार और हुआ) और वे कुफ़्र ही की हालत में
मर गये (यानी जो उनमें से मर चुके हैं वे काफ़िर मरे और जो इसी ज़िद और हठधर्मी पर रहेंगे
वे काफ़िर मरेंगे)। जवाब का हासिल यह हुआ कि कुरआन में ईमान को तरक्की देने की बेशक
खासियत है लेकिन लेने वाले में काबलियत भी तो हो, और अगर पहले से स्थिर ख़बासत है तो
और भी उसको स्थिरता हासिल हो जायेगी (जैसे बारिश से बाग़ में फूल उगते हैं और बंजर
ज़मीन पर घास-फूस) और क्या उनको नहीं दिखाई देता कि ये लोग हर साल में एक बार या दो
बार किसी न किसी आफ़त में फंसे रहते हैं (मगर) फिर भी (अपनी बुरी हरकतों से) बाज़ नहीं
आते, और न वे कुछ समझते हैं (जिससे आईन्दा बाज़ आने की उम्मीद हो)। यानी उन हादसों से
उनको सीख लेनी और इबरत पकड़कर अपना सुधार कर लेना चाहिये था। यह तो उनके मज़ाक
उड़ाने का बयान हुआ जो वे अपनी मज्लिसों में करते थे, आगे उनके नफ़रत ज़ाहिर करने का
बयान है जो मज्लिसे नबवी में उनकी तरफ़ से ज़ाहिर होता था। चुनाँचे इरशाद है) और जब
कोई (नई) सूरा नाज़िल की जाती है तो एक-दूसरे को देखने लगते हैं (और इशारे से बातें करते
हैं) कि तुमको कोई (मुसलमान) देखता तो नहीं, (कि उठता हुआ देख ले और हुज़ूर सल्लल्लाहु
अलैहि व सल्लम से जा लगाये) फिर (इशारों ही इशारों में बातें करके वहाँ से उठकर) चल देते

हैं (ये लोग हुजुरे पाक की मज्लिस से क्या फिरे) खुदा तआला ने इनका दिल (ही ईमान से) फेर दिया है, इस वजह से कि वे बिल्कुल बे-समझ लोग हैं (कि अपने नफे से भागते हैं)।

मआरिफ व मसाईल

पहले गुजरी आयतों में जिहाद की रुचि दिलायी गयी थी, उपर्युक्त आयत:

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا قَاتِلُوا.....الْأَيَّة.

में यह तफसील बतलाई गयी है कि काफिर तो सारी दुनिया में फैले हुए हैं उनसे जंग व जिहाद में क्या तरतीब होनी चाहिये। इस आयत में इरशाद है कि काफिरों में से जो लोग तुमसे करीब हों पहले उनसे जिहाद किया जाये। करीब होना स्थान के एतिबार से भी हो सकता है कि रहने की जगह से जो करीब रहने वाले काफिर हैं वे जिहाद में मुकद्दम किये जायें, और रिश्ते, नसब और ताल्लुकात के एतिबार से भी जो करीब हों वे दूसरों से मुकद्दम (आगे) किये जायें। क्योंकि इस्लामी जिहाद दर हकीकत उन्हीं की खैरख्वाही के तकाजे से है, और खैरख्वाही व हमदर्दी में रिश्तेदार व ताल्लुकात वाले मुकद्दम (पहले और आगे) हैं, जैसा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हुक्म दिया गया है:

وَأَنذِرْ عَشِيرَتَكَ الْأَقْرَبِينَ ۝

“यानी अपने करीबी रिश्तेदारों को अल्लाह के अज़ाब से डरायें।”

चुनाँचे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसकी तामील फरमाई और सबसे पहले अपने खानदान के लोगों को जमा करके हक् का कलिमा पहुँचाया। इसी तरह स्थान के एतिबार से निकटता व दूरी का एतिबार करके मदीने के आस-पास के काफिर बनू कुरैज़ा, बनू नज़ीर और खैबर वालों को दूसरों पर पहले और आगे रखा गया। उसके बाद बाकी अरब वालों से जंग व जिहाद हुआ। उससे फारिग होने के बाद सबसे आखिर में रोम के काफिरों से जिहाद का हुक्म हुआ, जिसके नतीजे में गुज़वा-ए-तबूक का वाकिआ पेश आया।

وَلَجِدُوا فِيكُمْ غِلْظَةً

गिल्ज़त के मायने शिद्दत व कुव्वत के हैं। मुराद यह है कि काफिरों के साथ बर्ताव में ऐसी सूरत इस्त्रियार करो कि वे किसी हैसियत से तुम्हारी कमजोरी महसूस न करें।

فَرَادَتْهُمْ إِيمَانًا

इस आयत से मालूम हुआ कि कुरआनी आयतों की तिलावत, उनमें गौर व फ़िक्क और उनके तकाजे पर अमल करने से ईमान में तरक्की और ज्यादाती पैदा होती है। यह ज्यादाती ईमान के नूर और उसकी मिठास की होती है, जिसका असर यह होता है कि इनसान को अल्लाह व रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इताअत आसान नज़र आने लगती है, इबादत में मज़ा आने लगता है, गुनाहों से तबई नफ़रत पैदा हो जाती है और उनसे नागवारी व परेशानी महसूस होने लगती है।

हज़रत अली कर्मल्लाहु वज्हू ने फरमाया कि जब दिल में ईमान आता है तो एक सफेद नूरानी नुक्ते (बिन्दू) जैसा होता है, फिर जैसे-जैसे ईमान में तरक्की होती है तो यह सफेदी बढ़ती जाती है, यहाँ तक कि सारा दिल नूरानी हो जाता है। इसी तरह कुफ्र व निफाक शुरू में एक सियाह दाग की तरह दिल पर लगता है, फिर जैसे-जैसे गुनाहों और नाफरमानी के काम और कुफ्र की शिद्दत बढ़ती जाती है यह नुक्ता (दाग) बढ़ता रहता है, यहाँ तक कि पूरा दिल सियाह (काला) हो जाता है। (तफसीरे मज़हरी)

इसी लिये सहाबा-ए-किराम एक दूसरे को कहा करते थे कि कुछ देर मिलकर बैठो, दीन और आखिरत की बातों का मुजाकरा करो, ताकि हमारा ईमान बढ़े।

يُفْتَنُونَ فِي كُلِّ عَامٍ مَّرَّةً أَوْ مَرَّتَيْنِ

इसमें मुनाफिकों को इस पर चेतावनी दी गयी है कि वे अपने निफाक और अहद तोड़ने वगैरह जैसे गुनाहों की वजह से हर साल विभिन्न किस्म की मुसीबतों में कभी एक बार कभी दो बार मुब्तला होते रहते हैं। कभी उनके दोस्त यांनी मक्का के काफिर पराजित हो गये, कभी उनके निफाक की बातें खुल गयीं उससे परेशानी में मुब्तला रहे। यहाँ एक, दो का अदद खास मुराद नहीं बल्कि यह बतलाना है कि इसका सिलसिला चलता रहता है, क्या इन चीजों को देखकर भी उन्हें इबत (सीख) नहीं होती।

لَقَدْ جَاءَكُمْ رَسُولٌ مِّنْ أَنفُسِكُمْ عَزِيزٌ عَلَيْهِ مَا عَنِتُّمْ حَرِيصٌ عَلَيْكُمْ بِالْمُؤْمِنِينَ رَءُوفٌ رَّحِيمٌ ۖ فَإِنْ تَوَلَّوْا فَقُلْ حَسْبِيَ اللَّهُ ۚ لَا إِلَهَ إِلَّا هُوَ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَهُوَ رَبُّ الْعَرْشِ الْعَظِيمِ ۝

ल-कद् जा-अकुम् रसूलुम् मिन्
अन्फुसिकुम् अज़ीजुन् अलैहि मा
अनित्तुम् हरीसुन् अलैकुम्
बिल्मुअमिनी-न रऊफुरहीम (128)
फ-इन् तवल्लौ फकुल् हस्बियल्लाहु
ला इला-ह इल्ला हु-व, अलैहि
तवक्कल्लु व हु-व रब्बुल् अरशिल्-
अज़ीम (129) ❀

आया है तुम्हारे पास रसूल तुम में का,
भारी है उस पर जो तुमको तकलीफ
पहुँचे, इच्छुक है तुम्हारी भलाई पर, ईमान
वालों पर बहुत ही शफीक मेहरबान है।
(128) फिर भी अगर मुँह फेरें तो कह दे
काफी है मुझको अल्लाह, किसी की
बन्दगी नहीं उसके सिवा, उसी पर मैंने
भरोसा किया और वह मालिक है अर्श
अज़ीम का। (129) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

(ऐ लोगो!) तुम्हारे पास एक ऐसे पैगम्बर तशरीफ लाए हैं जो तुम्हारी जिन्स (बशर) से हैं

(ताकि तुमको उनसे नफा हासिल करना आसान हो) जिनको तुम्हारी नुकसान की बात बहुत ही भारी गुजरती है (चाहते हैं कि तुमको कोई नुकसान न पहुँचे)। जो तुम्हारे फायदे के बड़े इच्छुक रहते हैं (यह हालत तो सब के साथ है। खास तौर पर) ईमान वालों के साथ (तो) बड़े ही शफीक (और) मेहरबान हैं। (ऐसे रसूल से लाभान्वित न होना बड़ी मेहरूमी है) फिर अगर (इस पर भी आपको रसूल मानने से और आपकी पैरवी करने से) ये मुँह मोड़ें तो आप कह दीजिए (मेरा क्या नुकसान है) मेरे लिये (तो) अल्लाह (हिफाजत करने वाला और मदद करने वाला) काफी है, उसके सिवा कोई माबूद होने के लायक नहीं (पस माबूद होना उसके साथ विशेष है तो लाजिमी तौर पर इल्म व क़ुदरत के सारे कमालात उसमें बेमिस्त होंगे, फिर मुझको किसी की मुख़ालफ़त से क्या अन्देशा)। मैंने उसी पर भरोसा कर लिया और वह बड़े भारी अर्श का मालिक है (तो और चीज़ें तो उससे बढ़कर उसकी मिल्क में होंगी। पस उस पर भरोसा करने के बाद मुझको कोई अन्देशा नहीं, अलबत्ता तुम अपनी फ़िक्र कर लो, हक़ का इनकार करके कहाँ रहोगे)।

मअारिफ़ व मसाईल

ये सूर: ताबा की आखिरी आयतें हैं जिनमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का अल्लाह की पूरी मख़्लूक पर, खुसूसन मुसलमानों पर बेहद मेहरबान और शफीक व हमदर्द होना बयान फरमाया है, और आखिरी आयत में आपको यह हिदायत फरमाई है कि आपकी सारी कोशिशों के बावजूद अगर फिर भी कुछ लोग ईमान न लायें तो आप सब करें और अल्लाह तआला पर तवक्कुल (भरोसा) करें।

सूर: ताबा के आखिर में यह मज़मून इसलिये लाना मुनासिब हुआ कि इस पूरी सूरत में काफ़िरों से बराअत, ताल्लुक ख़त्म करने और जंग व जिहाद का ज़िक्र था जो अल्लाह की तरफ़ दावत देने की आखिरी शक़्त है, जबकि ज़बानी दावत व तब्लीग़ से सुधार व बेहतरी की उम्मीद न रहे। लेकिन असल काम अम्बिया अलैहिमुस्सलाम का यही है कि शफ़क़त व रहमत और हमदर्दी व ख़ैरख़्वाही के ज़ब्बे से अल्लाह की मख़्लूक को अल्लाह की तरफ़ आने की दावत दें, और उनकी तरफ़ से मुँह मोड़ना या कोई तकलीफ़ पेश आये तो उसको अल्लाह के सुपुर्द कर दें, उस पर तवक्कुल करें, क्योंकि वह बड़े भारी अर्श का रब है। यहाँ अर्श अज़ीम का रब कहकर यह बतलाना मन्ज़ूर है कि वह आलम की तमाम कायनात को अपने घेरे में लिये हुए है।

आखिरी दो आयतें हज़रत उबई बिन कअब रज़ियल्लाहु अन्हु के कौल के मुताबिक़ कुरआन की आखिरी आयतें हैं, इनके बाद कोई आयत नाज़िल नहीं हुई और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात हो गयी। यही कौल हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु का है।

(तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इन दो आयतों के बड़े फ़ज़ाईल हदीस में बयान हुए हैं। हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु

फरमाते हैं कि जो शख्स सुबह व शाम ये आयतें सात मर्तबा पढ़ लिया करे तो अल्लाह तआला उसके तमाम काम आसान फरमा देते हैं। (तफसीरे कुतुबी) यल्लाहु सुब्हानहू व तआला आलम।

رَبَّنَا تَقَبَّلْ مِنَّا إِنَّكَ أَنْتَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ۝ اللَّهُمَّ وَفِّقْنِي لِتَكْمِيلِهِ كَمَا نَحِبُّ وَتَرْضَى وَالْطُّفَّ بِنَا فِي تَيْسِيرِ

كُلِّ عَسِيرٍ فَإِنَّ تَيْسِيرَ كُلِّ عَسِيرٍ عَلَيْكَ يَسِيرٌ.

ऐ हमारे रब! हमारी तरफ से कुबूल फरमा, बेशक तू ही है सुनने और जानने वाला। या अल्लाह! मुझे अपनी रज़ा व चाहत के साथ इसको पूरा करने की तौफ़ीक नसीब फरमा और अपनी मेहरबानी से हर तरह की मुश्किल को आसान फरमा, बेशक हर मुश्किल को आसान करना तेरे कब्ज़ा-ए-कुदरत में है।

(अल्लाह का शुक्र व एहसान है कि सूर: तौबा की तफसीर पूरी हुई)



Derived from the works of Mahmut Yazır [12]

"Warrâ lachâ'ni illâ an yushâ" Allâh rabbu al-'âlamîn

* सूरः यूनस *

यह सूरत मक्की है। इसमें 109 आयतें
और 11 रुकूअ हैं।

सूर: यूनस

سُورَةُ يُوسُفَ مَكِّيَّةٌ (109 آيات)

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ

الرَّسْمُ تِلْكَ آيَةُ الْكِتَابِ الْحَكِيمِ ۝ أَكَانَ لِلنَّاسِ عَجَبًا أَنْ أَوْحَيْنَا إِلَى رَجُلٍ مِنْهُمْ أَنْ أَنْذِرِ النَّاسَ
وَيُبَشِّرِ الَّذِينَ آمَنُوا أَنَّ لَهُمْ قَدَمَ صِدْقٍ عِنْدَ رَبِّهِمْ ۚ قَالَ الْكَافِرُونَ إِنَّ هَذَا لَسِحْرٌ مُبِينٌ ۝
إِنَّ رَبَّكُمُ اللَّهُ الَّذِي خَلَقَ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضَ فِي سِتَّةِ أَيَّامٍ ثُمَّ اسْتَوَى عَلَى الْعَرْشِ يُدَبِّرُ الْأُمُورَ مَا
مِنْ شَفِيعٍ إِلَّا مَنْ بَعْدَ إِذْنِهِ ۚ ذَلِكُمُ اللَّهُ رَبُّكُمْ فَاعْبُدُوهُ ۚ أَفَلَا تَذَكَّرُونَ ۝ إِلَيْهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيعًا
وَعِنْدَ اللَّهِ حَقُّ رَأْيِهِ يَنْبَغِي ۚ وَالْحَقُّ ثُمَّ يُعِيدُهُ لِيَجْزِيَ الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ بِالنِّسْبَةِ ۚ وَالَّذِينَ
كَفَرُوا لَهُمْ شَرَابٌ مِّنْ حَمِيمٍ وَعَذَابٌ أَلِيمٌ بِمَا كَانُوا يَكْفُرُونَ ۝

सूर: यूनस मक्का में नाज़िल हुई। इसमें 109 आयतें और 11 रुकूअ हैं।

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

अलिफ्-लाम्-रा। तिल्-क आयातुल्
किताबिल्-हकीम (1) अका-न
लिन्नासि अ-जबन् अन् औहैना इला
रजुलिम्-मिन्हुम् अन् अन्ज़रिन्ना-स
व बशिशरिल्लज़ी-न आमनू अन्-न
लहुम् क-द-म सिद्किन् अिन्-द
रब्बिहिम्, कालल्-काफिरु-न इन्-न
हाज़ा लसाहिरुम्-मुबीन (2) इन्-न
रब्बकुमुल्लाहुल्लज़ी ख-लक़स्समावाति
वल्अर्-ज़ फी सित्ताति अय्यामिन्

ये आयतें हैं पक्की किताब की। (1) क्या
लोगों को ताज्जुब हुआ कि वही भेजी
हमने एक मर्द पर उनमें से, यह कि डर
सुना दे लोगों को और खुशखबरी सुना दे
ईमान लाने वालों को, कि उनके लिये
पाया सच्चा है अपने रब के यहाँ, कहने
लगे मुन्किर- बेशक यह तो खुला जादूगर
है। (2) तहकीक़ कि तुम्हारा रब अल्लाह
है जिसने बनाये आसमान और ज़मीन छह
दिन में, फिर कायम हुआ अर्श पर
तदबीर करता है काम की, कोई सिफ़ारिश
नहीं कर सकता मगर उसकी इजाज़त के

सुम्पस्तवा अलल्-अर्शि युदब्बिरुल्-
अम्-र, मा मिन् शफीज़िन् इल्ला
मिम्-बअदि इज़िनी, ज़ालिकुमुल्लाहु
रब्बुकुम् फअबुदूहु, अ-फला
तज़क्करुन (3) इलैहि मर्जिअुकुम्
जमीअन्, वअदल्लाहि हक्कन्, इन्नहू
यब्दउल्-ख़ाल्-क सुम्-म युअ़ीदुहू
लियज़्ज़ियल्लज़ी-न आमनू व
अमिलुस्सालिहाति बिल्किस्ति,
वल्लज़ी-न क-फ़रु लहुम् शराबुम्-
मिन् हमीमिन्-व अज़ाबुन् अलीमुम्-
बिमा कानू यक्फ़ुरुन (4)

बाद, वह अल्लाह है रब तुम्हारा, सो
उसकी बन्दगी करो क्या तुम ध्यान नहीं
करते? (3) उसी की तरफ़ लौटकर जाना
है तुम सब को, वायदा है अल्लाह का
सच्चा। वही पैदा करता है पहली बार
फिर दोबारा करेगा उसको ताकि बदला दे
उनको जो ईमान लाये थे और किये थे
काम नेक इन्साफ़ के साथ, और जो
काफ़िर हुए उनको पीना है खोलता पानी
और अज़ाब है दर्दनाक इसलिए कि कुफ़्र
करते थे। (4)

खुलासा-ए-तफसीर

(अलिफ़ू लाम रा का मतलब तो अल्लाह को मालूम है) ये (जो आगे आती हैं) हिक्मत-से
भरी किताब (यानी कुरआन) की आयतें हैं (जो हक़ होने की वजह से जानने और मानने के
काबिल हैं, और चूँकि जिन पर यह उतरा है उनकी नुबुव्वत का काफ़िर इनकार करते थे इसलिये
जवाब में फरमाते हैं कि) क्या उन (मक्का के) लोगों को इस बात से ताज्जुब हुआ कि हमने
उनमें से एक शख्स के पास (जो कि उनकी तरह बशर हैं) वही भेज दी (जिसका खुलासा यह
है) कि (आम तौर पर खुदा तआला के अहकाम के खिलाफ़ करने पर) सब आदमियों को
डराईये, और जो ईमान ले आएँ उनको यह खुशख़बरी सुनाईये कि उनके रब के पास (पहुँचकर)
उनको पूरा मर्तबा मिलेगा। (यानी अगर ऐसा मज़मून किसी बशर पर वही के ज़रिये से नाज़िल
हो जाये तो कोई ताज्जुब का कारण नहीं, मगर) काफ़िर (इस क़द्र अचम्भित हुए कि आपके बारे
में) कहने लगे कि (नऊज़ु बिल्लाह) यह शख्स तो बिला शुब्हा खुला जादूगर है (नबी नहीं है,
क्योंकि नुबुव्वत बशर के लिये नहीं हो सकती)। बेशक तुम्हारा (असली) रब अल्लाह ही है
जिसने आसमानों को और ज़मीन को छह दिन (की मात्रा) में पैदा कर दिया (पस वह आला दर्जे
का कादिर है) फिर अर्श (यानी गोया शाही तख़्त) पर (उस तरह) कायम (और जलवा-फरमा)
हुआ (जो उसकी शान के लायक़ है, ताकि अर्श से ज़मीन व आसमान में अहकाम जारी फरमाये,
जैसा कि आगे इरशाद है कि) वह हर काम की (मुनासिब) तदबीर करता है (पस हकीम भी है,

उसके सामने) कोई सिफारिश करने वाला (सिफारिश) नहीं (कर सकता) बिना उसकी इजाजत के, (तो अजीम भी हुआ, पस) ऐसा अल्लाह तुम्हारा (वास्तविक) रब है, सो तुम उसकी इबादत करो (और शिर्क मत करो), क्या तुम (इन दलीलों के सुनने के बाद) फिर भी नहीं समझते?

तुम सब को उसी के (यानी अल्लाह ही के) पास जाना है, अल्लाह ने (इसका) सच्चा वायदा कर रखा है। बेशक वही पहली बार भी पैदा करता है, फिर (कियामत में) वही दोबारा भी पैदा करेगा, ताकि ऐसे लोगों को जो कि ईमान लाये और उन्होंने नेक काम किये, इन्साफ के साथ (पूरा-पूरा) बदला दे (और उसमें ज़रा कमी न करे, बल्कि बहुत कुछ ज़्यादा दे दे) और जिन लोगों ने कुफ़्र किया उनके वास्ते (आखिरत में) पीने को खोलता हुआ पानी मिलेगा और दर्दनाक अज़ाब होगा, उनके कुफ़्र की वजह से।

मअरिफ़ व मसाईल

सूर: यूनस मक्की सूरतों में से है। कुछ हज़रात ने इसकी सिर्फ़ तीन आयतों को मदनी कहा है जो मदीने की हिजरत के बाद नाज़िल हुई हैं।

इस सूरत में भी कुरआन और इस्लाम के बुनियादी मक़ासिद तौहीद, रिसालत, आखिरत वगैरह को दुनियावी कायनात और इसमें होने वाले अनुभवों, तब्दीलियों और देखी जाने वाली चीज़ों से दलील लेकर ज़ेहन में बैठाया गया है। इसके साथ कुछ नसीहत व सबक लेने वाले तारीख़ी वाकिआत और किस्सों के ज़रिये उन लोगों को डराया गया है जो अल्लाह तआला की इन खुली निशानियों पर नज़र नहीं करते, और इसके अन्तर्गत शिर्क का बातिल होना और उससे संबन्धित कुछ शुब्हात का जवाब दिया गया है। यह खुलासा है इस सूरत के मज़ामीन का।

सूरत के इन मज़ामीन पर गौर करने से यह भी आसानी से समझ में आ सकता है कि पिछली सूरत यानी सूर: तौबा और इस सूरत में आपस में क्या ताल्लुक और जोड़ है। सूर: तौबा में इन्हीं मक़ासिद के लिये इनकार करने वालों और काफ़िरों के साथ जिहाद और कुफ़्र व शिर्क की ताक़त को माही असबाब के ज़रिये तोड़ने का बयान था, और यह सूरत चूँकि जिहाद के अहक़ाम के नाज़िल होने से पहले मक्का में नाज़िल हुई इसलिये इसमें उक्त मक़ासिद को मक्की दौर के कानून के मुताबिक़ सिर्फ़ दलीलों व तथ्यों के ज़रिये साबित किया गया है।

अलिफ़ लाम रा। ये “हुरूफ़-ए-मुक़त्ताआ” कहलाते हैं जो कुरआन मजीद की बहुत सी सूरतों के शुरू में आये हैं। ‘अलिफ़ लाम मीम’, ‘हा-मीम’, ऐन सीन कॉफ़’ वगैरह। इनके मायने की तहकीक़ में मुफ़स्सिरीन की बहसें बहुत लम्बी हैं, सहाबा व ताबिईन और पहले उलेमा व बुजुर्गों की बड़ी जमाअत की तहकीक़ इस किस्म के तमाम ‘हुरूफ़े मुक़त्ताआ’ के बारे में यह है कि ये खास भेद और इशारे हैं, इनके मायने ग़ालिबन रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बतलाये गये हैं, मगर आपने आम उम्मत को सिर्फ़ उन उलूम व मअरिफ़ से आगाह फ़रमाया जिनको उनके ज़ेहन बरदाश्त कर सकें, और जिनके मालूम न होने से उम्मत के कामों में कोई हर्ज उत्पन्न होता है। हुरूफ़े मुक़त्ताआ के भेद ऐसे नहीं जिन पर उम्मत का कोई काम

रुका और टिका हो, या इनके न जानने से उनका कोई हर्ज हो, इसलिये रसूल करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने भी इनके मायनों को उम्मत के लिये गैर-ज़रूरी समझकर बयान नहीं फरमाया। इसलिये हमें भी इसकी तफ़्तीश में न पड़ना चाहिये, क्योंकि यह बात यकीनी है कि अगर इनके मायने जानने में हमारी मस्तेहत (कोई बेहतरी) होती तो रहमते आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उसके बयान करने में कोताही न फरमाते।

ذَلِكَ آيَةُ الْكِتَابِ الْحَكِيمِ ۝

में लफ़्ज़ 'तिल्-क' से इशारा इस सूरत की आयतों की तरफ़ है जिनका ज़िक्र आगे आता है, और किताब से मुराद क़ुरआन है, इसकी सिफ़त इस जगह "हकीम" के लफ़्ज़ से बयान फरमाई है जिसके मायने इस जगह 'हिक्मत वाली किताब' के हैं।

दूसरी आयत में मुशिरकों के एक शुब्हे और एतिराज़ का जवाब है। शुब्हे का हासिल यह है कि उन लोगों ने अपनी जहालत की वजह से यह क़रार दे रखा था कि अल्लाह तआला की तरफ़ से जो रसूल या पैग़म्बर आये वह बशर यानी इन्सान नहीं होना चाहिये, बल्कि कोई फ़रिश्ता होना चाहिये। क़ुरआने करीम ने उनके इस बेहूदा ख़्याल का जवाब कई जगह मुख़लिफ़ उनवानात से दिया है। एक आयत में इरशाद फरमाया:

فَلَوْ كَانَ فِي الْأَرْضِ مَلَائِكَةٌ يُمَشُّونَ مُطْمَئِنِّينَ لَنَزَّلْنَا عَلَيْهِم مِّنَ السَّمَاءِ مَلَكًا رَسُولًا ۝

यानी अगर ज़मीन पर बसने वाले फ़रिश्ते होते तो हम उनके लिये रसूल भी किसी फ़रिश्ते ही को बनाते। जिसका हासिल यह है कि रिसालत का मक़सद बग़ैर इसके पूरा नहीं हो सकता कि जिन लोगों की तरफ़ कोई रसूल भेजा जाये उन लोगों में और उस रसूल में आपसी मुनासबत हो। फ़रिश्तों की मुनासबत फ़रिश्तों से और इन्सान की इन्सान से होती है, जब इन्सानों के लिये रसूल भेजना मक़सद है तो किसी बशर ही को रसूल बनाना चाहिये।

इस आयत में एक दूसरे अन्दाज़ से इसी मज़मून को इस तरह बयान फरमाया है कि उन लोगों का इस बात पर ताज्जुब करना कि बशर को क्यों रसूल बनाया गया और उसको नाफ़रमान इन्सानों को अल्लाह के अज़ाब से डराने और फ़रमाँबरदारों को उसके सवाब की खुशख़बरी सुनाने का काम क्यों सुपुर्द किया गया, यह ताज्जुब खुद ताज्जुब के काबिल है, क्योंकि बशर जिन्स की तरफ़ बशर को रसूल बनाकर भेजना अक्ल के तकाज़े के ऐन मुताबिक़ है।

इस आयत में ईमान वालों को खुशख़बरी इन अलफ़ाज़ में दी गयी:

أَن لَّهُمْ قَدَمٌ صِدْقٍ عِنْدَ رَبِّهِمْ.

इस लफ़्ज़ 'क़दम' के असली मायने तो वही हैं जो उर्दू में समझे जाते हैं यानी पाँव, चूँकि इन्सान की कोशिश व अमल और उसकी तरक्की का सबब 'क़दम' ही होता है, इसलिये दूसरे मायनों में बुलन्द मर्तबे को 'क़दम' कह दिया जाता है। और लफ़्ज़ 'क़दम' की निस्बत 'सिद्क' की तरफ़ करके यह बतला दिया कि यह बुलन्द-मर्तबा जो उनको मिलने वाला है वह हक़ और यकीनी भी है और कायम व बाक़ी रहने वाला भी। दुनिया के पदों और ओहदों की तरह नहीं

कि किसी अमल के नतीजे में अव्वल तो उनका हासिल होना ही यकीनी नहीं होता, और हासिल भी हो जायें तो उनका बाकी रहना यकीनी नहीं हो सकता, बल्कि उनका फ़ानी और ख़त्म हो जाने वाला होना यकीनी है। कभी तो ज़िन्दगी ही में ख़त्म हो जाता है और मौत के वक़्त तो दुनिया के हर मर्तबे व ओहदे और दौलत व नेमत से इनसान ख़ाली हाथ हो जाता है। गुर्ज कि लफ़्ज़ सिद्क के मफ़हूम में उसका यकीनी होना भी शामिल है और कामिल व मुकम्मल कभी ख़त्म न होने वाला होना भी। इसलिये जुमले के मायने यह हुए कि ईमान वालों को यह खुशख़बरी सुना दीजिए कि उनके लिये उनके रब के पास बड़ा दर्जा है जो यकीनन मिलेगा और कभी न ख़त्म होने वाली दौलत होगी।

कुछ मुफ़सिरीन हज़रात ने फ़रमाया कि इस जगह लफ़्ज़ 'सिद्क' लाने में इसकी तरफ़ भी इशारा है कि जन्नत के ये बुलन्द दर्जे सिर्फ़ सिद्क व सच्चाई और इख़्लास ही के ज़रिये हासिल हो सकते हैं, ख़ाली ज़बानी जमा-ख़र्च और सिर्फ़ ज़बान से ईमान का कलिमा पढ़ लेना काफी नहीं, जब तक दिल और ज़बान दोनों से सच्चाई के साथ ईमान इख़्तियार न कर लिया जाये, जिसका लाज़िमी नतीजा नेक आमाल की पाबन्दी और बुरे आमाल से परहेज़ है।

तीसरी आयत में तौहीद (अल्लाह के एक और अकेला माबूद होने) को इस नाक़ाबिले इनकार हकीकत के ज़रिये साबित किया गया है कि आसमान और ज़मीन को पैदा करने में और फिर पूरे आलम के कामों की तदबीर करने और चलाने में जब अल्लाह तआला का कोई शरीक और साझी नहीं तो फिर इबादत व नेकी में कोई दूसरा कैसे शरीक हो सकता है, बल्कि किसी दूसरे को उसमें शरीक करना बड़ी बेइन्साफी और भारी जुल्म है।

इस आयत में यह इरशाद फ़रमाया है कि अल्लाह तआला ने आसमानों और ज़मीन को छह दिन में पैदा फ़रमाया है, लेकिन हमारे उर्फ़ (बोल-चाल) में दिन उस वक़्त को कहा जाता है जो सूरज के निकलने से छुपने तक होता है, और यह ज़ाहिर है कि आसमान व ज़मीन और सितारों के पैदा होने से पहले सूरज ही का वजूद नहीं तो उसके निकलने और छुपने का हिसाब कैसे हो, इसलिये मुराद यहाँ वक़्त की वह मात्रा है जो सूरज के निकलने और ग़रूब के बीच इस जहान में होने वाली थी।

छह दिन के थोड़े से वक़्त में इतने बड़े जहान को जो आसमानों व ज़मीन, सितारों व सय्यारों और आलम की तमाम कायनात पर मुश्तमिल है, बनाकर तैयार कर देना उसी पाक ज़ात का मक़ाम है जो बेपनाह कुदरत का मालिक है, उसके बनाने और पैदा करने के लिये न पहले से कच्चे मैटेरियल का मौजूद होना ज़रूरी है और न बनाने के लिये किसी स्टॉफ़ और कार्यकर्ताओं की ज़रूरत है, बल्कि उसकी कामिल कुदरत का यह मक़ाम है कि जब वह किसी चीज़ को पैदा फ़रमाना चाहे तो बग़ैर किसी सामान और किसी की इमदाद के एक आन में पैदा फ़रमा दे। ये छह दिन की मोहलत भी ख़ास हिक्मत व मस्तेहत की बिना पर इख़्तियार की गयी है वरना उसकी कुदरत में यह भी था कि तमाम आसमान व ज़मीन और उसकी कायनात को एक आन (क्षण) में पैदा फ़रमा देता।

इसके बाद फरमाया:

ثُمَّ اسْتَوَىٰ عَلَى الْعَرْشِ

यानी फिर कायम हुआ अर्श पर। इतनी बात कुरआन व हदीस से साबित है कि रहमान का अर्श कोई ऐसी मख्लूक है जो तमाम आसमानों, ज़मीनों और तमाम आलम की तमाम कायनात को अपने घेरे में लिये हुए है, सारा जहान उसके अन्दर समाया हुआ है। इससे ज़ायद इसकी हकीकत का मालूम करना इनसान के बस की बात नहीं। जो इनसान अपनी साइन्स की इन्तिहाई तरफ़की के ज़माने में भी सिर्फ़ नीचे के सय्यारों (उपग्रहों) तक पहुँचने की तैयारी में है और वह भी अभी नसीब नहीं, और इसका यह इक़्रार है कि ऊपर के सय्यारे हमसे इतने दूर हैं कि वहाँ तक पहुँचने वाले उपकरणों के ज़रिये भी उनकी मालूमात अनुमान और अन्दाज़े से ज्यादा कोई हकीकत नहीं रखती, और बहुत से सितारे ऐसे भी हैं जिनकी किरनें अभी तक ज़मीन पर नहीं पहुँचीं, हालाँकि प्रकाशीय किरनों की हरकत एक मिनट में लाखों मील बताई जाती है। जब सय्यारों (उपग्रहों) और सितारों तक इनसान की पहुँच का यह हाल है तो आसमान जो इन सब सितारों और सय्यारों से ऊपर और सब पर हावी और इनको घेरने वाला रहमान का अर्श है उसकी हकीकत तक इनसान की पहुँच कैसे मुम्किन है।

उक्त आयत से इतना मालूम हुआ कि हक़ तआला ने छह दिन में आसमान व ज़मीन और तमाम कायनात बनाई और उसके बाद अर्श पर कियाम फरमाया।

यह यकीनी और ज़ाहिर है कि हक़ तआला जिस्म, जिस्मानियत और उसकी तमाम सिफ़ात व ख़ुसूसियात से ऊपर व बरतर है, न उसका वजूद किसी ख़ास दिशा और जेहत से ताल्लुक रखता है न उसका किसी मकान में कियाम (ठहरना) इस तरह का है जिस तरह दुनिया की चीज़ों का कियाम अपनी-अपनी जगह में होता है। फिर अर्श पर कियाम फरमाना किस तरह और किस अन्दाज़ के साथ है यह उन मुतशाबिहात में से है जिनको इनसान की अक्ल व समझ नहीं पा सकती, इसी लिये कुरआने हकीम का इरशाद उनके बारे में यह है कि:

وَمَا يَعْلَمُ تَاْوِيلَهُ إِلَّا اللَّهُ، وَالرَّسُخُونَ فِي الْعِلْمِ يَقُولُونَ اهْتَابَ

यानी उनको सिवाय खुदा तआला के कोई नहीं जानता, और मज़बूत और सही इल्म वाले उस पर ईमान लाने का इक़्रार करते हैं मगर उसकी हकीकत जानने की फ़िक्र में नहीं पड़ते, इसलिये इस किस्म के तमाम मामलात में जिनमें हक़ तआला की निस्बत किसी मकान या दिशा की तरफ़ की गयी है, या जिनमें हक़ तआला के लिये हाथ, पैर, पिंडली और चेहरे वगैरह अंगों के अलफ़ाज़ कुरआन में आये हैं, उलेमा-ए-उम्मत की अक्सरियत का अक्कीदा यह है कि इस बात पर ईमान लाया जाये कि ये कलिमात अपनी जगह पर हक़ हैं और इनसे जो मुराद हक़ तआला की है वह सही है, और उसकी कैफ़ियत व हकीकत के जानने की फ़िक्र को अपनी अक्ल से ऊपर की चीज़ होने की बिना पर छोड़ दिया जाये।

न हर जाय मर्कब तवाँ ताख़तन

कि जाहा सिपर बायद अन्दाख़तन

तर्जुमा: हर जगह अक्ल के घोड़े नहीं दौड़ाने चाहियें। कुछ जगह ऐसी भी होती हैं जहाँ हथियार डाल देना ही अक्लमन्दी है। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

और जिन बाद के उलेमा-ने इन चीज़ों के कोई मायने बयान फ़रमाये हैं उनके नज़दीक भी वो सिर्फ़ एक सम्भावित के दर्जे में हैं कि शायद यह मायने हों, उस मायने को वे यकीनी नहीं फ़रमाते, और ख़ाली संभावना और गुमान ज़ाहिर है कि किसी हकीकत को स्पष्ट नहीं कर सकते, इसलिये साफ़ और सीधा मसलक पहले बुजुर्गों और सहाबा व ताबिईन ही का है जिन्होंने इन चीज़ों की हकीकत को अल्लाह के इल्म के सुर्द करने पर कनाअत फ़रमाई। इसके बाद फ़रमाया:

يَلْبِثُ الْأَمْرَ

यानी अ़र्श पर कायम होकर वह तमाम ज़हानों का इन्तिज़ाम खुद अपनी कुदरत से अन्जाम देता है।

عَامِنٌ شَفِيعٌ إِلَّا مِنْ بَعْدِ إِذْنِهِ

यानी किसी नबी व रसूल को भी उसकी बारगाह में सिफ़ारिश करने की अपने आप कोई मज़ाल नहीं, जब तक हक़ तआला ही उनको सिफ़ारिश करने की इजाज़त अता न फ़रमायें वे भी किसी की सिफ़ारिश नहीं कर सकते।

चौथी आयत में आख़िरत के अ़कीदे का बयान है:

إِلَيْهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيعًا

यानी उसी की तरफ़ लौटना है तुम सब को।

وَعَدَ اللَّهُ حَقًّا

यह वायदा है अल्लाह का हक़ और सही।

إِنَّهُ يَبْدَأُ الْخَلْقَ ثُمَّ يُعِيدُهُ

यानी वह पहली बार में पैदा करता है तमाम मख़्लूक को और वही उसको क़ियामत में दोबारा ज़िन्दा फ़रमायेगा। इस जुमले में बतला दिया कि इस पर कोई ताज्जुब करने की बात नहीं कि यह सारी कायनात फ़ना हो जाने के बाद फिर कैसे ज़िन्दा होगी, क्योंकि जिस पवित्र ज़ात के कब्जे में यह है कि पहली बार में किसी चीज़ को बग़ैर किसी मादे (मैटेरियल) के और बग़ैर किसी पहले की शक़ल व सूरत के पैदा कर दे उसके लिये क्या मुश्किल है कि पैदा शुदा मख़्लूक को फ़ना करने के बाद फिर दोबारा पैदा कर दे।

هُوَ الَّذِي جَعَلَ الشَّمْسُ ضِيَاءً وَالْقَمَرَ نُورًا وَقَدَرَهُ مَنَازِلَ لِتَعْلَمُوا عَدَدَ السِّنِينَ وَ
الْحِسَابَ مَا خَلَقَ اللَّهُ ذَلِكَ إِلَّا بِالْحَقِّ يُفَصِّلُ الْآيَاتِ لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ① إِنَّ فِي اخْتِلَافِ اللَّيْلِ
وَالنَّهَارِ وَمَا خَلَقَ اللَّهُ فِي السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ لَآيَاتٍ لِّقَوْمٍ يَتَّقُونَ ②

वल्लज़ी ज-अलशशम्-स ज़ियाअंव-
ल्क-म-र नूरंव-व कद्द-रहू
नाज़ि-ल लितज़ूलमू अ-ददस्सिनी-न
लिहसा-ब, मा ख़ा-लक़ल्लाहु
लि-क इल्ला बिल्हक्कि
फ़स्सिलुल्-आयाति लिक्ौमिय-
ज़ूलमून (5) इन्-न फ़िख़्रिलाफ़िल्-
लि वन्नहारि व मा ख़ा-लक़ल्लाहु
फ़स्समावाति वल्अज़ि लआयातिल्
लेक्ौमिय्यत्तकून (6)

वही है जिसने बनाया सूरज को चमक
और चाँद को चाँदना, और मुकर्र कीं
उसके लिये मन्ज़िलें ताकि पहचानो गिनती
बरसों की और हिसाब, यूँ ही नहीं बनाया
अल्लाह ने ये सब मगर तदबीर से, ज़ाहिर
करता है निशानियाँ उन लोगों के लिये
जिनको समझ है। (5) अलबत्ता बदलने
में रात और दिन के और जो कुछ पैदा
किया है अल्लाह ने आसमानों और ज़मीन
में, निशानियाँ हैं उन लोगों के लिये जो
डरते हैं। (6)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

वह (अल्लाह) ऐसा है जिसने सूरज को चमकता हुआ बनाया और चाँद को (भी) नूरानी
गाया, और उस (की चाल) के लिये मन्ज़िलें मुकर्र कीं (कि हर दिन एक मन्ज़िल का सफ़र
ता है) ताकि (उन मन्ज़िलों के ज़रिये से) तुम बरसों की गिनती और हिसाब मालूम कर लिया
रो। अल्लाह तआला ने ये चीज़ें बेफ़ायदा पैदा नहीं कीं। वह ये दलीलें उन लोगों को
फ़-साफ़ बतला रहे हैं जो समझ रखते हैं। बेशक रात और दिन के एक के बाद दूसरे के आने
और अल्लाह ने जो कुछ आसमानों और ज़मीन में पैदा किया है इन सब में उन लोगों के
स्ते (अल्लाह के एक होने की) दलीलें हैं जो (ख़ुदा का) डर मानते हैं।

मज़ारिफ़ व मसाईल

इन आयतों में दुनिया की कायनात की बहुत सी निशानियाँ बयान हुई हैं जो अल्लाह जल्त
लुहू की कामिल कुदरत और हिक्मते बालिगा पर गवाह और इसकी दलीलें हैं कि अल्लाह
बुल-इज्ज़त इस पर पूरी तरह कादिर है कि इस आलम को फ़ना करने और ज़र्ज़-ज़र्ज़ कर देने
बाद फिर उन ज़रों को जमा कर दे और फिर नये सिरे से उन सब को ज़िन्दा कर दे और
साब व किताब के बाद जज़ा व सज़ा का क़ानून नाफ़िज़ कर दे, और यह कि यही अक़्त व
क्मत का तकाज़ा है। इस तरह ये आयतें उस संक्षिप्तता की तफ़सील हैं जो पीछे गुज़री आयत
ख़र तीन में आसमान व ज़मीन की छह दिन में पैदाईश और फिर अल्लाह तआला के अर्श पर
अयम होने के बाद 'युदब्बिरुल् अम्-र' के अलफ़ाज़ में बयान की थी, कि उसने आलम को

सिर्फ पैदा करके नहीं छोड़ दिया बल्कि हर वक्त हर आन में हर चीज़ का निज़ाम व इन्तिज़ाम भी उसी के हाथ में है।

उसी निज़ाम व इन्तिज़ाम (व्यवस्था और प्रबन्धन) का एक हिस्सा यह है:

هُوَ الَّذِي جَعَلَ الشَّمْسُ ضِيَاءً وَالْقَمَرَ نُورًا.

‘ज़िया’ और ‘नूर’ दोनों के मायने चमक और रोशनी के हैं, इसी लिये लुग़त के अनेक इमामों ने इन दोनों लफ्ज़ों को मायने के एतबार से एक जैसा कहा है। अल्लामा ज़मख़शरी और तय्यिबी वगैरह ने फ़रमाया कि अगरचे रोशनी के मायने इन दोनों लफ्ज़ों में संयुक्त हैं मगर लफ्ज़ नूर आम है, हर ताक़तवर व कमज़ोर, हल्की और तेज़ रोशनी को नूर कहा जाता है, और ज़ू व ज़िया ताक़तवर और तेज़ रोशनी को कहते हैं। इनसान को दोनों किस्म की रोशनियों की ज़रूरत पड़ती है। आम कारोबार के लिये दिन की तेज़ रोशनी दरकार है और मामूली कामों के लिये रात की हल्की रोशनी महबूब है। अगर दिन में भी सिर्फ़ चाँद की फीकी रोशनी रहे तो कारोबार में ख़लल आये, और अगर रात को भी सूरज चमकता रहे तो नींद और रात के मुनासिब कामों में ख़लल आये, इसलिये कुदरत ने दोनों तरह की रोशनी का इन्तिज़ाम इस तरह फ़रमाया कि सूरज की रोशनी को ज़ू व ज़िया का दर्जा दिया और कारोबार के वक्त उसको ज़ाहिर फ़रमाया, और चाँद की रोशनी को हल्की और फीकी रोशनी बनाया और रात को उसके ज़ाहिर होने का वक्त बनाया।

क़ुरआने करीम ने सूरज व चाँद की रोशनियों में फ़र्क व भेद को अनेक जगह विभिन्न उनदानों से बयान फ़रमाया है। सूरः नूह में है:

وَجَعَلَ الْقَمَرَ لِيَهْنُ نُورًا وَجَعَلَ الشَّمْسُ مِرَاجًا.

सूरः फ़ुरक़ान में फ़रमाया:

وَجَعَلَ فِيهَا مِرَاجًا وَقَمَرًا مُنِيرًا.

सिराज के मायने चिराग़ के हैं और चूँकि चिराग़ का नूर ज़ाती होता है कि किसी दूसरी चीज़ से हासिल किया हुआ नहीं होता इसलिये कुछ हज़रात ने यह कहा कि ‘ज़िया’ किसी चीज़ की ज़ाती रोशनी को कहते हैं और ‘नूर’ उसको जो दूसरे से हासिल की हुई हो। मगर यह बज़ाहिर यूनानी वैज्ञानिकों से प्रभावित होकर कहा गया है वरना लुग़त में इसकी कोई असल नहीं, और क़ुरआने करीम ने भी इसका कोई निश्चित फैसला नहीं किया।

ज़ुज़ाज ने लफ्ज़ ‘ज़िया’ को ‘ज़ू’ की जमा (बहुवचन) करार दिया है। इसके मुताबिक़ शायद इस तरफ़ इशारा हो कि रोशनी के सात मशहूर रंग और किस्में जो दुनिया में पाई जाती हैं सूरज उन तमाम किस्मों का जामे है, जो बारिश के बाद इन्द्रधनुष में ज़ाहिर होते हैं। (मनार)

सूरज व चाँद के निज़ाम में कुदरत की निशानियों का एक दूसरा मक़सद यह है:

وَقَدْ رَهِ مَنَازِلَ لِّتَعْلَمُوا عَدَدَ السِّنِينَ وَالْحِسَابَ.

‘क़द-र’ लफ्ज़ तक़दीर से बना है। तक़दीर के मायने किसी चीज़ को समय, मकान या

सिफ़ात के एतिबार से एक विशेष मात्रा और पैमाने पर रखने के हैं। रात और दिन के वक़्तों को एक खास पैमाने पर रखने के लिये क़ुरआने करीम ने फ़रमाया:

وَاللّٰهُ يَقْدِرُ اللَّيْلَ وَالنَّهَارَ.

स्थानिक फ़ासले और सफ़री दूरी को एक खास पैमाने पर रखने के लिये दूसरी जगह मुल्के शाम और सबा के बीच की बस्तियों के बारे में फ़रमाया:

وَقَدْ رَأٰنَا فِيهَا السَّيْرَ.

और आम मिक्दारों के बारे में फ़रमाया:

وَخَلَقَ كُلَّ شَيْءٍ فَقْدَرَهُ تَقْدِيرًا.

लफ़्ज़ 'मनाज़िल' 'मन्ज़िल' की जमा (बहुवचन) है जिसके असली मायने नाज़िल होने और उतरने की जगह के हैं, अल्लाह तआला ने सूरज व चाँद दोनों की रफ़्तार के लिये खास हदें मुक़रर फ़रमाई हैं जिनमें से हर एक को मन्ज़िल कहा जाता है। चाँद चूँकि अपना दौरा हर महीने में पूरा कर लेता है इसलिये उसकी मन्ज़िलें तीस या उन्तीस होती हैं, मगर चूँकि हर महीने में चाँद कम से कम एक दिन ग़ायब रहता है इसलिये उमूमन चाँद की मन्ज़िलें अट्ठाईस कही जाती हैं। और सूरज का दौरा साल भर में पूरा होता है उसकी मन्ज़िलें तीन सौ साठ या पैंसठ होती हैं। अरब के पुराने जाहिली दौर में भी और हिसाब जानने वालों और आसमानों के हालात और सितारों की चालों का इल्म रखने वालों के नज़दीक भी इन मन्ज़िलों के खास-खास नाम उन सितारों की मुनासबत से रख दिये गये हैं जो इन मन्ज़िलों के बराबर और मुक़ाबिल में पाये जाते हैं। क़ुरआने करीम इन परिभाषिक नामों से ऊपर है, इसकी मुराद सिर्फ़ वो फ़ासले हैं जिनको सूरज व चाँद खास-खास दिनों में तय करते हैं।

ज़िक्र हुई आयत में 'क़द्द-रहू मनाज़िल' एक वचन की ज़मीर के साथ इस्तेमाल किया है हालाँकि मन्ज़िलें सूरज व चाँद दोनों की हैं, इसलिये मुफ़स्सरीन हज़रात में से कुछ ने फ़रमाया कि अगरचे ज़िक्र एक वचन का है मगर मुराद दोनों हैं, जिसकी मिसालें क़ुरआन और अरबी मुहावरों में अधिकता के साथ पाई जाती हैं।

और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि अगरचे मन्ज़िलें अल्लाह तआला ने सूरज और चाँद दोनों ही के लिये कायम फ़रमा दी हैं मगर इस जगह बयान सिर्फ़ चाँद की मन्ज़िलों का मक़सूद है इसलिये 'क़द्द-रहू' की ज़मीर चाँद की तरफ़ लौट रही है। खास करने की वजह यह है कि सूरज की मन्ज़िलें तो उपकरणों और हिसाब के बग़ैर मालूम नहीं हो सकतीं, उसका निकलना और ग़ु़रूब होना एक ही शक़्ल व अन्दाज़ में साल के तमाम दिनों में होता रहता है। देखने से किसी को यह पता नहीं चल सकता कि आज सूरज कौनसी मन्ज़िल में है, बख़िलाफ़ चाँद के कि उसके हालात हर दिन भिन्न और अलग होते हैं, महीने के आख़िर में बिल्कुल नज़र नहीं आता। इस तरह की तब्दीलियों को न देखने वाले और अनुभव से ख़ाली लोग भी तारीख़ों का पता चला सकते हैं, मसलन आज मार्च की आठ तारीख़ है, कोई शख़्स सूरज को देखकर यह मालूम नहीं

कर सकता कि आठ है या इक्कीस, बख़िलाफ़ चाँद के कि उसको देखकर भी तारीख़ का पता चलाया जा सकता है।

ज़िक्र हुई आयत में चूँकि यह बतलाना मकसूद है कि अल्लाह तआला की इन अज़ीमुशान निशानियों से इनसान का यह फ़ायदा भी जुड़ा हुआ है कि इनके ज़रिये वह साल और महीना और उसकी तारीख़ों का हिसाब मालूम करे, और यह हिसाब भी अगरचे सूरज व चाँद दोनों ही से मालूम हो सकता है और दुनिया में दोनों तरह के साल और महीने अंग्रेज़ी और चाँद दोनों ही के हिसाब से मालूम हो सकता है और दुनिया में दोनों तरह के साल और महीने अंग्रेज़ी और चाँद के पुराने ज़माने से प्रचलित भी हैं, और कुरआने करीम ने भी सूर: बनी इस्राईल की आयत नम्बर 12 में फ़रमाया:

وَجَعَلْنَا اللَّيْلَ وَالنَّهَارَ آيَتَيْنِ فَمَحْوَةٌ آيَةُ اللَّيْلِ وَجَعَلْنَا آيَةَ النَّهَارِ مُبْصِرَةً لِّتَبْتَغُوا فَضْلًا مِّن رَّبِّكُمْ وَلِتَعْلَمُوا عَدَدَ

الْبَيْنِينَ وَالْحِسَابَ.

इसमें 'आयतल-लैलि' से मुराद चाँद और 'आयतन्नहारि' से मुराद सूरज है, और दोनों का ज़िक्र करने के बाद फ़रमाया कि इनसे तुम सालों का अ़दद और महीनों की तारीख़ों का हिसाब मालूम कर सकते हो। और सूर: रहमान में फ़रमाया:

الشَّمْسُ وَالْقَمَرُ بِحُسْبَانٍ.

जिसमें बतलाया गया है कि सूरज व चाँद दोनों के ज़रिये तारीख़, महीने और साल का हिसाब मालूम किया जा सकता है।

लेकिन चाँद के ज़रिये महीने और तारीख़ का हिसाब देखने और तजुर्बे से मालूम है बख़िलाफ़ सूरज के कि उसके हिसाबत सिवाय रियाज़ी (हिसाब जानने) वालों के कोई दूसरा नहीं समझ सकता। इसलिये इस आयत में सूरज व चाँद दोनों का ज़िक्र करने के बाद जब उनकी मन्ज़िलें मुक़रर करने का ज़िक्र फ़रमाया तो एक वचन की ज़मीर 'क़द-रहू' इरशाद फ़रमाकर मन्ज़िलें सिर्फ़ चाँद की बयान फ़रमाई गयीं।

और चूँकि इस्लामी अहक़ाम में हर जगह हर मौक़े पर इसकी रियायत रखी गयी है कि उनकी अदायेगी हर शख्स के लिये आसान हो, चाहे वह कोई लिखा पढ़ा आदमी हो या अनपढ़, शहरी हो या देहाती, इसी लिये उमूमन इस्लामी अहक़ाम में चाँद के सन्, महीने और तारीख़ों का एतबार किया गया है। नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात, इदत वगैरह इस्लामी फ़राईज़ व अहक़ाम में चाँद का हिसाब ही रखा गया है।

इसके यह मायने नहीं कि सूरज का हिसाब रखना या इस्तेमाल करना नाजायज़ है, बल्कि इसका इस्तिथार है कि कोई शख्स नमाज़, रोज़े, हज, ज़कात और इदत के मामले में तो चाँद का हिसाब शरीअत के मुताबिक़ इस्तेमाल करे मगर अपने कारोबार, तिजारत वगैरह में सूरज का (यानी अंग्रेज़ी तारीख़ों का) हिसाब इस्तेमाल करे, शर्त यह है कि कुल मिलाकर मुसलमानों में चाँद का हिसाब जारी रहे ताकि रमज़ान और हज वगैरह के वक़्त मालूम होते रहें, ऐसा न हो कि

उसे जनवरी फरवरी वगैरह के सिवा कोई महीने ही मालूम न हों। फुकहा (कुरआन व हदीस के माहिर उलेमा) ने चाँद का हिसाब बाकी रखने को मुसलमानों के जिम्मे फर्ज किफाया करार दिया है। और इसमें भी शुक्ल नहीं कि तमाम अम्बिया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तथा खुलफा-ए-राशिदीन की सुन्नत व तरीके में चाँद का ही हिसाब इस्तेमाल किया गया है, इसकी पैरवी बरकत व सवाब का जरिया है।

गर्ज कि उक्त आयतों में अल्लाह जल्ल शानुहू की कुदरत और कामिल हिक्मत का बयान है कि उसने रोशनी के दो अजीमुश्शान और विशाल खजाने ज़रूरत के मुनासिब पैदा फरमाये और फिर हर एक की रफ्तार के लिये ऐसे पैमाने मुकर्रर फरमा दिये जिनसे साल, महीना, तारीख और वक्तों के एक-एक मिनट का हिसाब मालूम किया जा सकता है, न कभी उनकी रफ्तार में फर्क आता है न कभी आगे पीछे होते हैं, न उन खुदा की बनाई हुई मशीनों में कभी मरम्मत का अन्तराल होता है न उनको ग्रीसिंग की ज़रूरत होती है, न वो कभी घिसती टूटती हैं। जिस शान से कायनात के पहले दिन में चला दिया था आज भी चल रही हैं।

इसके बाद आयत के आखिर में इसी पर अधिक तंबीह के लिये फरमाया:

مَا خَلَقَ اللَّهُ ذَلِكَ إِلَّا بِالْحَقِّ يُفَصِّلُ الْآيَاتِ لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ

यानी इन सब चीजों को अल्लाह तआला ने बेफायदा पैदा नहीं किया बल्कि इनमें बड़ी-बड़ी हिक्मतें और इनसान के लिये बेशुमार फायदे छुपे हुए हैं, वह ये दलीलें उन लोगों को साफ़ साफ़ बतला रहे हैं जो अक्ल व समझ रखते हैं।

इसी तरह दूसरी आयत में इरशाद फरमाया कि रात दिन के एक के बाद एक आने में और जो कुछ अल्लाह ने आसमानों और ज़मीन में पैदा किया है उन सब में उन लोगों के वास्ते (तौहीद व आखिरत की) दलीलें हैं जो खुदा तआला का डर मानते हैं।

तौहीद (अल्लाह के एक और अकेला माबूद होने) की दलीलें तो कुदरत व कारीगरी में बेमिसाल होना और बगैर किसी इमदाद के इन तमाम चीजों को पैदा करना और ऐसे निज़ाम के साथ चलाना है जो न कभी टूटता है न बदलता है।

और आखिरत की दलीलें इसलिये हैं कि जिस हिक्मत वाली ज़ात ने इन तमाम चीजों को इनसानों के फायदे के लिये बनाया और एक स्थिर निज़ाम का पाबन्द किया, उससे यह मुश्किन नहीं कि कायनात के इस मख़दूम (यानी इनसान) को उसने बेफायदा महज़ खाने पीने के लिये पैदा किया हो, इसके जिम्मे कुछ फराईज़ न लगाये हों। और जब यह लाज़िम हुआ कि कायनात के इस मख़दूम यानी इनसान पर भी कुछ पाबन्दियाँ होनी ज़रूरी हैं तो यह भी लाज़िम हुआ कि उन पाबन्दियों को पूरा करने वालों और न करने वालों का कभी कहीं हिसाब हो, करने वालों को अच्छा बदला मिले और न करने वालों को सज़ा, और यह भी ज़ाहिर है कि इस दुनिया में जज़ा व सज़ा का यह दस्तूर नहीं, यहाँ तो मुजरिम बहुत सी बार मुत्तकी पारसा से ज्यादा अच्छी ज़िन्दगी गुज़ारता है, इसलिये ज़रूरी है कि हिसाब और जज़ा व सज़ा का कोई दिन मुकर्रर हो, उसी का नाम कियामत और आखिरत है।

إِنَّ الَّذِينَ لَا يَرْجُونَ لِقَاءَنَا وَرَضُوا بِالْحَيَاةِ الدُّنْيَا وَاطْمَأَنَّنُوا بِهَا وَالَّذِينَ هُمْ عَنْ آلَتِنَا
 غَفُلُونَ ۖ أُولَٰئِكَ مَا لَهُمْ النَّارُ إِلَّا مَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ۝ إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ يَهْدِيهِمْ رَبُّهُمْ
 بِإِيمَانِهِمْ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهِمُ الْأَنْهَارُ فِي جَنَّاتِ النَّعِيمِ ۝ دَعَوْهُمْ فِيهَا سُبْحَانَكَ اللَّهُمَّ وَتَحِيَّتُهُمْ
 فِيهَا سَلَامٌ ۖ وَأُخْرَدُ دَعْوُهُمْ إِنَّ الْخِطَابَ لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ۝

इन्नल्लजी-न ला यरजू-न लिफा-अना
 व रजू बिल्हयातिदुन्या वत्म-अन्नू
 बिहा वल्लजी-न हुम् अन् आयातिना
 गाफिलून (7) उलाइ-क
 मअवाहुमुन्नारु बिमा कानू यक्सिबून
 (8) इन्नल्लजी-न आमनू व
 अमिलुस्सालिहाति यहदीहिम् रब्बुहुम्
 बिईमानिहिम् तजरी मिन् तस्तिहिमुल्
 -अन्हारु फी जन्नातिन्-नअमीम (9)
 दअवाहुम् फीहा सुब्हान-कल्लाहुम्-म
 व तहिय्यतुहुम् फीहा सलामुन् व
 आझारु दअवाहुम् अनिल्-हम्दु
 लिल्लाहि रब्बिल्-आलमीन (10) ❀

अलबल्ला जो लोग उम्मीद नहीं रखते
 हमारे मिलने की और खुश हुए दुनिया
 की जिन्दगी पर और इसी पर संतुष्ट हो
 गये और जो लोग हमारी निशानियों से
 बेछाबर हैं। (7) ऐसों का ठिकाना है
 आग, बदला उसका जो कमाते थे। (8)
 अलबल्ला जो लोग ईमान लाये और काम
 किये अच्छे, हिदायत करेगा उनको रब
 उनका उनके ईमान से, बहती हैं उनके
 नीचे नहरें आराम के बागों में। (9)
 उनकी दुआ उस जगह यह कि पाक जात
 है तेरी या अल्लाह! और मुलाकात उनकी
 सलाम। और खात्मा उनकी दुआ का इस
 पर कि सब खूबी अल्लाह के लिये जो
 परवर्दिगार है सारे जहान का। (10) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

जिन लोगों को हमारे पास आने का खटका नहीं है और वे दुनिया की जिन्दगी पर राजी हो
 गये हैं (आखिरत की तलब बिल्कुल नहीं करते) और इसमें जी लगा बैठे हैं (आईन्दा की कुछ
 खबर नहीं), और जो लोग हमारी आयतों से (जो कि कियामत के दिन उठने पर दलालत करती
 हैं) बिल्कुल गाफिल हैं, ऐसे लोगों का ठिकाना उनके (इन) आमाल की वजह से दोज़ख है।
 (और) यकीनन जो लोग ईमान लाये और उन्होंने नेक काम किये, उनका रब उनके मोमिन होने
 की वजह से उनके मकसद (यानी जन्नत) तक पहुँचा देगा। उनके (ठिकाने के) नीचे नहरें जारी
 होंगी, चैन के बागों में। (और जिस वक़्त वे जन्नत में जायेंगे और वहाँ की अनोखी चीज़ों को

अचानक देखेंगे तो उस वक़्त) उनके मुँह से यह बात निकलेगी कि सुब्हानल्लाह! और (फिर जब एक दूसरे को देखेंगे तो) उनका आपस में सलाम उसमें यह होगा अस्सलामु अलैकुम! और (जब इत्मीनान से वहाँ जा बैठेंगे और अपनी पुरानी मुसीबतों व दुश्वारियों और उस वक़्त के बेहतरीन हमेशा रहने वाले ऐश की तुलना करेंगे तो) उनकी (उस वक़्त की बातों में) आखिरी बात यह होगी- अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल-आलमीन (जैसा कि एक दूसरी आयत में है 'अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी अज़्ह-ब अन्नल् ह-ज़-न)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में अल्लाह जल्ल शानुहू की कामिल क़ुदरत और हिक्मत के खास-खास निशानात आसमान व ज़मीन, सूरज व चाँद वग़ैरह की पैदाईश का ज़िक्र करके आखिरत व तौहीद के अक़ीदे को एक असरदार अन्दाज़ में साबित किया गया था, उपर्युक्त आयतों में से पहली तीन आयतों में यह बतलाया गया है कि दुनिया की कायनात की ऐसी खुली-खुली निशानियों और शहादतों के बावजूद इनसानों के दो वर्ग हो गये- एक वह जिसने क़ुदरत की इन आयतों की तरफ़ ज़रा भी ध्यान न दिया, न अपने पैदा करने वाले मालिक को पहचाना और न इस पर ग़ौर किया कि हम दुनिया के आम जानवरों की तरह एक जानवर नहीं, रब्बुल-इज्ज़त ने हमें अक़ल व समझ और शऊर व होश तमाम जानवरों से ज़्यादा दिया है और सारी मख़्लूक़ात को हमारा ख़ादिम (सेवक) बना दिया है तो हमारे जिम्मे भी कोई काम लगाया होगा, और उसका हमें भी हिसाब देना होगा, जिसके लिये ज़रूरी है कि कोई हिसाब और जज़ा का दिन मुक़रर हो जिसको क़ुरआनी परिभाषा में क़ियामत और हश्र व नश्र से ताबीर किया जाता है, बल्कि उन्होंने अपनी ज़िन्दगी को आम जानवरों की सतह पर रखा। पहली दो आयतों में उन लोगों की खास निशानियाँ बतलाकर उनकी आखिरत की सज़ा का ज़िक्र किया गया है, फ़रमाया कि "जिन लोगों को हमारे पास आने का खटका नहीं है और उनकी हालत यह है कि आखिरत की हमेशा वाली ज़िन्दगी और उसकी राहत व तकलीफ़ को भुलाकर सिर्फ़ दुनिया की ज़िन्दगी पर राज़ी हो गये।

दूसरे यह कि "इस दुनिया में ऐसे मुत्मईन होकर बैठे हैं कि गोया यहाँ से कहीं जाना ही नहीं, हमेशा-हमेशा यहीं रहना है। उनको कभी यह ध्यान नहीं आता कि इस दुनिया से हर शख्स का रुख़सत होना तो ऐसा आसानी से समझ में आने वाला मसला है जिसमें कभी किसी को शुब़्हा ही नहीं हो सकता, और जब यहाँ से जाना यकीनी है तो जहाँ जाना है वहाँ की कुछ तैयारी होनी चाहिये।"

तीसरे यह कि "ये लोग हमारी आयतों और निशानियों से लगातार ग़फ़लत ही ग़फ़लत में हैं। अगर वे आसमान व ज़मीन और उनके बीच की आम मख़्लूक़ात में और खुद अपनी जान में ज़रा भी ग़ौर करते तो असल हक़ीक़त का समझना कुछ मुश्किल न होता, और वे इस बेवक़ूफी भी ग़फ़लत से निकल सकते थे।

ऐसे लोग जिनकी यह निशानियाँ बतलाई गयीं उनकी सज़ा आखिरत में यह है कि उनका

ठिकाना जहन्नम की आग है, और यह सज़ा खुद उनके अपने अमल का नतीजा है।

अफसोस है कि कुरआने करीम ने जो निशानियाँ काफ़िरों व इनकारियों की बतलाई हैं आज हम मुसलमानों का हाल उनसे कुछ अलग नहीं, हमारी ज़िन्दगी और हमारे दिन रात के कामों और ख्याल व सोच को देखकर कोई नहीं समझ सकता कि हमें इस दुनिया के सिवा और भी कोई फ़िक्र लगी हुई है, और इसके बावजूद हम अपने आपको पक्का और सच्चा मुसलमान यकीन किये हुए हैं, और हकीकत यह है कि सच्चे और पक्के मुसलमान, जैसे कि हमारे बुजुर्ग थे उनके चेहरे देखकर खुदा याद आता और यह महसूस होता था कि ये किसी हस्ती का ख़ौफ़ और किसी हिसाब की फ़िक्र दिल में रखते हैं, और तो और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का भी बावजूद गुनाहों से मासूम होने के यही हाल था। शमाईल-ए-तिर्मिज़ी में है कि हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अक्सर समय गुमगीन और चिंतित नज़र आते थे।

तीसरी आयत में उन खुशनसीब इनसानों का ज़िक्र है जिन्होंने अल्लाह जल्ल शानुहू की क़ुदरत की आयतों (निशानियों) में ग़ौर किया और उसको पहचाना, उस पर ईमान लाये और ईमान के तकाज़े पर अमल करके नेक आमाल के पाबन्द हो गये।

कुरआने करीम ने उन हज़रात के लिये दुनिया व आख़िरत में जो अच्छा सिला और जज़ा मुक़र्रर फ़रमाई है उसका ज़िक्र इस तरह फ़रमाया है:

أُولَٰئِكَ يَهْدِيهِم رَّبُّهُمْ إِلَىٰ صِرَاطٍ مُّبِينٍ

यानी उनका रब उनको ईमान की वजह से मन्ज़िले मक़सूद यानी जन्नत दिखलायेगा, जिसमें चैन व आराम के बाग़ों में नहरें बहती होंगी।

इसमें लफ़ज़ हिदायत आया है जिसके मशहूर मायने रास्ता बतलाने और दिखलाने के हैं, और कभी मन्ज़िले मक़सूद तक पहुँचा देने के मायने में भी इस्तेमाल होता है। इस मक़ाम पर यही मायने मुराद हैं, और मन्ज़िले मक़सूद से मुराद जन्नत है जिसकी वज़ाहत बाद के अलफ़ाज़ में हो गयी है। जिस तरह पहले वर्ग की सज़ा उनके अपने करतूत का नतीजा थी इसी तरह इस दूसरे मोमिन तब्क़े की जज़ा के बारे में फ़रमाया कि यह बेहतरीन जज़ा उनको उनके ईमान की वजह से मिली है, और चूँकि ऊपर ईमान के साथ नेक अमल का ज़िक्र आ चुका है इसलिये इस जगह ईमान से वही ईमान मुराद होगा जिसके साथ नेक आमाल भी हों। ईमान और नेक अमल का बदला बेनज़ीर राहतों और नेमतों का मक़ाम यानी जन्नत है।

चौथी आयत में जन्नत में पहुँचने के बाद जन्नत वालों के चन्द मख़सूस हालात बतलाये हैं। अब्बल यह कि:

دَعْوُهُمْ فِيهَا سُبْحَانَكَ اللَّهُمَّ

इसमें लफ़ज़ दअ़्वा अपने मशहूर मायने में नहीं जो कोई मुद्दई अपने मुख़ालिफ़ और सामने वाले के मुक़ाबले में किया करता है, बल्कि इस जगह लफ़ज़ दअ़्वा दुआ के मायने में है। मायने यह है कि जन्नत वालों की दुआ जन्नत में पहुँचने के बाद यह होगी कि वे सुल्हानकल्लाहुम्-म कहते रहेंगे, यानी अल्लाह जल्ल शानुहू की पाकी बयान किया करेंगे।

यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि दुआ तो आम उर्फ़ में किसी चीज़ की दरख्वास्त और किसी मकसद के तलब करने को कहा जाता है, सुब्हानकल्लाहुम्-म में न कोई दरख्वास्त है न तलब, इसको दुआ किस हैसियत से कहा गया?

जवाब यह है कि इस कलिमे से बतलाना यह मकसूद है कि जन्नत वालों को जन्नत में हर राहत हर मतलब मन-माने अन्दाज़ से खुद-बखुद हासिल होगी, किसी चीज़ को माँगने और दरख्वास्त करने की ज़रूरत ही न होगी, इसलिये दरख्वास्त व तलब और परिचित दुआ के कायम-मकाम उनकी ज़बानों पर सिर्फ़ अल्लाह की तस्बीह होगी और वह भी दुनिया की तरह कोई इबादत का फरीज़ा अदा करने के लिये नहीं बल्कि वे तस्बीह के इस कलिमे से लज़्ज़त महसूस करेंगे और अपनी खुशी से सुब्हानकल्लाहुम्-म कहा करेंगे। इसके अलावा एक हदीस-ए-कुदसी में है कि अल्लाह तआला ने फ़रमाया- “जो बन्दा मेरी तारीफ़ व सना में हर वक़्त लगा रहे यहाँ तक कि उसको अपने मतलब की दुआ माँगने की भी फ़ुर्सत न रहे तो मैं उसको तमाम माँगने वालों से बेहतर चीज़ दूँगा, यानी बिना माँगे उसके सब काम पूरे कर दूँगा।” इस हैसियत से भी लफ़्ज़ ‘सुब्हानकल्लाहुम्-म’ को दुआ कह सकते हैं।

इसी मायने के एतिबार से सही बुख़ारी व मुस्लिम की हदीस में है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जब कोई तकलीफ़ व बेचैनी पेश आती तो आप यह दुआ पढ़ा करते थे:

لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ الْعَظِيمُ الْحَلِيمُ، لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ رَبُّ الْعَرْشِ الْعَظِيمِ، لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ رَبُّ السَّمَوَاتِ وَرَبُّ الْأَرْضِ وَرَبُّ الْعَرْشِ الْكَرِيمِ.

ला इला-ह इल्लल्लाहुल्-अज़ीमुल् हलीमु, ला इला-ह इल्लल्लाहु रब्बुल्-अर्शिल् अज़ीम। ला इला-ह इल्लल्लाहु रब्बुस्समावाति व रब्बुल्-अर्जि व रब्बुल्-अर्शिल् करीम।

और इमाम तबरी ने फ़रमाया कि पहले बुजुर्ग इसको दुआ-ए-क़र्ब कहा करते थे, और मुसीबत व परेशानी के वक़्त ये कलिमात पढ़कर दुआ माँगा करते थे। (तफ़्सीरे कुर्तुबी)

और इमाम इब्ने जरीर, इब्ने मुन्ज़िर वगैरह ने एक रिवायत यह भी नक़ल की है कि जन्नत वालों को जब किसी चीज़ की ज़रूरत और इच्छा होगी तो वे सुब्हानकल्लाहुम्-म कहेंगे, यह सुनते ही फ़रिश्ते उनके मतलब की चीज़ हाज़िर कर देंगे, गोया कलिमा सुब्हानकल्लाहुम्-म जन्नत वालों की एक खास परिभाषा होगी जिसके ज़रिये वे अपनी इच्छा का इज़हार करेंगे और फ़रिश्ते हर मर्तबा उसको पूरा कर देंगे। (तफ़्सीर रुहुल-मआनी व कुर्तुबी)

इस लिहाज़ से भी कलिमा सुब्हानकल्लाहुम्-म को दुआ कहा जा सकता है।

जन्नत वालों का दूसरा हाल यह बतलाया कि:

نَجَّيْتَهُمْ فِيهَا سَلَامٌ.

‘तहिय्या’ उर्फ़ में उस कलिमे को कहा जाता है जिसके ज़रिये किसी आने वाले या मिलने वाले शख्स का स्वागत किया जाता है, जैसे सलाम या खुश-आमदीद या ‘अस्लं-व सल्लन्’

वगैरह। इस आयत ने बतलाया कि अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ से या फरिश्तों की तरफ से जन्नत वालों का तहिय्या लफ्ज़ 'सलाम' से होगा। यानी यह खुशखबरी कि तुम हर तकलीफ और नागवार चीज़ से सलामत रहोगे। यह सलाम खुद हक तआला की तरफ से भी हो सकता है जैसे सूर: यासीन में है:

سَلَامٌ قَوْلًا مِّن رَّبِّ رَحِيمٍ ۝

और फरिश्तों की तरफ से भी हो सकता है जैसे एक दूसरी जगह इरशाद है:

وَالْمَلَائِكَةُ يَدْخُلُونَ عَلَيْهِمْ مِنْ كُلِّ بَابٍ، سَلَامٌ عَلَيْهِمْ.

यानी फरिश्ते जन्नत वालों के पास हर दरवाज़े से 'सलामुन अलैकुम' कहते हुए दाखिल होंगे। और इन दोनों बातों में कोई टकराव नहीं, कि किसी वक़्त डायरेक्ट अल्लाह तआला का सलाम पहुँचे और किसी वक़्त फरिश्तों की तरफ से। और सलाम का लफ्ज़ अगरचे दुनिया में दुआ है लेकिन जन्नत में पहुँचकर तो हर मतलब हासिल होगा इसलिये वहाँ यह लफ्ज़ दुआ के बजाय खुशखबरी का कलिमा होगा। (तफ़सीर रूहुल-मआनी)

जन्नत वालों का तीसरा हाल यह बतलाया कि:

اِحْرَدُوهُمْ اَنَّ الْحَمْدَ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ۝

यानी जन्नत वालों की आखिरी दुआ 'अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आलमीन' होगी।

मतलब यह है कि जन्नत वालों को जन्नत में पहुँचने के बाद अल्लाह तआला की मारिफ़त (पहचान) में तरक्की नसीब होगी जैसा कि हज़रत शहाबुद्दीन सहरवर्दी रह. ने अपने एक रिसाले में फ़रमाया कि जन्नत में पहुँचकर आम जन्नत वालों को इल्म व मारिफ़त का वह मक़ाम हासिल हो जायेगा जो दुनिया में उलेमा का है, और उलेमा को वह मक़ाम हासिल हो जायेगा जो यहाँ अम्बिया का है, और अम्बिया को वह मक़ाम हासिल हो जायेगा जो दुनिया में तमाम नबियों के सरदार हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हासिल है, और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को वहाँ अल्लाह की निकटता का सबसे ऊँचा मक़ाम हासिल होगा, और मुम्किन है कि उसी मक़ाम का नाम मक़ाम-ए-महमूद हो, जिसके लिये अज़ान की दुआ में आपने दुआ करने की हिदायत फ़रमाई है।

खुलासा यह है कि जन्नत वालों की शुरू की दुआ 'सुब्हानकल्लाहुम्-म' और आखिरी दुआ 'अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आलमीन' होगी। इसमें अल्लाह जल्ल शानुहू की सिफ़ात की दो किस्मों की तरफ़ इशारा है- एक जलाल की सिफ़ातें, जिनमें अल्लाह जल्ल शानुहू के हर ऐब और हर बुराई से पाक होने का ज़िक्र है, दूसरी 'बुजुर्गी व बड़ाई की सिफ़ात जिनमें उसकी बुजुर्गी व बरतरी और आला कमाल का ज़िक्र है। कुरआने करीम की आयत:

تَبَارَكَ اسْمُ رَبِّكَ ذِي الْجَلَالِ وَالْإِكْرَامِ ۝

में इन दोनों किस्मों की तरफ़ इशारा किया गया है। ग़ौर करने से मालूम होगा कि 'सुब्हानियत' अल्लाह तआला की जलाल वाली सिफ़ात में से है और तारीफ़ व सना का हक़दार

होना इकराम व बुजुर्गी वाली सिफात में से है, और तबई तरतीब के मुताबिक जलाल वाली सिफात इकराम व बुजुर्गी वाली सिफात से मुकद्दम (पहले और श्रेष्ठ) हैं, इसलिये जन्नत वाले शुरू में जलाल वाली सिफात को "सुब्हानकल्लाहुम्-म" के लफ्ज़ से बयान करेंगे और आखिर में इकराम व बड़ाई वाली सिफात को 'अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आलमीन' के लफ्ज़ से जिक्र करेंगे, यही उनका रात दिन का मशगला है।

और इन तीनों हालात की तबई तरतीब यह है कि जन्नत वाले जब 'सुब्हानकल्लाहुम्-म' कहेंगे तो इसके जवाब में उनको हक तआला की तरफ से सलाम पहुँचेगा, उसके नतीजे में वे 'अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आलमीन' कहेंगे। (तफसीर रुहुल-मआनी)

अहकाम व मसाईल

अल्लामा कुर्तुबी ने अपनी किताब अहकामुल-कुरआन में फरमाया कि जन्नत वालों के इस अमल के मुताबिक खाने पीने और तमाम कामों में सुन्नत यह है कि बिस्मिल्लाह से शुरू करे और अल्हम्दु लिल्लाह पर खत्म करे। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि अल्लाह तआला को यह पसन्द है कि बन्दा जब कोई चीज़ खाये पिये तो बिस्मिल्लाह से शुरू करे और फारिग होकर अल्हम्दु लिल्लाह कहे।

मुस्तहब है कि दुआ करने वाला आखिर में कहा करे 'व आखिरु दअ्वाना अनिल्-हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आलमीन'। और अल्लामा कुर्तुबी ने फरमाया कि बेहतर यह है कि इसके साथ सूर: सौफ़ात की आखिरी आयतें भी पढ़े, यानी सुब्हान-रब्बि-क रब्बिल्-इज्जति अम्मा यसिफून्। व सलामुन् अलल्-मुर्सलीन। वल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आलमीन।

وَلَوْ يَعْجَلُ اللَّهُ لِلنَّاسِ الشَّرَّ اسْتِعْجَالَهُمْ

بِالْخَيْرِ لَقَضَى إِلَيْهِمْ أَجَلَهُمْ ۖ فَتَذَرُ الَّذِينَ لَا يَرْجُونَ لِقَاءَنَا فِي طُغْيَانِهِمْ يَعْمَهُونَ ۝ وَإِذَا مَثَى
الْإِنْسَانِ الضُّرُّ دَعَاكَ بِحَبْلِهِ ۖ أَوْ قَاعِدًا أَوْ قَارِعًا ۖ فَلَمَّا كَشَفْنَا عَنْهُ صُورَهُ مَرَّكَانَ لَمَّ يَدْعَانِ ۖ
صُورَتُهُ ۖ كَذَلِكَ نُزَيِّنُ لِلْمُتَّقِينَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ۝ وَلَقَدْ أَهْلَكْنَا الْقُرُونُ مِنْ قَبْلِكَ لَمَّا ظَلَمُوا ۖ
جَاءَهُمْ رَسُولُهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ وَمَا كَانُوا لِيُؤْمِنُوا ۖ كَذَلِكَ نَجْزِي الْقَوْمَ الْمُجْرِمِينَ ۝ ثُمَّ جَعَلْنَاكُمْ
خَلِيفَ فِي الْأَرْضِ مِنْ بَعْدِهِمْ لِنَنْظُرَ كَيْفَ تَعْمَلُونَ ۝ وَإِذَا تُلِيَتْ عَلَيْهِمْ آيَاتُنَا بَيِّنَاتٌ ۖ قَالَ
الَّذِينَ لَا يَرْجُونَ لِقَاءَنَا إِنَّا بِقُرْآنٍ غَيْرِ هَذَا أَوْ بَدِّلَهُ ۖ قُلْ مَا يَكُونُ لِي أَنْ أَبَدَّكَ مِنْ تِلْقَائِي
نَفْسِي ۖ إِنْ أَتَيْتُ إِلَّا مَا يُوحَى إِلَيَّ ۖ إِنِّي أَخَافُ أَنْ عَصَيْتُ رَبِّي عَذَابَ يَوْمٍ عَظِيمٍ ۝ قُلْ لَوْ شَاءَ
اللَّهُ مَا تَلَوْتُمْ عَلَيْكُمْ وَلَا أَدْرَاكُمْ بِهِ ۖ فَقَدْ لَبِثْتُ فِيكُمْ عُمُرًا ۖ مِنْ قَبْلِهِ ۖ أَفَلَا تَعْقِلُونَ ۝ فَسَنُ
أَعْلَمُ مِمَّنْ افْتَرَى عَلَى اللَّهِ كَذِبًا أَوْ كَذَّبَ بِآيَاتِهِ ۖ إِنَّهُ لَا يُفْلِحُ الْمُجْرِمُونَ ۝

व लौ युअज्जिलुल्लाहु लिन्नासिश्-
 शरसतिअजा-लहुम् बिल्छौरि
 लकुजि-य इलैहिम् अ-जलुहुम्,
 फ-न-जरुल्लजी-न ला यरजू-न
 लिका-अना फी तुग्यानिहिम्
 यअमहून (11) व इजा मस्सल्-
 इन्सानज्जुरु दआना लिजम्बिही औ
 काअिदन् औ काइमन् फ-लम्मा
 कशफ़ना अन्हु ज़ुर-रहू मर-र
 क-अल्लम् यदअुना इला ज़ुरिम्-
 मस्-सहू, कज़ालि-क ज़ुय्यि-न
 लिम्मुस्सिफी-न मा कानू यअमलून
 (12) व ल-कद् अस्लक्नल्-कुरू-न
 मिन् कब्लिकुम् लम्मा ज-लम् व
 जाअल्हुम् रुसुलुहुम् बिल्बय्यिनाति व
 मा कानू लियुअमिन्, कज़ालि-क
 नज्ज़िल् कौमल्-मुज्जिमीन (13)
 सुम्-म जअल्नाकुम् ढालाइ-फ
 फिल्अर्जि मिम्-बअदिहिम् लिनन्जु-र
 कै-फ तअमलून (14) व इजा तुल्ला
 अलैहिम् आयातुना बय्यिनातिन्
 कालल्लजी-न ला यरजू-न
 लिका-अनअति बिकुरआनिन् गैरि
 हाज़ा औ बदिल्हु, कुल् मा यकूनु
 ली अन् उबदि-लहू मिन् तिल्का-इ

और अगर जल्दी पहुँचा दे अल्लाह लोगों
 को बुराई जैसे कि जल्दी माँगते हैं वे
 भलाई तो ख़त्म कर दी जाये उनकी उम्मीद
 सो हम छोड़े रखते हैं उनको जिनको
 उम्मीद नहीं हमारी मुलाकात की, उनकी
 शरारत में हैरान व परेशान। (11) और
 जब पहुँचे इनसान को तकलीफ़, पुकारे
 हमको पड़ा हुआ या बैठा या खड़ा, फिर
 जब हम खोल दें उससे वह तकलीफ़ चला
 जाये गोया कभी न पुकारा था हमको
 किसी तकलीफ़ पहुँचने पर, इसी तरह
 पसन्द आया बेबाक लोगों को जो कुछ
 कर रहे हैं। (12) और अलबत्ता हम
 हलाक कर चुके हैं जमाअतों को तुमसे
 पहले जब वे ज़ालिम हो गये, हालाँकि
 लाये थे उनके पास रसूल उनके खुली
 निशानियाँ, और हरगिज़ न थे ईमान लाने
 वाले, यूँ ही सज़ा देते हैं हम गुनाहगारों
 की कौम को। (13) फिर तुमको हमने
 नायब बनाया ज़मीन में उनके बाद ताकि
 देखें तुम क्या करते हो। (14) और जब
 पढ़ी जाती हैं उनके सामने हमारी स्पष्ट
 आयतें, कहते हैं वे लोग जिनको उम्मीद
 नहीं हमसे मुलाकात की- ले आ कोई
 कुरआन इसके अलावा या इसको बदल
 डाल। तू कह दे मेरा काम नहीं कि
 इसको बदल डालूँ अपनी तरफ़ से, मैं
 ताबेदारी करता हूँ उसी की जो हुक्म
 आये मेरी तरफ़, मैं डरता हूँ अगर

नफसी इन् अत्तबिअु इल्ला मा यूहा
 इलय-य इन्नी अझाफु इन् असैतु
 रब्बी अज़ा-ब यौमिन् अज़ीम (15)
 कुल् लौ शा-अल्लाहु मा तलौतुहू
 अलैकुम् व ला अदराकुम् बिही
 फ-कद् लबिस्तु फीकुम् अमुरम्-मिन्
 कब्लिही, अ-फला तअकिलून (16)
 फ-मन् अज़लमु मिम्-मनिफ़तरा
 अलल्लाहि कज़िबन् औ कज़ज़-ब
 बिआयातिही, इन्नहू ला युफ़िलहुल्
 मुज़िमून (17)

नाफरमानी करूँ अपने रब की बड़े दिन
 के अज़ाब से। (15) कह दे अगर अल्लाह
 चाहता तो मैं न पढ़ता इसको तुम्हारे
 सामने और न वह तुमको ख़ाबर करता
 इसकी, क्योंकि मैं रह चुका हूँ तुम में
 एक उम्र इससे पहले, क्या फिर तुम नहीं
 सोचते? (16) फिर उससे बड़ा ज़ालिम
 कौन जो बाँधे अल्लाह पर बोहतान या
 झुठलाये उसकी आयतों को, बेशक मला
 नहीं होता गुनाहगारों का। (17)

खुलासा-ए-तफसीर

और अगर अल्लाह तआला लोगों पर (उनके जल्दी मचाने के मुताबिक) जल्दी से नुकसान डाल दिया करता, जिस तरह वे फ़ायदे के लिये जल्दी मचाते हैं (और उसके मुवाफ़िक वह फ़ायदा जल्द ज़ाहिर कर देता है, इसी तरह अगर नुकसान भी ज़ाहिर कर दिया करता) तो उनका (अज़ाब का) वायदा कभी का पूरा हो चुका होता (लेकिन हमारी हिक्मत जिसका बयान अभी आता है, चूँकि इसको नहीं चाहती हैं) सो (इसलिये) हम उन लोगों को जिनको हमारे पास आने का खटका नहीं है, उनके हाल पर (बिना अज़ाब के चन्द दिन) छोड़े रखते हैं कि अपनी सरकशी में भटकते रहें (और अज़ाब के मुस्तहिक हो जायें, और वह हिक्मत यही है)। और जब इनसान को (यानी उनमें से कुछ को) कोई तकलीफ़ पहुँचती है तो हमको पुकारने लगता है, लेटे भी, बैठे भी, खड़े भी (और उस वक़्त कोई बुत वग़ैरह याद नहीं रहता, तमाम झूठे माबूदों को भूल बैठता है) फिर जब (उसकी दुआ व प्रार्थना के बाद) हम उसकी वह तकलीफ़ उससे हटा देते हैं तो फिर अपनी पहली हालत पर आ जाता है (और हमसे ऐसा बेताल्लुक हो जाता है) कि गोया जो तकलीफ़ उसको पहुँची थी उसके (हटाने के) लिये कभी हमको पुकारा ही न था। (और फिर वही शिर्क की बातें करने लगता है, फिर वह अल्लाह को पुकारना भुला देता है और शिर्क करने लगता है) इन हद से निकलने वालों के (बुरे) आमाल इनको इसी तरह अच्छे मालूम होते हैं (जिस तरह हमने अभी बयान किया है)।

और हमने तुमसे पहले बहुत-से ग़िरोहों को (तरह-तरह के अज़ाब से) हलाक कर दिया है

जबकि उन्होंने जुल्म (यानी कुफ़ व शिकी) किया हालाँकि उनके पास उनके पैगम्बर दलीलें लेकर आये, और वे (अपनी हद से बढ़ी हुई दुश्मनी के सबब) ऐसे कब थे कि ईमान ले आते, हम मुजरिम लोगों को ऐसी ही सज़ा दिया करते हैं (जैसा कि हमने अभी बयान किया है)। फिर उनके बाद दुनिया में उनकी जगह हमने तुमको आबाद किया ताकि (ज़ाहिरी तौर पर भी) हम देख लें कि तुम किस तरह काम करते हो (आया वैसा ही शिक व कुफ़ करते हो या ईमान लाते हो)। और जब उनके सामने हमारी आयतें पढ़ी जाती हैं जो बिल्कुल साफ़-साफ़ हैं तो ये लोग जिनको हमारे पास आने का खटका नहीं है (आप से यूँ) कहते हैं कि (या तो) इसके अलावा कोई (पूरा) दूसरा कुरआन (ही) लाइये (जिसमें हमारे तरीके और चलन के खिलाफ मज़ामीन न हों) या (कम-से-कम) इसी (कुरआन) में कुछ रद्दोबदल कर दीजिये (कि हमारे मस्लक के खिलाफ मज़ामीन इससे निकाल दीजिये और उनके इस कहने से यह भी मालूम हो गया कि वे लोग कुरआन को हुजुरे पाक का कलाम समझते थे, अल्लाह तआला इसी बिना पर जवाब तालीम फरमाते हैं कि) आप यूँ कह दीजिये कि (इस बात को छोड़िये कि ऐसे मज़ामीन को निकालना अपने आप में कैसा है, खुद) आप (यूँ) कह दीजिये कि मुझसे यह नहीं हो सकता कि मैं अपनी तरफ़ से इसमें कोई रद्दोबदल कर दूँ (और जब कुछ हिस्से का निकालना भी मुम्किन नहीं तो पूरे को बदल डालने की किसी भी हालत में संभावना ही नहीं, क्योंकि वह मेरा कलाम तो है ही नहीं बल्कि अल्लाह का कलाम है, जो वही के ज़रिये से आया है। जब यह है तो) बस मैं तो उसी की पैरवी करूँगा जो मेरे पास वही के ज़रिये से पहुँचा है (और फर्ज़ कर लो खुदा न ख्वास्ता) अगर मैं (वही का इत्तिबा न करूँ बल्कि) अपने रब की नाफ़रमानी करूँ तो मैं एक बड़े भारी दिन के अज़ाब का अन्देशा रखता हूँ (जो नाफ़रमान लोगों के लिये ख़ास है और नाफ़रमानी के सबब तुम्हारे नसीब में है, सो मैं तो उस अज़ाब या उसके सबब यानी नाफ़रमानी की जुरत नहीं रखता, और अगर उनको इसके वही होने में कलाम है और यह आप ही का कलाम समझे जाते हैं तो) आप (यूँ) कह दीजिये कि (यह तो ज़ाहिर है कि यह कलाम अनोखा और दूसरों को आजिज़ कर देने वाला है, कोई बशर इस पर कादिर नहीं हो सकता चाहे मैं हूँ या तुम हो, सो) अगर खुदा तआला को मन्ज़ूर होता (कि मैं यह बेमिसाल कलाम तुमको न सुना सकूँ और अल्लाह तआला मेरे ज़रिये से तुमको इसकी इत्तिला न दे) तो (मुझ पर इसको नाज़िल न फरमाता। पस) न तो मैं तुमको यह (कलाम) पढ़कर सुनाता, और न वह (यानी अल्लाह तआला) तुमको इसकी इत्तिला देता (पस जब मैं तुमको सुना रहा हूँ और मेरे ज़रिये से तुमको इत्तिला हो रही है तो इससे मालूम हुआ कि अल्लाह तआला को इस मोजिज़े वाले कलाम का सुनवाना और इत्तिला करना मन्ज़ूर हुआ, और सुनाना और इत्तिला देना बिना वही के इसके आजिज़ कर देने वाला होने की वजह से मुम्किन नहीं। इससे मालूम हुआ कि वह वही अल्लाह की तरफ़ से उतरी हुई और उसका कलाम है) क्योंकि (आखिर) इस (कलाम के ज़ाहिर करने) से पहले भी तो मैं उग्र के एक बड़े हिस्से तक तुममें रह चुका हूँ (फिर अगर यह मेरा कलाम है तो या तो इतनी मुद्त तक एक जुमला भी इस अन्दाज़ का न निकला और या अचानक इतनी बड़ी

बात बना ली, यह तो बिल्कुल अक्ल के खिलाफ है) फिर क्या तुम इतनी अक्ल नहीं रखते हो।

(जब इसका अल्लाह का कलाम और हक होना साबित हो गया और फिर भी तुम मुझसे इसमें रद्दोबदल और संशोधन की दरखास्त करते हो और इसको नहीं मानते तो समझ लो कि) उस शख्स से ज्यादा कौन जालिम होगा जो अल्लाह पर झूठ बाँधे (जैसे कि तुम मेरे बारे में कहते हो) या उसकी आयतों को झूठा बतलाये (जैसे कि तुम लोगों ने अपने लिये यही चलन बना रखा है) यकीनन ऐसे मुजरिमों को हरगिज़ फलाह न होगी (बल्कि हमेशा के अज़ाब में गिरफ्तार होंगे)।

मअरिफ व मसाईल

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत का ताल्लुक उन लोगों से है जो आखिरत के इनकारी हैं, इसी वजह से जब उनको आखिरत के अज़ाब से डराया जाता है तो वे मज़ाक उड़ाने के तौर पर कहने लगते हैं कि अगर तुम सच्चे हो तो यह अज़ाब अभी बुला लो, या यह कि फिर यह अज़ाब जल्द क्यों नहीं आ जाता। जैसे नज़र बिन हारिस ने कहा था “या अल्लाह! अगर यह बात सच्ची है तो हम पर आसमान से पत्थर बरसा दीजिये या और कोई सख्त अज़ाब भेज दीजिये।”

पहली आयत में इसका यह जवाब दिया गया है कि अल्लाह तआला तो हर चीज़ पर कादिर हैं, यह वायदा किया गया अज़ाब फौरन इस वक़्त भी नाज़िल फरमा सकते हैं मगर वह अपनी कामिल हिक्मत और लुत्फ व करम से ऐसा नहीं करते। ये नादान जो अपने हक में बददुआ करते और मुसीबत तलब करते हैं, अगर अल्लाह तआला इनकी बददुआ को भी इसी तरह जल्द कुबूल फरमा लिया करते जिस तरह इनकी अच्छी दुआ को अक्सर कर लेते हैं तो ये सब हलाक हो जाते।

इससे मालूम हुआ कि खैर की और अच्छी दुआ के मुताल्लिक तो हक तआला की यह आदत है कि अक्सर जल्द कुबूल कर लेते हैं, और कभी किसी हिक्मत व मस्तेहत से कुबूल न होना इसके खिलाफ नहीं, मगर जो इनसान कभी अपनी नादानी से और कभी किसी गुस्से और रंज से अपने लिये या अपने बाल-बच्चों के लिये बददुआ कर बैठता है या आखिरत के इनकार की बिना पर अज़ाब को खेल समझकर अपने लिये दावत देता है, उसको फौरन कुबूल नहीं करते बल्कि मोहलत देते हैं ताकि मुन्किर को गौर व फ़िक्र करके अपने इनकार से बाज़ आने का मौका मिले, और अगर किसी वक्ती रंज व गुस्से या दिल-तंग होने के सबब बददुआ कर बैठा है तो उसको इसकी मोहलत मिल जाये कि अपने भले-बुरे को देखे और अन्जाम पर नज़र डालकर उससे बाज़ आ जाये।

इमाम इब्ने जरीर तबरी ने हज़रत क़तादा रह. की रिवायत से और इमाम बुख़ारी व मुस्लिम ने हज़रत मुजाहिद रह. की रिवायत से नक़ल किया है कि इस जगह बददुआ से मुराद यह है कि कई बार कोई इनसान गुस्से की हालत में अपनी औलाद या माल व दौलत के तबाह होने की

बददुआ कर बैठता या इन चीज़ों पर लानत के अलफ़ाज़ कह डालता है, अल्लाह तआला अपने लुफ़ व करम से ऐसी दुआ कुबूल करने में जल्दी नहीं फ़रमाते। इमाम कुर्तुबी रह. ने इस जगह एक रिवायत नक़ल की है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया- मैंने अल्लाह जल्ल शानुहु से दुआ की है कि वह किसी दोस्त अज़ीज़ की बददुआ उसके दोस्त अज़ीज़ के हक़ में कुबूल न फ़रमायें। और शहर बिन हूशब रह. फ़रमाते हैं कि मैंने कुछ किताबों में पढ़ा है कि जो फ़रिश्ते इनसानों की ज़रूरतें पूरी करने पर मुक़रर हैं अल्लाह जल्ल शानुहु ने अपने फ़ज़ल व करम से उनको यह हिदायत कर रखी है कि मेरा बन्दा जो रंज व गुस्से में कुछ बात कहे उसको न लिखो। (तफ़्सीरे कुर्तुबी)

इसके बावजूद कई बार कोई कुबूलियत की घड़ी आती है जिसमें इनसान की ज़बान से जो बात निकले वह फ़ौरन कुबूल हो जाती है, इसलिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अपनी औलाद और माल के लिये कभी बददुआ न करो, ऐसा न हो कि वह वक्त दुआ की कुबूलियत का हो और यह बददुआ फ़ौरन कुबूल हो जाये (और तुम्हें बाद में पछताना पड़े)। सही मुस्लिम में यह हदीस हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से ग़ज़वा-ए-बवात के वाकिए के तहत नक़ल की गयी है।

इन सब रिवायतों का हासिल यह है कि उक्त आयत का असल ख़िताब अगरचे आख़िरत के मुन्किरों और उनके फ़ौरी अज़ाब के मुतालबे से संबन्धित है लेकिन इसके आम होने में वे मुसलमान भी दाख़िल हैं जो किसी रंज व गुस्से की वजह से अपने या अपने माल व औलाद के लिये बददुआ कर बैठते हैं, अल्लाह तआला की आदत उसके फ़ज़ल व करम की वजह से दोनों के साथ यही है कि ऐसी बददुआओं को फ़ौरन नाफ़िज़ नहीं फ़रमाते, ताकि इनसान को सोचने और ग़ौर करने का मौक़ा मिल जाये।

दूसरी आयत में तौहीद व आख़िरत के इनकारियों को एक दूसरे आसान और दिल में उतर जाने वाले अन्दाज़ से कायल किया गया है, वह यह कि लोग राहत व इत्मीनान की आम हालत में खुदा व आख़िरत के खिलाफ़ हुज्जत बाज़ी करते और ग़ैरों को खुदा तआला का शरीक क़रार देते और उनसे अपनी हाजत पूरी करने की उम्मीदें बाँधे रखते हैं, लेकिन जब कोई बड़ी मुसीबत आ पड़ती है उस वक्त ये लोग खुद भी अल्लाह तआला के सिवा अपनी सारी उम्मीद की जगहों से मायूस होकर सिर्फ़ अल्लाह ही को पुकारते हैं, और लेटे, बैठे, खड़े गर्ज कि हर हाल में उसी को पुकारने पर मजबूर होते हैं। मगर इसके साथ एहसान फ़रामोशी का यह आलम है कि जब अल्लाह तआला उनकी मुसीबत दूर कर देते हैं तो खुदा तआला से ऐसे आज़ाद व बेफ़िक़्र हो जाते हैं कि गोया कभी उसको पुकारा ही न था और उससे कोई हाजत माँगी ही न थी। इससे मालूम हुआ कि अल्लाह तआला के साथ हाजत पूरी करने में किसी दूसरे को शरीक करने वाले खुद भी अपने इस अक़ीदे के ग़लत व बातिल होने को देख लेते हैं, मगर फिर दुश्मनी व ज़िद की वजह से उसी बातिल अक़ीदे पर जमे रहते हैं।

तीसरी आयत में इसी दूसरी आयत के मज़मून की और अधिक वज़ाहत और ताक़ीद इस

तरह की गयी है कि कोई अल्लाह तआला के ढील देने से यह न समझे कि दुनिया में अज़ाब आ ही नहीं सकता, पिछली कौमों की तारीख और उनकी सरकशी व नाफरमानी की सज़ा में विभिन्न प्रकार के अज़ाब इसी दुनिया में आ चुके हैं। इस उम्मत में अगरचे अल्लाह तआला ने सैयदुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इकराम की वजह से यह वायदा फ़रमा लिया है कि आम अज़ाब न आयेगा, और अल्लाह तआला के इसी लुत्फ व करम ने उन लोगों को ऐसा बेबाक (निडर) कर दिया है कि वे बड़ी ज़ुरत से अल्लाह के अज़ाब को दावत देने और उसका मुतालबा करने के लिये तैयार हो जाते हैं, लेकिन याद रहे कि अल्लाह के अज़ाब से बेफ़िक्री उनके लिये भी किसी हाल में सही नहीं, क्योंकि पूरी उम्मत और पूरी दुनिया पर आम अज़ाब न भेजने का वायदा ज़रूरी है मगर खास-खास अफ़राद और कौमों पर अज़ाब आ जाना अब भी मुम्किन है।

चौथी आयत में फ़रमाया:

ثُمَّ جَعَلْنَاكُمْ خَلَائِفَ فِي الْأَرْضِ مِنْ بَعْدِهِمْ لَنَنْظُرَ كَيْفَ تَعْمَلُونَ

यानी फिर पिछली कौमों को हलाक करने के बाद हमने तुम्हें उनका कायम-मकाम (जगह लेने वाला) बनाया और ज़मीन की ख़िलाफ़त तुम्हारे हवाले कर दी, मगर यह न समझो कि यह ज़मीन की ख़िलाफ़त तुम्हारे ऐश व आराम के लिये तुम्हें सुपुर्द की गयी है, बल्कि इस इज़्ज़त व सम्मान का असल मक़सद यह है कि तुम्हारा इम्तिहान लिया जाये कि तुम कैसा अमल करते हो। पिछली उम्मतों की तारीख से मुतास्सिर होकर अपने हालात की इस्लाह करते हो या हुकूमत व दौलत के नशे में बंदमस्त हो जाते हो।

इससे मालूम हुआ कि दुनिया की हुकूमत व ताक़त कोई फ़ख़्र व नाज़ की चीज़ नहीं बल्कि एक भारी बोझ है जिसकी बहुत सी ज़िम्मेदारियाँ हैं।

पाँचवीं, छठी, सातवीं और आठवीं चार आयतों में आख़िरत के इनकारियों के एक ग़लत ख़्याल और बेजा फ़रमाईश का रद्द किया गया है। उन लोगों को न खुदा तआला की मारिफ़त (पहचान) हासिल थी और न वही व रिसालत के सिलसिले से वाकिफ़ थे, अम्बिया अलैहिमुस्सलाम को भी आम इनसानों की तरह जानते थे। क़ुरआने करीम जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़रिये दुनिया को पहुँचा इसके बारे में भी उनका यह ख़्याल था कि यह खुद आपका कलाम और आपका बनाया हुआ है, इसी ख़्याल की बिना पर हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से यह मुतालबा किया कि यह क़ुरआन तो हमारे एतिकादों व नज़रियों के ख़िलाफ़ है। जिन बुतों की हमारे बाप-दादा हमेशा ताज़ीम करते आये और उनको ज़रूरतें पूरी करने वाला मानते आये हैं क़ुरआन उन सब को बातिल और बेकार क़रार देता है, और फिर क़ुरआन हमें यह बताता है कि मरने के बाद दोबारा ज़िन्दा होना और हिसाब किताब देना होगा, ये सब चीज़ें हमारी समझ में नहीं आतीं, हम इनको मानने के लिये तैयार नहीं, इसलिये आप या तो ऐसा करें कि इस क़ुरआन के बजाय कोई दूसरा क़ुरआन बना दें जिसमें ये चीज़ें न हों, या कम से कम इसी में तब्दीली व संशोधन करके इन चीज़ों को निकाल दें।

कुरआने करीम ने पहले उनके ग़लत एतिकाद को रद्द करते हुए हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह हिदायत फरमाई कि आप उनसे कह दें कि यह न मेरा कलाम है, न अपनी तरफ़ से इसको बदल सकता हूँ, मैं तो सिर्फ़ अल्लाह की वही का ताबेदार हूँ। अगर मैं ज़रा भी इसमें अपने इख्तियार से कोई तब्दीली करूँ तो सख्त गुनाह का करने वाला हूँगा और नाफरमानी करने वालों पर जो अज़ाब मुकरर है मैं उससे डरता हूँ इसलिये ऐसा नहीं कर सकता।

फिर फरमाया कि मैं जो कुछ करता हूँ अल्लाह के फरमान के ताबे करता हूँ, अगर अल्लाह तआला की मर्जी व चाहत यह होती कि तुम्हें यह कलाम न सुनाया जाये तो न मैं तुम्हें सुनाता और न अल्लाह तआला तुम्हें इससे बाख़बर करते, और जब अल्लाह तआला को यही मन्ज़ूर है कि तुम्हें यही कलाम सुनवाया जाये तो किसकी मजाल है जो इसमें कोई कमी-बेशी कर सके।

इसके बाद कुरआन के अल्लाह की तरफ़ से और उसका कलाम होने को एक स्पष्ट दलील से समझाया:

فَقَدْ لَبِثْتُ فِيكُمْ عُمُرًا مِّن قَبْلِهِ

यानी तुम ज़रा यह भी तो सोचो कि कुरआन नाज़िल होने से पहले मैंने तुम्हारे सामने चालीस साल की लम्बी मुदत गुज़ारी है, उस मुदत में तुमने कभी मुझे शेर व शायरी या कोई मज़मून व बात लिखते हुए नहीं सुना, अगर मैं अपनी तरफ़ से ऐसा कलाम कह सकता तो कुछ न कुछ इस चालीस साल के अरसे में भी कहा होता। इसके अलावा इस चालीस साल की लम्बी ज़िन्दगी में तुम मेरे चाल-चलन में सच्चाई और ईमानदारी का तजुर्बा कर चुके हो कि उम्र भर कभी झूठ नहीं बोला, तो आज चालीस साल के बाद आखिर झूठ बोलने की क्या वजह हो सकती है। इससे आसानी से साबित हुआ कि हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सच्चे और अमानतदार हैं, कुरआन में जो कुछ है वह अल्लाह तआला का कलाम और उसी की तरफ़ से आया हुआ है।

एक अहम फायदा

कुरआने करीम की इस दलील ने सिर्फ़ कुरआन के हक़ कलाम होने पर ही मुकम्मल सुबूत पेश नहीं किया बल्कि आम मामलात में खरे-खोटे और हक़ व बातिल की पहचान का एक उसूल भी बता दिया कि किसी शख्स को कोई ओहदा या पद सुपुर्द करना हो तो उसकी काबलियत और सलाहियत को जाँचने का बेहतरीन उसूल यह है कि उसकी पिछली ज़िन्दगी का जायज़ा लिया जाये, अगर उसमें सच्चाई व अमानतदारी मौजूद है तो आईन्दा भी उसकी उम्मीद की जा सकती है, और अगर पिछली ज़िन्दगी में उसकी दियानत व अमानत और सिद्क़ व सच्चाई की गवाही मौजूद नहीं तो आईन्दा के लिये महज़ उसके कहने और दावे की वजह से उस पर भरोसा करना कोई अक्लमन्दी नहीं। आज ओहदों की तकसीम और ज़िम्मेदारियों के सौंपने में जिस क़द्र ग़लतियाँ और उनकी वजह से बड़ी ख़राबियाँ पैदा हो रही हैं उन सब की असली वजह इसी फितरी उसूल को छोड़कर रस्मी चीज़ों के पीछे पड़ जाना है।

आठवीं आयत में इसी मज़मून की और ज्यादा ताकीद बयान हुई है जिसमें किसी कलाम को ग़लत तौर पर अल्लाह तआला की तरफ़ मन्सूब करने का सख्त अज़ाब बयान हुआ है।

وَيَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللَّهِ مَا لَا يَضُرُّهُمْ وَلَا يَنْفَعُهُمْ وَيَقُولُونَ
هَؤُلَاءِ شُفَعَاؤُنَا عِنْدَ اللَّهِ قُلْ اتَّكِبُونَ اللَّهَ بِمَا لَا يَعْلَمُ فِي السَّمَوَاتِ وَلَا فِي الْأَرْضِ سُبْحَنَهُ وَتَعَالَى
عَمَّا يُشْرِكُونَ ۝ وَمَا كَانَ النَّاسُ إِلَّا أُمَّةً وَاحِدَةً فَاخْتَلَفُوا وَلَوْلَا كَلِمَةٌ سَبَقَتْ مِنْ رَبِّكَ لَفُضِيَ
بَيْنَهُمْ فِي مَا فِيهِ يَخْتَلِفُونَ ۝ وَيَقُولُونَ لَوْلَا أُنْزِلَ عَلَيْهِ آيَةٌ مِنْ رَبِّهِ فَقُلْ إِنَّمَا الْغَيْبُ
لِلَّهِ فَأَنْتَظِرُونَ ۝ إِنِّي مَعَكُمْ مِنَ الْمُنْتَظِرِينَ ۝

व यअबुदू-न मिन् दूनिल्लाहि मा ला
यजुरुहुम् व ला यन्फअहुम् व
यकूलू-न हा-उला-इ शु-फअउना
अिन्दल्लाहि, कुल् अतुनब्बिऊनल्ला-ह
बिमा ला यअलमु फिस्समावाति व
ला फिलअर्जि, सुब्हानहू व तआला
अम्मा युशिरकून (18) व मा
कानन्नासु इल्ला उम्मतं व्वाहि-दतन्
फख्त-लफू, व लौ ला कलि-मतुन्
स-बकत् मिररब्बि-क लकुजि-य
बैनहुम् फीमा फीहि यख्तलिफून (19)
व यकूलू-न लौ ला उन्जि-ल अलैहि
आयतुम्-मिररब्बिही फकुल् इन्नमल्-
-गैबु लिल्लाहि फन्तजिरु इन्नी
म-अकुम् भिनल्-मुन्तजिरीन (20) ●

और पूजा करते हैं अल्लाह के सिवा उस चीज की जो न नुकसान पहुँचा सके उनको और न नफ़ा, और कहते हैं ये तो हमारे सिफारशी हैं अल्लाह के पास, तू कह क्या तुम अल्लाह को बतलाते हो जो उसको मालूम नहीं आसमानों में और न ज़मीन में, वह पाक है और बरतर है उससे जिसको शरीक करते हैं। (18) और लोग जो हैं सो एक ही उम्मत हैं, पीछे जुदा जुदा हो गये, और अगर न एक बात पहले हो चुकती तेरे रब की तो फैसला हो जाता उनमें जिस बात में कि वे झगड़ा व विवाद कर रहे हैं। (19) और कहते हैं- क्यों न उतरी उस पर एक निशानी उसके रब की तरफ़ ने, सो तू कह दे कि ग़ैब की बात अल्लाह ही जाने, सो मुन्तजिर हो, मैं भी तुम्हारे साथ इन्तिज़ार करता हूँ। (20) ●

खुलासा-ए-तफसीर

और ये लोग अल्लाह (की तौहीद) को छोड़कर ऐसी चीज़ों की इबादत करते हैं जो (इबादत

न करने की सूरत में) न इनको नुकसान पहुँचा सकें और न (इबादत करने की सूरत में) इनको नफा पहुँचा सकें। और (अपनी तरफ से बिना दलील के एक नफा गढ़कर) कहते हैं कि ये (माबूद) अल्लाह के पास हमारे सिफारिश करने वाले हैं (इसलिये हम इनकी इबादत करते हैं)। आप कह दीजिये कि क्या तुम खुदा तआला को ऐसी चीजों की खबर देते हो जो खुदा तआला को मालूम नहीं, न आसमानों में और न ज़मीन में, (यानी जो चीज़ अल्लाह के इल्म में न हो उसका वजूद और ज़ाहिर होना मुहाल है, तो तुम एक मुहाल और असंभव चीज़ के पीछे लगे हो) वह पाक और बरतर है इन लोगों के शिर्क से।

और (पहले) तमाम आदमी एक ही तरीके के थे (यानी सब अल्लाह पर ईमान रखने वाले थे, क्योंकि आदम अलैहिस्सलाम तौहीद का अक़ीदा लेकर आये, उनकी औलाद भी एक ज़माने तक उन्हीं के अक़ीदे और तरीके पर रही) फिर (अपनी ग़लत राय से) उन्होंने (यानी उनमें से कुछ ने) झगड़ा और विवाद पैदा कर लिया (यानी तौहीद से फिर गये, मुश्रिक हो गये और ये मुश्रिक लोग अज़ाब के ऐसे हक़दार हैं कि) अगर एक बात न होती जो आपके रब की तरफ से पहले तय हो चुकी है (कि पूरा अज़ाब इनको अभी नहीं बल्कि आखिरत में दिया जायेगा) तो जिस चीज़ में ये लोग झगड़ा कर रहे हैं इनका क़तई फैसला (दुनिया ही में) हो चुका होता। और ये लोग (दुश्मनी व हठधर्मी के तौर पर सैकड़ों मोजिज़े ज़ाहिर हो जाने के बावजूद ख़ास कर क़ुरआन का मोजिज़ा देखने और इसके जैसा लाने से अज़िज़ होने के बावजूद) यूँ कहते हैं कि इनके रब की तरफ से इन पर (यानी मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर हमारे फ़रमाईशी मोजिज़ों में से) कोई मोजिज़ा क्यों नाज़िल नहीं हुआ। सो आप फ़रमा दीजिये कि (मोजिज़े का असल मक़सद रसूल की सच्चाई व हक़ानियत को साबित करना है, वह तो बहुत से मोजिज़ों के ज़रिये हो चुकी है, अब फ़रमाईशी मोजिज़ों की ज़रूरत तो है नहीं, हाँ संभावना है कि ज़ाहिर हों, इसका ताल्लुक इल्मे ग़ैब से है और) ग़ैब की ख़बर सिर्फ़ खुदा को है (मुझको नहीं), सो तुम भी मुन्ताज़िर रहो मैं भी तुम्हारे साथ इन्तिज़ार कर रहा हूँ (कि तुम्हारी हर फ़रमाईश पूरी होती है या नहीं। और फ़रमाईशी मोजिज़ों के ज़ाहिर न करने की हिक्मत क़ुरआने करीम में कई जगह बतला दी गयी है कि उनके ज़ाहिर करने के बाद अल्लाह की आदत यह है कि अगर फिर भी ईमान न लायें तो सारी क़ौम हलाक कर दी जाती है, अल्लाह तआला को इस उम्मत के लिये ऐसा आम अज़ाब मन्ज़ूर नहीं बल्कि इसको क़ियामत तक बाकी रखना मुक़द्दर हो चुका है)।

मअरिफ़ व मसाईल

काफ़िर व मुस्लिम दो अलग-अलग क़ौमें हैं, नस्ली और
वतनी क़ौमियत बेकार है

كَانَ النَّاسُ أُمَّةً وَاحِدَةً

यानी तमाम औलादे आदम शुरू में एक ही उम्मत, एक ही कौम अल्लाह को एक मानने वालों की थी, शिर्क व कुफ़्र का नाम नहीं था, फिर तौहीद में इख़िलाफ़ (झगड़ा व विवाद) पैदा करके मुख़लिफ़ कौमों मुख़लिफ़ गिरोह बन गये।

यह ज़माना एक उम्मत और सब के मुसलमान होने का कितना था और कब तक रहा? हदीस व तारीख़ की रिवायतों से मालूम होता है कि हज़रत नूह अलैहिस्सलाम के ज़माने तक यही सूरत थी, नूह अलैहिस्सलाम के ज़माने में शिर्क व कुफ़्र जाहिर हुआ, हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को इसका मुकाबला करना पड़ा। (तफ़सीरे मज़हरी)

यह भी जाहिर है कि हज़रत आदम अलैहिस्सलाम से नूह अलैहिस्सलाम तक एक लम्बा ज़माना है, दुनिया में इनसानों की नस्लें और आबादी काफी फैल चुकी थी, उन तमाम इनसानों में रंग व रूप और रहन-सहन के तरीक़े और सामाजिक ज़िन्दगी का इख़िलाफ़ (भिन्न और विविध) होना भी एक तबई चीज़ है और अनेक इलाकों में फैल जाने के बाद वतन का इख़िलाफ़ (क्षेत्रवाद) भी यकीनी है, और मुम्किन है कि बोल-चाल में भाषायें भी कुछ अलग हो गयी हों, मगर कुरआने करीम ने इस नसबी, कबाईली, रंग भेदी, वतनी भिन्नता और विविधता को जो फितरी बातें हैं, उम्मत की एकता में खलल डालने वाली करार नहीं दिया, और इन भिन्नताओं और विविधताओं की वजह से औलादे आदम को अलग-अलग कौमों और मुख़लिफ़ उम्मतों नहीं बल्कि एक उम्मत करार दिया।

हाँ जब ईमान के खिलाफ़ कुफ़्र व शिर्क फैला तो काफ़िर व मुशिरक को अलग कौम अलग मिल्लत करार देकर 'फ़ख़्र-लफ़ू' (वे अलग-अलग हो गये) इरशाद फ़रमाया। कुरआने करीम की आयत:

هُوَ الَّذِي خَلَقَكُمْ مِنْكُمْ كَافِرٌ وَمِنْكُمْ مُؤْمِنٌ

ने इस मज़मून को और भी ज़्यादा स्पष्ट कर दिया कि अल्लाह की मख़्लूक औलादे आदम को विभिन्न और अलग-अलग कौमों में बाँटने वाली चीज़ सिर्फ़ ईमान व इस्लाम से विमुख हो जाना है, नसबी वतनी रिश्तों से कौमों अलग-अलग नहीं होतीं, भाषा और वतन या रंग व नस्ल की बिना पर इनसानों को अलग-अलग गिरोह करार देने की जहालत यह नई हिमाक़त है जो नई रेशनी ने पैदा की है, और आज के बहुत से लिखे-पढ़े उस नेशनलिज़म के पीछे लग गये जो हज़ारों फितने और फ़साद अपने दामन में रखता है। अल्लाह तआला मुसलमानों को उससे अपनी पनाह में रखे और बचाये।

وَإِذَا أَدْعَاكَ النَّاسُ رَحْمَةً مِنْ بَعْدِ ضَرَاءٍ مَسَّتْهُمْ إِذَا لَهُمْ مَكْرُفِي آيَاتِنَا قُلِ اللَّهُ أَسْرَعُ مَكْرًا
إِنْ رُسُلُنَا يَكْتُبُونَ مَا تَكْفُرُونَ ۝ هُوَ الَّذِي يُسَيِّرُكُمْ فِي الْبَرِّ وَالْبَحْرِ حَتَّى إِذَا كُنْتُمْ فِي
الْفُلْكِ وَجَرَيْنَ بِهِمْ بِرِيحٍ طَيِّبَةٍ وَفَرِحُوا بِهَا جَاءَتْهَا رِيحٌ عَاصِفٌ وَجَاءَهُمُ الْمَوْجُ مِنْ كُلِّ
مَكَانٍ وَظَنُّوا أَنَّهُمْ أُحِيطَ بِهِمْ دَعَوُا اللَّهَ مُخْلِصِينَ لَهُ الدِّينَ ۚ لَئِنْ أَجَبْنَاهُمْ مِنْ هَذِهِ لَنَكُونَنَّ مِنْ

الشَّكِرِينَ ۝ فَلَنَبَأُنَّجِيَهُمْ إِذَا هُمْ يَبْعُونَ فِي الْأَرْضِ بِغَيْرِ الْحَقِّ وَيَا أَيُّهَا النَّاسُ إِنَّمَا بَعَيْتُمْ عَلَىٰ أَنْفُسِكُمْ
مَتَاعَ الْحَيَاةِ الدُّنْيَا ثُمَّ إِلَيْنَا مَرْجِعُكُمْ فَتُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ۝ إِنَّمَا مَثَلُ الْحَيَاةِ الدُّنْيَا
كَبَابٍ أُنْزِلَتْهُ مِنَ السَّمَاءِ فَأَخْتَلَطَ بِهِ نَبَاتُ الْأَرْضِ مِمَّا يَأْكُلُ النَّاسُ وَالْأَنْعَامُ ۖ حَتَّىٰ إِذَا
أَخَذَتِ الْأَرْضُ زُخْرُفَهَا وَازِيدَتْ وَطْنَ أَهْلِهَا ۖ إِنَّهُمْ قَادِرُونَ عَلَيْهَا ۖ إِنَّهَا أَمْرًا لَّيْلًا أَوْ نَهَارًا
فَجَعَلْنَاهَا حَصِيدًا ۖ إِنْ كَانَ لَمْ تَغْنِ بِالْأَمْسِ ۖ كَذَٰلِكَ نَقُصِّلُ الْآيَاتِ لِقَوْمٍ يَتَفَكَّرُونَ ۝

व इजा अजवनन्ना-स रहम-तम्
मिम्-बज्जदि ज़रा-अ मस्सलहुम् इजा
लहुम् मकरन् फी आयातिना,
कुलिल्लाहु अस्रजु मकरन्, इन्-न
रसु-लना यक्तुबू-न मा तम्कुरुन
(21) हुवल्लजी युसय्यिरुकुम्
फिल्बर्ि वल्बस्ति, हत्ता इजा कुन्तुम्
फिल्फुल्कि व जरै-न बिहिम् बिरीहिन्
तय्यि-बतिंव-व फरिहू बिहा जाअत्हा
रीहुन् आसिफुंव-व जा-अहुमुल्-
मौजु मिन् कुल्लि मकानिंव-व जन्नू
अन्नहुम् उही-त बिहिम् द-अवुल्ला-ह
मुद्लिसी-न लहुद्दी-न, ल-इन्
अन्जैतना मिन् हाजिही ल-नकूनन्-न
मिनशशाकिरीन (22) फ-लम्मा
अन्जाहुम् इजा हुम् यब्ज-न
फिल्अर्जि बिगैरिल्-हविक, या
अय्युहन्नासु इन्नमा बग्युकुम् अला
अन्फुसिकुम् मताअल् हयातिदुदुन्या

और जब चखायें हम लोगों को मजा
अपनी रहमत का बाद एक तकलीफ़ के
जो उनको पहुँची थी, उसी वक़्त बनाने
लगेँ हीले हमारी कुदरतों में, कह दे कि
अल्लाह सब से जल्द बना सकता है हीले,
तहकीक़ कि हमारे फ़रिश्ते लिखते हैं
तुम्हारी हीले-बाजी। (21) वही तुमको
फिराता है जंगल और दरिया में, यहाँ तक
कि जब तुम बैठे कशितियों में और लेकर
चलें वो लोगों को अच्छी हवा से और
खुश हुए उससे, आई कशितियों पर हवा
सफ़्त और आई उन पर मौज हर जगह
से, और जान लिया उन्होंने कि वे घिर
गये, पुकारने लगे अल्लाह को खालिस
होकर उसकी बन्दगी में, (कि) अगर तूने
बचा लिया हमको इससे तो बेशक हम
रहेंगे शुक्रगुज़ार। (22) फिर जब बचा
दिया उनको अल्लाह ने, लगे शरारत करने
उसी वक़्त ज़मीन में नाहक़ की, सुनो
लोगो! तुम्हारी शरारत है तुम्हीं पर, नफ़ा
उठा लो दुनिया की ज़िन्दगानी का फिर
हमारे पास है तुमको लौटकर आना, फिर

सुम्-म इलैना मर्जिअु कुम्
फनुनब्बिउकुम् बिमा कुन्तुम्
तअमलून (23) इन्नमा म-सलुल्-
हयातिदुन्या कमा-इन् अन्ज़ल्नाहु
मिनस्समा-इ फ़रूत-ल-त बिही
नबातुल्-अर्ज़ि मिम्मा यअकुलुन्नासु
वल्-अन् अामु, हत्ता इज्ज
अ-ख़-ज़तिल्-अर-ज़ु जुख़रु-फ़हा
वज़्जय्यनत् व जन्-न अहलुहा
अन्नहुम् कादिरु-न अलैहा अताहा
अमरुना लैलन् औ नहारन्
फ़-जअल्नाहा हसीदन् क-अल्लम्
तर-न बिल्अम्सि, कज़ालि-क
नुफ़स्सिलुल्-आयाति लिक्वैमियु-
यतफ़क्करून (24)

हम बतला देंगे जो कुछ कि तुम करते
थे। (23) दुनिया की जिन्दगानी की वही
मिसाल है जैसे हमने पानी उतारा
आसमान से फिर रत्ता-मिला निकला उससे
सब्ज़ा ज़मीन का, जो कि खायें आदमी
और जानवर, यहाँ तक कि जब पकड़ी
ज़मीन ने रौनक और हरी-भरी हो गयी
और ख्याल किया ज़मीन वालों ने कि ये
हमारे हाथ लगेगी, अचानक पहुँचा उस पर
हमारा हुक्म रात को या दिन को, फिर
कर डाला उसको काटकर ढेर गोया कल
यहाँ न थी आबादी, इसी तरह हम खोल
कर बयान करते हैं निशानियों को उन
लोगों के सामने जो गौर करते हैं। (24)

खुलासा-ए-तफ़सीर

और जब हम लोगों को इसके बाद कि उन पर कोई मुसीबत पड़ चुकी हो, किसी नेमत का
ज़ा चखा देते हैं तो फौरन ही हमारी आयतों के बारे में शरारत करने लगते हैं (यानी उनसे मुँह
गोड़ लेते हैं और उनके साथ झुठलाने व मज़ाक उड़ाने से पेश आते हैं और एतिराज़ व दुश्मनी
के तौर पर दूसरे मोजिज़ों की फ़रमाईश करते हैं, और गुज़री मुसीबत से सबक हासिल नहीं
करते। पस मालूम हुआ कि उनके एतिराज़ का असल सबब अल्लाह की नाज़िल की हुई आयतों
। मोजिज़ों से विमुख होना और बेतवज्जोही बरतना है और यह बेतवज्जोही और मुँह फेरना
निया की नेमतों में मस्त हो जाने से पैदा हुआ है। आगे धमकी है कि) आप कह दीजिये कि
अल्लाह तआला (इस शरारत की) सज़ा बहुत जल्द देगा। यकीनन हमारे भेजे हुए (यानी फ़रिश्ते)
। हमारी सब शरारतों को लिख रहे हैं (पस अल्लाह के इल्म में महफ़ूज़ होने के अलावा दफ़्तर में
। महफ़ूज़ हैं)। वह (अल्लाह) ऐसा है कि तुमको खुश्की और दरिया में लिये-लिये फिरता है
यानी जिन चीज़ों, मशीनों और माध्यमों से तुम चलते फिरते हो वो सब अल्लाह ही के दिये हुए

हैं) यहाँ तक कि (कई बार) जब तुम कष्टों में सवार होते हो और वो (कष्टियाँ) लोगों को मुवाफिक हवा के ज़रिये से लेकर चलती हैं और वे लोग उन (की रफ्तार) से खुश होते हैं (उस हालत में अचानक) उन पर (मुखालिफ) हवा का एक झोंका आता है, और हर तरफ से उन (लोगों) पर लहरें (उठी चली) आती हैं, और वे समझते हैं कि (बुरी तरह) आ धिरे, (उस वक्त) खालिस एतिकाद करके सब अल्लाह ही को पुकारने लगते हैं, (कि ऐ अल्लाह) अगर आप हमको इस (मुसीबत) से बचा लें तो हम ज़रूर हक को पहचानने वाले (तौहीद के इकरारी) बन जाएँ। (यानी इस वक्त जैसा एतिकाद तौहीद का हो गया है उस पर कायम रहें)। फिर जब अल्लाह तआला उनको (उस तबाही से) बचा लेता है तो फौरन ही वे (चारों तरफ) ज़मीन में नाहक की सरकशी करने लगते हैं (यानी वही शिर्क व नाफरमानी)।

ऐ लोगो! (सुन लो) यह तुम्हारी नाफरमानी और बगावत तुम्हारे लिये वबाले (जान) होने वाली है, (बस) दुनियावी ज़िन्दगी में (इससे थोड़ा-सा) फायदा उठा रहे हो, फिर हमारे पास तुम सब को आना है, फिर हम तुम्हारा किया हुआ सब कुछ तुमको जतला देंगे (और उसकी सज़ा देंगे)। बस दुनियावी ज़िन्दगी की हालत तो ऐसी है जैसे हमने आसमान से पानी बरसाया, फिर उस (पानी) से ज़मीन के पेड़-पौधे जिनको आदमी और चौपाये खाते हैं ख़ूब घने होकर निकले, यहाँ तक कि जब वह ज़मीन अपनी रौनक का (पूरा हिस्सा) ले चुकी और उसकी ख़ूब ज़ेबाईश हो गई (यानी हरियाली से अच्छी मालूम होने लगी) और उस (ज़मीन) के मालिकों ने समझ लिया कि अब हम इस (के पेड़-पौधों, वनस्पतियों और फलों) पर बिल्कुल काबिज़ हो चुके, तो (ऐसी हालत में) दिन में या रात में हमारी तरफ से कोई हादसा आ पड़ा (जैसे पाला या सूखा या और कुछ) सो हमने उसको ऐसा साफ़ कर दिया गोया कल वह (यहाँ) मौजूद ही न थी। (पस उसी पेड़-पौधों, हरियाली और वनस्पति की तरह दुनियावी ज़िन्दगी है) हम इसी तरह आयतों को साफ़-साफ़ बयान करते हैं, ऐसे लोगों के (समझाने के) लिये जो सोचते हैं।

मआरिफ़ व मसाईल

قُلِ اللَّهُ أَسْرَعُ مَكْرًا.

अरबी लुग़त के एतिबार से लफ़्ज़ 'मक्र' गोपनीय तदबीर को कहते हैं जो अच्छी भी हो सकती है बुरी भी। उर्दू भाषा के मुहावरे से धोखा न खायें कि लफ़्ज़ 'मक्र' उर्दू में धोखे फरेब के लिये इस्तेमाल होता है, जिससे हक़ तआला बरी है।

إِنَّمَا بَغْيُكُمْ عَلَىٰ أَنْفُسِكُمْ.

यानी तुम्हारे जुल्म का वबाल तुम्हारे ही ऊपर पड़ रहा है। इससे मालूम हुआ कि जुल्म का वबाल यकीनी है और आखिरत से पहले दुनिया में भी भुगतना पड़ता है।

हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम ने फरमाया कि अल्लाह तआला सिला-रहमी और लोगों पर एहसान करने का बदला भी जल्द देता है (कि आखिरत से पहले)

दुनिया में उसकी बरकतें नज़र आने लगती हैं) और जुल्म और रिश्ता तोड़ने का बदला भी जल्द देता है (कि दुनिया में भुगतना पड़ता है)। (तिर्मिज़ी व इब्ने माजा, हसन सनद के साथ)

और एक हदीस में हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की रिवायत से बयान हुआ है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया- तीन गुनाह ऐसे हैं कि उनका वबाल अपने करने वाले ही पर पड़ता है- जुल्म, अहद के खिलाफ़ करना और धोखा फरेब।

(अबुशैख़ व इब्ने मर्दूया फ़िल्लफसीर, तफसीरे मज़हरी)

وَاللّٰهُ يَدْعُوْا اِلٰى دَارِ السَّلَامِ وَيَهْدِيْ مَنْ يَّشَاءُ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۝

لِّلَّذِيْنَ اَحْسَنُوا الْحُسْنٰى وَزِيَادَةٌ وَلَا يَرْهَقُ وُجُوْهُهُمْ قَتَرٌ وَلَا ذِلَّةٌ اُولٰٓئِكَ اَصْحَابُ الْجَنَّةِ هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ۝ وَالَّذِيْنَ كَسَبُوا السَّيِّئَاتِ جَزَاءُ سَيِّئَةٍ يَّمِثْلُهَا وَتَرْهَقُهُمْ ذِلَّةٌ مَّا لَهُمْ مِنَ اللّٰهِ مِنْ عَاصِمٍ ۝ كَانَتْ اَغْشٰىتْ وُجُوْهُهُمْ قِطْعًا مِّنَ الْبَيْلِ مُظْلِمًا اُولٰٓئِكَ اَصْحَابُ النَّارِ هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ۝ وَيَوْمَ نَحْشُرُهُمْ جَمِيْعًا ثُمَّ نَقُوْلُ لِلَّذِيْنَ اَشْرَكُوْا مِمَّا كَانُكُمْ اَنْتُمْ وَشُرَكَآؤُكُمْ فَرٰٓئِلْنَا بَيْنَهُمْ وَقَالَ شُرَكَآؤُهُمْ مَا كُنْتُمْ اِيَّاْنَا تَعْبُدُوْنَ ۝ فَكُفٰٓى بِاللّٰهِ شَهِيدًا بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ اِنْ كُنَّا عَنْ عِبَادَتِكُمْ لَغٰفِلِيْنَ ۝ هٰذَا لِكُتُبُوْا كُلُّ نَفْسٍ مَّا اَسْلَفَتْ وَرُدُّوْا اِلَى اللّٰهِ مَوْلٰهُمُ الْحَقُّ وَضَلَّ عَنْهُمْ مَّا كَانُوْا يَفْتَرُوْنَ ۝ قُلْ مَنْ يُّزِرُّكُمْ مِّنَ السَّمَآءِ وَالْاَرْضِ اَمِّنُ يَّبٰٓئِكَ السَّمْعُ وَالْاَبْصَارُ وَمَنْ يُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَيُخْرِجُ الْمَيِّتَ مِنَ الْحَيِّ وَمَنْ يُّدْبِرُ الْاَمْرَ فَسَيَقُوْلُوْنَ اللّٰهُ فَقُلْ اَفَلَا تَتَّقُوْنَ ۝ فَاذْكُرُوْا اللّٰهَ رَبَّكُمْ الْحَقُّ ۝ فَاذْكُرُوْا الْحَقَّ اِلَّا الضَّلٰلٰتُ فَاَنّٰى تُصْرَفُوْنَ ۝

वल्लाहु यदजू इला दारिस्सलामि, व
यहदी मय्यशा-उ इला सिरातिम्-
मुस्तकीम (25) लिल्लज़ी-न अह्सनुल्-
हुस्ना व ज़िया-दतुन्, व ला. यरहकु
वुजू-हहुम् क-तरुव्-व ला ज़िल्लतुन्,
उलाइ-क अस्हाबुल्-जन्नति हुम्
फीहा ख़ालिदून (26) वल्लज़ी-न
क-सबुस्सय्यिआति जज़ा-उ

और अल्लाह बुलाता है सलामती के घर
की तरफ़, और दिखाता है जिसको चाहे
रास्ता सीधा। (25) जिन्होंने की भलाई
उनके लिये है भलाई और ज्यादाती, और
न चढ़ेगी उनके मुँह पर सियाही और न
रुस्वाई, वे हैं जन्नत वाले, वे उसी में रहा
करेंगे। (26) और जिन्होंने कमाई बुराईयाँ
बदला मिले बुराई का उसके बराबर और
ढाँक लेगी उनको रुस्वाई, कोई नहीं

सय्यि-अतिम् बिमिस्लिहा व तरहकुहुम्
 ज़िल्लतुन्, मा लहुम् मिनल्लाहि मिन्
 आसिमिन् क-अन्नमा उरुशियत्
 वुजूहुहुम् कि-तअम् मिनल्लैलि
 मुज़्लिमन्, उलाइ-क अस्हाबुन्नारि
 हुम् फीहा ख़ालिदून् (27) व यौ-म
 नहशुरुहुम् जमीअन् सुम्-म नकूलु
 लिल्लज्जी-न अशरकू मकानकुम्
 अन्तुम् व शु-रकाउकुम् फ-जय्यल्ना
 बैनहुम् व का-ल शु-रकाउहुम् मा
 कुन्तुम् इय्याना तअबुदून् (28)
 फ-कफा बिल्लाहि शहीदम् बैनना व
 बैनकुम् इन् कुन्ना अन्
 अिबादतिकुम् लगाफिलीन (29)
 हुनालि-क तब्लू कुल्लु नफ़िसम् मा
 अस्ल-फत् व रुददू इलल्लाहि
 मौलाहुमुल्-हक्कि व ज़ल्-ल अन्हुम्
 मा कानू यफ़्तरून (30) ● ●
 कुल् मय्यरज़ुकुकुम् मिनस्समा-इ
 वल्अर्जि अम्-मय्यम्लिकुस्सम्-अ
 वल्अब्सा-र व मय्युख़िरजुल्-हय्-य
 मिनल्मय्यिति व युख़िरजुल्-मय्यि-त
 मिनल्-हय्यि व मय्युदब्बिरुल्-अम्-र,

उनको अल्लाह से बचाने वाला, गोया कि
 ढाँक दिये गये उनके चेहरे अंधेरी रात के
 टुकड़ों से, वे हैं दोख़्ख़ वाले, वे उसी में
 रहा करेंगे। (27) और जिस दिन जमा
 करेंगे हम उन सब को फिर कहेंगे शिक
 करने वालों को- खड़े हो अपनी अपनी
 जगह तुम और तुम्हारे शरीक, फिर तुड़ा
 देंगे हम आपस में उनको और कहेंगे
 उनके शरीक तुम हमारी तो बन्दगी न
 करते थे। (28) सो अल्लाह काफी है
 शायद हमारे और तुम्हारे बीच में, हमको
 तुम्हारी बन्दगी की ख़बर न थी। (29)
 वहाँ जाँच लेगा हर कोई जो उसने पहले
 किया था और रुजू करेंगे अल्लाह की
 तरफ़ जो सच्चा मालिक है उनका, और
 जाता रहेगा उनके पास से जो झूठ बाँधा
 करते थे। (30) ● ●

तू पूछ कौन रोज़ी देता है तुमको
 आसमान से और ज़मीन से या कौन
 मालिक है कान और आँखों का, और
 कौन निकालता है ज़िन्दे को मुर्दे से और
 निकालता है मुर्दे को ज़िन्दे से, और कौन
 तदबीर करता है कामों की, सो बोल

फ-स-यकूलूनल्लाहु फकुल् अ-फला
तत्तकून (31) फज़ालिकुमुल्लाहु
रब्बुकुमुल्-हक्कु फ-माज़ा
बअद्ल्-हक्कि इल्लज़ जलालु
फ-अन्ना तुसफ़ून (32)

उठेंगे कि अल्लाह, तो तू कह फिर डरते
नहीं हो? (31) सो यह अल्लाह है रब
तुम्हारा सच्चा, फिर क्या रह गया सच के
बाद मगर भटकना, सो कहाँ से लौटे
जाते हो। (32)

खुलासा-ए-तफसीर

और अल्लाह तआला दारुल-बका "यानी जन्नत" की तरफ़ तुमको बुलाता है और जिसको चाहता है सही रास्ते (पर चलने) की तौफ़ीक़ दे देता है (जिससे दारुल-बका तक पहुँच हो सकती है)। आगे जज़ा व सज़ा का बयान है कि) जिन लोगों ने नेकी की है (यानी ईमान लाये हैं) उनके वास्ते ख़ूबी (यानी जन्नत) है, और उस पर यह भी कि (खुदा का दीदार) भी, और उनके चेहरों पर न (ग़म की) सियाही छायेगी और न ज़िल्लत, ये लोग जन्नत में रहने वाले हैं, वे उसमें हमेशा रहेंगे। और जिन लोगों ने बुरे काम किये (यानी कुफ़्र व शिर्क किया) उनकी बदी की सज़ा उसके बराबर मिलेगी (बदी से ज़्यादा न होगी), और उनको ज़िल्लत घेर लेगी, उनको अल्लाह तआला (के अज़ाब) से कोई न बचा सकेगा (उनके चेहरों की सियाही की ऐसी हालत होगी कि) गोया उनके चेहरों पर अंधेरी रात के परत-के-परत (यानी टुकड़े) लपेट दिए गये हैं। ये लोग दोज़ख़ (में रहने) वाले हैं, वे उसमें हमेशा-हमेशा रहेंगे।

और (वह दिन भी ज़िक्र करने के काबिल है) जिस दिन हम इन सब (मख़्लूक़ात) को (क़ियामत के मैदान में) जमा करेंगे, फिर (उन तमाम मख़्लूक़ात में से) मुशिरकों से कहेंगे कि तुम और तुम्हारे (तय किये हुए) शरीक (जिनको तुम इबादत में खुदा का शरीक ठहराते थे ज़रा) अपनी जगह ठहरो (ताकि तुमको तुम्हारे अक्कीदे की हकीक़त मालूम कराई जाये) फिर हम उन (इबादत करने वालों और उनके माबूदों) के बीच में फूट डालेंगे और उनके वे शरीक (उनसे ख़िताब करके) कहेंगे कि तुम हमारी इबादत नहीं करते थे (क्योंकि इबादत से मक़सूद होता है माबूद का राज़ी करना) सो हमारे और तुम्हारे बीच अल्लाह काफी गवाह है कि हमको तुम्हारी इबादत की ख़बर भी न थी (और राज़ी होना तो दरकिनार बल्कि यह तो शैतानों की तालीम थी और वही राज़ी थे। पस इस एतिबार से उनकी इबादत करते थे) उस मक़ाम पर हर शख़्स अपने अगले किए हुए कामों का इम्तिहान कर लेगा (कि आया वास्तव में ये आमाल लाभदायक थे या फ़ायदा न देने वाले। चुनाँचे उन मुशिरकों पर भी हकीक़त खुल जायेगी कि जिनकी शफ़ाअत के भरोसे हम उनको पूजते थे उन्होंने तो उल्टी और हमारे खिलाफ़ गवाही दी, नफ़े की तो क्या उम्मीद की जाये), और ये लोग अल्लाह (के अज़ाब) की तरफ़ जो उनका असली मालिक है लौटाए जाँगे, और जो कुछ (माबूद) उन्होंने गढ़ रखे थे सब उनसे ग़ायब (और गुम) हो जाँगे।

(कोई भी तो काम न आयेगा)।

आप (उन मुशिरकों से) कहिये कि (बतलाओ) वह कौन है जो तुमको आसमान और ज़मीन में रिज़क पहुँचाता है (यानी आसमान से बारिश करता है और ज़मीन से खेती और पेड़-पौधे पैदा करता है, जिससे तुम्हारा रिज़क तैयार होता है) या (यह बतलाओ कि) वह कौन है जो (तुम्हारे) कानों और आँखों पर पूरा इख्तियार रखता है (कि पैदा भी उसी ने किया, हिफ़ाज़त भी वही करता है, और अगर चाहता है तो उनको बेकार कर देता है) और वह कौन है जो जानदार (चीज़) को बेजान (चीज़ से) निकालता है, और बेजान (चीज़) को जानदार (चीज़) से निकालता है (जैसे वीर्य का नुत्फ़ा और अण्डा कि वह जानदार से निकलता है और उससे जानदार पैदा होता है) और वह कौन है जो तमाम कामों की तदबीर करता है? (उनसे सवाल कीजिये) सो (इन सवालों के जवाब में) वे (ज़रूर यही) कहेंगे (कि इन सब कामों का करने वाला) अल्लाह (है), तो उनसे कहिये कि फिर (शिरक से) क्यों परहेज़ नहीं करते? सो (जिसके यह काम और गुण बयान हुए) यह है अल्लाह, जो तुम्हारा वास्तविक रब है, (और जब हक् मामला साबित हो गया) फिर हक् (मामले) के बाद और क्या रह गया, सिवाय गुमराही के, (यानी जो चीज़ हक् के विपरीत होगी वह गुमराही है, और तौहीद का हक् होना साबित हो गया, पस शिरक यकीनन गुमराही है) फिर (हक् को छोड़कर बातिल की तरफ) कहाँ फिरे जाते हो?

मज़ारिफ़ व मसाईल

पिछली आयत में दुनियावी ज़िन्दगी और इसकी नापायेदारी की मिसाल उस खेती से दी गयी थी जो आसमानी पानी से सैराब होकर लहलहाने लगी और हर तरह के फल-फूल निकल आये, और खेती वाले खुश होने लगे कि अब हमारी सारी ज़रूरतें इससे पूरी होंगी, मगर उनकी नाफरमानियों की वजह से रात या दिन में हमारे अज़ाब का कोई हादसा आ पड़ा जिसने उसको ऐसा साफ़ कर दिया कि गोया यहाँ कोई चीज़ मौजूद ही न थी। यह तो दुनिया की ज़िन्दगी का हाल था। उसके बाद उक्त आयत में इसके मुकाबले में आखिरत के घर का हाल बयान किया गया है। इरशाद फ़रमाया:

وَاللّٰهُ يَدْعُوْا اِلٰى دَارِ السَّلَامِ

यानी अल्लाह तआला इनसान को दारुस्सलाम की तरफ़ दावत देता है। यानी ऐसे घर की तरफ़ जिसमें हर तरह की सलामती ही सलामती है, न उसमें किसी तरह की कोई तकलीफ़ है न रंज व ग़म, न बीमारी का ख़तरा, न फना होने या हालत बदल जाने की फ़िक्र।

दारुस्सलाम से मुराद जन्नत है। उसको दारुस्सलाम कहने की एक वजह तो यह है कि उसमें हर तरह की सलामती और अमन व सुकून हर शख्स को हासिल होगा। दूसरी वजह कुछ रिवायतों में है कि जन्नत का नाम दारुस्सलाम इसलिये भी रखा गया है कि उसमें बसने वालों को हमेशा अल्लाह तआला की तरफ़ से तथा फ़रिश्तों की तरफ़ से सलाम पहुँचता रहेगा, बल्कि

तफ्ज सलाम ही जन्नत वालों की परिभाषा होगी, जिसके ज़रिये वे अपनी इच्छाओं का इज़हार करेंगे और फ़रिश्ते उनको उपलब्ध करायेंगे, जैसा कि इससे पहली आयतों में गुज़र चुका है।

हज़रत यहया बिन मुअज़ रह. ने इस आयत की तफ्सीर में अ़वाम को नसीहत के तौर पर खिताब करके फ़रमाया कि ऐ आदम के बेटे! तुझको अल्लाह तआला ने दारुस्सलाम की तरफ़ बुलाया, तू अल्लाह की इस दावत की तरफ़ कब और कहाँ से क़दम उठायेगा। ख़ूब समझ ले कि इस दावत को कुबूल करने के लिये अगर तूने दुनिया ही से कोशिश शुरू कर दी तो वह कामयाब होगी और तू दारुस्सलाम में पहुँच जायेगा, और अगर तूने इस दुनिया की उम्र को ज़ाया करने के बाद यह चाहा कि क़ब्र में पहुँचकर इस दावत की तरफ़ चलूँगा तो तेरा रास्ता रोक दिया जायेगा, तू वहाँ एक क़दम आगे न बढ़ सकेगा, क्योंकि वह दारुल-अमल ही।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि दारुस्सलाम जन्नत के सात नामों में से एक नाम है। (तफ्सीरे कुर्तुबी)

इससे मालूम हुआ कि दुनिया में किसी घर का नाम दारुस्सलाम रखना मुनासिब नहीं, जैसे जन्नत या फिरदौस वगैरह नाम रखना भी दुरुस्त नहीं।

इसके बाद ज़िक्र हुई आयत में इरशाद फ़रमाया:

وَيَهْدِي مَنْ يَشَاءُ إِلَى صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ

यानी पहुँचा देता है अल्लाह तआला जिसको चाहे सीधे रास्ते पर।

मतलब यह है कि अल्लाह तआला की तरफ़ से दारुस्सलाम की दावत तो सारे इंसानों के लिये आम है और इसी मायने के एतिबार से सब के लिये हिदायत भी आम है, लेकिन हिदायत की खास किस्म कि सीधे रास्ते पर खड़ा कर दिया जाये और चलने की तौफ़ीक़ दी जाये यह खास-खास ही लोगों को नसीब होता है।

ऊपर बयान हुई दो आयतों में दुनिया के घर और आख़िरत के घर का मुकाबला और आख़िरत वालों के हालात का ज़िक्र था, अगली चार आयतों में दोनों पक्षों की जज़ा व सज़ा का बयान है। पहले जन्नत वालों का ज़िक्र इस तरह फ़रमाया गया कि जिन लोगों ने नेकी इख़्तियार की यानी सब से बड़ी नेकी ईमान और फिर नेक अमल पर कायम रहे उनको उनके अमल का उम्दा और बेहतर बदला मिलेगा, और सिर्फ़ बदला ही नहीं बल्कि बदले से कुछ ज़्यादा भी।

इस आयत की तफ्सीर जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने खुद फ़रमाई वह यह है कि इस जगह अच्छे बदले से मुराद जन्नत है, और 'ज़ियादती' से मुराद हक़ तआला सुब्हानहू की ज़ियारत है जो जन्नत वालों को हासिल होगी। (तफ्सीरे कुर्तुबी हज़रत अनस की रिवायत से)

जन्नत की इतनी हकीकत से तो हर मुसलमान वाकिफ़ है कि वह ऐसी राहतों और नेमतों का ठिकाना है जिनको इंसान इस वक़्त तसव्वुर में नहीं ला सकता और हक़ तआला की ज़ियारत उन सब नेमतों से ऊपर है।

सही मुस्लिम में हज़रत सुहैब रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है कि आप सल्लल्लाहु

अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि जब जन्नत वाले जन्नत में दाखिल हो चुकेंगे तो हक़ तआला उनसे खिताब फरमायेंगे कि क्या तुम्हें किसी और चीज़ की ज़रूरत है? अगर हो तो बतलाओ हम उसको पूरा करेंगे। जन्नत वाले जवाब देंगे कि आपने हमारे चेहरे रोशन किये, हमें जन्नत में दाखिल फरमाया, जहन्नम से निजात दी, इससे ज्यादा और क्या चीज़ तलब करें। उस वक़्त बीच से हिजाब (पर्दा) उठा दिया जायेगा और सब जन्नत वाले हक़ तआला का दीदार करेंगे तो मालूम होगा कि जन्नत की सारी नेमतों से बढ़कर यह नेमत थी जिसकी तरफ़ उनका ध्यान भी न गया था, जो रब्बुल-आलमीन ने महज़ अपने करम से बिना माँगे अता फरमाई। बकौल मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अलैहि:

मा नबूदेम व तकाज़ा-ए-मा न बूद

लुत्फ़े तू नागुफ़ता-ए-मा मी शनवद

न हमारा कोई वजूद था और न हमारी कुछ माँग और तकाज़ा था। यह तेरा लुत्फ़ व करम है कि तू हमारी बिना माँगी ज़रूरत व तकाज़े सुन लेता और अपनी रहमत से उसे कुबूल फरमाता है। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

और फिर उन्हीं जन्नत वालों का यह हाल बयान फरमाया कि न उनके चेहरों पर कभी नागवारी या तकलीफ़ व ग़म का असर छयेगा और न ज़िल्लत का असर होगा, जो दुनिया में हर शख्स को कभी न कभी पेश आया करता है, और आखिरत में जहन्नम वालों को पेश आयेगा।

इसके मुकाबले में जहन्नम वालों का यह हाल बयान फरमाया कि जिन लोगों ने बुरे अमल किये उनको बुराई का बदला बराबर-सराबर मिलेगा, उसमें कोई ज़्यादती न होगी। उनके चेहरों पर ज़िल्लत छाई होगी, कोई शख्स उनको अल्लाह के अज़ाब से बचाने वाला न होगा, उनके चेहरों की सियाही का यह हाल होगा कि गोया अंधेरी रात के परत के परत उन पर लपेट दिये गये हैं।

इसके बाद की दो आयतों में एक मुकालमा (गुफ़्तगू और बातचीत) मज़कूर है जो जहन्नम वालों और उनको गुमराह करने वाले बुतों या शैतानों के बीच मेहशर के मैदान में होगा। इरशाद फरमाया कि उस दिन हम सब को जमा कर देंगे फिर मुशिरकों से कहेंगे कि तुम और तुम्हारे तजवीज़ किये (ठहराये) हुए माबूद ज़रा अपनी जगह ठहरो ताकि तुम्हें अपने अकीदे की हकीकत मालूम हो जाये। उसके बाद उन लोगों में और उनके माबूदों में जो एकता व ताल्लुक का रिश्ता दुनिया में पाया जाता था उसको काट दिया जायेगा, जिसका नतीजा यह होगा कि उनके बुत खुद बोल उठेंगे कि तुम हमारी इबादत नहीं किया करते थे और खुदा को गवाह बनाकर कहेंगे कि हमको तुम्हारी मुशिरकाना इबादत की कुछ ख़बर भी न थी, क्योंकि न हम में एहसास व हरकत है और न उन मामलात व समस्याओं को समझने के काबिल अक़ल व शऊर है।

छठी आयत में दोनों पक्ष यानी जन्नत वालों और जहन्नम वालों का एक साझा हाल बयान फरमाया है कि इस मक़ाम यानी मेहशर में हर शख्स अपने-अपने किये हुए आमाल को आजमा

लेगा कि वे नफ़ा देने वाले थे या नुक़सान पहुँचाने वाले, और सब के सब अपने असली माबूद के पास पहुँचा दिये जायेंगे, और सारे भरोसे और सहारे जो दुनिया में इनसान ढूँढ़ता है ख़त्म कर दिये जायेंगे, और मुशिरक लोग जिन बुतों को अपना मददगार और सिफ़ारिशी समझा करते थे वे सब ग़ायब हो जायेंगे।

सातवीं और आठवीं आयत में क़ुरआने हकीम ने अपने हिक्मत भरे और मुरब्बियाना तरीक़े पर मुशिरकों की आँखें खोलने के लिये उनसे कुछ सवालात कायम किये हैं। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को ख़िताब करके फ़रमाया कि उन लोगों से कहिये कि आसमान और ज़मीन में से तुम्हें रिज़्क कौन देता है? या कान और आँखों का कौन मालिक है कि जब चाहे उनमें सुनने और देखने की ताक़त पैदा कर दे और जब चाहे छीन ले, और कौन है जो मुर्दा चीज़ में से ज़िन्दा को पैदा कर देता है जैसे मिट्टी से घास और दरख़्त, या नुत्फ़े से इनसान और जानवर या अण्डे से परिन्दा, और ज़िन्दा से मुर्दा को पैदा कर देता है जैसे इनसान और जानवर से बेजान नुत्फ़ा, और कौन है जो तमाम कायनात के कामों की तदबीर (व्यवस्था) करता है?

फिर फ़रमाया कि जब आप उन लोगों से यह सवाल करेंगे तो सब के सब यही कहेंगे कि इन चीज़ों को पैदा करने वाला एक अल्लाह है। तो आप उनसे फ़रमा दें कि फिर तुम क्यों खुदा से नहीं डरते? जब इन तमाम चीज़ों का पैदा करने वाला और बाक़ी रखने वाला और इन सब के काम में लगाने का इन्तिज़ाम करने वाला सिर्फ़ एक अल्लाह ही है तो फिर इबादत व इताअत का हक़दार उसके सिवा किसी को क्यों बनाते हो?

आखिरी आयत में फ़रमाया:

فَلِلّٰهِ الْاِلٰهَ رَبُّكُمْ الْحَقُّ، فَمَاذَا بَعْدَ الْحَقِّ اِلَّا الضَّلٰلُ

यानी यही है वह ज़ात जिसकी क़माल वाली सिफ़ात का ज़िक्र अभी-अभी गुज़रा है, फिर हक़ के बाद गुमराही के सिवा क्या है। यानी जब अल्लाह तआला का सच्चा माबूद होना साबित हो गया तो फिर इस हक़ को छोड़कर दूसरों की तरफ़ रुख़ फेरना किस क़द्र नामाकूल बात है।

इस आयत के मसाल्ल व फ़वाईद में से यह बात याद रखने की है कि आयत में:

فَمَاذَا بَعْدَ الْحَقِّ اِلَّا الضَّلٰلُ

से यह साबित होता है कि हक़ और गुमराही के बीच कोई वास्ता नहीं, जो हक़ नहीं होगा वह गुमराही में दाख़िल होगा। ऐसा कोई काम नहीं हो सकता जो न हक़ हो न गुमराही, और यह भी नहीं हो सकता कि दो एक दूसरे के विपरीत चीज़ें हक़ हों। तमाम बुनियादी अक़ीदों में यह कायदा उम्मत की अक्सरियत के नज़दीक मुसल्लम है, अलबत्ता जुज़ई मसाल्ल और फ़िक्ही जुज़ईयात में उलेमा का मतभेद है, कुछ हज़रात के नज़दीक इज्तिहादी मसाल्ल में दोनों जानिबों को हक़ कहा जायेगा और ज़महूर (उम्मत के उलेमा की अक्सरियत) इस पर सहमत हैं कि इज्तिहादी मसाल्ल में विपरीत जानिब और राय को गुमराही नहीं कह सकते।

كَذَلِكَ حَقَّتْ كَلِمَتُ رَبِّكَ عَلَى الَّذِينَ فَسَقُوا أَنَّهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ۝
 قُلْ هَلْ مِنْ شُرَكَائِكُمْ مَنْ يَبْدَأُ الْخَلْقَ ثُمَّ يُعِيدُهُ قُلِ اللَّهُ يَبْدَأُ الْخَلْقَ ثُمَّ يُعِيدُهُ فَلَا تَعْدُونَ
 تَوَفَّكُونَ ۝ قُلْ هَلْ مِنْ شُرَكَائِكُمْ مَنْ يَهْدِي إِلَى الْحَقِّ قُلِ اللَّهُ يَهْدِي لِلْحَقِّ أَفَسِنَّ يَهْدِي إِلَى
 الْحَقِّ أَفَسِنَّ أَنْ يُتَّبَعَ مَنْ لَا يَهْدِي إِلَّا أَنْ يَهْدَىٰ فَمَا لَكُمْ كَيْفَ تَحْكُمُونَ ۝ وَمَا يَتَّبِعُ أَكْثَرُهُمْ إِلَّا
 ظَنًّا إِنَّ الظَّنَّ لَا يُغْنِي مِنَ الْحَقِّ شَيْئًا إِنَّ اللَّهَ عَلِيمٌ بِمَا يَفْعَلُونَ ۝

कजालि-क हक्कत् कलि-मतु रब्बि-क
 अलल्लजी-न फ-सकू अन्नहुम् ला
 युअ्मिनून (३३) कुल् हल् मिन्
 शु-रकाइकुम् मय्यब्दउल्-खाल्-क
 सुम्-म युजीदुह् कुलिल्लाहु यब्दउल्-
 खाल्-क सुम्-म युजीदुह् फ-अन्ना
 तुअ्फकून (३४) कुल् हल् मिन्
 शु-रकाइकुम् मय्यह्दी इलल्-हक्कि,
 कुलिल्लाहु यह्दी लिल्लहक्कि,
 अ-फमय्यह्दी इल्लहक्कि अ-हक्कु
 अय्युत्त-ब-अ अम्-मल्ला यहिद्दी
 इल्ला अय्युह्दा फमा लकुम्, कै-फ
 तह्कुमून (३५) व मा यत्तबिअ
 अक्सरुहुम् इल्ला जन्नन्,
 इन्नज्जन्-न ला युग्नी मिनल्-हक्कि
 शैअन्, इन्नल्ला-ह अलीमुम्-बिमा
 यफअलून (३६)

इसी तरह ठीक आई बात तेरे रब की उन
 नाफरमानों पर कि ये ईमान न लायेंगे।
 (३३) पूछ कोई है तुम्हारे शरीकों में जो
 पैदा करे मख्लूक को फिर दोबारा जिन्दा
 करे? तू कह अल्लाह पहले पैदा करता है
 फेर इसको दोहरायेगा, सो कहाँ से पलटे
 जाते हो? (३४) पूछ कोई है तुम्हारे
 शरीकों में जो राह बतलाये सही? तू कह
 अल्लाह राह बतलाता है सही, तो अब जो
 कोई राह बतलाये सही उसकी बात
 माननी चाहिए या उसकी जो खुद ही न
 पाये राह मगर जब कोई और उसको राह
 बतलाये, सो क्या हो गया तुमको, कैसा
 इन्साफ करते हो? (३५) और वे अक्सर
 चलते हैं महज अटकल पर, सो अटकल
 काम नहीं देती हक बात में कुछ भी,
 अल्लाह को खूब मालूम है जो कुछ वे
 करते हैं। (३६)

खुलासा-ए-तफसीर

(आगे तसल्ली है रसूलुल्लाह को कि आप उन लोगों की बातिल-परस्ती पर गुमगीन हुआ

करते थे। इरशाद है कि जिस तरह ये लोग ईमान नहीं लाते) इसी तरह आपके रब की यह (तकदीरी) बात कि ये ईमान न लाएँगे तमाम नाफरमान (सरकश) लोगों के हक में साबित हो चुकी है (फिर आप क्यों रंजीदा हों। और) आप (उनसे यूँ भी) कहिये कि क्या तुम्हारे (बनाये हुए) शरीकों में (चाहे वे अक्ल वाले हों जैसे शयातीन या गैर-अक्ल वाले जैसे बुत) कोई ऐसा है जो पहली बार भी मख़्लूक को पैदा करे, फिर (कियामत में) दोबारा भी पैदा करे। (अगर वे इस वजह से कि इसमें तौहीन है उन शरीकों की, जवाब में संकोच करें तो) आप कह दीजिये कि अल्लाह तआला ही पहली बार भी पैदा करता है, फिर वही दोबारा भी पैदा करेगा, सो (इसकी तहकीक के बाद भी) फिर तुम (हक से) कहाँ फिरे जाते हो। (और) आप (उनसे यूँ भी) कहिये कि क्या तुम्हारे (तजवीज़ किये हुए अक्ल वाले) शरीकों (जैसे शैतानों) में कोई ऐसा है कि हक (मामले) का रास्ता बतलाता हो? आप कह दीजिये कि अल्लाह ही हक (मामले) का रास्ता (भी) बतलाता है। (चुनाँचे उसने अक्ल दी, अम्बिया अलैहिमुस्सलाम भेजे, बख़िलाफ़ शैतानों के कि अव्वल तो वे इन कामों पर कादिर नहीं और सिर्फ़ तालीम देना और सिखाना जिसकी क़ुदरत उनको दी गयी है वे उसको गुमराह और बेराह करने में खर्च करते हैं) तो फिर (उनसे कहिये कि यह बतलाओ कि) आया जो शख्स हक (मामले) का रास्ता बतलाता हो वह ज़्यादा पैरवी के लायक है या वह शख्स जिसको बिना बतलाये खुद ही रास्ता न सूझे। (और उससे भी बढ़कर यह कि समझाने पर भी उस पर न चले जैसे शयातीन। फिर जब ये पैरवी के काबिल न हों तो इबादत के लायक तो कब हो सकते हैं) तो (ऐ मुशिरको!) तुमको क्या हो गया, तुम कैसी तजवीज़ें करते हो (कि तौहीद को छोड़कर शिर्क को इख़्तियार करते हो) और (तमाशा यह है कि अपनी इस तजवीज़ और अक़ीदे पर ये लोग कोई दलील नहीं रखते बल्कि) इनमें से अक्सर लोग सिर्फ़ बेअसल ख़्यालात पर चल रहे हैं (और) यकीनन बेअसल ख़्यालात हक (मामले) के साबित करने में ज़रा भी मुफ़ीद नहीं। (ख़ैर) ये जो कुछ कर रहे हैं यकीनन अल्लाह को सब ख़बर है (वक़्त पर सज़ा देगा)।

وَمَا كَانَ هَذَا الْقُرْآنُ أَنْ يُفْتَرَىٰ مِنْ دُونِ اللَّهِ وَلَكِنْ تَصْدِيقُ الَّذِي بَيْنَ

يَدَيْهِ وَتَفْصِيلَ الْكِتَابِ لَا رَيْبَ فِيهِ مِنْ رَبِّ الْعَالَمِينَ ۝ أَمْ يَقُولُونَ افْتَرَاهُ قُلْ فَأْتُوا بِسُورَةٍ مِّثْلِهِ وَادْعُوا مَنِ اسْتَطَعْتُمْ مِنْ دُونِ اللَّهِ إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ۝ بَلْ كَذَّبُوا بِآيَاتِهِ يَحِيْطُ بِعِلْمِهِ ۝ وَلَمَّا يَأْتِهِمْ تَأْوِيلُهُ كَذَلِكَ كَذَّبَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الظَّالِمِينَ ۝ وَ مِنْهُمْ مَنْ يُؤْمِنُ بِهِ ۖ وَمِنْهُمْ مَنْ لَا يُؤْمِنُ بِهِ ۚ وَرَبُّكَ أَعْلَمُ بِالْمُفْسِدِينَ ۝

व मा का-न हाज़ल्-कुरआनु
अंयुफ़्तरा मिन् दूनिल्लाहि व

और वह नहीं यह कुरआन कि कोई बना
ले अल्लाह के सिवा, और लेकिन तस्दीक

लाकिन् तस्दीकल्लजी बै-न यदैहि व
तफसीलल्-किताबि ला रै-ब फीहि
मिरब्बिल्-आलमीन (37) अम्
यकूलूनफ़तराहु, कुल् फ़अतू
बिसूरतिम्-मिस्लिही वदअ
मनिस्त-तअतुम् मिन् दूनिल्लाहि इन्
कुन्तुम् सादिकीन (38) बल् कज़्ज़बू
बिमा लम् युहीतू बिअिल्मिही व
लम्मा यअतिहिम् तअवीलुह,
कज़ालि-क कज़्ज़बल्लजी-न मिन्
कब्लिहिम् फन्ज़ुर कै-फ़ का-न
आकि-बतुज़्ज़ालिमीन (39) व मिन्हुम्
मय्युअमिनु बिही व मिन्हुम् मल्ला
युअमिनु बिही, व रब्बु-क अअलमु
बिल्मुप्सिदीन (40) ❀

करता है पहले कलाम की और बयान
करता है उन चीज़ों को जो तुम पर
लिखी गई जिसमें कोई शुब्हा नहीं,
परवर्दिगारे आलम की तरफ़ से। (37)
क्या लोग कहते हैं कि यह बना लाया है,
तू कह दे तुम ले आओ एक ही सूरत
ऐसी और बुलाओ जिसको बुला सको
अल्लाह के सिवा, अगर तुम सच्चे हो।
(38) बात यह है कि झुठलाने लगे जिसके
समझने पर उन्होंने काबू न पाया और
अभी आई नहीं उसकी हकीकत, इसी तरह
झुठलाते रहे इनसे पहले, सो देख ले कैसा
हुआ अन्जाम गुनाहगारों का। (39) और
बाज़े उनमें यकीन करेंगे कुरआन का और
बाज़े यकीन न करेंगे, और तेरा रब खूब
जानता है शरारत वालों को। (40) ❀

खुलासा-ए-तफ़सीर

और यह कुरआन अल्लाह के सिवा किसी और का गढ़ा (बनाया) हुआ नहीं है (कि उनसे
सादिर हुआ हो) बल्कि यह तो उन (किताबों) की तस्दीक (करने वाला) है जो इससे पहले
(नाज़िल) हो चुकी हैं। और किताब (यानी अल्लाह के ज़रूरी अहक़ाम) की तफ़सील (बयान
करने वाला) है, (और) इसमें कोई (बात) शक (व शुब्हे की) नहीं (और वह) रब्बुल-आलमीन की
तरफ़ से (नाज़िल हुआ) है। क्या (बावजूद इसके गढ़ा हुआ न होने के) ये लोग (यूँ) कहते हैं कि
(नऊज़ु बिल्लाह) आपने इसको गढ़ लिया है, आप (इनसे) कह दीजिये कि (अच्छा) तो फिर तुम
(भी तो अरबी हो और आला दर्जे के अरबी भाषा के माहिर भी हो) इसके जैसी एक ही सूरत
(बना) लाओ, और (अकेले नहीं बल्कि) जिन-जिनको अल्लाह के सिवा बुला सको (उनको मदद
के लिये) बुला लो, अगर तुम सच्चे हो (कि नऊज़ु बिल्लाह मैंने इसको तैयार कर लिया है तो
तुम भी बनाकर लाओ, मगर मुश्किल तो यह है कि इस किस्म की दलीलों से फ़ायदा उसी को
होता है जो समझना भी चाहे, सो इन्होंने तो कभी समझना ही न चाहा) बल्कि ऐसी चीज़ को

झुठलाने लगे जिसके (सही और ग़लत होने) को अपने इल्मी घेरे में नहीं लाये “यानी इन्हें खुद उसके बारे में कुछ इल्म नहीं” (और उसकी हालत समझने का इरादा नहीं किया तो ऐसों से क्या समझने की उम्मीद हो सकती है)। और (उनकी इस बेफ़िक्री और बेपरवाही की वजह यह है कि) अभी उनको इस (क़ुरआन के झुठलाने) का आखिरी नतीजा नहीं मिला (यानी अज़ाब नहीं आया, वरना सारा नशा उतर जाता और आँखें खुल जातीं, और हक़ व बातिल अलग-अलग हो जाता, लेकिन आखिर कभी तो वह नतीजा पेश आने वाला है ही, अगरचे उस वक़्त ईमान लाभदायक न हो। चुनाँचे) जो (काफ़िर) लोग (इनसे पहले) हुए हैं इसी तरह (जैसे बिना तहकीक़ के ये झुठला रहे हैं) उन्होंने भी (हक़ को) झुठलाया था, सो देख लीजिये कि उन ज़ालिमों का अन्जाम कैसा (बुरा) हुआ (इसी तरह इनका होगा)। और (हम जो उनका बुरा अन्जाम बतला रहे हैं सो सब मुराद नहीं क्योंकि) इनमें से बाज़े ऐसे हैं जो इस (क़ुरआन) पर ईमान ले आएँगे और बाज़े ऐसे हैं कि इस पर ईमान न लाएँगे, और आपका रब (उन) फ़सादियों (शरारत करने वालों) को ख़ूब जानता है (जो ईमान न लायेंगे। पस ख़ास उनको तयशुदा वक़्त पर सज़ा देगा)।

मआरिफ़ व मसाईल

وَلَمَّا يَأْتِهِمْ تَاْوِيلُهُ

तावील से मुराद इस जगह नतीजा और अन्जाम है। मतलब यह है कि उन लोगों ने अपनी ग़फ़लत और बेफ़िक्री से क़ुरआन में ग़ौर नहीं किया और इसको झुठलाने के बुरे अन्जाम को नहीं पहचाना, इसलिये झुठलाने में लगे हुए हैं, मगर मौत के बाद ही सब तथ्य खुल जायेंगे और अपने किये का बुरा अन्जाम हमेशा के लिये गले का हार हो जायेगा।

وَإِنْ كَذَّبُوكَ فَقُلْ لِي عَمَلِي وَلَكُمْ عَمَلُكُمْ أَنْتُمْ بَرِيءُونَ مِنَّا أَعْمَلُ

وَأَنَا بَرِيءٌ مِّمَّا تَعْمَلُونَ ۝ وَمِنْهُمْ مَّنْ يَسْتَمِعُونَ إِلَيْكَ أَفَأَنْتَ تَسْمِعُ الصُّمَّ وَلَوْ كَانُوا لَا يَعْقِلُونَ ۝

وَمِنْهُمْ مَّنْ يَنْظُرُ إِلَيْكَ أَفَأَنْتَ تَهْدِي الْعُمْى وَلَوْ كَانُوا لَا يَبْصُرُونَ ۝ إِنَّ اللَّهَ لَا يَظْلِمُ النَّاسَ

شَيْئًا وَلَكِنَّ النَّاسَ أَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ۝

व इन् कज़्ज़बू-क फ़कुल-ली अ-मली
व लकुम् अ-मलुकुम् अन्तुम्
बरीऊ-न मिम्मा अज़्मलु व अ-न
बरीउम्-मिम्मा तज़्मलून (41) व
मिन्हुम् मय्यस्तमिअू-न इलै-क,

और अगर तुझको झुठलायें तो कह- मेरे
लिये मेरा काम और तुम्हारे लिये तुम्हारा
काम, तुम पर ज़िम्मा नहीं मेरे काम का
और मुझ पर ज़िम्मा नहीं जो तुम करते
हो। (41) और बाज़े उनमें कान रखते हैं
तेरी तरफ़, क्या तू सुनायेगा बहरों को

अ-फअन्-त तुस्मिअुस्सुम्-म व लौ
कानू ला यअकिलून (42) व मिन्हुम्
मंय्यन्जुरु इलै-क, अ-फअन्-त
तहिदल्-अुम्-य व लौ कानू ला
युब्सिरून (43) इन्नल्ता-ह ला
यज्लिमुन्ना-स शैअंव-व लाकिन्नन्ना-स
अन्फु-सहुम् यज्लिमून (44)

अगरचे उनको समझ न हो। (42) और
बाजे उनमें निगाह करते हैं तेरी तरफ,
क्या तू राह दिखायेगा अंधों को अगरचे
वे सूझ न रखते हों। (43) अल्लाह जुल्म
नहीं करता लोगों पर कुछ भी लेकिन लोग
अपने ऊपर खुद जुल्म करते हैं। (44)

खुलासा-ए-तफसीर

और अगर इन दलीलों के बाद भी आपको झुठलाते रहे तो (बस आखिरी बात यह) कह दीजिए कि (अच्छा साहिब) मेरा किया हुआ मुझको (मिलेगा) और तुम्हारा किया हुआ तुमको (मिलेगा)। तुम मेरे किए हुए के जवाबदेह नहीं हो, और मैं तुम्हारे किए हुए का जवाबदेह नहीं हूँ (जिस तरीके पर चाहो रहो, खुद मालूम हो जायेगा)। और (आप उनके ईमान की उम्मीद छोड़ दीजिए क्योंकि) उनमें (अगरचे) बाज ऐसे भी हैं जो (जाहिर में) आपकी तरफ कान लगा-लगा बैठते हैं (लेकिन दिल में इरादा ईमान और हक तलब करने का नहीं है, पस इस एतिबार से उनका सुनना न सुनना बराबर है। पस उनकी हालत बहरों की सी हुई तो) क्या आप बहरों को सुना (कर उनके मानने का इन्तिज़ार कर) रहे हैं, चाहे उनको समझ भी न हो (हाँ अगर समझ होती तो बहरेपन में भी कुछ काम चल सकता)। और (इसी तरह) उनमें बाज ऐसे हैं कि (जाहिर में) आपको (मोजिजों व कमालात के साथ) देख रहे हैं (लेकिन हक तलब करने वाले न होने से उनकी हालत अंधों के जैसी है, तो) फिर क्या आप अंधों को रास्ता दिखलाना चाहते हैं चाहे उनको बसीरत “यानी अक्ल व समझ” भी न हो (हाँ अगर बसीरत होती तो अंधेपन में भी कुछ काम चल सकता। और उनकी अक्लें जो इस तरह तबाह हो गयीं तो) यह यकीनी बात है कि अल्लाह तआला लोगों पर जुल्म नहीं करता (कि उनको हिदायत की काबलियत न दे और फिर पकड़ फरमाये) लेकिन लोग खुद ही अपने आपको तबाह करते हैं (कि खुदा की दी हुई काबलियत को बरबाद कर देते हैं और उससे काम नहीं लेते)।

وَيَوْمَ يُحْشَرُهُمْ كَأَن لَّمْ يَلْبَثُوا إِلَّا سَاعَةً مِّنَ النَّهَارِ

يَتَعَارَفُونَ بَيْنَهُمْ ۖ قَدْ خَسِرَ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِلِقَاءِ اللَّهِ ۖ وَمَا كَانُوا مُهْتَدِينَ ۝ وَإِنَّمَا تَرِيَّتْكَ بَعْضُ
الَّذِينَ نَعِدُهُمْ أَوْ تَوَفِّيَّتْكَ ۖ فَالْيَنَّا مَرْجِعُهُمْ ثُمَّ اللَّهُ شَهِيدٌ عَلَىٰ مَا يَفْعَلُونَ ۝ وَلِكُلِّ أُمَّةٍ

رَسُولٌ فَإِذَا جَاءَ رَسُولُهُمْ قُضِيَ بَيْنَهُم بِالْقِسْطِ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ۝ وَيَقُولُونَ مَتَى هَذَا الْوَعْدُ
 إِن كُنْتُمْ صَادِقِينَ ۝ قُلْ لَا أَمْرُكَ لِنَفْسِي ضَرًّا وَلَا نَفْعًا إِلَّا مَا شَاءَ اللَّهُ لِكُلِّ أُمَّةٍ أَجَلٌ إِذَا جَاءَ
 أَجَلُهُمْ فَلَا يَسْتَأْخِرُونَ سَاعَةً وَلَا يَسْتَقْدِمُونَ ۝ قُلْ أَرَأَيْتُمْ إِنْ أَتَاكُمْ عَذَابُهُ بَيِّنَاتٍ أَوْ تَهَاوَنًا
 ذَايَسْتَعْجِلُ مِنْهُ الْجِبْرُوتُ ۝ أَتُمْ إِذَا مَا وَقَعَ أَمْنْتُمْ بِهِ ؕ أَلَمْ يَكُنْ وَقَدْ كُنْتُمْ بِهِ تَسْتَعْجِلُونَ ۝
 ثُمَّ قِيلَ لِلَّذِينَ ظَلَمُوا ذُوقُوا عَذَابَ الْخُلْدِ هَلْ تُجْزَوْنَ إِلَّا بِمَا كُنْتُمْ تَكْسِبُونَ ۝ وَيَسْتَبْشِرُونَكَ
 أَحَقُّ هُوَ قُلْ إِي وَرَبِّي إِنَّهُ لَحَقٌّ بِوَعْدِهِ وَمَا أَنْتُمْ بِمُعْجِزِينَ ۝ وَلَوْ أَنَّ لِكُلِّ نَفْسٍ ظَلَمَتْ مَا فِي
 الْأَرْضِ لَافْتَدَتْ بِهِ وَأَسْرُوا النَّدَامَةَ لَمَّا رَأَوُا الْعَذَابَ وَقُضِيَ بَيْنَهُم بِالْقِسْطِ وَهُمْ لَا
 يُظْلَمُونَ ۝ الْآنَ اللَّهُ فِي السَّمُوتِ وَالْأَرْضِ ۝ الْآنَ وَعَذَابُ اللَّهِ حَقٌّ وَلَٰكِنْ أَكْثَرُهُمْ لَا
 يَعْلَمُونَ ۝ هُوَ يَخِي وَيُيْتِ وَلَٰئِهِ تَرْجِعُونَ ۝

وَقَالَ رَبِّي
 عَلَى اللَّهِ وَعَلَى

व यौ-म यहशुरुहुम् क-अल्लम्
 यल्बसू इल्ला सा-अतम् मिनन्नहारि
 य-तअरफू-न बैनहुम्. कद्
 खासिरल्लजी-न कज़्जबू बिलिका-
 -इल्लाहि व मा कानू मुस्तदीन (45)
 व इम्मा नुरियन्न-क बअज़ल्लजी
 नअिदुहुम् औ न-तवफ़-यन्न-क
 फ़-इलैना मजिअुहुम् सुम्मल्लाहु
 शहीदुन् अला मा यफ़अलून (46) व
 लिकुल्लि उम्मतिरसूलुन् फ़-इजा
 जा-अ रसूलुहुम् कुज़ि-य बैनहुम्
 बिल्किस्ति व हुम् ला युज़्लमून (47)
 व यकूलू-न मता हाज़ल्-वअदु इन्
 कुन्तुम् सादिकीन (48) कुल् ला

और जिस दिन उनको जमा करेगा गोया
 वे न रहे थे मगर एक घड़ी दिन, एक
 दूसरे को पहचानेंगे, बेशक ख़सारे में पड़े
 जिन्होंने झुठलाया अल्लाह से मिलने को
 और न आये वे राह पर। (45) और
 अगर हम दिखायेंगे तुझको कोई चीज़ उन
 वायदों में से जो किये हैं हमने उनसे या
 वफ़ात दें तुझको सो हमारी ही तरफ़ है
 उनको लौटना, फिर अल्लाह शाहिद
 (गवाह और देखने वाला) है उन कामों
 पर जो वे करते हैं। (46) और हर फ़िक्र
 का एक रसूल है, फिर जब पहुँचा उनके
 पास उनका रसूल फैसला हुआ उनमें
 इन्साफ़ से और उन पर जुल्म नहीं होता।
 (47) और कहते हैं कब है यह वायदा
 अगर तुम सच्चे हो। (48) तू कह मैं
 मालिक नहीं अपने वास्ते बुरे का न भले

अम्लिकु लिनफ़सी ज़र्रं-व ला
 नफ़अन् इल्ला मा शा-अल्लाहु,
 लिकुल्लि उम्मतिन् अ-जलुन्, इजा
 जा-अ अ-जलुहुम् फला यस्तअख़िरु-न
 सा-अतं-व ला यस्तदिदमून (49)
 कुल् अ-रऐतुम् इन् अताकुम्
 अज़ाबुहू बयातन् औ नहारम् माज़ा
 यस्तअजिलु मिन्हुल्-मुज़िमून (50)
 अ-सुम्-म इजा मा व-क-अ
 आमन्तुम् बिही, आल्आ-न व कद्
 कुन्तुम् बिही तस्तअजिलून (51)
 सुम्-म की-ल लिल्लजी-न ज़-लमू
 जूकू अज़ाबल्-ख़ुल्दि हल् तुज्जौ-न
 इल्ला बिमा कुन्तुम् तक्सिबून (52)
 व यस्तम्बिऊन-क अ-हक्कुन् हु-व,
 कुल् ई व रब्बी इन्नहू ल-हक्कुन्, व
 मा अन्तुम् बिमुअजिजीन (53) ❀
 व लौ अन्-न लिकुल्लि नफ़िसन्
 ज़-लमतू मा फिल्अज़ि लफ़्त-दत्
 बिही, व अ-सरहन्नदाम-त लम्मा
 र-अवुल्-अज़ा-ब व कुज़ि-य बैनहुम्
 बिल्किस्ति व हुम् ला युज़्लमून (54)
 अला इन्-न लिल्लाहि मा
 फ़िस्समावाति वल्अज़ि, अला

का मगर जो चाहे अल्लाह, हर फिके का
 एक वायदा है, जब आ पहुँचेगा उनका
 वायदा फिर न पीछे सरक सकेंगे एक घड़ी
 और न आगे सरक सकेंगे। (49) तू कह-
 भला देखो तो अगर आ पहुँचे तुम पर
 उसका अज़ाब रातों रात या दिन को तो
 क्या कर लेंगे उससे पहले गुनाहगार।
 (50) क्या फिर जब अज़ाब आ चुकेगा
 तब उस पर यकीन करोगे? अब कायल
 हुए और तुम इसी का तकाज़ा करते थे।
 (51) फिर कहेंगे गुनाहगारों को चखते रहो
 अज़ाब हमेशगी का, वही बदला मिलता है
 जो कुछ कमाते थे। (52) और तुझसे
 ख़बर पूछते हैं क्या सच है यह बात? तू
 कह अलबत्ता कसम मेरे रब की यह सच
 है, और तुम थका न सकोगे। (53) ❀
 और अगर हो हर गुनाहगार शरूस के
 पास जितना कुछ है ज़मीन में तो यकीनन
 डाले अपने बदले में, और छुपे-छुपे
 पछतायेंगे जब देखेंगे अज़ाब, और उनमें
 फैसला होगा इन्साफ़ से, और उन पर
 जुल्म न होगा। (54) सुन रखो! अल्लाह
 का है जो कुछ है आसमान और ज़मीन

इन्-न वअल्लाहि हक्कुं-व
लाकिन्-न अक्स-रहुम् ला यअल्मून
(55) हु-व युह्यी व युमीतु व इलैहि
तुर्जअून (56)

में। सुन रखो! अल्लाह का वायदा सच है
पर बहुत लोग नहीं जानते। (55) वही
जिलाता है और मारता है और उसी की
तरफ़ फिर जाओगे। (56)

खुलासा-ए-तफ़सीर

और उनको वह दिन याद दिलाईये जिसमें अल्लाह तआला उनको इस अन्दाज़ से जमा करेगा कि (वे समझेंगे) जैसे वे (दुनिया या बर्ज़ख़ में) सारे दिन की एक-आध घड़ी रहे होंगे (चूँकि वह दिन लम्बा भी होगा और सख़्त भी होगा, इसलिये दुनिया और बर्ज़ख़ की मुदत और तकलीफ़ सब भूलकर ऐसा समझेंगे कि वह ज़माना बहुत जल्द गुज़र गया) और आपस में एक-दूसरे को पहचानेंगे (भी लेकिन एक दूसरे की मदद न कर सकेंगे। इससे और रंज व सदमा होगा, क्योंकि पहचान वाले लोगों से फायदे की उम्मीद हुआ करती है) वाकई (उस वक़्त सख़्त) ख़सारे में पड़े वे लोग जिन्होंने अल्लाह के पास जाने को झुठलाया और वे (दुनिया में भी) हिदायत पाने वाले न थे (इसलिये आज ख़सारे में पड़े। पस उनके अज़ाब का असली वक़्त तो यह दिन है उनको याद दिला दीजिये)। और (दुनिया में उन पर अज़ाब आना या न आना इसके बारे में यह बात है कि) जिस (अज़ाब) का उनसे हम वायदा कर रहे हैं, उसमें से कुछ थोड़ा-सा (अज़ाब) अगर हम आपको दिखला दें (यानी आपकी ज़िन्दगी में उन पर वह नाज़िल हो जाये) या (उसके नाज़िल होने से पहले ही) हम आपको वफ़ात दे दें (फिर चाहे बाद में वह नाज़िल हो या न हो) सो (दोनों संभावनायें हैं, कोई एक सूरत ज़रूरी नहीं, लेकिन हर हाल और हर संभावना पर) हमारे पास तो उनको आना (ही) है, फिर (सब को मालूम है कि) अल्लाह तआला उनके सब कामों की इत्तिला रखता ही है (पस उन पर सज़ा देगा। गर्ज़ कि दुनिया में चाहे सज़ा हो या न हो मगर असली मौके पर ज़रूर होगी)।

और (यह सज़ा जो उनके लिये तजवीज़ हुई है, तो हुज्जत के पूरा करने और उज़्र को दूर करने के बाद हुई है, और उनकी क्या विशेषता है बल्कि हमेशा से हमारी आदत रही है कि जिन उम्मतों को हमने क़ानून का पाबन्द बनाना चाहा है उनमें से) हर-हर उम्मत के लिये एक हुक्म पहुँचाने वाला (हुआ) है। सो जब वह उनका रसूल (उनके पास) आ चुकता है (और अहक़ाम पहुँचा देता है तो उसके बाद) उनका फैसला इन्साफ़ के साथ किया जाता है, (वह फैसला यही है कि न मानने वालों को हमेशा के अज़ाब में मुब्तला किया जाता है) और उन पर (ज़रा भी) जुल्म नहीं किया जाता (क्योंकि हुज्जत पूरी होने के बाद सज़ा देना इन्साफ़ के खिलाफ़ नहीं है)।

और ये लोग (अज़ाब की धमकियाँ सुनकर झुठलाने के इरादे से यूँ) कहते हैं कि (ऐ नबी और ऐ मुसलमानो!) यह (अज़ाब का) वायदा कब (ज़ाहिर) होगा अगर तुम सच्चे हो (तो ज़ाहिर

क्यों नहीं करा देते)। आप (सब की तरफ से जवाब में) फ़रमा दीजिये कि मैं (खुद) अपनी खास जात के लिये तो किसी नफ़े (के हासिल करने का) और किसी नुक़सान (के दूर करने) का इस्तिथार रखता ही नहीं, मगर जितना (इस्तिथार) खुदा को मन्ज़ूर हो (उतना इस्तिथार अलबत्ता हासिल है। पस जब खास अपने नफ़े व नुक़सान का मालिक नहीं तो दूसरे के नफ़े व नुक़सान का तो क्योंकि मालिक हूँगा, पस अज़ाब का ज़ाहिर करना मेरे इस्तिथार में नहीं, रहा यह कि कब ज़ाहिर होगा सो बात यह है कि) हर उम्मत के (अज़ाब के) लिये (अल्लाह के नज़दीक) एक तय वक़्त है (चाहे दुनिया में या आख़िरत में), सो जब उनका वह तय किया हुआ वक़्त आ पहुँचता है तो (उस वक़्त) एक घड़ी न पीछे हट सकते हैं और न आगे सरक सकते हैं (बल्कि फ़ौरन अज़ाब ज़ाहिर हो जाता है। इसी तरह तुम्हारे अज़ाब का भी वक़्त तयशुदा है, उस वक़्त वह आ जायेगा, और वे जो फ़रमाईश करते हैं कि जो कुछ होना है जल्दी हो जाये जैसा कि आयत नम्बर 48 और 'रब्बना अज़्जिल् लना कित्तना' में उनकी इस जल्दबाज़ी का ज़िक्र है, तो) आप (उसके बारे में) फ़रमा दीजिये कि यह तो बतलाओ कि अगर तुम पर उसका (यानी खुदा का) अज़ाब रात को आ पड़े, या दिन को, तो (यह बतलाओ कि) उस (अज़ाब) में कौनसी चीज़ ऐसी है कि मुजरिम लोग उसको जल्दी माँग रहे हैं (यानी अज़ाब तो सख़्त चीज़ और पनाह माँगने की चीज़ है, न कि जल्दी माँगने की, और जल्दबाज़ी से उनका मक़सद झुठलाना है, इसलिये फ़रमाते हैं कि) क्या (अब तो झुठला रहे हो जो कि वक़्त है तस्दीक के लाभदायक होने का) फिर जब वह (मुकर्ररा और तयशुदा वायदा) आ ही पड़ेगा (उस वक़्त) इसकी तस्दीक करोगे (जिस वक़्त की तस्दीक नफ़ा देने वाली न होगी, और उस वक़्त कहा जायेगा कि) हाँ अब माना हालाँकि (पहले से) तुम (झुठलाने के इरादे से) इसकी जल्दी (मचाया) करते थे। फिर ज़ालिमों (यानी मुशिरकों) से कहा जायेगा कि हमेशा का अज़ाब चखो, तुमको तो तुम्हारे ही किये का बदला मिला है। और वे (इन्तिहाई ताज्जुब व इनकार से आप से) पूछते हैं कि क्या वह (अज़ाब) वास्तविक (कोई चीज़) है? आप फ़रमा दीजिए कि हाँ क़सम है मेरे रब की, वह वास्तविक (चीज़) है, और तुम किसी तरह उसे (यानी खुदा को) अज़िज़ नहीं कर सकते (कि वह अज़ाब देना चाहे और तुम बच जाओ)।

और (उस अज़ाब की यह शिद्दत होगी कि) अगर हर-हर मुशिरक शख्स के पास इतना (माल) हो कि सारी ज़मीन में भर जाये तब भी उसको देकर अपनी जान बचाने लगे (अगरचे न ख़ज़ाना होगा और न लिया जायेगा, लेकिन शिद्दत इस दर्जे की होगी कि अगर मान लो कि माल हो तो सब देने पर राज़ी हो जायेंगे) और जब अज़ाब देखेंगे तो (और फ़ज़ीहत के ख़ौफ़ से) शर्मिन्दगी को (अपने दिल ही दिल में) छुपाकर रखेंगे (यानी उसके कौल व अमल के प्रभावों को ज़ाहिर न होने देंगे, ताकि देखने वाले ज़्यादा न हंसें, लेकिन आख़िर में यह संयम व बरदाश्त भी उसकी शिद्दत के सामने न चलेगा) और उनका फैसला इन्साफ़ के साथ होगा, और उन पर (ज़रा भी) जुल्म न होगा। याद रखो कि जितनी चीज़ें आसमानों और ज़मीन में हैं, सब अल्लाह ही की (मिल्क) हैं। (उनमें जिस तरह चाहे इस्तिथार चलाये और उनमें ये मुजरिम भी दाख़िल हैं, इनका

फैसला भी अपनी मर्जी व इख्तियार से कर सकता है)। याद रखो कि अल्लाह का वायदा सच्चा है (पस कियामत ज़रूर आयेगी) लेकिन बहुत-से आदमी यकीन ही नहीं करते। वही जान डालता है, वही जान निकालता है (पस दोबारा पैदा करना उसको क्या मुश्किल है), और तुम सब उसी के पास लाये जाओगे (और हिसाब किताब और फिर उस पर सवाब व अज़ाब होगा)।

मअरिफ़ व मसाईल

يَتَعَارَفُونَ بَيْنَهُمْ

यानी जब कियामत में मुर्दे कब्रों से उठाये जायेंगे तो एक दूसरे को पहचानेंगे जैसे कोई लम्बी मुद्दत मिले हुए न गुज़री हो।

इमाम बग़वी रह. ने इसकी तफ़्सीर में फ़रमाया कि यह पहचान शुरू में होगी, बाद में कियामत के हौलनाक वाकिआत सामने आ जायेंगे तो यह पहचान बन्द हो जायेगी और कुछ रिवायतों में है कि पहचान तो फिर भी रहेगी मगर घबराहट के मारे बात न कर सकेंगे। (मज़हरी)

أَلَمْ إِذَا مَا وَقَعَ أَمْتُمْ بِهِ النَّاسُ

यानी क्या तुम ईमान उस वक़्त लाओगे जब तुम पर अज़ाब आ पड़ेगा, चाहे मौत के वक़्त या उससे पहले ही, मगर उस वक़्त तुम्हारे ईमान के जवाब में यह कहा जायेगा 'आलआ-न' (यानी क्या अब ईमान लाये हो) जबकि ईमान का वक़्त गुज़र चुका। जैसे डूबने के वक़्त फिरऔन ने जब कहा:

أَمْتُ أَنَا لَا إِلَهَ إِلَّا الَّذِي آمَنْتُ بِهِ بَنُو إِسْرَءِيلَ

जवाब में कहा गया था 'आलआ-न' और उसका यह ईमान कुबूल नहीं किया गया, क्योंकि हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि अल्लाह तआला बन्दे की तौबा कुबूल करता ही रहता है जब तक कि वह मौत के गरगरे में गिरफ़्तार न हो जाये, यानी मौत के गरगरे के वक़्त का ईमान और तौबा अल्लाह के नज़दीक मोतबर नहीं। इसी तरह दुनिया में अज़ाब आ पड़ने से पहले-पहले तौबा कुबूल हो सकती है, जब अज़ाब आ पड़े फिर तौबा कुबूल नहीं होती। सूरत के आख़िर में यूनस अलैहिस्सलाम की कौम का जो वाकिआ आ रहा है कि उनकी तौबा कुबूल कर ली गयी, वह इसी कायदे के मातहत है कि उन्होंने अज़ाब को दूर से आता हुआ देखकर सच्चे दिल से रोने-गिड़गिड़ाने के साथ तौबा कर ली इसलिये अज़ाब हटा लिया गया, अगर अज़ाब उन पर आ पड़ता तो फिर तौबा कुबूल न होती।

يَا أَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَاءَ تَكْمٌ مَوْعِظَةٌ مِّن رَّبِّكُمْ

وَشِفَاءٌ لِّمَا فِي الصُّدُورِ وَهُدًى وَرَحْمَةٌ لِّلْمُؤْمِنِينَ ۝ قُلْ بِفَضْلِ اللَّهِ وَبِرَحْمَتِهِ فَبِذَاكَ

فَلْيَفْرَحُوا هُوَ خَيْرٌ مِّمَّا يَجْمَعُونَ ۝ قُلْ أَرَأَيْتُمْ مَّا أَنزَلَ اللَّهُ لَكُمْ مِّن رِّزْقٍ فَجَعَلْتُم مِّنْهُ

حَرَامًا وَحَلَالًا قُلْ اللَّهُ أَعْلَمُ لَكُمْ أَمْرًا عَلَى اللَّهِ تَفَتَرُونَ ۝ وَمَا ظَنُّ الَّذِينَ يَفْتَرُونَ
عَلَى اللَّهِ الْكَذِبَ يَوْمَ الْقِيَمَةِ إِنَّ اللَّهَ لَذُو فَضْلٍ عَلَى النَّاسِ وَلَٰكِنَّ أَكْثَرَهُمْ لَا يَشْكُرُونَ ۝
وَمَا تَكُونُ فِي شَأْنٍ وَمَا تَتْلُوا مِنْهُ مِنْ قُرْآنٍ وَلَا تَعْلَمُونَ مِنْ عَمَلٍ إِلَّا كُنَّا عَلَيْكُمْ
شُهُودًا إِذْ تُفِيضُونَ فِيهِ ۚ وَمَا يَعْزُبُ عَنْ رَبِّكَ مِنْ مِثْقَالِ ذَرَّةٍ فِي الْأَرْضِ وَلَا فِي
السَّمَاءِ وَلَا أَصْغَرَ مِنْ ذَلِكَ وَلَا أَكْبَرَ إِلَّا فِي كِتَابٍ مُبِينٍ ۝

या अय्युहन्नासु कद् जाअत्कुम्
मौ जि-ज तुम्-मिर्रिबिबकुम् व
शिफाउल्लिमा फिस्तुदूरि व हुदव्-व
रस्मतुल्-लिम्मुअमिनीन (57) कुल्
बिफ़ज़िलल्लाहि व बिरह्मतिही
फ़बिजालि-क फ़ल्यफ़रह्, हु-व
ख़ैरुम्-मिम्मा यज्मअून (58) कुल्
अ-रऐतुम् मा अन्जलल्लाहु लकुम्
मिर्रिज़िकन् फ़-जअल्लुम् मिन्हु
हरामव्-व हलालन्, कुल् आल्लाहु
अजि-न लकुम् अम् अलल्लाहि
तफ़तरून (59) व मा ज़न्नुल्लज़ी-न
यफ़तरून-न अलल्लाहिल्-कजि-ब
यौमल्-कियामति, इन्नल्ला-ह लज़ू
फ़ज़िलन् अलन्नासि व लाकिन्-न
अक्स-रहुम् ला यश्कुरून (60) ❀
व मा तकूनु फ़ी शअनिंव्-व मा
तल्लू मिन्हु मिन् कुरआनिंव्-व ला
तअमलू-न मिन् अ-मलिन् इल्ला

ऐ लोगो! तुम्हारे पास आई है नसीहत
तुम्हारे ख़ब से और शिफा दिलों के रोग
की और हिदायत और रहमत मुसलमानों
के वास्ते। (57) कह अल्लाह के फ़ज़ल
और उसकी मेहरबानी से, सो इसी पर
उनको खुश होना चाहिए, यह बेहतर है
उन चीज़ों से जो जमा करते हैं। (58) तू
कह भला देखो तो अल्लाह ने जो उतारी
तुम्हारे वास्ते रोज़ी फिर ठहराई तुमने
उसमें से कोई हराम और कोई हलाल,
कह क्या अल्लाह ने हुक्म दिया तुमको या
अल्लाह पर झूठ बाँधते हो। (59) और
क्या ख़याल है झूठ बाँधने वालों का
अल्लाह पर कियामत के दिन, अल्लाह तो
फ़ज़ल करता है लोगों पर और लेकिन
बहुत लोग हक़ नहीं मानते। (60) ❀
और नहीं होता तू किसी हाल में और न
पढ़ता है इसमें से कुछ कुरआन और नहीं
करते हो तुम लोग कुछ काम कि हम नहीं

कुन्ना अलैकुम् शुहूदन् इज़्
तुफीज़ून फीहि, व मा यअज़ुबु
अररब्बि-क मिम्-मिस्कालि ज़रतिन्
फिल्अर्जि व ला फिस्समा-इ व ला
असग़-र मिन् ज़ालि-क व ला अक्ब-र
इल्ला फी किताबिम्-मुबीन (61)

होते हाज़िर तुम्हारे पास जब तुम व्यस्त
होते हो उसमें, और ग़ायब नहीं रहता
तेरे रब से एक ज़रा घर ज़मीन में
और न आसमान में, और न छोटा उससे
और न बड़ा जो नहीं है खुली हुई किताब
में। (61)

खुलासा-ए-तफसीर

ऐ लोगो! तुम्हारे पास तुम्हारे रब की तरफ़ से (एक ऐसी चीज़) आई है जो (बुरे कामों से रोकने के लिये) नसीहत (है) और (अगर उस पर अमल करके बुरे कामों से बचें तो) दिलों में जो (बुरे कामों से) रोग (हो जाते हैं) उनके लिये शिफ़ा है, और (नेक कामों के करने के लिये) रहनुमाई करने वाली है, और (अगर उस पर अमल करके नेक कामों को इस्तियार करें तो) रहमत (और सवाब का ज़रिया) है (और ये सब बरकतें) ईमान वालों के लिये (हैं क्योंकि अमल वही करते हैं। पस कुरआन की ये बरकतें सुनाकर) आप (उनसे) कह दीजिए कि (जब कुरआन ऐसी चीज़ है) पस लोगों को खुदा के इस इनाम और रहमत पर खुश होना चाहिए (और इसको बड़ी दौलत समझकर लेना चाहिये) वह इस (दुनिया) से कहीं बेहतर है जिसको वे जमा कर रहे हैं (क्योंकि दुनिया का नफ़ा थोड़ा और फ़ानी है और कुरआन का नफ़ा ज्यादा और बाकी)।

आप (उनसे) कह दीजिये कि यह तो बतलाओ कि अल्लाह ने तुम्हारे (फ़ायदा उठाने के) लिए जो कुछ रिज़्क भेजा था, फिर तुमने (अपनी तरफ़ से) उसका कुछ हिस्सा हराम और कुछ हिस्सा हलाल करार दे लिया (हालाँकि उसके हराम होने की कोई दलील नहीं, तो) आप (उनसे) पूछिये कि क्या तुमको खुदा ने हुक्म दिया है या (सिर्फ़) अल्लाह पर (अपनी तरफ़ से) बोहतान ही बाँधते हो? और जो लोग अल्लाह पर झूठ बोहतान बाँधते हैं उनका कियामत के बारे में क्या गुमान है (जो बिल्कुल डरते नहीं क्या यह समझते हैं कि कियामत नहीं आयेगी, या आयेगी मगर हमसे पूछगछ न होगी), वाकई लोगों पर अल्लाह का बड़ा ही फ़ज़्ल है (कि साथ के साथ सज़ा नहीं देता बल्कि तौबा के लिये मोहलत दे रखी है) लेकिन अक्सर (आदमी) उनमें से बेक़द्र हैं (वरना तौबा कर लेते)।

और आप (चाहे) किसी हाल में हों, और (उन्हीं हालात में से यह कि) आप कहीं से कुरआन पढ़ते हों और (इसी तरह और लोग भी जितने हों) तुम जो काम करते हो हमको सब की ख़बर रहती है, जब तुम उस काम को करना शुरू करते हो, और आपके रब (के इल्म) से कोई चीज़ ज़रा बराबर भी ग़ायब नहीं, न ज़मीन में और न आसमान में (बल्कि सब उसके इल्म में हाज़िर हैं) और न कोई चीज़ इस (ज़िक्र हुई मात्रा) से छोटी है और न कोई चीज़ (इससे) बड़ी

है, मगर यह सब (अल्लाह तआला के इल्म में होने की वजह से) किताब-ए-मुबीन (यानी लौहे महफूज) में (लिखा हुआ) है।

मआरिफ व मसाईल

पिछली आयतों में काफिरों व मुशिरकों की बदहाली और आखिरत में उन पर तरह-तरह के अज़ाबों का बयान था, इन आयतों में से पहली दो आयतों में उनको उस बदहाली और गुमराही से निकलने का तरीका और आखिरत के अज़ाब से निजात का ज़रिया बतलाया गया है, और वह अल्लाह की किताब कुरआन और उसके रसूल मुहम्मद मुस्तफा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हैं।

और इनसान और इनसानियत के लिये ये दोनों ऐसी बड़ी नेमतें हैं कि आसमान व ज़मीन की सारी नेमतों से आला व अफज़ल हैं। कुरआनी अहकाम और सुन्नते रसूल की पैरवी इनसान को सही मायने में इनसान बनाती है, और जब इनसान सही मायने में कामिल इनसान बन जाये तो सारा जहान दुरुस्त हो जाये और यह दुनिया भी जन्नत बन जाये।

पहली आयत में कुरआने करीम की चार विशेषताओं और खूबियों का जिक्र है:

अव्वल 'मौअि-ज़तुम् मिरिब्बिकुम्'। 'मौअिज़तु' और 'वअज़' के असल मायने ऐसी चीज़ों का बयान करना है जिनको सुनकर इनसान का दिल नर्म हो और अल्लाह तआला की तरफ झुके, दुनिया की ग़फलत का पर्दा हटे, आखिरत की फ़िक्र सामने आ जाये। कुरआने करीम अव्वल से आखिर तक इसी उम्दा नसीहत का बेहतरीन और प्रभावी प्रचारक है, इसमें हर जगह वायदे के साथ वईद, सवाब के साथ अज़ाब, दुनिया व आखिरत में फ़लाह व कामयाबी के साथ नाकामी और गुमराही वगैरह का ऐसा मिला-जुला तज़क़िरा है जिसको सुनकर पत्थर भी पानी हो जाये, फिर उस पर कुरआने करीम का ऐसा बेमिसाल अन्दाज़े बयान जो दिलों की काया पलटने में बेनज़ीर है।

'मौअि-ज़तु' के साथ 'मिरिब्बिकुम्' की कैद ने कुरआनी वअज़ की हैसियत को और भी ज़्यादा बुलन्द कर दिया। इससे मालूम हुआ कि यह वअज़ (नसीहत) किसी अपने जैसे आजिज़ इनसान की तरफ से नहीं जिसके हाथ में किसी का नफ़ा व नुक़सान या अज़ाब व सवाब कुछ नहीं, बल्कि रब्बे करीम की तरफ से है जिसके कहने में ग़लती की संभावना नहीं, और जिसके वायदे और वईद (सज़ा की धमकी) में किसी असमर्थता व कमज़ोरी या उज़्र का कोई ख़तरा नहीं।

कुरआने करीम की दूसरी सिफ़त 'शिफ़ाजल्लिमा फ़िस्सुदूर' इरशाद फ़रमाई। 'शिफ़ा' के मायने बीमारी दूर होने के हैं, और 'सूदूर' सदूर की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने सीने के हैं, इससे दिल मुराद है।

मायने यह हैं कि कुरआने करीम दिलों की बीमारियों का कामयाब इलाज और सेहत व शिफ़ा का कारगर नुस्खा है। हज़रत हसन बसरी रह. ने फ़रमाया कि कुरआन की इस सिफ़त से मालूम हुआ कि यह ख़ास दिलों की बीमारी के लिये शिफ़ा है, जिस्मानी बीमारियों का इलाज नहीं। (तफ़सीरे रुहुल-मआनी)

मगर दूसरे हज़रात ने फ़रमाया कि दर हकीक़त क़ुरआन हर बीमारी की शिफ़ा है चाहे दिल व रूह की हो या बदन और जिस्म की, मगर रूहानी बीमारियों की तबाही इनसान के लिये जिस्मानी बीमारियों से ज़्यादा सख़्त है और उसका इलाज़ भी हर शख्स के बस का नहीं, इसलिये इस जगह ज़िक्र सिर्फ़ दिली और रूहानी बीमारियों का किया गया है। इससे यह लाज़िम नहीं आता कि वह जिस्मानी बीमारियों के लिये शिफ़ा नहीं है।

हदीस की रिवायतों और उलेमा-ए-उम्मत के बेशुमार तजुर्बात इस पर सुबूत व गवाह हैं कि क़ुरआने करीम जैसे दिलों की बीमारियों के लिये ज़बरदस्त अक्सीर है इसी तरह वह जिस्मानी बीमारियों का भी बेहतरीन इलाज़ है।

हज़रत अबू सईद खुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में एक शख्स हाज़िर हुआ और अर्ज़ किया कि मेरे सीने में तकलीफ़ है, आपने फ़रमाया कि क़ुरआन पढ़ा करो, क्योंकि हक़ तआला का इरशाद है:

شِفَاءٌ لِّمَا فِي الصُّدُورِ

यानी क़ुरआन शिफ़ा है उन तमाम बीमारियों की जो सीनों में होती हैं। (तफ़सीर रुहुल-मआनी, इब्ने मर्दूया की रिवायत से)

इसी तरह हज़रत वासिला बिन असका रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है कि एक शख्स रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और बयान किया कि मेरे हलक़ में तकलीफ़ है, आपने उसको भी यही फ़रमाया कि क़ुरआन पढ़ा करो।

उम्मत के उलेमा ने कुछ रिवायतों व आसार से और कुछ अपने तजुर्बों से क़ुरआनी आयतों के ख़्वास व फ़वाईद (विशेषतायें) मुस्तक़िल किताबों में जमा भी कर दिये हैं। इमाम ग़ज़ाली रह. की किताब 'ख़्वास-ए-क़ुरआनी' इसके बयान में मशहूर व परिचित है जिसका खुलासा हज़रत हकीमुल-उम्मत मौलाना अशरफ़ अली धानवी रह. ने 'आमाल-ए-क़ुरआनी' के नाम से तरतीब दिया है, और अनुभव व तजुर्बे इतने हैं कि उनका इनकार नहीं किया जा सकता कि क़ुरआने करीम की मुख़्तलिफ़ आयतें मुख़्तलिफ़ जिस्मानी रोगों के लिये भी कामिल शिफ़ा साबित होती हैं। हाँ यह ज़रूर है कि क़ुरआन नाज़िल होने का असली भक़सद दिल व रूह की बीमारियों को ही दूर करना है और ज़िम्नी तौर पर जिस्मानी बीमारियों का भी बेहतरीन इलाज़ है।

इससे उन लोगों की बेवकूफी और गुमराही भी ज़ाहिर हो गयी जो क़ुरआने करीम को सिर्फ़ जिस्मानी बीमारियों के इलाज़ या दुनियावी ज़रूरतों ही के लिये पढ़ते पढ़ाते हैं, न रूहानी रोगों की इस्लाह की तरफ़ ध्यान देते हैं न क़ुरआन की हिदायतों पर अमल करने की तरफ़ तवज्जोह करते हैं, ऐसे ही लोगों के लिये अल्लामा इक़बाल मरहूम ने फ़रमाया है:

तुरा हासिल ज़-यासीनश जुज़ीं नेस्त कि अज़ हमं ख़्वान्दनश आसाँ बमीरी

यानी तुमने क़ुरआन की सूर: यासीन से सिर्फ़ इतना ही फ़ायदा हासिल किया कि उसके पढ़ने से मौत आसान हो जाये, हालाँकि इस सूरत के मायनों, उलूम और मआरिफ़ में गौर करते तो इससे कहीं ज़्यादा फ़ायदे और बरकतें हासिल कर सकते थे।

कुछ मुहबिकक मुफ़्सीरीन ने फ़रमाया कि क़ुरआन की पहली सिफ़त यानी 'मौज़ि-ज़तु' का ताल्लुक़ इनसान के ज़ाहिरी आमाल के साथ है, जिसको शरीअत कहा जाता है। क़ुरआने करीम उन आमाल की इस्लाह (सुधारने और संवारने) का बेहतरीन ज़रिया है। और 'शिफ़ाउल्लिमा फ़िस्सुदूर' का ताल्लुक़ इनसान के बातिनी और अन्दरूनी आमाल के साथ है, जिसको तरीक़त और तसव्वुफ़ के नाम से जाना जाता है।

इस आयत में क़ुरआने करीम की तीसरी सिफ़त 'हुदन' और चौथी 'रहमत' बयान की गयी है। 'हुदन' के मायने हिदायत यानी रहनुमाई के हैं। क़ुरआने करीम इनसान को हक़ व यकीन के रास्ते की तरफ़ दावत देता है और इनसान को बतलाता है कि इस कायनात और खुद उनके नफ़्सों में अल्लाह तआला ने जो अपनी अज़ीम निशानियाँ रखी हैं उनमें ग़ौर व फ़िक्र करो ताकि तुम इन सब चीज़ों के ख़ालिक और मालिक को पहचानो।

दूसरी आयत में फ़रमाया:

قُلْ بِفَضْلِ اللَّهِ وَبِرَحْمَتِهِ فَبِذَلِكَ فَلْيَفْرَحُوا هُوَ خَيْرٌ مِّمَّا يَجْمَعُونَ

यानी लोगों को चाहिये कि सिर्फ़ अल्लाह तआला के फ़ज़ल व रहमत ही को असली खुशी की चीज़ समझें और सिर्फ़ इसी चीज़ पर खुश हों, दुनिया के चन्द दिन के माल व मत्ता और राहत व इज़्ज़त दर हकीकत खुश होने की चीज़ है नहीं, क्योंकि अब्बल तो वह कितनी ही ज़्यादा किसी को हासिल हो अधूरी ही होती है, मुकम्मल नहीं होती, दूसरे हर वक़्त उसके ज़वाल (ख़त्म होने और जाते रहने) का ख़तरा लगा हुआ है, इसलिये आयत के आख़िर में फ़रमाया:

هُوَ خَيْرٌ مِّمَّا يَجْمَعُونَ

यानी अल्लाह का फ़ज़ल व रहमत उन तमाम माल व दौलत और इज़्ज़त व सल्तनत से बेहतर है जिनको इनसान अपनी ज़िन्दगी भर का सरमाया समझकर जमा करता है।

इस आयत में दो चीज़ों को खुशी व मुसरत का सामान करार दिया है- एक फ़ज़ल दूसरे रहमत। इन दोनों से मुराद यहाँ क्या है? इस बारे में एक हदीस हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से यह मन्कूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया- अल्लाह के फ़ज़ल से मुराद क़ुरआन है और रहमत से मुराद यह है कि तुमको क़ुरआन पढ़ने और उस पर अमल करने की तौफ़ीक़ बख़्शी। (तफ़सीर रुहुल-मआनी, इब्ने मर्दूया की रिवायत से)

यही मज़मून हज़रत बरा बिन आज़िब रज़ियल्लाहु अन्हु और अबू सईद खुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु से भी मन्कूल है, और बहुत से मुफ़्सीरीन हज़रात ने फ़रमाया कि फ़ज़ल से मुराद क़ुरआन और रहमत से मुराद इस्लाम है, और मतलब इसका भी वही है जो पहले गुज़री हदीस से मालूम हुआ कि रहमत से मुराद यह है कि अल्लाह तआला ने हमें क़ुरआन सिखाया और इस पर अमल करने की तौफ़ीक़ बख़्शी। क्योंकि इस्लाम इसी हकीकत का एक उनवान है।

और हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु की एक रिवायत में है कि फ़ज़ल से मुराद क़ुरआन और रहमत से मुराद नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हैं। क़ुरआने करीम

की आयत:

وَمَا أَرْسَلْنَاكَ إِلَّا رَحْمَةً لِّلْعَالَمِينَ ۝

‘व मा अर्सल्ला-क इल्ला रहमतल् लिल्आलमीन’ से इस मज़मून की ताईद होती है। और हासिल इसका भी पहली तफ़्सीर से कुछ अलग नहीं, क्योंकि क़ुरआन या इस्लाम पर अमल रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ही की पैरवी के अलग-अलग उनवानात हैं।

इस आयत में मशहूर क़िराअत के मुताबिक़ ‘फ़ल्पफ़रहू’ ग़ायब के सींगे के साथ आया है (कि इसी पर उनको खुश होना चाहिये) हालाँकि इसके असल मुखातब उस वक़्त के मौजूद और हाज़िर लोग थे, जिसका तकाज़ा यह था कि इस जगह ख़िताब के सींगे का इस्तेमाल किया जाता (यानी यह कहा जाता कि तुमको खुश होना चाहिये) जैसा कि कुछ क़िराअतों में आया भी है, मगर मशहूर क़िराअत में ग़ायब का सीगा इस्तेमाल करने की हिक्मत यह है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम या इस्लाम की आम रहमत सिर्फ़ उस वक़्त के हाज़िर और मौजूद हज़रात के लिये विशेष नहीं थी बल्कि क़ियामत तक पैदा होने वाली नस्लों को भी यह रहमत शामिल है। (तफ़्सीर रूहुल-मअानी)

फायदा

यहाँ यह बात ध्यान देने के काबिल है कि क़ुरआने करीम की एक दूसरी आयत के जाहिरी अलफ़ाज़ से मालूम होता है कि खुशी का इस दुनिया में कोई मक़ाम ही नहीं। इरशाद है:

لَا تَفْرَحْ إِنَّ اللَّهَ لَا يُحِبُّ الْفَرِحِينَ ۝

यानी खुशी में मस्त न हो, अल्लाह ऐसे खुश होने वालों को पसन्द नहीं फ़रमाते।

और ऊपर ज़िक्र हुई आयत में खुश होने का एक तरह से हुक्म दिया गया है। इस जाहिरी टकराव का एक जवाब तो यह है कि जहाँ खुश होने को मना फ़रमाया है वहाँ खुशी का ताल्लुक दुनिया की दौलत व सामान से है, और जहाँ खुश होने का हुक्म दिया है वहाँ खुशी का ताल्लुक है अल्लाह तआला के फज़ल व रहमत से। दूसरा फ़र्क़ यह भी है कि मनाही की जगह में मुतलक (बिना किसी कैद के) खुशी मुराद नहीं बल्कि खुशी में मगन और मस्त हो जाना मुराद है, और इजाज़त की जगह में आम खुशी मुराद है।

तीसरी आयत में उन लोगों को चेताया गया है जो हलाल व हराम के मामले में अपनी ज़ाती राय को दख़ल देते हैं, और क़ुरआन व सुन्नत की सनद के बग़ैर जिस चीज़ को चाहा हलाल करार दे दिया जिसको चाहा हराम कह दिया, इस पर क़ियामत की सख़्त वईद ज़िक्र की गयी है, जिससे मालूम हुआ कि किसी चीज़ या किसी काम के हलाल या हराम होने का असल मदार इनसानी राय पर नहीं बल्कि वह ख़ालिस अल्लाह तआला और उसके रसूल का हक़ है, उनके अहक़ाम के बग़ैर किसी चीज़ को न हलाल कहना जायज़ है न हराम।

चौथी आयत में अल्लाह जल्ल शानुहू के कामिल इल्म और उसकी बेमिसाल वुस्अत का

ज़िक्र रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मुखातब करके किया गया है कि आप जिस काम और जिस हाल में हमेशा होते हैं; या कुरआन पढ़ते हैं, उसका कोई हिस्सा और भाग हमसे छुपा नहीं। इसी तरह तमाम इनसान जो कुछ अमल करते हैं वो हमारी नज़रों के सामने हैं और आसमान व ज़मीन में कोई एक ज़रा भी हमसे छुपा हुआ नहीं है बल्कि हर चीज़ 'किताब-ए-मुबीन' यानी लौह-ए-महफूज़ में लिखी हुई है।

बज़ाहिर इस जगह अल्लाह के इल्म की वुस्तुत और हर चीज़ को घेरने वाला होने के बयान में हिक्मत यह है कि उसके ज़रिये नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को तसल्ली दी जाये कि अगरचे मुखालिफ़ और दुश्मन आपके बहुत हैं मगर अल्लाह तआला की हिफ़ाज़त आपके साथ है, आपको कोई तकलीफ़ व नुक़सान न पहुँचेगा।

الَا اِنْ اُولِيَاءِ اللّٰهِ لَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ۝ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا
وَكَانُوْا يَتَّقُوْنَ ۝ لَهُمُ الْبُشْرٰى فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَفِي الْاٰخِرَةِ لَا تَبْدِيْلُ لِكَلِمٰتِ اللّٰهِ ذٰلِكَ
هُوَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ۝

अला इन्-न औलिया-अल्लाहि ला
खौफुन् अलैहिम् व ला हुम् यहज़नून
(62) अल्लज़ी-न आमनू व कानू
यत्तकून (63) लहुमुल्-बुशरा फिल्-
हयातिदुन्या व फिल्-आखिरति, ला
तब्दी-ल लि-कलिमातिल्लाहि, ज़ालि-क
हुवल् फौज़ुल्-अज़ीम (64)

याद रखो जो लोग अल्लाह के दोस्त हैं न
डर है उन पर और न वे ग़मगीन होंगे।
(62) जो लोग कि ईमान लाये और डरते
रहे (63) उनके लिये है खुशख़बरी दुनिया
की जिन्दगानी में और आख़िरत में,
बदलती नहीं अल्लाह की बातें, यही है
बड़ी कामयाबी। (64)

खुलासा-ए-तफ़सीर

(यह तो अल्लाह के इल्म का बयान हुआ, आगे अल्लाह के नेक और फ़रमाँबरदार बन्दों के महफूज़ व सुरक्षित रहने का बयान है कि) याद रखो कि अल्लाह के दोस्तों पर न कोई अन्दे़शे (वाला वाकिआ पड़ने वाला) है और न वे (किसी पसन्दीदा चीज़ के जाते रहने पर) ग़मज़दा होते हैं (यानी अल्लाह तआला उनको खौफ़नाक और ग़मनाक हादसों से बचाता है और) वे (अल्लाह के दोस्त वो) हैं जो ईमान लाये और (गुनाहों से) परहेज़ रखते हैं (यानी ईमान और तक़वे से अल्लाह की निकटता नसीब होती है, और खौफ़ व ग़म से उनके महफूज़ रहने की वजह यह है कि) उनके लिये दुनियावी जिन्दगी में भी और आख़िरत में भी (अल्लाह तआला की तरफ़ से

ख़ौफ़ व रंज से बचने की) खुशख़बरी है (और) अल्लाह की बातों में (यानी वायदों में) कुछ फर्क नहीं हुआ करता, (पस जब खुशख़बरी में उनसे वायदा किया गया और वायदा हमेशा सही होता है, इसलिये ख़ौफ़ व रंज न होना लाज़िमी चीज़ है और) यह (खुशख़बरी जो ज़िक्र हुई) बड़ी कामयाबी है।

मज़ारिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में औलिया-अल्लाह (अल्लाह के दोस्तों) के विशेष फ़ज़ाईल और उनकी तारीफ़ व पहचान, फिर दुनिया व आख़िरत में उनके लिये खुशख़बरी का ज़िक्र है। इरशाद फ़रमाया कि औलिया-अल्लाह को न किसी नागवार चीज़ के पेश आने का ख़तरा होगा और न किसी मक़सद के फ़ौत हो जाने का ग़म, और औलिया-अल्लाह वे लोग हैं जो ईमान लाये और जिन्होंने तक्वा व परहेज़गारी इस्तियार की, उनके लिये दुनिया में भी खुशख़बरी है और आख़िरत में भी।

इसमें चन्द बातें ग़ौर करने के काबिले हैं:

अव्वल यह कि औलिया-अल्लाह पर ख़ौफ़ व ग़म न होने के क्या मायने हैं?

दूसरे यह कि औलिया-अल्लाह की तारीफ़ (परिभाषा) क्या है और उनकी निशानियाँ क्या हैं?

तीसरे यह कि दुनिया व आख़िरत में उनकी खुशख़बरी से क्या मुराद है?

पहली बात, कि औलिया-अल्लाह पर ख़ौफ़ व ग़म नहीं होता, इससे यह भी मुराद हो सकता है कि आख़िरत में हिसाब किताब के बाद जब उनको उनके मक़ाम यानी जन्नत में दाख़िल कर दिया जायेगा तो ख़ौफ़ व ग़म से उनको हमेशा के लिये निजात हो जायेगी, न किसी तकलीफ़ व परेशानी का ख़तरा रहेगा न किसी प्यारी व पसन्दीदा चीज़ के हाथ से निकल जाने का ग़म होगा, बल्कि जन्नत की नेमतें हमेशा के लिये और कभी फना न होने वाली होंगी। इस मायने के एतिबार से तो आयत के मज़मून पर कोई शुब्हा व इश्काल नहीं, लेकिन यह सवाल ज़रूर पैदा होता है कि इसमें औलिया-अल्लाह की कोई विशेषता न रही बल्कि तमाम जन्नत वाले जिनको जहन्नम से निजात मिल गयी वे इसी हाल में होंगे, हाँ यह कहा जा सकता है कि जो लोग परिणाम स्वरूप जन्नत में पहुँच गये वे सब औलिया-अल्लाह ही कहलायेंगे, दुनिया में उनके आमाल कितने ही भिन्न रहे हों मगर जन्नत में दाख़िल होने के बाद सब के सब औलिया-अल्लाह की ही फ़ेहरिस्त में शुमार होंगे।

लेकिन बहुत से मुफ़स्सरीन ने फ़रमाया कि औलिया-अल्लाह पर ख़ौफ़ व ग़म न होना दुनिया व आख़िरत दोनों के लिये आम है, और औलिया-अल्लाह की विशेषता यही है कि दुनिया में भी वे ख़ौफ़ व ग़म से महफूज़ हैं और आख़िरत में उन पर ख़ौफ़ व ग़म न होना तो सब ही जानते हैं, और इसमें तमाम जन्नत वाले दाख़िल हैं।

मगर इस पर हालात व दाकिआत के एतिबार से यह इश्काल है कि दुनिया में तो यह बात अनुभव और तजुर्बे के खिलाफ़ है, क्योंकि औलिया-अल्लाह तो क्या अम्बिया अलैहिमुस्सलाम भी

इस दुनिया में ख़ौफ़ व ग़म से महफूज़ नहीं, बल्कि उनको ख़ौफ़ व डर औरों से ज़्यादा होता है
जैसा कि कुरआने करीम का इरशाद है:

إِنَّمَا يَخْشَى اللَّهَ مِنْ عِبَادِهِ الْعُلَمَاءُ

यानी अल्लाह तआला से पूरी तरह उलेमा ही डरते हैं। और एक दूसरी जगह में
औलिया-अल्लाह ही का यह हाल बयान फरमाया है:

وَالَّذِينَ هُمْ مِنْ عَذَابِ رَبِّهِمْ مُشْفِقُونَ. إِنَّ عَذَابَ رَبِّهِمْ غَيْرُ مَأْمُونٍ ۝

यानी ये लोग अल्लाह के अज़ाब से हमेशा डरते रहते हैं, क्योंकि उनके रब का अज़ाब ऐसी
चीज़ नहीं जिससे कोई बेफ़िक्र होकर बैठ सके।

और वाकिआत भी यही हैं जैसा कि शमाईल-ए-तिर्मिज़ी की हदीस में है कि रसूल करीम
सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अक्सर हालात में चिंतित और ग़मगीन नज़र आते थे, और आपने
खुद फरमाया कि मैं तुम सबसे ज़्यादा खुदा तआला से डरता हूँ।

सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम में सबसे अफ़ज़ल हज़रत सिद्दीक़ व फारूक़ रज़ियल्लाहु
अन्हुमा और तमाम सहाबा व ताबिईन और औलिया-अल्लाह का रोना व फ़रियाद करना और
ख़ौफ़े आख़िरत के वाकिआत बेशुमार हैं।

इसलिये तफ़सीर 'रुहुल-मअानी' में अल्लामा आलूसी ने यह फरमाया कि हज़राते
औलिया-अल्लाह का दुनिया में ख़ौफ़ व ग़म से महफूज़ होना इस एतिबार से है कि जिन चीज़ों
के ख़ौफ़ व ग़म में आम तौर से दुनिया वाले मुब्तला रहते हैं कि दुनियावी मकासिद, आराम व
राहत, इज़्ज़त व दौलत में ज़रा सी कमी हो जाने पर मरने लगते हैं और ज़रा-ज़रा सी तकलीफ़
व परेशानी के ख़ौफ़ से उनसे बचने की तदबीरों में रात दिन खोये रहते हैं, औलिया-अल्लाह का
मक़ाम उन सबसे ऊपर व बुलन्द होता है, उनकी नज़र में न दुनिया की फ़ानी इज़्ज़त व दौलत,
राहत व आराम कोई चीज़ है जिसके हासिल करने में मारे-मारे फ़िरें, और न यहाँ की मेहनत व
मुसीबत और रंज कुछ काबिले तवज्जोह है जिसको दूर करने और उससे बचने के लिये परेशान
हों, बल्कि उनका हाल यह होता है:

न शादी दाद सामाने न ग़म आवुर्द नुक़साने

ब-पेशे हिम्मतें मा हर चे आमद बूद महमाने

यानी न कोई फ़ायदा हमें खुशी में मस्त कर सकता है और न कोई नुक़सान रंज व ग़म का
कारण बन सकता है। हम अपनी हिम्मत व ज़ुर्त से हर पेश आने वाली हालत का ज़िन्दा दिली
से सामना करते हैं। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

अल्लाह जल्ल शानुहू की बड़ाई व मुहब्बत और ख़ौफ़ व डर उन हज़रात पर ऐसा छाया
होता है कि उसके मुकाबले में दुनिया की रंज व राहत, फ़ायदा व नुक़सान मक्खी के एक पर
की भी हैसियत नहीं रखते। जैसे कि किसी शायर ने कहा है:

ये नंग-ए-आशिकी हैं सूद व हासिल देखने वाले

यहाँ गुमराह कहलाते हैं मन्ज़िल देखने वाले

दूसरी बात औलिया-अल्लाह की परिभाषा और उनकी निशानियों से मुताल्लिक है। औलिया वली की जमा (बहुवचन) है। लफ्ज़ वली अरबी भाषा में करीब के मायने में भी आता है और दोस्त व मुहिब (मुहब्बत करने वाले) के मायने में भी। अल्लाह तआला की निकटता व मुहब्बत का एक आम दर्जा तो ऐसा है कि उससे दुनिया का कोई इन्सान व हैवान बल्कि कोई चीज़ भी अलग और बाहर नहीं, अगर यह निकटता न हो तो सारे आलम में कोई चीज़ वजूद ही में नहीं आ सकती, तमाम आलम के वजूद की असली इल्लत (सबब) वही खास राब्ता है जो उसको हक़ तआला से हासिल है, अगरचे उस राब्ते (ताल्लुक व निकटता) की हकीकत को न किसी ने समझा और न समझ सकता है मगर एक ऐसा राब्ता होना जिसकी कैफ़ियत का इल्म नहीं, होना यकीनी है। मगर लफ्ज़ औलिया-अल्लाह में विलायत का यह दर्जा मुराद नहीं बल्कि विलायत व मुहब्बत और निकटता का एक दूसरा दर्जा भी है जो अल्लाह तआला के मख्सूस बन्दों के साथ खास है, यह निकटता मुहब्बत कहलाती है, जिन लोगों को यह खास निकटता हासिल हो वे औलिया-अल्लाह कहलाते हैं, जैसा कि एक हदीस-ए-कुदसी में है, हक़ तआला का इरशाद है कि मेरा बन्दा नफ़ली इबादतों के ज़रिये मेरा कुर्ब (निकटता) हासिल करता रहता है यहाँ तक कि मैं भी उससे मुहब्बत करने लगता हूँ, और जब मैं उससे मुहब्बत करता हूँ तो फिर मैं ही उसके कान बन जाता हूँ, वह जो कुछ सुनता है मेरे ज़रिये सुनता है, मैं ही उसकी आँख बन जाता हूँ, वह जो कुछ देखता है मुझसे देखता है, मैं ही उसके हाथ-पाँव बन जाता हूँ, वह जो कुछ करता है मुझसे करता है। मतलब इसका यह है कि उसकी कोई हरकत व सुकून और कोई काम मेरी रज़ा के खिलाफ़ नहीं होता।

और इस खास विलायत के दर्जे बेशुमार और असीमित हैं, इसका आला दर्जा अम्बिया अलैहिमुस्सलाम का हिस्सा है, क्योंकि हर नबी का वलीयुल्लाह होना लाज़िमी है, और इसमें सबसे ऊँचा मक़ाम सय्यिदुल-अम्बिया नबी-ए-अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का है, और अदना (मामूली) दर्जा इस विलायत का वह है जिसको सूफ़िया-ए-किराम की परिभाषा में दर्जा-ए-फना कहा जाता है। जिसका हासिल यह है कि आदमी का दिल अल्लाह तआला की याद में ऐसा डूब जाये कि दुनिया में किसी की मुहब्बत उस पर ग़ालिब न आये, वह जिससे मुहब्बत करता है तो अल्लाह के लिये करता है, जिससे नफ़रत करता है तो अल्लाह के लिये करता है, उसकी मुहब्बत व नफ़रत, दोस्ती व दुश्मनी में अपनी ज़ात का कोई हिस्सा नहीं होता, जिसका लाज़िमी नतीजा यह होता है कि उसका ज़ाहिर व बातिन अल्लाह तआला की रज़ा तलब करने में मशगूल रहता है और वह हर ऐसी चीज़ से परहेज़ करता है जो अल्लाह तआला के नज़दीक नापसन्द हो। इसी हालत की निशानी है ज़िक्र की अधिकता और नेकी पर हमेशगी। यानी अल्लाह तआला को कसरत से याद करना और हमेशा हर हाल में उसके अहक़ाम की फ़रमाँबरदारी करना। ये दो गुण जिस शख्स में मौजूद हों वह वलीयुल्लाह कहलाता है, जिसमें इन दोनों में से कोई एक न हो वह इस सूची में दाख़िल नहीं। फिर जिसमें ये दोनों मौजूद हों उसके अदना व आला दर्जों की कोई हद नहीं, उन्हें दर्जों के एतिबार से औलिया-अल्लाह के दर्जों में फ़र्क और कमी-बेशी होती है।

एक हदीस में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मज़कूर है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से सवाल किया गया कि इस आयत में औलिया-अल्लाह से कौन लोग मुराद हैं? आपने फ़रमाया- वे लोग जो ख़ालिस अल्लाह के लिये आपस में मुहब्बत करते हैं, कोई दुनियावी ग़र्ज़ बीच में नहीं होती। (तफ़सीरे मज़हरी, इब्ने मर्दूया के हवाले से) और ज़ाहिर है कि यह हालत उन्हीं लोगों की हो सकती है जिनका ज़िक्र ऊपर किया गया है।

यहाँ एक सवाल और भी पैदा होता है कि विलायत के इस दर्जे को हासिल करने का तरीका क्या है?

हज़रत काज़ी सनाउल्लाह पानीपती रस्मतुल्लाहि अलैहि ने तफ़सीरे मज़हरी में फ़रमाया कि उम्मत के अफ़राद को विलायत का यह दर्जा रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ही की सोहबत के फ़ैज़ से हासिल हो सकता है, इसी से अल्लाह के साथ ताल्लुक का वह रंग जो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हासिल था अपने हौसले के मुताबिक़ उसका कोई हिस्सा उम्मत के औलिया को मिलता है। फिर सोहबत का यह फ़ैज़ सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम को बिना किसी वास्ते के हासिल था, इसी वजह से उनका दर्जा-ए-विलायत तमाम उम्मत के औलिया व कुतबों से ऊँचा था, बाद के लोगों को यही फ़ैज़ एक वास्ते या चन्द वास्तों से हासिल होता है, जितने वास्ते बढ़ते जाते हैं उतना ही इसमें फ़र्क़ पड़ा जाता है। यह वास्ता सिर्फ़ वही लोग बन सकते हैं जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के रंग में रंगे हुए आपकी सुन्नत के पैरो हैं, ऐसे लोगों की मजलिस व सोहबत की अधिकता जबकि उसके साथ उनके इरशादात की पैरवी, इताअत और ज़िक्रुल्लाह की कसरत भी हो, यही नुस्खा है दर्जा-ए-विलायत हासिल करने का, जो तीन चीज़ों से मिलकर बनता है। किसी वलीयुल्लाह की सोहबत, उसकी इताअत और ज़िक्रुल्लाह की अधिकता। शर्त यह है कि यह ज़िक्र की अधिकता मस्नून तरीक़े पर हो, क्योंकि ज़िक्र की अधिकता से दिल के आइने को जिला (रोशनी मिलती और सफ़ाई) होती है, तो वह विलायत के नूर को समोने के काबिल बन जाता है। हदीस में है कि हर चीज़ के लिये सफ़ाई का कोई तरीका होता है, दिल की सफ़ाई ज़िक्रुल्लाह से होती है। इसको इमाम बैहकी ने हज़रत इब्ने उमर रज़ि. की रिवायत से नक़ल फ़रमाया है। (मज़हरी)

और हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि एक शख्स ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से सवाल किया कि आप उस शख्स के बारे में क्या फ़रमाते हैं जो किसी बुजुर्ग से मुहब्बत करता है मगर अमल के एतिबार से उनके दर्जे तक नहीं पहुँचता? आपने फ़रमाया:

الْمَرْءُ مَعَ مَنْ أَحَبَّ.

यानी हर शख्स उसी के साथ होगा जिससे उसको मुहब्बत है। इससे मालूम हुआ कि औलिया-अल्लाह की मुहब्बत व सोहबत इनसान के लिये विलायत के हासिल होने का ज़रिया है। और इमाम बैहकी न शुअबुल-ईमान में हज़रत रज़ीन रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत रज़ीन से फ़रमाया कि मैं तुम्हें

दीन का एक उसूल बतलाता हूँ जिससे तुम दुनिया व आखिरत की फ़लाह व कामयाबी हासिल कर सकते हो। वह यह है कि ज़िक्र वालों की मजलिस व सोहबत को लाजिम पकड़ो और जब तन्हाई में जाओ तो जितना ज़्यादा हो सके अल्लाह के ज़िक्र से अपनी ज़बान को हरकत दो, जिससे मुहब्बत करो अल्लाह के लिये करो, जिससे नफ़रत करो अल्लाह के लिये करो। (मज़हरी)

मगर यह सोहबत व पास बैठना उन्हीं लोगों का मुफ़ीद है जो खुद अल्लाह के वली और सुन्नत के पैरो हों, और जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत के ताबे नहीं वे खुद विलायत के दर्जे से मेहरूम हैं, चाहे क़श्फ़ व करामात उनसे कितने ही ज़ाहिर हों। और जो शख्स ज़िक्र हुई सिफ़ात के एतिबार से वली हो अगरचे उससे कभी कोई क़श्फ़ व करामत ज़ाहिर न हुई हो वह अल्लाह का वली है। (तफ़्सीरे मज़हरी)

औलिया-अल्लाह की निशानी और पहचान तफ़्सीरे मज़हरी में एक हदीसे कुदसी के हवाले से यह नक़ल की है कि अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि मेरे औलिया मेरे बन्दों में से वे लोग हैं जो मेरी याद के साथ याद आयें और जिनकी याद के साथ मैं याद आऊँ। और इब्ने माजा में हज़रत असमा बिनते यज़ीद रज़ियल्लाहु अन्हा की रिवायत से मज़कूर है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने औलिया-अल्लाह की यह पहचान बतलाई:

الَّذِينَ إِذَا رَأَوْا ذِكْرَ اللَّهِ

यानी जिनको देखकर खुदा याद आये।

खुलासा यह है कि जिन लोगों की सोहबत में बैठकर इनसान को अल्लाह के ज़िक्र की तौफीक और दुनियावी फ़िक्रों की कमी महसूस हो, यह पहचान उसके वलीयुल्लाह होने की है।

तफ़्सीरे मज़हरी में फ़रमाया कि अ़वाम ने जो औलिया-अल्लाह की पहचान क़श्फ़ व करामत या ग़ैब की चीज़ें मालूम होने को समझ रखा है, यह ग़लत और धोखा है। हज़ारों औलिया-अल्लाह हैं जिनसे इस तरह की कोई चीज़ साबित नहीं, और इसके उलट ऐसे लोगों से क़श्फ़ और ग़ैब की ख़बरें मन्कूल हैं जिनका ईमान भी दुरुस्त नहीं।

आयत के आखिर में जो यह फ़रमाया गया कि औलिया के लिये दुनिया में भी खुशख़बरी है और आखिरत में भी। आखिरत की खुशख़बरी तो यह है कि मौत के वक़्त जब उसकी रूह को अल्लाह के पास ले जाया जायेगा उस वक़्त उसको खुशख़बरी जन्नत की मिलेगी, फिर क़ियामत के दिन क़ब्र से उठने के वक़्त जन्नत की खुशख़बरी दी जायेगी जैसा कि तबरानी ने हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया- 'ला इला-ह इल्लल्लाहु' वालों को न मौत के वक़्त कोई घबराहट होगी न क़ब्र में और न क़ब्र से उठने के वक़्त। गोया मेरी आँखें उस वक़्त का हाल देख रही हैं जब ये लोग अपनी क़ब्रों से मिट्टी झाड़ते हुए और यह कहते हुए उठेंगे:

الْحَمْدُ لِلَّهِ الَّذِي أَذْهَبَ عَنَّا الْحَزْنَ

यानी शुक्र है अल्लाह का जिसने हमारा ग़म दूर कर दिया।

और दुनिया की खुशखबरी के मुताल्लिक हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि वो सच्चे सपने जो इनसान खुद देखे या उसके लिये कोई दूसरा देखे, जिनमें उनके लिये खुशखबरी हो। (बुखारी, अबू हुरैरह रजियल्लाहु अन्हु की रिवायत से)

और दुनिया की दूसरी खुशखबरी यह है कि आम मुसलमान बगैर किसी गर्ज के उससे मुहब्बत करें और अच्छा समझें। इसके बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया:

بَلِّغْ عَاجِلَ بُشْرَى الْمُؤْمِنِ.

यानी आम मुसलमानों का अच्छा समझना और तारीफ करना मोमिन के लिये नकद खुशखबरी है। (मुस्लिम व बगवी)

وَلَا يَحْزُنُكَ قَوْلُهُمْ ۚ إِنَّ الْعِزَّةَ لِلَّهِ جَمِيعًا ۖ هُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ۝
 الْإِنِّ لِلَّهِ مَنْ فِي السَّمَوَاتِ وَمَنْ فِي الْأَرْضِ ۚ وَمَا يَتَّبِعُ الَّذِينَ يَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللَّهِ
 شُرَكَاءَ ۖ إِنْ يَتَّبِعُونَ إِلَّا الظَّنَّ وَإِنْ هُمْ إِلَّا يَخْرُصُونَ ۝

व ला यह्जुन्-क कौलुहुम। इन्नल्
 अिज़्ज-त लिल्लाहि जमीअन्,
 हुवस्समीअुल्-अलीम (65) अला
 इन्-न लिल्लाहि मन् फिस्समावाति व
 मन् फिल्अर्जि, व मा यत्तबिअुल्-
 -तजी-न यद्अू-न मिन् दूनिल्लाहि
 शु-रका-अ, इय्यत्तबिअू-न इल्लज्जन्-न
 व इन् हुम् इल्ला यख्रसून् (66)

और रंज मत कर उनकी बात से, असल
 में सब जोर अल्लाह के लिये है, वही है
 सुनने वाला जानने वाला। (65) सुनता
 है! अल्लाह का है जो कोई है आसमानों
 में और जो कोई है ज़मीन में, और ये
 जो पीछे पड़े हैं अल्लाह के सिवा शरीकों
 को पुकारने वाले, सो ये कुछ नहीं मगर
 पीछे पड़े हैं अपने ख्याल के, और कुछ
 नहीं मगर अटकलें दौड़ाते हैं। (66)

खुलासा-ए-तफसीर

और आपको उनकी बातें ग़म में न डालें (यानी उनकी कुफ़िया बातों से ग़मगीन न हों, क्योंकि इल्म और उक्त हिफ़ाज़त के अलावा) पूरी तरह ग़लबा (और कुदरत भी) खुदा ही के लिये (साबित) है, (वह अपनी कुदरत से वायदे के अनुसार आपकी हिफ़ाज़त करेगा) वह (उनकी बातें) सुनता है (और उनकी हालत) जानता है (वह आपका बदला उनसे खुद ले लेगा)। याद रखो कि जितने कुछ आसमानों में हैं और जितने ज़मीन में हैं (यानी जिन्नात, इनसान और फ़रिश्ते) ये सब अल्लाह तआला ही की (मिल्क में) हैं। (उसकी हिफ़ाज़त या बदला देने को कोई

रोक नहीं सकता। पस इसलिये तसल्ली रखनी चाहिये) और (अगर किसी को शुब्हा हो कि शायद ये जिनको शरीक बनाया जा रहा है कुछ रुकावट पैदा कर सकें तो इसकी हकीकत सुन लो कि) जो लोग अल्लाह तआला को छोड़कर दूसरे शरीकों की इबादत कर रहे हैं (खुदा जाने) किस चीज की पैरवी कर रहे हैं? (यानी उनके उस अक़ीदे की क्या दलील है, हकीकत तो यह है कि कुछ भी दलील नहीं) महज बे-सनद ख्याल की पैरवी कर रहे हैं, और बिल्कुल ख़ाली बातें कर रहे हैं (पस वास्तव में उनमें माबूद होने की सिफ़ात जैसे इल्म व क़ुदरत वगैरह नहीं हैं, फिर उनमें बाधा और रुकावट पैदा करने का शुब्हा व गुंजाईश कब है)।

هُوَ الَّذِي جَعَلَ لَكُمُ اللَّيْلَ لِتَسْكُنُوا فِيهِ وَالنَّهَارَ مُبْصِرًا إِنَّ فِي ذَلِكَ لَآيَاتٍ

لِقَوْمٍ يَسْمَعُونَ ۝ قَالُوا اتَّخَذَ اللَّهُ وَلَدًا سُبْحَنَهُ هُوَ الْغَنِيُّ إِنَّهُ فِي السَّمَوَاتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ
إِنْ عِنْدَكُمْ مِنْ سُلْطَنِ بِهَذَا أَتَقُولُونَ ۝ عَلَى اللَّهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ۝ قُلْ إِنَّ الَّذِينَ يَفْتَرُونَ
عَلَى اللَّهِ الْكَذِبَ لَا يُفْلِحُونَ ۝ مَتَاءٌ فِي الدُّنْيَا ثُمَّ إِلَيْنَا مَرْجِعُهُمْ ثُمَّ نُنْزِلُهُمُ الْعَذَابَ الشَّدِيدَ
بِمَا كَانُوا يَكْفُرُونَ ۝

ع. ११

हुवल्लजी ज-अ-ल लकुमुल्लै-ल
लितस्कनु फीहि वन्नहा-र मुब्सिरनु,
इन्-न फी जालि-क लआयातिल्
लिक। मैमिंय-यस्मअून (67)

कालुत्त-ख़जल्लाहु व-लदन् सुब्हानहु,
हुवल-गनिय्यु, लहू मा फिस्समावाति
व मा फिल्अर्जि इन् अिन्दकुम् मिन्
सुल्लतानिम्-बिहाजा, अ-तकूलू-न
अलल्लाहि मा ला तअूलमून (68)

कुल् इन्नल्लजी-न यफतरू-न
अलल्लाहिल्-कजि-ब ला युफ्लिहून
(69) मताअुन् फिददुन्या सुम्-म
इलैना मर्जिअुहुम् सुम्-म
नुजीकुहुमुल्-अज़ाबशदी-द बिमा

वही है जिसने बनाया तुम्हारे वास्ते रात को कि चैन हासिल करो उसमें, और दिन दिया दिखलाने वाला, बेशक इसमें निशानियाँ हैं उन लोगों के लिये जो सुनते हैं। (67) कहते हैं ठहरा लिया अल्लाह ने बेटा, वह पाक है, वह बेनियाज़ है, उसी का है जो कुछ है आसमानों में और जो कुछ है ज़मीन में, नहीं तुम्हारे पास कोई सनद इसकी, क्यों झूठ कहते हो अल्लाह पर जिस बात की तुमको ख़बर नहीं। (68) कह- जो लोग बाँधते हैं अल्लाह पर झूठ, भलाई नहीं पाते।

(69) थोड़ा सा नफ़ा उठा लेना दुनिया में फिर हमारी तरफ़ उनको लौटना है, फिर चखायेंगे हम उनको सख़्त अज़ाब बदला

कानू यक्फुरुन (70) ❀ ▲

उनके कुफ़ का। (70) ❀ ▲

खुलासा-ए-तफसीर

वह (अल्लाह) ऐसा है जिसने तुम्हारे लिये रात बनाई ताकि तुम उसमें आराम करो, और दिन भी (इस अन्दाज़ से बनाया कि रोशन होने की वजह से) देखने-भालने का ज़रिया है। इस (बनाने) में उन लोगों के लिये (तौहीद) की दलीलें हैं जो (ग़ौर व फ़िक्र के साथ इन मज़ामीन को) सुनते हैं। (मुश्रिक लोग इन दलीलों में ग़ौर नहीं करते और शिर्क की बातें करते हैं, चुनौती वे कहते हैं (अल्लाह की पनाह!) कि अल्लाह औलाद रखता है। सुब्हानल्लाह! (कैसी सख्त बात कही) वह तो किसी का मोहताज नहीं (और सब उसके मोहताज हैं)। उसी की (मिल्क) है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है (पस सब मन्तूक हुए और वह मालिक हुआ। तो साबित हुआ कि कमालात में कोई उसका साज़ी, उसके बराबर या उसके जैसा नहीं। पस अगर औलाद को अल्लाह की जिन्स वाला कहा जाये तो किसी का उसका हम-जिन्स होने का रद्द पहले हो चुका, और अगर ग़ैर-जिन्स वाली कही तो अपनी जिन्स के अलावा औलाद होना ऐब है और ऐबों से अल्लाह तआला पाक है, जैसा कि "सुब्हानहू" में इस तरफ़ इशारा भी है, पस औलाद का होना बिल्कुल ही बातिल हो गया। हमने जो औलाद के न होने का दावा किया था उस पर तो हमने दलील कायम कर दी है, अब रहा तुम्हारा दावा सो) तुम्हारे पास (सिवाय बेहूदा दावे के) इस (दावे) पर कोई दलील (भी) नहीं, (तो) क्या अल्लाह के ज़िम्मे ऐसी बात लगाते हो जिसका तुम (किसी दलील से) इल्म नहीं रखते। आप (उनका झूठ और बोहतान बाँधने वाला होना साबित करके इस झूठ बाँधने की वईद सुनाने के लिये) कह दीजिये कि जो लोग अल्लाह तआला पर झूठ गढ़ते हैं (जैसे मुश्रिक लोग) वे (कभी) कामयाब न होंगे। (और अगर किसी को शुब्हा हो कि हम तो ऐसों को दुनिया में ख़ूब कामयाब और आराम व राहत में पाते हैं तो जवाब यह है कि) यह दुनिया में (चन्द दिनों का) थोड़ा-सा ऐश है (जो बहुत जल्द ख़त्म होने वाला है) फिर (मरकर) हमारे (ही) पास उनको आना है, फिर (आखिरत में) हम उनको उनके कुफ़ के बदले सख्त सज़ा (का मज़ा) चखा देंगे।

وَإِذْ قَالَ لِقَوْمِهِ يُقَوْمِرَانِ كَانِ كَبُرَ عَلَيْكُمْ مَقَامِي
وَتَذَكِيرِي بِآيَاتِ اللَّهِ فَعَلَى اللَّهِ تَوَكَّلْتُ فَأَجْمِعُوا أَمْرَكُمْ وَشُرَكَاءَكُمْ ثُمَّ لَا يَكُنْ أَمْرُكُمْ عَلَيْكُمْ
غُمَّةً ثُمَّ اقْضُوا إِلَيَّ وَلَا تَنْظِرُوا ۝ فَإِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَمَا سَأَلْتُكُمْ مِنْ أَجْرٍ إِنْ أَجِرِيَ إِلَّا عَلَى
اللَّهِ وَأُمِرْتُ أَنْ أَكُونَ مِنَ الْمُسْلِمِينَ ۝ فَكَذَّبُوهُ فَجَعَلْنَاهُ وَمَنْ مَعَهُ فِي الْفُلْكِ وَجَعَلْنَاهُمْ خَلْفَ
وَإِعْرَفْنَا الَّذِينَ كَذَبُوا بِآيَاتِنَا فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُتَكَبِّرِينَ ۝

वल्तु अलैहिम न-ब-अ नूहिन्। इन्
 का-ल लिक्ौमिही या कौमि इन्
 का-न कबु-र अलैकुम् मकामी व
 तज्कीरी बिआयातिल्लाहि फ-अलल्लाहि
 तवक्कल्लु फ-अज्मिअू अम्रकुम् व
 शु-रका-अकुम् सुम्-म ला यकुन्
 अम्रकुम् अलैकुम् गुम्म-तन् सुम्पक्जू
 इलय-य व ला तुन्जिरून (71) फ-इन्
 तवल्लैतुम् फमा सअल्लुकुम् मिन्
 अज्जिरन्, इन् अज्जिर-य इल्ला
 अलल्लाहि व उमिरतु अन् अकू-न
 मिनल्-मुस्लिमीन (72) फ-कज्जबूहु
 फ-नज्जैनाहु व मम्-म-अहू फिल्फुल्कि
 व जअल्लाहुम् खालाइ-फ व
 अररक्नल्लज्जी-न कज्जबू बिआयातिना
 फन्जुर कै-फ का-न आकि-बतुल्-
 मुन्जरीन (73)

और सुना उनको हाल नूह का। जब कहा
 अपनी कौम को- ऐ कौम अगर भारी
 हुआ है तुम पर मेरा खड़ा होना और
 नसीहत करना अल्लाह की आयतों से तो
 मैंने अल्लाह पर भरोसा किया, अब तुम
 सब मिलकर मुक़र्रर करो अपना काम
 और जमा करो अपने शरीकों को, फिर न
 रहे तुमको अपने काम में शुब्हा, फिर कर
 गुज़रो मेरे साथ और मुझको मोहलत न
 दो। (71) फिर अगर मुँह फेरोगे तो मैंने
 नहीं चाही तुमसे मजदूरी, मेरी मजदूरी है
 अल्लाह पर, और मुझको हुक्म है कि रहूँ
 फरमाँबरदार। (72) फिर उसको झुठलाया
 तो हमने बचा लिया उसको और जो
 उसके साथ थे कश्ती में, और उनको
 कायम कर दिया जगह पर, और डुबा
 दिया उनको जो झुठलाते थे हमारी बातों
 को, तो देख ले कैसा हुआ उनका
 अन्जाम जिनको डराया था। (73)

खुलासा-ए-तफसीर

और आप इनको नूह (अलैहिस्सलाम) का किस्ता पढ़कर सुनाईये (जो कि उस वक़्त पेश
 आया था) जबकि उन्होंने अपनी कौम से फ़रमाया कि ऐ मेरी कौम! अगर तुमको (नसीहत व
 भलाई की बात कहने की हालत में) मेरा रहना और अल्लाह के अहकाम की नसीहत करना भारी
 (और नागवार) मालूम होता है तो (हुआ करे, मैं कुछ परवाह नहीं करता, क्योंकि) मेरा तो खुदा
 ही पर भरोसा है, सो तुम (मुझको नुक़सान पहुँचाने के बारे में) अपनी तदबीर (जो कुछ कर
 सको) अपने शरीकों के साथ (यानी बुतों के) पुख़्ता कर लो, (यानी तुम और तुम्हारे माबूद सब
 मिलकर मुझे नुक़सान पहुँचाने में अपना अरमान निकाल लो) फिर तुम्हारी (वह) तदबीर तुम्हारी
 घुटन (और दिल की तंगी) का सबब न होनी चाहिये, (यानी अक्सर खुफ़िया तदबीर से तबीयत

घुटा करती है, सो खुफिया तदबीर की ज़रूरत नहीं, जो कुछ तदबीर करो दिल खोलकर ऐलानिया करो, मेरा न लिहाज पास करो और न मेरे चले जाने और निकल जाने का अन्देशा करो, क्योंकि इतने आदमियों के पहरे में से एक आदमी का निकल जाना भी दूर की बात है, फिर छुपाने की क्या ज़रूरत है) फिर मेरे साथ (जो कुछ करना है) कर गुज़रो, और मुझको (बिल्कुल) मोहलत न दो (हासिल यह कि मैं तुम्हारी इन बातों से न डरता हूँ और न तब्लीग़ से रुक सकता हूँ)।

(यहाँ तक तो डरने की नफ़ी फ़रमाई, आगे किसी लालच व तमन्ना की नफ़ी फ़रमाते हैं, यानी) फिर भी अगर तुम मुँह ही मोड़े जाओ तो यह (समझो कि) मैंने तुमसे (इस तब्लीग़ पर) कोई मुआवज़ा तो नहीं माँगा (और मैं तुमसे क्यों माँगता, क्योंकि) मेरा मुआवज़ा तो (कर्म के वायदे के मुताबिक) सिर्फ़ अल्लाह ही के जिम्मे है। (गर्ज कि न तुमसे डरता हूँ न कोई इच्छा रखता हूँ) और (चूँकि) मुझको हुक्म किया गया है कि मैं इताअत करने वालों में रहूँ (इसलिये तब्लीग़ में हुक्म की तामील रखता हूँ। अगर तुम न मानोगे मेरा क्या नुक़सान है) सो (बावजूद इस खुली और स्पष्ट नसीहत के भी) वे लोग उनको झुठलाते रहे, पस (उन पर तूफ़ान का अज़ाब मुसल्लत हुआ और) हमने (उस अज़ाब से) उनको और जो उनके साथ क़श्ती में थे उनको निजात दी और उनको (ज़मीन) पर आबाद किया, और (बाक़ी जो लोग रह गये थे) जिन्होंने हमारी आयतों को झुठलाया था उनको (उस तूफ़ान में) गर्क कर दिया। सो देखना चाहिए उन लोगों का कैसा (बुरा) अन्जाम हुआ जो (अल्लाह के अज़ाब) से डराये जा चुके थे (यानी बेख़बरी में हलाक नहीं किये गये, पहले कह दिया, समझा दिया, न माना तो सज़ा पाई)।

ثُمَّ بَعَثْنَا مِنْ بَعْدِهِ رَسُولًا إِلَىٰ قَوْمِهِمْ فَبَاءُوا بِالْبَيْتِ فَبَا كَانُوا لِيَوْمِئِذٍ

كَذَّبُوهُ مِنْ قَبْلُ كَذَلِكَ نَطْعِمُ عَلَىٰ قُلُوبِ الْبُعْثِيِّينَ ۝

सुम्-म बअस्ना मिम्-बअदिही
रुसुलन् इला कौमिहिम् फ़जाऊहुम्
बिल्बयिनाति फ़मा कानू लियुअमिन्
बिमा कज़्जबू बिही मिन् कब्लु,
कज़ालि-क नत्वअु अला कुलूबिल्-
मुअ्तदीन (74)

फिर भेजे हमने नूह के बाद कितने पैग़म्बर
उनकी कौम की तरफ़, फिर लाये उनके
पास खुली दलीलें, सो उनसे यह न हुआ
कि ईमान ले आये उस बात पर जिसको
झुठला चुके थे पहले से। इसी तरह हम
मुहर लगा देते हैं दिलों पर हद से निकल
जाने वालों के। (74)

खुलासा-ए-तफ़सीर

फिर उन (नूह अलैहिस्सलाम) के बाद हमने और रसूलों को उनकी कौमों की तरफ़ भेजा, सो वे उनके पास मोजिज़े लेकर आये (मगर) फिर (भी) उनकी ज़िद और हठ की यह कैफ़ियत

थी कि) जिस चीज़ को उन्होंने अब्बल (मर्तबा में एक बार) झूठा कह दिया, यह न हुआ कि फिर उसको मान लेते (और जैसे ये लोग दिल के सख्त थे) अल्लाह तआला इसी तरह काफिरों के दिल पर बन्द लगा देते हैं।

ثُمَّ بَعَثْنَا مِنْ بَعْدِهِمْ مُوسَىٰ وَهَارُونَ إِلَىٰ فِرْعَوْنَ وَمَلَئِهِ بِآيَاتِنَا فَاسْتَكْبَرُوا وَكَانُوا قَوْمًا مُّجْرِمِينَ ۝ فَلَمَّا جَاءَهُمُ الْحَقُّ مِنْ عِنْدِنَا قَالُوا إِنَّ هَٰذَا سِحْرٌ مُّبِينٌ ۝ قَالَ مُوسَىٰ أَتَقُولُونَ لِلْحَقِّ لَمَّا جَاءَكُمْ أَسِحْرُ هَٰذَا وَلَا يُفْلِحُ السَّحَرُونَ ۝ قَالُوا أَجِئْتَنَا لِتَلْفِتَنَا عَمَّا وَجَدْنَا عَلَيْهِ آبَاءَنَا وَتَكُونَ لَكُمَا الْكِبْرِيَاءُ فِي الْأَرْضِ ۖ وَمَا نَحْنُ لَكُمَا بِبُؤْمِنِينَ ۝ وَقَالَ فِرْعَوْنُ أَتُتَوَىٰ بِكُلِّ سِحِرٍ عَلِيمٍ ۝ فَلَمَّا جَاءَ السَّحَرَةُ قَالَ لَهُم مُّوسَىٰ الْقَوَامَ أَأَنْتُمْ مُّلقُونَ ۝ فَلَمَّا الْقَوْأ قَالَ مُوسَىٰ مَا جِئْتُمْ بِهِ السَّحَرَةُ ۖ إِنَّ اللَّهَ سَيُبْطِلُهُ ۖ إِنَّ اللَّهَ لَا يَصْلِحُ عَمَلَ الْمُفْسِدِينَ ۝ وَيُحِثُّ اللَّهُ الْحَقَّ بِكَلِمَاتِهِ وَلَوْ كَرِهَ الْمُجْرِمُونَ ۝

सुम्-म बअस्ना मिम्-बअदिहिम् मूसा
व हारु-न इला फिरऔ-न व
म-लइही बिआयातिना फस्तक्बरु व
कानू कौमम्-मुजिमीन (75) फ-लम्मा
जा-अहुमुल्-हक्कु मिन् अिन्दिना
कालू इन्-न हाजा लसिस्कुम्-मुबीन
(76) का-ल मूसा अ-तकूलू-न
लिल्हक्कि लम्मा जा-अकुम्, असिस्कुन्
हाजा, व ला युप्तिहस्साहिरुन (77)
कालू अजिअ-तना लितल्फि-तना
अम्मा वजदना अलैहि आबा-अना व
तकू-न लकुमल्-किब्रिया-उ फिल्अर्जि,
व मा नहनु लकुमा बिमुअमिनीन
(78) व का-ल फिरऔनुअतूनी

फिर भेजा हमने उनके बाद मूसा और
हारुन को फिरऔन और उसके सरदारों
के पास अपनी निशानियाँ देकर, फिर
तकब्बुर करने लगे और वे लोग थे
गुनाहगार। (75) फिर जब पहुँची उनको
सच्ची बात हमारे पास से, कहने लगे यह
तो खुला जादू है। (76) कहा मूसा ने
क्या तुम यह कहते हो हक बात को जब
वह पहुँचे तुम्हारे पास, क्या यह जादू है?
और निजात नहीं पाते जादू करने वाले।
(77) बोले क्या तू आया है कि हमको
फेर दे उस रास्ते से जिस पर पाया हमने
अपने बाप-दादों को, और तुम दोनों को
सरदारी मिल जाये इस मुल्क में, और हम
नहीं हैं तुमको मानने वाले। (78) और
बोला फिरऔन- लाओ मेरे पास जो

बिकुल्लि साहिरिन् अलीम (79)
 फ-लम्मा जाअस्स-ह-रतु का-ल लहुम्
 मूसा अल्कू मा अन्तुम्-मुल्कून (80)
 फ-लम्मा अल्कौ का-ल मूसा मा
 जिअतुम् बिहिस्-सिस्सु, इन्नल्ला-ह
 सयुब्बिलुहू, इन्नल्ला-ह ला युस्तिहु
 अ-मलल्-मुफ़ि सदीन (81) व
 युहिकुल्लाहुल्-हक्-क बि-कलिमातिही
 व लौ करिहल्-मुज्जिमून (82) ❀

जादूगर हो पड़ा हुआ। (79) फिर जब
 आये जादूगर कहा उनको मूसा ने- डालो
 जो तुम डालते हो। (80) फिर जब
 उन्होंने डाला मूसा बोला कि जो तुम लाये
 हो सो जादू है, अब अल्लाह इसको
 बिगाड़ता है, बेशक अल्लाह नहीं संवारता
 शरीरों के काम। (81) और अल्लाह सच्चा
 करता है हक बात को अपने हुक्म से
 और पड़े बुरा मानें गुनाहगार। (82) ❀

खुलासा-ए-तफ़सीर

फिर इन (ज़िक्र हुए) पैगम्बरों के बाद हमने मूसा और हारून (अलैहिमस्सलाम) को फिरऔन और उसके सरदारों के पास अपने मोजिज़े (लाठी और चमकता हुआ हाथ) देकर भेजा, सो उन्होंने (दावे के साथ ही उनकी तस्दीक करने से) तकब्बुर किया (और हक की तलब के लिये गौर भी तो न किया) और वे लोग अपराधों के आदी थे (इसलिये इताअत न की)। फिर जब (दावे के बाद) उनको हमारे पास से (मूसा अलैहिस्सलाम की नुबुव्वत पर) सही दलील पहुँची (मुराद इससे मोजिज़ा है) तो वे लोग कहने लगे कि यकीनन यह खुला जादू है। मूसा (अलैहिस्सलाम) ने फरमाया- क्या तुम इस सही दलील के बारे में जबकि वह तुम्हारे पास पहुँची, (ऐसी बात) कहते हो (कि यह जादू है)। क्या यह जादू है? और (हालाँकि) जादूगर (जबकि दावा नुबुव्वत का करें तो मोजिज़े के ज़ाहिर करने में) कामयाब नहीं हुआ करते (और मैं कामयाब हुआ कि पहले दावा किया फिर मोजिज़े ज़ाहिर कर दिये)। वे लोग (इस तफ़रीर का कुछ जवाब न दे सके, वैसे ही जहालत के तौर पर) कहने लगे क्या तुम हमारे पास इसलिए आये हो कि हमको उस तरीके से हटा दो जिस पर हमने अपने बुजुर्गों को देखा है? और (इसलिए आये हो कि) तुम दोनों को दुनिया में रियासत (और सरदारी) मिल जाये? और (तुम अच्छी तरह समझ लो कि) हम तुम दोनों को कभी न मानेंगे।

और फिरऔन ने (अपने सरदारों से) कहा कि मेरे पास तमाम माहिर जादूगरों को (जो हमारे मुल्क में हैं) हाज़िर करो। (चुनाँचे जमा किये गये) सो जब वे आये (और मूसा अलैहिस्सलाम से मुकाबला हुआ तो) मूसा ने उनसे फरमाया कि डालो जो कुछ तुमको (मैदान में) डालना है। सो जब उन्होंने (अपना जादू का सामान) डाला तो मूसा (अलैहिस्सलाम) ने फरमाया कि जो कुछ तुम (बनाकर) लाये हो, जादू (यह) है, (न वह जिसको फिरऔन वाले जादू कहते हैं) यकीनी बात है कि अल्लाह तआला इस (जादू) को अभी दरहम-बरहम “यानी तहस-नहस” किये देता है।

(क्योंकि) अल्लाह तआला ऐसे फसादियों का काम बनने नहीं देता (जो मोजिजे के साथ मुकाबले से पेश आयें) और अल्लाह तआला (जिस तरह बातिल वालों के बातिल को हक मोजिजों के मुकाबले में बातिल कर देता है इसी तरह) हक (यानी सही दलील और मोजिजे) को अपने वायदों के मुवाफ़िक़ (जो कि अम्बिया अलैहिमुस्सलाम की नुबुव्वत को साबित करने के मुताल्लिक हैं) साबित कर देता है, चाहे मुजरिम (और काफ़िर) लोग (कैसा ही) नागवार समझें।

فَمَا آمَنَ لِمُوسَى إِلَّا ذُرِّيَّةٌ مِّنْ قَوْمِهِ عَلَى خَوْفٍ

مِّنْ فِرْعَوْنَ وَمَلَئِهِمْ أَن يَفْتِنَهُمْ ۚ وَإِنَّ فِرْعَوْنَ لَعَالٍ فِي الْأَرْضِ ۚ وَإِنَّ لِمَنْ الْمُسْرِفِينَ ۖ وَقَالَ
مُوسَى يَقَوْمِ إِن كُنتُمْ آمَنْتُمْ بِاللّٰهِ فَعَلَيْهِ تَوَكَّلُوا إِن كُنتُمْ مُّسْلِمِينَ ۖ فَقَالُوا عَلَى اللَّهِ تَوَكَّلْنَا ۚ
رَبَّنَا لَا تَجْعَلْنَا فِتْنَةً لِّلْقَوْمِ الظَّالِمِينَ ۖ وَنَجِّنَا بِرَحْمَتِكَ مِنَ الْقَوْمِ الْكَافِرِينَ ۝

फ़मा आम-न लिमूसा इल्ला
ज़ुरिय्यतुम्-मिन् कौमिही अला
खौफिम् मिन् फिरऔ-न व
म-लइहिम् अय्यप्ति-नहुम्, व इन्-न
फिरऔ-न तआलिन् फिल्अर्जि व
इन्नहू लमिनल् मुसिफीन (83) व
का-ल मूसा या कौमि इन् कुन्तुम्
आमन्तुम् बिल्लाहि फ-अलैहि
तवक्कलू इन् कुन्तुम् मुस्लिमीन
(84) फ़कालू अलल्लाहि तवक्कल्ला
रब्बना ला तज्अल्ला फित्नतल्
लिल्कौमिज़्ज़ालिमीन (85) व नज्जिना
बिरह्मति-क मिनल् कौमिल्-
काफिरीन (86)

फिर कोई ईमान न लाया मूसा पर मगर
कुछ लड़के उसकी कौम के डरते हुए
फिरऔन से और उनके सरदारों से कि
कहीं उनको बिचला न दे, और फिरऔन
चढ़ रहा है मुल्क में, और उसने हाथ
छोड़ रखा है। (83) और कहा मूसा ने ऐ
मेरी कौम! अगर तुम ईमान लाये हो
अल्लाह पर तो उसी पर भरोसा करो
अगर हो तुम फरमाँबरदार। (84) तब वे
बोले हमने अल्लाह पर भरोसा किया, ऐ
हमारे रब! न आजमा हम पर जोर इस
ज़ालिम कौम का। (85) और छुड़ा दे
हमको मेहरबानी फरमाकर इन काफिर
लोगों से। (86)

खुलासा-ए-तफ़्सीर

पस (जब लाठी का मोजिज़ा जाहिर हुआ तो) मूसा (अलैहिस्सलाम) पर (शुरू-शुरू में)

उनकी कौम में से सिर्फ थोड़े-से आदमी ईमान लाये, वे भी फिरऔन से और अपने हाकिमों से डरते-डरते, कि कहीं (जाहिर होने पर) उनको तकलीफ़ (न) पहुँचाये, और (हकीकत में उनका डरना बेजा न था) क्योंकि फिरऔन उस मुल्क में जोर (हुकूमत) रखता था, और यह (बात भी थी) कि वह (इन्साफ़) की हद से बाहर हो जाता था (जुल्म करने लगता था। फिर जो शख्स हुकूमत के साथ जुल्म करता हो उससे तो डर लगता ही है)। और मूसा (अलैहिस्सलाम) ने (जब उनको डरा हुआ देखा तो उनसे) फ़रमाया कि ऐ मेरी कौम! अगर तुम (सच्चे दिल से) अल्लाह पर ईमान रखते हो तो (सोच-विचार मत करो बल्कि) उसी पर तवक्कुल करो, अगर तुम (उसकी) इताअत करने वाले हो। उन्होंने (जवाब में) अर्ज किया कि हमने अल्लाह ही पर तवक्कुल (भरोसा) किया। (उसके बाद अल्लाह तआला से दुआ की कि) ऐ हमारे परवर्दिगार! हमको इन जालिमों की मशक़ का तख़्ता "यानी जुल्म का निशाना" न बना। और हमको अपनी रहमत के सदर्के में इन काफ़िरों से निजात दे।

وَأَوْحَيْنَا

إِلَىٰ مُوسَىٰ وَأَخِيهِ أَنْ تَبَوُّا لِقَوْمِكُمَا بِمِصْرَ بُيُوتًا وَاجْعَلُوا بُيُوتَكُمْ قِبْلَةً وَأَقِيمُوا الصَّلَاةَ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ ۝ وَقَالَ مُوسَىٰ رَبَّنَا إِنَّكَ آتَيْتَ فِرْعَوْنَ وَمَلَأَهُ زِينَةً وَأَمْوَالًا فِي الْحَيَاةِ الدُّنْيَا رَبَّنَا لِيُضِلُّوا عَنْ سَبِيلِكَ رَبَّنَا اطْمِسْ عَلَىٰ أَمْوَالِهِمْ وَاشْدُدْ عَلَىٰ قُلُوبِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُوا حَتَّىٰ يَرَوْا الْعَذَابَ الْأَلِيمَ ۝ قَالَ قَدْ أُجِيبْتُ دَعْوَتُكُمْ فَاَسْتَقِيمَا وَلَا تَتَّبِعَنَّ سَبِيلَ الَّذِينَ لَا يَعْلَمُونَ ۝ وَجُوزْنَا بِبَنِي إِسْرَءِيلَ الْبَحْرَ فَاتَّبَعَهُمْ فِرْعَوْنُ وَجُنُودُهُ بَغْيًا وَعَدُوًّا حَتَّىٰ إِذَا أَذْرَكَهُ الْعَرَقُ قَالَ أَمِنْتُ أَنَّهُ لَآ إِلَهَ إِلَّا الَّذِي آمَنْتُ بِهِ بَنُو إِسْرَءِيلَ وَأَنَا مِنَ السُّلِّمِينَ ۝ آلَنَ وَقَدْ عَصَيْتَ قَبْلُ وَكُنْتَ مِنَ الْمُفْسِدِينَ ۝

व औहैना इला मूसा व अख़ीहि अन्
तबव्वआ लिक्कौमिकुमा बिमिस्-र
बुयूतं-व-वजूअलू बुयू-तकुम्
किब्लतं-व-व अकीमुस्सला-त, व
बश्शरिल्-मुअ्मिनीन (87) व का-ल
मूसा रब्बना इन्न-क आतै-त
फ़िरऔ-न व म-ल-अहू जीनतं-व

और हुक्म भेजा हमने मूसा को और
उसके भाई को कि मुकर्रर करो अपनी
कौम के वास्ते मिस्र में से घर और
बनाओ अपने घर किब्ला-रू, और कायम
करो नमाज़ और खुशख़ाबरी दे ईमान
वालों को। (87) और कहा मूसा ने ऐ
हमारे रब! तूने दी है फिरऔन को और
उसके सरदारों को सौनक और माल

अम्वालन् फिल्हयातिदुन्या रब्बना
 लियुजिल्लू अन् सबील-क
 रब्बनत्मिस् अला अम्वालिहिम्
 वशदुद् अला कुलूबिहिम् फला
 युअ्मिन् हत्ता य-रवुल् अजाबल्-
 अलीम (88) का-ल कद् उजीबद्-
 दअ्वतुकुमा फस्तकीमा व ला
 तत्तबिअान्नि सबीलल्लज़ी-न ला
 यअ्लमून (89) व जावज़्ना बि-बनी
 इस्राईलल्-बह-र फअत्व-अहुम्
 फिरऔनु व जुनूदुहू बग्यंव-व
 अद्वन्, हत्ता इज़ा अदर-कहुल्ग-रकु
 का-ल आमन्तु अन्नहू ला इला-ह
 इल्लल्लज़ी आ-मनत् बिही बनू
 इस्राई-ल व अ-न मिनल्-मुस्लिमीन
 (90) आल्आ-न व कद् असै-त कब्लु
 व कुन्-त मिनल्-मुप्सिदीन (91)

दुनिया की ज़िन्दगी में, ऐ रब! इस वास्ते
 कि बहकायें तेरी राह से, ऐ रब! मिटा दे
 उनके माल और सख्त कर दे उनके दिल
 कि न ईमान लायें जब तक देख लें
 दर्दनाक अज़ाब। (88) फरमाया- कुबूल
 हो चुकी तुम्हारी दुआ, सो तुम दोनों
 साबित (जमे) रहो और मत चलो राह
 उनकी जो नावाकिफ़ हैं। (89) और पार
 कर दिया हमने बनी इस्राईल को दरिया
 से, फिर पीछा किया उनका फिरऔन ने
 और उसके लश्कर ने शरारत और जुल्म
 व ज़्यादती से, यहाँ तक कि जब डूबने
 लगा बोला- यकीन कर लिया मैंने कि
 कोई माबूद नहीं मगर जिस पर ईमान
 लाये बनी इस्राईल, और मैं हूँ
 फरमाँबरदारों में। (90) अब यह कहता है
 और तू नाफरमानी करता रहा इससे पहले
 और रहा गुमराहों में। (91)

खुलासा-ए-तफसीर

और हमने (इस दुआ के कुबूल करने का सामान किया कि) मूसा (अलैहिस्सलाम) और
 उनके भाई (हारून अलैहिस्सलाम) के पास वही भेजी कि तुम दोनों अपने उन लोगों के लिये
 (बदस्तूर) मिस्र में घर बरकरार रखो (यानी वे डरकर घर न छोड़ें, हम उनके मुहाफ़िज़ हैं) और
 (नमाज़ के वक़्त में) तुम सब अपने उन्हीं घरों को नमाज़ पढ़ने की जगह निर्धारित कर लो
 (मस्जिदों की हाज़िरी डर की वजह से माफ़ है) और (यह ज़रूरी है कि) नमाज़ के पाबन्द रहो
 (ताकि नमाज़ की बरकत से अल्लाह तआला जल्दी इस मुसीबत से छुड़ा दे)। और (ऐ मूसा!)
 आप मुसलमानों को खुशख़बरी दे दें (कि अब जल्दी यह मुसीबत ख़त्म हो जायेगी) और मूसा
 (अलैहिस्सलाम) ने (दुआ में) अर्ज़ किया कि ऐ हमारे रब! (हमको यह बात मालूम हो गई कि)
 आपने फिरऔन को और उसके सरदारों को दुनियावी ज़िन्दगी में ठाट-बाट के सामान और

तरह-तरह के माल ऐ हमारे रब! इसी वास्ते दिये हैं कि वे (लोगों को) आपकी राह से गुमराह करें (पस जब हिदायत उनके मुक़्दर में है नहीं और जो हिक्मत थी वह हासिल हो चुकी तो अब उनके मालों और जानों को क्यों बाकी रखा जाये, पस) ऐ हमारे रब! उनके मालों को तबाह व बरबाद कर दीजिये और उनके दिलों को (ज्यादा) सख्त कर दीजिये (जिससे वे हलाकत के हक़दार हो जाएँ) सो ये ईमान न लाने पायें (बल्कि दिन-ब-दिन उनका कुफ़्र ही बढ़ता रहे) यहाँ तक कि दर्दनाक अज़ाब (के हक़दार होकर उस) को देख लें (सो उस वक़्त ईमान कोई नाफ़ा नहीं देता। मूसा अलैहिस्सलाम ने यह दुआ की और हारून अलैहिस्सलाम आमीन कहते रहे। जैसा कि दूरें मन्सूर में बयान किया गया है)।

हक़ तआला ने फ़रमाया कि तुम दोनों की दुआ कुबूल कर ली गई (क्योंकि आमीन कहना भी दुआ में शरीक होना है, यानी हम उनके मालों व जानों को अब हलाक करने वाले हैं) सो तुम (अपने ज़िम्मेदारी के काम यानी तब्लीग़ पर) साबित-क़दम रहो (यानी अगरचे हिदायत उनकी तक़दीर में न हो मगर तब्लीग़ में तुम्हारा तो फ़ायदा है), और उन लोगों की राह न चलना जिनको (हमारे वायदे के सच्चे होने का या देरी में हिक्मत होने का या तब्लीग़ के ज़रूरी होने का) इल्म नहीं (यानी हमारे वायदे को सच्चा समझो और अगर हलाकत में देर हो जाये तो उसमें हिक्मत समझो और अपने ज़िम्मेदारी के काम में लगे रहो)।

और (जब हमने फिरऔन को हलाक करना चाहा तो मूसा अलैहिस्सलाम को हुक्म दिया कि बनी इस्राईल को मिस्र से बाहर निकाल ले जाईये। चुनाँचे वह सब को लेकर चले और रास्ते में दरिया-ए-शोर बाधा बना, और मूसा अलैहिस्सलाम की दुआ से उसमें रास्ता हो गया और) हमने बनी इस्राईल को (उस) दरिया से पार कर दिया। फिर उनके पीछे-पीछे फिरऔन अपने लश्कर के साथ जुल्म और ज़्यादती के इरादे से (दरिया में) चला (कि दरिया से निकलकर उनसे क़त्ल व क़िताल का मामला करे लेकिन वह दरिया से पार न हो सका) यहाँ तक कि जब डूबने लगा (और अज़ाब के फ़रिश्ते नज़र आने लगे) तो (घबराकर) कहने लगा कि मैं ईमान लाता हूँ कि सिवाय उसके कि जिस पर बनी इस्राईल ईमान लाये हैं कोई माबूद नहीं, और मैं मुसलमानों में दाख़िल होता हूँ (सो मुझको इस डूबने और आख़िरत के अज़ाब से निजात दी जाये। फ़रिश्ते के ज़रिये से) जवाब दिया गया कि अब ईमान लाता है (जबकि आख़िरत का नज़ारा शुरू हो गया) और (आख़िरत को देखने से) पहले सरकशी करता रहा, और फ़सादियों में दाख़िल रहा (अब निजात चाहता है)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

इन ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में हज़रत मूसा व हारून अलैहिमस्सलाम, बनी इस्राईल और फिरऔन की क़ौम के कुछ हालात और उनसे संबन्धित अहक़ाम बयान हुए हैं। पहली आयत में एक ख़ास वाक़िए से मुताल्लिक हुक्म है, वह यह कि बनी इस्राईल जो मूसा के दीन पर अमल करने वाले थे ये सब आम आदत के मुताबिक़ नमाज़ें सिर्फ़ अपने सूमओं (इबादत-गाहों) में अदा

करते थे, और पिछली उम्मतों के लिये हुक्म भी यही था कि उनकी नमाज़ अपने घरों में अदा नहीं होती थी, यह खुसूसी सहूलियत उम्मत मुहम्मदिया को अता हुई कि हर जगह जहाँ चाहें नमाज़ अदा कर लें। सही मुस्लिम की एक हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी छह खुसूसियात में से एक यह भी बयान फरमाई है कि मेरे लिये सारी ज़मीन को मस्जिद बना दिया गया है कि नमाज़ हर जगह अदा हो जाती है, यह दूसरी बात है कि फर्ज़ नमाज़ों का मस्जिदों में ही अदा करना जमाअत के साथ सुन्नत-ए-मुअक्कदा करार दिया गया और नफ़ली नमाज़ों का घरों में अदा करना अफ़ज़ल है। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का अमल इसी पर था कि मस्जिद में सिर्फ़ फर्ज़ नमाज़ पढ़ते थे, सुन्नतें और नवाफ़िल घर में जाकर अदा फरमाते थे। बनी इस्राईल अपने मज़हब के मुताबिक़ इसके पाबन्द थे कि नमाज़ सिर्फ़ अपने इबादत-ख़ानों में अदा करें, फिरऔन जो उनको तरह-तरह की तकलीफ़ें देता और उन पर जुल्म ढहाता था, उसने यह देखकर उनके तमाम इबादत-ख़ानों को ढहा दिया ताकि ये अपने मज़हब के मुताबिक़ नमाज़ न पढ़ सकें, इस पर हक़ तआला ने बनी इस्राईल के दोनों पैग़म्बरों हज़रत मूसा व हारून अलैहिमस्सलाम को वह हुक्म दिया जो इस आयत में बयान हुआ है कि बनी इस्राईल के लिये मिस्र में नये मकान बनाये जायें और उन मकानात का रुख़ क़िब्ले की तरफ़ हो, ताकि वे उन्हीं रहने के मकानों में नमाज़ अदा कर सकें।

इससे मालूम हुआ कि पिछली उम्मतों में अगरचे आम हुक्म यही था कि नमाज़ें सिर्फ़ इबादत-ख़ानों में पढ़ी जायें, लेकिन इस ख़ास हादसे की वजह से बनी इस्राईल के लिये इसकी वक़्ती और अस्थायी इजाज़त दे दी गयी कि घरों ही में नमाज़ अदा कर लिया करें और अपने घरों का रुख़ क़िब्ले की तरफ़ सीधा रखें। और यह भी कहा जा सकता है कि इस ज़रूरत के वक़्त भी उनको मख़सूस घरों में नमाज़ पढ़ने की इजाज़त दी गयी थी जिनका रुख़ क़िब्ले की तरफ़ किया गया था, आम घरों और आम मक़ामात पर नमाज़ की इजाज़त उस वक़्त भी नहीं थी, जिस तरह उम्मत मुहम्मदिया को शहर और जंगल के हर मक़ाम पर नमाज़ अदा करने की सहूलियत हासिल है। (रुहुल-मआनी)

यहाँ यह सवाल भी ध्यान देने के काबिल है कि इस आयत में बनी इस्राईल को जिस क़िब्ले की तरफ़ रुख़ करने का हुक्म दिया गया है उससे मुराद कौनसा क़िब्ला है, काबा या बैतुल-मुक़द्दस? हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु फरमाते हैं कि इससे मुराद काबा है और काबा ही हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम और उनके साथियों का क़िब्ला है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी व रुहुल-मआनी) बल्कि कुछ उलेमा ने फरमाया कि पिछले तमाम अम्बिया का क़िब्ला असल में काबा ही था।

और जिस हदीस में यह इरशाद है कि यहूद अपनी नमाज़ों में बैतुल-मुक़द्दस के सख़रा की तरफ़ रुख़ करते हैं उसको उस ज़माने पर महमूल किया जायेगा जबकि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम मिस्र छोड़कर बैतुल-मुक़द्दस की तरफ़ रवाना हुए। यह इसके खिलाफ़ नहीं है कि मिस्र में क़ियाम के ज़माने में आपका क़िब्ला बैतुल्लाह ही हो।

इस आयत से यह भी साबित हुआ कि नमाज़ के लिये क़िब्ले की तरफ़ रुख़ करने की शर्त पहले अम्बिया के ज़माने में भी थी, इसी तरह तहारत (पाक़ी) और सतरे-औरत (बदन के छुपाने वाले ज़रूरी हिस्से का छुपाना) पहले तमाम अम्बिया की शरीअतों में नमाज़ के लिये शर्त होना भी मोतबर रिवायतों से साबित है।

घरों को क़िब्ला-रुख़ बनाने का मक़सद ही यह था कि उनमें नमाज़ें अदा की जायें, इसलिये इसके बाद 'अकीमुस्सलान्त' का हुक्म देकर यह हिदायत कर दी गयी कि अगर फिरऔन इबादत-गाहों में नमाज़ अदा करने से रोकता है तो इससे नमाज़ माफ़ नहीं होती, अपने घरों में अदा करो।

आयत के आख़िर में हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम को ख़िताब करके हुक्म दिया गया कि मोमिनों को आप खुशख़बरी सुना दें कि उनका मक़सद पूरा होगा, दुश्मन पर उनको ग़लबा नसीब होगा और आख़िरत में जन्नत मिलेगी। (तफ़सीर रूहुल-मअनी)

आयत के शुरू में हज़रत मूसा व हारून अलैहिमस्सलाम दोनों को ख़िताब किया गया क्योंकि मकानात क़िब्ला-रुख़ करके उनमें नमाज़ पढ़ने की इजाज़त उन्हीं का काम था, उसके बाद सब बनी इस्राईल को शामिल करके नमाज़ कायम करने का हुक्म दिया गया, क्योंकि इस हुक्म में पैग़म्बर और उम्मत सब दाख़िल हैं, आख़िर में खुशख़बरी देने का हुक्म खास मूसा अलैहिस्सलाम को दिया गया क्योंकि असल शरीअत वाले नबी आप ही थे, जन्नत की खुशख़बरी देने का आप ही को हक़ था।

दूसरी आयत में फिरऔन की क़ौम की इस्लाह (सुधार) से मायूस होकर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की बददुआ का ज़िक्र है, जिसके शुरू में उन्होंने हक़ तआला की बारगाह में यह अर्ज किया है कि आपने फिरऔन की क़ौम को दुनिया की जीनत के साज़ व सामान और माल व दौलत बहुत अता फ़रमा रखा है, मिस्र से लेकर हब्शा की ज़मीन तक सोने चाँदी और ज़बर्जद व ज़मर्द याक़ूत वग़ैरह जवाहिरात की कानें अता फ़रमा रखी हैं। (तफ़सीरे कुर्तुबी) जिसका असर यह है कि वे लोगों को तेरे रास्ते से गुमराह करते हैं, क्योंकि आम लोग उनके जाहिरी साज़ व सामान और ऐश व राहत को देखकर इस शक़ में पड़ जाते हैं कि अगर ये गुमराही पर होते तो इनको अल्लाह तआला की ये नेमतें क्यों मिलतीं, क्योंकि आम लोगों की नज़रें इस हकीक़त तक नहीं पहुँचती कि दुनिया की तरक्की बग़ैर नेक अमल के किसी इनसान के हक़ पर होने की अलामत नहीं हो सकती। हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने फिरऔन की क़ौम के सुधार से मायूस होने के बाद उनके माल व दौलत से दूसरों की गुमराही का ख़तरा महसूस करके बददुआ की 'रब्बनतूमिस् अला अमवालिहिम' यानी ऐ मेरे परवर्दिगार! इनके मालों की सूरत बदलकर बेशक़्त और बेकार कर दे।

हज़रत क़तादा रह. का बयान है कि इस दुआ का असर यह जाहिर हुआ कि फिरऔन की क़ौम के तमाम ज़र व जवाहिरात और नक़द सिक्के और बाग़ों खेतों की सब पैदावार पत्थरों की शक़्त में तब्दील हो गये। हज़रत उमर बिन अब्दुल-अज़ीज़ रह. के ज़माने में एक थैला पाया गया

जिसमें फिरऔन के जमाने की चीजें थीं, उनमें अण्डे और बादाम भी देखे गये जो बिल्कुल पत्थर थे। तफसीर के इमामों ने फरमाया कि अल्लाह तआला ने उनके तमाम फलों, तरकारियों और गুল्ले को पत्थर बना दिया था, और यह अल्लाह तआला की उन नौ आयतों (मोजिजों) में से है जिसका जिक्र कुरआने करीम में आया है:

وَلَقَدْ آتَيْنَا مُوسَى تِسْعَ آيَاتٍ مُّبِينَاتٍ.

दूसरी बददुआ हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने उनके लिये यह की:

وَاصْدُدْ عَلَى قُلُوبِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُوا حَتَّى يَرَوُا الْعَذَابَ الْأَلِيمَ.

यानी ऐ परवर्दिगार! उनके दिलों को ऐसा सख्त कर दे कि उनमें ईमान और किसी खैर की सलाहियत ही न रहे, ताकि वे दर्दनाक अज़ाब आने से पहले ईमान न ला सकें।

यह बददुआ बज़ाहिर एक रसूल व पैग़म्बर की ज़बान से बहुत दूर की मालूम होती है क्योंकि पैग़म्बर का वज़ीफ़ा-ए-ज़िन्दगी ही यह होता है कि लोगों को ईमान और नेक अमल की तरफ़ दावत दें और इसके लिये तदबीरें करें।

मगर यहाँ वाकिआ यह है कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम सारी तदबीरें करने के बाद उनकी इस्लाह से मायूस हो चुके थे और अब चाहते थे कि ये अपने आमाल की सज़ा देखें। इसमें यह शंका व संभावना भी थी कि कहीं ये लोग अज़ाब आता देखकर ईमान का इक़रार न कर लें, और इस तरह अज़ाब टल जाये, इसलिये कुफ़्र से बुग़ज़ व नफ़रत इस दुआ का सबब बनी। जैसे फिरऔन गुर्क होने के वक़्त ईमान का इक़रार करने लगा तो जिब्रीले अमीन ने उसका मुँह बन्द कर दिया कि कहीं अल्लाह की रहमत मुतवज्जह न हो जाये और यह अज़ाब से न बच जाये।

और यह भी हो सकता है कि यह बददुआ दर हकीकत बददुआ न हो बल्कि ऐसी हो जैसे शैतान पर लानत, कि वह तो कुरआनी वज़ाहत के मुताबिक़ खुद ही मलऊन है फिर उस पर लानत करने का मन्शा इसके सिवा नहीं कि जिस पर अल्लाह तआला ने लानत मुसल्लत कर दी हम भी उस पर लानत करते हैं। इस सूरत में मतलब इसका यह होगा कि उनके दिलों का सख्त और ईमान व सुधार के योग्य न होना अल्लाह की तरफ़ से मुक़रर हो चुका था, हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने बददुआ की सूरत में उसका इज़हार फ़रमाया।

तीसरी आयत में हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की इस दुआ की कुबूलियत को बयान फ़रमाया है, मगर उनवान में हज़रत हारून अलैहिस्सलाम को भी दुआ में शरीक करार देकर यह ख़िताब किया गया:

قَدْ أَجَبْتُ دُعَوْنَكُمَا.

यानी तुम दोनों की दुआ कुबूल कर ली गयी। वजह यह थी कि जब हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम यह दुआ कर रहे थे तो हज़रत हारून अलैहिस्सलाम आमीन कहते जाते थे। इससे मालूम हुआ कि किसी दुआ पर आमीन कहना भी दुआ ही में दाख़िल है, और चूँकि दुआ का मसून तरीक़ा कुरआने करीम में आहिस्ता आवाज़ से करने का बतलाया गया है तो इससे

आमीन को भी आहिस्ता कहने की तरजीह मालूम होती है।

इस आयत में दुआ के कुबूल होने की इत्तिहा इन दोनों पैगम्बरों को दे दी गयी मगर थोड़ा सा इम्तिहान इनका भी लिया गया कि दुआ की कुबूलियत का असर बकौल इमाम बग़वी चालीस साल बाद ज़ाहिर हुआ, इसी लिये इस आयत में दुआ के कुबूल होने के ज़िक्र के साथ इन दोनों हज़रात को यह भी हिदायत कर दी गयी कि:

فَاسْتَقِيمَا وَلَا تَتَّبِعَنَّ سَبِيلَ الَّذِينَ لَا يَعْلَمُونَ ॥

यानी अपनी ज़िम्मेदारी के काम यानी दावत व तब्लीग़ में लगे रहें, दुआ के कुबूल होने का असर देर में ज़ाहिर हो तो जाहिलों की तरह जल्दबाज़ी न करें।

चौथी आयत में हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के मशहूर मोजिज़े दरिया से पार होने का और फिरऔन के ग़र्क़ होने का वाकिआ ज़िक्र करने के बाद फ़रमाया है:

حَتَّىٰ إِذَا أَذْرَكَهُ الْفُرْقَىٰ قَالَ آمَنْتُ أَنَّهُ لَا إِلَهَ إِلَّا الَّذِي آمَنْتُ بِهِ بَنُو إِسْرَءِيلَ وَأَنَا مِنَ الْمُسْلِمِينَ ॥

यानी जब उसको पानी में डूबने ने पकड़ लिया तो बोल उठा कि मैं ईमान लाता हूँ इस बात पर कि जिस खुदा पर बनी इस्राईल ईमान लाये हैं उसके सिवा कोई माबूद नहीं, और मैं इताअत करने वालों में से हूँ।

पाँचवीं आयत में खुद हक़ तआला शानुहू की तरफ़ से इसका यह जवाब आया है:

الَّذِينَ وَقَدْ عَصَيْتَ قَبْلُ وَكُنْتَ مِنَ الْمُفْسِدِينَ ॥

यानी क्या तू अब मुसलमान होता है जबकि ईमान व इस्लाम का वक़्त गुज़र चुका।

इससे साबित हुआ कि ऐन मौत के वक़्त का ईमान लाना शरअन मोतबर नहीं। इसकी अधिक वज़ाहत उस हदीस से होती है जिसमें हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला बन्दे की तौबा कुबूल फ़रमाते रहते हैं जब तक गरगरा-ए-मौत का वक़्त न आ जाये। (तिर्मिज़ी)

गरगरा-ए-मौत से मुराद वह वक़्त है जब रूह के निकलने के वक़्त फ़रिश्ते सामने आ जाते हैं, उस वक़्त दारुल-अमल (यानी दुनिया) की ज़िन्दगी ख़त्म होकर आख़िरत के अहकाम शुरू हो जाते हैं, इसलिये उस वक़्त का कोई अमल काबिले कुबूल नहीं, न ईमान न कुफ़्र। ऐसे वक़्त जो ईमान लाता है उसको भी मोमिन नहीं कहा जायेगा और उसके साथ कफ़न दफ़न में मुसलमानों के जैसा मामला न किया जायेगा, जैसा कि फिरऔन के इस वाकिए से साबित है कि तमाम हज़रात इस पर एकमत हैं कि फिरऔन की मौत कुफ़्र पर हुई है, कुरआनी वज़ाहतों से भी यही स्पष्ट है, और जिस किसी ने फिरऔन के इस ईमान को मोतबर कहा है या तो उसकी कोई तावील की जाये वरना उसे ग़लत कहा जायेगा। (तफ़सीर रूहुल-मआनी)

इसी तरह अगर खुदा न ख़्वास्ता ऐसे ही रूह निकलने की हालत में किसी शख्स की ज़बान से कुफ़्र का कलिमा निकल जाये तो उसको काफ़िर भी न कहा जायेगा बल्कि उसके जनाज़े की नमाज़ पढ़कर मुसलमानों की तरह दफ़न किया जायेगा और उसके कलिमा-ए-कुफ़्र की तावील

की जायेगी जैसा कि बाज़ औलिया-अल्लाह के हालात से इसकी ताईद होती है कि जो कलिमा उनकी ज़बान से निकल रहा था लोग उसको कलिमा-ए-कुफ़ समझकर परेशान थे बाद में कुछ होश आया और अपना मतलब बतलाया तो सब को इत्मीनान हो गया कि वह तो ईमान ही का कलिमा था।

खुलासा यह है कि जिस वक़्त रूह निकल रही हो और नज़ा का आलम हो वह वक़्त दुनिया की ज़िन्दगी में शुमार नहीं, उस वक़्त का कोई अमल भी शरअन मोतबर नहीं, उससे पहले पहले हर अमल मोतबर है। मगर देखने वालों को इसमें बड़ी एहतियात लाज़िम है, क्योंकि इसका सही अन्दाज़ा करने में ग़लती हो सकती है कि यह वक़्त रूह के निकलने का और गरगरा-ए-मौत का है या उससे पहले का।

فَالْيَوْمَ نَبْجِيكَ بِبَدَنِكَ لِتَكُونَ لِمَنْ خَلَقَكَ آيَةً ۖ وَإِنَّ كَثِيرًا مِّنَ النَّاسِ عَنْ آيَاتِنَا لَغَفِلُونَ ۚ وَلَقَدْ بَوَّأْنَا بَنِي إِسْرَءِيلَ مَبُوءًا صَدَقَ وَرَرَقْنَهُمْ مِّنَ الطَّيِّبَاتِ ۖ فَمَا اخْتَلَفُوا حَتَّىٰ جَاءَهُمُ الْعِلْمُ ۚ إِنَّ رَبَّكَ يَقْضِي بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيَمَةِ فِيمَا كَانُوا فِيهِ يَخْتَلِفُونَ ۚ فَإِن كُنْتَ فِي شَكٍّ مِّمَّا أَنزَلْنَا إِلَيْكَ فَسْأَلِ الَّذِينَ يُقْرَأُونَ الْكِتَابَ مِنْ قَبْلِكَ ۖ لَقَدْ جَاءَكَ الْحَقُّ مِنْ رَبِّكَ فَلَا تَكُونَنَّ مِنَ الْمُمْتَرِينَ ۚ وَلَا تَكُونَنَّ مِنَ الَّذِينَ كَذَبُوا بِآيَاتِ اللَّهِ فَتَكُونُوا مِنَ الْخَاسِرِينَ ۚ إِنَّ الَّذِينَ حَقَّتْ عَلَيْهِمْ كَلِمَةُ رَبِّكَ لَا يُؤْمِنُونَ ۚ وَلَوْ جَاءَتْهُمْ كُلُّ آيَةٍ حَتَّىٰ يَرَوْا الْعَذَابَ الْأَلِيمَ ۚ فَلَوْلَا كَانَتْ قَرْيَةٌ أَمِنَتْ فَتَنْفَعَهَا إِيمَانُهَا إِلَّا قَوْمَ يُونُسَ ۖ لَمَّا آمَنُوا كَشَفْنَا عَنْهُمْ عَذَابَ الْخِزْيِ فِي الْحَيَاةِ الدُّنْيَا وَمَتَّعْنَاهُمْ إِلَىٰ حِينٍ ۚ

फ़ल्यौ-म नुनज्जी-क बि-ब-दनि-क
लितकू-न लिमन् ख़ल्फ-क आयतन्,
व इन्-न-कसीरम् मिनन्नासि अन्
आयातिना लगाफिलून (92) ●

व ल-कद् बव्वअना बनी इस्राई-ल
मुबव्व-अ सिदकिंव-व रज़क्रनाहुम्
मिनत्तय्यिबाति फ़मख़्त-लफू हत्ता
जा-अहुमुल्-अिल्मु, इन्-न रब्ब-क

सो आज बचाये देते हैं हम तेरे बदन को ताकि हो तू अपने पिछलों के वास्ते निशानी, और बेशक बहुत लोग हमारी कुदरतों पर तवज्जोह नहीं करते। (92) ●

और जगह दी हमने बनी इस्राईल को पसन्दीदा जगह और खाने को दी सुथरी चीज़ें सो उनमें फूट नहीं पड़ी यहाँ तक कि पहुँची उनको ख़बर, बेशक तेरा रब उनमें फैसला करेगा कियामत के दिन

यक्ज़ी बैनहुम् यौमल्-कियामति
 फीमा कानू फीहि यख़लिफ़ून (93)
 फ़-इन् कुन्-त फी शक्किम् मिम्मा
 अन्ज़ल्ना इलै-क फ़स्अलिल्लज़ी-न
 यक़्रऊनल्-किता-ब मिन् कब्लि-क
 ल-कद् जा-अकल्-हक्कु मिर्बिबि-क
 फ़ला तकूनन्-न मिनल्-मुम्तरीन
 (94) व ला तकूनन्-न मिनल्लज़ी-न
 कज़्ज़बू बिआयातिल्लाहि फ़-तकू-न
 मिनल्लज़ासिरीन (95) इन्नल्लज़ी-न
 हक्कत् अलैहिम् कलि-मतु रब्बि-क
 ला युअ्मिनून (96) व लौ जाअहुम्
 कुल्लु आयतिन् हत्ता य-रवुल्
 अज़ाबल्-अलीम (97) फ़लौ ला
 कानत् करयतुन् आम-नत्
 फ़-न-फ़-अहा ईमानुहा इल्ला कौ-म
 यूनु-स, लम्मा आमनू कशफ़ना
 अन्हुम् अज़ाबल्-छिज़ि य
 फिल्हयातिदुन्या व मत्तज़्नाहुम्
 इला हीन (98)

जिस बात में कि उनमें फूट पड़ी। (93)
 सो अगर तू है शक में उस चीज़ से जो
 कि उतारी हमने तेरी तरफ़ तो पूछ उनसे
 जो पढ़ते हैं किताब तुझसे पहले, बेशक
 आई है तेरे पास हक़ बात तेरे रब से, सो
 तू हरगिज़ मत हो शक करने वाला। (94)
 और मत हो उनमें जिन्होंने झुठलाया
 अल्लाह की बातों को फिर तू भी हो
 जाये ख़राबी में पड़ने वाला। (95) जिन
 पर साबित हो चुकी बात तेरे रब की वे
 ईमान न लायेंगे। (96) अगरचे पहुँचें
 उनको सारी निशानियाँ, जब तक न देख
 लें वे दर्दनाक अज़ाब। (97) सो क्यों न
 हुई कोई बस्ती कि ईमान लाती फिर काम
 आता उनको ईमान लाना मगर यूनस की
 कौम, जब वह ईमान लाई उठा लिया हमने
 उन पर से ज़िल्लत का अज़ाब दुनिया की
 ज़िन्दगानी में, और फ़ायदा पहुँचाया हमने
 उनको एक वक़्त तक। (98)

खुलासा-ए-तफ़्सीर

सो (जो तू निजात चाहता है उसके बजाय) आज हम तेरे बदन (यानी तेरी लाश को, पानी में नीचे बैठ जाने से) निजात देंगे, ताकि तू उनके लिये (इब्रत का) निशान हो जो तेरे बाद (मौजूद) हैं (कि तेरी बदहाली और तबाही देखकर अल्लाह के अहक़ाम की मुख़ालफ़त से बचें) और हकीक़त यह है कि (फिर भी) बहुत-से आदमी हमारी (ऐसी-ऐसी) निशानियों से (यानी सीधे लेने वाली चीज़ों से) ग़ाफ़िल हैं (और अल्लाह के अहक़ाम की मुख़ालफ़त से नहीं डरते)।

और हमने (फिरऔन को गुर्क करने के बाद) बनी इस्राईल को बहुत अच्छा ठिकाना रहने को दिया (कि उस वक्त तो मिस्र के मालिक हो गये और उनकी पहली ही नस्ल को बैतुल-मुकद्दस और मुल्के शाम अमालिका पर फतह देकर अता फरमाया) और हमने उनको उम्दा और पाक चीजें (बागों और चश्मों वगैरह से) खाने को दीं। (मिस्र में भी बागात व चश्मे थे और मुल्क शाम के बारे में 'बारक्ना फीहा' आया है) सो (चाहिये था कि हमारी इताअत में ज्यादा सक्रिय रहते लेकिन उन्होंने उल्टा दीन में इख़िलाफ़ करना शुरू किया और ग़ज़ब यह कि) उन्होंने जहालत की वजह से) इख़िलाफ़ नहीं किया, यहाँ तक कि उनके पास (अहकाम का) इल्म हुँच गया (था और फिर इख़िलाफ़ किया। आगे उस इख़िलाफ़ व झगड़े पर वर्द है कि) हीनी बात है कि आपका रब उन (इख़िलाफ़ करने वालों) के बीच कियामत के दिन उन वालों में (अमली) फैसला करेगा जिनमें वे इख़िलाफ़ किया करते थे। फिर (दीने मुहम्मदी की वक्त को साबित करने के वास्ते हम एक ऐसा काफी तरीका बतलाते हैं कि जिसके पास ग़ाह की वही न आयी हो उसके लिये तो कैसे काफी न होगा, वह ऐसा है कि आप वही वाले पैग़म्बर हैं मगर आप से भी इसका ख़िताब अगर एक शर्त के साथ किया जाये तो मुम्किन है, (यह तरह से कि) अगर मान लीजिये आप उस (किताब) की तरफ़ से शक (व शुब्हे) में हों जिसे हमने आपके पास भेजा है, तो (उस शक के दूर करने का एक आसान तरीका यह भी है कि आप उन लोगों से पूछ लीजिये जो आप से पहले (की) किताबों को पढ़ते हैं (मुराद तौरात इन्जील हैं, वे एक पढ़ने वाले की हैसियत से इसकी भविष्यवाणियों की बिना पर इस कुरआन को सच बतलाएँगे), बेशक आपके पास आपके रब की तरफ़ से सच्ची किताब आई है, आप न शक करने वालों में न हों। और न (शक करने वालों से बढ़कर) उन लोगों में से हों जिनको अल्लाह तआला की आयतों को झुठलाया, कहीं आप (अल्लाह अपनी पनाह में रखे) तबाह न जाएँ।

यर्क जिन लोगों के हक़ में आपके रब की (यह तकदीरी) बात (कि ईमान न लाएँगे) साबित हो चुकी है वे (कभी) ईमान न लाएँगे। चाहे उनके पास (हक़ के सबूत की) तमाम दलीलें पहुँच गईं, जब तक कि दर्दनाक अज़ाब को न देख लें (मगर उस वक्त ईमान फ़ायदेमन्द नहीं होता)। आँचे (जिन बस्तियों पर अज़ाब आ चुका है उनमें से) कोई बस्ती ईमान न लाई कि ईमान ले उसको फ़ायदेमन्द होता, (क्योंकि उनके ईमान के साथ अल्लाह की मर्ज़ी शामिल न हुई थी)। मगर यूनुस (अलैहिस्सलाम) की कौम, (कि उनके ईमान के साथ अल्लाह की मशीयत शामिल हुई थी, इसलिये वे आने वाले अज़ाब की प्रारम्भिक निशानियों को देखकर ईमान ले आये, 1) जब वे ईमान ले आये तो हमने रुस्वाई के अज़ाब को दुनियावी ज़िन्दगी में उन पर से टाल दिया, और उनको एक खास वक्त (यानी मौत के वक्त) तक (खैर व ख़ूबी के साथ) ऐश "याने न व सुकून" दिया (पस दूसरी बस्तियों का ईमान न लाना और कौमे यूनुस का ईमान लाना व अल्लाह की मशीयत व मर्ज़ी से हुए)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

पहली आयत में फिरऔन को खिताब करके इरशाद फ़रमाया कि पानी में ग़र्क होने के बाद हम तेरे बदन को पानी से निकाल देंगे, ताकि तेरा यह बदन बाद के लोगों के लिये अल्लाह की क़ुदरत की निशानी और इब्त बन जाये।

इसका वाकिआ यह है कि दरिया से पार होने के बाद जब हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम बनी इस्राईल को फिरऔन के हलाक होने की ख़बर दी तो वे लोग फिरऔन से कुछ इस क़द मरऊब व मग़लूब थे कि इसका इनकार करने लगे और कहने लगे कि फिरऔन हलाक नहीं हुआ, अल्लाह तआला ने उनकी रहनुमाई और दूसरों की इब्त के लिये दरिया की एक लहर को ज़रिये फिरऔन की मुर्दा लाश को किनारे पर डाल दिया जिसको सब ने देखा और उसके हलाक होने का यकीन आया, और उसकी यह लाश सब के लिये इब्त का नमूना बन गयी। फिर मालूम नहीं कि इस लाश का क्या अन्जाम हुआ। जिस जगह फिरऔन की लाश पाई गयी थी आज तक वह जगह जबल-ए-फिरऔन के नाम से परिचित है।

कुछ मुद्दत हुई अख़बारों में यह ख़बर छपी थी कि फिरऔन की लाश सही सालिम बरामद हुई और आम लोगों ने उसको देखा और वह आज तक काहिरा के अजायब-घर में सुरक्षित है, मगर यह यकीन से नहीं कहा जा सकता कि यह वही फिरऔन है जिसका मुकाबला हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से हुआ था या कोई दूसरा फिरऔन है, क्योंकि लफ़्ज़ फिरऔन किसी एक शख्स का नाम नहीं, उस ज़माने में मिस्र के हर बादशाह को फिरऔन का लक़ब दिया जाता था।

मगर कुछ अज़ब नहीं कि क़ुदरत ने जिस तरह ग़र्क हुई लाश को इब्त के लिये किनारे पर डाल दिया था इसी तरह आने वाली नस्लों की इब्त के लिये उसको गलने सड़ने से भी महफूज़ रखा हो, और अब तक मौजूद हो।

आयत के आखिर में इरशाद फ़रमाया कि बहुत से लोग हमारी आयतों और निशानियों से गाफ़िल हैं, उनमें ग़ौर व फ़िक्र नहीं करते और इब्त हासिल नहीं करते, वरना आलम के हर ज़र्रे ज़र्रे में ऐसी निशानियाँ मौजूद हैं जिनको देखकर अल्लाह तआला को और उसकी कामिल क़ुदरत को पहचाना जा सकता है।

दूसरी आयत में फिरऔन के बुरे अन्जाम के मुकाबले में उस कौम का भविष्य दिखलाया है जिसको फिरऔन ने हकीर व ज़लील बना रखा था। फ़रमाया कि हमने बनी इस्राईल को अच्छा ठिकाना अता फ़रमाया कि पूरा मुल्के मिस्र भी उनको मिल गया और उर्दुन व फ़िलिस्तीन की पवित्र ज़मीन भी उनको मिल गयी, जिसको अल्लाह तआला ने अपने ख़लील हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम और उनकी औलाद के लिये मीरास बना दिया था।

अच्छे ठिकाने को क़ुरआन में 'मुबव्व-अ सिद्किन्' के लफ़्ज़ से ताबीर किया है। 'सिद्क' के मायने इस जगह नेक और मुनासिब के हैं। मतलब यह है कि ऐसा ठिकाना उनको दिया जो उनके लिये हर एतिबार से लायक और मुनासिब था। फिर फ़रमाया कि हमने उनको हलाल व

पाक चीज़ों से रिज़्क दिया कि दुनिया की तमाम लज़्ज़तें और राहतें उनको अता फ़रमा दीं।

आयत के आखिर में फिर उनकी टेढ़ी चाल और गुलत आमात का ज़िक्र है कि उनमें भी बहुत से लोगों ने सत्ता व ताक़त पाने के बाद अल्लाह तआला की नेमतों की कद्र न की और उसकी इताअत से फिर गये। तौरात में जो निशानियाँ रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ये लोग पढ़ते थे उसका तकाज़ा यह था कि आपके तशरीफ़ लाने के बाद सबसे पहले यही लोग ईमान लाते, मगर यह अजीब इत्तिफ़ाक़ हुआ कि हुजूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के तशरीफ़ लाने से पहले तो ये सब लोग नबी-ए-आख़िरुज़्ज़माँ पर एतिकाद रखते और उनकी निशानियाँ और उनके ज़ाहिर होने का वक़्त करीब होने की ख़बरें लोगों को बताया करते थे और अपनी दुआओं में नबी-ए-आख़िरुज़्ज़माँ का वसीला देकर दुआ किया करते थे, मगर जब नबी-ए-आख़िरुज़्ज़माँ अपनी पूरी गवाहियों और तौरात की बतलाई हुई निशानियों के साथ तशरीफ़ लाये तो ये लोग आपस में इख़िलाफ़ (मतभेद) करने लगे, कुछ लोग ईमान लाये बाकियों ने इनकार किया। इस आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के तशरीफ़ लाने को लफ़्ज़ 'जा-अहुमुल्-इल्मु' से ताबीर किया है। यहाँ 'इल्म' से मुराद यकीन भी हो सकता है, तो मायने यह होंगे कि जब सुबूत और आँखों देखे के साथ यकीन के असबाब जमा हो गये तो ये लोग इख़िलाफ़ (मतभेद और विवाद) करने लगे।

और कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि इस जगह इल्म से मुराद मालूम है, यानी जब वह हस्ती सामने आ गयी जो तौरात की भविष्यवाणियों के ज़रिये पहले से मालूम थी तो अब लगे इख़िलाफ़ करने।

आयत के आखिर में फ़रमाया कि अल्लाह तआला कियामत के दिन उनके इख़िलाफ़ का फैसला फ़रमा देंगे, हक़ व बातिल निखर जायेगा, हक़ वाले जन्नत में और बातिल (ग़ैर-हक़) वाले दोज़ख़ में भेजे जायेंगे।

तीसरी आयत में बज़ाहिर ख़िताब नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को है मगर यह ज़ाहिर है कि आपको वही में शक़ होने की संभावना और गुमान नहीं, इसलिये इस ख़िताब के ज़रिये मक़सूद उम्मत को सुनाना है, खुद आप मक़सूद नहीं। और यह भी हो सकता है कि यह ख़िताब आम इनसान को हो, कि ऐ इनसान! अगर तुझको अल्लाह की इस वही में कोई शक़ है जो मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के माध्यम से तेरी तरफ़ भेजी गयी तो तू उन लोगों से मालूम कर जो तुझसे पहले अल्लाह की किताब तौरात व इन्जील पढ़ते थे, वे तुझे बतलायेंगे कि पिछले तमाम अम्बिया अलैहिमुस्सलाम और उनकी किताबें मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खुशख़बरी देती आई हैं, जिससे तेरी शंकायें दूर हो जायेंगी।

तफ़्सीर-ए-मज़हरी में है कि इस आयत से मालूम हुआ कि जिस शख्स को दीन के मामले में कोई शुब्हा पेश आ जाये तो उस पर लाज़िम है कि उलेमा-ए-हक़ से सवाल करके अपने शुब्हों को दूर करे, उनको पालता न रहे।

चौथी, पाँचवीं और छठी आयतों में इसी मज़मून की ताईद व ताकीद और ग़फ़लत बरतने

वालों को चेतावनी है।

सातवीं आयत में ग़फ़लत बरतने वाले इनकारी लोगों को इस पर तंबीह की गयी है कि ज़िन्दगी की फ़ुर्सत को ग़नीमत जानो, इनकार व नाफ़रमानी से अब भी बाज़ आ जाओ, वरना एक ऐसा वक़्त आने वाला है जब तौबा करोगे तो तौबा कुबूल न होगी, ईमान लाओगे तो ईमान मक़बूल न होगा, और वह वक़्त वह होगा जबकि मौत के वक़्त आख़िरत का अज़ाब सामने आ जाये। इसी सिलसिले में हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम और उनकी कौम का एक वाक़िआ ज़िक्र फ़रमाया गया जिसमें बड़ी इब्तें और नसीहतें हैं।

इस आयत में इरशाद है कि ऐसा क्यों न हुआ कि इनकारी कौम ऐसे वक़्त ईमान ले आतीं कि उनका ईमान उनको नफ़ा देता, यानी मौत के वक़्त या अज़ाब ज़ाहिर होने और अज़ाब में मुब्तला हो चुकने के बाद या क़ियामत कायम होने के वक़्त जबकि तौबा का दरवाज़ा बन्द हो जायेगा किसी की तौबा और ईमान मक़बूल न होगा, उससे पहले पहले अपनी नाफ़रमानी व हठधर्मी से बाज़ आ जातीं और ईमान ले आतीं, सिवाय यूनुस अलैहिस्सलाम की कौम के, कि उन्होंने ऐसा वक़्त आने से पहले ही जब खुदा तआला का अज़ाब आता देखा तो फौरन तौबा कर ली और ईमान ले आये, जिसकी वजह से हमने उनसे रुस्वा करने वाला अज़ाब हटा लिया।

इस तफ़सीर का हासिल यह है कि दुनिया का अज़ाब सामने आ जाने पर भी तौबा का दरवाज़ा बन्द नहीं होता बल्कि तौबा हो सकती है, लेकिन आख़िरत का अज़ाब सामने आ जाने के वक़्त तौबा कुबूल नहीं होती, और आख़िरत के अज़ाब का सामने आना या तो क़ियामत के दिन होगा या मौत के वक़्त, चाहे वह तबई मौत हो या किसी दुनियावी अज़ाब में मुब्तला होकर हो, जैसे फिरज़ौन को पेश आया।

इसलिये यूनुस अलैहिस्सलाम की कौम की तौबा कुबूल हो जाना अल्लाह के आम उसूल के खिलाफ़ नहीं बल्कि उसके मातहत है, क्योंकि उन्होंने अगरचे अज़ाब आता हुआ देखकर तौबा की मगर अज़ाब में मुब्तला होने और मौत से पहले कर ली, जबकि फिरज़ौन और दूसरे लोगों ने अज़ाब में मुब्तला होने के बाद और गरगरा-ए-मौत के वक़्त तौबा की और ईमान का इक़रार किया इसलिये उनका ईमान मोतबर न हुआ और तौबा कुबूल न हुई।

यूनुस अलैहिस्सलाम की कौम के वाक़िआ की एक नज़ीर खुद क़ुरआने करीम में बनी इस्राईल का वह वाक़िआ है जिसमें तूर पहाड़ को उनके सरो पर लटका करके उनको डराया गया और तौबा करने का हुक्म दिया गया, उन्होंने तौबा कर ली तो वह तौबा कुबूल हुई, जिसका ज़िक्र सूरः ब-क़रह में आया है:

رَفَعْنَا فَوْقَكُمُ الطُّورَ خُلُودًا مَا تَبْتَغُونَ

‘हमने उनके सरो पर तूर पहाड़ को लटकाकर हुक्म दिया कि जो अहक़ाम तुम्हें दिये गये हैं उनको मज़बूती से पकड़ो।’

वजह यह थी कि उन्होंने अज़ाब के पड़ने और मौत में मुब्तला होने से पहले महज़ अज़ाब

अन्देश देखकर तौबा कर ली थी। इसी तरह यूनस अलैहिस्सलाम की कौम ने अज़ाब को आता हुआ देखकर सच्चे दिल और रो-गिड़गिड़ा कर तौबा कर ली जिसकी तफ़सील आगे आती है, तो उस तौबा का कुबूल हो जाना ज़िक्र हुए नियम के खिलाफ़ नहीं। (तफ़सीर कुर्तुबी)

इस जगह मौजूदा ज़माने के बाज़ हज़रात से एक सख्त गुलती हुई है कि हज़रत यूनस अलैहिस्सलाम की तरफ़ रिसालत के फ़रीज़े के अदा करने में कोताहियों की निस्बत कर दी और कौम से अज़ाब हट जाने का सबब पैग़म्बर की कोताही को करार दिया, और उसी कोताही को उन पर नाराज़गी का सबब बनाया जिसका ज़िक्र सूर: अम्बिया और सूर: सौफ़ात में आया है। उनके अलफ़ाज़ ये हैं:

“क़ुरआन के इशारात और सहीफ़ा-ए-यूनस की तफ़सीलात पर ग़ौर करने से इतनी बात साफ़ मालूम हो जाती है कि हज़रत यूनस अलैहिस्सलाम से फ़रीज़ा-ए-रिसालत अदा करने में कुछ कोताहियाँ हो गयी थीं और ग़ालिबन उन्होंने बेसब्र होकर वक़्त से पहले अपना ठिकाना छोड़ दिया था इसलिये जब अज़ाब के आसार देखकर आशोरियों ने तौबा व इस्तिग़फ़ार की तो अल्लाह तआला ने उन्हें माफ़ कर दिया। क़ुरआन में खुदाई दस्तूर के जो उसूल व नियम बयान किये गये हैं उनमें एक मुस्तक़िल धारा यह भी है कि अल्लाह तआला किसी कौम को उस वक़्त तक अज़ाब नहीं देता जब तक उस पर अपनी हुज्जत पूरी नहीं कर देता, पस जब नबी अल्लाह के पैग़ाम (रिसालत) की अदायेगी में कोताही कर गया और अल्लाह के मुकर्रर किये गये वक़्त से पहले खुद ही अपनी जगह से हट गया तो अल्लाह तआला के इन्साफ़ ने उस कौम को अज़ाब देना ग़वारा न किया। (तफ़हीमुल-क़ुरआन, मौलाना मौदूदी, पेज 312 जिल्द 2, प्रकाशित सन् 1964 ईसवी) (1)

यहाँ सबसे पहले देखने की बात यह है कि अम्बिया अलैहिमुस्सलाम का गुनाहों से मासूम (पाक और सुरक्षित) होना तो एक माना हुआ अक़ीदा है जिस पर तमाम उम्मत का इजमा (इत्तिफ़ाक़) है, इसकी तफ़सीलात में कुछ आंशिक मतभेद भी हैं कि यह सुरक्षित होना हर किस्म के छोटे गुनाहों से है या सिर्फ़ बड़े गुनाहों से, और यह कि यह मासूम होना नुबुव्वत से पहले के ज़माने को भी शामिल है या नहीं, लेकिन इसमें किसी फ़िर्के किसी शख्स का मतभेद नहीं है कि अम्बिया अलैहिमुस्सलाम सब के सब अपनी रिसालत की अदायेगी के फ़रीज़े में कभी कोताही

(1) तफ़सीर तफ़हीमुल-क़ुरआन के बाद के संस्करणों में इस इबारत से किसी रुजू के ऐलान के बग़ैर यहाँ इबारत में मामूली तब्दीली की गयी है यानी “फ़रीज़ा-ए-रिसालत की अदायेगी में कोताही” के अलफ़ाज़ नई इबारत में मौजूद नहीं, लेकिन यह बात अब भी इबारत में बाकी है कि “जब नबी ने उस कौम के मोहलत के आखिरी लम्हे तक नसीहत का सिलसिला जारी न रखा और अल्लाह के मुकर्रर किये हुए वक़्त से पहले खुद ही वह हिजरत कर गया तो अल्लाह तआला के इन्साफ़ ने उसकी कौम को अज़ाब देना ग़वारा न किया, क्योंकि उस पर हुज्जत पूरी होने की कानूनी शर्त पूरी नहीं हुई थी।” लिहाज़ा ‘तफ़हीमुल-क़ुरआन’ की इबारत में तब्दीली के बावजूद ‘मज़ारिफ़ुल-क़ुरआन’ की टिप्पणी अपनी असली हालत पर बरकरार है।

प्रकाशक (अक्टूबर सन् 1991 ई.)

नहीं कर सकते, क्योंकि अम्बिया के लिये इससे बड़ा कोई गुनाह नहीं हो सकता कि जिस पर और जिम्मेदारी के लिये अल्लाह तआला ने उनका चयन फरमाया है खुद उसी में कोताही कर बैठें। यह तो अपने ओहदे की जिम्मेदारी में खुली हुई ख़ियानत है जो आम शरीफ़ इनसानों से भी दूर की बात है, इस कोताही से भी अगर पैग़म्बर मासूम (बचने वाला और सुरक्षित) न हुआ तो फिर दूसरे गुनाहों से बचना और सुरक्षित होना बेफ़ायदा है।

क़ुरआन व सुन्नत के माने हुए उसूल और इत्तिफ़ाके राय वाले अक़ीदे यानी नबियों के गुनाहों से सुरक्षित होने के बज़ाहिर ख़िलाफ़ अगर किसी जगह क़ुरआन व हदीस में भी कोई बात नज़र आती तो माने हुए उसूल की रू से ज़रूरी था कि उसकी तफ़सीर व मायने की ऐसी वज़ाहत व व्याख्या तलाश की जाती, जिससे वह क़ुरआन व हदीस के निश्चित और न कटने वाले उसूल से भिन्न और टकराने वाली न रहे।

मगर यहाँ तो अजीब बात यह है कि लेखक (यानो तफ़सीर तफ़हीमुल-क़ुरआन के लेखक मौलाना मौदूदी) ने जिस बात को क़ुरआनी इशारात और सहीफ़ा-ए-यूनुस की तफ़सीलात के हवाले से पेश किया है वह सहीफ़ा-ए-यूनुस में हो तो हो जिसका इस्लाम के मानने वालों में कोई एतिबार नहीं, क़ुरआनी इशारा तो एक भी नहीं। बल्कि हुआ यह कि कई मुक़द्दमे जोड़कर यह नतीजा ज़बरदस्ती निकाला गया है। पहले तो यह फ़र्ज़ कर लिया गया कि कौमे यूनुस से अज़ाब का टल जाना खुदाई दस्तूर के ख़िलाफ़ वाक़े हुआ, जो खुद इसी आयत के आगे पीछे के मज़मून के भी बिल्कुल ख़िलाफ़ है और तहकीक़ का दर्जा रखने वाले तफ़सीर के इमामों की वज़ाहतों व स्पष्टताओं के भी ख़िलाफ़ है। इसके साथ यह फ़र्ज़ कर लिया गया कि खुदाई क़ानून को इस मौक़े पर इसलिये तोड़ा गया था कि खुद पैग़म्बर से रिसालत के फ़रीज़े की अदायगी में कोताहियाँ हो गयी थीं। इसके साथ यह भी फ़र्ज़ कर लिया कि पैग़म्बर के लिये अल्लाह तआला की तरफ़ से कोई खास वक़्त निकलने का मुक़र्रर कर दिया गया था, वह उस मुक़र्ररा वक़्त से पहले दावत के फ़रीज़े को छोड़कर भाग खड़े हुए।

अगर ज़रा भी ग़ौर व इन्साफ़ से काम लिया जाये तो साबित हो जायेगा कि क़ुरआन व हदीस का कोई इशारा इन फ़र्ज़ी मुक़द्मात की तरफ़ नहीं पाया जाता। खुद क़ुरआन की आयत के मज़मून पर ग़ौर कीजिए तो आयत के अलफ़ाज़ ये हैं:

فَلَوْلَا كَانَتْ قَرْيَةٌ آمَنَتْ فَنَفَعَهَا إِيمَانُهَا إِلَّا قَوْمٌ يُونُسَ.

जिसका मफ़हूम साफ़ यह है कि दुनिया के आम बस्ती वालों के बारे में अफ़सोस का इज़हार करके यह इरशाद है कि वे ऐसे क्यों न हो गये कि ईमान उस वक़्त ले आते जिस वक़्त तक ईमान मक़बूल और नफ़ा देने वाला होता है, यानी अज़ाब में या मौत में मुब्तला होने से पहले पहले ईमान ले आते तो उनका ईमान क़बूल हो जाता, मगर कौमे यूनुस इससे अलग है कि वह अज़ाब के आसार और निशानियाँ देखकर अज़ाब में मुब्तला होने से पहले ही ईमान ले आई तो उनका ईमान और तौबा क़बूल हो गयी।

आयत का यह स्पष्ट मफ़हूम खुद बतला रहा है कि यहाँ कोई खुदाई क़ानून नहीं तोड़ा गया

बल्कि खुदाई दस्तूर के मुताबिक ही उनका ईमान और तौबा कुबूल कर ली गयी है।

अक्सर मुफ़्सीरीन- बहरे मुहीत, कुर्तुबी, ज़मख़शरी, मज़हरी, रूहुल-मज़ानी वगैरह के लेखकों ने आयत का यही मफ़हूम लिखा है जिसमें यूनस अलैहिस्सलाम की कौम की तौबा कुबूल होना अल्लाह के आम क़ानून के तहत है। तफ़्सीरे कुर्तुबी के अलफ़ाज़ ये हैं:

وقال ابن جُبَيْر غَشِيَهُم الْعَذَابُ كَمَا يَغْشَى الثُّوبُ الْقَبْرَ فَلَمَّا صَحَّتْ قُوتَبُهُمْ رَفَعَ اللَّهُ عَنْهُمْ الْعَذَابَ وَقَالَ الطَّبْرِيُّ خَصَّ قَوْمَ يُونُسَ مِنْ بَيْنِ سَائِرِ الْأُمَمِ بِأَنْ تَيَّبَ عَلَيْهِمْ بَعْدَ مُعَابِنَةِ الْعَذَابِ وَذَكَرَ ذَلِكَ عَنْ جَمَاعَةٍ مِنَ الْمَفْسَرِينَ وَقَالَ الزَّجَّاجُ إِنَّهُمْ لَمْ يَقَعْ بِهِمُ الْعَذَابُ وَإِنَّمَا رَأَوْا الْعَلَامَةَ الَّتِي تَدُلُّ عَلَى الْعَذَابِ وَلَوْ رَأَوْا عَيْنَ الْعَذَابِ لَمَا نَفَعَهُمْ إِيْمَانُهُمْ. قُلْتُ قَوْلُ الزَّجَّاجِ حَسَنٌ فَإِنَّ الْمُعَابِنَةَ الَّتِي لَا تَنْفَعُ التَّوْبَةَ مَعَهَا هِيَ التَّلَبُّسُ بِالْعَذَابِ كَقِصَّةِ فِرْعَوْنَ وَلِهَذَا جَاءَ بِقِصَّةِ قَوْمِ يُونُسَ عَلَى الرِّقْصَةِ فِرْعَوْنَ وَيَعْضُدُ هَذَا قَوْلَهُ عَلَيْهِ السَّلَامُ إِنَّ اللَّهَ يَقْبَلُ تَوْبَةَ الْعَبْدِ مَا لَمْ يُغْرِغْ وَالْغُرْغُرَةُ الْحَشْرَجَةُ وَذَلِكَ هُوَ حَالُ التَّلَبُّسِ بِالْمَوْتِ وَقَدْ رَوَى مَعْنَى مَا قُلْنَا عَنْ ابْنِ مَسْعُودٍ (الْي) وَهَذَا يَدُلُّ عَلَى أَنَّ تَوْبَتَهُمْ قَبْلَ رُؤْيَا الْعَذَابِ (الْي) وَعَلَى هَذَا فَلَا اشْكَالَ وَلَا تَعَارُضَ وَلَا اخْتِصَاصَ.

तर्जुमा: इब्ने जुबैर कहते हैं कि अज़ाब ने उनको इस तरह ढाँप लिया था जैसे कब्र पर चादर, फिर चूँकि उनकी तौबा सही हो गयी (कि अज़ाब उन पर पड़ने से पहले थी) तो उनका अज़ाब उठा दिया गया। तबरी फ़रमाते हैं कि यूनस अलैहिस्सलाम की कौम को दुनिया की तमाम कौमों से यह खुसूसियत दी गयी है कि अज़ाब देखने के बाद उनकी तौबा कुबूल कर ली गयी। जुज़ाज ने फ़रमाया कि उन लोगों पर अभी अज़ाब पड़ा नहीं था बल्कि अज़ाब की निशानियाँ देखी थीं और अगर अज़ाब पड़ जाता तो उनकी तौबा भी कुबूल न होती। कुर्तुबी फ़रमाते हैं कि जुज़ाज का कौल अच्छा और बेहतर है क्योंकि जिस अज़ाब के देखने के बाद तौबा कुबूल नहीं होती वह वह है कि अज़ाब में मुब्तला हो जाये, जैसा कि फिरऔन के वाकिए में पेश आया, और इसी लिये इस सूर: में कौमे यूनस का वाक़िआ फिरऔन के वाक़िआ के बाद साथ ही ज़िक्र फ़रमाते हैं, ताकि फ़र्क़ वाज़ेह हो जाये कि फिरऔन का ईमान अज़ाब में मुब्तला होने के बाद था, बख़िलाफ़ कौमे यूनस के, कि वह अज़ाब के पड़ने से पहले ही ईमान ले आई। इस बात की ताईद हुज़ुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इस इरशाद से भी होती है कि अल्लाह तआला बन्दे की तौबा उस वक़्त तक कुबूल फ़रमाता है जब तक वह गरगरे की हालत में न पहुँच जाये, और गरगरा मौत के वक़्त तारी होने वाली हालत को कहते हैं, और यही बात हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मालूम होती है जिसमें बतलाया है कि कौमे यूनस ने अज़ाब के पड़ने से पहले तौबा कर ली थी। अल्लामा कुर्तुबी फ़रमाते हैं कि इस तकरीर व तफ़्सीर पर न कोई इश्काल है न टकराव, न कौमे यूनस की विशेषता।

और इमाम तबरी वगैरह मुफ़्तिरीन ने भी जो इस वाकिए को यूनुस अलैहिस्सलाम की कौम की खुसूसियत बतलाया है उनमें से भी किसी ने यह नहीं कहा कि इस खुसूसियत का सबब यूनुस अलैहिस्सलाम की कोताहियाँ थीं, बल्कि उस कौम का सच्चे दिल से तौबा करना और अल्लाह के इल्म में मुख़्तस होना वगैरह वुजूहात लिखी हैं।

और जब यह मालूम हो गया कि कौमे यूनुस का अज़ाब टल जाना कुदरत के आम कानून के खिलाफ़ ही नहीं था बल्कि ऐन मुताबिक़ था तो इस कलाम की बुनियाद ही ख़त्म हो गयी।

इसी तरह किसी कुरआनी इशारे से यह साबित नहीं कि अज़ाब की वईद (धमकी) सुनने के बाद यूनुस अलैहिस्सलाम अल्लाह की इजाज़त के बग़ैर अपनी कौम से अलग हो गये, बल्कि आयतों के मज़मून और तफ़्सीरी रिवायतों से यही मालूम होता है कि जैसे पिछली तमाम उम्मतों के साथ मामला होता आया था कि जब उनकी उम्मत पर अज़ाब आने का फैसला कर लिया जाता तो अल्लाह तआला अपने रसूल और उनके साथियों को वहाँ से निकल जाने का हुक्म दे देते थे, जैसे लूत अलैहिस्सलाम का वाकिआ स्पष्ट रूप से कुरआन में बयान हुआ है, इसी तरह यहाँ भी जब अल्लाह का यह हुक्म यूनुस अलैहिस्सलाम के ज़रिये उन लोगों को पहुँचा दिया गया कि तीन दिन के बाद अज़ाब आयेगा तो यूनुस अलैहिस्सलाम का उस जगह से निकल जाना ज़ाहिर यही है कि अल्लाह के हुक्म से हुआ है।

अलबत्ता यूनुस अलैहिस्सलाम से जो पैग़म्बराना शान के एतिबार से एक चूक हुई और उस पर सूर: अम्बिया और सूर: सौफ़ात की आयतों में नाराज़गी के अलफ़ाज़ आये और उसी के नतीजे में मछली के पेट में रहने का वाकिआ पेश आया, वह यह नहीं कि उन्होंने रिसालत के फ़रीजे में कोताही कर दी थी, बल्कि वाकिआ वह है जो ऊपर विश्वसनीय तफ़्सीरों के हवाले से लिखा गया है कि जब यूनुस अलैहिस्सलाम ने अपनी कौम को अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ तीन दिन के बाद अज़ाब के आने की वईद सुना दी और फिर अल्लाह की इजाज़त से अपनी जगह को छोड़कर बाहर चले गये और बाद में यह साबित हुआ कि अज़ाब नहीं आया तो अब यूनुस अलैहिस्सलाम को इसकी फ़िक्र लाहिक़ हुई कि मैं अपनी कौम में वापस जाऊँगा तो झूठा करार दिया जाऊँगा और उस कौम का यह दस्तूर था कि जिसका झूठ साबित हो जाये उसको क़त्ल कर दें, तो अब अपनी कौम की तरफ़ लौटकर जाने में जान का भी अन्देशा हुआ। ऐसे वक़्त में इसके सिवाय कोई रास्ता न था कि अब उस वतन ही से हिजरत कर जायें, लेकिन अम्बिया अलैहिमुस्सलाम का तरीक़ा और सुन्नत यह है कि जब तक अल्लाह तआला की तरफ़ से हिजरत की इजाज़त न आ जाये महज़ अपनी राय से हिजरत नहीं करते, तो यूनुस अलैहिस्सलाम की चूक यह थी कि अल्लाह की इजाज़त आने से पहले हिजरत का इरादा करके क़श्ती पर सवार हो गये, जो अगरचे अपनी ज़ात में कोई गुनाह नहीं था मगर अम्बिया की सुन्नत से अलग था। अगर कुरआन की आयतों के अलफ़ाज़ में ग़ौर करें तो यूनुस अलैहिस्सलाम की चूक व ख़ता रिसालत के फ़रीजे की अदायेगी में कोई कोताही नहीं बल्कि कौम के जुल्म व सितम से बचने के लिये इजाज़त से पहले हिजरत के सिवा और कुछ नहीं साबित होगी। सूर:

सौफ़ात की आयत इस मज़मून के लिये तकरीबन स्पष्ट है, जिसमें फ़रमाया है:

إِذَا بَقِيَ إِلَى الْفَلَكِ الْمَشْهُونَ ۝

इसमें हिजरत के इरादे से क़स्ती पर सवार होने को अबक़ के लफ़्ज़ से बतौर नाराज़गी के ताबीर किया गया है, जिसके मायने हैं किसी गुलाम का अपने आका की इजाज़त के बग़ैर भाग जाना। और सूर: अम्बिया की आयत में है:

وَذَا النُّونِ إِذْ ذَّهَبَ مُغَاضِبًا فَظَنَّ أَنْ لَنْ نَقْدِرَ عَلَيْهِ ۖ

जिसमें तबई ख़ौफ़ की बिना पर क़ौम से जान बचाकर हिजरत करने को बतौर इताब (नाराज़गी) के इस सख़्त उनवान से बयान फ़रमाया है। और यह सब रिसालत की ज़िम्मेदारी की मुकम्मल अदायेगी के बाद उस वक़्त पेश आया जबकि अपनी क़ौम में वापस जाने से जान का ख़तरा महसूस हो गया। तफ़सीर रुहुल-मअानी में यही मज़मून इन अलफ़ाज़ में लिखा है:

ای غضبان علی قومہ لشدة شکمتهم وتمادی اصرارهم مع طول دعوتہ ایاہم وکان ذهابہ هذا سہم

ہجرة عنهم لكنه لم يؤمر به.

यानी यूनस अलैहिस्सलाम अपनी क़ौम से नाराज़ होकर इसलिये चल दिये कि क़ौम की सख़्त मुखालफ़त और अपने कुफ़्र पर अड़े होने के बावजूद लम्बे ज़माने तक रिसालत की दावत पहुँचाते रहने को देख चुके थे और उनका यह सफ़र हिजरत के तौर पर था मगर अभी तक उनको हिजरत की इजाज़त नहीं मिली थी।

इसमें स्पष्ट कर दिया है कि दावत व रिसालत में कोई कोताही नाराज़गी का सबब नहीं थी बल्कि इजाज़त से पहले हिजरत करना नाराज़गी का कारण बना है जो अपने आप में कोई गुनाह न था मगर अम्बिया की सुन्नत के खिलाफ़ होने की वजह से इस पर नाराज़गी नाज़िल हुई है। हमारे ज़माने के इन लेखक साहिब को कुछ उलेमा ने इस ग़लती पर तवज्जोह दिलाई तो सूर: सौफ़ात की तफ़सीर में उन्होंने अपने पक्ष और राय की हिमायत व ताईद में बहुत से मुफ़सिरीन के अक़वाल भी नक़ल फ़रमाये हैं जिनमें वहब बिन मुनब्बेह वग़ैरह की बाज़ इस्राईली रिवायतों के सिवा किसी से उनका यह पक्ष और राय सही साबित नहीं होती, कि हज़रत यूनस अलैहिस्सलाम से मआज़ल्लाह रिसालत के फ़रीजे की अदायेगी में कोताहियाँ हो गयी थीं।

और यह बात इल्म रखने वालों से छुपी नहीं कि आ़म तौर पर मुफ़सिरीन हज़रात अपनी तफ़सीरों में इस्राईली रिवायतें भी नक़ल कर देते हैं जिनके बारे में उन सब का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि ये रिवायतें विश्वसनीय व मोतबर नहीं, किसी शरई हुक्म का इन पर मदर नहीं रखा जा सकता। इस्राईली रिवायतें चाहे मुस्लिम मुफ़सिरीन की किताबों में हों या सहीफ़ा-ए-यूनस में, सिर्फ़ उन्हीं के सहारे हज़रत यूनस अलैहिस्सलाम पर यह ज़बरदस्त बोहतान लगाया जा सकता है कि उनसे रिसालत के फ़रीजे की अदायेगी में कोताहियाँ हो गयी थीं, और किसी मुस्लिम मुफ़सिर ने इसको कुबूल नहीं किया। और हकीक़त यह है कि अल्लाह तआला ही असल और सबसे ज़्यादा इल्म रखने वाले हैं, हम उन्हीं की बारगाह में दुआ के लिये हाथ उठाते हैं कि वह

हमें ख़ताओं और ग़लतियों से महफ़ूज़ रखें।

हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम का तफ़सीली वाकिआ

हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम का वाकिआ जिसका कुछ हिस्सा तो खुद कुरआन में बयान हुआ है और कुछ हदीस व तारीख़ की रिवायतों से साबित है, वह यह है कि हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम की कौम इराक़ में मूसल के मशहूर मक़ाम नेनवा में बस्ती थी। उनकी संख्या कुरआने करीम में एक लाख से ज़्यादा बतलाई गयी है। उनकी हिदायत के लिये अल्लाह तआला ने यूनुस अलैहिस्सलाम को भेजा। उन्होंने ईमान लाने से इनकार किया, हक़ तआला ने यूनुस अलैहिस्सलाम को हुक्म दिया कि इन लोगों को आगाह कर दो कि तीन दिन के अन्दर अन्दर तुम पर अज़ाब आने वाला है। हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम ने कौम में इसका ऐलान कर दिया, कौमे यूनुस ने आपस में मशिवरा किया तो इस पर सब की सहमति हुई कि हमने कभी यूनुस अलैहिस्सलाम को झूठ बोलते नहीं देखा इसलिये उनकी बात नज़र-अन्दाज़ करने के काबिल नहीं। मशिवरे में यह तय हुआ कि यह देखा जाये कि यूनुस अलैहिस्सलाम रात को हमारे अन्दर अपनी जगह में ठहरे रहते हैं तो समझ लो कि कुछ नहीं होगा, और अगर वह यहाँ से कहीं चले गये तो यकीन कर लो कि सुबह को हम पर अज़ाब आयेगा। हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम अल्लाह के इशारे से रात को उस बस्ती से निकल गये। सुबह हुई तो अल्लाह का अज़ाब एक सियाह धुएँ और बादल की शक़ल में उनके सरो पर मण्डराने लगा और आसमानी फ़िज़ा से नीचे उनके करीब होने लगा तो उनको यकीन हो गया कि अब हम सब हलाक़ होने वाले हैं।

यह देखकर हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम को तलाश किया कि उनके हाथ पर ईमान ले आयें और पिछले इनकार से तौबा कर लें, मगर यूनुस अलैहिस्सलाम को न पाया तो खुद ही सच्ची नीयत के साथ तौबा व इस्तिग़फ़ार में लग गये। बस्ती से एक मैदान में निकल आये, औरतें बच्चे और जानवर सब उस मैदान में जमा कर दिये गये, टाट के कपड़े पहन कर पूरी आज़िजी व विनम्रता के साथ उस मैदान में तौबा करने और अज़ाब से पनाह माँगने में इस तरह मशगूल हुए कि पूरा मैदान रोने-गिड़गिड़ाने और फ़रियाद से गूँजने लगा। अल्लाह तआला ने उनकी तौबा कुबूल फ़रमा ली और अज़ाब उनसे हटा दिया जैसा कि इस आयत में ज़िक्र किया गया है। रिवायतों में है कि यह आशूरा यानी दसवीं मुहर्रम का दिन था।

उधर हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम बस्ती से बाहर इस इन्तिज़ार में थे कि अब इस कौम पर अज़ाब नाज़िल होगा। उनके तौबा व इस्तिग़फ़ार का हाल उनको मालूम न था। जब अज़ाब टल गया तो इनको फ़िक्र हुई कि मुझे झूठा करार दिया जायेगा क्योंकि मैंने ऐलान किया था कि तीन दिन के अन्दर अज़ाब आ जायेगा। उस कौम में क़ानून यह था कि जिस शख़्स का झूठ मालूम हो और वह अपने क़लाम पर कोई गवाही न पेश करे तो उसको क़त्ल कर दिया जाता था। यूनुस अलैहिस्सलाम को फ़िक्र हुई कि मुझे झूठा करार देकर क़त्ल कर दिया जायेगा।

अम्बिया अलैहिमुस्सलाम हर गुनाह व नाफ़रमानी से सुरक्षित व महफ़ूज़ होते हैं मगर

इन्सानो फितरत व तबीयत से अलग नहीं होते। उस वक्त यूनस अलैहिस्सलाम को तबई तौर पर यह मलाल हुआ कि मैंने अल्लाह के हुक्म से ऐलान किया था और अब मैं ऐलान की वजह से झूठा करार दिया जाऊँगा, अपनी जगह वापस जाऊँ तो किस मुँह से जाऊँ, और कौम के कानून के मुताबिक क़त्ल होने का हक्दार बनूँ। इस रंज व ग़म और परेशानी के आलम में उस शहर से निकल जाने का इरादा करके चल दिये यहाँ तक कि रुम के दरिया के किनारे पर पहुँच गये, वहाँ एक कश्ती देखी जिसमें लोग सवार हो रहे थे। यूनस अलैहिस्सलाम को उन लोगों ने पहचान लिया और बग़ैर किराये के सवार कर लिया। कश्ती ख़ाना होकर जब दरिया के बीच में पहुँच गयी तो अचानक ठहर गयी, न आगे बढ़ती है न पीछे चलती है। कश्ती वालों ने मुनादी की कि हमारी इस कश्ती की अल्लाह की ओर से यही शान है कि जब इसमें कोई ज़ालिम, गुनाहगार, भागा हुआ गुलाम सवार हो जाता है तो यह कश्ती अपने आप रुक जाती है, उस आदमी को ज़ाहिर कर देना चाहिये ताकि एक आदमी की वजह से सब पर मुसीबत न आये।

हज़रत यूनस अलैहिस्सलाम बोल उठे कि वह भागा हुआ गुलाम गुनाहगार मैं हूँ। क्योंकि अपने शहर से ग़ायब होकर कश्ती में सवार होना एक तबई ख़ौफ़ की वजह से था, अल्लाह की इजाज़त से न था। इस बग़ैर इजाज़त के इस तरफ़ आने को हज़रत यूनस अलैहिस्सलाम की पैग़म्बराना शान ने एक गुनाह करार दिया कि पैग़म्बर की कोई नक़ल व हरकत बिना इजाज़त के न होनी चाहिये थी, इसलिये फ़रमाया कि मुझे दरिया में डाल दो तो तुम सब इस अज़ाब से बच जाओगे। कश्ती वाले इस पर तैयार न हुए बल्कि उन्होंने कुर्आ डाला ताकि कुरे में जिसका नाम निकल आये उसको दरिया में डाल जाये। इत्तिफ़ाक़ से कुरे में हज़रत यूनस अलैहिस्सलाम का नाम निकल आया। उन लोगों को इस पर ताज्जुब हुआ तो कई मर्तबा कुर्आ डाला, हर मर्तबा तकदीरी और कुदरती हुक्म से हज़रत यूनस अलैहिस्सलाम का ही नाम आता रहा। कुरआने करीम में इस कुर्आ डालने और उसमें यूनस अलैहिस्सलाम का नाम निकलने का ज़िक्र मौजूद है:

فَسَاهَمَ فَكَانَ مِنَ الْمُدْحَضِينَ ۝

यूनस अलैहिस्सलाम के साथ हक् तआला का यह मामला उनके विशेष पैग़म्बराना मर्तबे की वजह से था, कि अगरचे उन्होंने अल्लाह के किसी हुक्म की ख़िलाफ़वर्जी नहीं की थी जिसको गुनाह और नाफ़रमानी कहा जाता है और किसी पैग़म्बर से इसकी संभावना नहीं, क्योंकि वे मासूम (गुनाहों से सुरक्षित) होते हैं, लेकिन पैग़म्बर के बुलन्द मक़ाम के मुनासिब न था कि महज़ ख़ौफ़े तबई से बग़ैर अल्लाह की इजाज़त के मुन्तक़िल हो जायें। इस ख़िलाफ़े शान अमल पर बतौर नाराज़गी यह मामला किया गया।

इस तरफ़ कुर्आ में नाम निकल कर दरिया में डाले जाने का सामान हो रहा था दूसरी तरफ़ एक बहुत बड़ी मछली अल्लाह के हुक्म से कश्ती के करीब मुँह फैलाये हुए लगी हुई थी कि यह दरिया में आयें तो इनको अपने पेट में जगह दे, जिसको हक् तआला ने पहले से हुक्म दे रखा था कि यूनस अलैहिस्सलाम का जिस्म जो तेरे पेट के अन्दर रखा जायेगा यह तेरी ग़िज़ा नहीं

बल्कि हमने तेरे पेट को उनका ठिकाना बनाया है। यूनस अलैहिस्सलाम दरिया में गये तो फूँक उस मछली ने मुँह में ले लिया। हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु ने फरमाया कि यूनस अलैहिस्सलाम उस मछली के पेट में चालीस दिन रहे, वह उनको ज़मीन की तरह तक जाती और दूर-दराज़ के मकामात में फिराती रही। कुछ हज़रात ने सात, कुछ ने पाँच दिन और कुछ ने एक दिन के चन्द घन्टे मछली के पेट में रहने की मुद्दत बतलाई है। (मज़हरी) असल हकीकत हक़ तआला को मालूम है। उस हालत में हज़रत यूनस अलैहिस्सलाम ने यह दुआ की:

لَا إِلَهَ إِلَّا أَنْتَ سُبْحَانَكَ إِنِّي كُنْتُ مِنَ الظَّالِمِينَ ۝

ला इला-ह इल्ला अन्-त सुब्हान-क इन्नी कुन्तु मिनज़्ज़ालिमीन।

अल्लाह तआला ने इस दुआ को कुबूल फरमा लिया और बिल्कुल सही व सालिम हज़रत यूनस अलैहिस्सलाम को दरिया के किनारे पर डाल दिया।

मछली के पेट की गर्मी से उनके बदन पर कोई बाल न रहा था, अल्लाह तआला ने उनके करीब एक कद्दू (लोकी) का दरख्त उगा दिया, जिसके पत्तों का साया भी हज़रत यूनस अलैहिस्सलाम के लिये एक राहत बन गयी, और एक जंगली बकरी को अल्लाह तआला ने इशारा फरमा दिया कि वह सुबह व शाम उनके पास आ खड़ी होती और वह उसका दूध पी लेते थे। इस तरह हज़रत यूनस अलैहिस्सलाम को उस चूक पर तंबीह भी हो गयी और बाद में उनकी कौम को भी पूरा हाल मालूम हो गया।

इस किस्से में जितने अंश और हिस्से कुरआन में बयान हुए या हदीस की मोतबर रिवायतों से साबित हैं वो तो यकीनी हैं बाकी हिस्से तारीखी रिवायतों के हैं जिन पर किसी शरई मसले का मदार नहीं रखा जा सकता।

وَلَوْ شَاءَ رَبُّكَ لَأَمَنَّ مِنَ الْاَرْضِ كُلَّهُمْ جَمِيعًا ۝

اَفَاَنْتَ تُكْرِهُ النَّاسَ حَتّٰى يَكُوْنُوْا مُؤْمِنِيْنَ ۝ وَمَا كَانَ لِنَفْسٍ اَنْ تُوْمِنَ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ ۝ وَ

يَجْعَلُ الرِّجْسَ عَلَى الَّذِيْنَ لَا يَعْقِلُوْنَ ۝

व लौ शा-अ रब्बु-क तआम-न मन्
फिल् अर्जि कुल्लुहुम् जमीअन्,
अ-फ अन्-त तुकिरहुन्ना-स हत्ता
यकून् मुअ्मिनीन (99) व मा का-न
लिनफ़िसन् अन् तुअ्मि-न इल्ला
बि-इज़्ज़िल्लाहि, व यज्ज़लुरिज्-स

और अगर तेरा रब चाहता बेशक ईमान
ले आते जितने लोग कि ज़मीन में हैं सारे
तमाम, अब क्या तू ज़बरदस्ती करेगा
लोगों पर कि हो जायें ईमान वाले। (99)
और किसी से नहीं हो सकता कि ईमान
लाये मगर अल्लाह के हुक्म से, और वह
डालता है गन्दगी उन पर जो नहीं

अलल्लज़ी-न ला यज़किलून (100)

सोचते। (100)

खुलासा-ए-तफसीर

और (इन कौमों और बस्तियों की क्या विशेषता है) अगर आपका रब चाहता तो तमाम रू-ए-ज़मीन के लोग सब के सब ईमान ले आते (मगर बाज़ हिकमतों की वजह से यह न चाहा इसलिये सब ईमान नहीं लाये), सो (जब यह बात है तो) क्या आप लोगों पर ज़बरदस्ती कर सकते हैं जिससे वे ईमान ही ले आएँ। हालाँकि किसी शख्स का ईमान बिना खुदा के हुक्म (यानी उसकी मर्जी) के मुम्किन नहीं, और वह (यानी अल्लाह तआला) बेअक़ल लोगों पर (कुफ़री) गन्दगी डाल देता है।

قُلْ انْظُرُوا مَاذَا فِي السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ، وَمَا تُغْنِي الْآيَاتُ وَالنُّذُرُ عَنْ قَوْمٍ لَا يُؤْمِنُونَ ۝
فَهَلْ يَنْتَظِرُونَ إِلَّا مِثْلَ أَيَّامِ الَّذِينَ خَلَوْا مِنْ قَبْلِهِمْ، قُلْ فَانْتَظِرُوا إِنِّي مَعَكُمْ مِنَ
الْمُنْتَظِرِينَ ۝ ثُمَّ نَحْنُ رُسُلْنَا وَالَّذِينَ آمَنُوا كَذَلِكَ حَقًّا عَلَيْنَا نَحْمِ الْمُؤْمِنِينَ ۝

कुलिन्ज़ुरु माज़ा फ़िस्समावाति
वलूअज़ि, व मा तुग़ानिल्-आयातु
वन्नुजुरु अन् कौमिल् ला युअ्मिनून
(101) फ़-हल् यन्तज़िरु-न इल्ला
मिस्-त अय्यामिल्लज़ी-न ख़लौ मिन्
क़ब्लिहिम्, कुल् फन्तज़िरु इन्नी
म-अकुम् मिनल्-मुन्तज़िरीन (102)
सुम्-म नुनज़्ज़ी रुसु-लना वल्लज़ी-न
आमनू कज़ालि-क हक्कन् अलैना
नुन्जिल्-मुअ्मिनीन (103) ❀

तू कह- देखो तो क्या कुछ है आसमानों
में और ज़मीन में, और कुछ काम नहीं
आतीं निशानियाँ और डराने वाले उन
लोगों को जो नहीं मानते। (101) सो
अब कुछ नहीं जिसका इन्तिज़ार करें मगर
उन्हीं के जैसे दिन जो गुज़र चुके हैं उनसे
पहले, तू कह अब राह देखो मैं भी तुम्हारे
साथ राह देखता हूँ। (102) फिर हम
बचा लेते हैं अपने रसूलों को और उनको
जो ईमान लाये इसी तरह जिम्मा है हमारा
बचा लेंगे ईमान वालों को। (103) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

आप कह दीजिये कि तुम गौर करो (और देखो) कि क्या-क्या चीज़ें हैं आसमानों और ज़मीन में (आसमानों में सितारे वगैरह और ज़मीन में बेइन्तिहा मख़्लूक नज़र आती है। यानी

इनमें गौर करने से तौहीद की अक्ली दलील हासिल होगी। यह बयान हुआ उनके खुदाई कानून के पाबन्द होने का। और जो लोग (दुश्मनी के तौर पर) ईमान नहीं लाते उनको दलीलें और धमकियाँ कुछ फायदा नहीं पहुँचातीं (यह बयान हुआ उनकी दुश्मनी और बैर का), सो (उनकी इस दुश्मनी की हालत से ऐसा मालूम होता है कि) वे लोग (जैसा कि उनके हाल से ज़ाहिर है) सिर्फ़ उन लोगों के जैसे वाकिआत का इन्तिज़ार कर रहे हैं जो उनसे पहले गुज़र चुके हैं (यानी बावजूद दलीलों और धमकियों के जो ईमान नहीं लाते, तो उनकी हालत उस शख्स के जैसी है जो ऐसे अज़ाब का मुन्ताज़िर हो जो कि पहली कौमों पर आया था, सो) आप फ़रमा दीजिये कि अच्छा तो तुम (तो उसके) इन्तिज़ार में रहो, मैं भी तुम्हारे साथ (उसके) इन्तिज़ार करने वालों में हूँ (जिन पहले गुज़री कौमों का ऊपर जिक्र था हम उन पर तो अज़ाब डालते थे) फिर हम (उस अज़ाब से) अपने पैग़म्बरों को और ईमान वालों को बचा लेते थे। (जिस तरह हमने उन मोमिनों को निजात दी थी) हम इसी तरह सब ईमान वालों को निजात दिया करते हैं। यह (वायदे के मुताबिक) हमारे ज़िम्मे है (पस इसी तरह अगर इन काफ़िरों पर कोई मुसीबत व आफ़त पड़ी तो मुसलमान उससे महफ़ूज़ रहेंगे चाहे दुनिया में चाहे आख़िरत में)।

قُلْ يَٰٓأَيُّهَا النَّاسُ إِن كُنْتُمْ فِي شَكٍّ مِّن دِينِي فَلَا أَعْبُدُ ٱلَّذِينَ

تَعْبُدُونَ مِن دُونِ ٱللّٰهِ وَلَكِنۢ أَعْبُدُ ٱللّٰهَ ٱلَّذِى يَتَوَكَّلُكُمْ ۖ وَأَمَرْتُ أَنۢ أَكُونَ مِنَ ٱلْمُؤْمِنِينَ ۝
وَأَنۢ أَقِمَّ وَجْهَكَ لِلدِّينِ حَنِيفًا ۖ وَلَا تَكُونَنَّ مِنَ ٱلشَّرِكِينَ ۝ وَلَا تَدْعُ مِن دُونِ ٱللّٰهِ مَا لَا يَنْفَعُكَ وَلَا يَضُرُّكَ ۖ فَإِن فَعَلْتَ فٱنَّكَ إِذَا مِّنَ ٱلظَّٰلِمِينَ ۝ وَإِن يَنسَخِ ٱللّٰهُ بِضُرٍّ فَلَا كَاشِفَ لَهُۥ ۖ ٱلْأَهْوَىٰ ۖ وَإِن يُرِدْكَ بِخَيْرٍ فَلَا رَآءَ لِضَرْبِهِۦ يُصِيبُ بِهِۦ مَن يَشَآءُ ۖ مِّنۢ عِبَادِهِۦ ۖ وَهُوَ ٱلْعَفُوُّ ٱلرَّحِيمُ ۝

कुल् या अय्युहन्नासु इन् कुन्तुम् फी
शक्किम् मिन् दीनी फ़ला
अअबुदुल्लाजी-न तअबुदू-न मिन्
दूनिल्लाहि व लाकिन् अअबुदुल्लाह-
ल्लाजी य-तवफ़ाकुम् व उयिरतु
अन् अकू-न मिनल्-मुअमिनीन (104)
व अन् अकिम् वज्ह-क लिद्दीनि

कह दे ऐ लोगो! अगर तुम शक में हो
मेरे दीन से तो मैं इबादत नहीं करता
जिनकी तुम इबादत करते हो अल्लाह के
सिवा, और लेकिन मैं इबादत करता हूँ
अल्लाह की जो खींच लेता है तुमको,
और मुझको हुक्म है कि रहूँ ईमान वालों
में। (104) और यह कि सीधा कर मुँह
अपना दीन पर हनीफ़ होकर, और मत हो

हनीफन् व ला तकूनन्-नं मिनल्-
मुशिरकीन (105) व ला तदज़ु मिन्
दूनिल्लाहि मा ला यन्फ़ु-क व ला
यज़ुरु-क फ-इन् फ़अल्-त फ-इन्न-क
इज़म् मिनज़्ज़ालिमीन (106) व
इय्यम्सस्कल्लाहु बिज़्ज़ुरिन् फ़ला
काशि-फ़ लहू इल्ला हु-व व
इय्युरिद्-क बिख़ैरिन् फ़ला
राद्-द लिफ़ज़िलही, युसीबु बिही
मय्यशा-उ मिन् अ़िबादिही, व हुवल
ग़फ़ूररहीम (107)

शिरक वालों में। (105) और मत पुकार
अल्लाह के सिवा ऐसे को कि न भला करे
तेरा और न बुरा, फिर अगर तू ऐसा करे
तो तू भी उस वक़्त हो ज़ालिमों में।
(106) और अगर पहुँचा दे तुझको
अल्लाह कुछ तकलीफ़ तो कोई नहीं
उसको हटाने वाला उसके सिवा, और
अगर पहुँचाना चाहे तुझको कुछ भलाई
तो कोई फेरने वाला नहीं उसके फज़ल
को, पहुँचाये अपना फज़ल जिस पर चाहे
अपने बन्दों में, और वही है बख़्शने वाला
मेहरबान। (107)

ख़ुलासा-ए-तफसीर

आप (उनसे) कह दीजिये कि ऐ लोगो! अगर तुम मेरे दीन की तरफ़ से शक (और शुब्हे) में हो तो (मैं तुमको उसकी हकीकत बतलाता हूँ। वह यह है कि) मैं उन माबूदों की इबादत नहीं करता खुदा के अलावा जिनकी तुम इबादत करते हो, लेकिन हूँ उस माबूद की इबादत करता हूँ जो तुम (यानी तुम्हारी जान) को कब्ज़ करता है। और मुझको (अल्लाह की तरफ़ से) यह हुक्म हुआ है कि मैं (ऐसे माबूद पर) ईमान लाने वालों में से हूँ। और (मुझको) यह (हुक्म हुआ है) कि अपने आपको इस (ज़िक्र हुए) दीन (और ख़ालिस तौहीद) की तरफ़ इस तरह मुतवज्जह रखना कि अन्य सब तरीकों से अलग हो जाऊँ, और (मुझको यह हुक्म हुआ है कि) कभी मुशिरक मत बनना। और (यह हुक्म हुआ है कि) खुदा (की तौहीद) को छोड़कर ऐसी चीज़ की इबादत मत करना जो तुझको न (इबादत करने की हालत में) कोई नफ़ा पहुँचा सके और न (इबादत छोड़ देने की हालत में) कोई नुक़सान पहुँचा सके। फिर अगर (मान लो) तुमने ऐसा किया (यानी अल्लाह के अलावा किसी और की इबादत की) तो तुम उस हालत में (अल्लाह का) हक़ ज़ाया करने वालों में से हो जाओगे। और (मुझसे यह कहा गया है कि) अगर तुमको अल्लाह तआला कोई तकलीफ़ पहुँचाये तो सिवाय उसके और कोई उसका दूर करने वाला नहीं है, और अगर वह तुमको कोई राहत पहुँचाना चाहे तो उसके फज़ल का कोई हटाने वाला नहीं (बल्कि) वह अपना फज़ल अपने बन्दों में से जिस पर चाहे मुतवज्जह फ़रमाये, और वह बड़ी मग़फ़िरत वाले (और) रहमत वाले हैं (और फज़ल की तमाम किस्में मग़फ़िरत और रहमत में दाख़िल हैं

और वह मग़फ़िरत और ज़बरदस्त रहमत वाले हैं, पस लाज़िमी तौर पर फज़ल वाले भी हैं)।

قُلْ يَٰأَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَاءَكُمُ الْحَقُّ مِنْ رَبِّكُمْ، فَمَنِ اهْتَدَىٰ فَإِنَّا يَهْتَدِي
لِنَفْسِهِ، وَمَنْ ضَلَّ فَإِنَّا يَضِلُّ عَلَيْهَا، وَمَا أَنَا عَلَيْكُمْ بِوَكِيلٍ ۖ وَاتَّبِعْ مَا يُوحَىٰ إِلَيْكَ
وَاصْبِرْ حَتَّىٰ يَحْكُمَ اللَّهُ ۚ وَهُوَ خَيْرُ الْحَاكِمِينَ ۝

कुल् या अय्युहन्नासु कद्
जा-अकुमुल्-हक्कु मिर्रब्बिकुम्
फ़-मनिस्तदा फ़-इन्नमा यस्तदी
लिनफ़िसही व मन् ज़ल्-ल फ़-इन्नमा
यज़िल्लु अलैहा, व मा अ-न
अलैकुम् बि-वकील (108) वत्तबिअ
मा यूहा इलै-क वस्बिर् हत्ता
यस्कुमल्लाहु व हु-व ख़ैरुल्-
हाकिमीन (109) ❀

कह दे ऐ लोगो! पहुँच चुका हक् तुमको
तुम्हारे रब से, अब जो कोई राह पर
आये सो वह राह पाता है अपने भले को,
और जो कोई बहका फिरे सो बहका
फिरेगा अपने बुरे को, और मैं तुम पर
नहीं हूँ मुख्तार। (108) और तू चल उसी
पर जो हुक्म पहुँचे तेरी तरफ़ और सब्र
कर जब तक फैसला करे अल्लाह, और
वह है सबसे बेहतर फैसला करने
वाला। (109) ❀

खुलासा-ए-तफ़्सीर

आप (यह भी) कह दीजिये कि ऐ लोगो! तुम्हारे पास हक् (दीन) तुम्हारे रब की तरफ़ से
(दलील के साथ) पहुँच चुका है, सो (उसके पहुँच जाने के बाद) जो शख्स सही रास्ते पर आ
जायेगा सो वह अपने (नफ़े के) वास्ते सही रास्ते पर आयेगा, और जो शख्स (अब भी) बेराह
रहेगा तो उसका बेराह होना (यानी उसका वबाल भी) उसी पर पड़ेगा, और मैं तुम पर (कुछ
बतौर ज़िम्मेदारी के) मुसल्लत नहीं किया गया (कि तुम्हारे बेराह होने की पूछगछ मुझसे होने लगे,
तो मेरा क्या नुक़सान है) और आप उसकी पैरवी करते रहिये जो कुछ आपके पास वही भेजी
जाती है (इसमें सब आमाँल के साथ तब्लीग़ भी आ गयी), और (उनके कुफ़्र और तकलीफ़
पहुँचाने पर) सब्र कीजिये, यहाँ तक कि अल्लाह (उनका) फैसला कर देंगे (चाहे दुनिया में
हलाकत के साथ चाहे आख़िरत में अज़ाब के साथ। मतलब यह है कि आप अपने ज़ाती और
पैग़म्बरी के पद के काम में लगे रहिये, उनकी फ़िक्र न कीजिए), और वह सब फैसला करने
वालों में अच्छे (फैसला करने वाले) हैं।

* सूरः हूद *

यह सूरत मक्की है। इसमें 123 आयतें
और 10 रुकूअ हैं।

सूर: हूद

ایمانہ ۛ (۱۱) سُوْرَةُ هُوْدٍ مَكِّيَّةٌ (۵۷) اٰیَاتُهَا

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ

اَلرَّسٰیۤكِبُ اُحْكِمْتَ اٰیٰتُهٗ ثُمَّ فَضَّلْتَ مِنْ لَّدُنْ حَكِیۡمٌ خَبِیۡرٌ ۝۱۱ اَلَّا تَعْبُدُوۡا اِلَّا اللّٰهَ ۚ اِنِّیۡۤ اِنۡتَبِیۡ لَّكُمْ
مِّنۡهُ نَذِیۡرٌ وَّبَشِیۡرٌ ۝۱۲ وَاِنْ اَسْتَغْفِرُۤا رَبَّكُمۡ ثُمَّ تَوَبُّوۡا اِلَیۡهِ یَتَّبِعْکُمۡ مَّتٰعًا حَسَنًا ۚ اِلَیَّۤ اَجَلٌ
مَّسۡیُوۡمٌ ۚ وَیُوۡتِیۡ كُلَّ ذِیۡ فَضَلٍ فَضْلَهٗ ۚ وَاِنْ تَوَلَّوۡا فَاِنِّیۡۤ اَخَافُ عَلَیْکُمۡ عَذَابَ یَوْمٍ کَبِیۡرٍ ۝۱۳
اِلَیَّ اللّٰهُ مَرْجِعُکُمۡ ۚ وَهُوَ عَلٰی كُلِّ شَیۡءٍ قَدِیۡرٌ ۝۱۴ اَلَا اِنَّہُمْ یُتَنَوَّنُ صُدُوۡرُہُمۡ لِیَسْتَخْفُوۡا مِنْہٗ ۚ اَلَا
حِیۡنَ یَسْتَغْشَوْنَ ثِیَابَہُمْ ۚ یَعْلَمُ مَا یُسِّرُوۡنَ وَمَا یُعْلِنُوۡنَ ۚ اِنَّہٗ عَلِیۡمٌ بِذٰلِ الصُّدُوۡرِ ۝۱۵

सूर: हूद मक्का में नाज़िल हुई। इसमें 123 आयतें और 10 रुकूअ हैं।

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

अलिफ्-लाम्-रा। किताबुन् उस्किमत
आयातुह् सुम्-म फुस्सिलत् मिल्लदुन्
हकीमिन् खबीर (1) अल्ला तअबुदू
इल्लल्ला-ह, इन्ननी लकुम् मिन्हु
नज़ीरुव्-व बशीर (2) व
अनिस्तग़िफ़ु रब्बकुम् सुम्-म तूबू
इलैहि युमतिअकुम् मताअन् ह-सनन्
इला अ-जलिम्-मुसम्मव्-व युअति
कुल्-ल जी फज़िलन् फज़लह्, व इन्
तवल्लौ फ़-इन्नी अख़ाफ़ु अलैकुम्
अज़ा-ब यौमिन् कबीर (3) इल्लल्लाहि

अलिफ्-लाम-रा। यह किताब है कि जाँच
लिया है इसकी बातों को फिर खोली गई
हैं एक हिक्मत वाले ख़बर रखने वाले के
पास से, (1) कि इबादत न करो मगर
अल्लाह की, मैं तुमको उसी की तरफ़ से
डर और खुशख़बरी सुनाता हूँ। (2) और
यह कि गुनाह बख़्शवाओ अपने रब से
फिर रुजू करो उसकी तरफ़ ताकि फ़ायदा
पहुँचाये तुमको अच्छा फ़ायदा एक
निर्धारित वक़्त तक और दे हर ज़्यादती
वाले को ज़्यादती अपनी, और अगर तुम
फिर जाओगे तो मैं डरता हूँ तुम पर एक

मर्जिअुकुम् व हु-व अला कुल्लि
शैइन् कदीर (4) अला इन्नहुम्
यस्नू-न सुदू-रहुम् लियस्तख़्फू मिन्हु,
अला ही-न यस्तग़्शू-न सियाबहुम्
यअल्मु मा युसिरू-न व मा
युअ्लिन्-न इन्नहू अलीमुम्-
बिजातिस्सुदूर (5)

बड़े दिन के अज़ाब से। (3) अल्लाह की
तरफ़ है तुमको लौटकर जाना और वह
हर चीज़ पर क़ादिर है। (4) सुनता है! वे
दोहरे करते हैं अपने सीने ताकि छुपायें
उससे। सुनता है! जिस वक़्त ओढ़ते हैं
अपने कपड़े जानता है जो कुछ छुपाते
और जो ज़ाहिर करते हैं, वह तो जानने
वाला है दिलों की बात। (5)

खुलासा-ए-तफ़्सीर

अलिफ़-लाम-रा (के मायने तो अल्लाह को मालूम हैं)। यह (कुरआन) एक ऐसी किताब है कि इसकी आयतें (दलीलों से) मज़बूत की गई हैं (फिर इसी के साथ) साफ़-साफ़ (भी) बयान की गई हैं। (और वह किताब ऐसी है कि) एक ख़बर रखने वाले हकीम (यानी अल्लाह तआला) की तरफ़ से (आई है जिसका बड़ा मक़सद) यह (है) कि अल्लाह तआला के सिवा किसी की इबादत मत करो, मैं तुमको अल्लाह की तरफ़ से (ईमान न लाने पर अज़ाब से) डराने वाला और (ईमान लाने पर सवाब की) खुशख़बरी देने वाला हूँ। और (इस किताब के मक़सिद में से) यह (भी है) कि तुम लोग अपने गुनाह (यानी शिर्क व कुफ़्र वगैरह) अपने रब से माफ़ कराओ, (यानी ईमान लाओ और) फिर (ईमान लाकर) उसकी तरफ़ (इबादत से) मुतवज्जह रहो (यानी नेक अमल करो। पस ईमान और नेक अमल की बरकत से) वह तुमको मुक़ररा वक़्त (यानी मौत के वक़्त) तक (दुनिया में) खुशऐशी “यानी अच्छी पुरसुकून ज़िन्दगी” देगा, और (आखिरत में) हर ज़्यादा अमल करने वाले को ज़्यादा सवाब देगा (यह कहना भी एक तरह से खुशख़बरी देने वाले की तरह है)। और अगर (ईमान लाने से) तुम लोग मुँह (ही) मोड़ते रहे तो मुझको (उस सूरत में) तुम्हारे लिये एक बड़े दिन के अज़ाब का अन्देशा है (यह कहना एक तरह से डराने वाले के कहने की तरह है, और अज़ाब को मुहाल और दूर की चीज़ मत समझो, क्योंकि) तुम (सब) को अल्लाह ही के पास जाना है, और वह हर चीज़ पर पूरी क़ुदरत रखता है (फिर मुहाल या दूर की बात होने की कोई वजह नहीं, अलबत्ता अगर वहाँ तुम्हारी हाज़िरी न होती या नऊजु बिल्लाह उसको क़ुदरत न होती तो अज़ाब न पड़ता। पस ऐसी हालत में ईमान और तौहीद से मुँह न मोड़ना चाहिये। आगे अल्लाह के इल्म का बयान है, और ऐसा इल्म व क़ुदरत दोनों तौहीद की दलील हैं)।

याद रखो कि वे लोग अपने सीनों को दोहरा किये देते हैं (और ऊपर से कपड़ा लपेट लेते हैं) ताकि (अपनी बातें) उससे (यानी खुदा से) छुपा सकें। (यानी इस्लाम और मुसलमानों की

मुखालिफत में जो बातें करते और जिसको एतिकाद होगा पैगम्बर) होना दलीलों से सा तदबीर करना गोया अपने याद रखो कि वे लोग जिस वक्त भी) सब जानता है, करते हैं, (क्योंकि) यकीनन तो क्यों न जानेगा)।

इस अन्दाज़ से करते हैं ताकि किसी को खबर न हो जाये बुदा को ज़रूर खबर होती है और आपका वही वाला (यानी) पस वह छुपाने की ऐसी तदबीर कभी न करेगा, क्योंकि ऐसी और हालत से अल्लाह से छुपे रहने की कोशिश करना है, सो) (दोहरे होकर) अपने कपड़े (अपने ऊपर) लपेटते हैं, वह (उस) चुपके-चुपके (बातें) करते हैं और जो कुछ (बातें) वे जाहिर (तो) दिलों के अन्दर की बातें जानता है (तो ज़बान से कही हुई

आरिफ़ व मसाईल

सूर: हूद उन सूरतों में और मुखलिफ़ किस्म के सज़ा का ज़िक्र खास अन्दाज़

यही वजह है कि जब बाल सफ़ेद हो गये तो हज़ पर अर्ज किया कि या रसूल बूढ़ा कर दिया। और कुछ सूर: अम्-म यतसाअलून अ मतलब यह था कि इ हो गये।

इसकी पहली आयत जिनकी मुराद अल्लाह तआ किया गया, उनको इसकी

इसके बाद कुरआन आयतों को मोहकम बना है कि किसी कलाम को ऐसा का शुब्हा व गुंजाईश न हक़ तआला ने इन आयतों और ख़लल या बातिल का

और हज़रत अब्दुल्लाह मन्सूख़ के मुकाबले में अल्लाह तआला ने मजमू है। यानी जिस तरह पि

जिनमें पिछली कौमों पर नाज़िल होने वाले अल्लाह के क़हर का और फिर कियामत के होलनाक वाकिआत और जज़ा व जाया है।

पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की दाढ़ी मुबारक में कुछ डीके अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु ने रंज व ग़म के इज़हार के तौर आप बूढ़े हो गये, तो आपने फ़रमाया कि हाँ! मुझे सूर: हूद ने तों में सूर: हूद के साथ सूर: वाकिआ और सूर: मुर्सलात और तकवीर का भी ज़िक्र है। (हाकिम व तिर्मिज़ी)

क़आत के ख़ौफ़ व दहशत की वजह से बुढ़ापे के आसार जाहिर

‘अलिफ़-ताम-रा’ से शुरू किया गया है। ये उन हुरूफ़ में से हैं और उसके रसूल के बीच राज़ है, दूसरों को इस पर मुत्तला नहीं में पड़ने से भी रोका गया है।

के मुताल्लिक़ फ़रमाया कि यह एक ऐसी किताब है जिसकी है। लफ़ज़ मोहकम अहकाम से बना है, जिसके मायने यह हैं किया जाये जिसमें किसी लफ़ज़ी और मानवी ग़लती या ख़राबी बिना पर आयतों के मोहकम बनाने का मतलब यह होगा कि ऐसा बनाया है कि इनमें किसी लफ़ज़ी ग़लती या मानवी ख़राबी इमकान व शुब्हा भी नहीं। (तफ़सीरे कुर्तुबी)

अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि मोहकम इस जगह मुराद यह है कि इस किताब यानी कुरआन की आयतों को मोहकम ग़ैर-मन्सूख़ (निरस्त व रद्द न होने वाली) बनाया जावे तौरात व इंजील वग़ैरह कुरआन के नाज़िल होने के बाद

मन्सूख हो गयीं, इस किताब के नाज़िल होने के बाद चूँकि नुबुव्वत व वही का सिलसिला ही खत्म हो गया इसलिये यह किताब कियामत तक मन्सूख (तब्दील, रद्द या निरस्त) न होगी। (तफ्सीरे कुर्तुबी) और कुरआन की कुछ आयतों का खुद कुरआन ही के जरिये मन्सूख हो जाना इसके विरुद्ध नहीं।

इसी आयत में कुरआन की दूसरी शान यह बतलाई गयी 'सुम्-म फुस्सिलत्' यानी फिर इन आयतों की तफ्सील की गयी। तफ्सील के असली मायने यह हैं कि दो चीजों के बीच फासला व फर्क किया जाये। इसी लिये आम किताबों में मुख्तलिफ़ मज़ामीन को फ़स्त फ़स्त के उनवान से बयान किया जाता है। इस जगह आयतों की तफ्सील से यह मुराद भी हो सकती है कि अक़ीदे, इबादतें, मामलात, रहन-सहन, अज़्लाक वगैरह मज़ामीन की आयतों को अलग-अलग करके स्पष्ट रूप से बयान फरमाया गया है।

और यह मायने भी हो सकते हैं कि कुरआन मजीद अल्लाह तआला की तरफ़ से तो एक ही बार में पूरा का पूरा लौह-ए-महफ़ूज़ में उतार दिया गया था मगर फिर मुख्तलिफ़ कौमों और मुल्कों के हालात व ज़रूरतों के तहत बहुत सी किस्तों में थोड़ा-थोड़ा नाज़िल फरमाया गया ताकि इसका याद करना भी आसान हो और उन पर दर्जा-ब-दर्जा अमल भी आसान हो जाये।

इसके बाद फरमाया 'मिल्लदुन् हकीमिन् खबीर' यानी ये सब आयतें एक ऐसी हस्ती की तरफ़ से आई हैं जो हकीम भी है और ख़बर रखने वाला भी। यानी जिसके हर काम में इतनी हिक्मतें छुपी होती हैं कि इनसान उनको नहीं पा सकता, और वह आलम की कायनात के मौजूदा और आने वाले ज़र्रे ज़र्रे से पूरी तरह बाख़बर है। उनके सब मौजूदा व आईन्दा हालात को जानता है, उन सब पर नज़र करके अहकाम ज़ाज़िल फरमाता है। इनसानों की तरह नहीं कि वे कितने ही अक्लमन्द, होशियार, तजुर्बेकार हों मगर उनकी अक्ल व समझ एक सीमित दायरे में घिरी हुई और उनका तजुर्बा सिर्फ़ अपने आस-पास के हालात की पैदावार होता है, जो बहुत सी बार आने वाले समय और आईन्दा के हालात में नाकाम व ग़लत साबित होता है।

उपर्युक्त आयतों में से दूसरी आयत में एक सबसे अहम और मुक़द्दम चीज़ के बयान से मज़मून शुरू होता है, यानी हक़ तआला की तौहीद। इरशाद होता है:

الْأَتَعْبُدُوا إِلَّا اللَّهَ.

यानी इन आयतों में जो मज़ामीन बयान किये गये हैं उनमें सबसे अहम और मुक़द्दम (पहली चीज़) यह है कि एक अल्लाह के सिवा किसी की इबादत और पूजा न की जाये। उसके बाद इरशाद फरमाया:

إِنِّي لَكُمْ مِّنْ نَّدِيرٍ وَبَشِيرٍ.

यानी इन आयतों में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह हुक्म फरमाया है कि वह सारे ज़हान के लोगों से कह दें कि मैं अल्लाह की तरफ़ से तुमको डराने वाला और खुशख़बरी देने वाला हूँ। मुराद यह है कि नाफ़रमानी और अपनी नाज़ायज़ इच्छाओं की पैरवी

करने वालों को अल्लाह के अज़ाब से डराता हूँ और इताअत व फरमाँबरदारी करने वाले और नेक लोगों को आखिरत की नेमतों और दोनों आलम की राहतों की खुशखबरी देता हूँ।

‘नज़ीर’ का तर्जुमा डराने वाले का किया जाता है, लेकिन यह लफ्ज़ डराने वाले दुश्मन या दरिन्दे या दूसरे नुकसान पहुँचाने वालों के लिये नहीं बोला जाता, बल्कि ‘नज़ीर’ उस शख्स के लिये बोला जाता है जो किसी अपने प्यारे को शफ़क़त व मुहब्बत की बिना पर ऐसी चीज़ों से डराये और बचाये जो उसके लिये दुनिया या आखिरत या दोनों में नुकसान पहुँचाने वाली हैं।

तीसरी आयत में कुरआनी आयतों की हिदायतों में से एक दूसरी हिदायत का बयान इस तरह फरमाया है:

وَأَنۢ مُّسْتَغْفِرُوا۟ رَبَّكُمۡ ثُمَّ تَوْبُوا۟ إِلَيْهِۚ

यानी इन मोहकम आयतों में अल्लाह तआला ने अपने बन्दों को यह भी हिदायत फरमाई है कि वे अपने रब से मग़फ़िरत और माफी माँगा करें और तौबा किया करें। मग़फ़िरत का ताल्लुक पिछले गुनाहों से है और तौबा का ताल्लुक आईन्दा उनके पास न जाने के अहद से है। और हकीक़त में सही तौबा यही है कि पिछले गुनाहों पर शर्मिन्दा होकर अल्लाह तआला से उनकी माफी तलब करे और आईन्दा उनके न करने का पुख़्ता अज़्म व इरादा करे। इसी लिये कुछ बुजुर्गों ने फरमाया है कि आईन्दा को गुनाह से न बचने का पुख़्ता इरादा और एहतिमाम किये बग़ैर महज़ ज़बान से इस्तिग़फ़ार करना ‘कज़़ाबीन’ यानी झूठे लोगों की तौबा है। (तफ़सीरे कुर्तुबी) और ऐसे ही इस्तिग़फ़ार के बारे में कुछ हज़रात ने फरमाया है कि:

मासियत रा ख़न्दा मी आयद ज़-इस्तिग़फ़ारे मा

यानी हमारे इस्तिग़फ़ार और गुनाह की माफी से जिस पर शर्मिन्दगी और उसको छोड़ने का पुख़्ता इरादा न हो गुनाह व नाफ़रमानी को खुद हंसी आती है। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी या यह कि ऐसी तौबा खुद तौबा के क़ाबिल है।

इसके बाद सही तौर पर इस्तिग़फ़ार व तौबा करने वालों को दुनिया व आखिरत की कामयाबी और ऐश व राहत की खुशखबरी इस तरह दी गयी है:

يُمَتِّعُكُمْ مَتَاعًا حَسَنًا إِلَىٰ أَجَلٍ مُّسَمًّىۖ

यानी जिन लोगों ने सही तौर पर अपने पिछले गुनाहों से इस्तिग़फ़ार किया और आईन्दा उनसे बचने का पुख़्ता इरादा और पूरा एहतिमाम किया तो सिर्फ़ यही नहीं कि उनकी ख़ता बख़्शा दी जायेगी बल्कि उनको अच्छी ज़िन्दगी अता की जायेगी, और ज़ाहिर यह है कि यह ज़िन्दगी आम है, दुनिया की ज़िन्दगी और आखिरत की हमेशा की ज़िन्दगी दोनों को शामिल है। जैसे एक दूसरी आयत में ऐसे ही लोगों के बारे में इरशाद हुआ है:

لَنُحْيِيَنَّهٗ حَيٰوةً طَيِّبَةًۖ

यानी हम ज़रूर उनको पाकीज़ा ज़िन्दगी अता करेंगे। इस आयत के बारे में भी मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत की तहकीक़ यही है कि दुनिया व आखिरत की दोनों ज़िन्दगियाँ इसमें शामिल

हैं। सूर: नूह में इसकी वजाहत भी इस तरह आ गयी है कि इस्तिग़फ़ार करने वालों के मुताल्लिक यह फरमाया है:

يُرْسِلُ السَّمَاءَ عَلَيْكُمْ مِدْرَارًا وَيُمْدِدْكُمْ بِأَمْوَالٍ وَيُنِيْنٍ وَيَجْعَلَ لَكُمْ جُنُبًا وَيَجْعَلَ لَكُمْ أَنْهَارًا ۝

यानी अगर तुमने सही तौर से अल्लाह से मग़फ़िरत माँगी तो अल्लाह तआला तुम पर रहमत की बारिश नाज़िल फरमायेगा और तुमको माल व औलाद से बामुराद करेगा और तुम्हारे लिये बागात और नहरें अता फरमायेगा। ज़ाहिर है कि रहमत की बारिश और माल व औलाद का ताल्लुक इसी दुनिया की ज़िन्दगी से है।

इसी लिये उक्त आयत में मता-ए-हसन की तफसीर भी अक्सर मुफ़स्सिरीन ने यह की है कि इस्तिग़फ़ार व तौबा के नतीजे में अल्लाह तआला तुमको रिज़्क की वुस्ज़त और ऐश की सहूलियतें अता फरमायेगा और आफ़तों और अज़ाबों से तुम्हारी हिफ़ाज़त करेगा। और चूँकि दुनिया की ज़िन्दगी का एक रोज़ ख़त्म हो जाना लाज़िमी है और इसकी ऐश व राहत क़ानून क़ुदरत के तहत हमेशगी वाली नहीं हो सकती, इसलिये 'इला अ-जलिम् मुसम्मन्' फरमाकर हिदायत कर दी कि दुनिया में पाकीज़ा ज़िन्दगी और ऐश की सहूलियतें एक ख़ास मियाद यानी मौत तक हासिल रहेंगी, आख़िरकार मौत इन सब चीज़ों का ख़ात्मा कर देगी।

मगर इस मौत के फौरन बाद ही दूसरे आलम की ज़िन्दगी शुरू हो जायेगी और उसमें भी तौबा व इस्तिग़फ़ार करने वालों के लिये हमेशा की राहतें मयस्सर होंगी।

और हज़रत सहल बिन अब्दुल्लाह ने फरमाया कि 'मता-ए-हसन' से मुराद यह है कि इनसान की तवज्जोह मख़्लूक से हटकर ख़ालिक पर जम जाये। और कुछ बुजुर्गों ने फरमाया कि 'मता-ए-हसन' यह है कि इनसान मौजूदा (यानी जो हासिल हो) पर क़नाअत (सब्र व शुक्र) करे और मफ़कूद (जो हाथ से निकल जाये और हासिल न हो उस) के ग़म में न पड़े। यानी दुनिया जिस क़द्र मयस्सर हो उस पर मुत्मईन हो जाये, जो हासिल नहीं उसके ग़म में न पड़े।

दूसरी खुशख़बरी तौबा व इस्तिग़फ़ार करने वालों को यह दी गयी कि:

وَيُؤْتِ كُلَّ ذِي فَضْلٍ فَضْلَهُ

इसमें पहले फ़ज़ल से मुराद इनसान का नेक अमल और दूसरे फ़ज़ल से अल्लाह का फ़ज़ल यानी जन्नत है। मतलब यह है कि हर नेक अमल वाले को अल्लाह तआला अपना फ़ज़ल यानी जन्नत अता फरमायेंगे।

पहले जुमले में दुनिया व आख़िरत दोनों में मता-ए-हसन यानी अच्छी ज़िन्दगी का वायदा फरमाया है और दूसरे जुमले में जन्नत की कभी न ख़त्म होने वाली नेमतों का। आयत के आख़िर में इरशाद फरमाया:

فَإِنْ تَوَلَّوْا فَإِنِّي أَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ كَبِيرٍ ۝

यानी अगर इस नसीहत व ख़ैरख़्वाही से मुँह मोड़ा और पिछले गुनाहों से इस्तिग़फ़ार और आईन्दा उनसे बचने का एहतिमाम न किया तो यह प्रबल अन्देशा है कि तुम एक बड़े दिन के

अज़ाब में गिरफ्तार हो जाओगे। बड़े दिन से मुराद कियामत का दिन है, क्योंकि वह अपने फैलाव के एतिबार से भी एक हजार साल का दिन होगा और उसमें पेश आने वाले हालात व वाकिआत के एतिबार से भी वह सबसे बड़ा दिन होगा।

पाँचवीं आयत में इसी मज़मून की अधिक ताकीद फरमाई गयी है कि दुनिया में तुम कुछ भी करो और किसी तरह भी बसर करो मगर अंततः मरने के बाद तुम्हें खुदा तआला ही की तरफ लौटना है और वह हर चीज़ पर कादिर है, उसके लिये कुछ मुश्किल नहीं कि मरने और खाक हो जाने के बाद तुम्हारे सब ज़रों को जमा करके तुमको नये सिरे से इन्सान बनाकर खड़ा कर दे।

छठी आयत में मुनाफ़िकों के एक बुरे गुमान और ग़लत ख्याल की तरदीद है कि ये लोग अपनी दुश्मनी और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुखालफ़त को अपने नज़दीक ख़ूब छुपाने की कोशिश करते हैं, इनके सीनों में जो हसद व बुग़ज़ की आग भरी हुई है उस पर हर तरह के पर्दे डालते हैं और यह ख्याल करते हैं कि इस तरह हमारा असल हाल किसी को मालूम न होगा, मगर हकीकत यह है कि वे कपड़ों की तह में पर्दों के पीछे जो कुछ करते हैं अल्लाह तआला पर सब कुछ खुला हुआ है:

إِنَّهُ عَلِيمٌ بِذَاتِ الصُّلُوفِ ۝

क्योंकि वह तो दिलों के छुपे भेदों को भी ख़ूब जानते हैं।

पारा (12) व मा मिन् दाब्बतिन्

وَمَآ مِنْ دَآبَّةٍ فِي الْأَرْضِ إِلَّا عَلَى اللَّهِ رِزْقُهَا وَيَعْلَمُ مُسْتَقَرَّهَا وَمُسْتَوْدَعَهَا كُلٌّ فِي كِتَابٍ مُبِينٍ ۝
وَهُوَ الَّذِي خَلَقَ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضَ فِي سِتَّةِ أَيَّامٍ وَكَانَ عَرْشُهُ عَلَى الْمَاءِ لِيَبْلُوَكُمْ أَيُّكُمْ أَحْسَنُ عَمَلًا وَلَئِنْ قُلْتُمْ إِنَّكُمْ مَعْبُوثُونَ مِنْ بَعْدِ الْمَوْتِ لَيَقُولَنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا إِنْ هَذَا إِلَّا سِحْرٌ مُبِينٌ ۝ وَلَئِنْ أَخْرَأْنَا عَنْهُمْ الْعَذَابَ إِلَى أَمَةٍ مَعْدُودَةٍ لَيَقُولَنَّ مَا يَجِبُ لَهُ ۚ الْأَيُّومَ يَأْتِيهِمْ لَيْسَ مَصْرُوفًا عَنْهُمْ وَحَاقَ بِهِمْ مَا كَانُوا بِهِ يَسْتَهْزِئُونَ ۝

व मा मिन् दाब्बतिन् फ़िल् अर्जि
इल्ला अलल्लाहि रिज़्कुहा व यअलमु
मुस्तकर्रहा व मुस्तौद-अहा, कुल्लुन्
फी किताबिम् मुबीन (6) व हुवल्लज़ी
ख-लकस्समावाति वल् अर्-ज़ फ़ी

और कोई नहीं चलने वाला ज़मीन पर
मगर अल्लाह पर है उसकी रोज़ी, और
जानता है जहाँ वह ठहरता है और जहाँ
सौंपा जाता है, सब कुछ मौजूद है खुली
किताब में। (6) और वही है जिसने

सित्ति अय्यामिन्-व का-न अरशुहू
अलल्मा-इ लि-यब्लुवकुम् अय्युकुम्
अह्सनु अ-मलनु, व ल-इन् कुल्-त
इन्नकुम् मब्ज़ूसू-न मिम्-बज़्दिल्-
मौति ल-यकूलन्नल्लजी-न क-फ़रु इन्
हाज़ा इल्ला सिहरुम्-मुबीन (7) व
ल-इन् अख़्ख़रना अन्हुमुल्-अज़ा-ब
इला उम्मतिम् मअ्दूदतिल्-
ल-यकूलुन्-न मा यस्बिसुहू, अला
यौ-म यअ्तीहिम् लै-स मस्फ़न्
अन्हुम् व हा-क बिहिम् मा कानू
बिही यस्तस्ज़िऊन (8) ●

बनाये आसमान और ज़मीन छह दिन में
और था उसका तहत पानी पर ताकि
आज़माये तुमको कि कौन तुम में अच्छा
करता है काम, और अगर तू कहे कि तुम
उठोगे मरने के बाद तो अलबत्ता काफ़िर
कहने लगेंगे यह कुछ नहीं मगर जादू है
खुला हुआ। (7) और अगर हम रोके रखें
उनसे अज़ाब को एक मालूम मुदत तक
तो कहने लगें- किस चीज़ ने रोक दिया
अज़ाब को, सुनता है! जिस दिन आयेगा
उन पर न फेरा जायेगा उनसे और घेर
लेगी उनको वह चीज़ जिस पर ठठे किया
करते थे। (8) ●

खुलासा-ए-तफ़्सीर

और कोई (रिज़्क खाने वाला) जानदार रू-ए-ज़मीन पर चलने वाला ऐसा नहीं कि उसकी
रोज़ी अल्लाह तआला के ज़िम्मे न हो (और रिज़्क पहुँचाने के लिये इल्म की ज़रूरत होती है, सो)
और वह हर एक की ज़्यादा रहने की जगह को और चन्द दिन रहने की जगह को जानता है
(और हर एक को वहाँ रिज़्क पहुँचाता है। और अगरचे सब चीज़ें अल्लाह के इल्म में तो हैं ही
मगर इसके साथ ही) सब चीज़ें किताबे मुबीन (यानी लौह-ए-महफ़ूज़) में (भी दर्ज और मुकर्रर)
हैं। (ग़र्ज़ कि वाकिआत हर तरह महफ़ूज़ हैं। आगे पैदा करने और बनाने का मय उसकी कुछ
हिकमतों के बयान है जिससे क़ियामत में दोबारा ज़िन्दा होने के भी ताईद होती है, क्योंकि शुरू
की पैदाईश दलील है इस पर कि वह दोबारा भी पैदा करता है) और वह (अल्लाह) ऐसा है कि
सब आसमान और ज़मीन को छह दिन (की मात्रा) में पैदा किया, और (उस वक़्त) उसका अर्श
पानी पर था (कि ये दोनों चीज़ें पहले से पैदा हो चुकी थीं और यह पैदा करना इसलिये है)
ताकि तुमको आज़माये कि (देखें) तुममें अच्छा अमल करने वाला कौन है। (मतलब यह है कि
ज़मीन व आसमान को पैदा किया, तुम्हारी ज़रूरत की चीज़ें और फ़ायदे इसमें पैदा किये ताकि
तुम उनको देखकर तौहीद पर दलील पकड़ो और उनसे फ़ायदा उठकार नेमत देने वाले का शुक्र
और ख़िदमत (यानी नेक अमल) करो, सो कुछ ने ऐसा किया, कुछ ने न किया)।

और अगर आप (लोगों से) कहते हैं कि यकीनन तुम लोग मरने के बाद (क़ियामत के दिन दोबारा) ज़िन्दा किये जाओगे तो (उनमें) जो लोग काफ़िर हैं वे (क़ुरआन के बारे में, जिसमें क़ियामत में ज़िन्दा होकर उठने की ख़बर है) कहते हैं कि यह तो बिल्कुल खुला जादू है (जादू इसलिये कहते हैं कि वह बेहकीक़त होता है मगर प्रभावी। इसी तरह क़ुरआन को नऊजु बिल्लाह बातिल समझते थे लेकिन इसके मज़ामीन का असरदार होना भी महसूस करते थे, इसलिये इस स्थिति में यह हुक्म लगाया, नऊजु बिल्लाहि मिन्हा। मकसूद इससे आख़िरत का इनकार था, आगे उनके इनकार के मन्शा का जवाब इरशाद है) और अगर थोड़े दिनों तक (मुराद दुनियावी ज़िन्दगी है) हम उनसे (वायदा किये गये) अज़ाब को मुलतवी "यानी टाले" रखते हैं (कि इसमें हिक्मतें हैं) तो (बतौर इनकार व मज़ाक उड़ाने के) कहने लगते हैं कि (जब हम तुम्हारे नज़दीक अज़ाब के पात्र हैं तो) उस (अज़ाब) को कौनसी चीज़ रोक रही है? (यानी अगर अज़ाब कोई चीज़ होती तो अब तक हो चुकता, जब नहीं हुआ तो मालूम हुआ कि कुछ भी नहीं। हक़ तआला जवाब देते हैं कि) याद रखो जिस दिन (मुकररा वक़्त पर) वह (अज़ाब) उन पर आ पड़ेगा तो फिर (किसी के) टाले न टलेगा, और जिस (अज़ाब) के साथ ये हंसी-ठट्ठा कर रहे थे वह इनको आ घेरगा (मतलब यह कि हक़दार होने के बावजूद यह ताख़ीर और देरी इसलिये है कि कुछ हिक्मतों से उसका वक़्त निर्धारित है फिर उस वक़्त सारी कसर निकल जायेगी)।

मअरिफ़ व मसाईल

पिछली आयत में हक़ तआला के कामिल और हर चीज़ को घेरने वाले इल्म का ज़िक्र था जिससे कायनात का कोई ज़रा और दिलों के छुपे हुए राज़ भी बचे नहीं, इन आयतों में से पहली आयत में उसकी मुनासबत से इन्सान पर एक ज़बरदस्त एहसान का ज़िक्र किया गया है, वह यह कि उसके रिज़्क की ज़िम्मेदारी हक़ तआला ने खुद अपने ऊपर ले ली है, और न सिर्फ़ इन्सान की बल्कि ज़मीन पर चलने वाले हर जानदार की, वह जहाँ कहीं रहता है या चला जाता है उसकी रोज़ी उसके पास पहुँचती है। तो काफ़िरों के ये इरादे कि अपने किसी काम को अल्लाह तआला से छुपा लें जहालत और बेवकूफी के सिवा कुछ नहीं। फिर इसके आम होने में जंगल के तमाम दरिन्दे, परिन्दे और ज़मीनी कीड़े-मकोड़े, दरिया और खुश्की के तमाम जानवर दाख़िल हैं। इस आम होने की ताकीद के लिये लफ़्ज़ 'मिन' का इज़ाफ़ा करके 'व मा मिन् दाब्बतिन्' फ़रमाया है। 'दाब्बतिन्' हर उस जानवर को कहते हैं जो ज़मीन पर चले। पक्षी जानवर भी इसमें दाख़िल हैं क्योंकि उनका आशियाना भी कहीं ज़मीन ही पर होता है, दरियाई जानवरों का भी ताल्लुक ज़मीन से होना कुछ किसी से छुपा नहीं, इन सब जानवरों के रिज़्क की ज़िम्मेदारी हक़ तआला ने अपने ज़िम्मे लेकर ऐसे अलफ़ाज़ से इसको बयान किया है जैसे कोई फ़रीज़ा किसी के ज़िम्मे हो। इरशाद फ़रमाया:

عَلَى اللَّهِ رِزْقُهَا

यानी अल्लाह के जिम्मे है उसका रिज्क। यह ज़ाहिर है कि यह जिम्मेदारी हक तआला पर डालने वाली कोई और ताकत नहीं सिवाय इसके कि उसी ने अपने फज़ल से यह वायदा फरमा लिया। मगर वायदा एक सच्चे करीम का है जिसमें ख़िलाफ़वर्जी (उल्लंघन) की कोई संभावना नहीं, इसी यकीन को ज़ाहिर करने के लिये इस जगह लफ़्ज़ 'अला' लाया गया है जो फ़राईज़ के बयान के लिये इस्तेमाल होता है, हालाँकि अल्लाह तआला न किसी हुक्म का पाबन्द है न उसके जिम्मे कोई चीज़ फ़र्ज़ या वाजिब है।

रिज्क लुगत में उस चीज़ को कहा जाता है जिससे जानदार अपनी ग़िज़ा हासिल करे और जिसके ज़रिये उसकी रूह की बका और जिस्म में तरक्की और बढ़ोतरी होती है।

'रिज्क' के लिये यह ज़रूरी नहीं कि जिसका रिज्क है वह उसका मालिक भी हो, क्योंकि तमाम जानवरों को रिज्क दिया जाता है मगर वे उसके मालिक नहीं होते, उनमें मालिक होने की योग्यता ही नहीं। इसी तरह छोटे बच्चे अपने रिज्क के मालिक नहीं होते मगर रिज्क उनको मिलता है।

रिज्क के इस आम मायने के एतिबार से उलेमा ने फरमाया कि रिज्क हलाल भी हो सकता है हराम भी, क्योंकि जो शख्स किसी दूसरे का माल नाजायज़ तौर पर लेकर खा ले तो यह माल ग़िज़ा तो उस शख्स की बन गया मगर हराम तौर पर बना, अगर यह अपनी हिस्स में अंधा होकर नाजायज़ तरीक़े इस्तेमाल न करता तो जो रिज्क उसके लिये मुकर्रर था, वह जायज़ तौर पर उसको मिलता।

रिज्क की खुदाई जिम्मेदारी पर एक सवाल और जवाब

यहाँ एक सवाल यह पैदा होता है कि जब हर जानदार का रिज्क अल्लाह तआला ने अपने जिम्मे ले लिया है तो फिर ऐसे वाकिआत क्यों पेश आते हैं कि बहुत से जानवर और इनसान ग़िज़ा न मिलने के सबब भूखे प्यासे मर जाते हैं। इसके उलेमा ने अनेक जवाब लिखे हैं।

एक जवाब यह भी हो सकता है कि रिज्क की जिम्मेदारी उसी वक़्त तक है जब तक उसकी उम्र पूरी नहीं हो जाती, जब यह उम्र पूरी हो गयी तो उसको बहरहाल मरना है और इस जहान से गुज़रना है जिसका आम सबब रोग होते हैं, कभी जलना या गर्क होना या चोट और ज़ख़्म भी सबब होता है, इसी तरह एक सबब यह भी हो सकता है कि उसका रिज्क बन्द कर दिया गया, उससे मौत वाक़े हुई।

इमाम कुतुबी रह. ने इस आयत के तहत अबू मूसा और अबू मालिक वगैरह कबीला अश्शरियीन का एक वाकिआ ज़िक्र किया है कि ये लोग हिजरत करके मदीना तय्यिबा पहुँचे तो जो कुछ तोशा और खाने पीने का सामान इनके पास था वह ख़त्म हो गया। इन्होंने अपना एक आदमी हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में इस ग़र्ज़ के लिये भेजा कि उनके खाने वगैरह का कुछ इन्तिज़ाम फ़रमा दें। यह शख्स जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के दरवाज़े पर पहुँचा तो अन्दर से आवाज़ आई कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम यह आयत पढ़ रहे हैं:

وَمَا مِنْ دَابَّةٍ فِي الْأَرْضِ إِلَّا عَلَى اللَّهِ رِزْقُهَا.

उस शख्स को यह आयत सुनकर ख्याल आया कि जब अल्लाह ने सब जानदारों का रिज्क अपने जिम्मे ले लिया है तो फिर हम अश्वरी भी अल्लाह के नजदीक दूसरे जानवरों से गये गुजरे नहीं, वह जरूर हमें भी रिज्क देंगे। यह ख्याल करके वहीं से वापस हो गया, हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को अपना कुछ हाल नहीं बतलाया। वापस जाकर अपने साथियों से कहा कि खुश हो जाओ, तुम्हारे लिये अल्लाह तआला की मदद आ रही है। उसके अश्वरी साथियों ने इसका यह मतलब समझा कि उनके कासिद ने करारदाद (तजवीज व प्रस्ताव) के अनुसार रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से अपनी हाजत का जिक्र किया है और आपने इन्तिजाम करने का वायदा फरमा लिया है, वे यह समझकर मुल्मईन बैठ गये। वे अभी बैठे ही थे, देखा कि दो आदमी एक कसआ गोश्त और रोटियों से भरा हुआ उठाये ला रहे हैं, कसआ एक बड़ा बर्तन होता है जैसे तशला या सैनी। लाने वालों ने यह खाना अश्वरी लोगों को दे दिया, उन्होंने खूब पेट भरकर खाया फिर भी बच रहा तो उन लोगों ने यह मुनासिब समझा कि बाकी खाना हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास भेज दें ताकि उसको आप अपनी जरूरत में इस्तेमाल फरमा लें। अपने दो आदमियों को यह खाना देकर हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास भेज दिया।

उसके बाद ये सब हज़रात हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में हाज़िर हुए और अर्ज किया कि या रसूलल्लाह! आपका भेजा हुआ खाना बहुत ज्यादा और बहुत उम्दा व लजीज़ था, आपने फरमाया कि मैंने तो कोई खाना नहीं भेजा। तब उन्होंने पूरा वाकिआ अर्ज किया कि हमने अपने फुलॉ आदमी को आपके पास भेजा था, उसने यह जवाब दिया, जिससे हमने समझा कि आपने खाना भेजा है। यह सुनकर हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि यह मैंने नहीं बल्कि उस पाक जात ने भेजा है जिसने हर जानदार का रिज्क अपने जिम्मे लिया है।

कुछ रिवायतों में है कि जिस वक़्त हज़रात मूसा अलैहिस्सलाम आग की तलाश में तूर पहाड़ पर पहुँचे और वहाँ आग के बजाय अल्लाह की तजल्लियाँ सामने आईं और उनको नुबुव्वत व रिसालत अता होकर फिरऔन और उसकी कौम की हिदायत के लिये मिस्र जाने का हुक्म मिला तो ख्याल आया कि मैं अपनी बीवी को जंगल में तन्हा छोड़कर आया हूँ उसका कौन ख्याल रखेगा। इस ख्याल की इस्लाह के लिये हक़ तआला ने मूसा अलैहिस्सलाम को हुक्म दिया कि सामने पड़ी हुई पत्थर की चट्टान पर लकड़ी मारें, उन्होंने हुक्म की तामील की तो यह चट्टान फट कर उसके अन्दर से एक दूसरा पत्थर बरामद हुआ, हुक्म हुआ इस पर भी लकड़ी मारें, ऐसा किया तो वह पत्थर फटा और अन्दर से तीसरा पत्थर बरामद हुआ, उस पर भी लकड़ी मारने का हुक्म हुआ तो वह फटा और अन्दर से एक जानवर बरामद हुआ जिसके मुँह में हरा पत्ता था।

हक़ तआला की कामिल कुदरत का यकीन तो मूसा अलैहिस्सलाम को पहले भी था मगर अनुभव और नज़ारा देखने का असर कुछ और ही होता है, यह देखकर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम वहीं से सीधे मिस्र को खाना हो गये, बीबी साहिबा को यह बतलाने भी न गये कि मुझे मिस्र जाने का हुक्म हुआ है, वहाँ जा रहा हूँ।

सारी मख़्लूक़ को रिज़्क पहुँचाने का अजीब व ग़रीब कुदरती निज़ाम

इस आयत में हक़ तआला ने सिर्फ़ इस पर बस नहीं फ़रमाया कि हर जानदार का रिज़्क अपने जिम्मे ले लिया, बल्कि इनसान के मज़ीद इत्मीनान के लिये फ़रमाया:

وَيَعْلَمُ مَسْغَرَهَا وَمُسْتَوْدَعَهَا.

इस आयत में मुस्तक़र और मुस्तौदा की विभिन्न तफ़्सीरें नक़ल की गयी हैं मगर लुगत के एतिबार से वह ज़्यादा करीब है जिसको कश्शाफ़ ने इख़्तियार किया है कि मुस्तक़र उस जगह को कहा जाता है जहाँ कोई शख्स मुस्तक़िल तौर पर रहने की जगह या वतन बना ले, और मुस्तौदा उस जगह को जहाँ अस्थायी तौर पर किसी ज़रूरत के लिये ठहरे।

मतलब यह हुआ कि अल्लाह तआला की जिम्मेदारी को दुनिया के लोगों और हुक्मतों की जिम्मेदारी पर क्यास न करो, दुनिया में अगर कोई शख्स या कोई संस्था आपके रिज़्क की जिम्मेदारी ले ले तो इतना काम बहरहाल आपको करना पड़ेगा कि अगर अपनी मुक़ररा जगह को छोड़कर किसी दूसरी जगह जाना हो तो उस व्यक्ति या संस्था को इत्तिला दें कि मैं फुलौ तारीख़ से फुलौ तक फुलौ शहर या गाँव में रहूँगा, रिज़्क के वहाँ पहुँचने-पहुँचाने का इन्तिज़ाम किया जाये। मगर हक़ तआला की जिम्मेदारी में आप पर इसका भी कोई भार नहीं, क्योंकि वह आपकी हर नक़ल व हरकत से बाख़बर है, आपके मुस्तक़िल रहने के ठिकाने को भी जानता है और अस्थायी और वक़्ती तौर पर रहने की जगह से भी वाकिफ़ है। बग़ैर किसी दरख़्वास्त और निशानदेही के आपका राशन वहाँ मुस्तक़िल कर दिया जाता है।

अल्लाह तआला के कामिल और हर चीज़ को घेरने वाले इल्म और कामिल कुदरत के पेशे नज़र सिर्फ़ इसका इरादा फ़रमा लेना तमाम कामों के अन्जाम पाने के लिये काफी था, किसी किताब या रजिस्टर में लिखने लिखाने की कोई ज़रूरत न थी, मगर बेचारा इनसान जिस निज़ाम का आदी होता है उसको उस निज़ाम पर क्यास करके भूल-चूक का खटका हो सकता है इसलिये उसके अधिक इत्मीनान के लिये फ़रमाया:

كُلٌّ فِي كِتَابٍ مُبِينٍ

यानी यह सब कुछ एक वाज़ेह किताब में लिखा हुआ है। इस वाज़ेह किताब से मुराद लौहे महफ़ूज़ है जिसमें तमाम कायनात की रोज़ी, उम्र, अमल वग़ैरह की पूरी तफ़्सीलात लिखी हुई हैं।

जो मौके व ज़रूरत के मुताबिक संबंधित फ़रिश्तों के सुपुर्द कर दी जाती हैं।

सही मुस्लिम में हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने तमाम मख़्लूक़ात की तकदीरें आसमान और ज़मीन की पैदाईश से भी पचास हज़ार साल पहले लिख दी थीं।

और बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक लम्बी हदीस में फ़रमाया जिसका खुलासा यह है कि इनसान अपनी पैदाईश से पहले विभिन्न और अनेक दौर से गुज़रता है, जब उसके बदन की अंगों की तकमील हो जाती है तो अल्लाह तआला एक फ़रिश्ते को हुक्म करते हैं जो उसके मुताल्लिक चार चीज़ें लिख लेता है- अव्वल उसका अमल जो कुछ वह करेगा, दूसरे उसकी उम्र के साल, महीने, दिन और मिनट और साँस तक लिख लिये जाते हैं, तीसरे उसको कहाँ मरना और कहाँ दफ़न होना है, चौथे उसका रिज़क कितना और किस-किस तरीके से पहुँचना है (और लौह-ए-महफूज़ में आसमान ज़मीन की पैदाईश से भी पहले लिखा होना इसके खिलाफ़ नहीं)।

दूसरी आयत में हक़ तआला के कामिल इल्म और ज़बरदस्त कुदरत का एक और निशान ज़िक्र किया गया है कि उसने तमाम आसमानों और ज़मीन को छह दिन में पैदा फ़रमाया और इन चीज़ों के पैदा करने से पहले रहमान का अर्श पानी पर था।

इससे मालूम हुआ कि आसमान व ज़मीन की पैदाईश से पहले पानी पैदा किया गया है और आसमान व ज़मीन को छह दिन में पैदा करने की तफ़सील सूर: 'हा-मीम सज्दा' की आयत 10 व 11 में इस तरह आई है कि दो दिन में ज़मीन बनाई गयी, दो दिन में ज़मीन के पहाड़, दरिया, दरख़्त और जानदारों की ग़िज़ा व बक़ा का सामान बनाया गया, दो दिन में सात आसमान बनाये गये।

तफ़सीर-ए-मज़हरी में है कि आसमान से मुराद तमाम बुलन्द चीज़ें हैं जो ऊपर की दिशा में हैं और ज़मीन से मुराद तमाम नीचे की चीज़ें हैं जो नीचे की दिशा में हैं। और दिन से मुराद वक़्त की वह मात्रा है जो आसमान ज़मीन की पैदाईश के बाद सूरज के निकलने से गुरुब होने तक होती है अगरचे आसमान व ज़मीन की पैदाईश के वक़्त न सूरज था न उसका निकलना और गुरुब होना।

हक़ तआला की कामिल कुदरत में यह भी था कि इन तमाम चीज़ों को एक आन में पैदा फ़रमा दें मगर उसने अपनी हिक्मत से इस आलम के निज़ाम को दर्जा-ब-दर्जा बनाया है जो इनसान के मिज़ाज के मुताबिक़ है।

आयत के आख़िर में आसमान व ज़मीन के पैदा करने का मक़सद यह बतलाया है:

لِيَلْزَمَكُمْ إِلَيْكُمْ أَحْسَنُ عَمَلًا.

यानी ये सब चीज़ें इसलिये पैदा की गयीं कि हम तुम्हारा इम्तिहान लें कि कौन तुम में से अच्छा अमल करने वाला है।

इससे मालूम हुआ कि आसमान व ज़मीन का पैदा करना खुद कोई मक़सद न था बल्कि

इनको अमल करने वाले इनसानों के लिये बनाया गया है ताकि वे इन चीजों से अपने गुजारे का फायदा भी हासिल करें और इनमें गौर करके अपने मालिक और रब को भी पहचानें।

हासिल यह हुआ कि आसमान व ज़मीन की पैदाईश से असल मकसूद इनसान है बल्कि इनसानों में भी ईमान वाले हैं, और उनमें भी वह इनसान जो सबसे अच्छा अमल करने वाला है। और यह ज़ाहिर है कि सारे इनसानों में सबसे अच्छा अमल करने वाले हमारे रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हैं, इसलिये यह कहना सही हुआ कि तमाम कायनात के पैदा करने का असल मकसूद रसूल करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मुबारक वजूद है। (तफसीरे मजहरी)

यहाँ यह बात भी गौर करने के काबिल है कि हक़ तआला ने इस जगह 'अह्सनु अमला' फरमाया है, यानी कौन अच्छा अमल करने वाला है, यह नहीं फरमाया कि कौन ज़्यादा अमल करने वाला है। इससे मालूम हुआ कि नेक आमाल नमाज़, रोज़ा, तिलावत व ज़िक्र की अमली अधिकता और बहुत बड़ी मात्रा से ज़्यादा अल्लाह तआला की नज़र अच्छे अमल पर है। इसी अमल की अच्छाई को एक हदीस में एहसान से ताबीर किया गया है, जिसका हासिल यह है कि अमल खालिस अल्लाह तआला की रज़ा तलब करने के लिये हो और कोई दुनियावी गर्ज उसमें न हो, और उस अमल की सूरत भी वह इख्तियार की जाये जो अल्लाह तआला के नज़दीक पसन्दीदा है, जिसको रसूल करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने अमल से बतलाया और उम्मत के लिये सुन्नत की पैरवी को लाज़िम करार दिया है। खुलासा यह है कि थोड़ा अमल जो पूरे इख़्लास के साथ सुन्नत के मुताबिक हो वह उस ज़्यादा अमल से बेहतर है जिसमें ये चीज़ें न हों, या कम हों।

सातवीं आयत में कियामत व आखिरत का इनकार करने वालों का हाल बयान हुआ है कि ये लोग जो बात उनकी समझ में न आये उसको जादू कहकर टाल देना चाहते हैं।

आठवीं आयत में उन लोगों के शुब्हे का जवाब है जो अज़ाब की वईदों (धमकियों) पर अम्बिया अलैहिमुस्सलाम का एतिबार न करके कहा करते थे कि अगर आप सच्चे हैं तो जिस अज़ाब की वईद थी वह क्यों नहीं आ जाता।

وَلَيْنُ أَذَقْنَا الْإِنْسَانَ مِنَّا رَحْمَةً

ثُمَّ نَرْغَبُهَا مِنْهُ ۚ إِنَّهُ لَيُؤْسُ كَفُورٌ ۝ وَلَيْنُ أَذَقْنَاهُ نِعْمَاءَ بَعْدَ ضَرَاءٍ مَشَتْهُ لَيَقُولَنَّ ذَهَبَ السَّيِّئَاتِ عَنِّي ۚ إِنَّهُ لَفَرِحٌ فَخُورٌ ۝ إِلَّا الَّذِينَ صَبَرُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ ۚ أُولَٰئِكَ لَهُمْ مَغْفِرَةٌ وَأَجْرٌ كَبِيرٌ ۝ فَلَعَلَّكَ تَارِكٌ بَعْضَ مَا يُوحَىٰ إِلَيْكَ وَضَائِقٌ بِهِ صَدْرُكَ أَنْ يَقُولُوا لَوْلَا أُنْزِلَ عَلَيْهِ كُتُبٌ مُّعَةً مَّلَكٌ ۚ إِنَّمَا أَنْتَ نَذِيرٌ ۚ وَاللَّهُ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ وَكِيلٌ ۝ أَمْ يَقُولُونَ افْتَرَاهُ ۚ قُلْ فَأْتُوا بِعَشْرِ سُوْرٍ مِّثْلِهِ مُفْتَرِيَةٍ ۚ وَادْعُوا مَنِ اسْتَطَعْتُمْ مِن دُونِ اللَّهِ إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ۝ فَإِلَّمْ يَسْتَجِيبُوا لَكُمْ فَاعْلَمُوا أَنَّمَا أُنْزِلَ بِعِلْمِ اللَّهِ وَأَنْ لَا إِلَهَ إِلَّا هُوَ ۚ فَهَلْ أَنْتُمْ مُّسْلِمُونَ ۝

व ल-इन् अज़कनल्-इन्सा-न मिन्ना
 रस्म-तन् सुम्-म न-ज़अनाहा मिन्हु
 इन्नहू ल-यऊसुन् कफूर (9) व
 ल-इन् अज़कनाहु नज़मा-अ बज़-द
 ज़र्रा-अ मस्सतहु ल-यकूलन्-न
 ज़-हबस्सय्यिआतु अन्नी, इन्नू
 ल-फ़रिहुन् फखूर (10) इल्लल्लजी-न
 स-बरू व अमिलुस्सालिहाति, उलाइ-क
 लहुम् मग़फ़ि-रतुंव-व अज़रुन् कबीर
 (11) फ़-लअल्ल-क तारिकुम् बज़-ज़
 मा यूहा इलै-क व ज़ाइकुम् बिही
 सदरु-क अय्यकूलू लौ ला उन्ज़ि-ल
 अलैहि कन्ज़ुन् औ जा-अ म-अहू
 म-लकुन्, इन्नमा अन्-त नज़ीरुन्,
 वल्लाहु अला कुल्लि शैइव्-वकील
 (12) अम् यकूलूनफ़तराहु, कुल्
 फ़अतू बिअशिर सु-वरिम्-मिस्लिही
 मुफ़त-रयातिंव्वदअू मनिस्त-तअतुम्
 मिन् दूनिल्लाहि इन् कुन्तुम् सादिकीन
 (13) फ़-इल्लम् यस्तजीबू लकुम्
 फ़अलम् अन्नमा उन्ज़ि-ल बिअलिम्-
 -ल्लाहि व अल्ला इला-ह इल्ला हु-व
 फ़-हल् अन्तुम् मुस्लिमून (14)

और अगर हम चखा दें आदमी को अपनी
 तरफ से रहमत फिर वह छीन लें उससे,
 तो वह नाउम्मीद नाशुक्रा होता है। (9)
 और अगर हम चखा दें उसको आराम
 तकलीफ के बाद जो पहुँची थी उसको तो
 बोल उठे दूर हुई बुराईयाँ मुझसे, वह तो
 इतराने वाला शेरूबाज़ है। (10) मगर
 जो लोग साबिर हैं और करते हैं नेकियाँ,
 उनके वास्ते बख्शि़श है और बड़ा सवाब।
 (11) सो कहीं तू छोड़ बैठेगा कुछ चीज़
 उसमें से जो वही आई तेरी तरफ, और
 तंग होगा उससे तेरा जी इस बात पर कि
 वे कहते हैं क्यों न उतरा इस पर ख़ज़ाना
 या क्यों न आया इसके साथ फ़रिश्ता, तू
 तो डराने वाला है, और अल्लाह है हर
 चीज़ का ज़िम्मेदार। (12) क्या कहते हैं
 कि बना लाया है तू कुरआन को, कह दे
 कि तुम भी ले आओ एक दस सूरतें ऐसी
 बनाकर और बुला लो जिसको बुला सको
 अल्लाह के सिवा, अगर हो तुम सच्चे।
 (13) फिर अगर न पूरा करें तुम्हारा
 कहना तो जान लो कि कुरआन तो उतरा
 है अल्लाह की वही से, और यह कि कोई
 हाकिम नहीं उसके सिवा, फिर अब तुम
 हुक्म मानते हो? (14)

खुलासा-ए-तफ़सीर

और अगर हम इनसान को अपनी मेहरबानी का मज़ा चखाकर उससे छीन लेते हैं तो वह

नाउम्मीद और नाशुक्रा हो जाता है। और अगर उसको किसी तकलीफ़ के बाद जो कि उस पर आ पड़ी हो किसी नेमत का मज़ा चखा दें तो (ऐसा इतराता है कि) कहने लगता है कि मेरा सब दुख-दर्द रुख़्त हुआ (अब कभी न होगा), पस वह इतराने लगता है, शेखी बघारने लगता है। मगर जो लोग मुस्तक़िल-मिज़ाज हैं और नेक काम करते हैं (इससे मुराद मोमिन हज़रात हैं कि उनमें कम व बेश ये ख़स्ततें होती हैं, सो) वे ऐसे नहीं होते (बल्कि नेमत के जाते रहने और छिन जाने के वक़्त सब्र से काम लेते हैं और नेमत मिलने के वक़्त शुक्र व नेकी बजा लाते हैं पस) ऐसे लोगों के लिये बड़ी मग़फ़िरत और बड़ा अज़्र है। (खुलासा यह है कि सिवाय मोमिनों के अक्सर आदमी ऐसे ही हैं कि ज़रा सी देर में निडर हो जायें, ज़रा सी देर में नाउम्मीद हो जायें, इसलिये ये लोग अज़ाब में देरी के सबब बेख़ौफ़ और मुन्किर हो गये। ये लोग जो इनकार व मज़ाक़ उड़ाने से पेश आते हैं) सो शायद आप (तंग होकर) उन (अहक़ाम) में से जो कि आपके पास वही के ज़रिये से भेजे जाते हैं कुछ को (कि वह तब्लीग़ है) छोड़ देना चाहते हैं? (यानी क्या ऐसा मुम्किन है कि आप तब्लीग़ करना छोड़ दें? सो ज़ाहिर है कि ऐसा इरादा तो आप कर नहीं सकते, फिर तंग होने से क्या फ़ायदा) और आपका दिल इस बात से तंग होता है कि वे कहते हैं कि (अगर यह नबी हैं तो) इन पर कोई ख़ज़ाना क्यों नाज़िल नहीं हुआ, या इनके साथ कोई फ़रिश्ता (जो हमसे भी बातचीत करता) क्यों नहीं आया? (यानी ऐसे मोज़िज़े क्यों नहीं दिये गये, सो ऐसी बातों से आप तंग न होजिये क्योंकि) आप तो (इन काफ़िरों के एतिबार से) सिर्फ़ डराने वाले हैं (यानी पैग़म्बर हैं, जिसके लिये दर असल किसी भी मोज़िज़े की ज़रूरत नहीं) और हर चीज़ पर पूरा इख़्तियार रखने वाला (तो) अल्लाह ही है (आप नहीं हैं)।

(जब यह बात है तो उन मोज़िज़ों का ज़ाहिर करना आपके इख़्तियार से बाहर है फिर उसकी फ़िक्र और उस फ़िक्र से तंगी क्यों हो, और चूँकि पैग़म्बर के लिये सिर्फ़ मोज़िज़े की ज़रूरत है और आपका बड़ा मोज़िज़ा क़ुरआन है तो इसको न मानने की क्या वजह) क्या (इसके बारे में यूँ) कहते हैं (नज़्ज़ु बिल्लाह) कि आपने इसको (अपनी तरफ़ से) खुद बना लिया है? आप (जवाब में) फ़रमा दीजिये कि अगर (यह मेरा बनाया हुआ है) तो (अच्छा) तुम भी इस जैसी दस सूरतें (जो तुम्हारी) बनाई हुई (हों) ले आओ, और (अपनी मदद के लिये) जिन-जिन को अल्लाह के अलावा बुला सको बुला लो, अगर तुम सच्चे हो।

फिर ये (काफ़िर लोग) अगर तुम लोगों का (यानी पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम और मोमिनों का यह) कहना (कि इसके जैसा बना लाओ) न कर सकें तो तुम (इनसे कह दो कि अब तो) यकीन कर लो कि (यह क़ुरआन) अल्लाह ही के इल्म (और कुदरत) से उतरा है (इसमें और किसी के न इल्म का दख़ल है और न कुदरत का), और यह भी (यकीन कर लो) कि अल्लाह तआला के सिवा कोई माबूद नहीं (क्योंकि माबूद खुदाई की सिफ़ात में कामिल होता है फिर अगर और कोई होता तो उसकी कुदरत भी पूरी होती और उस कुदरत से वह तुम लोगों की मदद करता कि तुम इसके जैसा ले आते, क्योंकि दीन की तहकीक़ का मौक़ा इसको चाहता था, पस इसके जैसा बनाने से उनके अज़िज़ होने से रिसालत और तौहीद दोनों साबित हो गये,

जब दोनों साबित हो गये) तो फिर अब भी मुसलमान होते हो (या नहीं)?

मआरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की रिसालत की तस्दीक़ और उसमें शुब्हात निकालने वालों का जवाब बयान हुआ है, और इसके शुरू यानी पहली तीन आयतों में इनसान की एक तबई बुरी आदत का ज़िक्र और मुसलमानों को उससे बचने की हिदायत है।

पहली दो आयतों में फितरी तौर पर इनसान का गैर-मुस्तक़िल मिज़ाज, जल्दी-पसन्द होना और मौजूदा हालत में खप कर अतीत और भविष्य को भुला देना बयान फरमाया है। इरशाद है कि अगर हम इनसान को कोई नेमत चखाते हैं और फिर उससे वापस ले लेते हैं तो वह बड़ा हिम्मत हारने वाला, नाउम्मीद और नाशुक्रा बन जाता है, और अगर उसको किसी तकलीफ़ के बाद जो उसको पेश आई हो किसी नेमत का मज़ा चखा दें तो कहने लगता है कि मेरा सब दुख-दर्द रुख़स्त हुआ और वह इतराने और शेख़ी बघारने लगता है।

मतलब यह है कि इनसान फितरी तौर पर जल्द-बाज़ी पसन्द और मौजूदा हालत को सब कुछ समझने का आदी होता है, अगले पिछले हालात व वाकिआत में ग़ौर व फ़िक्र और उनको याद रखने का आदी नहीं होता, इसी लिये नेमत के बाद तकलीफ़ आ जाये तो रहमत से नाउम्मीद होकर नाशुक्रा करने लगता है, यह ख़्याल नहीं करता कि जिस पाक ज़ात ने पहले नेमत दी थी वह फिर भी दे सकता है। इसी तरह अगर उसको तकलीफ़ व मुसीबत के बाद कोई राहत व नेमत मिल जाये तो बजाय इसके कि पिछली हालत में ग़ौर करके अल्लाह तआला की तरफ़ रुजू होता, उसका शुक्र करता, और ज़्यादा अकड़ने इतराने लगता है और पिछली हालत को भूलकर यूँ समझने लगता है कि यह नेमत तो मेरा हक़ है, मुझे मिलना ही चाहिये और मैं हमेशा इसी तरह रहूँगा। ग़ाफ़िल यह ख़्याल नहीं करता कि जिस तरह पहली हालत बाकी नहीं रही, यह भी हो सकता है कि यह नेमत व राहत की हालत भी बाकी न रहे।

इनसान की मौजूद-परस्ती और अतीत व भविष्य को भूल जाने का यह आलम है कि एक सत्ताधारी (ताक़त व इज़्तिहार के मालिक) के खाक व खून पर दूसरा शख्स अपने इक्तिदार की बुनियाद कायम करता है और कभी नीचे की तरफ़ नज़र नहीं करता कि इससे पहला ताक़त व हुकूमत वाला भी इसी तरह रहा करता था, उसके अन्जाम से बेख़बर होकर ताक़त व हुकूमत के नशे के मजे लेता है।

इसी मौजूद-परस्ती और वर्तमान में मस्त रहने की इस्लाह (सुधार) के लिये अल्लाह तआला की किताबें और रसूल आते हैं जो इनसान को गुज़रे ज़माने के इबतनाक वाकिआत याद दिलाकर भविष्य की फ़िक्र सामने कर देते हैं और यह सबक़ सिखाते हैं कि कायनात के बदलते हुए हालात व तब्दीलियों में ग़ौर करो कि कौनसी ताक़त उनके पर्दे में काम कर रही है। बकौल हज़रत शैख़ुल-हिन्द रहमतुल्लाहि अलैहि:

इन्क़िलाबात-ए-जहाँ वाजिज़-ए-रब हैं देखो

हर तग़य्युर से सदा आती है फ़फ़हम् फ़फ़हम्

यानी दुनिया की यह अदलती-बदलती हालतें अल्लाह की तरफ़ से नसीहत का पैग़ाम हैं। हर बदलाव से यही आवाज़ आती है कि यह सब कुछ स्थिर नहीं है, समझ लो ख़ूब समझ लो। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

कामिल मोमिन बल्कि कामिल इनसान वही है जो हर तब्दीली व इन्क़िलाब और हर रंज व राहत में कुदरत के छुपे हुए हाथ की ताक़त को समझे, आनी फ़ानी राहत व रंज और उसके सिर्फ़ माही असबाब पर दिल न लगाये।

अक्लमन्द का काम यह है कि असबाब से ज़्यादा असबाब के बनाने वाले की तरफ़ नज़र करे, उसी से अपना रिश्ता मज़बूत बाँधे।

तीसरी आयत में ऐसे ही कामिल इनसानों को आम इनसानी फ़ितरत से अलग और नुमायाँ करने के लिये फ़रमाया है:

إِلَّا الَّذِينَ صَبَرُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ.

यानी इस आम इनसानी कमज़ोरी से वे लोग अलग हैं जिनमें दो सिफ़तें पाई जायें- एक सब्र, दूसरे नेक अमल।

लफ़ज़ सब्र अरबी भाषा में उर्दू मुहावरे से बहुत आम मायने में इस्तेमाल होता है, और असली मायने लफ़ज़ सब्र के बाँधने और रोकने के हैं। कुरआन व सुन्नत की परिभाषा में नफ़्स को उसकी नाजायज़ इच्छाओं से रोकने का नाम सब्र है, इसलिये सब्र के मफ़हूम में तमाम गुनाहों और खिलाफ़े शरीअत कामों से परहेज़ आ गया, और नेक अमल में तमाम फ़राईज़ व वाजिबात और सुन्नतें व मुस्तहब चीज़ें आ गयीं। मायने यह हो गये कि इस आम इनसानी कमज़ोरी से वे लोग बचे रहेंगे जो अल्लाह तआला पर ईमान और क़ियामत के हिसाब के डर की वजह से हर ऐसी चीज़ से परहेज़ करते रहें जो अल्लाह व रसूल को नापसन्द है, और हर ऐसे अमल की तरफ़ दौड़ें जिनसे अल्लाह तआला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम खुश हों।

इसी आयत के आख़िर में उन कामिल इनसानों का सिला और जज़ा भी यह बतलाई गयी है कि:

أُولَٰئِكَ لَهُمْ مَغْفِرَةٌ وَأَجْرٌ كَبِيرٌ

यानी ऐसे लोगों के लिये अल्लाह तआला का वायदा है कि उनकी ख़तायें बख़्श दी जायेंगी और उनके नेक अमल का बहुत बड़ा बदला उनको मिलेगा।

इस जगह यह बात भी ध्यान देने के काबिल है कि दुनिया की नेमत और परेशानी दोनों के बारे में कुरआने करीम ने 'अज़क्ना' यानी चखाने का लफ़ज़ इस्तेमाल करके इसकी तरफ़ भी इशारा कर दिया कि असल नेमत और परेशानी व मुसीबत आख़िरत की है, दुनिया में न राहत मुकम्मल है न तकलीफ़ बल्कि चखने और नमूने के दर्जे में है ताकि इनसान को आख़िरत की

नेमतों और तकलीफों का कुछ अन्दाज़ा हो सके, इसलिये भी दुनिया की न राहत कुछ ज्यादा खुश होने की चीज़ है न मुसीबत कुछ ज्यादा ग़म करने की। अगर ग़ौर करो तो आजकल की परिभाषा में यह सारी दुनिया आखिरत का शोरूम है जिसमें राहत व मुसीबत के सिर्फ़ नमूने रखे हैं।

चौथी आयत एक खास वाकिए में नाज़िल हुई है। वाकिए यह था कि मक्का के मुश्रिक लोगों ने हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने विभिन्न प्रकार की फ़रमाइशें पेश कीं, एक यह कि इस कुरआन में हमारे बुतों को बुरा कहा गया है इसलिये हम इस पर ईमान नहीं ला सकते, इसलिये या तो आप कोई दूसरा कुरआन लायें या इसी में बदल कर तरमीम कर दें:

اِنَّ بَقْرَانَ غَيْرِ هَذَا اَوْ بَدَلَهُ.

(तफ़सीरे बग़वी, तफ़सीरे मज़हरी)

दूसरे यह कि हम आपके रसूल होने पर जब यकीन करें कि या तो दुनिया के बादशाहों की तरह आप पर कोई ख़ज़ाना नाज़िल हो जाये जिससे सब को बख़्शिश करें, या फिर कोई फ़रिश्ता आसमान से आ जाये, वह आपके साथ यह तस्दीक़ करता फ़िरे कि बेशक यह अल्लाह के रसूल हैं। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उनकी बेकार व बेहूदा फ़रमाइशों से दिल-तंग हुए, क्योंकि रहमतुल्लिल्लाहमीन से यह भी मुम्किन न था कि उनको उनके हाल पर छोड़ दें, उनके ईमान लाने की फ़िक्र को दिल से निकाल दें, और न यह मुम्किन था कि उनकी बेहूदा फ़रमाइशों को पूरा करें। क्योंकि अब्बल तो ये फ़रमाइशें ख़ालिस बेज़व्ती पर आधारित हैं, बुत और बुत-परस्ती और दूसरी बुरी चीज़ों को बुरा न कहा जाये तो हिदायत कैसे हो? और ख़ज़ाने का नुबुव्वत के साथ क्या जोड़। उन लोगों ने नुबुव्वत को बादशाहत पर क्यास कर लिया।

इसी तरह अल्लाह तआला का यह दस्तूर नहीं कि ऐसी हालत पैदा कर दें कि लोग ईमान लाने से मादी तौर से मजबूर हो जायें, वरना सारा जहान उसकी कुदरत के कब्ज़े में है, किसी की क्या मजाल थी कि अल्लाह तआला की मर्जी के खिलाफ़ कोई अक्कीदा या अमल रख सकता, मगर उसने अपनी कामिल हिक़मत से इस दुनिया को इम्तिहान की जगह बनाया है, यहाँ किसी नेकी पर अमल या बदी से परहेज़ पर मादी असबाब के ज़रिये किसी को मजबूर नहीं किया जाता, अलबत्ता आसमानी किताबों और रसूलों के ज़रिये नेक व बद और अच्छे-बुरे का फ़र्क़ और उनके परिणाम बतलाकर नेकी पर अमल और बदी से परहेज़ पर तैयार किया जाता है। अगर रसूल के साथ मोजिजे के तौर पर कोई फ़रिश्ता उसके क़ील की तस्दीक़ (पुष्टि) के लिये लगाया जाता और जब कोई न मानता तो उसी वक़्त उसको नक़द अज़ाब का सामना होता तो यह ईमान पर मजबूर करने की एक सूरत होती, न इसमें ग़ैब पर ईमान रहता जो ईमान की असल रूह है और न इनसान का अपना कोई इख़्तियार रहता जो उसके अमल की रूह है, और अलावा इसके कि उनकी फ़रमाइशें बेकार और बेहूदा थीं, हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से इस तरह की फ़रमाइशें करना खुद इसकी दलील थी कि ये लोग रसूल व नबी की हक़ीक़त को नहीं पहचानते, रसूल और खुदा में कोई फ़र्क़ नहीं करते, रसूल को खुदा तआला की तरह

असीमित इच्छियार वाला समझते हैं, इसी लिये उससे ऐसे कामों की फरमाईश करते हैं जो अल्लाह के सिवा कोई नहीं कर सकता।

गर्ज कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उनकी ऐसी फरमाईशों से सख्त दुखी और परेशान हो गये तो आपकी तसल्ली और उनके ख्यालात की इस्लाह (सुधार) के लिये यह आयत नाज़िल हुई, जिसमें पहले हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को खिताब करके फरमाया गया कि क्या आप उनके कहने से मजबूर होकर अल्लाह के भेजे हुए कुरआन का कोई हिस्सा छोड़ देंगे जिससे ये लोग नाखुश होते हैं? मसलन जिसमें बुतों के मजबूर व बेकस होने और किसी चीज़ पर कादिर न होने का बयान है, और क्या आप उनकी ऐसी फरमाईशों से दुखी हो जायेंगे? यहाँ लफ्ज़ 'लअल्ल-क' से इस मज़मून को ताबीर करने का यह मतलब नहीं कि वास्तव में आपके बारे में ऐसा गुमान हो सकता था, बल्कि मक़सद आपका इन चीज़ों से बरी होना बयान करना है, कि आप न कुरआन का कोई हिस्सा उनकी रियायत से छोड़ सकते हैं और न आपको उनकी फरमाईशों से दिली तंगी होनी चाहिये, क्योंकि आप तो अल्लाह की तरफ से नज़ीर यानी डराने वाले बनाकर भेजे गये हैं, और सब कामों को अन्जाम देना और पूरा करना तो अल्लाह ही की कुदरत में है। डराने वाला होने की सिफ़त खास तौर पर इसलिये बयान की गयी क्योंकि ये काफ़िर तो डराने ही के हक़दार हैं वरना रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जैसे नज़ीर यानी डराने वाले हैं ऐसे ही बशीर यानी नेक लोगों को खुशख़बरी सुनाने वाले भी हैं। इसके अलावा नज़ीर हकीकत में उस डराने वाले को कहते हैं जो शफ़क़त व मुहब्बत की बिना पर ख़राब और नुक़सान देने वाली चीज़ों से डराये, इसलिये नज़ीर के मफ़हूम में बशीर का मफ़हूम भी एक हैसियत से शामिल है।

ज़िक्र की गयी आयतों में मुशिरकों की तरफ़ से खास किस्म के मोज़िज़ों का मुतालबा था, अगली आयतों में उनको इस बात से आगाह किया गया है कि हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का कुरआन का मोज़िज़ा एक ऐसा मोज़िज़ा तुम्हारे सामने आ चुका है जिसके मोज़िज़ा होने का तुम भी इनकार नहीं कर सकते, तो अगर यह मोज़िज़ों का मुतालबा सही नीयत से रसूल की सच्ची हक़ानियत मालूम करने के लिये है तो वह पूरा हो चुका, और अगर महज़ दुश्मनी व मुख़ालफ़त के लिये है तो अगर तुम्हारे मतलूबा मोज़िज़े भी दिखला दिये जायें तो विरोधियों व दुश्मनों से क्या उम्मीद है कि उनको देखकर भी वे इस्लाम कुबूल करेंगे। बहरहाल कुरआने करीम का स्पष्ट और खुला मोज़िज़ा होना नाक़ाबिले इनकार है।

इस पर मुशिरकों व काफ़िरों की तरफ़ से जो ग़लत शुब्हे पैदा किये गये उनकी तरदीद (रद्द करना) अगली दो आयतों में इस तरह की गयी है कि ये लोग यूँ कहते हैं कि कुरआन को खुद हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बना लिया है, अल्लाह का कलाम नहीं।

इसके जवाब में फ़रमाया कि अगर तुम्हारा ऐसा ही ख़याल है कि मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ऐसा कुरआन खुद बना सकते हैं तो तुम भी इस जैसी सिर्फ़ दस सूरतें ही बनाकर दिखला दो, और यह भी ज़रूरी नहीं कि ये दस सूरतें कोई एक ही आदमी बनाये बल्कि दुनिया

जहान के लोग सब मिलकर भी बना लायें। और जब वे दस सूरतें बनाने से भी आजिज़ हों तो आप फरमा दीजिये कि अब तो हकीकत खुल गयी, क्योंकि अगर यह कुरआन किसी इनसान का कलाम होता तो दूसरे इनसान भी इस जैसा कलाम बना सकते, और सब का आजिज़ होना इसकी मज़बूत दलील है कि यह कुरआन अल्लाह ही के इल्म से नाज़िल हुआ है जिसमें किसी मामूली कमी-बेशी की गुंजाईश नहीं, और इनसानी ताकत से ऊपर है।

कुरआने करीम ने इस जगह दस सूरतें मुकाबले में बनाकर लाने का इरशाद फरमाया है, और दूसरी एक आयत में यह भी जिक्र फरमाया है कि एक ही सूरत इस जैसी बना लाओ।

वजह यह है कि पहले दस सूरतें बनाने का हुक्म दिया गया, जब वे इससे आजिज़ हो गये तो फिर उनके आजिज़ होने को और ज़्यादा वाज़ेह करने के लिये सूर: ब-क़रह की आयत में फरमाया कि अगर तुम कुरआन को किसी इनसान का कलाम समझते हो तो तुम भी ज़्यादा नहीं सिर्फ एक ही सूरत इस जैसी बना लाओ, मगर वे कुरआने करीम की इस चुनौती और उनके लिये इन्तिहाई आसानी कर देने के बावजूद कुछ न कर सके तो कुरआने करीम का मोजिज़ा होना और बिला शुब्ह अल्लाह का कलाम होना साबित हो गया। इसी लिये आखिर में फरमाया:

فَهَلْ أَنتُمْ مُسْلِمُونَ ॥

यानी क्या तुम अब भी मुसलमान और फरमाँबरदार बनोगे, या इसी ग़फ़लत की नींद में रहोगे?

مَنْ كَانَ يُرِيدُ الْحَيَاةَ الدُّنْيَا وَزِينَتَهَا نُوَفِّ إِلَيْهِمْ أَعْمَالَهُمْ فِيهَا وَهُمْ فِيهَا لَا يُبْخَسُونَ ۝
أُولَٰئِكَ الَّذِينَ لَيْسَ لَهُمْ فِي الْآخِرَةِ إِلَّا النَّارُ ۖ وَحَبِطَ مَا صَنَعُوا فِيهَا وَبِطُلَّ مَا كَانُوا
يَعْمَلُونَ ۝ أَفَمَنْ كَانَ عَلَىٰ بَيِّنَةٍ مِّن رَّبِّهِ وَيَتْلُوهُ شَاهِدٌ مِّنْهُ وَمِنْ قَبْلِهِ كُتِبَ مُوسَىٰ إِمَامًا وَرَحْمَةً
أُولَٰئِكَ يُؤْمِنُونَ بِهِ ۚ وَمَنْ يَكْفُرْ بِهِ مِنَ الْأَحْزَابِ فَالنَّارُ مَوْعِدُهُ ۚ فَلَا تَكُ فِي مِرْيَةٍ مِّنْهُ إِنَّهُ الْحَقُّ
مِنْ رَبِّكَ وَلَكِنَّ أَكْثَرَ النَّاسِ لَا يُؤْمِنُونَ ۝

मन् का-न युरीदुल्-हयातदुदुन्या व
जीन-तहा नुवफ़िफ़ इलैहिम्
अअमालहुम् फीहा व हुम् फीहा ला
युब़्ख़ासून (15) उलाइकल्लजी-न
लै-स लहुम् फ़िल्-आख़िरति
इल्लन्नारु व हबि-त मा स-नअू फीहा
व बातिलुम्-मा कानू यअमलून (16)

जो कोई चाहे दुनिया की ज़िन्दगानी और इसकी जीनत, भुगता देंगे हम उनको उनके अमल दुनिया में और उनको इसमें कुछ नुक़सान नहीं। (15) यही हैं जिनके वास्ते कुछ नहीं आख़िरत में आग के सिवा, और बरबाद हुआ जो कुछ किया था यहाँ, और ख़राब गया जो कमाया था। (16) भला एक शख्स जो है साफ़

अ-फ़मन् का-न अला बय्यिनतिम्
मिर्रिब्बिही व यत्लूहु शाहिदुम् मिन्हु
व मिन् क़ब्लिही किताबु मूसा
इमामं-व रहमतन्, उलाइ-क
युअ्मिनू-न बिही, व मय्यक्फुर बिही
मिनल्-अहज़ाबि फन्नारु मौअिदुह
फला तकु फी मिर्यतिम् मिन्हु,
इन्नहुल्-हक्कु मिर्रिब्बि-क व
लाकिन्-न अक्सरन्नासि ला
युअ्मिनून (17)

रास्ते पर अपने रब के और उसके साथ
साथ है एक गवाह अल्लाह की तरफ़ से,
और इससे पहले गवाह थी मूसा की
किताब रास्ता बताती और बख़्शवाती
(औरों की बराबर है?) यही लोग मानते
हैं कुरआन को, और जो कोई मुन्किर हो
उससे सब फ़िक्रों में से सौ दोज़ख़ है
उसका ठिकाना, सो तू मत रह शुब़े में
उससे, बेशक वह हक् है तेरे रब की
तरफ़ से, और पर बहुत से लोग यकीन
नहीं करते। (17)

खुलासा-ए-तफसीर

जो शख्स (अपने अच्छे आमाल से) महज़ दुनियावी ज़िन्दगी (के फायदों) और इसकी रौनक
(को हासिल करना) चाहता है (जैसे शोहरत व नेकनामी और रुतबा, और आखिरत का सवाब
हासिल करने की उसकी नीयत न हो) तो हम उन लोगों के (उन) आमाल (का बदला) उनको
इस (दुनिया) ही में पूरे तौर से भुगता देते हैं, और उनके लिये (दुनिया) में कुछ कमी नहीं होती
(यानी दुनिया ही में उनके आमाल के बदले में उनको नेकनामी, सेहत व फरागत, ऐश और माल
व औलाद में अधिकता व ज़्यादती इनायत कर दी जाती है जबकि उनके आमाल का असर
उनके विपरीत कामों पर ग़ालिब हो, और अगर विपरीत यानी बुरे काम ग़ालिब हों तो फिर यह
असर मुरत्तब नहीं होता। यह तो दुनिया में हुआ, रहा आखिरत में, सो) ये ऐसे लोग हैं कि इनके
लिये आखिरत में सिवाय दोज़ख़ के और कुछ (सवाब वगैरह) नहीं, और इन्होंने इस (दुनिया) में
जो कुछ किया था वह (आखिरत में सब-का-सब) नाकारा (साबित) होगा, और (हकीकत में तो)
जो कुछ कर रहे हैं वह अब भी बेअसर है (नीयत में खराबी की वजह से, मगर जाहिरी सूरत के
एतिबार से साबित समझा जाता है आखिरत में यह सबूत भी खत्म और दूर हो जायेगा)।

क्या (कुरआन का इनकार करने वाला ऐसे शख्स की बराबरी कर सकता है) जो कुरआन
पर कायम हो? जो कि उसके रब की तरफ़ से आया है, और इस (कुरआन) के साथ एक गवाह
तो इसी में (मौजूद) है (यानी इसका अपने जैसा लाने से सब को आजिज़ करने वाला होना, जो
कि अक्ली दलील है) और एक इससे पहले (यानी) मूसा (अलैहिस्सलाम) की किताब (यानी
तौरात इसके साथ गवाही के लिये मौजूद) है, जो (अहकाम बतलाने के एतिबार से) इमाम है
और (अहकाम पर जो फल व सवाब मिलेगा उसके एतिबार से वह किताब) रहमत (का सबब)

है (और यह किताबी व रिवायती दलील है। गर्ज कि कुरआन की सच्चाई और सही होने के लिये अक्ली और नक्ली दोनों दलीलें मौजूद हैं, पर इन ही दलीलों के सबब से) ऐसे लोग (जिनका जिक्र हुआ कि वे सही रास्ते वाले हैं) इस (कुरआन) पर ईमान रखते हैं। और (काफिर का यह हाल है कि) (दूसरे) फिर्कों में से जो शख्स इस (कुरआन) का इनकार करेगा तो दोज़ख उसके वायदे की जगह है (फिर कुरआन का इनकार करने वाला इसकी तस्दीक करने वाले के बराबर कैसे हुआ)। सो (ऐ मुखातब!) तुम कुरआन की तरफ से शक में मत पड़ना, इसमें कोई शक व शुब्हा नहीं कि वह सच्ची (किताब) है, तुम्हारे रब के पास से (आई है) लेकिन (बावजूद इन दलीलों के गर्ज है कि) बहुत-से आदमी ईमान नहीं लाते।

मअरिफ़ व मसाईल

इस्लाम के मुखालिफों और विरोधियों को जब अज़ाब की वईदें (डॉट और धमकियाँ) सुनाई जातीं तो वे अपनी खैरात व सदकात, मख़्लूक की ख़िदमत और अ़वामी फ़ायदों के कामों को सनद में पेश करते थे कि हम ऐसे नेक काम करते हैं फिर हमको अज़ाब कैसा? और आज तो बहुत से नावाकिफ़ मुसलमान भी इस शुब्हे में गिरफ़्तार नज़र आते हैं कि जो काफ़िर ज़ाहिरी आमाल व अख़्लाक दुरुस्त रखते हैं, अल्लाह की मख़्लूक की ख़िदमत और खैरात व सदकात करते हैं, सड़कें, पुल, शिफाखाने, पानी की सबीलें बनाते और चलाते हैं उनको मुसलमानों से अच्छा जानते हैं, उक्त आयतों में से पहली आयत में इसका जवाब दिया गया है।

खुलासा जवाब का यह है कि हर अमल के मक़बूल और आख़िरत की निजात का ज़रिया होने की पहली शर्त यह है कि वह अमल अल्लाह के लिये किया गया हो, और अल्लाह के लिये करना वही मोतबर है जो उसके रसूल के बतलाये हुए तरीक़े पर किया गया हो। जो शख्स अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान ही नहीं रखता उसके तमाम आमाल व अख़्लाक एक बेरूह ढाँचा है जिसकी शक़्ल व सूरत तो अच्छी भली है मगर रूह न होने की वजह से आख़िरत के घर में उसका कोई वज़न और असर नहीं, अलबत्ता दुनिया में चूँकि उससे लोगों को फ़ायदा पहुँचता है और ज़ाहिरी सूरत के एतिबार से वह नेक अमल है इसलिये अल्लाह जल्ल शानुहू ने अपने अदल व इन्साफ़ की बिना पर उस अमल को भी बिल्कुल ज़ाया नहीं करार दिया बल्कि उसके करने वाले के पेशे नज़र जो मक़सद था कि दुनिया में उसकी इज़्ज़त हो, लोग उसको सख़ी, करीम, बड़ा आदमी समझें, दुनिया की दौलत, तन्दुरुस्ती और राहत नसीब हो, अल्लाह तआला उसको यह सब कुछ दुनिया में दे देते हैं, आख़िरत का तसब्बुर और वहाँ की निजात उसके पेशे नज़र ही न थी और न उसका बेरूह अमल वहाँ की नेमतों की कीमत बन सकता था इसलिये उन आमाल का वहाँ कुछ बदला न मिलेगा और कुफ़्र व नाफ़रमानी की वजह से जहन्नम में रहेगा। यह खुलासा-ए-मज़मून है पहली आयत का, अब उसके अलफ़ाज़ को देखिये।

इरशाद है कि जो शख्स सिर्फ़ दुनिया की ज़िन्दगी और इसकी रैनक ही का इरादा करता रहा तो हम उसके आमाल का बदला दुनिया ही में पूरा दे देते हैं, उनके लिये दुनिया में कुछ

कमी नहीं होती, ये ऐसे लोग हैं कि इनके लिये आखिरत में सिवाय दोज़ख के और कुछ नहीं।

यहाँ यह भी ध्यान देने के काबिल है कि कुरआन में इस जगह 'मन् अरा-द' का मुख़्तसर लफ़्ज़ छोड़कर 'मन् का-न युरीदु' का लफ़्ज़ इख़्तियार फ़रमाया है जो किसी काम के हमेशा होते रहने पर दलालत करता है, जिसका तर्जुमा "इरादा करता रहा" किया गया है। इससे मालूम हुआ कि यह हाल सिर्फ़ ऐसे लोगों का है जो अपने आमाल और नेकियों से सिर्फ़ दुनिया ही का फायदा चाहते रहे, कभी आखिरत की फ़िक्र ही न हुई। और जो शख्स आखिरत की फ़िक्र और वहाँ की निजात के लिये अमल करता है फिर उसके साथ कुछ दुनिया का भी इरादा कर ले तो वह इसमें दाख़िल नहीं।

तफ़सीर के इमामों का इसमें मतभेद है कि यह आयत काफ़िरों के हक़ में आई है या मुसलमानों के, या मुस्लिम व काफ़िर दोनों से मुताल्लिक है।

आयत के आख़िरी जुमले में जो अलफ़ाज़ आये हैं कि आखिरत में उनके लिये सिवाय दोज़ख के कुछ हीं, इससे बज़ाहिर यह मालूम होता है कि काफ़िरों ही के बारे में है क्योंकि मुसलमान कितना ही गुनाहगार हो, गुनाहों की सज़ा भुगतने के बाद आख़िरकार जन्नत में जायेगा। इसी लिये इमाम ज़ह्हाक रह. वग़ैरह मुफ़स्सिरीन ने इसको काफ़िर ही के बारे में क़रार दिया है।

और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इससे मुराद वे मुसलमान हैं जो अपने नेक आमाल से सिर्फ़ दुनिया की भलाई, राहत, दौलत, इज़्ज़त के तलबगार हैं, नेक अमल इसी नीयत से करते हैं कि दुनिया में इज़्ज़त व राहत मिले, और मज़कूरा जुमले का मतलब यह है कि जब तक अपने बुरे आमाल की सज़ा न भुगत लेंगे उस वक़्त तक उनको सिवाय दोज़ख के कुछ न मिलेगा।

और ज़्यादा वरीयता प्राप्त और वाज़ेह बात यह है कि यह आयत उन लोगों से संबन्धित है जो अपने नेक आमाल को सिर्फ़ दुनिया के फायदों दौलत, इज़्ज़त, सेहत वग़ैरह की नीयत से करते हैं, चाहे ऐसा करने वाले काफ़िर हों जो आखिरत के कायल ही नहीं या मुसलमान हों जो ज़बान से आखिरत के कायल हैं मगर अमल में उसकी फ़िक्र नहीं रखते, बल्कि सारी फ़िक्र दुनिया ही के फायदों से जोड़े रखते हैं। मुफ़स्सिरीन हज़रात में से मुजाहिद, मैमून बिन मेहरान, मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हुम ने इसी को इख़्तियार फ़रमाया है।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मशहूर हदीस:

إِنَّمَا الْأَعْمَالُ بِالنِّيَّاتِ.

(आमाल का दारोमदार नीयतों पर है) से भी इसी मायने की ताईद होती है कि जो शख्स अपने अमल में जिस चीज़ की नीयत करता है उसको वही मिलती है, जो दुनिया की नीयत करता है उसको दुनिया मिलती है, जो आखिरत की नीयत करता है आखिरत मिलती है, जो दोनों की नीयत करता है उसको दोनों मिलती हैं। तमाम आमाल का मदर नीयत पर होना एक ऐसा उसूल है जो हर मिल्लत व मज़हब में तस्लीम किया गया है। (तफ़सीरे कुतुबी)

इसी लिये एक हदीस में है कि कियामत के दिन उन लोगों को लाया जायेगा जो दुनिया में इबादत इसलिये करते थे कि लोगों की नज़र में उनकी इज़्ज़त हो, उनसे कहा जायेगा कि तुमने नमाज़ पढ़ी, सद्का ख़ैरात किया, जिहाद किया, कुरआन की तिलावत की मगर यह सब इस नीयत से किया कि तुम नमाज़ी और सखी और गाज़ी और कारी कहलाओ तो जो तुम चाहते थे वह तुम्हें मिल गया, दुनिया में तुम्हें यह खिताब मिल चुके अब यहाँ तुम्हारे इन आमाल का कोई बदला नहीं, और सबसे पहले जहन्नम में उन लोगों को डाला जायेगा।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु यह हदीस नक़ल करके रो पड़े और फरमाया कि कुरआने करीम की आयत:

مَنْ كَانَ يُرِيدَ الْحَيَاةَ الدُّنْيَا وَزِينَتَهَا.

(यानी यही आयत जिसकी तफ़सीर बयान हो रही है) से इस हदीस की तस्दीक होती है।

सही मुस्लिम में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि अल्लाह तआला किसी पर जुल्म नहीं करते, मोमिन जो नेक काम करता है उसको दुनिया में भी कुछ बदला मिलता है और आखिरत में सवाब मिलता है, और काफ़िर (चूँकि आखिरत की फ़िक्र ही नहीं रखता इसलिये उस) का हिसाब दुनिया ही में भुगता दिया जाता है, उसके नेक आमाल के बदले में दुनिया की दौलत, इज़्ज़त, सेहत, राहत उसको दे दी जाती है, यहाँ तक कि जब वह आखिरत में पहुँचता है तो उसके पास कुछ नहीं होता जिसका मुआवज़ा वहाँ पाये।

तफ़सीरे मज़हरी में है कि मोमिन अगरचे दुनिया की फ़लाह का भी इच्छुक होता है मगर आखिरत का इरादा ग़ालिब रहता है इसलिये उसको दुनिया में ज़रूरत के मुताबिक ही मिलता है और बड़ा मुआवज़ा आखिरत में पाता है।

हज़रत फ़ारुके आजम रज़ियल्लाहु अन्हु एक मर्तबा हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मकान पर हाज़िर हुए तो सारे घर में चन्द गिनी-चुनी चीज़ों के सिवा कुछ न देखा तो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से अर्ज किया कि दुआ फ़रमाइये कि अल्लाह तआला आपकी उम्मत को भी दुनिया की वुस्अत अता फ़रमायें, क्योंकि हम ईरान व रूम को देखते हैं वे दुनिया में बड़ी वुस्अत और फ़राखी में हैं, हालाँकि वे खुदा तआला की इबादत नहीं करते। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तकिये से कमर लगाये हुए थे, हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के ये अलफ़ाज़ सुनकर सीधे बैठ गये और फरमाया- ऐ उमर! तुम अब तक इसी ख़्याल में पड़े हो, ये तो वे लोग हैं जिनकी नेकियों का बदला उन्हें दुनिया ही में दे दिया गया है। (मज़हरी)

जामे तिमिज़ी और मुस्नद अहमद में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि जिस शख्स की नीयत अपने आमाल में आखिरत की तलब की होती है अल्लाह तआला दुनिया में उसके दिल को ग़नी कर देते हैं और उसकी ज़रूरतों को पूरा फ़रमा देते हैं और दुनिया उसके पास ज़लील होकर आती है, और जिस शख्स की नीयत दुनिया तलब करने की होती है तो अल्लाह तआला मोहताज़ी उसके

सामने कर देते हैं कि उसकी हाजत कभी पूरी ही नहीं होती क्योंकि दुनिया की हवस उसको चैन से नहीं बैठने देती, एक हाजत पूरी होने से पहले दूसरी हाजत सामने आ जाती है और बेशुमार फिरें उसको लग जाती हैं, और मिलता सिर्फ वही है जो अल्लाह तआला ने उसके लिये लिख दिया है।

ऊपर जिक्र हुई आयत में जो यह इरशाद हुआ है कि दुनिया का इरादा करने वालों को उनके अमल का बदला दुनिया ही में पूरा दे दिया जाता है, इस पर यह शुब्हा हो सकता है कि बहुत से ऐसे लोग भी हैं कि बावजूद दुनिया का इरादा करने और कोशिश करने के दुनिया में भी उनका मतलब पूरा नहीं होता और बाज़ दफ़ा कुछ भी नहीं मिलता। इसका जवाब यह है कि कुरआने करीम की आयत में इस जगह संक्षिप्तता है इसकी पूरी तफसील सूर: बनी इस्राईल की इस आयत में है, जिसमें फ़रमाया है:

مَنْ كَانَ يُرِيدِ الْعَاجِلَةَ عَجَّلْنَا لَهُ فِيهَا مَا نَشَاءُ لِمَنْ نُرِيدُ.

यानी जो शख्स दुनिया ही का इरादा करता रहता है हम उसको दुनिया ही में नक़द दे देते हैं। मगर यह देना दो शर्तों के साथ बंधा है- अव्वल यह कि जिस क़द्र देना चाहें उतना ही देते हैं उनकी माँग और तलब के बराबर देना ज़रूरी नहीं, दूसरे यह कि सिर्फ़ उसी शख्स को देते हैं जिसको देना हक्मत के तकाज़े के एतिबार से मुनासिब समझते हैं हर एक को देना ज़रूरी नहीं।

दूसरी आयत में नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम और सच्चे मोमिनों का हाल उन लोगों के मुकाबले में पेश किया गया जिनकी सोच, इल्म और मक़सद दौड़-धूप सिर्फ़ दुनिया है ताकि दुनिया देख ले कि ये दो ग़िरोह बराबर नहीं हो सकते। फिर उनका यह हाल बयान करके रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम की नुबुव्वत व रिसालत का तमाम इनसानी दुनिया के लिये क़ियामत तक आम होना, और जो शख्स आप पर ईमान न लाये चाहे आमाँल कुछ भी करे उसका गुमराह और जहन्नमी होना बयान फ़रमाया है।

पहले जुमले में फ़रमाया कि क्या कुरआन का इनकार करने वाला ऐसे शख्स की बराबरी कर सकता है जो कुरआन पर कायम हो, जो कि उसके रब की तरफ़ से आया है, और इसके साथ एक गवाह तो इसी में मौजूद है, और इससे पहले मूसा की किताब गवाह है जो काबिले पैरवी और लोगों के लिये रहमत बनाकर भेजी गयी थी।

इस आयत में 'बय्यिना' से मुराद कुरआन है, और 'शाहिद' के मायने में तफसीर के इमामों के मुख़लिफ़ अक़वाल हैं। बयानुल-कुरआन में हज़रत थानवी रह. ने इसको इख़्तियार किया है कि शाहिद से मुराद वह कुरआनी कमाल और उसका बेनज़ीर होना है जो खुद कुरआन में मौजूद है। तो मायने यह हो गये कि वे लोग जो कुरआन पर कायम हैं और उनके पास कुरआन की हक्कानियत (सही और हक़ होने) का एक गवाह तो खुद कुरआन में मौजूद है यानी उसका बेनज़ीर और दूसरों को उसके जैसा कलाम लाने से आजिज़ कर देना और दूसरा गवाह उससे पहले तौरात के शक्ल में आ चुका है जो मूसा अलैहिस्सलाम लोगों के लिये काबिले पैरवी और रहमते हक़ की हैसियत से लाये थे, क्योंकि तौरात में कुरआने करीम का हक़ होना स्पष्ट रूप से

बयान किया गया है।

दूसरे जुमले में हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर ईमान को कियामत तक निजात का मदार करार देने का बयान इस तरह फरमाया है कि दुनिया के तमाम धर्मों और मिल्लतों (तरीकों और रास्तों) में से जो शख्स भी आपका इनकार करेगा उसका ठिकाना जहन्नम है।

सही मुस्लिम में हजरत अबू हुरैरह रजियल्लाहु अन्हु की रिवायत है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि कसम है उस ज़ात की जिसके कब्जे में मेरी जान है कि जो यहूदी या ईसाई मेरी दावत को सुने और इसके बावजूद मेरी लाई हुई तालीमात पर ईमान न लाये तो वह जहन्नम वालों में से होगा।

इससे उन लोगों की ग़लत-फ़हमी दूर हो जानी चाहिये जो बहुत से यहूदियों व ईसाईयों या दूसरे मज़हब पर चलने वालों के बाज़ ज़ाहिरी आमात की बिना पर उनको हक़ पर कहते हैं और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और कुरआन पर ईमान के बग़ैर सिर्फ़ ज़ाहिरी आमात को निजात के लिये काफी समझते हैं। यह कुरआन मजीद की मज़कूरा आयत और हदीस की इस सही रिवायत से खुला टकराव है। अल्लाह हम सबको अपनी पनाह में रखे।

وَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّنْ افْتَرَىٰ عَلَى اللَّهِ كَذِبًا ۖ أُولَٰئِكَ

يُعْرَضُونَ عَلَىٰ رَبِّهِمْ وَيَقُولُ ٱلْأَشْهَادُ هَٰؤُلَاءِ ٱلَّذِينَ كَذَّبُوا عَلَىٰ رَبِّهِمْ ۖ ٱلَآ لَعْنَةُ ٱللّٰهِ عَلَى ٱلظَّٰلِمِينَ ۝ ٱلَّذِينَ يَصُدُّونَ عَن سَبِيلِ ٱللّٰهِ وَيَبْغُونَهَا عِوَجًا ۖ وَهُمْ بِٱلْآخِرَةِ هُمْ كَافِرُونَ ۝ ۝ ۝ أُولَٰئِكَ لَمْ يَكُونُوا مُعْجِزِينَ فِى ٱلْأَرْضِ وَمَا كَانَ لَهُمْ مِّنْ دُونِ ٱللّٰهِ مِنْ أَوْلِيَآءٍ ۖ يُضْعِفُ لَهُمْ ٱلْعَذَابُ مَا كَانُوا يَسْتَطِيعُونَ ٱلسَّمْعَ وَمَا كَانُوا يُبْصِرُونَ ۝ ۝ أُولَٰئِكَ ٱلَّذِينَ خَسِرُوا أَنفُسَهُمْ وَضَلَّ عَنْهُمْ مَا كَانُوا يَفْتَرُونَ ۝ ۝ لَا جَزْمَ أَنَّهُمْ فِى ٱلْآخِرَةِ هُمْ ٱلْأَخْسَرُونَ ۝ ۝ إِنَّ ٱلَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّٰلِحٰتِ وَٱخْتَبَوْا ۤ إِلَىٰ رَبِّهِمْ أُولَٰئِكَ أَصْحَابُ ٱلْجَنَّةِ ۖ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ۝ ۝ مَثَلُ ٱلْفَرِيقَيْنِ كَالْأَصْمٰى وَٱلْأَبْصَرِ ۖ هَلْ يَسْتَوِينَ مَثَلًا ۖ أَفَلَا تَذَكَّرُونَ ۝

व मन् अज़लमु मिम्-मनिफ़तरा
अलल्लाहि कजिबन्, उलाइ-क
युअरज़ू-न अला रब्बिहिम् व यकूलुल्-
अश्हादु हा-उलाइल्लजी-न क-ज़बू
अला रब्बिहिम् अला लअनतुल्लाहि

और उससे बढ़कर ज़ालिम कौन जो बाँधे
अल्लाह पर झूठ वे लोग रु-ब-रु आयेंगे
अपने रब के और कहेंगे गवाही देने वाले-
यही हैं जिन्होंने झूठ कहा था अपने रब
पर, सुन लो! फटकार है अल्लाह की
ना-इन्साफ़ लोगों पर। (18) जो कि रोकते

अलज्जालिमीन (18) अल्लजी-न
 यसुददू-न अन् सबीलिल्लाहि व
 यब्ज़ूनहा अि-वजन्, व हुम्
 बिल्आखिरति हुम् काफिरून (19)
 उलाइ-क लम् यकून् मुअ्जिजी-न
 फिल्अर्जि व मा का-न लहुम् मिन्
 दूनिल्लाहि मिन् औलिया-अ।
 युज़ा-अफु लहुमुल् अज़ाबु, मा कानू
 यस्ततीज़ूनस्सम्-अ व मा कानू
 युब्स्िरून (20) उलाइ-कल्लजी-न
 छासिरू अन्फु-सहुम् व जल्-ल
 अन्हुम् मा कानू यफ्तरून (21) ला
 ज-र-म अन्नहुम् फिल्-आखिरति
 हुमुल्-अख्तरून (22) इन्नल्लजी-न
 आमनू व अमिलुस्सालिहाति व
 अख़बतू इला रब्बिहिम् उलाइ-क
 अस्हाबुल्-जन्नति हुम् फीहा
 ख़ालिदून (23) म-सलुल्-फरीकैनि
 कल्-अज़्मा वल्-असम्मि वल्बसीरि
 वस्समीअि, हल् यस्तवियानि म-सलन्,
 अ-फला तजक्करून (24) ❀

हैं अल्लाह की राह से और दूँदते हैं उसमें
 टेढ़, और वही हैं आखिरत से मुन्किर।
 (19) वे लोग नहीं थकाने वाले ज़मीन में
 भागकर और नहीं उनके वास्ते अल्लाह के
 सिवा कोई हिमायती, दूना है उनके लिये
 अज़ाब, न ताक़त रखते थे सुनने की और
 न देखते थे। (20) वही हैं जो खो बैठे
 अपनी जान और गुम हो गया उनसे जो
 झूठ बाँधा था। (21) इसमें शक नहीं कि
 ये लोग आखिरत में यही हैं सबसे ज़्यादा
 नुक़सान में। (22) अलबत्ता जो लोग
 ईमान लाये और काम किये नेक और
 अज़िज़ी की अपने रब के सामने, वे हैं
 जन्नत के रहने वाले वे उसी में रहा
 करेंगे। (23) मिसाल इन दोनों फ़िकों की
 जैसे एक तो अंधा और बहरा और
 दूसरा देखता और सुनता, क्या बराबर है
 दोनों का हाल? फिर क्या तुम ग़ौर नहीं
 करते। (24) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

और ऐसे शख्स से ज़्यादा कौन ज़ालिम है जो अल्लाह तआला पर झूठ बाँधे (कि उसकी
 तौहीद का, उसके रसूल की रिसालत का और उसके कलाम होने का इनकार करे) ऐसे लोग
 (क़ियामत के दिन) अपने रब के सामने (झूठ बाँधने वाले होने की हैसियत से) पेश किये जाएँगे

और (आमाल के) गवाह (फरिश्ते सब के सामने यूँ) कहेंगे कि ये वे लोग हैं जिन्होंने अपने रब के बारे में झूठी बातें लगाई थीं, (सब) सुन लो कि ऐसे जालिमों पर खुदा की (ज्यादा) लानत है जो कि (अपने कुफ्र व जुल्म के साथ) दूसरों को भी खुदा की राह (यानी दीन) से रोकते थे, और उस (दीन की राह) में टेढ़ (और शुब्हात) निकालने की तलाश (और फिक्र) में रहा करते थे (ताकि दूसरों को गुमराह करें) और वे आखिरत के भी इनकारी थे। (यह फरिश्तों के ऐलान का मजमून था, आगे अल्लाह तआला का इरशाद है कि) ये लोग (तमाम) जमीन (के तख्तों) पर (भी) खुदा तआला को आजिज नहीं कर सकते थे (कि कहीं जा छुपते और खुदा तआला के हाथ न आते) और न इनका खुदा के सिवा कोई मददगार हुआ (कि गिरफ्तारी के बाद छुड़ा लेता), ऐसों को (औरों से) दोगुनी सज़ा होगी (एक काफिर होने की और एक दूसरों को काफिर बनाने की कोशिश करने की), ये लोग (नफ़रत के सबब अल्लाह के अहकाम को) न सुन सकते थे और न (हद से बढ़ी हुई दुश्मनी की वजह से हक़ रास्ते को) देखते थे। ये वे लोग हैं जो अपने आपको बरबाद कर बैठे, और जो (माबूद) इन्होंने गढ़ रखे थे (आज) इनसे सब गायब (और गुम) हो गये (कोई भी तो काम न आया)। पस लाज़िमी बात है कि आखिरत में ज्यादा ख़सारा “यानी घाटा” पाने वाले यही लोग होंगे।

(यह तो अन्जाम होगा काफ़िरों का, आगे मुसलमानों का अन्जाम बयान हुआ है कि) बेशक जो लोग ईमान लाये और उन्होंने अच्छे-अच्छे काम किये और दिल से अपने रब की तरफ़ झुके (यानी आजिज़ी व फ़रमाँबरदारी दिल में पैदा की) ऐसे लोग जन्नत वाले हैं, और वे उसमें हमेशा रहा करेंगे। (यह दोनों के अन्जाम और परिणाम का फ़र्क़ बयान हो गया, आगे उनके हाल के फ़र्क़ की मिसाल है जिस पर अन्जाम का यह फ़र्क़ मुरत्तब होता है। पस इरशाद है कि) दोनों फ़रीक़ (जिनका ज़िक्र हुआ यानी मोमिन व काफ़िर) की हालत ऐसी है जैसे एक शख्स हो अंधा भी और बहरा भी, (जो न मजमून को सुने न इशारे को देखे तो उसके समझने की आदतन कोई सूरत ही नहीं) और एक शख्स हो कि देखता भी हो और सुनता भी हो, (जिसको समझना बहुत आसान हो) क्या ये दोनों शख्स हालत में बराबर हैं? (हरगिज़ नहीं। यही हालत काफ़िर और मुसलमान की है कि वह हिदायत से बहुत दूर है और यह हिदायत पाये हुए है) क्या तुम (इस फ़र्क़ को) समझते नहीं? (इन दोनों में खुला और आसानी से समझ में आने वाला फ़र्क़ है, इसमें शुब्हे की गुंजाईश नहीं)

وَلَقَدْ أَرْسَلْنَا نُوحًا إِلَىٰ

قَوْمِهِ زَاتِي لَكُمْ نَذِيرٌ مُّبِينٌ ۝ أَنْ لَا تَعْبُدُوا إِلَّا اللَّهَ إِنِّي أَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمِ الْيَوْمِ ۖ فَقَالَ الْمَلَائِكَةُ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ قَوْمِهِ مَا نَرَاكَ إِلَّا بَشَرًا مِثْلَنَا وَمَا نَرَاكَ اتَّبَعَكَ إِلَّا الَّذِينَ هُمْ أَرَادُوا بِآدَائِ الرَّأْيِ ۖ وَمَا نَرَاكَ لَكُمْ عَلَيْنَا مِنْ فَضْلٍ ۖ بَلْ نَحْنُكُمْ كَذِبِينَ ۝ قَالَ يَقَوْمِ أَرَأَيْتُمْ

إِنْ كُنْتُ عَلَىٰ بَيِّنَةٍ مِّن رَّبِّي وَأَتْلُو رَحْمَةً مِّن عِنْدِي فَصَبِّتْ عَلَيْكُمْ وَأُنْزِلْ عَلَيْهَا وَانْتُمْ
 لَهَا كَرِهُونَ ۝ وَيَقُولُ لَا اسْأَلُكُمْ عَلَيْهِ مَالًا إِنْ أَجْرِيَ إِلَّا عَلَى اللَّهِ وَمَا أَنَا بِطَارِدِ الَّذِينَ
 آمَنُوا إِنَّهُمْ مُّلتَقُوا رَبَّهُمْ وَلَكِنِّي أَرْجُو أَنِّي أَرْجُو قَوْمًا تَجْهَلُونَ ۝ وَيَقُولُ مَن يُنصِرُنِي مِنَ اللَّهِ إِنْ
 طَرَدْتُهُمْ أَفَلَا تَذَكَّرُونَ ۝ وَلَا أَقُولُ لَكُمْ عِنْدِي خَزَائِنُ اللَّهِ وَلَا أَعْلَمُ الْغَيْبَ وَلَا أَقُولُ إِنِّي
 مَلَكٌ وَلَا أَقُولُ لِلَّذِينَ تَزْدَرِي أَعْيُنُكُمْ لَن يُؤْتِيَهُمُ اللَّهُ خَيْرًا اللَّهُ أَعْلَمُ بِمَا فِي أَنْفُسِهِمْ ۝
 إِنِّي إِذَا لَمِنَ الظَّالِمِينَ ۝ قَالُوا يَنْبَغُ قَدْ جَدَلْتَنَا فَأَكْثَرْتَ جِدَالَنَا فَأْتِنَا بِمَا تَعِدُنَا إِنْ كُنْتَ
 مِنَ الصّٰدِقِينَ ۝ قَالَ إِنَّمَا يَأْتِيَكُمْ بِهِ اللَّهُ إِنْ شَاءَ وَمَا أَنْتُمْ بِمُعْجِزِينَ ۝ وَلَا يَنْفَعُكُمْ نَصْحِي
 إِنْ أَرَدْتُ أَنْ أُنصَحَ لَكُمْ إِنْ كَانَ اللَّهُ يُرِيدُ أَنْ يُغْوِيَكُمْ هُوَ رَبُّكُمْ وَإِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ۝ أَمْ
 يَقُولُونَ افْتَرَاهُ قُلْ إِنْ افْتَرَيْتُهُ فَعَلَىٰ إِجْرَائِي وَأَنَا بِرَبِّي مُّتَجَرِّمُونَ ۝

व ल-कद् अरसल्ला नूहन् इला
 कौमिही इन्नी लकुम् नजीरुम् मुबीन
 (25) अल्ला तअबुदू इल्लल्ला-ह,
 इन्नी अछाफु अलैकुम् अजा-ब
 यौमिन् अलीम (26) फकालल्-
 म-लउल्लजी-न क-फरु मिन् कौमिही
 मा नरा-क इल्ला ब-शरम् मिस्लना
 व मा नराकत्त-ब-अ-क इल्लल्लजी-न
 हुम् अराज़िलुना बादियर्-रअयि व
 मा नरा लकुम् अलैना मिन्
 फज़िलम्-बल् नज़ुन्नकुम् काज़िबीन
 (27) का-ल या कौमि अ-रऐतुम् इन्
 कुन्तु अला बय्यिनतिम्-मिररब्बी व
 आतानी रस्म-तम् मिन् अिन्दिही

और हमने भेजा नूह को उसकी कौम की
 तरफ कि मैं तुमको डर की बात सुनाता
 हूँ खोलकर। (25) कि न इबादत करो
 अल्लाह के सिवा, मैं डरता हूँ तुम पर
 दर्दनाक दिन के अज़ाब से। (26) फिर
 बोले सरदार जो काफिर थे उसकी कौम
 के- हमको तो तू नज़र नहीं आता मगर
 एक आदमी हम जैसा, और देखते नहीं
 कोई ताबे हुआ हो तेरा मगर जो हम में
 नीच कौम है बिना सोचे और गौर करे,
 और हम नहीं देखते तुमको ऊपर अपने
 कुछ बड़ाई बल्कि हमको तो ख्याल है कि
 तुम सब झूठे हो। (27) बोला ऐ कौम!
 देखो तो अगर मैं हूँ साफ़ रास्ते पर अपने
 रब के और उसने भेजी मुझ पर रहमत
 अपने पास से, फिर उसको तुम्हारी आँख

फअम्मियत् अलैकुम्, अनुल्जिमुकुमूहा
 व अन्तुम् लहा कारिहून (28) व या
 कौमि ला अस्अलुकुम् अलैहि मालनू,
 इन् अजि-य इल्ला अलल्लाहि व मा
 अ-न बितारिदिल्लजी-न आमनू,
 इन्नहुम् मुलाकू रब्बिहिम् व लाकिन्नी
 अराकुम् कौमन् तज्जलून (29) व या
 कौमि मय्यन्सुरुनी मिनल्लाहि इन्
 तरत्तुहुम्, अ-फला तजक्करून (30)
 व ला अकूलु लकुम् अिन्दी
 खजाइनुल्लाहि व ला अअलमुल्-
 गै-ब व ला अकूलु इन्नी म-लकुव्-
 व ला अकूलु लिल्लजी-न तज्दरी
 अअयुनुकुम् लय्युअति-यहुमुल्लाहु
 खैरन्, अल्लाहु अअलमु बिमा फी
 अन्फुसिहिम् इन्नी इजल्-
 लमिनज्जालिमीन (31) कालू या नूह
 कद् जादलतना फ-अक्सर्-त
 जिदालना फअतिना बिमा तजिदुना
 इन् कुन्-त मिनस्सादिकीन (32)
 का-ल इन्नमा यअतीकुम् बिहिल्लाहु
 इन् शा-अ व मा अन्तुम्
 बिमुअ्जिजीन (33) व ला
 यन्फअुकुम् नुस्ही इन् अरत्तु अन्
 अन्स-ह लकुम् इन् कानल्लाहु

से छुपा रखा, तो क्या हम तुमको मजबूर
 कर सकते हैं उस पर और तुम उससे
 बेज़ार हो। (28) और ऐ मेरी कौम! नहीं
 माँगता मैं तुम से इस पर कुछ माल, मेरी
 मजदूरी नहीं मगर अल्लाह पर, और मैं
 नहीं हाँकने वाला ईमान वालों को, उनको
 मिलना है अपने रब से, लेकिन मैं देखता
 हूँ तुम लोग जाहिल हो। (29) और ऐ
 कौम! कौन छुड़ाये मुझको अल्लाह से
 अगर उनको हाँक दूँ, क्या तुम ध्यान नहीं
 करते? (30) और मैं नहीं कहता तुमको
 कि मेरे पास हैं खजाने अल्लाह के, और
 न मैं खबर रखूँ ग़ैब की, और न कहूँ कि
 मैं फ़रिश्ता हूँ, और न कहूँगा कि जो
 लोग तुम्हारी आँख में हकीर हैं न देगा
 उनको अल्लाह भलाई, अल्लाह खूब
 जानता है जो कुछ उनके जी में है, यह
 कहूँ तो मैं बेइन्साफ़ हूँ। (31) बोले ऐ
 नूह! तूने हमसे झगड़ा किया और बहुत
 झगड़ चुका अब ले आ जो तू वायदा
 करता है हमसे अगर तू सच्चा है। (32)
 कहा कि लायेगा तो उसको अल्लाह ही
 अगर चाहेगा और तुम न थका सकोगे
 भागकर। (33) और न कारगार होगी
 तुमको मेरी नसीहत जो चाहूँ कि तुमको
 नसीहत करूँ अगर अल्लाह चाहता होगा

युरीदु अय्युगिव-यकुम्, हु-व रब्बुकुम्,
व इलैहि तुर्जज़ून (३४) अम्
यकूलूनफ़तराहु, कुल् इनिफ़तरैतुह
फ़-ज़ल्य-य इज़रामी व अ-न
बरीउम्-मिम्मा तुज़िमून (३५) ●

कि तुमको गुमराह करे, वही है रब तुम्हारा
और उसी की तरफ़ लौट जाओगे। (३४)
क्या कहते हैं कि बना लाया कुरआन
को? कह दे अगर मैं बना लाया हूँ तो
मुझ पर है मेरा गुनाह, और मेरा ज़िम्मा
नहीं जो तुम गुनाह करते हो। (३५) ●

खुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने नूह (अलैहिस्सलाम) को उनकी कौम के पास रसूल बनाकर (यह पैग़ाम देकर)
भेजा कि तुम अल्लाह के सिवा किसी और की इबादत मत करना (और जो बुत तुमने करार दे
रखे हैं, वह और सुबाअ और यगूस और यऊक और नन्न उनको छोड़ दो। चुनौचे हज़रत नूह
अलैहिस्सलाम ने जाकर उनसे फ़रमाया कि) मैं तुमको (अल्लाह के अलावा किसी और की
इबादत करने की सूरत में) साफ़-साफ़ डराता हूँ (और इस डराने की तफ़सील यह है कि) मैं
तुम्हारे हक़ में एक बड़े तकलीफ़ देने वाले दिन के अज़ाब का अन्देशा करता हूँ। सो उनकी कौम
में जो काफ़िर सरदार थे वे (जवाब में) कहने लगे कि (तुम जो नुबुव्वत का दावा करते हो जैसा
कि 'नज़ीरुम् मुबीन' से मालूम होता है तो हमारे जी को यह बात नहीं लगती, क्योंकि) हम तो
तुमको अपने ही जैसा आदमी देखते हैं (और इनसान का नबी होना एक दूर की बात है) और
अगर (कुछ लोगों की पैरवी करने से दलील ली जाये तो वह तर्क देने के काबिल नहीं क्योंकि)
तुम्हारी पैरवी उन्हीं लोगों ने की है जो हम में बिल्कुल कम दर्जे के और हकीर हैं (जिनकी अक्ल
अक्सर कम होती है। फिर वह पैरवी भी महज़) सरसरी राय से (हुई है यानी अब्बल तो उनकी
अक्ल ही सही रहनुमाई करने वाली नहीं, ग़ौर के बाद भी ग़लती करते, दूसरे फिर ग़ौर भी नहीं
किया, इसलिये ऐसे लोगों का तुमको नबी समझ लेना यह कोई हुज्जत नहीं बल्कि इसके उलट
हमारे पैरवी करने से रुकावट है, क्योंकि शरीफ़ों और इज़्जतदार लोगों को रज़ीलों और कम-दर्जे
के लोगों की मुवाफ़क़त करने से शर्म आती है, और अक्सर ऐसे कम हौसले वाले लोगों का
मक़सद भी माल का हासिल करना या ऊपर उठना हुआ करता है, सो ये लोग भी दिल से ईमान
नहीं लाये) और (अगर यह कहा जाये कि बावजूद रज़ील होने के उन लोगों को किसी खास
मामले में हम पर फ़ज़ीलत है जिसके एतिबार से उनकी राय इस बारे में सही है सो) हम तुम
लोगों में (यानी तुम में और मुसलमानों में) कोई बात अपने से ज़्यादा भी नहीं पाते, (इसलिये
तुम मुसलमानों की राय को सही नहीं समझते) बल्कि हम तुमको (बिल्कुल) झूठा समझते हैं।

(हज़रत नूह ने) फ़रमाया कि ऐ मेरी कौम! (तुम जो कहते हो कि तुम्हारी नुबुव्वत जी को
नहीं लगती तो) भला यह तो बतलाओ कि अगर मैं अपने रब की जानिब से दलील पर (कायम)
हूँ (जिससे मेरी नुबुव्वत साबित होती हो) और उसने मुझको अपने पास से रहमत (यानी

नुबुव्वत) अता फरमाई हो, फिर वह (नुबुव्वत या उसकी हुज्जत) तुमको न सूझती हो, तो (मैं क्या करूँ, मजबूर हूँ) क्या हम इस (दावे या दलील) को तुम्हारे सर मंढ़ दें और तुम उससे नफरत किये चले जाओ। (मतलब यह है कि तुम्हारा यह कहना कि जी को नहीं लगती यह महज़ इस वजह से है कि तुम यह समझते हो कि इनसान रसूल नहीं हो सकता जिसकी तुम्हारे पास कोई दलील नहीं, और मेरे पास इसके वास्तविक और सही होने की दलील मौजूद है यानी मोजिज़ा वगैरह न कि किसी की पैरवी। इससे इसका जवाब भी हो गया कि उनका पैरवी करना हुज्जत नहीं, लेकिन किसी दलील का फायदा टिका है ग़ौर व फ़िक्र और सोच-विचार पर, वह तुम करते नहीं, और यह मेरे बस से बाहर है)।

और (इतनी बात और भी फरमाई कि) ऐ मेरी कौम! (यह तो सोचो कि अगर मैं नुबुव्वत का ग़लत दावा करता तो आखिर इसमें मेरा कुछ मतलब तो होता, मसलन यही होता कि उसके ज़रिये से ख़ूब माल कमाऊँगा तो तुमको मालूम है कि) मैं तुमसे इस (तब्लीग़) पर कुछ माल नहीं माँगता, मेरा मुआवज़ा तो सिर्फ़ अल्लाह ही के ज़िम्मे है (उसी से आखिरत में उसका तालिब हूँ। इसी तरह अगर विचार करोगे तो कोई और मक़सद व स्वार्थ भी न पाओगे, फिर जब कोई गुर्ज नहीं तो मुझको झूठ बोलने से क्या फायदा था। खुलासा यह है कि झूठ दावा करने पर कोई चीज़ मजबूर करने वाली नहीं और दावे के सच्चा होने पर दलील कायम है, फिर नुबुव्वत में क्या शुब्ह हो सकता है)। और (तुम जो कमज़ोर और ग़रीब लोगों के पैरवी करने को अपने इत्तिबा यानी ईमान लाने से रुकावट बतलाते हो और खुले लफ़्ज़ों में या इशारों में यह कहना चाहते हो कि मैं उनको अपने पास से निकाल दूँ सो) मैं तो इन ईमान वालों को निकालता नहीं (क्योंकि) ये लोग अपने रब के पास (इज़्ज़त व मक़बूलियत के साथ) जाने वाले हैं, (और भला कोई शख्स शाही दरबार के करीबी लोगों को निकाला करता है? और इससे इसका भी जवाब हो गया कि ये लोग दिल से ईमान नहीं लाये) लेकिन वाक़ई मैं तुम लोगों को देखता हूँ कि (ख़्वाह-मख़्वाह) की जहालत कर रहे हो (और बेढंगी बातें कर रहे हो)।

और (मान लो जबकि ऐसा होगा नहीं) ऐ मेरी कौम! अगर मैं इनको निकाल भी दूँ तो (यह बतलाओ) मुझको खुदा की पकड़ से कौन बचा लेगा (क्या तुम में इतनी हिम्मत है जो ऐसे बेहूदा मशियरे दे रहे हो)? क्या तुम इतनी बात भी नहीं समझते? और (इस तक़रीर में उनके तमाम शुब्हात का जवाब हो गया, लेकिन आगे उन सब जवाबों का फिर पूरक है, यानी जब मेरी नुबुव्वत दलील से साबित है तो अव्वल तो दलील के सामने मुहाल और दूर की बात होना कोई चीज़ नहीं, फिर यह कि वह दूर की बात भी नहीं, अलबत्ता अगर मैं किसी अजीब व ग़रीब चीज़ का दावा करता तो इनकार व दूर भागना समझ में आने वाली बात भी थी अगरचे दलील के बाद फिर वह भी सुने जाने के काबिल नहीं, अलबत्ता अगर दलील भी किसी चीज़ के दूर की बात और मुहाल होने को चाहे तो फिर वाजिब है लेकिन मैं तो किसी ऐसे अजीब मामले का दावा नहीं करता, चुनाँचे मैं तुमसे यह नहीं कहता कि मेरे पास अल्लाह के (तमाम) ख़ज़ाने हैं, और न मैं (यह कहता हूँ कि मैं) तमाम ग़ैब की बातें जानता हूँ, और न यह कहता हूँ कि मैं

फरिश्ता हैं। और (यह तो अपनी नुबुव्वत के बारे में इरशाद फरमाया, आगे अपने पैरोकारों और मानने वालों के बारे में इरशाद है, यानी) जो लोग तुम्हारी निगाहों में हकीर हों, मैं उनके मुताल्लिक (तुम्हारी तरह) यह नहीं कह सकता कि (ये लोग दिल से ईमान नहीं लाये इसलिये) अल्लाह हरगिज़ इनको सवाब न देगा, उनके दिल में जो कुछ हो उसको अल्लाह ही ख़ूब जानता है (तो मुम्किन है कि उनके दिलों में सच्चाई हो तो फिर मैं ऐसी बात क्योंकर कह दूँ) मैं तो (अगर ऐसी बात कह दूँ तो) उस सूरत में सितम ही कर दूँ (क्योंकि बिना दलील दावा करना गुनाह है)।

(जब नूह अलैहिस्सलाम ने सब बातों का पूरा-पूरा जवाब दे दिया जिसका जवाब फिर उनसे कुछ बन न पड़ा तो अजिज़ होकर) वे लोग कहने लगे कि ऐ नूह! तुम हमसे बहस कर चुके, फिर उस बहस को बढ़ा भी चुके, सो (अब बहस छोड़ो और) जिस चीज़ से तुम हमको धमकाया करते हो (कि अज़ाब आ जायेगा) वह हमारे सामने ले आओ, अगर तुम सच्चे हो। उन्होंने फरमाया कि (उसको लाने वाला मैं कौन हूँ मुझको पहुँचा देने सुना देने का हुक्म था सो मैं उसको पूरा कर चुका) अल्लाह तआला उसको तुम्हारे सामने लायेगा, बशर्तकि उसको मन्ज़ूर हो, और (उस वक़्त फिर) तुम उसको अजिज़ न कर सकोगे (कि वह अज़ाब डालना चाहे और तुम न होने दो) और (जो मेरा काम था पहुँचा देना और सुना देना इसमें मैंने तुम्हारी पूरी ख़ैरख़्वाही और हमदर्दी की लेकिन) मेरी ख़ैरख़्वाही तुम्हारे काम नहीं आ सकती, चाहे मैं तुम्हारी (कैसी ही) ख़ैरख़्वाही करना चाहूँ जबकि अल्लाह ही को तुम्हारा गुमराह करना मन्ज़ूर हो, (जिसकी वजह तुम्हारा घमण्ड और तकब्बुर करना है। मतलब यह कि जब तुम ही अपनी बदकिस्मती से अपने लिये नफ़ा हासिल करना और नुक़सान से बचना न चाहो तो मेरे चाहने से क्या होता है) वही तुम्हारा मालिक है (और तुम मम्लूक, तो तुम पर उसके तमाम हुक्म वाजिब हैं और तुम उनको दुश्मनी व मुख़ालफ़त के सबब ज़ाया करके मुजरिम हो रहे हो) और उसी के पास तुमको जाना है (वह तुम्हारे इस कुफ़्र व दुश्मनी की कसर निकाल देगा)।

क्या ये लोग कहते हैं कि इन्होंने (यानी मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम ने नऊजु बिल्लाह) यह (कुरआन) गढ़ लिया है। आप (जवाब में) फ़रमा दीजिये कि अगर (मान लो) मैंने खुद बनाया और गढ़ा होगा तो मेरा (यह) जुर्म मुझ पर आयद होगा (और तुम मेरे जुर्म से बरी होगे), और (अगर तुमने यह दावा गढ़ा और बनाया होगा यानी मुझ पर बोहतान लगाया होगा तो तुम्हारा यह जुर्म तुम पर आयद होगा, और) मैं तुम्हारे इस जुर्म से बरी रहूँगा।

मज़ारिफ़ व मसाईल

हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने जब अपनी क़ौम को ईमान की दावत दी तो क़ौम ने उनकी नुबुव्वत व रिसालत पर चन्द शुक़्ात व एतिराज़ात पेश किये। हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने अल्लाह के हुक्म से उनके जवाबात दिये जिनके ज़िमन में बहुत से बुनियादी और उनसे निकलने वाले मसाईल दियानत और सामाजिक ज़िन्दगी के भी आ गये हैं, उक्त आयतों में यही गुफ़्तगू

और दो तरफ़ा बातचीत बयान फ़रमायी गयी है।

तीसरी आयत में मुशिरकों की गुफ़्तगू है जिसमें चन्द शुब्हात व एतिराज़ात किये गये हैं। उन लोगों का पहला एतिराज़ हज़रत नूह अलैहिस्सलाम की नुबुव्वत व रिसालत पर यह था कि:

مَا تَرَكُ إِلَّا بَشَرًا مِّثْلَنَا.

यानी आप तो हमीं जैसे इन्सान और आदमी हो, हमारी ही तरह खाते पीते चलते फिरते और सोते जागते हो, फिर हम आपकी यह असाधारण विशेषता कैसे तस्लीम कर लें कि आप खुदा के रसूल और पैग़म्बर हैं।

उन लोगों का ख़्याल यह था कि इन्सानों की तरफ़ जो शख्स अल्लाह तआला की तरफ़ से रसूल बनाकर भेजा जाये वह इन्सानी नस्ल से न होना चाहिये बल्कि कोई फ़रिश्ता हो जिसकी विशेषता और श्रेष्ठता सारे इन्सानों को चार व नाचार तस्लीम करनी पड़े।

इसका जवाब चौथी आयत में यह दिया गया:

يَقُولُونَ ارْأَيْتُمْ إِنْ كُنْتُ عَلَىٰ بَيِّنَةٍ مِّنْ رَبِّي وَآتَانِي رَحْمَةً مِّنْ عِنْدِهِ لَعَجِبْتُ عَلَيْكُمْ إِنَّا لَنَرِيكُمْ لَهَا كُرْهُوْنَ۝

इसमें बतलाया गया कि रसूल का बशर या आदमी होना तो नुबुव्वत व रिसालत के विरुद्ध नहीं बल्कि ग़ौर करो तो यही ज़रूरी है कि आदमियों का रसूल आदमी होना चाहिये ताकि आदमियों को उससे दीन सीखना आसान हो, इन्सान और फ़रिश्ते के मिज़ाज में ज़मीन आसमान का फ़र्क़ है, अगर फ़रिश्ते को रसूल बनाकर भेज दिया जाता तो इन्सानों को उससे दीन सीखना सख़्त मुश्किल हो जाता, क्योंकि फ़रिश्ते को तो न भूख लगती है न प्यास, न नींद आती है न थकान होती है, न उसको इन्सानी ज़रूरतें व हाज़तें पेश आती हैं, वह इन्सानों की इस कमज़ोरी का एहसास कैसे करता, और बग़ैर इस एहसास के इन्सान अमल में उसका इत्तिबा (पैरवी और अनुसरण) कैसे कर सकते। यह मज़मून कुरआन की दूसरी आयतों में स्पष्ट रूप से और इशारे में कई जगह आ चुका है, यहाँ उसका ज़िक्र करने के बजाय यह बतलाया कि अगर अक्ल से काम लो तो रसूल व पैग़म्बर के लिये यह तो ज़रूरी नहीं कि वह आदमी न हो, हाँ यह ज़रूरी है कि अल्लाह तआला की तरफ़ से कोई गवाह, दलील और हुज्जत उसके साथ हो, जिसको देखकर लोगों को यह तस्लीम करना आसान हो जाये कि यह खुदा ही की तरफ़ से भेजा हुआ रसूल है। वह गवाह व सुबूत और हुज्जत आम लोगों के लिये अम्बिया अलैहिमुस्सलाम के मोजिजे होते हैं, इसी लिये हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि मैं अपने साथ अल्लाह की तरफ़ से दलील व हुज्जत और रहमत लेकर आया हूँ तुम उसको देखते और ग़ौर करते तो इनकार न करते, मगर तुम्हारे इनकार व दुश्मनी ने तुम्हारी निगाहों को उससे अन्धा कर दिया और तुम इनकार कर बैठे और अपनी जिद पर जम गये।

मगर खुदा तआला की यह रहमत जो पैग़म्बर के ज़रिये आती है ऐसी चीज़ नहीं कि ज़बरदस्ती लोगों के सर डाल दी जाये, जब तक वे खुद उसकी तरफ़ रग़बत (दिलचस्पी) न करें। इसमें इशारा पाया गया कि इमान की दौलत जो मैं लेकर आया हूँ अगर मेरा बस चलता तो

तुम्हारे इनकार और जिद के बावजूद तुम्हें दे ही देता, मगर यह कानूने क़ुदरत के खिलाफ़ है, यह नेमत ज़बरदस्ती किसी के सर नहीं डाली जा सकती। इससे यह भी साबित हो गया कि ज़बरदस्ती किसी को मोमिन या मुसलमान बनाना नुब्वत के किसी दौर में जायज़ नहीं रखा गया, तलवार के जोर पर इस्लाम फैलाने का सफ़ेद झूठ गढ़ने वाले खुद भी इस हकीकत से बेख़बर नहीं मगर एक बात है जो नावाकिफ़ों के दिलों में शंका व भ्रम पैदा करने के लिये चलती की जाती है।

इसके ज़िमन में इसकी वजह भी समझ में आ गयी कि फ़रिश्ते को रसूल क्यों नहीं बनाया गया। वजह यह है कि फ़रिश्ता जो असाधारण कुव्वत व ताकत रखता है और अपने वजूद की हर हैसियत में इनसान से नुमायाँ और विशेष है, उसको देखकर ईमान लाना तो एक ज़बरी (ज़बरदस्ती का) अमल हो जाता, किसकी मजाल थी कि फ़रिश्ते के सामने वह हठधर्मी करता जो अम्बिया के सामने की जाती है, और शर्ई तौर पर वह ईमान मक़बूल नहीं जो किसी दबाव वाली कुव्वत से मजबूर होकर इस्तियार किया जाये, बल्कि मतलूब ग़ैब पर ईमान लाना है कि अल्लाह तआला की ग़ालिब कुव्वत का पूरा मुशाहदा किये बग़ैर ईमान इस्तियार किया जाये।

उनका दूसरा एतिराज़ यह था:

وَمَا نَرُكَ اتَّبَعَكَ إِلَّا الَّذِينَ هُمْ أَرَادُوا بِادِّى الرَّأْيِ

यानी हम देखते हैं कि आप पर ईमान लाने वाले सब सरसरी नज़र में हकीर व ज़लील कमीने लोग हैं, कोई शरीक बड़ा आदमी नहीं। इस एतिराज़ के दो पहलू हैं- एक यह कि तुम्हारी बात अगर हक़ और सही होती तो कौम के बड़े लोग उसको कुबूल करते, इन छोटे और कम दर्जे के लोगों का कुबूल करना इसकी निशानी है कि आपकी दावत ही कुबूल करने के काबिल नहीं। दूसरा पहलू यह है कि हमारे लिये आपकी ईमानी दावत कुबूल करने से रुकावट यह है कि हम ईमान ले आये तो बहैसियत मुसलमान हम भी उनके बराबर समझे जायेंगे, नमाज़ों की सफ़ों और दूसरी मज्लिसों में हमें उनके साथ उनके बराबर में बैठना पड़ेगा, यह हमसे नहीं हो सकता।

हकीकत से दूर उन नावाकिफ़ों ने ग़रीबों फ़कीरों को जिनके पास माल की अधिकता नहीं और दुनियावी माल व रुतबा नहीं उनको घटिया और कमीने करार दे रखा था, हालाँकि यह खुद एक जाहिलाना ख़्याल है, इज़्ज़त व ज़िल्लत और अक़्त व समझ माल व दौलत के ताबे नहीं बल्कि तजुर्बा गवाह है कि पद व रुतबे और माल का एक नशा होता है जो इनसान को बहुत सी माक़ूल और सही बातों के समझने और कुबूल करने से रोक देता है। कमज़ोर ग़रीब आदमी की नज़र के सामने ये रुकावटें नहीं होतीं, वह हक़ और सही बात को कुबूल करने में आगे बढ़ता है, यही वजह है कि पुराने ज़माने से अल्लाह तआला का यही दस्तूर रहा है कि पैग़म्बरों पर शुरू में ईमान लाने वाले ग़रीब व तंगदस्त ही होते हैं, और पिछली आसमानी किताबों में इसकी स्पष्टतायें भी मौजूद हैं। इसी वजह से जब रुम के बादशाह हिरक्ल के पास हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का पत्र मुबारक ईमान की दावत के लिये पहुँचा और उसको यह

फिक्र हुई कि मामले की तहकीक़ करे, चूँकि उसने तौरात व इन्जील में अम्बिया की निशानियाँ पढ़ी हुई थीं इसलिये उस वक़्त अरब के जो लोग मुल्क शाम में आये हुए थे उनको जमा करके उन निशानियों के बारे में चन्द सवालात किये।

उन सवालात में से एक यह भी था कि उनकी पैरवी करने वाले कौम के कमजोर और ग़रीब लोग हैं या वे जो कौम के बड़े कहलाते हैं? उन लोगों ने बतलाया कि कमजोर और ग़रीब लोग हैं। इस पर हिरक्ल ने इकरार किया कि यह निशानी तो सच्चे नबी होने की है, क्योंकि अम्बिया अलैहिमुस्सलाम का शुरू-शुरू में इत्तिबा करने वाले यही कमजोर ग़रीब लोग होते हैं।

खुलासा यह है कि ग़रीबों व फ़कीरों को घटिया और कम-दर्जे का समझना उनकी जहालत थी, हकीक़त में रज़ील (घटिया और कमीना) तो वह है जो अपने पैदा करने वाले और पालने वाले मालिक को न पहचाने, उसके अहक़ाम से मुँह फेरे, इसी लिये हज़रत सुफ़ियान सौरी रह. से किसी ने पूछा कि कमीना और रज़ील कौन है? तो फ़रमाया वे लोग जो बादशाहों और अफ़सरों की खुशामद में लगे रहें। और इब्ने आराबी ने फ़रमाया कि कमीना वह आदमी है जो अपना दीन बेचकर दुनिया कमाये। किसी ने पूछा कि सबसे ज़्यादा कमीना कौन है तो फ़रमाया वह शख्स जो अपना दीन बरबाद करके किसी दूसरे की दुनिया संवारे। इमाम मालिक रह. ने फ़रमाया कि कमीना वह शख्स है जो सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम को बुरा कहे, क्योंकि वह पूरी उम्मत के सबसे बड़े मोहसिन (एहसान करने वाले) हैं जिनके ज़रिये इमान व शरीअत की दौलत उनको पहुँची है।

बहरहाल उनके इस जाहिलाना ख़्याल की तरदीद तीसरी आयत में पहले तो इस तरह की गयी है कि पैग़म्बर की नज़र किसी के माल पर नहीं होती, वह किसी से अपनी ख़िदमत व हमदर्दी का मुआवज़ा नहीं लेता, उसका मुआवज़ा तो सिर्फ़ अल्लाह के ज़िम्मे होता है, इसलिये उसकी नज़र में अमीर व ग़रीब बराबर होते हैं, तुम इससे न डरो कि हम मालदार हैं, मुसलमान हो जायेंगे तो हमसे माल का मुतालबा किया जायेगा।

दूसरे यह बतलाया गया कि तुम जो इमान कुबूल करने के लिये यह शर्त पेश करते हो कि मैं ग़रीब लोगों को अपने पास से निकाल दूँ तो समझ लो कि यह मैं नहीं कर सकता, क्योंकि ये लोग अगरचे ग़रीब हैं मगर अल्लाह रब्बुल-इज़्ज़त की बारगाह में उनकी पहुँच और सम्मान है, ऐसे लोगों को निकालना कोई अक्ल का काम नहीं।

और 'मुलाक़ू रब्बिहिम' के यह मायने भी हो सकते हैं कि अगर फ़र्ज करो मैं इनको निकाल दूँ तो क़ियामत के दिन ये लोग जब अपने रब के सामने जायेंगे और फ़रियाद करेंगे तो मेरे पास क्या जवाब होगा। चौथी आयत का यही मज़मून है कि अगर मैं इनको निकाल दूँ तो मुझे खुदा के अज़ाब से कौन बचायेगा। आख़िर में फ़रमाया कि यह सब तुम्हारी जहालत है कि तुम आदमियत को नुबुव्वत के खिलाफ़ समझते हो, या ग़रीब लोगों को निकाल देने की फ़रमाईश करते हो।

पाँचवीं आयत में हज़रत नूह अलैहिस्सलाम की वह तक़रीर (भाषण) नक़ल की गयी है जो

उन्होंने अपनी कौम के सब एतिराजात सुनने के बाद उनको कुछ उसूली हिदायतें देने के लिये इरशाद फरमाई, जिसमें बतलाया गया है कि नुबुव्वत व रिसालत के लिये वो चीजें ज़रूरी नहीं जो तुमने समझ रखी हैं।

मसलन पहले फरमाया:

وَلَا أَقُولُ لَكُمْ عِنْدِي خَزَائِنُ اللَّهِ

यानी मैं तुमसे यह नहीं कहता कि अल्लाह के खज़ाने मेरे हाथ में हैं। इसमें उन लोगों के इस ख्याल की तरदीद (रद्द और खण्डन करना) है कि जब अल्लाह की तरफ़ से रसूल होकर आये हैं तो इनके हाथ में खज़ाने होने चाहियें, जिनसे लोगों को ख़ूब लेना-देना करते रहें। नूह अलैहिस्सलाम ने बतला दिया कि अम्बिया के भेजे जाने का यह मकसद नहीं होता कि वे लोगों को दुनिया की धन-दौलत में उलझायें, इसलिये खज़ानों से उनका क्या काम।

और यह भी हो सकता है कि इसमें उन लोगों के इस ख्याल की तरदीद हो जो कुछ लोग समझा करते हैं कि अल्लाह ने अम्बिया को बल्कि औलिया को भी मुकम्मल अधिकार दे दिये हैं, अल्लाह की क़ुदरत के खज़ाने उनके हाथ में होते हैं जिसको चाहें दें जिसको चाहें न दें, तो नूह अलैहिस्सलाम के इस इरशाद से स्पष्ट हो गया कि अल्लाह ने अपनी क़ुदरत के खज़ानों का मुकम्मल इख़्तियार किसी नबी को भी सुपुर्द नहीं किया, औलिया का तो क्या ज़िक्र है, अलबत्ता अल्लाह तआला उनकी दुआयें और तमन्नायें अपनी क़ुदरत से पूरी फरमाते हैं।

दूसरे फरमाया:

وَلَا أَعْلَمُ الْغَيْبَ

इन जाहिलों का यह भी ख्याल था कि जो शख्स ख़ुदा तआला का रसूल हो वह आलिमुल-ग़ैब भी होना चाहिये। इस जुमले ने स्पष्ट कर दिया कि नुबुव्वत व रिसालत इल्मे-ग़ैब को नहीं चाहती, और यह कैसे हो जबकि इल्मे-ग़ैब हक़ तआला की खुसूसी सिफ़त है जिसमें कोई नबी या फ़रिश्ता शरीक नहीं हो सकता, हाँ अल्लाह तआला अपने पैग़म्बरों में से जिसको चाहते हैं जितना चाहते हैं ग़ैब के भेदों पर बाख़बर (अवगत) कर देते हैं, मगर उसकी वजह से उनको आलिमुल-ग़ैब (हर ग़ैब की और छुपी बात का जानने वाला) कहना दुरुस्त नहीं होता, क्योंकि उनके इख़्तियार में नहीं होता कि जिस ग़ैब को चाहें मालूम कर लें।

तीसरी बात यह फरमाई:

وَلَا أَقُولُ إِنِّي مَلَكٌ

यानी मैं तुमसे यह भी नहीं कहता कि मैं फ़रिश्ता हूँ। इसमें उनके इस ख्याल की तरदीद हो गयी कि रसूल कोई फ़रिश्ता होना चाहिये।

चौथी बात यह इरशाद फरमाई कि तुम्हारी नज़रें जिन ग़रीब निर्धन लोगों को हकीर व ज़लील देखती हैं मैं तुम्हारी तरह यह नहीं कह सकता कि अल्लाह तआला उनको कोई ख़ैर और भलाई न देगा, क्योंकि ख़ैर और भलाई का ताल्लुक माल व दौलत से नहीं बल्कि इन्सान के

दिल से है, और दिलों का हाल अल्लाह तआला ही जानते हैं कि किसका दिल खैर व बेहतरी के काबिल है किसका नहीं।

फिर फरमाया कि अगर मैं भी तुम्हारी तरह उनको हकीर व जलील कहने लगूँ तो मैं भी जालिम हो जाऊँगा।

وَأَوْحَىٰ إِلَيْنَا نُوحٍ أَنَّهُ لَنْ يُؤْمِنَ مِنْ قَوْمِكَ إِلَّا مَنْ قَدْ آمَنَ فَلَا تَبْتَئِسْ بِمَا كَانُوا يَفْعَلُونَ ۖ وَاصْنَعِ الْفُلَ بِأَعْيُنِنَا وَوَحْيِنَا وَلَا تُخَاطِبْنِي فِي الَّذِينَ ظَلَمُوا إِنَّهُمْ مُّعْرِضُونَ ۖ وَيَصْنَعِ الْفُلَ وَكُلَّمَا مَرَّ عَلَيْهِ مَلَأْ مِنْ قَوْمِهِ سَخِرُوا مِنْهُ ۖ قَالَ إِنْ تَسْخَرُوا مِنِّي فَإِنِّي نَسْخَرُ مِنْكُمْ كَمَا تَسْخَرُونَ ۖ فَسَوْفَ تَعْلَمُونَ ۚ مَنْ يَأْتِيهِ عَذَابٌ يُخْزِيهِ وَيَحِلُّ عَلَيْهِ عَذَابٌ مُّقِيمٌ ۖ حَتَّىٰ إِذَا جَاءَ أَمْرُنَا وَفَارَ التَّنُورُ ۖ قُلْنَا احْمِلْ فِيهَا مِنْ كُلِّ زَوْجَيْنِ اثْنَيْنِ وَأَهْلَكَ إِلَّا مَنْ سَبَقَ عَلَيْهِ الْقَوْلُ وَمَنْ آمَنَ ۖ وَمَا آمَنَ مَعَهُ إِلَّا قَلِيلٌ ۖ

व ऊहि-य इला नूहिन् अन्नहू लंय्युअमि-न मिन् कौमि-क इल्ला मन् कद् आम-न फ़ला तब्तइस् बिमा कानू यफ़अलून (36) वस्नअिल्-फ़ुल्-क बिअअ्युनिना व वहियना व ला तुछातिबनी फिल्लजी-न ज-लमू इन्नहुम् मुग़रकून (37) व यस्नअुल्फ़ुल्-क, व कुल्लमा मर-र अलैहि म-लउम् मिन् कौमिही सख़िरु मिन्हु, का-ल इन् तस्ख़रु मिन्ना फ़-इन्ना नस्ख़रु मिन्कुम् कमा तस्ख़रून (38) फ़सौ-फ़ तअ़लमू-न मंय्यअ़तीहि अज़ाबुय्-युख़ज़ीहि व यहिल्लु अलैहि अज़ाबुम् मुकीम (39) हत्ता इज़ा जा-अ अम्रुना व

और हुक्म हुआ नूह की तरफ़ कि अब ईमान न लायेगा तेरी कौम में मगर जो ईमान ला चुका, सो ग़मगीन न रह उन कामों पर जो वे कर रहे हैं। (36) और बना कश्ती हमारे रू-ब-रू और हमारे हुक्म से, और न बात कर मुझसे ज़ालिमों के हक़ में, ये बेशक ग़र्क़ होंगे। (37) और वह कश्ती बनाता था और जब गुज़रते उस पर सरदार उसकी कौम के उससे हंसी करते, बोला अगर तुम हंसते हो हम से तो हम हंसते हैं तुमसे, जैसे तुम हंसते हो। (38) अब जल्द जान लोगे कि किस पर आता है अज़ाब कि रुस्वा करे उसको, और उत्तरता है उस पर अज़ाब हमेशा के लिये। (39) यहाँ तक कि जब पहुँचा हमारा हुक्म और जोश

फारत्तन्नूरु कुल्लस्मिल् फीहा मिन्
कुल्लिन् जौजैनिस्नैनि व अह्ल-क
इल्ला मन् स-ब-क अलैहिल्-कौलु व
मन् आम-न, व मा आम-न म-अहू
इल्ला कलील (40)

मारा तन्नूर ने, कहा हमने चढ़ा ले कश्ती
में हर किस्म से जोड़ा दो अ़दद और
अपने घर के लोग, मगर जिस पर पहले
हो चुका है हुक्म, और सब ईमान वालों
को, और ईमान न लाये थे उसके साथ
मगर थोड़े। (40)

खुलासा-ए-तफसीर

और (जब नसीहत करते हुए एक लम्बा ज़माना गुज़र गया और कुछ असर न हुआ तो) नूह (अलैहिस्सलाम) के पास वही भेजी गई कि सिवाय उनके जो (इस वक़्त तक) ईमान ला चुके हैं और कोई (नया शख्स) तुम्हारी क़ौम में से ईमान न लायेगा, सो जो कुछ ये लोग (कुफ़्र, तकलीफ़ देना और हंसी मज़ाक़) कर रहे हैं, उस पर कुछ ग़म न करो (क्योंकि ग़म तो ख़िलाफ़े उम्मीद चीज़ से होता है, जब उनसे मुखा़लफ़त के सिवा कोई और उम्मीद ही नहीं फिर क्यों ग़म किया जाये) और (चूँकि हमारा इरादा अब उनको गर्ज करने का है और इसलिये तूफ़ान आने को है, पस) तुम (उस तूफ़ान से बचने के लिये) हमारी निगरानी में और हमारे हुक्म से कश्ती तैयार कर लो (कि उसके ज़रिये से तूफ़ान से तुम और मोमिन लोग महफूज़ रहोगे)। और (यह सुन लो कि) मुझसे काफ़िरों (की निजात) के बारे में कुछ गुफ़्तगू मत करना (क्योंकि) वे सब गर्ज किये जाएँगे (उनके लिये यह निश्चित तौर पर तय हो चुका है, तो उनकी सिफ़ारिश बेकार होगी। गर्ज कि नूह अलैहिस्सलाम ने कश्ती का सामान जमा किया) और वह कश्ती तैयार करने लगे (चाहे खुद या दूसरे कारीगरों के ज़रिये से) और (तैयारी के दौरान में) जब कभी उनकी क़ौम के किसी ग़िरोह के सरदार का उन पर गुज़र होता तो (उनको कश्ती बनाता देखकर और यह सुनकर कि तूफ़ान आने वाला है) उनसे हंसी करते, (कि देखा पानी का कहीं नाम व निशान नहीं, मुफ़्त में मुसीबत झेल रहे हैं)। आप फ़रमाते कि अगर तुम हम पर हंसते हो तो हम तुम पर हंसते हैं, जैसा कि तुम (हम पर) हंसते हो (कि अज़ाब इतने नज़दीक आ पहुँचा है और तुमको हंसी सूझ रही है, हम इस पर हंसते हैं) सो अभी तुमको मालूम हुआ जाता है कि वह कौनसा शख्स है जिस पर (दुनिया में) ऐसा अज़ाब आया चाहता है जो उसको रुस्वा कर देगा, और (मरने के बाद) उस पर हमेशा का अज़ाब नाज़िल होगा।

(गर्ज कि इसी तरह की गुफ़्तगूयें और मामलात हुआ करते) यहाँ तक कि जब हमारा (अज़ाब का) हुक्म (करीब) आ पहुँचा और तन्नूर (यानी ज़मीन से पानी) उबलना शुरू हुआ, हमने (नूह अलैहिस्सलाम से) फ़रमाया कि हर एक (किस्म के जानवरों) में से (जो कि इनसान के लिये कारामद हैं और पानी में ज़िन्दा नहीं रह सकते) एक-एक नर और एक-एक मादा यानी दो अ़दद इस (कश्ती) पर चढ़ा लो और अपने घर वालों को भी (चढ़ा लो) उसको छोड़कर जिस पर

(गर्क होने का) हुक्म नाफिज़ हो चुका है (यानी उनमें जो काफ़िर हो जिनके बारे में 'इन्नुहुम् मुग़रक़ून' कह दिया गया है, उसको सवार मत करना, और घर वालों के अलावा) और दूसरे ईमान वालों को भी (सवार कर लो), और सिवाय थोड़े से आदमियों के उनके साथ (यानी उन पर) कोई ईमान न लाया था (बस उन्हीं के सवार करने का हुक्म हो गया)।

मअरिफ़ व मसाईल

हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को हक़ तआला ने तक़रीबन एक हज़ार साल की लम्बी उम्र अता फ़रमाई, इसके साथ अल्लाह की तरफ़ दावत देने और कौम की इस्लाह (सुधार) करने की फ़िक्र और पैग़म्बराना जिद्दोज़हद अता फ़रमायी कि उम्र की इस लम्बी मुद्दत में हमेशा अपनी कौम को देने हक़ और कलिमा-ए-तौहीद की दावत देते रहे, कौम की तरफ़ से सख़्त-सख़्त तकलीफ़ों का सामना करना पड़ा, उनकी कौम उन पर पथराव करती यहाँ तक कि बेहोश हो जाते, फिर जब होश आता तो दुआ करते कि या अल्लाह! मेरी कौम को माफ़ कर दे, ये बेवक़ूफ़ जाहिल हैं, जानते नहीं। कौम की एक नस्ल के बाद दूसरी को और दूसरी के बाद तीसरी को इस उम्मीद पर दावत देते कि शायद ये हक़ को कुबूल कर लें।

जब इस अमल पर सदियाँ गुज़र गयीं तो अल्लाह रब्बुल-इज़ज़त के सामने उनकी बदहाली की शिकायत की जो सूर: नूह में बयान हुई है:

رَبِّ اِنِّیْ دَعَوْتُ قَوْمِیْ لَیْلًا وَنَهَارًا فَلَمْ یَزِدْهُمْ دُعَاۤیِیْ اِلَّا فِرَارًا

और इतने लम्बे दुखों और मुसीबतों के दौर के बाद इस मर्दे खुदा की ज़बान पर यह दुआ आई:

رَبِّ اَنْصُرْنِیْ بِمَا کُذِّبْتُ

यानी ऐ मेरे परवर्दिगार! उनके झुठलाने के मुक़ाबले में आप मेरी मदद कीजिए।

हज़रत नूह अलैहिस्सलाम की कौम का जुल्म व सितम हद से गुज़र जाने के बाद हक़ तआला ने हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को इन आयतों से ख़िताब फ़रमाया जो ऊपर बयान हुई हैं।

(तफ़सीरे बग़वी, तफ़सीरे मज़हरी)

इनमें सबसे पहले तो हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को यह बतलाया गया कि आपकी कौम में जिनको ईमान लाना था, ले आये, अब कोई और शख्स ईमान कुबूल न करेगा। उनके दिलों पर उनकी हठधर्मी और नाफ़रमानी की बिना पर मुहर लग चुकी है, इसलिये अब आप इस कौम का ग़म न खायें और इनके ईमान कुबूल न करने से परेशान न हों।

दूसरी बात यह बतलाई गयी कि अब हम इस कौम पर पानी के तूफ़ान का अज़ाब भेजने वाले हैं, इसलिये आप एक कश्ती तैयार करें जिसमें आपके घर वाले और जितने मुसलमान हैं वे सब अपनी ज़रूरत की चीज़ों के साथ समा सकें, ताकि तूफ़ान के वक़्त ये सब उसमें सवार होकर निजात पा सकें। हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने हुक्म के मुताबिक़ कश्ती बनाई। फिर जब

तूफ़ान के शुरू होने की निशानियाँ सामने आ गयीं कि ज़मीन से पानी उबलने लगा तो नूह अलैहिस्सलाम को हुक्म दिया गया कि खुद मय अपने घर वालों और बाल-बच्चों के, और उन लोगों के जो आप पर ईमान लाये हैं, इस कश्ती में सवार हो जायें, और इनसानों की ज़रूरतें जिन जानवरों से संबन्धित हैं जैसे गाय, बैल, बकरी, घोड़ा, गधा वगैरह उनका भी एक-एक जोड़ा कश्ती में सवार कर लें। हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने हुक्म के मुताबिक़ सबको सवार कर लिया।

आखिर में फ़रमाया कि नूह अलैहिस्सलाम पर ईमान लाने वाले और कश्ती में सवार होने वाले मुसलमानों की संख्या बहुत कम थी।

यह खुलासा-ए-मज़मून है उपर्युक्त आयतों का। अब हर एक आयत के मतलब की वज़ाहत व व्याख्या और उनसे संबन्धित मज़ामीन व मसाल्ल देखिये।

पहली आयत में इरशाद फ़रमाया कि नूह अलैहिस्सलाम पर यह वही भेजी गयी कि उनकी कौम में से जो ईमान लाने वाले थे ला चुके हैं, आईन्दा और कोई ईमान न लायेगा, इसलिये ये लोग जो कुछ मामला आपके साथ करते हैं उससे आप गुमगीन व परेशान न हों, क्योंकि गुम व परेशानी उमूमन तब होती है जब किसी से बेहतरी और भलाई की उम्मीद जुड़ी हो। मायूसी भी एक किस्म की राहत होती है, आप उनसे मायूस हो जायें। और जो तकलीफ़ व सदमा हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को उनकी तकलीफ़ों से पहुँच रहा था उसके इन्तिज़ाम की तरफ़ दूसरी आयत में इशारा किया गया कि उनको पानी के तूफ़ान में गर्क कर दिया जायेगा। इन्हीं हालात में हज़रत नूह अलैहिस्सलाम की ज़बान पर अपनी कौम के लिये वह बददुआ आई थी जिसका जिक्र सूर: नूह में किया गया है:

رَبِّ لَا تَذَرْنِي عَلَى الْأَرْضِ مِنَ الْكَافِرِينَ دَيَّارًا إِنَّكَ إِن تَذَرْنَهُمْ يَصْلُوا عِبَادَكَ وَلَا يَلِدُوا إِلَّا فَاجِرًا كَفَّارًا

यानी ऐ मेरे परवर्दिगार! अब इन काफ़िरों में से कोई ज़मीन पर बसने वाला न छोड़िये, क्योंकि अगर ये रहे तो इनकी आने वाली नस्ल भी ऐसी ही नाफ़रमान और बदकार व काफ़िर होगी। यही दुआ कुबूल होकर पूरी कौमे नूह तूफ़ान में गर्क की गयी।

नूह अलैहिस्सलाम को कश्ती बनाने का प्रशिक्षण

हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को जब कश्ती बनाने का हुक्म मिला उस वक़्त वह न कश्ती को जानते थे न उसके बनाने को, इसलिये दूसरी आयत में उनके कश्ती बनाने की हकीक़त ज़ाहिर करने के लिये फ़रमाया:

وَاصْنَعِ الْفُلْكَ بِأَعْيُنِنَا وَوَحْيُنَا

यानी आप कश्ती बनायें हमारी निगरानी में और हमारी वही के मुताबिक़।

हदीस की रिवायतों में है कि हज़रत ज़िब्रील ने अल्लाह की वही के ज़रिये हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को कश्ती बनाने की तमाम ज़रूरतें और उसका तरीक़ा बतलाया। उन्होंने साल की लकड़ी से यह कश्ती तैयार की।

कुछ तारीखी रिवायतों में उसकी पैमाईश यह बतलाई गयी है कि यह तीन सौ गज लम्बा, पचास गज चौड़ा, तीस गज ऊँचा तीन मंजिला जहाज़ था और रोशन दान रिवाजी तरीके के मुताबिक़ दायें बायें खुलते थे। इस तरह यह जहाज़ बनाने की कारीगरी अल्लाह की वही के ज़रिये सबसे पहले हज़रत नूह अलैहिस्सलाम के हाथों शुरू हुई, फिर इसमें तरक्कियाँ होती रहीं।

तमाम ज़रूरी उद्योगों की शुरुआत वही के ज़रिये हुई

हाफ़िज़ शमसुद्दीन ज़हबी की किताब 'अल्तिबुन्-नबवी' में कुछ पुराने बुजुर्गों से नक़ल किया गया है कि इनसान के लिये जितनी कारीगरी और उद्योगों की ज़रूरत है उन सब की शुरुआत अल्लाह की वही के ज़रिये किसी पैग़म्बर के माध्यम से अमल में आई है, फिर ज़रूरत के अनुसार उसमें इज़ाफ़े और सहूलियतें विभिन्न ज़मानों में होती रहीं। सब से पहले पैग़म्बर हज़रत आदम अलैहिस्सलाम की तरफ़ जो वही आई है उसका ज्यादातर हिस्सा ज़मीन की आबादकारी और विभिन्न प्रकार की कारीगरी से संबन्धित है। बोझ उठाने के लिये पहियों के ज़रिये चलने वाली गाड़ी की ईजाद भी इसी सिलसिले की ईजादों में से है।

सर सैयद साहिब (संस्थापक अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी) ने ख़ूब फ़रमाया है कि ज़माने ने तरह-तरह की गाड़ियाँ ईजाद कर लीं लेकिन काम का मदार हर किस्म की गाड़ियों का धुरी और पहिये पर ही रहा, वह बैलगाड़ी और गध्यागाड़ी से लेकर रेलों और बेहतरीन किस्म की मोटर गाड़ियों तक सब में संयुक्त है, इसलिये गाड़ियों का सबसे बड़ा मूजिद (आविष्कारक) वह शख्स है जिसने पहिया ईजाद किया, कि दुनिया की सारी मशीनरी की रूह पहिये ही हैं, और मालूम हो चुका कि यह ईजाद पहले पैग़म्बर हज़रत आदम अलैहिस्सलाम के हाथों अल्लाह की वही के ज़रिये अमल में आई है।

इससे यह भी मालूम हो गया कि ज़रूरत की चीज़ों की कारीगरी (यानी उनको बनाना और तैयार करना) इतनी अहमियत रखती है कि वही के द्वारा अम्बिया अलैहिमुस्सलाम को यह सिखाई गयी है।

हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को कश्ती बनाने की हिदायत देने के साथ यह भी फ़रमा दिया कि आपकी कौम पर तूफ़ान आयेगा, वे गर्क होंगे। उस वक़्त आप अपनी शफ़क़त की बिना पर उनके बारे में कोई सिफ़ारिश न करें।

तीसरी आयत में कश्ती बनाने के ज़माने में नूह अलैहिस्सलाम की कौम की ग़फ़लत और बुरे अन्जाम से बेफ़िक़्री का हाल ज़िक्र किया गया है कि हज़रत नूह अलैहिस्सलाम अल्लाह के हुक्म से कश्ती बनाने में मशगूल थे, उनकी कौम के सरदार जब उनको देखते और पूछते कि क्या कर रहे हो? तो यह फ़रमाते कि तूफ़ान आने वाला है इसलिये कश्ती तैयार कर रहा हूँ। उनकी कौम उनका मज़ाक़ उड़ाती और ठट्ठे लगाती थी कि यहाँ पीने के लिये तो पानी का काल पड़ा हुआ है, यह बड़े मियाँ इस खुश्की में कश्ती चलाने की फ़िक्र में हैं। हज़रत नूह

अलैहिस्सलाम ने उनके जवाब में फरमाया कि "अगर आज तुम हमसे मज़ाक दिल्गी करते हो तो याद रखो कि एक दिन ऐसा भी आने वाला है जिसमें हम तुमसे मज़ाक करेंगे।" मुराद यह है कि हालात ऐसे पेश आयेंगे जो खुद तुम्हारे मज़ाक उड़ाये जाने का कारण बनेंगे। क्योंकि हकीकत में मज़ाक उड़ाना और किसी की खिल्ली उड़ाना अम्बिया की शान के खिलाफ है, वह किसी के लिये जायज़ नहीं बल्कि हराम है। कुरआने करीम का इरशाद है:

لَا يَسْخَرُ قَوْمٌ مِنْ قَوْمٍ عَسَىٰ أَنْ يَكُونُوا خَيْرًا مِنْهُمْ

यानी कोई किसी के साथ मज़ाक व ठट्ठा न करे, हो सकता है कि वह उस मज़ाक उड़ाने वाले से बेहतर हो। इसलिये यहाँ मज़ाक और खिल्ली उड़ाने से मुराद उनके मज़ाक उड़ाने का अमली जवाब है, कि जब तुम अज़ाब में गिरफ़्तार होगे तो हम तुम्हें बतलायेंगे कि यह है तुम्हारे मज़ाक उड़ाने का अन्जाम, जैसा कि इसके बाद चौथी आयत में फ़रमाया है कि "जल्द ही तुम्हें मालूम हो जायेगा कि किस पर ऐसा अज़ाब आया चाहता है जो उसको रुस्वा कर देगा, और किस पर हमेशा का अज़ाब होता है।" पहले अज़ाब से दुनिया का और 'अज़ाब-ए-मुकीम' से आखिरत का हमेशा का अज़ाब मुराद है।

पाँचवीं आयत में तूफ़ान की शुरूआत और उससे संबन्धित हिदायतों और वाकिआत का सिलसिला शुरू हुआ है। इसमें इरशाद फ़रमाया:

حَتَّىٰ إِذَا جَاءَ أَمْرُنَا وَفَارَ التَّنُّورُ

यानी जब हमारा हुक्म आ पहुँचा और तन्नूर से पानी उबलना शुरू हो गया।

लफ़्ज़ 'तन्नूर' कई मायने में इस्तेमाल होता है, ज़मीन की सतह को भी 'तन्नूर' कहते हैं, रोटी पकाने के तन्दूर को भी 'तन्नूर' कहा जाता है, ज़मीन के ऊँचे हिस्से के लिये भी लफ़्ज़ 'तन्नूर' बोला जाता है। इसी लिये तफ़सीर के इमामों में से कुछ ने फ़रमाया कि इस जगह तन्नूर से मुराद ज़मीन की सतह (ऊपरी हिस्सा) है कि उससे पानी उबलने लगा। कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि हज़रत आदम अलैहिस्सलाम का तन्नूर 'ऐन-ए-वरदा' के स्थान पर मुल्के शाम में था, वह मुराद है, उससे पानी निकलने लगा। कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि हज़रत नूह अलैहिस्सलाम का अपना तन्नूर कोफ़े में था, वह मुराद है। अक्सर मुफ़सिरीन हज़रात- हज़रत हसन, हज़रत मुजाहिद, इमाम शाबी रह., हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु वगैरह ने इसी को इख़्तियार फ़रमाया है।

और इमाम शाबी रह. तो कसम खाकर कहा करते थे कि यह तन्नूर शहर कूफ़ा के एक किनारे में था और यह कि हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने अपनी कश्ती कूफ़ा की मस्जिद के अन्दर बनाई थी। उसी मस्जिद के दरवाज़े पर यह तन्नूर था। हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हक़ तआला ने हज़रत नूह अलैहिस्सलाम से फ़रमाया था कि आप यह देखें कि आपके घर के तन्नूर से पानी उबलने लगा तो समझ लें कि तूफ़ान आ गया। (कुतुबी व मज़हरी)

मशहूर मुफ़्तिर इमाम कुर्तुबी रह. ने फ़रमाया कि अगरचे तन्नूर के मायने में मुफ़्तिरीन के अक़्वाल विभिन्न नज़र आते हैं मगर हकीक़त यह है कि यह कोई इख़िलाफ़ (मतभेद) नहीं। जब तूफ़ान का पानी उबलना शुरू हुआ तो रोटी पकाने के तन्दूर से भी निकला, ज़मीन की सतह से भी उबला, मुल्के शाम में ऐनुल-वरदा के तन्नूर से भी निकला, जैसा कि क़ुरआने करीम ने खुद स्पष्ट फ़रमाया है:

فَفَتَحْنَا أَبْوَابَ السَّمَاءِ بِمَاءٍ مُّهِمٍّ وَفَجَّرْنَا الْأَرْضَ عُيُونًا.

यानी हमने आसमान के दरवाज़े मूसलाधार बारिश के लिये खोल दिये और ज़मीन से (पानी के) चश्मे ही चश्मे फूट पड़े।

इमाम शाबी रह. ने अपने बयान में यह भी फ़रमाया कि यह कूफ़ा की जामा मस्जिद, मस्जिदे हराम और मस्जिदे नबवी और मस्जिदे अक्सा के बाद चौथी मस्जिद है जो एक विशेष और अलग शान रखती है।

आयत में आगे यह बयान फ़रमाया कि जब तूफ़ान शुरू हो गया तो हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को हुक्म दिया गया:

اِحْمَلْ فِيهَا مِنْ كُلِّ زَوْجَيْنِ اثْنَيْنِ.

यानी सवार कर लीजिये इस क़श्ती में हर जोड़े वाले जानवरों का एक-एक जोड़ा।

इससे मालूम हुआ कि नूह अलैहिस्सलाम की क़श्ती में तमाम दुनिया भर के जानवर जमा नहीं किये गये थे बल्कि सिर्फ़ वे जानवर जो नर व मादा के जोड़े से पैदा होते हैं और पानी में ज़िन्दा नहीं रह सकते। इसलिये तमाम दरियाई जानवर इससे निकल गये और खुश्की के जानवरों में भी बग़ैर नर व मादा के पैदा होने वाले ज़मीनी कीड़े-मकोड़े और जानवर सब निकल गये, सिर्फ़ पालतू जानवर गाय, बैल भैंस, बकरी वगैरह रह गये।

इससे वह शुब्हा दूर हो गया जो पहली और ऊपरी नज़र में पैदा हो सकता है कि क़श्ती में इतनी गुंजाईश कैसे हो गयी कि दुनिया भर के जानवर उसमें समा गये।

और फिर हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को इरशाद फ़रमाया कि आप अपने घर वालों और बाल-बच्चों को सिवाय उनके जो कुफ़्र पर हैं, क़श्ती में सवार कर लें, और उन सब लोगों को भी जो आप पर ईमान लाये हैं, मगर ईमान लाने वालों की तायदाद बहुत कम है।

क़श्ती वालों की सही तायदाद क़ुरआन व हदीस में निर्धारित नहीं की गयी। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से नक़ल किया गया है कि कुल संख्या अस्सी आदमियों की थी, जिनमें हज़रत नूह अलैहिस्सलाम के तीन बेटे साम, हाम, याफ़िस और उनकी तीन बीवियाँ थीं, चौथा बेटा काफ़िरों के साथ रहकर तूफ़ान में ग़र्क़ हुआ।

وَقَالَ ارْكَبُوا فِيهَا بِسْمِ اللَّهِ مَجْرِبَهَا وَمُرسِهَا إِنَّ رَبِّي لَغَفُورٌ رَحِيمٌ ۝ وَهِيَ تَجْرِي بِهِمْ فِي مَوْجٍ
 كَالْجِبَالِ سَوَادًا نُّوحٌ ابْنُهُ وَكَانَ فِي مَعْزِلٍ يَبْنِي أَرْكَبَ مَعْنَا وَلَا تَكُنْ مَعَ الْكَافِرِينَ ۝
 قَالَ سَارُوا إِلَى الْجِبَلِ يَعِصُومِنِي مِنَ الْمَاءِ ۝ قَالَ لَا عَاصِمَ الْيَوْمَ مِنْ أَمْرِ اللَّهِ إِلَّا مَنْ رَجِمَ ۝ وَحَالَ
 بَيْنَهُمَا الْمَوْجُ فَكَانَ مِنَ الْمُغْرَقِينَ ۝ وَقِيلَ يَا أَرْضُ ابْلَعِي مَاءَكِ وَيَسْمَاءُ أَقْلِعِي وَغِيضَ الْمَاءُ وَقُضِيَ
 الْأَمْرُ وَاسْتَوَتْ عَلَى الْجُودِيِّ وَقِيلَ بُعْدًا لِلْقَوْمِ الظَّالِمِينَ ۝

لَوْبَع

व कालर्कबू फीहा बिस्मिल्लाहि
 मजरेहा व मुरसाहा इन्-न रब्बी
 ल-गफूररहीम (41) व हि-य तजरी
 बिहिम् फी मौजिन् कल्जिबालि, व
 नादा नूहु-निब्नहू व का-न फी
 मअजिलिय-या बुनय्यर्कबू म-अना
 व ला तकुम् मअल्-काफिरीन (42)
 का-ल स-आवी इला ज-बलिय-
 -यअसिमुनी मिनल्मा-इ, का-ल ला
 आसिमल्यौ-म मिन् अमिरल्लाहि
 इल्ला मरहि-म व हा-ल बैनहुमल्-
 मौजु फका-न मिनल्-मुगूरकीन (43)
 व की-ल या अरजुब्लअी मा-अकि व
 या समा-उ अक्लिअी व गीजल्-मा-उ
 व कुजियल्-अम्फ वस्तवत् अलल्-
 जूदिटिय व की-ल बुअ्दल्
 लिल्-कौमिज्जालिमीन (44) ❖

और बोला सवार हो जाओ इसमें, अल्लाह
 के नाम से है इसका चलना और ठहरना,
 बेशक मेरा रब है बख्शने वाला मेहरबान।
 (41) और वह लिये जा रही थी उनको
 लहरों में जैसे पहाड़, और पुकारा नूह ने
 अपने बेटे को और वह हो रहा था
 किनारे, ऐ बेटे! सवार हो जा हमारे साथ
 और मत रह काफिरों के साथ। (42)
 बोला जा लगूंगा किसी पहाड़ को जो
 बचा लेगा मुझको पानी से, कहा कोई
 बचाने वाला नहीं आज अल्लाह के हुक्म
 से मगर जिस पर वही रहम करे, और
 आड़ हो गई दोनों में लहर, फिर हो गया
 डूबने वालों में। (43) और हुक्म आया ऐ
 ज़मीन! निगल जा अपना पानी और ऐ
 आसमान! थम जा, और सुखा दिया पानी
 और हो चुका काम, और कशती ठहरी
 जूदी पहाड़ पर, और हुक्म हुआ कि दूर
 हो ज़ालिम कौम। (44) ❖

खुलासा-ए-तफसीर

और नूह (अलैहिस्सलाम) ने (सब जानवरों को सवार करके अपने मानने वालों से) फरमाया

कि (आजो) इस कश्ती में सवार हो जाओ (और डूबने की आशंका दिल में मत लाना, क्योंकि) इसका चलना और ठहरना (सब) अल्लाह ही के नाम से है (और वही इसके मुहाफिज़ हैं, फिर अन्देशा क्यों किया जाये, और अगरचे बन्दों के गुनाह डूबने का सबब हैं मगर) यकीनन मेरा रब मगफिरत करने वाला (है), रहीम है (वह अपनी रहमत से गुनाह बख्श देता है और हिफाज़त भी करता है। गुर्ज कि सब कश्ती पर सवार हो गये और इस दौरान में पानी बढ़ गया) और वह कश्ती उनको लेकर पहाड़ जैसी लहरों में चलने लगी, और नूह (अलैहिस्सलाम) ने अपने (एक सगे या सौतेले) बेटे को (जिसका नाम किनआन था और वह बावजूद समझाने के ईमान न लाया था, और ईमान न लाने की वजह से कश्ती में सवार न किया गया था, और उस वक्त कश्ती किनारे के करीब ही थी और वह किनारे पर मौजूद था, आखिरी दावत के तौर पर) पुकारा, और वह (कश्ती से) अलग जगह पर था, कि ऐ मेरे (प्यारे) बेटे! (कश्ती में सवार होने की शर्त जो कि ईमान है उसको कुबूल करके जल्दी) हमारे साथ सवार हो जा और (अक्कीदे में) काफ़िरों के साथ मत हो (यानी कुफ़्र को छोड़ दे ताकि गर्क होने से बच जाये)।

वह कहने लगा कि मैं अभी किसी पहाड़ की पनाह ले लूँगा जो मुझको पानी (में गर्क होने) से बचा लेगा (क्योंकि वह वक्त तूफ़ान की शुरूआत का था, पहाड़ों के ऊपर पानी न पहुँचा था) नूह (अलैहिस्सलाम) ने फरमाया कि आज अल्लाह के हुक्म (यानी क़हर से) कोई बचाने वाला नहीं (न पहाड़ और न कोई चीज़), लेकिन जिस पर वही रहम करे (तो उसको खुद ही बचा ले। गुर्ज कि किनआन उस वक्त भी ईमान न लाया और पानी जोर शोर के साथ उस तरफ़ से बढ़ गया) और दोनों (बाप बेटों) के बीच में एक मौज “यानी पानी की लहर” आड़ हो गई। पस वह भी दूसरे काफ़िरों की तरह गर्क हो गया। और (जब काफ़िर सब गर्क हो चुके तो) हुक्म हो गया कि ऐ ज़मीन! अपना पानी (जो कि तेरी सतह पर मौजूद है) निगल जा, और ऐ आसमान! (बरसने से) थम जा, (चुनाँचे दोनों बातें हो गई) और पानी घट गया और किस्सा खत्म हुआ, और कश्ती जूदी (पहाड़) पर आ ठहरी, और कह दिया गया कि काफ़िर लोग रहमत से दूर।

मअरिफ़ व मसाईल

कश्तियों और दूसरी सवारियों पर सवार होने के आदाब

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत में कश्ती और सवारी पर सवार होने के आदाब की तालीम है कि:

بِسْمِ اللَّهِ مَجْرَهَا وَمُرْسَاهَا.

“बिस्मिल्लाहि मजरेहा व मुरसाहा” कहकर सवार हों। मजरे के मायने जारी होना और चलना, और मुरसा के मायने रुकना और ठहरना हैं। मायने यह हैं कि इस कश्ती और सवारी का चलना भी अल्लाह तआला ही की क़ुदरत और उसके नाम से है और रुकना और ठहरना भी उसी की क़ुदरत के ताबे है।

हर सवारी का चलना और ठहरना सिर्फ अल्लाह तआला की कुदरत से है

इनसान अगर ज़रा भी ग़ौर से काम ले तो उसे मालूम होगा कि कश्ती हो या खुश्की पर चलने वाली कोई सवारी, न उसका पैदा करना बनाना उसकी कुदरत में है न चलाना और ठहराना उसके बस का है। इनसान अपनी ऊपरी और सरसरी नज़र की बिना पर समझता है कि मैंने इसको बनाया और चलाया है हालाँकि हकीकत यह है कि न उसने वह लोहा, लकड़ी, पीतल, एल्यूमीनियम वगैरह पैदा किये हैं जो उन तमाम सवारियों का कच्चा मैटेरियल है और न उसके बस में है कि एक तौला लोहा या एक फुट लकड़ी पैदा कर सके। फिर इन कच्ची जिन्सों (मैटेरियल) से तरह-तरह के कल-पुर्जे बनाने की अक्ल व समझ किसने दी? क्या यह अक्ल व समझ इनसान ने खुद पैदा कर ली है? अगर खुद पैदा कर लेना इनसान के बस में होता तो दुनिया में कोई बेवकूफ़ कम-अक्ल न रहता, हर शख्स अफ़लातून व अरस्तू ही बनकर रहता। कहीं की लकड़ी, कहीं का लोहा, कहीं के उपकरण व औज़ार इस्तेमाल करके सवारी का ढाँचा भी बन गया, अब इस मनो और टनो के भारी बोझ को लेकर ज़मीन पर दौड़ने या हवा पर उड़ने के लिये जिस ताक़त (पॉवर) की ज़रूरत है वह चाहे पेट्रोल से हासिल की जाये या हवा और पानी के टकराव से ऊर्जा की सूरत में हासिल की जाये, बहरहाल सोचने की बात यह है कि इनमें से इनसान ने किस चीज़ को पैदा किया है। पेट्रोल इसने पैदा किया या हवा, पानी इसने बनाया, उनमें ऑक्सीजन, हाईड्रोजन की ताक़तें इसने पैदा कीं?

अगर इनसान ज़रा भी अक्ल से काम ले तो उसको विज्ञान की अजीब-अजीब चीज़ों और तरक्की के इस ज़माने में भी अपनी बेबसी और आजिज़ी ही का अनुभव होगा, और इस इक़रार के बग़ैर न रह सकेगा कि हर सवारी का चलना और रुकना सब इस कायनात के पैदा करने वाले यानी हक़ तआला ही के कब्ज़े में है।

ग़ाफ़िल इनसान अपने ज़ाहिरी जोड़-तोड़ के अमल-दख़ल और उलट-फेर जिनका दूसरा नाम वैज्ञानिक आविष्कार है उन पर फ़ख़्र व ग़ुरूर के नशे में ऐसा मस्त हो जाता है कि असल हकीकत नज़रों से ओझल हो जाती है, अल्लाह तआला अपने पैग़म्बरों के ज़रिये इस ग़फ़लत का पर्दा हटाते हैं और 'बिस्मिल्लाहि मजरेहा व मुरसाहा' की असल हकीकत सामने कर देते हैं। देखने में तो यह एक दो लफ़्ज़ का फ़िक़रा है मगर ग़ौर कीजिए तो यह कुन्जी और चाबी है एक ऐसे दरवाज़े की जहाँ से इनसान इस मादी दुनिया में रहते हुए रूहानी दुनिया का बाशिन्दा बन जाता है, और कायनात के ज़र्रे-ज़र्रे में हक़ तआला के रूप को देखने लगता है।

यहीं से मोमिन की दुनिया और काफ़िर की दुनिया में फ़र्क़ नुमायाँ (स्पष्ट और ज़ाहिर) हो जाता है। सवारी पर दोनों सवार होते हैं लेकिन मोमिन का जो क़दम सवारी पर आता है वह उसको सिर्फ़ ज़मीन की दूरी तय नहीं कराता बल्कि ऊपर की दुनिया से भी अवगत करा देता है।

दूसरी और तीसरी आयत में बतलाया कि जब हज़रत नूह अलैहिस्सलाम के सब घर वाले और बाल-बच्चे कश्ती में सवार हो गये मगर एक लड़का जिसका नाम किनआन बतलाया जाता है सवार होने से रह गया तो बाप वाली शफ़क़त से हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने उसको पुकारा कि हमारे साथ कश्ती में आ जाओ, काफ़िरों के साथ न रहो कि गर्क हो जाओगे। यह लड़का काफ़िरों दुश्मनों के साथ साज़-बाज़ रखता था और हकीक़त में काफ़िर था मगर ग़ालिबन हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को इसके काफ़िर होने का यकीनी तौर पर इल्म न था, और अगर इल्म था तो कुफ़्र से तौबा करके ईमान लाने की दावत के तौर पर उसको कश्ती में सवार होने और काफ़िरों का साथ छोड़ने की नसीहत फ़रमाई, मगर उस बदबख़्त ने उस वक़्त भी तूफ़ान को मामूली समझा और कहने लगा कि आप फ़िक्र न करें, मैं पहाड़ पर चढ़कर तूफ़ान से बच जाऊँगा। हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने फिर सचेत किया कि ज़ालिम किस ख़्याल में है, आज कोई ऊँची इमारत या पहाड़ किसी को अल्लाह के अज़ाब से बचाने वाला नहीं, और बचने की कोई सुरत सिवाय इसके नहीं कि अल्लाह तआला ही उस पर रहम फ़रमायें। बाप बेटे की यह गुफ़्तगू दूर से चल ही रही थी कि एक मौज (पानी की लहर) उस तूफ़ान की आई और बेटे को बहा ले गयी। तारीख़ी रिवायतों में है कि तूफ़ाने नूह का पानी बड़े से बड़े पहाड़ की चोटी से पन्द्रह गज़ और कुछ रिवायतों के अनुसार चालीस गज़ ऊँचाई पर था।

चौथी आयत में तूफ़ान के ख़त्म होने और हालात के हमवार होने का बयान इस तरह किया गया है कि हक़ तआला ने ज़मीन को ख़िताब करके हुक्म दिया:

يَا اَرْضُ اِئْتِيْ مَآءَكَ.

ऐ ज़मीन! तू अपना पानी निगल ले। मुराद यह थी कि जिस कद्र पानी ज़मीन से उबला था उसके लिये यह हुक्म दे दिया कि उसको फिर ज़मीन अपने अन्दर उतार ले। आसमान को हुक्म दिया गया कि अब पानी बरसाना बन्द कर दे। इस तरह ज़मीन से निकला हुआ पानी फिर ज़मीन में चला गया और आसमान से आगे पानी बरसना बन्द हो गया। आसमान से बरसा हुआ जितना पानी ज़मीन पर मौजूद था उसको कुदरत ने दरियाओं और नहरों की शक़्त दे दी जिससे इनसान फ़ायदा उठाये। (तफ़सीरे कुर्तुबी व मज़हरी)

इस आयत में हक़ तआला ने आसमान और ज़मीन को ख़िताब करके अहक़ाम दिये हैं, हालाँकि ज़ाहिर नज़र में वो कोई शऊर व समझ वाली चीज़ें नहीं हैं, इसी लिये कुछ हज़रात ने इसको मजाज़ व इस्तिआरे पर महमूल किया है, मगर वाकिआ यह है कि हमारी नज़र और हमारे एतिबार से दुनिया की जितनी चीज़ें बेशऊर, बेहिस, बेजान हैं, हकीक़त में वो सब रूह और शऊर रखने वाली चीज़ें हैं, अलबत्ता उनका शऊर व समझ इस दर्जे का नहीं जिस दर्जे का इनसान वगैरह को हासिल है, इसी लिये उनको बिना शऊर वाली करार देकर शर्ई अहक़ाम का पाबन्द नहीं बनाया गया। क़ुरआन मजीद की बहुत सी आयतें इस पर सुबूत हैं जैसे:

وَ اِنْ مِنْ شَيْءٍ اِلَّا يَسْبِغُ بِحَمْلِهِ.

यानी कोई चीज़ ऐसी नहीं जो अल्लाह तआला की तारीफ़ व पाकी बयान न करती हो। और यह ज़ाहिर है कि अल्लाह तआला की तारीफ़ व सना उसकी मारिफ़त (पहचान) पर मौकूफ़ है, और मारिफ़त अक्ल व शऊर पर। इससे मालूम हुआ कि हर चीज़ में अक्ल व शऊर अपने अपने हौसले के मुताबिक़ मौजूद है, उसी अक्ल व शऊर से वह अपने ख़ालिक (पैदा करने वाले) को पहचानती है और जिस काम पर उसको उसके पैदा करने वाले ने लगा दिया है उस काम को हर चीज़ ख़ूब समझती है, और उसकी अदायेगी में बड़ी मज़बूती से लगी हुई है। कुरआन की आयत:

وَأَعْطَى كُلَّ شَيْءٍ خَلْقَهُ ثُمَّ هَدَىٰ ۝

का यही मतलब है। इसलिये इस आयत में अगर आसमान व ज़मीन के ख़िताब को वास्तविक मायने में ख़िताब करार दिया जाये तो कोई हर्ज नहीं, क्योंकि बकौल मौलाना रूमी रह:

खाक व बाद व आब व आतिश बन्दा अन्द

बा-मन् व तू मुर्दा बा-हक़ जिन्दा अन्द

तर्जुमा: मिट्टी, हवा, पानी और आग़ हुक्म के ताबे हैं अगरचे हमें तुम्हें ये बेजान और मुर्दा मालूम होते हैं मगर अल्लाह तआला के साथ इनका जो मामला है वह जिन्दों की तरह है, कि जिन्दों की तरह उसके हुक्म की तामील करते हैं। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

चौथी आयत के आख़िर में फ़रमाया कि ज़मीन व आसमान ने अहक़ाम की तामील की तो तूफ़ान का किस्सा ख़त्म हो गया, और नूह अलैहिस्सलाम की कश्ती जूदी पहाड़ पर ठहर गयी, और ज़ालिमों को हमेशा के लिये 'रहमत से दूर' कह दिया गया।

जूदी पहाड़ आज भी इस नाम से कायम है, इसका स्थान हज़रत नूह अलैहिस्सलाम के असली वतन इराक़ में मूसल के उत्तर में इब्ने उमर द्वीप के करीब आरमीनिया की सरहद पर है। यह एक पहाड़ी श्रृंखला है जिसके एक हिस्से का नाम जूदी है, इसी के एक हिस्से को अरारात कहा जाता है। मौजूदा तौरात में कश्ती ठहरने का मक़ाम अरारात पहाड़ को बतलाया है, इन दोनों रिवायतों में कोई ऐसा टकराव नहीं, मगर मशहूर पुरानी तारीख़ों में भी यही है कि नूह अलैहिस्सलाम की कश्ती जूदी पहाड़ पर आकर ठहरी थी।

पुरानी तारीख़ों में यह भी बयान हुआ है कि इराक़ के बहुत से मक़ामात में इस कश्ती के टुकड़े अब तक मौजूद हैं जिनको तबरुक (बरकत वाली चीज़) के तौर पर रखा और इस्तेमाल किया जाता है।

तफ़सीर-ए-तबरी और तफ़सीर-ए-बग़वी में है कि नूह अलैहिस्सलाम रजब महीने की 10 तारीख़ को कश्ती में सवार हुए थे, छह महीने तक यह कश्ती तूफ़ान के ऊपर चलती रही। जब बैतुल्लाह शरीफ़ के मक़ाम पर पहुँची तो सात मर्तबा तवाफ़ किया, अल्लाह तआला ने अपने घर को ऊँचा करके डूबने से बचा लिया था। फिर 10 मुहर्रम आशूरा के दिन में तूफ़ान ख़त्म होकर कश्ती जूदी पहाड़ पर ठहरी। हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने उस दिन शुक्राने के तौर पर रोज़ा रखा

और कष्टी में जितने आदमी साथ थे सब को रोज़ा रखने का हुक्म दिया। कुछ रिवायतों में है कि कष्टी के शरीक सब जानवरों ने भी उस दिन रोज़ा रखा। (मज़हरी व कुर्तुबी)

आशूरा के दिन यानी मुहर्रम की दसवीं तारीख की अहमियत पहले तमाम नबियों की शरीअतों में पुराने ज़माने से चली आती है। इस्लाम के शुरू ज़माने में रमज़ान के रोज़े फर्ज़ होने से पहले आशूरा (दस मुहर्रम) का रोज़ा फर्ज़ था, रमज़ान की फर्ज़ियत नाज़िल होने के बाद फर्ज़ नहीं, मगर सुन्नत और बड़ा सवाब हमेशा के लिये है।

وَنَادَى نُوحٌ رَبَّهُ فَقَالَ رَبِّ إِنَّ ابْنِي مِنْ أَهْلِي وَإِنَّ وَعْدَكَ الْحَقُّ وَأَنْتَ أَحْكَمُ
الْحَكَمِينَ ۝ قَالَ يُنُوحُ إِنَّهُ لَيْسَ مِنْ أَهْلِكَ، إِنَّهُ عَمَلٌ غَيْرُ صَالِحٍ فَلَا تَسْأَلْنِ مَا لَيْسَ لَكَ بِهِ عِلْمٌ
إِنِّي أَعْطُكَ أَنْ تَكُونَ مِنَ الْجَاهِلِينَ ۝ قَالَ رَبِّ إِنِّي أَعُوذُ بِكَ أَنْ أَسْأَلَكَ مَا لَيْسَ لِي بِهِ عِلْمٌ
وَالَا تُغْفِرْ لِي وَتَرْحِمَنِي أَكُنْ مِنَ الْخَسِرِينَ ۝ قِيلَ يُنُوحُ اهْبِطْ بِسَلَامَةٍ وَبَرَكَاتٍ عَلَيْكَ وَ
عَلَى أُمَمٍ مِمَّنْ مَعَكَ وَأُمَمٌ سَنَسْتَعْتِبُهُمْ ثُمَّ يَكُونُ عَذَابُ الْيَوْمِ ۝ تِلْكَ مِنْ أَنْبَاءِ
الْغَيْبِ نُوحِيهَا إِلَيْكَ مَا كُنْتَ تَعْلَمُهَا أَنْتَ وَلَا قَوْمُكَ مِنْ قَبْلِ هَذَا فَاصْبِرْ إِنَّ الْعَاقِبَةَ
لِلْمُتَّقِينَ ۝

व नादा नूहुर-रब्बहू फका-ल रब्बि
इन्नब्नी मिन् अहली व इन्-न
वअदकल्-हक्कु व अन्-त अह्कमुल्-
हाकिमीन (45) का-ल या नूहु इन्नहू
लै-स मिन् अह्लि-क इन्नहू अ-मलुन्
गैरु सालिहिन् फला तस्अलि मा
लै-स ल-क बिही अिल्मुन्, इन्नी
अजिजु-क अन् तकू-न मिनल्-
जाहिलीन (46) का-ल रब्बि इन्नी
अज्जु बि-क अन् अस्अ-ल-क मा
लै-स ली बिही अिल्मुन्, व इल्ला
तग़िफ़र ली व तरहम्नी अकुम् मिनल्-

और पुकारा नूह ने अपने रब को, कहा ऐ
रब! मेरा बेटा है मेरे घर वालों में और
बेशक तेरा वायदा सच्चा है और तू सबसे
बड़ा हाकिम है। (45) फरमाया ऐ नूह!
वह नहीं तेरे घर वालों में, उसके काम हैं
ख़राब, सो मत पूछ मुझसे जो तुझको
मालूम नहीं, मैं नसीहत करता हूँ तुझको
कि न हो जाये तू जाहिलों में। (46)
बोला ऐ रब! मैं पनाह लेता हूँ तेरी इससे
कि पूछूँ तुझसे जो मालूम न हो मुझको,
और अगर तू न बख़्शे मुझको और रहम
न करे तो मैं हूँ नुक़सान वालों में। (47)
हुक्म हुआ ऐ नूह! उतर सलामती के साथ
हमारी तरफ़ से और बरकतों के साथ

ख़ासिरीन (47) की-ल या नूहुस्बि
बिसलामिम्-मिन्ना व ब-रकातिन्
अलै-क व अला उ-ममिम्
मिम्-मम्म-अ-क, व उ-ममुन्
सनुमत्तिअुहुम् सुम्-म यमस्सुहुम्
मिन्ना अजाबुन् अलीम (48)
तिल्-क मिन् अम्बाइल्-गैबि नूहीहा
इलै-क मा कुन्-त तअलमुहा अन्-त
व ला कौमु-क मिन् क़ब्लि हाज़ा,
फ़स्बिर्, इन्नल् अकि-ब-त
लिल्मुत्तकीन (49) ❀

तुझ पर और इन फ़िकों पर जो तेरे साथ
हैं, और दूसरे फ़िकें हैं कि हम फायदा
देंगे उनको, फिर पहुँचेगा उनको हमारी
तरफ़ से दर्दनाक अज़ाब। (48) ये कुछ
बातें हैं ख़बरों में से कि हम भेजते हैं
तेरी तरफ़, न तुझको इनकी ख़बर थी
और न तेरी कौम को इससे पहले, सो तू
सब्र कर, अलबत्ता अन्जाम भला है डरने
वालों का। (49) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

और (जब) नूह (अलैहिस्सलाम ने किंआन को ईमान लाने के लिये फ़रमाया और उसने न माना तो उसके गर्क होने से पहले उन्होंने) ने इस उम्मीद पर कि शायद हक़ तआला अपनी क़ुदरत से इसके दिल में ईमान डाल दे और ईमान ले आये) अपने रब को पुकारा और अर्ज किया कि मेरा यह बेटा मेरे घर वालों में से है, और आपका (यह) वायदा बिल्कुल सच्चा है (कि घर वालों में जो ईमान वाले हैं उनको बचा लूँगा) और (अगरचे यह फ़िलहाल ईमान वाला और निजात का हक़दार नहीं है लेकिन) आप हाकिमों के हाकिम (और बड़ी क़ुदरत वाले) हैं (अगर आप चाहें तो इसको मोमिन बना दें, ताकि यह भी उस हक़ वायदे का महल बन जाये। अर्ज करने का खुलासा दुआ थी उसके मोमिन हो जाने के लिये) अल्लाह तआला ने इरशाद फ़रमाया कि ऐ नूह! यह शख्स (हमारे अज़ली इल्म में) तुम्हारे (उन) घर वालों में से नहीं (जो ईमान लाकर निजात पायेंगे) यानी इसकी किस्मत में ईमान नहीं बल्कि यह (ख़ात्मे तक) तबाहकार (यानी काफ़िर रहने वाला) है। सो मुझसे ऐसी चीज़ की दरख़ास्त मत करो जिसकी तुमको ख़बर नहीं (यानी ऐसे अस्पष्ट और संदिग्ध मामले की दुआ मत करो) मैं तुमको नसीहत करता हूँ कि तुम नादानों में दाख़िल न हो जाओ। उन्होंने अर्ज किया कि ऐ मेरे रब! मैं इस (बात) से आपकी पनाह माँगता हूँ कि (आईन्दा) आप से ऐसे मामले की दरख़ास्त करूँ जिसकी मुझको ख़बर न हो, और (गुज़री हुई बात को माफ़ कर दीजिये क्योंकि) अगर आप मेरी मग़फ़िरत न फ़रमाएँगे और मुझ पर रहम न फ़रमाएँगे तो मैं बिल्कुल ही तबाह हो जाऊँगा।

(जब जूदी पहाड़ पर कश्ती ठहरने के चन्द दिन बाद पानी बिल्कुल उतर गया उस वक्त नूह अलैहिस्सलाम से) कहा गया (यानी अल्लाह तआला ने खुद या किसी फरिश्ते के जरिये से इरशाद फरमाया) कि ऐ नूह! (अब जूदी पर से ज़मीन पर) उतरो हमारी तरफ से सलाम और बरकतें लेकर जो तुम पर नाज़िल होंगी, और उन जमाअतों पर जो कि तुम्हारे साथ हैं (क्योंकि साथ वाले सब मुसलमान थे और इस्लाम में साझी होने की वजह से कियामत तक के मुसलमानों पर भी सलाम व बरकत का उतरना मालूम हो गया) और (चूँकि यह कलाम बाद वाले मुसलमानों पर भी बरकत के नाज़िल होने पर दलालत करता है, और बाद वालों में बाजे काफिर भी होंगे इसलिये उनका हाल भी बयान फरमाते हैं कि) बहुत-सी ऐसी जमाअतें भी होंगी कि उनको हम (दुनिया में) चन्द दिन की ऐश देंगे, फिर (आखिरत में) उन पर हमारी तरफ से सज़ा सज़ा डाली जायेगी। यह किस्सा (आपके एतिबार से) ग़ैब की ख़बरों में से है जिसको हम वही के जरिये से आपको पहुँचाते हैं, इस (किस्से) को इस (हमारे बतलाने) से पहले न आप जानते थे और न आपकी कौम (जानती थी। इस एतिबार से ग़ैब था और सिवाय वही के जानकारी के दूसरे तमाम माध्यम और सूत्र नहीं पाये जाते, पस साबित हो गया कि आपको वही के जरिये से मालूम हुआ है, और यही नुबुव्वत है, लेकिन ये लोग सुबूत के बाद भी आपकी मुख़ालफ़त करते हैं) सो सब्र कीजिये (जैसा कि इस किस्से में नूह अलैहिस्सलाम का सब्र आपको मालूम हुआ है) यकीनन अच्छे अन्जाम वाला होना मुत्तकियों के लिये है (जैसा कि नूह अलैहिस्सलाम के किस्से में मालूम हुआ कि काफिर का अन्जाम बुरा और मुसलमानों का अन्जाम अच्छा हुआ, इसी तरह इन काफिरों का चन्द दिन का जोर-शोर है फिर आखिर में ग़लबा हक़ ही को होगा)।

मआरिफ़ व मसाईल

सूर: हूद की ज़िक्र हुई इन पाँच आयतों में तूफ़ाने नूह का बाकी किस्सा और उससे संबन्धित हिदायतें बयान हुई हैं।

हज़रत नूह अलैहिस्सलाम का बेटा किनआन जब अपने वालिद साहिब की नसीहत और दावत के बावजूद कश्ती में सवार न हुआ तो उसको तूफ़ान की मौज में मुब्तला देखकर बाप की शफ़क़त ने एक दूसरा रास्ता इख़्तियार किया कि अल्लाह रब्बुल-इज़्ज़त की बारगाह में अर्ज किया कि आपने मुझसे वायदा फ़रमाया है कि मेरे घर वालों को तूफ़ान से बचायेंगे और बिला शुब्हा आपका वायदा हक़ व सही है, मगर सूरतेहाल यह है कि मेरा बेटा जो मेरे घर वालों में दाख़िल है वह तूफ़ान की भेंट चढ़ रहा है और आप तो अस्कमुल-हाकिमीन हैं, हर चीज़ आपकी कुदरत में है, अब भी उसको तूफ़ान से बचा सकते हैं।

दूसरी आयत में हक़ तआला की तरफ़ से इसके जवाब में हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को तंबीह की गयी कि यह लड़का आपके घर वालों में दाख़िल नहीं रहा, क्योंकि इसका अमल अच्छा नहीं बल्कि तबाही वाला है, इसलिये आपको नहीं चाहिये कि इस हकीक़ते हाल से बेख़बर रहकर मुझसे कोई सवाल करें। हम तुम्हें नसीहत करते हैं कि नादानों में दाख़िल न हो जाओ।

हक़ तआला के इस इरशाद से दो बातें मालूम हुई- अव्वल यह कि हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को इस बेटे के कुफ़्र का पूरा हाल मालूम न था, उसके निफ़ाक़ की वजह से वह उसको मुसलमान ही जानते थे, इसी लिये उसको अपने घर वालों में का एक फ़र्द करार देकर तूफ़ान से बचाने की दुआ कर बैठे, वरना अगर उनको असल हकीकत मालूम होती तो ऐसी दुआ न करते, क्योंकि उनको स्पष्ट तौर पर पहले ही यह हिदायत दे दी गयी थी कि जब तूफ़ान आ जाये तो फिर आप उन नाफ़रमानों में से किसी के मुताल्लिक़ कोई सिफ़ारिश की गुफ़्तगू न फ़रमायें, जैसा कि पिछली आयतों में गुज़र चुका है:

وَلَا تَخَاطَبُنِي فِي الَّذِينَ ظَلَمُوا إِنَّهُمْ مُغْرَقُونَ

इस साफ़ व स्पष्ट हुक्म के बाद नामुम्किन था कि पैग़म्बरे खुदा इसके उल्लंघन की ज़रत करते, सिवाय उस संदेह व गुमान के जिसको ऊपर खुलासा-ए-तफ़्सीर में लिया गया है, कि इस दुआ का हासिल उस बेटे के मोमिन हो जाने की दुआ है, यह नहीं कि उसके मौजूदा हाल में उसको तूफ़ान से बचाया जाये। लेकिन हज़रत नूह अलैहिस्सलाम की उसके कुफ़्र से अज्ञानता और उसकी बिना पर निजात की दुआ को भी हक़ तआला ने सही उज़्र करार नहीं दिया और इसी लिये तंबीह की गयी कि बग़ैर इल्म के ऐसी दुआ क्यों की, और यह पैग़म्बराना शान की एक ऐसी चूक है जिसको हज़रत नूह अलैहिस्सलाम उस वक़्त भी अपने उज़्र में पेश करेंगे जब मेहशर में पूरी मख़्लूक़े खुदा आप से शफ़ाअत करने की दरख़्वास्त करेगी तो वह फ़रमायेंगे कि मुझसे ऐसी ख़ता और चूक हो चुकी है इसलिये मैं शफ़ाअत की ज़रत नहीं कर सकता।

काफ़िर और ज़ालिम के लिये दुआ जायज़ नहीं

इससे एक मसला यह भी मालूम हुआ कि दुआ करने के लिये यह ज़रूरी है कि दुआ करने वाला पहले यह मालूम कर ले कि जिस काम की दुआ कर रहा है वह जायज़ व हलाल है या नहीं, संदिग्ध हालत में दुआ करने से मना फ़रमाया गया है। तफ़्सीर रुहुल-मआनी में काज़ी बैजावी के हवाले से नक़ल किया है कि जब इस आयत से संदिग्ध हालत वाले के लिये दुआ करने की मनाही मालूम हुई तो जिस मामले का नाजायज़ व हराम होना मालूम हो उसके लिये दुआ का नाजायज़ होना अच्छी तरह साबित हो गया।

इससे मालूम हुआ कि आजकल के बुजुर्गों और पीरों में जो यह आम रिवाज हो गया है कि जो शख्स किसी दुआ के लिये आया उसके वास्ते हाथ उठा दिये और दुआ कर दी, हालाँकि अक्सर उनको यह भी मालूम होता है कि जिस मुक़द्दमे के लिये वह दुआ करा रहा है उसमें वह खुद नाहक़ पर है या ज़ालिम है, या किसी ऐसे मक़सद के लिये दुआ करा रहा है जो उसके लिये हलाल नहीं, कोई ऐसी नौकरी और पद है जिसमें यह हराम में मुब्तला होगा या किसी का हक़ मारकर अपने मक़सद में कामयाब हो सकेगा।

ऐसी दुआयें हालत मालूम होने की सूरत में तो हराम व नाजायज़ हैं ही, अगर हालत संदिग्ध

भी हो तो असल हकीकत और मामले के जायज़ होने का इल्म हासिल किये बगैर दुआ के लिये हाथ उठाना और शुरूआत करना भी मुनासिब नहीं।

मोमिन व काफिर में बिरादराना रिश्ता नहीं हो सकता

मोमिन व काफिर में भाईचारे का रिश्ता नहीं हो सकता, वतनी या नसबी बुनियाद पर कौमियत की तामीर इस्लामी उसूल से बगावत है।

दूसरा मसला इससे यह मालूम हुआ कि मोमिन और काफिर के बीच अगरचे रिश्तेदारी का संबंध हो मगर दीनी और सामूहिक मामलात में उस रिश्तेदारी का कोई असर नहीं होगा। कोई शख्स कितना ही ऊँचे खानदान व नसब वाला हो, कितने ही बड़े बुजुर्ग की औलाद हो, यहाँ तक कि तमाम अम्बिया के सरदार हुजूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की औलाद में दाखिल होने का सम्मान रखता हो, अगर वह मोमिन नहीं है तो दीनी मामलात में उसके इस ऊँचे नसब और नबी-ए-पाक से नसबी रिश्ते का भी कोई लिहाज़ न किया जायेगा। तमाम दीनी मामलात में काम का मदार ईमान और नेकी व परहेज़गारी पर है, जो नेक व मुत्तकी है वह अपना है, जो ऐसा नहीं वह बेगाना है:

हज़ार ख़ेश कि बेगाना अज़ खुदा बाशद
फ़िदा-ए-यक तने बेगाना कि आशना बाशद

हज़ारों अपने जो कि खुदा तआला से बेगाने हों उस एक जान पर निसार व कुरबान हैं जो कि अल्लाह तआला की फ़रमाँबरदार है। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

अगर दीनी मामलात में भी इन रिश्तेदारियों की रियायत होती तो बदर व उहुद के मैदानों में भाई की तलवार भाई पर न चलती। बदर व उहुद और अहज़ाब की लड़ाईयाँ तो सब की सब एक ही खानदानों के अफ़राद के बीच पेश आई हैं, जिसने स्पष्ट कर दिया कि इस्लाम कौमियत और बिरादरी नसबी ताल्लुकात या वतनी और भाषाई एकताओं पर कायम नहीं होती बल्कि ईमान व अमल पर कायम होती और घूमती है। ईमान वाले चाहे किसी मुल्क के रहने वाले और किसी खानदान के अफ़राद और कोई भाषा बोलने वाले हों सब एक कौम और एक बिरादरी हैं:

إِنَّمَا الْمُؤْمِنُونَ إِخْوَةٌ.

का यही मतलब है। और जो ईमान व नेक अमल से मेहरूम हैं वे इस्लामी बिरादरी के फ़र्द नहीं। क़ुरआने करीम ने हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह अलैहिस्सलाम की ज़बान से इस हकीकत को बहुत स्पष्ट अलफ़ाज़ में बयान कर दिया है। फ़रमाया:

إِنَّا بَرَاءٌ وَأَمِنْكُمْ وَمِمَّا تَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللَّهِ.

यानी हम तुमसे भी बरी हैं और तुम्हारे माबूदों से भी।

इस मसले में अहक़र (यानी इस किताब के लेखक) ने दीनी मामलात की कैद इसलिये लगाई है कि दुनियावी मामलात में अच्छे बर्ताव, अच्छे अज़लाक और एहसान व करम का सुलूक

करना अलग चीज़ है, वह जो नेक न हो उससे भी जायज़ बल्कि पसन्दीदा और सवाब है। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम का अमली नमूना और गैर-मुस्लिमों के साथ एहसान व सुलूक के बेशुमार वाकिआत इस पर सुबूत हैं।

आजकल जो वतनी और भाषायी या रंगभेदी बुनियादों पर कौमियत की तामीर की जाती है, अरब बिरादरी एक कौम, हिन्दी, सिन्धि दूसरी कौम करार दी जाती है, यह कुरआन व सुन्नत के खिलाफ और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के उसूले सियासत से एक तरह से बगावत करने के बराबर है।

तीसरी आयत में हज़रत नूह अलैहिस्सलाम की तरफ से जो माज़िरत पेश हुई उसका जिक्र है। जिसका खुलासा अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ रुजू व प्रार्थना और ग़लत कामों से बचने के लिये अल्लाह तआला ही की पनाह लेने की दुआ और फिर पहले हुई चूक और ख़ता की माफ़ी और मग़फ़िरत व रहमत की दरख़्वास्त है।

इससे मालूम हुआ कि इनसान से अगर कोई ख़ता हो जाये तो आईन्दा उससे बचने के लिये तन्हा अपने अज़्म व इरादे पर भरोसा न करे बल्कि अल्लाह तआला से पनाह और यह दुआ माँगे कि या अल्लाह! आप ही मुझे ख़ताओं और गुनाहों से बचा सकते हैं।

चौथी आयत में तूफ़ान के किस्से का ख़ात्मा इस तरह बयान फ़रमाया है कि जब तूफ़ान ख़त्म हो चुका और हज़रत नूह अलैहिस्सलाम की कश्ती जूदी पहाड़ पर ठहर गयी, और ज़मीन का पानी ज़मीन ने निगल लिया और आसमान का बाकी बचा पानी नहरों, दरियाओं की शकल में सुरिक्षत हो गया, जिसके नतीजे में ज़मीन इनसानों के रहने के काबिल हो गयी तो हज़रत नूह अलैहिस्सलाम से कहा गया कि अब आप पहाड़ से ज़मीन पर उतरिये, और कोई फ़िक्र न कीजिये क्योंकि आपके साथ हमारी तरफ से सलामती और बरकतें होंगी, यानी आफ़तों और मुसीबतों से सलामती और माल व औलाद में तरक्की व बरकत होगी।

इस इरशाद के मुताबिक़ तूफ़ान के बाद दुनिया में सारी इनसानी आबादी हज़रत नूह अलैहिस्सलाम की औलाद है। कुरआने करीम ने एक दूसरी जगह फ़रमाया है:

وَجَعَلْنَا ذُرِّيَّتَهُ هُمُ الْبَاقِينَ ۝

यानी इस वाकिए के बाद दुनिया में बाकी रहने वाली सब कौमें सिर्फ़ नूह अलैहिस्सलाम ही की नस्ल व औलाद होंगी। इसी लिये हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को इतिहासकारों ने दूसरे आदम का नाम दिया है।

फिर यह सलामती व बरकत का वायदा जो हज़रत नूह अलैहिस्सलाम से किया गया है सिर्फ़ उनकी ज़ात तक सीमित नहीं बल्कि फ़रमाया गया:

وَعَلَىٰ أُمَمٍ مِّمَّنْ مَعَكَ.

यानी जो उम्मतें और जमाअतें आपके साथ कश्ती में सवार हैं उन पर भी अल्लाह तआला की तरफ़ से सलामती और बरकत नाज़िल होगी। हज़रत नूह अलैहिस्सलाम के साथ कश्ती में

सवार होने वालों को आयत में उम्मत (उम्मतों और कौमों) के लफ़्ज़ से ताबीर किया है जो 'उम्मत' की जमा है, जिसका मतलब यह है कि ये कश्ती में सवार होने वाले विभिन्न कौमों और उम्मतों पर मुश्तमिल थे, हालाँकि पहले मालूम हो चुका है कि कश्ती में सवार होने वाले ज्यादातर हज़रत नूह अलैहिस्सलाम के खानदान के लोग थे और सिर्फ़ बहुत थोड़े से दूसरे मोमिन भी थे, तो उन लोगों को विभिन्न और अनेक उम्मतें और कौमें इस लिहाज़ से फ़रमाया गया है कि उनकी आने वाली नस्लों में विभिन्न उम्मतें और कौमें होंगी। इससे मालूम हुआ कि 'उ-ममिम् मिम्मम् म-अ-क' के अलफ़ाज़ में वो तमाम इनसानी नस्ल दाखिल है जो क़ियामत तक पैदा होगी।

इसी लिये इसकी ज़रूरत पड़ी कि सलामती व बरकत के मज़मून को ज़रा विस्तार से बयान किया जाये, क्योंकि क़ियामत तक आने वाली इनसानी नस्ल में तो मोमिन भी होंगे काफ़िर भी, मोमिन के लिये तो सलामती व बरकत अपने आम मायने के एतिबार से दुरुस्त है कि दुनिया में भी उनको सलामती व बरकत नसीब होगी, आखिरत में भी, लेकिन इसी नस्ल में जो काफ़िर होंगे वे तो जहन्नम के हमेशा के अज़ाब में मुब्तला होंगे, उनको सलामती व बरकत का महल करार देना किस तरह सही होगा, इसलिये आयत के आखिर में फ़रमा दिया:

وَأَمِّمْ سَمْعَهُمْ ثُمَّ يَمْسُهُمْ مَنَا عَذَابِ الْيَمِّ ۝

यानी दुनिया की सलामती व बरकत तो अल्लाह तआला का आम दस्तरख़्वान है जिससे दोस्त दुश्मन सभी खाते पीते हैं। इसमें वे लोग भी शरीक होंगे जो नूह अलैहिस्सलाम की औलाद में कुफ़्र इख़्तियार करेंगे, लेकिन आखिरत की निजात व कामयाबी यह सिर्फ़ मोमिनों के लिये मख़्सूस होगी, काफ़िर को उसके नेक आमाल का बदला दुनिया ही में दे-दिलाकर फ़ारिग़ कर दिया जायेगा, आखिरत में उसके लिये सिवाय अज़ाब के कुछ न होगा।

तूफ़ान-ए-नूह की ये तफ़्सीली ख़बरें हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने वही के ज़रिये मालूम करके अपनी कौम को सुनायीं तो यह वाकिआ खुद हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सच्चा नबी होने की एक गवाही और सुबूत बन गया। इस पर सचेत करने के लिये पाँचवीं आयत में इरशाद फ़रमाया कि नूह अलैहिस्सलाम और उनके तूफ़ान के वाकिआत ये ग़ैब की ख़बरें हैं जिनको न आप पहले से जानते थे और न आपकी कौम यानी अरब वाले इससे वाकिफ़ थे, आपने उनको बतलाया तो इसका रास्ता सिवाय इसके क्या हो सकता है कि अल्लाह तआला ही ने वही (अपनी तरफ़ से भेजे हुए पैग़ाम) के ज़रिये आपको बतलाया है। क्योंकि अगर आपकी कौम के लोग लिखे-पढ़े और दुनिया के इतिहास से जानकारी रखने वाले होते तो यह ख़्याल भी हो सकता था कि आपने उन लोगों से सुनकर ये वाकिआत बयान कर दिये हैं, लेकिन जबकि पूरी कौम भी इन वाकिआत से बेख़बर थी, और हुजुरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तालीम हासिल करने के लिये कभी किसी दूसरे मुल्क में तशरीफ़ नहीं ले गये तो इस ख़बर का रास्ता सिर्फ़ वही मुतय्यन हो गया जो नबी के सच्चा पैग़म्बर होने की स्पष्ट दलील है।

आयत के आखिर में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को तसल्ली देने के लिये

फरमाया कि आपकी नुबुव्वत व रिसालत पर सूरज से ज्यादा रोशन दलीलों के होते हुए भी अगर कुछ बदबख्त नहीं मानते और आप से झगड़ा करते हैं तो आपको अपने से पहले पैगम्बर नूह अलैहिस्सलाम का नमूना देखना चाहिये कि उन्होंने एक हजार साल की लम्बी उम्र सारी इन्हीं तकलीफों और मुसीबतों में गुज़ार दी। तो जिस तरह उन्होंने सब्र किया आप भी ऐसे ही सब्र से काम लें, क्योंकि यह तय है कि अन्जाम के एतिबार से कामयाबी मुत्तकी लोगों को ही मिलेगी।

وَالِی عَادِ أَخَاهُمْ هُودًا ۖ قَالَ یَقُومِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَکُمْ مِّنْ اِلٰهٍ غَیْرَہٗ اِنْ اَنْتُمْ اِلَّا مُفْتَرُوْنَ ۝ یَقُومِ لَا اَسْأَلُکُمْ عَلَیْہِۢ اَجْرًا اِنْ اَجَرْتُمْ اَجْرِیۡ ۚ اِلَّا عَلَی الَّذِیۡ فَطَرَنِیۡ ۚ اَفَلَا تَعْقِلُوْنَ ۝ وَ یَقُومِ اسْتَغْفِرْ وَاَرْبَکُمْ ثُمَّ تَوْبُوْا اِلَیْہِۢ یُرْسِلِ السَّمَآءَ عَلَیْکُمْ مِّدْرَارًا وَّ یَزِدْکُمْ قُوَّةً اِلٰی قُوَّتِکُمْ وَلَا تَتَوَلَّوْا مُجْرِمِیْنَ ۝ قَالُوْا یٰہُوْدُ مَا جِئْتَنَا بِبَیِّنَةٍ وَّمَا نَحْنُ بِتَارِکِیۡ الِہْتِنَا عَنْ قَوْلِکَ وَمَا نَحْنُ لَکَ بِمُؤْمِنِیْنَ ۝ اِنْ نَّقُوْلُ اِلَّا اَعْتَرٰکَ بِعَصِیۡ الِہْتِنَا یُسُوْءٌ ۚ قَالَ اِنِّیۡ اَشْہَدُ اللّٰهَ وَ اَشْہَدُ اَنْیَۡ بِرَبِّیۡ ۚ مَتٰا تَشْرِکُوْنَ ۝ مِّنْ دُوْنِہٖ فَلَیْسَ دُوْنِیۡ جَمِیْعًا ثُمَّ لَا تُنْظَرُوْنَ ۝ اِنِّیۡ تَوَكَّلْتُ عَلَی اللّٰهِ رَبِّیۡ وَرَبِّکُمْ ۚ مَا مِنْ دَآئِبَةٍ اِلَّا هُوَ اَخْذٌ بِنَاصِیَتِہَا ۚ اِنْ رَبِّیۡ عَلَی صِرَاطٍ مُّسْتَقِیْمٍ ۝ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَقَدْ اَبْلَغْتُکُمْ مَاۤ اُرْسِلْتُ بِہٖ اِلَیْکُمْ ۚ وَکَسْتُخِیْفُ رَبِّیۡ قَوْمًا غَیْرَکُمْ وَلَا تَضُرُّوْنِہٖ شَیْئًا ۚ اِنْ رَبِّیۡ عَلَی کُلِّ شَیْءٍ حَفِیْظٌ ۝ وَلَمَّا جَآءَ اَمْرُنَا بِجَنِّیْنَا هُوْدًا وَ الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا مَعَهُۥ بِرَحْمَةٍ مِّنَّا ۚ وَنَجَّیْنٰہُمْ مِّنْ عَذَابٍ غَلِیْظٍ ۝ وَتِلْکَ اَعَادٌ مِّمَّ جَحْدُوْا بِآیٰتِ رَبِّہُمْ وَ عَصَوْا رُسُلَہٗ ۚ وَاتَّبَعُوْا اَمْرَ کُلِّ جَبَّارٍ عَنِیْدٍ ۝ وَاسْتَعُوْا فِیْ ہٰذِہِ الدُّنْیَا لَعْنَةً وَّ یَوْمَ الْقِیٰمَةِ ۚ اِلَّا اِنْ عَادَا کَفَرُوْا رَبِّہُمْ ۚ اِلَّا بُعْدًا لِّلْعَادِ ۚ قَوْمِ هُوْدٍ ۝ وَ اِلٰی ثَمُوْدَ اَخَآہُمْ صٰلِحًا ۚ قَالَ یَقُومِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَکُمْ مِّنْ اِلٰهٍ غَیْرَہٗ ۚ هُوَ اَنْشَأَکُمْ مِّنَ الْاَرْضِ وَ اسْتَعْمَرَکُمْ فِیْہَا فَاسْتَغْفِرُوْہُ ثُمَّ تَوْبُوْا اِلَیْہِۢ ۚ اِنْ رَبِّیۡ قَرِیْبٌ مُّجِیْبٌ ۝ قَالُوْا یٰصَلِحُ قَدْ کُنْتَ فِیْنَا مَرْجُوًّا قَبْلَ ہٰذَا اَتَنْہٰنَا اَنْ نَّعْبُدَ مَا یَعْبُدُ اٰبَاؤُنَا وَاِنَّا لَفِیۡ شَکٍّ مِّمَّا تَدْعُوْنَآ اِلَیْہِۢ مُّرِیْبٌ ۝ قَالَ یَقُومِ اَرَبَّیْتُمْ اِنْ کُنْتُ عَلَیٰ بَیِّنَةٍ مِّنْ رَبِّیۡ وَ اَتَّخِذْنِیۡ مِنْہُ رَحْمَةً فَمَنْ یَنْصُرُنِیۡ مِنَ اللّٰهِ اِنْ عَصِیْتُہٗ ۚ فَمَا تَزِیْدُوْنِیۡۤ اِلَّا غَیْرَ تَحْسِیْرٍ ۝ وَ یَقُومِ ہٰذِہٖ نَآئِفَةٌ لِّلّٰهِ لَکُمْ اٰیَةٌ فَاَنْزَلْنَاہَا تَاکُلُ فِیۡ اَرْضِ اللّٰهِ وَلَا تَمْسُوْہَا بِسُوْءٍ فَاِخْذَکُمْ عَذَابٌ قَرِیْبٌ ۝ فَعَقَرُوْہَا فَقَالَ تَمَتَّعُوْا فِیۡ دَارِکُمْ ثَلٰثَةَ اَیَّامٍ ۚ ذٰلِکَ وَعْدٌ غَیْرُ مَکْدُوْبٍ ۝ فَلَمَّا جَآءَ اَمْرُنَا بِجَنِّیْنَا صٰلِحًا وَ الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا مَعَهُۥ بِرَحْمَةٍ مِّنَّا ۚ وَ مِّنْ خِزْیِۡ یَوْمَیْنِہٖ اِنْ رَبِّکَ هُوَ الْقَوَّیُّ الْعَزِیْزُ ۝

وَآخِذَ الَّذِينَ ظَلَمُوا الصَّيْئَةَ فَاصْبَحُوا فِي دِيَارِهِمْ جثِيئِينَ ۖ كَانَ لِمُؤْمِنِيهَا الْآرَاءُ
ثُودًا كَفَرُوا رَبَّهُمْ ۚ أَلَا بُعْدًا لِمَثُودٍ ۖ

व इला आदिन् अस्त्राहुम् हूदन्, का-ल या कौमिअबुदुल्ला-ह मा लकुम् मिन् इलाहिन् गैरुहू, इन् अन्तुम् इल्ला मुफ़तरून (50) या कौमि ला अस्अलुकुम् अलैहि अजरन्, इन् अज़िर-य इल्ला अलल्लजी फ-त-रनी, अ-फ़ ला तअकिलून (51) व या कौमिस्तग़िफ़रु रब्बकुम् सुम्-म तूबू इलैहि युरसिलिस्समा-अ अलैकुम् मिदरारं-व यजिदकुम् कुव्व-तन् इला कुव्वतिकुम् व ला त-तवल्लौ मुज़िमीन (52) कालू या हूदु मा जिअतना बि-बय्यि-नतिंव-व मा नस्तु बितारिकी आलि-हतिना अन् कौलि-क व मा नस्तु ल-क बिमुअमिनीन (53) इन्नकूलु इल्लअतरा-क बअज़ु आलि-हतिना बिसूइन्, का-ल इन्नी उशिहदुल्ला-ह वशहदू अन्नी बरीउम्-मिम्मा तुशिरकून (54) मिन् दूनिही फ़कीदूनी जमीअन् सुम्-म ला तुन्ज़िरून (55) इन्नी तवक्कलतु

और आद की तरफ़ हमने भेजा उनके भाई हूद को, बोला ऐ कौम! बन्दगी करो अल्लाह की, कोई तुम्हारा हाकिम नहीं सिवाय उसके, तुम सब झूठ कहते हो। (50) ऐ कौम! मैं तुमसे नहीं माँगता इस पर मजदूरी, मेरी मजदूरी उसी पर है जिसने मुझको पैदा किया, फिर क्या तुम नहीं समझते? (51) और ऐ कौम! गुनाह बख़्शवाओ अपने रब से फिर रुजू करो उसी की तरफ़, छोड़ देगा तुम पर आसमान से धारें और ज़्यादा देगा तुमको जोर पर जोर, और मुँह न मोड़ो गुनाहगार होकर। (52) बोले ऐ हूद! तू हमारे पास कोई सनद लेकर नहीं आया और हम नहीं छोड़ने वाले अपने ठाकुरों (माबूदों) को तेरे कहने से, और हम नहीं तुझको मानने वाले। (53) हम तो यही कहते हैं कि तुझको आसेब पहुँचाया है किसी हमारे ठाकुरों (माबूदों) ने बुरी तरह। बोला मैं गवाह करता हूँ अल्लाह को और तुम गवाह हो कि मैं बेज़ार हूँ उनसे जिनको तुम शरीक करते हो (54) उसके सिवा, सो बुराई करो मेरे हक़ में तुम सब मिलकर, फिर मुझको मोहलत न दो। (55) मैंने भरोसा किया अल्लाह पर जो

अलल्लाहि रब्बी व रब्बिकुम्, मा
मिन् दाब्बतिन् इल्ला हु-व आख़िज़ुम्
बिनासि-यतिहा, इन्-न रब्बी अला
सिरातिम् मुस्तकीम (56) फ़-इन्
तवल्लौ फ़-क़द् अबलरतुकुम् मा
उरसिल्तु बिही इलैकुम्, व
यस्तख़्लिफ़ु रब्बी कौमन् ग़ैरकुम् व
ला तज़ुरुनहू शैअन्, इन्-न रब्बी
अला कुल्लि शैइन् हफ़ीज़ (57) व
लम्मा जा-अ अम्रुना नज्जैना हूद्व-
-वल्लज़ी-न आमनू म-अ हू
बिरह्मतिम्-मिन्ना व नज्जैनाहुम् मिन्
अज़ाबिन् ग़लीज़ (58) व तिल्-क
आदुन्, ज-हदू बिआयाति रब्बिहिम्
व असौ रुसु-लहू वत्त-बअू अम्-र
कुल्लि जब्बारिन् अनीद (59) व
उत्बिअू फ़ी हाज़िहिद् दुन्या
लअूनतंव-व यौमल्-क़ियामति, अला
इन्-न आदन् क-फ़रू रब्बहुम्, अला
बुअदल्-लिआदिन् कौमि हूद (60) ❀
व इला समू-द अख़्राहुम् सालिहन्।
का-ल या कौमिअबुदुल्ला-ह मा
लकुम् मिन् इलाहिन् ग़ैरुहू, हु-व
अन्शा-अकुम् मिनल्-अर्ज़ि
वस्तअम-रकुम् फ़ीहा फ़स्तफ़िहू

रब है मेरा और तुम्हारा, कोई नहीं ज़मीन
पर पाँव धरने वाला मगर अल्लाह के हाथ
में है उसकी चोटी, बेशक मेरा रब है
सीधी राह पर। (56) फिर अगर तुम मुँह
फेरोगे तो मैं पहुँचा चुका तुमको जो मेरे
हाथ भेजा था तुम्हारी तरफ़, और
कायम-मक़ाम करेगा मेरा रब कोई और
लोग, और न बिगाड़ सकोगे अल्लाह का
कुछ, तहकीक़ कि मेरा रब है हर चीज़
पर निगाहबान। (57) और जब पहुँचा
हमारा हुक्म, बचा दिया हमने हूद को
और जो लोग ईमान लाये थे उसके साथ
अपनी रहमत से, और बचा दिया उनको
एक भारी अज़ाब से। (58) और ये थे
आद कि इनकारी हुए अपने रब की बातों
से और न माना उसके रसूलों को, और
माना हुक्म उनका जो सरकश थे
मुद्ख़ालिफ़। (59) और पीछे से आई
उनको इस दुनिया में फटकार और
क़ियामत के दिन भी, सुन लो! आद
मुन्किर हुए अपने रब से, सुन लो!
फटकार है आद को जो कौम थी हूद
की। (60) ❀

और समूद की तरफ़ भेजा उनका भाई
सालेह। बोला ऐ कौम! बन्दगी करो
अल्लाह की, कोई हाकिम नहीं तुम्हारा
उसके सिवा, उसी ने बनाया तुमको ज़मीन
से और बसाया तुमको इसमें, सो गुनाह

सुम्-म तूबू इलैहि, इन्-न रब्बी
 करीबुम् मुजीब (61) कालू या
 सालिहु कद् कुन्-त फीना मरजुव्वन्
 कब्-ल हाज़ा अतन्हाना अन्नअबु-द
 मा यअबुदु आबाउना व इन्नना
 लफी शक्किम् मिम्मा तदअना इलैहि
 मुरीब (62) का-ल या कौमि
 अ-रऐतुम् इन् कुन्तु अला
 बय्यि-नतिम् मिररब्बी व आतानी
 मिन्हु रहम-तन् फ-मय्यन्सुरुनी
 मिनल्लाहि इन् असैतुहू, फमा
 तजीदू-ननी गै-र तख़्सीर (63) व या
 कौमि हाज़िही नाकतुल्लाहि लकुम्
 आयतन् फ-जरूहा तअकुल् फी
 अरज़िल्लाहि व ला तमस्सूहा बिसूइन्
 फ-यअख़ु-जकुम् अज़ाबुन् करीब
 (64) फ-अ-करूहा फका-ल तमतअ
 फी दारिकुम् सलास-त अय्यामिन्,
 जालि-क वअदुन् गैरु मक्ज़ूब (65)
 फ-लम्मा जा-अ अम्रुना नज्जैना
 सालिहं-व-वल्लजी-न आमनू म-अहू
 बिरस्मतिम्-मिन्ना व मिन् ख़िज़िय
 यौमिइजिन्, इन्-न रब्ब-क हुवल
 क विट्युल्-अ जीज (66) व
 अ-ख़ज़ल्लजी-न ज़-लमुस्सैहतु

बख़्शवाओ उससे और रुजू करो उसकी
 तरफ, तहकीक़ कि मेरा रब नज़दीक है
 कुबूल करने वाला। (61) बोले ऐ सालेह!
 तुझसे तो हमको उम्मीद थी इससे पहले,
 क्या तू हमको मना करता है कि पूजा
 करें जिनकी पूजा करते रहे हमारे बाप
 दादे, और हमको तो शुब्हा है उसमें
 जिसकी तरफ़ तू बुलाता है ऐसा कि दिल
 नहीं मानता। (62) बोला ऐ कौम! मला
 देखो तो अगर मुझको समझ मिल गई
 अपने रब की तरफ़ से और उसने मुझको
 दी रहमत अपनी तरफ़ से, फिर कौन
 बचाये मुझको उससे अगर उसकी
 नाफ़रमानी करूँ, सो तुम कुछ नहीं बढ़ाते
 मेरा सिवाय नुक़सान के। (63) और ऐ
 कौम! यह ऊँटनी है अल्लाह की तुम्हारे
 लिये निशानी, सो छोड़ दो इसको खाती
 फिरे अल्लाह की ज़मीन में, और मत हाथ
 लगाओ बुरी तरह, फिर आ पकड़ेगा तुम
 को अज़ाब बहुत जल्द। (64) फिर उसके
 पाँव काटे तब कहा फ़ायदा उठा लो
 अपने घरों में तीन दिन, यह वादा है जो
 झूठा न होगा। (65) फिर जब पहुँचा
 हमारा हुक्म बचा दिया हमने सालेह को
 और जो ईमान लाये उसके साथ अपनी
 रहमत से, और उस दिन की रुस्वाई से,
 बेशक तेरा रब वही है जोर वाला
 ज़बरदस्त। (66) और पकड़ लिया उन
 ज़ालिमों को हौलनाक आवाज़ ने, फिर

फ-अस्बहू फी दियारिहिम् जासिमीन
(67) कअल्लम् यग्नौ फीहा, अला
इन्-न समू-द क-फरु रब्बहुम्, अला
बुअ्दल्-लि-समूद (68) ❀

सुबह को रह गये अपने घरों में औंधे
पड़े हुए (67) जैसे कमी रहे ही न थे
वहाँ। सुन लो! समूद मुन्किर हुए
अपने रब से, सुन लो! फटकार है समूद
को। (68) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

और हमने आद (कौम) की तरफ उनके (बिरादरी या वतन के) भाई (हज़रत) हूद (अलैहिस्सलाम) को (पैग़म्बर बनाकर) भेजा। उन्होंने (अपनी कौम से) फरमाया कि ऐ मेरी कौम! तुम (सिर्फ) अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा कोई तुम्हारा माबूद (होने के काबिल) नहीं, तुम (इस बुत-परस्ती के एतिकाद में) बिल्कुल झूठ गढ़ने वाले हो (क्योंकि इसका बातिल होना दलील से साबित है)। ऐ मेरी कौम! (मेरी नुबुव्वत दलीलों से साबित है, इसकी मज़ीद ताईद इससे भी होती है कि) मैं तुमसे इस (तब्लीग) पर कुछ मुआवज़ा नहीं माँगता, मेरा मुआवज़ा तो सिर्फ उस (अल्लाह) के जिम्मे है जिसने मुझको (बिल्कुल अदम से) पैदा किया, फिर क्या तुम (इसको) नहीं समझते (कि नुबुव्वत की दलील मौजूद है और उसके खिलाफ कोई वजह शुब्हे की नहीं, फिर नुबुव्वत में शुब्हे की क्या वजह)। और ऐ मेरी कौम! तुम अपने गुनाह (कुफ़ व शिर्क वगैरह) अपने रब से माफ़ कराओ (यानी ईमान लाओ और) फिर (ईमान लाकर) उसकी तरफ (इबादत से) मुतवज्जह रहो, (यानी नेक अमल करो, पस ईमान और नेक अमल की बरकत से) वह तुम पर खूब बारिश बरसायेगा (दुर्गे मन्सूर में है कि कौम-ए-आद पर तीन साल लगातार सूखा पड़ा था और वैसे बारिश खुद भी मतलूब है) और (ईमान व अमल की बरकत से) तुमको और कुव्वत देकर तुम्हारी (मौजूदा) कुव्वत में तरक्की कर देगा (पस ईमान ले आओ) और मुजरिम रहकर (ईमान से) मुँह मत फेरो।

उन लोगों ने जवाब दिया कि ऐ हूद! आपने हमारे सामने (अल्लाह की तरफ से अपने रसूल होने की) कोई दलील तो पेश नहीं की, (यह कौल उनका दुश्मनी और मुखालफ़त के तौर पर था) और हम आपके कहने से तो अपने माबूदों को छोड़ने वाले नहीं, और हम किसी तरह आपका यकीन करने वाले नहीं। (और) हमारा कौल तो यह है कि हमारे माबूदों में से किसी ने आपको किसी ख़राबी में (जैसे जुनून वगैरह में) मुब्तला कर दिया है (चूँकि आपने उनकी शान में गुस्ताखी की उन्होंने पागल कर दिया, इसलिये ऐसी बहकी-बहकी बातें करते हो कि खुदा एक है, मैं नबी हूँ)। हूद (अलैहिस्सलाम) ने फरमाया कि (तुम जो कहते हो कि किसी बुत ने मुझको बावला कर दिया है तो) मैं (ऐलानिया) अल्लाह को गवाह करता हूँ और तुम भी (सुन लो और) गवाह रहो कि मैं उन चीज़ों से (बिल्कुल) बेज़ार हूँ जिनको तुम खुदा के सिवा (इबादत में) शरीक करार देते हो, सो (मेरी दुश्मनी अव्वल तो पहले से ही ज़ाहिर है और अब इस बरी होने

के ऐलान से और ज्यादा मजबूत हो गयी, तो अगर उन बुतों में कुछ कुव्वत है तो) तुम (और वो) सब मिलकर मेरे साथ (हर तरह का) दाव-घात कर लो (और) फिर मुझको ज़रा भी मोहलत न दो (और कोई कसर न छोड़ो। देखूँ तो सही मेरा क्या कर लेंगे, और जब वो मय तुम्हारे कुछ नहीं कर सकते तो अकेले तो क्या खाक कर सकते हैं। और मैं यह दावा इसलिये दिल खोलकर कर रहा हूँ कि बुत तो पूरी तरह अज़िज़ हैं उनसे तो इसलिये नहीं डरता, रह गये तुम, सो अगरचे तुमको कुछ कुदरत व ताक़त हासिल है लेकिन मैं तुमसे इसलिये नहीं डरता कि) मैंने अल्लाह पर भरोसा कर लिया है, जो मेरा भी मालिक है और तुम्हारा भी मालिक है, जितने (रू-ए-ज़मीन पर) चलने वाले हैं सब की चोटी उसने पकड़ रखी है (यानी सब उसके कब्ज़े में हैं, बिना उसके हुक्म के कोई कान नहीं हिला सकता, इसलिये मैं तुमसे भी नहीं डरता। और इस तकरीर से एक नया मोजिज़ा भी ज़ाहिर हो गया कि एक शख्स बिल्कुल अकेला ऐसे बड़े-बड़े दबंग और ताक़तवर लोगों से ऐसी मुखालिफ़ाना बातें करे और वे उसका कुछ न कर सकें, वे जो कहते थे कि तुमने हमारे सामने कोई दलील पेश नहीं की। इससे इसका भी एक जवाब हो गया कि अगर पहले मोजिज़े को भी एक तरफ़ रखें तो लो यह दूसरा मोजिज़ा है, पस नुबुव्वत पर दलील कायम हो गयी। और इसमें जो शुब्हे व संदेह का मन्शा था कि हमारे कुछ माबूदों ने तुम पर अपना असर डालकर तुमको बावला कर दिया है, इसका भी जवाब हो गया। पस नुबुव्वत साबित हो गयी। इससे तौहीद (अल्लाह के एक और अकेला माबूद होने) का वजूब भी साबित हो गया, जिसकी तरफ़ मैं दावा करता हूँ। और तुम्हारा कहना कि हम तो तेरे कहने से अपने माबूदों को छोड़ने वाले नहीं, बातिल हो गया। और सिराते मुस्तकीम यानी सीधा रास्ता यही है, और) यकीनन मेरा रब सीधे रास्ते पर (चलने से मिलता) है (पस तुम भी इस सीधे रास्ते को इस्तियार करो ताकि मकबूल और खास हो जाओ)।

फिर अगर (इस स्पष्ट और दिल में उतर जाने वाले बयान के बाद भी) तुम (हक़ रास्ते से) फिरे रहोगे तो मैं तो (माज़ूर समझा जाऊँगा, क्योंकि) जो पैग़ाम देकर मुझको भेजा गया है वह तुमको पहुँचा चुका हूँ (लेकिन तुम्हारी कमबख्ती आयेगी कि तुमको अल्लाह तआला हलाक कर देगा) और तुम्हारी जगह मेरा रब दूसरे लोगों को (ज़मीन में आबाद कर) देगा (सो तुम इस मुँह फेरने और कुफ़्र में अपना ही नुक़सान कर रहे हो) और उसका तुम कुछ नुक़सान नहीं कर रहे हो (और अगर इस हलाकत में किसी को यह शुब्हा हो कि खुदा को क्या ख़बर कि कौन क्या कर रहा है तो ख़ूब समझ लो कि) यकीनन मेरा रब हर चीज़ की हिफ़ाज़त और देखभाल करता है (उसको सब ख़बर रहती है। गर्ज़ कि इन तमाम हुज्जतों पर भी उन लोगों ने न माना) और (अज़ाब का सामान शुरू हुआ। सो) जब (अज़ाब के लिये) हमारा हुक्म पहुँचा (और हवा के तूफ़ान का अज़ाब नाज़िल हुआ तो) हमने हूद (अलैहिस्सलाम) को और जो उनके साथ ईमान वाले थे उनको अपनी इनायत से (उस अज़ाब से बचा लिया) और उनको एक बहुत ही सख़्त अज़ाब से बचा लिया। (आगे औरों को सीख दिलाने के लिये फ़रमाते हैं) और यह (जिनका ज़िक्र हुआ) आद (कौय) थी जिन्होंने अपने रब की आयतों (यानी दलीलों और अहक़ाम) का

इनकार किया और उसके रसूल का कहना न माना, और मुकम्मल तौर पर ऐसे लोगों के कहने पर चलते रहे जो ज़ालिम (और) जिद्दी थे। और (इन हरकतों का यह नतीजा हुआ कि) इस दुनिया में भी लानत उनके साथ-साथ रही और क़ियामत के दिन भी (उनके साथ-साथ रहेगी। चुनाँचे दुनिया में इसका असर तूफ़ान के अज़ाब से हलाक होना था और आख़िरत में हमेशा का अज़ाब होगा) ख़ूब सुन लो आद (कौम) ने अपने रब के साथ कुफ़्र किया, ख़ूब सुन लो (इस कुफ़्र का ख़मियाज़ा यह हुआ कि दोनों ज़हान में) रहमत से दूरी हुई आद को जो कि हूद (अलैहिस्सलाम) की कौम थी।

और हमने समूद (कौम) के पास उनके भाई सालेह (अलैहिस्सलाम) को (पैग़म्बर बनाकर) भेजा। उन्होंने (अपनी कौम से) फ़रमाया कि ऐ मेरी कौम! तुम (सिर्फ़) अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा कोई तुम्हारा माबूद (होने के काबिल) नहीं। (उसका तुम पर यह इनाम है कि) उसने तुमको ज़मीन (के मादे) से पैदा किया और उसने तुमको इस (ज़मीन) में आबाद किया (यानी तुमको पैदा करने और बाकी रखने की दोनों नेमतें अता फ़रमायीं जिसमें सब नेमतें आ गयीं। जब वह ऐसा नेमतें देने वाला है) तो तुम अपने गुनाह (शिरक व कुफ़्र वग़ैरह) उससे माफ़ कराओ (यानी ईमान लाओ), फिर (ईमान लाकर) उसकी तरफ़ (इबादत से) मुतवज्जह रहो (यानी नेक अमल करो), बेशक मेरा रब (उस शख्स से) करीब है (जो उसकी तरफ़ मुतवज्जह हो और उस शख्स की दरख़्वास्त और दुआ) कुबूल करने वाला है (जो उससे गुनाह माफ़ कराता है)। वे लोग कहने लगे कि ऐ सालेह! तुम तो इससे पहले हम में होनहार (मालूम होते) थे, (यानी हमको तुमसे उम्मीद थी कि अपनी काबिलियत और शान व रुतबे से कौम के लिये गर्व और हमारे लिये नाज़ का सामान और हमारे लिये सरपरस्त बनोगे, अफ़सोस इस वक़्त जो बातें कर रहे हो इससे तो सारी उम्मीदें ख़ाक में मिलती नज़र आती हैं) क्या तुम हमको उन चीज़ों की इबादत से मना करते हो जिनकी इबादत हमारे बड़े करते आये हैं (यानी तुम उनसे मना मत करो), और जिस (दीन) की तरफ़ तुम हमको बुला रहे हो (यानी तौहीद) वाकई हम तो उसकी तरफ़ से बड़े (भारी) शुब्हे में हैं। जिसने हमको फ़िक्क में डाल रखा है (कि तौहीद का मसला हमारे ख़्याल ही में नहीं आता)।

आपने (जवाब में) फ़रमाया- ऐ मेरी कौम! (तुम जो कहते हो कि तुम तौहीद की दावत न दो और बुत-परस्ती से मनाही मत करो तो) (भला) यह तो बताओ कि अगर मैं अपने रब की जानिब से दलील पर (कायम) हूँ (जिससे तौहीद साबित है) और उसने मुझको अपनी तरफ़ से रहमत (यानी नुबुव्वत) अता फ़रमाई हो (जिससे उस तौहीद की दावत का मैं पाबन्द और हुक्म दिया हुआ हूँ) सो (इस हालत में) अगर मैं उसका कहना न मानूँ (और तौहीद की दावत को छोड़ दूँ जैसा कि तुम कहते हो) तो (यह बतलाओ कि) फिर मुझको खुदा (के अज़ाब) से कौन बचा लेगा? तुम तो (ऐसा बुरा मश्विरा देकर) सरासर मेरा नुक़सान ही कर रहे हो (यानी अगर खुदा न ख़्वास्ता मैं इसको कुबूल कर लूँ तो सिवाय नुक़सान के और क्या हाथ आयेगा। और चूँकि उन्होंने मोज़िजे की भी रिसालत के सबूत के लिये दरख़्वास्त की थी इसलिये आपने

फरमाया) और ऐ मेरी कौम! (तुम जो मोजिजा चाहते थे, सो) यह ऊँटनी है अल्लाह की जो तुम्हारे लिये दलील (बनाकर जाहिर की गयी) है। (और इसी लिये अल्लाह की ऊँटनी कहलाई कि अल्लाह की दलील है) सो (इसके अतिरिक्त कि यह मोजिजा होने की वजह से मेरी रिसालत पर दलील है, खुद इसके भी कुछ हुक्क हैं, उन हुक्क में से यह है कि) इसको छोड़ दो कि अल्लाह की ज़मीन में (घास-चारा) खाती फिरा करे, (इसी तरह अपनी बारी के दिन पानी पीती रहे। जैसा कि एक दूसरी आयत में है) और इसको बुराई (और तकलीफ़ देने) के साथ हाथ भी मत लगाना, कभी तुमको फ़ौरी अज़ाब आ पकड़े (यानी देर न लगे)।

सो उन्होंने (इस हुज्जत पूरी होने के बावजूद) उस (ऊँटनी) को मार डाला, तो सालेह (अलैहिस्सलाम) ने फरमाया कि (ख़ैर) तुम अपने घरों में तीन दिन और बसर कर लो (तीन दिन के बाद अज़ाब आता है, और) यह ऐसा वायदा है जिसमें ज़रा झूठ नहीं (क्योंकि यह अल्लाह की तरफ़ से है) सो (तीन दिन गुज़रने के बाद) जब हमारा हुक्म (अज़ाब के लिये) आ पहुँचा, हमने सालेह (अलैहिस्सलाम) को और जो उनके साथ ईमान वाले थे उनको अपनी इनायत से (उस अज़ाब से) बचा लिया। और (उनको कैसी चीज़ से बचा लिया) उस दिन की बड़ी रुस्वाई से बचा लिया (क्योंकि अल्लाह के कहर में मुब्तला होने से बढ़कर क्या रुस्वाई होगी), बेशक आपका रब ही बड़ी कुव्वत वाला, ग़लबे वाला है (जिसको चाहे सज़ा दे दे, जिसको चाहे बचा ले)।

और उन ज़ालिमों को एक नारे “यानी ज़ोर की चीख़” ने आ दबाया (कि वह आवाज़ थी जिब्रील अलैहिस्सलाम की) जिससे वे अपने घरों में औंधे पड़े रह गये (और उनकी यह हालत हो गयी) जैसे कभी उन घरों में बसे ही न थे। ख़ूब सुन लो! समूद (कौम) ने अपने रब के साथ कुफ़्र किया, ख़ूब सुन लो! (उस कुफ़्र का यह ख़मियाज़ा हुआ कि) रहमत से समूद (कौम) को दूरी हुई।

मअरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई सूर: हूद की पहली ग्यारह आयतों में अल्लाह तआला के मक़बूल व ख़ास पैग़म्बर हज़रत हूद अलैहिस्सलाम का ज़िक्र है जिनके नाम से यह सूरत नामित है। इस सूर: में हज़रत नूह अलैहिस्सलाम से लेकर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम तक क़ुरआने करीम के ख़ास अन्दाज़ में सात अम्बिया अलैहिमुस्सलाम और उनकी उम्मतों के वाकिआत बयान हुए हैं, जिनमें इब्रत व नसीहत के ऐसे निशानात मौजूद हैं कि जिस दिल में ज़रा भी ज़िन्दगी और शऊर बाकी हो वह उनसे मुतास्सिर हुए बग़ैर नहीं रह सकता। नसीहत व सीख के अलावा ईमान और नेक अमल के बहुत से उसूल व फ़ुरू (बुनियादी चीज़ें और उनसे निकलने वाले अहकाम) और इनसान के लिये बेहतरीन हिदायतें मौजूद हैं।

किस्से और वाकिआत तो इसमें सात पैग़म्बरों के दर्ज हैं मगर सूरत का नाम हज़रत हूद अलैहिस्सलाम के नाम से जोड़ा गया है जिससे मालूम होता है कि इसमें हज़रत हूद अलैहिस्सलाम

रमाया) और ऐ मेरी कौम! (तुम जो मोजिज़ा चाहते थे, सो) यह ऊँटनी है अल्लाह की जो
 हमारे लिये दलील (बनाकर ज़ाहिर की गयी) है। (और इसी लिये अल्लाह की ऊँटनी कहलाई
 अल्लाह की दलील है) सो (इसके अतिरिक्त कि यह मोजिज़ा होने की वजह से मेरी रिसालत
 र दलील है, खुद इसके भी कुछ हुक्क हैं, उन हुक्क में से यह है कि) इसको छोड़ दो कि
 अल्लाह की ज़मीन में (घास-चारा) खाती फिरा करे, (इसी तरह अपनी बारी के दिन पानी पीती
 है। जैसा कि एक दूसरी आयत में है) और इसको बुझाई (और तकलीफ़ देने) के साथ हाथ भी
 त लगाना, कभी तुमको फौरी अज़ाब आ पकड़े, (यानी देर न लगे)।

सो उन्होंने (इस हुज्जत पूरी होने के बावजूद) उस (ऊँटनी) को मार डाला, तो सालेह
 अलैहिस्सलाम) ने फरमाया कि (ख़ैर) तुम अपने घरों में तीन दिन और बसर कर लो (तीन दिन
 के बाद अज़ाब आता है, और) यह ऐसा वायदा है जिसमें ज़रा झूठ नहीं (क्योंकि यह अल्लाह की
 रफ़ से है) सो (तीन दिन गुज़रने के बाद) जब हमारा हुक्म (अज़ाब के लिये) आ पहुँचा, हमने
 सालेह (अलैहिस्सलाम) को और जो उनके साथ ईमान वाले थे उनको अपनी इनायत से (उस
 अज़ाब से) बचा लिया। और (उनको कैसी चीज़ से बचा लिया) उस दिन की बड़ी रुस्वाई से
 बचा लिया (क्योंकि अल्लाह के क़हर में मुब्तला होने से बढ़कर क्या रुस्वाई होगी), बेशक
 आपका रब ही बड़ी कुव्वत वाला, ग़लबे वाला है (जिसको चाहे सज़ा दे दे, जिसको चाहे बचा
 ले)।

और उन ज़ालिमों को एक नारे “यानी ज़ोर की चीख़” ने आ दबाया (कि वह आवाज़ थी
 जेब्रील अलैहिस्सलाम की) जिससे वे अपने घरों में औंधे पड़े रह गये (और उनकी यह हालत हो
 गयी) जैसे कभी उन घरों में बसे ही न थे। ख़ूब सुन लो! समूद (कौम) ने अपने रब के साथ
 कुफ़ किया, ख़ूब सुन लो! (उस कुफ़ का यह ख़मियाज़ा हुआ कि) रहमत से समूद (कौम) को
 दूरी हुई।

मज़ारिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई सूर: हूद की पहली ग्यारह आयतों में अल्लाह तआला के मक़बूल व ख़ास पैग़म्बर
 हज़रत हूद अलैहिस्सलाम का ज़िक्र है जिनके नाम से यह सूरत नामित है। इस सूर: में हज़रत
 नूह अलैहिस्सलाम से लेकर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम तक कुरआने करीम के ख़ास अन्दाज़ में
 सात अम्बिया अलैहिमुस्सलाम और उनकी उम्मतों के वाकिआत बयान हुए हैं, जिनमें इब्रत व
 नसीहत के ऐसे निशानात मौजूद हैं कि जिस दिल में ज़रा भी ज़िन्दगी और शऊर बाकी हो वह
 उनसे मुतास्सिर हुए बग़ैर नहीं रह सकता। नसीहत व सीख के अलावा ईमान और नेक अमल के
 बहुत से उसूल व फ़ुरू (बुनियादी चीज़ें और उनसे निकलने वाले अहक़ाम) और इनसान के लिये
 बेहतरीन हिदायतें मौजूद हैं।

किस्से और वाकिआत तो इसमें सात पैग़म्बरों के दर्ज हैं मगर सूरत का नाम हज़रत हूद
 अलैहिस्सलाम के नाम से जोड़ा गया है जिससे मालूम होता है कि इसमें हज़रत हूद अलैहिस्सलाम

के किस्से को खास अहमियत हासिल है।

हज़रत हूद अलैहिस्सलाम को हक़ तआला ने आद कौम में नबी बनाकर भेजा। यह कौम अपने डीलडोल और कुव्वत व बहादुरी के एतिबार से पूरी दुनिया में विशेष और नुमायों समझी जाती थी। हज़रत हूद अलैहिस्सलाम भी इसी कौम के फ़र्द थे, लफ़्ज़ 'अब्राहुम् हूदन्' में इसी तरफ़ इशारा फ़रमाया गया है, मगर अफ़सोस कि यह इतनी ताक़तवर और बहादुर कौम अपनी अक्ल व सोच को खो बैठी थी और अपने हाथों से बनाई हुई पत्थरों की मूर्तियों को अपना खुदा व माबूद बना रखा था।

हज़रत हूद अलैहिस्सलाम ने जो दीन की दावत अपनी कौम के सामने पेश की उसकी तीन उसूली बातें शुरू की तीन आयतों में बयान हुई हैं:

अव्वल तौहीद की दावत और यह कि अल्लाह तआला के सिवा किसी को इबादत के लायक समझना झूठ और बोहतान है। दूसरे यह कि मैं जो यह तौहीद की दावत लेकर आया हूँ और इसके लिये अपनी ज़िन्दगी को समर्पित कर रखा है, तुम यह तो सोचो समझो कि मैंने यह मशक्कत व मेहनत क्यों इस्तिस्नान कर रखी है, न मैं तुमसे इस ख़िदमत का कोई मुआवज़ा माँगता हूँ, न मुझे तुम्हारी तरफ़ से कोई माद्री फ़ायदा पहुँचता है। अगर मैं इसको अल्लाह तआला का फ़रमान और हक़ न समझता तो आख़िर ज़रूरत क्या थी कि तुम्हें दावत देने और तुम्हारी इस्लाह (सुधार) करने में इतनी मेहनत बरदाश्त करता।

वअज़ व नसीहत और दीन की दावत पर उजरत

कुरआने करीम ने यह बात तक़रीबन सब ही अम्बिया अलैहिमुस्सलाम की ज़बान से नक़ल की है कि हम तुमसे अपनी दावत व मेहनत का कोई मुआवज़ा (बदला) नहीं माँगते। इससे मालूम होता है कि दावत व तब्लीग़ का अगर मुआवज़ा लिया जाये तो दावत असरदार नहीं रहती, जिस पर तजुर्बा ग़वाह है कि वअज़ व नसीहत पर उजरत लेने वालों की बात सुनने वालों पर असर डालने वाली नहीं होती।

तीसरी बात यह फ़रमाई कि अपनी पिछली ज़िन्दगी में जो कुफ़्र व गुनाह तुम कर चुके हो, अल्लाह तआला से उनकी मग़फ़िरत माँगो और आगे की ज़िन्दगी में उन सब गुनाहों से तौबा करो यानी इसका पुख़्ता इरादा और अहद करो कि अब उनके पास न जायेंगे। अगर तुमने यह इस्तिग़फ़ार व तौबा का अमल कर लिया तो इसके नतीजे में आख़िरत की हमेशा की कामयाबी तो मिल ही जायेगी, दुनिया में भी इसके बड़े फ़ायदों को अपनी आँखों से देखोगे। एक यह कि तौबा व इस्तिग़फ़ार करने से तुम्हारी क़हत (सूखा पड़ने) की हालत दूर हो जायेगी, वक़्त पर ख़ूब बारिश होगी जिससे तुम्हारे रिज़्क में तरक्की और बढ़ोतरी होगी, दूसरे यह कि तुम्हारी ताक़त व कुव्वत बढ़ जायेगी।

यहाँ ताक़त व कुव्वत का लफ़्ज़ आम है, जिसमें बदन की सेहत व कुव्वत भी दाख़िल है और वह ताक़त भी जो माल और औलाद की अधिकता से इन्सान को हासिल होती है।

इससे मालूम हुआ कि गुनाहों से तौबा व इस्तिग़फ़ार का ख़ास्ता (विशेषता) यह है कि दुनिया में भी रिज़्क में बढ़ोतरी और माल व औलाद में बरकत होती है।

हज़रत हूद अलैहिस्सलाम की कौम ने उनकी दावत का जवाब वही अपनी जाहिलाना रविश से यह दिया कि आपने हमें कोई मोजिज़ा तो दिखलाया नहीं, सिर्फ़ ज़बानी बात है, इसलिये हम आपके कहने से अपने माबूदों को न छोड़ेंगे और आप पर ईमान न लायेंगे, बल्कि हमारा ख़्याल तो यह है कि हमारे माबूद बुतों को बुरा कहने की वजह से आप किसी दिमागी ख़राबी में मुब्तला हो गये, इसलिये ऐसी बातें करते हैं।

इसके जवाब में हूद अलैहिस्सलाम ने पैग़म्बराना ज़ुरत के साथ फ़रमाया कि अगर तुम मेरी बात नहीं मानते तो सुन लो कि मैं अल्लाह को गवाह बनाता हूँ और तुम भी गवाह रहो कि मैं अल्लाह के सिवा तुम्हारे सब माबूदों से बेज़ार हूँ। अब तुम और तुम्हारे बुत सब मिलकर मेरे खिलाफ़ जो कुछ दाव-घात कर सकते हो कर लो, और अगर मेरा कुछ बिगाड़ सकते हो तो बिगाड़ लो और मुझे ज़रा सी मोहलत भी न दो।

और फ़रमाया कि इतनी बड़ी बात मैं इसलिये कह रहा हूँ कि मैंने अल्लाह पर तवक्कुल और भरोसा कर लिया है जो मेरा भी रब है और तुम्हारा भी। जितने रू-ए-ज़मीन पर चलने वाले हैं सब की चोटी उसने पकड़ रखी है, किसी की मजाल नहीं कि उसकी इजाज़त व मर्ज़ी के बग़ैर किसी को ज़रा बराबर नुक़सान या तकलीफ़ पहुँचा सके, यकीनन मेरा रब सिराते मुस्तकीम पर है, यानी जो सिराते मुस्तकीम (सही और सीधे रास्ते) पर चलता है, रब उसको मिलता है, उसकी मदद करता है।

पूरी कौम के मुकाबले में इस तरह बुलन्द आवाज़ से दावा करना और उनको ग़ैरत दिलाना और फिर पूरी बहादुर कौम में से किसी की मजाल न होना कि उनके मुकाबले में कोई हरकत करे, यह सब एक मुस्तक़िल मोजिज़ा था हज़रत हूद अलैहिस्सलाम का, जिससे उनकी इस बात का भी जवाब हो गया कि आपने हमें कोई मोजिज़ा नहीं दिखलाया, और इसका भी जवाब हो गया कि हमारे बुतों ने आपको दिमागी ख़राबी में मुब्तला कर दिया है, क्योंकि अगर बुतों में यह ताक़त होती तो उस वक़्त उनको ज़िन्दा न छोड़ते।

इसके बाद फ़रमाया कि अगर तुम इसी तरह हक़ से बरग़श्ता रहोगे तो समझ लो कि जो पैग़ाम देकर मुझे भेजा गया है मैं तुम्हारे सामने पहुँचा चुका हूँ तो अब इसका नतीजा इसके सिवा क्या है कि तुम पर खुदा का क़हर व ग़ज़ब आ जाये और तुम सब नेस्त व नाबूद हो जाओ, और मेरा रब तुम्हारी जगह किसी दूसरी कौम को इस ज़मीन पर आबाद कर दे। और इस मामले में जो कुछ कर रहे हो अपना ही नुक़सान कर रहे हो, अल्लाह तआला का कुछ नुक़सान नहीं कर रहे, यकीनन मेरा रब हर चीज़ की हिफ़ाज़त व निगरानी करता है, वह तुम्हारे हर काम और ख़्याल से बाख़बर है।

उन लोगों ने इन बातों में से किसी चीज़ पर कान न धरा और अपनी नाफ़रग़ानी पर कायम रहे तो खुदा तआला का अज़ाब हवा के तूफ़ान की सूरत में उन पर नाज़िल हुआ, जिसने मक़ानों

और पेड़ों को जड़ों से उखाड़ दिया, आदमी और जानवर हवा में उड़कर आसमानी फिज़ा तक जाते और वहाँ से औंधे गिरते थे, आसमान की तरफ से इनसानों की चीख पुकार सुनाई देती थी, यहाँ तक कि यह बेमिसाल कुब्वत और डीलडोल रखने वाली कौम पूरी की पूरी हलाक व बरबाद हो गयी।

जब इस कौम पर अल्लाह के अज़ाब का हुक्म नाफिज़ हुआ तो अल्लाह तआला ने अपने कानून व दस्तूर के मुताबिक अपने पैगम्बर और उनके साथियों को इस सख्त अज़ाब से बचा लिया, कि अज़ाब आने से पहले उनको उस जगह से निकल जाने का हुक्म दे दिया गया।

आद कौम के वाकिए और अज़ाब का जिक्र करने के बाद दूसरों को इब्रत हासिल करने की तालीम व हिदायत करने के लिये इरशाद फरमाया कि यह है वह आद कौम जिन्होंने अपने रब की निशानियों को झुठलाया और अपने रसूलों की नाफरमानी की, और ऐसे लोगों के कहने पर चलते रहे जो ज़ालिम और ज़िदी थे।

इसका नतीजा यह हुआ कि दुनिया में भी लानत यानी रहमत से दूरी उनके साथ-साथ लगी रही और कियामत में भी इसी तरह साथ लगी रहेगी।

इस वाकिए से मालूम हुआ कि आद कौम पर हवा का तूफ़ान मुसल्लत हुआ था, मगर सूरः मोमिनून में यह बयान हुआ है कि उनको एक सख्त आवाज़ के ज़रिये हलाक किया गया। हो सकता है कि हूद अलैहिस्सलाम की कौम पर दोनों किस्म के अज़ाब नाज़िल हुए हों। आद कौम और हूद अलैहिस्सलाम का वाकिआ पूरा हुआ।

इसके बाद आठ आयतों में हज़रत सालेह अलैहिस्सलाम का किस्सा बयान हुआ है जो आद कौम की दूसरी शाख यानी समूद कौम की तरफ़ भेजे गये थे। उन्होंने भी अपनी कौम को सबसे पहले तौहीद की दावत दी, कौम ने आदत के मुताबिक इनको झुठलाया और यह ज़िद की कि आपका सच्चा नबी होना हम तब मानेंगे जबकि हमारे सामने इस पहाड़ की चट्टान में से एक ऊँटनी ऐसी ऐसी निकल आये।

हज़रत सालेह अलैहिस्सलाम ने उनको डराया कि तुम्हारा मुँह माँगा मोजिज़ा अगर अल्लाह तआला ने ज़ाहिर कर दिया और फिर भी तुमने ईमान लाने में कोई कोताही की तो अल्लाह के दस्तूर व आदत के मुताबिक तुम पर अज़ाब आ जायेगा और सब हलाक व बरबाद हो जाओगे, मगर वे अपनी ज़िद से बाज़ न आये। अल्लाह तआला ने उनका माँगा हुआ मोजिज़ा अपनी कामिल कुदरत से ज़ाहिर फ़रमा दिया, पहाड़ की चट्टान फटी और उनके बताये हुए गुणों और सिफ़तों वाली ऊँटनी उसमें से निकल आयी। अल्लाह तआला ने हुक्म दिया कि इस ऊँटनी को कोई तकलीफ़ न पहुँचाये वरना तुम पर अज़ाब आ जायेगा। मगर वे इस पर भी कायम न रहे, ऊँटनी को हलाक कर डाला, आखिरकार खुदा तआला ने उनको पकड़ लिया। हज़रत सालेह अलैहिस्सलाम और उनके मोमिन साथी अज़ाब से बचा लिये गये, बाकी पूरी कौम एक सख्त डरावनी आवाज़ के ज़रिये हलाक कर दी गयी।

इस वाकिए में हज़रत सालेह अलैहिस्सलाम की कौम ने उनसे कहा:

قَدْ كُنْتَ فِينَا مَرْجُوًّا قَبْلَ هَذَا.

यानी आपके नुबुव्वत के दावे और बुत-परस्ती को मना करने से पहले हमको आपसे बड़ी उम्मीदें बंधी हुई थीं कि आप हमारी कौम के लिये बड़े सुधारक और रास्ता दिखाने वाले साबित होंगे। इसकी वजह यह है कि हक़ तआला अपने नबियों की परवरिश बचपन ही से निहायत पाकीजा अख़लाक व आदात में करते हैं, जिसको देखकर सभी उनसे मुहब्बत करते और इज्जत से पेश आते हैं जैसा कि हमारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को भी नुबुव्वत के ऐलान से पहले सारा अरब अमीन का खिताब देता और सच्चा और नेक एतिकाद रखता था। नुबुव्वत के दावे और बुत-परस्ती से मना करने पर ये सब मुखालिफ़ हो गये।

تَمَتُّوْا فِیْ دَارِکُمْ ثَلَاثَةَ اَیَّامٍ.

यानी जब उन लोगों ने अल्लाह के हुक्म की खिलाफ़वर्जी करके उस मोजिजे वाली ऊँटनी को मार डाला तो जैसा कि पहले ही उनको सचेत कर दिया गया था कि ऐसा करोगे तो अल्लाह का अज़ाब तुम पर आयेगा, अब वह अज़ाब इस तरह आया कि उनको तीन दिन की मोहलत दी गयी और बतला दिया गया कि चौथे रोज़ तुम सब हलाक किये जाओगे।

तफ़्सीर कुर्तुबी में है कि ये तीन दिन जुमेरात, जुमा और शनिवार थे, इतवार के दिन उन पर अज़ाब नाज़िल हुआ:

وَآخَذَ الَّذِیْنَ ظَلَمُوا الصَّیْحَةَ.

यानी उन ज़ालिमों को पकड़ लिया एक सख़्त आवाज़ ने। यह सख़्त आवाज़ हज़रत जिब्रील अलैहिस्सलाम की थी जिसमें सारी दुनिया की बिजलियों की कड़क से ज्यादा हैबतनाक (डरावनी) आवाज़ थी, जिसको इन्सानी दिल व दिमाग़ बरदाश्त नहीं कर सका, दहशत से सब के दिल फट गये और सब के सब हलाक हो गये।

इस आयत से मालूम हुआ कि सालेह अलैहिस्सलाम की कौम सख़्त आवाज़ के ज़रिये हलाक की गयी है, लेकिन सूर: आराफ़ में उनके बारे में यह आया है:

فَاَخَذَتْهُمُ الرَّجْفَةُ.

यानी पकड़ लिया उनको ज़लज़ले ने। इससे मालूम होता है कि उन पर ज़लज़ले का अज़ाब आया था। अल्लामा कुर्तुबी ने फ़रमाया कि इसमें कोई टकराव नहीं हो सकता है कि पहले ज़लज़ला आया हो फिर सख़्त आवाज़ से सब हलाक कर दिये गये हों। वल्लाहु आलम

وَلَقَدْ جَاءَتْ رُسُلُنَا اِبْرٰهٖمَ بِالْبَشْرِیْ ۚ قَالُوْا سَلٰمٌ عَلَیْكَ اَنْ جِئَ بِعِجْلٍ حَنِیْدٍ ۝
فَلَمَّا رَاْ اَیْدِيَهُمْ لَا تَصِلُ اِلَیْهِ نَكِرَهُمْ وَاَوْجَسَ مِنْهُمْ خِیْفَةً ۚ قَالُوْا لَا تَخَفْ اِنَّا اَرْسَلْنَا اِلَیْكَ
قَوْمَ لُوطٍ ۝ وَاَمْرًاۤتِهٖ قَابِلَةً فَصَبَّحَتْ فَبَشَّرْنٰهَا بِاِسْحٰقَ ۚ وَمِنْ وَّرَآءِ اِسْحٰقَ یَعْقُوْبَ ۝ قَالَتْ
یٰوَيْلَتِیْ ؕ اِلٰهٌ وَاَنَا عَجُوْزٌ وَّهٰذَا بَعْلِیْ شَیْخًا ۚ اِنَّ هٰذَا لَشَیْءٌ عَجِیْبٌ ۝ قَالُوْا اَتَعْجَبِیْنَ مِنْ اَمْرِ

اللَّهُ رَحِمْتُ اللَّهُ وَبَرَكَتُهُ عَلَيْكُمْ أَهْلَ الْبَيْتِ إِنَّهُ حَبِيدٌ مَّجِيدٌ ۝

व ल-कद् जाअत् रुसुलुना इब्राही-म
बिल्बुशरा कालू सलामन्, का-ल
सलामुन् फमा लबि-स अन् जा-अ
बिअिज्लिन् हनीज (69) फ-लम्मा
रआ ऐदि-यहुम् ला तसिलु इलैहि
नकि-रहुम् व औज-स मिन्हुम्
झीफतन्, कालू ला तछाफ् इन्ना
उरसिल्ना इला कौमि लूत (70)
वमूर-अतुहू काइ-मतुन् फ-जहिकत्
फ-बश्शरनाहा बि-इस्हा-क व
मिंव्वरा-इ इस्हा-क यज़्कूब (71)
कालत् या वैलता अ-अलिदु व अ-न
अजूजुं-व हाजा बज़्ली शैखान्,
इन्-न हाजा लशैउन् अजीब (72)
कालू अतअजबी-न मिन् अमिल्लाहि
रस्मतुल्लाहि व ब-रकातुहू अलैकुम्
अस्तल्-बैति, इन्नहू हमीदुम्-
मजीद (73)

और अलबत्ता आ चुके हमारे भेजे हुए
इब्राहीम के पास खुशखबरी लेकर, बोले
सलाम। वह बोला सलाम है, फिर देर न
की कि ले आया एक बछड़ा तला हुआ।
(69) फिर जब देखा उनके हाथ नहीं
आते खाने पर तो खटका और दिल में
उनसे डरा, वे बोले मत डर हम भेजे हुए
आये हैं कौमे लूत की तरफ। (70) और
उसकी औरत खड़ी थी तब वह हंस पड़ी,
फिर हमने खुशखबरी दी उसको इस्हाक
के पैदा होने की, और इस्हाक के पीछे
याकूब की। (71) बोली ऐ खराबी! क्या
मैं बच्चा जन्गूंगी और मैं बुढ़िया हूँ और
यह मेरा शौहर बूढ़ा है, यह तो एक
अजीब बात है। (72) वे बोले क्या तू
ताज्जुब करती है अल्लाह के हुक्म से?
अल्लाह की रहमत है और बरकतें तुम पर
ऐ घर वालो, तहकीक कि अल्लाह है
तारीफ किया गया बड़ाईयों वाला। (73)

खुलासा-ए-तफसीर

और हमारे भेजे हुए फरिश्ते (इनसानी शक्ल में) इब्राहीम (अलैहिस्सलाम) के पास (उनके
बेटे इस्हाक अलैहिस्सलाम की) खुशखबरी लेकर आये (अगरचे उनके आने का बड़ा उद्देश्य कौमे
लूत पर अज़ाब डालना था, जैसा कि अल्लाह तआला ने इरशाद फरमाया 'फमा खल्बुकुम्') और
(आने के वक़्त) उन्होंने सलाम किया। उन्होंने (यानी इब्राहीम ने) भी सलाम किया (और
पहचाना नहीं कि ये फरिश्ते हैं। मामूली मेहमान समझे) फिर देर नहीं लगाई कि एक तला हुआ

(मोटा-ताजा) बछड़ा लाये (और उनके सामने रख दिया। ये तो फरिश्ते थे क्यों खाने लगे थे) सो जब उन्होंने (यानी इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने) देखा कि इनके हाथ उस (खाने) तक नहीं बढ़ते तो उनसे घबराहट महसूस की, और उनसे दिल में डर गये (कि ये मेहमान तो नहीं, कोई मुखालिफ़ न हों कि किसी बुरे इरादे से आये हों और मैं घर में हूँ। दोस्त और कोई साथी पास नहीं, यहाँ तक कि बेतकल्लुफी से इसको ज़बान से भी ज़ाहिर कर दिया जैसा कि अल्लाह तआला का कौल है 'का-ल इन्ना मिन्कुम वजिलून) वे (फरिश्ते) कहने लगे डरो मत (हम आदमी नहीं हैं, फरिश्ते हैं, आपके पास खुशख़बरी लेकर आये हैं कि आपके एक बेटा पैदा होगा इस्हाक और उसके बाद में एक बेटा होगा य़ाक़ूब। और खुशख़बरी इसलिये कहा कि अब्बल तो औलाद खुशी की चीज़ है फिर हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम बूढ़े हो गये थे, बीवी भी बहुत बूढ़ी थीं, उम्मीद औलाद की न रही थी। आपने नुबुव्वत के नूर से तवज्जोह करके पहचान लिया कि वाकई फरिश्ते हैं, लेकिन नुबुव्वत की समझ से यह भी मालूम हो गया कि इसके सिवा और भी किसी बड़े काम के लिये आये हैं, इसलिये उसके मुतैयन करने के साथ सवाल किया 'फ़मा ख़त्बुकुम' यानी किस काम के लिये आये हैं? उस वक़्त उन्होंने कहा कि) हम कौमे लूत की तरफ़ भेजे गये हैं (कि उनको उनके कुफ़्र की सज़ा में हलाक करें। उनमें तो यह गुप्तगू हो रही थी) और उनकी (यानी इब्राहीम अलैहिस्सलाम की) बीवी (हज़रत सारा कहीं) खड़ी (सुन रही) थीं, पस (औलाद की ख़बर सुनकर जिसकी हज़रत हाजरा के पेट से इस्माईल अलैहिस्सलाम के पैदा होने के बाद तमन्ना भी थी, खुशी से) हंसीं (और बोलती पुकारती आर्यीं और ताज्जुब से माथे पर हाथ मारा जैसा कि एक आयत में अल्लाह तआला ने उनकी इस कैफ़ियत को इस तरह बयान फ़रमाया है 'फ़-अक्ब-लतिमूर-अतुहू फी सरतिन् फ़सक्कत् वज्हहा')।

सो हमने (यानी हमारे फरिश्तों ने) उनको (एक बार फिर) इस्हाक (के पैदा होने की) खुशख़बरी दी, और इस्हाक के बाद याक़ूब की (जो कि हज़रत इस्हाक के बेटे होंगे, जिससे मालूम हो गया कि तुम्हारे यहाँ बेटा होगा और ज़िन्दा रहेगा, यहाँ तक कि वह भी औलाद वाला होगा। उस वक़्त) कहने लगीं कि हाय ख़ाक पड़े, अब मैं बुढ़िया होकर बच्चा जन्मूंगी? और यह मेरे मियाँ (बैठे) हैं बिल्कुल बूढ़े, वाकई यह भी अजीब बात है। फरिश्तों ने कहा- क्या (नुबुव्वत के घराने में रहकर और हमेशा मोजिज़े और अजीब मामलात देख-देखकर) तुम खुदा के कामों में ताज्जुब करती हो? और (खासकर) इस ख़ानदान के लोगों पर तो अल्लाह तआला की (खास) रहमत और उसकी (तरह-तरह की) बरकतें (नाज़िल होती रहती) हैं, बेशक वह (अल्लाह तआला) तारीफ़ के लायक (और) बड़ी शान वाला है (वह बड़े से बड़ा काम कर सकता है, पस बजाय ताज्जुब के उसकी तारीफ़ और शुक्र में मशगूल हो)।

मआरिफ़ व मसाईल

इन पाँच आयतों में हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह अलैहिस्सलाम का एक वाकिआ बयान हुआ है कि अल्लाह तआला ने चन्द फरिश्तों को उनके पास औलाद की खुशख़बरी देने के लिये

भेजा, क्योंकि इब्राहीम अलैहिस्सलाम की बीवी मोहतरमा हज़रत सारा से कोई औलाद न थी और उनको औलाद की तमन्ना थी, मगर दोनों का बुढ़ापा था बज़ाहिर कोई उम्मीद न थी, अल्लाह तआला ने फ़रिश्तों के ज़रिये खुशख़बरी भेजी और वह भी इस शान की कि औलाद में बेटा होगा और उनका नाम भी इस्हाक़ तजवीज़ फ़रमा दिया, और फिर यह भी बतला दिया कि वह ज़िन्दा रहेंगे और वह भी औलाद वाले होंगे, उनके लड़के का नाम याक़ूब होगा और दोनों अल्लाह तआला के रसूल व पैग़म्बर होंगे। ये फ़रिश्ते चूँकि इनसानी शक्ल में आये थे इसलिये इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने इनको आम मेहमान समझकर मेहमान-नवाज़ी शुरू की, भुना हुआ गोश्त लाकर सामने रखा, मगर वे तो हकीकत में फ़रिश्ते थे, खाने पीने से पाक, इसलिये खाना सामने होने के बावजूद उसकी तरफ़ हाथ नहीं बढ़ाया। इब्राहीम अलैहिस्सलाम को यह देखकर शंका हुई कि ये मेहमान नहीं मालूम होते, मुम्किन है किसी बुराई की नीयत से आये हों। फ़रिश्तों ने उनका यह अन्देश मालूम करके बात खोल दी और बतला दिया कि हम अल्लाह तआला के फ़रिश्ते हैं आप घबरायें नहीं, हम आपको औलाद की खुशख़बरी देने के अलावा एक और काम के लिये भी भेजे गये हैं कि कौमे लूत पर अज़ाब नाज़िल करें।

हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की बीवी मोहतरमा हज़रत सारा पर्दे के पीछे से यह गुप्तगू सुन रही थीं, जब मालूम हो गया कि ये इनसान नहीं फ़रिश्ते हैं तो पर्दे की ज़रूरत न रही, बुढ़ापे में औलाद की खुशख़बरी सुनकर हंस पड़ीं और कहने लगीं कि क्या मैं बुढ़िया होकर औलाद जनूंगी? और यह मेरे शौहर भी बूढ़े हैं। फ़रिश्तों ने जवाब दिया कि क्या तुम अल्लाह तआला के हुक्म पर ताज्जुब करती हो? जिसकी क़ुदरत में सब कुछ है, ख़ुसूसन तुम नुबुव्वत के ख़ानदान में रहकर इसको देखती और अनुभव भी करती रहती हो कि इस ख़ानदान पर अल्लाह तआला की असाधारण रहमत व बरकत नाज़िल होती रहती है जो अक्सर ज़ाहिरी असबाब के सिलसिले से ऊपर होती है, फिर ताज्जुब की क्या बात है? यह इस वाकिए का खुलासा है, आगे ऊपर बयान हुई इन आयतों की पूरी तफ़्सील देखिये।

पहली आयत में बतलाया है कि ये फ़रिश्ते हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के पास कोई खुशख़बरी लेकर आये थे, उस खुशख़बरी का ज़िक्र आगे तीसरी आयत में है 'फ़बशशरनाहा बिइस्हा-क'।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि ये फ़रिश्ते जिब्रील, मीकाईल और इस्राफ़ील थे। (तफ़्सीरे कुर्तुबी) इन्होंने इनसानी शक्ल में आकर इब्राहीम अलैहिस्सलाम को सलाम किया, हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने सलाम का जवाब दिया और इनको इनसान समझकर मेहमान-नवाज़ी शुरू की।

हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम वह पहले इनसान हैं जिन्होंने दुनिया में मेहमान-नवाज़ी की रस्म जारी फ़रमाई। (तफ़्सीरे कुर्तुबी) उनका मामूल यह था कि कभी अकेले खाना न खाते बल्कि हर खाने के वक़्त तलाश करते थे कि कोई मेहमान आ जाये तो उसके साथ खायें।

अल्लामा कुर्तुबी ने बाज़ इस्राईली रियायतों से नक़ल किया है कि एक दिन खाने के वक़्त

हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने मेहमान की तलाश शुरू की तो एक अजनबी आदमी मिला, जब वह खाने पर बैठा तो इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने फरमाया कि 'बिस्मिल्लाह' कहो। उसने कहा कि मैं जानता नहीं अल्लाह कौन और क्या है? इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने उसको दस्तरख्वान से उठा दिया। जब वह बाहर चला गया तो जिब्रीले अमीन आये और कहा कि अल्लाह तआला फरमाते हैं कि "हमने तो उसके कुफ़ के बावजूद सारी उम्र उसको रिज़्क दिया और आपने एक लुक़्मा देने में भी कन्ज़ूसी की।" यह सुनते ही इब्राहीम अलैहिस्सलाम उसके पीछे दौड़े और उसको वापस बुलाया। उसने कहा कि जब तक आप इसकी वजह न बतायेंगे कि पहले क्यों मुझे निकाला था और अब फिर क्यों बुला रहे हैं मैं उस वक़्त तक आपके साथ न जाऊँगा।

हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने वाकिआ बतला दिया तो यही वाकिआ उसके मुसलमान होने का सबब बन गया। उसने कहा कि वह रब जिसने यह हुक्म भेजा है बड़ा करीम है, मैं उस पर ईमान लाता हूँ। फिर हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के साथ गया और मोमिन होकर बाकायदा 'बिस्मिल्लाह' पढ़कर खाना खाया।

हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने अपनी मेहमान-नवाज़ी की आदत के मुताबिक़ इनसानी शक्ल में आने वाले फ़रिश्तों को इनसान और मेहमान समझकर मेहमान-नवाज़ी शुरू की और फौरन ही एक तला हुआ बछड़ा सामने लाकर रख दिया।

दूसरी आयत में बतलाया गया कि आने वाले फ़रिश्ते अगरचे इनसानी शक्ल में आये थे और यह भी मुम्किन था कि उस वक़्त उनको इनसानी तकाज़े खाने पीने के भी अज्ञात कर दिये जाते मगर हिक्मत इसी में थी कि ये खाना न खायें ताकि इनके फ़रिश्ते होने का राज़ खुले, इसलिये इनसानी शक्ल में भी इनके फ़रिश्ता होने के गुणों और खुसूसियतों को बाकी रखा गया जिसकी वजह से उन्होंने खाने पर हाथ न बढ़ाया।

कुछ रिवायतों में है कि उनके हाथ में कुछ तीर थे उनकी नोक उस तले हुए गोश्त में लगाने लगे। उनके इस अमल से हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को अपने यहाँ के रिवाज के मुताबिक़ यह ख़तरा महसूस हुआ कि शायद ये कोई दुश्मन हों, क्योंकि उनके समाज में किसी मेहमान का खाने से इनकार करना ऐसे ही शर व फ़साद की निशानी होता था। (तफ़सीरे कुर्तुबी) फ़रिश्तों ने बात खोल दी कि हम फ़रिश्ते हैं इसलिये नहीं खाते, आप कोई ख़तरा महसूस न करें।

अहकाम व मसाईल

उक्त आयतों में रहन-सहन और सामाजिक ज़िन्दगी से मुताल्लिक़ बहुत से अहकाम और अहम हिदायतें आई हैं जिनको इमाम कुर्तुबी ने अपनी तफ़सीर में तफ़सील से लिखा है।

'सलाम' की सुन्नत

قَالُوا سَلَامًا قَالَ سَلَامٌ

इससे मालूम हुआ कि मुसलमानों के लिये सुन्नत है कि जब आपस में मिलें तो सलाम करें,

आने वाले मेहमान को इसमें पहल करनी चाहिये और दूसरों को जवाब देना चाहिये।

यह रस्म तो हर कौम व मिल्लत में पाई जाती है कि मुलाकात के वक्त एक दूसरे को खुश करने के लिये कुछ अलफाज़ बोलते हैं मगर इस्लाम की तालीम इस मामले में भी बेनजीर और बेहतरीन है, क्योंकि सलाम का मस्नून लफ्ज़ 'अस्सलामु अलैकुम' अल्लाह के नाम पर मुश्तमिल होने की वजह से अल्लाह का जिक्र भी है और मुखातब के लिये अल्लाह तआला से सलामती की दुआ भी, और अपनी तरफ से उसकी जान व माल और आबरू के लिये सलामती की ज़मानत भी।

कुरआने करीम में इस जगह फ़रिश्तों की तरफ से सिर्फ 'सलामन' और हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की तरफ से जवाब में 'सलामुन' जिक्र किया गया है। बज़ाहिर यहाँ सलाम के पूरे अलफाज़ के जिक्र करने की ज़रूरत न समझी, जैसे उर्फ व मुहावरे में कहा जाता है कि फुलॉ ने फुलॉ को सलाम किया, मुराद यह होती है कि पूरा कलिमा 'अस्सलामु अलैकुम' कहा। इसी तरह यहाँ लफ्ज़ 'सलाम' से सलाम का पूरा कलिमा-ए-मस्नूना मुराद है जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने कौल व अमल से लोगों को बतलाया है, यानी सलाम के शुरू करने में 'अस्सलामु अलैकुम' और सलाम के जवाब में 'व अलैकुमुस्सलाम व रस्मतुल्लाहि'।

मेहमानी और मेहमानदारी के चन्द उसूल

فَمَا لَبَّتِ أَنْ جَاءَ بِعَجَلٍ حِينِهِۦ

यानी नहीं ठहरे इब्राहीम अलैहिस्सलाम मगर सिर्फ इस कदर कि ले आये तला हुआ बछड़ा।

इससे चन्द बातें मालूम हुई- अव्वल यह कि मेहमान-नवाज़ी के आदाब में से यह है कि मेहमान के आते ही जो कुछ खाने पीने की चीज़ मयस्सर हो और जल्दी से मुहैया हो सके वह ला रखे, फिर अगर गुंजाईश वाला है तो मज़ीद मेहमानी का इन्तिज़ाम बाद में करे। (कुर्तुबी)

दूसरी बात यह मालूम हुई कि मेहमान के लिये बहुत ज़्यादा तकल्लुफ़ात की फ़िक्र में न पड़े, आसानी से जो अच्छी चीज़ मयस्सर हो जाये वह मेहमान की ख़िदमत में पेश कर दे। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के यहाँ गाय बैल रहते थे, इसलिये बछड़ा ज़िबह करके फ़ौरी तौर पर उसका गोश्त तलकर सामने ला रखा। (तफ़सीरे कुर्तुबी)

तीसरे यह कि आने वालों की मेहमानी करना इस्लाम के आदाब और अख़्लाकी बातों में से है, अम्बिया और नेक लोगों की आदत है। इसमें उलेमा का मतभेद है कि मेहमानी करना वाजिब है या नहीं? उलेमा की अक्सरियत की राय यह है कि वाजिब नहीं, सुन्नत और पसन्दीदा है। कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि गाँव वालों पर वाजिब है कि जो शख्स उनके गाँव में ठहरे उसकी मेहमानी करें, क्योंकि वहाँ खाने का कोई दूसरा इन्तिज़ाम नहीं हो सकता, और शहर में होटल वगैरह से इसका इन्तिज़ाम हो सकता है इसलिये शहर वालों पर वाजिब नहीं। अल्लामा कुर्तुबी रह. ने अपनी तफ़सीर में ये मुख़्तलिफ़ अक़वाल नक़ल किये हैं।

فَلَمَّا رَأَىٰ إِلَيْهِمْ، لَا تَصِلُ إِلَيْهِ نَكَرَهُمْ

यानी जब देखा इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने कि उनके हाथ खाने तक नहीं पहुँचते तो घबराये और अन्देशा करने लगे।

इससे मालूम हुआ कि मेहमान के आदाब में से यह है कि मेहमान के सामने जो चीज़ पेश की जाये उसको कुबूल करे (खाने को दिल न चाहे या नुकसान देने वाला समझे तो मामूली सी शिर्कत मेज़बान का दिल रखने के लिये कर ले)।

इसी जुमले से दूसरी बात यह मालूम हुई कि मेज़बान को चाहिये कि सिर्फ़ खाना सामने रखकर फ़ारिग़ न हो जाये बल्कि इस पर नज़र रखे कि मेहमान खा रहा है या नहीं, जैसा कि इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने किया कि फ़रिश्तों के खाना न खाने को महसूस किया।

मगर यह नज़र रखना इस तरह हो कि मेहमान के खाने को तकता न रहे, सरसरी नज़र से देख ले। क्योंकि मेहमान के लुक़्मों को देखना मेहमान-नवाज़ी के आदाब के खिलाफ़ और आमंत्रित के लिये शर्मिन्दगी का कारण होता है, जैसे कि हिशाम बिन अब्दुल-मलिक के दस्तरख़्वान पर एक रोज़ एक देहाती को यह वाकिआ पेश आया कि देहाती के लुक़्मे में बाल था, अमीरुल-मोमिनीन हिशाम ने देखा तो बतलाया। देहाती फ़ौरन उठ खड़ा हुआ और कहने लगा कि हम ऐसे शख्स के पास खाना नहीं खाते जो हमारे लुक़्मों को देखता है।

इमाम तबरी ने इस जगह नक़ल किया है कि शुरू में जब फ़रिश्तों ने खाने से इनकार किया तो यह कहा था कि हम मुफ़्त का खाना नहीं खाते, अगर आप कीमत ले लें तो खायेंगे। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने जवाब में फ़रमाया कि हाँ इस खाने की एक कीमत है वह अदा कर दो। वह कीमत यह है कि शुरू में अल्लाह का नाम लो और आख़िर में उसकी तारीफ़ करो। जिब्रीले अमीन ने यह सुनकर अपने साथियों को बतलाया कि अल्लाह तआला ने इनको जो ख़लील (अपना दोस्त) बनाया है यह इसी के मुस्तहिक़ हैं।

इस वाकिआ से मालूम हुआ कि खाने के शुरू में 'बिस्मिल्लाह' और आख़िर में 'अल्हमदु लिल्लाह' कहना सुन्नत है।

فَلَمَّا ذَهَبَ عَنْ إِبْرَاهِيمَ الرَّوْمُ وَجَاءَتْهُ الْبُشْرَىٰ يُجَادِلُنَا فِي قَوْمِ
لُوطٍ ۖ إِنَّ إِبْرَاهِيمَ لَحَلِيمٌ أَوَّاهٌ مُنِيبٌ ۝ يٰإِبْرَاهِيمُ اَعْرِضْ عَنْ هٰذَا ۖ إِنَّهُ قَدْ جَاءَ أَمْرٌ
رَّبِّكَ ۖ وَإِنَّهُمْ أَتِيهِمْ عَذَابٌ غَيْرُ مُرْدُوْدٍ ۝ وَلَمَّا جَاءَتْ رُسُلُنَا لُوطًا سِئًا بِهِمْ وَضَاقَ
بِهِمْ ذَرْعًا وَقَالَ هٰذَا يَوْمٌ عَصِيبٌ ۝ وَجَاءَهُ قَوْمُهُ يُهْرَعُونَ إِلَيْهِ ۖ وَمِنْ قَبْلُ كَانُوا يَعْمَلُونَ
السَّيِّئَاتِ ۖ قَالَ يَقَوْمِ هَؤُلَاءِ بَنَاتِي هُنَّ أَطْهَرُ لَكُمْ فَاتَّقُوا اللَّهَ وَلَا تَخْزَوْا فِيْ صِغْفَرٍ ۖ أَلَيْسَ
مِنْكُمْ رَجُلٌ رَّشِيْدٌ ۖ قَالُوا لَقَدْ عَلِمْتَ مَا لَنَا فِيْ بَنَاتِكَ مِنْ حَقٍّ ۖ وَإِنَّكَ لَتَعْلَمُ مَا نُرِيْدُ ۝
قَالَ لَوْ أَنَّ لَكُمْ قُوَّةً أَوْ آوِيًّا إِلَيَّ زَكِيْنَ شَدِيْدٍ ۖ قَالُوا يَلُوْطُ إِنَّكَ رَسُوْلٌ رَّبِّكَ لَنْ

يَصْلُوا إِلَيْكَ فَأَسْرِ بِأَهْلِكَ بِقِطْعٍ مِنَ اللَّيْلِ وَلَا يَلْتَفِتْ مِنْكُمْ أَحَدٌ إِلَّا أَمْرًا نَاكِحًا مُبِينًا
مَا أَصَابَهُمْ إِذَا مَوْعَدَهُمُ الصُّبْحُ إِلَّا السَّيْرُ الْقَرِيبُ ۝ فَلَمَّا جَاءَ أَمْرُنَا جَعَلْنَا مَالِيهَا سَافِلًا
وَأَمْطَرْنَا عَلَيْهَا حِجَابًا مِّنْ سَجَاجٍ ۝ مِّنْضُودٍ ۝ مُّسَوَّمَةٍ عِندَ رَبِّكَ ۝ وَمَا هِيَ مِنَ الظَّالِمِينَ
بَبَعِيدٍ ۝

अल्लाह

फलम्मा ज-ह-ब अन् इब्राहीम-रौअु
व जाअतुल्-बुशरा युजादिलुना फी
कौमि लूत (74) इन्-न इब्राही-म
ल-हलीमुन् अब्वाहुम् मुनीब (75) या
इब्राहीमु अज़रिज़् अन् हाज़ा इन्नहू
कद् जा-अ अम्रु रब्बि-क व इन्नहुम्
आतीहिम् अज़ाबुन् गैरु मरदूद (76)
व लम्मा जाअत् रुसुलुना लूतन्
सी-अ बिहिम् व जा-क बिहिम्
जरअं-व-व का-ल हाज़ा यौमुन्
असीब (77) व जा-अहू कौमुहू
युस्त्रअ-न इलैहि, व मिन् कब्लु कानू
यज़्मलूनस्-सय्यिआति, का-ल या
कौमि हा-उला-इ बनाती हुन्-न
अत्हरु लकुम् फत्तकुल्ला-ह व ता
तुख़्ज़ूनि फी जैफी, अलै-स मिन्कुम्
रज़ुलुरशीद (78) कालू ल-कद्
अलिम्-त मा लना फी बनाति-क
मिन् हक्किन् व इन्न-क ल-तअलमु
मा नुरीद (79) का-ल लौ अन्-न ली

फिर जब जाता रहा इब्राहीम से डर और
आई उसको खुशख़बरी, झगड़ने लगा
हमसे कौमे लूत के हक में। (74)
अलबत्ता इब्राहीम संयम वाला, नरम दिल
है रुजू रहने वाला। (75) ऐ इब्राहीम!
छोड़ यह ख़्याल वह तो आ चुका हुक्म
तेरे रब का, और उन पर आता है अज़ाब
जो लौटाया नहीं जाता। (76) और जब
पहुँचे हमारे भेजे हुए लूत के पास,
ग़मगीन हुआ उनके आने से और तंग
हुआ दिल में, और बोला आज दिन बड़ा
सख़्त है। (77) और आई उसके पास
उसकी कौम दौड़ती बेइस्त्रियार, और वे
लोग पहले से कर रहे थे बुरे काम, बोला
ऐ कौम! ये मेरी बेटियाँ हाज़िर हैं, ये
पाक हैं तुमको, सो डरो अल्लाह से और
मत रुस्वा करो मुझको मेरे मेहमानों में,
क्या तुम में एक मर्द भी नहीं नेक-चलन।
(78) बोले तू तो जानता है हमको तेरी
बेटियों से कुछ गुर्ज नहीं, और तुझको तो
मालूम है जो हम चाहते हैं। (79) कहने

बिकुम् कुव्वतन् औ आवी इला
रुक्निन् शदीद (80) कालू या लूत
इन्ना रुसुलु रब्बि-क लंय्यसितू
इलै-क फ़-अरिर बिअहिल-क
बिकित्ज़िम्-मिनल्लैलि व ला
यत्तफित् मिन्कुम् अ-हदुन्
इल्लमूर-अ-त-क, इन्हू मुसीबुहा
मा असाबहुम्, इन्-न मौज़ि-दहुमुस्-
सुब्हु, अलैसस्-सुब्हु बि-करीब (81)
फ़-लम्मा जा-अ अम्रुना जअल्ना
आलि-यहा साफ़ि-लहा व अम्तरना
अलैहा हिजा-रतम् मिन् सिज्जीलिम्-
मन्ज़ूद (82) मुसव्व-मतन् अिन्-द
रब्बि-क, व मा हि-य मिनज़ालिमी-न
बि-बअीद (83) ● ●

लगा काश मुझको तुम्हारे मुकाबले में
जोर (यानी बल हासिल) होता या जा
बैठता किसी मजबूत पनाह में। (80)
मेहमान बोले ऐ लूत! हम भेजे हुए हैं तेरे
रब के, हरगिज़ न पहुँच सकेंगे ये तुझ
तक, सो ले निकल अपने लोगों को कुछ
रात से, और मुड़कर न देखे तुम में से
कोई मगर तेरी औरत कि उसको पहुँच
कर रहेगा जो उनको पहुँचेगा, उनके वादे
का वक़्त है सुबह, क्या सुबह नहीं है
नजदीक? (81) फिर जब पहुँचा हमारा
हुक्म कर डाली हमने वह बस्ती ऊपर नीचे
और बरसाये हमने उस पर पत्थर कंकर
के तह-ब-तह। (82) निशान किये हुए तेरे
रब के पास (से), और नहीं वह बस्ती इन
ज़ालिमों से कुछ दूर। (83) ● ●

खुलासा-ए-तफसीर

फिर जब इब्राहीम (अलैहिस्सलाम) का वह खौफ़ दूर हो गया (जब फ़रिश्तों ने “ला तख़फ़” यानी डर मत कहा और उनका फ़रिश्ता होना मालूम हो गया) और उनको खुशी की ख़बर मिली (कि औलाद पैदा होगी) तो (इधर से बेफ़िक्र होकर दूसरी तरफ़ मुतवज्जह हुए कि कौमे लूत हलाक की जायेगी और) हमसे लूत (अलैहिस्सलाम) की कौम के बारे में (बहुत जोर देकर और इसरार से सिफ़ारिश जो कि देखने में एक तरह का) झगड़ा (था) करना शुरू किया (जिसकी तफ़सील दूसरी आयत में है कि वहाँ तो लूत अलैहिस्सलाम भी मौजूद हैं इसलिये अज़ाब न भेजा जाये कि उनको तकलीफ़ व मुसीबत पहुँचेगी, मतलब यह होगा कि इस बहाने से कौम बच जाये जैसा कि ‘फी कौमि लूतिन्’ से ज़ाहिरन मालूम होता है, और शायद इब्राहीम अलैहिस्सलाम को उनके मोमिन होने की उम्मीद हो) वाकई इब्राहीम बड़े बरदाश्त करने वाले और नरम दिल वाले थे (इसलिये सिफ़ारिश में ज़्यादा जोर दिया। इरशाद हुआ कि) ऐ इब्राहीम! (अगरचे बहाना लूत

अलैहिस्सलाम का है मगर असली मतलब मालूम हो गया कि कौम की सिफारिश है, सो) इस बात को जाने दो (ये ईमान न लायेंगे, इसी लिये) तुम्हारे रब का हुक्म (इसके मुताल्लिक) आ पहुँचा है, और (उसके सबब से) उन पर जरूर ऐसा अज़ाब आने वाला है जो किसी तरह हटने वाला नहीं (इसलिये इस बारे में कुछ कहना सुनना बेकार है। रहा लूत अलैहिस्सलाम का वहाँ होना सो उनको और सब ईमान वालों को वहाँ से अलग कर दिया जायेगा, उसके बाद अज़ाब आयेगा, ताकि उनको कोई तकलीफ़ न पहुँचे। चुनाँचे इस पर बात खत्म हो गयी) और (इब्राहीम अलैहिस्सलाम के पास से फ़ारिग होकर) जब हमारे भेजे हुए (फ़रिश्ते) लूत (अलैहिस्सलाम) के पास आये तो वह (यानी लूत अलैहिस्सलाम) उन (के आने) की वजह से (इसलिये) ग़मगीन हुए (कि वे बहुत हसीन नौजवानों की शक्ल में आये थे और लूत अलैहिस्सलाम ने उनको आदमी समझा और अपनी कौम की नामाकूल हरकत का ख़्याल आया) और (इस वजह से) उनके आने के सबब तंगदिल हुए (और हद से ज़्यादा तंगदिली से) कहने लगे कि आज का दिन बहुत भारी है (कि इनकी तो ऐसी सूरतें और कौम की ये हरकतें और मैं तने तन्हा, देखिये क्या होता है?) और उनकी कौम (ने जो यह ख़बर सुनी तो) उनके (यानी लूत अलैहिस्सलाम के) पास दौड़ी हुई आई और वे पहले से नामाकूल हरकतें किया ही करते थे (इसी ख़्याल से अब भी आये)।

वह (यानी लूत अलैहिस्सलाम बड़े घबराये और समझाने व खुशामद करने के तौर पर) फ़रमाने लगे कि ऐ मेरी कौम! ये मेरी (बहु) बेटियाँ (जो तुम्हारे घरों में मौजूद) हैं, वे तुम्हारे (नफ़्स की इच्छा पूरी करने के) लिये (अच्छी-) ख़ासी हैं, सो (नवयुवकों पर निगाह करने के बारे में) अल्लाह तआला से डरो और मेरे मेहमानों में मुझको रुस्वा और फ़ज़ीहत मत करो (यानी इन मेहमानों को कुछ कहना मुझको शर्मिन्दा और रुस्वा करना है, अगर इनकी रियायत नहीं करते कि मुसाफ़िर हैं तो मेरा ख़्याल करो कि तुम में रहता सहता हूँ, अफ़सोस और ताज्जुब है) क्या तुम में कोई भी (माकूल आदमी और) भला मानस नहीं (कि इस बात को समझे और औरों को समझाये)?

वे लोग कहने लगे कि आपको तो मालूम है कि हमको आपकी (बहु-) बेटियों की जरूरत नहीं, (क्योंकि औरतों में हमको रुचि ही नहीं) और आपको तो मालूम है (यहाँ आने से) जो हमारा मतलब है। वह (यानी लूत अलैहिस्सलाम निहायत आज़िज़ और परेशान होकर) फ़रमाने लगे- क्या अच्छा होता अगर मेरा तुम पर कुछ ज़ोर चलता (कि खुद तुम्हारे शर को दूर करता) या मैं किसी मज़बूत सहारे की पनाह पकड़ता (मुराद यह कि मेरा कोई कुनबा-कबीला होता कि मेरी मदद करता। लूत अलैहिस्सलाम की जो इस क़द्र बेचैनी देखी तो) वे (फ़रिश्ते) कहने लगे कि ऐ लूत! (हम आदमी नहीं जो आप इस क़द्र घबराते हैं) हम तो आपके रब के भेजे हुए (फ़रिश्ते) हैं (तो हमारा तो क्या कर सकते हैं आप अपने लिये भी अन्देशा न करें) आप तक (भी) हरगिज़ उनकी रसाई न होगी (कि आपको कुछ तकलीफ़ पहुँचा सकें और हम उन पर अज़ाब नाज़िल करने आये हैं) सो आप रात के किसी हिस्से में अपने घर वालों को लेकर (यहाँ से बाहर) चलिये, और तुम में से कोई (पीछे) फिरकर भी न देखे (यानी सब जल्दी चले जायें) हाँ

मगर आपकी बीवी (मुसलमान न होने के कारण न जायेगी) उस पर भी वही आफत आने वाली है जो और लोगों पर आयेगी (और हम रात के वक्त निकल जाने को इसलिये कहते हैं कि) उनके (अज़ाब के) वायदे का वक्त सुबह (का वक्त) है। (लूत अलैहिस्सलाम बहुत परेशान हो गये थे, फरमाने लगे कि जो कुछ हो अभी हो जाये जैसा कि तफसीर दुरे मन्सूर में है, फरिश्तों ने कहा) क्या सुबह (का वक्त) करीब नहीं?

(गर्ज कि लूत अलैहिस्सलाम रातों-रात दूर निकल गये और सुबह हुई और अज़ाब का सामान शुरू हुआ) सो जब हमारा हुक्म (अज़ाब के लिये) आ पहुँचा तो हमने उस ज़मीन (को उलटकर उस) का ऊपर का तख़्ता तो नीचे कर दिया (और नीचे का ऊपर) और उस ज़मीन पर खंगर के पत्थर (यानी झाँवा जो पककर पत्थर के जैसा हो जाता है) बरसाना शुरू किये (जो) लगातार (गिर रहे थे) जिन पर आपके रब के पास (यानी ग़ैब के आलम में) खास निशान भी था (जिससे और पत्थरों से वो पत्थर अलग थे), और (मक्का वालों को चाहिये कि इस किस्से से सबक लें और नसीहत पकड़ें क्योंकि) ये (कौमे लूत की बस्तियाँ) इन ज़ालिमों से कुछ दूर नहीं हैं (मुल्क शाम को आते-जाते हमेशा उनकी बरबादी के निशानात देखते हैं, पस इनको अल्लाह और रसूल की मुखालफ़त से डरना चाहिये)।

मआरिफ व मसाईल

सूर: हूद में अक्सर पहले नबियों और उनकी उम्मतों के हालात और अम्बिया अलैहिमुस्सलाम की मुखालफ़त की बिना पर विभिन्न प्रकार के आसमानी अज़ाबों का बयान आया है। इन जिक्र हुई आयतों में हज़रत लूत अलैहिस्सलाम और उनकी कौम का हाल और कौमे लूत पर सख़्त अज़ाब का बयान है।

हज़रत लूत अलैहिस्सलाम की कौम काफिर होने के अलावा एक ऐसी ख़बीस बदकारी और बेहयाई में मुब्तला थी जो दुनिया में कभी पहले न पाई गयी थी, जिससे जंगल के जानवर भी नफ़रत करते हैं, कि मर्द मर्द के साथ मुँह काला करे, जिसका वबाल व अज़ाब आम बदकारी से कई दर्जे ज्यादा है, इसी लिये इस कौम पर ऐसा सख़्त अज़ाब आया जो आम बेहयाई और बदकारी करने वालों पर कभी नहीं आया।

हज़रत लूत अलैहिस्सलाम का वाकिआ जो इन आयतों में बयान हुआ है इस तरह है कि अल्लाह तआला ने अपने चन्द फ़रिश्ते जिनमें ज़िब्रीले अमीन भी शामिल थे इस कौम पर अज़ाब नाज़िल करने के लिये भेजे, जो पहले हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के यहाँ फ़िलिस्तीन पहुँचे जिसका वाकिआ पिछली आयतों में बयान हो चुका है, उसके बाद हज़रत लूत अलैहिस्सलाम के पास आये जिनका स्थान वहाँ से दस बारह मील के फासले पर था।

अल्लाह तआला शानुहू जिसको अज़ाब में पकड़ते हैं उस पर उनके अमल के मुनासिब ही अज़ाब मुसल्लत फरमाते हैं। इस मौके पर भी अल्लाह तआला के ये फ़रिश्ते हसीन लड़कों की शक्ल में भेजे, जब वे हज़रत लूत अलैहिस्सलाम के घर पहुँचे तो उनको इंसानी शक्ल में

देखकर उन्होंने भी मेहमान समझा और उस वक्त वह सख्त फिक्क व ग़म में मुब्तला हो गये कि मेहमानों की मेहमानी न की जाये तो यह पैग़म्बरी शान के खिलाफ़ है और अगर इनको मेहमान बनाया जाता है तो अपनी क़ौम की ख़बासत मालूम है, इसका ख़तरा है कि वे मकान पर चढ़ आयें और इन मेहमानों को तकलीफ़ पहुँचायें, और वह इनका बचाव न कर सकें। और दिल में कहने लगे कि आज बड़ी सख़्त मुसीबत का दिन है।

अल्लाह जल्ल शानुहू ने इस दुनिया को अजीब इबत की जगह बनाया है जिसमें उसकी कामिल कुदरत और हिक्मत के बेशुमार प्रदर्शन सामने आते हैं। बुत-परस्त आज़र के घर में अपना खलील हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम पैदा कर दिया, हज़रत लूत अलैहिस्सलाम जैसे मक़बूल व ख़ास पैग़म्बर के घर में उनकी बीवी काफ़िरों से मिलती और हज़रत लूत अलैहिस्सलाम की मुख़ालफ़त करती थी। जब ये सम्मानित मेहमान हसीन लड़कों की शक्ल में हज़रत लूत अलैहिस्सलाम के घर में ठहर गये तो उनकी बीवी ने उनकी क़ौम के आवारा लोगों को ख़बर कर दी कि आज हमारे घर में इस तरह के मेहमान आये हैं। (तफ़सीरे कुर्तुबी व मज़हरी)

हज़रत लूत अलैहिस्सलाम को पहले ही से जो आशंका थी वह सामने आ गयी, जिसका बयान एक दूसरी आयत में है:

وَجَاءَهُ قَوْمُهُ يَهْرَعُونَ إِلَيْهِ.

यानी आ गयी उनके पास उनकी क़ौम दौड़ी हुई, और वे पहले से नामाकूल हरकतें किया ही करते थे।

इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि ये अपने ख़बीस अमल की नहूसत से इस क़द्र बेहया हो चुके थे कि खुलेआम हज़रत लूत अलैहिस्सलाम के मकान पर चढ़ दौड़े।

हज़रत लूत अलैहिस्सलाम ने जब देखा कि उनसे बचाव करना मुश्किल है तो उनको शर से बाज़ रखने के लिये फरमाया कि तुम इस शर व फ़साद से बाज़ आ जाओ तो मैं अपनी लड़कियाँ तुम्हारे सरदारों के निकाह में दे दूँगा। उस ज़माने में मुसलमान लड़की का निकाह काफ़िर से जायज़ था, और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम के शुरू के ज़माने तक यही हुक्म जारी था, इसी लिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लाम ने अपनी दो बेटियों का निकाह उतबा बिन अबी लहब और अबुल-आस बिन रबीअ से कर दिया था, हालाँकि ये दोनों कुफ़र पर थे, बाद में वो आयतें नाज़िल हुईं जिनमें मुसलमान औरत का निकाह काफ़िर मर्द से हराम करार पाया। (तफ़सीरे कुर्तुबी)

और कुछ मुफ़स्सरीन ने फरमाया कि इस जगह अपनी लड़कियों से मुराद अपनी पूरी क़ौम की लड़कियाँ हैं, क्योंकि हर पैग़म्बर अपनी क़ौम के लिये बाप के जैसा होता है और पूरी उम्मत उसकी रूहानी औलाद होती है, जैसा कि कुरआन की आयते करीमा:

النَّبِيُّ أَوْلَىٰ بِالْمُؤْمِنِينَ مِنْ أَنفُسِهِمْ وَأَزْوَاجُهُ أُمَّهَاتُهُمْ.

के साथ हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु की क़िराअत में:

وَهَوَّابٌ لَهُمْ

के अलफ़ाज़ भी आये हैं। जिसमें रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को अपनी तमाम उम्मत का बाप करार दिया है। इस तफ़सीर के मुताबिक़ हज़रत लूत अलैहिस्सलाम के इस कौल (कहने) का मतलब यह होगा कि तुम अपनी ख़बीस आदत से बाज़ आओ, शराफ़त के साथ कौम की लड़कियों से निकाह करो, उनको बीवियाँ बनाओ।

फिर लूत अलैहिस्सलाम ने उनको खुदा तआला के अज़ाब से डराने के लिये फ़रमाया:

فَاتَّقُوا اللَّهَ

(कि तुम अल्लाह से डरो) और फिर अज़िज़ी के साथ दरख़्वास्त की:

وَلَا تُخْزَوْنِي فِي ضَيْفِي

यानी मुझको मेरे मेहमानों के बारे में रुस्वा न करो। और फ़रमाया:

أَلَيْسَ مِنْكُمْ رَجُلٌ رَشِيدٌ

यानी क्या तुम में कोई एक भी भला-मानस और शरीफ़ आदमी नहीं जो मेरी फ़रियाद सुने। मगर वहाँ शराफ़त व इन्सानियत का कोई असर किसी में बाकी न था, सब ने जवाब में कहा:

لَقَدْ عَلِمْتُمْ مَالَنَا فِي بَيْتِكَ مِنْ حَقٍّ وَأَنْتَ لَعَلَّمْنَا نَرِيدُ

यानी आप जानते हैं कि हमें आपकी लड़कियों की कोई ज़रूरत नहीं, हम जो कुछ चाहते हैं वह आपको मालूम है।

उस वक़्त हर तरह से अज़िज़ होकर लूत अलैहिस्सलाम की ज़बान पर यह कलिमा आया:

لَوْ أَنَّ لِي بِكُمْ قُوَّةٌ أَوْ آوَى إِلَى رُكْنٍ شَدِيدٍ

यानी काश मुझमें इतनी कुव्वत होती कि मैं इस पूरी कौम का खुद मुकाबला कर सकता या फिर कोई ज़त्था और जमाअत होती जो मुझे इन ज़ालिमों के हाथ से निजात दिलाती।

फ़रिश्तों ने हज़रत लूत अलैहिस्सलाम की यह बेचैनी और परेशानी देखकर बात खोल दी और कहा कि घबराइये नहीं, आपकी जमाअत बड़ी ताक़तवर और मज़बूत है, हम अल्लाह के फ़रिश्ते हैं, इनके काबू में आने वाले नहीं, इन पर अज़ाब डालने के लिये आये हैं।

सही बुख़ारी की हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसके मुताल्लिक़ फ़रमाया कि अल्लाह तआला लूत अलैहिस्सलाम पर रहम फ़रमाये वह किसी मज़बूत जमाअत की पनाह लेने पर मजबूर हो गये। और तिर्मिज़ी में इसके साथ यह जुमला भी है कि हज़रत लूत अलैहिस्सलाम के बाद अल्लाह तआला ने कोई नबी ऐसा नहीं भेजा जिसका कुनबा क़बीला उसका हिमायती न हो। (तफ़सीरे कुर्तुबी) खुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बारे में क़ुरैश के काफ़िरों ने हजार तरह की तदबीरें कीं लेकिन आपके पूरे ख़ानदान ने आपकी हिमायत की, अगरचे मज़हब में वे सब आपके मुवाफ़िक़ न थे, इसी वजह से पूरे बनू हाशिम उस

समाजी बायकाट में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ शरीक रहे जिसमें कुरैश के काफिरों ने उन पर दाना-पानी बन्द कर दिया था।

हजरत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से मन्कूल है कि इस वाकिए में जब कौम लूत उनके घर पर चढ़ आई तो लूत अलैहिस्सलाम ने अपने घर का दरवाज़ा बन्द कर लिया था और यह गुप्तगू उस शरीर कौम से पर्दे के पीछे हो रही थी, फरिश्ते भी मकान के अन्दर थे, उन लोगों ने दीवार फाँदकर अन्दर घुसने का और दरवाज़ा तोड़ने का इरादा किया, इस पर हजरत लूत अलैहिस्सलाम की ज़बान पर ये कलिमात आये। जब फरिश्तों ने हजरत लूत अलैहिस्सलाम की यह बेचैनी व परेशानी देखी तो हकीकत खोल दी और कह दिया कि आप दरवाज़ा खोल दें, अब हम इनको अज़ाब का मज़ा चखाते हैं। दरवाज़ा खोला तो जिब्रीले अमीन ने अपने पर (पंख) का इशारा उनकी आँखों की तरफ़ किया जिससे सब अन्धे हो गये और भागने लगे।

उस वक़्त फरिश्तों ने अल्लाह के हुक्म से हजरत लूत अलैहिस्सलाम को कहा:

فَاسْرِبْ بِهَاتِلِكَ بِقِطْعٍ مِّنَ اللَّيْلِ

यानी आप रात के आखिरी हिस्से में अपने घर वालों को लेकर यहाँ से निकल जाइये। और यह हिदायत कर दीजिये कि उनमें से कोई पीछे मुड़कर न देखे, सिवाय आपकी बीवी के, क्योंकि उस पर तो वही अज़ाब पड़ने वाला है जो कौम पर पड़ेगा।

इसके यह मायने भी हो सकते हैं कि बीवी को साथ न लें, और यह भी हो सकते हैं कि बीवी होने की हैसियत से वह आपके घर वालों में दाखिल होकर साथ चलेगी मगर वह आपके इस हुक्म पर अमल न करेगी जो आप अपने घर वालों को देंगे कि कोई मुड़कर न देखे। कुछ रिवायतों में है कि यँ ही हुआ कि यह बीवी भी साथ चली मगर जब कौम पर अज़ाब आने का धमाका सुना तो पीछे मुड़कर देखा और कौम की तबाही पर अफ़सोस ज़ाहिर करने लगी, उसी वक़्त एक पत्थर आया जिसने इसका भी ख़ात्मा कर दिया। (तफ़सीरे कुर्तुबी व मज़हरी)

फरिश्तों ने यह भी बतला दिया कि:

إِنَّ مَوْعِدَهُمُ الصُّبْحُ

यानी उन पर सुबह होते ही अज़ाब आ जायेगा। हजरत लूत अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि मैं चाहता हूँ कि और भी जल्दी अज़ाब आ जाये। इस पर फरिश्तों ने कहा:

أَلَيْسَ الصُّبْحُ بِقَرِيبٍ

यानी सुबह तो कुछ दूर नहीं, होने ही वाली है।

फिर उस अज़ाब का वाकिआ कुरआन ने इस तरह बयान फ़रमाया कि जब हमारा अज़ाब आ गया तो हमने उन बस्तियों के ऊपर का हिस्सा नीचे कर दिया और उन पर ऐसे पत्थर बरसाये जिन पर हर एक के नाम की निशानी लगी हुई थी।

रिवायतों में है कि ये चार बड़े-बड़े शहर थे जिनमें ये लोग बसते थे, इन्हीं बस्तियों को कुरआने करीम में दूसरी जगह “मुअ्तफ़िकात” के नाम से नामित किया गया है। जब अल्लाह

तअला का हुक्म हुआ तो जिब्रीले अमीन ने अपना पंख उन सब शहरों की ज़मीन के नीचे पहुँचाकर सब को इस तरह ऊपर उठा लिया कि हर चीज़ अपनी जगह रही, पानी के बरतन से पानी भी नहीं गिरा, आसमान की तरफ से कुत्तों, जानवरों और इनसानों की आवाज़ें आ रही थीं, उन सब बस्तियों को आसमान की तरफ सीधा उठाने के बाद औंधा करके पलट दिया, जो उनके बुरे और ख़बीस अमल के मुनासिबे हाल था।

आयत के आखिर में कौमे लूत का अज़ाब ज़िक्र करने के बाद दुनिया की मौजूदा कौमों को चेतावनी देने के लिये इरशाद फ़रमाया:

وَمَا هِيَ مِنَ الظَّالِمِينَ بِبَعِيدٍ ۝

यानी पधराव का अज़ाब आज भी ज़ालिमों से कुछ दूर नहीं। जो लोग इस कौम की तरह जुल्म व बेहयाई पर जमे रहें वे अपने आपको इस अज़ाब से दूर न समझें, आज भी यह अज़ाब आ सकता है। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मेरी उम्मत में भी कुछ लोग वह अमल करेंगे जो कौमे लूत करती थी, जब ऐसा होने लगे तो इन्तिज़ार करो कि उन पर भी वही अज़ाब आयेगा जो कौमे लूत पर आया है।

وَالْمَدِينِ أَخَاهُمْ شُعَيْبًا ۚ قَالَ يَقَوْمِ اعْبُدُوا اللَّهَ مَا لَكُمْ مِنْ إِلَهٍ غَيْرُهُ ۚ وَلَا تَنْقُصُوا الْمِكْيَالَ وَالْمِيزَانَ إِنِّي أَرَاكُمْ بِخَيْرٍ وَإِنِّي أَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ مُحِيطٍ ۝ وَيَقَوْمِ أَوفُوا بِالْمِكْيَالَ وَالْمِيزَانَ بِالْقِسْطِ ۚ وَلَا تَبْخَسُوا النَّاسَ أَشْيَاءَهُمْ وَلَا تَعْثَوْا فِي الْأَرْضِ مُفْسِدِينَ ۝ بَقِيتُ اللَّهُ خَيْرٌ لَكُمْ إِن كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ۚ وَمَا أَنَا عَلَيْكُمْ بِحَفِيظٍ ۝ قَالُوا يَشْعِيبُ أَصْلُكَ تَأْمُرُكَ أَنْ نَتْرَكَ مَا يَعْبُدُ آبَاؤُنَا أَوْ أَنْ نَفْعَلَ فِي أَمْوَالِنَا مَا نَشَاءُ إِنَّكَ لَأَنْتَ الْحَكِيمُ الرَّشِيدُ ۝ قَالَ يَقَوْمِ ارْءَيْتُمْ إِنْ كُنْتُ عَلَىٰ بَيِّنَةٍ مِنْ رَبِّي وَرَزَقَنِي مِنْهُ رِزْقًا حَسَنًا وَمَأْرُودًا أَنْ أَخَالِفَكُمْ إِلَىٰ مَا أَنْهَيْكُمْ عَنْهُ ۚ إِنْ أُرِيدُ إِلَّا الْإِصْلَاحَ مَا اسْتَطَعْتُ ۚ وَمَا تَوْفِيقِي إِلَّا بِاللَّهِ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَإِلَيْهِ أُنِيبُ ۝ وَيَقَوْمِ لَا يَجْرِمَنَّكُمْ شِقَاقِي أَنْ يُصِيبَكُمْ مِثْلُ مَا أَصَابَ قَوْمَ نُوحٍ أَوْ قَوْمَ هُودٍ أَوْ قَوْمَ صَالِحٍ ۚ وَمَا قَوْمُ لُوطٍ مِنْكُمْ بِبَعِيدٍ ۝ وَاسْتَغْفِرُوا رَبَّكُمْ ثُمَّ تُوبُوا إِلَيْهِ ۚ إِنَّ رَبِّي رَحِيمٌ وَدُودٌ ۝ قَالُوا يَشْعِيبُ مَا نَفَقَهُ كَثِيرًا مِمَّا تَقُولُ وَإِنَّا لَنَرَاكَ فِينَا ضَعِيفًا ۚ وَلَوْلَا رَهْطُكَ لَرَجَمْنَاكَ ۚ وَمَا أَنْتَ عَلَيْنَا بِعَزِيزٍ ۝ قَالَ يَقَوْمِ أَرَهْطِي أَعَزُّ عَلَيْكُمْ مِنَ اللَّهِ ۚ وَاتَّخَذْتُمُوهُ وَرَاءَكُمْ ظَهْرًا ۚ إِنَّ رَبِّي بِمَا تَعْمَلُونَ مُحِيطٌ ۝ وَيَقَوْمِ اعْمَلُوا عَلَىٰ مَكَانَتِكُمْ إِنِّي عَامِلٌ ۚ سَوْفَ يَعْلَمُونَ ۚ مَنْ يَأْتِيهِ عَذَابٌ يُخْزِيهِ وَمَنْ هُوَ كَاذِبٌ ۚ وَارْتَقِبُوا إِنِّي مَعَكُمْ رَقِيبٌ ۝ وَلَمَّا جَاءَ أَمْرُنَا نَجَّيْنَا شُعَيْبًا وَالَّذِينَ

أَمْوَاعَهُ بِرَحْمَةٍ مِنَّا، وَآخَذَتِ الَّذِينَ ظَلَمُوا الصَّيْئَةَ فَاصْبَحُوا فِي دِيَارِهِمْ جُثَيْنٌ ۖ كَانَ لَكُمْ
يَعْنُوا فِيهَا، إِلَّا بَعْدَ الْمَدِينِ كَمَا بَعَدَتْ ثَمُودُ ۖ

व इला मद्यन अखाहुम् शुअैबन्, का-ल या कौमिअबुदुल्ला-ह मा लकुम् मिन् इलाहिन् गैरुह्, व ला तन्कुसुल्-मिक्या-ल वल्मीजा-न इन्नी अराकुम् बिखैरिन्-व इन्नी अखाफु अलैकुम् अजा-ब यौमिम्-मुहीत (84) व या कौमि औफुल्-मिक्या-ल वल्-मीजा-न बिल्-किस्ति व ला तब्खासुन्ना-स अश्या-अहुम् व ला तअसौ फिल्अर्जि मुफ़िसदीन (85) बकिव्यतुल्लाहि खौरुल्लकुम् इन् कुन्तुम् मुअमिनी-न, व मा अ-न अलैकुम् बि-हफीज (86) कालू या शुअैबु अ-सलातु-क तअमुरु-क अन् नतरु-क मा यअबुदु आबाउना औ अन्-नफ़अ-ल फी अम्वालिना मा नशा-उ, इन्न-क ल-अन्तल् हलीमुर-रशीद (87) का-ल या कौमि अ-रऐतुम् इन् कुन्तु अला बय्यि-नतिम् मिर्ब्बी व र-ज-कनी मिन्हु रिज़्कन् ह-सनन्, व मा उरीदु अन् उख़ालि-फ़कुम् इला मा अन्हाकुम् अन्हु, इन् उरीदु इल्लल्-

और मद्यन की तरफ़ भेजा उनके भाई शुऐब को, बोला ऐ मेरी कौम! बन्दगी करो अल्लाह की कोई नहीं तुम्हारा माबूद उसके सिवा, और न घटाओ माप और तौल को, मैं देखता हूँ तुमको खुशहाल और डरता हूँ तुम पर अज़ाब से एक घेर लेने वाले दिन के। (84) और ऐ कौम! पूरा करो माप और तौल को इन्साफ़ से और न घटाओ लोगों को उनकी चीज़ें, और मत मचाओ ज़मीन में फ़साद। (85) जो बच रहे अल्लाह का दिया वह बेहतर है तुमको अगर हो तुम ईमान वाले, और मैं नहीं हूँ तुम पर निगहबान। (86) बोले ऐ शुऐब! क्या तेरे नमाज़ पढ़ने ने तुझको यह सिखाया कि हम छोड़ दें जिनको पूजते रहे हमारे बाप-दादे, या छोड़ दें करना जो कुछ कि करते हैं अपने मालों में, तू ही बड़ा वक़ार वाला है नेक-चलन। (87) बोला ऐ कौम! देखो तो अगर मुझको समझ आ गई अपने रब की तरफ़ से और उसने रोज़ी दी मुझको नेक रोज़ी, और मैं नहीं चाहता कि बाद में खुद करूँ वह काम जो तुमसे छुड़ाऊँ, मैं तो चाहता हूँ संवारना जहाँ तक हो सके, और बन

इस्ला-ह मस्त-तअतु, व मा तौफीकी
इल्ला बिल्लाहि, अलैहि तवकल्लु व
इलैहि उनीब (88) व या कौमि ला
यज्मिन्नकुम् शिकाकी अय्युसी-बकुम्
मिस्तु मा असा-ब कौ-म नूहिन् औ
कौ-म हूदिन् औ कौ-म सालिहिन्,
व मा कौमु लूतिम्-मिन्कुम् बि-बजीद
(89) वस्तगिफरु रब्बकुम् सुम्-म तूबू
इलैहि, इन्-न रब्बी रहीमुव्-वदूद
(90) कालू या शुअैबु मा नफ्कहु
कसीरम्-मिम्मा तकूलु व इन्ना
ल-नरा-क फीना जजीफन्, व लौ ला
रस्तु-क ल-रजम्ना-क व मा अन्-त
अलैना बि-अजीज (91) काल या
कौमि अ-रस्ती अ-अज्जु अलैकुम्
मिनल्लाहि, वत्तखज्तुमूहु वरा-अकुम्
जिहिरय्यन्, इन्-न रब्बी बिमा
तअमलू-न मुहीत (92) व या
कौमिअमलू अला मकानतिकुम् इन्नी
आभिलुन्, सौ-फ तअलमू-न
मय्यअतीहि अजाबुय्युज्जीहि व मन्
हु-व काजिबुन्, वरतकिबू इन्नी
म-अकुम् रकीब (93) व लम्मा
जा-अ अम्रुना नज्जैना शुअैबुव्-
वल्लजी-न आमनू म-अहू बिरस्मतिम्-
मिन्ना व अ-ख-जतिल्लजी-न

जाना है अल्लाह की मदद से उसी पर
मैंने भरोसा किया है और उसी की तरफ
मेरा रुजू है। (88) और ऐ मेरी कौम! न
कमाओ मेरी जिद करके यह कि पड़े तुम
पर जैसा कुछ कि पड़ चुका कौमे नूह पर
या कौमे हूद या कौमे सालेह पर और
कौमे लूत तुमसे कुछ दूर ही नहीं। (89)
और गुनाह बर्रशावाओ अपने रब से और
रुजू करो उसकी तरफ अलबत्ता मेरा रब
है मेहरबान मुहब्बत वाला। (90) बोले ऐ
शुऐब! हम नहीं समझते बहुत बातें जो तू
कहता है, और हम तो देखते हैं कि तू
हम में कमजोर है, और अगर न होते तेरे
भाई-बन्द तो तुझको हम संगसार कर
डालते, और हमारी निगाह में तेरी कुछ
इज्जत नहीं। (91) बोला ऐ कौम! क्या
मेरे भाई-बन्दों का दबाव तुम पर ज्यादा
है अल्लाह से? और उसको डाल रखा है
तुमने पीठ पीछे मुलाकर, तहकीक कि मेरे
रब के काबू में है जो कुछ तुम करते हो।
(92) और ऐ मेरी कौम! काम किये
जाओ अपनी जगह, मैं भी काम करता हूँ,
आगे मालूम कर लोगे किस पर आता है
अजाब रुस्वा करने वाला और कौन है
झूठा, और ताकते रहो मैं भी तुम्हारे साथ
ताक रहा हूँ। (93) और जब पहुँचा
हमारा हुक्म, बचा दिया हमने शुऐब को
और जो ईमान लाये थे उसके साथ
अपनी मेहरबानी से, और आ पकड़ा उन

ज-लमुस्सै हतु फ-अस्बहू फी
दियारिहिम् जासिमीन (94) कअल्लम्
यग्नौ फीहा, अला बुअदत् लिमद्य-न
कमा बअिदत् समूद (95) ❀

जालिमों को कड़क ने, फिर सुबह को रह
गये अपने घरों में औंधे पड़े हुए। (94)
गोया कभी वहाँ बसे ही न थे। सुन लो!
फटकार है मदन को जैसे फटकार हुई
थी समूद को। (95) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

और हमने मदन (वालों) की तरफ उनके भाई शुऐब (अलैहिस्सलाम) को (पैगम्बर बनाकर) भेजा। उन्होंने (मदन वालों से) फरमाया कि ऐ मेरी कौम! तुम (सिर्फ) अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई माबूद (बनने के काबिल) नहीं, (यह हुक्म तो दीन व अकीदों के बारे में उनके हाल के मुनासिब था) और (दूसरा हुक्म मामलात के मुताल्लिक उनके मुनासिब यह फरमाया कि) तुम नाप और तौल में कमी न किया करो (क्योंकि) मैं तुमको खुशहाली की हालत में देखता हूँ (फिर तुमको नाप-तौल में कमी करने की क्या ज़रूरत पड़ी है, और हकीकत में तो किसी को भी ज़रूरत नहीं होती) और (अलावा इसके कि नाप-तौल में कमी न करना, अल्लाह तआला की नेमतों का तकाज़ा है खुद नुकसान का खौफ भी इसको चाहता है, क्योंकि इसमें) मुझको तुम पर ऐसे दिन के अज़ाब का अन्देशा है जो (किस्म-किस्म की मुसीबतों) को अपने अन्दर रखने वाला होगा। और (अगरचे कमी न करने से ही यह हुक्म समझ में आ गया कि पूरा नापो-तौलो मगर ताकीद के लिये इसकी मनाही के बाद इस हुक्म को स्पष्टता के साथ भी बयान फरमाया कि) ऐ मेरी कौम! तुम नाप और तौल पूरी-पूरी किया करो इन्साफ से, और लोगों का उनकी चीज़ों में नुकसान मत किया करो (जैसा कि तुम्हारी आदत है) और (शिरक और लोगों के हुक्क में कमी करके) ज़मीन में फसाद करते हुए (तौहीद व इन्साफ की) हद से न निकलो। (लोगों के हुक्क अदा करने के बाद) अल्लाह का दिया हुआ जो कुछ (हलाल माल) बच जाये वह तुम्हारे लिये (इस हराम कमाई से) बहुत ही बेहतर है, (क्योंकि हराम में चाहे वह ज्यादा हो बरकत नहीं और उसका अन्जाम जहन्नम है, और हलाल में अगरचे वह थोड़ा हो बरकत होती है और उसका अन्जाम अल्लाह की रज़ा है) अगर तुमको यकीन आये (तो मान लो) और (अगर यकीन न आये तो तुम जानो) मैं तुम्हारा पहरा देने वाला तो हूँ नहीं (कि तुमसे जबरन ये काम छुड़ा दूँ, जैसा करोगे वैसा भुगतोगे)।

वे लोग (ये तमाम उपदेश और नसीहतें सुनकर) कहने लगे कि ऐ शुऐब! क्या तुम्हारी (नकली और वहमी) पाकबाज़ी तुमको (ऐसी-ऐसी बातों की) तालीम कर रही है कि (तुम हमसे कहते हो कि) हम उन चीज़ों (की पूजा) को छोड़ दें जिनकी परस्तिश “थानी पूजा और इबादत” हमारे बड़े करते आये हैं? या (इस बात को छोड़ दें कि) हम अपने माल में जो चाहें इख्तियार चलायें? वाकई आप हैं बड़े अक्लमन्द, दीन पर चलने वाले (यानी जिन बातों से हमको मना

करते हो दोनों में से कोई बुरी नहीं, क्योंकि एक की दलील तो रिवायती है कि हमारे बड़ों से बुत परस्ती होती आई है, दूसरे की दलील अक्ली है कि अपना माल है इसमें हमें हर तरह का इस्त्रियार है, पस हमको मना न करना चाहिये। और अक्लमन्द और दीन पर चलने वाले मजाक उड़ाने के तौर पर कहा, जैसा कि बददीनों की आदत होती है दीनदारों के साथ मजाक करने की, और उनकी रिवायती व अक्ली दोनों दलीलों का ग़लत होना बिल्कुल स्पष्ट है)।

शुऐब (अलैहिस्सलाम) ने फरमाया कि ऐ मेरी कौम! (तुम जो मुझसे चाहते हो कि मैं तौहीद व इन्साफ़ की नसीहत न करूँ तो) भला यह बताओ कि अगर मैं अपने रब की जानिब से दलील पर (कायम) हूँ (जिससे तौहीद व इन्साफ़ साबित है) और उसने मुझको अपनी तरफ़ से एक उम्दा दौलत (यानी नुबुव्वत) दी हो, (जिससे मुझ पर इन अहकाम की तब्लीग़ वाजिब हो, यानी तौहीद व अदल का हक़ होना भी साबित और उनकी तब्लीग़ भी वाजिब) तो फिर कैसे तब्लीग़ न करूँ और मैं (जिस तरह इन बातों की तुमको तालीम करता हूँ खुद भी तो इन पर अमल करता हूँ) यह नहीं चाहता कि तुम्हारे उलट उन कामों को करूँ जिनसे मैं तुमको मना करता हूँ (उलट से यही मुराद है कि तुमको दूसरी राह बतलाऊँ और खुद दूसरी राह पर चलूँ। मतलब यह है कि मेरी नसीहत सिर्फ़ ख़ैरख़्याही और हमदर्दी से है जिसका सुबूत यह है कि मैं वहीं बातें बतलाता हूँ जो अपने नफ़्स के लिये भी पसन्द करता हूँ। गर्ज कि) मैं तो इस्लाह “यानी सुधार” चाहता हूँ जहाँ तक मेरे बस में है, और मुझको जो कुछ (अमल व सुधार की) तौफीक़ हो जाती है सिर्फ़ अल्लाह ही की मदद से है (वरना क्या मैं और क्या मेरा इरादा) उसी पर मैं भरोसा रखता हूँ और उसी की तरफ़ (तमाम मामलात में) रुजू करता हूँ (खुलासा यह कि तौहीद व अदल के वाजिब होने पर दलीलें भी कायम, और अल्लाह के हुक्म से उसकी तब्लीग़, और नसीहत करने वाला और सुधारक ऐसा हमदर्द, फिर भी नहीं मानते बल्कि उल्टी मुझसे उम्मीद रखते हो कि मैं कहना छोड़ दूँ। चूँकि इस तकरीर में दिली हमदर्दी और सुधार की अपनी तरफ़ निस्वत की है, इसलिये ‘व मा तौफीकी इल्ला बिल्लाहि.....’ फरमा दिया)।

(यहाँ तक तो उनके कौल का जवाब हो गया, आगे शौक़ दिलाने और डराने के लिये फरमाते हैं) और ऐ मेरी कौम! मेरी जिद “और मुखालफ़त” (व दुश्मनी) तुम्हारे लिये इसका सबब न हो जाये कि तुम पर भी उसी तरह की मुसीबतें आ पड़ें जैसी नूह की कौम, या हूद की कौम, या सालेह की कौम पर आ पड़ी थीं, और लूत की कौम तो (अभी) तुम से (बहुत) दूर (जमाने में) नहीं (हुई)। (यानी उन कौमों की तुलना में इनका ज़माना नज़दीक है। यह तो डरावे का मज़मून हो गया, आगे शौक़ व रुचि दिलाने का मज़मून है) और तुम अपने रब से अपने गुनाह (यानी शिर्क व जुल्म) माफ़ कराओ (यानी ईमान लाओ, क्योंकि ईमान से सब गुनाह माफ़ हो जाते हैं, अगरचे हुक्क़ अदा करने पड़ें) फिर (इबादत की नेकी के साथ) उसकी तरफ़ मुतवज्जह होओ, बिला शुब्ह मेरा रब बड़ा मेहरबान (और) बड़ी मुहब्बत वाला है (वह गुनाह को माफ़ कर देता है और नेकी को कुबूल करता है)। वे लोग (यह लाजवाब और दिल को पिघला देने वाली तकरीर सुनकर माकूल जवाब से आजिज़ होकर जहालत के तौर पर) कहने लगे कि ऐ

शुऐब! बहुत-सी बातें तुम्हारी कही हुई हमारी समझ में नहीं आतीं (यह बात या तो इस वजह से कही हो कि अच्छी तरह तवज्जोह से आपकी बातें न सुनी हों, या अपमानित करने को कहा हो कि नऊजु बिल्लाह यह बकवास है समझने के काबिल नहीं। चुनाँचे बददीन लोगों से इस तरह की सब बातें सामने आती हैं) और हम तुमको अपने (मजमे) में कमजोर देख रहे हैं। और अगर तुम्हारे खानदान का (जो कि हमारे ही मजहब वाले हैं हमको) लिहाज़ न होता तो हम तुमको (कभी का) संगसार “यानी पत्थरों से मार-मारकर हलाक” कर चुके होते। और हमारी नज़र में तो तुम्हारी कुछ इज़्ज़त व क़द्र ही नहीं (लेकिन जिसका लिहाज़ होता है उसके कारण उसके रिश्तेदार की भी रियायत होती है। मतलब उनका यह था कि तुम हमको ये मज़ामीन मत सुनाओ वरना तुम्हारी जान का ख़तरा है। पहले मज़ाक उड़ाने के तौर पर तब्तीग़ से रोका था कि ‘क्या तेरे नमाज़ पढ़ने ने तुझको यह सिखाया है.....’ और अब धमकी देकर रोका)।

शुऐब (अलैहिस्सलाम) ने (जवाब में) फ़रमाया कि ऐ मेरी कौम! (अफ़सोस और ताज्जुब है कि मेरा जो ताल्लुक अल्लाह तआला के साथ है कि मैं उसका नबी हूँ वह तो मेरे हलाक करने से रोक और बाधा न हुआ और जो मेरा ताल्लुक खानदान के साथ है कि मैं उनका रिश्तेदार हूँ वह उससे रोक हुआ, बस इससे तो यह लाज़िम आता है कि तुम खानदान का लिहाज़ अल्लाह से भी ज़्यादा करते हो, तो) क्या मेरा खानदान तुम्हारे नज़दीक (नऊजु बिल्लाह) अल्लाह से भी ज़्यादा इज़्ज़त वाला है (कि खानदान का तो लिहाज़ किया) और उसको (यानी अल्लाह तआला को) तुमने पीठ पीछे डाल दिया (यानी उसका लिहाज़ न किया। सो इसका ख़मियाज़ा बहुत जल्दी भुगतोगे, क्योंकि) यकीनन मेरा रब तुम्हारे सब आमाल को (अपने इल्म के) घेरे में लिए हुए है।

और ऐ मेरी कौम! (अगर तुमको अज़ाब का भी यकीन नहीं आता तो आखिरी बात यह है कि तुम जानो बेहतर है) तुम अपनी हालत पर अमल करते रहो मैं भी (अपने तौर पर) अमल कर रहा हूँ। (सो) अब जल्द ही तुमको मालूम होने वाला है कि वह कौन शख्स है जिस पर अज़ाब आया चाहता है, जो उसको रुस्वा कर देगा। और वह कौन शख्स है जो झूठा था (यानी तुम मुझको नुबुव्वत के दावे में झूठा कहते हो और हकीर व कम दर्जे का समझते हो, तो अब मालूम हो जायेगा कि झूठ बोलने का अपराध करने वाला और ज़िल्लत की सज़ा को अपने लिये वाजिब करने वाला कौन था, तुम या मैं) और तुम भी इन्तिज़ार करो मैं भी तुम्हारे साथ इन्तिज़ार कर रहा हूँ (कि देखें अज़ाब आता है जैसा कि मैं कहता हूँ, या नहीं आता है जैसा कि तुम्हारा गुमान है। गर्ज़ कि एक ज़माने के बाद अज़ाब का सामान शुरू हुआ)। और जब हमारा हुक्म (अज़ाब के लिये) आ पहुँचा (तो) हमने (उस अज़ाब से) शुऐब (अलैहिस्सलाम) को और जो उनके साथ में ईमान वाले थे उनको अपनी (खास मेहरबानी और) इनायत से बचा लिया। और उन ज़ालिमों को एक सख़्त आवाज़ ने (जो कि जिब्राईल अलैहिस्सलाम की चीख थी) आ पकड़ा, सो अपने घरों के अन्दर औंधे गिरे रह गये (और मर गये)। जैसे उन घरों में बसे ही न थे। ख़ूब सुन लो (और नसीहत पकड़ो) कि मद्घन को रहमत से दूरी हुई जैसा कि समूद रहमत से दूर हुए थे।

मज़ारिफ़ व मसाईल

ऊपर दर्ज हुई आयतों में हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम और उनकी कौम का वाकिआ बयान हुआ है। उनकी कौम कुफ़्र व शिर्क के अलावा नाप-तौल में कमी भी करती थी, हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम ने उनको ईमान की दावत दी और नाप-तौल में कमी करने से मना किया और इसके खिलाफ़ करने पर अल्लाह के अज़ाब से डराया मगर ये अपने इनकार और नाफ़रमानी पर कायम रहे तो पूरी कौम एक सख़्त अज़ाब के ज़रिये हलाक कर दी गयी। जिसकी तफ़सील इस तरह है।

وَالْيَٰ مَدْيَنَ أَخَاهُمْ شُعَيْبًا.

यानी हमने भेजा मद्यन की तरफ़ उनके भाई शुऐब को। 'मद्यन' असल में एक शहर का नाम था जिसको मद्यन बिन इब्राहीम ने बसाया था, इसका स्थान मुल्के शाम के मौजूदा मक़ाम "मआन" को बतलाया जाता है। इस शहर के रहने वालों को भी बजाय मद्यन वालों के मद्यन कह दिया जाता है। शुऐब अलैहिस्सलाम अल्लाह तआला के बड़े रुतबे वाले पैगम्बर हैं जो इसी मद्यन कौम में से हैं, इसी लिये उनको मद्यन का भाई फ़रमाकर इस नेमत की तरफ़ इशारा कर दिया कि इस कौम के रसूल को अल्लाह तआला ने इसी कौम से बनाया ताकि उनसे मानूस होकर उनकी हिदायतों को आसानी से क़बूल कर सकें।

قَالَ يٰ قَوْمِ اعْبُدُوا اللَّهَ مَا لَكُم مِّنْ إِلَٰهٍ غَيْرُهُ، وَلَا تَتَّبِعُوا الْيَهُودَ وَالنَّصَارَىٰ.

इसमें हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम ने पहले तो अपनी कौम को तौहीद की दावत दी, क्योंकि ये लोग मुश्रिक थे, पेड़ों की पूजा-पाठ किया करते थे, जिसको क़ुरआन में लफ़्ज़ 'ऐका' से ताबीर किया गया है, और इसी की निस्बत से मद्यन वालों को 'अस्ताबुल-ऐका' का भी लक़ब दिया गया है। इस कुफ़्र व शिर्क के साथ उनमें एक और निहायत सख़्त ऐब और गुनाह यह था कि व्यापार और लेन-देन के वक़्त नाप-तौल में कमी करके लोगों का हक़ मार लेते थे। हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम ने उनको इससे मना फ़रमाया।

फ़ायदा: यहाँ यह बात ख़ास तौर से ध्यान देने के काबिल है कि कुफ़्र व शिर्क सब गुनाहों की जड़ है, जो कौम इसमें मुब्तला है उसको पहले ईमान ही की दावत दी जाती है, ईमान से पहले दूसरे मामलात और आमाल पर तवज्जोह नहीं दी जाती। दुनिया में उनकी निजात या अज़ाब भी इसी ईमान व कुफ़्र की बुनियाद पर होता है, पहले तमाम अम्बिया और उनकी कौमों के वाकिआत जो क़ुरआन में बयान हुए हैं इसी तर्ज़े-अमल के ग़वाह हैं, सिर्फ़ दो कौमों ऐसी हैं जिन पर अज़ाब नाज़िल होने में कुफ़्र के साथ उनके बुरे आमाल को भी दख़ल रहा है- एक लूत अलैहिस्सलाम की कौम, जिसका ज़िक्र इससे पहले आ चुका है कि उन पर जो अज़ाब पूरी बस्ती उलट देने का आया उसका सबब उनके ख़बीस और बुरे अमल को बतलाया गया है, दूसरी कौम शुऐब अलैहिस्सलाम की है जिनके अज़ाब का सबब कुफ़्र व शिर्क के अलावा नाप-तौल में कमी

करने को भी करार दिया गया है।

इससे मालूम हुआ कि ये दोनों काम अल्लाह तआला के नज़दीक सब गुनाहों से ज्यादा नापसन्दीदा और सख्त हैं। बज़ाहिर वजह यह है कि ये दोनों काम ऐसे हैं कि पूरी इन्सानी नस्ल को इससे सख्त नुक़सान पहुँचता है और पूरे आलम में इससे ज़बरदस्त ख़राबी फैल जाती है।

हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम ने अपनी कौम को नाप-तौल में कमी करने के ख़बीस अमल से रोकने के लिये पैग़म्बराना शफ़क़त के साथ पहले तो यह फ़रमाया:

إِنِّي أَرْكُم بِخَيْرٍ وَأِنِّي أَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ مُّحِيطٍ ۝

यानी मैं तुम्हें इस वक़्त खुशहाली में देखता हूँ, कोई ग़रीबी, फ़ाका और माली तंगी नहीं जिसकी वजह से इस बला में मुब्तला हो। इसके अलावा अल्लाह तआला की नेमत का शुक्र यह होना चाहिये कि तुम उसकी मख़्लूक पर जुल्म न करो, और फिर यह भी बतला दिया कि अगर तुमने मेरी बात न सुनी और इस बुरे अमल से बाज़ न आये तो मुझे ख़तरा है कि खुदा तआला का अज़ाब तुम्हें घेर ले। इस अज़ाब से आख़िरत का अज़ाब भी मुराद हो सकता है और दुनिया का भी, फिर दुनिया के अज़ाब भी विभिन्न प्रकार के आ सकते हैं, मामूली अज़ाब यह है कि तुम्हारी यह खुशहाली ख़त्म हो जाये और तुम सूखे और चीज़ों की महंगाई में मुब्तला हो जाओ, जैसा कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

“जब कोई कौम नाप-तौल में कमी करने लगती है तो अल्लाह तआला उसको कहत (सूखे) और चीज़ों के महंगा होने के अज़ाब में मुब्तला कर देते हैं।”

और अगरचे नाप-तौल में कमी को मना करने से पूरा नापना-तौलना खुद ही ज़रूरी हो जाता है लेकिन और ज्यादा ताकीद के लिये शुऐब अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया:

وَيَقُومُ أَوْفُوا الْمِكْيَالَ وَالْمِيزَانَ بِالْقِسْطِ وَلَا تَبْخَسُوا النَّاسَ أَشْيَاءَهُمْ وَلَا تَعْتَوُوا فِي الْأَرْضِ مُفْسِدِينَ ۝

यानी ऐ मेरी कौम! तुम नाप और तौल को इन्साफ़ के साथ पूरा किया करो और लोगों की चीज़ों को कम न करो, और ज़मीन में फ़साद फैलाते न फ़िरो। फिर उनको शफ़क़त के साथ समझाया।

بَقِيتُ اللَّهُ خَيْرَ لَكُمْ إِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ، وَمَا أَنَا عَلَيْكُمْ بِحَفِيظٍ ۝

यानी लोगों के हुक्क नाप-तौल पूरा करके अदा करने के बाद जो कुछ बच रहे तुम्हारे लिये वही बेहतर है अगर तुम मेरी बात मानो, और अगर मेरी बात न मानोगे तो याद रखो मैं इसका ज़िम्मेदार नहीं कि तुम पर कोई अज़ाब आ जाये।

हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम के बारे में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि वह ख़तीबुल-अम्बिया हैं। आपने अपने उम्दा और बेहतरीन अन्दाज़े बयान से अपनी कौम को समझाने और हिदायत पर लाने की पूरी कोशिश में इन्तिहा कर दी, मगर यह सब कुछ सुनने के बाद कौम ने वही जवाब दिया जो जाहिल कौमों अपने सुधारकों को दिया करती हैं। उन पर फ़ब्तियाँ कसीं, मज़ाक़ उड़ाया। कहने लगे:

أَصْلُوْكَ تَأْمُرُكَ أَنْ تُتْرَكَ مَا بَعْدَ آبَاؤَنَا أَوْ أَنْ نَفْعَلَ فِيْ أَمْوَالِنَا مَا نَشَاءُ، إِنَّكَ لَأَنْتَ الْحَلِيْمُ الرَّحِيْمُ

यानी क्या तुम्हारी नमाज़ तुम्हें यह बतलाती है कि हम उन माबूदों को छोड़ दें जिनकी पूजा और इबादत हमारे बाप-दादा करते चले आये हैं, और यह कि हम अपने मिल्क वाले मालों में खुदमुख्तार न रहें कि जिस तरह हमारा जी चाहे मामला करें बल्कि अपने मामलात भी आप से पूछ-पूछकर किया करें कि क्या हलाल है क्या हराम?

हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम की नमाज़ पूरी कौम में मशहूर थी कि बहुत ज्यादा नवाफिल व इबादत में लगे रहते थे इसलिये उनके इरशादात को मज़ाक उड़ाने के तौर पर नमाज़ की तरफ़ मन्सूब किया कि तुम्हारी यह नमाज़ ही तुम्हें (अल्लाह की पनाह) ऐसी गुलत बातें बताती है। उनके इस कलाम से मालूम हुआ कि ये लोग भी यूँ समझते थे कि दीन व शरीअत का काम सिर्फ़ इबादतों तक सीमित है, मामलात में इसका क्या दखल है। हर शख्स अपने माल में जिस तरह चाहे अपना इख्तियार चलाये, उस पर कोई पाबन्दी लगाना दीन का काम नहीं, जैसे इस ज़माने में भी बहुत से बेसमझ लोग ऐसा ख्याल रखते हैं।

कौम ने खालिस हमदर्दी, दिली तड़प और नसीहत का जवाब इस कद्र कड़वा दिया मगर हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम पैगम्बरी शान रखते हैं, यह सब कुछ सुनने के बाद भी उसी हमदर्दी के साथ मुख़ातिब होकर फिर भी समझाने के लिये फ़रमाने लगे:

يَقُوْمُ اِرْءَيْتُمْ اِنْ كُنْتُ عَلٰى بَيِّنَةٍ مِنْ رَبِّيْ وَرَزَقْنِيْ مِنْهُ رِزْقًا حَسَنًا

यानी ऐ मेरी कौम! मुझे बतलाओ कि अगर मैं अपने रब की तरफ़ से अपनी बात के हक़ होने पर दलील और काफी गवाही रखता हूँ और अल्लाह तआला ने बेहतरीन रिज़्क भी अता फ़रमाया हो, कि ज़ाहिरी रिज़्क जिस पर गुज़ारे का मदार है वह भी अता फ़रमाया और बातिनी रिज़्क समझ व अक्ल और उस पर वही व नुबुव्वत का बेशकीमती इनाम भी अता फ़रमाया तो फिर क्या तुम्हारी राय यह है कि इन सब चीज़ों के होते हुए मैं भी तुम्हारी तरह गुमराही और जुल्म को इख्तियार कर लूँ और हक़ बात तुम्हें न पहुँचाऊँ? इसके बाद फ़रमाया:

وَمَا اُرِيْدُ اَنْ اُخَالِفْكُمْ اِلٰى مَا اَنْهٰكُمْ عَنْهُ

यानी यह भी तो समझो कि मैं जिस चीज़ से तुम्हें रोकता हूँ खुद भी तो उसके पास नहीं जाता। अगर मैं तुम्हें मना करता और खुद उसको करता तो तुम्हारे लिये कहने की गुंजाईश थी।

इससे मालूम हुआ कि दावत देने वाले और वाज़िज़ व मुबल्लिग़ के अमल को उसके वज़िज़ व नसीहत में बड़ा दखल होता है, जिस चीज़ पर वाज़िज़ खुद अमिल न हो उसकी बात का दूसरों पर कोई असर नहीं होता। फिर फ़रमाया:

اِنْ اُرِيْدُ اِلَّا الْاِصْلَاحَ مَا اسْتَطَعْتُ

यानी मेरा मक़सद इस सारी जिद्दोज़हद और तुम्हें बार-बार के समझाने से सिवाय इसके कुछ नहीं कि अपनी हिम्मत भर इस्लाह (सुधार) की कोशिश करूँ। और फिर फ़रमाया कि यह

कोशिश भी दर हकीकत मेरे अपने इस्त्रियार से नहीं बल्कि:

وَمَا تَوْفِيقِي إِلَّا بِاللَّهِ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَإِلَيْهِ أُنِيبُ ۝

यानी मैं जो कुछ करता हूँ वह सब अल्लाह तआला की दी हुई तौफीक से करता हूँ, वरना मेरे बस में कुछ न था, उसी पर मेरा भरोसा है और उसी की तरफ हर काम में मैं रुजू करता हूँ।

इस पन्द व नसीहत के बाद फिर उनको अल्लाह तआला के अज़ाब से डराया:

وَيَقَوْمٍ لَا يُجْرِمُهُمْ بِمَا فَعَلُوا أَنَّ يَبْغُوا مِثْلَ مَا أَصَابَ قَوْمَ نُوحٍ أَوْ قَوْمَ هُودٍ أَوْ قَوْمَ صَالِحٍ، وَمَا قَوْمُ لُوطٍ

مِنْكُمْ يَبْغُونَ ۝

यानी तुम सोचो समझो, ऐसा न हो कि मेरी मुखालफत और दुश्मनी तुम पर कोई ऐसा अज़ाब ला डाले जैसा तुमसे पहले कौमे नूह या कौमे हूद या कौमे सालेह पर आ चुका है, और लूत अलैहिस्सलाम की कौम और उनका इबतनाक अज़ाब तो तुमसे कुछ दूर भी नहीं। यानी स्थान व जगह के एतिबार से भी कौमे लूत की उल्टी हुई बस्तियाँ मदन के करीब ही हैं और ज़माने के एतिबार से भी तुमसे बहुत करीब ज़माने में उन पर अज़ाब आया है, उससे इबत और सबक हासिल करो और अपनी जिद से बाज़ आ जाओ। उनकी कौम इसको सुनकर और भी ज्यादा उत्तेजना में आ गयी और कहने लगी कि अगर आपके खानदान की हिमायत आपको हासिल न होती तो हम आपको संगसार कर देते। हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम ने इस पर भी उनको नसीहत फरमाई कि तुमको मेरे खानदान का तो खौफ़ हुआ मगर खुदा तआला का कुछ खौफ़ न आया जिसके कब्जे में सब कुछ है।

आखिरकार जब कौम ने कोई बात न मानी तो शुऐब अलैहिस्सलाम ने फरमाया कि अच्छा तुम अब अज़ाब का इन्तिज़ार करो। उसके बाद हक़ तआला ने शुऐब अलैहिस्सलाम और उन पर ईमान लाने वालों को दस्तूर के मुताबिक उस बस्ती से निकाल लिया और बाकी सब के सब ज़िब्रील अलैहिस्सलाम की एक सख़्त आवाज़ से एक ही बार में हलाक हो गये।

अहकाम व मसाईल

नाप-तौल की कमी का मसला

ज़िक्र हुई आयतों में शुऐब अलैहिस्सलाम की कौम पर अज़ाब आने का एक सबब उनका नाप-तौल में कमी करना था जिसको 'ततफ़ीफ़' कहा जाता है, और कुरआने करीम ने सूर: 'वैलुल्-लिल्मुतफ़िफ़ीन' में उनके सख़्त अज़ाब का बयान फरमाया है और तमाम उम्मत के नज़दीक ऐसा करना सख़्त हराम है। हज़रत फारूके आजम रज़ियल्लाहु अन्हु के एक इरशाद के मातहत हज़रत इमाम मालिक रह. ने अपनी किताब मुवत्ता में फरमाया कि नाप-तौल की कमी से असल मुराद यह है कि किसी का जो हक़ किसी के ज़िम्मे हो उसको पूरा अदा न करे बल्कि उसमें कमी करे, चाहे वह नापने तौलने की चीज़ हो या दूसरी तरह की। अगर कोई मुलाज़िम

अपनी इयूटी की अदायेगी में कोताही करता है, किसी दफ़्तर का मुलाज़िम या कोई मज़दूर अपने काम के निर्धारित वक़्त में कमी करता है या मुक़ररा काम करने में कोताही करता है वह भी इसी सूची में दाख़िल है। कोई शख्स नमाज़ के आदाब व सुन्नतें पूरे नहीं बजा लाता वह भी इसी ततफ़ीफ़ का मुजरिम है। अल्लाह तआला हमें इससे अपनी पनाह में रखे।

मसला: तफसीर-ए-कुर्तुबी में है कि कौमे शुऐब की एक आदत यह थी कि मुल्क के राईज सिक्कों दिरहम व दीनार में से किनारे काटकर सोना चाँदी बचा लेते और यह कटे हुए सिक्के पूरी कीमत से चलते कर देते थे, हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम ने उनको इससे मना फ़रमाया।

हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने भी इस्लामी हुकूमत के सिक्कों का तोड़ना हराम करार दिया है, और आयत:

نَسْعَةُ رَهْطٍ يُفْسِدُونَ فِي الْأَرْضِ وَلَا يَصْلَحُونَ ۝

की तफ़सीर में इमामे तफ़सीर हज़रत ज़ैद बिन असलम ने यही फ़रमाया है कि ये लोग दिरहम व दीनार को तोड़कर अपना फ़ायदा हासिल कर लिया करते थे, जिसको कुरआन पाक ने 'फ़साद-ए-अज़ीम' करार दिया है।

हज़रत उमर बिन अब्दुल-अज़ीज़ रह. की ख़िलाफ़त के ज़माने में एक शख्स को इस जुर्म में गिरफ़्तार किया गया कि वह दिरहम को काट रहा था, आपने उसको कोड़ों की सज़ा दी और सर मुंडवाकर शहर में ग़श्त कराया। (तफ़सीर-ए-कुर्तुबी)

وَلَقَدْ أَرْسَلْنَا مُوسَىٰ بِآيَاتِنَا وَسُلْطَانٍ مُّبِينٍ ۝

إِلَىٰ فِرْعَوْنَ وَمَلَئِهِ فَاتَّبَعُوا أَمْرَ فِرْعَوْنَ ۖ وَمَا أَمْرُ فِرْعَوْنَ بِرَشِيدٍ ۝ يَقْدُمُ قَوْمَهُ يَوْمَ الْقِيَمَةِ فَأَوْرَدَهُمُ النَّارَ وَبِئْسَ الْوَرْدُ ۝ وَأَتَّبَعُوا فِي هَذِهِ لَعْنَةً وَيَوْمَ الْقِيَمَةِ يَبْئَسُ الرِّفْدُ الْمَرْفُودُ ۝ ذَلِكَ مِنْ أَنْبَاءِ الْقُرْآنِ نَقِصَةٌ عَلَيْكَ مِنْهَا قَائِمٌ وَحَصِيدٌ ۝ وَمَا ظَلَمْنَاهُمْ وَلَكِنْ ظَلَمُوا أَنْفُسَهُمْ فَمَا أَغْنَتْ عَنْهُمْ آلِهَتُهُمُ الَّتِي يَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللَّهِ مِنْ شَيْءٍ لَمَّا جَاءَ أَمْرُ رَبِّكَ ۖ وَمَا زَادُهُمْ إِلَّا تَتَابَعٌ ۝

व ल-क़द् अरसल्ला मूसा बिआयातिना
व सुल्तानिम्-मुबीन (96) इला
फिरऔ-न व म-लइही फ़त्तबअू अम्-र
फिरऔ-न व मा अम्ह फिरऔ-न
बि-रशीद (97) यक़दुमु कौमहू यौमल्-

और अलबल्ला भेज चुके हैं हम मूसा को
अपनी निशानियाँ और वाजेह सनद देकर
(96) फिरऔन और उसके सरदारों के
पास, फिर वे चले हुक्म पर फिरऔन के,
और नहीं बात फिरऔन की कुछ काम
की। (97) आगे होगा अपनी कौम के

क़ियामति फ़औ-र-दहुमुन्ना-र, व
 बिअसल् विर्दुल्-मौरूद (98) व
 उत्बिअू फ़ी हाजिही लअ-नतंव-व
 यौमल्-क़ियामति, बिअसरिफ़दुल्
 मरफूद (99) ज़ालि-क मिन्
 अम्बाइल्-कुरा नकुस्सुहू अलै-क
 मिन्हा काइमुंव-व हसीद (100) व
 मा ज़लम्नाहुम् व लाकिन् ज-लमू
 अन्फु-सहुम् फ़मा अग्नत् अन्हुम्
 आलि-हतुहुमुल्लती यदू-न मिन्
 दूनिल्लाहि मिन् शैइल्-लम्मा जा-अ
 अम्रु रब्बि-क, व मा ज़ादूहुम् गै-र
 तत्बीब (101)

क़ियामत के दिन फिर पहुँचायेगा उनको
 आग पर, और बुरा घाट है जिस पर
 पहुँचे। (98) और पीछे से मिलती रही
 इस जहान में लानत और क़ियामत के
 दिन भी, बुरा इनाम है जो उनको मिला।
 (99) ये थोड़े से हालात हैं बस्तियों के
 हम सुनाते हैं तुझको कुछ उनमें से अब
 तक कायम हैं और कुछ की जड़ कट
 गई। (100) और हमने उन पर जुल्म नहीं
 किया लेकिन जुल्म कर गये वही अपनी
 जान पर, फिर कुछ काम न आये उनके
 ठाकुर (माबूद) जिनको वे पुकारते थे
 अल्लाह के अलावा किसी चीज़ में जिस
 वक़्त पहुँचा हुक्म तेरे रब का, और नहीं
 बढ़ाया उनके हक़ में सिवाय हलाक करने
 के। (101)

ख़ुलासा-ए-तफ़्सीर

और हमने मूसा (अलैहिस्सलाम) को (भी) अपने मोजिज़े और रोशन दलील देकर फिरऔन
 और उसके सरदारों के पास भेजा। सो (न फिरऔन ने माना और न उनके सरदारों ने माना
 बल्कि फिरऔन भी अपने कुफ़्र पर रहा और) वे लोग (भी) फिरऔन (ही) की राय पर चलते रहे,
 और फिरऔन की राय कुछ सही न थी। वह (फिरऔन) क़ियामत के दिन अपनी क़ौम के
 आगे-आगे होगा, फिर उन (सब) को दोज़ख़ में जा उतारेगा, और वह (दोज़ख़) उतरने की बहुत
 ही बुरी जगह है, जिसमें ये लोग उतारे जाएँगे। और इस (दुनिया) में भी लानत उनके साथ-साथ
 रही और क़ियामत के दिन भी (उनके साथ रहेगी, चुनाँचे यहाँ क़हर से गर्क हुए और वहाँ दोज़ख़
 नसीब होगी) बुरा इनाम है जो उनको दिया गया। यह (जो कुछ ऊपर किस्सों में बयान हुआ)
 उन (तबाह हुई) बस्तियों के कुछ हालात थे, जिनको हम आप से बयान करते हैं, (सो) कुछ
 (बस्तियाँ) तो उनमें (अब भी) कायम हैं (मसलन मिस्र कि फिरऔन की आल के हलाक होने के
 बाद भी आबाद रहा) और कुछ का बिल्कुल ख़ात्मा हो गया। और (हमने जो इन ज़िक्र हुई बस्ती
 वालों को सजायें दीं सो) हमने उन पर जुल्म नहीं किया (कि बिना कसूर के सज़ा दी हो जो कि
 देखने में जुल्म है) लेकिन उन्होंने खुद ही अपने ऊपर जुल्म किया (कि ऐसी हरकतें कीं जिनसे

सज़ा के हकदार हुए) सो उनके वे माबूद जिनको वे अल्लाह के अलावा पूजते थे उनको कुछ फायदा न पहुँचा सके, जब आपके रब का हुक्म (अज़ाब कें लिये) आ पहुँचा (कि उनको अज़ाब से बचा लेते) और (फायदा तो क्या पहुँचा और) उल्टा उनको नुकसान पहुँचाया (यानी नुकसान का सबब हुए कि उनकी पूजा व इबादत की बदौलत सज़ा पाने वाले हुए)।

وَكَذَلِكَ أَخْذُ رَبِّكَ إِذَا أَخَذَ الْقُرْآنَ وَهِيَ ظَالِمَةٌ إِنَّ أَخْذَهُ

الْيَوْمَ شَدِيدٌ ۝ إِنَّ فِي ذَلِكَ لَآيَةً لِّمَن خَافَ عَذَابَ الْآخِرَةِ ۚ ذَلِكَ يَوْمٌ مَّجْهُوٌّ لَهُ النَّاسُ وَ
 ذَلِكَ يَوْمٌ مَّشْهُودٌ ۝ وَمَا تَوْخِيشُ إِلَّا لِأَجَلٍ مُّعَدُّودٍ ۝ يَوْمَ يَأْتِ لَا تَكَلُمُ نَفْسٌ إِلَّا بِإِذْنِهِ ۚ
 فَمِنْهُمْ شَقِيٌّ وَسَعِيدٌ ۝ فَأَمَّا الَّذِينَ شَقُوا فَيُنَادُونَ فِي النَّارِ لَهُمْ فِيهَا زَفِيرٌ وَشَهِيقٌ ۝ خَلِيلَيْنَ فِيهَا مَا
 دَامَتِ السَّمَوَاتُ وَالْأَرْضُ إِلَّا مَا شَاءَ رَبُّكَ ۚ إِنَّ رَبَّكَ فَقَّالٌ لِّمَا يَرِيدُ ۝ وَأَمَّا الَّذِينَ سَعَدُوا
 فَيَنُودُونَ خَلِيلَيْنَ فِيهَا مَا دَامَتِ السَّمَوَاتُ وَالْأَرْضُ إِلَّا مَا شَاءَ رَبُّكَ ۚ عَطَاءٌ غَيْرُ مَجْدُودٍ ۝
 فَلَا تَكُ فِي مِرْيَةٍ مِّمَّا يَعْبُدُ هَؤُلَاءِ مَا يَعْبُدُونَ إِلَّا كَمَا يَعْبُدُ آبَاؤُهُمْ مِّن قَبْلُ ۚ وَإِنَّا لَنُوقُوهُمْ
 نَصِيبَهُمْ غَيْرَ مَنْقُوصٍ ۝ وَلَقَدْ آتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ فَاخْتَلَفَ فِيهِ ۚ وَلَوْلَا كَلِمَةٌ سَبَقَتْ
 مِن رَّبِّكَ لَفِي شَكٍّ مِّنْهُ مُرِيبٌ ۝ وَإِن كُنَّا لَنُوقِنُهُمْ رَأْيَكَ
 أَعْبَاهُمْ إِنَّهُمْ بِمَا يَعْمَلُونَ خَبِيرٌ ۝

व कज़ालि-क अख़ज़ु रब्बि-क इज़ा
 अ-ख़ज़ल्-कुरा व हि-य ज़ालि-मतनु,
 इन्-न अख़ज़हू अलीमुन् शदीद (102)
 इन्-न फी ज़ालि-क तआयतल् लिमन्
 ख़ा-फ़ अज़ाबल्-आख़िरति, ज़ालि-क
 यौमुम्-मज्मूअल्-तहुन्नासु व ज़ालि-क
 यौमुम्-मशहूद (103) व मा
 नु-अख़िज़ारुहू इल्ला लि-अ-जलिम्
 मज़्दूद (104) यौ-म यअति ला
 तकल्लमु नफ़सुन् इल्ला बि-इज़िही

और ऐसी ही है पकड़ तेरे रब की जब
 पकड़ता है बस्तियों को और वे जुल्म
 करते होते हैं, बेशक उसकी पकड़
 दर्दनाक है शिद्दत की। (102) इस बात में
 निशानी है उसको जो डरता है आख़िरत
 के अज़ाब से, वह एक दिन है जिस में
 जमा होंगे सब लोग और वह दिन है सब
 के पेश होने का। (103) और उसको हम
 देर जो करते हैं सो एक वायदे के लिये
 जो मुकर्रर है। (104) जिस दिन वह
 आयेगा बात न कर सकेगा कोई जानदार
 मगर उसके हुक्म से, सो उनमें कुछ

फ-मिन्हुम् शकियुं-व सजीद (105)
 फ-अम्मल्लजी-न शकू फफिन्नारि
 लहुम् फीहा ज़ाफीरुं-व शहीक
 (106) ख़ालिदी-न फीहा मा
 दामतिस्समावातु वलुअरज़ु इल्ला मा
 शा-अ रब्बु-क, इन्-न रब्ब-क
 फअज़ालुल्लिमा युरीद (107) व
 अम्मल्लजी-न सुज़िदू फफिल्-जन्नति
 ख़ालिदी-न फीहा मा दामतिस्समावातु
 वलुअरज़ु इल्ला मा शा-अ रब्बु-क,
 अताअन् गै-र मज़ज़ुज (108) फला
 तकु फी मिर्यतिम् मिम्मा यअ़बुदु
 हाउला-इ मा यअ़बुदू-न इल्ला कमा
 यअ़बुदु आबाउहुम् मिन् कब्लु, व
 इन्ना लमुवफ़ूहुम् नसीबहुम् गै-र
 मन्कूस (109) ❀

व ल-कद् आतैना मूसल्-किता-ब
 फ़दतुलि-फ़ फीहि, व लौ ला
 कलि-मतुन् स-बक़त् मिररब्बि-क
 लकुज़ि-य बैनहुम्, व इन्नहुम् लफी
 शक्किम् मिन्हु मुरीब (110) व इन्-न
 कुल्लल्-लम्मा लयुवफ़िफ़ यन्नहुम्
 रब्बु-क अज़्मालहुम्, इन्नहू बिमा
 यअ़मलू-न ख़बीर (111)

बदबख़्त हैं और कुछ नेक बख़्त। (105)
 सो जो लोग बदबख़्त हैं वे तो आग में हैं
 उनको वहाँ चीख़ाना है और दहाड़ना।
 (106) हमेशा रहेंगे उसमें जब तक रहे
 आसमान और ज़मीन मगर जो चाहे तेरा
 रब, बेशक तेरा रब कर डालता है जो
 चाहे। (107) और जो लोग नेकबख़्त हैं
 सो जन्नत में हैं हमेशा रहेंगे उसमें जब
 तक रहे आसमान और ज़मीन मगर जो
 चाहे तेरा रब, बख़िशश है बेइन्तिहा।
 (108) सो तू न रह धोखे में उन चीज़ों
 से जिनको पूजते हैं ये लोग, कुछ नहीं
 पूजते मगर वैसा ही जैसा कि पूजते थे
 उनके बाप दादे इससे पहले, और हम देने
 वाले हैं उनको उनका हिस्सा यानी अज़ाब
 से बिना नुक़सान। (109) ❀

और अलबत्ता हमने दी थी मूसा को
 किताब फिर उसमें फूट पड़ गई, और
 अगर न होता एक लफ़्ज़ कि पहले फ़रमा
 चुका था तेरा रब तो फैसला हो जाता
 उनमें और उनको उसमें शुब्हा है कि
 मुल्मईन नहीं होने देता। (110) और
 जितने लोग हैं जब बक़्त आया पूरा देगा
 तेरा रब उनको उनके आमाल, उसको सब
 ख़बर है जो कुछ वे कर रहे हैं। (111)

खुलासा-ए-तफसीर

और आपके रब की पकड़ ऐसी ही (सख्त) है, जब वह किसी बस्ती पर पकड़ करता है तबकि वे जुल्म (व कुफ़्र) किया करते हों। बेशक उसकी पकड़ बड़ी दर्दनाक (और) सख्त है (कि उससे सख्त तकलीफ़ पहुँचती है और उससे कोई बच नहीं सकता)। इन (वाकियात) में उस शख्स के लिये बड़ी इब्रत है जो आखिरत के अज़ाब से डरता हो। (इब्रत और सबक लेने की ज़ह ज़ाहिर है कि जब दुनिया का अज़ाब ऐसा सख्त है हालाँकि यह बदले की जगह नहीं तो आखिरत का जो कि बदला और जज़ा मिलने की जगह है कैसा सख्त अज़ाब होगा)। वह (यानी आखिरत का दिन) ऐसा दिन होगा कि उसमें तमाम आदमी जमा किये जाएँगे और वह (सब की) हाज़िरी का दिन है। और (वह दिन अगरचे अब तक आया नहीं लेकिन इससे कोई उसके आने में शक न करे, आयेगा ज़रूर) हम उसको सिर्फ़ थोड़ी मुद्दत के लिये (कुछ मस्लेहतों से) टाले हुए हैं (फिर) जिस वक़्त वह दिन आयेगा (मारे खौफ़ और दहशत के लोगों का यह हाल होगा कि) कोई शख्स बिना उसकी (यानी खुदा की) इजाज़त के बात तक (भी) न कर सकेगा (हाँ जब हिसाब-किताब के लिये हाज़िरी होगी और उनके आमाल पर जवाब तलब किया जायेगा उस वक़्त अलबत्ता मुँह से बात निकलेगी, चाहे वह बात मक़बूल हो या मक़बूल न हो, सो इस हालत में तो सब मैदाने कियामत में खड़े होने वाले शरीक होंगे) फिर (आगे) उनमें (यह फ़र्क़ होगा कि) बाज़े तो शकी “बदबख़्त” (यानी काफ़िर) होंगे और बाज़े सईद “नेकबख़्त” (यानी मोमिन) होंगे। सो जो लोग शकी हैं वे तो दोज़ख़ में (ऐसे हाल से) होंगे कि उसमें उनकी चीख़-पुकार पड़ी रहेगी और हमेशा-हमेशा को उसमें रहेंगे जब तक आसमान और ज़मीन कायम हैं (यह मुहावरा है हमेशा रहने को बयान करने के लिये), हाँ अगर उसके रब ही को (निकालना) मन्ज़ूर हो (तो दूसरी बात है) (क्योंकि) आपका रब जो कुछ चाहे उसको पूरा कर सकता है (मगर बावजूद क़ुदरत के यह यकीनी है कि खुदा यह बात न चाहेगा इसलिये निकलना नसीब न होगा)। और रह गये वे लोग जो सईद हैं, सो वे जन्नत में होंगे (और) वे उसमें (दाख़िल होने के बाद) हमेशा-हमेशा को रहेंगे जब तक आसमान और ज़मीन कायम हैं (यह अलग बात है कि जाने से पहले कुछ सज़ा भुगती हो), हाँ अगर आपके रब को (निकालना) मन्ज़ूर हो तो दूसरी बात है (मगर यह यकीनी है कि खुदा यह बात कभी न चाहेगा, पस निकलना भी कभी न होगा बल्कि) वह ख़त्म न होने वाला अतीया होगा।

(और जब कुफ़्र का वबाल ऊपर की आयतों से मालूम हो चुका) सो (ऐ मुख़ातब!) जिस चीज़ की ये पूजा करते हैं उसके बारे में ज़रा शुब्हा न करना (बल्कि यकीन रखना कि उनका यह अमल सज़ा दिलाने वाला है बातिल होने की वजह से, और बातिल होने की दलील यह है कि) ये लोग भी इसी तरह (बिना दलील के बल्कि ख़िलाफ़े दलील अल्लाह के ग़ैर की) इबादत कर रहे हैं जिस तरह इनसे पहले इनके बाप-दादा इबादत करते थे (ख़िलाफ़े दलील काम बातिल और सज़ा का सबब होता है)। और हम यकीनन उनका (अज़ाब का) हिस्सा उनको (कियामत के दिन)

पूरा-पूरा बिना किसी कमी के पहुँचा देंगे। और हमने मूसा (अलैहिस्सलाम) को किताब (यानी तौरात) दी थी, सो उसमें (भी कुरआन की तरह) झगड़ा किया गया (कि किसी ने माना किसी ने न माना, यह कोई आपके लिये नई बात नहीं हुई, पस आप गमगीन न हों) और (ये इनकारी लोग अज़ाब के ऐसे हक्दार हैं कि) अगर एक बात न होती जो आपके रब की तरफ से पहले मुकर्रर हो चुकी है (कि पूरा अज़ाब इनको आखिरत में दूँगा) तो (जिस चीज़ में ये झगड़ा और विवाद कर रहे हैं) इनका (कतई) फैसला (दुनिया ही में) हो चुका होता (यानी वह वायदा किया हुआ अज़ाब आ पड़ता) और ये लोग (दलीलें कायम होने के बावजूद अभी तक) उस (फैसले यानी वायदा किये गये अज़ाब) की तरफ से ऐसे शक में (पड़े) हैं जिसने इनको दुविधा और असमंजस में डाल रखा है (कि इनको अज़ाब का यकीन ही नहीं आता। शक का मतलब यही है) और (किसी के शक व इनकार से यह अज़ाब टलेगा नहीं बल्कि) यकीनन सब-के-सब ऐसे ही हैं कि आपका रब उनको उनके आमाल (की जज़ा) का पूरा-पूरा हिस्सा देगा, वह यकीनन उनके आमाल की पूरी-पूरी ख़बर रखता है (जब उनकी सज़ा का मामला आप से कुछ सरोकार नहीं रखता तो आप और मुसलमान अपने काम में लगे रहें, वो काम ये हैं जो अगली आयतों में बयान हुए हैं)।

فَاسْتَقِمْ كَمَا أُمِرْتَ وَمَنْ تَابَ مَعَكَ وَلَا تَطْغَوْا إِنَّهُ

بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ۝ وَلَا تَرْكَبُوا إِلَى الَّذِينَ ظَلَمُوا فَتَمَسَّكُمُ النَّارُ وَمَا لَكُم مِّنْ دُونِ اللَّهِ
مِنْ أَوْلِيَاءٍ ثَمَّ لَا تُنصَرُونَ ۝

फस्तकिम् कमा उमिर-त व मन
ता-ब म-अ-क व ला ततुगौ, इन्नहू
बिमा तजूमलू-न बसीर (112) व ला
तरकनू इलल्लज्जी-न ज-लमू
फ-तमस्सकुमुन्नारु व मा लकुम् मिन्
दूनिल्लाहि मिन् औलिया-अ सुम्-म
ला तुन्सरून (113)

सो तू सीधा चला जा जैसा तुझको हुक्म
हुआ और जिसने तौबा की तेरे साथ और
हद से न बढ़ो, बेशक वह देखता है जो
कुछ तुम करते हो। (112) और मत झुको
उनकी तरफ जो जालिम हैं फिर तुमको
लगेगी आग, और कोई नहीं तुम्हारा
अल्लाह के सिवा मददगार, फिर कहीं
मदद न पाओगे। (113)

खुलासा-ए-तफ़सीर

तो आप जिस तरह कि आपको हुक्म हुआ है (दीन की राह पर) मुस्तकीम रहिये “यानी सही रास्ते पर कायम रहिये” और वे लोग भी (मुस्तकीम रहें) जो (कुफ़्र से) तौबा करके आपके

साथ में हैं, और (दीन के) दायरे से ज़रा मत निकली, यकीनी तौर पर वह तुम सब के आमाँल को ख़ूब देखता है। और (ऐ मुसलमानो! उन) ज़ालिमों की तरफ़ (या जो उनके जैसे हों उनकी तरफ़ दिली दोस्ती से या आमाँल व हालात में उनका साझी होने या उन जैसा बनकर) मत झुको, कभी तुमको दोज़ख़ की आग़ लग जाये और (उस वक़्त) खुदा के सिवा कोई तुम्हारा साथ देने वाला न हो, फिर तुम्हारी हिमायत किसी तरफ़ से भी न हो (क्योंकि साथ देना तो हिमायत से आसान है, जब साथ देने वाला भी कोई नहीं तो हिमायत करने वाला कौन होता)।

मआरिफ़ व मसाईल

सूर: हूद में पहले अम्बिया और उनकी कौमों के वाकिआत नूह अलैहिस्सलाम से शुरू करके हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम तक खासी तरतीब व तफ़सील से ज़िक्र किये गये हैं। जिनमें सैकड़ों नसीहतें, हिक्मत की बातें और अहकाम व हिदायतें हैं। इन वाकिआत के ख़त्म पर रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मुखातब करके उम्मत मुहम्मदिया को उनसे सबक़ व नसीहत हासिल करने की दावत दी गयी। फ़रमाया:

ذَلِكَ مِنْ أَنْبَاءِ الْقُرَى نَقُصُّ عَلَيْكَ مِنْهَا قَائِمٌ وَحَصِيدٌ

यानी ये हैं पहले शहरों और बस्तियों के वाकिआत जो हमने आपको सुनाये हैं। ये बस्तियाँ जिन पर अल्लाह तआला के अज़ाब आये इनमें से कुछ के तो अभी कुछ खण्डरात और इमारतें मौजूद हैं और कुछ बस्तियाँ ऐसी कर दी गयी हैं जैसे खेती काटने के बाद ज़मीन हमवार कर दी जाये, पिछली खेती का निशान तक नहीं रहता।

इसके बाद फ़रमाया कि हमने उन पर कोई जुल्म नहीं किया बल्कि खुद उन्होंने अपनी जानों पर जुल्म किया कि अपने पैदा करने वाले और पालने वाले को छोड़कर बुतों और दूसरी चीज़ों को अपना खुदा बना बैठे, जिसका अन्जाम यह हुआ कि जब खुदा तआला का अज़ाब आया तो उन खुद बनाये हुए खुदाओं ने उनकी कोई मदद न की। और अल्लाह तआला जब बस्तियों को अज़ाब में पकड़ते हैं तो उनकी पकड़ ऐसी ही सख़्त और दर्दनाक हुआ करती है।

इसके बाद उनको आखिरत की फ़िक्र में मशगूल करने के लिये फ़रमाया कि इन वाकिआत में उन लोगों के लिये बड़ी इब्त और निशानी है जो आखिरत के अज़ाब से डरते हैं, जिस दिन तमाम औलादे आदम एक जगह जमा और मौजूद होगी, उस दिन का हाल यह होगा कि किसी शख्स की मजाल न होगी कि अल्लाह की इजाज़त के बग़ैर एक हर्फ़ भी ज़बान से बोल सके।

इसके बाद रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को एक बार फिर ख़िताब करके इरशाद फ़रमाया:

فَأَسْتَقِمْ كَمَا أُمِرْتَ وَمَنْ تَابَ مَعَكَ وَلَا تَطْغَوْا إِنَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ

यानी आप दीन के रास्ते पर इसी तरह मुस्तकीम रहिये जिस तरह आपको हुक्म दिया गया है और वे लोग भी मुस्तकीम (सीधे) रहें जो क़ुफ़्र से तौबा करके आपके साथ हो गये हैं और

अल्लाह तआला की निर्धारित हदों से न निकलौ क्योंकि वह तुम्हारे सब आमाल को देख रहे हैं।

‘इस्तिकामत’ का मतलब और अहम फायदे व मसाईल

‘इस्तिकामत’ (मुस्तकीम रहने) के मायने सीधा खड़ा रहने के हैं, जिसमें किसी तरफ ज़रा सा झुकाव न हो, ज़ाहिर है कि यह काम आसान नहीं। किसी लोहे, पत्थर वगैरह के खम्बों को माहिर इंजीनियर एक मर्तबा इस तरह खड़ा कर सकते हैं कि वह हर तरफ़ से बिल्कुल सीधा ही रहे, किसी तरफ़ मामूली सा झुकाव न हो, लेकिन किसी हरकत करने वाली चीज़ का हर वक़्त हर हाल में इस हालत पर कायम रहना किस क़द्र मुश्किल है यह समझ रखने वालों से छुपा हुआ नहीं।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और तमाम मुसलमानों को इस आयत में अपने हर काम में हर हाल में इस्तिकामत पर रहने का हुक्म फ़रमाया गया है। “इस्तिकामत” लफ़्ज़ तो छोटा सा है मगर इसका मतलब व मफ़हूम एक अज़ीमुश्शान फैलाव रखता है, क्योंकि इसके मायने यह हैं कि इनसान अपने अक़ीदों, इबादतों, मामलों, अख़्लाक, रहन-सहन, रोज़ी कमाने और उसकी आमद व ख़र्च वगैरह में अल्लाह जल्ल शानुहु की कायम की हुई हदों के अन्दर उसके बतलाये हुए रास्ते पर सीधा चलता रहे, इनमें से किसी बाब के किसी अमल और किसी हाल में किसी एक तरफ़ झुकाव या कमी ज़्यादती हो जाये तो इस्तिकामत बाकी नहीं रहती।

दुनिया में जितनी गुमराहियाँ और अमली ख़राबियाँ आती हैं वे सब इसी इस्तिकामत से हट जाने का नतीजा होती हैं। अक़ीदों में इस्तिकामत न रहे तो बिद्अतों से शुरू होकर कुफ़्र व शिर्क तक नौबत पहुँचती है, अल्लाह तआला की तौहीद और उसकी ज़ात व सिफ़ात के मुताल्लिक जो दरमियानी और सही उसूल रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बयान फ़रमाये उसमें कमी बेशी करने वाले चाहे नेक-नीयती ही से उसमें मुब्तला हों गुमराह कहलायेंगे। अम्बिया अलैहिमुस्सलाम की बड़ाई व मुहब्बत की जो हदें मुक़र्रर कर दी गयी हैं उनमें कमी करने वालों का गुमराह व गुस्ताख़ होना तो सब ही जानते हैं, उनमें ज़्यादती करके और हद से बढ़कर रसूल को खुदाई सिफ़ात व इख़्तियारात का मालिक बना देना भी इसी तरह की गुमराही है, यहूदी व ईसाई इसी गुमराही में खो गये। इबादतों और अल्लाह की निकटता के लिये जो तरीक़े कुरआने पाक और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुतैयन फ़रमा दिये हैं, उनमें ज़रा सी कमी कोताही जिस तरह इनसान को इस्तिकामत (सही राह पर कायम और जमे रहने) से गिरा देती है इसी तरह उनमें अपनी तरफ़ से कोई ज़्यादती भी इस्तिकामत को बरबाद करके इनसान को बिद्अतों में मुब्तला कर देती है। वह बड़ी नेक-नीयती से यह समझता रहता है कि मैं अपने रब को राज़ी कर रहा हूँ और जबकि वह काम नाराज़गी का सूख़ब होता है। इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उम्मत को बिद्अतों और दीन में नयी बातों के निकालने से बड़ी ताक़ीद के साथ मना फ़रमाया है, और इसको सख़्त गुमराही क़रार दिया है। इसलिये इनसान पर लाज़िम है कि जब वह कोई काम इबादत और अल्लाह व रसूल को रज़ा करने के लिये करे तो

करने से पहले इसकी पूरी तहकीक़ कर ले कि यह काम रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम से इस अन्दाज़ व सूरत के साथ साबित है या नहीं? अगर साबित नहीं तो उसमें अपना वक़्त और ताक़त बरबाद न करे।

इसी तरह मामलात, अख़लाक और सामाजिक रहन-सहन के तमाम मामलात में कुरआने करीम के बताये हुए उसूल पर रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी अमली तालीम के ज़रिये एक मोतदिल (दरमियानी) और सही रास्ता कायम कर दिया है, जिसमें दोस्ती, दुश्मनी, नमी, गर्मी, गुस्सा और बुर्दबारी, कंजूसी और सखावत, रोज़ी कमाने और दुनिया को छोड़ने, अल्लाह पर भरोसे और संभावित तदबीर, ज़रूरी असबाब की उपलब्धता और जमा करने असबाब के पैदा करने वाले पर नज़र, इन सब चीज़ों में एक ऐसा मोतदिल सिराते मुस्तकीम (दरमियानी सही और सीधा रास्ता) मुसलमानों को दिया है कि इसकी नज़ीर ज़हान में नहीं मिल सकती। उनको इख़्तियार करने से ही इनसान, कामिल इनसान बनता है, उसमें इस्तिक्ामत से ज़रा गिरने ही के नतीजे में समाज के अन्दर ख़राबियाँ पैदा होती हैं।

खुलासा यह है कि इस्तिक्ामत एक ऐसा जामे और मुकम्मल लफ़्ज़ है कि दीन के तमाम हिस्से व अंश और उन पर सही अमल इसकी तफसीर है।

हज़रत सुफ़ियान बिन अब्दुल्लाह सकफ़ी रज़ियल्लाहु अन्हु ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से अर्ज़ किया कि मुझे इस्लाम के मामले में कोई ऐसी जामे (मुकम्मल) बात बतला दीजिये कि आपके बाद मुझे किसी से कुछ पूछने की ज़रूरत न रहे। आपने फ़रमाया:

قُلْ اَمْتُ بِاللّٰهِ ثُمَّ اسْتَقِمْ

यानी अल्लाह पर ईमान लाओ और फिर उस पर मुस्तकीम रहो। (मुस्लिम, अज़ क़ुर्तुबी)

और उस्मान बिन हाज़िर अज़दी रह. फ़रमाते हैं कि मैं एक मर्तबा कुरआन के मुफ़सिर हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु के पास हाज़िर हुआ और अर्ज़ किया कि मुझे कोई वसीयत फ़रमा दीजिये। आपने फ़रमाया:

عَلَيْكَ بِقَوْلِ اللَّهِ وَالِاسْتِقَامَةِ اَتَّبِعْ وَلَا تَتَّبِعْ. (رواه الدارمی فی مسنده. از قرطبی)

यानी तुम तक्वे और ख़ौफ़े खुदा को लाज़िम पकड़ो और इस्तिक्ामत को भी, जिसका तरीका यह है कि दीन के मामले में शरीअत की पैरवी करो, अपनी तरफ़ से कोई बिद्अत (दीन में नई बात) ईजाद न करो।

इस दुनिया में सबसे ज़्यादा दुश्वार काम इस्तिक्ामत ही है, इसी लिये सूफ़िया हज़रात में आला दर्जा रखने वाले हज़रात ने फ़रमाया है कि इस्तिक्ामत का मक़ाम करामत से ऊँचा है। यानी जो शख्स दीन के कामों में इस्तिक्ामत (सही राह पर जमाव) इख़्तियार किये हुए है, अगरचे उम्र भर उससे कोई करामत सादिर न हो, वह आला दर्जे का वली है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि पूरे कुरआन में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर इस आयत से ज़्यादा सख़्त और भारी कोई आयत नाज़िल नहीं

ई। और फरमाया कि जब सहाबा-ए-किराम रजियल्लाहु अन्हुम ने एक मर्तबा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की दाढ़ी मुबारक में कुछ सफेद बाल देखकर हसरत व अफसोस के तौर पर अर्ज किया कि अब तेजी से बुढ़ापा आपकी तरफ आ रहा है तो फरमाया कि मुझे सूरः हूद ने बूढ़ा कर दिया। सूरः हूद में जो पिछली कौमों पर सख्त व शदीद अज़ाब के वाकिआत ज़कूर हैं वो भी इसका सबब हो सकते हैं, मगर इन्हे अब्बास रजियल्लाहु अन्हु ने फरमाया कि ह आयत ही उसका सबब है।

तफसीरे कुर्तुबी में अबू अली सिरी से नकल किया है कि उन्होंने सपने में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ियारत की तो अर्ज किया कि क्या आपने ऐसा फरमाया है कि जो सूरः हूद ने बूढ़ा कर दिया? आपने फरमाया हाँ। इन्होंने फिर मालूम किया कि इस सूरत में तो अम्बिया अलैहिमुस्सलाम के वाकिआत और उनकी कौमों के अज़ाब का जिक्र है उसने आपको बूढ़ा किया? तो फरमाया नहीं, बल्कि अल्लाह तआला के इस इरशाद ने:

لَا تَعْظِمُ كَمَا أَمَرْتُ

(जिस तरह कि आपको हुक्म हुआ है उसी तरह दीन की राह पर मुस्तकीम रहिये) यह बाहिर है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तो कामिल इनसान की मिसाली सूरत नकर इस दुनिया में तशरीफ लाये थे और फितरी तौर पर इस्तिकामत आपकी आदत थी मगर हर इस क़द्र बोझ या तो इसलिये महसूस फरमाया कि आयत में आम इस्तिकामत का हुक्म ही बल्कि हुक्म यह है कि अल्लाह के हुक्म के मुताबिक इस्तिकामत होना चाहिये। अम्बिया अलैहिमुस्सलाम पर जिस क़द्र अल्लाह का खौफ़ व डर का ग़लबा होता है वह सब को मालूम है, व खौफ़ ही का यह असर था कि बावजूद पूरी इस्तिकामत के यह फ़िक्र लग गयी कि अल्लाह सल्ल शानुहू को जैसी इस्तिकामत मतलूब है वह पूरी हुई या नहीं।

और यह भी हो सकता है कि आपको अपनी इस्तिकामत की तो ज्यादा फ़िक्र न थी क्योंकि अल्लाह के फज़ल से वह हासिल थी मगर इस आयत में पूरी उम्मत को भी यही हुक्म दिया गया उम्मत का इस्तिकामत पर कायम रहना दुश्वार देखकर यह फ़िक्र व ग़म तारी हुआ।

इस्तिकामत के हुक्म के बाद फरमाया 'व ला ततुगौ' यह लफ़्ज़ 'तुगयान' से बना है, इसके यने हद से निकल जाने के हैं, जो उलट है इस्तिकामत के। आयत में इस्तिकामत का हुक्म हारात्मक अन्दाज़ में फरमाने पर बस नहीं फरमाया बल्कि इसके नकारात्मक पहलू की मनाही स्पष्ट रूप से जिक्र कर दी कि अकीदों, इबादतों, मामलों और अख़लाक वगैरह में अल्लाह तआला और उसके रसूल की मुकर्रर की हुई हदों से बाहर न निकलो, क्योंकि यह हर फ़साद व दीनी व दुनियावी ख़राबी का रास्ता है।

दूसरी आयत में इनसान को ख़राबी और बरबादी से बचाने के लिये एक और अहम हिदायत मा दिया गया है:

وَلَا تَرْكُؤْا إِلَى الدِّينِ ظَلَمُوا فَتَمَسَّكُمُ النَّارُ

यानी ज़ालिमों की तरफ़ मामूली और ज़रा सा मैलान भी न रखो, कहीं ऐसा न हो कि उनके साथ तुम्हें भी जहन्नम की आग लग जाये।

‘ला तर्कनू’ कौन से बना है, जिसके मायने किसी तरफ़ हल्के से मैलान, झुकाव और भरोसे व रज़ामन्दी के हैं। इसलिये आयत का मफ़हूम यह हुआ कि जुल्म व ज़्यादती में खुद मुब्तला होने को तो दीन व दुनिया की तबाही सभी जानते हैं मगर ज़ालिमों की तरफ़ मामूली सा झुकाव और मैलान, उनसे राज़ी होना, उन पर भरोसा करना भी इनसान को उसी बरबादी के किनारे लगा देता है।

झुकाव और मैलान से क्या मुराद है? इसके बारे में सहाबा व ताबिईन के चन्द अक़वाल नक़ल किये जाते हैं जिनमें कोई टकराव और भिन्नता नहीं, सब अपनी-अपनी जगह सही हैं।

हज़रत क़तादा रह. ने फ़रमाया कि मुराद यह है कि ज़ालिमों से दोस्ती न करो और उनका कहना न मानो। इब्ने ज़ुरैज रह. ने फ़रमाया कि ज़ालिमों की तरफ़ किसी तरह का भी मैलान न रखो। अबुल-आलिया रह. ने फ़रमाया कि उनके आमात और कामों को पसन्द न करो। (कुर्तुबी) इमाम सुदी रह. ने फ़रमाया कि ज़ालिमों से मुदाहनत न करो, यानी उनके बुरे आमात पर ख़ामोशी या रज़ामन्दी का इज़हार न करो। हज़रत इक्रिमा रह. ने फ़रमाया कि ज़ालिमों की सोहबत में न बैठो। काज़ी बैज़ावी रह. ने फ़रमाया कि शक्ल व सूरत, फ़ैशन और रहन-सहन के तरीक़ों में उनकी पैरवी और अनुसरण करना यह सब इसी मनाही में दाख़िल है।

काज़ी बैज़ावी रह. ने फ़रमाया कि जुल्म व ज़्यादती की मनाही और हराम होने के लिये इस आयत में वह हद से ज़्यादा शिद्दत है जिसकी ज़्यादा से ज़्यादा कल्पना की जा सकती है, क्योंकि ज़ालिमों के साथ दोस्ती और गहरे ताल्लुक़ ही को नहीं बल्कि उनकी तरफ़ मामूली दर्जे के मैलान और झुकाव और उनके पास बैठने को भी इसमें ममनू (वर्जित) करार दिया गया है।

इमाम औज़ाई रह. ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला के नज़दीक कोई शख्स उस आलिम से ज़्यादा नापसन्दीदा नहीं जो अपने दुनियावी फ़ायदे की खातिर किसी ज़ालिम से मिलने के लिये जाये। (तफ़सीरे मज़हरी)

तफ़सीरे कुर्तुबी में है कि इस आयत से मालूम हुआ कि काफ़िरों, नाफ़रमानों और बिद्अती लोगों की सोहबत से बचना और परहेज़ करना वाजिब है, सिवाय इसके कि किसी मजबूरी से उनसे मिलना पड़े। और हकीकत यही है कि इनसान की बेहतरी व ख़राबी, संवरने और बिगड़ने में सबसे बड़ा दख़ल सोहबत और माहौल का होता है, इसी लिये हज़रत हसन बसरी रह. ने इन दोनों आयतों के दो लफ़्ज़ों के बारे में फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने पूरे बीन को ‘ला’ के दो हफ़्ज़ों के अन्दर जमा कर दिया है, एक पहली आयत में ‘ला ततुगौ’ और दूसरा दूसरी आयत में ‘ला तर्कनू’। पहले लफ़्ज़ में शरई हदों से निकलने की और दूसरे लफ़्ज़ में बुरे लोगों की सोहबत की मनाही है, और यही सारे दीन का खुलासा है।

وَأَقِمِ الصَّلَاةَ طَرَفِي النَّهَارِ وَزُلْفَا مِنْ اللَّيْلِ إِنَّ الْحَسَنَاتِ يُذْهِبُنَّ

السَّيِّئَاتِ ۚ ذَٰلِكَ ذِكْرُكَ لِلذَّاكِرِينَ ۝ وَأَصْبِرْ فَإِنَّ اللَّهَ لَا يُضَيِّعُ أَجْرَ الْمُحْسِنِينَ ۝ فَلَوْلَا
كَانَ مِنَ الْقُرُونِ مَنْ قَبْلَكُمْ أُولُوا بَقِيَّةٍ يَنْهَوْنَ عَنِ الْفَسَادِ فِي الْأَرْضِ إِلَّا قَلِيلًا مِمَّنْ
أَنْجَيْنَا مِنْهُمْ ۚ وَاتَّبَعَ الَّذِينَ ظَلَمُوا مَا أُتْرِفُوا فِيهِ وَكَانُوا مُجْرِمِينَ ۝ وَمَا كَانَ رَبُّكَ لِيُهْلِكَ
الْقُرَى بِظُلْمٍ وَأَهْلِهَا مُصْلِحُونَ ۝ وَلَوْ شَاءَ رَبُّكَ لَجَعَلَ النَّاسَ أُمَّةً وَاحِدَةً وَلَا يَزَالُونَ
مُخْتَلِفِينَ ۝ إِلَّا مَنْ رَحِمَ رَبُّكَ وَلِذَٰلِكَ خَلَقَهُمْ ۚ وَتَمَّتْ كَلِمَةُ رَبِّكَ لَأَمْلَأَنَّ جَهَنَّمَ مِنَ الْجِنَّةِ
وَالنَّاسِ أَجْمَعِينَ ۝ وَكُلًّا نَقُصُّ عَلَيْكَ مِنْ أَنْبَاءِ الرُّسُلِ مَا نَنْثِقُ بِهِ فِئَادَكَ ۚ وَجَاءَكَ فِي
هَذِهِ الْحَقِّ وَمَوْعِظَةٌ وَذِكْرَى لِلْمُؤْمِنِينَ ۝ وَقُلْ لِلَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ اعْمَلُوا عَلَىٰ مَكَانَتِكُمْ ۚ إِنَّا
عَامِلُونَ ۝ وَانْتَظِرُوا ۚ إِنَّا مُنْتَظِرُونَ ۝ وَبِاللَّهِ غَيْبُ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ وَإِلَيْهِ يُرْجَعُ الْأَمْرُ كُلُّهُ فَاعْبُدْهُ
وَتَوَكَّلْ عَلَيْهِ ۚ وَمَا رَبُّكَ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ۝

व अकिमिस्सला-त त-र-फयिन्नहारि
व जु-लफम् मिनल्लैलि, इन्नल्-
ह-सनाति युज़िहब्नस्सयिआति,
जालि-क जिक्का लिज़्जाकिरीन
(114) वस्बिर् फ-इन्नल्ला-ह ला
युजीअु अजरल्-मुहिसनीन (115)
फलौ ला का-न मिनल्-कुरुनि मिन्
कब्लिकुम् उलू बकिदयतिंय-
-यन्हौ-न अनिल्फसादि फिल्अर्जि
इल्ला कलीलम् मिम्-मन् अन्जैना
मिन्हुम् वत्त-बअल्लजी-न ज-लमू मा
उतिरफू फीहि व कानू मुजिमीन
(116) व मा का-न रब्बु-क

और कायम कर नमाज़ को दोनों तरफ
दिन के और कुछ टुकड़ों में रात के,
अलबत्ता नेकियाँ दूर करती हैं बुराईयों
को, यह यादगारी है याद रखने वालों को।
(114) और सब कर अलबत्ता अल्लाह
जाया नहीं करता सवाब नेकी करने वालों
का। (115) सो क्यों न हुए उन जमाअतों
में जो तुमसे पहले थीं, ऐसे लोग जिनमें
ख़ैर का असर रहा हो, कि मना करते
रहते बिगाड़ करने से मुल्क में मगर थोड़े
कि जिनको हमने बचा लिया उनमें से,
और चले वे लोग जो जालिम थे वही राह
जिसमें ऐश से रहे थे और थे गुनाहगार।
(116) और तेरा रब हरमिज़ ऐसा नहीं
कि हलाक करे बस्तियों को ज़बरदस्ती से

लियुस्लिकल्-कुरा बिज़्जुल्मिन्-व
 अस्लुहा मुस्लिहून (117) व लौ
 शा-अ रब्बु-क ल-ज-अलन्ना-स
 उम्मतं-वाहि-दतं-व ला यज़ालू-न
 मुस्लिफ़ीन (118) इल्ला मरहि-म
 रब्बु-क, व लिज़ालि-क
 खा-ल-कहुम्, व तम्मत् कलि-मतु
 रब्बि-क ल-अमूल-अन्-न जहन्न-म
 मिनल्-जिन्नति वन्नासि अज्मज़ीन
 (119) व कुल्लन् नकुस्सु अलै-क
 मिन् अम्बाइरुसुलि मा नुसब्बितु
 बिही फुआद-क व जाअ-क फी
 हाज़िहिल्-हक्कु व मौज़ि-ज़तुं-व व
 ज़िक्रा लिम्मुअमिनीन (120) व कुल्
 लिल्लज़ी-न ला युअ्मिनून अमलू
 अला मकानतिकुम्, इन्ना आमिलून
 (121) वन्तज़िरू इन्ना मुन्तज़िरून
 (122) व लिल्लाहि गैबुस्समावाति
 वलअर्जि व इलैहि युर्जुल्-अम्रु
 कुल्लुहू फ़अबुद्दु व तवक्कल्
 अलैहि, व मा रब्बु-क बिगाफ़िलिन्
 अम्मा तअ्मलून (123) ❀

और लोग वहाँ के नेक हों। (117) और
 अगर चाहता तेरा रब कर डालता लोगों
 को एक रस्ते पर और हमेशा रहते हैं
 इस्खिलाफ़ (विवाद) में (118) मगर जिन
 पर रहम किया तेरे रब ने और इसी वास्ते
 उनको पैदा किया है और पूरी हुई बात
 तेरे रब की कि अलबत्ता भर दूँगा दोज़ख़
 जिन्नों से और आदमियों से इकट्ठे।
 (119) और सब चीज़ बयान करते हैं हम
 तेरे पास रसूलों के अहवाल से जिससे
 तसल्ली दें तेरे दिल को, और आई तेरे
 पास इस सूर: में तहकीकी बात और
 नसीहत और याददाश्त ईमान वालों के
 लिये। (120) और कह दे उनको जो
 ईमान नहीं लाते- काम किये जाओ अपनी
 जगह पर हम भी काम करते हैं (121)
 और इन्तिज़ार करो हम भी मुन्तज़िर हैं।
 (122) और अल्लाह के पास है छुपी बात
 आसमानों की और ज़मीन की और उसी
 की तरफ़ रुजू है सब काम का, सो उसी
 की बन्दगी कर और उसी पर भरोसा रख
 और तेरा रब बेख़बर नहीं जो काम तुम
 करते हो। (123) ❀

खुलासा-ए-तफसीर

और (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) आप नमाज़ की पाबन्दी रखिये दिन के दोनों

सिरों पर (यानी शुरू और आखिर में) और रात के कुछ हिस्सों में। बेशक नेक काम (नामा-ए-आमाल से) मिटा देते हैं बुरे कामों को। यह बात (कि नेकियों से गुनाह माफ हो जाते हैं) एक (जामे) नसीहत है नसीहत मानने वालों के लिये। (क्योंकि हर नेकी इस कुल्ली कायदे में दाखिल है, पस इससे हर नेकी की तरफ रुचि होनी चाहिये) और (उन इनकारियों की तरफ से जो मामलात पेश आते हैं उन पर) सब्र किया कीजिये कि अल्लाह तआला नेक काम करने वालों का अज़्र जाया नहीं करते (सब्र भी आला दर्जे की नेकी है उसका पूरा अज़्र मिलेगा और ऊपर जो पहली कौमों की तबाही के वाकिआत बयान हुए) तो (वजह उसकी यह हुई कि) जो उम्मतें तुमसे पहले हो गुज़री हैं उनमें ऐसे समझदार लोग न हुए जो कि (दूसरों को) मुल्क में फ़साद (यानी कुफ़्र व शिक) फैलाने से मना करते, सिवाय चन्द आदमियों के कि जिनको उनमें से हमने (अज़ाब से) बचा लिया था (कि उन्होंने तो अलबत्ता जैसे खुद कुफ़्र व शिक से तौबा की थी ऐसे ही औरों को भी मना करते रहते थे, और इन्हीं दोनों अमल की बरकत से वे अज़ाब से बच गये थे, बाकी और लोग चूँकि खुद ही कुफ़्र में मुब्तला थे उन्होंने औरों को भी मना न किया)।

और जो लोग नाफ़रमान थे वे जिस ऐश व आराम में थे, उसी के पीछे पड़े रहे और अपराधों के आदी हो गये (कि उससे बाज़ ही न आये। खुलासा यह कि नाफ़रमानी तो उनमें आम तौर पर रही और मना करने वाला कोई हुआ नहीं इसलिये सब एक ही अज़ाब में मुब्तला हुए वरना कुफ़्र का अज़ाब आम होता और फ़साद का खास। अब मना न करने की वजह से जो फ़साद फैलाने वाले न थे वे भी फ़साद व बिगाड़ वालों में शरीक करार दिये गये, इसलिये जो अज़ाब कुफ़्र व फ़साद के मजमूए पर नाज़िल हुआ वह भी आम रहा) और (इससे साबित हो गया कि) आपका रब ऐसा नहीं कि बस्तियों को कुफ़्र के सबब हलाक कर दे और उनके रहने वाले (अपने और दूसरों के) सुधार में लगे हों (बल्कि जब बजाय इस्लाह और सुधार के फ़साद करें और फ़साद करने वालों को मना न करें उस वक़्त खास अज़ाब के पात्र हो जाते हैं)। और अगर आपके रब को मन्ज़ूर होता तो सब आदमियों को एक ही तरीके का बना देता (यानी सब को मोमिन कर देता, लेकिन कुछ हिक्मतों से ऐसा मन्ज़ूर न हुआ, इसलिये दीन के खिलाफ विभिन्न और अनेक तरीकों पर हो गये) और (आगे भी) हमेशा इख़िलाफ़ (ही) करते रहेंगे, मगर जिस पर आपके रब की रहमत हो (वह दीन के खिलाफ वाला तरीका इख़्तियार न करेगा)। और (इस इख़िलाफ़ और झगड़े डालने का गुम न कीजिये, क्योंकि) उसने (यानी अल्लाह तआला ने) लोगों को इसी वास्ते पैदा किया है (कि उनमें इख़िलाफ़ रहे) और (इख़िलाफ़ के लिये पैदा करने की वजह यह है कि) आपके रब की (यह) बात पूरी होगी कि मैं जहन्नम को जिन्नात और इन्सानों दोनों से भर दूँगा (और खुद इसकी हिक्मत यह है कि जिस तरह मरहूमिन यानी जिन पर रहम किया जाये उनमें रहमत वाली सिफ़त का ज़हूर हो' मग़ज़ूबीन यानी जिन पर ग़ज़ब हो उनमें ग़ज़ब की सिफ़त ज़ाहिर हो, फिर इस ज़हूर की हिक्मत या उस हिक्मत की हिक्मत अल्लाह ही को मालूम है। गर्ज़ कि इस ज़हूर की हिक्मत से जहन्नम में जाना बाज़ों का ज़रूरी है और जहन्नम में जाने के लिये काफ़िरों का वजूद फ़ितरी और तक्दीरी तौर पर ज़रूरी है और

काफ़िरों के वजूद के लिये इख़िलाफ़ लाज़िमी। यह वजह है सब के मुसलमान न होने की।

और पैग़म्बरों के किस्सों में से हम ये सारे (ज़िक्र हुए) किस्से आपसे बयान करते हैं जिनके ज़रिये से हम आपके दिल को मज़बूती देते हैं (किस्सों के बयान करने का एक फ़ायदा तो यह हुआ जिसका हासिल आपको तसल्ली देना है) और उन (किस्सों) में आपके पास (ऐसा मज़मून) पहुँचा है (जो खुद भी) सच्चा (और यकीनी) है और मुसलमानों के लिये (बुरे कामों से रोकने के लिये) नसीहत (है) और (अच्छे काम करने के लिये) याददेहानी है (यह दूसरा फ़ायदा किस्सों के बयान का हुआ। एक फ़ायदा नबी के लिये, दूसरा उम्मत के लिये)। और जो लोग (बावजूद इन मज़बूत दलीलों के भी) ईमान नहीं लाते उनसे कह दीजिये कि (मैं तुमसे उलझता नहीं) तुम अपनी हालत पर अमल करते रहो, हम भी (अपने तौर पर) अमल कर रहे हैं। और (उन आमाँल के नतीजे के) तुम (भी) मुन्तज़िर रहो हम भी मुन्तज़िर हैं (तो बहुत जल्दी यह खुल जायेगा कि हक़ के ख़िलाफ़ कौनसा रास्ता है)।

और आसमानों और ज़मीन में जितनी ग़ैब की बातें हैं उनका इल्म खुदा ही को है (तो बन्दों के आमाँल तो ग़ैब भी नहीं उनका इल्म तो ज़्यादा बेहतर तरीक़े पर हक़ तआला को है) और सब मामलात उसी की तरफ़ लौटाये जाएँगे (यानी इल्म व इख़्तियार दोनों अल्लाह ही के हैं फिर उसको क्या मुश्किल है, अगर आमाँल की जज़ा व सज़ा दे दे, और जब वह ऐसा इल्म व इख़्तियार रखता है) तो (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) आप उसी की इबादत कीजिये (जिसमें तब्लीग़ भी दाख़िल है) और उसी पर भरोसा कीजिये (अगर तब्लीग़ में किसी तकलीफ़ पहुँचने का अन्देशा हो। यह बीच में एक अलग बात के तौर आप से ख़िताब फ़रमा दिया, आगे फिर वही मज़मून है, यानी) और आपका रब उन बातों से बेख़बर नहीं जो कुछ तुम (लोग) कर रहे हो (जैसा कि ऊपर ग़ैब के इल्म से आमाँल का इल्म कहीं ज़्यादा अच्छी तरह साबित हो गया)।

मज़ारिफ़ व मसाईल

कुरआनी अन्दाज़ में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम की बड़ाई वाली शान की तरफ़ इशारा

सूर: हूद में पहले नबियों और उनकी कौमों के इब्तनाक हालात व वाकिआत ज़िक्र करने के बाद नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और उम्मत मुहम्मदिया को चन्द हिदायतें दी गयी हैं जिनका सिलसिला पिछली आयत नम्बर 112 से शुरू हुआ है। इन हिदायतों में कुरआने करीम का यह बेहतरीन अन्दाज़ बयान किस क़द्र दिलकश और अदब सिखाने वाला है कि जिस काम का हुक्म मुस्बत (करने और साबित होने के) अन्दाज़ में दिया गया उसमें तो रसूल करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मुख़ातब बनाया गया है और उम्मत मुहम्मदिया को ताबे बनाकर

उसमें शामिल किया गया है। जैसे:

لَا تُقِيمُ كَمَا أَمَرْتُ وَمَنْ تَابَ مَعَكَ

(सो आपको जिस तरह हुक्म हुआ आप दीन की राह पर मुस्तकीम रहिये.....) और ऊपर बयान हुई आयत में 'नमाज़ कायम कर.....' और उसके बाद 'और सब कीजिये....'। और जिस काम से रोका गया और उससे बचने की हिदायत की गयी तो उसमें डायरेक्ट उम्मत को खिताब किया गया। जैसे पिछली आयतों में 'ला तत्तगौ' और 'ला तर्कनू इलल्लजी-न ज-लमू'। और गौर किया जाये तो पूरे कुरआन में आम तौर पर यही अन्दाज़ और तरीका इस्तेमाल हुआ है कि किसी काम के करने का मुखातब नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बनाया गया है और किसी काम से रोकने और मनाही करने का मुखातब उम्मत को, जिसमें रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की शान की बड़ाई का इज़हार है, कि जो काम छोड़ देने के काबिल हैं रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम खुद ही उनसे परहेज़ करते हैं, आपकी सही व सलीम फितरत और तबीयत ही अल्लाह तआला ने ऐसी बनाई थी कि किसी बुरी इच्छा और बुरी चीज़ की तरफ़ मैलान ही न होता था, यहाँ तक कि ऐसी चीज़ें जो इस्लाम के शुरू ज़माने में जायज़ व हलाल थीं मगर अन्जाम कार उनका हराम होना अल्लाह तआला के इल्म में तयशुदा था, रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उनके हलाल होने के ज़माने में कभी उनके पास नहीं गये, जैसे शराब या सूद और जुआ वगैरह।

इस आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मुखातब करके आपको और आपकी पूरी उम्मत को नमाज़ कायम करने का हुक्म दिया गया है। तफसीर के उलेमा और सहाबा व ताबिईन का इस पर इत्तिफाक है कि इस जगह 'सलात' से मुराद फर्ज़ नमाज़ें हैं।

(तफसीर बहरे मुहीत, तफसीरे क़ुर्तुबी)

और 'नमाज़ को कायम करने' से मुराद उसकी पूरी पाबन्दी और हमेशगी है। और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि नमाज़ को उसके तमाम आदाब के साथ अदा करना मुराद है। बाज़ ने फ़रमाया कि नमाज़ को उसके अफ़ज़ल वक़्त में अदा करना मुराद है, यही तीन कौल आयत 'अकिमिस्सला-त.....' (जो सूर: बनी इस्राईल में है) की तफसीर में नक़ल किये गये हैं और दर हकीकत यह कोई विविधता नहीं, ये सभी चीज़ें "नमाज़ कायम करने" के मफ़हूम में शामिल हैं।

नमाज़ को कायम करने का हुक्म देने के बाद नमाज़ के वक़्तों का संक्षिप्त बयान यह है कि 'दिन के दोनों सिरों यानी शुरू और आख़िर में, और रात के कुछ हिस्सों में नमाज़ कायम करो।' क्योंकि 'जु-त्तफन्' 'जुल्फतुन्' की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने एक हिस्से और टुकड़े के हैं, दिन के दोनों सिरों की नमाज़ के बारे में इस पर तो सब का इत्तिफाक है कि पहले सिरे की नमाज़ फ़ज़र की नमाज़ है, आख़िरी सिरे की नमाज़ कुछ हज़रात ने मग़रिब को करार दिया है जो कि दिन के बिल्कुल ख़त्म पर है और कुछ हज़रात ने अ़सर की नमाज़ को दिन के आख़िरी सिरे की नमाज़ करार दिया है, क्योंकि दिन की आख़िरी नमाज़ वही है, मग़रिब का वक़्त दिन का

हिस्सा नहीं बल्कि दिन गुजरने के बाद आता है। और 'जु-ल्फम् मिनल्लैलि' यानी रात के हिस्सों की नमाज़ से मुराद मुफ़्तिरीन की अक्सरियत और एक बड़ी जमाअत- इमाम हसन बसरी, इमाम मुजाहिद, इमाम मुहम्मद बिन कज़ब, इमाम कतादा, इमाम ज़ह्राक वगैरह हज़रात ने मग़रिब व इशा की नमाज़ को करार दिया है। और एक हदीस से इसी की ताईद होती है जिसमें इरशाद फ़रमाया है कि 'जु-ल्फम् मिनल्लैलि' (रात के कुछ टुकड़ों में) मग़रिब व इशा हैं।

(तफ़सीर इब्ने कसीर)

जबकि 'त-र-फ़यिन्नहारि' (दिन के दोनों सिरों) से मुराद सुबह और अ़सर की नमाज़ हुई और 'जु-ल्फम् मिनल्लैलि' (रात के कुछ टुकड़ों) से मग़रिब व इशा की तो इस आयत में चार नमाज़ों के वक्तों का बयान आ गया, सिर्फ़ जोहर की नमाज़ का बयान रह गया जो दूसरी आयत:

اقِمِ الصَّلَاةَ لِذُلُوكِ الشَّمْسِ.

(सूर: बनी इस्राईल आयत 78) में आया है।

इस आयत में उक्त वक्तों में 'नमाज़ कायम करने' के हुक्म के बाद इनका एक अज़ीम फायदा भी बतलाया गया है, कि:

إِنَّ الْحَسَنَاتِ يُذْهِبْنَ السَّيِّئَاتِ.

यानी नेक काम मिटा देते हैं बुरे कामों को। मुफ़्तिरीन हज़रात ने फ़रमाया कि "नेक काम" से तमाम नेक काम मुराद हैं, जिनमें नमाज़, रोज़ा, ज़कात, सदकात, अच्छा अख़लाक, अच्छा व्यवहार वगैरह सब दाख़िल हैं, मगर नमाज़ को इन सब में पहला दर्जा हासिल है। इसी तरह 'सय्यिआत' का लफ़्ज़ तमाम बुरे कामों को शामिल है चाहे वो बड़े गुनाह हों या छोटे, लेकिन क़ुरआन मजीद की एक दूसरी आयत और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अनेक इरशादात ने इसको छोटे गुनाहों के साथ मज़सूस करार दिया है। मायने यह है कि नेक काम जिनमें नमाज़ सबसे अफ़ज़ल है, छोटे गुनाहों का कफ़ारा कर देते हैं और उनके गुनाह को मिटा देते हैं। क़ुरआने करीम में है:

إِنْ تَجْتَنِبُوا كَبَائِرَ مَا تُنْهَوْنَ عَنْهُ نَكْفُرْ عَنْكُمْ سَائِرَ كُفْرِكُمْ.

यानी अगर तुम बड़े गुनाहों से बचते रहो तो हम तुम्हारे छोटे गुनाहों का खुद कफ़ारा कर देंगे।

सही मुस्लिम की हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि पाँच नमाज़ें और एक जुमा दूसरे जुमे तक और एक रमज़ान दूसरे रमज़ान तक उन तमाम गुनाहों का कफ़ारा (बदला और मिटाने वाले) हो जाते हैं जो उनके दरमियान सादिर हों, जबकि यह शख्स बड़े गुनाहों से बचा रहा हो। मतलब यह है कि बड़े गुनाह तो बगैर तौबा के माफ़ नहीं होते मगर छोटे गुनाह दूसरे नेक काम- नमाज़, रोज़ा, सदका वगैरह करने से खुद भी माफ़ हो जाते हैं, मगर तफ़सीर बहरे मुहीत में मुहक्किकीन उलेमा-ए-उसूल का यह कौल नक़ल है कि

छोटे गुनाह भी नेक काम करने से तभी माफ होते हैं जबकि आदमी उनके करने पर शर्मिन्दा हो और आईन्दा के लिये न करने का इरादा करे, उन पर जमा न रहे। हदीस की रिवायतों में जितने बाकिआत कफ़ारा हो जाने के नक़ल किये गये हैं उन सब में यह बज़ाहत भी है कि उनका करने वाला जब अपने फ़ैल पर शर्मिन्दा हो और आईन्दा के लिये तौबा करे, इस पर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसको गुनाह माफ़ हो जाने की खुशख़बरी सुनाई। वल्लाहु आलम हदीस की मशहूर व परिचित रिवायतों में बड़े गुनाह इन चीज़ों को बतलाया है:

1. अल्लाह तआला की जात या सिफ़ात में किसी को शरीक या बराबर करार देना।
2. जान-बूझकर किसी फ़र्ज़ नमाज़ का छोड़ना।
3. किसी को नाहक क़त्ल करना।
4. हराम कारी।
5. चोरी।
6. शराब पीना।
7. माँ-बाप की नाफ़रमानी।
8. झूठी क़सम खाना।
9. झूठी गवाही देना।
10. जादू करना।
11. सूद खाना।
12. यतीम का माल नाजायज़ तौर पर लेना।
13. जिहाद के मैदान से भागना।
14. पाकदामन औरतों पर तोहमत लगाना।
15. किसी का माल नाजायज़ तौर पर ग़सब करना (छीनना या दबाना)।
16. अ़हद करके उसे तोड़ना।
17. अमानत में ख़ियानत करना।
18. किसी को गाली देना।
19. किसी शख्स को नाहक़ मुजरिम करार दे देना, वगैरह।

कबीरा और सगीरा यानी बड़े और छोटे गुनाहों की तफ़सील मुस्तक़िल रिसालों में उलेमा ने लिख दी हैं, मेरे रिसाले 'गुनाह-ए-बेलज़ज़त' में भी मज़कूर है, वहाँ देखी जा सकती है।

बहरहाल ऊपर बयान हुई आयत से यह बात साबित हुई कि नेक काम करने से भी गुनाह माफ़ हो जाते हैं, इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बुरे काम के बाद नेक काम को कर लो तो वह उसकी बुराई को मिटा देगा, और फ़रमाया कि लोगों से अच्छे अख़्लाक के साथ मामला करो। (इब्ने कसीर, मुस्नद अहमद के हवाले से)

हज़रत अबूज़र ग़िफ़ारी रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से अर्ज़ किया कि मुझे कोई बसीयत फ़रमाइये। आपने फ़रमाया कि "अगर तुमसे कोई

गुनाह हो जाये तो उसके बाद कोई नेक काम करो ताकि वह उसको मिटा दे।”

दर हकीकत इन हदीसों में गुनाह से तौबा करने का मसून व पसन्दीदा तरीका बतलाया गया है जैसा कि मुस्नद अहमद में हजरत सिद्दीके अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्कूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि अगर किसी मुसलमान से कोई गुनाह हो जाये तो उसको चाहिये कि वुजू करके दो रकअत नफिल अदा कर ले तो उस गुनाह की माफी हो जायेगी। (ये तमाम रिवायतें तफ़्सीर इब्ने कसीर में मौजूद हैं) इस नमाज़ को नमाज़-ए-तौबा ही कहा जाता है।

ذَلِكَ ذِكْرِي لِلذَّكْرِينَ ۝

यानी यह एक नसीहत है नसीहत मानने वालों के लिये। इसमें 'ज़ालि-क' का इशारा कुरआने करीम की तरफ भी हो सकता है और अम्र व नही (हुक्म किये गये और मना किये गये) अहकाम की तरफ भी, जिनका जिक्र इससे पहले आया है, मुराद यह है कि यह कुरआन या इसके जिक्र किये हुए अहकाम उन लोगों के लिये हिदायत व नसीहत हैं जो नसीहत सुनने और मानने के आदी हैं। इसमें इशारा यह है कि हठधर्म, जिद्दी आदमी जो किसी चीज़ पर ग़ौर ही न करे वह हर हिदायत से मेहरूम रहता है।

وَاصْبِرْ فَإِنَّ اللَّهَ لَا يُضِيعُ أَجْرَ الْمُحْسِنِينَ ۝

यानी आप सब्र व साबित-कदमी (जमाव) के साथ रहें क्योंकि अल्लाह तआला नेक अमल करने वालों का अज़्र जाया नहीं किया करते।

“सब्र” के लफ़्ज़ी मायने बाँधने के हैं, इसी लिये अपने नफ़्स को काबू में रखने के लिये भी “सब्र” बोला जाता है, जिसके मफ़हूम में यह भी दाख़िल है कि नेक कामों के करने पर अपने नफ़्स को साबित-कदम रखे और यह भी कि बुरे कामों में मुब्तला होने से उसको रोके। इस जगह रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सब्र का हुक्म देने से यह मुराद भी हो सकती है कि जो अहकाम इन आयतों में आपको दिये गये हैं- मसलन इस्तिकामत (मुस्तकीम और सीधा रहने), नमाज़ कायम करने वगैरह इन पर आप मज़बूती से कायम रहें, और यह भी हो सकता है कि मुखालिफ़ों की मुखालफ़त और तकलीफ़ें देने पर सब्र की तालीम व हिदायत मक्सूद हो। और इसके बाद जो यह इरशाद फरमाया कि अल्लाह तआला मोहसिनीन यानी नेक काम करने वालों का अज़्र बरबाद नहीं करते, इसमें बज़ाहिर “मोहसिनीन” से मुराद वे लोग हैं जो उक्त आयतों के करने वाले और न करने वाले अहकाम के पाबन्द हों। यानी दीन में इस्तिकामत (जमाव और मुस्तकीम रहने) का मक़ाम उनको हासिल हो, शरीअत की हदों की पूरी रियायत करते हों, ज़ालिमों के साथ दोस्ती और बेज़रूरत ताल्लुक न रखते हों, नमाज़ को आदाब के साथ उसके अफ़ज़ल वक़्त में अदा करने के पाबन्द हों, दीन के तमाम अहकाम पर साबित-कदम (जमाने वाले) हों।

और खुलासा इन सब का वही है जो ‘एहसान’ की तारीफ़ में खुद रसूले करीम सल्लल्लाहु

अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि अल्लाह तआला की इताअत व इबादत इस तरह करो कि गोया तुम अल्लाह तआला को देख रहे हो, या कम से कम यह कि अल्लाह तआला तुम्हें देख रहे हैं। जब इन्सान को हक़ तआला की जात व सिफ़ात के यकीन का यह दर्जा हासिल हो जाये तो उसके तमाम काम और बातें खुद-बखुद सही हो जाती हैं। पहले बुजुर्गों में तीन कलिमे ऐसे मारुफ़ (मशहूर व परिचित) थे जो आपस में एक दूसरे को लिखा करते थे। वो याद रखने के काबिल हैं- अव्वल यह कि जो शख्स आखिरत के लिये काम में मशगूल हो जाता है अल्लाह तआला उसके दुनिया के कामों को खुद-बखुद दुरुस्त फरमा देते हैं और उनकी ज़िम्मेदारी खुद ले लेते हैं। दूसरे यह कि जो शख्स अपनी बातिनी (अन्दरूनी) हालत को दुरुस्त कर ले कि दिल का रुख सबसे हटाकर अल्लाह तआला की तरफ़ फेर दे तो अल्लाह तआला उसकी जाहिरी हालत को खुद-बखुद दुरुस्त फरमा देते हैं। तीसरे यह कि जो शख्स अल्लाह तआला के साथ अपने मामले को सही व दुरुस्त कर ले तो अल्लाह तआला उसके और तमाम लोगों के बीच के मामलात को खुद दुरुस्त फरमा देते हैं। इन तीन कलिमात की असल इबारत यह है:

وَكَانَ أَهْلُ الْخَيْرِ يَكْتُبُ بَعْضُهُمْ إِلَى بَعْضٍ ثَلَاثَ كَلِمَاتٍ، مَنْ عَمِلَ لِآخِرَتِهِ كَفَّاهُ اللَّهُ أَمْرَ دُنْيَاهُ، وَمَنْ أَصْلَحَ

سِرِّيَّتَهُ أَصْلَحَ اللَّهُ عِلَاقَتَهُ، وَمَنْ أَصْلَحَ فِيمَا بَيْنَهُ وَبَيْنَ اللَّهِ أَصْلَحَ اللَّهُ مَا بَيْنَهُ وَبَيْنَ النَّاسِ. (تفسير روح البیان ج ۲ ص ۱۳۱)

तीसरी और चौथी आयतों में पिछली कौमों पर अल्लाह का अज़ाब नाज़िल होने की वजह और लोगों को उससे बचने की हिदायत इस तरह दी गयी है कि फरमाया:

“इन पिछली कौमों में अफ़सोस है कि ऐसा न हुआ कि उनमें कुछ भी समझदार नेक लोग होते जो अपनी कौम को फ़साद करने से बाज़ रखते सिवाय थोड़े से लोगों के, जिन्होंने अम्बिया अलैहिमुस्सलाम की पैरवी की, और वही अज़ाब से महफ़ूज़ रहे, और बाकी पूरी कौम दुनिया की लज़ज़तों में फंसकर जराईम (बुराईयों और अपराधों) की आदी बन गयीं।”

इस आयत में समझदार लोगों को लफ़ज़ ‘उलू बकिय्यतिन्’ से ताबीर किया है। ‘बकिय्यतिन्’ का लफ़ज़ बाकी बची चीज़ के लिये बोला जाता है, और इन्सान की आदत यह है कि जो चीज़ सबसे ज्यादा प्यारी व महबूब होती है उसको हर हाल में अपने लिये महफ़ूज़ और बाकी रखने का एहतिमाम करता है, ज़रूरत पड़ने पर दूसरी सारी चीज़ें कुरबान कर देता है मगर उसको नहीं देता। इसी लिये अक्ल व समझ को “बकिय्या” कहा जाता है कि वह सबसे ज्यादा प्यारी है।

चौथी आयत में फरमाया कि आपका रब शहरों और बस्तियों को जुल्म से हलाक नहीं करता जबकि उनके बसने वाले नेक काम करने वाले यानी मुसलमान हों। मतलब यह है कि खुदा तआला के यहाँ जुल्म व ज़्यादती की कोई संभावना नहीं, जिनको हलाक किया जाता है वह उसी के मुस्तहिक होते हैं। और कुछ हज़रात ने फरमाया कि इस आयत में जुल्म से मुराद शिर्क है और ‘मुस्लिहून’ से मुराद वे लोग हैं जो बावजूद काफ़िर व मुश्रिक होने के मामलात और अख़लाक अच्छे रखते हैं, किसी को नुकसान और तकलीफ़ नहीं पहुँचाते, झूठ नहीं बोलते, धोखा नहीं देते, और आयत का मतलब यह है कि दुनिया का अज़ाब किसी कौम पर महज़ उनके

मुश्रिक व काफिर होने की वजह से नहीं आता जब तक कि वे आमाल व अखलाक में भी ऐसे काम न करने लगे जिनसे ज़मीन में फ़साद फैलता है। पिछली जितनी कौमों पर अज़ाब आये उनके खास-खास बुरे आमाल उसका सबब बने। नूह अलैहिस्सलाम की कौम ने हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को तरह-तरह की तकलीफ़ें पहुँचायीं, कौमे शुऐब ने नाप-तौल में कमी करके फ़साद फैलाया, कौमे लूत ने बदतरीन किस्म की बदकारी को अपना चलन बनाया, कौमे मूसा व ईसा ने अपने पैग़म्बरों पर जुल्म ढहाये, कुरआने करीम ने दुनिया में उन पर अज़ाब आने का सबब इन्हीं आमाल और हरकतों को बतलाया है, सिर्फ़ कुफ़्र व शिर्क की वजह से दुनिया में अज़ाब नहीं आता, इसकी सज़ा तो जहन्नम की हमेशा वाली आग़ है। इसी लिये कुछ उलेमा ने फ़रमाया कि मुल्क व सल्तनत कुफ़्र व शिर्क के साथ तो चल सकते हैं मगर जुल्म व ज़्यादती के साथ नहीं चल सकते।

अच्छा और बुरा इख़िलाफ़ (मतभेद)

पाँचवीं आयत में जो यह इरशाद फ़रमाया कि अगर अल्लाह तआला चाहता तो सब इनसानों को एक ही उम्मत व मिल्लत बना देता। मतलब यह है कि अल्लाह तआला चाहते तो तमाम इनसानों को ज़बरदस्ती इस्लाम कुबूल करने पर मजबूर कर डालते, सब के सब मुसलमान ही हो जाते, उनमें कोई इख़िलाफ़ (मतभेद व विवाद) न रहता, मगर हिक्मत के तकाज़े की वजह से इस दुनिया में अल्लाह तआला किसी को किसी अमल पर मजबूर नहीं करते बल्कि उसने इनसान को एक किस्म का इख़्तियार सौंप दिया है उसके मातहत वह अच्छा या बुरा जो चाहे अमल कर सकता है, और इनसानों की तबीयतें विभिन्न हैं इसलिये राहें भिन्न और अलग-अलग होती हैं और अमल मुख़लिफ़ होते हैं। इसका नतीजा यह है कि कुछ लोग हमेशा हक़ और सच्चे दीन से इख़िलाफ़ (झगड़ा) करते ही रहेंगे सिवाय उन लोगों के जिन पर अल्लाह तआला ने रहमत फ़रमाई, यानी अम्बिया अलैहिमुस्सलाम की पैरवी करने वाले।

इससे मालूम हुआ कि इख़िलाफ़ (विवाद) से मुराद इस जगह हक़ दीन और अम्बिया की तालीम की मुख़ालफ़त है, इज्तिहादी इख़िलाफ़ जो दीन के इमामों और मुस्लिम फ़ुक़हा में होना लाज़िमी है और सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम के ज़माने से होता चला आया है, वह इसमें दाख़िल नहीं, न वह रहमत-ए-इलाही के खिलाफ़ है, बल्कि हिक्मत व रहमत का तकाज़ा है। जिन हज़रात ने मुज्ताहिद इमामों के इख़िलाफ़ात (मतभेदों) को इस आयत की रू से ग़लत, खिलाफ़े रहमत करार दिया है यह खुद आयत के मज़मून के भी खिलाफ़ है और सहाबा व ताबिईन के तरीके और अमली नमूने के भी। वल्लाहु सुब्बानहू व तआला आलम।

अल्लाह तआला का शुक्र है कि सूरः हूद और साथ ही तफ़सीर मअरिफ़ुल-कुरआन की चौथी जिल्द पूरी हुई।

कुछ अलफाज़ और उनके मायने

इस्लामी महीनों के नाम:- मुहर्रम, सफर, रबीउल-अव्वल, रबीउस्सानी, जमादियुल-अव्वल, जमादियुस्सानी, रजब, शाबान, रमज़ान, शव्वाल, जीकादा, ज़िलहिज्जा।

चार मशहूर आसमानी किताबें

तौरात:- वह आसमानी किताब जो हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम पर उतरी।

ज़बूर:- वह आसमानी किताब जो हज़रत दाऊद अलैहिस्सलाम पर उतरी।

इन्ज़ील:- वह आसमानी किताब जो हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम पर उतरी।

कुरआन मजीद:- वह आसमानी किताब जो हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर नाज़िल हुई। यह आखिरी आसमानी किताब है।

चार बड़े फरिश्ते

हज़रत जिब्राईल:- अल्लाह तआला का एक खास फरिश्ता जो अल्लाह का पैग़ाम (वही) उसके रसूलों के पास लाता था।

हज़रत इस्फ़ाफील:- अल्लाह का एक खास फरिश्ता जो इस दुनिया को तबाह करने के लिये सूर फूँकेगा।

हज़रत मीकाईल:- अल्लाह का एक खास फरिश्ता जो बारिश का इन्तिज़ाम करने और मज़्लूक को रोज़ी पहुँचाने पर मुक़र्रर है।

हज़रत इज़्राईल:- अल्लाह का एक खास फरिश्ता जो जानदारों की जान निकालने पर लगाया गया है।

रिश्ते और निस्बतें

अबू:- बाप (जैसे अबू हुज़ैफ़ा)।

इब्न:- बेटा, पुत्र (जैसे इब्ने उमर)।

उम्म:- माँ (जैसे उम्मे कुलसूम)।

बिन्त:- बेटी, पुत्री (जैसे बिन्ते उमर)।



कफ़ारा:- गुनाह को धो देने वाला, गुनाह या ख़ता का बदला, कुसूर का दंड जो खुदा तआला की तरफ़ से मुक़र्रर है। प्रायश्चित।

क़ियास:- अन्दाज़ा, अटकल, जाँच।

क़िसास:- बदला, इन्तिकाम, खून का बदला खून।

खल्क:- मख्लूक, सृष्टि।

खालिक:- पैदा करने वाला। अल्लाह तआला का एक सिफाती नाम।

खियानत:- दगा, धोखा, बेईमानी, बद्-दियानती, अमानत में चोरी।

खुशूअ व खुजूअ:- आजिजी करना, गिड़गिड़ाना, सर झुकाना, विनम्रता इस्तिथार करना।

खुतबा:- तकरीर, नसीहत, संबोधन।

खुला:- बीवी का कुछ माल वगैरह देकर अपने पति से तलाक लेना।

गुजवा:- वह जिहाद जिसमें खुद रसूले खुदा सल्ल. शरीक हुए हों। दीनी जंग।

गैब:- गैर-मौजूदगी, पोशीदगी की हालत, जो आँखों से ओझल हो। जो अभी भविष्य में हो।

जमाना-ए-जाहिलीयत:- अरब में इस्लाम से पहले का जमाना और दौर।

जिरह:- लोहे का जाली दार कुर्ता जो लड़ाई में पहनते हैं। आजकल बुलेट-प्रूफ जाकेट।

जिहाद:- कोशिश, जिद्दोजहद, दीन की हिमायत के लिये हथियार उठाना, जान व माल की कुरबानी देना।

जिना:- बदकारी, हराम कारी।

जिज्या:- वह टैक्स जो इस्लामी हुकूमत में गैर-मुस्लिमों से लिया जाता है। बच्चे, बूढ़े, औरतें और धर्मगुरु इससे बाहर रहते हैं। इस टैक्स के बदले हुकूमत उनके जान माल आबरू की सुरक्षा करती है।

जिहार:- एक किस्म की तलाक, फिका की इस्तिलाह में मर्द का अपनी बीवी को माँ बहन या उन औरतों से तशबीह देना जो शरीअत के हिसाब से उस पर हराम हैं।

टट्टी:- बाँस का छप्पर, पर्दा खड़ा करना, कनात।

तकदीर:- वह अन्दाज़ा जो अल्लाह तआला ने पहले दिन से हर चीज़ के लिये मुक़र्रर कर दिया है। नसीब, किस्मत, भाग्य।

तर्का:- मीरास, मरने वाले की जायदाद व माल।

तौहीद:- एक मानना, खुदा तआला के एक होने पर यकीन करना।

दारुल-हरब:- वह मुल्क जहाँ गैर-मुस्लिमों की हुकूमत हो और मुसलमानों को मज़हबी फराईज़ के अदा करने से रोका जाये।

दारुल-इस्लाम:- वह मुल्क जिसमें इस्लामी हुकूमत हो।

अज़ाब:- गुनाह की सज़ा, तकलीफ़, दुख, मुसीबत।

अज़्र:- नेक काम का बदला, सवाब, फल।

अक़ीदा:- दिल में जमाया हुआ यकीन, ईमान, एतिबार, आस्था आदि। इसका बहुवचन अक़ीदे और अक़ायद आता है।

अदम:- नापैदी, न होना।

अबद:- हमेशगी। वह जमाना जिसकी कोई इन्तिहा न हो।

(मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी एम. ए. अलीग.)